श्री गुरु ग्रंथ साहिब

(मूल पाठ एवं हिन्दी अनुवाद)

पहली सैंची

डॉ॰ जोध सिंह

श्री गुरु ग्रंथ साहिब

(मूल पाठ एवं हिन्दी अनुवाद)

पहली सैंची

डॉ. जोध सिंह
प्रोफैसर, सिक्ख धर्म एवं दर्शन
मैंवर, इंडियन कौंसिल ऑफ फिलासोफीकल रिसर्च (ICPR)
मुख्य सम्पादक, सिक्ख धर्म विश्वकोष
पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला (पंजाब)

द सिक्ख हैरीटेज पब्लीकेशन्स,
पटियाला – 147 002

प्रकाशकः

द सिक्ख हैरीटेज पब्लीकेशन्स

12 बसन्त विहार (पीछे हेम कुंट पम्प), सरहिन्द रोड, पटियाला-147 002
टैलीफोन: 0175-2353102, 98159-14691

प्रथम संस्करण : 2003
द्वितीय संस्करण : 2006

चार जिल्दों का पूरा सैट : 1850 रुपये

मुद्रक

दी डॉन प्रैस,

कटड़ा शेर सिंह, अमृतसर ।
टैलीफोन: 2541312, 2554735

੧ਓ सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरप्रसादि

राग–सूची

सैंची पहली

	पन्ना		पन्ना
जपु	1	सोहिला महला १	12
सोदरु महला १	8	सिरी रागु	14
सुणि वडा महला १	9	रागु माझ	94
सो पुरखु महला ४	10	रागु गउड़ी	151

सैंची दूसरी

रागु आसा	347	रागु धनासरी	660
रागु गूजरी	489	रागु जैतसरी	696
रागु देव गंधारी	527	रागु टोडी	711
रागु बिहागड़ा	537	रागु बैराड़ी	719
रागु वडहंसु	557	रागु तिलंग	721
रागु सोरठि	595		

सैंची तीसरी

रागु सूही	728	रागु नट नाराइन	975
रागु बिलावलु	795	रागु माली गउड़ा	984
रागु गौड	859	रागु मारू	989
रागु रामकली	876		

सैंची चौथी

रागु तुखारी	1107	सलोक सहसक्रिती मः ५	1353
रागु केदारा	1118	गाथा महला ५	1360
रागु भैरउ	1125	फुनहे महला ५	1361
रागु बसंतु	1168	चउबोले महला ५	1363
रागु सारंग	1197	सलोक भगत कबीर	1364
रागु मलार	1245	सलोक शेख फरीद के	1377
रागु कानड़ा	1294	सवये स्रीमुख बाक्य	1385
रागु कलिआन	1319	सलोक वारां ते वधीक	1410
रागु प्रभाती	1327	सलोक महला ९	1426
रागु जैजावंती	1352	मुंदावणी महला ५	1429
सलोक सहसक्रिती मः १	1353	रागमाला	1429–30

विशेष आभार

परम पिता परमात्मा के प्रति मैं आभारी हूँ जिसने यह अनुवाद कार्य मुझसे कराया। मैं विशेष आभारी हूँ

सरदार राजिन्दर सिंह चाहल
सरदारनी जोगिन्दर कौर चाहल M/s J.K. Diesels Dhanbad
एवं सम्पूर्ण चाहल परिवार का

जिन्होंने इस अनुवाद कार्य को पाठकों तक पहुँचाने के लिए सभी साधन जुटाए और मेरी मेहनत को सार्थक बनाने में पूर्ण योगदान दिया।

समर्पण

अठारहवीं सदी के उन लाखों
शहीद योद्धाओं को
जिन्होंने तत्कालीन शासकों द्वारा
सिक्खों के सिरों की कीमत
निर्धारित कर दिए जाने के बावजूद
सिक्ख स्वरूप का त्याग नहीं किया,
भारत की अस्मिता, सिक्ख नैतिक मूल्यों तथा
गुरु ग्रंथ साहिब के सर्वधर्म समभाव
की प्रखरता की रक्षा के लिए
पूर्ण कर्त्तव्य निष्ठा के साथ
प्राणों की आहुति दी ।

सिक्ख पारिभाषिक शब्दावली

1.	**अनंद**	:	आनन्द, परम प्रसन्नता ।
2.	**अमर (अम्र)**	:	हुकुम
3.	**अमृतवेला**	:	रात्रि का चौथा प्रहर अर्थात् भोर ।
4.	**अरदास**	:	विनती, प्रार्थना ।
5.	**आदेसु**	:	प्रणाम ।
6.	**करम**	:	कर्म, कृपा ।
7.	**कुदरति**	:	दिव्य शक्ति, प्रकृति, माया ।
8.	**गुरमति**	:	गुरु प्रदत्त विवेक बुद्धि ।
9.	**गुरमुख**	:	गुरु की आज्ञा के अनुरूप कार्यशील बना रहने वाला ।
10.	**गुरु/गुरू**	:	आध्यात्मिक रूप से जीवित बनाए रखने वाला ।
11.	**घालि**	:	परिश्रम, मेहनत ।
12.	**धरमसाल**	:	कर्त्तव्य कर्म का स्थान ।
13.	**धरमु**	:	कर्त्तव्य निष्ठा, उत्तरदायित्व ।
14.	**नदरि**	:	कृपादृष्टि ।
15.	**नाम**	:	सम्पूर्ण अस्तित्व रूप में सर्वत्र व्याप्त दिव्यता ।
16.	**पंच**	:	आध्यात्मिक गुणों के कारण सर्वप्रतिष्ठित व्यक्ति ।
17.	**मनमुख**	:	भ्रष्ट करने वाली मन की वासनाओं के पीछे लगने वाला ।
18.	**माई**	:	माया / माँ ।
19.	**रहाउ**	:	रुको और पूर्व पद का गहन चिन्तन करो ।
20.	**राम**	:	सर्वत्र रमण करने वाला प्रभु ।
21.	**वारना (वारिआ)**	:	बलिहारी जाना, कुर्बान होना ।
22.	**विगसणा**	:	खिलना, विकासशील बने रहना।
23.	**सचिआर**	:	सत्याचरण करने वाला ।
24.	**सतसंगति (संगत) साधसंगत**	:	सद्संगत, जहां ऊंच नीच, छुआछूत भेद मिटाकर सभी मिल बैठकर आध्यात्मिक प्रवचन सुनते हैं और सत्याचरण की ओर अग्रसर होते हैं ।
25.	**सती**	:	त्यागी, दानी ।
26.	**सबद**	:	नाम का क्रियाशील रूप ।
27.	**साकत**	:	एक प्रभु से टूटा हुआ, शाक्त मतावलंबी ।
28.	**सिख (सिक्ख)**	:	सदा सीखने की जिज्ञासा बनाए रखने वाला ।
29.	**हउमै**	:	अहम्, अहंकार ।
30.	**हदूरि**	:	सामने, प्रत्यक्ष, समक्ष ।
31.	**हुकमु, हुकुम**	:	आज्ञा, अंतरनिहित विधान ।

विषयक्रम

1. **भूमिका** क: 1–12
2. **सिक्ख धर्म–स्वरूप एवं आधार** क: 13–20
3. **श्री गुरु ग्रंथ साहिब** क: 21–24
   अन्तर्वस्तु, रागों के नाम, रचनाकार, प्रमुख वाणियां ।
4. **भारतीय दर्शन एवं चिन्तन में सिक्ख धर्म की विशिष्टता** क: 25–37
   बल तथा बंधन, शुभ कर्म, विनम्रता, भक्ति एवं शक्ति, सिक्ख त्रिरत्न
5. **तत्त्व मीमांसा**
   (क) परमात्मा, मूलमंत्र की व्याख्या, निर्गुण एवं सगुण, अवतारवाद, निमित्त एवं उपादान कारण । क: 38–52
   (ख) जीव क: 53–56
   (ग) सृष्टि क: 57–65
6. **हुकम** क: 66–76
   हुकम के समानार्थक शब्द इच्छा स्वातन्त्रय और हुकम
7. **शब्द गुरु** क: 77–82
8. **मूलपाठ एवं अनुवाद** 1–346
9. **परिशिष्ट**

विशेष सूचना

- **मूल पाठ के लिप्यन्त्रण का आधारः शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी द्वारा प्रकाशित श्री गुरु ग्रंथ साहिब ।**
- **मूल पाठ के शब्दों के अंतिम व्यंजन के साथ लगी हस्व 'इ' (ि) और हस्व 'उ' (ु) मात्रा का उच्चारण नहीं किया जाता है ।**

द्वितीय संस्करण की प्रस्तावना

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पहले संस्करण को पाठकों द्वारा हाथों–हाथ ले लिए जाने पर मैं आनन्द का अनुभव कर रहा हूँ । सुविज्ञ पाठकों ने इसे सराहा है और साथ ही साथ समयानुकूल बताया है । मैं सबका हृदय से आभारी हूँ । पिछले संस्करण में कहीं–कहीं टाइपिंग की अशुद्धियां रह गई थीं उन्हें अब ठीक कर लिया गया है । सुन्दर छपाई के लिए मैं अपने मुद्रक का आभारी हूँ जिन्होंने इस ग्रंथ के गौरव के अनुरूप इसका मुद्रण किया है । ग्रंथ की जैकेट से संबंधित स. रूप सिंह के दिए सुझावों के कारण ही यह जैकेट सुन्दर और मनोहारी बन पाई है। मैं उनका आभारी हूँ ।

पाठकों के सुझावों की हम प्रतीक्षा करेंगे और यथासंभव उन्हें अपनाने का प्रयत्न करेंगे ।

२१.१०.२००६

विनीत
जोध सिंह (डा.)

भूमिका

सिक्ख धर्म को सही परिप्रेक्ष्य में हिन्दी भाषी जन समुदाय के सम्मुख प्रस्तुत करने की आवश्यकता को पिछले कुछ वर्षों से वड़ी तीव्रता से अनुभव किया जा रहा है । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग में सिक्ख धर्म और दर्शन विद्यार्थियों को पढ़ाते समय मुझे यह अनुभव हुआ कि सिक्ख दर्शन पर हिन्दी में पुस्तकों की संख्या नगण्य ही है । जो थोड़ी बहुत पुस्तकें हैं वे पूर्वाग्रहों से मुक्त नहीं हैं । गुरु ग्रंथ साहिब सिक्ख धर्म का मूल आधार ग्रंथ है जिसके कुछ अंशों के अनुवाद यदा कदा प्रस्तुत होते रहे हैं । एक दो अनुवाद कार्य ऐसे भी हैं जिनमें भावावेश का वाहुल्य है और उन्हें भी पूर्वाग्रहों से मुक्त नहीं कहा जा सकता । गुरु ग्रंथ साहिब की कुंजी के रूप में मानी जाने वाली भाई गुरदास की रचनाओं का और गुरु गोबिन्द सिंह के नाम के साथ जुड़ी रचनाओं के समूह दसम ग्रंथ साहिब के हिन्दी अनुवाद मैंने १९८० के दशक में सुविज्ञ पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किए थे जिन्हें हिन्दी भाषी प्रान्तों में बहुत सराहा गया था । तभी से मेरे मन में श्री गुरु ग्रंथ साहिव के अनुवाद के लिए एक तीव्र उत्कण्ठा थी परन्तु दर्शन का विद्यार्थी एवं अध्यापक होने के नाते मेरी व्यस्तताएं मुझे इस कार्य को हाथ में लेने के रास्ते पर किसी न किसी रूप में अवरोध बनती रहीं । सन् २००४ गुरु ग्रंथ साहिब के सम्पादन का चार सौवां वर्ष है और इसे भी खालसा सृजना की त्रिशताब्दी की तरह संसार भर में मनाए जाने की तैयारियां अभी से ही प्रारम्भ हो गई हैं । इस अनुवाद कार्य के माध्यम से इन तैयारियों में शामिल होने के लिए मैं अपने आप को सौभाग्यशाली मानता हूं । इस अनुवाद में मेरा यह प्रयत्न होगा कि विना किसी की अवज्ञा किए हुए गुरु ग्रंथ की वाणी के मर्म को सही ढंग से पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किया जा सके ।

गीता रहस्य के प्रणेता श्री बाल गंगाधर तिलक के कथनानुसार नित्य व्यवहार में 'धर्म' शव्द का उपयोग केवल "पारलौकिक सुख का मार्ग" के अर्थ में किया जाता है । जव हम किसी से प्रश्न करते हैं कि "तेरा कौन सा धर्म है ?" तव उससे हमारे पूछने का यही हेतु होता है कि तू अपने पारलौकिक कल्याण के लिए किस मार्ग–वैदिक, वौद्ध, जैन, ईसाई, मुहम्मदी या पारसी–से चलता है, और वह हमारे प्रश्न के अनुसार ही उत्तर देता है । इसी तरह स्वर्ग प्राप्ति के लिए साधन भूत यज्ञ–याग आदि वैदिक विषयों की मीमांसा करते समय "अथातो धर्म जिज्ञासा" आदि धर्म सूत्रों में भी धर्म शव्द का यही अर्थ लिया गया है । परन्तु "धर्म" शव्द का इतना ही संकुचित अर्थ नहीं है । इसके सिवा राज–धर्म, देश–धर्म, जाति–धर्म, कुल–धर्म, मित्र–धर्म इत्यादि सांसारिक नीति वंधनों को भी धर्म कहते हैं । धर्म शव्द के इन दो तथ्यों को यदि पृथक करके दिखलाना हो तो पारलौकिक धर्म को "मोक्ष धर्म" अथवा सिर्फ "मोक्ष" और व्यावहारिक धर्म अथवा नीति को केवल धर्म कहा करते हैं । उदाहरणार्थ, चतुर्विधपुरुषार्थों की गणना करते समय हम लोग "धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष" कहा करते है । इसके पहले शव्द धर्म में ही यदि मोक्ष का समावेश हो जाता तो अन्त में मोक्ष को पृथक पुरुषार्थ बतलाने की आवश्यकता न रहती, अर्थात् यह कहना पड़ता है कि "धर्म" पद से इस स्थान पर संसार के सैकड़ों नीति धर्म ही शास्त्रकारों को अभिप्रेत हैं । उन्हीं को हम लोग आजकल कर्तव्य–कर्म, नीति–धर्म अथवा सदाचरण कहते हैं ।[१]

गीता में जहां श्रीकृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि "स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः"[२] वहां भी वे धर्म को पारलौकिक सुख के मार्ग के रूप में न लेकर कर्तव्य कर्म के अर्थ में लेते हैं । गुरु गोबिन्द सिंह जव ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि

१ गीता रहस्य, तृतीय संस्करण, सन् १९१९ पृष्ठ ६४

२ ३.३५

"अवर वासना नाहि मोहि धर्मजुद्ध के चाइ" तो वे भी कर्तव्य कर्म एवं नैतिक धर्म की संस्थापना के लिए सतत् संघर्षशील वने रहने का उत्साह एवं वल परमात्मा से मांगते हैं। दिल्ली के चांदनी चौक में शहीद किये गए गुरु तेगवहादुर के वारे में गुरु गोविन्द सिंह कहते हैः–

धर्म हेत साका जिन कीआ ।।
सीस दीआ पर सिरर न दीआ ।।

अर्थात् गुरु तेग वहादुर ने नैतिक धर्म, सदाचरण और धर्म की स्वतन्त्रता को बनाए रखने के लिए अपना वलिदान दे दिया और कर्त्तव्य कर्म से च्युत न हुए। इन्द्रियों के स्वाभाविक कर्मों को अथवा इन्द्रियों की पहुंच के घेरे में सीमित कार्य कलापों को धर्म नहीं कहा जा सकता अपितु इन्द्रियों के कार्यों को उचित रूप से प्रतिबन्धित करने वाली आन्तरिक शक्ति या प्रेरणा को धर्म कहा जा सकता है क्योंकि वैसे तो मनु ने कहा है कि "न मांसभक्षणे दोषो न मद्ये न च मैथुने"[१] परन्तु महाभारतकार ने स्पष्ट कहा है :–

आहार निद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम् ।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ।।३[२]

अर्थात आहार, निद्रा भय और मैथुन–मनुष्यों और पशुओं के लिए एक ही समान स्वाभाविक है। मनुप्यों और पशुओं में केवल धर्म के वल से इन स्वाभाविक वृत्तियों को मर्यादित कर सकने का भेद है। जिस मनुष्य में यह धर्म नहीं है वह पशु तुल्य है ।

गुरु ग्रंथ साहिब में धर्मः

कहा जा सकता है कि धर्म की उपर्युक्त नियंत्रक शक्ति की कल्पना कर कुछ लोगों ने आहार, निद्रा, भय एवं मैथुन से पूर्णतया निवृति पा लेने को ही श्रेष्ठ धर्म मान लिया होगा। गुरु नानक कहते है कि धर्म, प्रवृति और निवृत्ति दोनों छोरों को मिलाने वाला सूत्र हैः–

"परविरति निरविरति हाठा दोवै विचि धरमु फिरै रैबारिआ ।[३]

गुरु अरजन देव सभी धर्मों में श्रेष्ठ धर्म का प्रतिपादन करते हुए कहते हैंः–

सरव धरम महि स्रेसट धरमु ।
हरि को नामु जपि निरमल करमु ।[४]

अर्थात् सर्व धर्मों की श्रेष्ठता इसी में है कि उन्हें मानने वाले आवश्यक रूप से परमात्मा के नाम का स्मरण करें और ऐसा न सोचें कि मुंह से परमात्मा के नाम का जाप करते रहें और हाथों पैरों से विकार युक्त कार्य करते

---

१ मनुस्मुति ५.५६
२ शान्ति पर्व २९४, २१
३ गुरु नानक, गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ १२८०
४ गुरु अरजन देव, गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ २६६

रहें । निर्मल कर्म भी धार्मिक जीवन का आवश्यक अंग है । यहां गुरु जी ने नैतिक कर्मों और अध्यात्म कर्मों के सामंजस्य को व्यक्तित्व का आवश्यक अंग माना है । इन्द्रियां यदि व्यक्ति को अध्यात्म के रास्ते पर चलने में सहायता न देकर उसे ईर्ष्या घृणा और लोलुपता के अर्जन मात्र में सहायता करती हैं तो वे व्यर्थ हैं:-

मिथिआ स्रवन पर निंदा सुनहि ।
मिथिआ हसत पर दरब कउ हिरहि ।
मिथिआ नेत्र पेखत परित्रिअ रुपाद ।
मिथिआ रसना भोजन अनस्वाद ।
मिथिआ चरन पर विकार कउ धावहि।
मिथिआ मन पर लोभ लुभावहि ।
मिथिआ तन नहीं पर उपकारा ।
मिथिआ वासु लेत बिकारा ।
विनु वूझे मिथिआ सभ भए ।
सफल देह नानक हरि हरि लए ।[१]

इस प्रकार गुरु ग्रंथ साहिव के अनुसार धर्म नैतिक और आध्यात्मिक ऊंचाइयों की ओर ले जाने वाली वह शक्ति है जो प्रत्येक मनुष्य में विद्यमान है और प्रत्येक व्यक्ति अपनी इन्द्रियों के माध्यम से अपनी मूल प्रवृत्तियों को परिमार्जित कर उस आभ्यन्तरिक शक्ति को प्राप्त कर सकता है । यही कारण है कि सिक्ख धर्म की आधारशिला स्वरूप श्री गुरु ग्रंथ साहिव में केवल सिक्ख के लिए ही निर्देश नहीं है कि वह कैसे अपने वर्तमान जीवन और भविष्य को निखार सकता है वल्कि प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह हिन्दू हो, मुसलमान हो, क्षत्रिय हो, ब्राह्मण हो, को अपने–अपने धर्म में सच्चा एवं निष्ठावान वनने के लिए कहा गया है । सच्चे मुसलमान के लिए गुरु नानक कहते हैं कि सच्चा मुसलमान होना अत्यन्त ही कठिन कार्य है:–[२]

मुसलमाणु कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमाणु कहावै ।
अवलि अउलि दीनु करि मिठा मसकल माना मालु मुसावै ।
होइ मुसलिमु दीन मुहाणै मरण जीवण का भरमु चुकावै ।
रव की रजाइ मने सिर उपरि करता मंने आपु गवावै
तउ नानक सरव दीआ मिहरंमति होई त मुसलमाणु कहावै ।

अर्थात वास्तविक मुसलमान कहलाना मुश्किल काम है । यदि कोई सच्चा हो तो मुसलमान कहलाए । सच्चा मुसलमान वनने के लिए सवसे पहले आवश्यक है कि धर्म प्यारा लगे और धार्मिक होने के लिए जिस प्रकार रेती से रगड़–रगड़

१ गुरु अरजन देव, गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ २६८–२६९
२ गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ १४१

कर लोहा साफ किया जाता है उसी प्रकार व्यक्ति अपनी नेक कमाई को जरूरतमंदों में वांट–वांट कर अपने अहम् को आत्मा से खींच कर अलग कर दे । आयु पर्यन्त धर्म के मार्ग दर्शन में चले और जीवन मरण के डर को दूर कर दे । खुदा की रज़ा को सिर माथे स्वीकार करे और परमात्मा को ही कर्त्ता मानकर अपने अंहकार को खो दे । इस प्रकार हे नानक परमात्मा के बनाये सभी जीवों से प्यार करने वाला व्यक्ति ही अपने आप को सच्चा मुसलमान कहला सकता है । यह धर्म को जीवन का मुख्य आधार मानने का सैद्धान्तिक पक्ष है परन्तु ये सिद्धान्त, एक सच्चा मुसलमान वनने के लिए उत्सुक व्यक्ति में क्रियान्वित कैसे होंगे । कैसे व्यवहारिक जीवन सुन्दर वनेगा । इस प्रक्रिया में गुरु नानक मानते हैं कि मुसलमान के लिए नमाज आवश्यक है परन्तु नमाज की उनकी अपनी व्याख्या है । वे कहते हैः–

पंजि निवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ ।
पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ ।
चउथी नीअति रासि मनु पंजवीं सिफति सनाइ ।
करणी कलमा आखि कै ता मुसलमाणु सदाइ ।[1]

अर्थात मुसलमान के लिए पांच नमाजें हैं पांच ही हैं उनके समय और पांच उनके नाम हैं । सच वोलना पहली नमाज है । मेहनत की कमाई दूसरी नमाज है । खुदा से सवका भला मांगना तीसरी नमाज है । नीयत को साफ रखना अर्थात मन को साफ रखना चौथी नमाज है और परमात्मा का गुणानुवाद पांचवी नमाज है । इन पांचों नमाजों के माध्यम से तथा साथ साथ उच्च आचरण रूपी कलमा पढ़े तव व्यक्ति अपने आप को सच्चा मुसलमान कहला सकता है ।

हिन्दू धर्म के प्रतीक पंडित–ब्राह्मण वर्ग के लिए गुरु ग्रंथ साहिव के संकलन कर्त्ता पांचवें गुरु अरजन देव के हृदय में पर्याप्त सम्मान है । परन्तु पंडित की उनकी अवधारणा सच्चे मुसलमान की अवधारणा से बहुत भिन्न नहीं है । वे मानते हैं कि–

सो पंडितु जो मनु परबोधै । राम नामु आतम महि सोधै ।
राम नाम सारु रसु पीवै । उस पंडितु कै उपदेसि जगु जीवै ।
हरि की कथा हिरदै बसावै । सो पंडित फिरि जोनि न आवै ।
बेद पुरान सिम्रिति बूझै मूल । सूखम महि जानै असथूलु ।
चहु वरना कउ दे उपदेसु । नानक उसु पंडितु कउ सदा अदेसु ।।[2]

इन पंक्तियों में गुरु अरजन देव उस पण्डित को हमेशा प्रणाम करने के लिए तत्पर हैं जो वेद पुराणों स्मृतियों के मूल तत्व को जानता है और सारे स्थूल जगत को उसी सूक्ष्म सत्ता का प्रसार मानता है । गुरु नानक देव उस व्राह्मण को पूज्य मानते हैं जो ब्रह्म भाव को प्राप्त हो ।

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १४१
२ गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ २७४

सो ब्रहमणु जो बिंदै ब्रहमु ।
जपु तपु संजमु कमावै करमु ।
सील संतोख का रखै धरमु ।
बंधन तोड़ै होवै मुकतु ।
सोई ब्राह्मण पूजण जुगतु ।
(गुरु ग्रंथ पृ. १४११)

यहां सच्चा ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म के साथ तादात्म्य स्थापित कर चुका हो; जाप, तप और संयम–पूर्ण कर्म करता हो तथा शील व संतुष्टि रूपी धर्म को अपनाए हुए हो । गुरु नानक कहते हैं कि जिसने लौकिक बन्धनों को तोड़ दिया है वही ब्राह्मण मेरे लिए पूज्य है । इस प्रकार चौथे गुरु रामदास जी सच्चे सिक्ख की परिभाषा श्री गुरु ग्रंथ साहिब में बतलाते हैं –

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरिनाम धिआवै ।
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ।
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ।
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरिनामु धिआवै ।।
जो सास गिरसि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिखु गुरु मनि भावै ।।
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिखु गुरू उपदेसु सुणावै ।।
जनु नानक धूड़ि मंगै तिसु गुर सिख की जो आपि जपै अवरह नामु जपावै।[१]

अर्थात जो मनुष्य सच्चे गुरु का सच्चा सिक्ख कहलाता है वह नित्य प्रातः उठकर हरिनाम का स्मरण करता है । प्रतिदिन मेहनत की कमाई करता है, स्नान करता है और (अन्तरात्मा रूपी) अमृत सरोवर में डुबकी लगाता है । गुरु के उपदेश के माध्यम से प्रभु नाम का जप करता है और इस प्रकार उसके सारे विकार दूर हो जाते हैं । फिर दिन निकल आने के बाद तक वह गुरबाणी का गायन करता है और उठते बैठते अर्थात दिनभर के जीविका सम्बन्धी कार्य करते हुए भी वह हरिनाम का स्मरण बनाये रखता है । गुरू को वही सिक्ख अच्छा लगता है जो प्यारे प्रभु को हमेशा याद रखता है और जिस पर प्रभु कृपा होती है वही मनुष्य सच्चे गुरु से शिक्षा ग्रहण करता है । नानक कहते हैं कि मैं भी उसी गुरु के सिक्ख की चरण–धूलि माथे पर लगाना चाहता हूं जो स्वयं भी प्रभु का स्मरण करता है और दूसरो को भी इस कार्य के लिए प्रेरित करता है ।

शास्त्रकारों ने भी, जैसे कि हम पहले देख चुके है, धर्म को मानव जीवन का सर्वोत्कृष्ट आधार माना है । इस धर्म के मुख्य रूप से दस लक्षण गिनाये गये हैं जो मेरे विचार से सभी धर्मों, सम्प्रदायों को बिना किसी हिचक और तकनीकी परेशानी के मान्य हो सकते हैं । ये लक्षण हैं–

धृति क्षमा दमोस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।।

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ३०५–६

अब इन दस लक्षणों को कोई यह कहकर त्यागना चाहे कि ये संस्कृत भाषा में है, अरबी, फारसी, पंजाबी में या अंग्रेजी भाषा में नहीं लिखे गये हैं तो अलग बात है वैसे ये दसों लक्षण प्रत्येक मानव के आभूषण हो सकते हैं । यदि प्रत्येक धर्म के मूल तत्वों के बारे में निष्पक्ष रूप से जाना जाए तो किसी न किसी रूप में ये दस बातें अवश्य मिलेंगी। धैर्य, क्षमा, संयम, अचौर्य, शौच, इन्द्रिय–निग्रह, बुद्धि–विवेक, सत्य एवं अक्रोध के महत्व को कौन नकारना चाहेगा। परन्तु ये बड़े खेद का विषय है कि मूलभूत बातें एक होते हुए भी और इस तथ्य को स्वीकार करते हुए भी दूसरे धर्मो के लिए या तो उदासीनता का रवैया अपनाया जा रहा है अथवा दूसरे धर्मों को हीन बतला कर अपने धर्म को मात्र सच्चा धर्म साबित किया जा रहा है ।

सर्व धर्म समभाव के रास्ते में अवरोध एवं गुरु ग्रंथ साहिब

लाखों वर्षों से मनुष्य इस धरती पर रह रहा है और उसने नाखूनों, पंजों के प्रयोग के आधार पर आज के वर्तमान युग में इतने सूक्ष्म एवं जटिल उपकरणों एवं यन्त्रों का आविष्कार कर लिया है कि उनकी सहायता से मानव के लिए अब कोई कार्य भी असम्भव नहीं रह गया है । परन्तु इस सारे विकास में ध्यान देने योग्य तथ्य यह ह कि जव मनुष्य केवल दांतों, पंजों, नाखूनों या पत्थरों का ही प्रयोग करना जानता था तब उसे शायद किसी के सहयोग की आवश्यकता नहीं थी । आज के युग का ज्ञान विज्ञान बिना आपसी सहयोग और सद्भावना के असम्भव है । यह सहयोग और मानसिक स्तर पर आदान प्रदान की ही भावना है जिसके फलस्वरूप हम आज संसार को उत्तरोत्तर सौन्दर्यमय बनता हुआ देख रहे हैं । संघर्ष प्रेम मानव मन की आंतरिक स्वाभाविक प्रवृतियां है । हम प्रेमवश संघर्ष करते हैं और हमें निरन्तर इस कार्य को आगे बढ़ाना है परन्तु ध्यान यह करना होगा कि हमारा प्रेम स्वार्थ की कोटि में और संघर्ष शत्रुता के स्तर तक न आने पाए । समाज दर्शन के पण्डित यह भली भांति जानते हैं कि सामाजिक स्तर पर व्यक्ति का व्यक्ति के साथ सम्वन्ध एक अलग प्रकार का होता है, जैसे भाई का भाई के साथ पिता का पुत्र–पुत्रियों के साथ । समाज में बने रहने के लिए व्यक्ति को अपने समचिंतक समाज के साथ भी एक सम्बन्ध बनाए रखना पड़ता है; जैसे एक विद्यार्थी का पूरी कक्षा के साथ सम्बन्ध या किसी व्यक्ति का किसी एक परिवार के साथ सम्बन्ध । पहले और दूसरे प्रकार के सम्बन्धों में निश्चित रूप से कुछ अन्तर होता है । तीसरा सम्वन्ध व्यक्ति का एक अन्य प्रकार का भी होता है, और वह सम्बन्ध है एक परिवार का दूसरे परिवार के साथ सम्बन्ध, अर्थात् एक कक्षा का दूसरी के साथ सम्वन्ध या एक राज्य का दूसरे राज्य के साथ सम्बन्ध या एक देश का दूसरे देश के साथ सम्बन्ध ।

उपर्युक्त तीनों प्रकार के सम्बन्ध ऐसे हैं जिसमें बाकी चाहे जो कुछ हो परन्तु ''व्यक्ति विशेष'' इन सारे सम्वन्धों में विद्यमान है । व्यक्ति इन सारे सम्बन्धों का केन्द्र है, और इस केन्द्र विन्दु का आधार यदि व्यापक धर्म है, अध्यात्म तत्व है; इसका आधार केवल बाहरी कर्मकांड, क्रियाएं ही नहीं हैं तो प्रेम स्वार्थ नहीं बन सकता और संघर्ष घृणा में शत्रुता में परिणत नहीं हो सकता । हां सच्चे अर्थों में धार्मिक व्यक्ति स्वार्थ को प्रेम में बदल सकता है और संघर्ष को स्पर्धा के रूप में परिमार्जित कर सकता है । वास्तविक रूप से आध्यात्मिक व्यक्ति उपर्युक्त तीनों प्रकार के सम्बन्धों में एक सामंजस्य स्थापित कर लेने में सक्षम हो जाता है, जिससे व्यक्ति, परिवार और समाज या समाज, प्रदेश और देश अथवा देश, द्वीप महाद्वीप और अंततः सम्पूर्ण मानवता के सम्बन्ध एक दूसरे के शुभ चिन्तन का दृढ़ आधार बन जाते हैं ।

यह नहीं कहा जा सकता कि लोग इन बातों को समझते नहीं हैं । सैद्धान्तिक रूप से अधिकतर लोग इन तथ्यों से सहमत होंगे । फिर क्या कारण है कि आज के युग में धन धान्य की वृद्धि होने के बावजूद, ज्ञान, विज्ञान अधिक होने के बावजूद वर्षों की दूरिया दिनों और दिनों की दूरियां घण्टों में बदल जाने के बावजूद एक समाज दूसरे समाज से घृणा करता है; एक धर्म दूसरे धर्म को नीचा दिखाना चाहता है और एक देश दूसरे देश को धर्म के तथा–कथित आधार पर तहस नहस कर देना चाहता है । सर्वधर्म समभाव की रुकावटों को मोटे तौर पर निम्न प्रकार से समझा जा सकता है–

सर्वधर्मों में समभाव के रास्ते में सबसे वड़ा अवरोध कुछ गिने चुने वे धर्मान्ध लोग हैं जो सामान्य व्यक्ति के मस्तिष्क में यह कूट कूट कर भरने में संलग्न हैं कि केवल उन्हीं का धर्म ईश्वरीय धर्म है और केवल उन्हीं का धर्मग्रंथ दैवी प्रेरणाओं का एक मात्र संवाहक है । ये धर्मान्ध एवं स्वार्थी व्यक्ति सामान्य व्यक्ति की आंखों पर अन्धविश्वास की पट्टी ठीक उसी प्रकार सफलता पूर्वक वांध रखने का प्रयत्न करते हैं जिस प्रकार तेली कोल्हू के वैल की आंखों पर पट्टी वांध कर मनचाहे समय तक उससे काम लेने में सक्षम होता है । केवल अपने धर्म ग्रंथों में वर्णित वातों को ही वे अन्तिम सत्य मानकर चलते हैं और अन्य धर्मों एवं उनके धर्मग्रंथों में वर्णित चिरन्तन सत्यों को या तो वे मानते ही नहीं और यदि कुछ मानते भी हैं तो मात्र अर्धसत्य के रूप में ही मानकर वे जिज्ञासु की जिज्ञासा शान्त करने का उपक्रम करते हैं । यह विकृत मनोवृत्ति यहीं पर समाप्त नहीं होती बल्कि इन्हीं धारणाओं के अन्तर्गत अपने आपको सर्वोत्कृष्ट धर्म से सम्बन्धित मानने वाला व्यक्ति या समाज दूसरे धर्म और समाज को अपना धर्म त्यागने के लिए वाध्य करता है और इस प्रकार के कार्य को करने में पुण्य लाभ का अनुभव प्राप्त करता है । भारत वर्ष का मध्ययुगीन इतिहास इस वात का साक्षी है कि किस प्रकार यहां लोगों को स्वधर्म त्यागने के लिए मजवूर किया जाता रहा है ।

सिक्ख धर्म इसी प्रकार की धर्मान्धता और अंधविश्वास के विरुद्ध खड़ा होने वाला धर्म है जो एक ओर तो हिन्दू धर्म में व्याप्त ऊंच नीच को समाप्त करने पर वल देता है और दूसरी ओर अन्य धर्मों के साथ समभाव की प्रेरणा भी देता है । तीसरे गुरु अमरदास स्पष्ट शव्दों में ईश्वर से प्रार्थना करते हैं –

"जगतु जलंदा रखि लै अपणी किरपा धारि ।
जितु दुआरै उबरै तितै लेहु उबारि ॥"[१]

अर्थात् सारा जगत वैमनस्य, हिंसा घृणा की अग्नि में जल रहा है । हे ईश्वर, कृपा पूर्वक जिस भी द्वार (धर्म) के माध्यम से यह छल कपट घृणा अग्नि से उवर सके इस संसार का उद्धार करो । यहां स्पष्ट है कि गुरु अमर दास किसी एक विशेष धर्म या द्वार पर जोर नहीं देते; वे तो सब धर्मों को आध्यात्म विकास के लिए सक्षम मानते हैं । गुरु गोविन्द सिंह भी इसी तथ्य को और उभार कर अपनी वाणी में सामने लाते हैं । वे कहते हैं–

---

१ गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ ८५३

"कोऊ भयो मुंडिया संनिआसी कोऊ जोगी भयौ कोई ब्रह्मचारी कोऊ जती अनुमानबो ।
हिन्दू तुरक कोऊ राफजी इमाम साफी मानस की जात सबै एकै पहचानबो ।
करता करीम सोई राजक रहीम ओई दूसरों न भेद कोई भूल भ्रम मानबो ।
एक ही की सेव सब ही को गुरुदेव एक एक ही सरूप सबै एकै जोत जानबो ।"[१]

गुरु गोबिन्द सिंह का एक अन्य कवित्त इसी संदर्भ में दृष्टव्य है–

"देहरा मसीत सोई पूजा और निवाज ओई मानस सबै एक पै अनेक को भ्रमाउ है
देवता अदेव जच्छ गंधरब तुरक हिन्दु निआरे निआरे देसन के भेस को प्रभाउ है ।
एके नैन एके कान एके देह एके बान खाक बाद आतस और आब को रलाउ है ।
अलह अभेख सोई पुरान औ कुरान ओई एक ही सरूप सबै एक ही बनाउ है ।"[२]

गुरु नानक देव की दृष्टि में सच्चा गुरु, परम शिक्षक वही है जो सब को एक दूसरे के साथ जोड़ देता है, सबके हृदय से घृणा दूर कर सबको मिलाता है–

"नानक सतिगुरु ऐसा जाणीऐ जो सबसे लए मिलाइ जीउ ।"[३]

सिक्ख धर्म में अन्य धर्मों के प्रति सद्भावना के उपर्युक्त सैद्धान्तिक पक्ष को पूर्णतया व्यावहारिक भी बना कर दिखाया गया है । सिक्ख धर्म वैसे तो ज्ञान के सभी स्रोतों का सम्मान करता है परन्तु मुख्य रूप से इस धर्म का प्रेरणा स्रोत श्री गुरु ग्रंथ साहिब है । १४३० पृष्ठ के श्री गुरु ग्रंथ की आन्तरिक संरचना को देखने पर यह भली भांति प्रकट हो जाता है कि इस महान ग्रंथ के सम्पादक पांचवें गुरु अरजन देव का ध्येय सर्वधर्म सद्भावना को स्थापित करना ही था । इसमें छः सिक्ख गुरुजनों की वाणियों के अतिरिक्त तत्कालीन भारत के प्रमुख सब सम्प्रदायों के अग्रणी सन्तों महात्माओं की अमृतवाणियां भी संग्रहीत हैं । गुरु ग्रंथ के वाणीकारों में से जयदेव, नामदेव, त्रिलोचन, परमानन्द, सदना, बेणी, रामानन्द, धन्ना, पीपा, सैन जी, कबीर, रविदास, सूरदास आदि जहां हिन्दू धर्म और उसके विभिन्न स्तरों का प्रतिनिधित्व करते हैं वही गुरु ग्रंथ साहिब में मुस्लिम सन्त शेख फरीद, शेख भीखन और मरदाना की वाणियां भी संग्रहित हैं और सिक्ख इन वाणियों से भी उतनी ही प्रेरणा प्राप्त करता है जितनी सिक्ख गुरुजनों की वाणियों से । गुरु ग्रंथ साहिब का प्रत्येक पाठक इस बात को भली प्रकार जानता है कि शेख फरीद की वाणियों का उनके महान् आध्यात्मिक महत्व के कारण सिक्ख जीवन में कितना महत्वपूर्ण स्थान है ।

भाषा के स्तर पर भी अपूर्व सम्भाव की भावना का साक्षात्कार श्री गुरु ग्रंथ साहिब में होता है । पंजाबी, मुलतानी, ब्रजभाषा की शब्दावली का प्रयोग खुल कर सिक्ख गुरुजनों ने किया है । संस्कृतगर्भित पदावली को भी अधिकारपूर्वक अपनाया गया है । गुरु अरजनदेव 'क्रोध' के सम्बोधित करते हुए कहते हैं–

---

१ दसम ग्रंथ–अकाल उसतति ॥ ८५ ॥
२ दसम ग्रंथ–अकाल उसतति ॥ ८६ ॥
३ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ७२

हे कलि मूल क्रोधं कदंच करुणा न उपरजते ।
बिखयंत जीवं वसं करोति निरतं करोति जथा मरकटह ।[१]

गुरु नानक देव एवं अन्य गुरुजनों ने अरबी फारसी की शब्दावली का प्रयोग भी उदार मन से गुरु ग्रंथ साहिब में किया है। गुरु नानक देव ने पंजाबी, हिन्दी, संस्कृत का तो अध्ययन किया ही था अन्य पदों के अतिरिक्त निम्नलिखित पद को देखने से उनकी अरबी फारसी की शब्दावली के प्रति उदारभावना, निष्ठा एवं अध्ययन की पुष्टि होती है। वे कहते हैं–

यक अरज गुफतम पेसि तो दर गोस कुन करतार ।।
हका कबीर करीम तू बेऐब परवदगार ।। १ ।।
दुनिया मुकामे फानी तहकीक दिल दानी ।।
मम सर मूइ अजराईल गिरफतह दिल हेचि न दानी ।। १ ।। रहाउ।।
जन पिसर पदर बिरादरां कस नेस दसतंगीर ।।
आखिर बिअफतम कस न दारद चूं सवद तकबीर ।। २ ।।
सब रोज गसतम दर हवा करदेम वदी खिआल ।।
गाहे न नेकी कार करदम मम ई चिनी अहवाल ।। ३ ।।
वदबखत हम चु बखील गाफिल वेनजर वेवाक ।।
नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरां पाखाक ।। ४ ।। १ ।।[२]

भारत वर्ष में प्रचलित मुख्य धर्मों के ग्रंथों के अवलोकन से यह भली भांति स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत ग्रंथों में अरबी फारसी की शब्दावली और अरबी फारसी के ग्रंथों में संस्कृत की शब्दावली शायद ही कहीं देखने को मिले। परन्तु ग्रंथ साहिब में, निरंजन, ओंकार, राम, गोपाल, वासुदेव, नारायण आदि संस्कृत नामों के साथ करीम, रहीम, अल्लाह आदि संज्ञायें भी प्रभूत मात्रा में प्रयुक्त हुई है। यह कहा जा सकता है कि गुरु ग्रंथ के आधार पर भाषायी स्तर के विवादों को भी वर्तमान संकीर्णतावादी युग में स्पष्ट दिशा निर्देश मिल सकता है, क्योंकि भाषा के सम्बन्ध में रूढ़िवादिता भी अन्य धर्मों के प्रति सम्भाव की भावना को काफी ठेस पहुंचाती है।

सिक्ख धर्म के कुछ अन्य तथ्य भी इसी सद्भावना के प्रतीक हैं जिनकी ओर संक्षिप्त रूप से संकेत करना यहां अप्रासांगिक नहीं होगा। गुरु नानक देव सनातनी विचार धारा में विश्वास रखने वाले एक परिवार में पैदा हुए थे परन्तु इस बात की चिन्ता किए बगैर उन्होंने अपना घनिष्ठ मित्र एक मुसलमान युवक मरदाना को बनाया और जीवन के सैंतालिस वर्ष उसी मित्र की मित्रता को समर्पित किए। जहां भी गुरु नानक गए मरदाना सदैव साथ रहा और यह कहने की आवश्यकता नहीं कि साथ साथ रहते हुए नानक और मरदाना साथ–साथ ही खाते–पीते भी रहे होंगे, जो शायद आज तो इतना असम्भव नहीं लगता परन्तु उस समय के कट्टरपंथी युग में यह सब अवश्य असम्भव था। पांचवें

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १३५८
२ वही–पृष्ठ ७२१

गुरु अरजन देव ने जहां गुरु ग्रंथ साहिब का संकलन तैयार किया वहीं साथ ही साथ अमृतसर में एक भव्य हरिमंदिर साहिब भी बनवाया जिसे बाद में स्वर्ण मंदिर भी कहा गया और जो सब जातियों धर्मों के लिए खुला था। इस स्वर्ण मन्दिर की नींव भी तत्कालीन प्रसिद्ध मुस्लिम फकीर साईं मियां मीर के हाथों रखवाई जो निश्चित रूप से उनके सर्वधर्मों के प्रति समभाव और आदर भाव का द्योतक है। अमृतसर में ही छठवें गुरु हरगोबिन्द जी द्वारा वनवाया गया कौलसर नामक सरोवर एक मुस्लिम महिला के नाम पर बना हुआ सरोवर है जिसमें आज भी प्रत्येक सिक्ख श्रद्धा पूर्वक स्नान करता है। सैयद बदरुदीन शाह (पीर बुद्धूशाह), पठान नबी खां, गनी खां, आदि ने गुरु गोबिन्द सिंह जी की युद्ध काल और शान्ति के समय में भी भरपूर सहायता करने से सिद्ध होता है कि तत्कालीन कट्टरपंथियों को छोड़कर मुस्लिम हिन्दू सभी धर्मों को मानने वालों के प्रति सिक्खों का समादर भाव किसी से छुपा हुआ तथ्य नहीं था और इसी कारण कालान्तर में पंजाब में परस्पर सदभाव का वातावरण बन सका। शायद इसी कारण महाराजा रणजीत सिंह का प्रधानमंत्री किसी सिक्ख के स्थान पर फकीर अजीजुदीन का होना और महाराजा का एक ओर स्वर्ण मंदिर पर सोना लगवाना और दूसरी ओर काशी विश्वनाथ, वाराणसी के लिए इक्कीस मन सोना भेजना सिक्ख इतिहास में किसी को भी कोई विशेष विस्मयकारक नहीं लगता।

धार्मिक सद्भावना के अभाव का दूसरा मुख्य कारण यह है कि अपने अपने धर्म ग्रंथों की गहरी आध्यात्मिक बातों को समझने का प्रयत्न लोग नहीं करते और धर्मों से सम्बन्धित वाहरी कर्मकांडों में ही अटककर रह जाते हैं। धर्म के इन बाहरी अत्यन्त स्थूल रूपों ने मानव मात्र में काफी भेदभाव उत्पन्न कर दिए हैं। धर्मों के मनुष्यों द्वारा धारण किए हुए बाहरी चिन्ह् बेशक प्रतीकात्मक रूप से किन्हीं महान् उद्देश्यों की ओर संकेत करते हैं, परन्तु उन महान् उद्देश्यों को न समझ कर हम केवल इन बाहरी स्थूल बातों में ही उलझे हुए हैं। धार्मिक कृत्यों में भी बाहरी तड़क-भड़क और दिखावा हमारा विशेष गुण हो गया है। हमारा विश्वास अब मात्र जलसे-जुलूसों में ही रह गया है और वह भी शायद इसलिए कि अन्य धर्मों को मानने वाले हमारी संगठित शक्ति को देखकर भयभीत हो सकें। धर्म का उद्देश्य तो यह है कि लोगों के दिलों में बैठे डर एवं अन्य कमज़ोरियां दूर हो सकें परन्तु अब स्थिति यह है कि धार्मिक संगठनों के बल पर लोगों में उन्माद फैलाकर उन्हें भयभीत करना ही जैसे कुछ धर्मों का उद्देश्य रह गया हो। यह सब केवल धर्म ग्रंथों के भीतरी सत्यों को ठीक से न पहचान कर उन्हें न मानने के कारण ही होता है। आज हिन्दू मुस्लिम सिक्ख आदि लगभग सभी इस प्रकार की मनोस्थिति का शिकार हैं। धर्म के वाहरी पक्षों और आन्तरिक गहराई में ठीक पहचान कर सकने की असफलता धर्म के बारे में भ्रम एवं मिथ्या ज्ञान का काफी बड़ा कारण है। इससे धर्म के प्रति लोगों की कुरुचि और एक निश्चयात्मक विरोध प्रबल होता है। इसलिए सिक्ख धर्म अत्यधिक बाह्य आडम्बरों का खण्डन करता है और पौराणिक कथाओं तथा अवतारवाद की भूल भूलैयां में पड़े बिना एक ही अद्वैत परम सत्ता की उपासना पर बल देता है। सिक्ख सिद्धान्तों में धर्म के बाहरी रूपों की अवज्ञा किए बिना धर्म के वास्तविक स्वरूप को ढूंढने का प्रयत्न किया गया है। पुजारी वर्ग सिक्ख धर्म में अमान्य है। अतः प्रत्येक सिक्ख सभी धार्मिक, सामाजिक कार्य करने में सक्षम माना गया है जो कि व्यवहारिक रूप में देखने में भी आता है। धर्म के मूल तत्वों को हृदयंगम करने के लिए तथा सभी धर्मों के आश्रमों में निर्भय विचरण के लिए विवेक बुद्धि की परम आवश्यकता पर गुरु ग्रंथ साहिब में बल दिया गया है :-

बिबेक बुधि सभ जग महि निरमल
बिचरि बिचरि रसु पीजै ।

यह विवेक के ही माध्यम से ही संभव हो सकता है कि मनुष्य अपनी सीमाओं को समझे और अपनी चेतना का जहां एक और उर्ध्वमुखी विकास (Vertical Growth) करे वहीं साथ ही साथ उसके क्षैतिज विकास (Horizontal Growth) के लिए भी प्रयत्नशील बने । उर्ध्वमुखी विकास से तात्पर्य है कि मानव अपने अन्तस्तल की गहराइयों में झांकने का प्रयत्न कर, अपनी संकीर्णताओं का खुले हृदय से साक्षात्कार करे, उन्हें स्वीकार करे तथा प्रयत्न पूर्वक सतत अभ्यास से, आत्मा पर पड़े घृणा, वैमनस्य, लालच, स्वार्थ की परतों को हटाता जाए । क्षैतिज विकास से तात्पर्य है कि आत्मा की गहराइयों में जाने का अर्थ यह न लिया जाए कि हम संसार से अपने आप को अलग कर लें । आत्मा की गहराई में स्नान करने पर जो बल प्राप्त होता है उस बल का प्रयोग हमें परोपकार के लिए करना है । गुरु अरजन देव अपनी प्रसिद्ध वाणी ''सुखमनी'' में स्पष्ट कहते हैं कि 'ब्रह्मज्ञानी परउपकार उमाहा' अर्थात् ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने के बाद सिक्ख निश्चेष्ट होकर नहीं बैठ जाता, उसमें दुगुने उत्साह से परोपकार की वृत्ति उससे ''सर्वे भवन्तु सुखिना सर्वे सन्तु निरामया'' के लिए कार्य करवाती है । धर्म के और धार्मिक व्यक्ति के वास्तविक स्वरूप को समझाते हुए उर्ध्वमुखी एवं क्षैतिज रूप से विकसित चेतनाशील व्यक्तित्व को गुरु गोबिन्द सिंह निम्न प्रकार से वर्णित करते हैं –

''धंन जीउ तहि को जग में मुख ते हरि चित्त में युद्ध बिचारे ।
देह अनित्त न नित्त रहे जस नाव चढ़े भवसागर तारे ।
धीरज धाम बनाए इहे तन बुद्धि सु दीपक ज्यूं उजीआरे ।
गिआनहि की बढ़नी मनहु हाथ ले कातरता कुतवार बुहारे ।

अर्थात वह प्राणी धन्य है जो मुंह से परमात्मा का जाप करता है और अंतस्तल की गहराइयों से प्रेरित हो असत् पर सत् की विजय के लिए हमेशा संघर्षशील बने रहने का विचार दृढ़ किए रहता है । देह को अनित्य मानता हुआ भी इसके माध्यम से वह 'पर जन हिताय' इतने कार्य कर लेता है कि यश की नाव पर चढ़कर संसार सागर को पार कर जाता है । उसने इस तन रूपी घर को विवेक बुद्धि के दीपक के प्रकाश से प्रकाशित किया होता है और ऐसा व्यक्ति इस विवेक बुद्धि के सहयोग से अर्जित ज्ञान की झाड़ू से कायरता कातरता, असहायता के कूड़े कर्कट को संसार से साफ कर देता है । अतः यह स्पष्ट है कि चेतना के उपर्युक्त विकास के फलस्वरूप ही सच्चे अर्थों में सभी जीवन मार्गों के प्रति सम्भाव एवं सद्भाव की भावना जागृत हो सकती है ।

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १३२५
२ दसम ग्रंथ–कृष्णावतार सवैया २४९२

असहिष्णुता

कोई भी धर्म परम सत्ता को अनुभव करने का साधन तो हो सकता है परन्तु वह स्वयं में ही परम सत्ता है यह माना जाना न्यायसंगत प्रतीत नहीं होता । इस तथ्य के यदि स्वाकार कर लिया जाए तो अन्य धर्मों को भी परमतत्व तक पहुंचने का साधन मानने में अधिक कठिनाई नहीं होगी और परस्पर आश्रय की भावना को बल मिलेगा । भौतिक जगत के ज्ञान विज्ञान को अर्जित करने के लिए सारे संसार भर के मनुष्य एक दूसरे का आश्रय लेने में नहीं हिचकिचाते; बल्कि हम रोज देखते–पढ़ते हैं कि भौतिक उन्नति के लिए प्रत्योक विकासशील देश, अविकसित प्रदेश दूसरे देशों से सन्धियां कर रहा है । परन्तु खेद का विषय है कि आध्यात्मिक स्तर ऊंचा करने के लिए एक धर्म दूसरे धर्म का आश्रय लेने में क्यों हीन भावना का अनुभव करता है । यहां यह सोचना उचित नहीं है कि दूसरे धर्मों की अच्छी वातों को अपनाने से हमारा अस्तिव ही समाप्त हो जाएगा । किसी से मदद लेने या किसी की नेक सलाह लेने का अर्थ यह कदापि नहीं हो सकता कि हम उसके हाथों बिक रहे हैं या हमारे घर में दखल देने का उसे अधिकार पत्र मिल गया है; और फिर ये बातें किसी एक धर्म पर लागू करने को नहीं है, इस तथ्य को यदि सभी धर्म खुले हृदय से स्वीकार करें तो सद्भावना का सम्यक विकास हो सकता है ।

सहनशीलता के अन्तर्गत हमें अपने नित्य कर्म और काम्य कर्मों पर भी थोड़ा नियन्त्रण करना होगा । प्रायः नित्य कर्मों के कारण धर्मों में आपसी टकराव की संभावना कम रहती है, क्योंकि किसी के खाने पीने, व्यक्तिगत रूप से पूजा पाठ पहरावे आदि से किसी को भी कष्टित होने का मौका नहीं है । परन्तु वे काम्य कर्म जो किसी उद्देश्य विशेष को दृष्टि में रखकर किए जाते हैं, उनको करते समय हमें दूसरों की सुविधा, स्वतन्त्रता और भावना का ध्यान रखना होगा । जलसे जुलूस, पूजा पाठ के सामूहिक आयोजन और उनमें वैभव के प्रदर्शनों आदि को काम्य कर्मों के अन्तर्गत रखा जा सकता है । इस प्रकार के कर्मों को निश्चित रूप से अधिक परिमार्जित करने की आवश्यकता है । इस प्रकार की भावना को मन में वसा कर हम गुरु अरजन देव जी के कथन "विसर गई सव तात पराई । न को वैरी नाहि बेगाना सगल संग हमकों वनि आई" (गुरु ग्रंथ पृ. १२११) को जीवन में चरितार्थ कर सकते हैं और सर्वधर्म सम्भाव को सुदृढ़ आधार प्रदान कर सकते हैं । सर्व धर्मों के परस्पर आश्रय के महान सत्य को मान्यता देकर ही विभिन्न धर्मों में और एक ही धर्म के विभिन्न स्तरों में समरसता और शान्ति स्थापित की जा सकती है । केवल इसी ढंग से उनमें शुभ संकल्प और सहनशीलता का विकास हो सकेगा । श्री गुरु ग्रंथ साहिव की पवित्र वाणी समूची मानवता को इसी ओर चलने के लिए प्रेरित करती है और मुझे सुविज्ञ हिन्दी पाठकों के समक्ष इसके अनुवाद को प्रस्तुत करने में अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है ।

इस अनुवाद कार्य की पाण्डुलिपि तैयार करने में पूर्ण सहयोग देने के लिए स. मनजीत सिंह (खालसा कालेज), एवं दर्शन शास्त्र की होनहार छात्रा मिस अनु कंधारी का मैं आभारी हूँ। विचार विमर्श के रूप में विद्वान मित्रों द्वारा दिए गए सुझावों और उत्साहवर्धन के लिए मैं उनका भी आभारी हूँ । अनुवाद कार्य के सुन्दर मुद्रण एवं प्रस्तुतीकरण के लिए श्री राकेश लूथरा भी मेरे आभार के पात्र हैं । मेरी पत्नी रणजीत कौर ने सदैव ही मेरे अकादमिक कार्यों में सहयोग देकर उन्हें विघ्नरहित बनाया है; मैं उनका हृदय से आभारी हूँ ।

विनीत

जोध सिंह

प्रोफैसर, सिक्ख धर्म एवं दर्शन,
नैशनल लेक्चरर ऑफ फिलासफी
पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला ।

१५.०५.२००३

सिक्ख धर्म–स्वरूप एवं आधार

बौद्ध धर्म का प्रभाव क्षीण होने पर भी तथा इस्लाम के भारत में स्थापित हो चुकने पर भी भारतवासी लगभग रूढ़िवादी जीवन ही विता रहे थे और इस रूढ़िवादिता से त्रस्त भारतीयों पर हिन्दू धर्म के प्राचीन सिद्धान्तों का प्रभाव दिन प्रतिदिन कम होता चला जा रहा था । लोग कठोरता पूर्वक जातियों–उपजातियों में बांटे जा चुके थे और मानव को मूल अधिकारों से भी वंचित कर दिया गया था । बड़े पैमाने पर धर्म परिवर्तन का कार्य जोरों से चालू था और भारतीय जनता गाजर मूली की तरह काटी जा रही थी । आंतरिक मुसीवतों के अतिरिक्त पश्चिम भारत के लोगों को समय–समय पर होने वाले आक्रमणों की मार भी सहनी पड़ती थी । सैकड़ों वर्षों से कोई ऐसा योद्धा भारत में पैदा नहीं हुआ था जो भारत की सीमाओं की सुरक्षा करने में या तो स्वयं समर्थ होता या ऐसे समाज का निर्माण करता जो आक्रमणकारियों के दांत खट्टे कर सका होता । आपसी फूट और ईर्ष्या तो अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान के समय में ही अपनी चरम सीमा पार कर चुकी थी और समाज को निराशा के गर्त में धकेलने का रहा सहा काम केवल यन्त्रवत् पूजा पाठ करने वाले धर्म के ठेकेदारों और संसार को त्यागकर जंगलों पर्वतों का रास्ता अपनाने वाले तथाकथित योगियों ने पूरा कर दिया था । एक ओर तो लोग आक्रमणकारियों के धार्मिक जेहाद को आत्मसात न कर सकने के कारण हतप्रभ थे और दूसरी ओर आपसी भेदभाव और ऊँच नीच की भावना ने उन्हे किंकर्तव्य विमूढ़ बना दिया था।

इतिहास दसवीं शताव्दी से लेकर १५२६ तक भारत पर लगभग साठ वड़े आक्रमणों की साक्षी देता है[१] । इन आक्रमणों में तीन आक्रमण सुबुक्तगीन, सत्रह मुहम्मद गोरी, पच्चीस मंगोलों के और पांच मुगलों के (जिनमें अन्तिम वावर का सन् १५२६ में था) मुख्य रूप में गिनाए जा सकते हैं ।[२] दिल्ली सलतनत का प्रभाव भी समाप्त प्रायः था और फिरोजशाह तुगलक और उसके उत्तराधिकारियों के मूर्खतापूर्ण कार्यों और नीतियों के कारण उत्तरी भारत खण्ड–खण्ड होकर रह गया था । दिल्ली जैसी एक सल्तनत के दो–दो शासक थे– नासिरुद्दीन और नुसरत शाह ।[३]

गुरु नानक के जन्म के लगभग ७० वर्ष पूर्व तैमूर ने (१३९७) भारत पर आक्रमण करके लाखों निरीह प्राणियों को मौत के घाट उतारा । तैमूर ने तो केवल सात लाख वावन हजार भारतीयों को कत्ल किया ओर २९ हजार को जीवित जलाया पर हिन्दुओं के कत्लेआम की कहानी मुहम्मद विनकासिम के सन् ७१२ ई. के सिन्ध के आक्रमण के साथ ही प्रारम्भ हो गयी थी जिसमें ६००० भारतीयों को तलवार की भेंट चढ़ाकर इस कार्य का सूत्रपात किया गया था । उसके वाद तो हजारों हिन्दुओं को धर्म परिवर्तन करना पड़ा, लाखों को मरना पड़ा और मेरठ, वाराणसी, अयोध्या के मंदिरों को ध्वस्त होना पड़ा । कालिंजर में एक लाख ३२ हजार हिन्दुओं को मौत के घाट उतारा गया और पचास हजार गुलाम वनाकर गज़नी ले जाए गए ।[४] गुरु नानक के समय तक यह कत्लेआम जोरों पर था । गुरु नानक ने अपने पदों में वावर द्वारा किए गए अत्याचारों का और भारतीयों की असहायता का वर्णन करते हुए जहां ईश्वर को

---

१ हिस्ट्री ऑफ सिक्ख गुरुज़, पृष्ठ १ डॉ. हरिराम गुप्ता

२ वही, पृष्ठ १८

३ गुरु नानक एंड हिज–टाइम, पृष्ठ १ ए.सी. बनर्जी

४ एडवांस हिस्ट्री ऑफ पंजाब, पृष्ठ १–२ डॉ. जी. एस. छाबड़ा

दुर्बलों को शक्ति देने के लिए ललकारा है वहां बाबर को भी उसके कुकृत्यों के लिए फटकारा है ।[१] शासकों, दरबारियों और विद्वानों की कर्त्तव्यहीनता, चाटुकारिता और चरित्रहीनता का वर्णन भी गुरु नानक देव ने अपनी वाणियों के माध्यम से खुलकर किया है ।[२]

बाहरी आपदाओं के फलस्वरूप भारतीय समाज आंतरिक रूप से भी खोखला हो चुका था । जाति व्यवस्था रूढ़ हो चुकी थी; छुआछूत का ज्वार पूरे यौवन पर था और तथाकथित नीच जातियों के मंदिर प्रवेश और सार्वजनिक कुओं से पानी आदि लेने को असम्भव बनाकर संतुष्टि अनुभव की जा रही थी । रामानन्द, कबीर आदि ने इस विषमता की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया पर क्रांतिदूत कबीर को भी तथाकथित विद्वानों का कोपभाजन वनना पड़ा और कई प्रकार के लांछनों का सामना करना पड़ा । नामदेव तो फूट–फूट कर रोते हुए कहते हैं कि हे ईश्वर मैं प्रसन्न मन से तेरे द्वार पर आया, परन्तु मुझे पकड़ कर तेरे मंदिर से बाहर धकेल दिया गया । मेरा दोष केवल इतना है कि मैं "छीपी" जाति में पैदा हुआ हूँ जिसे नीच जाति माना जाता है । हे यादवराज, मुझे छीपी के घर क्यों पैदा किया ।[३] योगियों ने इस जाति–प्रथा और ऊंच–नीच का विरोध अवश्य किया परन्तु कालान्तर में वे अपने आपको ही समाज में रहने वाले गृहस्थों से अलग और काफी ऊँचा समझकर समाज से दूर रहने में ही अपना कल्याण मानने लगे थे । अपने ज्ञान पर उन्हें इतना गर्व था कि उनका लोहा मानने न मानने वालों को यथासम्भव वरदान और शाप मिलने लगे । इन लोगों की स्थिति यह थी कि ये न तो खेती करते थे न व्यापार और न ही ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करते थे । ब्रिग्स ने इन्हीं योगियों को वेश्यागामी तक मानते हुए बाद की तांत्रिक साधनाओं के मध्य पांच मकारों (मद्य, मछली, मांस, मैथुन, मुद्रा) का सेवन करने वाले माना है ।[४] फिर भी पंजाब में गुरु नानक देव जी के समय से एक ऐसे समाज की रूपरेखा तैयार की जा रही थी जो सच्चाई की उपेक्षा यह देखकर नहीं करता था कि सच्चाई किसी नीच जाति के जुलाहे, चमार या धोबी में प्रकट क्यों हुई है । उस समाज के लिए जितने पूज्य उसके गुरु थे उतने ही पूज्य भक्त रविदास, नामदेव, सेनजी व शेख फरीद भी थे । भारत में एक ऐसे संगठन की आवश्यकता तीव्रता से अनुभव की जा रही थी जो भेदभाव से ऊँचा उठकर मानवता के प्रयत्नपूर्वक अर्जित किए गए मूल्यों और मान्यताओं की रक्षा कर सके और जहाँ प्यार एवं विनम्रतापूर्वक अत्याचारियों की सोयी आत्मा को जगा सके वहां आवश्यकता पड़ने पर शोषक के क्रूर खूनी पंजे को टुकड़े–टुकड़े भी कर सके । एक ऐसे समाज के अस्तित्व की अपेक्षा की जाने लगी थी जो संस्कृत, अरबी, फारसी, हिन्दी या पंजाबी को किसी जाति विशेष, देश विशेष की सम्पत्ति न रहने दे और सब प्रकार के प्रेषण उपकरणों का बिना भेद भाव के लाभ उठाए ।

श्री गुरु नानक देव (१४६९–१५३९) ने संसार से अन्धविश्वास व अज्ञान को दूर करने के लिए और एक सुदृढ़ नींव पर स्वस्थ समाज की रचना के लिए भारत के अन्दर कुरुक्षेत्र, हरिद्वार, प्रयाग, अयोध्या, वाराणसी, गया, पुरी, कामाख्या, रामेश्वरम्, श्री लंका, उज्जैन, द्वारिका, पुष्कर, मथुरा, उत्तर में सुमेरु पर्वत, काश्मीर आदि का भ्रमण करके इन तीर्थों पर प्रचलित अच्छाई, बुराइयों को देखा, परखा और सुधारने का प्रयत्न किया ।

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४१७, एवं पृष्ठ ३६०

२ वही, पृष्ठ १२८८, एवं. ४१७

३ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ११६४

४ गोरखनाथ एण्ड द कनफटा योगीज़ पृष्ठ २१२

अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भी आपने यात्राएं की जिनमें पूर्वोत्तर देशों तिब्बत, नेपाल और पश्चिम की ओर मक्का, मदीना, बगदाद, काबुल, आदि शहरों के नाम गिनाए जा सकते हैं ।[1] ठाकुर देशराज के शब्दों में "यह कहने में हमें कोई अत्युक्ति नहीं जान पड़ती कि ज्ञात इतिहास काल में गुरु (नानक) जैसा कोई यात्री नहीं हुआ । महात्मा बुद्ध के लिए कहा जाता है कि उन्होंने भारत में घूम-घूम कर प्रचार किया था और तिब्बत तक भी पहुंचे थे किन्तु ईरान, अरब और रूस तक वे नहीं गए । इस तरह हम उन्हें (गुरु नानक को) भारत ही नहीं संसार का सबसे बड़ा अथवा महान धर्म प्रचारक या महायात्री कह सकते हैं ।[2]

विद्या, सेवा लंगर आदि का प्रचार श्री गुरु अंगद देव जी (१५०४-१५५२) गुरु अमरदास (१४७९-१५७४) व श्री गुरु रामदास (१५३४-१५८१)[3] जी ने जीवन पर्यन्त किया । गुरु रामदास जी ने अमृतसर जैसा महान् धार्मिक एवं सांस्कृतिक नगर बसाया और सब प्रकार के नागरिक उनकी प्रेरणा से वहाँ बसे । श्री गुरु अरजन देव जी (१५६३-१६०६) ने सब भक्तों एवं गुरुजनों की पवित्र वाणियों को एक ग्रंथ (पोथी साहिब) के रूप में संकलित कर एक अपूर्व कार्य किया तथा बिना किसी जाति भेद के, प्रान्तीय पक्षपात से रहित होकर कबीर, फरीद, नामदेव, रामानन्द, सैनजी, त्रिलोचन, जयदेव, सधना, आदि महान सन्तों की कल्याणकारी वाणियों का आदर करना सिक्ख समाज एवं भारतीय जनता को सिखाया । इसी ग्रंथ को बाद में गुरु गोबिन्द सिंह जी ने गुरु ग्रंथ साहिब के रूप में स्थापित किया और गुरुवाणी को ही गुरु मानने का आदेश दिया । गुरु अरजन देव के समय तक उनके शिष्यों में गुरु नानक देव के सिद्धान्त काफी गहरे बैठ चुके थे ऐसा तत्कालीन महान विद्वान भाई गुरुदास ने अपने पदों में भी बताया है । गुरु अरजन देव ने जहांगीर से डर कर भागे हुए राजकुमार खुसरो को शरण दी और फलस्वरूप उन्हें पकड़वाकर स्वधर्म परिवर्तन के लिए वाध्य किया गया । गुरु अरजन देव जी का निधन विभिन्न कष्टों को झेलते हुए अपने जीवन ढंग पर अड़े रहने के फलस्वरूप बड़ी दुखद परिस्थितियों में लाहौर में हुआ । इन्हें सिक्ख पहला बलिदानी मानते हैं जिनके बलिदान ने सिक्खों को शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करने वाले समाज से युद्धशील समाज में परिवर्तित कर दिया ।[4] श्री गुरु अरजन देव जी ने हरि मन्दिर (स्वर्ण मंदिर अमृतसर) की नींव उस समय के एक महान सूफी सन्त मियाँ मीर के हाथों रखवाई और इस धर्म स्थल के द्वार सब धर्म वालों के लिए खोल दिए गए ।

श्री गुरु हरगोविन्द जी (१५९५-१६४४), गुरु हरि राय (१६३०-१६६१) गुरु हरिकृष्ण (१६५६-१६६४) जी तथा गुरु तेगबहादुर (१६२१-१६७५) जी ने भी इसी क्रम को आगे बढ़ाया । काश्मीर के पण्डितों की पुकार और दुःखी जनता के आर्तनाद को सुनकर गुरु तेगबहादुर, तत्कालीन धर्मान्ध शासकों की क्रूर आत्मा को समझाने के लिए और बलिदान की श्रृंखला को आगे बढ़ाने तथा लोगों के स्वाभिमान को बल देने के लिए स्वयं दिल्ली पहुंचे जहाँ उन्हें धर्म परिवर्तन न करने के लिए चाँदनी चौक में हज़ारों की भीड़ के देखते-देखते[5] शहीद कर दिया गया । निस्सन्देह गुरु तेगबहादुर के धार्मिक स्वाधीनता के लिए दिए बलिदान ने औरंगजेब की धार्मिक नीति के विरुद्ध प्रतिरोध को और अधिक मजबूत कर दिया और साथ ही साथ विकासशील सिक्ख समाज के विकास को चरमसीमा की ओर अग्रसर

---

१ जीवन चरित्र गुरु नानक, डॉ. त्रिलोचन सिंह
२ सिक्ख इतिहास, पृष्ठ ७३
३ हिस्ट्री ऑफ द सिक्खज, पृष्ठ ४८ कनिंघम, जे. डी.
४ हिस्ट्री ऑफ दी पंजाब, पृष्ठ १४१ सैयद मुह. लतीफ
५ दी सिक्ख रिलिजन, भाग ४, पृष्ठ ३८७ मैकालिफ

किया। हिन्दू इस बलिदान को अपने धर्म के लिए किया गया बलिदान मानने लगे और सम्पूर्ण पंजाब एवं उत्तर भारत में एक ज्वाला सी धधक उठी। सन् १६६६ में जन्में गुरु गोबिन्द सिंह ने पिता के बलिदान का समाचार सन् १६७५ में आनन्द पुर में सुना और अनुभव किया कि सिक्ख धर्म को मानने वालों ने बेशक बलिदान देकर मानवता के कोमल गुणों नम्रता, प्यार, अहिंसा के पालन का एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है परन्तु अब समय आ गया है जब एक कुशल कारीगर की समय पर लगाई गई हथौड़े की चोट की भांति समाज को मानवता के इन्हीं गुणों की सुरक्षा करने के लिए एक नए मोड़ की तीव्र आवश्यकता है। तैयारियां प्रारम्भ हो गईं। शस्त्र रखना, घुड़सवारी करना और नियमबद्ध धार्मिक दिनचर्या तो गुरु हरगोबिन्द जी के समय से सिक्ख जीवन का अंग बन चुके थे, अब इन्हें सुव्यवस्थित करने के लिए और इसमें नये प्राण फूँकने के लिए ग्रंथ साहिब की शान्ति प्रदायक वाणियों के साथ–साथ गुरु गोविन्द सिंह ने वीररस के साहित्य का अनुशीलन, सृजन एवं अनुवाद प्रारम्भ किया। आपकी सम्पूर्ण उपलब्ध कृतियां "दशमृग्रंथ" नाम से संग्रहीत मानी जाती हैं। इनमें जहां एक ओर गुरु गोबिन्द सिंह ने तोमर, नाराच, छप्पय, भुजंग प्रयात आदि वीर छन्दों का प्रयोग किया है वहां साथ ही साथ संस्कृत, ब्रजभाषा, फारसी, पंजाबी भाषा पर अपनी पकड़ का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया और अपने शिष्यों को सब भाषाएं जानने के लिए प्रेरित किया।

सिंह समाज

सौभाग्य से गुरु तेग बहादुर के पुत्र एवं उनके उत्तराधिकारी गुरु गोबिन्द सिंह (१६६६–१७०८) दूरदर्शी, कल्पनाशील और चुम्बकीय व्यक्तित्व वाले महान संगठन कर्त्ता थे। समस्याओं पर उनकी पकड़ सुदृढ़ एवं स्पष्ट थी और भारतीय समाज की समस्याओं के निदान और अत्याचारियों के दमन को समाप्त करने के लिए उनके पास सुस्पष्ट कार्यक्रम था।[१] गुरु गोविन्द सिंह ने लोगों को स्पष्ट कर दिया कि उन्हें धर्म संस्थापना के कार्य के लिए, दुष्टों के दमन के लिए और संतों के सत्वगुण की रक्षा के लिए ही ईश्वरीय प्रेरणा प्राप्त हुई है।[२] अभी तक लड़ाइयां व्यक्तिगत होती थीं परन्तु गुरु गोबिन्द सिंह ने सन् १६९९ 'वैसाखी' के दिन एक बर्तन (वाटे) में लाहौर निवासी दयाराम (खत्री), हस्तिनापुर निवासी धर्मदास (जाट), द्वारिका निवासी मुहकम चन्द्र (छीपी), वीदर (कर्नाटक) निवासी साहवचंद (नाई) जगन्नाथ पुरी निवासी हिम्मतराय (कहार) को अमृतपान कराकर जातिवाद के खंडहर को ध्वस्त कर[३] इनको क्रमशः दयासिंह, धर्म सिंह, मुहकम सिंह, साहिब सिंह और हिम्मत सिंह बना कर इन्हें पांच प्यारे संज्ञा से अभिहित कर दिया। अब "खालसा" की लड़ाई और जीत व्यक्तिगत न होकर सामूहिक हो गई और इस सामूहिकता को भी प्रभु (वाहिगुरु) की जीत माना जाने लगा।[४] खालसा "वाहिगुरु" (परमात्मा) के कार्य को आगे वढ़ाने वाला और चक्र चिन्हों के भेद भाव से दूर परमात्मा की फतह के लिए कार्य करने लगा। बोले सो निहाल, सत श्री अकाल, जयघोष बन गया। पहले दिन ही बीस हजार[५] चिड़ियां बाज बन गईं और हजारों गीदड़ बने शेरों ने फिर सिंह गर्जन प्रारम्भ कर दिया।

---

१ सिक्खिजम–पृष्ठ २१ फौजा सिंह
२ बिचित्र नाटक
३ सिक्ख इतिहास–पृष्ठ १८१–७२ ठाकुर देशराज
४ वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतह।
५ दी सिक्ख रिलीजन भाग १, पृष्ठ ९२ मैकालिफ

ये पांच प्यारे आज भी सिक्ख समाज के केन्द्र बिन्दु हैं । सिक्खों में आज भी पांच प्यारों की कही बात को आज्ञा के रूप में माना जाता है और गुरु गोबिन्द सिंह ने भी जीवन पर्यन्त पांच प्यारों को जहां हर सामाजिक कार्य में सर्वोपरि माना वहां साथ ही साथ समय–समय पर ये पांच प्यारे गुरु गोबिन्द सिंह जी को दिशानिर्देश भी देते रहे जिसे हमेशा गुरु ने स्वीकार किया । गुरु नानक ने जहां जातिवाद का खंडन करते हुए यह कहा कि "जाति महि जोति जोति महि जाता अकल कला भरपूर रहया" ।[१] वहां साथ ही साथ गुरु अंगद देव जी ने कहा कि बेशक ब्राह्मणों का जीवन यापन वेदों के पठन–पाठन पर निर्भर करता हो, क्षत्रियों का कार्य शौर्य प्रदर्शन और शूद्रों का कार्य सेवा करना माना गया है परन्तु वास्तव में प्रत्येक मनुष्य को ये सभी कार्य करने चाहिएं ।[२] गुरु अरजनदेव ने भी कहा है कि मेरा कोई बैरी नहीं और कोई मेरे लिए बेगाना नहीं । मेरा प्यार सबसे है ।[३] परन्तु, गुरु गोबिन्द सिंह ने निम्नांकित सवैये में पांच प्यारों और खालसा समाज के समक्ष अपनी नम्रता को चरमसीमा पर पहुंचा दिया है । वे समाज से दूरी बनाकर समाज का नेतृत्व करने वाले नेता नहीं थे :–

जुध जिते इनही के प्रसादि इनही ही के प्रसाद सुदान करे ।
अघ ओघ टरे इनही के प्रसाद इनही की कृपा फुनि धाम भरे ।
इनहीं के प्रसाद सुबिदिआ लई इनही की कृपा सब सतर मरे ।
इनकी की कृपा के सजे हम हैं नहीं मो सो गरीब करोरि परे ॥[४]

इस प्रकार हम देखते हैं कि सिक्ख संस्कृति व्यक्तिवाद की पोषक नहीं है और वास्तविक समाजवाद के लिए कृतसंकल्प है । इस समाज का उद्देश्य "सरबत्त दा भला" अर्थात सब का भला मांगना है । गुरुजनों के समाजवाद के दिशा निर्देश को एक पंक्ति में इस प्रकार कहा जा सकता है : नाम जपना, हाथ से स्वयं कार्य करना और वांट कर खाना ।

भ्रातृत्व समानता और स्वतन्त्रता का नारा फ्रांस की क्रांति ने १७८९ में लगाया परन्तु गुरु गोबिन्द सिंह ने सारे समाज को साथ लेकर चलने और पंचायती राज्य–जिसमें धर्म, राजनीति का पथ प्रदर्शक हो की वात १६९९ में आनन्दपुर के मंच पर कही और लोगों को बताया कि जहां हमने कबीर के शब्दों–"हरि है खांड रेत में बिखरी हाथी चुनी न जाय । कहि कबीर गुर भली बताई चींटी हो के खाय" को मानते हुए अत्यन्त नम्र होना है; जहां शेख फरीद के शब्दों में हमें मुक्कों से मारने वालों के भी पैर चूमने हैं और अपने परलोक को सुधारना है[५] वहां साथ ही साथ हमें यह भी मानना है कि जब सब तरीके समाप्त हो जायं और अत्याचारी अपनी दमन नीति को न त्यागे तो तलवार उठाने में तनिक भी हिचकिचाना नहीं चाहिए–

चुकार अज हमा हीलते दर गुजश्त ।
हलाल अस्त बुरदन ब शमशीरे दस्त ।
(जफ़रनामह)

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४६९
२ वही
३ न को बैरी ...... गुरु ग्रंथ, पृष्ठ, १२९९
४ खालसा महिमा (३३ सवैये)–दसम ग्रंथ
५ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १३७८

सिक्ख धर्म में निम्नांकित सवैये के अनुसार सामाजिक आचरण की अपेक्षा की जाती है :

धन जीउ तिह को जग में मुख ते हरि चित में जुद्ध बिचारै ॥
देह अनित न नित्त रहे जस नाव चढ़े भव सागर तारै ॥
धीरज धाम बनाई इहै तन बुद्धि सु दीपक जिउ उजियारे ॥
गिआनहिं की बढ़नी मनहु हाथ लै कातरता कुतवार बुहारे ॥
(गुरु गोबिन्द सिंह)

सिक्ख समाज के आंतरिक विधि विधानों को देखते हुए समाज के कार्य कलापों का निरीक्षण भी यहां अनपेक्षित नहीं कहा जा सकता । सिक्ख धर्म में एक बात विशेष रूप से दृष्टव्य है कि इसमें जन्म, मृत्यु पर कोई विशेष संस्कार या कर्म कांड का विधान नहीं है । हर अवसर पर 'गुरबाणी' के गायन से ही प्रत्येक कार्य को प्रारम्भ किया जाता है । खुशी में भी 'गुरुबाणी' कीर्तन और गमी में भी कीर्तन । कर्म कांड और मूर्ति पूजा का कोई विधान नहीं । व्रत आदि के बारे में भी स्पष्ट निर्देश है कि व्रत आदि करना व्यर्थ ही देही को दुख देना है । बिना सच्चे गुरु के ज्ञान प्राप्ति संभव नहीं है ।[१] मुहुर्त, शकुन, अपशकुन भी सिखों में वर्जित है । इन्हें केवल भ्रम मात्र मानते हुए मनोवल को गिराने वाला माना है । परमात्मा हर स्थान पर सहायक है अतः विघ्न बाधा और शकुन मुहुर्त कोरा भ्रम तथा पाखण्ड है । सिक्ख के लिए संसार एक धर्म युद्ध का स्थल है जिसमें गुरु गोबिन्द सिंह ने शुभ कर्मों को करने की प्रेरणा ईश्वर से मांगी है और इच्छा व्यक्त की है कि हे ईश्वर इस धर्म युद्ध में अपना धर्म निभाता हुआ ही मैं शहीद हो जाऊं ।[२]

अतः सिक्ख जीवन में भ्रम के लिए कोई स्थान नहीं । सच्चे गुरु की सेवा भ्रम का निवारण करती है और अन्तर मन में सत्य का प्रकाश करती है । तिथि और मुहूर्त के फेर में पड़ने वालों को गुरु अमरदास ने मूर्ख और गंवार की संज्ञा दी है । एक प्रभु के नाम को सर्वव्यापी मानते हुए उन्होंने पाखण्ड और झूठी बहानेबाजी को छोड़ने के लिए प्रेरित किया है ।[३] यही बात तीर्थ स्नान आदि के सम्बन्ध में भी है । गुरु गोबिंद सिंह कहते हैं :–

कहा भयो दोउ लोचन मूंद के वैठ रह्यो बक धयान लगायो ।
नहात फिरियो लीओ सात समुद्रन लोक गयो परलोक गवायो ।
बास कीओ विखिआन सों बैस के ऐसे ही ऐस सु बैस बितायो ।
साच कहूं सुन लेहू सवै जिन प्रेम कीओ तिनही प्रभु पायो ॥[४]

कवीर ने भी गुरु ग्रंथ में संगृहीत वाणी में यही उपदेश दिया है; जिसके अंतर मन में मैल है वह वैकुण्ठ को नहीं जाता । लोग उसके बाहरी स्नान ध्यान से भले प्रभावित हो जाय पर राम–ईश्वर को बच्चों के खेल से वहलाया नहीं

---

१ अंनु न खाहि देही दुख दीजै ...... गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९०५
२ देह सिवा बर मोहे इहे ..... दसम ग्रंथ
३ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ८४२, ४०१
४ अकाल उसतति, दसम ग्रंथ

जा सकता । केवल एक राम की वन्दना ही अपेक्षित है और सच्चा स्नान गुरु सेवा है । आगे महात्मा जी मेंढक के निरन्तर जल में रहने और मुक्ति लाभ न पाने को पाखण्डियों को समझाने के लिए उदाहरण के तौर पर प्रयुक्त करते हैं ।[१]

सिख समाज की चर्चा में यदि स्त्री की सामाजिक स्थिति पर दृष्टिपात न किया जाय तो इस चर्चा को अधूरा ही माना जायगा । यह चर्चा इसलिए भी आवश्यक है कि अभी तक भी अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर स्त्रियां अपने अधिकारों के लिए जूझ रही हैं । सन् १९७५ महिला मुक्ति वर्ष के रूप में सारे संसार में मनाया गया और इस वर्ष में महिलाओं के लिए पुरुष वर्ग ने कृपा पूर्वक सहयोग देकर कई कार्यक्रमों का आयोजन किया । आज वेशक महिलाएं प्रगति पथ पर तेजी से अग्रसर हो रही हैं जिसका श्रेय पुरुषों की उदारता को कम और आधुनिक वैज्ञानिक जीवन यापन-ढंग को अधिक दिया जा सकता है । अरस्तू ने तो पुराने विचारकों में सबको मात कर दिया जब वह यह कहता है कि स्त्री एक अधूरा मानव है जो विकास के दृष्टि कोण से पुरुष की अपेक्षा निचली सीढ़ी पर है । पुरुष का निर्माण ही आज्ञा करने के लिए हुआ है और स्त्री का आज्ञा पालन करने के लिए । स्त्री की इच्छाशक्ति दुर्बल होती है अतः उसे स्वतन्त्र नहीं छोड़ा जा सकता । शेक्सपियर स्त्री को बहुत बड़ी कमजोरी मानता है ।[२] उसी का समकालीन बेकन भी स्त्री और बच्चों को किसी भी अच्छे या बुरे साहसिक कार्य के लिए सबसे बड़ी रुकावट मानता है ।[३] मिलटन भी "एडम" के दुख में दुखी होकर ईडन गार्डन में से निकलवा देने वाली स्त्री के लिए ईश्वर से कह उठता है कि हे ईश्वर, देवताओं समान पुरुषों से इस पृथ्वी को भरने का स्त्री के अलावा तेरे पास क्या कोई और साधन नहीं था । स्त्री का सृजन कर तूने अपनी अकलुषित प्रकृति में एक धब्बा लगा दिया ।[४] टेनीसन, जिसे विक्टोरिया कालीन समाज की आवाज के नाम से जाना जाता है, स्त्री के प्रति अपने उद्‌गार व्यक्त करता हुआ उसको शिक्षण सुविधाओं के अयोग्य ठहराता हुआ कहता है कि पुरुष खेत के लिए और स्त्री घर के योग्य है । पुरुष तलवार पकड़े और स्त्री सूई । यहां तक तो शायद ठीक है, परन्तु आगे इंगलैन्ड का यह राष्ट्रीय कवि कहता है कि पुरुष आज्ञा देने के लिए और स्त्री उसकी आज्ञा मानने के लिए है अन्यथा सब अनाचार है ।[५]

भारतीय समाज और संस्कृति में एक समय था जब गार्गी, मैत्रेयी, आदि स्त्रियां ऋषि होने का सम्मान पाती थीं और महाकाव्यों तक के समय में भी स्त्री के बिना कोई सामाजिक, धार्मिक कार्य पूर्ण नहीं माना जाता था । स्त्रियों के आदर सम्मान से सम्बन्धित कई सैद्धान्तिक वाक्य इतस्ततः हमें हमारे पुराने साहित्य में मिल जायेंगे परन्तु कालान्तर में क्रियात्मक रूप में समाज में स्त्री का स्थान दिन प्रतिदिन गिरता ही गया । स्त्री को सब कष्टों का मूल और साधन माना जाने लगा और भारत के योगी समाज ने तो स्त्री मोह में रत भर्तृहरि, गोपीचन्द्र, राजा रसालू आदि राजाओं

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४८४

२ हैम लैट-अंक पहला दृष्य दूसरा

३ बेकन निबन्ध ऑफ मैरिज एण्ड सिंगल लाइफ

४ पैराडाइज लौस्ट - बुक IX

५ The Princess (1840)

को भी सन्यास दिलवा दिया । स्त्री, बाघिन, नागिन और न जाने क्या–क्या मानी जाने लगी । भक्ति लहर के भक्त भी अपने से इस प्रभाव को नहीं बचा पाए । कबीर कहते हैं कि एक सोना अर्थात धन और दूसरे स्त्री दोनों अग्नि की लपटों के समान है । इनको देखने मात्र से ही शरीर प्रज्वलित होने लगता है फिर स्पर्श करने पर तो कहना ही क्या । तब तो मनुष्य नष्ट हो ही जाएगा ।[१] तुलसीदास पर भी ऐसे आरोप लगाए जाते हैं कि स्त्री को ढोल, गंवार, शूद्र और पशु की श्रेणी में रखते हुए उन्होंने स्त्री विषयक अनुदार दृष्टिकोण का परिचय दिया है । इन महान पुरुषों का मन्तव्य जो भी रहा हो परन्तु आज भी निष्पक्ष दृष्टिकोण को अपनाकर देखने वाले भारतीय समाज के प्रेक्षक यह पाएंगे कि बेशक नगरों में स्त्रियों ने काम काज में अपना थोड़ा बहुत स्थान बना लिया है परन्तु ग्रामीण भारत अर्थात वास्तविक भारत में महिला स्वातन्त्र्य अभी भी आकाश कुसुम है ।

सिख समाज भी भारतीय समाज होने के नाते पूर्ण अपवाद तो नहीं है परन्तु अत्याधुनिक समाज होने के नाते समाज के इस आवश्यक अंग के प्रति उपेक्षा और उसके प्रति अत्याचार के विरुद्ध गुरु नानक व गुरु गोविन्द सिंह ने सशक्त आवाज उठाई और स्त्रियों को हर क्षेत्र में पूर्ण अधिकार प्रदान किए । गुरु नानक ने इतिहास सृजन करने वाले राजाओं को जन्म देने वाली जननी स्त्री को बुरा कहने के लिए समाज के ठेकेदारों को फटकारा और समझाया कि स्त्री के बिना अनुशासित समाज की कल्पना हो ही नहीं सकती ।[२] सती प्रथा को भी सिक्ख धर्म नहीं मानता । विवाह को केवल सामाजिक सुरक्षा का साधन ही नहीं माना गया अपितु इसे आध्यात्मिक उन्नति में महान सहायक भी कहा गया है ।[३] गुरु गोबिन्द सिंह ने जहां अमृत पान करा कर सिंह समाज की नींव रक्खी वहां साथ ही साथ स्त्रियों को भी अमृत पान करवाया और युद्ध तक में जाने के सक्षम बनाया । इस समाज में कोरी सैद्धान्तिक समानता की बात न करते हुए गुरुजनों ने सच्चाई को मानते हुए भी उस पर चलने को मानने से भी श्रेष्ठ बताया है और सिक्ख समाज में स्त्री को पूर्ण सम्मान का अधिकारी माना है ।

---

१ कबीर ग्रंथावली–श्याम सुन्दर दास (सं) पृष्ठ ३१

२ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४७३

३ वही–पृष्ठ ७८८

श्री गुरु ग्रंथ साहिब

जिस प्रकार पवित्र कुरान शरीफ मुसलमानों की, बाइबल ईसाइयों की, वेद, शास्त्र एवं उपनिषद आदि हिन्दुओं की धर्म पुस्तकें हैं उसी प्रकार सिक्ख अपने धर्म ग्रंथ को श्री गुरु ग्रंथ साहिब कहते हैं। श्री गुरु ग्रंथ मूल रूप में पंजाबी भाषा और गुरमुखी लिपि में लिखा गया १४३० पृष्ठ का बृहद ग्रंथ है जिसे प्रत्येक गुरुद्वारे में ऊंचे आसन पर सुन्दर वस्त्रों में शोभायमान कर प्रतिष्ठापित किया जाता है। जो वस्त्र श्री गुरु ग्रंथ के ऊपर तथा नीचे बिछाए जाते हैं उन्हें पंजावी भापा में ''रुमाला'' कहते हैं और श्री गुरु ग्रंथ को आदर पूर्वक ऊँचे मंच पर पढ़ने के लिए प्रतिष्ठापित करने को श्री गुरु ग्रंथ साहिब का ''प्रकाश करना'' कहते हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिव को कोई भी व्यक्ति (स्त्री पुरुष दोनों) चाहे वह किसी भी जाति या धर्म का हो बिना किसी भेदभाव के, स्वच्छ होकर एवं सिर को ढककर गुरुद्वारे में या जहां भी श्री गुरु ग्रंथ उपलब्ध हो पढ़ सकता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में क्या लिखा है

१४३० पृष्ठों के श्री गुरु ग्रंथ में प्रारम्भ से लेकर अन्त तक विभिन्न अवसरों पर भारत वर्ष के विभिन्न महात्माओं द्वारा ईश्वर की स्तुति में कही गई वाणियां एकत्र की गई हैं। यह संकलन पांचवें गुरु अरजन देव जी ने किया और इस महान कार्य में प्रमुख रूप में भाई गुरदास नामक विद्वान सिक्ख ने गुरु जी की सहायता की। गुरु ग्रंथ में संकलित पदों को सिक्ख ''सवद'' (शव्द) कहते हैं। इन सारे शब्दों का राग ताल के अनुसार गायन किया जा सकता है क्योंकि सभी शव्द विभिन्न रागों और छन्दों में लिखे गए हैं। गुरु नानक देव जी का अभिन्न साथी एक मुसलमान था जो कि वहुत अच्छा संगीतकार था। इस संगीतकार का नाम मरदाना था और यह ''रबाब'' नामक वाद्य यन्त्र बजाने में सिद्धहस्त था। भक्ति भावना में विभोर हो उठने की स्थिति में गुरु नानक देव के हृदय से शव्द–व्रह्म का स्रोत फूट पड़ता था और वह शव्द व्रह्म 'गुरुवाणी' के रूप में सवके सामने प्रकट होता था। इस नानक वाणी के प्रभाव से सुनने वाले बच नहीं पाते थे और प्रभु के अनन्त सौन्दर्य और कृपा के सागर में सिर से पांव तक सरावोर हो जाते थे। इन्हीं शब्दों को वाद में लिख लिया जाता था। गुरु नानक देव ने अपनी यात्राओं के दौरान भारत और भारत के बाहर के प्रतिनिधि संतों और पहुँचे हुए सूफी फकीरों से मुलाकातें की और उनकी अधिक लाभदायक वाणियों का भी संग्रह किया। इस सारे खजाने को बाद में गुरु नानक देव जी ने अपने परम शिष्य गुरु अंगद देव को दे दिया और इस प्रकार इसमें गुरुजनों की वाणी जुड़ती गई। यह सारा वाणी भंडार गुरु अरजन देव जी तक पहुँचते पहुँचते काफी प्रसिद्ध हो गया था। गुरु अरजन देव जी ने इन सारी वाणियों को राग क्रम और गुरु–सन्तक्रम में रक्खा और गुरु ग्रंथ का सम्पादन किया। जिसे पहले 'पोथी साहिब' के रूप में जाना गया और वाद में गुरु गोविन्द सिंह जी द्वारा इसे गुरु पद से अभिहित किए जाने पर (१७०८ से) इसे गुरु ग्रंथ साहिब कहा जाने लगा।

गुरु ग्रंथ के प्रारम्भ में ''१ओअंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि'' लिखा है। इसे सिक्ख मूलमंत्र कहते हैं। इस मूलमंत्र के बाद गुरु नानक देव की रचना 'जपु' जी है जिसमें बड़ी ही सूत्रात्मक एवं संकेतात्मक भाषा में मन की चंचलता, श्रवण, मनन, पंचजन, परमात्मा की व्यापकता एवं परमात्मा को

प्राप्त करने के लिये सच्चे योग, भक्ति एवं आध्यात्मिक विकास के मार्ग का निरूपण किया गया है। यह कहा जा सकता है कि परमात्मा के स्वरूप का वर्णन मूलमंत्र में है और जपुजी मूलमंत्र की विस्तृत व्याख्या है तथा सारे गुरु ग्रंथ में जपुजी की विशद व्याख्या की गई है। गुरु ग्रंथ के अन्तिम पृष्ठों पर गुरु तेगबहादुर के श्लोक, गुरु अरजन देव की "मुंदावणी" का पद तथा सबसे अंत में रागमाला है। रागमाला में विभिन्न ८४ राग–रागनियों के नाम गिनाए गए हैं हालांकि वे सब राग गुरु ग्रंथ में प्रयुक्त नहीं हुए हैं। गुरु तेगबहादुर के ५७ श्लोकों में शान्तरस की सरिता बह निकली है और दोहा, सोरठा छंद में जहां एक ओर संसार की असारता दिखाई गई है वहीं साथ ही साथ आत्म चिन्तन, एवं अच्छे कार्यों में संलग्न होने के लिए किसी भी समय और अवधि को उचित ठहराया है।

गुरु ग्रंथ के रागों के नाम

गुरु ग्रंथ में ३१ स्वतन्त्र रागों में वाणियां संकलित हैं। ये राग क्रम से निम्नलिखित हैं :–

१–सिरी राग	2–माझ
३–गउड़ी	४–आसा
५–गूजरी	६–देवगंधारी
७–बिहागड़ा	८–वडहंस
९–सोरठ	१०–धनासरी
११–जैतसरी	१२–टोडी
१३–बैराड़ी	१४–तिलंग
१५–सूही	१६–बिलावल
१७–गोंड	१८–रामकली
१९–नट नाराइन	२०–माली गउड़ा
२१–मारू	२२–तुखारी
२३–केदारा	२४–भैरव
२५–बसंत	२६–सारंग
२७–मलार	२८–कानड़ा
२९–कलिआन	३०–प्रभाती
३१–जैजावंती	

इनके अतिरिक्त तिलंग–काफी, सूही–ललित आदि कुछ मिले जुले राग भी प्रयुक्त हैं।

गुरु ग्रंथ में वाणियों का क्रम रागों में इस प्रकार है:-

१. सबद (शब्द)

२. असटपदी (अष्टपदी)

३. छंत (छन्द)

४. वार

५. लम्वी वाणी

६. भक्तों की वाणियां । भक्तों की वाणियां सभी रागों में नहीं हैं वे ३१ में से केवल २२ रागों में हैं ।

गुरु ग्रंथ के रचनाकार

१. सिक्ख गुरु साहिवान ।

२. मध्य कालीन संत एवं भक्त (सूफियों सहित)

३. भट्ट समुदाय ।

४. अन्य ।

सिक्ख गुरु :-

केवल छः गुरुओं की वाणी गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित है । ये गुरु हैं, गुरु नानक देव, गुरु अंगद देव, गुरु अमर दास, गुरु रामदास, गुरु अरजन देव, गुरु तेगवहादुर । सभी गुरु साहिबान ने अपनी वाणियों में 'नानक' नाम का प्रयोग किया है ।

संत एवं भक्त :-

१५ भक्तों, संतों एवं मुसलिम सूफियों की वाणियां गुरु ग्रंथ साहब में संकलित हैं । ये निम्नलिखित हैं :-

१-जयदेव	२-नामदेव
३-त्रिलोचन	४-परमानन्द
५-सधना	६-बेणी
७-रामानन्द	८-धन्ना
९-पीपा	१०-सैण
११-कबीर	१२-रविदास
१३-शेख फरीद	१४-शेख भीखन
१५-सूरदास (केवल एक पंक्ति)	

भट्ट समुदाय :–

इस श्रेणी में उन विद्वानों के सवैया छंद हैं जो विभिन्न स्थानों, मठों डेरों पर घूम–घूम कर विभिन्न प्रकार के तर्क वितर्क का भली–भांति निरीक्षण कर रहे थे। इनके पदों में गुरुजनों की संगत, सेवा, लंगर और प्रभु प्रेम की भावना आदि का भारतीय ऋषियों एवं उनके चिन्तन की पृष्ठभूमि में स्मरण किया गया है। भट्ट समुदाय के प्रमुख विद्वान कलसहार निम्नलिखित हैं :–

१–कल्ह	२–कीरत
३–जालप	४–भिक्खा
५–भल्ह	६–सलूह
७–गयंद	८–नलूह
९–बल्ल	१०–मथुरा
११–हरिवंश	

अन्य :–

अन्य वाणीकारों में, उपर्युक्त रचनाकारों के अतिरिक्त सुन्दर, मरदाना सत्ता और बलवंड का नाम आता है।

गुरु ग्रंथ साहिब की कुछ प्रमुख वाणियां

वाणी का नाम	वाणीकार	गुरु ग्रंथ पृष्ठ
१–जपु (जी)	गुरु नानक देव	१–८
२–आसा की वार	गुरु नानक देव	४६२–४७५
३–ओअंकार	गुरु नानक देव	९२९–९३८
४–सिध गोसटि (सिद्ध गोष्ठी)	गुरु नानक देव	९३८–९४६
५–बारा माह तुखारी	गुरु नानक देव	११०७–११०९
६–अनंद (साहिव)	गुरु अमर दास	९१७–९२२
७–विवाह (अनंद कारज) के समय पढ़े जाने वाले ४ छन्द	गुरु राम दास	७७३–७७४
८–सुखमनी	गुरु अरजन देव	२६२–२९६
९–बारा माह (माझ)	गुरु अरजन देव	१३३–१३६
१०–सलोक	गुरु तेगवहादुर	१४२६–१४२९

भारतीय दर्शन एवं चिन्तन में सिक्ख धर्म की विशिष्टता

आज जीवन के हर क्षेत्र में एक दौड़ लगी हुई है । धनोपार्जन की दौड़, सुख के साधनों को ढूंढ निकालने की दौड़, अन्य ग्रहों तक जल्दी से जल्दी पहुंच जाने की दौड़, मानवता की अधिक से अधिक सेवा करने का वादा करने की दौड़, यहां तक कि घातक हथियारों को वनाने और मानवता के विनाश तक कर डालने की दौड़ भी हमें स्पष्ट ही दिखाई देती है । हर समाज, हर देश, हर तथाकथित धर्म इस दौड़ में सबसे आगे निकल जाने के लिए लालायित है । कहने को ऊपरी तौर पर हम एक दूसरे के पास आते जा रहे हैं, पर अन्दर ही अन्दर हम एक दूसरे से कोसों दूर निकल जाने में ही अपनी शान समझते हैं ।

यह कहने की हठधर्मिता तो शायद कोई बिरला ही करे कि सिक्ख धर्म का अन्य धर्मों से कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु प्रत्येक धर्म की परस्पर समानताओं अथवा अलगाव के बिन्दुओं को परखने के लिए और इस प्रकार के प्रश्नों पर विचार करने के लिए सबसे पहले यह आवश्यक है कि हम धर्म की वर्तमान साम्प्रदायिक परिभाषाओं से ऊपर उठें और पूर्वाग्रहों को त्याग कर किसी भी धर्म के मूल तत्वों को समझने और अंगीकार करने का प्रयत्न करे । यह आवश्यक नहीं है कि अपने व्यक्तित्व को नष्ट करके ही दूसरे का आदर किया जा सकता है या दूसरे की बुराई करके ही अपने को अच्छा साबित किया जा सकता है ।

सिक्ख धर्म एक भारतीय धर्म है । भारतीय दर्शन का यदि सरसरी तौर पर भी अध्ययन किया जाय तो एक तथ्य उभर कर स्वतः ही सामने आ जाता है कि यहां पर परस्पर विरोधी विचारधारा का भी पक्ष और विपक्ष दोनों ने आदर ही किया है और हर एक के दर्शन सिद्धान्तों को ठंडे दिल से देखा भाला और परखा है । वेदों के समय में ही चार्वाकों के सिद्धान्त जोर पकड़ गये थे; बाद में अनीश्वरवादी बौद्ध, जैन आदि कितने ही जीवन मार्गों का प्रचलन हुआ । सांख्य, योग, मीमांसा, न्याय, वैशेषिक आदि दर्शनों में कई साम्यताएं होती हुई भी किन्हीं बिन्दुओं पर उनके विचार आपस में मेल नहीं खाते । ईसाई, पारसी, मुस्लिम, यहूदी सब एक दूसरे की धार्मिक पुस्तकों में निहित विश्वजनीन सच्चाइयों का आदर करते हैं, एक दूसरे के पैगम्बरों का आदर करते हैं पर इतना साम्य और परस्पर सद्व्यवहार होते हुए भी वे अलग–अलग कौम हैं । उनकी आचार सहिता अपनी अपनी है । उनका पहरावा अपना है, उनका जीने का ढंग अपना अपना है ।

भारतवर्ष में एकता में अनेकता और अनेकता में एकता का दृष्टिकोण प्राचीन काल से ही रहा है । यह मानना असंगत नहीं है कि आज जो भी व्यक्ति हमारे सामने जिस रूप में आता है उसका वह रूप उसके अपने अर्जित संस्कारों और जीवन पर्यन्त किये आचरण के फलस्वरूप ही होता है । एक बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि आज व्यक्ति इतना समझदार चालाक और कुछ अर्थों में इतना धूर्त हो गया है कि अपने अहं की तुष्टि और दूसरे को परास्त करने के लिए वह वर्तमान, भूतकाल अर्थात् कहीं से भी अपने विचारों की संगति खोज निकालेगा । परन्तु साम्यता और वैषम्य की परख के लिए अच्छा यह हो, यदि हम इस दृष्टिकोण से अपने–अपने अन्दर देखने की कोशिश करें कि हम जो कुछ वर्तमान में हैं वह क्या हैं; हम किस तरह दूसरों से भिन्न होते हुए भी एक हैं और अपनी विषमताओं तथा समानताओं को कैसे हम अपने साथियों के साथ समायोजित करें कि हम सही अर्थों में ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' और ''न को बैरी नाहि बेगाना'' की भावना को चरितार्थ कर सकें ।

गुरु नानक देव और गुरु गोबिन्द सिंह से भी पहले भारत में सैंकड़ों सुधारक प्रचारक और आत्मतत्व वेत्ता हो चुके थे परन्तु ये सब महान पुरुष जीवन की क्षणभंगुरता से इतने अधिक प्रभावित थे कि संसार उन्हें बिल्कुल तत्वविहीन लगता था और इससे निवृत्ति पाने में ही कुशलता समझी जाती थी। डॉ. राधाकृष्णन कहते हैं कि यदि कोई परम्परा विकसित नहीं होती, तो इसके अर्थ हैं कि इस परम्परा के अनुयायी आध्यात्मिक दृष्टि से मृत हो गये हैं। डॉ. जयराम मिश्र के अनुसार "सिक्ख धर्म में विकासोमुखी प्रवृति उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई" और इस प्रकार यह एक भारतीय धर्म होता हुआ भी एक अलग ही रंगत पकड़ता गया। धीरे-धीरे इस धर्म को मानने वालों का खान पान, परमात्मा के प्रति समर्पण का ढंग, सामाजिक शिष्टाचार, शादी व्याह, खुशी, गमी अनुभव करने का एक अपना ही ढंग विकसित होता चला गया जो आज भी अन्य लोगों से विलक्षण है।

सिद्धान्ततः और क्रियात्मक रूप से सिक्ख के सब सांसारिक और आध्यात्मिक कार्य गुरुद्वारे में सम्पन्न होते हैं। हर उत्सव के अन्त में लंगर की प्रथा है जिसमें बड़े-बड़े धनिक कुलीन आम आदमियों के साथ बैठकर खाने में गौरव मानते हैं। सिक्ख धर्म बेशक किसी का अनादर नहीं करता परन्तु साथ ही साथ एक ईश्वर के अतिरिक्त किसी देवी देवता में विश्वास नहीं करता। सिक्ख किसी भी देहधारी गुरु में विश्वास नहीं करता और गुरुवाणी अर्थात् "शब्द" को गुरु स्वीकार करता है। दलित वर्ग को ऊँचा उठाने की बात भारत में अब पश्चिमी प्रभाव के कारण शुरू हुई है परन्तु गुरु गोविन्द सिंह ने आज से तीन सौ वर्ष पहले हजारों साल से कुचले जा रहे इस वर्ग को गर्दन सीधी करके चलने का गौरव प्रदान किया। सिक्ख जीवन को मानने वालों के अन्य सामाजिक कार्य जिस रूप में वर्तमान समय में प्रचलित हैं वे भी अन्य लोगों से विलक्षण हैं। शादी के लिए कोई मुहूर्त नहीं, कोई शुभ घड़ी नहीं, कोई विशेष दिन नहीं। जिस दिन दोनों पक्षों को सहूलियत हो उसी दिन यह कार्य सम्पन्न कर दिया जाता है। सिक्खों में अधिकतर शादियां रविवार को ही होती हैं। डेढ़ दो सौ आदमियों की बारात को लड़की वालों के दरवाजे पर ले जाना जहालत मानी जाती है और उससे भी बढ़कर निकृष्ट इस बात को माना जाता है कि लड़के का मोल भाव किया जाय। सिक्ख जीवन हाथ की कमाई में विश्वास करता है जमींदारी प्रथा में नहीं। मौत के समय भी साधारण तरीके से मृतक को जला दिया जाता है और किसी किस्म की कोई क्रिया कर्म नहीं। कोई श्राद्ध नहीं, कोई पितर पूजा नहीं। केवल 'गुरुवाणी' का पाठ और ध्यान ही सहायक माना जाता है, या फिर अच्छे कर्म। सिक्ख तीर्थों को मान्यता तो देता है पर कोरे तीर्थ स्नान को ही महत्वपूर्ण नहीं मानता। सिक्ख धर्म के मूल मंत्र में प्रभु के जिस स्वरूप का वर्णन है और मूल मंत्र में वरीयता क्रम में रखे प्रभु गुणों के आधार पर जो जीवन-दर्शन उभर कर सामने आता है वह दुनियां के अन्य धर्मों में अप्राप्य है। वर्तमान समय में यदि यह ढूंढा जाय कि किस भारतीय धर्म के अनुयायी ऐसे हैं जो अपने धर्म ग्रंथ के आधार पर और अपनी धार्मिक सहनशीलता के आधार पर नाई, धोबी, कहार, चमार, खत्री (क्षत्रिय) और यहां तक कि मुसलमान को भी अपने पूज्य गुरु के समान आदर देते हैं तो वह सिक्ख धर्म है। उपर्युक्त के आधार पर सिक्ख धर्म की मुख्य विशेषताओं को निम्न प्रकार से समझा जा सकता है।

(१) बल तथा बन्धन

बलु होआ बंधन छुटे सभु किछु होतु उपाइ ।
नानक सभु किछु तुमरै हाथ मै तुमही होत सहाइ ॥

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अन्तिम पृष्ठ के पहले पृष्ठ १४२९ पर अंकित श्री गुरु तेग बहादुर जी की वाणी के अन्तर्गत यह श्लोक सिख धर्म की आन्तरिक सुदृढ़ता को बनाए रखने की भावना की ओर इशारा करता है । बन्धन चाहे शारीरिक हो, चाहे आत्मिक अथवा सामाजिक, उन्हें यदि हम दूर करना चाहते हैं और किसी नई मान्यता की स्थापना करना चाहते हैं तो हमें बल की आवश्यकता तो अनुभव होगी ही । धार्मिक विधि–विधान जब हमारी आत्मा को जकड़ कर पंगु और हमारे शरीर को नपुंसक बना देते हैं तो पुरुषत्व को जगाने के लिए कोई न कोई मुक्त आत्मा मार्गदर्शन करने को धरती पर सामने आती है । सिक्ख गुरुओं की भूमिका भी इसी प्रकार की थी ।

गुरु नानक देव जी ने जहां भरी बिरादरी में कच्चे धागे का पारम्परिक जनेऊ पहनने से इनकार कर दिया और दया, सन्तोष और सत्य का जनेऊ पहनने के लिए सबको ललकारा वही जीव–दया, क्षमाशीलता और त्याग का मार्ग अपनाने वाले श्री गुरु तेगबहादुर जी ने उस जनेऊ और जनेऊ धारियों की रक्षा के लिये प्राणों को हंसते–हंसते कुरबान कर दिया। यही नहीं गुरुओं ने साथ ही साथ एक ऐसा वातावरण उस कठिन, भीषण परिस्थिति में तैयार किया कि मन और आत्मा की शक्ति को पहचान कर एक हाथ में माला और दूसरे में कृपाण पकड़ने वाले अनेकों वीर पैदा हो गये जिनको मिटाने के लिए बाद में उनके सिरों की कीमत भी तत्कालीन शासन द्वारा नियत कर दी गई पर फिर भी आन्तरिक रूप से सुदृढ़ यह समाज बाहरी विषम परिस्थितियों के फलस्वरूप भी अपनी भारतीयता का अस्तित्व बनाये रखने में सफल हो सका ।

बीज यदि एक बलवान पेड़ के रूप में दिखने का और दूसरों को शीतल छाया देने का इच्छुक है तो उसे इस बल प्राप्ति के लिए पहले धूल में मिलना पड़ता है; मिट्टी में मिट्टी होकर अपने आप को कई कठिनाइयों और अन्धेरों से जूझने के लिए तैयार करना पड़ता है । गुरुवाणी कहती है–

पहला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस ।
होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि ॥
(गु.ग्रं.सा. पृ. १४०२)

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ।
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ।
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ २ ॥
(गु.ग्रं.सा. पृ. १४१२)

गुरुजनों ने जो कहा उसे पहले खुद जीया तब दूसरों को वैसा जीवन जीने की प्रेरणा दी । पांचवें गुरु अरजन देव जी ने अपनी महान् वाणी में यदि यह कहा कि – "न को बैरी नहीं बिगाना सगल संगि हमकउ बनि आई" तो हंसते–हंसते गर्म तवे पर बैठ गये, उबलते पानी के कड़ाहे में बैठ गये पर किसी के लिए एक भी अपशब्द न कहा। मुसकराते रहे । गुरु तेगबहादुर जी ने अपनी वाणी में यदि यह कहा कि हरखु सोगु जाकै नहीं बैरी मीत समान । कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जानि – तो उन्होंने उतनी ही शान्ति और समरसता की भावना का तलवार की धार के नीचे भी अनुभव किया जितना वे आनन्दपुर के महलों में करते थे । इतिहास बताता है कि जिस समय श्री

गुरु तेग बहादुर जी को शहीद करने के लिए बड़ के पेड़ के नीचे ले जाया गया, उन्होंने बड़े शान्त चित्त से पहले ''जपु'' का पाठ किया और खुद जल्लाद को तलवार चलाने को कहा। अपनी कुर्बानी से उन्होंने यह बताया कि यदि जरूरत पड़े तो लोगों में सोई गैरत को जगाने के लिए किस प्रकार महान् आत्माएं आत्म–त्याग करती हैं और शारीरिक कष्टों को कष्ट नहीं मानतीं।

तपस्या, त्याग, संयम और मानव प्रेम की यह भावना ही आत्मा को वलवती बनाती हैं और जीव सव प्रकार के धार्मिक, सामाजिक, खोखले बन्धनों को क्षण भर में तोड़ कर अलग फेंक देते हैं। परन्तु यह सम्भव कैसे होता है कि जीव बलशाली बन सके तो इसका उत्तर हमें इस श्लोक की दूसरी पंक्ति में मिलता है जिसमें कहा गया है–

नानक सभु किछु तुमरै हाथ मै तुम ही होत सहाइ ॥

अपने स्वरूप को पहचानना और परमात्मा की कृपा दृष्टि होना एक ही क्रिया के दो नाम हैं ऐसा इस पंक्ति से प्रतिभासित होता है। गुरु नानक देव जी ने भी ''मन जीते जग जीत'' की बात अपनी वाणी में कही है। सव कुछ ईश्वर के हाथ में है इसका अर्थ ही यह है कि सब कुछ मानव के अपने हाथ में है। पर इसके लिए आवश्यक शर्त है कि प्रेम–भक्ति द्वारा पहले बल का अर्जन करना होगा; उस परमात्मा से अपने को भिन्न और उसके प्राणियों से अपने को टूटा हुआ मानने की भावना का त्याग करना होगा। तभी यह भी माना जा सकता है कि 'नानक सव किछ तुमरे हाथ में' – अर्थात् सब कुछ जीव के अपने ही वश में है। क्या यह सत्य नहीं कि जीव अपने किए हुए कर्मों को संस्कार रूप में अर्जित कर अपना प्रारब्ध और संचित कर्मों का खजाना हर क्षण भरते रहते हैं और तदनुसार अच्छे बुरे फल को प्राप्त होते रहते हैं। वह परमात्मा सहायता अवश्य करता है पर तभी जब जीव उसकी दी विभूतियों आंख, नाक, कान और हाथ आदि का सदुपयोग करने की दिशा में अग्रसर होने के उसके इशारे को समझ कर आगे वढ़ते हैं, अर्थात् अपनी सहायता स्वयं करने के लिए तत्पर रहते हैं।

सिक्ख गुरुओं ने तत्कालीन भारतीय लोगों की कमज़ोरी को समझा और अन्तर्मन में अनुभव किया कि हमारे ज्ञान और क्रिया का भेद, कथनी और करनी का अन्तर, आपसी फूट, ऊँच नीच की भावना हमें सैंकड़ों नहीं हजारों वर्षों तक गुलाम बनाए रखेगी। उनका बलिदान लोहार के हथौड़े की ठीक समय पर चोट के समान था जिसने आने वाले समय में भारतीय जनता को अत्याचार का डटकर मुकाबला करने के लिए कमर कस कर खड़ा कर दिया। वाद का सिक्ख समाज, सन्त–सिपाही के रूप को लेकर अवतरित हुआ जिसने सिद्धान्त और क्रिया का समन्वय किया और भारत का इतिहास पलटने में महान योगदान दिया। गुरु अरजन देव जी ने कुरबानी की पहली नींव रखी जिसे गुरु तेगबहादुर ने मजबूत किया और बाद में तो गुरु गोबिन्द सिंह, उनके चारों बच्चे, माता, परिवार, भाई मनी सिंह, बन्दा सिंह बहादुर उसके साथी और कोटि–कोटि सिक्ख, प्राणों पर खेल गये पर गैरत और स्वाभिमान के जनेऊ को उन्होंने उतरने नहीं दिया। अत्याचारी तलवार के सामने घिघियाते हुए रिरियाते हुए प्राणों की भीख नहीं मांगी। कारण साफ हैं। सिक्ख धर्म कोई रूढ़ि नहीं एक जीने का ढंग है जो अपने पड़ोसी को भूखा देख चुप नहीं बैठता, जो काम करने, बांट कर खाने और सबका भला मांगने की प्रतिज्ञा करना अपने दैनिक कार्यक्रम के अन्तर्गत मानता है। गुरु तेगवहादुर ने काश्मीर से चलकर आने वाले और पुकार लगाने वाले लोगों को इस लिए गले नहीं लगाया कि वे ब्राह्मण, क्षत्रिय,

शूद्र अथवा वैश्य थे बल्कि इस लिए अपने प्राणों को तुच्छ समझा कि वे मानवता के प्रतिनिधि थे, वे करुणा की साकार प्रतिमूर्ति थे उनको आश्रय देने वाला धरती पर कोई न था ।

इस प्रकार वल से संयुक्त गुरुओं ने मानव जीवन और दर्शन में एक बार फिर नये प्राण फूँके और कवीर के इस दोहे को चरितार्थ करके दिखा दिया –

सूरा सो पहिचानीऔ जु लरै दीन के हेत ।
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू न छाड़ै खेतु ॥
(गु.ग्रं.सा. पृ. ११०५)

पुरजा–पुरजा कट मरने की भावना ही यह सिखाती है कि असहायता के बन्धनों के स्वयं तोड़ना है अर्थात् यह मानना है –

बलु होआ बंधन छुटे सभु किछ होतु उपाइ ।
नानक सभु किछु तुमरै हाथ मै तुम ही होत सहाइ ॥

(२) शुभ कर्म

भारतीय चिन्तन में "सत्यं शिवम् सुन्दरम्" का अपना एक विशिष्ट स्थान रहा है । चिरन्तन सत्य का कल्याणकारी होना या शिवं तत्व से ओतप्रोत होना स्वाभाविक है और यहीं सत्यं शिवम् सुन्दरम् मिलकर वास्तविक सौन्दर्य का आदर्श साकार करते हैं । सिक्ख धर्म में मौत जैसे सत्य को भी सुन्दरम् तत्व से भरपूर मानकर हंसते–हंसते गले से लगाया गया है । मानव उस अव्यक्त प्रभु की लीला का व्यक्तीकरण है एवं मौत उसे फिर उसी अव्यक्त में मिला देती है ।

जैसे एक आग ते कनूका कोटि आग उठे,
न्यारे न्यारे हो के फिर आग में मिलाहिंगे ।
जैसे एक धूर ते अनेक धूर पूरित हैं
धूर के कनूका फिर धूर ही समाहिंगे ।
जैसे एक नद ते तरंग कोटि उपजत हैं
पानि के तरंग सबै पानि ही कहाहिंगे ।
तैसे बिस्व भूत ते अभूत भूत प्रगटत हैं
ताहि ते उपज सब ताहि में समाहिंगे ॥

मृत्यु का सत्य भी 'शिव' (कल्याणकारी) होने से सुन्दर है । इस शिवम् तत्व की सूझ ने ही गुरु तेगबहादुर का चाँदनी चौक दिल्ली में सिर धड़ से अलग होते देखा, बच्चों को मैदाने जंग में मानवता के लिए कटते देखा और छोटे–छोटे मासूमों को दीवारों में चुने जाते देखा । सत चित आनन्द (सदा सचिदानन्द सरबं प्रणासी) प्रभु के कल्याणकारी, प्रकृति के कण–कण में समाहित शिवम् (कल्याणकारी) तत्व को गुरु गोबिन्द सिंह जी ने निम्नलिखित सवैये में सम्बोधित किया है :–

देह सिवा बर मोहि इहे सुभ करमन ते कबहू न टरों ।
न टरों अरि सो जबि जाय लरों निसचै कर अपनी जीत करों ॥
अरु सिखिहों अपने ही मन को इह लालच हउ गुन तउ उचरों ।
जब आव की औध निदान बने अति ही रण में तब जूझ मरों ॥

चंडी चरित्र में आये गुरु गोबिन्द सिंह जी के इस सवैये का भावार्थ अत्यन्त ही ओजमय व मानस को परिष्कृत करने वाला है ।

परमात्मा के चिरन्तन काल से चले आ रहे कल्याणकारी शिवं तत्व के सामने नतमस्तक होकर गुरु गोबिन्द सिंह जी अच्छे कर्मों को अबाध गति से करते चले जाने का वरदान मांग रहे हैं । अच्छे कर्म, अच्छी विचारधारा के बाहरी रूप हैं । आज दुनिया को बेशक मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों, अस्पतालों, विद्यालयों, आश्रमों से भर दिया जाय फिर भी उसमें से घृणा, वैमनस्य, शोषण, प्रताड़न दूर नहीं हो सकता, जब तक अच्छी विचारधारा, पीड़ा की वास्तविक अनुभूति हमें उपरोक्त स्रोतों से प्राप्त नहीं होती । शुभ कर्मों और अच्छी विचारधारा के गतिशील अन्तर चक्रों के फलस्वरूप ही अच्छे चरित्र का निर्माण होता है जो जीव को दुःखी होने से बचाता है; बुराई और अच्छाई दोनों बन्धनों से दूर रखता है । इन्हीं शुभ कर्मों की प्राप्ति हेतु गुरु गोबिन्द सिंह परमात्मा के दयालु एवं कल्याणकारी रूप का आवाहन करते हैं ।

अब ये शुभ कर्म हैं क्या ? अच्छी शुरूआत काम की आधी समाप्ति की सूचक होती है । भयमुक्त होकर आरम्भ किये बड़े–बड़े युद्ध भी साधारण जनों द्वारा जीते गये हैं । सिक्ख इतिहास में भंगाणी की लड़ाई में हलवाई लालचन्द द्वारा दिखाई असाधारण वीरता और एक अन्य लड़ाई में बिचित्र सिंह द्वारा मस्त हाथी को पछाड़ भगाने का कृत्य उनकी भयमुक्त होकर जूझने की अवस्था का परिचायक है । वास्तविक प्रेमी भयमुक्त होता है । रणक्षेत्र चाहे अन्तर्मन हो या बाह्य जगत, दृढ़ मन से जुट जाने वाले व्यक्ति को पराजय का मुख नहीं देखना पड़ता । जीत निश्चित रूप से उसी की होती है जो प्रभु के ''निरभउ'' स्वरूप को मन में बसा कर उस पर दृढ़ता से आचरण करता है । गुरु गोबिन्द सिंह जी प्रभु के शिवम् तत्व से जन–कल्याण हेतु मानवता के शत्रुओं के मर्दन के लिए जीवों को भयमुक्त करने की प्रार्थना करते हैं । ''जापु साहिब'' में गुरुजी ईश्वर को हरीफुल शिकन है । हिरासुल फिकन हैं । १४३ ॥ अर्थात् तुम बैरियों के सिर फोड़ने वाले और सब डरों को परे फेंकने वाले हो–कहते हैं ।

इतने बड़े गुण को मन में धारण करने के लिए मन का पूर्ण रूप से तैयार होना आवश्यक है । मन मस्त हाथी के समान है जिसको प्रभु नाम के अंकुश से, संयम से, त्याग से वश में रखा जा सकता है । मन के ज्योति स्वरूप को पहचानने के लिये उस पर पड़ी अज्ञानता की परतों को धोना पड़ता है । शेख फरीद के पद–''फरीदा जे तू अकलि लतीफु काले लिखु न लेख । आपनड़े गिरीवान महि सिरु नीवां करि देखु ॥'' को जीवन में उतारने पर ही मन के सामने अपना वास्तविक चिन्तन रखा जा सकता है । परमात्मा के नाम का गुणानुवाद ही मन को धूर्त बुद्धि से परे ले जाकर हमें झूठ की कच्ची दीवार को तोड़कर बन्धन–मुक्त करता है । कथा, कीर्तन, भजन, व्याख्यान को सिक्ख धर्म मन को मजबूत करने का साधन मानता है । इसे चमत्कृत करने वाली कला न मानना चाहिये । गुरु गोबिन्द सिंह जी कहते हैं कि हे प्रभु ! मैं मन को सही मोड़ देने के लिए ही, उसे शक्तिवान बनाने के लिए ही आपके गुणों का उच्चारण करूं

और "गावीऐ सुणीऐ, मनि रखीऐ भाउ" के अनुसार अपने को ऊँचा उठाऊं । आप की महिमा वर्णन का यह लालच मुझे हमेशा बना रहे ।

सवैये की अन्तिम पंक्ति में गुरु गोबिन्द सिंह जी ने जीवन उद्देश्य हमारे सामने रखा है और प्रभु से वरदान मांगा है कि हे प्रभु, जीवन के अन्तिम क्षणों में युद्ध करता हुआ आपके चरणों में पहुंचू । शुभ कर्मों की चाह करने वाले, प्रभु के बिना किसी का भी भय न मानने वाले, मन के ज्योति स्वरूप को पहचानने वाले, भक्ति में लीन रहने वाले मन की स्वाभाविक इच्छा का सुन्दर प्रकटीकरण इन अन्तिम पंक्तियों में बन पड़ा है । कबीर जी ने भी कहा है "सूरा सो पहिचानिए जु लरै दीन के हेत । पुरजा पुरजा कट मरे कबहु न छाड़े खेत ।।" गुरु नानक देव जी ने कहा है–

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ । सिर धरि तली गली मेरी आउ ।।
इतु मारगि पैरु धरीजै । सिरु दीजै काणि न कीजै ।।
(गु.ग्रं.सा.पृ.१४१२)

गुरु गोबिन्द सिंह जी भी अन्यत्र एक स्थान पर कहते हैं– "अवर बासना नाहिं मोहि धरम जुद्ध के चाइ ।" गुरु जी द्वारा उच्चारित एक अन्य सवैये में यही भावना दृष्टव्य है:–

हे रवि हे ससि हे करुणानिध मेरी अबै बिनती सुन लीजै ।।
और न मांगत हउ तुम ते कछु चाहत हो चित में सोई कीजै ।।
सस्त्रन सों अति ही रण भीतर, जुझ मरों तऊ सांच पतीजै ।।
संत सहाय सदा जगमाहीं कृपा कर सिआम इहै बर दीजै ।।

सिक्ख धर्म की अन्तर्मन में धर्म युद्ध रूपी शुभ कर्म की तीव्र अभिलाषा इन सब पंक्तियों में साफ झलकती है । वास्तव में जीवन के हर एक पहलू के संग्राम में सिक्ख गुरु दृढ़ मन से भरपूर शक्ति से जूझे और उनकी निश्चित जीत के रूप में विलक्षण 'खालसा पंथ' का आविर्भाव भारतीय धर्म दर्शन के इतिहास में हुआ ।

(३) विनम्रता

नम्रता और अहं मनुष्य की दो ऐसी विशेषताएं हैं जिनका दर्शन बातचीत और व्यवहार में शीघ्र ही हो जाता है। किसी को अभिमानी और नम्र कहने के लिए उसके लम्बे जीवन के अध्ययन की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि ये दोनों वृत्तियां हर क्षण उस व्यक्ति का परिचय देती रहती हैं ।

नम्रता को जहाँ स्त्रियोचित गुण कहा गया है और बतलाया गया है कि बलवान, शौर्ययुक्त होने के लिए हमें नम्रता, करुणा, दया आदि भावनाओं को दूर कर वीरता, दृढ़ता आदि कठोर वृत्तियों का अर्जन करना चाहिए वहां साथ ही साथ कुछ लोग यह भी मानते हैं कि जीव–दया, नम्रता पूर्वक समर्पण और यहां तक कि कीड़ों–मकोड़ों के प्रति भी नम्रता प्रदर्शित करते हुए मुंह पर कपड़ा बांध और फूंक फूंक कर पाँव रखने में ही श्रेष्ठता है ।

जीवन, चरम उपलब्धि नहीं है वरन् चरम उपलब्धि वह ईश्वरीय ज्ञान है जिसके लिए यह मनुष्य जीवन सबसे अधिक सहायक हो सकता है । जिस प्रकार विद्युतधारा रोशनी देती हुई चक्कर (circuit) पूरा करके वापस अपने

केन्द्र स्थान पर आवश्यक रूप से आती है, ठीक उसी प्रकार परमात्मा से उत्पन्न जीव अपना सर्किट पूरा करके वापस उस परमात्मा में विलीन होता है और यही उसकी चरम उपलब्धि है, यही उसका अभिप्रेत है ।

खेल दिखलाने वाला नट जब रस्से पर चलता है तो अपने बोझ को इस तरह संतुलित करता है कि वह रस्से पर चलता भी जाता है और किसी ओर गिरता भी नहीं, भले ही उसके दायीं ओर गद्देदार घास हो और बायीं ओर पथरीली ज़मीन हो । यदि वह गद्देदार घास पर अपनी असावधानी के कारण गिर पड़ता है तो उसको अपेक्षातर कम चोट लगेगी । परन्तु नट का कौशल, चतुरता या प्रवीणता आधे रास्ते में ही गद्देदार घास पर गिर पड़ने भर में ही नहीं है अर्थात् किसी ओर भी गिर पड़ना उसके सारे खेल को चौपट कर देगा तथा साथ ही साथ यह उसके शरीर और वृत्ति अथवा उद्देश्य के लिए भी घातक हो सकता है । उसकी सफलता इसी में है कि वह अपने मन की एकाग्रता, अपने हाथ में पकड़े डण्डे के साधन से और चाहे जैसे भी हो अपना संतुलन बनाए रखे और सफलता पूर्वक रस्सा पार करके दर्शकों को आत्मविभोर होने का अवसर दे । जीवन में भी यदि हम किसी चरम स्थिति को अपना कर केवल एक ही ओर झुक जाते हैं तो हमारे जीवन की असफलता में कोई संदेह नहीं रह जाता है ।

नम्रता और अहं भी ऐसी ही उन अनेक विरोधी भावनाओं में से दो भावनाएं हैं जिनसे जीवन बना है । गुरु गोबिन्द सिंह जी ने मानवता की कमजोरी को समझा और पाया कि जीवन को संतुलित और स्वस्थ बनाने का काम उनसे भी पहले गुरु नानक देव और अन्य गुरुजनों ने शुरू कर रखा था । कहा गया है कि नम्रता विद्या का, बल का, महानता का आभूषण है । लेकिन यदि शरीर के केवल आभूषणों से ही लाद दिया जाय तो उसका सौन्दर्य लुप्त हो जायगा । संतुलित जीवन ही जीवन है, और अहं को भली प्रकार नियंत्रित कर संतुलित रखने वाली भावना नम्रता है :–

(१) जिहि प्रानी हउमै तजी करता रामु पछानि
कहु नानक वहु मुकत नरु इह मन साची मानु । (गुरु ग्रंथ पृ. १४२८)

(२) फरीदा गरबु जिनां वडिआईआ धन जोबन आगाह
खाली चले धणी सिउ टिबे जिउ मींहाहु । (गुरु ग्रंथ पृ. १३८३)

(३) हरि है खांडु रेतु महि बिखरी हाथी चुनी न जाइ
कहि कबीर गुरु भली बताई चींटी हो के खाइ । (गुरु ग्रंथ पृ. १३७६)

प्रभु के प्रति, उस परम सत्ता के प्रति जिसने अपने स्फुरण से इस सृष्टि की रचना की, इस प्रकार की नम्रता या दीनता का भाव रखना उसके प्रति कृतज्ञता की भावना का ज्ञापन है और प्रभु इस प्रकार के कृतज्ञता ज्ञापन का पात्र भी है । परन्तु अल्पज्ञ, सीमित साधनों और सांसों वाला मनुष्य जब अपने बल वैभव को ही चरम मान ले और अपने सामने सब को तुच्छ छुद्र समझने लगे तो विचारवान प्रथम चरण में ऐसे दंभी, मूढ़ के प्रति भी नम्रता ही प्रदर्शित करेंगे। परन्तु उसका यह भाव जब लोक की मर्यादा को तोड़ कर कर्तव्य का ध्यान किये बिना, बेलगाम हो उठे, जब वह धर्मान्ध होकर मनुष्य को हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई तथा ब्राह्मण, शूद्र आदि के टुकड़ों में बांट कर देखना चाहे; जब वह

अपने ही नैतिक नियमों को सब पर थोपने का बीड़ा उठा ले तब नम्रता, साधुता और भलाई की रक्षा के लिए सिक्ख धर्म यह मानता है कि –

चुकार अज हमा हीलते दर गुजशत
हलाल अस्त बुरदन बा शमशीरे दस्त
(ज़फरनामह)

अर्थात्–जब विनय, नम्रता तथा अन्य उचित तरीके नाकाम हो जायं तो ऐसी परिस्थिति में तलवार पकड़ लेना एक दम जायज हो जाता है। गुरु गोबिन्द सिंह जी ने परमानन्द, आत्मा के चरम बिन्दु ईश्वर की प्राप्ति के लिए नम्रता और स्वाभिमान से संपृक्त संतुलित जीवन जीने का ढंग सिखाने के लिए खालसा को जन्म दिया जो अपने वास्तविक रूप में संत भी हैं और सिपाही भी हैं। लाखों भक्तों श्रद्धालुओं और सेवा करने वाले जन समुदाय के स्वामी होते हुए भी अपनी नम्रता को सदैव हृदय और व्यवहार में बनाए रखा। पांच प्यारों को जब अमृत ''छकाया'' और संगत में उन्हें सर्वोपरि स्थान दिया तो आप ने स्वयं भी उनकी आज्ञा के पालन की प्रतिज्ञा की और यहीं बस नहीं वरन् उनके सामने हाथ जोड़कर घुटने टेककर उनके समक्ष उसी अमृत दान की इच्छा प्रकट की और कृपा पूर्वक प्राप्त किया। नम्रता की इससे वड़ी मिसाल शायद ही कोई हो जिसमें गुरु चेला बनकर कृतज्ञता ज्ञापन करता हो–

जुध जिते इन्हीं के प्रसादि इनहीं के प्रसादि सुदान करे।
अघ ओघ टरे इनहीं के प्रसादि इनहीं की कृपा फुनिधाम भरे।
इनहीं के प्रसादि सुबिदिआ लई इनहीं की कृपा सब सतरु मरे।
इनहीं की कृपा के सजे हम हैं नहीं मो सो गरीब करोर परे॥

उपर्युक्त सवैये में गुरु गोबिन्द सिंह जी गुरु रूप 'संगत' की शक्ति और तेज के आगे सिर झुकाते हुए अपनी सव विशेषताओं का कारण वीरों और बहादुरों की जननी 'संगत' को मानते हैं। युद्धों का जीतना, दान देना समृद्धि पूर्ण होना पापों का नाश होना, विद्या की प्राप्ति, सब संगत की कृपा के फलस्वरूप मानी गई है। जो यह मान लेता है कि संगत की कृपा प्राप्त न कर पाने के फलस्वरूप उसके जैसे करोड़ों साधारण जीव अज्ञान के गर्त में पड़े रह सकते हैं और उसे उन करोड़ों में से संगत की कृपा ने ही उबारा है और संगत की कृपापूर्ण दृष्टि के लिए संगत रूपी मानव समाज की सेवा ही श्रेयस्कर है उसे उस चरम उपलब्धि–परमात्मा में विलीन होने में, अपना सर्किट पूरा करने में किसी अवरोध का सामना नहीं करना पड़ता। अतः सिक्ख धर्म में विनम्रता का एक विलक्षण स्थान है।

(४) भक्ति और शक्ति

भारत भूमि पर पिछले हजारों वर्षों के इतिहास में अनेकों ऋषि, तपस्वी, संत, वीर, योद्धा पैदा हुए हैं। वेद मंत्रों के द्रष्टा ऋषि मुनियों, दधीचि जैसे त्यागियों, जंनक जैसे विदेह पुरुषों, विश्वमित्र, वशिष्ठ, पतंजलि, कपिल, शंकराचार्य जैसे महान तत्व चिन्तकों तथा इन्द्र, दशरथ, राम, कृष्ण आदि युग पुरुषों पर भारतवासियों को गर्व है। इन ऐतिहासिक अथवा प्रागैतिहासिक महान आत्माओं के कार्य व जीवनियां आज भी भारतीय जन मानस को काफी हद तक प्रभावित कर रही हैं; परन्तु ध्यान पूर्वक देखने पर एक आधे अपवाद को छोड़ कर यह पूर्णतया स्पष्ट है कि भारतीय इतिहास में व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास लगभग एकांगी ही रहा है, अर्थात् संत ऋषि आदि केवल अध्यात्म में ही निपुण

रहे हैं और योद्धा मात्र रण कौशल, सैन्य संचालन में ही दक्ष रहे हैं। योद्धा और संत को एक दूसरे पर आश्रित रहना पड़ा है और कहा जा सकता है कि ऋग्वेद के पुरुष सूक्त के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र की परम पुरुष के शरीर से उत्पत्ति दिखाने वाले मंत्र की सही व्याख्या न समझाए जा सकने के कारण और लोगों को गुमराह कर इस वर्ण व्यवस्था को निहित स्वार्थों के लिए कालान्तर में रूढ़ बना दिए जाने के कारण ही भारत में भक्ति और शक्ति की धाराएं सदैव पृथक–पृथक ही चलती रही हैं। परशुराम, द्रोणाचार्य आदि जैसी महान विभूतियां (जो कि जन्म से ब्राह्मण तथा कर्म से क्षत्रिय थे) केवल वीर योद्धा के रूप में ही इतिहास के माध्यम से हमारे सामने उभरीं और विश्वमित्र (जो कि जन्म से क्षत्रिय थे) जैसे महान पुरुष ब्रह्म ऋषि की उपाधि से विभूषित हुए। महाकाव्यों के समय में हम देखते हैं कि ऋषि मुनि अध्यात्म के महान् स्रोत होने के बावजूद यज्ञों की रक्षा में अपने को असमर्थ पाकर राजाओं से सहायता लेते हैं और प्रत्येक राजा आध्यात्मिक और नैतिक बल के लिए ऋषि मुनियों की कृपा दृष्टि पर आश्रित है।

भक्ति और शक्ति के अपूर्व संयोग की सम्भावना हम द्वापरयुगीन श्री कृष्ण के चरित्र में पाते हैं। वे एक ओर कंस, केशी और शिशुपाल आदि का वध करने वाले महान योद्धा हैं तो दूसरी ओर कर्मठता बाहुबल एवं अध्यात्म के समुद्र मानी जाने वाली गीता का उपदेश देने वाले स्थितप्रज्ञ ब्रह्म ज्ञानी हैं। श्री कृष्ण का जीवन भारतीय इतिहास में एक विलक्षण एवं अद्‌भुत जीवन है जिसमें त्याग, तपस्या, भक्ति एवं शक्ति का अपूर्व सामंजस्य है। परन्तु ध्यान से देखने पर कृष्ण के जीवन में भक्ति और शक्ति का मेल होते हुए भी ये धाराएं स्पष्टतः अलग अलग ही बनी रहती हैं। श्री कृष्ण जी का वह जीवन जिसमें वे लीलाएं करते हैं, दानवों का नाश कर योद्धा रूप में प्रतिष्ठित होते हैं एक संत अथवा आध्यात्मिक पुरुष के रूप में चित्रित नहीं हुआ है और यह हम स्पष्टतः देखते हैं कि जिस समय महाभारत के युद्ध में वे सम्मिलित हैं और तत्व वेत्ता के रूप में गीता का महान् उपदेश दे रहे हैं उन्होंने शस्त्र तक न छूने की प्रतिज्ञा कर रखी है। महाभारत युद्ध की तैयारी शुरू होने तक इस महान पुरुष में भक्ति और शक्ति के एक ही समय साथ–साथ दर्शन होने की सम्भावना बनी रहती है, परन्तु युद्ध की तैयारी के लिए पहुंचे अर्जुन एवं दुर्योधन दोनों पाते हैं कि श्री कृष्ण सक्रिय युद्ध से अपने आपको अलग ही रखना चाहते हैं।

सिक्ख गुरुओं ने संत सिपाही के रूप में ''खालसा'' का सृजन कर भारतीय चिंतन और युद्ध कौशल में एक अपूर्व योगदान दिया। सिक्ख गुरुओं ने भारत में पहली बार भक्ति और शक्ति का अद्‌भुत मेल प्रस्तुत किया। सिक्ख गुरुओं ने भारतीय जनता पर ''खालसा'' सृजन का प्रयोग करने में लगभग ढाई सौ वर्ष का समय लिया और गुरु नानक (१४६९) से लेकर (वैसाखी १६९९) गुरु गोबिन्द सिंह तक पूरे भारतीय जन मानस का मंथन कर शताब्दियों से स्पष्ट रूप से अलग चली आ रही भक्ति और शक्ति की महान् भारतीय परम्परा को एक दूसरे से संलग्न कर इसे संत–सिपाही के रूप में खालसा की अवधारणा प्रदान की। पहले पांच गुरु साहिबान ने युग की गति को देखते हुए भक्ति के साथ–साथ मानसिक पौरुष को पहले एक मजबूत आधार के रूप में प्रस्तुत किया और छठवें, सातवें, नौवें तथा दसवें गुरु ने उसी परम्परा को और मजबूत करते हुए एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ में माला लेकर चलने वाले ''खालसा पंथ'' का सृजन किया। कुछ लोगों को गुरु नानक, गुरु अंगद देव तथा गुरु अमरदास आदि के भक्ति पूर्ण कार्यों तथा अन्तिम गुरु गोबिन्द सिंह के युद्ध पूर्ण जीवन में सामंजस्य प्रतीत नहीं होता। वे मानते हैं कि गुरु नानक के उद्देश्यों और गुरु गोबिन्द सिंह के लक्ष्यों में समानता नहीं है। ऐसा मानना उन लोगों के लिए तो उचित है जो गुरुओं के जीवन और गुरुवाणी (गुरु ग्रंथ साहिब) से अनभिज्ञ हैं परन्तु जिन्होंने सिक्ख धर्म ग्रंथों का गहन अध्ययन किया

है वे इस तथ्य को नहीं मान सकते । गुरु नानक बेशक एक महान् आध्यात्मिक युग पुरुष थे परन्तु दया, विनम्रता, सेवा, परोपकार के उपदेशों के साथ–साथ वे गुरु ग्रंथ में अपने शिष्यों को यह उपदेश भी देते हैं कि यदि तुम्हें मानवता, स्वाभिमान से सच्चा प्रेम है तो प्रेम के इस रास्ते पर चलने के लिए सिर को हथेली पर रख कर चल सकने की अर्थात् प्राणों की परवाह न करने की आदत डालनी होगी।[१] गुरु अंगद देव यह स्पष्ट करते हैं कि योग मार्ग का कर्तव्य ज्ञानार्जन और ब्राह्मण का कर्तव्य वेदाध्ययन एवं मनन माना गया है । क्षत्रियों का धर्म वीरोचित कार्य करना तथा शूद्र का कर्तव्य पर सेवा करना माना गया है; परन्तु अब वस्तु स्थिति को ध्यान में रखकर सभी का कर्तव्य है कि वे सभी, (मानवता को भारतीयता को बंधन मुक्त करने के लिए) संगठित होकर ज्ञान, मनन, क्षत्रियत्व तथा सेवा के व्रत को धारण करें और किसी एक काम को किसी व्यक्ति विशेष का अधिकार न माने । गुरु अंगद देव कहते हैं कि जो इस रहस्य को समझता है, मैं उसका दास हूँ ।[२] कबीर की उस अमरवाणी को सिक्ख गुरुओं ने गुरु ग्रंथ में संकलित किया जिसका सन्देश है कि शूरवीर वही है जो असहायों के लिए अपने कर्तव्य का पालन करता हुआ युद्धशील बना रहता है और बेशक शरीर टुकड़े–टुकड़े हो जाय वह कभी भी रण क्षेत्र से भागता नहीं ।[३] यह कहा जा सकता है कि गुरु गोबिन्द सिंह ने संतों को सुख देने वाली और दुर्मति का नाश करने वाली, ''खालसा'' रूपी जिस कृपाण की सृजना की उसके लिए विनम्रता सच्चरित्रता एवं दृढ़ता रूपी इस्पात की आपूर्ति गुरु नानक एवं अन्य गुरुजनों ने की । गुरु नानक, शेख फरीद, गुरु अरजन देव तथा अन्य गुरुजनों ने विनम्रता को एक शुभ गुण माना है । जो शुभ कर्मों के लिए परम सहायक है । गुरु गोविन्द सिंह के जीवन वृत्त से भली भांति स्पष्ट है कि युद्ध में भाग लेते हुए भी वे एक आध्यात्मिक युग पुरुष के तौर पर जाने जाते रहे हैं । जैसा कि पहले कहा जा चुका है वे प्रभु के गुणानुवाद का वरदान भी मांगते हैं और साथ ही साथ पर दुख कातर होकर युद्ध में ही वीर गति पाने की अभिलाषा भी रखते हैं । उनके भक्ति और शक्ति के दर्शन को प्रस्तुत करने वाले उनके कुछ पद निम्नलिखित हैं जो स्वयं स्पष्ट हैं:–

(क) देहु सिवा बर मोहि इहे शुभ करमन ते कबहूँ न टरों ।
न टरों अरि सों जब जाइ लरौं निसचै कर अपनी जीत करौं ।
अरु सिखिहों अपने ही मन को यह लालच हउ गुन तउ उचरौं।
जब आव की औध निदान बने अत ही रण में तब जूझ मरौं ॥

---

१ जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ।
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ।
इतु मारगि पैरु धरीजै ।
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १४१२

२ जोग सबदं गिआन सबदं बेद सबदं ब्राह्मणह ।
खत्री सबदं सूर सबदं सूद्र सबदं पराक्रितह ।
सरब सबदं एक सबदं जे को जाणे भेउ ।
नानकु ताका दासु है सोई निरंजन देउ ॥ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४६९

३ गगन दमामा बाजिओ परिओ नीसाने घाउ ।
खेत जु मांडिओ सूरमा अब जूझन दो दाऊ ।
सूरा तो पहाचानीअै जु लरे दीन के हेत । (गु. ग्रं. सा. पृष्ठ ११०५)

(ख) खग खंड बिहंडं खल दल खंड अति रण मंडं वरबंडं ।
भुज दंड अखंडं तेज प्रचंडं जोति अमंडं भान प्रभं ॥
सुख संता करणं दुरमति दरणं किल बिख हरणं असि सरणं ।
जै जै जग कारण सिसट उबारण मम प्रतिपारण जै तेगं ॥
(वचित्र नाटक)

शक्ति के सन्दर्भ में एक तथ्य और भी द्रष्टव्य है कि शायद ही किसी राजा या सम्राट ने अपनी विजय को जनता की जन सामान्य की कृपा पर अवलंबित और समर्पित किया हो परन्तु ''खालसा'' के मुख्य प्रतिनिधि गुरु गोविन्द सिंह के निम्न पद से यह भली भांति स्पष्ट है कि वे अपनी जीतों का एक मात्र श्रेय धोबी, नाई, कहार, जाट, खत्री आदि के अद्‌भुत संयोग से व्युत्पन्न ''खालसा'' को देते हैं :–

(ग) जुध जिते इन ही के प्रसादि इनहीं के प्रसादि सु दान करे ॥
अघ ओघ टरे इनही के प्रसादि इनही की कृपा फुन धाम भरे ॥
इनही के प्रसादि सु बिदिआ लई इनही की कृपा सभ सतरु मरे ॥
इनही की कृपा के सजे हम हैं नहीं मो सो गरीब करोर परे ॥
(खालसा महिमा, दसम ग्रंथ)

(५) सिक्ख त्रिरत्न

''नाम जपणा, किरत करनी, वंड छक्णा'' अर्थात् प्रभु नाम स्मरण, हाथ से काम करके जीविकोपार्जन करना तथा जरूरतमंद पात्र व्यक्तियों में स्व अर्जित पदार्थ बांट कर खाना, सिक्ख जीवन के तीन बहुमूल्य आधारभूत सिद्धान्त हैं । गुरु ग्रंथ का प्रारम्भ ''जपु'' नामक वाणी से हुआ है जिससे सिद्ध होता है कि सिक्ख जीवन में ''जप'' का बड़ा महत्व है । परन्तु जप का अर्थ यांत्रिक तरीके से कर्मकांड के रूप में किया जाने वाला जप नहीं है अपितु सिक्ख धर्म में नाम स्मरण या जप का अर्थ है प्रभु को हमेशा अन्तर्यामी सर्वव्यापक एवं हर कार्य का साक्षी मानना और अन्ततः सर्व कल्याणकारी प्रभु रूप ही हो जाना । व्यावहारिक जीवन को प्रभुमय मानते हुए सिक्ख धर्म परमात्मा के सभी सांसारिक नामों के भेद विभेदों को कृत्रिम नाम मानकर उस ओअंकार के एक ही नाम ''सतिनाम'' पर बल देता है और जीव को व्यावहारिक जीवन में सत्य का पोषक होने के लिए प्रेरित करता है । इष्ट नाम भेदों के कारण विभिन्न संप्रदायों में बंटी भारतीयता को भी एक सूत्र में पिरोने का कार्य सिक्ख धर्म ने करने का प्रयत्न किया है ।

विभिन्न मत मतान्तरों और अंध विश्वास में फंसे लोग प्रायः निष्क्रिय हो जाते हैं । डॉ. जयराम मिश्र के कथनानुसार ''अंध श्रद्धा के कारण लोग प्रायः इष्ट देवों की मर्जी पर इतने अधिक निर्भर हो जाते हैं कि व्यवहार में भी स्वावलम्बी बनना छोड़कर एक दम आलसी और निकम्मे से ही रहते हैं तथा अपनी कमज़ोरियों और आपत्तियों का दोष अपने अपने इष्ट देव के माथे मढ़ कर चुप हो जाया करते हैं । भक्ति मार्ग के इस दोष को समाप्त करने के लिए सिक्ख धर्म में ''किरत करना'' अर्थात् अपने हाथ से कार्य करने का सिद्धान्त अपनाया गया जिससे लोगों में पसीना बहाकर

अर्जन करने की प्रवृत्ति बढ़ी । गुरु नानक ने स्पष्ट कहा कि हमें अपने हाथों से ही अपने कामों को संवारना एवं पूरा करना है । स्वावलंबन का सिद्धान्त ही सिक्ख धर्म को भक्ति मार्ग में विलक्षणता प्रदान करता है । गुरु नानक देव अपनी यात्राओं के दौरान एक बार एमनाबाद (वर्तमान पाकिस्तान) में हाथ से काम करने वाले एक बढ़ई भाई लालों के घर दो तीन दिन तक टिके तथा वहीं के एक बहुत बड़े सेठ भाग चन्द के आमंत्रण पर भी उसके यहां नहीं गए । यही नहीं, अपनी यात्राओं के बाद और बीच में जब भी गुरु नानक वापस घर पहुँचते तो बाकायदा खेती बाड़ी का काम अपने हाथों से करते और साथ ही साथ अपने शिष्यों को भी हाथ से काम करने के महत्व को समझाते थे । इन्हीं कारणों से सिक्ख समाज आज भी ''किरत करनी'' के सिद्धान्त को अपनाए हुए है और जिस देश, प्रदेश में हैं वहां के विकास में कृत संकल्प है ।

''वंड छकणा'' अर्थात् बांट कर प्रसन्न होना भी सिक्ख धर्म का आवश्यक अंग है । सिक्ख के लिए यह नैतिक आदेश है कि अपनी कमाई का दसवां भाग वह आवश्यक रूप से दीन दुखियों के तथा जन सामान्य के हित में खर्च करे । सिक्खों के लिए लोक कल्याण का केन्द्रीय स्थान ''गुरुद्वारा'' है । गुरुद्वारे में बिना किसी भेदभाव के सिक्ख असिक्ख सबके लिए यथायोग्य रहने ठहरने लंगर आदि का प्रबन्ध होता है । ये सारे कार्य सिक्खों के स्वैच्छिक रूप से दिए दान अथवा बांट कर खाने की प्रवृत्ति के फलस्वरूप किए गए प्रबंध के अन्तर्गत चलते हैं । आमतौर पर गुरुद्वारों से संबंद्ध स्कूल तथा अस्पताल बनवाने का कार्य भी गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटियों द्वारा किया जाता है जो ''वंड छकणा'' की भावना का ही प्रतिरूप माना जाता है । इस प्रकार उपर्युक्त त्रिरत्न सिक्ख धर्म की रीढ़ की हड्डी है । इन विशेषताओं के अतिरिक्त जातिवाद को न मानने की भावनाएं, कर्मकांडों का त्याग, समन्वयात्मक दृष्टिकोण तथा उपेक्षित नारी समाज को ऊँचा उठाने की भावना आदि सिक्ख धर्म की आधारभूत बातें हैं जिनके कारण यह धर्म मध्ययुगीन अन्य सम्प्रदायों से कहीं आगे बढ़ कर राष्ट्रीयता एवं मानवता के उत्थान में परम सहायक सिद्ध हुआ है ।

तत्त्व मीमांसा

परमात्मा

परमात्मा में विश्वास के बिना किसी भी धर्म की वही स्थिति है जो कि आत्मा के बिना शरीर की होती है। आध्यात्मिक मूल्यों की स्वीकृति हमारी बुद्धि को स्वत् ही ईश्वर में विश्वास की ओर ले जाती है। जिन धर्मों में ईश्वर की अवधारणा को अनावश्यक समझा जाता है उनमें भी अंततः धर्मावलंबियों के कर्मकांडों एवं पूजा के ढंगों में परोक्ष या अपरोक्ष रूप से ईश्वर जैसा विश्वास पाया जाता है। इस तथ्य को अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए हम जैन एवं बौद्ध धर्मों के सिद्धान्त एवं साधना पक्ष को देख सकते हैं। तीरथंकर और बोधिसत्वों की मंदिरों में प्रति–स्थापना देवताओं के रूप में ही की जाती है। वस्तुतः परमात्मा में अथवा परमात्मा जैसी किसी शक्ति में विश्वास मानव को जीवन संघर्ष में प्रवृत्त बने रहने के लिए साहस और क्षमता प्रदान करता है। धर्मशास्त्रियों के अनुसार परमात्मा इस प्रकार की अध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक है जो मनुष्य को एक आदर्शवादी लक्ष्य की ओर ले जाती है। परमात्मा केवल मानवतावादी मूल्यों का स्रोत एवं उन्हें धारण करने वाला ही नहीं है बल्कि वह उन मूल्यों का विस्तार करने वाला तथा उनकी सुरक्षा करने वाला भी है। परमात्मा वह आरम्भिक शक्ति है जिसे प्लैटो ने 'इरोस' के नाम से व्हाइट हेड 'साहसिक एकात्मता' (Unity of Adventure) और भारतीय संस्कृति ने शिवम् के नाम से जाना है।[१]

जब से मानव में आध्यात्मिक चेतना का विकास हुआ है संसार में अनेकों धर्मों का प्रवर्तन हुआ है। इनमें से अधिकांश धर्म परमात्मा में विश्वास रखते हैं। अधिकांश धर्म एक ऐसी शक्ति में विश्वास रखते हैं जो चाहे कुछ भी हो परन्तु मनुष्य से श्रेष्ठ शक्ति है। उस परमात्म–शक्ति को विभिन्न वादों, सिद्धान्तों और मानसिक स्तरों पर विभिन्न तर्कों और प्रमाणों के आधार पर समझने का प्रयत्न किया गया है। उसके अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए गुरु नानक तथा अन्य गुरुजन किसी तर्क वितर्क का आश्रय नहीं लेते। वे परमात्मा को अनादि सत्य मानते हुए उसकी उपस्थिति का अनुभव करते हैं।[२]

केनोपनिषद[३] में ब्रह्म वर्णन के संदर्भ में मनुष्य की अक्षमता को स्वीकार किया गया है। मुंडक उपनिषद[४] में यह स्पष्ट किया गया है कि ऋगवेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, उच्चारण विज्ञान, कर्मकांड, संहिताओं, व्याकरण, व्योतपत्ति, छंद शास्त्र और ज्योतिष आदि में निहित निम्न श्रेणी के ज्ञान (अपरा विद्या) के माध्यम से सांसारिक बौद्धिकता प्राप्त होती है। उच्च ज्ञान (परा विद्या) के माध्यम से ही उस अपरिवर्तनीय (परमात्मा) की अनुभूति होती है। गीता में इसी उच्च ज्ञान (Higher Knowledge) को दिव्य नेत्रों की संज्ञा दी गई है। और श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि हे अर्जुन तू मुझे अपने इन नेत्रों से वास्तविक रूप में नहीं देख सकता; तू मुझे देख सके इसके लिए मैं तुझे दिव्य नेत्र

---

१ डॉ. लक्ष्मीनिधि शर्मा–'धर्म दर्शन' वाराणसी, १९७२, पृष्ठ ३१७

२ (क) कि जाहर जहूर है ॥ कि हाजर हजूर है ॥ गुरु गोबिंद सिंह, जापु साहिब
(ख) जह जह देखा तह तह सोई–गुरु अरजन देव, गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १३४३
(ग) बेद कतेब संसार हभाहूं बाहरा।
नानक का पातिसाहु दिसै जाहरा–वही–पृष्ठ ३९७

३ १.३

४ १.१.५

(उच्च ज्ञान) प्रदान करता हूं ।[१] गुरु नानक, परमात्मा को पूर्ण रूप से समझ कर उसका वर्णन कर सकने में अपनी असमर्थता स्पष्ट स्वीकार करते हैं ।[२] गुरु अरजन देव, भौतिक चक्षुओं के माध्यम से अर्जित ज्ञान द्वारा आत्मा की (परमात्मा संबंधी जिज्ञासा की) प्यास को बुझाना असम्भव मानते हैं । वे कहते हैं–

लोइण लोई डिठ पिआस ना बुझै मू घनी ।
नानक से अखड़ीआं बिअंनि जिनी डिसंदो मा पिरी ॥[३]

अर्थात् इन आँखों से मेरी प्यास नहीं बुझती, वे आँखें दूसरी हैं जिनके द्वारा प्रियतम को देखा जा सकता है । यहां 'वे आँखें' परा विद्या या उच्च ज्ञान की प्रतीक हैं जो तर्क वितर्क के मार्ग पर न ले जाकर जीव को अनुभूति मार्ग पर ले जाती है ।

परमात्मा से सम्बन्धित अवधारणा को सिक्ख धर्म में गुरु ग्रंथ साहिब के प्रारम्भ में, मूल मंत्र में अत्यन्त सूत्ररूप से कहा गया है । मूल मंत्र का सिक्ख धर्म, दर्शन एवं जीवन में बहुत ही महत्व है, क्योंकि मूल मंत्र में जो उपाधियां परमात्मा की मानी गई हैं और उन्हें जिस विशिष्ट क्रम में रक्खा गया है वे उपाधियां और क्रम धर्मावलम्बियों के लिए एक सुसंस्कृत, निर्भय, स्वावलम्बी और सुदृढ़ समाज बनाने के लिए दिशा निर्देश हैं । यह मूल मंत्र निम्नलिखित हैं–

"१ओअंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ।"

अद्वैत सिद्धान्त का संबंध विशेष कर शंकराचार्य से जोड़ा जाता है जिन्होंने इस अवधारणा को भारतीय चिन्तन में प्रतिष्ठापित किया । गुरु ग्रंथ में शायद ही कोई पृष्ठ ऐसा मिले जिसमें ब्रह्म की अद्वैत सत्ता पर जोर न दिया गया हो, हालांकि गुरु ग्रंथ साहिब में कहीं भी शंकराचार्य का वर्णन नहीं आया है तथापि यह आश्चर्य नहीं है कि गुरु नानक देव के चिन्तन का भी वही स्रोत हो जहां से सभी भारतीय चिन्तकों ने प्रेरणा प्राप्त की है और दार्शनिक चिंतन को समृद्ध किया है । गुरु नानक देव ने अपने गहन् चिन्तन के फलस्वरूप उपर्युक्त मूल मंत्र दिया है जिसके प्रत्येक शब्द पर हम विचार करेंगे ।

१ओअंकार

यदि संख्या वाचक १ को अभी छोड़ दें तो गुरु ग्रंथ साहिब का और मूलमंत्र का पहला शब्द 'ओंकार' जिसे गुरु ग्रंथ में विभिन्न स्थानों पर एकंकार एक ओअंकार रूपों में लिखा गया है प्रत्येक स्थान पर ब्रह्म का ही प्रतीक है । गुरु अरजन देव 'ओअं' को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए साधु और सतगुरु को नमस्कार करते हैं;[४] क्योंकि यहीं 'ओंकार' सृष्टि का आदि मूल माना गया है । कबीर के अनुसार यह जगत नाशवान है अतः अविश्वसनीय है। जो

१ ८.११
२ तेरी गति मिति तूहै जाणहि किआ को आख वखाणै–गुरु नानक गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९४६
३ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ५७७
४ 'ओअं साध सतगुर नमसकारं'–गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २५०
५ 'ओअंकार आदि मैं जाना । लिख अरु मेटै ताहि न माना ॥
ओअंकार लखे जउ कोई । सोइ लखि मेटणा न होइ ॥ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ३४०

इस ओंकार का साक्षात्कार कर लेते हैं अपने को नष्ट होने से बचा लेते हैं ।[५] वैदिक साहित्य से लेकर मध्य युग तक इस ओंकार को परब्रह्म के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त किया गया है । छांदोग्य उपनिषद में भी ओंकार को ही सारे जगत विस्तार का कारण माना गया है और मांडूक्योपनिषद में भी ओंकार को ही सृष्टि का मूल कहा गया है–

'ओमित्येतदक्षरमिंद सर्व तस्योपव्याख्यानं भूतं भवद्भविऽयदिति सर्वमोंकार एव । यच्चन्यत्त्रिकालातीतं तदर्प्योकार एवं'[१]

'ओंकार' को अ, उ तथा म के रूप में विश्लेषित करते हुए योग चूड़ामणि उपनिषद (श्लोक ७५–७८) में इसकी व्याख्या इस प्रकार से की गई है–'अकार' स्थूल विराट और विश्वजनीन है, 'उकार' हिरण्यगर्भ है जो प्रकाशमान् एवं सूक्ष्म है तथा 'मकार' शुद्ध बुद्धि तत्व का प्रच्छन्न कारण है । 'अकार' क्रियाशील (रजस) लाल वर्ण का ब्रह्मा है, 'उकार' सात्विक, श्वेत वर्ण का विष्णु है तथा 'मकार' जड़ (तमस) काले वर्ण का रुद्र के नाम से पुकारा जाता है । इस प्रकार प्रणव से ही ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र प्रकट हुए । यह प्रणव (ओंकार) परा तत्व है जिसमें ब्रह्मा विष्णु और रुद्र तीनों समाहित हो जाते हैं । केवल प्रणव (ओंकार) ही प्रकाश युक्त एवं स्थायी रहता है ।

गुरु रामदास भी गुरु नानक देव के सिद्धान्त की पुष्टि करते हुए कहते हैं कि यह ओंकार ही सब स्थानों में व्याप्त है और सब इसी में समाहित होंगे ।[२] यह ओंकार ही विभिन्न रूपों में प्रतिभासित होकर सबको अपनी आज्ञा में कार्य करवाता है । गुरु नानक देव ने एक पूर्ण लम्बी वाणी 'ओंअंकार' (५४ पद) लिखी है जो गुरु ग्रंथ में संग्रहीत है । इसमें उन्होंने स्वीकार किया है कि ओंकार ही सारे विश्व का मूल है । ब्रह्मा, चित्त, युग, पहाड़, वेद आदि सब ओंकार प्रसूत हैं । यही नहीं कि भक्तजन केवल ओंकार का ध्यान कर मुक्त हो जाते हैं बल्कि तीनों लोकों का सार भी ओंकार ही है ।[३] यही ओंकार पातंजल योग सूत्र में 'प्रणव' के नाम से जाना गया है[४] तथा इसे ही गुरु गोबिन्द सिंह ने भी सृष्टि का आदि स्वरूप कहा है ।[५]

ओंकार (ओम) के अ उ म रूप में उपर्युक्त विश्लेषण तथा तदनुरुप ब्रह्मा विष्णु एवं महेश की त्रिमूर्ति की अवधारणा ने ही वैष्णव और शैव मतों और मतावलंबियों को जन्म दिया । शैव और वैष्णवों में अपने अपने इष्ट देवों को ऊँचा सिद्ध करने के लिए संघर्ष तथा होड़ का होना नितान्त आवश्यक बन गया । इस संघर्ष तथा वर्ण व्यवस्था को गलत रूढ़िवादी ढंग से समझने के कारण भारत वासी कई सम्प्रदायों जातियों तथा प्रजातियों में बंट गये । गुरु नानक ने सम्पूर्ण

---

१ २, २३, ३

२ ओअंकारि एको रवि रहिआ सभु एकस माहि समावैगो ।
एको रूपु एको बहु रंगी सभु एकतु बचनि चलावैगो–गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १३१०

३ ओअंकारि ब्रहमा उतपति । ओअंकारु कीआ जिनि चिति ।
ओअंकारि सैल जुग भए । ओअंकारि बेद निरमए ।......
ओनम अखर सुणहु बीचारु । ओनम अखरु त्रिभवण सारु । गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९२९

४ १.२३

५ ओअं आदि रूपै ॥ अनादि सरूपै ॥ १२८ ॥ जापु साहिब ।

भारत और कई अन्य देशों का भ्रमण किया; स्थिति की गम्भीरता को समझा और गहन चिन्तन किया। उन्होंने अनुभव किया कि बहुदेववाद वास्तव में धर्म और धार्मिक जीवन में रूचि को क्षीण करता है तथा लोगों को मात्र कर्मकांड में उलझा कर उनके जीवन को खोखला बना देता है। गुरु नानक देव ने 'ओंकार' के बारे में व्याप्त भ्रमों को दूर करने के लिए मूलमंत्र में निश्चय बोधक संख्या १ लगा दी ताकि उनके शिष्यों में बहुदेववाद को त्याग कर मात्र एक परमात्मा में रूचि उत्पन्न हो सके। गुरु ग्रंथ में अन्य स्थानों पर भी गुरु नानक तथा अन्य गुरुजनों ने इसी तथ्य की बार बार पुष्टि की है। गुरु नानक कहते हैं–

(क) आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तू ।
एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू ॥[१]

(ख) जेता सबदु सुरति धुनि तेती जेता रूपु काइआ तेरी ॥
तूं आपे रसना आपे बसना अवरु न दूजा कहउ माई ॥ १ ॥
साहिबु मेरा एको है । एको है भाई एको है ॥ १ ॥[२]

(ग) एको एकु कहै सभु कोई हउमै गरबु विआपै ।
अंतर बाहरि एकु पछाणै इउ घरु महलु सिञापै ।
प्रभु नेड़ै हरि दूरि न जाणहु एको सिसटि सबाई ॥
एकंकारु अवरु नही दूजा नानक एकु समाई ॥[३]

सिक्ख गुरुजनों ने परम तत्व–चिन्तन में भारतीय परम्पराओं में जहाँ एकता स्थापित करने का प्रयत्न किया वहीं साथ ही साथ भारत में स्थाई रूप से बस चुके मुस्लिम विश्वासों का भी हिन्दु विश्वासों के साथ यथा–सम्भव समन्वय किया। गुरु अरजन देव कहते हैं:

(क) कहु नानक गुरि खोए भरम ।
एको अलहु पारब्रहम ॥[४]

(ख) अलहु गैबु सगल घट भीतरि हिरदै लेहु बिचारी ।
हिंदू तुरक दुहूं महि एकै कहै कबीर पुकारी ॥[५]

यही तथ्य हमें बृहदारण्यकोपनिषद के "नेहु नानास्ति किंचन" तथा छांदोग्य के 'एकमेवाद्वितीयम' वाक्यों में भी दृष्टिगोचर होता है।

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १२९१
२ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ३५०
३ वही–पृष्ठ ९३०
४ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ८९७
५ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४८३

सतिनामु

सिक्ख गुरुजन ईश्वर के सत्य स्वरूप पर बहुत अधिक जोर देते हैं । नानक वाणी 'सिध गोसटि' में ही लगभग ४५ बार गुरु नानक देव ने सत्य और परमात्मा में एकात्मता स्वीकार की है । गुरु नानक जपु जी के मंगलाचरण में भी कहते हैं कि सत्य ही प्रारम्भ में था, वर्तमान में भी सत्य ही सर्व व्यापक है तथा भविष्य में भी सत्य ही होगा (आदि सचु जुगादि सचु । है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥) ब्रह्म को 'सत्य' या 'परम सत्य' मानते हुए इस बात की पूरी सम्भावना है कि हम 'सत्य क्या है ?' जानने के बारे में उत्सुक हों । इस प्रश्न का उत्तर ढूँढता हुआ व्यक्ति निश्चित रूप से सत्याचरण की ओर उन्मुख होगा तथा परम सत्य को प्राप्त करने का प्रयत्न करेगा । परिणामस्वरूप परम सत्य और उसके संसार चक्र के साथ संबंध के रहस्य खुलने शुरु हो जाएंगे तथा व्यक्ति के भीतर चल रहे द्वन्द और तनावों का शमन हो सकेगा । सिक्ख धर्म का यह विश्वास है कि परमात्मा सभी तथाकथित नाम केवल उसकी विभिन्न क्रियाओं पर आधारित विभिन्न नाम हैं । ये अलग–अलग नाम उसकी सम्पूर्णता, समग्रता को प्रदर्शित करने के लिए अप्रयाप्त हैं और साथ ही साथ उसकी अनंतता को सीमित करने का भी परोक्ष साधन हैं । उसका वास्तविक नाम 'सतिनामु' या 'सत्य ही हो सकता है[१] क्योंकि सत्य के साथ ऊपर लिखे दोष घटित नहीं होते । गुरु नानक कहते हैं कि सत्य न तो कभी पुराना होता है और न ही कभी खण्ड–खण्ड होता है ।[२] हमेशा यही सम्पूर्ण, समग्र एवं व्यापक होता है ।

करता पुरखु

गुरु नानक देव ब्रह्म को कर्त्ता पुरुष मानते हैं । इस तथ्य की पुष्टि इस बात से भी होती है कि विश्व के पदार्थों को देख कर उनकी रचना की कल्पना बिना किसी कर्त्ता के करना असंभव सा लगता है । पदार्थ स्वयं ही उत्पन्न हो गए होंगे या शून्य से पैदा हो गए होंगे मानना भी असंगत है । यद्यपि मानव में अद्‌भुत मानसिक शक्तियां हैं और उनके द्वारा वह प्रकृति को काफी हद तक काबू कर लेने में भी समर्थ हो चुका है परन्तु फिर भी अभी तक उसने स्वयं विश्व का कर्त्ता होने का दावा नहीं किया । विश्व की रचना की बात तो दूर रही वह स्वयं इस महान विश्व में एक छोटी सी कृति है ।

जब पदार्थ स्वयं उत्पन्न नहीं हुए और न ही मनुष्य ने उन्हें बनाया तो निश्चय ही प्रकृति और मनुष्य की रचना करने वाला कोई और ही है । यह वही अगम्य कर्त्ता पुरुष है जिसने गुरु नानक के कथनानुसार विभिन्न प्रकार के गुणों और रंगों से भरपूर इस विश्व का निर्माण किया है ।[३] सभी चिन्तक परोक्ष या अपरोक्ष रूप से यह स्वीकार करते

---

१ गुरु अरजन देव–किरतम नाम कथे तेरे जिहबा ॥ सतिनामु तेरा परा पूरबला । गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १०८३

२ सचु पुराणा होवै नाही सीता कदे न पाटै ॥ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९५५

३ तूं करता पुरखु अगंमु है आपि स्रिसटि उपाती ।
रंग परंग उपारजना बहु बहु बिधि भाती ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १३८

हैं कि इस विश्व के पीछे कोई महान् अज्ञात शक्ति है । इसी सृजनात्मक शक्ति को गुरु नानक 'कर्त्ता पुरखु' कहते हैं । अपनी इसी अवधारणा की पुष्टि में गुरु नानक उसे आदि पुरुष (आदि पुरखु) भी कहते हैं और इस प्रकार सांख्यवादियों की पुरुष की अवधारणा जिसके अन्तर्गत सांख्यवादी प्रकृति और पुरुष दोनों को अनादि मानते हैं तथा पुरुष को निष्क्रय अकर्त्ता मानते हैं से भिन्न अपना मत व्यक्त करते हैं । सिक्ख दर्शन में केवल ब्रह्म को अनादि माना है और उसे प्रकृति का भी कर्त्ता माना गया है ।[१]

संसार की बृहदता और उपादनों को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि कर्त्ता पुरुष एक विराट शक्ति का भंडार है अथवा वह अद्वितीय रूप से शक्तिशाली है । केवल इतना ही नहीं विश्व की जटिल किन्तु अद्भुत संरचना स्व पूर्णता एवं संगठन इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि यह 'कर्त्ता पुरुष' अपनी सर्म्पूण रचना के परम ज्ञान का अधिष्ठान है । परम तत्व का कर्त्ता आयाम हमें यह अनुभव कराता है कि हमें अत्यधिक रूप से सक्रिय जीवन्त और योजनाबद्ध होना है ताकि हम भी जीवन में विश्व के उस महान् कर्त्ता के अनुरूप नियमबद्धता, सौष्ठव एवं नियंत्रण स्थापित कर सकें ।

यह तथ्य की सृष्टि किसी 'कर्त्ता' की रचना है, सिद्ध करता है कि यह विश्व जब नहीं था, कर्त्ता उस समय भी था । जब परमात्मा इस विश्व की रचना कर सकता है तो इस विश्व में कोई भी अपात् परिवर्तन करने का अधिकार भी उसके पास है । गुरु नानक कहते हैं कि यदि वह (कर्त्ता पुरुष) चाहे तो शेर, बाज और अन्य मांसाहारी जीव घास खाने लग जाएँ और शाकाहारी जीव मांसाहारी बन जाएं । वह चाहे तो नदियों में द्वीप बना दे और वह चाहे तो रेगिस्तानों को समुद्र में परिवर्तित कर दे ।[२] कर्त्ता पुरुष वह शक्ति है जो सारी सृष्टि को लय कर सकता है और यदि चाहे फिर इसे चेतनता प्रदान कर सकता है । इससे यह भी सिद्ध होता है कि यह कर्त्ता पुरुष विश्व से पूर्णतया स्वतन्त्र है जबकि सर्म्पूण विश्व अपने अस्तित्व और अनुरक्षण के लिए उस कर्त्ता पर आधारित है । इस प्रकार विश्व स्वयं सिद्ध कर रहा है कि कर्त्ता पुरुष सर्वशक्मिान, सर्वज्ञ, स्वयंभू, जीवन्त, क्रियाशील, दयालु, बुद्धिमान एवं अनादि है । यह वही 'कर्त्ता पुरुखु' है जिसे गुरु नानक, अन्यत्र, सहस्त्रों चक्षुओं वाला परन्तु फिर भी चक्षुहीन, सहस्त्रों पैरों वाला परन्तु फिर ही पदविहीन परमात्मा कहते हैं । इस कर्त्ता पुरुष की आरती[३] गगन रूपी थाली में रवि और चंद्र को दीपक बना कर तारिकाओं को मोती मान कर, मलयानिल समीर को धूप–बत्ती, पवन को चंवर और सारी वनस्पति को फूल मान कर की जा रही है ।

---

१ गुरु नानक देव–"आपीनै आपु साजिओ आपीनै रचिओ नाउ ।
दुयी कुदरति साजीऔ करि आसणु डिठो चाउ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ४६३

२ सीहा बाजा चरगा कुहीआ एना खवाले घाह ।
घाहु खानि तिनां मासु खवाले एह चलाए राहु ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १४४

३ गगन मैं थालु रवि चंदु दीपकु बने तारिका मंडल जनक मोती ।
धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती ।
कैसी आरती होइ भवखंडना तेरी आरती । अनहता सबद वाजंत भेरी ॥
गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ६६३

सांख्य की अवधारणा के अनुसार पुरुष असंख्य हैं । सिक्ख धर्म में वह पुरुष केवल एक है और बाकी सारी सृष्टि उसके लिए स्त्री रूप है ।[१] सारी सृष्टि स्त्री के प्रतीकात्मक रूप में उस एक ही पुरुष (परमात्मा) के द्वार पर खड़ी उसके द्वार में प्रवेश की इच्छुक है ।[२] लेकिन इसका यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि गुरु नानक देव ने परम तत्व को किसी मनुष्य की आकृति के रूप में माना है । इस तथ्य को ये गुरु ग्रंथ में अन्यत्र स्पष्ट करते हुए कहते हैं:

सुनं मंडल इक जोगी बैसे । नारि न पुरखु कहो कोउ कैसे ।[३]

अर्थात् (मेरे) शून्य मंडल में एक योगी विराजमान है जो न तो नारी है और न ही पुरुष है ।

निरभउ निरवैरुः

परमात्मा के ये विशेषण उसे किसी विशेष जाति, सम्प्रदाय या देश का परमात्मा न मानकर सारी मानवता का परमात्मा घोषित करते हैं । परम तत्व की इन उपाधियों के आधार पर ही सिक्ख धर्म में मानव के भ्रातृत्व और एक परमात्मा के पितृत्व की भावना भरी । परमात्मा के नियम न्यायपूर्वक कार्यरत है । केवल वही निर्भय और वैर रहित हो सकता है जो सभी को सम्पूर्ण रूप से जानता है परन्तु फिर भी किसी विशेष से सम्बन्धित नहीं है । वह ''निरभउ निरवैर'' ब्रह्म के सिवा अन्य कोई और नहीं हो सकता ।

अकाल मूरतिः

इस शब्द का भी सिक्ख धर्म के विश्वास और साधना पक्ष से घनिष्ठ संबंध है । इसके माध्यम से कालातीत प्रभु के अनादि होने की ओर संकेत किया गया है । गुरुवाणी में अन्यत्र भी गुरु नानक उसे अलक्ष्य, अगम्य और कालातीत मानते हैं । गुरु अमरदास मानते हैं कि अदृष्य सर्वव्यापक परमात्मा को अदृष्य 'शबद' की साधना के फलस्वरूप ही अनुभव किया जा सकता है । उसकी बराबरी का कोई नहीं है और वह कालातीत है ।[४]

अजूनीः

इस शब्द के माध्यम से ब्रह्म का वर्णन करते हुए गुरु नानक अवतारवाद के सिद्धान्त के प्रति अपनी अनास्था प्रकट करते हैं । अवतारवाद के सिद्धान्त के फलस्वरूप उत्पन्न अनेकों मत मतान्तरों के गोरखधन्धों के बचने की बात जहाँ गुरु नानक कहते हैं वहीं साथ ही साथ परमतत्व को जन्म मरण और आवागमन से भी परे मानते हैं ।[५]

---

१ गुरु नानक–''ठाकुर एक सबाई नारि''–गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९३३

२ वही–इको कंतु सबाईआ जिती दरि खड़ीआह
नानक कंतै रातीआ पुछहि बातड़ीआह ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ७९०

३ वही, पृष्ठ ६८५

४ तू अकाल पुरखु नाही सिरि काला ।
तू पुरखु अलेख अगंम निराला ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ११३८

५ साहिबु मेरा सदा है दिसै सबदु कमाइ ।
उहु अउहाणी कदे नाहि न आवै न जाइ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ५०१

सैभंः

इस शब्द की संस्कृत मूल धातु 'स्वयंभू' है जिसका अर्थ स्वयं प्रकाशित होना है। परमात्मा किसी की रचना नहीं हैं। गुरु ग्रंथ के प्रारम्भ में ही इस तथ्य की पुष्टि की गई है कि न तो उस परमात्मा की स्थापना की जा सकती है और न ही उसे कोई बना सकता है।[१] वह स्वयंभू है। गुरुमत ब्रह्मा विष्णु महेश और अन्य देवताओं को परमात्मा की ही रचना मानता है। यही नहीं बल्कि सामान्य जीवों की तरह ये देवी देवता भी उस परमात्मा के बारे में बहुत कम जानते हैं।[२]

गुर प्रसादिः

उपर्युक्त गुणों वाला ब्रह्म गुरु की कृपा से प्राप्त किया जा सकता है जो कि गुरु नानक के अनुसार मानव और दैवी दोनों गुणों का धारक कोई ब्रह्मज्ञानी हो सकता है जिसे बाद में गुरु अरजन देव जी ने परमेश्वर ही माना है।

निर्गुण एवं सगुणः

प्रचलित हिन्दू धर्म चार प्रमुख सम्प्रदायों में विभक्त है। ये सम्प्रदाय हैं– स्मार्त, शैव, वैष्णव और शाक्त। स्मार्त लोग कर्मकांडी हैं और उनका विश्वास बहुदेववादी है। शाक्त देवी और तंत्र क्रियाओं में विश्वास करते हैं परन्तु 'बलि' उनका एक मुख्य सिद्धान्त है। शैव और वैष्णव दोनों वैदिक और उपनिषदिक ईश्वरवादी विचारधारा के विकसित रूप माने जाते हैं।[३] भारतीय दर्शन में ब्रह्म के निर्गुण और सगुण दोनों रूपों का विशद वर्णन हुआ है। यद्यपि सगुण ब्रह्म पुराने महाकाव्यों और पुराणों का विषय रहा है परन्तु फिर भी सगुण ब्रह्म और उसके और रूपों के मूल स्रोत निर्गुण का ही अधिक वर्णन हुआ है।

श्री एम. के. वेंकटा रामा अय्यर के शब्दों में निर्गुण ब्रह्म का सगुण ब्रह्म के तौर पर रूपान्तरण होता ही नहीं है क्योंकि जो निराकार है तथा परिणामस्वरूप अपने जैसा स्वयं ही है वह निचले स्तर पर आकर गुण धारण नहीं कर सकता। एक बात और भी है: क्योंकि परम तत्व में आंतरिक तौर पर जब कोई अन्तर नहीं है और वह अनादि रूप से सर्वांग पूर्ण हैं तो उसमें रूपान्तरण की इच्छा क्यों कर होगी। तथापि यह हमारी बुद्धि ही है जो मूल तत्व की एकता, सम्पूर्णता को ना समझ पाने के कारण उसे ज्ञात रूपों के टुकड़ों में बांटकर देखती है और समझने का प्रयास करती है। जिस परम सत्ता की अनुभूति हमको हो पाती है वह बुद्धि के माध्यम से देखने के कारण तथा निचले स्तर पर समझने का प्रयास करने के कारण एक आपेक्षिक सत्ता सी होकर रह जाती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि यह शुद्ध शक्ति नहीं रह जाती है बल्कि यह कह सकते हैं यह सत्ता जड़ पदार्थ के साथ संयुक्त होकर हमें प्रतिभासित होती

---

१ थापिआ न जाइ कीता न होइ। आपे आपि निरंजनु सोइ। गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २

२ गुरु अरजन देव–'महिमा न जानहि बेद। ब्रहमे नहीं जानहि भेद।
अवतार न जानहि अंतु। परमेसरु पारब्रह्म बेअंतु॥ रहाउ॥
संकरा नहीं जानहि भेव। खोजत हारे देव॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ८९४

३ प्रो. उपेन्द्र नारायण झा का लेख–धर्म दर्शन–बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी पटना, पृष्ठ ८७

है ।[1] इस भौतिक जगत की चरम सीमा यह जड़ पदार्थ ही है परन्तु इस जड़ पदार्थ के प्रकाशन के लिए सत्तात्मक शक्ति की आवश्यकता आवश्यक है । अतः कहा जा सकता है कि पदार्थ ही पूर्ण सच्चाई नहीं है बल्कि सत्ता (Spirit) के साथ संलग्न पदार्थ ही (इस भौतिक जगत की) सच्चाई है । इस पदार्थ को यदि उसकी अनंतता के संदर्भ में देखकर शक्ति के परिप्रेक्ष्य में अनुभव किया जाए को हमें सगुण ब्रह्म की अवधारणा प्राप्त होती है । सारे विश्व में अन्तर्निहित शक्ति के रूप में वह इंद्रियों के गुण होता हुआ भी इन्द्रियों से स्वतन्त्र है ।[2] वह हर वस्तु का आवश्यक अंग है और सबको अनुभव करते हुए धारण करता है । सगुण निर्गुण ब्रह्म के बारे में उपनिषद[3] भी कहते हैं कि जिसे देखा नहीं जा सकता, पकड़ा नहीं जा सकता, जिसका कोई परिवार, जाति, आँख, हाथ, पाँव नहीं हैं, जो सर्वव्यापक, अनन्त, अनश्वर है उसे बुद्धिमान पुरुष सभी जीवों का स्रोत मानते हैं । गीता में कहा गया है कि मूर्ख उसके परम तत्व को समझे बिना उसे अवतरित (Revealed) कहते हैं जब कि वह सर्वोच्च और अपरिवर्तनीय है ।[4]

इस अपरिवर्तनीय परम सत्ता को कुछ लोग भगवत, कुछ ब्रह्म तथा कुछ लोग परमात्मा कहते हैं । इसके बारे में डॉ. दास गुप्ता का कथन है:

"अब यह 'सत्य शक्ति' जो आनन्द स्वरूप है, संतों द्वारा अपने आत्म स्वरूप में अनुभव की जाती है और जब बुद्धि द्वारा इसकी विभिन्न शक्तियों को ग्रहण करने में वे अपने आप को असमर्थ पाते हैं तो इसे ब्रह्म के नाम से पुकारा जाता है । इस प्रकार के अनुभवों में इस सत्य को एक सामान्य तरीके से भाव रूप में ग्रहण किया जाता है । परन्तु जब भक्त द्वारा इस शक्ति को अपने स्वरूप में विभिन्न शक्तियों के अधिष्ठान के रूप में उपर्युक्त से भिन्न रूप में अनुभव किया जाता है तो इसे 'भगवत्' (सगुण ब्रह्म) के नाम से जाना जाता है । अतः जब परम तत्व की उसके आपेक्षिक गुणों के संदर्भ में अवधारणा की जाती है तो उसे 'भगवत्' कहते हैं परन्तु जब उसे विशिष्ट गुणों के संदर्भ में न जानकर भावात्मक रूप में जाना जाता है तो उसे ब्रह्म कहते हैं ।'[5]

परम तत्व किसी भी अवधारणा से परे है फिर भी वह सब अवधारणाओं का स्रोत है । ईथर और वायु का उद्‌गम स्रोत दृश्यमान नहीं है परन्तु फिर भी उनका स्रोत है और वह किसी अन्य का रूपान्तरण हैं । चूंकि ब्रह्म सत् है अतः उसके स्रोत की भी कल्पना करना कि वह सत् है कुछ अर्थ नहीं रखता, क्योंकि दोनों में कोई अन्तर नहीं है । और एक बात यह भी है कि रूपान्तरण से और रूपान्तरण होंगे तथा ब्रह्म को रूपान्तरण होने की आवश्यकता क्या है । यदि ऐसा हो भी तो हम (ब्रह्म की) मूल प्रकृति तक पहुँच ही नहीं पाएंगे और इस प्रकार एक अनावस्था की स्थिति पैदा हो जाएगी । जिसे हम मूल प्रकृति (या स्वरूप) कहते हैं वही ब्रह्म है ।[6]

---

१ अद्वैत वेदांत, पृष्ठ ७९

२ गीता, १३.१४

३ मुण्डक उपनिषद् १.१.६.

४ गीता, ७.२४

५ एस. एन. दास गुप्ता–'ए हिस्ट्री ऑफ इंडियन फिलासफी' भाग IV , पृष्ठ १४–१५

६ डा. पाल डयूसन, दी सिस्टम ऑफ वेदान्त, पृष्ठ १२५

इस सब का यह अर्थ नहीं कि सगुण ब्रह्म की अवधारणा अव्यवहारिक और परम तत्व तथा जीव के बीच में अनावश्यक व्यवधान है । दूसरी ओर यह अवधारणा कई व्यवहारिक कार्य करती है । इसे परम तत्व की अनुभूति और जीव के बीच की कड़ी कहा जा सकता है । संसार की विविधता को पहले एक निश्चित स्वरूप में अंतर्भुक्त किया जाता है ताकि बाद में स्वरूप और विभिन्नता से भी ऊँचे ऊठ कर परम तत्व का साक्षात्कार किया जा सके । सगुण ब्रह्म को ध्यान का आधार भी माना जाता है । जीव के वैविध्य से अपना ध्यान खींच कर इस विविधता में निहित एक सूत्रता पर जिसे कि 'सत्य' (निर्गुण ब्रह्म) भी कहा जा सकता है ध्यान केंन्द्रित करना होता है ।

अपनी वाणी 'सिद्ध गोसटि' में गुरु नानक यह विश्वास व्यक्त करते हैं कि ब्रह्म की वास्तविक स्थिति के बारे में केवल वह स्वयं ही जान सकता । वह स्वयं ही अव्यक्त तथा व्यक्त है तथा सभी सुखों का भोक्ता है ।[१] निर्गुण ब्रह्म होने से ही वह अज्ञात, अनन्त, अगम्य, अग्राह्य है एवं मृत्यु–जनम का विषय नहीं हैं । वह जाति रहित, अजन्मा, स्वयंभू, इच्छा एवं संश्य रहित है । वह वर्ण एवं स्वरूप से परे ब्रह्म 'शब्द' के माध्यम से व्यक्त होता है ।[२] गुरु नानक 'धुंद' के प्रतीक से भी उस निर्गुण अव्यक्त सत्ता को समझाने का प्रयत्न करते हैं । वे कहते है कि अनन्त युगों तक 'गहन धुंद' रूपी अनन्त असीमित ब्रह्म ध्यानामग्न था । बाद में यही 'धुंदाकार' 'ब्रह्म सांसारिक संरचना रूपी कुहरे में परिवर्तित हुआ[३] । निर्विकल्प समाधि में लीन शुद्ध चैतन्य रूपी इच्छा (हुकम) के रूप में प्रारम्भ से ही अपने में लीन अनन्त सत्य निर्गुण ब्रह्म का वर्णन भी गुरु नानक करते हैं ।[४] इसी अनन्त सत्य से ईथर, जल और विशाल सृष्टि की रचना हुई जिसमें उसी अनन्त सत्य की ज्योति परिव्याप्त है ।[५] वह अव्यक्त निर्गुण ब्रह्म सबके हृदय में बसता है[६] और स्वयं ही सगुण रूप में व्यक्त होता है ।[७] फिर भी सभी मोतियों के एक सूत्र की तरह वह सबमें व्याप्त रहता है । गुरु अरजन देव भी गुरु नानक के कथन की पुष्टि करते हुए कहते हैं:

---

१ तेरी गति मिति तूहे जाणहि किआ को आखि वखाणै ।
तू आपे गुपता आपे परगटु आपे सभि रंग माणै ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९४६

२ अलख अपार अगंम अगोचर न तिसु कालु न करमा ।
जाति अजाति अजोनी संभउ न तिसु भाउ न भरमा । ......
न तिसु रूप वरनु नहीं रेखिआ साचै सबदि नीसाणु ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ५९७

३ केते जुग वरते गुबारै । ताड़ी लाई अपर अपारै ।
धुंधूकार निरालमु बैठा ना तदि धंधु पसारा हे । गुरु ग्रंथ–१०२६

४ अरबद नरबद धुंधूकारा । धरणि न गगना हुकमु अपारा ।
न दिनु रैनि न चंदु न सूरजु सुंनि समाधि लगाइदा ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १०३५

५ साचे ते पवना भइआ पवनै ते जल होइ ।
जल ते त्रिभवणु साजिआ घटि घटि जोति समोइ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १९

६ "घटि घटि गुपता गुरमुख मुकता" गुरु ग्रंथ, पृष्ठ. ९३९

७ अविगतो निरमाइलु उपजे निरगुण ते सरगुण थीआ, पृष्ठ ३६०

आपे होवहि गुपतु आपे परगटीअै ।
कीमति किसे न पाई तेरी थटीअै ॥
गहिर गभीरु अथाहु अपारु अगणतु तू।
नानक वरतै इकु इको इकु तू ॥[१]

अर्थात् अव्यक्त ब्रह्म अपनी ही इच्छा से व्यक्त होता है; कोई भी उसकी कीमत नहीं आंक सकता । वह गहन, गम्भीर, अगम्य, अनन्त और सभी गणनाओं से परे केवल एक और केवल एक ही है । घनीभूत आध्यात्मिकता एवं हृदयस्पर्शी रहस्यानुभूति के अन्तर्गत निर्गुण ब्रह्म ही मुख्य रूप से गुरु नानक देव की आत्मा का विषय रहा है । परन्तु यहाँ यह स्पष्ट कर देना अनुपयुक्त न होगा कि गुरु नानक अक्रिय निगुर्णवादी नहीं हैं जिन्हें संसार के दुख दर्दों से कोई मतलब न हो । सांसारिक दुख दर्दों से द्रवीभूत होकर उनका निर्गुण ब्रह्म सगुण बन जाता है । नानक सर्वव्यापी सगुण ब्रह्म को पुकार उठते हैं जब वे भारतभूमि और निरीह जनता को आक्रमणकारियों द्वारा रौंदे जाते हुए देखते हैं ।[२] परन्तु फिर भी मुख्य रूप से नानक वाणी का विषय निर्गुण ब्रह्म ही है । निगुर्ण ब्रह्म का अर्थ नानक वाणी में गुण–शून्य ब्रह्म नहीं है वरन् वह ब्रह्म है जो सभी गुणों से परे है । फिर भी हम देखते हैं कि भक्ति भाव को अभिव्यक्ति देते हुए गुरु नानक ने परमात्मा के कई गुणों का गुणानुवाद किया है ।

गुरु नानक की ब्रह्म की अवधारणा को इस लिए भी सगुण अवधारणा कहा जा सकता है क्योंकि उन्होंने परमात्मा को कभी बौद्धिक विश्लेषण का विषय नहीं माना; बल्कि उनका परमात्मा तो भक्ति, समर्पण और महान् विश्वास के माध्यम से अनुभूत किया जाने वाला परम तत्व है जिसे हर सामान्य व्यक्ति भी अपने चारों ओर अनुभव कर अपने आपको नैतिक और आध्यात्मिक तौर पर विकसित कर सकता है; गुरु नानक सृष्टि रचना के प्रारम्भ की बात और शून्य में अवस्थित ब्रह्म की बात सोचकर आश्चर्यचकित ही नहीं हो जाते बल्कि वे परमात्मा के उस द्वार के बारे जहाँ खड़े होकर देवी देवता उसकी स्तुति करते हैं – सोचकर भी भाव विभोर हो उठते हैं ।[३] पौराणिक कथाओं में भी ईश्वर को भव्य परिधानों से युक्त बैकुण्ठ में सिंहासन पर बैठे बताया गया है । यह सर्वश्रेष्ठ बैकुंठ स्थानातीत एवं कालातीत है । क्योंकि यह स्थान और कालातीत है यह परमात्मा की शक्तियों का व्यक्तीकरण है और गुणों द्वारा संरचित है जो स्थान एवं समय से आबद्ध हमारे विश्व का आधार है ।[४] गुरु नानक ने 'निरंकार' (निराकार) को 'सचखंड' में रहता हुआ बताया है । जहाँ वह अनन्त आनन्द में बना हुआ निरन्तर कार्यशील है यह 'सचखण्ड' भी स्थानातीत एवं कालातीत है; अतः जितना यह कहना उपयुक्त है कि परमात्मा का निवास 'सचखण्ड' है उतना ही यह कहना भी उपयुक्त है कि परमात्मा स्वयं 'सचखण्ड' है । पौराणिक कथाएं 'भक्ति काल' में इतनी अधिक प्रचलित थीं कि परमात्मा का विशेष आकार, वेश और उसके अन्य सहयोगियों का होना आदि ने भक्तों के चिन्तन को गहन् रूप से प्रभावित किया है। भक्तों ने इस बात की चिन्ता नहीं की कि इन कथाओं को प्रतीकात्मक रूप में भी समझा समझाया जाना चाहिए।

---

१ गुरु ग्रंथ पृष्ठ ९३३

२ "एती मार पई करलाणे । तैं की दरदु न आइआ" गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ३६०

३ "आदि कउ बिसमादु बीचारु कथीअले सुंन निरंतरि वासु लीआ" – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९४०

४ एस. एन. दासुगप्ता, ए हिस्ट्री ऑफ इंडियन फिलासफी – भाग IV, पृष्ठ १६

उन्होंने ब्रह्म के मानवीकरण के इन वर्णनों को ही अक्षरक्षः सत्य मान लिया जिससे अवतारवाद और कर्मकांडवाद आदि के सिद्धान्तों को काफी बल मिला। अब प्रश्न यह उठ खड़ा हो सकता है कि हाथ पैर और विशिष्ट वेश वाला परमात्मा तो नष्ट भी हो सकता है क्योंकि ये सब पदार्थ तो कालातीत नहीं है; परन्तु इसका उत्तर यह हो सकता है कि परमात्मा के आकार, वेश आदि स्थानातीत और कालातीत द्रव्य से बने माने गए हैं अतः उनके नष्ट होने का प्रश्न ही नहीं उठता। अपनी भव्यता और रहस्यात्मता के कारण परमात्मा निर्विवाद रूप से भक्तों के आकर्षण का विषय रहा है और वे आनन्द विभोर होकर हमेशा उसी की ओर खिंचते रहे हैं। गुरु नानक उसे गुरु ग्रंथ में 'अगम, अगोचर, अलख, निर्गुण' कह कर उसके परम रहस्य, अनन्तता एवं शक्तिमत्ता को अभिव्यक्त करने का प्रयत्न करते हैं।

अवतारवाद

गुरु नानक यह मानते हैं कि परम सत्ता जो पहले ही सर्वशक्ति सम्पन्न है, उसे यदि रावण को मारने वाला या कंस का नाश करने वाला कहा जाएगा तो उसमें कौन सा बड़प्पन और जुड़ जाएगा।[१] वह एक महान् जादुई कलाकार है जिसके लिए उसकी अपनी कला कोई विशेष हैरानी वाली और महत्वपूर्ण नहीं हो सकती। परमात्मा एक अपरिवर्तनीय सत्ता है जिसके लिए उसके ये सांसारिक कार्यकलाप एक आनन्दपूर्ण लीला से बढ़कर कुछ नहीं हैं। इस लीला के फलस्वरूप उसके मूल भूत (अनादि) वेश में कोई संकुचन या विस्तार नहीं होता। वह स्वयं ही समुद्र, उसकी लहर और स्वयं ही वुलवुला है। वह स्वयं ही सूक्ष्म बीज है जो सृष्टि रचना के स्थूल वृक्ष के रूप में दिखाई पड़ता है और जिसकी टहनियां सर्वत्र चारों ओर फल फूल रही हैं।[२] उसका यही सगुण रूप ही गुरुजनों तथा संतों द्वारा माता, पिता, भाई, मित्र, पति, प्रियतम आदि नामों से पुकारा गया है। बल्कि वह तो एक बहुत बड़ा सुल्तान है जिसे गुरु नानक के कथनानुसार, केवल एक छोटा सा 'सिपाही' कह कर यह समझा जा रहा है कि उसकी (परमात्मा) विरुदावली गाई जा रही है। नानक कहते हैं, हे प्रभु ! मैं मूर्ख हूँ जिससे विधिवत् तेरी प्रशंसा नहीं हो पा रही है। जो सामर्थ्य तूने मुझे दी है उसी के आधार पर मैं गुणानुवाद कर रहा हूँ।[३] हे ईश्वर, तू गुरुओं का भी गुरु है।[४]

गुरु नानक देव ने परमात्मा से संबंधित प्रचलित नामों का खुल कर प्रयोग किया है। उन्हें परमात्मा को भगवंत्, गोसाई, जगन्ननाथ, गोपाल, गोविन्द, नारायण, राम, वासुदेव आदि कहने में कोई भी संकोच नहीं है। परन्तु गुरु नानक परमात्मा के अवतार में विश्वास नहीं करते। देवी देवतागण, गुरु नानक द्वारा दिए गए जीवन दर्शन में उपयुक्त नहीं वैठते–क्योंकि उनके द्वारा अपनाए जीवन दर्शन में परस्पर संबद्ध करने वाले आपसी प्रयासों की आवश्यकता है ताकि जीवन स्तर ऊँचा उठ सके, अज्ञान और बंधन, द्वैतभाव, अकर्मण्यता, घृणा और साम्प्रदायिक वैमनस्य से छुटकारा

---

१ "पउणु उपाइ धरी सभ धरती जल अगनी का बंधु कीआ।
अंधुलै दहसिरि मूंडु कटाइआ रावणु मारि किआ वड़ा भइआ" .....
जीअ उपाइ जुगति हथि कीनि काली नथि किआ वड़ा भइआ।
किसु तू पुरखु जोरू कउण कहीऐ सरब निरंतरि रवि रहिआ। गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ३५०

२ गुरु अरजन देव – तू पेडु साख तेरी फूली। तू सूखमु होआ असथूली, पृष्ठ १०२

३ गुरु नानक, "तू सुलतानु कहा हउ मीआ तेरी कवनि वडाई।
जो तू देहि सु कहा सुआमी मैं मूरख कहणु न जाई" – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ७९५

४ गुरु नानक, "गुरु गुरु एको वेस अनेक" – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १२

मिल सके । वे अपने दिव्य गीत जपु जी के प्रारम्भ में ही उसे 'एक ओंकार' कहते हैं जो कि आदि अनादि युगों से सत्य स्वरूप है और भविष्य में भी सत्य स्वरूप ही रहेगा । अन्य सभी देवी देवता 'गुरुमत' के अनुसार सामान्य मनुष्यों की कोटि के अंतर्गत ही माने गए हैं । शिव, ब्रह्मा, इन्द्र आदि को गुरु नानक देव परमात्मा के द्वार पर स्तुति करते हुए दर्शाते हैं । वे उन्हें अदृश्य, अनन्त प्रभु का अन्त न पा सकने वालों के रूप में मानते हैं ।[१] परमात्मा इतना परे है कि वेद भी उसका अन्त नहीं पा सके और ब्रह्मा भी उसके रहस्य को समझने में असमर्थ है ।[२] तथाकथित अवतार भी उसका अंत नहीं जानते । वे सभी माया द्वारा दिगभ्रमित हैं ।[३]

'नारद', 'सारद' आदि सभी को परमात्मा के सेवक माना गया है ।[४] 'जपु जी' में त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को माया प्रसूत माना गया है । त्रिमूर्ति के देवता उस (ब्रह्म) की आज्ञा में ही सृजन, पोषण, संहार आदि सब कार्य करते हैं । गुरु नानक कहते हैं कि सबसे बड़ा आश्चर्य तो इस बात का है कि वह (ब्रह्म) तो इन सबको देख रहा है परन्तु ये सब उसे देखने में असमर्थ हैं:

"एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु ।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीवाणु ॥
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु ।
ओह वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु ।
आदेसु तिसै आदेसु । आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु॥"[५]

केवल इतना ही नहीं वे देवी देवता भी मृत्यु से मुक्त नहीं हैं । ब्रह्मा कमल नाल में प्रविष्ट हुआ और उसी का अंत नहीं पा सका[६] (परमात्मा के अन्त की तो बात ही अलग है) । परमात्मा के सत्य नाम को जानने और संसार सागर को पार करने के लिए ही ब्रह्मा ने वेदों का सृजन किया; शिव ने मोह माया का त्याग किया और सिद्ध पुरुषों ने योग मार्ग का अनुसरण किया परन्तु फिर भी देवी देवतागण उस परब्रह्म का रहस्य नहीं जान सके ।[७]

मूर्तिपूजा के सम्बन्ध में गुरु नानक मानते हैं कि वह परम सत्ता अपने आप में ही सब कुछ है उसका न तो सृजन किया जा सकता है और न ही उसे स्थापित किया जा सकता है ।[८] वह तो निराकार अवर्ण एवं तीनों गुणों से भिन्न

---

१ (क) ब्रहमा बिसनु महेसु दुआरै । ऊभे सेवहि अलख अपारै ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १०२२
(ख) गावहि ईसरु बरमा देवी सोहनि सदा सवारे ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ६

२ गुरु अरजन देव – महिमा न जानहि बेद । ब्रह्में नहीं जानहि भेद ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ७९४

३ गुरु नानक देव – माइआ मोहे देवी सभि देवा । कालु न छोड़ै बिनु गुर की सेवा, पृष्ठ २२७

४ नारद सारद सेवक तेरे । त्रिभुवणि सेवक वडहु वडेरे । पृष्ठ १०२८

५ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ७

६ प्रथमै ब्रहमा कालै घरि आइआ । ब्रहम कमलु पइआलि न पाइआ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २२७

७ जै कारणि बेद ब्रहमै उचरे संकरि छोडी माइआ ।
जै कारणि सिध भए उदासी देवी मरमु न पाइआ । गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १३२७

८ थापिआ न जाइ कीता न होइ । आपे आपि निरंजनु सोइ – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २

एवं परे है ।[१] मूर्तियों के पांव पड़ने वालों को व्यंग्य करते हुए एक अनाम् पंडित से गुरु नानक कहते हैं कि हे पण्डित, तुम परमात्मा की मूर्ति, अन्य देवी देवताओं की मूर्तियों को अपने घर में रक्खे हुए हो । तुम प्रतिदिन इनको स्नान करवा कर इनकी पूजा किया करते हो और चन्दन, धूप, फूल आदि चढ़ाते हो । इस मूर्ति के पांव पकड़कर तुम इसे प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हो और भीख मांग कर तुम कपड़े और खाने का प्रबन्ध करते हो । यह कार्य वास्तव में दंडनीय है । केवल यह मूर्ति पूजा न तो भूखे को खाना दे सकती है और न भूख से मरने से बचा सकती है । यह अज्ञानी समाज का अज्ञान जनित कार्य है:

घरि नाराइणु सभा नालि । पूज करे रखै नावालि ।
कुंगू चंनणु फुल चड़ाए । पैरी पै पै बहुतु मनाइ ॥
माणूआ मंगि मंगि पैने खाइ । अंधी कंमी अंध सजाइ ।
भुखिआ देइ न मरदिआ रखै । अंधा झगड़ा अंधी सथै ।[२]

उपर्युक्त से यह स्पष्ट है कि गुरु नानक देव न तो मूर्ति पूजा तथा न ही अवतारवाद में विश्वास रखते थे ।

गुरु नानक देव जी की यह तीव्र इच्छा थी कि लोग साम्प्रदायिक दृष्टिकोण को छोड़ कर वास्तविक धर्म को पहचान जाएं । यही नहीं है कि ब्रह्म के लिए उन्होंने केवल भारतीय मूल के शब्दों का ही प्रयोग किया हो बल्कि अरबी, फारसी के करीम अल्लाह, कवीर, खुदा आदि का भी भरपूर प्रयोग हम उनकी वाणियों में पाते हैं । एक बात अन्य जिसका कि ध्यान रखा जाना चाहिए वह यह है कि परमात्मा को चन्द्र तथा आत्मा को चकोर कह देने मात्र से अथवा परमात्मा को मिठाई तथा आत्मा को गूंगा कह देने मात्र से हम चन्द्रमा को तथा मिठाई को परमात्मा तथा चकोर एवं गूंगे को आत्मा का अवतार नहीं मान सकते । गुरु वाणी में श्री राम चन्द्र अथवा कृष्ण का नाम केवल परमात्मा की सर्वशक्तिमान एवं महानता को सामान्य लोगों को समझाने के लिए ही प्रयुक्त हुआ है । परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं लगाया जा सकता कि ये सब परमात्मा के अवतार हैं । ये वे महान् पुरुष हैं जिन्होंने युगों से भारतीयों के मस्तिष्क एवं हृदय पर राज्य किया है और गुरु नानक भी उन्हीं भारतीयों मे से एक हैं जो इन्हें सम्मानपूर्वक स्मरण करते हैं । वाणी 'सिध गोसटि' में 'राम' को 'गुरमुख, पद से अलंकृत किया गया है क्योंकि उन्होंने लोभ एवं व्यभिचार रूपी रावण को मारा था । वैसे गुरु वाणी में इन सब महापुरुषों को मात्र प्रभावशाली राजा भर माना गया है । गुरु अमर दास स्पष्ट कहते हैं:

जुगह जुगह के राजे कीए गावहि करि अवतारी ।
तिन भी अंतु न पाइआ ताका किआ करि आखि वीचारी ॥[३]

---

१ रूपु न रेख न रंगु किछु त्रिहुगुण ते प्रभ भिंन ।
तिसहि बुझाइ नानका जिसु होवै सुप्रसंन ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २७३

२ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १२४०

३ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४२३

इस सबके अतिरिक्त एक तथ्य और भी है कि नानक वाणी में गुरु नानक देव ने परमात्मा के स्थूल इंद्रिय ग्राह्य रूप का वर्णन कहीं भी नहीं किया है। दूसरी बात यह भी है कि कहीं भी गुरु नानक देव जी की परमात्मा का बौद्धिक दृष्टि से विश्लेषण करने की इच्छा का आभास नहीं मिलता क्योंकि गुरु जी के हृदय में मूलरूप से भक्ति भावना की प्रबलता थी और उनका सक्रिय जीवन लोक कल्याण के लिए समर्पित था। परमात्मा से अनन्य प्रेम के कारण उन्होंने उसे कई संबंधों के माध्यम से स्मरण अवश्य किया है और निराकार को साकार बना लिया है परन्तु जहाँ कहीं उन्हें निरपेक्ष रूप से ब्रह्म वर्णन का अवसर मिला उसे उन्होंने निर्गुण, निराकार एवं निरंजन अलिप्त आदि ही कहा है।

निमित्त एवं उपादान कारण

न्याय दर्शन में परमात्मा विश्व का कर्त्ता, धारण करने वाला तथा संहार करने वाला माना गया है। वह संसार को अनादि काल से चले आ रहे अणुओं की सहायता से वनाता है और संसार में एक सुनिश्चित क्रम उसी परमात्मा के कारण ही है। अणुओं को अनादि मानने से न्याय दर्शन के अनुसार परमात्मा संसार का निमित्त कारण ही है उपादान कारण नहीं। परमात्मा की इस स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए पं. वलदेव उपाध्याय का मत है कि परमात्मा को मात्र निमित्त कारण मानते हुए नैयायिकों ने परमात्मा में भी मनुष्य में पाई जाने वाली दुर्बलताओं को निहित मान लिया है और इस प्रकार बड़े ही स्थूल ढंग से परमात्मा का वर्णन किया गया है। जैसे एक बढ़ई लकड़ी काट जोड़ कर फर्नीचर बना लेता है, परमात्मा को भी इसी भांति अणुओं की सहायता से कार्य करते हुए दिखाया गया है। यह परमात्मा जो कि सृष्टि रचना के लिए अणु आदि उपादान कारणों पर निर्भर है कैसे सर्वशक्तिमान और सर्वथा मुक्त माना जा सकता है ?[१] गीता के अनुसार ईश्वर स्वयं सर्व भूतों का बीज है। संसार वृक्ष की तरह इसी बीज से विकसित होता है[२] तथा पुनः लय होकर बीज रूपी परमात्मा में समाहित हो जाता है।[३] परमात्मा विश्वव्यापी और विश्व से परे वह सत्ता है जिसके बारे में कुछ नहीं समझाया जा सकता (हालांकि मनुष्य की वाणी भी उसी परम सत्ता का ही प्रकाश है)।

गुरु नानक यह मानते हैं कि सृष्टि रचना के लिए और उसको धारण कर उसका पालन-पोषण करने के लिए परमात्मा को किसी अन्य कारण की सहायता की आवश्यकता नहीं है। वह सभी कारणों को अपने हाथ में रखने के लिए सर्वथा सक्षम् है। वह सभी कारणों का नियंता स्वयं है और सभी कारण उसके अपने वश में हैं। परमात्मा सारी दृष्टि का निमित्त और उपादान कारण है[४] और इसी लिए वह सर्व व्यापक, सर्वज्ञ तथा सर्वश्रेष्ठ है। इसी तथ्य को विशद रूप से पिछले पृष्ठों में 'मूलमंत्र' के आधार पर कर्त्ता पुरुष की व्याख्या करते समय समझने का प्रयत्न किया गया है।

---

१ बलदेव उपाध्याय -भारतीय दर्शन - १९७१, पृष्ठ २११

२ ७.१०

३ गीता - १.१७

४ गुरु नानक - करण कारणु समरथु है कहु नानक बीचारि।
कारणु करते वसि है जिनि कल रखी धारि ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १३५३

जीव

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में जीवात्मा से सम्बन्धित चर्चा कई स्थानों पर पाई जाती है। नानक वाणी 'सिध गोसटि' में सिद्धों ने बड़े ही स्वाभाविक ढंग से यह प्रश्न गुरु नानक देव से पूछा है– यह जीव कहाँ से आता है और (शरीर नष्ट होने के बाद) कहाँ जाता है ? शरीर त्याग के बाद यह कहाँ रहता है ? क्या यह उसी में सम्माहित हो जाता है जिसका यह एक भाग है अथवा धरती पर आने के पहले यह किसी अन्य स्थान पर रहता है। जीव 'गुरमुख' बन कर कैसे उस अव्यक्त सत्ता को प्राप्त होता है और कैसे उसके (प्रभु के) प्यार में डूबा रह सकता है। किन साधनों को अपनाने पर यह जीव संसार को धारण करने वाले उस परमात्मा से तादात्म्य प्राप्त कर सकता है ?

> "कहा ते आवै कहा इहु जावै कहा इहु रहै समाई ।
> एसु सबद कउ जो अरथावै तिसु गुर तिलु न तमाई ।
> किउ ततै अविगतै पावै गुरमुखि लगै पिआरो ।
> आपे सुरता आपे करता कहु नानक बीचारो ।"[१]

आध्यात्मिक क्षेत्र में ये कोई नए प्रश्न नहीं है। सभी आध्यात्मवादी दार्शनिकों ने इन प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयत्न किया है। इन समस्याओं पर 'गुरमत' का दृष्टिकोण समझने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि भारतीय चिंतन में जीवात्मा को कैसे समझा गया है। जीव किसे कहते हैं ?

मानव शरीर जिन भौतिक पदार्थों का यौगिक है उन पदार्थों की सत्ता तो है परन्तु उनमें स्वचेतना नहीं है। इसलिए अकेले मानव शरीर को भी जीव नहीं कहा जा सकता, क्योंकि जीव तो सारे अनुभवों को अनुभूत करने वाला है तथा सत्ता और चेतना दोनों ही इसके प्रमुख लक्षण हैं। बृहदारण्यक उपनिषद के अनुसार पुरुष जन्म लेते समय इन्द्रियों और शरीर से घिरा रहता है और शरीर नाश के समय यह पुरुष (जीवात्मा) के शरीर के कारण उत्पन्न हुए पापों को छोड़ कर चल देता है।[२]

तन्त्र ग्रन्थों में मूलाधार के अन्तर्गत चित्तकुण्ड की स्थिति को समझाते हुए चार प्रकार की आत्माओं की ओर संकेत किया गया है। ये चार हैं–परमात्मा, अंतरात्मा, ज्ञानात्मा और आत्मा। इन चारों का मेल चित्तकुण्ड कहलाता है और इनका ज्ञान आवागमन के चक्र को समाप्त कर देता है। आत्मा प्राणरूपी है अर्थात् आत्मा वह है जो प्राणरूप में सारे जीवों में विराजमान है। यह हंस रूपी जीवात्मा है जो श्वासों के माध्यम से सदैव अनुभव होती रहती है। यह घड़े के उस 'ईथर' के समान है जिसे कुंभकार चारों ओर व्याप्त आकाश (शून्य) से अलग कर घड़े को घड़े का स्वरूप प्रदान करता है और जब यह घट टूट जाता है तो पुनः अपने मूल स्वरूप को प्राप्त हो जाता है।[३]

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९७०

२ ४.३.७

३ ज्ञानार्णव तन्त्र २१ – २२

ज्ञानात्मा वह आत्मा है जो साक्षी भाव से सब कुछ देखता है और इसी के कारण अनेकता में एकता दृष्टमान होती है । यह बुद्धि के साथ एकात्मक होते हुए भी बुद्धि से उसी प्रकार अलग है जैसे चंद्रमा की किरणें पानी में चंद्रमा की ही तरह फैली हुई दृष्टिगोचर होती हुई भी असली चन्द्रमा से भिन्न प्रकार की होती हैं । इस प्रकार ज्ञानात्मा, बुद्धि एवं बुद्धि प्रसूत मानसिक तत्वों का आधार है । अन्तरात्मा के शव्द 'अन्तर' से तात्पर्य उस सूक्ष्म आत्मा से है जिसका प्रसार सब शरीरों में विद्यमान है अर्थात् यह परमात्मा की वह चिंगारी है जो सव में व्याप्त है । यह वह हंस है जिसे कोई सिद्ध पुरुष ही जान सकता है । इसकी चोंच प्रणव या ओंकार है । निगम और आगम इसके दो पंख हैं, शिव और शक्ति इसके दो पैर हैं । तीन बिंदु (सूर्य चंद्र एवं अग्नि) इसकी आंखें हैं । यही परम हंस है अर्थात् यही हंस अपने चरम पक्ष में व्यक्त हंस या जीव की चेतनता का आधार है । जव यह परम हंस व्याप्त होता है अर्थात् अभिव्यक्त होता है तो द्रव्य के सारे रूप जैसे कि आकाश, पवन अपने क्रम में प्रकट हो जाते हैं । इन सवका मूल चित्त है । यह हंस अविद्या–सरोवर के मोह–पंक से उत्पन्न हुए संसार रूपी कमल के साथ क्रीड़ा करता रहता है ।

जव यह हंस असांसारिक या प्रपंचहीन अवस्था में समाहार रूपी हो जाता है तव आत्मा (परमात्मा) का साक्षात्कार होता है । उस समय इसका पक्षीपन लोप हो जाता है और 'सोहं आत्मा' दृष्टमान होती है । इस प्रकार हम देखते हैं कि जीव परमात्मा का ही एक रूप है और जीव के इस स्वरूप की पुष्टि विभिन्न धर्म ग्रंथों के आधार पर की जा सकती है ।

बेशक जीव परमात्मा का एक भाग है परन्तु यह स्पष्ट है कि जीव में परमात्मा जैसी पूर्णता नहीं है और न ही जीव परमात्मा की भांति सर्वज्ञ है । गुरु नानक देव कहते हैं – हे परमात्मा, तुम पूर्ण हो और मैं अपूर्ण एवं तुच्छ हूँ । तुम गहन गंभीर हो, मैं हल्का एवं ओछा हूँ ।[१] बेशक जीव न मरता, न डूबता है न तैरता है, क्योंकि यह सर्वशक्तिमान का अंग है जो सारी सृष्टि का कर्त्ता है[२] परन्तु फिर भी गुरुमत के अनुसार जीव अपने किए हुए कर्मों के कारण ही उस परमात्मा से बिछुड़ जाता है ।[३] शुद्ध आत्मा उसी परमात्मा के 'हुकम' के अन्तर्गत जीवात्मा वन जाती है और यह जीवात्मा उसी प्रभु की रज़ा (हुकम) में अच्छाई एवं बुराई प्राप्त करती है ।[४]

जीव के दोष परमात्मा के 'हुक्म' (Will) के अन्तर्गत ही है ताकि जीव विभिन्न परिस्थितियों का अनुभव कर सके । परमात्मा ने अपनी चैतन्य शक्ति जीव में प्रवाहित कर दी है और जीव अपने नैतिक प्रयत्नों को जारी रख सके इसलिए उसको आत्म स्वातन्त्रय भी प्रदान किया गया है । कहा जा सकता है कि आनन्द के चैतन्य को स्वाभाविक रूप से ग्रहण कर सकने के कारण ही परमात्मा के इस अंग (जीव) को जीव कहा जाता है । मध्याचार्य भी जीव को प्रभु का एक अंग मानते हैं परन्तु उनके अनुसार जीव की अपनी विशिष्टता भी है और जीव तथा ब्रह्म की एकता वहुत दूरगामी है । ब्रह्मसूत्रों पर टिप्पणी करते हुए मध्वाचार्य, शंकराचार्य के जीव–ब्रह्म की एकता के सिद्धान्त का खंडन करते हैं । निम्बार्क मतानुसार जीव परमात्मा से भिन्न होते हुए भी उसी के समान है । ये जीव को परमात्मा का अंश तो मानते हैं परन्तु अधिक वल जीव के अलगाव एवं समानता पर देते हैं । रामानुजाचार्य के अनुसार परमात्मा जीवों

---

१ तू पूरा हम ऊरे होछे तू गउरा हम हउरे ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ५९७

२ ना जीउ मरै न डूबै तरै । जिनि किछु कीआ सो किछु करै ॥ पृष्ठ १५१

३ किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥ पृष्ठ १३३

४ हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ॥ पृष्ठ १

का आधार है और परमात्मा ही जीव के ज्ञान की वृद्धि या संकुचन करके उसके कर्मों को अपनी इच्छानुसार नियंत्रित करता है ।[१] इसी दिव्य इच्छा को गुरु नानक 'हुकम' कहते हैं ।

गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु नानक स्पष्ट करते हैं कि यह जीव उस परमात्मा के 'हुकम' के अनुसार अपने अहम् (हउमै) के वशीभूत होकर आता है और अंत में उसी के 'हुकम' के अनुसरण में प्रभु में समाहित हो जाता है । परन्तु यह समायोजन तब ही संभव है यदि जीव सच्चे गुरु के सम्मुख समर्पित हो जाए, सत्य को जीवन में अपनाए और 'शव्द' के माध्यम से उस परमात्मा को जानने की शिक्षा प्राप्त करे ।[२]

भास्कराचार्य के अनुसार जीव मूल रूप में परमात्मा स्वरूप है और कुछ सीमाओं के कारण यह परमात्मा से अलग प्रतीत होता है । गुरु नानक देव एवं अन्य गुरुजन ब्रह्म को माया से स्वतन्त्र मानते हैं परन्तु साथ ही साथ यह भी मानते हैं कि जीव मायाजाल में उसी प्रकार अचानक फंस जाता है जैसे मछली अचानक जाल में फंस जाती है ।[३] जीव अर्थात् व्यक्तिगत आत्मा को मुक्ति, सम्यक ज्ञान के माध्यम से ही प्राप्त हो सकती है । जव तक जीव प्रकृति के तीनों गुणों–सत, रज, तम के प्रभाव में कार्य करता है और प्रभु–गुणानुवाद से उद्भूत उच्च विवेक अर्थात् सत्यज्ञान के प्रकाश को अनुभव नहीं करता वह अविद्या, अज्ञान के तम को हटा सकने में समर्थ नहीं हो पाताः

किरतु पइआ अध ऊरधी बिनु गिआन बीचारा।
बिनु उपमा जगदीस की बिनसै न अंधिआरा ॥[४]

धर्म एवं चिंतन के क्षेत्र में भाष्यकारों ने सामान्यतः जीव को अज्ञानता, दुख, भय आदि दोषों से ग्रसित माना है और यह भी माना है कि इन्हीं दोषों के कारण जीव के आवागमन का चक्र समाप्त नहीं होता । इनकी संख्या भी अगणित मानी गई है । मोटे तौर पर इनके तीन वर्ग किए गए हैं । पहले वर्ग के वे जीव हैं जिन्हें मुक्ति–योग्य कहा गया है; जैसे देवता, व्रह्मा, वायु आदि अथवा नारद, राजा अंबरीष जैसे सन्त आदि । ये विकसित आत्माएं परमात्मा को ज्ञान स्वरूप एवं आनन्द स्वरूप में देखती हैं । दूसरे वर्ग के वे जीव हैं जो आवागमन के चक्र में फंसे नरक–स्वर्गादि के दुख सुख भोगते रहते हैं । तीसरी श्रेणी में भूत प्रेतादि को माना गया है । इसमें से हर जीव दूसरे से भिन्न है एवं अपनी–अपनी इच्छाओं, योग्यताओं या गुणों के कारण मुक्ति के सन्दर्भ में भी ये सब एक दूसरे से अलग स्तर पर बने रहते हैं ।

जैसा कि शास्त्रों में जीवों के वर्गीकरण के बारे में भिन्न–भिन्न मत मतान्तर है गुरु नानक देव इस प्रकार के वाद–विवाद में कहीं उलझे हुए दृष्टिगोचर नहीं होते । वे अपनी वाणी 'जपुजी' में जीवों की गिनती असंख्य कह कर करते हैं ''असंख मूरख अंध घोर'' असंख चोर हराम खोर ॥ चेतना की चिंगारी प्रत्येक जीव में विराजमान है और इस

---

१ दास गुप्त, एक हिस्ट्री ऑफ फिलासफी जिल्द IV पृष्ठ १४१, ३६७

२ हुकमे आवै हुकमे जावै हुकमे रहै समाई ॥
पूरे गुर ते साचु कमावै गति मिति सबदे पाई । गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९४०

३ जिउ मछी तिउ माणसा पवै अचिंता जालु ॥ पृष्ठ ५५

४ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ २२८

चैतन्य का स्तर भिन्न–भिन्न जीवों में भिन्न–भिन्न रूप से प्रकाशित होता रहता है । प्रत्येक जीव अपने अहम् की डिग्री के अनुरूप ही अपने सुखों या दुखों का सृजन करता रहता है और उनको भोगता रहता है ।

अभी तक जाने जा सकते वाले जीवों में से मानव विकास के सबसे ऊँचे धरातल पर अवस्थित जीव है । मानव जाति को गुरु नानक देव ने गुरु ग्रंथ में मोटे तौर पर दो भागों में वर्गीकृत किया है । इन दो प्रकार के जीवों को गुरु नानक 'भक्त' और 'संसारी' संज्ञा देते हैं और यह भी मानते हैं कि इन भक्तों और संसार में लीन मनुष्यों में परस्पर कभी सद्भाव नहीं हो सकता ।[१] गुरु नानक देव द्वारा निर्दिष्ट भक्त कोटि के जीवों को उस श्रेणी में रक्खा जा सकता जिसमें शास्त्रकारों ने मुक्ति योग्य जीवों को रक्खा है । शेष सांसारिक जीव आवागमन एवं परिणाम स्वरूप दुख सुख के पात्र हैं । कुछ जीव ऐसे हैं जो स्वयं मुक्त हैं और दूसरों को भी मुक्त होने में सहायक है: परन्तु इनके साथ ही साथ कुछ ऐसे भी हैं जो अपने अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाते और अपने संस्कारों के अधीन दुख सुख के भागीदार बनते रहते हैं – 'इकि आवहि इकि जावहि घरि वासु न पावहि ।'[२] जीव की इस अधोगति का कारण जीव का सुखों के लिए पागल बनना, अमृत को छोड़ कर सांसारिकता के विष को पीना है – "अमृत छोड़ि महाविखु पीवै ।"[३] जीव कभी–कभी इतना भौतिकवादी हो जाता है कि मृत्यु को भी भूल जाता है । गुरु अमरदास गुरु ग्रंथ साहिव में एक उदाहरण देते हैं कि हिरण्यकश्यपु अपने सुकृत के कारण प्रतापी राजा बना परन्तु दैत्यराज परमात्मा को भूलकर अपनी गरिमा के प्रचार प्रसार में ही संलग्न हो गया और परिणामस्वरूप अपनी जान से हाथ धो बैठा ।[४]

गुरु ग्रंथ में इन्हीं भक्तों और सांसारिकता में लिप्त जीवों को क्रमशः 'गुरमुख' और 'मनमुख' संज्ञा से भी अभिहित किया गया है ।[५]

---

१ भगतां तै सैसारीआ जोड़ु कदे न आइआ – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १४५

२ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १०२९

३ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १०१३

४ किरत संजोगी दैत राजु चलाइआ .... , पृष्ठ ११५४

५ गुरमुख मनमुख के लिए गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९३८–९४६ पर वाणी 'सिध गोसटि' का अवलोकन करें।

सृष्टि

सृष्टि रचना का अद्भुत खेल, अनेकों वैज्ञानिक पद्धतियों के विकसित हो जाने के बावजूद अभी तक एक पहेली बना हुआ है । भारतीय चिन्तन के इतिहास में विभिन्न दार्शनिकों एवं चिंतकों ने इस सृष्टि विधान के क्रम को अपने अपने ढंग से समझने का प्रयत्न किया है । भारतीय दर्शनों में सृष्टि क्रम के बारे में सुव्यस्थित रूप से विचार प्रस्तुत करने वाले दर्शनों में कपिल के सांख्य शास्त्र का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । महाभारत के शांति पर्व (३०१, १०८, १०९) में भीष्म कहते हैं कि सांख्यों ने सृष्टि–रचना इत्यादि के बारे में एक बार जो ज्ञान प्रचलित कर दिया है वही पुराण, इतिहास अर्थशास्त्र आदि सब में पाया जाता है । सृष्टि रचना से संबंधित सांख्य शास्त्र का सबसे बड़ा सिद्धान्त सत्कार्यवाद है जिसके अनुसार कार्य में जो गुण दिखाई पड़ते हैं वे गुण जिससे वह वस्तु उत्पन्न हुई है उसमें अर्थात् कारण में सूक्ष्म रूप से तो अवश्य होने ही चाहिए ।[१] वैशेषिक एवं बौद्ध दर्शन की यह मान्यता है कि पदार्थ नष्ट होकर दूसरे रूप में परिवर्तित होता है अर्थात बीज का नाश होकर उससे अंकुर और अंकुर का नाश होकर बाद में उससे पेड़ बनता है । परन्तु सांख्य शास्त्रियों और वेदान्तियों के अनुसार वृक्ष के बीज में जो 'द्रव्य' है उसका नाश नहीं होता, अपितु वही द्रव्य जमीन से और वायु से दूसरे द्रव्यों को खींचकर बीज को अंकुर का नया स्वरूप या अवस्था प्रदान करता है[२] अर्थात् अभावात्मक शून्य से कोई वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती और किसी कार्य के वर्तमान द्रव्यांश और गुण मूल कारण में किसी न किसी रूप में रहते ही हैं ।

सांख्य मत सृष्टि रचना के दो मूल कारण मानता है: ये दो हैं प्रकृति और पुरुष । सांख्य शास्त्र के अनुसार सृष्टि के सब पदार्थों के तीन वर्ग होते हैं । पहला अव्यक्त (प्रकृति मूल) दूसरा व्यक्त (प्रकृति के विकार) और तीसरा पुरुष अर्थात् 'ज्ञ' । परन्तु इनमें से प्रलय काल के समय व्यक्त पदार्थों का स्वरूप नष्ट हो जाता है; इसलिए अब मूल में केवल प्रकृति और पुरुष दो ही तत्व शेष रह जाते हैं । ये दोनों मूल तत्व सांख्यवादियों के मतानुसार अनादि और स्वयंभू हैं; इसलिए सांख्यों को द्वैतवादी (दो मूल तत्व मानने वाले) कहते हैं । वे लोग प्रकृति और पुरुष के परे ईश्वर, काल स्वभाव या अन्य किसी भी मूल तत्व को नहीं मानते । इसका कारण यह है कि सगुण ईश्वर, काल और स्वभाव आदि सब व्यक्त होने के कारण प्रकृति से उत्पन्न होने वाले व्यक्त पदार्थों में ही शामिल है; और यदि ईश्वर को निर्गुण मानें, तो सत्कार्य–वादानुसार निर्गुण मूल तत्व से त्रिगुणात्मक प्रकृति कभी उत्पन्न नहीं हो सकती । इसलिए उन्होंने यह निश्चित सिद्धान्त दिया है कि प्रकृति और पुरुष को छोड़कर इस सृष्टि का और कोई तीसरा मूल कारण नहीं है । इस प्रकार जब उन लोगों ने दो ही मूल तत्व निश्चित कर लिए तब उन्होंने अपने मत के अनुसार इस बात को भी सिद्ध कर दिया है कि इन दोनों मूल तत्वों से सृष्टि कैसे उत्पन्न हुई । वे कहते हैं कि यद्यपि निर्गुण पुरुष कुछ भी कर नहीं सकता, तथापि जब प्रकृति के साथ उसका संयोग होता है तब, जिस प्रकार गाय अपने बछड़े के लिए दूध देती है या लोह–

---

१ सांख्य कारिका १

२ वेदान्त सूत्र, शंकर भाष्य २.१.१८.

चुम्बक दोनों पास होने से लोहे में आकर्षण शक्ति आ जाती है, उसी प्रकार मूल अव्यक्त प्रकृति अपने गुणों (सूक्ष्म और स्थूल) का व्यक्त फैलाव पुरुष के सामने फैलाने लगती है (सांख्य कारिका ५७)। यद्यपि पुरुष सचेतन और ज्ञाता है, तथापि 'केवल' अर्थात् निर्गुण होने के कारण स्वयं कर्म करने का कोई साधन उसके पास नहीं है; और प्रकृति यद्यपि काम करने वाली है, तथापि जड़ या अचेतन होने के कारण वह नहीं जानती कि क्या करना चाहिए। इस प्रकार लंगड़े और अंधे की वह जोड़ी है; जैसे अंधे के कंधे पर लंगड़ा बैठे और वे दोनों एक दूसरे की सहायता से मार्ग चलने लगें वैसे ही अचेतन प्रकृति और सचेतन पुरुष का संयोग हो जाने पर सृष्टि के सब कार्य आरम्भ हो जाते हैं।[१]

गुरु नानक हउमै (अहंकार) को अन्तर एवं बाह्य सृष्टि रचना क्रम में प्रमुख स्थान देते हैं। 'सिध गोसटि' में वे स्पष्ट कहते हैं कि हउमै अर्थात् अहंकार से सृष्टि की उत्पत्ति होती है और नाम विस्मरण से नाना भांति की दुःख प्राप्ति होती है।[२] वेदान्त, सांख्य तथा गीता में अहंकार की उत्पत्ति प्रकृति द्वारा मानी गई है पर सिक्ख गुरुओं ने 'हउमै' द्वारा प्रकृति की उत्पत्ति मानी है और यह उनकी मौलिक उद्‌भावना है।[३] योग वाशिष्ठ में अहंकार को ही स्थूल तथा सूक्ष्म सृष्टि का कारण माना गया है। डा. बी. एल. आत्रेय ने अहंकार से सृष्टि उत्पत्ति को योगवाशिष्ठ के आधार पर निम्नलिखित प्रकार से समझाया है।

''अपने आप में प्रतिष्ठित होने वाली अनन्त शक्तिमयी सत्ता (बिना किसी अवलम्बन के) अपने को स्पन्दित करती है। (योग वाशिष्ठ, प्रकरण ६, पूर्वार्द्ध ११–७३ तथा प्रकरण ६ पूर्वार्द्ध ११४–१५)। फिर वह बहिर्मुख क्रियाशीलता से केन्द्रीभूत होने लगती है और सत्ता पूर्वक (अहंभाव से आरोपित) अपने को पूर्ण ब्रह्म से पृथक समझने लगती है (योग वा. प्रकरण ३, १२, ५)। परिणामतः यह संसार के अनेक भविष्यत् नामों और रूपों में परिच्छिन्न होने लगती है। तत्पश्चात यह निश्चित रूप धारण कर लेती है और अनेक नामों से विभूषित होने लगती है। (यो. वा. प्रकरण ३, १२, ६)। फिर यह बहिर्मुख क्रियाशीलता की घनीभूतता 'परमपद' से अपना पृथक अस्तित्व समझकर जीव संज्ञा को प्राप्त हो जाती है। (योग वाशिष्ठ प्रकरण ३, १२, ७)। यही भावना मात्र सार सत्ता अपनी संसारणोन्मुखी प्रवृत्ति के कारण अनेक वस्तुओं में परिवर्तित हो जाती है (योग वाशिष्ठ, प्रकरण ३, १२८) तथा विशुद्ध चैतन्य सत्ता में इसी अहंभाव के कारण प्रथक–पृथक नाम और रूप की सृष्टि होती है (योग वाशिष्ठ, प्रकरण ३, १२, ९९)।[४]

डॉ. शेर सिंह के कथानानुसार इसी अहंकर में ही तीनों गुणों के मिश्रण से विविध रूप में सृष्टि की रचना होती है और सृष्टि की उत्पत्ति और लय का सिलसिला निरन्तर जारी रहता है। परन्तु चरम सत्य (अफुर ब्रह्म) ज्यों का त्यों बना रहता है। उसमें किसी भी प्रकार का विकार उत्पन्न नहीं होता।[५] गुरु ग्रंथ में सृष्टि क्रम को किसी एक स्थान विशेष पर नहीं समझाया गया है, प्रत्युत सिक्ख गुरुओं का चिंतन इस महान् ग्रंथ में विभिन्न विषयों पर इधर उधर बिखरा हुआ पाया जाता है। सिक्ख धर्म ग्रंथों और गुरुओं की वाणियों में सृष्टि क्रम से संबंधित निष्कर्षों को मुख्य रूप से तीन स्तरों पर समझा जा सकता है। ये तीन स्तर हैं धार्मिक, दार्शनिक एवं बौद्धिक स्तर।

---

१ बाल गंगाधर तिलक, गीता रहस्य अथवा कर्म योग शस्त्र, पृष्ठ १६२–६४
२ गुरु नानक, गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९४६
३ जयराम मिश्र, श्री गुरु ग्रंथ दर्शन, पृष्ठ ११०
४ बी. एल. आत्रेय – दी योग वाशिष्ठ, पृष्ठ १८८
५ फिलासफी ऑफ सिक्खिजम, पृष्ठ १८७

धार्मिक स्तर

(१) धार्मिक स्तर पर की गई बातें अक्सर भावनापरक होती हैं जिनमें एक भक्त का हृदय परमात्मा एवं उसकी रचना की विशालता जटिलता एवं सम्पूर्णता को अनुभव कर भाव विभोर हो उठता है। गुरु नानक उस अद्वितीय विराट पुरुष परमात्मा की विशालता को अनुभव कर आश्चर्य में भरकर कहते हैं कि हे प्रमात्मा आकाश रूपी थाल में सूर्य और चन्द्रमा दीपक के समान हैं और मलय चन्दन की सुगन्ध ही तुम्हारी आरती की धूपबत्ती है। वायु चंवर कर रहा है और वनों के सारे पुष्प तुम्हारी आरती के निमित्त पुष्प बने हुए हैं। तुम्हारी आरती (सीमित आरती) कैसे हो सकती है ? हे भव खंडन तुम्हारी आरती हो ही कैसे सकती है ?[१] इसी भांति सृष्टि रचना के क्रम आदि के बारे में भी सोचकर वे आश्चर्यचकित हो कह उठते हैं:

आदि कउ बिसमादु बीचारु कथीअले सुंन निरंतरि वासु लीआ ।
अकलपत मुद्रा गुर गिआनु बीचारीअले घटि घटि साचा सरब जीआ ।[२]

गुरु अरजन देव भी 'सुखमनी' में कहते हैं कि जिस कर्त्ता ने सृष्टि रचना की है वही इसके क्रम आदि के बारे में जान सकता है अन्य कोई नहीं जान सकता। एक अन्य बात भी है कि कहीं कृति कर्ता के कौशल को भला समझ सकती है ।[३] फिर यह भी तो है कि यह सृष्टि रचना कई बार हुई है और कई बार फिर उसी परमात्मा में विलीन हुई है ।[४] यह सृष्टि तो परमात्मा का स्वान्तः सुखाय किया हुआ एक खेल है। जब वह चाहता है इस खेल का विस्तार करना शुरू कर देता है, जब चाहता है इस खेल को समेट कर इसे अपने में समाहित कर लेता है।

"आपन खेलु आपि करि देखै ।
खेल संकोचै तउ नानक एकै ।"[५]

यदि उस प्रभु की इच्छा होती है तो वह सृष्टि उत्पन्न करता है और यदि उसकी इच्छा होती है तो वह सृष्टि को अपने में विलीन कर लेता है।

---

१ गगन मै थालु रवि चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती ।
धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती ।
कैसी आरती होइ भव खंडना तेरी आरती । अनहता सबद वाजंत भेरी ॥ गुरु ग्रंथ पृष्ठ ६६३

२ श्री गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९४०

३ जिस की स्रिसटि सु करणैहार । अवर न बूझि करत बीचारु ।
करते की मिति न जानै कीआ । नानक जो तिसु भावै सो वरतीआ ॥ श्री गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २८५

४ कई बार पसरिओ पासार । सदा सदा इकु एकंकार – श्री गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २७६

५ श्री गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २९२

"जा तिसु भावै ता स्रिसटि उपाए ।
आपनै भाणै लए समाए ।"[१]

गुरु गोबिंद सिंह इसी सृष्टि विस्तार और विलीनीकरण को प्रभु की 'उदकरख' (उत्कर्षण) एवं आकरख (आकर्षण) क्रिया कहते हैं तथा साथ ही साथ सृष्टि रचना की प्रभु कला पर आश्चर्य व्यक्त करते हैं ।[२] इसी धार्मिक भावना के अंतर्गत गुरु ग्रंथ में यह भी कहा गया है कि एक अल्लाह से तेज पैदा हुआ और खुदा की इसी शक्ति के पुतले संसार के सभी बंदे हैं । उस एक ही नूर से सारा संसार बना है अतः न तो कोई बुरा है और न कोई भला ।[३] उपर्युक्त सभी विचारों में एक रहस्यात्मक अनुभूति है और इन्हें गुरुओं के हृदय से धार्मिक उद्‌गार कहा जा सकता है ।

दार्शनिक स्तर

चेतना के मुख्य रूप से चार आयाम माने जाते हैं । ये चार हैं, इंद्रियजनित (Empirical Consciousness) चेतना, विशुद्ध वस्तुपरक चेतना (Objective Consciousness), आत्मपरक चेतना (Subjective Consciousness) और सर्वातिशायी चेतना (Absolute Consciousness) । इंद्रिय जनित चेतना का संबंध तथ्य प्रयोजनीय (Usables) वस्तुओं के अनुभवगम्य गुणों से है । ये वस्तुएं या तो ज्ञान होती हैं अथवा ज्ञेय रूप में कल्पित हैं । यह स्तर विज्ञान का स्तर है । विशुद्ध वस्तुपरक चेतना का संबंध उन विषयों से है जो अनिवार्यतः प्रत्यक्ष गम्य नहीं हैं। इस स्तर की सामग्री स्वतः प्रमाणित सत्ताएं हैं जिनका वस्तु रूप में मनन किया जाता है जैसे प्रकृति–पुरुष, पुदगल, हउमै, शव्द, हुकम आदि । आत्मपरक चेतना का संबंध किसी वस्तुनिष्ठ सत्ता से नहीं होता इस लिए यह सत्ता पूर्णतया आत्मनिष्ठ होती है । इसकी विषय वस्तु वह आत्मनिष्ठ सत्ता है जिसे आत्मा कहते हैं । सर्वातिशायी चेतना का संबंध न तो वस्तुनिष्ठता से न आत्मनिष्ठता से प्रत्युत इन दोनों से निरपेक्ष उस सर्वात्तिशायी सत्ता से हैं जिसे निरपेक्ष सत्य कहते हैं ।

सैद्धान्तिक चेतना के उपर्युक्त चार स्तरों में से प्रथम स्तर और उसकी सामग्री विज्ञान की आलोच्य वस्तु है; अन्तिम तीन स्तर और उनकी सामग्री इंद्रिय निरपेक्ष है । इसे प्रो. के. सी. भट्टाचार्य दर्शन की चेतना और उनकी सामग्री को दर्शन की विषय वस्तु मानते हैं । हम जान चुके हैं कि दार्शनिक स्तर पर गुरु नानक ने सांख्य और वेदान्त की स्थिति से अलग हट कर अहंकार (हउमै) से सृष्टि रचना का विधान माना है ।[४] गुरु ग्रंथ में ऐसे स्थल भी हैं जहाँ 'शून्य'

---

१ श्री गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ २९२

२ जब उदकरख करा करतारा । परजा धरत तब देह अपारा । जब आकरख करत हो कवहूँ । तुममें मिलत देह धर सवहू । तुमरा लखा न जाइ पसारा । किह विध सदा प्रथम संसारा । (बेनती चौपई – दसम ग्रंथ)

३ अवलि अलहु नूर उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ।
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे । गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १३४९

४ "हउमै विचि जगु उपजै पुरखा नामि विसरिऐ दुखि पाई" गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९४६

से सृष्टि की उत्पत्ति मानी गई है ।[१] परन्तु यहां यह स्पष्ट कर देना भी आवश्यक है कि शून्य का प्रयोग अभावात्मक अर्थ में नहीं है शून्य का अर्थ 'कुछ नहीं' नहीं है । शून्य से अभिप्राय उस स्थिति से है जब संसार की उत्पत्ति के पूर्व सारी शक्तियां एक मात्र परमात्मा में केंद्रीभूत थी । गुरु ग्रंथ में सृष्टि के प्रारम्भ के मूल तत्व को 'ओअंकार' संज्ञा से भी अभिहित किया गया है । 'ओअंकार' से सारी सृष्टि की उत्पत्ति मानी गई है । दिन और रात का इसी से निर्माण हुआ । वन, तृण, त्रिभुवन, जल इन सब की उत्पत्ति इसी 'ओअंकार' से हुई है ।

ओअंकारि ब्रहमा उतपति । ओअंकारु कीआ जिनि चिति ।
ओअंकारि सैल जुग भए । ओअंकारि बेद निरमए । ....
ओनम अखर सुणहु बीचारु । ओनम अखरु त्रिभुवन सारु ।[२]

इस प्रकार सिक्ख दर्शन में सृष्टि की एक अनारम्भ अवस्था थी और 'ओअंकार' पूर्व अवस्थित था तथा इसी से सारा रचना क्रम आगे वढ़ा ।

''ओअंकारि सभ स्रिसटि उपाई ।
सभु खेलु तमासा तेरी वडिआई ॥''[३]

एक अन्य स्थल पर गुरु ग्रंथ में परम ब्रह्म को पेड़ और सारी सृष्टि को उस पेड़ की शाखाओं की तरह माना गया है ।

तूं पेडु साख तेरी फूली । तूं सूखमु होआ असथूली ।
तूं जलनिधि तू फेनु बुदबुदा तुधु बिनु अवरु न भालीऐ जीउ ॥
तूं सूतु मणीए भी तूं है । तूं गंठी मेरु सिरि तूं है ।
आदि मधि अंति प्रभु सोई अवरु न कोइ दिखालीऐ जीउ ॥[४]

---

१ ''सुंन कला अपरंपरि धारी । आपि निरालमु अपर अपारी ॥
आपे कुदरति करि करि देखै सुंनहु सुंनु उपाइदा ॥ १ ॥
पउणु पाणी सुनै ते साजे । ....''
अगनि पाणी जीउ जोति तुमारी सुंने कला रहाइदा ॥ २ ॥
सुनहुं ब्रहमा बिसनु महेसु उपाए ....
सुनहुं चंदु सूरजु गैणारे । तिसकी जोति त्रिभुवण सारे ॥ ५ ॥
सुंने अलख अपार निरालमु सुंने ताड़ी लाइदा ॥
सुनहुं धरति आकासु उपाए – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १०३७

२ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९२९–३०

३ वही, पृष्ठ १०६१

४ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १०२

अर्थात: हे परमात्मा तू पेड़ है और तेरी शाखाएं (यह सृष्टि) तुझी से विकसित होकर फली फूली है । तू ही सूक्ष्म से स्थूल रूप में प्रकट हुआ है । तू ही समुद्र और तू ही उसका फेन तथा बुलबुला है । तुम्हारे बिना किसी अन्य का आश्रय नहीं देखा जा सकता । तू ही सूत है और तू ही माला का मनका है, तू ही माला की गांठ है और तू ही सुमेरु है । हे प्रभु आदि मध्य तथा अन्त में तू ही व्याप्त हो रहा है । तुम्हारे सिवा दूसरा कोई दिखाई ही नहीं पड़ता । इसी दार्शनिक स्तर पर 'हुकम' से सृष्टि की उत्पत्ति गुरु ग्रंथ साहिब में स्वीकार की गई है । जपु जी के 'हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई' को एक सृष्टि विधान, एक विश्वजनीन क्रम के रूप में माना गया है । इस सृष्टि विधान के मूलभूत अन्तर्सूत्र 'हुकम' को सामान्य भौतिकवादी दृष्टिकोण से नहीं समझा जा सकता । यही तथ्य वहां भी लागू होता है जहाँ 'सबद' से सृष्टि रचना की बात कही गई है ।[१] दार्शनिक स्तर पर सांख्य, वेदान्त, श्रीमदभगवद्गीता और गुरु ग्रंथ साहिब द्वारा प्रतिपादित सृष्टि रचना के सिद्धांतों को निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है ।[२]

सांख्य	वेदान्त	गीता	सिक्ख अथवा गुरुजन	
१ पुरुष २ प्रकृति (पदार्थ)	१ परब्रह्म	१ परा	१ अफुर–ब्रह्म (निर्गुण)	
३ महत् (बुद्धि)	२, ३, ४, ५–९	२ अपरा प्रकृति	२ सफुर ब्रह्म (सगुण)	
४ अहंकार	परब्रह्म का कनिष्ठ	३–१० अपरा	३ हउमै–अहंकार	
५–९ तन्मात्राएं (पांच)	स्वरूप	के आठ प्रकार	४ जीव जीवात्मा	
१० मन	१०–२५ (मन से	११–२५ वेदांत	५ प्रकृति और वीस	
११–१५ ज्ञानेन्द्रियां (पांच)	लेकर महाभूतों	की भांति	विकार	
१६–२० कर्मेन्द्रियां (पांच)	तक जो मात्र		५ तन्मात्राएं	
२१–२५ महाभूत (पांच)	विकार होने के		५ ज्ञानेन्द्रियां	प्रकृति के
	कारण मूल तत्व		५ कर्मेन्द्रियां	बीस विकार
	नहीं हैं ।		५ महाभूत	

यहाँ यह स्पष्ट है कि वेदान्त, सांख्य तथा गीता में अहंकार को प्रकृति की उपज माना गया है परन्तु सिक्ख गुरुओं ने प्रकृति को अहंकार की उपज माना है और सफुर ब्रह्म के अहंकार (हउमै) को ही सारी सृष्टि का कारण माना है। यह गुरुओं की मौलिक उद्भावना है ।

१ "उतपति परलउ सबदे होवै । सबदे ही फिरि ओपति होवै ॥" गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ११७

२ शेर सिंह–फिलासफी ऑफ सिक्खिजम, पृष्ठ १८७

वैज्ञानिक स्तर

वैज्ञानिक स्तर पर सृष्टि क्रम को बुद्धिगम्य तरीके से समझने का प्रयत्न किया गया है । वैज्ञानिक इस सारी सृष्टि रचना एवं प्रसार के मूल में एक शक्ति (Energy) के रूप में एक 'सुपर' फलूड' की अवस्थिति मानते हैं । यह 'सुपर द्रव्य' अत्यन्त विरल रूप में सारे शून्य में भरा हुआ है और इस सुपर फलूड के कुआरक्स (Quarks) बादल धूल (Cloud Dust) के रूप में हमेशा बनते रहते हैं और शून्य में तैरते रहते हैं । इनसे आगे हाइड्रान्स (Hydrons) और हाइड्रान्स का स्थूल रूप इलेक्ट्रॉन न्यूट्रॉन एवं प्रोटॉन बनते हैं जो कि प्रत्येक परमाणु की रचना के मूल कारण हैं । परमाणु मिलकर अणु तथा अणु से आगे विभिन्न परिमाणों में संयुक्तीकरण की प्रक्रिया से विभिन्न यौगिकों की उत्पत्ति मानी जाती है । आधुनिक विज्ञान यह भी कल्पना करता है कि प्रारम्भ में चारों ओर धुंध ही धुंध (Nebula) थी । इसी धुंध की गरमी या आपसी घर्षण से जल पृथ्वी आदि की उत्पत्ति हुई । उससे आगे अमीबा जल में बनकर मानव तक की विकसित अवस्था को प्राप्त हुए । गुरु ग्रंथ में भी यह माना गया है कि सृष्टि के पूर्व तत्व रूप में करोड़ों वर्षों तक केवल गहन धुंध व्याप्त थी और उस समय न धरती थी न आकाश था । प्रभु का 'हुकम' केवल प्रभु रूप में अवस्थित था । ब्रह्म (अफुर अवस्था में) शून्य समाधि में सब ओर व्याप्त था ।

अरबद नरबद धुंधूकारा । धरणि न गगना हुकमु अपारा ।
न दिनु रैनि न चंदु न सूरजु सुंनि समाधि लगाइदा ।[१]

इन अरवों खरवों वर्ष के धुंध का गुरु ग्रंथ के एक अन्य स्थल पर वर्णन करते हुए गुरु नानक मानते हैं कि कई युगों के इस गहन अंधकार में वह अपरंपर परमात्मा निर्लिप्त भाव से अपने ही ध्यान (ताड़ी) में एक विलक्षण अवस्था में व्यापक रूप से विराजमान था:

केते जुग वरते गुबारै । ताड़ी लाई अपर अपारै ।
धुंधूकारि निरालमु बैठा ना तदि धंध पसारा हे ।।[२]

इसी परम सत्य स्वरूप परमात्मा से, गुरु नानक मानते हैं, पहले पवन की उत्पत्ति हुई जिसे आज की वैज्ञानिक भाषा में विभिन्न गैसों के संमिश्रण का नाम दिया जा सकता है । गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु नानक स्पष्ट कहते हैं कि इसी पवन अर्थात गैसों से जल की (हॉइड्रोजन गैस + ऑक्सीजन $= H_2O =$ पानी) उत्पत्ति हुई । इसी जल से (अमीबा आदि) सारी सृष्टि की रचना हुई ।

साचे ते पवना भइआ पवनै ते जलु होइ ।
जल ते त्रिभवणु साजिआ घटि घटि जोति समोइ ।[३]

---

१ गुरु नानक देव गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १०३५

२ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १०२६

३ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १९

यह ब्रह्मांड कभी गैसों से भरा हुआ था और इन्हीं से आगे दृश्यमान विश्व की रचना हुई । इस वैज्ञानिक सत्य को गुरु ग्रंथ साहिब में एक अन्य स्थल पर धार्मिक शब्दावली में कहते हुए गुरु नानक कहते हैं कि पवन मूल स्रोत है, पानी इस सृष्टि को पैदा करने वाला पिता है तथा धरती माता है । दिन और रात धाय है और दिन और रात की गति वाले झूले में सारा जगत खेल रहा है ।

पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥
दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु ॥[१]

यहाँ तो ऐसा संकेत भी मिल रहा है कि दिन रात के खेल में खेलने का संकेत करते हुए गुरु नानक मानो अपनी कीली पर घूमने वाली पृथ्वी के घूमने को झूले की संज्ञा दे रहे हों जिसमें सारा जगत बच्चे की तरह खेल रहा है । आज से पांच सौ वर्ष पहले अपनी अनुभूति के बल पर इस प्रकार के वैज्ञानिक रहस्य का उद्घाटन करना वास्तव में एक विलक्षण तथ्य हैं । पौराणिक चिंतन की मान्यता कि पृथ्वी एक बैल के सींग पर अवस्थित है, के संदर्भ में गुरु नानक देव आज से पांच सौ वर्ष पहले कहते हैं कि भला कोई विचारवान सोचे कि वह बैल कहाँ किस पर खड़ा है। इस प्रकार धरतियाँ तो अनन्त हो जाएंगी और बैल भी अनंत हो जाएंगें और यह अनुमान लगाना कठिन हो जाएगा कि अन्तिम बैल कहाँ खड़ा है ।

''धौलु धरमु दइआ का पूतु ।
संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति ॥
जे को बुझै होवै सचिआरु ।
धवलै उपरि केता भारु ॥
धरती होरु परै होरु होरु ।
तिसते भारु तलै कवणु जोरु ॥''[२]

यहाँ भी गुरु नानक धरती को एक स्वतन्त्र ग्रह मानते हुए उसकी स्थिति के आधार में किसी काल्पनिक तथ्य को न स्वीकारते हुए किसी अन्य तथ्य की ओर या किसी अन्य शक्ति की ओर इशारा करते हैं । इसी उपर्युक्त पद से सम्बन्धित वाणी 'जपुजी' में गुरु नानक यह भी स्पष्ट करते हैं कि हमारी पृथ्वी पर जैसे कुछ पातालों की तथा कुछ आकाशों की कल्पना की गई है वैसे ही (अन्य लाखों पृथ्वियों के लिए) लाखों पाताल तथा लाखों ही आकाश हैं:

''पाताला पाताल लख आगासा आगास ।
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात॥
सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु ।
लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु ॥''[३]

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ७
२ गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ ३
३ गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ ५

अर्थात इतने आकाश और पाताल हैं कि उनका लेखा जोखा भी नहीं किया जा सकता। पवन से ही (अर्थात गैसों से ही) ब्रह्मांड बना, इस तथ्य को 'सिध गोसटि' वाणी में भी गुरु नानक मानते हैं। सिद्धों से गोष्ठी करते हुए विश्व के मूलारम्भ के बारे में पूछे गए प्रश्न का उत्तर देते हुए गुरु नानक कहते हैं कि वायु (पवन) ही से सृष्टि का प्रारम्भ हुआ :-

"कवण मूलु कवण मति वेला। तेरा कवणु गुरू जिसका तू चेला॥ ....
पवन अरंभु सतिगुर मति वेला। सवदु गुरू सुरति धुनि चेला॥"[1]

इस सृष्टि की रचना कव हुई, इसके बारे में गुरु ग्रंथ में यह स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया है कि यह तथ्य मानव वुद्धि से परे की वात है। केवल वह कर्त्ता पुरुष ही इस रहस्य को समझता है जो इस सृजन का मूल है:

थिति वारु न जोगी जाणै रुति माहु न कोई॥
जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई॥[2]

गुरु अरजन देव भी एक स्थान पर इसी ओर संकेत करते हुए कहते हैं:

"नानक करते की जानै करता रचना"[3]

हाँ इतना अवश्य 'गुरुग्रंथ' में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यह सृष्टि क्रम अनादि काल से चला आ रहा है। कई वार सृष्टि रचना हुई और कई बार यह सृष्टि पुनः ओअंकार में समाहित हुई है:

'कई वार पसरिओ पासार। सदा सदा इकु एकंकार'[4]

---

१ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९४२-४३
२ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४
३ वही, पृष्ठ २७५
४ वही, पृष्ठ २७६

हुकम

गुरु वाणी में 'हुकम'

श्री गुरु अमरदास जी 'हुकम' की महिमा के बारे में कहते हैं:

सभु किछु हुकमे आवदा सभु किछु हुकमे जाइ ।
जे को मूरखु आपहु जाणै अंधा अंधु कमाइ ।
नानक हुकमु को गुरमुखि बूझै जिसनो किरपा करे रजाइ ॥

दृश्य अदृश्य जगत में प्रत्येक पदार्थ का आवागमन 'हुकम' के अन्तर्गत ही है । यदि कोई मूर्ख अपने आपको इस कार्य व्यापार का कर्त्ता मानता है तो वह अंधा है और उसे पता नहीं वह क्या कर रहा है । नानक कहते हैं जिस पर उस (प्रभु) की रज़ा (हुकम) के अन्तर्गत कृपा होती है वही गुरुमुख व्यक्ति उस 'हुकम' की गति का रहस्य जान सकता है । गुरु अरजन देव जी स्पष्ट रूप से स्वीकार करते हैं कि 'हुकम' के अन्तर्गत ही जीव मुक्ति एवं नर्क का अधिकारी बनता है । 'हुकम' में ही जीव सांसारिक कार्य कलापों में संलग्न होता है और 'हुकम' में ही वह श्रद्धा एवं प्रेम से संयुक्त भक्ति को अपनाने वाला कर्मठ भक्त बनता है । 'हुकम' के अंतर्गत ही वह ओछे कार्य करता है तथा 'हुकम' के अंतर्गत ही वह गम्भीर एवं गरिमा युक्त बनता है ।[१] गुरु अमरदास 'हुकम' की व्यापकता के बारे में राग मारू में बतलाते हुए कहते हैं:

हुकमे आइआ हुकमि समाइआ ।
हुकमे दीसै जगतु उपाइआ ।
हुकमे सुरगु मछु पइआला हुकमे कला रहाइदा ॥ १० ॥
हुकमे धरती धउल सिरि भारं ।
हुकमे पउण पाणी गैणारं ।
हुकमे सिव सकती घरि वासा हुकमे खेल खेलाइदा ॥ ११॥
हुकमे आडाणे आगासी ।
हुकमे जल थल त्रिभवण वासी ।
हुकमे सास गिरास सदा फुनि हुकमे देखि दिखाइदा ॥ १२ ॥[२]

---

१ हुकमे मुकती हुकमे नरका । हुकमि सैसारी हुकमे भगता ।
हुकमे होछा हुकमे दाना दूजा नाही अवर धड़ा ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १०८१

२ गुरु ग्रंथ साहिब मारु सोलह, पृष्ठ १०३७

नानक वाणी को ध्यान से पढ़ने पर यह भली भांति स्पष्ट हो जाता है कि गुरु नानक जहाँ एक ओर आध्यात्मिक पक्ष पर जोर देते हैं वहीं अधिकाधिक रूप से हम उन्हें नैतिक पक्ष पर जोर देते हुए भी पाते हैं। उनकी नैतिकता का सबसे बड़ा संवल 'सत्य' है। वे 'सत्य क्या है'– तथ्य के उद्‌घाटन पर अपनी वाणी में ज्यादा जोर देते हैं। वे स्पष्ट मानते हैं कि सभी अवधारणाएं कार्य कलाप 'सत्य' से निचले स्तर पर हैं। सत्य सबसे ऊँचा है: परन्तु सत्य से भी ऊँचा है सत्य पर आचरण। सत्य को आचरण बनाने वाले जीव को गुरु नानक 'सचिआर' की संज्ञा देते हैं। गुरु ग्रंथ साहिब के प्रारम्भ मूल मंत्र में 'ओंकार ब्रह्म' को जहाँ वे सबसे पहले 'सतिनामु' कहते हैं वहीं ठीक इस मूल मंत्र के वाद जपुजी के प्रथम पद में ही गुरु नानक देव यह समस्या प्रस्तुत करते हैं कि कैसे जीव 'सचिआर' वन सकता है और कैसे अविद्या (कूड़) की दीवार जो जीव की दूरदृष्टि में सबसे बड़ा अवरोध है– ध्वस्त हो सकती है[१] ताकि जीव उस अनंत असीम में प्रविष्ट हो सके। इस समस्या का हल वतलाने से पहले गुरु नानक देव जी उन प्रचलित ढंगों की ओर संक्षिप्त संकेत करते हैं जो 'सचिआर' बनने के लिए लोग अपनाते चले आ रहे थे।

धौति, नेति, कपालभाति आदि षटकर्मों से शुचिता को जोड़ने का प्रयत्न किया जाता रहा था। गुरुवाणी, वाह्य शौच और मन की स्वच्छता के अंतर को समझाते हुए मन की स्वच्छता पर अधिक वल देती हैं। मन पर पड़े संशयों, भ्रमों, अन्धविश्वासों को केवल तन की मैल उतारकर दूर नहीं किया जा सकता; और इस प्रकार की वृत्ति का तथा विवेक वुद्धि का विकास हर किसी में संभव नहीं।[२] बेशक दिन रात हम देह को स्वच्छ वनाए रखें, मन पर जमी सूक्ष्म विकारों की पर्त तन के स्वच्छीकरण के द्वारा दूर नहीं हो सकती। इन तथ्यों को जानता हुआ भी जीव विभिन्न प्रकार की शारीरिक साधनाओं में संलग्न रहता है परन्तु मन के विषय विकारों को धोने का प्रयत्न नहीं करता। देह को जल से बार-बार धोना तो महज कच्ची मिट्टी की दीवार को धोने के समान है।[३] जिस प्रकार मिट्टी की दीवार को धोने से दीवार स्थायी रूप से स्वच्छ नहीं हो सकती उसी प्रकार शरीर को बार–बार धोने से पूर्ण स्वच्छता प्राप्त नहीं की जा सकती। सूक्ष्म मन की अत्यन्त सूक्ष्म रास्तों से अर्जित अहम् वैमनस्य आदि की अत्यन्त सूक्ष्म मैल सैंकड़ों तीर्थों पर भी स्नान करने से दूर नहीं हो सकती।[४] गुरु नानक, सचिआर होने के लिए लोगों द्वारा अपनाए गए वाह्य शौच के मार्ग का जपुजी के प्रथम पद की प्रथम पंक्ति में ही खंडन करते हुए कहते हैं:

"सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार ॥"

---

१ किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि। गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १

२ मनि मैलै सभु किछु मैला तनि धोतै मनु हछा न होइ।
इह जगतु भरमि भुलाइआ विरला बूझै कोइ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ५५८

३ सोच करै दिनसु अरु राति। मन की मैलु न तन ते जाति ॥
इसु देही कउ बहु साधना करै। मन ते कबहु न बिखिआ टरै ॥
जलि धोवै बहु देह अनीति। सुध कहा होइ काची भीति ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २६५

४ मलु हउमै धोती किवै न उतरै जे सउ तीरथ नाइ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ३१

'सचिआर' होने के लिए दूसरा प्रचलित साधन मौन व्रत धारण करने या कन्दराओं में समाधि लगाने का प्रयत्न करना अथवा नग्नावस्था में रहकर तीर्थों आदि का भ्रमण करना था। परन्तु गुरु ग्रंथ के संकलन कर्त्ता गुरु अरजन देव भी मानते हैं कि इस प्रकार भी मन की दुविधा पूर्ण स्थिति से छुटकारा नहीं मिलता[१], तथा हम 'सचिआर' नहीं हो सकते। यह मन मौन रहने की प्रक्रियाओं में उलझकर और अधिक चंचल हो उठता है और यह संभव नहीं कि बिना गुरु (ज्ञान) के इसकी मोह-तन्द्रा भंग हो सके।[२] अस्तु जपुजी की दूसरी पंक्ति में इस मौनीकरण की प्रक्रिया की विफलता की ओर इशारा करते हुए गुरु नानक यह कहते हैं:

"चुपै चुप ना होवई जे लाइ रहा लिव तार।"

अर्थात इस मन को मौन करना तथा 'सचिआर' बनना असंभव सा कार्य है।

जपुजी की तीसरी पंक्ति में सुखवादियों के सिद्धान्तों का खण्डन किया गया है और निश्चित रूप से स्पष्ट किया गया है कि यदि कोई यह सोचे कि मन की इच्छाओं की पूर्ति सम्भव है तो वह भूल में है। यदि कोई यह माने कि मन को भोगों के माध्यम से तृप्त करने पर स्वतः ही इसका रुख सत्य की ओर मुड़ जाता है और यह 'सचिआर' होने के लिए प्रयत्नशील हो उठता है तो यह उसका भ्रम है; क्योंकि जिस प्रकार अग्नि को घी की आहुति से संतुष्ट नहीं किया जा सकता उसी प्रकार धन धान्य की आपूर्ति कर मन को संतुष्ट नहीं किया जा सकता। गुरु नानक इस स्थान पर मन के स्वभाव का यथार्थ चित्र प्रस्तुत कर कहते हैं:

"भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार।"

गुरु अरजन देव भी इसी कथन की पुष्टि करते हुए मन के बारे में कहते हैं:

"सहस खटे लख कउ उठि धावै।
त्रिपति न आवै माइआ पाछै पावै॥"
(गुरु ग्रंथ पृ. २७९)

बुद्धि चातुर्य के बल पर सत्य का अन्वेषण कर 'सचिआर' होने तथा सत्य स्वरूप ब्रह्म को पाने की कोशिश करने वालों के लिए भी गुरु अमरदास अपनी प्रसिद्ध कृति 'आनंद' में कहते हैं कि हे मेरे चंचल मन, तू यह निश्चित रूप से जान ले कि बुद्धि चातुर्य के कला-कौशल के बल पर कोई भी उस (सत्य) का साक्षात्कार नहीं कर सका है।[३] प्रत्युत

---

१ मोनि भइउ करपाती रहिउ नगन फिरिउ बन माही।
तट तीरथ सभ धरती भ्रमिउ दुबिधा छुटकै नाही॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ६४१

२ मोनि विगूता किउ जागै गुर बिनु सूता॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ४६७

३ ए मन चंचला चतुराई किनै न पाइआ।
चतुराई न पाइआ किनै तू सुणि मन मेरिआ॥ गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ९१८

होता इसके विपरीत है; बुद्धि चातुर्य से अनुस्यूत कर्म हमें बन्धन में ही डालने वाले होते हैं और जब हम साधु संगति (सद्संगति) में अपने अहम् को त्यागते हैं तभी उन महान आत्माओं के वरद हस्त की छत्रछाया के फलस्वरूप हम बन्धन मुक्त होते हैं ।[१] गुरु नानक यहां फिर स्थिति स्पष्ट करते हैं:

"सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि" (जपुजी)

अब प्रश्न यह है कि जब शौच, मौन, सुखवाद और बुद्धि चातुर्य सभी 'सचिआर' बनने में सहायक नहीं हो सकते तो फिर कैसे अविद्या रूपी भित्ति, अज्ञान अंधकार की दीवार का नाश हो और कैसे हम सत्य का साक्षात्कार कर सकेंगे ? गुरु नानक जपु जी के पहले पद की अंतिम पंक्ति में दिशा निर्देश देते हैं कि 'हुकम' को अंगीकार करके जो कि जीवात्मा के साथ ही अनंत युगों से चला आ रहा है, हम उस हुकुम की रज़ा के अंतर्गत ही 'सचिआर' बन सकते हैं । जपु जी के दूसरे पद में विशद् रूप से 'हुकम' के प्रभाव का वर्णन किया गया है ।

"हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई ।
हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ।
हुकमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि ।
इकना हुकमी वखसीस इकि हुकमी सदा भवाइअहि ।
हुकमै अंदर सभु को बाहरि हुकम न कोइ ॥
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोई ॥"

अर्थात 'हुकम' के अंतर्गत ही सभी प्रकार के क्रियाकलाप हो रहे हैं और इस 'हुकम' से बाहर कुछ भी नहीं है। यहाँ पर दृष्टव्य है कि 'हुकम' की विशदता को वर्णित कर सकने के बारे में गुरु नानक स्पष्ट कहते हैं कि इसका वर्णन नहीं किया जा सकता । जिस 'हुकम' के अंतर्गत ही दशावतार हुए, देव दानवों की अगणित सृष्टियां हुईं,[२] उस 'हुकम' का वर्णन वास्तव में असंभव कार्य ही माना जा सकता है । 'सिध गोसटि' में गुरु नानक 'हुकम' के बारे में बात करते हुए आत्म विभोर हो कर कह उठते हैं कि 'हुकम' अनंत विस्मय का बोध है अर्थात् अपार आश्चर्य स्वरूप है[३] और जो इसको पहचान लेता है वही जीने की कला और सत्य की पहचान करने में सक्षम् हो जाता है । वही अपने अहम् का नाश कर निर्मल हो जाता है और वही सच्चा योगी है ।

---

१ जेती सिआनप करम हउ कीए तेते बंध परे ।
जउ साधू करु मसतकि धरिओ तब हम मुकत भए ॥ गुरु अरजन देव (गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २१४)

२ हुकमि उपाए दस अवतारा । देव दानव अगणत अपारा ।
मानै हुकम सु दरगह पैझै साचि मिलाइ समाइदा ॥ गुरु नानक, गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १०३७

३ हुकमु बिसमादु हुकमि पछाणै जीअ जुगति सचु जाणै सोई ।
आपु मेटि निरामलु होवै अंतरि साचु जोगी कहीअै सोई ॥ २३ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९४०

गुरुवाणी में 'हुकम' के लिए अन्य समानार्थक शब्द

गुरुवाणी में 'हुकम' के समानार्थक कई शव्द प्रयुक्त हुए हैं । ये शव्द हैं; कुदरत, अमर, रज़ा, फुरमान, भाणा। 'कुदरत' को लीला रूप 'प्रकृति' भी यदि माना जाए तो यह प्रकृति प्रकारान्तर से उस सर्वशक्तिमान की शक्ति या कला ही कही जाएगी जो शक्तिमान से भिन्न नहीं है । 'वार आसा' में इसी 'कुदरत'' का विशद वर्णन हुआ है । गुरु नानक 'कुदरत' को हुकम के समकक्ष मानते हुए कहते हैं 'हे प्रभु जो कुछ दृश्य श्रव्य और तत्व रूप है वह तेरी ही 'कुदरत' है और तेरी 'कुदरत' (रज़ा) सभी आकार प्रकारों में निहित है । वेद पुराण, कतेबादि विचार ग्रंथ तेरी 'कुदरत' (शक्ति) की व्याख्या (के प्रयास) हैं । खाने पीने पहनने तथा सर्वप्रेम में भी 'कुदरत' (नियम) अन्तर्निहित है । नेकी, वदी, मान अभिमान सब 'कुदरत' (शक्तिमान की शक्ति) के कारण है । पवन, पानी, अग्नि, धरती, धूल सव आश्चर्यजनक रूप से 'कुदरत' (नियमन) के अधीन हैं । हे प्रभु तू ही इन कुदरती नियमनों का कादिर कर्ता है; तथा जो कुछ दृश्य है और व्यवहार में है तेरे 'हुकम' के अन्दर है जिसे अकेला तू ही देख, समझ सकता है ।[१]

इससे पहले कि हम भारतीय चिंतन में 'हुकम' की समानार्थक अवधारणा 'कर्म सिद्धान्त' के परिप्रेक्ष्य में 'हुकम' के सिद्धान्त को समझने का प्रयत्न करें यह अधिक समीचीन होगा कि 'हुकम' के समानार्थक अरवी फारसी के शव्द अम्र, रज़ा, फुरमान आदि को भली प्रकार समझा जाए । रज़ा और फुरमान जहाँ कई बार गुरु ग्रंथ में प्रयुक्त हुए हैं वहाँ 'अम्र' भी 'अमर' रूप में विभिन्न स्थानों पर दैवी नियमन के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है । 'अम्र'[२] शव्द ईश्वरीय आज्ञा के अर्थ में कुरान शरीफ के पदों में कई स्थानों पर प्रयुक्त किया गया है । कुरान शरीफ के ये पद धर्मशास्त्रियों और दार्शनिकों के मतभेद से इतने ग्रस्त रहे हैं कि मुस्लिम तत्व, ग्रीक स्रोतों के साथ गडमड हो गया है और अपनी विशिष्ट परम्परा को खो वैठा है । फिर भी यह सुनिश्चित लगता कि इस शव्द (अम्र, अमर) का ठीक ठीक समानार्थक शब्द ग्रीक शब्दावली में उपलब्ध नहीं है और ऐसा कहा जा सकता है कि 'दिव्य आज्ञा' के बारे में विभिन्न शास्त्रीय विचार मूल रूप से मुस्लिम अवधारणा है ।

इस निर्णय से इस अनुमान को बल मिलता है जिसके अनुसार 'थियालाजी ऑफ अरिस्टोटल' – जो कि लैटिन अनुवाद का आधार है और जिसके अरबी स्रोत को बोरीसोव ने खोज निकाला है – मुस्लिम परिवेश की रचना है। उस रूपान्तरण में मुस्लिम सिद्धान्त 'अम्र' से सम्बन्धित परिच्छेद है । दूसरी ओर यह तथ्य भी कि उस रचना (थियालाजी ऑफ अरिस्टोटल) के सिद्धान्तों की कुछ इस्माइली धर्मशास्त्रियों के उपदेशों से एकात्मता है, अपने आप में एक संकेत है । यह वहुत सम्भव है इस्माइली रचनाकारों और 'थियालाजी' के लम्वे संस्करण के लेखक का एक ही स्रोत रहा हो जो कि अव अप्राप्य है । 'थियालाजी' के वृहद संस्करण के अनुसार 'अम्र' ईश्वर के शव्द (कलिमा) का एक पदनाम है जिसे 'उसकी इच्छा' भी कहा गया है और जो कर्त्ता (ईश्वर) और प्रथम प्रज्ञा के मध्य अवस्थित है तथा प्रज्ञा

---

१ कुदरति दिसै कुदरति सुणीऐ कुदरति भउ सुख सारु ।
कुदरति पाताली आकासी कुदरति सरब अकारु ॥
गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ ४६४

२ द इनसाइकलोपीडिआ ऑफ इस्लाम, जिल्द १ लंदन, पृष्ठ ४४९–५०

(Intelligence) का तात्कालिक कारण है । एक विशिष्ट अर्थ में इसे कारणों का भी कारण कहा जा सकता है । इसे 'शून्य' भी कहा जा सकता है क्योंकि यह गति और जड़ता दोनों के परे है । 'बुद्धि' जो कि सृजन में सर्वप्रथम है इस प्रकार 'शब्द' से सम्बद्ध है कि इन दोनों को एक ही (Identical) माना जा सकता है ।

यही सिद्धान्त समान रूप से या लगभग समान रूप से इस्माइलियों–जैसे कि नासिर–इ–खुसरो की 'खान–इ–इखवान' में पाया जाता है । नासिर–इ–खुसरो के नाम से सम्बद्ध अन्य पुस्तकों में तथापि सैद्धान्तिक भेद पाया जाता है । 'जाद अल मुसाफरीन' में खान–इ–इखवान में प्रस्तुत एवं पुष्ट किए सिद्धान्त को ठीक नहीं माना गया है जिसके अनुसार 'अम्र' और 'इबदा' अर्थात् ईश्वर के सृजनात्मक कार्य को समानार्थक माना गया है । 'गुशायश वा रहायश' में अम्र को 'प्रथम सत्य' (First Being) कहा गया है जिसे कि 'खान–इ–इखवान' में 'नास्ति' (Non Being) कहा गया है ।

एक अन्य इस्माइली लेखक अल–दीन अल–किरमानी ने 'अम्र' को ईश्वर से निकल कर बहाव (Influx) के रूप में वहकर बुद्धि से संयुक्त होने के अर्थ में लिया है । इस लेखक के अनुसार 'अम्र' बुद्धि तत्व से श्रेष्ठ नहीं है और अन्य इसमाइली पंडितों के समान यह लेखक भी 'अम्र को दिव्य इच्छा' (Divine Will) के अर्थ में ग्रहण करता है ।

नासिर अल–दीन अल तुसी नामक इस्माइली लेखक की रचना 'रबदत अल तसलीम' अथवा 'तस्सवरात' में 'अम्र' के सिद्धान्त को इस विचार से जोड़ा गया है कि मानसिक स्तर पर इन्द्रिय ज्ञान, अनुमान, आत्मा तथा प्रज्ञा की उत्तरोतर स्थिति की चरम परिणति 'अम्र' में होती है ।

इन इस्माइली सिद्धान्तों और जिविश दार्शनिक जूडा हलेवी की आध्यात्मिक विद्या से सम्बन्धित वार्ता जिसे सामान्यतः 'कुजरी' के नाम से जाना जाता है में एक सुनिश्चित समानता पाई जाती है । एक ओर यह दार्शनिक (जूडा हलेवी) 'अम्र' और इच्छा को समान मानने का विचार रखता है और दूसरी ओर वह दैवी 'अम्र' को वह शक्ति मानता है जो कि (परमात्मा द्वारा) पैगम्वर को दी गई है और जो पैगम्बर का आन्तरिक गुण है तथा जो प्रज्ञा से भी श्रेष्ठ है। कुरान (vii, 53) के आधार पर कहीं–कहीं 'अम्र' खल्क का विरोधी है; इस प्रकार 'अम्र' आध्यात्मिक तत्वों की रचना को दर्शाता है जबति 'खलक' पदार्थों की रचना का संकेत देता है ।

गुरु ग्रंथ साहिब में उपर्युक्त 'अम्र' को 'अमरु' के रूप में प्रयुक्त किया गया है जो 'हुकम' का ही समानार्थक है । गुरु अरजन देव जी कहते हैं 'सच पातिसाही अमरु सचु सचे सचा थान' । इसी प्रकार तीसरे नानक, गुरु अमरदास भी कहते हैं–''सचा अमरु सचा पातिसाह । श्री गुरु अरजन देव धरती, आकाश, नक्षत्रों को भय से युक्त मानते हैं अर्थात अनुशासन से युक्त मानते हैं क्योंकि इन सब को संचालित करने वाला इन सब के ऊपर 'अमर' है जो अटल है ।[१] यहाँ 'अमर' एक ऐसी शक्ति के रूप में माना गया है जो सबकी गतिविधियों में अन्तर्निहित है और सब इसी शक्ति के अधीन है । गुरु नानक जी भी 'वार आसा' में कहते हैं कि हे प्रभु तेरा 'अमर' अर्थात नियम सर्वदा सत्य है और तेरा न्याय भी सदैव सत्य है । तेरा 'हुकम' भी सत्य है और तेरा 'फुरमान' (आज्ञा) भी सत्य है:

---

१ डरपै धरति अकास नखत्रा सिर ऊपरि अमरु करारा ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९९८

"सचा तेरा अमरु सचा दीबाणु ।
सचा तेरा हुकमु सचा फुरमाणु ।"
(गुरु ग्रंथ पृ. ४६३)

यहाँ अमर, न्याय, हुकम और फुरमान चारों एक ही पद में प्रयुक्त हुए हैं और चारों को सत्य कहा गया है । यहाँ यह भी दृष्टव्य है कि सच को ही जपु जी के प्रारम्भ में गुरु नानक देव 'आदि सचु जुगादि सचु, है भी सचु नानक होसी भी सचु' कहते हैं अर्थात् सत्य ही एक ऐसा अनादि काल से चला आने वाला प्रवाह है जो वर्तमान में भी है और भविष्य में भी रहेगा । गुरु नानक जपु जी में ही बताते हैं कि 'हुकम' की पहचान मानव हृदय से अहम् का नाश कर देती है ।[१] पहचान से यहाँ तात्पर्य है कि अपने कार्यकलापों के कर्तृत्व का अभिमान न करना अर्थात् अहंकार का नाश करना । गुरु अरजन देव तो स्पष्ट कहते हैं कि जीव जब तक 'हुकम' की सत्यता, अटलता को नहीं समझता वह तब तक दुखी रहता है और वह गुरु को पाकर ही 'हुकम' की पहचान कर सकने में समर्थ होता है तथा तत्क्षण परम सुख का अनुभव करना प्रारम्भ कर देता है ।[२]

इच्छा स्वातन्त्रय और हुकम

गुरु ग्रंथ के प्रारम्भ में ही जपु जी में 'हुकम' की अवधारण प्रातिपादित करते हुए गुरु नानक यह कहते हैं कि 'हुकम' से ही जीव पैदा होता है, उसे प्रशंसा प्राप्त होती है, वह उत्तम बनता है, नीच वनता है तथा दुख और सुख प्राप्त करता है ।[३] यहाँ ऐसा लगता है कि जीव के हाथ में कुछ भी नहीं है अर्थात् वह 'हुकम' के अंतर्गत ही बुरा वनता है और 'हुकम' के अन्तर्गत ही अच्छा बनता है । परमात्मा के 'हुकम' के अधीन अच्छा वुरा होना कुछ इस प्रकार का आभास देता है कि जीव का अपना दोष भी कुछ नहीं है, अच्छाई और बुराई 'हुकम' के अंतर्गत है अर्थात् पूर्व निर्धारित है । जीव को आत्म स्वातन्त्रय का कोई अधिकार नहीं है । गुरु नानक ने गुरु ग्रंथ साहिब में एक स्थान पर इस ओर संकेत भी किया है:

हुकमी सभे ऊपजहि हुकमी कार कमाहि ।
हुकमी कालै वसि है हुकमी साचि समाहि ।
नानक जो तिस भावै सो थीऐ इना जंता वसि किछु नाहि ॥[४]

अब यहाँ जीव की इच्छा की स्वतन्त्रता के बारे में जानना आवश्यक है; क्योंकि भला बुरा जब 'हुकमु' में ही हो रहा है तो बुराई का दोष जीव पर नहीं जाना चाहिए । इससे पहले कि हम इस दिशा में कुछ आगे बढ़कर अध्ययन करने का प्रयास करे, भाई वीर सिंह के कथनानुसार यह जानना और मानना आवश्यक है कि जहाँ श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नैतिक आध्यत्मिक मूल्यों के चरम सत्य का प्रतिपादन किया गया वहीं इस परम सत्य को अनुभव करने के लिए

---

१ नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १

२ जब लगु हुकमु न बूझता तब ही लउ दुखीआ ।
गुर मिलि हुकमु पछाणिआ तब ही ते सुखीआ ॥ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ४००

३ हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ।
हुकुमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाइअहि । गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १

४ गुरु ग्रंथ साहिव, पृष्ठ ५५

मार्ग में आने वाले पड़ावों अर्थात् निचले स्तरों की अनुभूतियों को भी गुरुजनों ने महत्व पूर्ण माना है और अपनी टिप्पणियों सहित उन्हें भी गुरु ग्रंथ साहिब में संकलित करने में उन्हें तनिक भी हिचकिचाहट नहीं हुई ।[१] ऐसा करने के पीछे गुरुजनों की दृष्टि दो तथ्यों पर केन्द्रित रही होगी । पहला तथ्य तो यह था कि गुरु जी ''मानस (मनुष्य) ते (से) देवते कीऐ (करने)'' की प्रक्रिया में निचले स्तर (मनुष्य) के महत्व को भली भांति स्वीकार करते हैं । दूसरा तथ्य यह है कि नीचे से ऊपर जाने अर्थात् अधोमुखी से उर्ध्वमुखी होने में गुरुजनों को कभी भी कोई छोटापन महसूस नहीं हुआ । इसे और भी स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार समझा जा सकता है कि गुरुजनों ने अपने बड़प्पन पर कभी दंभ नहीं किया ।

उपर्युक्त पद में जहाँ गुरु जी ने कहा है कि 'हुकम' से ही सब उत्पन्न होते हैं और उसी के 'हुकम' में सभी कार्य निष्पन्न करते हैं वहां 'वार आसा' में हम देखते हैं कि वे स्पष्ट कहते हैं कि ''आपण हथीं आपणा आपे ही काज सवारीए।'' पुनः अन्य गुरुजन भी अपनी वाणियों में ऐसा आभास देते हैं जिससे लगता है कि जीव यदि चाहे तो प्रयत्न पूर्वक 'चेत' सकता है और इस प्रकार की चेतना के लिए 'अजहुं कछु बिगरयो नहीं' आदि पद गुरु ग्रंथ में प्रयुक्त हुए हैं । यदि 'हुकम' के अधीन कर्म बंधन में मनुष्य जकड़ा हुआ है और अपनी स्वतन्त्र इच्छा से उसे कुछ भी नहीं करना है तो अमुक रास्ते पर चलकर अपने जीवन को अच्छा या बुरा बनाया जा सकता है आदि बातों का कोई महत्व नहीं रह जाता ।

नाम रूप से संयुक्त अखिल विश्व को व्यवस्थित ढंग से चलाने वाले शक्ति–सूत्र को 'हुकम' की संज्ञा दी जा सकती है । इस शक्ति सूत्र को 'भय' भी कहा गया है जिसके कारण सूर्य, इंद्र वायु आदि निरन्तर कार्यशील हैं । गुरु नानक भी वार आसा में ऐसा ही संकेत देते हैं जब वे कहते कि भय में ही पवन नदियाँ, सूर्य, चांद, अग्नि एवं धरती आदि अपने कार्य पूरे करते चले आ रहे हैं । यह भय रूपी नियम अटल 'हुकम' है जिसकी अवहेलना असंभव है । मानव जीवन, कर्म, कर्मफल ये सब इसी 'हुकम' के विभिन्न रूप हैं तथा कर्म एवं कर्मफल के नियम, अनन्त प्रसार एवं रहस्य को समझना ही सिक्ख जीवन का पुरुषार्थ है । 'गुरुमत' यह है कि:

सो सेवकु सेवा करे जिसनो हुकमु मनाइसी ।
हुकमि मंनिऐ होवै परवाणु ता खसमै का महलु पाइसी ॥[२]
प्रभु मिलणै की एह नीसाणी । मनि इको सचा हुकमु पछाणी ।
सहजि संतोखि सदा त्रिपतासे अनदु खसम कै भाणै जीउ ॥[३]

---

१ भाई जोध सिंह, गुरमत निरणय, भूमिका (भाई वीर सिंह)
२ गुरु नानक, गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ ४७१
३ गुरु अरजन देव गुरु ग्रंथ साहिब, पृष्ठ १०६

इस महान् 'हुकम' में अंतर्निहित कर्म शक्ति भी महान् है और भौतिक शास्त्र के अनुसार भी इस शक्ति का कभी नाश नहीं होता अपितु इसके नाम–रूप केवल बदला करते हैं । अध्यात्म के दृष्टिकोण से इस नाम–रूप के पारम्परिक बदलाव या परिवर्तन को ही जन्म मरण का चक्र या संसार कहा जा सकता है और 'इन नाम रूपों की आधारभूत शक्ति को समष्टि रूप से ब्रह्म और व्यष्टि रूप से जीवात्मा कहते हैं ।' इसी 'हुकम' की कर्म शक्ति के प्रवाह के कई अन्य नाम भी हैं– जैसे प्रकृति, माया, सृष्टि के नियम उपनियम आदि । गीता में "गहना कर्मणो गतिः"[१] कह कर कर्म की दुर्बोध शक्ति की ओर संकेत किया गया है । अब यदि भौतिक शास्त्रों की दृष्टि से विचार किया जाए तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि मनुष्य कर्म करने या न करने के लिए स्वतन्त्र नहीं है । परन्तु मनुष्य के स्वभाव और प्रकृति को देखकर इस सिद्धान्त की सत्यता पर विश्वास नहीं किया जा सकता । यह तो ठीक है कि मनुष्य अपने हृदय के भीतर यह मानता है कि बेशक मैं दिन को रात या रात को दिन नहीं कर सकता, अथवा सूर्य को पूर्व की बजाय पश्चिम से उदित नहीं करा सकता परन्तु फिर भी जब बुराई भलाई, धर्म अधर्म की समस्याएं मेरे सामने आएं तो मैं उनमें से किसी एक को अंगीकार कर लेने में समर्थ हूँ और इसी आधार पर सारे संसार में चोरी करने वालों को दंड तथा अच्छा काम करने वालों को साधुवाद दिया जाता है ।

मीमांसकों ने कर्म शक्ति को समझने और रोकने की अपनी सरल विधि का प्रतिपादन किया है । उनके कथनानुसार 'यदि मनुष्य कुछ कर्मों को छोड़ दे और कुछ कर्मों को शास्त्रोक्त रीति से करता रहे तो वह आप ही आप मुक्त हो जाएगा ।' क्योंकि प्रारब्ध कर्मों का इस जन्म में उपयोग कर लेने से उनका अन्त हो जाता है; और इस जन्म में सब नित्य–नैमित्तिक कर्मों को करते रहने से तथा निषिद्ध कर्मों से बचते रहने से नरक में ही जाना पड़ता, एवं काम्य कर्मों को छोड़े देने से स्वर्ग आदि सुखों को भोगने की भी आवश्यकता नहीं रहती । जब इहलोक, नरक और स्वर्ग, ये तीनों की गति, इस प्रकार छूट जाती हैं तब आत्मा के लिए मोक्ष के सिवा कोई दूसरी गति ही नहीं रह जाती ।[२] इस वाद को 'कर्म–मुक्ति' या 'नैष्कर्म्य सिद्धि' कहते हैं । परन्तु यह सरलीकरण पूर्ण रीति से सध नहीं सकता क्योंकि इंद्रियों के रहते पूर्ण रूप से कर्म त्याग हो नहीं सकता । इसी अभिप्राय से गीता में भी कहा गया है कि 'कर्म न करने के नैष्कर्म्य नहीं होता और छोड़ देने से सिद्धि भी नहीं मिलती' ।[३] गुरु ग्रंथ में कर्म त्याग को अमान्य ठहराया गया है वल्कि उस वैष्णव को धर्म की निर्मलता के गूढ़ रहस्य को समझने वाला माना गया है जो कर्म को करते हुए निष्कर्म पद को प्राप्त करता है ।[४]

उपर्युक्त विवेचन के बाद भी प्रश्न हमारे सामने बना ही हुआ है कि 'हुकम' के प्रवाह एवं उसकी कर्म शक्ति से अलग होकर क्या जीव अपना भला बुरा सोचने के लिए स्वतन्त्र है ? जीव की इस प्रकार की स्वतन्त्रता के तथ्य को एक उदाहरण के माध्यम से भी समझा जा सकता है । एक कक्षा के प्राध्यापक को उसकी ज्ञान शक्ति, सूझ बूझ के बल पर कक्षा में प्रवेश करते ही कुछ ही क्षणों के भीतर यह स्पष्ट हो जाता है कि कौन विद्यार्थी कैसा है । अब यदि किसी विद्यार्थी को अध्यापक यह कह देता है कि तुम फेल ही होओगे और दूसरे को यह कह देता है कि पास हो जाओगे

---

१ ७.१७

२ बाल गंगाधर तिलक, गीता रहस्य, १९१९, पृष्ठ २७४

३ ३.४.

४ गुरु अरजन देव, गुरु ग्रंथ, पृष्ठ २७४. "करम करत होवै निहकरम । तिसु बैसनो का निरमल धरम"

और परीक्षा फल में वैसा ही होता है तो क्या यह माना जा सकेगा कि अमुक विद्यार्थी फेल या पास इसलिए हुआ क्योंकि अध्यापक ने ऐसा 'हुकम' दे दिया था और वह परिश्रम करने या न करने के लिए स्वतन्त्र नहीं था । इसमें स्पष्ट है कि भविष्य वक्ता अध्यापक विद्यार्थी के संदर्भ में स्वतन्त्र है और इसी तरह विद्यार्थी भी मेहनत करने के संदर्भ में स्वतन्त्र है । परमात्मा सर्वज्ञ है और हर जीव की गति को जानता है परन्तु हर जीव भी एक सीमित अर्थ में पूर्णतया स्वतन्त्र है । जीव की स्वतन्त्र इच्छा शक्ति को भाप के उदाहरण से भी समझाया जा सकता है । जब भाप खुली जगह में रहती है तब उसका कुछ जोर नहीं चलता; परन्तु जब वह किसी बर्तन में बंद कर दी जाती है तब उसका दबाव उस बर्तन पर जोर से होता हुआ स्पष्ट दीख पड़ता है । ठीक इसी तरह जब जीव 'हुकम' और 'हुकमी' की अवस्था में जन्म के पूर्व अर्थात् परमात्मा में समाहित रहता है तो कर्म बंधन और उनसे छूटने के प्रयत्नों से उसका कोई मतलब नहीं होता परन्तु परमात्मा का ही अंशभूत जीव जब जड़ देह और इंद्रियों के बन्धन से बद्ध हो जाता है तब इस बद्धावस्था से उसको मुक्त करने के लिए कर्म करने की प्रवृत्ति देहेन्द्रियों में होने लगती है और इसी को व्यावहारिक दृष्टि से 'आत्मा की स्वतन्त्र प्रवृत्ति' कहते हैं । अब इस आत्म स्वतन्त्रता का अर्थ यह नहीं है कि जीव को 'हुकम' के विरोध में ही जाना है, उसकी खिलाफत में ही खड़ा होना है । जब परमात्मा को सबका पिता कहा गया है तो निश्चित है कि उसका 'हुकम' और 'हुकम' की शक्ति का कर्म प्रवाह सबकी भलाई के लिए है । अतः जीव को विवेक बुद्धि के बल पर (जो कि उसे परमात्मा द्वारा ही दी गई है) भले बुरे की पहचान करने की स्वतन्त्रता है । कर्म को छोड़ना नहीं है प्रत्युत भले कर्मों में प्रवृत्त होना है । गुरु नानक मूल मंत्र में परमात्मा के सत्यस्वरूप को बतलाने के बाद उसे सबसे पहले कर्त्ता पुरुष कहते हैं । जब परमात्मा कर्त्ता है तो उसी की प्रतिमूर्ति मनुष्य कैसे कर्म से विलग रह सकता है; हाँ उसे शुभ कार्य करने की प्रेरणा लेनी है । गुरु गोबिंद सिंह भी कहते हैं:

देह सिवा बर मोहि इहै सुभ कर्मन ते कबहुं न टरों ।
न टरों अरि सो जब जाय लरौं निसचे कर अपनी जीत करों ।
अरि सिखिहों अपने ही मन कउ इह लालच हाउ गुन तउ उचरों।
जब आव की औध निदान बने अत ही रण में तब जूझ मरों ॥

बेशक 'हुकम' की सर्व व्यापकता और बांध कर रखने वाली शक्ति के आगे सिक्ख गुरु नतमस्तक हैं परन्तु साथ ही साथ यह भी मानते हैं कि कोई यह न समझे कि उसे अपने आप बिना कुछ किए आने वाले जीवन या समय में कुछ प्राप्त होने वाला है; जैसे कर्म करोगे वैसा ही फल मिलेगा ।[१] स्व कर्मों के कारण ही कई उस प्रभु के पास पहुँच जाते हैं और कई दूर हो जाते हैं ।[२] 'गुरुमत' यह मानता है कि दोष किसी के सिर पर नहीं मढ़ा जा सकता क्योंकि जो कर्म मनुष्य करता है उसी का फल उसे प्राप्त होता है ।[३] यह जीवन खेत के समान हैं इसमें जैसा बीज डालोगे वैसा ही फल प्राप्त होगा ।[४] भक्त त्रिलोचन भी गुरु ग्रंथ में स्पष्ट करते हैं:–

---

१ गुरु नानक – मतु को जाणै जाइ अगै पाइसी ।
जेहै करम कमाइ तेहा होइसी – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ४३०

२ गुरु नानक – करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ८

३ गुरु नानक – ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा अपणिआ – गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ४३३

४ गुरु अरजन देव – जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु –गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १३४

नाराइण निंदसि काइ भूली गवारी ।
दुक्रितु सुक्रितु थारो करमु री ॥

अन्त में प्रो. गुरबचन सिंह तालिब का 'हुकम' और इच्छा स्वातन्त्र्य से सम्बन्धित मत उद्घृत करना भी यहां अप्रासंगिक न होगा; वे कहते हैं कि 'अपरिवर्तनीय नियम (हुकम) का पक्ष प्रस्तुत करते हुए यह ध्यान में रखना चाहिए कि इसका अर्थ कदापि व्यक्ति के कार्य करने की इच्छा को उससे छीनना या हनन करना नहीं है । मानव को अपनी इच्छानुसार कार्य तो करना है परन्तु यह कार्य अहम् भाव को त्याग कर किया हुआ होना चाहिए और साथ ही साथ उसे इस तथ्य को भी मान कर चलना होगा कि यह नियम (हुकम) केवल अपरिवर्तनीय ही नहीं है प्रत्युत गहन अगाध एवं दुर्वोध भी है । मानव बुद्धि दिव्य रहस्य को भेदने में असमर्थ है और हो सकता है मानव की इच्छाओं की पूर्ति न हो । समर्पण और त्याग की यह भावना (जिसका अर्थ असफलताओं को भी प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करना है) वही आध्यात्मिक विचार है जिससे भारत के लोग गीता के समय से ही परिचित रहे हैं । गुरुजनों के शब्दों और अभिव्यक्ति में भिन्नता नहीं है और गुरुजनों ने इस भावना को व्यक्त करते समय गीता का वर्णन नहीं किया है; क्योंकि गीता में जहाँ कर्म फल के त्याग की बात कही है और यह बात गुरुजनों की शिक्षाओं से भी मेल खाती है, वहीं साथ ही साथ गीता का मुख्य आधार अवतारवाद है जो कि गुरुजनों की आध्यात्मिक दृष्टि के अनुकूल नहीं है । इसीलिए (हुकम से सम्बन्धित) अपने विचारों को उन्होंने इस प्रकार प्रस्तुत किया कि वे विचार ईश्वर सम्बन्धी उनकी अपनी अवधारणा से समन्वय स्थापित कर सकें ।[२]

---

१ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ६९५

२ गुरबचन सिंह तालिब – गुरु नानक हिज विजन एण्ड परसनालिटी, पृष्ठ १४५

शब्द गुरु

गुरु नानक के समय भारत में तीन प्रकार के धार्मिक समझे जाने वाले लोगों का बोलबाला था । यह तीन थेः कर्मकाण्डी अन्धविश्वासी लोग, धर्मान्ध, दूसरों का धर्म परिवर्तन करने वाले तथा अपने आप में मस्त रहने वाले लेकिन सामान्य गृहस्थ को हेय दृष्टि से देखने वाले तथाकथित योगी और संन्यासी । गुरु चेले की परम्परा भारत में बहुत पहले से ही चली आ रही है । गुरु नानक देव सिक्खों के पहले गुरु हैं । प्रत्येक सिक्ख अपने आपको गुरु का शिष्य कहलाने में गर्व अनुभव करता है और गुरु नानक गुरु गोबिंद सिंह और गुरु ग्रंथ साहिब को सर्वोपरि स्थान देता है । इससे पहले कि हम यह भली भांति समझें कि दसों गुरुओं को गुरु का दर्जा क्यों दिया गया है यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से हमारे सामने आता है कि गुरु नानक देव जी के गुरु कौन थे ?

गुरु नानक देव की विश्व यात्राओं में से उनके हिमालय पर्वत की सुमेरु पर्वत श्रेणी पर पहुँचने की बात भी इतिहास–प्रसिद्ध है । गुरु नानक देव जी की प्रसिद्ध वाणी 'सिध गोसटि' में सुमेर पर्वत पर नाथ सिद्धों से हुई वार्ता अंकित है । इस वार्ता में सिद्धों ने जहाँ आध्यात्मिक महत्व के अनेकों प्रश्न पूछे, वहाँ यह भी पूछा कि हे अवधू नानक, आपका गुरु कौन है और आप किसके शिष्य हैं ? गुरु नानक ने बड़ी विनम्रता से अपना विचार उनके सामने रक्खा और उन्हें बताया कि मेरा गुरु 'शब्द' है और मेरा ध्यान (सुरति) उस शब्द गुरु का चेला है । तब योगियों ने इस शब्द गुरु के बारे में और अधिक जानने की इच्छा प्रकट की और जानना चाहा कि जिस 'सबद' की बात चल रही है वह शब्द क्या है, उसकी अवस्थिति कहाँ है और उसका कार्य क्या है तथा उस शब्द का प्रत्यक्षीकरण कैसे सम्भव है ? अब इस शब्द को समझने का प्रयास किया जाएगा

नानक–वाणी में 'सबद' (शब्द) क्या करता है' के भाव में अधिक प्रयुक्त है । यह वास्तव में क्या है इसका स्वरूप क्या है नानक–वाणी में प्रच्छन्न रूप से विद्यमान है जिसे खोज निकालना थोड़े परिश्रम की अपेक्षा रखता है । सिक्ख दर्शन एक क्रियाशील दर्शन है और शब्द क्या करता है की अत्यधिक व्याख्या भी इस बात की पुष्टि करती है कि यह शब्द ही एक ऐसी सत्ता है जो मानव का परम सत्ता के साथ तादात्म्य का साधन जुटाती है जिससे मनुष्य परमात्मा और उस तक पहुंचने के मार्ग को पा सकता है । शब्द में लीन व्यक्तित्व की बार–बार मृत्यु नहीं होती और 'शब्द' की कृपा से नारायण हमें हमारे प्रपंचों से छुड़ाकर स्थिरता प्रदान करता है ।[१] यह शब्द गुरु मरने की कला सिखाता है और मरण के रस को अंतर में दिखाते हुए गर्व निवृत्ति के पश्चात् हमें गगनमंडल का निवासी बनने का अधिकारी

---

१ गुरु नानक : गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १५३
सबदि मरै फिरि मरणु न होइ । बिनु मूएकिउ पूरा होइ ।
परपंचि विआपि रहिआ मनु दोइ । थिर नारायणु करे सु होइ ।

बनाता है । मृत्यु निश्चित है और हरि शरण स्थाई शरण है । सच्चे गुरु (शब्द) के माध्यम से दुविधा नष्ट होती है और हृदय–कमल प्रस्फुटित होकर जीवन में मृत होने का महारस प्राप्त होता है । गुरु वह सीढ़ी है जिसकी प्राप्ति में अनंत सत्य संयम और पवित्रता प्राप्त होती है और परमात्मा की कृपा से यम का भय नहीं रहता । गुरु का विशाल अंक हमें अपने में समाहित कर लेता है और नानक कहते हैं कि अहं को मार कर गुरु (शब्द) कृपापूर्वक घट में अवस्थित परम महल के दर्शन करा देता है ।[१] फिर गुरु नानक देव गुरु ग्रंथ साहिब के 'रागआसा' के चौपदों में 'शब्द' की महानता और उसके दुर्लभ कार्यों का वर्णन करते हैं:

करम करतूति बेलि बिसथारी रामु नामु फलु हूआ ।
तिसु रूपु न रेख अनाहदु वाजै सबदु निरंजनि कीआ ।
करे वखिआणु जाणै जे कोई ॥ अंम्रितु पीवै सोई ॥ १ ॥ रहाउ॥
जिन पीआ से मसत भए है तूटे बंधन फ़ाहे ।
जोती जोति समाणी भीतरि ता छोड़े माइआ के लाहे ॥
सरब जोति रूपु तेरा देखिआ सगल भवन तेरी माइआ ॥
रारै रूपि निरालमु बैठा नदरि करे विचि छाइआ ॥
बीणा सबदु वजावै जोगी दरसनि रूपि अपारा ॥
सबदि अनाहदि सो सहु राता नानकु कहै विचारा ॥
(गुरु ग्रंथ साहिब पृ, ३५१)

अर्थात् अमृत पीना और निरंजनकृत अनहद शब्द को सुनकर उसकी व्याख्या करने का प्रयत्न करना एक समान है । कर्म के फलस्वरूप राम नाम के फल वाली बेल का विस्तार हो पाया है । राम नाम निरंजन शब्द है जो रूप रेखा से परे है । उसी शब्दामृत को पीने वाले बन्धनमुक्त होकर मस्त हो गए हैं । उन्होंने अपनी ज्योति को परमात्मा की ज्योति में मिला दिया है और मायातीत हो गए हैं । हे प्रभु सबमें तेरा रूप दृष्यमान है और सबमें तेरी माया (प्रकृति) की छटा है । उसी माया छाया में अद्‌भुत रूप से अवस्थित होकर तू अपनी कृपा दृष्टि सब पर कर रहा है । वह अपार रूप–गुण युक्त योगी रूपी ईश्वर अपनी वीणा से शब्द झंकृत कर रहा है और नानक के विचार से वह प्रभु उसी अनहद शब्द में एकाकार रूप से लीन है ।

शब्द चंचल मन को स्थिरता प्रदान करता है, काम क्रोध का नाश करता है और उस सच्चे 'शब्द' के माध्यम से ही हमें सद्‌बुद्धि प्राप्त होती है । यहाँ यह दृष्टव्य है कि नानक वाणी में जहाँ भी इस बात को बतलाया गया है कि शब्द क्या करता है वहां किसी न किसी रूप में इसकी अहम्–नाशक शक्ति का वर्णन अवश्य आता है ।[२] कहीं अहंकार

---

१ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ १५३
सतगुरु मिलै सु मरणु दिखाए । मरण रहण रसु अंतर भाए । ....
गुरि मिलिऐ मिलि अंकि समाइआ करि किरपा घरु महलु दिखाइआ ।
नानक हउमै मारि मिलाइआ ।

२ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९३९
'कामु क्रोधु अहंकारु निवारै गुर कै सबदि सु समझ परी'

के नाश के साथ–साथ शब्द की प्राप्ति तो कहीं शब्द की पहचान और विचार के साथ–साथ अहंकार के बादल स्वतः छंटते हुए बताए गए हैं। गुरु अमरदास शब्द को दीपक का कार्य करने वाला बताते हुए कहते हैं कि 'शब्द' तीनों लोकों को प्रकाशित करने वाला स्रोत है।[१] परन्तु यहां प्रकाश चखने की बात की गई है जो ऊपरी सतह से देखने पर बड़ी अजीब लगती है क्योंकि चखा तो किसी स्थूल वस्तु को ही जा सकता है। परन्तु यह विरोधाभास न होकर इस तथ्य की ओर स्पष्ट संकेत है कि प्रकाश को चखने का अर्थ अन्तरात्मा को आलोकित करना है जो अहम् की मैल को धोने के समान ही है। गुरु नानक देव जी ने भी शब्द को अज्ञान, तृष्णा का नाशक बताते हुए तन और मन को शीतल करने वाला बताया है[२] परन्तु इस शब्द में अहम् को त्याग कर ही समाहित हुआ जा सकता है।

इतना प्रभावशाली यह शब्द है क्या ? शब्द एक व्यापक शक्ति है जो घट–घट में अवस्थित है और वही शक्ति अन्तर मैल को धोकर साफ करती है। कोई गुरु उन्मुख आत्मा ही इस शक्ति का अनुभव कर पाती है। सत्ता का स्वरूप क्या हो सकता है। विद्युत एक शक्ति है, सत्ता है, यह बहुत से कार्य करती है, इसके कार्य को हम बल्ब हीटर, फ्रीजर बॉयलर के माध्यम से जानते हैं परन्तु इसका निरपेक्ष रूप हम देख नहीं सकते। हाँ विद्युत को आवेश के रूप में हम अनुभव कर सकते हैं। नानक वाणी के ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से हमें अनुभव होगा कि ओंकार को ही सबकी मूल शक्ति माना गया है। ओंकार ही वह शब्द है जो त्रिभुवनों का सार है।

ओअंकारि ब्रहमा उतपति । ओअंकारु कीआ जिनि चिति ।
ओअंकारि सैल जुगभए ॥ ओअंकारि बेद निरमए ॥
ओअंकारि सबदि उधरे ॥ ओअंकारि गुरमुखि तरे ॥
ओनम अखर सुणहु बीचार ॥ ओनम अखरु त्रिभवणु सारु ॥
(गुरु ग्रंथ पृ. ९२९–३०)

इसी ओंकार को ग्रीकों ने लागोस, बाइबल पंथियों ने वर्ड, वेदों ने वाक् कहा है। योग चूड़ामणि उपनिषद् में इसी ओंकार शब्द की शक्ति और स्थिति के बारे में स्पष्ट संकेत है। ओंकार शब्द ही सबका मूल है और सभी इसी में समाहित होते हैं। 'अकार' स्थूल विराट और विश्व है, 'उकार (उ) हिरण्य गर्भ' तेजस और सूक्ष्म है और 'मकार' (म) करण अव्याकृत और प्राज्ञ है। 'अकार' राजस रक्तवर्ण और ब्रह्म कहा जाता है। 'उ' कार सात्विक शुक्ल वर्ण और विष्णु कहा जाता है। इस प्रकार प्रणव से ही ब्रह्म की उत्पत्ति है, प्रणव से ही विष्णु की उत्पत्ति और प्रणव से ही रुद्र उत्पन्न हुआ है। प्रणव ही परातत्व है। ब्रह्म 'अकार' में ही लय हो जाते हैं, 'उ' कार में विष्णु का लय होता है और 'म' कार में रुद्र लय होते हैं, केवल प्रणव ही प्रकाशित (स्थिर) रहता है। वह ज्ञानी में ऊर्ध्वमुख होता है और अज्ञानी में अधोमुख होता है।[३]

---

१ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ६६४
सबद दीपकु वरतै तिहु लोइ । जो चाखै सो निरमलु होइ ॥
निरमल नामि हउमै धोइ । साची भगति सदा सुखु होइ ॥

२ गुरु ग्रंथ, पृष्ठ ९४३
सबदु वसै सचु अंतरि हीआ ॥
तनु मनु सीतलु रंगि रंगीआ .....

३ योग चूड़ामणि उपनिषद श्लोक ७५–७८

पुनः ध्यान बिन्दु उपदिषद के सोलहवें श्लोक में कहा गया है ।

'ओंकार प्रभवा देवा ओंकार प्रभवाः स्वरः । ओंकार प्रभवं सर्व त्रैलोक्यं सचराचरम्'

अर्थात् ओंकार से देवता हुए ओंकार से स्वर हुए और ओंकार से ही तीनों लोकों के समस्त चराचर हुए । इसी उपनिषद् में आगे चौबीसवें श्लोक में कहा गया है कि गमनागमन में स्थित और गमनादि से शून्य ऐसे करोड़ों सूर्य की दीप्ति के सदृश्य सबके हृदय में रहने वाले हंसात्मक ओंकार का जो दर्शन करते हैं वे निष्पाप हो जाते हैं ।

इसी ओअंकार को शब्द ब्रह्म कहा गया है जो गुरुओं का भी गुरु है । संसार की तमाम पूजा, धार्मिक पुस्तकें उस सूक्ष्म, परा, शब्द ब्रह्म का स्थूल प्रकटीकरण हैं । गुरु नानक इस सूक्ष्म शब्द को 'खसम की वाणी' भी कहते हैं और मानते हैं कि उस खसम की (सूक्ष्म) वाणी को ही मैं स्थूल रूप से अभिव्यक्त कर रहा हूँ । डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस सूक्ष्म शब्द के स्वरूप को समझने की चेष्टा की है । वे कहते हैं कि मूल बात यह है कि सगुण ब्रह्म या सकल परमात्मा में जो इच्छा हुई वह एक प्रकार का स्पन्द या कम्पन (वाइब्रेशन है, उपनिषदों की भाषा में 'एजन') है । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि शब्द या नाद, कम्पन्न का ही मूर्तरूप है । इसलिए शैव और शाक्त आगमों मे ब्रह्म की (शिव की) इस इच्छा को नाद कहते हैं । यह अत्यन्त सूक्ष्म है । मनुष्य अपने कानों से जो शब्द सुनता है वह स्थूल है बहुत स्थूल । केवल बौद्धिक दृष्टि से हम उस प्रथम स्पन्द की बात को सोच सकते हैं । इच्छा ही नाद है, इच्छा के साथ क्रिया लगती है, क्रिया को ही बिन्दु कहते हैं ।

ओंकार शब्द की सूक्ष्मता को समझने में भाषागत स्थूलता की असमर्थता को मानते हुए द्विवेदी जी आगे कहते हैं कि मान लीजिए प्रथम स्पन्द नाद रूप में प्रकट हुआ । हमारे पास सबसे सूक्ष्म अक्षर अ–कार है । सबसे स्थूल ओष्ठ्य वर्णों का अन्तिम अक्षर म–कार है जो उच्चारण के लिए ओष्ठों को तो बन्द कर ही देता है, नाक तक की सहायता भी लेता है । अब हमारा जाना हुआ मूल स्वर या नाद अ–कार ही है । मान लीजिए प्रथम स्पन्द 'अ' रूप में गतिशील हुआ । यदि सिर्फ गतिशील ही रहे तो कम्पन या सपन्दन नहीं होगा । स्थिति भी चाहिए । नाद गति है और बिन्दु ही स्थिति है । गति और स्थिति का विलास ही जगत है जो गति रूप नाद सृष्टि के लिए आवश्यक है । अब 'अ' स्वर 'म' व्यंजन से रुद्ध हुआ । कंठ तक उसे यात्रा करनी पड़ी और ओष्ठ बन्द हो गए । बन्द होते ही वह 'उ' जैसा हो जाएगा । इस प्रकार अ–उ–म प्रथम स्पन्द हुआ । पर समाप्त नहीं हुआ । यह तो कम्पन है चलता ही रहेगा । एक बार उठकर बन्द हो गया तो फिर कम्पन कैसा ? अ–उ–म के इस अक्षर त्रय का मिलित रूप (ओअंकार) स्थूल वर्णों से समझाया गया है, इस लिए इसके स्थूल उच्चारण पर ही ध्यान जाएगा । परन्तु यह समझने का एक तरीका भर है । प्रथम विश्व, ब्रह्माण्ड व्यापी स्पन्द (कास्मिक वाइब्रेशन) कुछ इसी प्रकार का लेकिन अत्यन्त सूक्ष्म रूप में हुआ होगा। इसलिए यह ओअंकार ही विश्व का आरम्भ है । सगुण ब्रह्म का यह नव रूप है । 'नव' नवीन आदि शब्द बहुत अच्छे नहीं हैं । क्योंकि जो नया होता है वह पुराना भी होता रहा है । इसलिए केवल 'नव' कहना ठीक नहीं है । वह प्रणव है, नवं नवं जायमान है; स्वयं संवेद्य ज्ञान का प्रथम व्यक्त रूप है ।[१]

---

१ डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी : नाथ संप्रदाय, पृष्ठ १५६

यह सूक्ष्म प्रणव, ओंकार स्थूल शरीर द्वारा ग्रहण होना संभव नहीं है । सूक्ष्म का साक्षात्कार सूक्ष्म होकर ही किया जा सकता है । गुरु नानक ने भी इस सूक्ष्म शब्द को शरीर के श्रवण का विषय नहीं माना है और कहा कि सुरति अर्थात् ध्यान जो कि स्वयं सूक्ष्म है इस शब्द गुरु का चेला है । देहधारी गुरु की कोई व्यवस्था नहीं है । गुरु गोबिंद सिंह मानते है कि "आदि अन्त एक अवतारा । सोई गुरु समझिओ हमारा ।" और आदि अन्त मध्य में हमेशा व्याप्त एवं उपस्थित यह शब्द ही है जिसका वर्णन ऊपर किया गया है ।

भारतीय दर्शन में इस शब्द ब्रह्म को परा, पश्यन्ति, मध्यमा, वैखरी और मात्रिका रूपों में भी समझने का प्रयास किया गया है । शब्द का परा रूप ब्रह्म से एकाकार शब्द की सूक्ष्मतम अवस्था है जो सारी स्थूल सृष्टि का मूल है । 'परा' अवस्था में शब्द शुद्ध चेतना है जो अभिव्यक्ति की मूलेच्छा के रूप में सूक्ष्म ध्वनि अथवा विचार के रूप में अव्यक्त रूप में अवस्थित रहता है । यह परा शब्द ही शब्द ब्रह्म है जो अपने मूल स्रोत व्यष्टि एवं ब्रह्माण्डीय तन्त्र की आत्मा ब्रह्म अर्थात् सर्वोच्च चेतना के साथ एकात्म रूप से अवस्थित रहता है । शब्द की पश्यन्ति अवस्था वह क्रियात्मक विचार है जो शब्द ब्रह्म का नैमित्तिक शरीर है । पश्यन्ति शब्द वे सूक्ष्म विचार है जिन्हें सर्वोच्च चेतना प्रत्यक्ष देखती है और यह कहा जा सकता है कि शब्द यहाँ शारीरिक स्तर पर व्यक्त न होकर चित्तस्तर पर व्यक्त होता है । परन्तु स्व अभिव्यक्ति की प्रेरणा या इच्छा इन स्थूल स्तरों में शारीरिक अंगों उपांगों पर शक्तिशाली रूप से क्रिया करती है । मध्यमा शब्द, शब्द के आदर्श रूप और स्पष्ट उच्चारण के रूप के बीच मनस्थ शब्द और उच्चरित शब्द का माध्यमिक रूप है । इस अवस्था में अन्तर्निहित शब्द को वाह्य अभिव्यक्ति देने के लिए काया तन्त्र में कुछ विशिष्ट सूक्ष्म ध्वनियों का सृजन होता है । परन्तु शब्द अभी भी शरीर के भीतर है और वाक्यों या अक्षरों के रूप में बाहर अभिव्यक्त नहीं हुआ । वैखरी अवस्था में वाक् तन्तुओं की सहायता से शब्द ब्रह्म, शुद्ध उच्चरित ध्वनि या स्पष्ट श्रवण योग्य शब्दों के रूप में शरीर से बाहर आता है । यहीं पर यह परा शब्द वैखरी अवस्था में आने से पहले जीव के अर्जित अहम् के साथ संयुक्त होकर बाहर आते–जाते अहम् की कोटि के अनुरूप सामान्य या अति सामान्य बन जाता है । यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि यह परा शब्द अपने शुद्धतम रूप में उन्हीं जीवात्माओं के मुख से उच्चरित होता है जिन्होंने अपने अहम् को सम्पूर्ण रूप से समाप्त कर दिया हो तथा उस शब्द ब्रह्म को बाहर भीतर समान रूप से अनुभव किया हो। यह अहम् की भित्ति ही ऐसा अवरोध है जो शरीर के अन्दर बहते शब्द ब्रह्म के झरने को बाहर विश्व में व्याप्त असीम ब्रह्म से मिलने देने में बाधक है । गुरु वाणी में स्पष्ट रूप से कहा गया है:

"धनि पिर का एक ही संग वासा विच हउमै भीति करारी"

यही कारण है कि शब्द को सार्वभौम मानते हुए गुरु नानक ने सभी धर्मों के तत्व परा शब्द का सम्मान किया और भारत भर में बिखरी, विभिन्न जीवन मार्गों से सम्बन्धित विभिन्न सन्तों की रहस्यवादी अनुभूतियों की परा शब्द मणियों को एकत्रित करके उनकी माला पिरोने में तनिक भी नहीं हिचकिचाए । उनके पद चिन्हों पर चलने वाली महान आत्माओं ने भी इस कार्य में योगदान दिया और शब्द ब्रह्म को आदर देने के साथ जहाँ शब्द को मात्रिका रूप (गुरु ग्रंथ साहिब) में प्रतिष्ठित किया वहीं साथ ही साथ धर्म निरपेक्ष, जाति निरपेक्ष समाज की रचना की । इसी कारण दसवें गुरु ने ग्रंथ साहिब को 'प्रकट गुरु' कहा है और यह शब्द ब्रह्म निर्विवाद रूप से प्रत्येक सिक्ख का गुरु है ।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि जिस प्रकार परा शब्द सूक्ष्म से स्थूलतर मात्रिका शब्द के रूप में परिवर्तित होता रहता है उसी भांति यदि स्थूलतम मात्रिका शब्द को स्मरण ध्यान द्वारा पकड़ा जाए तो वह हमें सूक्ष्मतम परा शब्द तक ले जा सकता है ।

गुरु नानक के इस सूक्ष्म शब्द गुरु की अनुभूति स्थूल शब्द (गुरबाणी) के माध्यम से क्रमशः अहं को समाप्त करते हुए तृष्णाओं को नियन्त्रित करते हुए की जा सकती है । शब्द को गुरु नानक जीवन मार्ग के सार तत्व के रूप में भी देखते हैं । नानक वाणी जपुजी में इस सूक्ष्म शब्द के प्रकटीकरण को एक रूपक द्वारा बड़े सुन्दर ढंग से समझाया है। गुरु नानक कहते हैं कि यदि संयम दुकान हो, धैर्य सुनार हो, सुमति निहाई हो, ज्ञान हथौड़ा हो, प्रभुभय धौंकनी हो, साधना अग्नि हो तब अमृत ढालने योग्य प्यार के बर्तन की सहायता से एक ऐसे जीवन मार्ग का निर्माण किया जा सकता है जो व्यक्ति को शब्दामृत का पान करने में सक्षम बना सकता है । साथ ही साथ गुरु नानक यह भी कहते हैं कि जिन पर उस प्रभु की कृपा होती है वे इस कार्य में प्रवृत्त होते हैं और आगे बढ़ते जाते हैं तथा उत्तरोत्तर आनंदित होते चले जाते हैं ।[१]

---

१ जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु ..... गुरु ग्रंथ, पृष्ठ. ८

पृष्ठ 1 से 346 तक का मूलपाट एवं अनुवाद

१ओं सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

॥ जपु ॥

आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥ १ ॥
सोचै सोचि न होवई जे सोची लख वार ॥ चुपै चुप न होवई जे लाइ रहा लिव तार ॥ भुखिआ भुख न उतरी जे बंना पुरीआ भार ॥ सहस सिआणपा लख होहि त इक न चलै नालि ॥ किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि ॥ हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ॥ १ ॥ हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई ॥ हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ॥ हुकमी उतमु नीचु हुकमि लिखि दुख सुख पाईअहि ॥ इकना हुकमी बखसीस इकि हुकमी सदा भवाईअहि ॥ हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ॥ नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ॥ २ ॥ गावै को ताणु होवै किसै ताणु ॥ गावै को दाति जाणै नीसाणु ॥ गावै को गुण वडिआईआ चार ॥ गावै को विदिआ विखमु वीचारु ॥ गावै को साजि करे तनु खेह ॥ गावै को जीअ लै फिरि देह ॥ गावै

वह परब्रह्म परमात्मा एक ही है । उसका नाम (कालातीत) सत्य है । वह सृष्टि का रचयिता और सर्वव्यापक है। वह निर्भय एवं निरवैर (शत्रुभाव से मुक्त) है । सौन्दर्य रूप में वह कालातीत है । वह अजन्मा है और स्वतः प्रकाशित है । उसे गुरु की कृपा से ही प्राप्त किया जाता है ।*

जपु**

कालातीत परमात्मा सत्य रूप में प्रारम्भ से ही है, युगों के आरम्भ से ही मौजूद है । वर्तमान में भी सत्य ही स्थित है और हे नानक भविष्य में भी सत्य ही वना रहेगा ॥ १॥

शरीर को तीर्थों पर लाखों वार स्नान कराने मात्र से, शरीर को चंदनादि लेपों से सुगन्धित करने मात्र से मन के शुद्धिकरण (शौच) की सम्भावना पूर्ण नहीं होती । कन्दराओं की निर्जनता, एकान्त चुप्पी भी मन के क्रिया कलापों को रोकने में समर्थ नहीं (वर्षों की समाधियां भी अन्ततः मन के प्रवल वेग के सामने टूट जाती हैं) । समस्त पुरियों की सम्पूर्ण सम्पत्ति को ले जाने की भी यदि इस मन को आज्ञा मिल जाए तब भी यह पीछे नहीं हटेगा और तृष्णा ग्रसित इस मन की भूख फिर भी वनी रहेगी । अपने बुद्धि चातुर्य को हजारों लाखों तरीकों से यह मन प्रयुक्त करता है, पर फिर भी मन का खोखला पन प्रकट हो ही जाता है । लाखों बुद्धि-कौशल भी अन्त समय मन के किसी काम नहीं आ पाते । कैसे हम सत्याचरण वाले वन सकेंगे ? हमारे सामने (मन के चातुर्य के फल स्वरूप) बनी असत्यता (कूड़) की झूठी दीवार कैसे टूटेगी ? प्रभु के विधान (हुकम) को प्रसन्नता पूर्वक (रज़ा) मानकर उसके अनुसार चलने से ही यह संभव होता है । यह विधान सम्पूर्ण सृष्टि में अन्तर्निहित है ॥ १ ॥ उस अनन्त शक्ति पूर्ण स्वयम्भू (सैभं) सत्ता के अपने सृजनात्मक 'हुकम' के फलस्वरूप सृष्टि की रचना होती है और (प्रभु की उस स्पंदन लीला के विधान में उत्पन्न हो कर) उस 'हुकम' का वर्णन कर सकना असंभव है । जीव जन्तु उसी विधान (हुकम) में उत्पन्न होकर उसी में चलते हुए बड़प्पन के अधिकारी बनते हैं । उत्तम माने जाने वाले एवं तथाकथित नीच समझे जाने वाले सब एक ही परमात्मा के विधान (हुकम) के प्रकटीकरण हैं, जो उसके 'हुकम' के अधीन अपने किए अच्छे बुरे कर्मों के अनुसार सुख और दुख प्राप्त करते हैं । कई ऐसे हैं जिन पर उस प्रभु रूपी 'हुकम' की विशेष कृपा है और जो बख्श दिए गए हैं पर साथ ही साथ कई ऐसे भी हैं जो (अहंकार संयुक्त ही बने रहकर बेशक उस अनन्त सत्ता प्रभु को मानने वाले समझे जाएं पर वे उसमें लीन नहीं हो पाते एवं) उस के चारों ओर जन्म-मरण के दुख भोगते चक्कर लगाते रहते हैं । सारा ही ब्रह्मांड उसके विधान 'हुकम' के अंतर्गत अपना कार्य नियमित ढंग से करता है । कोई भी उस विधान से बाहर नहीं है । जिसने उस 'हुकम' की लय को बूझ लिया है उसको हउमै (अहं) के अंतर्गत कष्ट नहीं भोगने पड़ते (हुकम को बूझना और अहंकार का नाश करना वास्तव में एक ही क्रिया के दो नाम हैं ॥ २॥ अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार, प्रत्येक जीव उस वैधानिक सत्ता प्रभु के बल का वर्णन कर रहा है । कोई उसकी दी हुई विभूतियों को उसी का स्वरूप समझकर उसके गुण गाता है । कोई उसके गुणों और बड़प्पन के सौंदर्य का गायन करता है । कोई बौद्धिक ज्ञान के आधार पर उसके द्वारा क्रियाशील विषम नियमों की व्याख्या करता है और उसके गुण गाता है । कोई उसको सृजनात्मक एवं संहारक सत्ता के रूप में गाता है । कोई उसको घट-घट में प्राण फूंकने और प्राणों को अपने में लीन करने वाले के रूप में गाता है ।

* इस मूलमंत्र की व्याख्या के लिए भूमिका पृष्ठः- क:39 से क:45 तक देखें । ** विस्तार के लिए परिशिष्ट 1 देखें।

को जापै दिसै दूरि ॥ गावै को वेखै हादरा हदूरि ॥ कथना कथी न आवै तोटि ॥ कथि कथि कथी कोटी कोटि कोटि ॥ देदा दे लैदे थकि पाहि ॥ जुगा जुगंतरि खाही खाहि ॥ हुकमी हुकमु चलाए राहु ॥ नानक विगसै वेपरवाहु ॥ ३ ॥ साचा साहिबु साचु नाइ भाखिआ भाउ अपारु ॥ आखहि मंगहि देहि देहि दाति करे दातारु ॥ फेरि कि अगै रखीऐ जितु दिसै दरबारु ॥ मुहौ कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु ॥ अंम्रित वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु ॥ करमी आवै कपड़ा नदरी मोखु दुआरु ॥ नानक एवै जाणीऐ सभु आपे सचिआरु ॥ ४ ॥ थापिआ न जाइ कीता न होइ ॥ आपे आपि निरंजनु सोइ ॥ जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु ॥ नानक गावीऐ गुणी निधानु ॥ गावीऐ सुणीऐ मनि रखीऐ भाउ ॥ दुखु परहरि सुखु घरि लै जाइ ॥ गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं गुरमुखि रहिआ समाई ॥ गुरु ईसरु गुरु गोरखु बरमा गुरु पारबती माई ॥ जे हउ जाणा आखा नाही कहणा कथनु न जाई ॥ गुरा इक देहि बुझाई ॥ सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥ ५ ॥ तीरथि नावा जे तिसु भावा विणु भाणे कि नाइ करी ॥ जेती सिरठि उपाई वेखा विणु करमा कि मिलै लई ॥ मति विचि रतन जवाहर माणिक जे इक गुर की सिख सुणी ॥ गुरा इक देहि बुझाई ॥ सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई ॥ ६ ॥ जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ ॥ नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ ॥ चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ ॥ जे तिसु नदरि न आवई त वात न पुछै के ॥ कीटा अंदरि कीटु करि दोसी दोसु धरे ॥ नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे ॥ तेहा कोइ न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे ॥ ७ ॥ सुणिऐ सिध पीर सुरि नाथ ॥ सुणिऐ धरति धवल आकास ॥ सुणिऐ दीप लोअ पाताल ॥ सुणिऐ पोहि न सकै कालु ॥ नानक भगता सदा विगासु ॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ ८ ॥ सुणिऐ ईसरु बरमा इंदु ॥ सुणिऐ मुखि सालाहण मंदु ॥ सुणिऐ जोग जुगति तनि भेद ॥ सुणिऐ सासत सिम्रिति वेद ॥ नानक भगता

कोई उसको अगम अगोचर मानता है । कोई उसको अपने आगे पीछे, नीचे ऊपर दसों दिशाओं में अंग–संग अनुभव करता है । उसके हुकम के गुणों का कथन करने वाले करोड़ों ही जीव हैं पर उसके विधान का अन्त नहीं पाया जा सका । दाता–प्रभु की विभूतियों को लेने वाले थक जाते हैं पर देने वाले परमात्मा के दिए चले जाने का अन्त नहीं। युगों युगान्तरों तक समाप्त न होने वाली उसकी निधियां अक्षय हैं जिसे यह संसार युगों युगों तक खाता–खिलाता रहता है । प्रभु सत्ता अपने ढंग से संसार का कार्य व्यवहार अनादि काल से ही चलाती चली आ रही है और पूरे ब्रह्मांड के झमेलों के फलस्वरूप भी परम सत्ता कभी खिन्न नहीं होती (देना और खिले रहना, देकर प्रसन्नता अनुभव करना ही प्रभु का गुण है) ॥ ३॥ प्रेम की भाषा में बूझा जा सकने वाला चिरन्तन, अनन्त प्रभु का न्याय सत्य है । उसकी भाषा अपार प्रेम है । पुनः पुनः मनुष्य उससे याचना करता है और सदैव वह दाता रूप प्रभु देता चला जाता है । फिर कैसे हम अर्पित हों जिससे उसका दरवार दृष्टिगत हो सके ? कैसी पुकार लगाएं जिसे सुनकर वह प्रेम–विभोर हो उठे ? व्रह्म वेला में सच्चे नाम और उसके उदात्त विचारों को मन में धारण किया जाना चाहिए । अच्छे विचारों के फलस्वरूप ही हमें (अच्छा) जीवन प्राप्त होता है और उसकी कृपा से (झूठ की दीवार तोड़कर) मुक्ति का द्वार दिखाई देता है । हे नानक, इस तरह उस अनन्त शक्ति सम्पन्न सत्य स्वरूप प्रभु की व्यापकता का अनुभव हो जाता है ॥४॥ उसको स्थापित नहीं किया जा सकता और न ही उसका सृजन किया जा सकता है। वह स्वयंभू परमात्मा माया से परे है । जिसने उसे हृदय में धारण कर उसकी सेवा की उसने आदर प्राप्त किया । हे नानक ! हम सब उस गुणनिधि का गुणानुवाद करें । गाएं सुनें और मन में प्रभु प्रेम बसाएं। जो ऐसा करता है वह क्लेश को त्याग, सुख को मन में धारण कर लेता है । गुरु की ओर उन्मुख होने पर ही जगत में व्याप्त समसरता के संगीत का, ज्ञान का और गुरु की ओर–उन्मुख होने पर ही परमात्मा की सर्वव्यापकता का अनुभव होता है । गुरु ही शिवम् (कल्याणकारी) तत्व है, गुरु ही गोरख (सृष्टि) विष्णु और व्रह्मा है और गुरु ही (पर्वत की तरह अडिग) माँ पार्वती है । उस प्रभु के विधान को समझ सकने पर भी वह अवर्णनीय है। हे गुरु, मेरी एक पिपासा सदैव बनी रहे कि सब जीवों के दाता एक ही प्रभु को मैं कभी न भूलूं ॥ ५ ॥ यदि उसे रिझा सकूं तो मैं तीर्थों पर भी स्नान करूँ अन्यथा बिना उसे प्रसन्न किए स्नानों से क्या लाभ ? उत्पन्न जितनी भी सृष्टि दृष्टिगोचर है, सब में कर्म किए बिना कोई क्या पा सका है ? केवल एक ही परमात्मा की सुशिक्षा में आस्था रखने पर ही मानव की बुद्धि में अवस्थित रत्नों, जवाहिरों और माणिकों का अनुभव होने लगता है । हे गुरु! मेरी एक पिपासा सदैव बनी रहे कि सब जीवों के दाता प्रभु को मैं कभी न भूलूं ॥ ६ ॥ यदि चारों युगों जितनी आयु, प्रत्युत उससे भी दशगुणा आयु हो, नव खण्डों में उसे जाना जाता हो और सब उसके अनुगामी हों; ऊँचे नाम के साथ संसार में यश एवं कीर्ति उपलब्ध कर ले, परन्तु यदि उस प्रभु की दृष्टि में न चढ़ सका तो ऐसे मनुष्य की कुशल क्षेम भी पूछने वाला कोई नहीं मिलता । प्रत्युत (इतना सम्पन्न होने पर भी विपन्न) वह मनुष्य परमात्मा के सामने कीड़ों में भी निम्न कीड़ा है और दोषी है । हे नानक! वह प्रभु गुणहीनों को गुणयुक्त करता है और गुणवानों को भी गुण (विवेक बुद्धि) देता है। ऐसा कोई भी सुझायी नहीं पड़ता जो उस प्रभु को कोई गुण प्रदान कर सकता है॥७॥ (अर्न्तमन से प्रभु नाम की विश्वव्यापी चैतन्य स्वरूपी समरसता की संगीत लहरी) श्रवण करने से सिद्ध, पीरों, देवताओं और नाथों के पद प्राप्त हो जाते हैं। प्रभु नाम श्रवण से धरती, वृषभ और आकाश का ज्ञान हो जाता है कि वास्तव में परमात्मा ही द्वीपों, लोकों और पातालों का आश्रय है । प्रभु नाम श्रवण से साधारण मनुष्य भी कालातीत हो जाता है । हे नानक! भक्तों का अर्न्तमन सदैव (उदात्त तत्व से युक्त होकर) खिला रहता है, क्योंकि प्रभु नाम श्रवण से क्लेश और पाप का नाश हो जाता है ॥८॥ (नाम) श्रवण से शिव ब्रह्मा इन्द्र का पद प्राप्त हो जाता है । नाम श्रवण से विषयी मनुष्य भी प्रभु स्तुति की ओर उन्मुख हो उठता है । नाम श्रवण से योग की युक्तियों और शरीर के गूढ़ रहस्यों का ज्ञान हो जाता है । नाम श्रवण से शास्त्र स्मृति और वेदों के मूल तत्व का ज्ञान हो जाता है । हे नानक, भक्तों

सदा विगासु ॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ ९ ॥ सुणिऐ सतु संतोखु गिआनु ॥ सुणिऐ अठसठि का इसनानु ॥ सुणिऐ पड़ि पड़ि पावहि मानु ॥ सुणिऐ लागै सहजि धिआनु ॥ नानक भगता सदा विगासु ॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ १० ॥ सुणिऐ सरा गुणा के गाह ॥ सुणिऐ सेख पीर पातिसाह ॥ सुणिऐ अंधे पावहि राहु ॥ सुणिऐ हाथ होवै असगाहु ॥ नानक भगता सदा विगासु ॥ सुणिऐ दूख पाप का नासु ॥ ११ ॥ मंने की गति कही न जाइ ॥ जे को कहै पिछै पछुताइ ॥ कागदि कलम न लिखणहारु ॥ मंने का बहि करनि वीचारु ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ १२ ॥ मंनै सुरति होवै मनि बुधि ॥ मंनै सगल भवण की सुधि ॥ मंनै मुहि चोटा ना खाइ ॥ मंनै जम कै साथि न जाइ ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ १३ ॥ मंनै मारगि ठाक न पाइ ॥ मंनै पति सिउ परगटु जाइ ॥ मंनै मगु न चलै पंथु ॥ मंनै धरम सेती सनबंधु ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ १४ ॥ मंनै पावहि मोखु दुआरु ॥ मंनै परवारै साधारु ॥ मंनै तरै तारे गुरु सिख ॥ मंनै नानक भवहि न भिख ॥ ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥ जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ १५ ॥ पंच परवाण पंच परधानु ॥ पंचे पावहि दरगहि मानु ॥ पंचे सोहहि दरि राजानु ॥ पंचा का गुरु एकु धिआनु ॥ जे को कहै करै वीचारु ॥ करते कै करणै नाही सुमारु ॥ धौलु धरमु दइआ का पूतु ॥ संतोखु थापि रखिआ जिनि सूति ॥ जे को बुझै होवै सचिआरु ॥ धवलै उपरि केता भारु ॥ धरती होरु परै होरु होरु ॥ तिस ते भारु तलै कवणु जोरु ॥ जीअ जाति रंगा के नाव ॥ सभना लिखिआ वुड़ी कलाम ॥ एहु लेखा लिखि जाणै कोइ ॥ लेखा लिखिआ केता होइ ॥ केता ताणु सुआलिहु रूपु ॥ केती दाति जाणै कौणु कूतु ॥ कीता पसाउ एको कवाउ ॥ तिस ते होए लख दरीआउ ॥ कुदरति कवण कहा वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥ १६ ॥ असंख जप असंख भाउ ॥ असंख पूजा असंख तप ताउ ॥ असंख गरंथ मुखि वेद पाठ ॥ असंख जोग मनि रहहि

का अन्तर्मन सदैव (विभोर अवस्था में) खिला रहता है क्योंकि प्रभु नाम श्रवण से क्लेश और पाप का नाश हो जाता है ॥ ९ ॥ प्रभु नाम श्रवण से त्याग, संतुष्टि और ज्ञान का प्रकाश हो जाता है । नाम श्रवण अड़सठ तीर्थों के स्नान तुल्य है । प्रभु नाम श्रवण से अनेक विद्याओं में पारगंत होने पर मिलने वाला आदर भी स्वतः ही मिल जाता है । नाम श्रवण से ही समाधि की अवस्था प्राप्त हो जाती है । हे नानक ! भक्तों का अन्तर्मन सदैव प्रफुल्लित रहता है क्योंकि प्रभु नाम श्रवण से क्लेश और पाप का नाश हो जाता है ॥१०॥ (अन्तर्मन से प्रभु की विश्वव्यापी चैतन्य स्वरूपी समरसता की संगीत लहरी) श्रवण करने से मानव गुणों के समुद्रों के अवगाहन के योग्य हो जाता है । प्रभु–नाम श्रवण से शेख, पीर और सम्राटों की पदवियाँ प्राप्त हो जाती हैं । नाम श्रवण से अंधबुद्धि मनुष्य भी ज्ञान–प्रकाश से युक्त हो जाते हैं । नाम श्रवण से भवसागर की गहराई का रहस्य ज्ञात हो जाता है । हे नानक ! भक्तों का अन्तर्मन सदैव प्रफुल्लित रहता है क्योंकि प्रभु नाम श्रवण से क्लेश और पाप का नाश हो जाता है ॥ ११ ॥ (श्रवणोपरान्त तदनुसार) शिरोधार्य कर कार्यरूप में परिणत करने वाले की महिमा अनिर्वचनीय है । यदि कोई वर्णन करे भी तो उसे (प्रयत्न की अपर्याप्तता के कारण) पछताना पड़ता है । (भले ही) ऐसे मनस्वी की महिमा पर विद्वत् मंडली बैठकर विचार करती है, पर उसकी महिमा लेखनी, कागज पर लिखने में असमर्थ है । यदि कोई मन से श्रद्धापूर्वक उसे अपनाए तो मायातीत परमात्मा के नाम का ऐसा प्रभाव है ॥१२॥ शिरोधार्य कर कार्यरूप में परिणत करने वाला, मन और प्रज्ञा के रहस्योद्घाटन में तल्लीन हो जाता है । ऐसे मनस्वी को सब भुवनों की सुधि हो जाती है । ऐसे मनस्वी का विषयों की चोटों की पीड़ा से साक्षात्कार नहीं होता । ऐसे मनस्वी को (लेखा देने के लिए) यमपुरी नहीं जाना पड़ता । यदि कोई मन से श्रद्धापूर्वक अपनाए तो मायातीत परमात्मा के नाम का ऐसा प्रभाव है ॥ १३ ॥ शिरोधार्य कर कार्य में परिणत करने वाला, मार्ग में कोई अवरोध नहीं पाता। मनस्वी, सम्मानित रूप में प्रकट होकर गमन करता है । मनस्वी विभिन्न छुद्र साम्प्रदायिक मार्गों का अनुसरण नहीं करता, अपितु वह (वास्तविक) धर्म के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है । यदि कोई मन से श्रद्धापूर्वक उसे अपनाये तो मायातीत परमात्मा के नाम का ऐसा प्रभाव है ॥ १४ ॥ (श्रवणोपरान्त तदनुसार) शिरोधार्य कर कार्यरूप में परिणत करने वाला झूठ की भूल भुलैयां से मुक्त होने का द्वार पा जाता है । ऐसा मनस्वी कुटुम्ब का भी सुदृढ़ आधार बनता है । ऐसा मनस्वी स्वयं को भी और जिज्ञासुओं को भी भव–सागर से पार करता है । हे नानक! ऐसा मनस्वी दूर–दूर घूम कर भिक्षा नहीं मांगता । यदि कोई मन से श्रद्धापूर्वक उसे अपनाए तो मायातीत परमात्मा के नाम का ऐसा प्रभाव है ॥१५॥ (सुनने एवं मानने की कला में दक्ष) सुविशिष्ट चुने हुए ऐसे पंच (परमात्मा के समक्ष एवं) यहीं कार्यक्षेत्र में प्रधानपद पाते हैं । यही पंच प्रभु दरबार में भी आदर पाते हैं । यही पंच राज–दरबारों को शोभायुक्त करते हैं । ऐसे पंचजनों का प्रेरणा स्रोत केवल एक प्रभु का ध्यान ही रहता है । (फिर भी) चाहे कोई वर्णन कर देख अथवा विचार करले, उस कर्ता के कृत्य अनन्त है । धर्म रूपी वृषभ दया का पुत्र है, जिसके संतोष रूपी सूत्र ने सबको सम्बद्ध कर रखा है । वृषभ पर अवस्थित भार के तथ्य को जो बूझ लेता है वह ज्ञान प्रकाश से आलोकित हो उठता है । धरती एक ही न होकर और भी हैं । फिर (सब से नीचे के) तल वाला वृषभ किस पर स्थित है ? जीव जन्तु अनेक प्रकार के हैं । इन सबने निरन्तर गतिशील मुक्त लेखनी द्वारा (प्रभु महिमा का) वर्णन किया है । किसी विरले को ही यह लेखन कौशल और उसके वर्णन की बृहदता का अनुमान प्राप्त होता है । (वह परमात्मा) कितना बलशाली और सौन्दर्य युक्त है । कितने (उसके दिए हुए) वरदान हैं, कौन क्षुद्र उनका अनुमान लगा सकता है । निश्चित एक ही शब्द के विधान अनुसार उसने (अपने आप को) प्रसारित कर सृजन किया । उसी विधान के अन्तर्गत ही (जीवन के) लाखों प्रवाह फूट निकले । मेरी क्या सामर्थ्य है कि (प्रभु शक्ति के बारे में) विचार सकूं । मैं (इतना तुच्छ हूँ कि), एक बार भी समर्पित होने योग्य नहीं । हे निराकार तुम्हें रिझा सकने वाले कार्य ही भले हैं। (केवल) तुम (ही) सदैव स्थिर हो ॥१६॥ (सृष्टि में) असंख्य प्रकार से (तेरा) जाप चल रहा है । जीव असंख्य प्रकार से प्रेम व्यवहार कर रहे हैं । असंख्य जीव पूजा कर रहे हैं और (तुझे प्राप्त करने के लिए) जीव असंख्य साधनों का प्रयोग कर रहे हैं। असख्य जीव मुंह से ग्रन्थों में निहित ज्ञान तत्व का पाठ कर रहे हैं । असंख्य योगी बनकर मन से (संसार के प्रति)

उदास ॥ असंख भगत गुण गिआन वीचार ॥ असंख सती असंख दातार ॥ असंख सूर मुह भख सार ॥ असंख मोनि लिव लाइ तार ॥ कुदरति कवण कहा वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥ १७ ॥ असंख मूरख अंध घोर ॥ असंख चोर हरामखोर ॥ असंख अमर करि जाहि जोर ॥ असंख गलवढ हतिआ कमाहि ॥ असंख पापी पापु करि जाहि ॥ असंख कूड़िआर कूड़े फिराहि ॥ असंख मलेछ मलु भखि खाहि ॥ असंख निंदक सिरि करहि भारु ॥ नानकु नीचु कहै वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥ १८ ॥ असंख नाव असंख थाव ॥ अगंम अगंम असंख लोअ ॥ असंख कहहि सिरि भारु होइ ॥ अखरी नामु अखरी सालाह ॥ अखरी गिआनु गीत गुण गाह ॥ अखरी लिखणु बोलणु बाणि ॥ अखरा सिरि संजोगु वखाणि ॥ जिनि एहि लिखे तिसु सिरि नाहि ॥ जिव फुरमाए तिव तिव पाहि ॥ जेता कीता तेता नाउ ॥ विणु नावै नाही को थाउ ॥ कुदरति कवण कहा वीचारु ॥ वारिआ न जावा एक वार ॥ जो तुधु भावै साई भली कार ॥ तू सदा सलामति निरंकार ॥ १९ ॥ भरीऐ हथु पैरु तनु देह ॥ पाणी धोतै उतरसु खेह ॥ मूत पलीती कपड़ु होइ ॥ दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ ॥ भरीऐ मति पापा कै संगि ॥ ओहु धोपै नावै कै रंगि ॥ पुंनी पापी आखणु नाहि ॥ करि करि करणा लिखि लै जाहु ॥ आपे बीजि आपे ही खाहु ॥ नानक हुकमी आवहु जाहु ॥ २० ॥ तीरथु तपु दइआ दतु दानु ॥ जे को पावै तिल का मानु ॥ सुणिआ मंनिआ मनि कीता भाउ ॥ अंतरगति तीरथि मलि नाउ ॥ सभि गुण तेरे मै नाही कोइ ॥ विणु गुण कीते भगति न होइ ॥ सुअसति आथि बाणी बरमाउ ॥ सति सुहाणु सदा मनि चाउ ॥ कवणु सु वेला वखतु कवणु कवण थिति कवणु वारु ॥ कवणि सि रुती माहु कवणु जितु होआ आकारु ॥ वेल न पाईआ पंडती जि होवै लेखु पुराणु ॥ वखतु न पाइओ कादीआ जि लिखनि लेखु कुराणु ॥ थिति वारु ना जोगी जाणै रुति माहु ना कोई ॥ जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई ॥ किव करि आखा किव

उदासीन रहते हैं । असंख्य भक्त (तेरे) गुण और ज्ञान (की अगाधता) पर विचार कर रहे हैं । असंख्य ही जीव सत्य धर्म को अपनाने वाले और असंख्य ही दानी दातार है । असंख्य शूरवीर सम्मुख होकर शस्त्रों के वारों को सहन करते हैं । असंख्य जीव मौन धारण कर एक ही धुन में तल्लीन बैठे हैं । मेरी क्या सामर्थ्य है कि (प्रभु शक्ति के बारे में) विचार सकूं । मैं (इतना तुच्छ हूं कि) एक बार भी समर्पित होने योग्य नहीं । हे निराकार, तुम्हें रिझा सकने वाले कार्य ही भले हैं । (केवल) तुम (ही) सदैव स्थिर हो ॥ १७ ॥ (सृष्टि में) असंख्य ही मूर्ख घोर अन्ध (बुद्धि) हैं । असंख्य चोर पराए माल पर पलते रहने वाले हैं । असंख्य ही ऐसे मनुष्य हैं जो शक्ति सम्पन्न होकर अपने आदेश चलाकर अनुचित कार्य कर जाते हैं। असंख्य ही शोषक, हत्या करने का पाप कमा रहे हैं । असंख्य पापी पाप अर्जित कर जाते हैं । असंख्य झूठे झूठ में ही विचरण करते हैं । असंख्य मलेच्छ अखाद्य का ही भक्षण किए चले जा रहे हैं । असंख्य ही निन्दक अपने सिर पर भार को बढ़ाते चले जा रहे हैं । (और भी असंख्य होंगे) बेचारे (विनम्र) नानक ने अपने (तुच्छ) विचार अनुसार कहा है । मैं (इतना तुच्छ हूँ कि) एक बार भी समर्पित होने योग्य नहीं । हे निराकार, तुम्हें रिझा सकने वाले कार्य ही भले हैं । (केवल) तुम (ही) स्थिर हो ॥ १८ ॥ (सृष्टि में) नाम भी असंख्य हैं और स्थान भी असंख्य हैं । असंख्य लोक हैं जो (मनुष्य के लिए) अगम्य हैं । असंख्य कहना भी पाप (भूल) है (क्योंकि उसके वर्णन के लिए असंख्य शब्द भी अपर्याप्त हैं) । फिर भी अक्षरों के माध्यम से ही प्रभु नाम जाना जाता है और अक्षरों से ही उसकी स्तुति की जाती है । अक्षरों द्वारा ही ज्ञान गीतों की सहायता से उस (प्रभु) के गुणों का गायन किया जा सकता है । अक्षरों के माध्यम से ही लिखना सम्भव है । ललाट पर का भाग्य लेख भी अक्षरों में ही अंकित हैं । जिसने ये लेख लिखे हैं उस लेखा–मुक्त परमात्मा के मस्तक पर ऐसे लेख नहीं हैं । जैसे–जैसे परमात्मा आदेश करता है तदनुसार प्राप्तियां होती हैं । परमात्मा द्वारा रचित सम्पूर्ण सृष्टि विभिन्न रूपों में (परमात्मा के) नाम से संयुक्त है । (परमात्मा के) नाम–विहीन कोई स्थान नहीं । मेरी क्या सामर्थ्य है कि (प्रभु शक्ति के बारे) विचार सकूं । मैं एक बार भी समर्पित होने योग्य नहीं । हे निराकार! तुम्हें रिझा सकने वाले कार्य ही भले हैं । (केवल) तुम (ही) सदैव स्थिर हो ॥ १९ ॥ यदि पैर–शरीर धूल से सन जाए तो पानी द्वारा धोने से मैल छूट जाती है । यदि मूत्रादि से कपड़ा गन्दा हो जाए तो साबुन द्वारा उसे धो लिया जाता है । (परन्तु) यदि बुद्धि पाप संयुक्त हो जाती है तो उसे (प्रभु) नाम की रंगत द्वारा ही निखारा जा सकता है । पुण्यात्मा पापात्मा केवल तथाकथित ही नहीं हैं । जैसे कर्म तुम करोगे तदनुसार (संस्कार) अपने साथ ले जाओगे । जैसा बीज बोओगे वैसा ही स्वयं खाना पड़ेगा । हे नानक (अपने कर्मों के अनुसार) प्रभु के विधान के अन्तर्गत जीव आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है ॥ २० ॥ तपस्या तीर्थ यात्रा दान देकर और दयालु बनने पर यदि किसी को आदर मिलता है तो वह केवल तिल भर है । (परन्तु) जिसने अन्तर मन से (प्रभु नाम की विश्वव्यापी चैतन्य स्वरूपी समरसता की संगीत लहरी का) श्रवण किया, तत्पश्चात (शिरोधार्यकर) कार्यरूप में परिणत करने के लिए हृदय में उसके प्रेम को बसाया, उस (मनुष्य) ने (सही रूप में) अन्तर्मन के तीर्थ पर मल मल कर स्नान किया है । (हे प्रभु) मैं कुछ भी नहीं हूँ । सब गुण तो आपके हैं । (नैतिक एवं आध्यात्मिक) गुणों के बिना भक्ति नहीं हो सकती । तुम ही वाणी हो, ब्रह्मा हो । तुम्हारी सदैव जय हो । तुम सदैव सत्य रूप से स्थिर हो, सुन्दर हो और सदैव प्रफुल्लित रहते हो। कौन समय, कौन तिथि और कौन सा दिन था । कौन सी ऋतु और कौन सा महीना था जब यह दृष्ट संसार अस्तित्व में आया । पंडित भी उस समय को न जान सके, क्योंकि यदि ऐसा होता तो पुराणों में (निश्चित रूप से) लिखा होता । काज़ी भी उस समय को न पा सके अन्यथा कुरान (शरीफ) में संकलित कर देते । योगी भी ऋतु माह, दिन, तिथि, आदि के बारे में नहीं जानते । जिस कर्त्ता ने सृष्टि रचना की है वह स्वयं ही इसके बारे में जानता है । कैसे कहूँ कैसे स्तुति करूं ? कैसे उसका वर्णन करूं

सालाही किउ वरनी किव जाणा ॥ नानक आखणि सभु को आखै इक दू इकु सिआणा ॥ वडा साहिबु वडी नाई कीता जा का होवै ॥ नानक जे को आपौ जाणै अगै गइआ न सोहै ॥ २१ ॥ पाताला पाताल लख आगासा आगास ॥ ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात ॥ सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु ॥ लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु ॥ नानक वडा आखीऐ आपे जाणै आपु ॥ २२ ॥ सालाही सालाहि एती सुरति न पाईआ ॥ नदीआ अतै वाह पवहि समुंदि न जाणीअहि ॥ समुंद साह सुलतान गिरहा सेती मालु धनु ॥ कीड़ी तुलि न होवनी जे तिसु मनहु न वीसरहि ॥ २३ ॥ अंतु न सिफती कहणि न अंतु ॥ अंतु न करणै देणि न अंतु ॥ अंतु न वेखणि सुणणि न अंतु ॥ अंतु न जापै किआ मनि मंतु ॥ अंतु न जापै कीता आकारु ॥ अंतु न जापै पारावारु ॥ अंत कारणि केते बिललाहि ॥ ता के अंत न पाए जाहि ॥ एहु अंतु न जाणै कोइ ॥ बहुता कहीऐ बहुता होइ ॥ वडा साहिबु ऊचा थाउ ॥ ऊचे उपरि ऊचा नाउ ॥ एवडु ऊचा होवै कोइ ॥ तिसु ऊचे कउ जाणै सोइ ॥ जेवडु आपि जाणै आपि आपि ॥ नानक नदरी करमी दाति ॥ २४ ॥ बहुता करमु लिखिआ ना जाइ ॥ वडा दाता तिलु न तमाइ ॥ केते मंगहि जोध अपार ॥ केतिआ गणत नही वीचारु ॥ केते खपि तुटहि वेकार ॥ केते लै लै मुकरु पाहि ॥ केते मूरख खाही खाहि ॥ केतिआ दूख भूख सद मार ॥ एहि भि दाति तेरी दातार ॥ बंदि खलासी भाणै होइ ॥ होरु आखि न सकै कोइ ॥ जे को खाइकु आखणि पाइ ॥ ओहु जाणै जेतीआ मुहि खाइ ॥ आपे जाणै आपे देइ ॥ आखहि सि भि केई केइ ॥ जिस नो बखसे सिफति सालाह ॥ नानक पातिसाही पातिसाहु ॥ २५ ॥ अमुल गुण अमुल वापार ॥ अमुल वापारीए अमुल भंडार ॥ अमुल आवहि अमुल लै जाहि ॥ अमुल भाइ अमुला समाहि ॥ अमुलु धरमु अमुलु दीबाणु ॥ अमुलु तुलु अमुलु परवाणु ॥ अमुलु बखसीस अमुलु नीसाणु ॥ अमुलु करमु अमुलु फुरमाणु ॥ अमुलो अमुलु आखिआ न जाइ ॥ आखि आखि रहे लिव लाइ ॥ आखहि वेद पाठ पुराण ॥ आखहि पड़े करहि वखिआण ॥ आखहि बरमे आखहि इंद ॥

और कैसे उसे जानू ? हे नानक, प्रत्येक जीव अपने आपको एक दूसरे से बढ़कर बुद्धिमान मानते हुए उस (परमात्मा) का वर्णन करता है । वह परमात्मा अनन्त है, उसका विधान (हुकम) विशाल है जिसके अन्तर्गत सब कार्य होते हैं । हे नानक, यदि कोई अपने बुद्धि बल से उसे जानना चाहता है तो उसे आगे (परमात्मा के सम्मुख) जाने पर आदर नहीं मिलता ॥ २१ ॥ पातालों के परे लाखों पाताल और आकाशों के परे भी लाखों आकाश हैं । वेद एक स्वर में कहते हैं कि ऐसी खोज में वे थक चुके हैं । कतेब (मुसलमान और ईसाइयों की चार धार्मिक पुस्तकें) अठारह हजार संसार मानते हैं जिन सब के मूल में एक ही तत्व (परमात्मा) है । वास्तव में निश्चित संख्याएं उसका पूर्ण लेखा जोखा करने से पहले ही नष्ट हो जाती हैं । हे नानक, गरिमायुक्त विशाल कहे जाने वाले परमात्मा को स्वयं वह परमात्मा ही जानता है ॥ २२ ॥ प्रशंसनीय प्रभु के बड़प्पन का गुणगान करने पर भी परमात्मा को पूर्णरूप से जानने की सूझ–बूझ नहीं आ पाती । नदियां और छोटे–छोटे जल स्रोत विशाल समुद्र में लीन हो जाते हैं पर उसकी थाह नहीं पा सकते। समुद्र की भांति धन रत्न और पदार्थों के पहाड़ के पहाड़ रखने वाले धनिक शाह सुल्तान उस कीड़ी की भी गरिमा के तुल्य नहीं हो सकते जिस (कीड़ी) ने मन से प्रभु को विस्मृत नहीं किया है ॥ २३ ॥ वर्णन करने से (परमात्मा के) गुणों का अन्त नहीं पाया जा सकता । (परमात्मा की) कृतियों उपहारों का भी अन्त नहीं पाया जा सकता । देखने सुनने पर भी अन्त नहीं पाया जा सकता । (परमात्मा द्वारा) रचित आकृतियां अनन्त हैं और दृष्टि जगत–विस्तार को नहीं जान पाती । ओर–छोर ढूंढ़ने की व्याकुलता में कितने ही (लोग) तड़प रहे हैं, परन्तु उस (प्रभु) की सीमा नहीं पाई जा सकी । यह (अपेक्षित) सीमा कोई नहीं जान सकता। वर्णन की बृहदता के साथ वह (प्रभु) बृहदतर होता चला जाता है । परमात्मा विशाल है और उसका (प्रत्येक) स्थान ऊंचा है ॥ ऊंचे (परमात्मा) का नाम भी ऊंचा है। इतना विशाल ऊंचा कोई हो, वही उस ऊंचे (परमात्मा) के रहस्यों को समझ सकता है । अपने बड़प्पन के विषय में वह आप ही जानता है । हे नानक, प्रभु कृपा–दृष्टि और अनुकम्पा से ही सब वरद भेटें प्राप्त होती हैं ॥ २४ ॥ उसकी अनुकम्पा को लिख पाना असम्भव है । तृष्णा रहित वह दाता विशाल है । कितने योद्धा (प्रभु घर से नित्य) मांग रहे हैं, उनकी विचार बुद्धि द्वारा गणना नहीं की जा सकती । अगणित जीव विकारों में लीन उलझे हुए टूट रहे हैं । अगणित (जीव) उससे लेकर भी कृतघ्नता प्रकट कर रहे हैं । कितने ही मूर्ख (लेकर) केवल खाते चले जा रहे हैं । कितने केवल सुख और भूख की मार से ही सदैव मारे रहते हैं । हे दातार, यह भी तेरी देन है । बंधन से मुक्ति विधान के अन्तर्गत ही होती है । (परन्तु) यदि कोई अल्पज्ञ (किसी अन्य साधन के बारे में) बताना चाहता है, तो वही जानता है कि उसे कितनी मुंह की खानी पड़ती है । प्रभु, हमारी आवश्यकताओं को बूझ कर आप ही देने वाला है, ऐसा कहने वाले भी कई हैं । जिस मनुष्य पर प्रभु, गुणानुवाद करते चले जाने की कृपा करते हैं, हे नानक, वह सम्राटों का भी सम्राट है ॥ २५ ॥ (परमात्मा के) गुण अमूल्य हैं और उनका लेन देन भी अमूल्य है । (परमात्मा के) गुणों के ग्राहक भी अमूल्य हैं और गुणों के भंडार भी अमूल्य हैं । (गुण ग्राहक के रूप में) आने वाले भी अमूल्य हैं और गुणों को ग्रहण कर ले जाने वाले भी अमूल्य हैं । जो मनुष्य प्रभु प्रेम में मग्न हैं और प्रभु में लीन हैं वे भी अमूल्य हैं । उसका विधान अमूल्य है और उसका दरबार अमूल्य है । उसके मानदण्ड अमूल्य हैं उसकी तुला भी अमूल्य है, उसकी अनुकम्पा और समृति चिन्ह भी अमूल्य है । उसकी दयालुता और हुकुम भी अमूल्य है । उस अमूल्य का वर्णन नहीं किया जा सकता । एक सुर होकर भी उसका वर्णन करते रहने पर भी अन्त में रुक (थक) जाना पड़ता है । वेदों पुराणों के माध्यम से उसके बारे में कहा जाता है । विज्ञान पढ़ते हैं और उस प्रभु की व्याख्यायें करते हैं । कई ब्रह्मा, इन्द्र,

आखहि गोपी तै गोविंद ॥ आखहि ईसर आखहि सिध ॥ आखहि केते कीते बुध ॥ आखहि दानव आखहि देव ॥ आखहि सुरि नर मुनि जन सेव ॥ केते आखहि आखणि पाहि ॥ केते कहि कहि उठि उठि जाहि ॥ एते कीते होरि करेहि ॥ ता आखि न सकहि केई केइ ॥ जेवडु भावै तेवडु होइ ॥ नानक जाणै साचा सोइ ॥ जे को आखै बोलुविगाड़ु ॥ ता लिखीऐ सिरि गावारा गावारु ॥ २६ ॥ सो दरु केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले ॥ वाजे नाद अनेक असंखा केते वावणहारे ॥ केते राग परी सिउ कहीअनि केते गावणहारे ॥ गावहि तुहनो पउणु पाणी बैसंतरु गावै राजा धरमु दुआरे ॥ गावहि चितु गुपतु लिखि जाणहि लिखि लिखि धरमु वीचारे ॥ गावहि ईसरु बरमा देवी सोहनि सदा सवारे ॥ गावहि इंद इदासणि बैठे देवतिआ दरि नाले ॥ गावहि सिध समाधी अंदरि गावनि साध विचारे ॥ गावनि जती सती संतोखी गावहि वीर करारे ॥ गावनि पंडित पड़नि रखीसर जुगु जुगु वेदा नाले ॥ गावहि मोहणीआ मनु मोहनि सुरगा मछ पइआले ॥ गावनि रतन उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले ॥ गावहि जोध महाबल सूरा गावहि खाणी चारे ॥ गावहि खंड मंडल वरभंडा करि करि रखे धारे ॥ सेई तुधुनो गावहि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले ॥ होरि केते गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ वीचारे ॥ सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई ॥ है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई ॥ रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई ॥ करि करि वेखै कीता आपणा जिव तिस दी वडिआई ॥ जो तिसु भावै सोई करसी हुकमु न करणा जाई ॥ सो पातिसाहु साहा पातिसाहिबु नानक रहणु रजाई ॥ २७ ॥ मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति ॥ खिंथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति ॥ आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ २८ ॥ भुगति गिआनु दइआ भंडारणि घटि घटि वाजहि नाद ॥ आपि नाथु नाथी सभ जा की रिधि सिधि अवरा साद ॥ संजोगु विजोगु दुइ कार चलावहि

गोपिकाएं, कृष्ण उस प्रभु का अनुमान लगाते हैं । कई शिव, सिद्ध, बुद्ध, दानव, देव, सुर, नर, मुनि–जन और अन्य सेवक परमात्मा के बारे में अनुमान लगाते हैं । कितने ही कहते हैं और कितने ही कहने का प्रयत्न करते हैं । कितने ही वर्णन का प्रयत्न करते करते ही यहां से उठ जाते हैं । जितने पैदा किये हैं यदि और भी (इतने) जीव (हे परमात्मा) तुम पैदा कर दो तब भी तुम्हारा वर्णन नहीं किया जा सकता है । हे परमात्मा, तुम्हारा विस्तार तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है और हे नानक, वह सत्य स्वरूप स्वयं ही यह सब (रहस्य) समझता है । यदि कोई डींग हाँकने वाला इस तरह कह पाने की डींग हांकता है तो उसके लिए मूर्खों का भी मूर्ख शब्द लिखा जाता है ॥ २६ ॥

हे प्रभु तेरा वह घर और उस घर का द्वार कैसा है जहाँ बैठकर तू सभी जीवों का भरण पोषण कर रहा है । तेरी इस सृष्टि में अनेकों ही वाद्‌य यन्त्र एवं राग हैं । अनन्त जीव उनको बजाने वाले हैं । अनेक रागिनियों समेत रागों के नाम कहे जाते हैं । अनेकों ही जीव तेरे गुणानुवाद करने वाले हैं । हे प्रभु, पवन, जल, अग्नि आदि तेरे ही गुण गा रहे हैं। धर्मराज तेरे द्वार पर खड़ा होकर तेरा ही गुणानुवाद कर रहा है । चित्रगुप्त भी जो लेखनी में दक्ष हैं और जिनके लिखे हुए लेखों पर धर्मराज विचार करता है, वे सब भी तेरी प्रशंसा के गीत गा रहे हैं । हे प्रभु, अनेकों देवियां, शिव और ब्रह्मा जो तेरे ही बनाए हुए हैं और तेरे ही द्वार पर शोभायमान हैं, तेरे गुण गा रहे हैं । अनेकों इन्द्र अपने सिंहासनों पर बैठे हुए देवताओं समेत तेरे द्वार पर तेरा गुणानुवाद कर रहे हैं । अनेकों सिद्ध अपनी समाधियों में तेरे गुण गा रहे हैं । साधुजन भी तेरे गुणों को अनुभव करते हुए तेरी प्रशंसा कर रहे हैं । अनेकों यति, दानी पुरुष और सन्तोषी व्यक्ति भी दरअसल तेरे ही गुण गा रहे हैं । अनेकों महाबली तेरे ही बड़प्पन का गुण गा रहे हैं । हे प्रभु, पंडित और ऋषिवर तेरे ही यश का गायन कर रहे हैं । व्यक्ति के मन को लुभा लेने वाली सुंदर स्त्रियां भी तेरे ही गुण गा रही हैं अर्थात् तेरे ही सौन्दर्य को प्रस्तुत कर रही हैं । स्वर्गलोक, पृथ्वीलोक एवं पाताललोक के सभी जीव जन्तु तेरे ही बड़प्पन का गुणानुवाद कर रहे हैं । तेरे पैदा किए हुए रत्न, अड़सठ तीर्थ आदि तुझे ही गा रहे हैं । बड़े बलशाली शूरवीर अपने बल के माध्यम से तेरी ही प्रशंसा कर रहे हैं । जीवन के चारों प्रकार के स्रोत तुझे ही गा रहे हैं । तेरे द्वारा उत्पन्न सारी सृष्टि के खण्ड एवं मण्डल तेरा ही गुणानुवाद कर रहे हैं । वास्तव में उन्हीं लोगों का किया हुआ गुणानुवाद प्रशंसनीय है जो तेरे प्रेम में रंगे हुए हैं और ऐसे जीव ही तुझे भाते हैं । अनेकों अन्य जीव तेरे बड़प्पन का गायन कर रहे हैं और ऐसे जीवों की गणना असम्भव है । फिर भला नानक इन सब के बारे में क्या विचार प्रस्तुत कर सकता है । जिस परम सत्ता प्रभु ने यह सृष्टि उत्पन्न की है वह वर्तमान में भी मौजूद है एवं सदैव बना रहने वाला है । वह अनन्त शक्तिमान प्रभु सदा बना ही रहने वाला है और उसका बड़प्पन भी सदैव स्थिर रहने वाला है । अनेक प्रकार की यह सृष्टि एवं माया की उत्पत्ति जिस प्रभु ने की है वह प्रभु इस सम्पूर्ण जगत को पैदा करके अपनी सृष्टि की संभाल भी स्वयं ही कर रहा है । जो उस प्रभु को भाता है वही वह करता है एवं कोई भी जीव उस प्रभु को आदेश नहीं दे सकता । वह प्रभु सारे संसार का सम्राट है एवं दरअसल सम्राटों का भी सम्राट है । अतः हे नानक, उसकी रज़ा में रहना ही उपयुक्त है ॥२७॥ संतुष्टि की मुद्राएं श्रम का पात्र (खप्पर) ध्यानरूपी भभूत, मौत का भय रूप गुदड़ी, विकार–रहित काया रूपी युक्ति, प्रेम रूपी डंडा धारण करने वाला ही श्रेष्ठ 'आई पंथ' का अनुसरण करने वाला है और वही सबको अपने सहपाठी साथी समझता हुआ पहले अपने मन को जीत कर, अखिल विश्व को जीत लेता है। (और इस सबके लिए) केवल उस प्रभु को ही नमस्कार करो जो सबका मूल है, निष्कलंक है, अनाहत है और युगों युगान्तरों में समान रूप से अवस्थित रहता है ॥ २८ ॥ ज्ञान रूपी भंडार को दयालुता रूपी भंडारिन से संयुक्त करके बांटने पर ही घट–घट में बज रही (चैतन्यता और समरसता की) नाद लहरी का अनुभव होता है । जब यह पता चल जाता है कि नाथों का भी नाथ वह, केवल एक परमात्मा है जिसने सारी सृष्टि को अपने साथ बांध रखा है तब ऋद्धियां और सिद्धियां सब व्यर्थ के भुलावे में डालने वाले स्वादों सी लगने लगती हैं । हमें यह पता चल जाता है कि परमात्मा की संयोगात्मक और वियोगात्मक कला (शक्ति) ही सब कार्य कलाप चला रही है और सब अपने–अपने किये कर्मों के फल स्वरूप बने लेखे में से उचित भाग को

लेखे आवहि भाग ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ २९ ॥ एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु ॥ इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु ॥ जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु ॥ ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ ३० ॥ आसणु लोइ लोइ भंडार ॥ जो किछु पाइआ सु एका वार ॥ करि करि वेखै सिरजणहारु ॥ नानक सचे की साची कार ॥ आदेसु तिसै आदेसु ॥ आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥ ३१ ॥ इक दू जीभौ लख होहि लख होवहि लख वीस ॥ लखु लखु गेड़ा आखीअहि एकु नामु जगदीस ॥ एतु राहि पति पवड़ीआ चड़ीऐ होइ इकीस ॥ सुणि गला आकास की कीटा आई रीस ॥ नानक नदरी पाईऐ कूड़ी कूड़ै ठीस ॥ ३२ ॥ आखणि जोरु चुपै नह जोरु ॥ जोरु न मंगणि देणि न जोरु ॥ जोरु न जीवणि मरणि नह जोरु ॥ जोरु न राजि मालि मनि सोरु ॥ जोरु न सुरती गिआनि वीचारि ॥ जोरु न जुगती छुटै संसारु ॥ जिसु हथि जोरु करि वेखै सोइ ॥ नानक उतमु नीचु न कोइ ॥ ३३ ॥ राती रुती थिती वार ॥ पवण पाणी अगनी पाताल ॥ तिसु विचि धरती थापि रखी धरम साल ॥ तिसु विचि जीअ जुगति के रंग ॥ तिन के नाम अनेक अनंत ॥ करमी करमी होइ वीचारु ॥ सचा आपि सचा दरबारु ॥ तिथै सोहनि पंच परवाणु ॥ नदरी करमि पवै नीसाणु ॥ कच पकाई ओथै पाइ ॥ नानक गइआ जापै जाइ ॥ ३४ ॥ धरम खंड का एहो धरमु ॥ गिआन खंड का आखहु करमु ॥ केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस ॥ केते बरमे घाड़ति घड़ीअहि रूप रंग के वेस ॥ केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस ॥ केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस ॥ केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस ॥ केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद ॥ केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद ॥ केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु ॥ ३५ ॥ गिआन खंड महि गिआनु परचंडु ॥ तिथै नाद बिनोद कोड अनंदु ॥

भोग रहे हैं । अतः केवल उस प्रभु को ही नमस्कार करो जो सबका मूल, निष्कलंक, अनाहत है और सर्वदा युग युगान्तर में समान रूप से अवस्थित रहता है । ॥ २९ ॥ (ऐसा माना जाता है कि) युक्ति पूर्वक ईश्वर और माया के संयोग से तीन पुत्रों का आविर्भाव हुआ । एक सृजन कार्य दूसरा पोषण और तीसरा संहार का काम करता है । परन्तु ये तीनों भी उस परमात्मा की आज्ञा में ही काम करते हैं और इससे भी बड़ी बात यह है कि इन सबके तथ्यों को परमात्मा तो भलीभांति जानता है पर ये स्वयं उसको देखने में भी असमर्थ हैं अर्थात् परमात्मा इनकी पहुंच से भी परे हैं । अतः केवल उस प्रभु को ही नमस्कार करो जो सबका मूल है, निष्कलंक है, अनाहत है, और सर्वदा युग–युगान्तर में समान रूप से अवस्थित रहता है ॥ ३० ॥ वह परमात्मा और उसके (अनन्त) भण्डार प्रत्येक लोक में अवस्थित हैं । उसने सबको पूर्ण बनाया है और अधूरे काम को पूरा करने की भांति उसे बार बार अपने खजाने की ओर देते समय देखना नहीं पड़ता । वह सृजन कर्त्ता सबको पैदा करके उनकी देखभाल भी स्वतः ही करता है । हे नानक, सत्य स्वरूप उस ईश्वर का यह पोषण कार्य अवाध रूप से निरन्तर चल रहा है । अतः केवल उस प्रभु को ही नमस्कार करो जो सबका मूल है, निष्कलंक है, अनाहत है और सर्वदा युग युगान्तर में समान रूप से अवस्थित है ॥ ३१ ॥ एक जीभ लाख हो जाएं, लाख से बीस लाख हो जाएं और (प्रत्येक से) लाखों बार परमात्मा का नाम लिया जाए परन्तु उस प्रभु के साथ तादात्म्य के रास्ते पर विभिन्न स्थितियों की सीढ़ी के सहारे ही गमन किया जाता है और उस प्रभु में लीन हुआ जा सकता है । आकाश के सुख की बातों को सुनकर कीड़ियों में भी आकाश छूने की लालसा जागृत होती है (परन्तु) हे नानक, झूठ और अहं को त्यागे बिना प्रभु की कृपा दृष्टि नहीं होती और असत्यताओं के पाश में बद्ध जीव की यह लालसा और स्पर्धा भावना प्रभु स्मरण का कोरा अभिमान बनकर ही रह जाती है ॥ ३२ ॥ बोलना और चुप रहना अपने (ही) वश में नहीं है । मनचाही वस्तु पाना एवं कुछ दे देना (भी) अपने वश में नहीं है । जीवन और मृत्यु भी (हमारे) वश के बाहर है । मन में उथल–पुथल मचाए रखने वाला ऐश्वर्य (भी) हम अपने सामर्थ्य के बल पर नहीं पाते । विचारों में मग्न रहना, ज्ञान में डूबे रहना, और समाधिस्थ बने रहना भी वश में नहीं है । भवजाल से छूटने की युक्ति भी वश से बाहर है । शक्ति सम्पन्न (केवल) वह (प्रभु) है जो सृजन करके (स्वयं) देख भाल कर रहा है । हे नानक, (यह भली भांति समझ लिया जाना चाहिए कि आत्म रूप में अपने आप में) कोई भी उत्तम अथवा नीच नहीं है ॥ ३३ ॥ रात्रि, ऋतुओं, तिथिओं, दिनों, पवन, जल, अग्नि और पाताल के सामुहिक जमाव में (परमात्मा द्वारा) धरती को धर्मोपार्जन क्षेत्र के रूप में अवस्थित किया गया है । इस धरती पर विभिन्न युक्तियों एवं रंगों के जीव निवास करते हैं जिनके नाम भी अनेक और अनन्त है । सब अपने–अपने कर्मों के आधार पर ही विचार का विषय बनते हैं । वह प्रभु आप भी निष्पक्ष रूप से सत्य है और उसका दरबार भी सच्चा है । वहां (प्रभु नाम श्रवण मनन और धारण करने वाले) पंच जन ही उस प्रभु से साक्षात्कार कर शोभायमान होते हैं और प्रभु की अनुग्रह–दृष्टि से ऐसे मनस्वियों का मस्तक औदात्य से दैदीप्यमान हो उठता है । उस अवस्था तक पहुंचना ही वास्तव में कच्चेपन और पक्केपन का मानदण्ड है । हे नानक, वहाँ तक पहुंचने पर ही (बुरे–भले कच्चे–पक्के की) सूझ–बुद्धि जागृत होती है ॥ ३४ ॥ धर्म खण्ड का यही कर्तव्य–कर्म है । अब ज्ञान खण्ड के कर्म को भी समझा जाए । (सृष्टि में) कई प्रकार के पवन, जल, अग्नि तथा कई कृष्ण और कई महेश हैं । कितने ब्रह्माओं का सृजन हो रहा है जिनके कई प्रकार के रंग और वेश हैं । कई कर्मक्षेत्र हैं, कई सुमेरु पर्वत, कई ध्रुव और कई उपदेश हैं । कितने ही जीवन के स्रोत हैं, कितनी ही बोलियां हैं और कितने ही सम्राट और राजा हैं । कितने ही प्रकार के ध्यान हैं, और सेवक हैं । हे नानक इनका कोई अन्त नहीं । ॥ ३५ ॥ ज्ञान खण्ड तक ले जाने वाली अवस्था में ज्ञान की प्रधानता रहती है । इस अवस्था में नाद, विनोद, कौतुक आनन्द आदि सबका आस्वादन हो जाता है ।

सरम खंड की बाणी रूपु ॥ तिथै घाड़ति घड़ीऐ बहुतु अनूपु ॥ ता कीआ गला कथीआ ना जाहि ॥ जे को कहै पिछै पछुताइ ॥ तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि ॥ तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि ॥ ३६ ॥ करम खंड की बाणी जोरु ॥ तिथै होरु न कोई होरु ॥ तिथै जोध महाबल सूर ॥ तिन महि रामु रहिआ भरपूर ॥ तिथै सीतो सीता महिमा माहि ॥ ता के रूप न कथने जाहि ॥ ना ओहि मरहि न ठागे जाहि ॥ जिन कै रामु वसै मन माहि ॥ तिथै भगत वसहि के लोअ ॥ करहि अनंदु सचा मनि सोइ ॥ सच खंडि वसै निरंकारु ॥ करि करि वेखै नदरि निहाल ॥ तिथै खंड मंडल वरभंड ॥ जे को कथै त अंत न अंत ॥ तिथै लोअ लोअ आकार ॥ जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार ॥ वेखै विगसै करि वीचारु ॥ नानक कथना करड़ा सारु ॥ ३७ ॥ जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु ॥ अहरणि मति वेदु हथीआरु ॥ भउ खला अगनि तप ताउ ॥ भांडा भाउ अंम्रितु तितु ढालि ॥ घड़ीऐ सबदु सची टकसाल ॥ जिन कउ नदरि करमु तिन कार ॥ नानक नदरी नदरि निहाल ॥ ३८ ॥ सलोकु ॥ पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥ दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु ॥ चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि ॥ करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ॥ जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ॥ नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि ॥ १ ॥

सो दरु रागु आसा महला १ ੧ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सो दरु तेरा केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले ॥ वाजे तेरे नाद अनेक असंखा केते तेरे वावणहारे ॥ केते तेरे राग परी सिउ कहीअहि केते तेरे गावणहारे ॥ गावनि तुधनो पवणु पाणी बैसंतरु गावै राजा धरमु दुआरे ॥ गावनि तुधनो चितु गुपतु लिखि जाणनि लिखि लिखि धरमु बीचारे ॥ गावनि तुधनो ईसरु ब्रहमा देवी सोहनि तेरे सदा सवारे ॥ गावनि तुधनो इंद्र इंद्रासणि बैठे देवतिआ दरि नाले ॥ गावनि तुधनो सिध समाधी अंदरि गावनि तुधनो साध बीचारे ॥

श्रम खण्ड की अवस्था (एक मात्र अलौकिक) सौन्दर्य है: वहां मन की प्रकृति की अनुपम गढ़न का कार्य होता है। वह अवस्था वर्णन से परे हैं, और वर्णन करने वाला (प्रयास की अपर्याप्तता के कारण) बाद में पछताता है। उस श्रम खण्ड में सुरति, प्रज्ञा, मन बुद्धि को श्रम पूर्वक गढ़ा जाता है; वहां सुर और सिद्ध–चेतना का गढ़न होता है ॥३६॥ करम (अनुकम्पा) खण्ड की रूप रेखा बल वैभव है, वहाँ तक पहुँच कर (अन्तर्मन में प्रभु बिना) और कोई नहीं रह जाता। वहां पहुँचने वाले ही (वास्तव में) योद्धा, महाबली और शूरमा है। इन्हीं में सर्व–व्यापक राम समाहित रहते हैं। वहां पहुंच कर मन की प्रभु महिमा में ही (धागे कपड़े.की तरह) सिलाई सी हो जाती है और इनके सौन्दर्य की सीमा वर्णनातीत हो जाती है। जिनके हृदय में राम का निवास हो जाता है वे न तो मरते हैं तथा न ही वे (माया द्वारा) ठगे जाते हैं। उस अवस्था में कई लोकों के भक्त निवास करते हुए सदैव परिपूर्ण खिले रहते हैं, क्योंकि वह सत्य प्रभु उनके मन में रमण करता है। तादात्म्य की अवस्था वाले सत्य खण्ड में निरंकार की विशुद्ध अनुभूति ही अनुभूति मात्र अवस्थित रहती है। वह सृजन करता है और उसकी कृपा दृष्टि से सब खिल उठते हैं। वहीं सब खण्डों, मंडलों. ब्रह्माण्डों की, सूझ पड़ती है तथा यदि कोई कथन करे तो उसके अन्त का अन्त नहीं पाया जा सकता। वहां कई लोकों के आकार स्पष्ट होते हैं जो उस (प्रभु) के हुकम (विधान) के अन्तर्गत कार्य चला रहे हैं। (अपने स्फुरण से रचित सृष्टि की) देख भाल करके (वह प्रभु) प्रसन्न विचार एवं प्रफुल्लित रहता है। हे नानक, इस अवस्था का वर्णन अत्यन्त ही कठिन लौह कार्य है अर्थात वह अनुभव की ही अवस्था है वर्णन की नहीं ॥३७॥ संयम, कर्मशाला, धैर्य–सुनार, मति–मेहाई, ज्ञान–हथौड़ा, विराट प्रभु भय–धौंकनी, साधना अग्नि हो, तब प्रेम कुठाली से अमृत झरता है और इस प्रकार की टकसाल में 'शब्द' (रूपी जीवन–युक्ति अर्थात 'सचिआर जीवन') की गढ़ाई (रचना) होती है। यह गढ़न –कार्य उन (आत्माओं) का है जिन पर (प्रभु की) अनुग्रह–दृष्टि होती है। हे नानक, ऐसे मनुष्य, प्रभु–कृपा–दृष्टि से आनन्द विभोर हो जाते हैं ॥३८॥ वायु जीवन–शक्ति रूपी गुरु है, जल उत्पत्ति–स्रोत पिता है और धरती सब की मां है। दिन और रात धाय हैं जिनकी गोदी में सारा संसार (बच्चे की तरह) खेलता कूदता रहता है। धर्म अर्थात कर्त्तव्य कर्म के आधार पर उस परमात्मा के समक्ष सब की अच्छाइयों बुराइयों का लेखा जोखा चलता रहता है। अपने अपने कर्मों के अनुसार ही कुछ उस परम सत्ता के पास पहुंच जाते हैं और कुछ की दूरी बढ़ जाती है। जिन्होंने नाम–स्मरण कर लिया उन्होंने (इस जीवन में) अपनी साधना पूरी कर ली मानी जाती है। हे नानक! उनके अपने मुख भी उज्जवल हो जाते हैं और उनके साथ अनेकों अन्य भी मुक्त हो जाते हैं ॥१॥

सो दरु रागु आसा महला १ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि

हे प्रभु तेरा वह घर और उस घर का द्वार कैसा है जहाँ बैठकर तू सभी जीवों का भरण पोषण कर रहा है। तेरी इस सृष्टि में अनेकों ही वाद्य यन्त्र एवं राग हैं। अनन्त जीव उनको बजाने वाले हैं। अनेक रागिनियों समेत रागों के नाम कहे जाते हैं। अनेकों ही जीव तेरे गुणानुवाद करने वाले हैं। हे प्रभु, पवन, जल, अग्नि आदि तेरे ही गुण गा रहे हैं। धर्मराज तेरे द्वार पर खड़ा होकर तेरा ही गुणानुवाद कर रहा है। चित्रगुप्त भी जो लेखनी में दक्ष हैं और जिनके लिखे हुए लेखों पर धर्मराज विचार करता है, वे सब भी तेरी प्रशंसा के गीत गा रहे हैं। हे प्रभु, अनेकों देवियां, शिव और ब्रह्मा जो तेरे ही बनाए हुए हैं और तेरे ही द्वार पर शोभायमान हैं, तेरे गुण गा रहे हैं। अनेकों इन्द्र अपने सिंहासनों पर बैठे हुए देवताओं समेत तेरे द्वार पर तेरा गुणानुवाद कर रहे हैं। अनेकों सिद्ध अपनी समाधियों में तेरे गुण गा रहे हैं। साधुजन भी तेरे गुणों को अनुभव करते हुए तेरी प्रशंसा कर रहे हैं।

गावनि तुधनो जती सती संतोखी गावनि तुधनो वीर करारे ॥ गावनि तुधनो पंडित पड़नि रखीसुर जुगु जुगु वेदा नाले ॥ गावनि तुधनो मोहणीआ मनु मोहनि सुरगु मछु पइआले ॥ गावनि तुधनो रतन उपाए तेरे अठसठि तीरथ नाले ॥ गावनि तुधनो जोध महाबल सूरा गावनि तुधनो खाणी चारे ॥ गावनि तुधनो खंड मंडल ब्रहमंडा करि करि रखे तेरे धारे ॥ सेई तुधनो गावनि जो तुधु भावनि रते तेरे भगत रसाले ॥ होरि केते तुधनो गावनि से मै चिति न आवनि नानकु किआ बीचारे ॥ सोई सोई सदा सचु साहिबु साचा साची नाई ॥ है भी होसी जाइ न जासी रचना जिनि रचाई ॥ रंगी रंगी भाती करि करि जिनसी माइआ जिनि उपाई ॥ करि करि देखै कीता आपणा जिउ तिस दी वडिआई ॥ जो तिसु भावै सोई करसी फिरि हुकमु न करणा जाई ॥ सो पातिसाहु साहा पतिसाहिबु नानक रहणु रजाई ॥ १ ॥ आसा महला १ ॥ सुणि वडा आखै सभु कोइ ॥ केवडु वडा डीठा होइ ॥ कीमति पाइ न कहिआ जाइ ॥ कहणै वाले तेरे रहे समाइ ॥ १ ॥ वडे मेरे साहिबा गहिर गंभीरा गुणी गहीरा ॥ कोइ न जाणै तेरा केता केवडु चीरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभि सुरती मिलि सुरति कमाई ॥ सभ कीमति मिलि कीमति पाई ॥ गिआनी धिआनी गुर गुरहाई ॥ कहणु न जाई तेरी तिलु वडिआई ॥ २ ॥ सभि सत सभि तप सभि चंगिआईआ ॥ सिधा पुरखा कीआ वडिआईआ ॥ तुधु विणु सिधी किनै न पाईआ ॥ करमि मिलै नाही ठाकि रहाईआ ॥ ३ ॥ आखण वाला किआ वेचारा ॥ सिफती भरे तेरे भंडारा ॥ जिसु तू देहि तिसै किआ चारा ॥ नानक सचु सवारणहारा ॥ ४ ॥ २ ॥ आसा महला १ ॥ आखा जीवा विसरै मरि जाउ ॥ आखणि अउखा साचा नाउ ॥ साचे नाम की लागै भूख ॥ उतु भूखै खाइ चलीअहि दूख ॥ १ ॥ सो किउ विसरै मेरी माइ ॥ साचा साहिबु साचै नाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साचे नाम की तिलु वडिआई ॥ आखि थके कीमति नही पाई ॥ जे सभि मिलि कै आखण पाहि ॥ वडा न होवै घाटि न जाइ ॥ २ ॥ ना ओहु मरै न होवै सोगु ॥ देदा रहै न चूकै भोगु ॥ गुणु एहो होरु नाही कोइ ॥ ना को होआ ना को होइ ॥ ३ ॥ जेवडु आपि तेवड तेरी दाति ॥

अनेकों यति, दानी पुरुष और सन्तोषी व्यक्ति भी दरअसल तेरे ही गुण गा रहे हैं । अनेकों महाबली तेरे ही बड़प्पन का गुण गा रहे हैं । हे प्रभु, वेदों समेत पंडित और ऋषिवर तेरे ही यश का गायन कर रहे हैं । व्यक्ति के मन को लुभा लेने वाली सुंदर स्त्रियां भी तेरे ही गुण गा रही हैं अर्थात् तेरे ही सौन्दर्य को प्रस्तुत कर रही हैं । स्वर्गलोक, पृथ्वीलोक एवं पाताललोक के सभी जीव जन्तु तेरे ही बड़प्पन का गुणानुवाद कर रहे हैं । तेरे पैदा किए हुए रत्न, अड़सठ तीर्थ आदि तुझे ही गा रहे हैं । बड़े बलशाली शूरवीर अपने बल के माध्यम से तेरी ही प्रशंसा कर रहे हैं । जीवन के चारों प्रकार के स्रोत तुझे ही गा रहे हैं । तेरे द्वारा उत्पन्न सारी सृष्टि के खण्ड एवं मण्डल तेरा ही गुणानुवाद कर रहे हैं। वास्तव में उन्हीं लोगों का किया हुआ गुणानुवाद प्रशंसनीय है जो तेरे प्रेम में रंगे हुए हैं और ऐसे जीव ही तुझे भाते हैं । अनेकों अन्य जीव तेरे बड़प्पन का गायन कर रहे हैं और ऐसे जीवों की गणना असम्भव है । फिर भला नानक इन सब के बारे में क्या विचार प्रस्तुत कर सकता है । जिस परम सत्ता प्रभु ने यह सृष्टि उत्पन्न की है वह वर्तमान में भी मौजूद है एवं सदैव बना रहने वाला है । वह अनन्त शक्तिमान प्रभु सदा बना ही रहने वाला है और उसका बड़प्पन भी सदैव स्थिर रहने वाला है । अनेक प्रकार की यह सृष्टि एवं माया की उत्पत्ति जिस प्रभु ने की है वह प्रभु इस सम्पूर्ण जगत को पैदा करके अपनी सृष्टि की संभाल भी स्वयं ही कर रहा है । जो उस प्रभु को भाता है वही वह करता है एवं कोई भी जीव उस प्रभु को आदेश नहीं दे सकता । वह प्रभु सारे संसार का सम्राट है एवं दरअसल सम्राटों का भी सम्राट है । अतः हे नानक, उसकी रज़ा में रहना ही उपयुक्त है ॥ १ ॥ आसा महला ॥ १॥ सुने सुनाए के आधार पर सभी उस परमात्मा को बहुत बड़ा कह देते हैं परन्तु हे प्रभु, तू कितना बड़ा है यह केवल तेरे साक्षात्कार के बाद ही कहा जा सकता है । तेरी बराबरी का अन्य कोई नहीं बताया जा सकता एवं तेरे स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता है । तेरे बड़प्पन को बताने वाले अंततः तुझमें ही समा जाते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे अनन्त प्रभु, तुम एक गहन समुद्र हो एवं तुम विशालतम् हृदय वाले होने के साथ–साथ अनन्त गुणों के स्वामी भी हो । तेरे विस्तार के बारे में कोई भी नहीं जानता ॥ १ ॥ रहाउ॥ समाधि में लीन बने रहने वाले अनेकों महान योगियों ने पूरी तरह से ध्यान लगाकर तेरी विशालता को जानने का प्रयत्न किया; अनेकों ज्ञानवान, ध्यानवान एवं विचारवान लोगों ने तुझे पाने एवं समझने का प्रयत्न किया परन्तु वे सब तेरे बड़प्पन का तिलमात्र अंश भी ना तो जान सके, ना ही बता सके ॥ २ ॥ सब प्रकार के सत्य, तप, अच्छाइयां, सिद्ध पुरुषों के बड़प्पन एवं उनकी सिद्धियां तेरी कृपा के बिना कभी भी संभव नहीं हो सकीं। जब तेरी कृपा से उपर्युक्त सब प्राप्त होता है तब रास्ते पर कोई भी रुकावट नहीं आती ॥ ३ ॥ तेरे गुणों के भण्डार पूर्ण रूप से भरे रहते हैं एवं इन गुणों को जानना और बताना किसी भी जीव की सामर्थ्य में नहीं है । हे प्रभु, जिसे तू गुणानुवाद का गुण देता है उसके रास्ते में रुकावट डालने के लिए किसी का भी ज़ोर नहीं चलता । हे नानक, वह नित्य प्रभु सब लोगों के क्रियाकलापों को संवारने वाला स्वयं ही है ॥ ४ ॥ २ ॥ आसा महला १॥ जैसे ही मैं उस परमात्मा का स्मरण करता हूँ मैं आध्यात्मिक तौर पर जीवित हो उठता हूं परन्तु ज्यों ही वह परमात्मा मुझे विस्मृत हो जाता है मैं मर जाता हूं । उस नित्य प्रभु के नाम का वर्णन अत्यन्त कठिन कार्य है । जिस व्यक्ति के मन में उस प्रभु नाम की भूख जग जाती है तो उस भूख के फलस्वरूप उसके सारे दुख दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे मेरी माँ, वह प्रभु मुझे कभी भी ना भूले क्योंकि वह प्रभु ही सच्चा साहिब है और उसका नाम भी सत्यस्वरूप है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उस नित्य प्रभु के नाम की अंशमात्र भी बड़ाई का बखान करते हुए जीव थक तो जाते हैं परन्तु उस परमात्मा की महानता के बारे में नहीं जान पाते । यदि सब मिल कर भी उस प्रभु के बड़प्पन का बखान करें फिर भी वह ना तो और बड़ा होता है और न ही उसकी विशालता में कोई कमी आती है ॥ २ ॥ वह प्रभु न तो कभी मरता है और न ही शोकाकुल होता है । वह सदैव जीवों को देता ही जाता है परन्तु उसके भण्डार कभी भी चुकते नहीं । उसका यही एक अद्वितीय गुण है कि उसके जैसा न तो कोई हुआ है और न ही होगा ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तू जैसा बड़ा स्वयं है वैसा ही बड़ा तेरा दान है । दिन

जिनि दिनु करि कै कीती राति ॥ खसमु विसारहि ते कमजाति ॥ नानक नावै बाझु सनाति ॥ ४ ॥ ३ ॥ रागु गूजरी महला ४ ॥ हरि के जन सतिगुर सतपुरखा बिनउ करउ गुर पासि ॥ हम कीरे किरम सतिगुर सरणाई करि दइआ नामु परगासि ॥ १ ॥ मेरे मीत गुरदेव मोकउ राम नामु परगासि ॥ गुरमति नामु मेरा प्रान सखाई हरि कीरति हमरी रहरासि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि जन के वड भाग वडेरे जिन हरि हरि सरधा हरि पिआस ॥ हरि हरि नामु मिलै त्रिपतासहि मिलि संगति गुण परगासि ॥ २ ॥ जिन हरि हरि हरि रसु नामु न पाइआ ते भागहीण जम पासि ॥ जो सतिगुर सरणि संगति नही आए ध्रिगु जीवे ध्रिगु जीवासि ॥ ३ ॥ जिन हरि जन सतिगुर संगति पाई तिन धुरि मसतकि लिखिआ लिखासि ॥ धनु धंनु सतसंगति जितु हरि रसु पाइआ मिलि जन नानक नामु परगासि ॥ ४ ॥ ४ ॥ रागु गूजरी महला ५ ॥ काहे रे मन चितवहि उदमु जा आहरि हरि जीउ परिआ ॥ सैल पथर महि जंत उपाए ता का रिजकु आगै करि धरिआ ॥ १ ॥ मेरे माधउ जी सतसंगति मिले सु तरिआ ॥ गुर परसादि परम पदु पाइआ सूके कासट हरिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जननि पिता लोक सुत बनिता कोइ न किस की धरिआ ॥ सिरि सिरि रिजकु संबाहे ठाकुरु काहे मन भउ करिआ ॥ २ ॥ ऊडे ऊडि आवै सै कोसा तिसु पाछै बचरे छरिआ ॥ तिन कवणु खलावै कवणु चुगावै मन महि सिमरनु करिआ ॥ ३ ॥ सभि निधान दस असट सिधान ठाकुर कर तल धरिआ ॥ जन नानक बलि बलि सद बलि जाईऐ तेरा अंतु न पारावरिआ ॥ ४ ॥ ५ ॥

रागु आसा महला ४ सो पुरखु

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सो पुरखु निरंजनु हरि पुरखु निरंजनु हरि अगमा अगम अपारा ॥ सभि धिआवहि सभि धिआवहि तुधु जी हरि सचे सिरजणहारा ॥ सभि जीअ तुमारे जी तूं जीआ का दातारा ॥ हरि धिआवहु संतहु जी सभि दूख विसारणहारा ॥ हरि आपे ठाकुरु हरि आपे सेवकु जी

बनाकर रात बनाने वाले उस स्वामी को जो भुला देते हैं उनका जीवन निम्न स्तर का हो जाता है और वास्तव में उस प्रभु के नाम से विहीन लोगों को ही हे नानक, नीच कहा जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ राग गूजरी महला ४ ॥ हे महापुरुष गुरु, हे प्रभु के प्यारे सद्गुरु मैं तेरे आगे प्रार्थना करता हूँ कि मेरे जैसे अनेकों ही तुच्छ जीव उस परमात्मा की शरण देख रहे हैं। कृपा कर मेरे हृदय में प्रभु नाम का प्रकाश पैदा कर दे । ॥ १ ॥ हे मेरे मित्र गुरु, मेरे हृदय में राम–नाम का प्रकाश कर दे । गुरु के द्वारा दी गई बुद्धि एवं मार्गदर्शन ही सदैव मेरे प्राणों के साथी बने रहें । प्रभु का गुणानुवाद मेरे जीवन के सफर की पूँजी बना रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के अनन्य सेवकों का बड़ा ऊँचा भाग्य है जिनके अन्दर प्रभु–नाम के लिए श्रद्धा है, तड़प है । उन्हें जब परमात्मा का नाम प्राप्त होता है तो वे पूर्णरूपेण तृप्त हो जाते हैं । 'संगत' में मिल बैठने से ही उनके अन्दर अनेकों गुण प्रकाशित हो उठते हैं ॥ २ ॥ परन्तु जिनको परमात्मा के नाम में रस नहीं आया, जिन्हें प्रभु नाम नहीं मिला वे भाग्यहीन हैं । वे यमपाश में पड़े हुए समझे जाने चाहिए और मौत का भय हमेशा ही उन पर सवार रहता है । जो गुरु की शरण में नहीं आते, जो सद्संगत में नहीं बैठते उन्हें धिक्कार है एवं उनका जीवन भी धिक्कार योग्य है ॥ ३ ॥ जिनको सद्गुरु एवं संगत प्राप्त हो चुकी है उनके माथे पर प्रारम्भ से ही अच्छे लेख लिखे हुए हैं । हे नानक ! सद्संगत धन्य है जिसमें सम्मिलित होकर प्रभु के नाम का आनन्द प्राप्त होता है और जहाँ सत्संगियों से मिलकर परमात्मा का नाम हृदय में आ बसता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ राग गूजरी महला५॥ हे मन तू क्यों चिन्ता में ग्रस्त है जबकि तेरे लिए तो परमात्मा सदा ही कार्यशील है । जिन जीवों को प्रभु ने चट्टानों एवं पत्थरों में भी पैदा किया है उनके भरण–पोषण का प्रबन्ध भी परमात्मा ने पहले से ही करके रखा है । हे मेरे प्रभु, जो व्यक्ति सद्संगत में रहते हैं वे ही व्यर्थ ही चिन्ताओं से बचे रहते हैं । गुरु की कृपा द्वारा जिसको इस अवस्था की प्राप्ति हो जाती है वह मानों इसी तरह से है जैसे सूखी लकड़ी हरी भरी हो जाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माता, पिता, पुत्र अन्य लोग पत्नि आदि कोई भी किसी का सहारा नहीं है । हे मन, तू क्यों डरता है ! पालन–पोषण करने वाला प्रभु प्रत्येक जीव को खुद ही उसका आहार देता है ॥ २ ॥ पक्षी सैंकड़ों मीलों से उड़ कर कहाँ से कहाँ पहुँच जाते हैं और उनके पीछे बच्चे अकेले ही छोड़े होते हैं; उनको कौन खिलाता है अथवा कौन चुगाता है । क्या कभी तुमने सोचा है कि उनका भरण–पोषण कौन करता है अर्थात् प्रभु ही सब की देख रेख करता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! संसार के सम्पूर्ण भण्डार एवं अठारहों सिद्धियां तेरी हथेली पर सदैव बनी रहती हैं । हे विनम्र नानक, ऐसे प्रभु पर सदा बलिहारी होता रह । हे प्रभु, तेरी कृपाओं का कोई पारावार नहीं जान सकता ॥ ४ ॥ ५ ॥

राग आसा महला ४ सो पुरखु १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

परमात्मा सारे जीवों में व्याप्त है परन्तु फिर भी माया के प्रभाव से ऊपर (निरंजन) है । वह अगम्य है एवं अनन्त है । हे नित्य एवं सब के कर्ता प्रभु, सभी जीव सदैव तेरा ही स्मरण एवं ध्यान करते हैं । हे प्रभु, सारे जीवों को तुमने ही उत्पन्न किया है एवं सब जीवों का दाता भी तू ही है । हे सन्तो, उस परमात्मा का ध्यान किया जाना चाहिए क्योंकि वह ही सारे दुःखों को हर लेने वाला है । वही सब का स्वामी है और वही स्वयं ही सेवक भी है ।

किआ नानक जंत विचारा ॥ १ ॥ तूं घट घट अंतरि सरब निरंतरि जी हरि एको पुरखु समाणा ॥ इकि दाते इकि भेखारी जी सभि तेरे चोज विडाणा ॥ तूं आपे दाता आपे भुगता जी हउ तुधु बिनु अवरु न जाणा ॥ तूं पारब्रहमु बेअंतु बेअंतु जी तेरे किआ गुण आखि वखाणा ॥ जो सेवहि जो सेवहि तुधु जी जनु नानकु तिन कुरबाणा ॥ २ ॥ हरि धिआवहि हरि धिआवहि तुधु जी से जन जुग महि सुखवासी ॥ से मुकतु से मुकतु भए जिन हरि धिआइआ जी तिन तूटी जम की फासी ॥ जिन निरभउ जिन हरि निरभउ धिआइआ जी तिन का भउ सभु गवासी ॥ जिन सेविआ जिन सेविआ मेरा हरि जी ते हरि हरि रूपि समासी ॥ से धंनु से धंनु जिन हरि धिआइआ जी जनु नानकु तिन बलि जासी ॥ ३ ॥ तेरी भगति तेरी भगति भंडार जी भरे बिअंत बेअंता ॥ तेरे भगत तेरे भगत सलाहनि तुधु जी हरि अनिक अनेक अनंता ॥ तेरी अनिक तेरी अनिक करहि हरि पूजा जी तपु तापहि जपहि बेअंता ॥ तेरे अनेक तेरे अनेक पड़हि बहु सिम्रिति सासत जी करि किरिआ खटु करम करंता ॥ से भगत से भगत भले जन नानक जी जो भावहि मेरे हरि भगवंता ॥ ४ ॥ तूं आदि पुरखु अपरंपरु करता जी तुधु जेवडु अवरु न कोई ॥ तूं जुगु जुगु एको सदा सदा तूं एको जी तूं निहचलु करता सोई ॥ तुधु आपे भावै सोई वरतै जी तूं आपे करहि सु होई ॥ तुधु आपे स्रिसटि सभ उपाई जी तुधु आपे सिरजि सभ गोई ॥ जनु नानकु गुण गावै करते के जी जो सभसै का जाणोई ॥ ५ ॥ १ ॥ आसा महला ४ ॥ तूं करता सचिआरु मैडा सांई ॥ जो तउ भावै सोई थीसी जो तूं देहि सोई हउ पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ तेरी तूं सभनी धिआइआ ॥ जिस नो क्रिपा करहि तिनि नाम रतनु पाइआ ॥ गुरमुखि लाधा मनमुखि गवाइआ ॥ तुधु आपि विछोड़िआ आपि मिलाइआ ॥ १ ॥ तूं दरीआउ सभ तुझ ही माहि ॥ तुझ बिनु दूजा कोई नाहि ॥ जीअ जंत सभि तेरा खेलु ॥ विजोगि मिलि विछुड़िआ संजोगी मेलु ॥ २ ॥ जिस नो तू जाणाइहि सोई जनु जाणै ॥ हरि गुण सद ही आखि वखाणै ॥ जिनि हरि सेविआ तिनि सुखु पाइआ ॥ सहजे ही हरि नामि

हे नानक, उसके बिना यह जीव बेचारे क्या हैं (अर्थात् कुछ भी नहीं) ॥ १ ॥ हे प्रभु तू घट घट में एक रस होकर मौजूद है; तू स्वयं ही सब में समाया हुआ है। फिर भी कई जीव दाता हैं और कई भिखारी–यह सब तेरे ही कौतुक हैं। तू स्वयं ही दाता एवं स्वयं ही दान लेने वाला है। तेरे सिवाय मैं अन्य किसी को नही जानता–मानता। हे परब्रह्म प्रभु, तू अनन्त है, तेरे गुणों का कथन मैं कैसे करूँ। जो तुझे स्मरण करते हैं यह दास नानक उन पर बलिहारी जाता है ॥ २ ॥ हे प्रभु, जो तेरा स्मरण करते हैं वे सदैव सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। जिन्होंने हरि नाम का स्मरण किया है वे सदा के लिए माया के बन्धनों से मुक्त हो जाते हैं एवं यम का फन्दा उनके लिए टूट जाता है। उस निर्भय प्रभु का स्मरण करने वालों के सभी प्रकार के डर दूर हो जाते हैं। जो प्यारे प्रभु का स्मरण करते हैं वे प्रभु के रूप में ही लीन हो जाते हैं। भाग्यशाली एवं धन्य हैं वे लोग जिन्होंने प्रभु नाम का स्मरण किया है। दास नानक उन पर बलिहारी जाता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तेरी भक्ति के भण्डार भरे पड़े हैं। अनेकों तेरे भक्त तेरा ही गुणानुवाद कर रहे हैं। अनन्त जीव तेरी पूजा कर रहे हैं एवं अनेक प्रकार की साधनाओं में लीन हैं। तेरे अनेकों ही सेवक समृतियों एवं शास्त्रों का पठ्न पाठन करते हुए षटकर्म कर रहे हैं। हे नानक ! वही भक्त भले हैं जो उस प्यारे प्रभु को अच्छे लगते हैं ॥ ४ ॥ हे प्रभु, तू सारे संसार का आदि कर्ता पुरुष एवं सर्वत्र व्यापक है। तेरे बराबर अन्य कोई नहीं। हर युग में एक तू ही है, तू ही एक सदा बना रहने वाला है और तू ही अटल रूप से सब का कर्त्ता है। जो तुझे अच्छा लगता है वही होता है और दरअसल जो तू करता है वही व्यवहार बन जाता है। तूने ही इस सृष्टि को उत्पन्न किया है और तू ही इसको लय करने वाला है। दास नानक उस कर्ता प्रभु का ही गुणानुवाद करता है जो सबके दिलों की जानता है ॥ ५ ॥ आसा महला ॥ ४ ॥ तू सबको पैदा करने वाला है, तू सदा बना रहने वाला मेरा स्वामी है। जो तुझे भाता है वही होता है और जो तू देता है वही मैं प्राप्त करता हूं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सारी सृष्टि तेरी है और सभी तेरा ही स्मरण करते हैं। जिस पर तेरी कृपा होती है वही तेरे नाम रूपी रत्न को प्राप्त करता है। गुरमुख तो इस रत्न को ढूँढ लेता है परन्तु मन के पीछे चलने वाला मनमुख प्राप्त करके भी इसे गंवा देता है। हे प्रभु, तू स्वयं ही जीवों को अपने से दूर कर देता है और स्वयं ही उन्हें अपने में लीन कर लेता है ॥ १ ॥ तू जीवन का विशालतम् समुद्र है और सब तुझ में ही लहरों की तरह विद्यमान् हैं। तेरे बिना अन्य दूसरा कोई भी नहीं है। जीव–जन्तु सब तेरा ही खेल है। वियुक्त जीव तुझसे बिछुड़कर फिर तुझमें ही संयुक्त होकर लीन हो जाते हैं ॥ २ ॥ हे प्रभु, जिसे तू सुमति प्रदान करता है वह ही इस सारे कौतुक को समझ पाता है और सदैव तेरा ही गुणानुवाद करता रहता है। जिसने भी परमात्मा का स्मरण किया है वास्तव में उसी ने ही आनन्द प्राप्त किया है और वही जीव सहज भाव से हरि नाम में लीन बना

समाइआ ॥ ३ ॥ तू आपे करता तेरा कीआ सभु होइ ॥ तुधु बिनु दूजा अवरु न कोइ ॥ तू करि करि वेखहि जाणहि सोइ ॥ जन नानक गुरमुखि परगटु होइ ॥ ४ ॥ २ ॥ आसा महला १ ॥ तितु सरवरड़ै भईले निवासा पाणी पावकु तिनहि कीआ ॥ पंकजु मोह पगु नही चालै हम देखा तह डूबीअले ॥ १ ॥ मन एकु न चेतसि मूड़ मना ॥ हरि बिसरत तेरे गुण गलिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना हउ जती सती नही पड़िआ मूरख मुगधा जनमु भइआ ॥ प्रणवति नानक तिन की सरणा जिन तू नाही वीसरिआ ॥ २ ॥ ३ ॥ आसा महला ५ ॥ भई परापति मानुख देहुरीआ ॥ गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥ अवरि काज तेरै कितै न काम ॥ मिलु साध संगति भजु केवल नाम ॥ १ ॥ सरंजामि लागु भवजल तरन कै ॥ जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जपु तपु संजमु धरमु न कमाइआ ॥ सेवा साध न जानिआ हरि राइआ ॥ कहु नानक हम नीच करंमा ॥ सरणि परे की राखहु सरमा ॥ २ ॥ ४ ॥

सोहिला रागु गउड़ी दीपकी महला १ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जै घरि कीरति आखीऐ करते का होइ बीचारो ॥ तितु घरि गावहु सोहिला सिवरिहु सिरजणहारो ॥ १ ॥ तुम गावहु मेरे निरभउ का सोहिला ॥ हउ वारी जितु सोहिलै सदा सुखु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नित नित जीअड़े समालीअनि देखैगा देवणहारु ॥ तेरे दानै कीमति ना पवै तिसु दाते कवणु सुमारु ॥ २ ॥ संबति साहा लिखिआ मिलि करि पावहु तेलु ॥ देहु सजण असीसड़ीआ जिउ होवै साहिब सिउ मेलु ॥ ३ ॥ घरि घरि एहो पाहुचा सदड़े नित पवंनि ॥ सदणहारा सिमरीऐ नानक से दिह आवंनि ॥ ४ ॥ १ ॥ रागु आसा महला १ ॥ छिअ घर छिअ गुर छिअ उपदेस ॥ गुरु गुरु एको वेस अनेक ॥ १ ॥ बाबा जै घरि करते कीरति होइ ॥ सो घरु राखु वडाई तोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विसुए चसिआ घड़ीआ पहरा थिती वारी माहु होआ ॥ सूरजु एको रुति

रहता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, केवल तू ही कर्ता है और तेरा किया हुआ ही सब कुछ होता है । तेरे बिना अन्य दूसरा कोई भी नहीं है । तू ही जीवों को पैदा कर उनकी देखभाल करता है । हे नानक, जो व्यक्ति गुरमुख अर्थात गुरु की ओर उन्मुख हो जाता है उसके अन्दर परमात्मा प्रकट हो जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ आसा महला १ ॥ इस जीव का ऐसे भयानक सरोवर में निवास है जिसमें उस प्रभु ने पानी के स्थान पर (तृष्णा रूपी) अग्नि पैदा कर रखी है । मोह रूपी कीचड़ उसमें भरा हुआ है जिससे पाँव आगे की ओर नहीं चलते और हमारे देखते ही देखते अनेकों व्यक्ति इस (संसार रूपी) सरोवर में डूबते चले जा रहे हैं ॥ १ ॥ हे मूढ़ मन, तू एक परमात्मा का स्मरण नहीं करता और तेरे विस्मरण ने तेरे अन्दर के गुणों को नष्ट कर दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, ना तो मैं यति हूँ, ना ही सत्यवादी हूँ, ना ही मैं पढ़ा लिखा हूँ; मेरा जीवन तो मूर्ख एवं मुग्ध व्यक्तियों जैसा बना हुआ है । नानक प्रार्थना करता है कि हे प्रभु, मुझे उन लोगों की शरण में बनाए रख जिन्होंने तुझे नहीं भुलाया है ॥ २ ॥ ३ ॥ आसा महला ५ ॥ हे जीव, तुझे मनुष्य का सुन्दर शरीर प्राप्त हुआ है और परमात्मा में लीन होने का यही एक सुअवसर है । अन्य सभी कार्य जिनमें तू लीन है कुछ भी तेरे काम आने वाले नहीं हैं । तू सद्संगत में मिल कर बैठ और केवल परमात्मा के नाम का ही स्मरण किया कर ॥ १ ॥ हे जीव, संसार समुद्र से पार जाने के उपक्रम में तू जुट जा । माया के बन्धनों में पड़े रहकर तेरा मानव जन्म व्यर्थ ही जा रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू प्रभु का स्मरण नहीं करता, ना तू उद्यमशील बनता है और ना ही तू मन को विकारों की तरफ से रोकने का अर्थात् संयम धारण करने का कार्य करता है । ना ही तू धर्म की कमाई करता है और ना ही सद्पुरुषों की सेवा करके उस परमात्मा रूपी राजा को जानने के लिए प्रयत्नशील बनता है । दास नानक यह कहता है कि हम सभी जीव नीच करम करने वाले बने हुए हैं । हे प्रभु ! हम तेरी शरण में हैं तू हम शरणागतों की लाज रख ॥ २ ॥ ४ ॥

सोहिला (स्तुति) रागु गउड़ी दीपकी महला १ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जिस घर में परमात्मा का गुणानुवाद और उस कर्ता के गुणों का विचार किया जाता है उसी घर (सद्संगत) में हे जीव, तू प्रभु मिलाप के लिए गीत गाया कर और उस सृजनहार को स्मरण किया कर। तू उस निर्भय (प्रभु) के ही गुण गायन किया कर । मैं उस गुणानुवाद पर बलिहारी जाता हूं जिसके कारण सदा आनन्द प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ॥ जिस मालिक द्वारा सदा ही जीवों को संभाला जा रहा है वही दाता सदा देता रहेगा । जब उसके उपहारों का मूल्य नहीं आंका जा सकता तो उस दाता के पारावार का अनुमान कहां संभव है ॥ २ ॥ हे जीव रूपी नवयौवना, (संसार छोड़कर) उस प्रभु पति से मिलने का संवत् एवं तिथि तो निर्धारित है । तू यह अरदास (प्रार्थना) कर कि ऐ मेरी सहेलियो (सत्संगियो), सब मिल कर मुझे (प्रेम का) उबटन आदि लगाओ और यह भी शुभकामनाएं दो कि प्रभु–पति से मेरा सुखद मिलाप हो सके ॥ ३ ॥ प्रत्येक घर में जीव–स्त्री के साथ यही घटने वाला है और रोज़ इस प्रकार लेने ले जाने के लिए संदेश आ रहे हैं । अपने पास बुला लेने वाले प्रभु का सदैव स्मरण करते रहना चाहिए क्योंकि हे नानक, हर एक के लिए वह दिन आने वाला है॥४॥१॥ रागु आसा महला १॥ छः शास्त्र हैं और छः ही उनके प्रणेता आचार्य हैं। इनके सिद्धान्त भी छः हैं परन्तु इन सभी (आचार्यों) का गुरु भी एक (ज्ञान) ही है । हे जीव, जिस धर्म पुस्तक (शास्त्र) में भी कर्ता प्रभु का गुणानुवाद होता है तू उसे ही अपने व्यवहार का आधार बना ले; इसी में तेरा बड़प्पन है अर्थात् जीवन को उत्तम बनाने के लिए ज्ञान कहीं से भी मिले उसका तिरस्कार मत कर ॥१॥रहाउ॥ जैसे निमेष, चसा, घड़ी, प्रहर, तिथियां, वार, महीने ऋतुएं आदि तो कई हैं परन्तु इन सबका (सिरमौर नियंता) सूर्य तो एक ही है । वैसे ही

अनेक ॥ नानक करते के केते वेस ॥ २ ॥ २ ॥ रागु धनासरी महला १ ॥ गगन मै थालु रवि चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती ॥ धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती ॥ १ ॥ कैसी आरती होइ ॥ भव खंडना तेरी आरती ॥ अनहता सबद वाजंत भेरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि कउ सहस मूरति नना एक तुोही ॥ सहस पद बिमल नन एक पद गंध बिनु सहस तव गंध इव चलत मोही ॥ २ ॥ सभ महि जोति जोति है सोइ ॥ तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥ गुर साखी जोति परगटु होइ ॥ जो तिसु भावै सु आरती होइ ॥ ३ ॥ हरि चरण कवल मकरंद लोभित मनो अनदिनुो मोहि आही पिआसा ॥ क्रिपा जलु देहि नानक सारिंग कउ होइ जा ते तेरै नाइ वासा ॥ ४ ॥ ३ ॥ रागु गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ कामि करोधि नगरु बहु भरिआ मिलि साधू खंडल खंडा हे ॥ पूरबि लिखत लिखे गुरु पाइआ मनि हरि लिव मंडल मंडा हे ॥ १ ॥ करि साधू अंजुली पुनु वडा हे ॥ करि डंडउत पुनु वडा हे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साकत हरि रस सादु न जाणिआ तिन अंतरि हउमै कंडा हे ॥ जिउ जिउ चलहि चुभै दुखु पावहि जमकालु सहहि सिरि डंडा हे ॥ २ ॥ हरि जन हरि हरि नामि समाणे दुखु जनम मरण भव खंडा हे ॥ अबिनासी पुरखु पाइआ परमेसरु बहु सोभ खंड ब्रहमंडा हे ॥ ३ ॥ हम गरीब मसकीन प्रभ तेरे हरि राखु राखु वड वडा हे ॥ जन नानक नामु अधारु टेक है हरि नामे ही सुखु मंडा हे ॥ ४ ॥ ४ ॥ रागु गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ करउ बेनंती सुणहु मेरे मीता संत टहल की बेला ॥ ईहा खाटि चलहु हरि लाहा आगै बसनु सुहेला ॥ १ ॥ अउध घटै दिनसु रैणारे ॥ मन गुर मिलि काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु संसारु बिकारु संसे महि तरिओ ब्रहम गिआनी ॥ जिसहि जगाइ पीआवै इहु रसु अकथ कथा तिनि जानी ॥ २ ॥ जा कउ आए सोई बिहाझहु हरि गुर ते मनहि बसेरा ॥ निज घरि महलु पावहु सुख सहजे बहुरि न होइगो फेरा ॥ ३ ॥ अंतरजामी पुरख बिधाते सरधा मन की पूरे ॥ नानक दासु इहै सुखु मागै मोकउ करि संतन की धूरे ॥ ४ ॥ ५ ॥

हे नानक, कर्ता के ये सारे सिद्धान्त (जो विभिन्न शास्त्रों में दिए हैं) विभिन्न स्वरूपों में उसी का प्रकटीकरण हैं ॥ २ ॥ २ ॥ राग धनासरी महला ॥ १ ॥ यह सारा आकाश एक थाल है जिसमें सूर्य और चन्द्रमा दीपक है तथा तारागण मानो मोती रखे हुए हैं । मलय पर्वत से आने वाली हवा धूप बत्ती है एवं पवन चंवर डुला रही है; सारी वनस्पति मानो प्रभु की आरती के लिए फूल अर्पण कर रही है ॥ १ ॥ जीवों के जन्म मरण का नाश करने वाले हे प्रभु यह कैसी सुन्दर आरती स्वतः ही हो रही है । सर्वव्यापक अनहद शब्द रूपी जीवन का सूत्र मानो तेरी आरती के लिए नगाड़ों की ध्वनि दे रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरे हजारों ही नेत्र हैं परन्तु फिर भी तेरा कोई नेत्र नहीं। हजारों ही तेरे (जीव रूपी) आकार हैं परन्तु फिर भी तेरा कोई आकार नहीं है । हजारों ही तेरे सुन्दर पाँव हैं परन्तु हे निराकार प्रभु तेरा एक भी पैर नहीं । इसी प्रकार तेरे हजारों नाक हैं परन्तु फिर भी गन्ध लेने के लिए तेरा कोई भी नाक नहीं है । तेरे ऐसे ही कौतुकों ने मुझे आश्चर्य में डाला हुआ है ॥ २ ॥ सभी जीवों में उस एक ही परमात्मा की ज्योति कार्यशील है । उस ज्योति के प्रकाश के कारण ही सभी जीव (समूयक बुद्धि से) प्रकाशित हैं। परन्तु इस ज्योति का ज्ञान गुरु की शिक्षा के कारण ही हो पाता है । उस सर्वव्यापक परम ज्योति की यह ही आरती है कि जो कुछ उसकी रज़ा में हो रहा है वह जीव को भला लगे अर्थात परमात्मा के आदेश को रज़ा के रूप में मानना ही प्रभु की आरती करना है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तेरे चरण रूपी कमल के रस के लिए मेरा मन सदैव पिपासित बना रहता है । कृपा कर और नानक पपीहे को अपनी कृपा का जल प्रदान कर ताकि मैं तेरे नाम में ही टिका रह सकूँ ॥४॥३॥ रागु गउड़ी पूरबी महला४॥ मनुष्य का शरीर रूपी नगर काम और क्रोध के साथ भरा रहता है । गुरु के माध्यम से ही काम और क्रोध का भेदन किया जा सकता है । पूर्व जन्मों में किये हुए कर्मों के संयोगवश गुरु मिल जाता है और मन में परमात्मा की लौ लग जाती है ॥ १ ॥ हे भाई, गुरु के आगे हाथ जोड़ क्योंकि यही भला काम है । गुरु के आगे नतमस्तक हो जा क्योंकि यही नेक काम है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो लोग परमात्मा से टूटे हुए हैं वे उसके नाम के रस को समझ नहीं सकते क्योंकि उनके मन में अहंकार रूपी काँटा गड़ा हुआ होता है । जैसे जैसे वे चलते हैं अर्थात सांसारिक कार्य व्यवहार में लीन होते हैं यह अहं का काँटा और अधिक चुभना शुरू हो जाता है । वे दुख पाते हैं और अपने सिर पर सदा ही यमदंड के डर को झेलते रहते हैं ॥ २ ॥ दूसरी ओर परमात्मा के प्यारे जीव परमात्मा के नाम में लीन बने रहते हैं । उनका संसार का आवागमन का दुःख कट जाता है । उन्हें अविनाशी एवं सर्वव्यापक परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है और विश्व के सभी खंडों–ब्रह्मांडों में उनकी शोभा फैल जाती है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, हम तेरे द्वार पर खड़े बहुत ही तुच्छ जीव हैं; तू ही सबसे बड़ा सहायक है । तू विकारों से हमारी रक्षा कर । हे प्रभु! तेरे दास नानक को तेरे नाम का ही आसरा है । तेरा नाम ही मेरी एक मात्र टेक है क्योंकि तेरे नाम में लीन होने पर ही सुख प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ४॥ रागु गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ हे मेरे मित्रो, मेरी विनती को सुनो कि (मानव जीवन) शांत पुरुषों की सेवा करने का अवसर है । इस जन्म में प्रभु के नाम का लाभ प्राप्त कर लोगे तो परलोक में रहना सुखद हो जाएगा ॥ १ ॥ दिन रात आयु घटती जा रही है । हे मेरे मन, गुरु को मिलकर मानव जीवन के उद्देश्य को प्राप्त कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह जगत् विकारों से भरा हुआ है और यहाँ सभी जीव संशयों में डूब उतरा रहे हैं । इस अवस्था से वही निकल पाता है जिसने परमात्मा का ज्ञान पाकर उससे जान पहचान बना ली है । जिसको प्रभु स्वयं जगाकर नाम रूपी अमृत का पान कराता है उसने दरअसल अवर्णनीय प्रभु की बातें अर्थात उसका गुणानुवाद करने की विधि सीख ली है ॥ २॥ हे जीव, जिस लाभ के लिए तुम इस संसार में आए हो उसी का ही कार्य–व्यापार करो । वह हरिनाम गुरु के माध्यम से ही मन में टिकता है । यदि गुरु की शरण में आओगे तो आध्यात्मिक आनन्द एवं स्थिरता को परमात्मा के निवास के रूप में अंदर ही प्राप्त कर लोगे । पुनः आवागमन का चक्कर समाप्त हो जाएगा ॥ ३ ॥ हे अन्तर्यामी प्रभु, मेरे मन की इच्छा पूरी करो । दास नानक यही सुख माँगता है कि मुझे शांत पुरुषों के चरणों की धूलि बना दो ॥४॥ ५॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

रागु सिरीरागु महला पहिला १ घरु १ ॥

मोती त मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ ॥ कसतूरि कुंगू अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ ॥ मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥ १ ॥ हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ ॥ मै आपणा गुरु पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धरती त हीरे लाल जड़ती पलघि लाल जड़ाउ ॥ मोहणी मुखि मणी सोहै करे रंगि पसाउ ॥ मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥ २ ॥ सिधु होवा सिधि लाई रिधि आखा आउ ॥ गुपतु परगटु होइ बैसा लोकु राखै भाउ ॥ मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥ ३ ॥ सुलतानु होवा मेलि लसकर तखति राखा पाउ ॥ हुकमु हासलु करी बैठा नानका सभ वाउ ॥ मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥ ४ ॥ १ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ कोटि कोटी मेरी आरजा पवणु पीअणु अपिआउ ॥ चंदु सूरजु दुइ गुफै न देखा सुपनै सउण न थाउ ॥ भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ ॥ १ ॥ साचा निरंकारु निज थाइ ॥ सुणि सुणि आखणु आखणा जे भावै करे तमाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुसा कटीआ वार वार पीसणि पीसा पाइ ॥ अगी सेती जालीआ भसम सेती रलि जाउ ॥ भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ ॥ २ ॥ पंखी होइ कै जे भवा सै असमानी जाउ ॥ नदरी किसै न आवऊ ना किछु पीआ न खाउ ॥ भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु

੧ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

राग़ु सिरीरागु महला १ घरु १ ॥

यदि मोतियों के महल बन जाएं और उन महलों को रत्नों से जड़ित कर दिया जाए तथा कस्तूरी, केसर, चन्दन आदि से उन्हें लीप कर प्रसन्नता प्राप्त हो; इन सब को देखकर यदि परमात्मा का नाम चित्त से भूल जाए तो ये सब व्यर्थ हैं ॥ १ ॥ उस प्रभु के बिना प्राण जल जाते हैं और मैंने अपने गुरु को पूछ लिया है कि प्रभु की शरण के बिना अन्य कोई स्थान नहीं है (जहाँ यह जन्म–मरण समाप्त हो सके) ॥ १ ॥ यदि धरती को हीरे लालों से जड़ दिया जाए और पलंगों पर भी लाल लगा दिए जाएं, यदि मेरे सामने सुन्दर माथे पर मणि शोभायमान् करने वाली सुन्दर स्त्रियां विभिन्न प्रकार के हाव–भाव प्रस्तुत करें; इन सब को देख कर यदि परमात्मा का नाम विस्मृत हो जाए तो ये सब व्यर्थ हैं ॥ २ ॥ यदि मैं पहुँचा हुआ योगी बन जाऊँ और योग समाधि के फलस्वरूप अनेकों ऋद्धियों सिद्धियों को वश में कर लूँ; योग शक्ति से मैं कभी अलोप हो जाऊँ और फिर सामने आ जाऊँ और सारा संसार मेरा आदर करे; परन्तु यदि परमात्मा का नाम विस्मृत हो जाए तो ये सब व्यर्थ हैं ॥ ३ ॥ यदि मैं फौज इकट्ठी करके बादशाह बन जाऊँ और तख्त पर बैठ कर आदेशों का पालन कराऊँ परन्तु हे नानक, यह सब व्यर्थ है यदि मेरे चित्त से परमात्मा का नाम विस्मृत हो जाए ॥ ४ ॥ १ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ यदि मेरी आयु करोड़ों वर्ष की हो जाए, यदि मेरा आहार पवन हो जाए, यदि मैं ऐसी गुफा में भी बैठ जाऊँ जहाँ चन्द्र और सूर्य दोनों ही दिखाई न दें और स्वप्न में भी मैं ना सोऊं तो भी हे प्रभु, मैं तेरी कीमत नहीं आंक सकता और मैं तुच्छ भला तेरी क्या बड़ाई कर सकता हूँ ॥ १ ॥ सत्‌स्वरूप निराकार परमात्मा अपने आप में ही स्थित है। सब जीव एक दूसरे से सुन–सुन कर ही उसके बारे में कथन करते हैं (परन्तु वास्तव में उसके विस्तार को कोई नहीं बता सकता)। परमात्मा ही यदि चाहे तो जीव में गुणानुवाद की इच्छा पैदा कर देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि मैं घास की तरह काट डाला जाऊँ और चक्की में पिसान की तरह पीसा जाऊँ; आग से जला दिया जाऊँ और धूल में भी मिला दिया जाऊँ तो भी तेरी कीमत का मैं बखान नहीं कर सकता और वास्तव में मैं तुच्छ जीव तेरे बड़प्पन का बखान करने के योग्य नहीं हूँ ॥ २ ॥ यदि मैं पक्षी बन के उड़ सकूँ और सैंकड़ों आकाशों तक पहुँच जाऊँ; मैं किसी को दिखाई भी न दे सकूँ और न ही कुछ खाऊँ पीऊँ, तब भी हे प्रभु मैं तेरे मर्म को समझने में असमर्थ हूँ । मैं तुच्छ, तेरा बड़प्पन

आखा नाउ ॥ ३ ॥ नानक कागद लख मणा पड़ि पड़ि कीचै भाउ ॥ मसू तोटि न आवई लेखणि पउणु चलाउ ॥ भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ ॥ ४ ॥ २ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ लेखै बोलणु बोलणा लेखै खाणा खाउ ॥ लेखै वाट चलाईआ लेखै सुणि वेखाउ ॥ लेखै साह लवाईअहि पड़े कि पुछण जाउ ॥ १ ॥ बाबा माइआ रचना धोहु ॥ अंधै नामु विसारिआ ना तिसु एह न ओहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीवण मरणा जाइ कै एथै खाजै कालि ॥ जिथै बहि समझाईऐ तिथै कोइ न चलिओ नालि ॥ रोवण वाले जेतड़े सभि बंनहि पंड परालि ॥ २ ॥ सभु को आखै बहुतु बहुतु घटि न आखै कोइ ॥ कीमति किनै न पाईआ कहणि न वडा होइ ॥ साचा साहबु एकु तू होरि जीआ केते लोअ ॥ ३ ॥ नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥ नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस ॥ जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥ ४ ॥ ३ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ लबु कुता कूड़ु चूहड़ा ठगि खाधा मुरदारु ॥ पर निंदा पर मलु मुख सुधी अगनि क्रोधु चंडालु ॥ रस कस आपु सलाहणा ए करम मेरे करतार ॥ १ ॥ बाबा बोलीऐ पति होइ ॥ ऊतम से दरि ऊतम कहीअहि नीच करम बहि रोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रसु सुइना रसु रुपा कामणि रसु परमल की वासु ॥ रसु घोड़े रसु सेजा मंदर रसु मीठा रसु मासु ॥ एते रस सरीर के कै घटि नाम निवासु ॥ २ ॥ जितु बोलिऐ पति पाईऐ सो बोलिआ परवाणु ॥ फिका बोलि विगुचणा सुणि मूरख मन अजाण ॥ जो तिसु भावहि से भले होरि कि कहण वखाण ॥ ३ ॥ तिन मति तिन पति तिन धनु पलै जिन हिरदै रहिआ समाइ ॥ तिन का किआ सालाहणा अवर सुआलिउ काइ ॥ नानक नदरी बाहरे राचहि दानि न नाइ ॥ ४ ॥ ४ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ अमलु गलोला कूड़ का दिता देवणहारि ॥ मती मरणु विसारिआ खुसी कीती दिन चारि ॥ सचु मिलिआ तिन सोफीआ राखण कउ दरवारु ॥ १ ॥ नानक साचे कउ सचु जाणु ॥ जितु सेविऐ सुखु पाईऐ तेरी दरगह चलै माणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचु सरा गुड़ बाहरा

बताने के योग्य ही नहीं हूं ॥ ३ ॥ नानक कहता है कि यदि मेरे पास उस प्रभु के बड़प्पन के बखान से भरे हुए लाखों मन कागज हों और मैं उनको बार–बार विचार–विचार कर भी पढ़ लूँ, तेरे बड़प्पन को लिखने के लिए यदि मैं हवा को कलम बना लूँ और मेरे पास स्याही का भी अक्षय भण्डार हो तब भी मैं तेरे मर्म को समझने में असमर्थ हूँ; मैं तुच्छ जीव तेरा बड़प्पन बताने के योग्य नहीं हूँ ॥ ४ ॥ २ ॥ सिरी रागु महला १॥ यह बात हर व्यक्ति जानता है कि जीवन किसी हिसाब से चल रहा है, हमारी सांसें भी निश्चित समय के लिए चल रही हैं, हमारी बोल चाल, हमारा खाना, सब एक निश्चित् समय के लिए ही है । जिस जीवन यात्रा पर हम लोग निकले हुए हैं यह यात्रा भी एक निश्चित समय के लिए ही है । हमारा देखना, सुनना एक निश्चित समय के लिए है यह तथ्य बहुत ही स्पष्ट है और इसे जानने के लिए किसी विद्वान को पूछने की ज़रुरत नहीं ॥ १ ॥ हे भाई! माया का खेल चार दिन का खेल है परन्तु इस खेल में अन्धों की तरह व्यवहार करने वाले मनुष्य ने प्रभु नाम विस्मृत कर दिया है । ना तो माया ही उसका साथ देती है और न ही उसे प्रभु का नाम प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जन्म लेकर मरना पड़ता है और जीव कुछ समय के लिए ही यहाँ रहते हुए भी खाने–पीने के धन्धे में ही लगा रहता है । जहां बैठकर इस सबका लेखा–जोखा होता है वहां तक कोई भी साथ चलकर नहीं पहुँचता । पीछे जितने रोने वाले होते हैं वे सब व्यर्थ में पड़े हुए पुआल की तरह अपनी–अपनी बातें किए जाते हैं पर उन सबसे कोई लाभ नहीं होता ॥ २ ॥ प्रत्येक जीव और अधिक की बातें करता है । कोई भी थोड़ा नहीं माँगता परन्तु तेरी वास्तविक कीमत कोई नहीं आंक पाता क्योंकि केवल कहने मात्र से कोई बड़ा नहीं हो जाता । अनेक लोकों के जीव–जन्तु नाशवान हैं केवल एक तू ही सदा स्थिर बना रहने वाला है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! मैं तथा–कथित नीच जाति वालों में से हूँ एवं वास्तव में नीचों से भी नीच हूँ । मैं यही चाहता हूँ कि ऐसे लोगों के साथ ही मेरा साथ बना रहे क्योंकि मैं तथा–कथित बड़े लोगों के साथ चलने की इच्छा नहीं रखता । तेरी कृपा–दृष्टि केवल वहीं होती है जहाँ गरीबों को जाना माना जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ हे प्रभु ! खाने का लालच मेरे अन्दर लोभ रूपी कुत्ता है, झूठ मेरे अन्दर भंगी है जिसने मुझे बहुत निम्न स्तर पर पहुँचा दिया है । दूसरे को ठगकर अपना पेट भरना मेरे अन्दर पड़ा हुआ मुर्दा है । परायी निन्दा मेरे मुँह में पराये मल की तरह है और क्रोध की आग मेरे अन्दर चाण्डाल बनी बैठी है । इन सब के अतिरिक्त मुझे कई प्रकार के खाने पीने के चस्के हैं और हे प्रभु, मैं अपनी बड़ाई आप ही करता रहता हूँ ॥ १ ॥ हे भाई ! आदर दिलाने वाले बोल ही बोले जाने चाहिए । वही लोग अच्छे हैं जो प्रभु के समक्ष अच्छे माने जाते हैं अन्यथा बुरे कर्मों वाले लोग रोते ही रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोने–चाँदी का लालच, सुन्दर स्त्री का लालच, सुन्दर सुगंध का लालच, घोड़ों का शौक, सुन्दर पलंग एवं महलों का लालच, स्वादिष्ट पदार्थ एवं मांस का चस्का आदि यदि मनुष्य को लगे हुए हों तो भला परमात्मा के नाम का ठिकाना उसके हृदय में कैसे हो सकता है ॥ २ ॥ वही बोल शालीन हैं जिसके बोलने से आदर प्राप्त होता है । हे मूर्ख मन, फीका बोल बोलने से दुश्वारियां बढ़ती जाती हैं । प्रभु के गुणानुवाद के बिना अन्य सब बातें व्यर्थ हैं । जो उस प्रभु को प्यारे लगते हैं वे ही भले लोग हैं ॥ ३ ॥ जिनके हृदय में प्रभु समाया रहता है वे ही बुद्धिमान, आदरणीय एवं धनवान हैं । ऐसे भले लोगों की प्रशंसा नहीं की जा सकती; उनके जैसा सुन्दर अन्य कौन है । हे नानक ! प्रभु की कृपा–दृष्टि से विहीन् व्यक्ति उसके नाम के साथ नहीं जुड़ते अलबत्ता उसके दिए हुए धन पदार्थों में ही लिप्त बने रहते हैं ॥४॥४॥ सिरी रागु महला १ ॥ देने वाले प्रभु ने जीव को जगत् का मोह रूपी अफीम का गोला दिया हुआ है । इस अफीम को खाकर मस्त हुए जीव ने मौत भुला दी है और चार दिन की रंगरलियों में जीव लीन है । झूठ और मोह के नशे से दूर रहने वाले लोगों को ही सत्य प्राप्त होता है और वे ही प्रभु के दरबार में अपना सम्मान बनाए रखते हैं ॥१॥ हे नानक ! उस सदा बने रहने वाले प्रभु को ही अन्तिम सत्य मान । उसी का स्मरण करने से सुख मिलता है और उस प्रभु के दरबार में सम्मान प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सत्य रूपी शराब गुड़ के बिना ही तैयार

जिसु विचि सचा नाउ ॥ सुणहि वखाणहि जेतड़े हउ तिन बलिहारै जाउ ॥ ता मनु खीवा जाणीऐ जा महली पाए थाउ ॥ २ ॥ नाउ नीरु चंगिआईआ सतु परमलु तनि वासु ॥ ता मुखु होवै उजला लख दाती इक दाति ॥ दूख तिसै पहि आखीअहि सूख जिसै ही पासि ॥ ३ ॥ सो किउ मनहु विसारीऐ जा के जीअ पराण ॥ तिसु विणु सभु अपवित्रु है जेता पैनणु खाणु ॥ होरि गलां सभि कूड़ीआ तुधु भावै परवाणु ॥ ४ ॥ ५ ॥ सिरीरागु महलु १ ॥ जालि मोहु घसि मसु करि मति कागदु करि सारु ॥ भाउ कलम करि चितु लेखारी गुर पुछि लिखु बीचारु ॥ लिखु नामु सालाह लिखु लिखु अंतु न पारावारु ॥ १ ॥ बाबा एहु लेखा लिखि जाणु ॥ जिथै लेखा मंगीऐ तिथै होइ सचा नीसाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिथै मिलहि वडिआईआ सद खुसीआ सद चाउ ॥ तिन मुखि टिके निकलहि जिन मनि सचा नाउ ॥ करमि मिलै ता पाईऐ नाही गली वाउ दुआउ ॥ २ ॥ इकि आवहि इकि जाहि उठि रखीअहि नाव सलार ॥ इकि उपाए मंगते इकना वडे दरवार ॥ अगै गइआ जाणीऐ विणु नावै वेकार ॥ ३ ॥ भै तेरै डरु अगला खपि खपि छिजै देह ॥ नाव जिना सुलतान खान होदे डिठे खेह ॥ नानक उठी चलिआ सभि कूड़े तुटे नेह ॥ ४ ॥ ६ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ सभि रस मिठे मंनिऐ सुणिऐ सालोणे ॥ खट तुरसी मुखि बोलणा मारण नाद कीए ॥ छतीह अंम्रित भाउ एकु जा कउ नदरि करेइ ॥ १ ॥ बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥ जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रता पैनणु मनु रता सुपेदी सतु दानु ॥ नीली सिआही कदा करणी पहिरणु पैर धिआनु ॥ कमरबंदु संतोख का धनु जोबनु तेरा नामु ॥ २ ॥ बाबा होरु पैनणु खुसी खुआरु ॥ जितु पैधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घोड़े पाखर सुइने साखति बूझणु तेरी वाट ॥ तरकस तीर कमाण सांग तेगबंद गुण धातु ॥ वाजा नेजा पति सिउ परगटु करमु तेरा मेरी जाति ॥ ३ ॥ बाबा होरु चड़णा खुसी खुआरु ॥ जितु चड़िऐ तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घर मंदर खुसी नाम की नदरि तेरी परवारु ॥

होती है क्योंकि उसमें प्रभु का नाम होता है। मैं उन लोगों पर बलिहारी जाता हूँ जो प्रभु नाम सुनते एवं उसका उच्चारण करते हैं। मन को वास्तविक रूप से मस्त हुआ तभी माना जाना चाहिए जब यह प्रभु के स्मरण में पूरी तरह टिक जाए; तभी उसे परमात्मा का सानिध्य प्राप्त होता है ॥ २ ॥ परमात्मा के नाम का गुणानुवाद अन्य सब उपलब्धियों से बढ़कर है। प्रभु नाम एवं उसका गुणानुवाद ही वह जल है जिससे मुँह उजला बना रहता है। गुणानुवाद के फलस्वरूप बना हुआ स्वच्छ आचरण मानों शरीर पर लगाई हुई सुगन्धि है जिससे सुख प्राप्त होता है। उस परमात्मा को ही अपने दुख की गाथा सुनाई जानी चाहिए ॥ ३ ॥ जिस प्रभु के दिए हुए प्राण हैं उसे कभी भी मन से भुलाना नहीं चाहिए। प्रभु को भुला देने से खाने पहिनने का जितना भी उद्यम है वह मन को और मलीन कर देता है। अन्य सब बातें जीव को इस नाशवान् संसार के मोह में उलझाती हैं। हे प्रभु, वही उद्यम उचित है जो तेरे साथ प्रेम बढ़ाता है ॥ ४ ॥ ५॥ सिरीरागु महला १ ॥ हे जीव ! मोह को जलाकर उसकी स्याही बना और अपनी बुद्धि को सुन्दर कागज के रूप में ढाल। प्रेम को कलम और अपने मन को लेखक बना तथा गुरु की शिक्षा के माध्यम से परमात्मा के गुणों के विचारों को लिख। प्रभु का नाम लिख, प्रभु का गुणानुवाद लिख और यह भी लिख कि उस प्रभु का कोई पारावार नहीं है ॥ १ ॥ हे जीव, यह लिखने की कला सीख ताकि जहां भी तुझसे हिसाब माँगा जाये तू ततकाल हिसाब दे सके। तेरी यही सच्चाई वास्तव में तेरी राहदारी का निशान बनेगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन लोगों के मन में प्रभु का सदा स्थिर नाम बसता है उनके माथे पर स्वागत के टीके लगते हैं और उनको चिरंतन प्रसन्नता एवं उल्लास प्राप्त होता है। परन्तु प्रभु का नाम प्रभु की कृपा से ही प्राप्त होता है; निरर्थक बातों से उसका कोई सरोकार नहीं ॥ २ ॥ संसार में अनेकों जीव आते और चले जाते हैं, कई अपने आपको सरदार के तौर पर जनवाते हैं, कई भिखारी ही पैदा हुए हैं और कईयों के बड़े–बड़े दरबार लगते हैं। परन्तु जीवन–यात्रा समाप्त होने पर ही समझ आती है कि जिन्होंने परमात्मा के नाम का स्मरण नहीं किया वे जीवन को व्यर्थ ही गँवा गये हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तेरे डर के कारण मुझे हमेशा ही चिन्ता बनी रहती है। मेरा शरीर भी छीजता जाता है क्योंकि मैंने देखा है कि जो बड़े–बड़े खान और सुलतान थे वे भी अन्ततः मिट्टी में ही मिल गये हैं। हे नानक, सबको यहां से कूच करना पड़ा है और सबके झूठे मोह प्यार अन्ततः टूट गये हैं ॥ ४ ॥ ६ ॥ सभी रस मीठे एवं नमकीन (स्वादिष्ट) हैं यदि जीव की सुरति हरि नाम में लगने लग जाए। प्रभु के नाम का उच्चारण मुँह में खट्टे स्वाद वाला पदार्थ समझो और परमात्मा के गुणानुवाद को मसाले के रूप में मानना चाहिए। परमात्मा के साथ एक–रस प्रेम छत्तीस प्रकार के स्वादिष्ट भोजन के रूप में माना जाना चाहिए। परन्तु यह तभी सम्भव है जब प्रभु की कृपा दृष्टि बनी रहे ॥ १ ॥ हे भाई, जिन पदार्थों को खाने से शरीर रोगी हो जाता है और मन में भी बुरे विचार शुरू हो जाते हैं; ऐसे पदार्थों का सेवन व्यक्ति को ख्वार करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु प्रीति में मन रंगा जाए यही लाल पोशाक है; दान पुण्य करने को सफेद वस्त्र समझा जाए। अन्तर्मन से कालिमा को निकाल देने को नीले रंग की पोशाक जानो। प्रभु चरणों का ध्यान चोगा है। हे प्रभु ! तेरा नाम ही मेरा धन है, मेरा यौवन है एवं सन्तोष को मैंने अपना कमरबन्द बना लिया है ॥ २ ॥ हे भाई ! जिसे पहिनने से शरीर दुखी हो एवं मन में भी विकार चल पड़ें, ऐसा पहिनने का शौक और उल्लास व्यक्ति को ख्वार ही करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! तेरे चरणों में जुड़ बैठना और जीवन मार्ग को पूरी तरह समझना मेरे लिए सुन्दर सोने की काठी वाले घोड़े की सवारी है। तेरा गुणानुवाद करने का उद्यम करना मेरे तरकश में तीर एवं बरछी एवं तेगबन्द है। तेरे द्वार पर सम्मानित होना मेरे लिए नगारा एवं भाला है। तेरी कृपा दृष्टि मेरे लिए ऊँची कुल है ॥ ३ ॥ हे भाई, जिस घुड़सवारी करने से तन में पीड़ा हो जाए और मन में भी अनेकों विकार चलने लग जाएं उस घुड़सवारी और उसका उल्लास ख्वार ही करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महलों में निवास वास्तव में मेरे लिए तेरे नाम से पैदा हुई खुशी ही है। तेरी कृपा दृष्टि ही मेरा कुटुम्ब है।

हुकमु सोई तुधु भावसी होरु आखणु बहुतु अपारु ॥ नानक सचा पातिसाहु पूछि न करे बीचारु ॥ ४ ॥ बाबा होरु सउणा खुसी खुआरु ॥ जितु सुतै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ४ ॥ ७ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ कुंगू की कांइआ रतना की ललिता अगरि वासु तनि सासु ॥ अठसठि तीरथ का मुखि टिका तितु घटि मति विगासु ॥ ओतु मती सालाहणा सचु नामु गुणतासु ॥ १ ॥ बाबा होर मति होर होर ॥ जे सउ वेर कमाईऐ कूड़ै कूड़ा जोरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूज लगै पीरु आखीऐ सभु मिलै संसारु ॥ नाउ सदाए आपणा होवै सिधु सुमारु ॥ जा पति लेखै ना पवै सभा पूज खुआरु ॥ २ ॥ जिन कउ सतिगुरि थापिआ तिन मेटि न सकै कोइ ॥ ओना अंदरि नामु निधानु है नामो परगटु होइ ॥ नाउ पूजीऐ नाउ मंनीऐ अखंडु सदा सचु सोइ ॥ ३ ॥ खेहू खेह रलाईऐ ता जीउ केहा होइ ॥ जलीआ सभि सिआणपा उठी चलिआ रोइ ॥ नानक नामि विसारिऐ दरि गइआ किआ होइ ॥ ४ ॥ ८ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ गुणवंती गुण वीथरै अउगुणवंती झूरि ॥ जे लोड़हि वरु कामणी नह मिलीऐ पिर कूरि ॥ ना बेड़ी ना तुलहड़ा ना पाईऐ पिरु दूरि ॥ १ ॥ मेरे ठाकुर पूरै तखति अडोलु ॥ गुरमुखि पूरा जे करे पाईऐ साचु अतोलु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु हरि मंदरु सोहणा तिसु महि माणक लाल ॥ मोती हीरा निरमला कंचन कोट रीसाल ॥ बिनु पउड़ी गड़ि किउ चड़उ गुर हरि धिआन निहाल ॥ २ ॥ गुरु पउड़ी बेड़ी गुरू गुरु तुलहा हरि नाउ ॥ गुरु सरु सागरु बोहिथो गुरु तीरथु दरीआउ ॥ जे तिसु भावै ऊजली सत सरि नावण जाउ ॥ ३ ॥ पूरो पूरो आखीऐ पूरै तखति निवास ॥ पूरै थानि सुहावणै पूरै आस निरास ॥ नानक पूरा जे मिलै किउ घाटै गुण तास ॥ ४ ॥ ९ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ आवहु भैणे गलि मिलह अंकि सहेलड़ीआह ॥ मिलि कै करह कहाणीआ संम्रथ कंत कीआह ॥ साचे साहिब सभि गुण अउगण सभि असाह ॥ १ ॥ करता सभु को तेरै जोरि ॥ एकु सबदु बीचारीऐ जा तू ता किआ होरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जाइ पुछहु सोहागणी तुसी राविआ किनी गुणी ॥ सहजि संतोखि सीगारीआ मिठा बोलणी ॥ पिरु

मेरे लिए हुकम वही है जो तुझे भाता है अन्यथा और कहने सुनने के लिए तो अनन्त बातें हैं । हे नानक ! सदा स्थिर प्रभु ऐसे जीवन वाले की और अधिक जाँच–पड़ताल नहीं करता ॥ ४ ॥ हे भाई ! वह सोना और खुश होना भी दरअसल ख्वार करने वाला ही है जिस सोने से अर्थात ऐश–आराम से शरीर रोगी होता है और मन में भी अनेकों प्रकार के विकार शुरू हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ४ ॥ ७ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ जिस व्यक्ति का शरीर केसर की तरह विकारहीन हो, जिसकी जीभ प्रभु के गुणानुवाद रूपी रत्नों से जड़ित हो, जिसके शरीर में प्रत्येक श्वास अगर चन्दन की सुगन्ध वाला हो, जिस व्यक्ति के माथे पर अड़सठ तीर्थों का टीका हो उस व्यक्ति के अन्दर विवेक, बुद्धि खिल उठती है और उसकी विकासमान बुद्धि के माध्यम से ही सच्चे नाम का गुणानुवाद किया जा सकता है अर्थात गुणनिधि प्रभु की प्रशंसा की जा सकती है ॥ १ ॥ हे भाई! प्रभु नाम से दूर हो चुकी बुद्धि इधर–उधर ही ले जाती है । प्रभु गुणानुवाद को छोड़कर यदि अन्य कर्म सैंकड़ों बार भी किए जाएं तो भी इन झूठे कर्मों के कारण झूठ का ही ज़ोर बढ़ता चला जाता है ॥१॥ रहाउ ॥ यदि कोई व्यक्ति अपने आपको पीर कहलाने लग जाए, सारा संसार आकर उसका दर्शन करे, उसकी पूजा होने लग जाए, वह पहुँचा हुआ योगी गिना जाने लगे, बड़े नाम वाला जाना जाए तब भी यदि प्रभु के समक्ष किए हुए कर्मों का हिसाब होने पर उसको सम्मान नहीं मिलता तो संसार में वह उसका मान–सम्मान उसे केवल ख्वार करने वाला ही बनकर रह जाता है ॥ २ ॥ जिन व्यक्तियों को सद्गुरु ने शाबाश दी है उनके सम्मान को कोई मिटा नहीं सकता क्योंकि उनके हृदय में प्रभु के नाम का खजाना बसता है जिसे प्रभु नाम के माध्यम से ही जाना जा सकता है। यह निर्विवाद है कि प्रभु के नाम की ही पूजा एवं मान्यता होती है और केवल प्रभु का ही नाम अखण्ड और सदैव सत्य रूप में बना रहता है ॥ ३ ॥ प्रभु नाम से विहीन् शरीर जब मिट्टी होकर मिट्टी में मिल जाता है तो नाम विहीन प्राणों का बुरा ही हाल होता है । सभी चतुराइयाँ राख हो जाती हैं और जीव जगत् से दुःखी होकर ही जाता है । हे नानक, यदि प्रभु के नाम को भुला दिया जाए तो प्रभु–द्वार पर पहुँचकर बुरा हाल ही होता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ गुणवान स्त्री प्रभु का गुणानुवाद करती है परन्तु अवगुण धारण करने वाली अपने अवगुणों के कारण कष्ट में पड़ी रहती है । हे जीव रूपी स्त्री, यदि तू पति रूपी प्रभु को मिलना चाहती है तो तुझे यह जान लेना चाहिए कि झूठे मोह में फंसे रहकर प्रभु को नहीं पाया जा सकता । तेरे पास इस संसार समुद्र को पार करने के लिए ना तो कोई नाव है और ना ही बेड़ा है; तुझे इस प्रकार पति प्रभु नहीं मिल सकता क्योंकि वह तो इस संसार समुद्र से परे दूर है ॥ १ ॥ मेरे पूर्ण प्रभु का अटल ठिकाना उस सिंहासन पर है जो स्वयं सम्पूर्ण है । यदि पूर्ण गुरु कोई विधि बताए तो उस अतुलनीय सत्य प्रभु को पाया जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि प्रभु एक सुन्दर महल के समान है जिसमें माणिक, लाल एवं मोती भरे हुए हैं । निर्मल मोती, हीरों के चारों ओर सोने के सुन्दर किले हैं परन्तु उस किले पर सीढ़ी के बिना चढ़ा नहीं जा सकता । गुरु का ध्यान धरकर ही यदि प्रभु का ध्यान किया जाए तो उसके दर्शन करके आनन्द प्राप्त किया जा सकता है ॥ २ ॥ उस मंदिर पर चढ़ने के लिए गुरु सीढ़ी है, गुरु ही संसार–समुद्र को पार करने के लिए नाव है और प्रभु का नाम बताने वाला गुरु ही बेड़ा है । गुरु ही सरोवर है, समुद्र है, जहाज है, तीर्थ है और गुरु ही दरिया है । यदि प्रभु की इच्छा हो तो गुरु के माध्यम से मनुष्य की मति शुद्ध हो जाती है क्योंकि व्यक्ति तब सद्संगत रूपी सरोवर में स्नान करने लग जाता है ॥ ३ ॥ हर कोई कहता है कि परमात्मा में कोई न्यूनता नहीं है, उसका निवास भी ऐसे सिंहासन पर है जिसमें कोई भी कमी नहीं है । वह पूर्ण प्रभु सुन्दर त्रुटि–विहीन् स्थान पर बैठा हुआ है और निराश्रित लोगों के दिलों की आशाएं पूरी करने वाला है । हे नानक ! वह पूर्ण प्रभु यदि व्यक्ति को मिल जाए तो उसके गुणों में भी भला कैसे कोई कमी आ सकती है ॥४॥९॥ सिरीरागु महला १ ॥ हे सद्संगत में मिल बैठने वाली बहनों एवं मित्रो ! आओ प्रेम पूर्वक इकट्ठे होकर सद्संगत में उस पति प्रभु की बातें करें जो सर्वशक्तिमान है । उस नित्य स्वामी में सभी गुण ही गुण हैं परन्तु उससे बिछुड़ कर हम अपने में सभी अवगुण पैदा कर लेते हैं ॥ १ ॥ हे कर्ता प्रभु ! प्रत्येक जीव तेरे आदेश के अन्तर्गत ही है । एक बात ही विचारणीय है कि यदि तू हमारा रक्षक है तो अन्य कोई हमारा क्या बिगाड़ सकता है ॥१॥ रहाउ ॥ हे सत्संगी बहनों, बेशक जाकर किसी सुहागिन (जिसने प्रभु पा लिया है) को पूछ लो कि तुमने किन गुणों से प्रभु मिलाप प्राप्त किया है । यही पता चलेगा कि उन्होंने स्थिरता, संतुष्टि एवं मीठे बोलों से अपने जीवन का श्रृंगार किया हुआ है । वह आनन्ददायक प्रभु रूपी पति

रीसालू ता मिलै जा गुर का सबदु सुणी ॥ २ ॥ केतीआ तेरीआ कुदरती केवड तेरी दाति ॥ केते तेरे जीअ जंत सिफति करहि दिनु राति ॥ केते तेरे रूप रंग केते जाति अजाति ॥ ३ ॥ सचु मिलै सचु ऊपजै सच महि साचि समाइ ॥ सुरति होवै पति ऊगवै गुर बचनी भउ खाइ ॥ नानक सचा पातिसाहु आपे लए मिलाइ ॥ ४ ॥ १० ॥ सिरीरागु महला १ ॥ भली सरी जि उबरी हउमै मुई घराहु ॥ दूत लगे फिरि चाकरी सतिगुर का वेसाहु ॥ कलप तिआगी बादि है सचा वेपरवाहु ॥ १ ॥ मन रे सचु मिलै भउ जाइ ॥ भै बिनु निरभउ किउ थीऐ गुरमुखि सबदि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केता आखणु आखीऐ आखणि तोटि न होइ ॥ मंगण वाले केतड़े दाता एको सोइ ॥ जिस के जीअ पराण है मनि वसिऐ सुखु होइ ॥ २ ॥ जगु सुपना बाजी बनी खिन महि खेलु खेलाइ ॥ संजोगी मिलि एकसे विजोगी उठि जाइ ॥ जो तिसु भाणा सो थीऐ अवरु न करणा जाइ ॥ ३ ॥ गुरमुखि वसतु वेसाहीऐ सचु वखरु सचु रासि ॥ जिनी सचु वणंजिआ गुर पूरे साबासि ॥ नानक वसतु पछाणसी सचु सउदा जिसु पासि ॥ ४ ॥ ११ ॥ सिरीरागु महलु १ ॥ धातु मिलै फुनि धातु कउ सिफती सिफति समाइ ॥ लालु गुलालु गहबरा सचा रंगु चड़ाउ ॥ सचु मिलै संतोखीआ हरि जपि एकै भाइ ॥ १ ॥ भाई रे संत जना की रेणु ॥ संत सभा गुरु पाईऐ मुकति पदारथु धेणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊचउ थानु सुहावणा ऊपरि महलु मुरारि ॥ सचु करणी दे पाईऐ दरु घरु महलु पिआरि ॥ गुरमुखि मनु समझाईऐ आतम रामु बीचारि ॥ २ ॥ त्रिबिधि करम कमाईअहि आस अंदेसा होइ ॥ किउ गुर बिनु त्रिकुटी छुटसी सहजि मिलिऐ सुखु होइ ॥ निज घरि महलु पछाणीऐ नदरि करे मलु धोइ ॥ ३ ॥ बिनु गुर मैलु न उतरै बिनु हरि किउ घर वासु ॥ एको सबदु वीचारीऐ अवर तिआगै आस ॥ नानक देखि दिखाईऐ हउ सद बलिहारै जासु ॥ ४ ॥ १२ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ ध्रिगु जीवणु दोहागणी मुठी दूजै भाइ ॥ कलर केरी कंध जिउ अहिनिसि किरि ढहि पाइ ॥ बिनु सबदै सुखु ना थीऐ पिर बिनु दूखु न जाइ ॥ १ ॥ मुंधे पिर बिनु किआ सीगारु ॥

तब ही मिलता है जब गुरु के उपदेश को ध्यानपूर्वक सुना जाए ॥ २ ॥ हे प्रभु ! तेरी शक्तियाँ एवं दान अनन्त हैं। अनन्त जीव दिन रात तेरे गुणों का गायन कर रहे हैं। अनन्त ही तेरे रूप रंग हैं एवं तेरे पैदा किए हुए जीव भी अनन्त हैं जिनमें से कोई तो (तथाकथित) ऊँची और कोई (तथाकथित) नीची जातियों से सम्बन्धित है ॥ ३ ॥ हे नानक ! यदि व्यक्ति सुमिरन के माध्यम से सदा स्थिर प्रभु में लीन रहे तो उसे परमात्मा मिल जाता है और दरअसल परमात्मा उसी के हृदय में से प्रकट हो जाता है। उसकी सुरति परमात्मा में लीन रहती है और उसे आदर प्राप्त होता है। गुरु के वचनों को जीवन में ढालकर वह सांसारिक भय को समाप्त कर लेता है और वह सदैव स्थिर सम्राटों का भी सम्राट प्रभु उसे अपने में ही लीन कर लेता है ॥४॥१०॥ सिरी रागु महला १॥ यह अच्छा ही हुआ कि मेरे प्राण विकारों से बच गए और मेरे हृदय से अहंकार समाप्त हो गया। मेरा भरोसा सद्गुरु पर बना और अब विकार मुझे भ्रमित ना करके उल्टा मेरे वश में हो गए हैं। जब वह सच्चा बेपरवाह प्रभु मिल गया तो मैंने तमाम काल्पनिक झगड़ों, दलीलों को त्याग दिया है ॥१॥ हे मन, जब सत्य रूपी प्रभु मिल जाए तो संसार का डर एवं सहम दूर हो जाता है। जब तक परमात्मा का भय मन में ना हो तो व्यक्ति दुनियां के डरों से बच ही नहीं सकता। गुरु के माध्यम से शब्द (ब्रह्म) के साथ जुड़ा जाता है ॥१॥ रहाउ ॥ कहने के लिए इतना कुछ है कि कहते चले जाने में कभी भी कमी नहीं आती। माँगने वाले तो अनेक हैं और देने वाला दाता (प्रभु) केवल एक है। जिस परमात्मा ने प्राण दिये हैं यदि वह व्यक्ति के मन में बस जाए तब ही आनन्द की प्राप्ति होती है ॥ २ ॥ यह संसार मानो एक स्वप्न है, एक खेल है जिसमें जीव एक क्षण भर में जीवन का खेल खेलकर चला जाता है। संयोग के नियम के अधीन जीव परस्पर मिलते हैं और वियोग के नियमानुसार बिछुड़ कर अलग हो जाते हैं। जो कुछ परमात्मा को अच्छा लगता है वही होता है और अन्य कुछ नहीं किया जा सकता ॥ ३ ॥ सदा स्थिर रहने वाला प्रभु का नाम ही वास्तविक सौदा एवं पूँजी है। यह सौदा गुरु के माध्यम से ही खरीदा जा सकता है। जिन व्यक्तियों ने यह सच्चा सौदा खरीद लिया है उनको पूरे गुरु परमात्मा की शाबाशी मिलती है। हे नानक, जिसके पास यह सच्चा सौदा होता है वही उसकी कीमत भी समझता है ॥४॥११॥ सिरी रागु महला १ ॥ प्रभु का गुणानुवाद करके व्यक्ति गुणों के स्वामी प्रभु में इस प्रकार लीन हो जाता है जैसे कोई धातु ढलकर पुनः उसी धातु के साथ एक रूप हो जाती है। गुणानुवाद के कारण व्यक्ति पर प्रसन्नता का गाढ़ा लाल रंग चढ़ जाता है पर वह सदा स्थिर प्रभु उन सन्तुष्टिपूर्ण जीवन वालों को ही मिलता है जो परमात्मा के गुणों के गीत गाते–गाते उस एक ही प्रभु के प्रेम में लीन बने रहते हैं ॥ १ ॥ हे भाई ! संत जनों के चरणों की धूलि बन। संत जनों की सभा में अर्थात् सद्संगत में गुरु मिलता है जो मानो कामधेनु है जिस से विकारों से बचाने वाला नाम पदार्थ प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ व्यक्ति को ऊँचा उठाने वाले सुहावने स्थान से भी ऊँचा परमात्मा का स्थान है। उस परमात्मा के स्थान को सत्याचरण और प्रेम के साधन से ही पाया जा सकता है। मन को गुरु के माध्यम से सीधे रास्ते पर लाया जाता है और फिर उसे सर्वव्यापक प्रभु के गुणों के विचारों से समझाया जाता है ॥ २ ॥ संसार में माया के तीनों गुणों के अधीन रहकर ही कर्म किये जाते हैं और इसी कारण आशाओं और शंकाओं का चक्र बना रहता है। गुरु के बिना यह त्रिविध चक्र समाप्त नहीं होता और सहज अवस्था में रहकर ही सुख की प्राप्ति होती है। जब प्रभु की कृपा दृष्टि हो जाती है तो मन का मैल धुल जाता है और जीव अपने ही अंदर उस प्रभु के स्थान को पहचान जाता है ॥ ३ ॥ गुरु के बिना मन की मैल नहीं उतरती और परमात्मा का ध्यान धरे बिना जीव अपने ही अन्दर स्थित होने की कला नहीं सीखता। अपनी अंतरात्मा में स्थित होने पर जीव उस एक ही शब्द ब्रह्म का चिन्तन करता रहता है एवं अन्य सब तृष्णाओं को त्याग देता है। हे नानक ! जो गुरु स्वयं प्रभु का दर्शन करके मुझे भी उसका दर्शन करवाता है, मैं उस पर से सदैव बलिहारी जाता हूँ ॥ ४ ॥ १२ ॥ सिरी रागु महला ॥ १ ॥ पति प्रभु के प्रेम से विहीन दुहागिन स्त्री जो सदा द्वैत भाव में ठगी रहती है, का जीना धिक्कार है। जैसे चूने की दीवार सदैव गिरती रहती है, वैसे ही उसका आध्यात्मिक जीवन भी सदा गिर–गिर कर ढेर होता जाता है। बिना शब्द–गुरु की शरण में गए उसका दुख दूर नहीं हो सकता ॥ १ ॥ हे मूर्ख जीव स्त्री, यदि प्रियतम मिलता नहीं तो श्रृंगार करने का क्या लाभ।

दरि घरि ढोई न लहै दरगह झूठु खुआरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपि सुजाणु न भुलई सचा वड किरसाणु ॥ पहिला धरती साधि कै सचु नामु दे दाणु ॥ नउ निधि उपजै नामु एकु करमि पवै नीसाणु ॥ २ ॥ गुर कउ जाणि न जाणई किआ तिसु चजु अचारु ॥ अंधुलै नामु विसारिआ मनमुखि अंध गुबारु ॥ आवणु जाणु न चुकई मरि जनमै होइ खुआरु ॥ ३ ॥ चंदनु मोलि अणाइआ कुंगू मांग संधूरु ॥ चोआ चंदनु बहु घणा पाना नालि कपूरु ॥ जे धन कंति न भावई त सभि अडंबर कूड़ु ॥ ४ ॥ सभि रस भोगण बादि हहि सभि सीगार विकार ॥ जब लगु सबदि न भेदीऐ किउ सोहै गुरदुआरि ॥ नानक धंनु सुहागणी जिन सह नालि पिआरु ॥ ५ ॥ १३ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ सुंञी देह डरावणी जा जीउ विचहु जाइ ॥ भाहि बलंदी विझवी धूउ न निकसिओ काइ ॥ पंचे रुंने दुखि भरे बिनसे दूजै भाइ ॥ १ ॥ मूड़े रामु जपहु गुण सारि ॥ हउमै ममता मोहणी सभ मुठी अहंकारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनी नामु विसारिआ दूजी कारै लगि ॥ दुबिधा लागे पचि मुए अंतरि त्रिसना अगि ॥ गुरि राखे से उबरे होरि मुठी धंधै ठगि ॥ २ ॥ मुई परीति पिआरु गइआ मुआ वैरु विरोधु ॥ धंधा थका हउ मुई ममता माइआ क्रोधु ॥ करमि मिलै सचु पाईऐ गुरमुखि सदा निरोधु ॥ ३ ॥ सची कारै सचु मिलै गुरमति पलै पाइ ॥ सो नरु जंमै ना मरै ना आवै ना जाइ ॥ नानक दरि परधानु सो दरगहि पैधा जाइ ॥ ४ ॥ १४ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ तनु जलि बलि माटी भइआ मनु माइआ मोहि मनूरु ॥ अउगण फिरि लागू भए कूरि वजावै तूरु ॥ बिनु सबदै भरमाईऐ दुबिधा डोबे पूरु ॥ १ ॥ मन रे सबदि तरहु चितु लाइ ॥ जिनि गुरमुखि नामु न बूझिआ मरि जनमै आवै जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तनु सूचा सो आखीऐ जिसु महि साचा नाउ ॥ भै सचि राती देहुरी जिहवा सचु सुआउ ॥ सची नदरि निहालीऐ बहुड़ि न पावै ताउ ॥ २ ॥ साचे ते पवना भइआ पवनै ते जलु होइ ॥ जल ते त्रिभवणु साजिआ घटि घटि जोति समोइ ॥ निरमलु मैला ना थीऐ सबदि रते पति होइ ॥ ३ ॥ इहु मनु साचि संतोखिआ नदरि करे तिसु माहि ॥

प्रभु प्रेम से विहीन धार्मिक कर्म काण्ड उसे प्रभु के घर में आश्रय नहीं दिला सकते क्योंकि झूठा व्यक्ति उस सत्य प्रभु के समक्ष ख्वार ही होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह प्रभु परमात्मा एक बहुत बड़ा एवं बुद्धिमान किसान है । वह एक सुजान किसान के समान जीव की हृदय रूपी धरती को अच्छी तरह तैयार करता है और फिर उसमें सच्चे नाम का बीज बोता है । वहाँ से नाम ही उत्पन्न होता है और ऐसा लगता है कि मानो नवनिधियां उत्पन्न हो गई हैं । प्रभु की कृपा से उस हृदय रूपी धरती में किया हुआ परिश्रम स्वीकार होता है ॥ २ ॥ जो व्यक्ति जान बूझ कर गुरु के गुणों को नहीं समझता, उसकी सारी जीवन शैली बेढंगी है । उस अन्धे व्यक्ति ने प्रभु के नाम का विस्मरण किया है और ऐसे मन के पीछे चलने वाले के जीवन मार्ग पर घोर अंधकार ही बना रहता है । उसका आवागमन का चक्र समाप्त नहीं होता और वह इसी तरह जन्मता मरता ख्वार होता रहता है ॥ ३ ॥ पति को प्रसन्न करने के लिए चन्दन खरीदा गया है, केसर मंगवाया गया है, सिर के केशों के मध्य मांग को सुन्दर बनाने के लिए सिन्दूर मंगवाया गया; इत्र, चन्दन आदि अन्य सुगन्धियां मंगवाई गई, पान मंगवाये गए और कपूर भी मंगवाया गया; परन्तु इतना सब करने के बाद भी यदि वह स्त्री पति को अच्छी ना लग सकी तो उसका यह सारा कार्य व्यापार व्यर्थ हो गया, अर्थात् प्रभु पति केवल धार्मिक कर्म काण्डों से ही रीझ नहीं सकता । जब तक व्यक्ति का मन गुरु के शब्द–बाण के साथ बिंधता नहीं तब तक गुरु के द्वार पर उसे सम्मान नहीं मिलता ॥४॥ ऐसे व्यक्ति द्वारा सभी सुन्दर वस्तुओं का उपभोग व्यर्थ ही चला जाता है और उसकी सारी शारीरिक सजावटें भी व्यर्थ हो जाती हैं । हे नानक ! वही भाग्यशाली जीव स्त्रियां धन्य हैं जिनका प्रभु पति के साथ प्रेम बना हुआ है ॥ ५ ॥ १३ ॥ जब शरीर में से प्राण निकल जाते हैं तो यह शरीर उजाड़ हो जाता है और इससे डर लगने लग जाता है । जो जीवन रूपी अग्नि इस शरीर में पहले जल रही थी वह बुझ जाती है और श्वास् का आना–जाना भी बन्द हो जाता है । पांचों ज्ञानेन्द्रियां जो दुविधा में ही अपनी शक्ति नष्ट करती रहीं वे भी दुखी होकर रो उठती हैं ॥१॥ हे मूर्ख प्राणी, उस परमात्मा के गुणों का स्मरण कर । सारी सृष्टि मोहिनी माया की ममता में अपने ही अहंकार में ठगी जा रही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन व्यक्तियों ने अन्य कार्यों में लीन होकर परमात्मा के नाम को भुला दिया है वे सदा दुविधा में ही ग्रस्त बने रहते हैं । उनके अन्तर्मन में तृष्णा की आग सदैव भड़कती रहती है और आध्यात्मिक तौर पर वे मर जाते हैं । जिनकी रक्षा गुरु ने स्वयं की वे तृष्णा की अग्नि से बच जाते हैं एवं अन्य सब सांसारिक प्रपंचों द्वारा ठग लिए जाते हैं ॥ २ ॥ जिन व्यक्तियों ने राग, द्वेष, प्रीति, प्यार पर नियन्त्रण करके रखा है उनकी भाग–दौड़ समाप्त हो जाती है; उनका अहंकार, क्रोध एवं माया–ममता भी समाप्त हो जाते हैं । यह सब प्रभु की कृपा से ही प्राप्त होता है एवं व्यक्ति गुरमुख बनकर ही मन की कामनाओं को रोककर सत्य प्रभु की प्राप्ति करता है ॥ ३ ॥ सच्चे काम में लगे हुए व्यक्ति को सत्य की प्राप्ति होती है और गुरु की मति भी उसके अन्तर्मन में बस जाती है । ऐसा व्यक्ति जन्म–मरण एवं आवागमन के चक्कर से दूर हो जाता है । हे नानक ! ऐसा व्यक्ति ही प्रभु दरबार में प्रमुखता एवं सम्मान प्राप्त करता है ॥ ४ ॥ १४ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ नाम विहीन् व्यक्ति का शरीर विकारों में ही जलकर मिट्टी हो जाता है । उसका मन माया में भ्रमित हो जलकर लोहे की राख की तरह हो जाता है । फिर भी विकार उसका पीछा नहीं छोड़ते और वह भ्रमों में ही डूबा हुआ झूठ का ही बाजा बजाता रहता है । शब्द–ब्रह्म से विहीन वह भटकता फिरता है एवं दुविधा उस व्यक्ति के इन्द्रिय रूपी सारे ही परिवार को डुबो देती है ॥ १॥ हे मेरे मन, गुरु के शब्द में चित्त को लीन कर और अपना पार उतारा कर । जिस व्यक्ति ने गुरु की शरण में आकर परमात्मा के नाम को नहीं बूझा वह मरता है, जन्मता है और फिर मरता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही शरीर पवित्र है जिसमें सच्चे नाम का निवास है । ऐसा शरीर उस प्रभु के भय और सत्य में लीन रहता है और ऐसे शरीर की जीभ को सदा सत्य का स्वाद ही अच्छा लगता है । जिस पर उस प्रभु की कृपा दृष्टि हो जाती है उसे बार बार (उदर की अग्नि में) तपना नहीं पड़ता अर्थात उसका आवागमन समाप्त हो जाता है ॥ २ ॥ परम सत्य से पवन (गैसें) बनी और पवन (गैसें–हाइड्रोजन ऑक्सीजन आदि) से जल उत्पन्न हुआ । जल से ही तीनों लोकों की रचना हुई और प्रत्येक जीव में उसी परमात्मा की ज्योति समाई हुई है । जो जीव विकारों की मैल से दूर है वह कभी भी मलीन नहीं होता एवं शब्द में रंगे होने के कारण उसे सब स्थानों में आदर मिलता है ॥ ३ ॥ ऐसे व्यक्ति का मन उस प्रभु की कृपा से सच्चा और संतुष्ट हो जाता है ।

पंच भूत सचि भै रते जोति सची मन माहि ॥ नानक अउगण वीसरे गुरि राखे पति ताहि ॥ ४ ॥ १५ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ नानक बेड़ी सच की तरीऐ गुर वीचारि ॥ इकि आवहि इकि जावही पूरि भरे अहंकारि ॥ मनहठि मती बूडीऐ गुरमुखि सचु सु तारि ॥ १ ॥ गुर बिनु किउ तरीऐ सुखु होइ ॥ जिउ भावै तिउ राखु तू मै अवरु न दूजा कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आगै देखउ डउ जलै पाछै हरिओ अंगूरु ॥ जिस ते उपजै तिस ते बिनसै घटि घटि सचु भरपूरि ॥ आपे मेलि मिलावही साचै महलि हदूरि ॥ २ ॥ साहि साहि तुझु संमला कदे न विसारेउ ॥ जिउ जिउ साहबु मनि वसै गुरमुखि अंम्रितु पेउ ॥ मनु तनु तेरा तू धणी गरबु निवारि समेउ ॥ ३ ॥ जिनि एहु जगतु उपाइआ त्रिभवणु करि आकारु ॥ गुरमुखि चानणु जाणीऐ मनमुखि मुगधु गुबारु ॥ घटि घटि जोति निरंतरी बूझै गुरमति सारु ॥ ४ ॥ गुरमुखि जिनी जाणिआ तिन कीचै साबासि ॥ सचे सेती रलि मिले सचे गुण परगासि ॥ नानक नामि संतोखीआ जीउ पिंडु प्रभ पासि ॥ ५ ॥ १६ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ सुणि मन मित्र पिआरिआ मिलु वेला है एह ॥ जब लगु जोबनि सासु है तब लगु इहु तनु देह ॥ बिनु गुण कामि न आवई ढहि ढेरी तनु खेह ॥ १ ॥ मेरे मन लै लाहा घरि जाहि ॥ गुरमुखि नामु सलाहीऐ हउमै निवरी भाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुणि सुणि गंढणु गंढीऐ लिखि पड़ि बुझहि भारु ॥ त्रिसना अहिनिसि अगली हउमै रोगु विकारु ॥ ओहु वेपरवाहु अतोलवा गुरमति कीमति सारु ॥ २ ॥ लख सिआणप जे करी लख सिउ प्रीति मिलापु ॥ बिनु संगति साध न ध्रापीआ बिनु नावै दूख संतापु ॥ हरि जपि जीअरे छुटीऐ गुरमुखि चीनै आपु ॥ ३ ॥ तनु मनु गुर पहि वेचिआ मनु दीआ सिरु नालि ॥ त्रिभवणु खोजि ढंढोलिआ गुरमुखि खोजि निहालि ॥ सतगुरि मेलि मिलाइआ नानक सो प्रभु नालि ॥ ४ ॥ १७ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ मरणै की चिंता नही जीवण की नही आस ॥ तू सरब जीआ प्रतिपालही लेखै सास गिरास ॥ अंतरि गुरमुखि तू वसहि जिउ भावै तिउ निरजासि ॥ १ ॥ जीअरे राम जपत मनु मानु ॥ अंतरि

पंचभूतों का उसका शरीर प्रभु की याद में, प्रभु प्रेम में ही रंगा रहता है और सदा सत्य प्रभु की ज्योति उसके मन में टिकी रहती है । हे नानक! ऐसे व्यक्ति के अवगुण उससे दूर हो जाते हैं और परमात्मा स्वयं उसकी इज़्ज़त बचाता है ॥ ४ ॥ १५ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ हे नानक, इस संसार को सत्य की नाव और गुरु के विचार के माध्यम से ही पार किया जा सकता है । परन्तु अनेकों ही अहंकार से भरे जीव हैं जो पार करने की अपेक्षा आवागमन के चक्कर में ही पड़े रहते हैं । अपनी ही बुद्धि के हठ पर चलते रहने से व्यक्ति इस संसार समुद्र में डूब जाता है और गुरु की ओर उन्मुख व्यक्ति सत्य के सम्बल से तैर कर उसको पार कर जाता है ॥ १ ॥ गुरु के बिना कैसे इस समुद्र को तैरा जा सकता है और भला कैसे आनन्द प्राप्त हो सकता है; इसलिए हे प्रभु, जैसे भी हो सके तू मेरी रक्षा कर क्योंकि मेरे पास अन्य दूसरा कोई भी साधन नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आगे देखता हूँ तो इस संसार में जंगल की आग के समान आग लगी हुई है जो सबको जलाती जा रही है और साथ ही साथ पीछे नये कोमल पौधे उगते भी जा रहे हैं । इसी प्रकार यह संसार जिससे पैदा होता है उसी के द्वारा नष्ट भी किया जाता है और इस उत्पत्ति एवं नाश में वह सत्य स्वरूप परमात्मा सब स्थानों पर व्याप्त है । हे प्रभु, तू स्वयं ही सबको अपने में मिलाता है एवं अपने सत्य रूपी महल में स्थित करता है ॥ २ ॥ हे प्रभु, मैं प्रत्येक श्वास् के साथ तुझे स्मरण करता रहूँ और तुझे कभी भी विस्मृत ना करूँ। गुरु की शरण में आकर जैसे-जैसे परमात्मा मेरे मन में टिका रहे मैं सदैव आध्यात्मिक जीवन देने वाला नाम-जल पीता रहूँ । हे प्रभु ! मेरा मन-तन तेरा ही दिया हुआ है, तू ही मेरा स्वामी है । तू कृपा कर ताकि अहंकार को दूर कर मैं तुझमें लीन हो जाऊँ ॥ ३ ॥ जिस प्रभु ने यह जगत पैदा किया है और तीनों लोकों को आकार दिया है उस परम ज्योति के साथ निकटता गुरु की शरण में आने पर ही बन सकती है । परन्तु मन के पीछे चलकर मूर्ख व्यक्ति को केवल अन्धकार ही दिखाई देता है । प्रत्येक घट में वह परम ज्योति सदैव विराजमान है यह तथ्य गुरु की मति के माध्यम से ही बूझा जा सकता है ॥ ४ ॥ जिन व्यक्तियों ने गुरु की शरण में आकर उस ज्योति को जान लिया है उन्हें हे प्रभु तू शाबाशी देता है । वे उस सत्य में लवलीन हो जाते हैं और सत्य गुणों का प्रकाश उनमें हो जाता है। हे नानक ! नाम में लीन होकर वे व्यक्ति संतुष्ट हो जाते हैं और अपने प्राणों और शरीर को सदा प्रभु को अर्पित किए रहते हैं ॥५॥१६॥ सिरी रागु महला १॥ हे प्यारे मित्र मन, परमात्मा को मिलने का यही एक अवसर है । जब तक भरपूर सांस चलती रहती है तभी तक यह शरीर बना रहता है । यदि प्रभु के गुण अपने अन्दर नहीं बसाए तो यह शरीर नष्ट हो जाता है और मात्र राख का ढेर समझा जाता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू यहाँ से लाभ प्राप्त करके अपने चिरन्तन घर को वापस जा । गुरु की शरण में प्रभु नाम का गुणानुवाद किया जाना चाहिए जिससे अहंकार की अग्नि का निवारण हो सके ॥ १ ॥ रहाउ॥ कई लोग सुन-सुन कर इधर उधर की बातें जोड़ते रहते हैं और कई पढ़ लिख कर तथाकथित ज्ञान के बोझ का अनुभव करते रहते हैं । रात दिन तृष्णा उनको तंग किए रहती है और अहंकार का रोग भी उनके साथ बना रहता है । वह परमात्मा दिखावे वाले ज्ञान की परवाह नहीं करता । इसलिए गुरु की मति के माध्यम से ही उसकी कीमत के सार को आंका जा सकता है ॥२ ॥ यदि मैं लाखों चतुराइयाँ करूँ, लाखों लोगों से प्रीति एवं मेल-जोल बढ़ाऊँ तो भी सद्संगत के बिना संतुष्टि प्राप्त नहीं होती और प्रभु नाम के स्मरण के बिना दुख एवं संताप दूर नहीं होते । हे मेरे जीव, परमात्मा का नाम जपकर ही मुक्ति मिल सकती है और जो गुरु की शरण में आकर नाम सुमिरन करता है वह अपने परम तत्व को पहचान लेता है ॥ ३ ॥ जिस व्यक्ति ने अपना तन एवं मन गुरु के लेखे में डाल दिया और साथ ही साथ अपना सिर भी उसके हवाले कर दिया उसने गुरु के माध्यम से ही खोज करके उस प्रभु को खोज लिया है जिसे खोजने के लिए वह सारे संसार में खोज करता रहा था । हे नानक ! शरणागत् को गुरु ने अपने चरणों में जोड़कर प्रभु के साथ मिला दिया और वह प्रभु दरअसल अन्तर्मन में ही दिखा दिया है ॥४॥१७॥ सिरी रागु महला ॥ १ ॥ जो व्यक्ति मौत की चिन्ता नहीं करता और जीवन से लम्बी आशाएं नहीं रखता वह व्यक्ति यह भी मानता है कि हे प्रभु तू ही सभी जीवों का पालक है और प्रत्येक जीव का हर श्वास् एवं भोजन का प्रत्येक कौर तेरी नजर में है । गुरु के सम्मुख रहने वाले ऐसे व्यक्ति के अन्दर तू प्रकट हो जाता है और हे प्रभु, वह व्यक्ति तेरी ही रज़ा में बना रहता है ॥१॥ हे जीव, कुछ ऐसा कर कि तेरा मन श्राम के सुमिरन में ही लगा रहे ।

लागी जलि बुझी पाइआ गुरमुखि गिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतर की गति जाणीऐ गुर मिलीऐ संक उतारि ॥ मुइआ जितु घरि जाईऐ तितु जीवदिआ मरु मारि ॥ अनहद सबदि सुहावणे पाईऐ गुर वीचारि ॥ २ ॥ अनहद बाणी पाईऐ तह हउमै होइ बिनासु ॥ सतगुरु सेवे आपणा हउ सद कुरबाणै तासु ॥ खड़ि दरगह पैनाईऐ मुखि हरि नाम निवासु ॥ ३ ॥ जह देखा तह रवि रहे सिव सकती का मेलु ॥ त्रिहु गुण बंधी देहुरी जो आइआ जगि सो खेलु ॥ विजोगी दुखि विछुड़े मनमुखि लहहि न मेलु ॥ ४ ॥ मनु बैरागी घरि वसै सच भै राता होइ ॥ गिआन महा रसु भोगवै बाहुड़ि भूख न होइ ॥ नानक इहु मनु मारि मिलु भी फिरि दुखु न होइ ॥ ५ ॥ १८ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ एहु मनो मूरखु लोभीआ लोभे लगा लुोभानु ॥ सबदि न भीजै साकता दुरमति आवनु जानु ॥ साधू सतगुरु जे मिलै ता पाईऐ गुणी निधानु ॥ १ ॥ मन रे हउमै छोडि गुमानु ॥ हरि गुरु सरवरु सेवि तू पावहि दरगह मानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम नामु जपि दिनसु राति गुरमुखि हरि धनु जानु ॥ सभि सुख हरि रस भोगणे संत सभा मिलि गिआनु ॥ निति अहिनिसि हरि प्रभु सेविआ सतगुरि दीआ नामु ॥ २ ॥ कूकर कूड़ु कमाईऐ गुर निंदा पचै पचानु ॥ भरमे भूला दुखु घणो जमु मारि करै खुलहानु ॥ मनमुखि सुखु न पाईऐ गुरमुखि सुखु सुभानु ॥ ३ ॥ ऐथै धंधु पिटाईऐ सचु लिखतु परवानु ॥ हरि सजणु गुरु सेवदा गुर करणी परधानु ॥ नानक नामु न वीसरै करमि सचै नीसाणु ॥ ४ ॥ १९ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ इकु तिलु पिआरा वीसरै रोगु वडा मन माहि ॥ किउ दरगह पति पाईऐ जा हरि न वसै मन माहि ॥ गुरि मिलिऐ सुखु पाईऐ अगनि मरै गुण माहि ॥ १ ॥ मन रे अहिनिसि हरि गुण सारि ॥ जिन खिनु पलु नामु न वीसरै ते जन विरले संसारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोती जोति मिलाईऐ सुरती सुरति संजोगु ॥ हिंसा हउमै गतु गए नाही सहसा सोगु ॥ गुरमुखि जिसु हरि मनि वसै तिसु मेले गुरु संजोगु ॥ २ ॥ काइआ कामणि जे करी भोगे भोगणहारु ॥ तिसु सिउ नेहु न कीजई जो दीसै चलणहारु ॥ गुरमुखि रवहि सोहागणी सो

गुरु की शरण में जिसने ज्ञान प्राप्त कर लिया उसकी अन्दरूनी तृष्णा की जलन समाप्त हो जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब सब शंकाओं को दूर करके व्यक्ति गुरु की शरण में आ जाता है तो उसे अपनी अन्तरात्मा की स्थिति का ज्ञान हो जाता है । मरणोपरांत जिस मौत के घर में जाना है उसके डर को जीवित रहते ही समाप्त कर लिया जाता है । यह तभी सम्भव है जब गुरु की शिक्षाओं का पालन विचारपूर्वक किया जाता है और सुहावने अनहत् शब्द में लीन हुआ जाता है ॥ २ ॥ जब अनहत् वाणी प्राप्त हो जाए तो अहंकार का नाश हो जाता है । मैं उस व्यक्ति पर बलिहारी जाता हूँ जो सद्गुरु के बताए मार्ग पर चलता है । उसके मुँह में सदैव प्रभु नाम का निवास रहता है और उसे प्रभु के समक्ष सम्मान भी प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ मैं जिधर भी देखता हूँ उधर ही चैतन्य एवं प्रकृति के मेल से बना हुआ संसार दिखाई देता है । सभी जीव त्रिगुणात्मक माया के बन्धनों में पड़े हुए इस संसार में मस्त होकर खेल रहे हैं । मनमुख व्यक्ति का मिलाप प्रभु से नहीं होता और वह प्रभु से वियुक्त होकर सदैव दुःखी बना रहता है ॥ ४ ॥ उस सत्य प्रभु के भय में रंगा हुआ मन वैराग्यवान होकर अपने स्वरूप में टिका रहता है । वह प्रभु के ज्ञान रूपी महारस का पान करता है और उसे फिर किसी प्रकार की भूख अथवा तृष्णा नहीं रहती । हे नानक, तू भी इस मन को समझाकर उस प्रभु के साथ लीन बना रह । तू फिर कभी भी दुखी नहीं होगा ॥ ४ ॥ १८ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ माया में लीन व्यक्ति का मन मूर्ख एवं लालची है और वह हर समय लोभ में ही फंसा रहता है । गुरु के शब्द में इसकी रुचि नहीं बनती और कुबुद्धि के कारण इसका आवागमन का चक्र बना रहता है । इसे यदि सद्गुरु प्राप्त हो जाए तो गुणों का समुद्र परमात्मा भी इसको मिल जाता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू अपनी चतुराइयों का अहंकार छोड़ दे और परमात्मा रूपी गुरु की शरण में आ जा जो पवित्र सरोवर की तरह है । उसी की सेवा में तू सम्मान प्राप्त कर सकेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मन, तू रात दिन परमात्मा के नाम का स्मरण किया कर । गुरु की शरण में आकर हरि नाम धन की कीमत समझ । सद्संगत में मिलकर हरि नाम के साथ पहचान बढ़ा; तुझे सभी आध्यात्मिक आनंद प्राप्त हो जाएंगे । तुझे दिन रात प्रभु की सेवा करने से ही उस सद्गुरु परमात्मा के माध्यम से ही नाम प्राप्त होता है ॥ २ ॥ जो व्यक्ति मन के पीछे चलता है वह कुत्तों की तरह है और वह सदा मायावी दौड़–भाग में ही लगा रहता है । वह गुरु की निन्दा करने में ही मर–खप जाता है । भ्रमों में भूला हुआ वह घनघोर दुखों में पड़ा रहता है और अन्त में यम ही उसे भीतरी मार मारकर धराशायी कर देता है । मनमुख व्यक्ति कभी सुख नहीं पाता परन्तु गुरमुख बनकर सभी पवित्र आनन्द प्राप्त होते हैं ॥ ३ ॥ लोभी व्यक्ति इस दुनियां के जंजालों में लीन रहता है परन्तु वहाँ केवल प्रभु स्मरण का हिसाब ही स्वीकार किया जाता है । गुरु स्वयं ही परमात्मा का स्मरण करता है और अन्यों को भी प्रेरित करना उसका सबसे बड़ा काम है । हे नानक! सदा स्थिर रहने वाले प्रभु की कृपा के कारण ही व्यक्ति का भाग्य उदय होता है और उसको कभी भी प्रभु का नाम विस्मृत नहीं होता ॥ ४ ॥ १९ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ ऐसे भी लोग हैं जिनको यदि क्षण भर के लिए भी परमात्मा विस्मृत हो जाए तो वे इसे बहुत बड़ा मन का रोग मानते हैं । यदि परमात्मा का निवास हृदय में नहीं है तो भला उसके दरबार में सम्मान कैसे मिल सकता है। सद्गुरु की प्राप्ति पर ही सुख मिलता है और तृष्णा की अग्नि उस प्रभु के गुणानुवाद के साथ ही समाप्त होती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, दिन रात प्रभु के गुणों को याद करता रह । ऐसे व्यक्ति संसार में बहुत ही कम हैं जिन्हें क्षण भर के लिए भी परमात्मा का नाम विस्मृत नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि प्रभु की ज्योति में अपने प्राण मिला दें, उसमें अपनी सुरति संयुक्त कर दें तो कठोरता एवं अहंकार दूर हो जाते हैं और कोई भी शोक अथवा संशय नहीं रहता । गुरमुख बन कर जिसके मन में हरि का निवास बन जाता है उसी का प्रभु रूपी गुरु से मेल भी हो जाता है ॥ २ ॥ यदि मैं इस शरीर को कामिनी बनाऊँ और प्रभु–पति के समक्ष समर्पित हो जाऊँ तो प्रभु पति से मेरा मिलाप हो जाएगा । जो चलायमान है उससे प्यार नहीं करना चाहिए । गुरमुख बनकर जो जीव स्त्रियां सुहागिन बनती हैं, प्रभु–पति उनकी सेज

प्रभु सेज भतारु ॥ ३ ॥ चारे अगनि निवारि मरु गुरमुखि हरि जलु पाइ ॥ अंतरि कमलु प्रगासिआ अंम्रितु भरिआ अघाइ ॥ नानक सतगुरु मीतु करि सचु पावहि दरगह जाइ ॥ ४ ॥ २० ॥ सिरीरागु महला १ ॥ हरि हरि जपहु पिआरिआ गुरमति ले हरि बोलि ॥ मनु सच कसवटी लाईऐ तुलीऐ पूरै तोलि ॥ कीमति किनै न पाईऐ रिद माणक मोलि अमोलि ॥ १ ॥ भाई रे हरि हीरा गुर माहि ॥ सतसंगति सतगुरु पाईऐ अहिनिसि सबदि सलाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचु वखरु धनु रासि लै पाईऐ गुर परगासि ॥ जिउ अगनि मरै जलि पाइऐ तिउ त्रिसना दासनि दासि ॥ जम जंदारु न लगई इउ भउजलु तरै तरासि ॥ २ ॥ गुरमुखि कूड़ु न भावई सचि रते सच भाइ ॥ साकत सचु न भावई कूड़ै कूड़ी पांइ ॥ सचि रते गुरि मेलिऐ सचे सचि समाइ ॥ ३ ॥ मन महि माणकु लालु नामु रतनु पदारथु हीरु ॥ सचु वखरु धनु नामु है घटि घटि गहिर गंभीरु ॥ नानक गुरमुखि पाईऐ दइआ करे हरि हीरु ॥ ४ ॥ २१ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ भरमे भाहि न विझवै जे भवै दिसंतर देसु ॥ अंतरि मैलु न उतरै ध्रिगु जीवणु ध्रिगु वेसु ॥ होरु कितै भगति न होवई बिनु सतिगुर के उपदेस ॥ १ ॥ मन रे गुरमुखि अगनि निवारि ॥ गुर का कहिआ मनि वसै हउमै त्रिसना मारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु माणकु निरमोलु है राम नामि पति पाइ ॥ मिलि सतसंगति हरि पाईऐ गुरमुखि हरि लिव लाइ ॥ आपु गइआ सुखु पाइआ मिलि सललै सलल समाइ ॥ २ ॥ जिनि हरि हरि नामु न चेतिओ सु अउगुणि आवै जाइ ॥ जिसु सतगुरु पुरखु न भेटिओ सु भउजलि पचै पचाइ ॥ इहु माणकु जीउ निरमोलु है इउ कउडी बदलै जाइ ॥ ३ ॥ जिंना सतगुरु रसि मिलै से पूरे पुरख सुजाण ॥ गुर मिलि भउजलु लंघीऐ दरगह पति परवाणु ॥ नानक ते मुख उजले धुनि उपजै सबदु नीसाणु ॥ ४ ॥ २२ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ वणजु करहु वणजारिहो वखरु लेहु समालि ॥ तैसी वसतु विसाहीऐ जैसी निबहै नालि ॥ अगै साहु सुजाणु है लैसी वसतु समालि ॥ १ ॥ भाई रे रामु कहहु चितु लाइ ॥ हरि जसु वखरु लै चलहु

पर ही विराजमान होता है ॥ ३ ॥ हे जीव, तू काम, क्रोध, लोभ एवं ममता आदि की अग्नियों का निवारण कर और गुरमुख बनकर परमात्मा रूपी जल से इन अग्नियों को बुझा दे । इस प्रकार तेरा हृदय रूपी कमल खिल उठेगा और प्रभु–नाम रूपी अमृत पीकर तू अघा जाएगा । हे नानक, तू गुरु को मित्र बना और इस प्रकार निश्चित रूप से तू उस सच्चे दरबार में सम्मान प्राप्त कर लेगा ॥ ४ ॥ २० ॥ सिरी रागु महला १ ॥ हे भाई, हरि का जाप करो और यह जाप परमात्मा रूपी गुरु से मांग कर ले लो । जब मन सुमिरन की कसौटी पर लगाया जाता है तो वहाँ इसका तौल पूरा उतरता है । तभी वह परमात्मा अमूल्य माणिक की तरह हृदय में आ बसता है जिसकी कीमत नहीं आंकी जा सकती ॥ १ ॥ हे भाई, यह हीरा रूपी परमात्मा गुरु में विद्यमान है और सद्संगत रूपी सद्गुरु में ही यह प्राप्त होता है । सद्संगत में ही तू रात दिन शब्द में लीन होकर उसका गुणानुवाद कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई, तू ऐसा सौदा और धनराशि इकट्ठी कर जो सत्य स्वरूप हो । यह सौदा परम गुरु परमात्मा के द्वारा ही मन में प्रकाशित होता है । जैसे पानी डालने से आग बुझ जाती है, वैसे ही प्रभु के दासों का दास बनने पर तृष्णा रूपी अग्नि समाप्त हो जाती है । उसे भयानक यम का भी डर नहीं लगता और इस प्रकार वह सही सलामत संसार सागर से पार हो जाता है ॥ २ ॥ सदैव सत्य में ही रंगे रहने वाले गुरमुखों को झूठ अच्छा नहीं लगता । दूसरी ओर दुर्जनों को सत्य अच्छा नहीं लगता और वे झूठ में ही फंसे हुए झूठे सम्मान वाले ही बने रहते हैं । सत्य में लीन व्यक्तियों को गुरु परमात्मा से मिला देता है और वे अन्ततः उसी सत्य में ही समा जाते हैं ॥ ३ ॥ जीव के मन में ही माणिक, लाल, हीरे एवं रत्नों जैसे नाम रूपी पदार्थ विद्यमान हैं । संसार में सच्चा सौदा और धन केवल परमात्मा का नाम ही है क्योंकि वही परमात्मा सभी घटों में गहन–गंभीर रूप से विद्यमान है । हे नानक ! गुरमुख बनकर ही उस हीरे रूपी प्रभु को प्राप्त किया जा सकता है ॥ ४ ॥ २१ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ देश–देशांतरों में भ्रमण करते रहने पर भी भ्रम की अग्नि शान्त नहीं होती । यदि अन्तर्मन की मैल नहीं उतरती तो ऐसे जीवन और वेश को धिक्कार है । सद्गुरु के उपदेश को मन में बसाए बिना अन्य किसी साधन से भी परमात्मा की भक्ति नहीं हो सकती ॥ १ ॥ हे मन, तू गुरमुख बनकर अपनी तृष्णा की अग्नि को शान्त कर । यदि गुरु का उपदेश मन में बस जाए तो अहंकार जनित सब तृष्णाएं समाप्त हो जाती हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा के नाम में लीन होकर यह मन अमूल्य मोती बन जाता है । परमात्मा का नाम सद्संगत में मिल बैठ कर ही प्राप्त होता है और गुरु की शरण में आकर ही परमात्मा में सुरति लीन होती है । फलस्वरूप अहंकार समाप्त हो जाता है, आनन्द प्राप्त होता है और पानी में पानी मिल जाने की तरह जीव उस परमात्मा में समा जाता है । जिस व्यक्ति ने परमात्मा का स्मरण ध्यान में नहीं रखा वह विकार युक्त बनकर आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है । जिसको परमात्मा रूपी सद्गुरु नहीं मिला वह संसार समुद्र में ही ख्वार होता रहता है । यह माणिक रूपी जीव अमूल्य है परन्तु व्यक्ति इसे कौड़ियों के मोल व्यर्थ में लुटाता जा रहा है ॥ ३ ॥ जिनको सद्गुरु के प्रेम का रस मिल जाता है वे व्यक्ति ही पूर्ण एवं बुद्धिमान पुरुष हैं । गुरु के माध्यम से संसार सागर से पार हुआ जाता है और परमात्मा के दरबार में सम्मान प्राप्त होता है । हे नानक ! उन व्यक्तियों के मुख उज्जवल हैं जिनके अन्दर शब्द ब्रह्म की धुन सदैव चलती रहती है ॥ ४ ॥ २२ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ हे व्यापारियो, इस संसार में तुम व्यापार कर लो और अपने सौदे को संभाल के रखो । ऐसा सौदा ही खरीदा जाना चाहिए जो सदैव साथ निभने वाला हो । वह परमात्मा रूपी बड़ा व्यापारी बहुत बुद्धिमान है; वह तुम्हारे सत्य के सौदे को पूरी तरह से संभाल लेगा । हे भाई, एक चित्त होकर राम का नाम लो । परमात्मा के गुणानुवाद का सौदा यहां से लेकर चलो ।

सहु देखै पतीआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिना रासि न सचु है किउ तिना सुखु होइ ॥ खोटै वणजि वणंजिऐ मनु तनु खोटा होइ ॥ फाही फाथे मिरग जिउ दूखु घणो नित रोइ ॥ २ ॥ खोटे पोतै ना पवहि तिन हरि गुर दरसु न होइ ॥ खोटे जाति न पति है खोटि न सीझसि कोइ ॥ खोटे खोटु कमावणा आइ गइआ पति खोइ ॥ ३ ॥ नानक मनु समझाईऐ गुर कै सबदि सालाह ॥ राम नाम रंगि रतिआ भारु न भरमु तिनाह ॥ हरि जपि लाहा अगला निरभउ हरि मन माह ॥ ४ ॥ २३ ॥ सिरीरागु महला १ घरु २ ॥ धनु जोबनु अरु फुलड़ा नाठीअड़े दिन चारि ॥ पबणि केरे पत जिउ ढलि ढुलि जुंमणहार ॥ १ ॥ रंगु माणि लै पिआरिआ जा जोबनु नउ हुला ॥ दिन थोड़ड़े थके भइआ पुराणा चोला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सजण मेरे रंगुले जाइ सुते जीराणि ॥ हं भी वंञा डुमणी रोवा झीणी बाणि ॥ २ ॥ की न सुणेही गोरीए आपण कंनी सोइ ॥ लगी आवहि साहुरै नित न पेईआ होइ ॥ ३ ॥ नानक सुती पेईऐ जाणु विरती संनि ॥ गुणा गवाई गंठड़ी अवगण चली बंनि ॥ ४ ॥ २४ ॥ सिरीरागु महला १ घरु दूजा २ ॥ आपे रसीआ आपि रसु आपे रावणहारु ॥ आपे होवै चोलड़ा आपे सेज भतारु ॥ १ ॥ रंगि रता मेरा साहिबु रवि रहिआ भरपूरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे माछी मछुली आपे पाणी जालु ॥ आपे जाल मणकड़ा आपे अंदरि लालु ॥ २ ॥ आपे बहु बिधि रंगुला सखीए मेरा लालु ॥ नित रवै सोहागणी देखु हमारा हालु ॥ ३ ॥ प्रणवै नानकु बेनती तू सरवरु तू हंसु ॥ कउलु तू है कवीआ तू है आपे वेखि विगसु ॥ ४ ॥ २५ ॥ सिरीरागु महला १ घरु ३ ॥ इहु तनु धरती बीजु करमा करो सलिल आपाउ सारिंगपाणी ॥ मनु किरसाणु हरि रिदै जंमाइ लै इउ पावसि पदु निरबाणी ॥ १ ॥ काहे गरबसि मूड़े माइआ ॥ पित सुतो सगल कालत्र माता तेरे होहि न अंति सखाइआ ॥ रहाउ ॥ बिखै बिकार दुसट किरखा करे इन तजि आतमै होइ धिआई ॥ जपु तपु संजमु होहि जब राखे कमलु बिगसै मधु आस्रमाई ॥ २ ॥ बीस सपताहरो बासरो संग्रहै तीनि खोड़ा नित कालु सारै ॥ दस अठार मै अपरंपरो चीनै कहै नानकु इव एकु तारै ॥ ३ ॥

वह स्वामी प्रभु तुम्हें प्रसन्नता की दृष्टि से देखेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनके पास सत्य की रास–पूंजी नहीं है उनको भला कैसे सुख प्राप्त हो सकता है। खोटा व्यापार करने से तन–मन दोनों ही खोटे हो जाते हैं। जाल में फंसे हुए हिरण की तरह जीव को बहुत दुःख होता है और सदैव रोना पड़ता है ॥ २ ॥ खोटे सिक्के को ख़ज़ाने में नहीं लिया जाता और खोटे व्यक्तियों का भी गुरु से साक्षात्कार नहीं होता है। खोटे व्यक्ति का आन्तरिक जगत अच्छा नहीं होता और न ही उसको सम्मान मिलता है। ऐसा व्यक्ति कभी भी कामयाब नहीं होता है। खोटा व्यक्ति सदा दुष्कर्म ही करता है और अपना सम्मान गँवा कर सदैव जन्मता–मरता रहता है ॥ ३ ॥ हे नानक ! परमात्मा का गुणानुवाद करने वाले शब्दों के द्वारा मन को समझाया जाना चाहिए। जो व्यक्ति परमात्मा के नाम के प्रेम में रंगे रहते हैं उनको जीवन के भ्रमों का बोझ सहना नहीं पड़ता। परमात्मा का नाम स्मरण करने से अत्यधिक लाभ प्राप्त होता है और वह निर्भय प्रभु मन में आ बसता है ॥ ४ ॥ २३ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ घरु २ ॥ धन यौवन एवं फूल चार दिन के ही मेहमान होते हैं। जैसे पानी में उगने वाली बेल के पत्र पानी के बह जाने के कारण सूखकर नष्ट हो जाते हैं वैसे ही इन का भी नाश हो जाता है ॥ १ ॥ हे प्यारे, जब तक यौवन नया–नया है तब तक तू (आध्यात्मिक) आनन्द ले ले। जब आयु के दिन थोड़े रह जाएंगे तो शारीरिक संगठन पुराना पड़ जाएगा (और फिर प्रभु सुमिरन नहीं हो सकेगा) ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे प्यारे स्वजन श्मशान में जाकर सोये पड़े हैं। मैं भी थक कर संशय में पड़ी हुई स्त्री की तरह उसी तरफ बढ़ रहा हूँ और धीमी आवाज में सिसक रहा हूँ ॥ २ ॥ हे सुन्दर जीव स्त्री, तू ध्यान से यह बात क्यों नहीं सुनती कि मायके (इस संसार में) निवास सदा नहीं बना रह सकता; ससुराल में जरूर जाना ही पड़ेगा ॥ ३ ॥ हे नानक ! जो जीव रूपी स्त्री मायके में लापरवाही की नींद में सोई रही उसके प्रति यह जान लिया जाना चाहिए कि उसके घर में सेंध लग रही है। गुणों की पोटली उसने गंवा ली है और अवगुणों का गट्ठर बाँध कर वह यहां से चल पड़ी है ॥ ४ ॥ २४ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ घर २ ॥ प्रभु स्वयं ही रस है और स्वयं ही रसिक है और स्वाद का आनन्द लेने वाला है। प्रभु स्वयं ही स्त्री का सौन्दर्य है और स्वयं ही सेज पर उस स्त्री का भतार है ॥ १ ॥ मेरा स्वामी प्रभु प्यार में रंगा हुआ सर्वत्र रम रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह मछुआरा, मछली, पानी एवं जाल स्वयं ही है। वह जाल का मनका और मछली को फंसाने वाला चारा भी स्वयं ही है। हे सखियो ! मेरा प्यारा प्रभु स्वयं ही कई तरीकों से कौतुक और खेल दिखाने वाला है। भाग्यशाली जीव स्त्रियों को वह स्वामी प्रभु सदैव मिलता है परन्तु मेरे जैसों का हाल देखते ही बनता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु ! नानक तेरे समक्ष प्रार्थना करता है कि तू ही सरोवर है, तू ही सरोवर में रहने वाला हंस है, तू ही कमल है और चन्द्रमा की चांदनी में खिलने वाला छोटा कमल का फूल भी तू ही है। तू स्वयं अपने आप को देखकर सदैव प्रसन्न बना रहता है ॥ ४ ॥ २५ ॥ सिरी रागु महला ॥ १ ॥ घरु ३ ॥ हे भाई ! इस शरीर को धरती बना। अपनी दिनचर्या को बीज बना और परमात्मा के नाम के जल से इसको सींच। अपने मन को किसान बना तथा परमात्मा का नाम अपने हृदय में उत्पन्न कर। इस प्रकार तू निर्वाण पद को प्राप्त कर लेगा ॥ १ ॥ हे मूर्ख, माया के प्रपंच का अभिमान क्यों करता है। अन्तिम समय में पिता, पुत्र, स्त्री और माँ तेरे सहायक नहीं बन सकते ॥ रहाउ ॥ जो मनुष्य विषय–विकारों की खरपतवार को हृदय में से उखाड़ फेंकता है और इनको त्याग कर एक चित्त होकर प्रभु का स्मरण करता है, जप तप और संयम उसके रक्षक बन जाते हैं; उसका हृदय कमल खिल पड़ता है; उसे आध्यात्मिक आनन्द रूपी शहद प्राप्त होने लग जाता है ॥ २ ॥ हे नानक ! जो व्यक्ति सत्ताईसों नक्षत्रों में अर्थात हर रोज प्रभु नाम धन का संग्रह करता रहे, जो व्यक्ति अपनी आयु की तीनों अवस्थाओं में मौत को सदैव याद रखे, जो चारों वेदों, छह शास्त्रों और अठारह पुराणों आदि में केवल अपरंपर प्रभु को ही पहचानने का प्रयत्न करे, परमात्मा उसको संसार–समुद्र से पार कर देता है ॥ ३ ॥

२६ ॥ सिरीरागु महला १ घरु ३ ॥ अमलु करि धरती बीजु सबदो करि सच की आब नित देहि पाणी ॥ होइ किरसाणु ईमानु जंमाइ लै भिसतु दोजकु मूड़े एव जाणी ॥ १ ॥ मतु जाण सहि गली पाइआ ॥ माल कै माणै रूप की सोभा इतु बिधी जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐब तनि चिकड़ो इहु मनु मीडको कमल की सार नही मूलि पाई ॥ भउरु उसतादु नित भाखिआ बोले किउ बूझै जा नह बुझाई ॥ २ ॥ आखणु सुनणा पउण की बाणी इहु मनु रता माइआ ॥ खसम की नदरि दिलहि पसिंदे जिनी करि एकु धिआइआ ॥ ३ ॥ तीह करि रखे पंज करि साथी नाउ सैतानु मतु कटि जाई ॥ नानकु आखै राहि पै चलणा मालु धनु कित कू संजिआही ॥ ४ ॥ २७ ॥ सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ सोई मउला जिनि जगु मउलिआ हरिआ कीआ संसारो ॥ आब खाकु जिनि बंधि रहाई धंनु सिरजणहारो ॥ १ ॥ मरणा मुला मरणा ॥ भी करतारहु डरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ता तू मुला ता तू काजी जाणहि नामु खुदाई ॥ जे बहुतेरा पड़िआ होवहि को रहै न भरीऐ पाई ॥ २ ॥ सोई काजी जिनि आपु तजिआ इकु नामु कीआ आधारो ॥ है भी होसी जाइ न जासी सचा सिरजणहारो ॥ ३ ॥ पंज वखत निवाज गुजारहि पड़हि कतेब कुराणा ॥ नानकु आखै गोर सदेई रहिओ पीणा खाणा ॥ ४ ॥ २८ ॥ सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ एकु सुआनु दुइ सुआनी नालि ॥ भलके भउकहि सदा बइआलि ॥ कूड़ु छुरा मुठा मुरदारु ॥ धाणक रूपि रहा करतार ॥ १ ॥ मै पति की पंदि न करणी की कार ॥ हउ बिगड़ै रूपि रहा बिकराल ॥ तेरा एकु नामु तारे संसारु ॥ मै एहा आस एहो आधारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुखि निंदा आखा दिनु राति ॥ पर घरु जोही नीच सनाति ॥ कामु क्रोधु तनि वसहि चंडाल ॥ धाणक रूपि रहा करतार ॥ २ ॥ फाही सुरति मलूकी वेसु ॥ हउ ठगवाड़ा ठगी देसु ॥ खरा सिआणा बहुता भारु ॥ धाणक रूपि रहा करतार ॥ ३ ॥ मै कीता न जाता हरामखोरु ॥ हउ किआ मुहु देसा दुसटु चोरु ॥ नानकु नीचु कहै बीचारु ॥ धाणक रूपि रहा करतार ॥ ४ ॥ २९ ॥ सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ एका सुरति जेते है जीअ ॥ सुरति विहूणा कोइ न कीअ ॥

२६ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ घरु ३ ॥ हे व्यक्ति ! अपनी दिनचर्या को धरती बना। शब्द ब्रह्म का बीज उसमें डाल, सत्य के यश का सदैव उसे पानी दे । किसान जैसा दृढ़ निश्चय उत्पन्न कर तब तू स्वर्ग और नरक को सच्चे अर्थों में जान पाएगा ॥ १ ॥ हे जीव ! यह मत समझ कि केवल बातों से ही प्राप्ति होती है । यदि धन के अहंकार में ही टिका रहा, यदि रूप की शोभा में ही मन लगा रहा तो इस तरह मानव जीवन व्यर्थ ही चला जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब तक शरीर में विचारों का कीचड़ है और मन उसमें मेंढक बन कर पड़ा रहता है तो यह मेंढक कीचड़ में खिले हुए कमल के फूल की कीमत नहीं जान सकता अर्थात प्रभु की सूझ इसे नहीं आ सकती । समझदार भँवरा तो उस फूल पर आकर अपनी गुंजार डालता रहता है परन्तु पास ही में कीचड़ में मस्त मेंढक कमल के सौन्दर्य से पूरी तरह अनभिज्ञ बना रहता है । गुरु रूपी भँवरा भी मेंढक रूपी मन को सदैव उपदेश देता है पर उसे समझ नहीं आता क्योंकि वह समझना ही नहीं चाहता ॥ २ ॥ यह मन मांया के रंग में रंगा हुआ है इसे धार्मिक सिद्धान्तों की वाणी सुनना–सुनाना वेकार है । वही व्यक्ति मालिक प्रभु की कृपा दृष्टि में बने रहते हैं और उसको दिल से पसन्द आते हैं जिन्होंने केवल एक उस प्रभु का स्मरण किया है ॥ ३ ॥ हे काज़ी, तू तीस रोज़े रखता है, पाँच नमाज़ों को अपना साथी वनाता है पर देखना कहीं जिसका नाम शैतान है वह तेरे सारे किए–कराए को उलट ना दे अर्थात यह ध्यान रखना कि तू ऊपर से तो नियमों का पालन करता दिखे परन्तु दिल से शैतानियों को ना छोड़े । तुम्हें तो मौत के रास्ते पर चलकर यहाँ से जाना ही है तो फिर तूने इतना माल–धन इकट्ठा क्यों कर लिया है ॥ ४ ॥ २७ ॥ सिरी रागु महला १ घरु४॥ जिस मालिक ने सारा संसार हरा–भरा किया है, जिसने पानी और मिट्टी इकट्ठी करके पदार्थों का सृजन किया वह सृजनहार धन्य है ॥ १ ॥ हे मुल्ला, मौत हर एक के सिर पर है । तब तो परमात्मा से निश्चित रूप से डरना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तब ही तू मुल्ला है और तब ही तू वास्तविक काज़ी है यदि तूने खुदा के नाम के वास्तविक मर्म को जान लिया है । चाहे कोई कितना ही धार्मिक पुस्तकों को पढ़ जाए परन्तु जब श्वास पूरे हो जाते हैं तो कोई भी यहां रह नहीं सकता ॥ २ ॥ वास्तविक काज़ी वही है जिसने अहंकार को त्याग कर एक खुदा के नाम को अपना आधार बना लिया है । वह सच्चा सृजनहार आज भी स्थिर है और सदैव स्थिर बना रहेगा । यह रचना चलायमान होकर चली ही जाएगी परन्तु वह नहीं जाएगा ॥ ३ ॥ हे काजी, तू पाँचों वक्त नमाज़ गुज़ारता है और कुरान शरीफ एवं अन्य धार्मिक पुस्तकें भी पढ़ता है । नानक कहता है कि जब मौत (कब्र) आवाज़ देती है तो यहाँ का खाना–पीना यहीं धरा रह जाता है ॥ ४ ॥ २८ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ घरु ४ ॥ हे प्रभु, मेरे साथ एक कुत्ता (लोभ) है । आशा तृष्णा रूपी दो कुत्तियां हैं, मेरे हाथ में झूठ का छुरा है और माया में ठगा हुआ मैं शिकार के लिए निकला हुआ धानक हूँ जो मुर्दा खाने का शौकीन है ॥ १ ॥ हे प्रभु ! मैंने सम्मान प्राप्त करने वाली न तो कोई शिक्षा ली है और न ही कोई करने योग्य काम किया है । मैं तो मनुष्य के बिगड़े हुए रूप में बहुत ही भयानक बनकर रहता हूँ । केवल तेरा ही एक नाम संसार का तारनहार है, यही मेरी आशा और यही मेरा आधार है ॥ १॥ रहाउ ॥ दिन–रात मेरा मुख निन्दा में लगा रहता है । पराये घर की ओर देखने वाला मैं अत्यन्त नीच बन गया हूँ । मेरे शरीर में काम और क्रोध रूपी चाण्डाल बसे हुए हैं । हे करतार ! मैं धानकों के रूप में क्रियाशील हूं ॥ २ ॥ मेरा ध्यान सदैव इसी ओर लगा रहता है कि मैं लोगों को ठग–जाल में फसाऊँ । वैसे मैंने फकीरों का वेश धारण कर रखा है । स्वयं को ठगी का अड्डा बनाकर मैं देश को ठग रहा हूँ । जितनी अधिक चतुराईयों में मैं प्रवीण होता जाता हूँ मेरे सिर पर पाप का बोझ और बढ़ता जाता है । हे कर्त्ता प्रभु ! मैंने धानक वाला रूप धारण किया हुआ है ॥ ३ ॥ मैं ऐसा हरामखोर हूँ कि मैंने तेरे दिए हुए दान की कीमत नहीं पहचानी । मैं दुष्ट चोर हूँ, तेरे सामने क्या मुँह लेकर हाजिर होऊँगा । मन्द कर्मों वाला नानक यही कह रहा है कि हे कर्त्ता प्रभु इस संसार में मैं तो धानक के रूप में जीवन व्यतीत कर रहा हूँ ॥ ४ ॥ २९ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ घरु ४ ॥ जितने भी जीव हैं उन सबमें परमात्मा की दी हुई सूझ शक्ति कार्यशील है । परमात्मा ने कोई भी ऐसा जीव पैदा नहीं किया जो बुद्धि विहीन हो ।

जेही सुरति तेहा तिन राहु ॥ लेखा इको आवहु जाहु ॥ १ ॥ काहे जीअ करहि चतुराई ॥ लेवै देवै ढिल न पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरे जीअ जीआ का तोहि ॥ कित कउ साहिब आवहि रोहि ॥ जे तू साहिब आवहि रोहि ॥ तू ओना का तेरे ओहि ॥ २ ॥ असी बोलविगाड़ विगाड़ह बोल ॥ तू नदरी अंदरि तोलहि तोल ॥ जह करणी तह पूरी मति ॥ करणी बाझहु घटे घटि ॥ ३ ॥ प्रणवति नानक गिआनी कैसा होइ ॥ आपु पछाणै बूझै सोइ ॥ गुर परसादि करे बीचारु ॥ सो गिआनी दरगह परवाणु ॥ ४ ॥ ३० ॥ सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ तू दरीआउ दाना बीना मै मछुली कैसे अंतु लहा ॥ जह जह देखा तह तह तू है तुझ ते निकसी फूटि मरा ॥ १ ॥ न जाणा मेउ न जाणा जाली ॥ जा दुखु लागै ता तुझै समाली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू भरपूरि जानिआ मै दूरि ॥ जो कछु करी सु तेरै हदूरि ॥ तू देखहि हउ मुकरि पाउ ॥ तेरै कंमि न तेरै नाइ ॥ २ ॥ जेता देहि तेता हउ खाउ ॥ बिआ दरु नाही कै दरि जाउ ॥ नानकु एक कहै अरदासि ॥ जीउ पिंडु सभु तेरै पासि ॥ ३ ॥ आपे नेड़ै दूरि आपे ही आपे मंझि मिआनुो ॥ आपे वेखै सुणे आपे ही कुदरति करे जहानुो ॥ जो तिसु भावै नानका हुकमु सोई परवानुो ॥ ४ ॥ ३१ ॥ सिरीरागु महला १ घरु ४ ॥ कीता कहा करे मनि मानु ॥ देवणहारे कै हथि दानु ॥ भावै देइ न देई सोइ ॥ कीते कै कहिऐ किआ होइ ॥ १ ॥ आपे सचु भावै तिसु सचु ॥ अंधा कचा कचु निकचु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा के रुख बिरख आराउ ॥ जेही धातु तेहा तिन नाउ ॥ फुलु भाउ फलु लिखिआ पाइ ॥ आपि बीजि आपे ही खाइ ॥ २ ॥ कची कंध कचा विचि राजु ॥ मति अलूणी फिका सादु ॥ नानक आणे आवै रासि ॥ विणु नावै नाही साबासि ॥ ३ ॥ ३२॥ सिरीरागु महला १ घरु ५ ॥ अछल छलाई नह छलै नह घाउ कटारा करि सकै ॥ जिउ साहिबु राखै तिउ रहै इसु लोभी का जीउ टल पलै ॥ १ ॥ बिनु तेल दीवा किउ जलै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पोथी पुराण कमाईऐ ॥ भउ वटी इतु तनि पाईऐ ॥ सचु बूझणु आणि जलाईऐ ॥ २ ॥ इहु तेलु दीवा इउ जलै ॥ करि चानणु साहिब तउ मिलै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इतु तनि लागै बाणीआ ॥ सुखु होवै सेव

जैसी सूझ–बुद्धि जीव को मिली है वह उसी के अनुरूप जीवन मार्ग अपना लेता है । जीव के आवागमन की मर्यादा को चलाने वाला वह एक प्रभु ही है ॥ १ ॥ हे जीव, तू क्यों चतुराइयां दिखाता है वह परमात्मा ले लेने और दे देने में ज़रा सी भी देरी नहीं लगाता ॥ १ ॥ रहाउ॥ हे प्रभु, सभी जीव तेरे हैं और तू इन सब जीवों का है । कुछ भी हो तू इन पर क्रोधित नहीं होता । हे प्रभु, यदि तुझे इन पर क्रोध आए भी तब भी वे सब तेरे ही हैं और तू उनका स्वामी है ॥२॥ हम बकवादी लोग स्वयं ही बात को बिगाड़ लेते हैं परन्तु तू हम सब की बातों को कृपा दृष्टि के माध्यम से परखता है । जहाँ आचरण अच्छा है वहीं स्यानापन पूरा है । आचरण के बिना सब कुछ कम ही कम है ॥ ३ ॥ नानक प्रार्थना करता है और पूछता है कि ज्ञानवान कैसा होता है ? जो अपने आप को पहचानता है और उस प्रभु के रहस्यों को भी बूझता है एवं गुरु की कृपा से विचारवान बना रहता है वही ज्ञानी जन परमात्मा के द्वार पर स्वीकृत होता है ॥ ४ ॥ ३० ॥ सिरी रागु महला १ घरु ४ ॥ हे प्रभु, तू बहुत बड़ा दरिया है और मैं एक छोटी सी मछली हूँ । मैं तेरा अन्तिम छोर नहीं जान सकती । जिधर भी मैं देखती हूँ उधर तू ही तू है; तुझसे बाहर निकल कर मैं उसी क्षण मर जाती हूँ ॥ १ ॥ ना तो मैं मछुवारे को जानती हूँ और न ही जाल को । जब भी मैं दुख में होती हूँ तो केवल तेरा ही स्मरण करती हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू सर्वव्यापक है लेकिन मैंने तुझे दूर जाना । जो कुछ भी मैं करता हूँ वह तेरे समक्ष ही होता है । तू सब देख रहा है लेकिन मैं फिर भी अपने किए हुए से मुकर जाता हूँ । मैं न तो उस काम में लगता हूँ जो तुझे अच्छा लगता है और न ही मैं तेरे नाम में ध्यान लगाता हूँ ॥ २ ॥ हे प्रभु, जो कुछ भी तू देता है मैं वही खाता हूँ । अन्य कोई द्वार नहीं है जहाँ मैं जाऊँ । नानक सिर्फ एक ही प्रार्थना करता है कि यह प्राण और शरीर तेरे ही दिए हुए हैं और यह सब तेरे आसरे ही रह सकता है ॥ ३ ॥ प्रभु स्वयं ही पास है और स्वयं ही दूर भी है । वह स्वयं ही सारे संसार में व्याप्त है । प्रभु स्वयं ही जीवों की संभाल करता है और स्वयं ही प्रत्येक की प्रार्थना सुनता है । वह स्वयं ही अपनी सत्ता से जगत की उत्पत्ति करता है । हे नानक, जो उस प्रभु को अच्छा लगता है वही आदेश सब को मानना पड़ता है ॥४॥३१॥ सिरी रागु महला १ घरु ४॥ उस परमात्मा द्वारा पैदा किया हुआ जीव अपने मन में भला किस बात का अभिमान कर सकता है । सब कुछ उस देने वाले प्रभु के हाथ में है । उसकी मर्ज़ी है; बेशक वह किसी को दे या न दें । पैदा किए हुए जीवों के कहने से भला क्या हो सकता है ॥१॥ वह स्वयं सत्य स्वरूप है और उसे सत्य ही अच्छा लगता है । परन्तु ओछा जीव ओछेपन में ही लगा रहता है और इस प्रकार कच्चे से भी कच्चा बनता जाता है ॥१॥ रहाउ॥ यह वृक्ष आदि जिसके पैदा किए हुए हैं वह ही इनको संवारता है और वही इनके आन्तरिक स्वरूप के अनुरूप उनका नाम तय करता है । इसी प्रकार जिस तरह की भावना का फूल किसी व्यक्ति के अन्दर है उसी प्रकार का उसको जीवन रूपी फल लगता है । प्रत्येक व्यक्ति जो कुछ स्वयं बोता है वह स्वयं ही उसे खाता भी है ॥ २॥ जिस व्यक्ति के अन्तर्मन में कच्चा कारीगर है उसकी जीवन रूपी दीवार कच्ची ही बनेगी । उसकी मति फीकी ही रहेगी और उसका सारा जीवन भी फीके स्वाद वाला बना रहेगा । हे नानक, यदि प्रभु चाहे तो उसका जीवन सही रास्ते पर आ सकता है परन्तु नाम से विहीन होकर उस प्रभु के समक्ष शाबास (इज्जत) प्राप्त नहीं होती ॥३॥३२॥ सिरी रागु महला १ घरु ५ ॥ अछल माया को यदि कोई छलने का प्रयत्न करे तो वह छली नहीं जाती। उस पर किसी की कटार का कोई वार घाव नहीं कर सकता । उसके आगे लोभी जीव डोल जाता है । जैसे वह प्रभु रक्खे उसी प्रकार रहना चाहिए ॥१॥ बिना तेल के जीवन रूपी दीपक कैसे जल सकता है ॥१॥ रहाउ ॥ धार्मिक पुस्तकों की शिक्षा का तेल, भय की बाती और सत्य के ज्ञान की अग्नि से दीपक को जलाया जाना चाहिए ॥ २ ॥ यदि इस प्रकार का तेल जीवन के दीपक में डाला जाए तो वह जलेगा भी और उसके प्रकाश से उस प्रभु से मिलाप भी हो जाएगा॥१॥ रहाउ ॥ जिस व्यक्ति पर गुरु के उपदेश का प्रभाव पड़ता है उसे सेवा करते हुए आध्यात्मिक आनन्द की भी

कमाणीआ ॥ सभ दुनीआ आवण जाणीआ ॥ ३ ॥ विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ॥ ता दरगह बैसणु पाईऐ ॥ कहु नानक बाह लुडाईऐ ॥ ४ ॥ ३३ ॥

सिरीरागु महला ३ घरु १

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥ हउ सतिगुरु सेवी आपणा इक मनि इक चिति भाइ ॥ सतिगुरु मन कामना तीरथु है जिस नो देइ बुझाइ ॥ मन चिंदिआ वरु पावणा जो इछै सो फलु पाइ ॥ नाउ धिआईऐ नाउ मंगीऐ नामे सहजि समाइ ॥ १ ॥ मन मेरे हरि रसु चाखु तिख जाइ ॥ जिनी गुरमुखि चाखिआ सहजे रहे समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनी सतिगुरु सेविआ तिनी पाइआ नामु निधानु ॥ अंतरि हरि रसु रवि रहिआ चूका मनि अभिमानु ॥ हिरदै कमलु प्रगासिआ लागा सहजि धिआनु ॥ मनु निरमलु हरि रवि रहिआ पाइआ दरगहि मानु ॥ २ ॥ सतिगुरु सेवनि आपणा ते विरले संसारि ॥ हउमै ममता मारि कै हरि राखिआ उर धारि ॥ हउ तिन कै बलिहारणै जिना नामे लगा पिआरु ॥ सेई सुखीए चहु जुगी जिना नामु अखुटु अपारु ॥ ३ ॥ गुर मिलिऐ नामु पाईऐ चूकै मोह पिआस ॥ हरि सेती मनु रवि रहिआ घर ही माहि उदासु ॥ जिना हरि का सादु आइआ हउ तिन बलिहारै जासु ॥ नानक नदरी पाईऐ सचु नामु गुणतासु ॥ ४ ॥ १ ॥ ३४ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ बहु भेख करि भरमाईऐ मनि हिरदै कपटु कमाइ ॥ हरि का महलु न पावई मरि विसटा माहि समाइ ॥ १ ॥ मन रे ग्रिह ही माहि उदासु ॥ सचु संजमु करणी सो करे गुरमुखि होइ परगासु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर कै सबदि मनु जीतिआ गति मुकति घरै महि पाइ ॥ हरि का नामु धिआईऐ सतसंगति मेलि मिलाइ ॥ २ ॥ जे लख इसतरीआ भोग करहि नव खंड राजु कमाहि ॥ बिनु सतगुर सुखु न पावई फिरि फिरि जोनी पाहि ॥ ३ ॥ हरि हारु कंठि जिनी पहिरिआ गुर चरणी चितु लाइ ॥ तिना पिछै रिधि सिधि फिरै ओना तिलु न तमाइ ॥ ४ ॥ जो प्रभ भावै सो थीऐ अवरु न करणा जाइ ॥ जनु नानकु जीवै नामु लै हरि देवहु

प्राप्ति होती है तथा उसे यह संसार भी नाशवान प्रतीत होने लगता है ॥ ३ ॥ हे भाई, इस संसार में आकर सेवा करनी चाहिए तब ही प्रभु के दरबार में बैठने को स्थान मिल पाएगा । हे नानक ! इस प्रकार निश्चिन्त हुआ जाता है और खुशी में बाहें लहराने लगती हैं ॥ ४ ॥ ३३ ॥

सिरीरागु महला ३ घरु १ ੧ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

मैं एकाग्र मन और एकाग्र चित्त से प्रेम पूर्वक अपने सत्य स्वरूप गुरु का स्मरण करता हूँ । सद्‌गुरु परमात्मा ही मन की इच्छाओं को पूर्ण करने वाला तीर्थ है जिसे वह अपने सेवक को खुद ही जनवाता है । परमात्मा से ही मनोवांछित पदार्थ एवं फल प्राप्त होते हैं । सदैव परमात्मा के नाम को ही माँगा और स्मरण किया जाना चाहिए तभी व्यक्ति सहज होकर प्रभु नाम में लीन होता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू हरि–रस को चख ले तेरी प्यास बुझ जाएगी । जिन गुरमुख व्यक्तियों ने उसका पान किया है वे सदा सहज भाव में बने रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन्होंने सत्य–गुरु (परमात्मा) की सेवा की है उन्होंने प्रभु नाम का खज़ाना प्राप्त कर लिया है । उनके हृदय में परमात्मा के नाम के रस का प्रसार हो चुका है और उनका अभिमान समाप्त हो गया है । उनका हृदय रूपी कमल खिल गया है और सहज अवस्था में वे ध्यान में लीन हो गए हैं । हरि के साथ एक रस होने पर उनका मन निर्मल हो गया है और उन्हें प्रभु दरबार में सम्मान प्राप्त हुआ है ॥ २ ॥ अपने सत्य प्रभु की सेवा करने वाले संसार में बहुत ही कम ऐसे लोगों ने अहंकार एवं स्वार्थ को मार कर प्रभु को अपने हृदय में धारण कर रखा है । जिनका नाम के साथ प्रेम हो गया है, मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ। ऐसे व्यक्ति ही चारों युगों में सुखी रहते हैं जिनके पास अनन्त नाम का अक्षय भण्डार है ॥ ३ ॥ ज्ञानवान व्यक्ति मिलने से नाम प्राप्त होता है और मोह एवं तृष्णा समाप्त हो जाते हैं । तब व्यक्ति का मन परमात्मा के साथ लीन बना रहता है और वह घर में रहते हुए भी संसार की मोह माया से विरक्त बना रहता है । जिन्हें परमात्मा का स्वाद प्राप्त हो गया है मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ । हे नानक ! परमात्मा की कृपा दृष्टि से ही परमात्मा का सदैव बना रहने वाला एवं सारे गुणों का खजाना नाम प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ३४ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ अनेकों वेश पहनकर लोगों को भ्रमों में डालकर मन और हृदय द्वारा कपटपूर्ण व्यवहार करके स्वयं भी भ्रमपूर्ण जीवन व्यतीत किया जाता है । ऐसा व्यक्ति परमात्मा का स्थान प्राप्त नहीं कर सकता एवं आध्यात्मिक मौत को अपनाकर विकारों की गन्दगी में ही फंसा रहता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू गृहस्थ जीवन में ही निर्लिप्त भाव से जीवन व्यतीत कर । सत्य और संयम वाला आचरण वही अपना पाता है जिसका हृदय गुरमुख बनकर प्रकाशमान हो उठता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस व्यक्ति ने गुरु रूपी शब्द से मन जीत लिया है उसकी गति एवं मुक्ति अपने ही घर में हो जाती है । सद्‌संगत में मिल बैठकर हरि नाम का स्मरण किया जाना चाहिए ॥ २ ॥ यदि लाखों स्त्रियों का भोग–सुख मिल जाए और संसार के नवखण्डों अर्थात सारी दुनियाँ का राज भी प्राप्त हो जाए तो भी परमात्मा के बिना सुख प्राप्त नहीं होता और व्यक्ति बारंबार योनियों में भटकता रहता है ॥ ३ ॥ जिन्होंने हरि रूपी हार को अपने गले में पहन लिया है और परमात्मा के चरणों में अपना चित्त लगा लिया है, ऋद्धियाँ सिद्धियाँ उनके पीछे–पीछे चलती हैं परन्तु उन्हें तनिक भी लालच नहीं होता ॥ ४ ॥ जो प्रभु को भाता है वही होता है, अन्य कुछ भी नहीं किया जा सकता । हे प्रभु ! मुझे अपना नाम दान कर ताकि यह दास नानक तेरे नाम का सुमिरन कर

सहजि सुभाइ ॥ ५ ॥ २ ॥ ३५ ॥ सिरीरागु महला ३ घरु १ ॥ जिस ही की सिरकार है तिस ही का सभु कोइ ॥ गुरमुखि कार कमावणी सचु घटि परगटु होइ ॥ अंतरि जिस कै सचु वसै सचे सची सोइ ॥ सचि मिले से न विछुड़हि तिन निज घरि वासा होइ ॥ १ ॥ मेरे राम मै हरि बिनु अवरु न कोइ ॥ सतगुरु सचु प्रभु निरमला सबदि मिलावा होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सबदि मिलै सो मिलि रहै जिस नउ आपे लए मिलाइ ॥ दूजै भाइ को ना मिलै फिरि फिरि आवै जाइ ॥ सभ महि इकु वरतदा एको रहिआ समाइ ॥ जिस नउ आपि दइआलु होइ सो गुरमुखि नामि समाइ ॥ २ ॥ पड़ि पड़ि पंडित जोतकी वाद करहि बीचारु ॥ मति बुधि भवी न बुझई अंतरि लोभ विकारु ॥ लख चउरासीह भरमदे भ्रमि भ्रमि होइ खुआरु ॥ पूरबि लिखिआ कमावणा कोइ न मेटणहारु ॥ ३ ॥ सतगुर की सेवा गाखड़ी सिरु दीजै आपु गवाइ ॥ सबदि मिलहि ता हरि मिलै सेवा पवै सभ थाइ ॥ पारसि परसिऐ पारसु होइ जोती जोति समाइ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन सतगुरु मिलिआ आइ ॥ ४ ॥ मन भुखा भुखा मत करहि मत तू करहि पूकार ॥ लख चउरासीह जिनि सिरी सभसै देइ अधारु ॥ निरभउ सदा दइआलु है सभना करदा सार ॥ नानक गुरमुखि बुझीऐ पाईऐ मोख दुआरु ॥ ५ ॥ ३ ॥ ३६ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ जिनी सुणि कै मंनिआ तिना निज घरि वासु ॥ गुरमती सालाहि सचु हरि पाइआ गुणतासु ॥ सबदि रते से निरमले हउ सद बलिहारै जासु ॥ हिरदै जिन कै हरि वसै तितु घटि है परगासु ॥ १ ॥ मन मेरे हरि हरि निरमलु धिआइ ॥ धुरि मसतकि जिन कउ लिखिआ से गुरमुखि रहे लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि संतहु देखहु नदरि करि निकटि वसै भरपूरि ॥ गुरमति जिनी पछाणिआ से देखहि सदा हदूरि ॥ जिन गुण तिन सद मनि वसै अउगुणवंतिआ दूरि ॥ मनमुख गुण तै बाहरे बिनु नावै मरदे झूरि ॥ २ ॥ जिन सबदि गुरू सुणि मंनिआ तिन मनि धिआइआ हरि सोइ ॥ अनदिनु भगती रतिआ मनु तनु निरमलु होइ ॥ कूड़ा रंगु कसुंभ का बिनसि जाइ दुखु रोइ ॥ जिस अंदरि नाम

सहज जीवन प्राप्त कर सके ॥ ५ ॥ २ ॥ ३५ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ घरु १ ॥ जिसकी सरकार होती है प्रत्येक जीव उसी का होकर रहता है । गुरमुख बन कर यदि कार्यकलाप किए जाएँ तो अन्तर्मन में ही सत्य रूपी परमात्मा प्रकट हो जाता है । जिसके अन्तर्मन में सत्य बस जाए उसकी शोभा सर्वत्र सत्य रूप में फैल जाती है । जो सत्य से साक्षात्कार कर लेते हैं वे कभी भी उससे बिछुड़ते नहीं और उनका निवास अपने मूल स्वरूप में हो जाता है ॥ १ ॥ हे मेरे राम, हरि के बिना मेरे लिए अन्य कोई भी सहायक नहीं है । सत्य स्वरूप सद्गुरु प्रभु निर्मल है एवं शब्द के माध्यम से ही उससे मिलाप होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो शब्द में लीन हो गए हैं वे वास्तव में परमात्मा को मिल चुके हैं । वह परमात्मा स्वयं ही मिलाप करवाता है । द्वैत भाव में बने रहकर वह सत्य स्वरूप परमात्मा नहीं मिल पाता और जीव का आवागमन बना रहता है । सब जीवों में एक ही परमात्मा कार्यशील है और सभी उस एक में ही समा जाते हैं । जिन पर परमात्मा स्वयं दयालु होता है वे गुरमुख बन कर नाम में लीन हो जाते हैं ॥ २ ॥ पंडित पढ़ते रहते हैं और ज्योतिषी वादों–प्रतिवादों का विचार किया करते हैं । उनकी बुद्धि अशान्त होकर घूमती है और अन्तर्मन में लोभ और विकार होने के कारण वे परमात्मा को बूझ नहीं पाते । वे चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करके ख्वार होते रहते हैं । पूर्व जन्म में किए कर्मों के संस्कारों के अनुसार ही व्यक्ति इस जीवन में कार्य करता है और कोई भी इस तथ्य को मिटा नहीं सकता ॥ ३ ॥ परमात्मा की सेवा इतनी कठिन है कि उसे अपना आप गँवा कर और सिर देकर ही किया जा सकता है । शब्द–गुरु के मेल से ही परमात्मा प्राप्त होता है और सेवा का वास्तविक मूल्य प्राप्त होता है । पारस रूपी शब्द के मिलने से व्यक्ति स्वयं पारस बन कर अपनी ज्योति को उस परम ज्योति में लीन कर लेता है । जिनके पूर्व जन्म में लेख लिखे होते हैं–परमात्मा की प्राप्ति उनको हो जाती है ॥ ४ ॥ हे मन, भूख की पुकार तू मत लगा; जिसने चौरासी लाख योनियों का सृजन किया है वह सबको बने रहने का आधार भी प्रदान करता रहता है । सदैव दयालु प्रभु निर्भय है एवं सबकी संभाल करता है । हे नानक ! गुरमुख बनकर ही उसे बूझा जा सकता है और मोक्ष का द्वार पाया जा सकता है ॥ ५ ॥ ३ ॥ ३६ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ जिन्होंने शब्द को सुनकर उसको माना भी है उनका निवास अपने स्वरूप रूपी असली घर में हो जाता है । गुरु के मत में चलते हुए सत्य का गुणानुवाद करते हुए गुणों के भण्डार उस प्रभु को पाया जाता है । जो शब्द में लीन हैं वे निर्मल व्यक्ति हैं और मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ । जिनके हृदय में परमात्मा बसता है उनका हृदय प्रकाशमान बना रहता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, निर्मल प्रभु का स्मरण कर । जिनके भाग्य में प्रारम्भ से ही लिखा है वे गुरमुख बन कर उस प्रभु में लवलीन हैं ॥ १ ॥ रहाउ॥ हे प्रभु के सन्त जनों, ज़रा ठीक से देखो, वह परमात्मा अत्यन्त निकट है एवं सर्वत्र बस रहा है । गुरुमत के अनुसार जिन्होंने उसे पहचाना है वे सदा उसे अंग–संग अनुभव करते हैं । जो गुणीजन हैं वह सदा उनके मन में बसता है और अवगुण वालों से सदा दूर बना रहता है । मनमुख व्यक्ति गुणविहीन लोग हैं और नाम के बिना पछतावे में ही मर जाते हैं ॥ २ ॥ जिन्होंने शब्द गुरु को सुनकर मान लिया है वास्तव में उन्होंने मन से प्रभु का स्मरण किया है । वे दिन रात भक्ति में लीन रहते हैं और उनका मन–तन निर्मल बना रहता है । कुसुम्भ के फूल का रंग आकर्षक परन्तु झूठा होता है । यही हाल सांसारिक माया का है; जब यह विनष्ट होती है तो दुखी जीव रोता चिल्लाता है ।

प्रगासु है ओहु सदा सदा थिरु होइ ॥ ३ ॥ इहु जनमु पदारथु पाइ कै हरि नामु न चेतै लिव लाइ ॥ पगि खिसिऐ रहणा नही आगै ठउरु न पाइ ॥ ओह वेला हथि न आवई अंति गइआ पछुताइ ॥ जिसु नदरि करे सो उबरै हरि सेती लिव लाइ ॥ ४ ॥ देखा देखी सभ करे मनमुखि बूझ न पाइ ॥ जिन गुरमुखि हिरदा सुधु है सेव पई तिन थाइ ॥ हरि गुण गावहि हरि नित पड़हि हरि गुण गाइ समाइ ॥ नानक तिन की बाणी सदा सचु है जि नामि रहे लिव लाइ ॥ ५ ॥ ४ ॥ ३७ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ जिनी इक मनि नामु धिआइआ गुरमती वीचारि ॥ तिन के मुख सद उजले तितु सचै दरबारि ॥ ओइ अंम्रितु पीवहि सदा सदा सचै नामि पिआरि ॥ १ ॥ भाई रे गुरमुखि सदा पति होइ ॥ हरि हरि सदा धिआईऐ मलु हउमै कढै धोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख नामु न जाणनी विणु नावै पति जाइ ॥ सबदै सादु न आइओ लागे दूजै भाइ ॥ विसटा के कीड़े पवहि विचि विसटा से विसटा माहि समाइ ॥ २ ॥ तिन का जनमु सफलु है जो चलहि सतगुर भाइ ॥ कुलु उधारहि आपणा धंनु जणेदी माइ ॥ हरि हरि नामु धिआईऐ जिस नउ किरपा करे रजाइ ॥ ३ ॥ जिनी गुरमुखि नामु धिआइआ विचहु आपु गवाइ ॥ ओइ अंदरहु बाहरहु निरमले सचे सचि समाइ ॥ नानक आए से परवाणु हहि जिन गुरमती हरि धिआइ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३८ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ हरि भगता हरि धनु रासि है गुर पूछि करहि वापारु ॥ हरि नामु सलाहनि सदा सदा वखरु हरि नामु अधारु ॥ गुरि पूरै हरि नामु द्रिड़ाइआ हरि भगता अतुटु भंडारु ॥ १ ॥ भाई रे इसु मन कउ समझाइ ॥ ए मन आलसु किआ करहि गुरमुखि नामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि भगति हरि का पिआरु है जे गुरमुखि करे बीचारु ॥ पाखंडि भगति न होवई दुबिधा बोलु खुआरु ॥ सो जनु रलाइआ ना रलै जिसु अंतरि बिबेक बीचारु ॥ २ ॥ सो सेवकु हरि आखीऐ जो हरि राखै उरि धारि ॥ मनु तनु सउपे आगै धरे हउमै विचहु मारि ॥ धनु गुरमुखि सो परवाणु है जि कदे न आवै हारि ॥ ३ ॥ करमि मिलै ता

जिसके अन्दर नाम का प्रकाश है वह पक्के रंग की तरह सदैव स्थिर बना रहता है ॥ ३ ॥ जन्म रूपी अमूल्य पदार्थ को पाकर मनमुख हरिनाम में अपनी सुरति लीन नहीं करता । जब संसार से पाँव खिसकना शुरू हो जाता है तो यहाँ से जाना पड़ता है परन्तु आगे भी कोई ठिकाना नहीं मिलता । बीता हुआ समय फिर हाथ नहीं आता और पछताता हुआ जीव अन्ततः यहां से चला जाता है । जिस पर प्रभु कृपा-दृष्टि करता है वह हरि नाम में लवलीन बना रहता है और उसका उद्धार होता है ॥ ४ ॥ मनमुख व्यक्ति अपने सारे कार्य देखा देखी में ही करता है और जीवन के सही उद्देश्य को बूझ नहीं पाता । गुरमुख बनकर जिसका हृदय शुद्ध हो गया है उसकी की गई सेवा सही स्थान पर फलीभूत हो जाती है । जो हमेशा हरि गुण गाते एवं पढ़ते हैं वे प्रभु का गुणानुवाद करते हुए उसमें समा जाते हैं । हे नानक! नाम में लवलीन बने रहने वालों की वाणी सदैव सत्यरूप होती है ॥ ५ ॥ ४ ॥ ३७ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ जिन्होंने गुरुमति के मन्थन के फलस्वरूप एक मन से नाम सुमिरन किया है उस सच्चे दरबार में उनके मुख सदा उज्जवल बने रहते हैं । सत्य नाम के साथ प्रेम करने वाले सदैव अमृत का पान करते रहते हैं ॥ १ ॥ हे भाई ! गुरमुख बनने से ही सम्मान प्राप्त होता है । सर्वदा प्रभु नाम स्मरण करने से ही अहंकार रूपी मल को धोकर बाहर निकाला जाता है॥१॥ रहाउ ॥ मनमुख नाम के सार को नहीं जानते और नाम से विहीन होकर सम्मान खो देते हैं । जिन्हें शब्द गुरु में स्वाद नहीं आया और जो द्वैत भाव में बने रहे वे उस विष्ठा के कीड़ों के समान हैं जो विष्ठा में ही सदैव बने रहते हैं ॥२॥ उनका जन्म सफल है जो परमात्मा के हुक्म के अन्दर जीवन व्यतीत करते हैं । वे अपने कुल का भी उद्धार करते हैं और उनको जन्म देने वाली उनकी माँ भी धन्य है । हे भाई, परमात्मा के नाम का स्मरण किया जाना चाहिए परन्तु वे ही ऐसा करते हैं जिन पर वह परमात्मा अपनी रज़ा में कृपा करता है ॥ ३ ॥ अपना अहंकार समाप्त कर जिन गुरमुखों ने नाम में ध्यान लगाया है वे अन्दर बाहर से पवित्र हो जाते हैं और उस अनन्त सत्य में लीन हो जाते हैं। हे नानक, जगत में आए वही जीव स्वीकृत होते हैं जिन्होंने गुरुमत के अनुरूप परमात्मा के नाम का स्मरण किया है ॥४॥५॥३८॥ सिरी रागु महला ३ ॥ परमात्मा की भक्ति करने वाले व्यक्तियों के पास हरि धन रूपी ही रासपूंजी है और वे परमात्मा के आदेश में ही कार्य व्यापार करते हैं । वे सदा हरि नाम का गुणानुवाद करते हैं और उनका सौदा भी परमात्मा के नाम पर ही आधारित होता है । पूर्ण शब्द गुरु ने हरि नाम पर ही निश्चय दृढ़ करवाया है एवं हरि भक्तों को अक्षय भंडार प्राप्त हुए हैं ॥१॥ हे भाई, इस मन को समझाओ कि हे मन तू क्यों आलस कर रहा है; गुरुमुख बनकर नाम पर ध्यान टिका ॥१॥ रहाउ ॥ यदि गुरमुख बन कर विचार किया जाए तो हरि का प्रेम ही हरि की भक्ति है । अनेक पाखण्डों के माध्यम से भक्ति नहीं होती और द्वैत भाव में बोले हुए बोलों के कारण ख्वार होना पड़ता है । जिस व्यक्ति के अन्दर सत्य-असत्य का निर्णय करने की विवेक बुद्धि आ जाती है उसका पाखण्डियों के साथ मिलान नहीं होता; वह अलग ही दिख जाता है ॥२॥ उसी को परमात्मा का सेवक कहा जाता है जो परमात्मा को हृदय में धारण किए रहता है । वह अपने अन्दर के अहंकार को समाप्त कर मन और तन को परमात्मा के समक्ष सौंप देता है ऐसा ही गुरमुख धन्य है और स्वीकृत है । क्योंकि वह कभी भी हारकर नहीं लौटता ॥३॥ उसकी कृपा से ही

पाईऐ विणु करमै पाइआ न जाइ ॥ लख चउरासीह तरसदे जिसु मेले सो मिलै हरि आइ ॥ नानक गुरमुखि हरि पाइआ सदा हरि नामि समाइ ॥ ४ ॥ ६ ॥ ३९ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सुख सागरु हरि नामु है गुरमुखि पाइआ जाइ ॥ अनदिनु नामु धिआईऐ सहजे नामि समाइ ॥ अंदरु रचै हरि सच सिउ रसना हरि गुण गाइ ॥ १ ॥ भाई रे जगु दुखीआ दूजै भाइ ॥ गुर सरणाई सुखु लहहि अनदिनु नामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साचे मैलु न लागई मनु निरमलु हरि धिआइ ॥ गुरमुखि सबदु पछाणीऐ हरि अंम्रित नामि समाइ ॥ गुर गिआनु प्रचंडु बलाइआ अगिआनु अंधेरा जाइ ॥ २ ॥ मनमुख मैले मलु भरे हउमै त्रिसना विकारु ॥ बिनु सबदै मैलु न उतरै मरि जंमहि होइ खुआरु ॥ धातुर बाजी पलचि रहे ना उरवारु न पारु ॥ ३ ॥ गुरमुखि जप तप संजमी हरि कै नामि पिआरु ॥ गुरमुखि सदा धिआईऐ एकु नामु करतारु ॥ नानक नामु धिआईऐ सभना जीआ का आधारु ॥ ४ ॥ ७ ॥ ४० ॥ स्रीरागु महला ३ ॥ मनमुखु मोहि विआपिआ बैरागु उदासी न होइ ॥ सबदु न चीनै सदा दुखु हरि दरगहि पति खोइ ॥ हउमै गुरमुखि खोईऐ नामि रते सुखु होइ ॥ १ ॥ मेरे मन अहिनिसि पूरि रही नित आसा ॥ सतगुरु सेवि मोहु परजलै घर ही माहि उदासा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि करम कमावै बिगसै हरि बैरागु अनंदु ॥ अहिनिसि भगति करे दिनु राती हउमै मारि निचंदु ॥ वडै भागि सतसंगति पाई हरि पाइआ सहजि अनंदु ॥ २ ॥ सो साधू बैरागी सोई हिरदै नामु वसाए ॥ अंतरि लागि न तामसु मूले विचहु आपु गवाए ॥ नामु निधानु सतगुरू दिखालिआ हरि रसु पीआ अघाए ॥ ३ ॥ जिनि किनै पाइआ साधसंगती पूरै भागि बैरागि ॥ मनमुख फिरहि न जाणहि सतगुरु हउमै अंदरि लागि ॥ नानक सबदि रते हरि नामि रंगाए बिनु भै केही लागि ॥ ४ ॥ ८ ॥ ४१ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ घर ही सउदा पाईऐ अंतरि सभ वथु होइ ॥ खिनु खिनु नामु समालीऐ गुरमुखि पावै कोइ ॥ नामु निधानु अखुटु है वडभागि परापति होइ ॥ १ ॥ मेरे

वह प्राप्त होता है बिना कृपा के उसे पाया नहीं जा सकता। सभी योनियों के जीव उसके लिए तरसते हैं परन्तु परमात्मा से मिलाप उन्हीं का होता है जिनको वह स्वयं मिला लेता है। हे नानक! गुरमुख बनकर परमात्मा पाया जाता है और गुरमुख ही सदैव हरि नाम में लीन बना रहता है ॥ ४ ॥ ६ ॥ ३९ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ परमात्मा का नाम सुखों का समुद्र है जिसे गुरमुख बनकर ही प्राप्त किया जा सकता है। रात–दिन प्रभु नाम का यदि स्मरण किया जाए तो स्वतः ही नाम में लीन हुआ जाता है। सच्चा हृदय सत्य रूपी हरि के साथ घुल–मिल जाता है और गुरमुख की जीभ उस परमात्मा का गुणानुवाद करती रहती है ॥ १ ॥ हे भाई ! अन्य के प्रेम में पड़ कर जगत दुखी हो रहा है। गुरु की शरण में सुख प्राप्त होगा और तू रात–दिन प्रभु नाम में ध्यान टिका ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सत्य को मैल नहीं लगती और प्रभु स्मरण करने वाले व्यक्ति का मन निर्मल हो जाता है। गुरमुख बन कर शब्द–गुरु के साथ पहचान बनती है और व्यक्ति हरि रूपी अमृत नाम में लीन हो जाता है। जिसके अन्दर शब्द–गुरु का ज्ञान प्रचण्ड हो चुका है उसके अन्दर से अज्ञान का अन्धेरा समाप्त हो जाता है। मनमुख (मन के पीछे चलने वाले) व्यक्ति मलीन मन वाले बने रहते हैं और उनके मन में सदैव अहंकार, तृष्णा एवं विकार पैदा होते रहते हैं। शब्द के बिना मैल नहीं उतरती और जीव आवागमन के चक्र में ख्वार होता रहता है। ऐसे व्यक्ति नाश की ओर ले जाने वाले खेल में उलझे रहते हैं और संसार सागर के न इस पार और न उस पार पहुँच पाते हैं ॥ ३ ॥ गुरमुख व्यक्ति जप–तप और संयम वाले हैं क्योंकि उनका हरि नाम के साथ प्रेम है। गुरमुख बनकर उस कर्ता के केवल एक नाम का ही ध्यान किया जाना चाहिए। हे नानक! नाम का ही स्मरण कर क्योंकि यही सब जीवों का आधार है ॥ ४ ॥ ७ ॥ ४० ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ मनमुख व्यक्ति मोह में फंसा रहता है। उसके अन्दर न तो वैराग्य पैदा होता है और न ही धन आदि के प्रति उदासीनता। वह शब्द को समझता नहीं है और सदा दुखों से घिरा रहता है। परमात्मा के दरबार में भी उसकी इज्जत छिन जाती है। परन्तु गुरमुख बन कर अहंकार खो दिया जाता है और नाम में रंगे जाकर सुख प्राप्त होता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तेरे अन्दर रात दिन तृष्णाएं ही भरती जाती हैं; सद्गुरु परमात्मा की सेवा कर तेरा मोह समाप्त हो जाएगा और तू गृहस्थ में रहता हुआ भी अलिप्त भाव को प्राप्त कर लेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुख व्यक्ति कर्म करता है और प्रसन्न बना रहता है क्योंकि उसके मन में परमात्मा के प्रति प्रेम और आनन्द बना रहता है। वह रात–दिन भक्ति में लीन रहता है और अपने अहंकार को मार कर निश्चिंत बना रहता है। बड़े भाग्य से सद्संगत प्राप्त होती है और परमात्मा रूपी सहज आनन्द को पाया जाता है। वही वास्तविक साधु अथवा बैरागी है जिसने अपने हृदय में प्रभु नाम बसाया हुआ है। उसके अन्दर तमोगुण नहीं होता और उसने मन से अहंकार को त्याग दिया होता है। परमात्मा उसे नाम का खजाना दिखा देता है और वह हरि रस पीकर अघा जाता है ॥ ३ ॥ जिस किसी ने भी परमात्मा को पाया है वह सद्संगत में ही बड़े भाग्य होने के कारण पाया है। मनमुख व्यक्ति इधर–उधर घूमते फिरते रहते हैं परन्तु अन्दर अहंकार होने के कारण परमात्मा को नहीं जान पाते। हे नानक ! जो शब्द गुरु में लवलीन हो गए हैं वे हरि नाम में रंग गए हैं। परमात्मा के प्रेममय भय के बिना भला कोई कैसे रंगा जा सकता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ ४१ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ परमात्मा का नाम रूपी उत्तम पदार्थ (सौदा) व्यक्ति के अन्दर ही है; अन्दर ही सब पदार्थ स्थित हैं। प्रत्येक क्षण नाम को मन में संभाले रहना होता है और कोई बिरला ही गुरमुख बन कर उस सौदे को प्राप्त करता है। नाम एक अक्षय भण्डार है, जो बड़े भाग्य से ही प्राप्त होता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन,

मन तजि निंदा हउमै अहंकारु ॥ हरि जीउ सदा धिआइ तू गुरमुखि एकंकारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखा के मुख उजले गुर सबदी बीचारि ॥ हलति पलति सुखु पाइदे जपि जपि रिदै मुरारि ॥ घर ही विचि महलु पाइआ गुर सबदी वीचारि ॥ २ ॥ सतगुर ते जो मुह फेरहि मथे तिन काले ॥ अनदिनु दुख कमावदे नित जोहे जम जाले ॥ सुपनै सुखु न देखनी बहु चिंता परजाले ॥ ३ ॥ सभना का दाता एकु है आपे बखस करेइ ॥ कहणा किछू न जावई जिसु भावै तिसु देइ ॥ नानक गुरमुखि पाईऐ आपे जाणै सोइ ॥ ४ ॥ ९ ॥ ४२ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सचा साहिबु सेवीऐ सचु वडिआई देइ ॥ गुर परसादी मनि वसै हउमै दूरि करेइ ॥ इहु मनु धावतु ता रहै जा आपे नदरि करेइ ॥ १ ॥ भाई रे गुरमुखि हरि नामु धिआइ ॥ नामु निधानु सद मनि वसै महली पावै थाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख मनु तनु अंधु है तिस नउ ठउर न ठाउ ॥ बहु जोनी भउदा फिरै जिउ सुंञैं घरि काउ ॥ गुरमती घटि चानणा सबदि मिलै हरि नाउ ॥ २ ॥ त्रै गुण बिखिआ अंधु है माइआ मोह गुबार ॥ लोभी अन कउ सेवदे पड़ि वेदा करै पूकार ॥ बिखिआ अंदरि पचि मुए ना उरवारु न पारु ॥ ३ ॥ माइआ मोहि विसारिआ जगत पिता प्रतिपालि ॥ बाझहु गुरू अचेतु है सभ बधी जमकालि ॥ नानक गुरमति उबरे सचा नामु समालि ॥ ४ ॥ १० ॥ ४३ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ त्रै गुण माइआ मोहु है गुरमुखि चउथा पदु पाइ ॥ करि किरपा मेलाइअनु हरि नामु वसिआ मनि आइ ॥ पोतै जिन कै पुंनु है तिन सतसंगति मेलाइ ॥ १ ॥ भाई रे गुरमति साचि रहाउ ॥ साचो साचु कमावणा साचै सबदि मिलाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनी नामु पछाणिआ तिन विटहु बलि जाउ ॥ आपु छोडि चरणी लगा चला तिन कै भाइ ॥ लाहा हरि हरि नामु मिलै सहजे नामि समाइ ॥ २ ॥ बिनु गुर महलु न पाईऐ नामु न परापति होइ ॥ ऐसा सतगुरु लोड़ि लहु जिदू पाईऐ सचु सोइ ॥ असुर संघारै सुखि वसै जो तिसु भावै सु होइ ॥ ३ ॥ जेहा सतगुरु करि जाणिआ तेहो जेहा सुखु होइ ॥ एहु सहसा मूले नाही भाउ लाए जनु कोइ ॥ नानक एक जोति दुइ मूरती सबदि मिलावा

निन्दा एवं अहंकार का त्याग कर दे; गुरमुख बनकर उस परमात्मा का एक ओअंकार रूप में सदा स्मरण कर ॥१॥ रहाउ ॥ शब्द–गुरु के चिंतन के फलस्वरूप गुरमुखों के मुख उज्जवल बने रहते हैं। हृदय में उस परमात्मा का स्मरण कर वे इस लोक तथा परलोक में सुख प्राप्त करते हैं। उन्होनें अपने अन्तर्मन में ही निर्वाण–स्थल शब्द–गुरु के चिन्तन के माध्यम से पा लिया है ॥ २ ॥ सद्गुरु परमात्मा से जो मुँह फेरते हैं उनके माथे पर विकारों की कालिमा पुत जाती है। वे सदैव दुख ही पैदा करते रहते हैं और यमपाश सदा ही उन पर निशाना साधे रहता है। चिन्ता में वे इतने जल कर पीड़ित हो चुके हैं कि स्वप्न में भी उनको सुख देखने को नहीं मिलता। परमात्मा ही सब को देने वाला है और वह स्वयं ही सब पर कृपा करता है। उसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता; उसे जो भाता है वह उसी को देता है। हे नानक ! गुरमुख बनकर ही उसे पाया जा सकता है क्योंकि वह सब के दिलों की जानता है ॥ ४ ॥ ९ ॥ ४२॥ सिरी रागु महला ३ ॥ सत् स्वरूप परमात्मा की सेवा करने से वह सत्य रूपी बड़प्पन प्रदान करता है। गुरु की कृपा से वह मन में बसता है और व्यक्ति का अहंकार दूर होता है। भागता हुआ मन तभी स्थिर होता है यदि वह परमात्मा कृपा दृष्टि करे ॥ १ ॥ हे भाई ! गुरमुख बन कर प्रभु नाम का स्मरण करो। ऐसा करने से ही मन में नाम रूपी खजाना सदा के लिए बस जाता है और परमात्मा के पास स्थान प्राप्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख व्यक्ति मन–तन से अन्धा है और उसको कहीं भी ठिकाना नहीं मिलता। वह अनेक योनियों में उसी प्रकार भटकता फिरता है जैसे कौआ निर्जन घरों में आता जाता रहता है। गुरु के मत के फलस्वरूप ही हृदय में ज्ञान का प्रकाश होता है और शब्द के माध्यम से ही परमात्मा के नाम से पहचान होती है ॥ २ ॥ तीनों गुणों में घिरे रहने के कारण ही माया का प्रपंच प्रभावित करता है। लोभ में ग्रसित जीव वेदों को पढ़कर उनके उपदेशों का ढिंढोरा तो देते हैं परन्तु मन ही मन लोभी बनकर अन्य भावों की सेवा करने में लीन रहते हैं। विषय विकारों में ही वे ख्वार होकर मर जाते हैं और परमात्मा के इस छोर या उस छोर का उन्हें ज्ञान ही नहीं होता ॥ ३ ॥ माया के मोह में फंसकर जीवों ने जगत्–पालक पिता को विस्मृत कर दिया है। गुरु के बिना सभी अचेत अवस्था में हैं और सब को यम ने बाँध कर रखा हुआ है । हे नानक ! गुरु की शिक्षा के फलस्वरूप सदा स्थिर रहने वाले परमात्मा का नाम हृदय में बसाकर ही जीवों का उद्धार हो सकता है ॥ ४ ॥ १० ॥ ४३ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ तीनों गुणों की सीमा के अन्दर बने रहने से माया का मोह प्रभावित करता है परन्तु गुरमुख बनकर चौथा पद अथवा सहज अवस्था प्राप्त होती है। परमात्मा ने कृपा करके जिनको अपने चरणों के साथ जोड़ लिया है उनके मन में परमात्मा का नाम बस जाता है। जिनके पल्ले पुण्य कार्य हैं परमात्मा उनको सद्संगत से मिलवा देता है ॥ १ ॥ हे भाई ! गुरु की मति में चलते हुए सदैव सत्य में टिके रहो। सदैव सत्य के लिए कार्यशील बने रहो और सत्य शब्द–ब्रह्म के गुणानुवाद में लगे रहो ॥ १ ॥ रहाउ॥ जिन्होंने नाम को पहचान लिया है मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ। मैं अपना अहंकार त्याग कर उनके चरणों में जाता हूँ और उन्हीं के आदेशानुसार जीवन यापन करता हूँ। जो आध्यात्मिक स्थिरता के माध्यम से परमात्मा के नाम में लीन हो जाता है उसे प्रभु रूपी लाभ प्राप्त हो जाता है ॥ २ ॥ गुरु के बिना न तो ठिकाना मिलता है और न ही नाम प्राप्त होता है। ऐसा सद्गुरु ढूँढना चाहिए जिससे सत्य प्राप्त हो सके। वही विकारों के दैत्यों का संहार करता है। उसी के कारण सुख मिलता है और निश्चय हो जाता है कि जो उस परमात्मा को भाता है वही होता है ॥ ३ ॥ जिसने जिस भाव से परमात्मा को माना उसे उसी भाव के अनुरूप सुख प्राप्त होता है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि उसके प्रेम में कोई बिरला ही जीव मन लगाता है और जिसका शब्द के माध्यम से उस परम ज्योति के साथ मिलन हो जाता है उसकी अपनी ज्योति उसी में लीन हो जाती है; बेशक शरीर अलग–अलग बने रहते

होइ ॥ ४ ॥ ११ ॥ ४४ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ अंम्रितु छोडि बिखिआ लोभाणे सेवा करहि विडाणी ॥ आपणा धरमु गवावहि बूझहि नाही अनदिनु दुखि विहाणी ॥ मनमुख अंध न चेतही डूबि मुए बिनु पाणी ॥ १ ॥ मन रे सदा भजहु हरि सरणाई ॥ गुर का सबदु अंतरि वसै ता हरि विसरि न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु सरीरु माइआ का पुतला विचि हउमै दुसटी पाई ॥ आवणु जाणा जंमणु मरणा मनमुखि पति गवाई ॥ सतगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ जोती जोति मिलाई ॥ २ ॥ सतगुर की सेवा अति सुखाली जो इछे सो फलु पाए ॥ जतु सतु तपु पवितु सरीरा हरि हरि मंनि वसाए ॥ सदा अनंदि रहै दिनु राती मिलि प्रीतम सुखु पाए ॥ ३ ॥ जो सतगुर की सरणागती हउ तिन कै बलि जाउ ॥ दरि सचै सची वडिआई सहजे सचि समाउ ॥ नानक नदरी पाईऐ गुरमुखि मेलि मिलाउ ॥ ४ ॥ १२ ॥ ४५ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ मनमुख करम कमावणे जिउ दोहागणि तनि सीगारु ॥ सेजै कंतु न आवई नित नित होइ खुआरु ॥ पिर का महलु न पावई ना दीसै घरु बारु ॥ १ ॥ भाई रे इक मनि नामु धिआइ ॥ संता संगति मिलि रहै जपि राम नामु सुखु पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि सदा सोहागणी पिरु राखिआ उर धारि ॥ मिठा बोलहि निवि चलहि सेजै रवै भतारु ॥ सोभावंती सोहागणी जिन गुर का हेतु अपारु ॥ २ ॥ पूरै भागि सतगुरु मिलै जा भागै का उदउ होइ ॥ अंतरहु दुखु भ्रमु कटीऐ सुखु परापति होइ ॥ गुर कै भाणै जो चलै दुखु न पावै कोइ ॥ ३ ॥ गुर के भाणे विचि अंम्रितु है सहजे पावै कोइ ॥ जिना परापति तिन पीआ हउमै विचहु खोइ ॥ नानक गुरमुखि नामु धिआईऐ सचि मिलावा होइ ॥ ४ ॥ १३ ॥ ४६ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ जा पिरु जाणै आपणा तनु मनु अगै धरेइ ॥ सोहागणी करम कमावदीआ सेई करम करेइ ॥ सहजे साचि मिलावड़ा साचु वडाई देइ ॥ १ ॥ भाई रे गुर बिनु भगति न होइ ॥ बिनु गुर भगति न पाईऐ जे लोचै सभु कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लख चउरासीह फेरु पइआ कामणि दूजै भाइ ॥ बिनु गुर नीद न आवई दुखी रैणि विहाइ ॥ बिनु सबदै पिरु न पाईऐ बिरथा जनमु गवाइ ॥

हैं ॥ ४ ॥ ११ ॥ ४४ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ मनमुख व्यक्ति आध्यात्मिक जीवन के अमृत को छोड़कर विष रूपी विकारों के लोभ में पड़े हुए अन्यों की सेवा करते हैं। वे मानव जीवन के कर्त्तव्यों को न ही समझते हैं और न ही पूरा करते हैं तथा दिन-रात अपना समय दुःख में ही बिताते हैं। यह अन्धे बन चुके मनमुख उस परमात्मा को स्मरण करने के रास्ते पर नहीं आते और जीवन रूपी अमृत जल के बिना डूब मरते हैं ॥ १ ॥ हे मन, सदा परमात्मा की शरण में पड़ा रह। अन्तर्मन में जब शब्द-गुरु के निवास करने का पता लग जाए तो फिर परमात्मा का स्मरण बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह शरीर माया का पुतला बना हुआ है और हृदय में दुष्ट अहंकार टिका हुआ है। ऐसे मनमुख व्यक्ति का आवागमन जगत में बना ही रहता है और वह अपना सम्मान भी गवां लेता है। सद्गुरु की सेवा करने से ही सुख मिलता है एवं जीव की ज्योति परम ज्योति से मिल जाती है ॥ २ ॥ सद्गुरु की सेवा अत्यन्त सहज है और उससे वांछित फल प्राप्त होता है। यही सेवा जत-सत-तप है एवं शरीर को पवित्र करने वाली है और इसी से ही परमात्मा मन में टिका रहता है। इसी से ही दिन-रात आनन्द बना रहता है और प्रियतम प्रभु को मिलकर सुख प्राप्त होता है। जो सद्गुरु की शरण में हैं मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ। उन्हें सत्य स्वरूप परमात्मा के समक्ष सच्चा सम्मान प्राप्त होता है और सहज भाव से ही वे सत्य में लीन हो जाते हैं। हे नानक, ऐसे गुरमुखों की संगत का मेल परमात्मा की कृपा दृष्टि से ही मिलता है ॥ ४ ॥ १२ ॥ ४५ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ मनमुख व्यक्ति के कार्य ऐसे ही होते हैं जैसे कोई कुलटा स्त्री अपने शरीर पर श्रृंगार करती है। उसका पति कभी भी उसकी शय्या पर नहीं आता और वह सदैव ख्वार होती रहती है। मनमुख को उस प्रियतम प्रभु का दर एवं घर कभी भी प्राप्त नहीं होता है ॥१॥ हे भाई, एक चित्त होकर नाम का स्मरण कर। साधु संगत में मिल बैठकर राम-नाम का जाप कर और सुख प्राप्त कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुख व्यक्ति सदा सुहागिन स्त्री की तरह है जिसने हृदय में पति को धारण कर रखा है। ऐसी गुरमुख स्त्रियां मीठा बोलती हैं, विनम्र होकर चलती हैं और उनका पति शय्या पर उनसे रमण करता है। ऐसी सुहागिन स्त्रियां शोभा वाली हैं जिनका परमात्मा रूपी गुरु से अपार प्रेम होता है ॥ २ ॥ पूर्ण भाग्योदय से सद्गुरु की प्राप्ति होती है। अन्तर्मन से दुःख और भ्रम कट जाता है और सुख प्राप्त होता है। जो परमात्मा रूपी गुरु की आज्ञा में चलता है उसे दुख नहीं होता ॥ ३ ॥ गुरु के आदेश में ही नामामृत है और सहज में रहकर ही यह किसी को प्राप्त होता है। जिनको यह प्राप्त हो गया, पीने के बाद उनका अहंकार छूट जाता है। हे नानक ! गुरमुख बनकर नाम का स्मरण करने से सत्य-प्रभु से मिलाप होता है ॥४॥१३ ॥ ४६ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ जब जीव रूपी स्त्री प्रियतम प्रभु को अपना मान लेती है तो वह अपना तन-मन उसके हवाले कर देती है। जो कार्य सुहागिन स्त्रियां करती हैं वह ही रहन-सहन प्रभु के भक्तों का बन जाता है। सहज में बने रहकर सत्य से मिलाप हो जाता है और सत्य ही व्यक्ति को बड़प्पन प्रदान करता है ॥ १ ॥ हे भाई, गुरु की शरण के बिना भक्ति नहीं होती; यदि प्रत्येक जीव इच्छा भी रखे तो भी गुरु की शरण में जाए बिना भक्ति प्राप्त नहीं होती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ द्वैत भाव अपनानेवाली कामिनी को चौरासी लाख योनियों में आना जाना पड़ता है। गुरु के बिना सुख की नींद नहीं आती और सारी जीवन रूपी रात्रि दुखों में ही व्यतीत हो जाती है। प्रियतम को शब्द गुरु के बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता एवं जीवन व्यर्थ ही चला जाता है ॥

२ ॥ हउ हउ करती जगु फिरी ना धनु संपै नालि ॥ अंधी नामु न चेतई सभ बाधी जमकालि ॥ सतगुरि मिलिऐ धनु पाइआ हरि नामा रिदै समालि ॥ ३ ॥ नामि रते से निरमले गुर कै सहजि सुभाइ ॥ मनु तनु राता रंग सिउ रसना रसन रसाइ ॥ नानक रंगु न उतरै जो हरि धुरि छोडिआ लाइ ॥ ४ ॥ १४ ॥ ४७ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ गुरमुखि क्रिपा करे भगति कीजै बिनु गुर भगति न होई ॥ आपै आपु मिलाए बूझै ता निरमलु होवै सोई ॥ हरि जीउ साचा साची बाणी सबदि मिलावा होई ॥ १ ॥ भाई रे भगतिहीणु काहे जगि आइआ ॥ पूरे गुर की सेव न कीनी बिरथा जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे जगजीवनु सुखदाता आपे बखसि मिलाए ॥ जीअ जंत ए किआ वेचारे किआ को आखि सुणाए ॥ गुरमुखि आपे देइ वडाई आपे सेव कराए ॥ २ ॥ देखि कुटंबु मोहि लोभाणा चलदिआ नालि न जाई ॥ सतगुरु सेवि गुण निधानु पाइआ तिस दी कीम न पाई ॥ हरि प्रभु सखा मीतु प्रभु मेरा अंते होइ सखाई ॥ ३ ॥ आपणै मनि चिति कहै कहाए बिनु गुर आपु न जाई ॥ हरि जीउ दाता भगति वछलु है करि किरपा मंनि वसाई ॥ नानक सोभा सुरति देइ प्रभु आपे गुरमुखि दे वडिआई ॥ ४ ॥ १५ ॥ ४८ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ धनु जननी जिनि जाइआ धंनु पिता परधानु ॥ सतगुरु सेवि सुखु पाइआ विचहु गइआ गुमानु ॥ दरि सेवनि संत जन खड़े पाइनि गुणी निधानु ॥ १ ॥ मेरे मन गुरमुखि धिआइ हरि सोइ ॥ गुर का सबदु मनि वसै मनु तनु निरमलु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा घरि आइआ आपे मिलिआ आइ ॥ गुर सबदी सालाहीऐ रंगे सहजि सुभाइ ॥ सचै सचि समाइआ मिलि रहै न विछुड़ि जाइ ॥ २ ॥ जो किछु करणा सु करि रहिआ अवरु न करणा जाइ ॥ चिरी विछुंने मेलिअनु सतगुर पंनै पाइ ॥ आपे कार कराइसी अवरु न करणा जाइ ॥ ३ ॥ मनु तनु रता रंग सिउ हउमै तजि विकार ॥ अहिनिसि हिरदै रवि रहै निरभउ नामु निरंकार ॥ नानक आपि मिलाइअनु पूरै सबदि अपार ॥ ४ ॥ १६ ॥ ४९ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ गोविदु गुणी निधानु है अंतु न पाइआ जाइ ॥ कथनी

२ ॥ मैं–मैं करती हुई मैं सारे संसार में भटकती फिरी परन्तु धन सम्पत्ति कुछ भी साथ नहीं गया। माया–मोह में अन्धी होकर मैंने नाम का स्मरण नहीं किया और अपने आपको यम के बन्धनों में बाँध लिया। सद्गुरु के मिलने से ही हरि नाम रूपी धन प्राप्त होता है और हृदय में सम्भाल लिया जाता है ॥ ३ ॥ जो नाम में लीन हैं वे पवित्र हो जाते हैं और गुरु के सहज स्वभाव के अनुकूल आचरण करते हैं। उनका मन–तन परमात्मा के रंग में रंगा रहता है और उनकी जीभ नाम–रस में लीन बनी रहती है। हे नानक ! जिन्हें अपनी ओर से ही परमात्मा ने रंग दिया है उनके प्रेम का रंग कभी नहीं छूटता ॥ ४ ॥ १४ ॥ ४७ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ यदि परमात्मा गुरमुख पर कृपा करे तो भक्ति की जाती है और बिना गुरु के भक्ति सम्भव नहीं। जो अपने आप को गुरु में अभेद करने का रहस्य बूझ लेता है वह निर्मल हो जाता है। वह परमात्मा सत्य है, उसकी वाणी सत्य है और शब्द के माध्यम से ही उससे मेल होता है ॥ १ ॥ हे भाई, भक्ति विहीन होकर संसार में आने का क्या लाभ। तूने पूर्ण गुरु की सेवा नहीं की और जन्म व्यर्थ ही गँवा दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह परमात्मा जगत का जीवन एवं सुखदाता है और कृपापूर्वक स्वयं ही अपने में मिला लेता है। ये बेचारे जीव–जन्तु क्या हैं और भला यह क्या उसका गुणानुवाद कर सकते हैं। गुरमुख को वह स्वयं ही बड़प्पन देता है और उससे स्वयं ही सेवा कराता है ॥ २ ॥ जिस सद्गुरु की सेवा करके तूने गुणों के समुद्र के रहस्य को जाना उस प्रभु की कीमत तू समझ ना सका। वह प्रभु ही मेरा सखा एवं मित्र है जो अन्त में सहायक बनता है ॥ ३ ॥ जीव बेशक अपने मन और चित्त में अनेकों बार कहे परन्तु गुरु के बिना अहंकार समाप्त नहीं होता। जीवन–दाता प्रभु भक्त वत्सल है, वह ही कृपा करके मन में भक्ति का निवास करवाता है। हे नानक! प्रभु स्वयं ही जीव को सूझ देता है और स्वयं ही गुरमुख बने व्यक्ति को बड़प्पन प्रदान करता है ॥ ४ ॥ १५ ॥ ४८॥ सिरी रागु महला ३ ॥ वह माँ धन्य है और पिता भाग्यशाली है जिसने गुरु को जन्म दिया है। सद्गुरु की शरण में आकर ही अन्तर्मन का अभिमान छूटता है और सुख प्राप्त होता है। सन्तजन भी उस परमात्मा के द्वार पर खड़े होकर सेवा करते हैं और गुणनिधान प्रभु को प्राप्त करते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे मन, गुरमुख बनकर उस परमात्मा को स्मरण कर। गुरु का शब्द अर्थात शब्द–गुरु जब मन में बस जाता है तो मन–तन निर्मल हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कृपापूर्वक वह प्रभु मन में आ बसा और उसने स्वयं ही जीव को अपने से मिला लिया। शब्द–गुरु के माध्यम से ही उसका गुणानुवाद किया जाता है और ऐसा करने वाले को वह सहज स्वभाव के रंग में रंग देता है। सच्चा व्यक्ति सत्य में ही लीन हो जाता है और फिर कभी उससे बिछुड़ता नहीं ॥ २ ॥ वह परमात्मा वही करता है जो उसे करना होता है। उसके उलट कुछ भी नहीं किया जा सकता। सद्गुरु के माध्यम से वह अनन्त समय से बिछुड़ों हुओं को भी मिला देता है। प्रभु जो कार्य जीवों से करवाता है उसके उलट वे कार्य नहीं कर सकते। अहम् के विकार को तजकर व्यक्ति का मन परमात्मा के प्रेम–रंग में रंग जाता है। ऐसे व्यक्ति रात–दिन उस निर्भय निरंकार का नाम स्मरण करते रहते हैं। हे नानक ! उस अपरंपार प्रभु ने शब्द के माध्यम से स्वयं जीवों को अपने साथ जोड़ा हुआ है ॥ ४ ॥ १६ ॥ ४९॥ सिरी रागु महला ३ ॥ वह परमात्मा गुणों का समुद्र है जिसका अन्तिम छोर नहीं पाया जा सकता। केवल कथन

बदनी न पाईऐ हउमै विचहु जाइ ॥ सतगुरि मिलिऐ सद भै रचै आपि वसै मनि आइ ॥ १ ॥ भाई रे गुरमुखि बूझै कोइ ॥ बिनु बूझे करम कमावणे जनमु पदारथु खोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनी चाखिआ तिनी सादु पाइआ बिनु चाखे भरमि भुलाइ ॥ अंम्रितु साचा नामु है कहणा कछू न जाइ ॥ पीवत हू परवाणु भइआ पूरै सबदि समाइ ॥ २ ॥ आपे देइ त पाईऐ होरु करणा किछू न जाइ ॥ देवण वाले कै हथि दाति है गुरू दुआरै पाइ ॥ जेहा कीतोनु तेहा होआ जेहे करम कमाइ ॥ ३ ॥ जतु सतु संजमु नामु है विणु नावै निरमलु न होइ ॥ पूरै भागि नामु मनि वसै सबदि मिलावा होइ ॥ नानक सहजे ही रंगि वरतदा हरि गुण पावै सोइ ॥ ४ ॥ १७ ॥ ५० ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ कांइआ साधै उरध तपु करै विचहु हउमै न जाइ ॥ अधिआतम करम जे करे नामु न कब ही पाइ ॥ गुर कै सबदि जीवतु मरै हरि नामु वसै मनि आइ ॥ १ ॥ सुणि मन मेरे भजु सतगुर सरणा ॥ गुर परसादी छुटीऐ बिखु भवजलु सबदि गुर तरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रै गुण सभा धातु है दूजा भाउ विकारु ॥ पंडितु पड़ै बंधन मोह बाधा नह बूझै बिखिआ पिआरि ॥ सतगुरि मिलिऐ त्रिकुटी छूटै चउथै पदि मुकति दुआरु ॥ २ ॥ गुर ते मारगु पाईऐ चूकै मोहु गुबारु ॥ सबदि मरै ता उधरै पाए मोख दुआरु ॥ गुर परसादी मिलि रहै सचु नामु करतारु ॥ ३ ॥ इहु मनूआ अति सबल है छडे न कितै उपाइ ॥ दूजै भाइ दुखु लाइदा बहुती देइ सजाइ ॥ नानक नामि लगे से उबरे हउमै सबदि गवाइ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ५१ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ किरपा करे गुरु पाईऐ हरि नामो देइ द्रिड़ाइ ॥ बिनु गुर किनै न पाइओ बिरथा जनमु गवाइ ॥ मनमुख करम कमावणे दरगह मिलै सजाइ ॥ १ ॥ मन रे दूजा भाउ चुकाइ ॥ अंतरि तेरै हरि वसै गुर सेवा सुखु पाइ ॥ रहाउ ॥ सचु बाणी सचु सबदु है जा सचि धरे पिआरु ॥ हरि का नामु मनि वसै हउमै क्रोधु निवारि ॥ मनि निरमल नामु धिआईऐ ता पाए मोख दुआरु ॥ २ ॥ हउमै विचि जगु बिनसदा मरि जंमै आवै जाइ ॥ मनमुख सबदु न जाणनी जासनि पति गवाइ ॥ गुर सेवा नाउ पाईऐ

मात्र से परमात्मा प्राप्त नहीं किया जा सकता । अहंकार त्याग कर ही उसे पाया जा सकता है । सद्गुरु की प्राप्ति के फलस्वरूप हर व्यक्ति का मन उसके प्रेम और भय में लीन बना रहता है और इस तरह परमात्मा स्वयं व्यक्ति के मन में आ बसता है ॥ १ ॥ हे भाई ! कोई बिरला ही गुरमुख बनकर उसको समझ पाता है । उसको समझे बिना जीवन के कार्य–व्यापार जन्म रूपी धन को गँवाने के तुल्य हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन्होंने नाम–रस को चखा है उन्हीं को स्वाद आया है और जिन्होंने नहीं चखा है वे भ्रमों में भूले हुए हैं । सच्चा नाम अमृत है जिसके बारे में कथन नहीं किया जा सकता । अमृत नाम पीते ही व्यक्ति उस परमात्मा के सामने स्वीकृत हो जाता है और पूर्ण रूप से शब्द ब्रह्म में लीन हो जाता है ॥ २ ॥ यह दान प्रभु स्वयं दे तो प्राप्त होता है अन्यथा कोई चारा नहीं है । यह देन उस देने वाले के हाथ में ही है जिसे गुरु के द्वार से ही प्राप्त किया जा सकता है । प्रभु ने जीव को जैसा बनाया है जीव वैसा ही बन गया है और वैसे ही कर्म करता है ॥ ३ ॥ नाम ही व्यक्ति के लिए संयम एवं अन्य क्रियाएं है । नाम के बिना व्यक्ति का मन निर्मल नहीं हो सकता है । पूर्ण भाग्य वालों के मन में नाम बसता है और शब्द के माध्यम से यह मिलाप होता है । हे नानक ! जो शान्त मन होकर प्रभु से प्रेम निभाता है वह ही उस हरि के गुणों को प्राप्त करता है ॥४॥१७॥५०॥सिरी रागु महला ३॥ व्यक्ति काया की अनेकों साधनाएं, उलटा लटक कर तप आदि करता है लेकिन इन सब से अन्तर्मन का अभिमान नहीं जाता । यदि व्यक्ति आध्यात्मिक उन्नति के लिए कर्मकाण्ड आदि करने में लगा रहे तो कभी भी वह परमात्मा का नाम प्राप्त नहीं कर सकता । शब्द गुरु के माध्यम से वह जीवित रहते हुए ही मरने की कला सीख ले तो उसके हृदय में प्रभु–नाम का निवास हो जाता है । हे मेरे मन, मेरी बात सुन और दौड़कर सद्गुरु की शरण में आ जा । गुरु की कृपा से ही मुक्ति मिलती है और शब्द–गुरु के माध्यम से ही विष–रूपी जल से भरे हुए संसार सागर को तैर कर पार किया जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीनों गुणों के अधीन रह कर कार्य करना वास्तव में माया का ही प्रभाव है और दुविधा भाव विकार उत्पन्न करता है । माया के बन्धनों में माया के मोह से बँधा हुआ पंडित पढ़ता तो है परन्तु माया के प्यार के बंधन को समझ नहीं पाता । सद्गुरु के मिलने से त्रिगुणात्मक अवस्था छूट जाती है और चौथा पद मुक्ति के द्वार के रूप में प्राप्त हो जाता है ॥ २ ॥ गुरु से ही जीवन का मार्ग मिलता है और मोह का अन्धकार चुक जाता है । शब्द के साथ लीन होकर जीव का उद्धार होता है और उसे विकारों से मुक्ति का द्वार मिल जाता है । गुरु की कृपा से ही व्यक्ति करतार के सत्य–नाम में लीन बना रहता है ॥ ३ ॥ यह मन बड़ा बलवान है और कुमार्ग पर ले जाने से किसी भी तरह से चूकता नहीं है । व्यक्ति को दुविधा में डालकर दुखी करता है और कड़ी सज़ा देता है । हे नानक ! शब्द–गुरु के माध्यम से अहं को गँवाकर जो प्रभु नाम में लीन हो गए हैं उन्हीं का उद्धार होता है ॥ ४ ॥ १८ ॥ ५१ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ वह कृपा करे तो गुरु प्राप्त होता है जो हरि नाम का स्मरण करवाता है । किसी भी व्यक्ति ने गुरु के बिना परमात्मा नहीं प्राप्त किया और गुरु के बिना अपने जन्म को व्यर्थ ही गँवा दिया जाता है । मन के पीछे चलकर अर्थात मनमुख बनकर किए हुए कर्मों की प्रभु के समक्ष सज़ा मिलती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू द्वैत भावना को समाप्त कर । परमात्मा तेरे अन्दर बसता है । तू गुरु की सेवा के माध्यम से उसे पाकर सुख प्राप्त कर ॥ रहाउ ॥ व्यक्ति के कथन पर चलने का रास्ता तब ही सच्चा है यदि वह सत्य के साथ वास्तविक रूप से प्यार करे । अहंकार को दूर करके उसके हृदय में हरि नाम का निवास हो । निर्मल मन से यदि नाम का स्मरण किया जाए तब ही विकारों से मुक्ति का द्वार प्राप्त होता है ॥ २ ॥ अहंकार में ही जगत का विनाश होता है और जन्मता–मरता जीव आवागमन के चक्र में पड़ा रहता है । मनमुख व्यक्ति शब्द–गुरु को नहीं जानता और अपना सम्मान खोकर यहां से चला जाता है । गुरु की सेवा से नाम प्राप्त होता है और मन से सत्य में

सचे रहै समाइ ॥ ३ ॥ सबदि मंनिऐ गुरु पाईऐ विचहु आपु गवाइ ॥ अनदिनु भगति करे सदा साचे की लिव लाइ ॥ नामु पदारथु मनि वसिआ नानक सहजि समाइ ॥ ४ ॥ १९ ॥ ५२ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ जिनी पुरखी सतगुरु न सेविओ से दुखीए जुग चारि ॥ घरि होदा पुरखु न पछाणिआ अभिमानि मुठे अहंकारि ॥ सतगुरू किआ फिटकिआ मंगि थके संसारि ॥ सचा सबदु न सेविओ सभि काज सवारणहारु ॥ १ ॥ मन मेरे सदा हरि वेखु हदूरि ॥ जनम मरन दुखु परहरै सबदि रहिआ भरपूरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचु सलाहनि से सचे सचा नामु अधारु ॥ सची कार कमावणी सचे नालि पिआरु ॥ सचा साहु वरतदा कोइ न मेटणहारु ॥ मनमुख महलु न पाइनी कूड़ि मुठे कूड़िआर ॥ २ ॥ हउमै करता जगु मुआ गुर बिनु घोर अंधारु ॥ माइआ मोहि विसारिआ सुखदाता दातारु ॥ सतगुरु सेवहि ता उबरहि सचु रखहि उर धारि ॥ किरपा ते हरि पाईऐ सचि सबदि वीचारि ॥ ३ ॥ सतगुरु सेवि मनु निरमला हउमै तजि विकार ॥ आपु छोडि जीवत मरै गुर कै सबदि वीचार ॥ धंधा धावत रहि गए लागा साचि पिआरु ॥ सचि रते मुख उजले तितु साचै दरबारि ॥ ४ ॥ सतगुरु पुरखु न मंनिओ सबदि न लगो पिआरु ॥ इसनानु दानु जेता करहि दूजै भाइ खुआरु ॥ हरि जीउ आपणी क्रिपा करे ता लागै नाम पिआरु ॥ नानक नामु समालि तू गुर कै हेति अपारि ॥ ५ ॥ २० ॥ ५३ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ किसु हउ सेवी किआ जपु करी सतगुर पूछउ जाइ ॥ सतगुर का भाणा मंनि लई विचहु आपु गवाइ ॥ एहा सेवा चाकरी नामु वसै मनि आइ ॥ नामै ही ते सुखु पाईऐ सचै सबदि सुहाइ ॥ १ ॥ मन मेरे अनदिनु जागु हरि चेति ॥ आपणी खेती रखि लै कूंज पड़ैगी खेति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन कीआ इछा पूरीआ सबदि रहिआ भरपूरि ॥ भै भाइ भगति करहि दिनु राती हरि जीउ वेखै सदा हदूरि ॥ सचै सबदि सदा मनु राता भ्रमु गइआ सरीरहु दूरि ॥ निरमलु साहिबु पाइआ साचा गुणी गहीरु ॥ २ ॥ जो जागे से उबरे सूते गए मुहाइ ॥ सचा सबदु न पछाणिओ सुपना गइआ विहाइ ॥ सुंञे घर का पाहुणा

समाहित हुआ जाता है ॥ ३ ॥ सत्य को मानने से ही और अहंकार गँवाने से ही गुरु प्राप्त होता है तब व्यक्ति सत्य–प्रभु में लवलीन होकर दिन–रात भक्ति में जुटा रहता है । हे नानक ! ऐसे व्यक्ति के मन में परमात्मा का अमूल्य नाम आ बसता है और वह व्यक्ति शान्त अवस्था में टिका रहता है ॥ ४ ॥ १९ ॥ ५२ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ जिन व्यक्तियों ने सद्गुरु का स्मरण नहीं किया, वे चारों युगों में दुखी रहते हैं । वे व्यक्ति के अन्दर स्थित परमात्मा को नहीं पहचानते और अहंकार के मद में ठगे रहते हैं । गुरु की ओर से फटकार खाए हुए व्यक्ति संसार में मांगते घूमते हैं । वे उस सत्य शब्द ब्रह्म का स्मरण नहीं करते जो सब कामों को सँवारने में समर्थ है । हे मेरे मन ! परमात्मा को सदैव अपने अंग–संग देख । परमात्मा ही जन्म–मरण के दुख को दूर करता है और वह शब्द में ही रमा रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो सत्य का गुणानुवाद करते हैं वे ही सच्चे हैं और सच्चा नाम ही उनका आश्रय है । वे सच्चे ढंग से जीविकोपार्जन करते हैं और उनको सत्य के साथ ही प्रेम होता है । सच्चा मालिक ही है जिसका आदेश सव ओर चलता है और उस हुकम को कोई मिटा नहीं सकता । मन के पीछे लगे लोग परमात्मा के स्थान तक नहीं पहुँच पाते और रास्ते में ही झूठ और झूठों के द्वारा लूट लिए जाते हैं ॥ २ ॥ अहंकार में लीन सारा संसार मृत्युलोक वना हुआ है जहां गुरु के बिना घोर अन्धकार है । यहाँ लोगों ने मोह में पड़कर सुख देने वाले उस दाता प्रभु को भुला दिया है । सद्गुरु परमात्मा की सेवा करें तब ही उद्धार होगा और हृदय में सत्य धारण होगा । उसकी कृपा से ही वह प्रभु सत्य–शव्द के चिन्तन के फलस्वरूप प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ अहंकार को त्याग कर सद्गुरु परमात्मा की सेवा करने से मन निर्मल हो जाता है । तब व्यक्ति शब्द–गुरु के विचार के माध्यम से जीवित रहते हुए भी सब विकारों के प्रति मृत हो जाता है । संसार के झमेलों में भाग–दौड़ करने की रुचि समाप्त हो जाती है और सत्य मार्ग के साथ प्रेम बन जाता है । जो सत्य के रंग में रंग गए हैं उनके मुख उस सच्चे दरबार में उज्जवल बने रहते हैं ॥ ४ ॥ सद्गुरु परमात्मा को माना नहीं और शब्द के साथ जिसने प्रेम नहीं किया उसके स्नान एवं दान आदि सब उसको द्वैत भाव में ले जाकर ख्वार करने वाले बन जाते हैं । परमात्मा स्वयं कृपा करे तब ही उसके नाम के साथ प्यार हो सकता है । हे नानक ! तू गुरु के अपार प्रेम के माध्यम से नाम का स्मरण कर ॥ ५ ॥ २० ॥ ५३ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ किसकी सेवा करूँ, किसका जाप करूँ ? जब यह सद्गुरु से पूछा जाता है तो वह उत्तर देता है कि अपने अन्दर का अहंकार गँवा कर परमात्मा की रज़ा को माना जाना चाहिए । गुरु की सेवा चाकरी का सही अर्थ है कि मन में नाम का निवास हो जाए । नाम–स्मरण से ही सुख प्राप्त होता है और सच्चे शब्द के कारण जीव शोभायमान बनता है । हे मेरे मन, रात–दिन चेतन बना रह । तू अपनी जीवन रूपी खेती की रक्षा कर ले नहीं तो मौत रूपी पक्षी निश्चित रूप से तेरे खेत पर धावा बोलेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो व्यक्ति शब्द में पूरी तरह लीन वने रहते हैं उनके मन की सभी इच्छाएं पूरी हो जाती हैं । ऐसा व्यक्ति परमात्मा के भय में प्रेमपूर्वक दिन–रात उसकी भक्ति करता है और परमात्मा को सदैव अपने आस–पास देखता है । जिसका मन सच्चे शव्द में सदैव लगा रहता है उसके शरीर में से भ्रम निकलकर दूर चला जाता है । ऐसे व्यक्ति सच्चे गुणों के खज़ाने उस निर्मल परमात्मा को प्राप्त कर लेते हैं ॥ २ ॥ जो व्यक्ति माया के प्रभावों के प्रति सचेत रहते हैं, वे बचे रहते हैं और जो उन प्रभावों के प्रति आँखें बंद कर लेते हैं वे लुट जाते हैं । जिन्होंने सत्य शब्द की पहचान नहीं की उनका जीवन स्वप्न की तरह व्यर्थ चला जाता है । वे सूने पड़े घर में आए मेहमान की तरह जैसे खाली आए थे

जिउ आइआ तिउ जाइ ॥ मनमुख जनमु बिरथा गइआ किआ मुहु देसी जाइ ॥ ३ ॥ सभ किछु आपे आपि है हउमै विचि कहनु न जाइ ॥ गुर कै सबदि पछाणीऐ दुखु हउमै विचहु गवाइ ॥ सतगुरु सेवनि आपणा हउ तिन कै लागउ पाइ ॥ नानक दरि सचै सचिआर हहि हउ तिन बलिहारै जाउ ॥ ४ ॥ २१ ॥ ५४ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ जे वेला वखतु वीचारीऐ ता कितु वेला भगति होइ ॥ अनदिनु नामे रतिआ सचे सची सोइ ॥ इकु तिलु पिआरा विसरै भगति किनेही होइ ॥ मनु तनु सीतलु साच सिउ सासु न बिरथा कोइ ॥ १ ॥ मेरे मन हरि का नामु धिआइ ॥ साची भगति ता थीऐ जा हरि वसै मनि आइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजे खेती राहीऐ सचु नामु बीजु पाइ ॥ खेती जंमी अगली मनूआ रजा सहजि सुभाइ ॥ गुर का सबदु अंम्रितु है जितु पीतै तिख जाइ ॥ इहु मनु साचा सचि रता सचे रहिआ समाइ ॥ २ ॥ आखणु वेखणु बोलणा सबदे रहिआ समाइ ॥ बाणी वजी चहु जुगी सचो सचु सुणाइ ॥ हउमै मेरा रहि गइआ सचै लइआ मिलाइ ॥ तिन कउ महलु हदूरि है जो सचि रहे लिव लाइ ॥ ३ ॥ नदरी नामु धिआईऐ विणु करमा पाइआ न जाइ ॥ पूरै भागि सतसंगति लहै सतगुरु भेटै जिसु आइ ॥ अनदिनु नामे रतिआ दुखु बिखिआ विचहु जाइ ॥ नानक सबदि मिलावड़ा नामे नामि समाइ ॥ ४ ॥ २२ ॥ ५५ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ आपणा भउ तिन पाइओनु जिन गुर का सबदु बीचारि ॥ सतसंगती सदा मिलि रहे सचे के गुण सारि ॥ दुबिधा मैलु चुकाईअनु हरि राखिआ उर धारि ॥ सची बाणी सचु मनि सचे नालि पिआरु ॥ १ ॥ मन मेरे हउमै मैलु भर नालि ॥ हरि निरमलु सदा सोहणा सबदि सवारणहारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचै सबदि मनु मोहिआ प्रभि आपे लए मिलाइ ॥ अनदिनु नामे रतिआ जोती जोति समाइ ॥ जोती हू प्रभु जापदा बिनु सतगुर बूझ न पाइ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ सतगुरु भेटिआ तिन आइ ॥ २ ॥ विणु नावै सभ डुमणी दूजै भाइ खुआइ ॥ तिसु बिनु घड़ी न जीवदी दुखी रैणि विहाइ ॥ भरमि भुलाणा अंधुला फिरि फिरि आवै जाइ ॥ नदरि करे प्रभु आपणी

वैसे ही खाली यहां से चले जाते हैं । मनमुख व्यक्ति का जीवन व्यर्थ ही चला जाता है । वह आगे जाकर क्या मुँह दिखाएगा ॥ ३ ॥ परमात्मा स्वयं ही सब कुछ करने में समर्थ है परन्तु अहंकार में लीन व्यक्ति इस सत्य का कथन भी नहीं कर सकता । शब्द–गुरु के माध्यम से अपने अन्दर से अहंकार के दुख को दूर करने पर ही यह समझ आती है । जो जीव सद्‌गुरु की सेवा करते हैं मैं उनके चरणों का स्पर्श करता हूँ । हे नानक ! मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ जो सच्चे के द्वार पर सत्याचरण करने वाले के रूप में पहुँचते हैं ॥ ४ ॥ २१ ॥ ५४ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ भक्ति में लीन होने के लिए यदि किसी विशेष समय को नियत करने के बारे में सोचा जाए तो किस समय परमात्मा की भक्ति हो सकती है । हर समय ही परमात्मा के नाम रंग में रंगे रहने पर उस सदैव स्थिर प्रभु का रूप ही बना जाता है और सच्ची शोभा प्राप्त होती है। वह भक्ति भला कैसी है जिसमें एक क्षण के लिए भी वह प्रीतम विस्मृत हो जाए । यदि एक श्वास भी परमात्मा की याद से खाली न जाए तो सत्य–प्रभु के साथ लीन होने से मन एवं शरीर शांति को प्राप्त कर लेते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! परमात्मा का स्मरण कर क्योंकि सच्ची भक्ति तभी मानी जाएगी जब वह परमात्मा मन में आ बसेगा ॥१॥ रहाउ ॥ सहज अवस्था में पहुँच कर हृदय रूपी खेती को बोया जाए । यदि उसमें सच्चे नाम का बीज डाला जाए तो ऐसी खेती बहुत अधिक फलती है और मन भी सहज स्वभाव में जाकर तृप्त हो जाता है । शब्द–गुरु ही अमृत है जिसे पीने से प्यास बुझ जाती है और यह मन सत्य बन कर सत्य में ही रंग जाता और सत्य में ही लीन हो जाता है ॥ २ ॥ ऐसे व्यक्तियों का कहना और देखना शब्द में ही समाया रहता है । उनकी वाणी चारों युगों में सत्य रूप में सुनाई जाती है क्योंकि वे केवल सत्य ही का कथन करते हैं । उनके अन्दर से अहंकार एवं ममता समाप्त हो जाती है और उनका साक्षात्कार सत्य से हो जाता है । जो सत्य में लवलीन हो जाते हैं उनका निवास परमात्मा में ही बना रहता है ॥ ३ ॥ परमात्मा की कृपा हो तो नाम का स्मरण किया जाता है और बिना उसकी कृपा के यह प्राप्त नहीं होता । पूर्ण भाग्यशाली को सद्‌संगत प्राप्त होती है और ऐसी सद्‌संगत में सद्‌गुरु परमात्मा स्वयं सबसे मिलता है । रात–दिन नाम में रम चुके व्यक्तियों के विषय विकारों के दुख उनके अन्दर से समाप्त हो जाते हैं । हे नानक! शब्द–गुरु के द्वारा ही उस परमात्मा से मिलाप होता है और उसके नाम में लीन हुआ जाता है ॥ ४ ॥ २२ ॥ ५५॥ सिरी रागु महला ३ ॥ जिन्होंने गुरु के शब्द का चिन्तन किया है परमात्मा उन्हीं व्यक्तियों में अपना प्रेम रूपी डर पैदा करता है । सद्‌संगत में ही वह सदा मिलता है और सद्‌संगत में ही सत्य–रूपी परमात्मा की समझ पड़ती है । सद्‌संगत में ही परमात्मा को हृदय में धारण किया जाता है और दुविधा की मैल छूट जाती है । वहीं पर सच्ची वाणी से मन सच्चा होता है और उस सत्य प्रभु के साथ प्रेम बनता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू अहंकार के मल के साथ भरा हुआ है । वह परमात्मा निर्मल है इसलिए सदैव सुन्दर है और शब्द के माध्यम से सबको सुन्दर बनाने में समर्थ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन व्यक्तियों का मन सच्चे शब्द में लग गया है प्रभु उन्हें स्वयं ही मिला लेता है । नाम में प्रतिदिन लीन उनकी ज्योति परम ज्योति में समा जाती है । अन्तर्मन की ज्योति से ही प्रभु को जाना जाता है परन्तु यह विवेक बुद्धि सद्‌गुरु के बिना प्राप्त नहीं होती । जिनके पूर्व जन्म के लेखों में लिखा है वही सद्‌गुरु की सेवा में पहुँचते हैं ॥ २ ॥ नाम के बिना सारी सृष्टि दुविधा ग्रस्त है और इसी कारण भटकती फिरती है । उस प्रभु के बिना यह घड़ी भर भी नहीं स्थित बनी रह सकती और दुख में ही जीवन रूपी रात्रि व्यतीत करती है । भ्रम में भूले हुए लोग अन्धे हैं और पुनः पुनः आवागमन में पड़े रहते हैं । प्रभु अपनी कृपा दृष्टि करके ही इनको अपने से

आपे लए मिलाइ ॥ ३ ॥ सभु किछु सुणदा वेखदा किउ मुकरि पइआ जाइ ॥ पापो पापु कमावदे पापे पचहि पचाइ ॥ सो प्रभु नदरि न आवई मनमुखि बूझ न पाइ ॥ जिसु वेखाले सोई वेखै नानक गुरमुखि पाइ ॥ ४ ॥ २३ ॥ ५६ ॥ स्रीरागु महला ३ ॥ बिनु गुर रोगु न तुटई हउमै पीड़ न जाइ ॥ गुर परसादी मनि वसै नामे रहै समाइ ॥ गुर सबदी हरि पाईऐ बिनु सबदै भरमि भुलाइ ॥ १ ॥ मन रे निज घरि वासा होइ ॥ राम नामु सालाहि तू फिरि आवण जाणु न होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि इको दाता वरतदा दूजा अवरु न कोइ ॥ सबदि सालाही मनि वसै सहजे ही सुखु होइ ॥ सभ नदरी अंदरि वेखदा जै भावै तै देइ ॥ २ ॥ हउमै सभा गणत है गणतै नउ सुखु नाहि ॥ बिखु की कार कमावणी बिखु ही माहि समाहि ॥ बिनु नावै ठउरु न पाइनी जमपुरि दूख सहाहि ॥ ३ ॥ जीउ पिंडु सभु तिस दा तिसै दा आधारु ॥ गुर परसादी बुझीऐ ता पाए मोख दुआरु ॥ नानक नामु सलाहि तूं अंतु न पारावारु ॥ ४ ॥ २४ ॥ ५७ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ तिना अनंदु सदा सुखु है जिना सचु नामु आधारु ॥ गुर सबदी सचु पाइआ दूख निवारणहारु ॥ सदा सदा साचे गुण गावहि साचै नाइ पिआरु ॥ किरपा करि कै आपणी दितोनु भगति भंडारु ॥ १ ॥ मन रे सदा अनंदु गुण गाइ ॥ सची बाणी हरि पाईऐ हरि सिउ रहै समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सची भगती मनु लालु थीआ रता सहजि सुभाइ ॥ गुर सबदी मनु मोहिआ कहणा कछू न जाइ ॥ जिहवा रती सबदि सचै अंम्रितु पीवै रसि गुण गाइ ॥ गुरमुखि एहु रंगु पाईऐ जिस नो किरपा करे रजाइ ॥ २ ॥ संसा इहु संसारु है सुतिआ रैणि विहाइ ॥ इकि आपणै भाणै कढि लइअनु आपे लइओनु मिलाइ ॥ आपे ही आपि मनि वसिआ माइआ मोहु चुकाइ ॥ आपि वडाई दितीअनु गुरमुखि देइ बुझाइ ॥ ३ ॥ सभना का दाता एकु है भुलिआ लए समझाइ ॥ इकि आपे आपि खुआइअनु दूजै छडिअनु लाइ ॥ गुरमती हरि पाईऐ जोती जोति मिलाइ ॥ अनदिनु नामे रतिआ नानक नामि समाइ ॥ ४ ॥ २५ ॥ ५८ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ गुणवंती सचु पाइआ त्रिसना तजि विकार ॥ गुर सबदी मनु

मिला लेता है ॥ ३ ॥ परमात्मा सब कुछ हमारा कहा हुआ, सुनता एवं देखता है । उसके समक्ष हम कैसे मुकर सकते हैं । जीव पाप में से पाप का कार्य–व्यवहार करते हैं एवं पाप में ही मर खप जाते हैं । वह प्रभु ऐसे जीवों को नज़र नहीं आता और मन के पीछे चलने वाले मनमुख उसको समझ नहीं पाते । हे नानक ! जिसको वह चाहे उसी को वह दृष्टिगत होता है और गुरमुख बन कर ही उसे प्राप्त किया जाता है ॥ ४ ॥ २३ ॥ ५६ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ गुरु के बिना जीवात्मा का रोग समाप्त नहीं होता और अहंकार की पीड़ा नहीं जाती । गुरु की कृपा से ही वह मन में बसता है और जीव नाम में लीन बना रहता है । शब्द गुरु के माध्यम से ही हरि को प्राप्त किया जाता है एवं शब्द के ज्ञान से विहीन व्यक्ति भ्रमों में भूले फिरते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे मन, परमात्मा के नाम का गुणानुवाद करता रह । प्रभु चरणों में तेरा निवास बना रहेगा और फिर आवागमन का चक्र नहीं रहेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दान देने वाला केवल एक परमात्मा ही है, दूसरा अन्य कोई नहीं है । शब्द द्वारा गुणानुवाद से वह मन में बसता है और जीव सहज में आकर सुख प्राप्त करता है । परमात्मा सबको अपनी दृष्टि के नीचे सदैव देखता रहता है और जिसे चाहता है उसे ही देता है ॥ २ ॥ अहंकार ही सब जोड़ घटाव का साधन है और इस प्रकार के जोड़ घटाव सुख नहीं देते । घटिया कार्य करने पर व्यक्ति विष रूपी घटियापन में ही लीन बना रहता है । प्रभु के नाम के बिना कोई ठिकाना नहीं है और यमपुरी में दुःख सहना पड़ता है ॥ ३ ॥ यह प्राण एवं शरीर सब उसी परमात्मा के हैं और उसका ही सबको आसरा है । गुरु की कृपा से यह समझ बूझ आती है और मोक्ष का द्वार प्राप्त होता है। हे नानक ! तू उसके नाम का गुणानुवाद कर जिसका कोई भी अन्त और ओर–छोर नहीं ॥४॥२४॥५७॥ सिरी रागु महला ३ ॥ जिन्हें सच्चे नाम का ही आसरा है उन्हें सदैव सुख एवं आनन्द प्राप्त होता है । शब्द गुरु के माध्यम से ही दुखों को दूर करने वाला सत्य प्राप्त होता है । ऐसे व्यक्ति सदा सच्चे के गुण गाते हैं और सत्य–नाम से प्यार बनाए रखते हैं । परमात्मा ने उन पर कृपा करके उन्हें भक्ति का भंडार सौंपा हुआ है । हे मन ! सदैव आनन्द देने वाले प्रभु के गुण गा । सच्ची वाणी के माध्यम से ही परमात्मा प्राप्त होता है और परमात्मा में लीन हुआ जाता है ॥१॥ रहाउ॥ सच्ची भक्ति के कारण मन प्रेम के लाल रंग में रंग कर व्यक्ति सहज स्वभाव वाला बन जाता है । शब्द–गुरु में मन इस तरह मोहित हो गया है कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता । व्यक्ति की जीभ सच्चे शब्द में लीन होकर अमृत पान करती है और प्रभु का गुणानुवाद करती है । जिस पर अपनी कृपा करके प्रभु उसे अपनी रज़ा में चलाता है वही गुरमुख बन कर यह प्रेम रंग प्राप्त करता है ॥२॥ यह संसार संशय युक्त है और यहां व्यक्ति सो कर ही अपनी आयु गँवा देता है । परन्तु वह परमात्मा अनेकों को अपनी रज़ा में ही इस संसार के झमेलों से दूर कर लेता है और अपने में लीन कर लेता है । माया–मोह के बंधन समाप्त करने पर वह स्वयं ही मन में आ बसता है । वह स्वयं ही प्रशंसा प्रदान करता है और गुरमुख को यह सब कुछ समझा देता है ॥३॥ एक प्रभु ही सबका दाता है जो भूले भटके हुओं को समझा–बुझा लेता है । कई जीवों को उस प्रभु ने स्वयं ही अपने से दूर किया हुआ है और माया–मोह के द्वैत भाव में लगाया हुआ है । गुरु से विवेक प्राप्त करके परमात्मा को पाया जाता है और उसकी ज्योति में अपनी ज्योति समाहित की जाती है । हे नानक ! ऐसा व्यक्ति हर समय नाम में रंगा रह कर अन्ततः नाम में ही लीन बना रहता है ॥४॥२५॥५८॥ सिरी रागु महला३॥ गुण धारण करने वाली जीव स्त्री ने तृष्णा आदि विकारों को छोड़कर सत्य रूपी परमात्मा को पा लिया है । उसका मन शब्द–गुरु में

रंगिआ रसना प्रेम पिआरि ॥ बिनु सतिगुर किनै न पाइओ करि वेखहु मनि वीचारि ॥ मनमुख मैलु न उतरै जिचरु गुर सबदि न करे पिआरु ॥ १ ॥ मन मेरे सतिगुर कै भाणै चलु ॥ निज घरि वसहि अंम्रितु पीवहि ता सुख लहहि महलु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अउगुणवंती गुणु को नही बहणि न मिलै हदूरि ॥ मनमुखि सबदु न जाणई अवगणि सो प्रभु दूरि ॥ जिनी सचु पछाणिआ सचि रते भरपूरि ॥ गुर सबदी मनु बेधिआ प्रभु मिलिआ आपि हदूरि ॥ २ ॥ आपे रंगणि रंगिओनु सबदे लइओनु मिलाइ ॥ सचा रंगु न उतरै जो सचि रते लिव लाइ ॥ चारे कुंडा भवि थके मनमुख बूझ न पाइ ॥ जिसु सतिगुरु मेले सो मिलै सचै सबदि समाइ ॥ ३ ॥ मित्र घणेरे करि थकी मेरा दुखु काटै कोइ ॥ मिलि प्रीतम दुखु कटिआ सबदि मिलावा होइ ॥ सचु खटणा सचु रासि है सचे सची सोइ ॥ सचि मिले से न विछुड़हि नानक गुरमुखि होइ ॥ ४ ॥ २६ ॥ ५९ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ आपे कारणु करता करे स्रिसटि देखै आपि उपाइ ॥ सभ एको इकु वरतदा अलखु न लखिआ जाइ ॥ आपे प्रभू दइआलु है आपे देइ बुझाइ ॥ गुरमती सद मनि वसिआ सचि रहे लिव लाइ ॥ १ ॥ मन मेरे गुर की मंनि लै रजाइ ॥ मनु तनु सीतलु सभु थीऐ नामु वसै मनि आइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि करि कारणु धारिआ सोई सार करेइ ॥ गुर कै सबदि पछाणीऐ जा आपे नदरि करेइ ॥ से जन सबदे सोहणे तितु सचै दरबारि ॥ गुरमुखि सचै सबदि रते आपि मेले करतारि ॥ २ ॥ गुरमती सचु सलाहणा जिस दा अंतु न पारावारु ॥ घटि घटि आपे हुकमि वसै हुकमे करे बीचारु ॥ गुर सबदी सालाहीऐ हउमै विचहु खोइ ॥ सा धन नावै बाहरी अवगणवंती रोइ ॥ ३ ॥ सचु सलाही सचि लगा सचै नाइ त्रिपति होइ ॥ गुण वीचारी गुण संग्रहा अवगुण कढा धोइ ॥ आपे मेलि मिलाइदा फिरि वेछोड़ा न होइ ॥ नानक गुरु सालाही आपणा जिदू पाई प्रभु सोइ ॥ ४ ॥ २७ ॥ ६० ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सुणि सुणि काम गहेलीए किआ चलहि बाह लुडाइ ॥ आपणा पिरु न पछाणही किआ मुहु देसहि जाइ ॥ जिनी सखी कंतु पछाणिआ हउ तिन कै लागउ पाइ ॥ तिन ही

रंग गया है और उसकी जीभ भी प्रभु के प्रेम प्यार में रंगी गई है । मन में विचार करके देख लो कि बिना सद्गुरु के किसी को भी परमात्मा नहीं मिल सका । मनमुख व्यक्ति के मन से तब तक मैल दूर नहीं होती जब तक वह शब्द–गुरु के साथ प्रेम नहीं करता ॥ १॥ हे मेरे मन ! सद्गुरु परमात्मा की रज़ा में चल । इससे तू अपनी अंतरात्मा में ही टिका रहेगा, अमृत का पान करेगा और सुख का स्थान ढूँढ लेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुण विहीन स्त्री के पास चूंकि कोई गुण नहीं होता इसलिए उसे प्रभु के समक्ष बैठना नसीब नहीं होता । अपने मन के पीछे चलने वाली जीव स्त्री शब्द–ब्रह्म के मर्म को नहीं जानती और अपने अवगुणों के कारण प्रभु से दूर बनी रहती है । जिन्होंने सत्य को पहचान लिया है वे सत्य से पूर्ण रूप में भरे रहते हैं । उनका मन शब्द–गुरु से बिंध जाता है और परमात्मा उन्हें प्रत्यक्ष होकर मिलता है ॥ २ ॥ परमात्मा ने स्वयं ही जीव को अपने रंग में रंगा है और स्वयं ही वह शब्द के माध्यम से अपने में मिला लेता है । जो सत्य में लवलीन हो जाते हैं उन पर से प्रभु नाम का सच्चा रंग कभी नहीं उतरता । मनमुख व्यक्ति चारों दिशाओं में भ्रमण करते थक जाते हैं परन्तु उस परमात्मा को नहीं बूझ पाते । जिन्हें सद्गुरु मिलाता है वही सच्चे शब्द में समाहित हो पाते हैं ॥ ३ ॥ मैंने बहुतों को मित्र बनाया परन्तु मेरा दुख कोई भी दूर न कर सका । प्रियतम को मिल कर ही मेरा दुख कटा और यह मेल शब्द के माध्यम से ही हो सका । सत्य पर चलना ही सच्ची पूंजी है और उस सच्चे प्रभु से मिलकर ही सच्ची शोभा प्राप्त होती है । हे नानक ! गुरुमुख बनकर जो सत्य–प्रभु से मिल जाते हैं वे फिर कभी बिछुड़ते नहीं ॥ ४ ॥ २६ ॥ ५९ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ कर्ता प्रभु स्वयं ही रचना करता है और स्वयं ही उसकी संभाल करता है । वह एक प्रभु ही सब में कार्यशील है और उस अलख प्रभु को लखा नहीं जा सकता । वह प्रभु स्वयं ही दयालु होकर जीव को बूझने की शक्ति प्रदान करता है । गुरु की शिक्षा से वह परमात्मा सदैव मन में बसा रहता है और व्यक्ति सत्य में लवलीन रहता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! गुरु द्वारा दी गई युक्ति को मान ले इससे तन–मन शीतल हो जाता है और मन में प्रभु का नाम आ बसता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने सृष्टि रचना की है वही इसकी संभाल करता है परन्तु इस तथ्य को शब्द–गुरु के माध्यम से पहचाना जाता है अथवा वह स्वयं ही कृपा दृष्टि करे तो ऐसा होता है । उस सच्चे दरबार में वे ही शब्द के माध्यम से सुन्दर लगते हैं जो गुरुमुख बन कर शब्द में लीन हुए हैं और कर्त्ता परमात्मा ने उन्हें अपने में मिला लिया है । गुरु की मति के अनुरूप चल कर उस सत्य प्रभु का गुणानुवाद किया जाता है जिसका कोई ओर–छोर नहीं है । वह हुकम रूप में प्रत्येक घट में स्वयं ही बसता है और हुकम में ही वह जीवों के बारे में विचार करता रहता है । अन्दर से अहंकार गँवा कर ही शब्द–गुरु का गुणानुवाद होता है । जो प्रभु रूपी मालिक के नाम से दूर है अवगुणों वाली वह स्त्री जीवात्मा सदैव दुखी बनी रहती है ॥ ३ ॥ मैं सच्चे का गुणानुवाद करूं, सच्चे में लीन बना रहूँ, सच्चे नाम के साथ तृप्त होकर उसके गुणों का विचार करूं, उन गुणों को अपने अन्दर संग्रहीत करूं और अवगुणों को मन से धोकर साफ करूं । परमात्मा स्वयं ही अपने से मिलाता है और फिर वियोग की अवस्था नहीं आती । हे नानक ! मैं अपने गुरु का गुणानुवाद करता हूँ जिसके माध्यम से प्रभु को मिला जाता है ॥ ४ ॥ २७ ॥ ६० ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ हे कामनाओं में फंसी जीव स्त्री तू क्यों इतनी लापरवाह होकर और बाहें लहरा कर चल रही है । तूने अपने प्रिय को तो पहचाना ही नहीं । तू आगे जाकर क्या मुँह दिखाएगी। जिन सहेली रूपी संत–संगियों ने उस परमात्मा से पहचान बना ली है मैं उनके चरणों का स्पर्श करती हूँ ।

जैसी थी रहा सतसंगति मेलि मिलाइ ॥ १ ॥ मुंधे कूड़ि मुठी कूड़िआरि ॥ पिरु प्रभु साचा सोहणा पाईऐ गुर बीचारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुखि कंतु न पछाणई तिन किउ रैणि विहाइ ॥ गरबि अटीआ त्रिसना जलहि दुखु पावहि दूजै भाइ ॥ सबदि रतीआ सोहागणी तिन विचहु हउमै जाइ ॥ सदा पिरु रावहि आपणा तिना सुखे सुखि विहाइ ॥ २ ॥ गिआन विहूणी पिर मुतीआ पिरमु न पाइआ जाइ ॥ अगिआन मती अंधेरु है बिनु पिर देखे भुख न जाइ ॥ आवहु मिलहु सहेलीहो मै पिरु देहु मिलाइ ॥ पूरै भागि सतिगुरु मिलै पिरु पाइआ सचि समाइ ॥ ३ ॥ से सहीआ सोहागणी जिन कउ नदरि करेइ ॥ खसमु पछाणहि आपणा तनु मनु आगै देइ ॥ घरि वरु पाइआ आपणा हउमै दूरि करेइ ॥ नानक सोभावंतीआ सोहागणी अनदिनु भगति करेइ ॥ ४ ॥ २८ ॥ ६१ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ इकि पिरु रावहि आपणा हउ कै दरि पूछउ जाइ ॥ सतिगुरु सेवी भाउ करि मै पिरु देहु मिलाइ ॥ सभु उपाए आपे वेखै किसु नेड़ै किसु दूरि ॥ जिनि पिरु संगे जाणिआ पिरु रावे सदा हदूरि ॥ १ ॥ मुंधे तू चलु गुर कै भाइ ॥ अनदिनु रावहि पिरु आपणा सहजे सचि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सबदि रतीआ सोहागणी सचै सबदि सीगारि ॥ हरि वरु पाइनि घरि आपणै गुर कै हेति पिआरि ॥ सेज सुहावी हरि रंगि रवै भगति भरे भंडार ॥ सो प्रभु प्रीतमु मनि वसै जि सभसै देइ अधारु ॥ २ ॥ पिरु सालाहनि आपणा तिन कै हउ सद बलिहारै जाउ ॥ मनु तनु अरपी सिरु देई तिन कै लागा पाइ ॥ जिनी इकु पछाणिआ दूजा भाउ चुकाइ ॥ गुरमुखि नामु पछाणीऐ नानक सचि समाइ ॥ ३ ॥ २९ ॥ ६२ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ हरि जी सचा सचु तू सभु किछु तेरै चीरै ॥ लख चउरासीह तरसदे फिरे बिनु गुर भेटे पीरै ॥ हरि जीउ बखसे बखसि लए सूख सदा सरीरै ॥ गुर परसादी सेव करी सचु गहिर गंभीरै ॥ १ ॥ मन मेरे नामि रते सुखु होइ ॥ गुरमती नामु सलाहीऐ दूजा अवरु न कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धरम राइ नो हुकमु है बहि सचा धरमु बीचारि ॥ दूजै भाइ दुसटु आतमा ओहु तेरी सरकार ॥ अधिआतमी हरि

उनकी सद्संगत में मिलकर मैं भी उनके जैसी ही बन जाऊँ ॥ १ ॥ अपने में मस्त और झूठ का व्यापार करने वाली हे जीव स्त्री, तुझे मायावी संसार ने लूट लिया है । शब्द–गुरु के विचार से ही सुन्दर, प्रिय सत्य–स्वरूप प्रभु को पाया जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख स्त्रियां प्रभु–पति को नहीं पहचानती और पता नहीं उनकी रात (आयु) कैसे व्यतीत होती होगी । गर्व से भरी हुई वह तृष्णा की अग्नि में जलती हैं और अन्यों के प्रति आसक्त होकर दुख पाती रहती हैं । जिन सुहागिनों का मन शब्द में रंगा गया है उनके अन्तर्मन का अहंकार समाप्त हो जाता है । वे सदा अपने प्रिय प्रभु के साथ रमण करती हैं और उनका सुख बढ़ता ही जाता है ॥ २ ॥ ज्ञान विहीन स्त्रियां प्रियतम के द्वारा त्यागी गई होती हैं और उन्हें प्रिय प्रभु नहीं मिलता । अज्ञान में डूबी जीव स्त्री के लिए अन्धेरा ही अन्धेरा है और प्रियतम से मिले बिना उनकी भूख समाप्त नहीं हो सकती । मेरी सत्संगी सहेलियो, मेरे पास आओ और मुझे भी प्रियतम से मिला दो । पूर्व भाग्य से ही सद्गुरु की प्राप्ति होती है और सत्य में लीन होकर अर्थात् सत्याचरण के माध्यम से ही प्रीतम प्रभु को पाया जाता है ॥ ३ ॥ वे सहेलियां सुहागिन हैं जिन पर प्रभु कृपा दृष्टि डालता है । वे अपने मालिक को पहचान जाती हैं और तन–मन उसे अर्पण कर देती हैं । उन्होंने अहंकार का त्याग करके अपने अन्दर ही अपने वर प्रभु को पा लिया है । हे नानक ! ऐसी सुहागिन शोभा युक्त जीव स्त्रियां सदैव उस प्रभु की भक्ति में लीन रहती हैं ॥ ४ ॥ २८ ॥ ६१ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ कई भाग्यशाली स्त्रियां अपने प्रभु पति के साथ रमण करती हैं परन्तु मैं ऐसा उपाय किससे पूछने जाऊं जिससे मैं श्रद्धापूर्वक सद्गुरु की सेवा करूं और वह मुझे प्रियतम प्रभु से मिला दे । सबको उत्पन्न करके वह स्वयं ही सबकी देखभाल करता है और किसी को पास और किसी को दूर रखता है । जिसने उस प्रभु पति को अपने साथ ही बना रहने वाला जान लिया है वह सदैव उसको अपने हृदय में बसा लेती है ॥ १ ॥ हे मुग्धा स्त्री ! तू गुरु के प्रेम में ही चलती रह । सदैव अपने प्रियतम में लीन बनी रह और सहज भाव से ही सत्य में समाहित हो जा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शब्द–गुरु के रंग में रंगी हुई सुहागिनें सच्चे शब्द का ही श्रृंगार करती हैं । गुरु के प्रति श्रद्धा रखती हुई वे अपने अन्दर ही परमात्मा रूपी वर को प्राप्त कर लेती हैं । उनकी हृदय रूपी शय्या सुन्दर है जिस पर वह प्रभु प्रेम के माध्यम से प्रकट होता है । ऐसी जीव स्त्रियों के भक्ति के भण्डार भर जाते हैं और सबको आश्रय देने वाला प्रभु प्रियतम उनके मन में बस जाता है ॥ २ ॥ जो अपने प्रियतम का गुणानुवाद करती हैं । मैं सदा उन पर बलिहारी जाता हूँ । अपना मन–तन एवं सिर अर्थात सब कुछ मैं उनको अर्पण करता हूँ और उनके चरण स्पर्श करता हूँ जिन्होंने द्वैत भाव को चुका कर केवल एक परमात्मा को पहचान लिया है । हे नानक ! गुरुमुख बनकर ही नाम की पहचान आती है और सत्य में समाहित हुआ जाता है ॥ ३ ॥ २९ ॥ ६२ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ हे प्रभु ! तू ही सत्य है और सब तेरे अन्दर ही समाहित हैं । गुरु–पीर को मिले बिना चौरासी लाख योनियों के जीव तेरे दर्शन के लिए भटकते फिरते हैं । जिस जीव पर परमात्मा स्वयं कृपा करता है उसके हृदय में सदैव आध्यात्मिक आनन्द बना रहता है । मैं भी चाहता हूँ कि गुरु की कृपा द्वारा सदैव सत्य एवं गहन गम्भीर परमात्मा का स्मरण करता रहूँ ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! नाम में रंगे जाने पर ही सुख प्राप्त होता है । गुरु के मार्ग पर चलने से ही नाम का गुणानुवाद होता है और अन्य कोई तरीका नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धर्मराज को भी आदेश है कि तू बैठकर इस अटल नियम को याद रख कि द्वैत भाव में लीन दुष्ट आत्माएं तेरे कार्य–व्यापार का क्षेत्र हैं । आध्यात्मिक जीवन वाले व्यक्ति के मन में

गुण तासु मनि जपहि एकु मुरारि ॥ तिन की सेवा धरम राइ करै धंनु सवारणहारु ॥ २ ॥ मन के बिकार मनहि तजै मनि चूकै मोहु अभिमानु ॥ आतम रामु पछाणिआ सहजे नामि समानु ॥ बिनु सतिगुर मुकति न पाईऐ मनमुखि फिरै दिवानु ॥ सबदु न चीनै कथनी बदनी करे बिखिआ माहि समानु ॥ ३ ॥ सभु किछु आपे आपि है दूजा अवरु न कोइ ॥ जिउ बोलाए तिउ बोलीऐ जा आपि बुलाए सोइ ॥ गुरमुखि बाणी ब्रहमु है सबदि मिलावा होइ ॥ नानक नामु समालि तू जितु सेविऐ सुखु होइ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ६३ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ जगि हउमै मैलु दुखु पाइआ मलु लागी दूजै भाइ ॥ मलु हउमै धोती किवै न उतरै जे सउ तीरथ नाइ ॥ बहु बिधि करम कमावदे दूणी मलु लागी आइ ॥ पड़िऐ मैलु न उतरै पूछहु गिआनीआ जाइ ॥ १ ॥ मन मेरे गुर सरणि आवै ता निरमलु होइ ॥ मनमुख हरि हरि करि थके मैलु न सकी धोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनि मैलै भगति न होवई नामु न पाइआ जाइ ॥ मनमुख मैले मैले मुए जासनि पति गवाइ ॥ गुर परसादी मनि वसै मलु हउमै जाइ समाइ ॥ जिउ अंधेरै दीपकु बालीऐ तिउ गुर गिआनि अगिआनु तजाइ ॥ २ ॥ हम कीआ हम करहगे हम मूरख गावार ॥ करणै वाला विसरिआ दूजै भाइ पिआरु ॥ माइआ जेवडु दुखु नही सभि भवि थके संसारु ॥ गुरमती सुखु पाईऐ सचु नामु उर धारि ॥ ३ ॥ जिस नो मेले सो मिलै हउ तिसु बलिहारै जाउ ॥ ए मन भगती रतिआ सचु बाणी निज थाउ ॥ मनि रते जिहवा रती हरि गुण सचे गाउ ॥ नानक नामु न वीसरै सचे माहि समाउ ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ६४ ॥ सिरीरागु महला ४ घरु १ ॥ मै मनि तनि बिरहु अति अगला किउ प्रीतमु मिलै घरि आइ ॥ जा देखा प्रभु आपणा प्रभि देखिऐ दुखु जाइ ॥ जाइ पुछा तिन सजणा प्रभु कितु बिधि मिलै मिलाइ ॥ १ ॥ मेरे सतिगुरा मै तुझ बिनु अवरु न कोइ ॥ हम मूरख मुगध सरणागती करि किरपा मेले हरि सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु दाता हरि नाम का प्रभु आपि मिलावै सोइ ॥ सतिगुरि हरि प्रभु बुझिआ गुर जेवडु अवरु न कोइ ॥ हउ गुर सरणाई ढहि पवा करि दइआ मेले प्रभु सोइ ॥ २ ॥ मनहठि किनै न

गुणों का भण्डार परमात्मा स्वयं बसता है और वे परमात्मा का ही स्मरण करते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों की सेवा धर्मराज स्वयं करता है। धन्य है वह प्रभु जो व्यक्तियों को इतना सुन्दर बना देता है ॥ २ ॥ जो व्यक्ति अपने मन के विकार छोड़ देता है और जिसके मन से मोह अभिमान आदि चुक जाते हैं वह सर्वव्यापक परमात्मा के साथ पहचान बना लेता है और सहज भाव में नाम में लीन हो जाता है। परन्तु सद्गुरु के बिना इन विकारों से मुक्ति नहीं मिलती और मनमुख दीवानों की तरह भटकता रहता है। वह शब्द को नहीं समझता और बुराई में लीन रहकर व्यर्थ ही बोलता रहता है ॥ ३ ॥ वह प्रभु स्वयं ही सब कुछ है अन्य दूसरा कोई कुछ भी नहीं है। वह जिस तरह से बुलवाता है जीव वैसा ही उसकी प्रेरणा से बोलता है। गुरमुख के लिए वाणी ही ब्रह्म है जिसे शब्द के माध्यम से मिला जाता है। हे नानक! तू उस प्रभु के नाम को हृदय में संभाल जिसकी सेवा करने से आनन्द प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ३० ॥ ६३ ॥ सिरी रागु महला ३ ॥ सारा संसार अहंकार की मैल को लिए हुए दुख पा रहा है और यह मल द्वैत भाव के कारण लगा हुआ है। सैंकड़ों तीर्थों पर स्नान करने पर भी अहंकार की यह मैल नहीं उतरती। व्यक्ति कई तरह के कर्म–काण्ड करते हैं और मन का यह मल पहले से भी दोगुना हो जाता है। केवल पढ़ने मात्र से ही मैल नहीं उतरती, यह ज्ञानवान व्यक्तियों से भी पूछा जा सकता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! जब तू गुरु की शरण में आएगा तब तू निर्मल होगा। मनमुख व्यक्ति हरि–हरि कहता हुआ थक जाता है परन्तु उसका यह कथन उसकी मैल को नहीं धो सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैले मन के साथ भक्ति नहीं हो सकती और नाम नहीं पाया जा सकता। मैले मनमुख व्यक्ति मैले ही बने रहते हैं और सम्मान गँवा कर यहाँ से जाते हैं। गुरु की कृपा से वह प्रभु मन में बसता है और अहंकार का मल समाप्त हो जाता है। जिस प्रकार अंधकार में दीपक जलाकर प्रकाश किया जाता है उसी तरह गुरु ज्ञान के माध्यम से अज्ञान के अंधकार को समाप्त करा देता है ॥ २ ॥ जो कहते हैं कि हमने यह किया है हम वह करेंगे, वे दरअसल मूर्ख एवं उजड्ड होते हैं। पैदा करने वाला परमात्मा उन्हें भूला रहता है और वे सदा द्वैत भाव में ही मलीन बने रहते हैं। माया के प्रपंच जैसा अन्य कोई भी दुःख नहीं और जीव इसी के लिए संसार भर में भटक–भटक कर थक जाता है। सच्चे नाम को हृदय में धारण करके और गुरु की शिक्षा के माध्यम से ही सुख प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ जिस भाग्यशाली व्यक्ति को प्रभु अपने से मिलाता है वही मिल पाता है और मैं उस पर बलिहारी जाता हूँ। इस मन के भक्ति में रंगे जाने से सच्ची वाणी (शब्द–गुरु) के माध्यम से अपने असली ठिकाने को पाया जाता है। ऐसे व्यक्तियों की जीभ एवं मन प्रभु के नाम रस में रंगे रहते हैं और वे सत्य प्रभु के गुणानुवाद करते रहते हैं। हे नानक ! उनको प्रभु नाम कभी भी विस्मृत नहीं होता है और वे उस परम सत्य में ही लीन बने रहते हैं ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ६४ ॥ सिरी रागु महला ४ ॥ घर १ ॥ मेरे मन एवं शरीर में प्रियतम प्रभु के वियोग का गहरा दर्द है कि कैसे वह प्रीतम मेरे हृदय रूपी घर में मुझे आ मिले। जब मैं अपने प्रभु को देखता हूँ तो मेरा सारा दुख दूर हो जाता है। दर्शन कर चुके सज्जनों से मैं पूछता फिरता हूँ कि उस प्रभु से मेल किस ढंग से हो सकता है ॥ १ ॥ हे मेरे सद्गुरु, तेरे बिना मेरा अन्य कोई आसरा नहीं है। हम मूर्ख अनजान तेरी शरण में आए हैं। हमारे जैसे मूर्ख अनजान जो शरणागत् बने हैं परमात्मा कृपा करके उन्हें अपने साथ मिला लेता है ॥ १ ॥ सद्गुरु हरि नाम देने वाला है और वह प्रभु जीव को अपने साथ मिला लेता है। सद्गुरु ने हरि–प्रभु को बूझ लिया है अतः गुरु के समान अन्य कोई नहीं है। मेरी इच्छा है कि मैं गुरु की शरण में गिर पड़ूं तो वह प्रभु दया करके मुझे अपने साथ मिला ले ॥ २ ॥ हठ से किए हुए

पाइआ करि उपाव थके सभु कोइ ॥ सहस सिआणप करि रहे मनि कोरै रंगु न होइ ॥ कूड़ि कपटि किनै न पाइओ जो बीजै खावै सोइ ॥ ३ ॥ सभना तेरी आस प्रभु सभ जीअ तेरे तूं रासि ॥ प्रभ तुधहु खाली को नही दरि गुरमुखा नो साबासि ॥ बिखु भउजल डुबदे कढि लै जन नानक की अरदासि ॥ ४ ॥ १ ॥ ६५ ॥ सिरीरागु महला ४ ॥ नामु मिलै मनु त्रिपतीऐ बिनु नामै ध्रिगु जीवासु ॥ कोई गुरमुखि सजणु जे मिलै मै दसे प्रभु गुणतासु ॥ हउ तिसु विटहु चउ खंनीऐ मै नाम करे परगासु ॥ १ ॥ मेरे प्रीतमा हउ जीवा नामु धिआइ ॥ बिनु नावै जीवणु ना थीऐ मेरे सतिगुर नामु द्रिड़ाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु अमोलकु रतनु है पूरे सतिगुर पासि ॥ सतिगुर सेवै लगिआ कढि रतनु देवै परगासि ॥ धंनु वडभागी वडभागीआ जो आइ मिले गुर पासि ॥ २ ॥ जिना सतिगुरु पुरखु न भेटिओ से भागहीण वसि काल ॥ ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि विचि विसटा करि विकराल ॥ ओना पासि दुआसि न भिटीऐ जिन अंतरि क्रोधु चंडाल ॥ ३ ॥ सतिगुरु पुरखु अंम्रित सरु वडभागी नावहि आइ ॥ उन जनम जनम की मैलु उतरै निरमल नामु द्रिड़ाइ ॥ जन नानक उतम पदु पाइआ सतिगुर की लिव लाइ ॥ ४ ॥ २ ॥ ६६ ॥ सिरीरागु महला ४ ॥ गुण गावा गुण विथरा गुण बोली मेरी माइ ॥ गुरमुखि सजणु गुणकारीआ मिलि सजण हरि गुण गाइ ॥ हीरै हीरु मिलि बेधिआ रंगि चलूलै नाइ ॥ १ ॥ मेरे गोविंदा गुण गावा त्रिपति मनि होइ ॥ अंतरि पिआस हरि नाम की गुरु तुसि मिलावै सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु रंगहु वडभागीहो गुरु तुठा करे पसाउ ॥ गुरु नामु द्रिड़ाए रंग सिउ हउ सतिगुर कै बलि जाउ ॥ बिनु सतिगुर हरि नामु न लभई लख कोटी करम कमाउ ॥ २ ॥ बिनु भागा सतिगुरु ना मिलै घरि बैठिआ निकटि नित पासि ॥ अंतरि अगिआन दुखु भरमु है विचि पड़दा दूरि पईआसि ॥ बिनु सतिगुर भेटे कंचनु ना थीऐ मनमुखु लोहु बूडा बेड़ी पासि ॥ ३ ॥ सतिगुरु बोहिथु हरि नाव है कितु बिधि चड़िआ जाइ ॥ सतिगुर कै भाणै जो चलै विचि बोहिथ बैठा आइ ॥ धंनु धंनु वडभागी नानका जिना सतिगुरु लए मिलाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ६७ ॥

कार्यों के फलस्वरूप अर्थात हठ साधनाओं के फलस्वरूप कभी किसी ने परमात्मा को प्राप्त नहीं किया है और सभी इस तरह के उपाय करके थक चुके हैं । हज़ारों चतुराइयां की जा रही हैं परन्तु यदि मन कोरा ही बना रहे तो उस परमात्मा के नाम का रंग नहीं चढ़ता । झूठ एवं कपट के माध्यम से भी कोई उसे नहीं पा सका है और व्यक्ति जो बोता है वही उसे खाने को मिलता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, सभी जीव तुझ पर ही आस लगाए हुए हैं; सब जीव तेरे ही हैं और तू ही सब की पूँजी है । हे प्रभु तेरे पास आने वाला कोई खाली हाथ वापस नहीं आता और गुरमुख बने हुए जीवों को तेरे दरबार से सम्मान मिलता है । हे प्रभु ! तेरे दास नानक की विनती है कि संसार समुद्र के विकारों के विष में डूबते हुए जीवों को तू स्वयं ही बाहर निकाल ॥ ४ ॥ १ ॥ ६५ ॥ सिरी रागु महला ॥ ४ ॥ नाम प्राप्त होने पर मन तृप्त हो जाता है और बिना नाम के जीवन धिक्कार है । यदि कोई गुरमुख सज्जन मुझे मिल जाए, मुझे गुणों के भण्डार परमात्मा के बारे में बता दे और मेरे मन में प्रभु नाम का प्रकाश कर दे तो मैं उस पर चार टुकड़े होकर भी वलिहारी जाने को तैयार हूँ ॥ १ ॥ हे मेरे प्रीतम प्रभु ! तेरे नाम का स्मरण करके ही मैं जीवन जी सकता हूँ । नाम के सुमिरन के बिना जीवन सम्भव नहीं इसलिए हे मेरे सद्गुरु मेरे अन्दर नाम सुमिरन दृढ़ करवा दे । परमात्मा का नाम एक ऐसा अमूल्य रत्न है जो केवल सद्गुरु के पास ही है । सद्गुरु की सेवा में लगने पर सद्गुरु ज्ञान का प्रकाश करके नाम रत्न प्रकट कर देता है । बड़े भाग्य वाले वे व्यक्ति धन्य हैं जो गुरु की शरण में मिल बैठते हैं ॥ २ ॥ जिन व्यक्तियों को सद्गुरु रूपी परमात्मा के दर्शन नहीं हुए वे भाग्यहीन सदैव मौत के वश में ही बने रहते हैं । विकारों की गन्दगी में विकराल रूप से पड़े रहने के कारण वे योनियों में बार–बार भटकाए जाते हैं । जिनके अन्तर्मन में चण्डाल क्रोध बसता है उनके तो आस–पास भी नहीं फटकना चाहिए ॥ ३ ॥ समर्थ सद्गुरु अमृत का सरोवर है जिसमें भाग्यशाली व्यक्ति ही आकर स्नान करते हैं । ऐसे व्यक्तियों की जन्म–जन्म की मैल उतर जाती है और वे निर्मल होकर नाम–सुमिरन करते हैं । दास नानक कहता है कि ऐसे व्यक्तियों को सद्गुरु के चिन्तन में अपनी सुरति जोड़ने के फलस्वरूप जीवन का सर्वोत्तम पद प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ६६ ॥ सिरी रागु महला ४ ॥ हे मेरी माँ ! मैं गुण गाता रहूँ, गुणों का विस्तार करता रहूँ और प्रभु का गुणानुवाद करता रहूँ । गुरमुख गुण पैदा करने वाला सज्जन है और ऐसे सज्जन से मिलकर ही कोई प्रभु के गुण गा सकता है । ऐसे व्यक्ति का मन रूपी हीरा गुरु रूपी हीरे के साथ मिलकर बिंध जाता है और वह प्रभु नाम में लीन होकर उसके गाढ़े प्रेम रंग में रंगा ज़ाता है ॥ १ ॥ हे मेरे परमात्मा मैं तेरे गुण गाता रहूँ । तेरे गुण गाते रहने से ही मेरा मन तृप्ति का अनुभव करता है । हे प्रभु, मेरे अन्दर तेरे नाम की प्यास है और गुरु भी प्रसन्न होकर प्रभु नाम से मिलाप करवाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाग्यशाली लोगो, गुरु प्रसन्न होकर कृपा करता है, तुम अपने मन को प्रभु नाम में रंग लो । गुरु प्रेमपूर्वक परमात्मा का नाम हृदय में टिका देता है और मैं ऐसे सद्गुरु पर बलिहारी जाता हूँ । सद्गुरु के बिना लाखों करोड़ों कर्म–काण्ड करने के बावजूद हरि नाम प्राप्त नहीं होता है । अच्छे भाग्य के बिना सद्गुरु नहीं मिलता जो कि वास्तव में हमारे हृदय में बैठा हुआ सदैव हमारे पास ही है । जिस जीव के अन्दर अज्ञान–अंधेरे का दुख बना रहे, जिसे माया की भटकन लगी रहे, प्राणों में बसे प्रभु से उसकी दूरी बनी ही रहती है । सद्गुरु के स्पर्श के बिना मनमुख रूपी लोहा कंचन नहीं बनता और इसी प्रकार सद्गुरु रूपी लकड़ी की नाव में न जुड़ सकने के कारण मनमुख रूपी लोहा डूब जाता है ॥ ३ ॥ सद्गुरु हरि नाम का जहाज है फिर कैसे उस पर चढ़ा जाए । जो सद्गुरु (परमात्मा) के आदेश में जीवन चलाते हैं वे ही इस जहाज में आ बैठते हैं । हे नानक ! वे व्यक्ति बड़े भाग्य वाले हैं, धन्य–धन्य हैं जिन्हें सद्गुरु परमात्मा से मिला लेता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ६७ ॥

सिरीरागु महला ४ ॥ हउ पंथु दसाई नित खड़ी कोई प्रभु दसे तिनि जाउ ॥ जिनी मेरा पिआरा राविआ तिन पीछै लागि फिराउ ॥ करि मिंनति करि जोदड़ी मै प्रभु मिलणै का चाउ ॥ १ ॥ मेरे भाई जना कोई मोकउ हरि प्रभु मेलि मिलाइ ॥ हउ सतिगुर विटहु वारिआ जिनि हरि प्रभु दीआ दिखाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ होइ निमाणी ढहि पवा पूरे सतिगुर पासि ॥ निमाणिआ गुरु माणु है गुरु सतिगुरु करे साबासि ॥ हउ गुरु सालाहि न रजऊ मै मेले हरि प्रभु पासि ॥ २ ॥ सतिगुर नो सभ को लोचदा जेता जगतु सभु कोइ ॥ बिनु भागा दरसनु ना थीऐ भागहीण बहि रोइ ॥ जो हरि प्रभ भाणा सो थीआ धुरि लिखिआ न मेटै कोइ ॥ ३ ॥ आपे सतिगुरु आपि हरि आपे मेलि मिलाइ ॥ आपि दइआ करि मेलसी गुर सतिगुर पीछै पाइ ॥ सभु जगजीवनु जगि आपि है नानक जलु जलहि समाइ ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६८ ॥ सिरीरागु महला ४ ॥ रसु अंम्रितु नामु रसु अति भला कितु बिधि मिलै रसु खाइ ॥ जाइ पुछहु सोहागणी तुसा किउ करि मिलिआ प्रभु आइ ॥ ओइ वेपरवाह न बोलनी हउ मलि मलि धोवा तिन पाइ ॥ १ ॥ भाई रे मिलि सजण हरि गुण सारि ॥ सजणु सतिगुरु पुरखु है दुखु कढै हउमै मारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखीआ सोहागणी तिन दइआ पई मनि आइ ॥ सतिगुर वचनु रतंनु है जो मंने सु हरि रसु खाइ ॥ से वडभागी वड जाणीअहि जिन हरि रसु खाधा गुर भाइ ॥ २ ॥ इहु हरि रसु वणि तिणि सभतु है भागहीण नही खाइ ॥ बिनु सतिगुर पलै ना पवै मनमुख रहे बिललाइ ॥ ओइ सतिगुर आगै ना निवहि ओना अंतरि क्रोधु बलाइ ॥ ३ ॥ हरि हरि हरि रसु आपि है आपे हरि रसु होइ ॥ आपि दइआ करि देवसी गुरमुखि अंम्रितु चोइ ॥ सभु तनु मनु हरिआ होइआ नानक हरि वसिआ मनि सोइ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६९ ॥ सिरीरागु महला ४ ॥ दिनसु चड़ै फिरि आथवै रैणि सबाई जाइ ॥ आव घटै नरु ना बुझै निति मूसा लाजु टुकाइ ॥ गुड़ु मिठा माइआ पसरिआ मनमुखु लगि माखी पचै पचाइ ॥ १ ॥ भाई रे मै मीतु सखा प्रभु सोइ ॥ पुतु कलतु मोहु बिखु है अंति बेली कोइ न होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति

सिरी रागु महला ॥ ४ ॥ मैं सदैव खड़ी हुई देखती हूँ कि कोई मुझे प्रभु के बारे में बताए ताकि मैं उस तक पहुँच सकूँ । जिन्होंने मेरे प्रभु प्रियतम के साथ मिलाप कर लिया है मेरी इच्छा है कि मैं उनके पीछे चलती हुई उनसे विनती करती जाऊँ क्योंकि प्रभु को मिलने की मेरी इच्छा बहुत ही तीव्र है ॥ १ ॥ हे मेरे भाई लोगो ! कोई मुझे परमात्मा से मिला दो । मैं सद्‌गुरु पर कुर्बान जाता हूँ जिसने मुझे परमात्मा (का मार्ग) दिखा दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा मन चाहता है कि मैं विनम्र होकर सद्‌गुरु के चरणों पर गिर पड़ूं । गुरु उनका आश्रय है जिन्हें अन्य कोई नहीं जानता–मानता । सद्‌गुरु ही उन्हें सम्मान देता है । गुरु के गुणानुवाद से मेरा मन नहीं भरता क्योंकि गुरु मुझे मेरे अन्तर्मन में ही बसे हुए परमात्मा के साथ मिलाने में समर्थ है ॥ २ ॥ सारा संसार सद्‌गुरु को मिलने की इच्छा रखता है परन्तु अच्छे भाग्य के बिना सद्‌गुरु का दर्शन नहीं होता । भाग्य विहीन जीव बैठे–बैठे रोते हैं परन्तु उन्हें दर्शन नहीं होता। जो परमात्मा चाहता है वही होता है और लिखे हुए लेख कोई मिटा नहीं सकता ॥ ३ ॥ दरअसल सद्‌गुरु स्वयं परमात्मा ही है जो व्यक्ति को अपने से मिला लेता है । वह स्वयं ही कृपा करके गुरु के पीछे लगाकर हमें स्वयं से मिला लेता है । हे नानक, जगत का सहारा परमात्मा जगत में हर स्थान पर स्वयं ही है और जिस तरह जल, जल में समा जाता है उसी तरह जीव और परमात्मा का भी एकात्म हो जाता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ६८ ॥ सिरी रागु महला ४ ॥ परमात्मा का नाम श्रेष्ठतम रस है और आध्यात्मिक जीवन देने वाला है । यह रस कैसे मिले और कैसे इस रस का पान किया जा सकता है, यह जानने के लिए उन सुहागिनों से पूछा जाए कि उन्हें प्रभु किस प्रकार आन मिला है । परन्तु वे अब संसार के प्रति बेपरवाह हो जाने के कारण बहुत कम बोलती हैं यद्यपि मैं जानने के लिए मल–मल के उनके पाँव धोती हूँ ॥ १ ॥ हे भाई ! गुरु सज्जन को मिलकर परमात्मा के गुणों को मन में बसा । सद्‌गुरु वह सज्जन है जो अहंकार के दुख को मार कर मन से भगा देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुख ऐसी दयावान स्त्रियां हैं कि वे बता देती हैं कि सद्‌गुरु का वचन ऐसा रत्न है कि जो उसे मन में बसाता है वही हरि–रस चख लेता है । जिन्होंने गुरु के अनुसार रहकर परमात्मा का नाम रस चखा है वे बड़े भाग्य वाले समझे जाते हैं ॥ २ ॥ परमात्मा का यह नाम रस वन–तृण में अर्थात् सर्वत्र मौजूद है परन्तु भाग्यहीन इसका स्वाद नहीं चखते । मनमुख व्यक्ति चीखते–चिल्लाते रहते हैं परन्तु सद्‌गुरु के बिना यह रस पल्ले नहीं पड़ता । मनमुख व्यक्ति सद्‌गुरु की शरण में नहीं आते क्योंकि उनके अन्तर्मन में क्रोध एवं अन्य भयानक विकार रहते हैं ॥ ३ ॥ हरि स्वयं हरि–नाम का स्वाद है और स्वयं ही नाम–रस है । वह स्वयं ही दया करके गुरमुख को अमृत रस प्रदान करता है । हे नानक ! जिस व्यक्ति के मन में हरि–नाम का रस आ बसता है उसका सारा शरीर और मन हरा–भरा होकर खिल उठता है ॥४॥५॥६९॥ सिरी रागु महला ४ ॥ दिन निकलता है, संध्या होती है और सारी रात बीत जाती है । इस प्रकार आयु घटती रहती है परन्तु व्यक्ति यह नहीं समझता है कि काल रूपी चूहा आयु रूपी रस्सी को रोज काटे जा रहा है । जैसे गुड़ जीभ को मीठा लगता है इसी प्रकार माया का मीठा मोह व्यक्ति पर प्रभाव बनाए रखता है । मनमुख व्यक्ति माया की मिठास में फंसकर वैसे ही ख्वार होता है जैसे मक्खी गुड़ से चिपक कर मर जाती है ॥ १ ॥ हे मेरे भाई ! मेरे लिए तो वह परमात्मा ही मित्र और साथी है । पुत्र एवं स्त्री का मोह तो विष के समान है क्योंकि अन्त समय इनमें से कोई भी साथी नहीं बनता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो व्यक्ति

हरि लिव उबरे अलिपतु रहे सरणाइ ॥ ओनी चलणु सदा निहालिआ हरि खरचु लीआ पति पाइ ॥ गुरमुखि दरगह मंनीअहि हरि आपि लए गलि लाइ ॥ २ ॥ गुरमुखा नो पंथु परगटा दरि ठाक न कोई पाइ ॥ हरि नामु सलाहनि नामु मनि नामि रहनि लिव लाइ ॥ अनहद धुनी दरि वजदे दरि सचै सोभा पाइ ॥ ३ ॥ जिनी गुरमुखि नामु सलाहिआ तिना सभ को कहै साबासि ॥ तिन की संगति देहि प्रभ मै जाचिक की अरदासि ॥ नानक भाग वडे तिना गुरमुखा जिन अंतरि नामु परगासि ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ३१ ॥ ६ ॥ ७० ॥ सिरीरागु महला ५ घरु १ ॥ किआ तू रता देखि कै पुत्र कलत्र सीगार ॥ रस भोगहि खुसीआ करहि माणहि रंग अपार ॥ बहुतु करहि फुरमाइसी वरतहि होइ अफार ॥ करता चिति न आवई मनमुख अंध गवार ॥ १ ॥ मेरे मन सुखदाता हरि सोइ ॥ गुर परसादी पाईऐ करमि परापति होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कपड़ि भोगि लपटाइआ सुइना रुपा खाकु ॥ हैवर गैवर बहु रंगे कीए रथ अथाक ॥ किस ही चिति न पावही बिसरिआ सभ साक ॥ सिरजणहारि भुलाइआ विणु नावै नापाक ॥ २ ॥ लैदा बद दुआइ तूं माइआ करहि इकत ॥ जिस नो तूं पतीआइदा सो सणु तुझै अनित ॥ अहंकारु करहि अहंकारीआ विआपिआ मन की मति ॥ तिनि प्रभि आपि भुलाइआ ना तिसु जाति न पति ॥ ३ ॥ सतिगुरि पुरखि मिलाइआ इको सजणु सोइ ॥ हरि जन का राखा एकु है किआ माणस हउमै रोइ ॥ जो हरि जन भावै सो करे दरि फेरु न पावै कोइ ॥ नानक रता रंगि हरि सभ जग महि चानणु होइ ॥ ४ ॥ १ ॥ ७१ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ मनि बिलासु बहु रंगु घणा द्रिसटि भूलि खुसीआ ॥ छत्रधार बादिसाहीआ विचि सहसे परीआ ॥ १ ॥ भाई रे सुखु साधसंगि पाइआ ॥ लिखिआ लेखु तिनि पुरखि बिधातै दुखु सहसा मिटि गइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जेते थान थनंतरा तेते भवि आइआ ॥ धन पाती वड भूमीआ मेरी मेरी करि परिआ ॥ २ ॥ हुकमु चलाए निसंग होइ वरतै अफरिआ ॥ सभु को वसगति करि लइओनु बिनु नावै खाकु रलिआ ॥ ३ ॥ कोटि तेतीस सेवका सिध साधिक दरि खरिआ ॥ गिरंबारी वड साहबी

गुरु की बात मानकर परमात्मा में सुरति लगाते हैं उनका उद्धार हो जाता है और प्रभु की शरण में होने से वे संसार से अलिप्त बने रहते हैं। उन व्यक्तियों ने संसार की चलायमानता को सदैव अपने सामने रखा है और परमात्मा के नाम रूपी खर्च को जीवन–यात्रा के लिए अपने पल्ले बाँध लिया होता है। गुरमुख व्यक्ति प्रभु के समक्ष सम्मानित किए जाते हैं और परमात्मा स्वयं उनको गले लगाता है ॥ २ ॥ गुरमुखों के लिए जीवन मार्ग स्पष्ट होता है और परमात्मा के द्वार तक पहुँचने के लिए कोई भी उनके लिए रुकावट नहीं बनता। उनके मन में हरि–नाम होता है। वे नाम का ही गुणानुवाद करते हैं और उसी में लवलीन रहते हैं। परमात्मा के द्वार पर पहुँचने पर उनके लिए अनहद नाद बजने लगते हैं और उस सच्चे दरबार में वे शोभायमान होते हैं ॥ ३ ॥ जिन्होंने गुरमुख होकर नाम का गुणानुवाद किया, हर कोई उनकी वाह–वाही करता है। हे प्रभु, मैं याचक बनकर प्रार्थना करता हूँ कि मुझे ऐसे लोगों का साथ प्राप्त करवा। हे नानक, उन गुरमुखों के बड़े भाग्य हैं जिनके अन्तर्मन में नाम का प्रकाश हो चुका है ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ३१ ॥ ६ ॥ ७० ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ घरु १ ॥ हे जीव, तू पुत्र को और स्त्री के श्रंगार को देखकर क्यों खुश हो रहा है; तू रसों का स्वाद ले रहा है; कई प्रकार की खुशियों के रंगों को अनुभव कर रहा है; तू बहुत से आदेश करता है और अभिमान में मग़रूर होकर व्यवहार करता है। हे अन्धे और गँवार मनमुख, तूने चित्त से परमात्मा को भुला दिया है। हे मेरे मन ! सुख देने वाला वह परमात्मा ही है। गुरु की कृपा से वह पाया जाता है और गुरु भी बड़े भाग्य से ही प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे जीव, तू खाने पहनने में मस्त हो रहा है और सोना–चाँदी जमीन आदि एकत्रित किए जा रहा है। तूने कई किस्मों के घोड़े–हाथी और खराब न होने वाले रथ इकट्ठे कर लिए हैं। इन सब के गुरूर में तू अपने सगे–सम्बन्धियों को भी भूला बैठा है और कोई भी तेरे चित्त में याद नहीं हैं। सृजनकर्ता प्रभु को भी तूने भुला दिया है और बिना उसके नाम सुमिरन के तू मलीन बना हुआ है ॥ २ ॥ तू लोगों की बददुआएं लेता हुआ धन इकट्ठा किए जा रहा है। ऐसा करके जिनको तू प्रसन्न कर रहा है वे सब भी नाशवान हैं। हे अहंकारी! तू अहंकार के वश में मन की मति के पीछे ही लगा हुआ है। उस प्रभु ने तुझे कुमार्ग पर डाल दिया है और न तो तेरे पास ऊँचा वर्ग है और न ही तेरा सम्मान है ॥ ३ ॥ परमात्मा रूपी सद्गुरु ने जिस मनुष्य को प्रभु से ही मिला दिया है प्रभु के उस सेवक का रक्षक प्रभु स्वयं ही बनता है। दुनियां के लोग उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते परन्तु जीव अपने अहंकार में फंसा हुआ रोता रहता है। जो हरि के दास को अच्छा लगता है परमात्मा भी वैसा ही करता है। ऐसे सेवक को प्रभु द्वार से कोई वापस नहीं भेज सकता। हे नानक ! जो व्यक्ति परमात्मा के प्यार में रंगा रहता है वह सारे संसार के लिए प्रकाश बन जाता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ७१ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ यदि किसी मनुष्य के मन में बहुत अधिक उत्साह हो, यदि उसकी दृष्टि खुशिओं में ही भूली रहे; यदि उसे इस प्रकार की बादशाहत मिल जाए कि सिर पर छत्र टिका रहे तो भी यह सब उसे संशय में ही डाले रहता है ॥ १ ॥ हे भाई ! सद्संगत में ही सुख मिलता है। उस समर्थ विधाता ने जिसके माथे पर लेख लिख दिया है उसका ही दुख और संशय दूर होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धरती पर जितने भी स्थानांतर हैं यदि जीव उन सब पर भ्रमण कर आया हो; यदि वह बहुत धनवान और धरती का स्वामी हो, तब भी वह मेरी–मेरी करते ही दुखी बना रहता है। यदि कोई व्यक्ति निर्भय होकर अपना हुक्म चलाए और अभिमानियों जैसा व्यवहार करे; यदि उसने सबको अपने वश में कर लिया हो तब भी परमात्मा के नाम के बिना वह मिट्टी में मिल जाता है ॥ ३ ॥ तेतीस करोड़ देवता और सिद्ध–साधु आदि भी यदि उसके द्वार पर खड़े रहें; यदि वह बहुत बड़ा घरबारी और हुकूमत का मालिक भी हो जाए; तब भी परमात्मा के नाम

सभु नानक सुपनु थीआ ॥ ४ ॥ २ ॥ ७२ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ भलके उठि पपोलीऐ विणु बुझे मुगध अजाणि ॥ सो प्रभु चिति न आइओ छुटैगी बेबाणि ॥ सतिगुर सेती चितु लाइ सदा सदा रंगु माणि ॥ १ ॥ प्राणी तूं आइआ लाहा लैणि ॥ लगा कितु कुफकड़े सभ मुकदी चली रैणि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुदम करे पसु पंखीआ दिसै नाही कालु ॥ ओतै साथि मनुखु है फाथा माइआ जालि ॥ मुकते सेई भालीअहि जि सचा नामु समालि ॥ २ ॥ जो घरु छडि गवावणा सो लगा मन माहि ॥ जिथै जाइ तुधु वरतणा तिस की चिंता नाहि ॥ फाथे सेई निकले जि गुर की पैरी पाहि ॥ ३ ॥ कोई रखि न सकई दूजा को न दिखाइ ॥ चारे कुंडा भालि कै आइ पइआ सरणाइ ॥ नानक सचै पातिसाहि डुबदा लइआ कढाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७३ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ घड़ी मुहत का पाहुणा काज सवारणहारु ॥ माइआ कामि विआपिआ समझै नाही गावारु ॥ उठि चलिआ पछुताइआ परिआ वसि जंदार ॥ १ ॥ अंधे तूं बैठा कंधी पाहि ॥ जे होवी पूरबि लिखिआ ता गुर का बचनु कमाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरी नाही नह डडुरी पकी वढणहार ॥ लै लै दात पहुतिआ लावे करि तईआरु ॥ जा होआ हुकमु किरसाण दा ता लुणि मिणिआ खेतारु ॥ २ ॥ पहिला पहरु धंधै गइआ दूजै भरि सोइआ ॥ तीजै झाख झखाइआ चउथै भोरु भइआ ॥ कद ही चिति न आइओ जिनि जीउ पिंडु दीआ ॥ ३ ॥ साधसंगति कउ वारिआ जीउ कीआ कुरबाणु ॥ जिस ते सोझी मनि पई मिलिआ पुरखु सुजाणु ॥ नानक डिठा सदा नालि हरि अंतरजामी जाणु ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७४ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ सभे गला विसरनु इको विसरि न जाउ ॥ धंधा सभु जलाइ कै गुरि नामु दीआ सचु सुआउ ॥ आसा सभे लाहि कै इका आस कमाउ ॥ जिनी सतिगुरु सेविआ तिन अगै मिलिआ थाउ ॥ १ ॥ मन मेरे करते नो सालाहि ॥ सभे छडि सिआणपा गुर की पैरी पाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुख भुख नह विआपई जे सुखदाता मनि होइ ॥ कित ही कंमि न छिजीऐ जा हिरदै सचा सोइ ॥ जिसु तूं रखहि हथ दे तिसु मारि न सकै कोइ ॥ सुखदाता गुरु सेवीऐ सभि अवगण कढै धोइ ॥ २ ॥ सेवा मंगै सेवको

के बिना हे नानक, यह सब स्वप्न ही बन जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ७२ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ हर रोज़ मेहनत से इस शरीर का पालन–पोषण किया जाता है परन्तु जीवन के वास्तविक अर्थ को समझे बिना व्यक्ति मूर्ख एवं अनजान ही बना रहता है । पैदा करने वाला परमात्मा उसे कभी याद नहीं आता और अन्ततः व्यक्ति श्मशान में छोड़ दिया जाता है । हे जीव, तू परमात्मा के साथ अपना चित्त जोड़ और सदा आनन्दित होता रह ॥ १ ॥ हे प्राणी, तू इस संसार में लाभ उठाने के लिए आया है परन्तु तू किस कुकर्म में लगा हुआ है कि तुझे पता ही नहीं चल रहा कि तेरी जीवन रूपी रात्रि समाप्त होती जा रही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पशु–पक्षी नाचते–कूदते हैं क्योंकि उन्हें काल दिखाई नहीं देता । मनुष्य भी उन्हीं का संगी–साथी है जो माया–जाल में फंसे हुए हैं । इस मायाजाल से मुक्त वही व्यक्ति दिखते हैं जिन्होंने प्रभु के सच्चे नाम को हृदय में सम्भाल कर रखा है ॥ २ ॥ जिस घर को छोड़कर जाना है उसी में तूने अपना मन लगा रखा है और जहां जाकर तुझे रहना है तुझे उसकी चिन्ता बिल्कुल भी नहीं है । गुरु चरणों पर गिरे हुए व्यक्ति ही बन्धनों से मुक्त होकर निकलते हैं ॥ ३ ॥ जीव को कोई बचा नहीं सकता क्योंकि ऐसा अन्य कोई दिखाई नहीं देता । चारों दिशाओं को देखभाल कर मैं परमात्मा की शरण में आ पड़ा हूँ । हे नानक ! मुझे सत्य सम्राट प्रभु ने डूबते हुए को बाहर निकाल लिया है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७३ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ घड़ी भर के लिए आया हुआ मेहमान घर के काम संवारने वाला बन बैठा है । मूर्ख यह नहीं समझता कि वह दरअसल स्वयं कामादिक विकारों में फंसा हुआ है । अपने को चतुर समझने वाला यम के वश में होकर जब संसार से चल पड़ता है तो बहुत ही पछताता है ॥ १ ॥ हे अन्धे बने हुए जीव, तू बिल्कुल ही नदी के किनारे पर बैठा हुआ है और कभी भी उसमें गिर सकता है । यदि तेरे माथे पर पूर्व–जन्म के अच्छे संस्कारों के लेख लिखे हुए हों तो तू गुरु के उपदेश के अनुसार अपना जीवन ढाल ले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह ठीक नहीं है कि केवल हरी–खेती, अधपकी खेती अथवा बिल्कुल पकी हुई खेती को ही काटा जाएगा अर्थात बचपन, जवानी, बुढ़ापे में मौत कब आ जाएगी किसी को पता नहीं । जब उस मालिक का आदेश होता है वे कटाई के औजार लेकर खेत में आ पहुँचते हैं और उस प्रभु रूपी किसान के हुकम के अनुसार वे सारे खेत को नाप लेते हैं अर्थात यम आकर प्रभु के आदेशानुसार जीवों को ले जाते हैं ॥ २ ॥ जीवन–रात्रि के पहले प्रहर में व्यक्ति का जीवन सांसारिक धन्धों में ही बीत जाता है । दूसरे प्रहर वह मोह की नींद में जी भरकर सोता रहता है । तीसरे प्रहर में अर्थात जीवन के तीसरे हिस्से में वह किए हुए कर्मों के पछतावे के रूप में झक मारता रहता है और चौथे प्रहर में दिन जैसा सफेद बुढ़ापा आ जाता है । व्यक्ति को जिसने शरीर एवं प्राण दिए हैं वह कभी भी उसका स्मरण नहीं करता है ॥ ३ ॥ मैं सद्संगत पर बलिहारी जाता हूँ; सद्संगत पर अपने प्राण न्योछावर करता हूँ क्योंकि सद्संगत के कारण ही मुझे विवेक बुद्धि प्राप्त हुई और मेरा मेल सुजान परमात्मा से हुआ । हे नानक, अब मैंने उस अन्तर्यामी प्रभु को सदैव अपने आस–पास ही देख लिया है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७४ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ मुझे बेशक सभी बातें भूल जाएं परन्तु एक परमात्मा का नाम मुझे ना भूले । गुरु ने सांसारिक धन्धों से मेरा मोह जलाकर मुझे प्रभु का नाम दिया है । यह सच्चा नाम अब मेरा वास्तविक जीवन उद्देश्य है । सांसारिक आशाओं को मन में से निकालकर मैंने केवल एक आशा अपने अन्दर पक्की कर ली है । जिन्होंने सद्गुरु की सेवा की है उन्हें परलोक में सम्मानित स्थान प्राप्त होता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन! उस कर्ता प्रभु का गुणानुवाद कर । सब चतुराईयों को छोड़कर गुरु के चरणों में आ गिर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि सुखदाता प्रभु मन में हो तो दुख और तृष्णा का प्रभाव नहीं पड़ता । किसी भी काम में हानि नहीं होती यदि हृदय में सत्य प्रभु बिराजमान हो । हे प्रभु, जिसे तू हाथ देकर बचाता है उसे कोई भी मार नहीं सकता है । सुख देने वाले सद्गुरु की सेवा की जानी चाहिए जो सभी अवगुणों को धोकर बाहर निकाल देता है ॥ २ ॥ हे प्रभु, मैं सेवक उनकी सेवा का दान माँगता हूँ

लाईआं अपुनी सेव ॥ साधू संगु मसकते तूठै पावा देव ॥ सभु किछु वसगति साहिबै आपे करण करेव ॥ सतिगुर कै बलिहारणै मनसा सभ पूरेव ॥ ३ ॥ इको दिसै सजणो इको भाई मीतु ॥ इकसै दी सामगरी इकसै दी है रीति ॥ इकस सिउ मनु मानिआ ता होआ निहचलु चीतु ॥ सचु खाणा सचु पैनणा टेक नानक सचु कीतु ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७५ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ सभे थोक परापते जे आवै इकु हथि ॥ जनमु पदारथु सफलु है जे सचा सबदु कथि ॥ गुर ते महलु परापते जिसु लिखिआ होवै मथि ॥ १ ॥ मेरे मन एकस सिउ चितु लाइ ॥ एकस बिनु सभ धंधु है सभ मिथिआ मोहु माइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लख खुसीआ पातिसाहीआ जे सतिगुरु नदरि करेइ ॥ निमख एक हरि नामु देइ मेरा मनु तनु सीतलु होइ ॥ जिस कउ पूरबि लिखिआ तिनि सतिगुर चरन गहे ॥ २ ॥ सफल मूरतु सफला घड़ी जितु सचे नालि पिआरु ॥ दूखु संतापु न लगई जिसु हरि का नामु अधारु ॥ बाह पकड़ि गुरि काढिआ सोई उतरिआ पारि ॥ ३ ॥ थानु सुहावा पवितु है जिथै संत सभा ॥ ढोई तिस ही नो मिलै जिनि पूरा गुरू लभा ॥ नानक बधा घरु तहां जिथै मिरतु न जनमु जरा ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७६ ॥ स्रीरागु महला ५ ॥ सोई धिआईऐ जीअड़े सिरि साहां पातिसाहु ॥ तिस ही की करि आस मन जिस का सभसु वेसाहु ॥ सभि सिआणपा छडि कै गुर की चरणी पाहु ॥ १ ॥ मन मेरे सुख सहज सेती जपि नाउ ॥ आठ पहर प्रभु धिआइ तूं गुण गोइंद नित गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिस की सरनी परु मना जिसु जेवडु अवरु न कोइ ॥ जिसु सिमरत सुखु होइ घणा दुखु दरदु न मूले होइ ॥ सदा सदा करि चाकरी प्रभु साहिबु सचा सोइ ॥ २ ॥ साधसंगति होइ निरमला कटीऐ जम की फास ॥ सुखदाता भै भंजनो तिसु आगै करि अरदासि ॥ मिहर करे जिसु मिहरवानु तां कारजु आवै रासि ॥ ३ ॥ बहुतो बहुतु वखाणीऐ ऊचो ऊचा थाउ ॥ वरना चिहना बाहरा कीमति कहि न सकाउ ॥ नानक कउ प्रभ मइआ करि सचु देवहु अपुणा नाउ ॥ ४ ॥ ७ ॥ ७७ ॥ स्रीरागु महला ५ ॥ नामु धिआए सो सुखी तिसु मुखु ऊजलु होइ ॥ पूरे गुर ते पाईऐ परगटु सभनी लोइ ॥ साधसंगति कै घरि वसै एको

जिनको तूने अपनी सेवा में लगाया हुआ है । सद्संगत और सेवा का दान तेरी कृपा से ही प्राप्त हो सकता है । सब कुछ उस कर्ता–कारण के ही वश में है । मैं सद्गुरु पर बलिहारी जाता हूँ जो सब इच्छाओं को पूरा करता है ॥ ३॥ इस संसार में एक परमात्मा ही सज्जन, भाई और मित्र के रूप में दिखाई देता है । संसार की सारी सामग्री उस एक ही प्रभु की है और सर्वत्र उसकी एक ही मर्यादा चल रही है । जब उस एक प्रभु के साथ मन लीन हो गया तो चित्त की वृत्तियां भी शान्त हो गई । हे नानक, जब एक सत्य की टेक पकड़ ली तो खाना पहनना सभी सत्य स्वरूप हो गया है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७५ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ यदि एक परमात्मा मिल जाए तो संसार की सभी वस्तुएं प्राप्त हो जाती हैं । यदि मैं सदा सत्य–शब्द का गुणानुवाद करता रहूँ तो मेरा यह अमूल्य जन्म सफल हो जाए । गुरु के माध्यम से और माथे पर लिखे हुए अच्छे भाग्य से परमात्मा के चरणों में स्थान प्राप्त होता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, केवल एक प्रभु में ही चित्त लगा । उस एक प्रभु के बिना सब झूठी मोह–माया और भाग–दौड़ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि सद्गुरु परमात्मा की कृपा दृष्टि हो जाए तो लाखों खुशियां और बादशाहतें प्राप्त हो जाती हैं । एक क्षण–भर के लिए भी हरि का नाम प्राप्त हो जाए तो मेरा मन–तन शान्त हो जाता है । जिसके पूर्व कर्म लिखे हुए हैं वही सद्गुरु के चरणों को पकड़ता है ॥ २ ॥ वही मुहूर्त और घड़ी सफल है जिसमें सच्चे प्रभु के साथ प्रेम बनता है । हरि नाम जिसका आधार है उसे कोई भी दुख एवं सन्ताप नहीं लगता । गुरु ने जिसे बाँह से पकड़ कर विकारों से बाहर निकाल लिया है वही संसार समुद्र से पार उतरता है ॥ ३ ॥ जहाँ सद्संगत एकत्र होती है वही स्थान पवित्र एवं सुहावना है । जिस व्यक्ति ने पूर्ण गुरु ढूँढ लिया है उसी को ही परमात्मा की शरण में आसरा मिलता है। हे नानक, ऐसे व्यक्ति ने अपना पक्का ठिकाना उस स्थान पर बना लिया है जहाँ आध्यात्मिक मौत नहीं, आवागमन का चक्र नहीं और जहाँ आध्यात्मिक जीवन कमज़ोर नहीं होता ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७६ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ हे मेरे प्राण, उसी का ध्यान धर जो सम्राटों का भी सम्राट है । हे मन, केवल उसी परमात्मा की आशा रख जिसका सब जीवों को भरोसा है । तू सारी चतुराईयों को छोड़कर गुरु के चरणों में आ गिर ॥ १ ॥ हे मेरे मन, आनन्द एवं स्थिरता के साथ परमात्मा के नाम का स्मरण कर । आठों प्रहर प्रभु का स्मरण करता रह और सदैव परमात्मा का गुणानुवाद करता रह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मन, तू उसकी शरण में ही जा जिस जैसा अन्य कोई नहीं है; जिसका सुमिरन करने से अत्यन्त सुख प्राप्त होता है और दुख दर्द बिल्कुल ही पास नहीं आता । तू सदैव उस मालिक प्रभु की ही चाकरी कर जो सत्य स्वरूप है ॥ २ ॥ सद्संगत में व्यक्ति पवित्र हो जाता है और यम का पाश भी कट जाता है । वह परमात्मा ही सुखदाता और भय को नाश करने वाला है तू उसके समक्ष ही प्रार्थना कर । वह मिहरबान प्रभु जिस पर कृपा कर दे उसका कार्य ठीक हो जाता है ॥ ३ ॥ उसका बहुत कथन किया जाता है कि वह बहुत ऊँचा है । वर्ण–चिन्ह से परे है । मैं उसकी कीमत नहीं आंक सकता । हे प्रभु, कृपा कर और मुझ नानक को अपना सत्यरूपी नाम प्रदान कर ॥ ४ ॥ ७ ॥ ७७ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ जिन्होंने नाम में ध्यान लगाया है वे सुखी हैं और उनके मुख भी उज्जवल हैं । बेशक नाम सभी लोकों में प्रकट है परन्तु फिर भी वह पूर्ण गुरु के माध्यम से ही प्राप्त होता है । वह एक सच्चा–प्रभु वहीं बसता है जहाँ सद्संगत का निवास

सचा सोइ ॥ १ ॥ मेरे मन हरि हरि नामु धिआइ ॥ नामु सहाई सदा संगि आगै लए छडाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुनीआ कीआ वडिआईआ कवनै आवहि कामि ॥ माइआ का रंगु सभु फिका जातो बिनसि निदानि ॥ जा कै हिरदै हरि वसै सो पूरा परधानु ॥ २ ॥ साधू की होहु रेणुका अपणा आपु तिआगि ॥ उपाव सिआणप सगल छडि गुर की चरणी लागु ॥ तिसहि परापति रतनु होइ जिसु मसतकि होवै भागु ॥ ३ ॥ तिसै परापति भाईहो जिसु देवै प्रभु आपि ॥ सतिगुर की सेवा सो करे जिसु बिनसै हउमै तापु ॥ नानक कउ गुरु भेटिआ बिनसे सगल संताप ॥ ४ ॥ ८ ॥ ७८ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ इकु पछाणू जीअ का इको रखणहारु ॥ इकस का मनि आसरा इको प्राण अधारु ॥ तिसु सरणाई सदा सुखु पारब्रहमु करतारु ॥ १ ॥ मन मेरे सगल उपाव तिआगु ॥ गुरु पूरा आराधि नित इकसु की लिव लागु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इको भाई मितु इकु इको मात पिता ॥ इकस की मनि टेक है जिनि जीउ पिंडु दिता ॥ सो प्रभु मनहु न विसरै जिनि सभु किछु वसि कीता ॥ २ ॥ घरि इको बाहरि इको थान थनंतरि आपि ॥ जीअ जंत सभि जिनि कीए आठ पहर तिसु जापि ॥ इकसु सेती रतिआ न होवी सोग संतापु ॥ ३ ॥ पारब्रहमु प्रभु एकु है दूजा नाही कोइ ॥ जीउ पिंडु सभु तिस का जो तिसु भावै सु होइ ॥ गुरि पूरै पूरा भइआ जपि नानक सचा सोइ ॥ ४ ॥ ९ ॥ ७९ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ जिना सतिगुर सिउ चितु लाइआ से पूरे परधान ॥ जिन कउ आपि दइआलु होइ तिन उपजै मनि गिआनु ॥ जिन कउ मसतकि लिखिआ तिन पाइआ हरि नामु ॥ १ ॥ मन मेरे एको नामु धिआइ ॥ सरब सुखा सुख ऊपजहि दरगह पैधा जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जनम मरण का भउ गइआ भाउ भगति गोपाल ॥ साधू संगति निरमला आपि करे प्रतिपाल ॥ जनम मरण की मलु कटीऐ गुर दरसनु देखि निहाल ॥ २ ॥ थान थनंतरि रवि रहिआ पारब्रहमु प्रभु सोइ ॥ सभना दाता एकु है दूजा नाही कोइ ॥ तिसु सरणाई छुटीऐ कीता लोड़े सु होइ ॥ ३ ॥ जिन मनि वसिआ पारब्रहमु से पूरे परधान ॥ तिन की सोभा निरमली परगटु भई जहान ॥ जिनी मेरा प्रभु

होता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! हरि के नाम पर ध्यान लगा क्योंकि नाम ही सदैव सहायक होता है और परलोक में जीव को छुड़वा लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुनियांदारी के मान–सम्मान किसी काम नहीं आते हैं। माया के कारण सब वस्तुएँ फीकी पड़ जाती हैं क्योंकि यह सभी नाशवान ही हैं। जिस व्यक्ति के हृदय में परमात्मा का नाम बसता है वही सर्वगुण सम्पन्न एवं जाना–माना व्यक्ति हो जाता है ॥ २ ॥ सात्विक व्यक्तियों की चरण–धूलि बन। हे मेरे मन, अपना अहंकार त्याग दे। सभी उपायों और चतुराइयों को छोड़कर गुरु के चरणों में लीन बना रह। नाम रूपी अमूल्य रत्न उसे प्राप्त होता है जिसका मस्तक भाग्यशाली हो अर्थात जिस पर प्रभु की कृपा हो ॥ ३ ॥ हे भाइयो ! प्रभु का नाम उसी को ही मिलता है जिसे प्रभु स्वयं देता है। जिसके अर्न्तमन से अहंकार की जलन विनष्ट हो जाती है वह ही सद्गुरु की सेवा करता है। हे नानक ! जिसने गुरु की सेवा की है उसके समस्त संताप समाप्त हो जाते हैं ॥ ४ ॥ ८ ॥ ७८ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ हे भाई ! जीव का मित्र केवल एक परमात्मा ही है और एक वह ही जीव को बचाने वाला है। मन से एक पर ही आश्रित बनो क्योंकि सिर्फ एक परमात्मा ही जीवन का आधार है। उस परब्रह्म कर्ता की शरण में जाने से ही सदैव सुख मिलता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, सभी उपाय छोड़ दे। पूर्ण गुरु (परमात्मा) का सदा स्मरण कर और उस एक में ही अपनी लौ लगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिर्फ एक परमात्मा ही भाई, मित्र, माता एवं पिता है। उस एक परमात्मा का ही मन में सहारा है जिसने प्राण एवं शरीर दिया है। मेरी यही विनती है कि जिस प्रभु ने सब कुछ अपने वश में रखा हुआ है वह कभी भी मेरे मन से विस्मृत ना हो ॥ २ ॥ घर–बाहर एवं देश–देशांतर में वह एक ही प्रभु बस रहा है। जिस प्रभु ने जीव–जन्तु पैदा किए हैं हे मन, आठों प्रहर तू उसी को स्मरण कर। केवल एक के ही रंग में रंगे रहने से तू शोक–संतप्त नहीं होगा ॥ ३ ॥ परब्रह्म प्रभु एक ही है। अन्य दूसरा कोई नहीं। यह प्राण और शरीर सब उसी का है और जो वह चाहता है वही होता है। हे नानक! जो व्यक्ति पूर्ण गुरु के द्वारा उस सत्य स्वरूप प्रभु का स्मरण करता है वह सब ओर से परिपूर्ण हो जाता है ॥ ४ ॥ ९ ॥ ७९ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ जिन्होंने सद्गुरु के साथ अपना चित्त जोड़ लिया है वे सर्वगुण सम्पन्न हो जाते हैं। जिन पर प्रभु स्वयं दयालु होता है उन्हीं के मन में ज्ञान का प्रकाश उपजता है। जिनके भाग्य में लिखा है उन्होंने ही हरि नाम प्राप्त किया है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, केवल एक नाम का ही स्मरण कर ताकि सब सुखों का सुख तेरे अन्दर पैदा हो जाए और तू परमात्मा के समक्ष सम्मानपूर्वक जा सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आवागमन का डर परमात्मा की भक्ति एवं प्रेम के कारण दूर हो गया है। सद्संगत में रह कर जो व्यक्ति निर्मल हो गए हैं; प्रभु स्वयं उनकी देखभाल करता है। जन्म–मरण के चक्र की मल कट जाती है और ऐसे व्यक्ति गुरु का दर्शन करके प्रसन्न हो उठते हैं। वह परब्रह्म प्रभु सब स्थानों में बस रहा है। सब का दाता भी वह एक ही है दूसरा अन्य कोई नहीं है। उसी की शरण में आने पर जन्म मरण के बन्धनों से छूटा जाता है। वह जो चाहता है वही होता है ॥ ३ ॥ जिनके मन में परब्रह्म बस गया है वे ही सब गुणों से परिपूर्ण एवं प्रधान हैं। उनकी निर्मल शोभा सारे संसार में प्रकट होती है। हे नानक, जिन्होंने

धिआइआ नानक तिन कुरबान ॥ ४ ॥ १० ॥ ८० ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ मिलि सतिगुर सभु दुखु गइआ हरि सुखु वसिआ मनि आइ ॥ अंतरि जोति प्रगासीआ एकसु सिउ लिव लाइ ॥ मिलि साधू मुखु ऊजला पूरबि लिखिआ पाइ ॥ गुण गोविंद नित गावणे निरमल साचै नाइ ॥ १ ॥ मेरे मन गुर सबदी सुखु होइ ॥ गुर पूरे की चाकरी बिरथा जाइ न कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन कीआ इछां पूरीआ पाइआ नामु निधानु ॥ अंतरजामी सदा संगि करणैहारु पछानु ॥ गुर परसादी मुखु ऊजला जपि नामु दानु इसनानु ॥ कामु क्रोधु लोभु बिनसिआ तजिआ सभु अभिमानु ॥ २ ॥ पाइआ लाहा लाभु नामु पूरन होए काम ॥ करि किरपा प्रभि मेलिआ दीआ अपणा नामु ॥ आवण जाणा रहि गइआ आपि होआ मिहरवानु ॥ सचु महलु घरु पाइआ गुर का सबदु पछानु ॥ ३ ॥ भगत जना कउ राखदा आपणी किरपा धारि ॥ हलति पलति मुख ऊजले साचे के गुण सारि ॥ आठ पहर गुण सारदे रते रंगि अपार ॥ पारब्रहमु सुख सागरो नानक सद बलिहार ॥ ४ ॥ ११ ॥ ८१ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ पूरा सतिगुरु जे मिलै पाईऐ सबदु निधानु ॥ करि किरपा प्रभ आपणी जपीऐ अंम्रित नामु ॥ जनम मरण दुखु काटीऐ लागै सहजि धिआनु ॥ १ ॥ मेरे मन प्रभ सरणाई पाइ ॥ हरि बिनु दूजा को नही एको नामु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कीमति कहणु न जाईऐ सागरु गुणी अथाहु ॥ वडभागी मिलु संगती सचा सबदु विसाहु ॥ करि सेवा सुख सागरै सिरि साहा पातिसाहु ॥ २ ॥ चरण कमल का आसरा दूजा नाही ठाउ ॥ मै धर तेरी पारब्रहम तेरै ताणि रहाउ ॥ निमाणिआ प्रभु माणु तूं तेरै संगि समाउ ॥ ३ ॥ हरि जपीऐ आराधीऐ आठ पहर गोविंदु ॥ जीअ प्राण तनु धनु रखे करि किरपा राखी जिंदु ॥ नानक सगले दोख उतारिअनु प्रभु पारब्रहम बखसिंदु ॥ ४ ॥ १२ ॥ ८२ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ प्रीति लगी तिसु सच सिउ मरै न आवै जाइ ॥ ना वेछोड़िआ विछुड़ै सभ महि रहिआ समाइ ॥ दीन दरद दुख भंजना सेवक कै सत भाइ ॥ अचरज रूपु निरंजनो गुरि मेलाइआ माइ ॥ १ ॥ भाई रे मीतु करहु प्रभु सोइ ॥

प्यारे प्रभु का स्मरण किया है मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ४ ॥ १० ॥ ८० ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ सद्गुरु को मिलकर सारा दुख चला गया और हरि रूपी सुख मन में आ बसा है । केवल एक में ही लवलीन होने से अन्तर्मन में ज्योति प्रकाशित हो चुकी है । सात्विक व्यक्तियों को मिलकर मुख उज्जवल हो जाता है और पूर्व जन्म की नेकी स्पष्ट रूप से सामने झलकने लगती है । निर्मल सत्यरूपी नाम में लीन रहकर व्यक्ति सदैव प्रभु के गुणानुवाद में जुट जाता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! शब्द–गुरु में ही सुख प्राप्त होता है । जो कोई भी पूर्ण गुरु की सेवा करता है उसकी यह सेवा व्यर्थ नहीं जाती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाम रूपी खजाना प्राप्त होने पर मन की सभी इच्छाएं पूरी हो जाती हैं। अन्तर्यामी प्रभु सदैव तेरे साथ ही है । हे मन ! तू उस करणहार को पहचान । गुरु की कृपा से मुख उज्जवल होता है । नाम–दान एवं स्नान को अपनाकर काम–क्रोध लोभ का नाश हो जाता है और अभिमान पूर्ण रूप से तज दिया जाता है ॥ २ ॥ प्रभु ने कृपा करके जिस व्यक्ति को अपने साथ जोड़ लिया है उसे ही उसने अपना नाम भी प्रदान किया है । जब वह प्रभु दयालु हो गया तो उसकी भाग–दौड़ समाप्त हो जाती है । शब्द–गुरु से पहचान बना लेने पर ऐसा व्यक्ति सत्य रूपी घर में ही स्थिर हो जाता है ॥ ३ ॥ वह प्रभु कृपापूर्वक भक्तजनों की रक्षा करता है । भक्तजनों के मुख उसके प्रेम में रंगे रहने के कारण वे इस लोक और उस लोक में उज्जवल बने रहते हैं । उस अपार प्रभु के रंग में रंगे हुए वे आठों प्रहर उस प्रभु के गुणों को अपने हृदय में संभाले रहते हैं । हे नानक, परब्रह्म परमात्मा उन्हें सभी सुखों का समुद्र दिखाई देता है और वे उस पर सदा बलिहारी जाते रहते हैं ॥ ४ ॥ ११ ॥ ८१॥ सिरी रागु महला ५ ॥ यदि पूर्ण सद्गुरु प्राप्त हो जाए तो शब्द ब्रह्म का खजाना मिल जाता है । हे प्रभु, अपनी कृपा कर ताकि आध्यात्मिक जीवन देने वाले तेरे नाम का सुमिरन किया जा सके; आवागमन के चक्र में पड़ने का दुख कट सके और सहज ध्यान में लीन हुआ जा सके ॥ १ ॥ हे मेरे मन, प्रभु शरण में आ जा । परमात्मा के बिना अन्य कोई नहीं है इसलिए तू केवल एक नाम पर ही ध्यान लगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा गुणों का समुद्र है जिसकी गहराई और जिसके मूल्य को आंका नहीं जा सकता । हे भाग्यशाली, साधु संगत में मिल बैठकर तू सच्चे शब्द रूपी पदार्थ की खरीद कर और सम्राटों के सम्राट तथा सुखों के सागर परमात्मा की सेवा कर ॥ २ ॥ हे प्रभु! मुझे तेरे ही चरण कमलों का आसरा है और मेरा कोई अन्य ठिकाना नहीं । हे प्रभु ! मैं तेरी ही शरण में हूं और तेरे ही बल से मेरा जीवन है । सम्मान विहीन लोगों का हे प्रभु, तू ही सम्मान है । मैं सदैव तुझमें ही लीन बना रहूँ ॥ ३ ॥ हे मेरे मन, आठों प्रहर परमात्मा के नाम का जाप करते रहना चाहिए । वह परमात्मा ही जीवों के प्राणों, शरीरों एवं धन की रक्षा करता है और कृपापूर्वक वही व्यक्ति को विकारों से बचाता है । हे नानक ! प्रभु परब्रह्म कृपालु है । वह शरणागतों के सारे दोषों को दूर कर देता है ॥ ४ ॥ १२ ॥ ८२ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ मेरी प्रीति उस सत्य रूपी प्रभु से लग गई है जो न मरता है और न आवागमन में रहता है । वह छोड़ने पर भी बिछुड़ता नहीं क्योंकि वह सब में समाया हुआ है । गरीबों के दुख दर्द का नाश करने वाला वह प्रभु सेवक की सच्ची भावना के कारण ही उसे मिलता है । हे माँ ! उस प्रभु का स्वरूप सुन्दर है और उस पर माया का प्रभाव नहीं पड़ता। वह परमात्मा मुझे गुरु ने मिला दिया है ॥ १ ॥ हे भाई, तू उस प्रभु को

माइआ मोह परीति ध्रिगु सुखी न दीसै कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दाना दाता सीलवंतु निरमलु रूपु अपारु ॥ सखा सहाई अति वडा ऊचा वडा अपारु ॥ बालकु बिरधि न जाणीऐ निहचलु तिसु दरवारु ॥ जो मंगीऐ सोई पाईऐ निधारा आधारु ॥ २ ॥ जिसु पेखत किलविख हिरहि मनि तनि होवै सांति ॥ इक मनि एकु धिआईऐ मन की लाहि भरांति ॥ गुण निधानु नवतनु सदा पूरन जा की दाति ॥ सदा सदा आराधीऐ दिनु विसरहु नही राति ॥ ३ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन का सखा गोविंदु ॥ तनु मनु धनु अरपी सभो सगल वारीऐ इह जिंदु ॥ देखै सुणै हदूरि सद घटि घटि ब्रहमु रविंदु ॥ अकिरतघणा नो पालदा प्रभ नानक सद बखसिंदु ॥ ४ ॥ १३ ॥ ८३ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ मनु तनु धनु जिनि प्रभि दीआ रखिआ सहजि सवारि ॥ सरब कला करि थापिआ अंतरि जोति अपार ॥ सदा सदा प्रभु सिमरीऐ अंतरि रखु उरधारि ॥ १ ॥ मेरे मन हरि बिनु अवरु न कोइ ॥ प्रभ सरणाई सदा रहु दूखु न विआपै कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रतन पदारथ माणका सुइना रुपा खाकु ॥ मात पिता सुत बंधपा कूड़े सभे साक ॥ जिनि कीता तिसहि न जाणई मनमुख पसु नापाक ॥ २ ॥ अंतरि बाहरि रवि रहिआ तिस नो जाणै दूरि ॥ त्रिसना लागी रचि रहिआ अंतरि हउमै कूरि ॥ भगती नाम विहूणिआ आवहि वंञहि पूर ॥ ३ ॥ राखि लेहु प्रभु करणहार जीअ जंत करि दइआ ॥ बिनु प्रभ कोइ न रखनहारु महा बिकट जम भइआ ॥ नानक नामु न वीसरउ करि अपुनी हरि मइआ ॥ ४ ॥ १४ ॥ ८४ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ मेरा तनु अरु धनु मेरा राज रूप मै देसु ॥ सुत दारा बनिता अनेक बहुतु रंग अरु वेस ॥ हरि नामु रिदै न वसई कारजि कितै न लेखि ॥ १ ॥ मेरे मन हरि हरि नामु धिआइ ॥ करि संगति नित साध की गुर चरणी चितु लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु निधानु धिआईऐ मसतकि होवै भागु ॥ कारज सभि सवारीअहि गुर की चरणी लागु ॥ हउमै रोगु भ्रमु कटीऐ ना आवै ना जागु ॥ २ ॥ करि संगति तू साध की अठसठि तीरथ नाउ ॥ जीउ प्राण मनु तनु हरे साचा एहु

ही मित्र बना क्योंकि माया का प्रेम धिक्कार योग्य है और माया–जाल में फंसा कोई भी व्यक्ति सुखी नहीं दिखता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह परमात्मा सब के दिलों की जानने वाला है, मीठे स्वभाव वाला है, पवित्र स्वरूप वाला है और शीलवान है । वही सबसे बड़ा मित्र है, सहायता करने वाला है, ऊँचा है, बड़ा है एवं अनन्त है । वह कभी बालक या वृद्ध नहीं होता और उसका दरबार अटल है । जो कुछ भी उससे माँगा जाए वह मिल जाता है और वही निराश्रितों का आश्रय है ॥ २ ॥ जिस परमात्मा का दर्शन करने से पापों का नाश हो जाता है, मन एवं शरीर को शान्ति मिलती है, अपने मन की भटकन दूर करके केवल उस एक पर ही एकाग्र होकर ध्यान लगाना चाहिए । जिस परमात्मा का दिया हुआ दान कभी समाप्त नहीं होता, जो सदैव नूतन बना रहता है, जो सारे गुणों का खजाना है सदा उसी की आराधना की जानी चाहिए और दिन–रात कभी भी उसको विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए ॥ ३ ॥ हे भाई ! पूर्व जन्म के अच्छे लेखों वाले लोगों का ही परमात्मा मित्र बन जाता है । मैं तो अपना शरीर, अपना मन, अपना धन एवं अपने प्राण सब कुछ उसके लिए अर्पण करने को तैयार हूँ । वह परमात्मा सदैव साथ बना रहकर हर एक के कर्मों को देखता–सुनता है । वह हर एक शरीर में व्याप्त है । हे नानक ! वह सदैव कृपालु प्रभु कृतघ्न लोगों का भी भरण–पोषण करता है ॥ ४ ॥ १३ ॥ ८३ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ जिस प्रभु ने मन, धन और मानव देह दी है तथा जिसने शरीर में सभी शक्तियां पैदा करके इस शरीर को सजा–सँवार कर इसमें अपनी ज्योति टिका दी है उस प्रभु को सदा स्मरण करते हुए उसकी याद को अन्दर टिका कर रखना चाहिए ॥ १ ॥ हे मेरे मन, उस परमात्मा के बिना अन्य कोई नहीं है । तू सदा परमात्मा की शरण में पड़ा रह तुझे कोई भी दुख व्याप्त नहीं होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रत्न, मोती आदि पदार्थ एवं सोना–चाँदी आदि सब मिट्टी के समान हैं । माता–पिता, पुत्र एवं अन्य सम्बन्धी भी साथ छोड़ जाने वाले हैं । मनमुख व्यक्ति गन्दे जीवन वाला पशु–स्वभाव मनुष्य है जो उस परमात्मा के गुणों को नहीं जानता जिसने उसको पैदा किया है ॥ २ ॥ ऐसा व्यक्ति अन्दर–बाहर बसे रहने वाले प्रभु को दूर जानता है । उसके मन में सदैव तृष्णा बनी रहती है और उसका मन अहंकार एवं झूठ से भरा रहता है । प्रेम और प्रभु नाम से विहीन होने के कारण ऐसे जीवों के झुण्डों के झुण्ड आवागमन के चक्कर में पड़े रहते हैं ॥ ३ ॥ हे जीवों को उत्पन्न करने वाले प्रभु ! दयापूर्वक (विकारों आदि से) जीवों की रक्षा कर ले । हे प्रभु, तेरे बिना कोई इनका रक्षक नहीं है और यमराज का भय बहुत बड़ा होता जा रहा है । हे नानक ! तुझे प्रभु का नाम विस्मृत न हो एवं हे प्रभु तू भी दया कर ॥ ४ ॥ १४ ॥ ८४॥ सिरी रागु महला ५ ॥ व्यक्ति इस बात का अभिमान करता है कि यह शरीर, यह राज्य, यह देश मेरा है । मेरे पुत्र, स्त्री सभी सुख–साधन और अनेकों पोशाकें मेरे पास हैं परन्तु हृदय में यदि परमात्मा का नाम नहीं बसता तो यह सब किसी काम आने वाले नहीं ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू सदैव हरि–नाम का ध्यान कर । भले व्यक्तियों की सदैव संगत कर और गुरु के चरणों में चित्त लगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अच्छे भाग्य के उदय होने पर ही नाम के भण्डार प्रभु का सुमिरन किया जाता है । हे मन ! तू गुरु के चरणों में लगा रह, तेरे सभी कार्य संवर जायेंगे । अहंकार एवं भ्रम का तेरा रोग भी कट जाएगा और आना–जाना भी स्थगित हो जायेगा ॥ २ ॥ सद्संगत ही तेरे लिए अड़सठ तीर्थों के स्नान तुल्य है । सद्संगत में ही प्राण, मन, शरीर सभी खिल उठते हैं और वास्तव में जीवन का वास्तविक उद्देश्य भी यही है ।

सुआउ ॥ ऐथै मिलहि वडाईआ दरगहि पावहि थाउ ॥ ३ ॥ करे कराए आपि प्रभु सभु किछु तिस ही हाथि ॥ मारि आपे जीवालदा अंतरि बाहरि साथि ॥ नानक प्रभ सरणागती सरब घटा के नाथ ॥ ४ ॥ १५ ॥ ८५ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ सरणि पए प्रभ आपणे गुरु होआ किरपालु ॥ सतगुर कै उपदेसिऐ बिनसे सरब जंजाल ॥ अंदरु लगा राम नामि अंम्रित नदरि निहालु ॥ १ ॥ मन मेरे सतिगुर सेवा सारु ॥ करे दइआ प्रभु आपणी इक निमख न मनहु विसारु ॥ रहाउ ॥ गुण गोविंद नित गावीअहि अवगुण कटणहार ॥ बिनु हरि नाम न सुखु होइ करि डिठे बिसथार ॥ सहजे सिफती रतिआ भवजलु उतरे पारि ॥ २ ॥ तीरथ वरत लख संजमा पाईऐ साधू धूरि ॥ लूकि कमावै किस ते जा वेखै सदा हदूरि ॥ थान थनंतरि रवि रहिआ प्रभु मेरा भरपूरि ॥ ३ ॥ सचु पातिसाही अमरु सचु सचे सचा थानु ॥ सची कुदरति धारीअनु सचि सिरजिओनु जहानु ॥ नानक जपीऐ सचु नामु हउ सदा सदा कुरबानु ॥ ४ ॥ १६ ॥ ८६ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ उदमु करि हरि जापणा वडभागी धनु खाटि ॥ संतसंगि हरि सिमरणा मलु जनम जनम की काटि ॥ १ ॥ मन मेरे राम नामु जपि जापु ॥ मन इछे फल भुंचि तू सभु चूकै सोगु संतापु ॥ रहाउ ॥ जिसु कारणि तनु धारिआ सो प्रभु डिठा नालि ॥ जलि थलि महीअलि पूरिआ प्रभु आपणी नदरि निहालि ॥ २ ॥ मनु तनु निरमलु होइआ लागी साचु परीति ॥ चरण भजे पारब्रहम के सभि जप तप तिन ही कीति ॥ ३ ॥ रतन जवेहर माणिका अंम्रितु हरि का नाउ ॥ सूख सहज आनंद रस जन नानक हरि गुण गाउ ॥ ४ ॥ १७ ॥ ८७ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ सोई सासतु सउणु सोइ जितु जपीऐ हरि नाउ ॥ चरण कमल गुरि धनु दीआ मिलिआ निथावे थाउ ॥ साची पूंजी सचु संजमो आठ पहर गुण गाउ ॥ करि किरपा प्रभु भेटिआ मरणु न आवणु जाउ ॥ १ ॥ मेरे मन हरि भजु सदा इक रंगि ॥ घट घट अंतरि रवि रहिआ सदा सहाई संगि ॥ १ ॥ सुखा की मिति किआ गणी जा सिमरी गोविंदु ॥ जिन चाखिआ से त्रिपतासिआ उह

इस संसार में भी मान–सम्मान मिलेगा और सद्संगत में बने रहने से परमात्मा के दरबार में भी तुझे ठिकाना मिल जाएगा ॥३॥ करण–कारण वह प्रभु स्वयं ही है और सब कुछ उसी के हाथ में है । वही जीव के अन्दर एवं बाहर सदैव बना रहता है और वह ही मारकर जीवित कर देता है । हे प्रभु, हे सभी जीवों के नाथ, नानक तेरी शरण में आ पहुँचा है ॥ ४ ॥ १५ ॥ ८५ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ गुरु की कृपा से व्यक्ति परमात्मा की शरण में आता है। सद्गुरु के उपदेश को मन में धारण करने के फलस्वरूप सभी जंजाल कट जाते हैं । व्यक्ति का हृदय राम नाम में लवलीन हो जाता है और प्रभु–कृपा दृष्टि से उसका हृदय खिल उठता है ॥ १ ॥ हे मन, सद्गुरु की सेवा ही सार तत्त्व है । इसी से प्रभु दयालु होता है । अतः उसे एक क्षण के लिए भी मन से विस्मृत मत करो ॥ रहाउ ॥ अवगुणों को दूर करने वाले प्रभु का सदैव गुणानुवाद करना चाहिए । माया के अनेकों विस्तार देख लिए गए हैं, उस एक प्रभु के नाम के बिना सुख प्राप्त नहीं होता । जो व्यक्ति सहजभाव से ही उसके गुणानुवाद में लीन है–वह संसार रूपी समुद्र से पार उतर जाता है ॥ २ ॥ शांत पुरुषों की चरण धूलि में ही लाखों तीर्थ व्रत एवं संयम प्राप्त हो जाते हैं । हे मन, तू किससे छिप कर कुकर्म करता है; वह प्रभु तो सदैव तेरे आस पास ही है ॥ ३ ॥ वह सत्य रूपी सम्राट है जिसका 'हुक्म' सच्चा है और जिसका स्थान भी सच्चा है । उस सत्य रूपी प्रभु ने नित्य बनी रहने वाली प्रकृति को भी धारण कर रखा है । इस जगत का भी उसी (परम) सत्य ने सृजन किया है । हे नानक, सत्य–नाम का ही स्मरण करना चाहिए; मैं उस सत्य पर सदैव बलिहारी जाता हूँ ॥ ४ ॥ १६ ॥ ८६ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ हे मानव, तू श्रम पूर्वक परमात्मा का सुमिरन कर और अच्छे भाग्य के फलस्वरूप नाम–धन को एकत्र कर । सद्संगत में रह कर प्रभु–नाम का सुमिरन करने से तेरी जन्मों जनमांतरों की इकट्ठी की हुई मैल दूर हो जाएगी ॥ १ ॥ हे मेरे मन, राम–नाम का जाप कर । तू मनोवांछित फलों का उपभोग कर सकेगा और तेरे शोक एवं संताप चुक जाएंगे ॥ रहाउ ॥ जिस उद्देश्य के लिए तूने यह शरीर धारण किया है वह प्रभु तुझे इसी में अपने साथ ही दिखाई पड़ जाएगा । जल–स्थान, आकाश, धरती सर्वत्र वह प्रभु व्याप्त है और अपनी कृपा दृष्टि से सब को देखता है ॥ २ ॥ उससे सच्ची प्रीति हो जाने पर तन मन निर्मल हो जाता है । जिसने भी परब्रह्म के चरणों का ध्यान किया है उसके सभी जप–तप पूर्ण हो गए समझे जाते हैं ॥ ३ ॥ अमृत रूपी हरि नाम में ही सभी रत्न जवाहिर एवं माणिक्य विद्यमान हैं । हे दास नानक, हरि गुण गायन करने से सभी सुख, आनन्द एवं रस आदि सहज भाव से ही प्राप्त हो जाते हैं ॥ ४ ॥ १७ ॥ ८७॥ सिरी राग महला ५ ॥ वास्तविक शास्त्र एवं ज्योतिष शास्त्र आदि वही है जिससे प्रभु स्मरण बना रहे । गुरु ने हरि के चरण रूपी धन प्रदान कर दिया है जिससे इस निराश्रित को भी आश्रय मिल गया है । आठों प्रहर उस प्रभु का गुणानुवाद ही सच्ची पूंजी है एवं सच्चा संयमपूर्ण जीवन है । प्रभु की अपनी कृपा से ही प्रभु से मेल होता है और मृत्यु तथा आवागमन का चक्र समाप्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे मन, एकाग्र हो कर उस हरि का ध्यान कर । वह ही घर घर में व्याप्त है और सदैव सब का सहायक है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु स्मरण के फलस्वरूप प्राप्त सुखों की गणना संभव नहीं है । जिन्होंने नाम रस चखा है वे पूर्ण रूप से तृप्त हो जाते हैं और वे ही उसके स्वाद को

रसु जाणै जिंदु ॥ संता संगति मनि वसै प्रभु प्रीतमु बखसिंदु ॥ जिनि सेविआ प्रभु आपणा सोई राज नरिंदु ॥ २ ॥ अउसरि हरि जसु गुण रमण जितु कोटि मजन इसनानु ॥ रसना उचरै गुणवती कोइ न पुजै दानु ॥ द्रिसटि धारि मनि तनि वसै दइआल पुरखु मिहरवानु ॥ जीउ पिंडु धनु तिस दा हउ सदा सदा कुरबानु ॥ ३ ॥ मिलिआ कदे न विछुड़ै जो मेलिआ करतारि ॥ दासा के बंधन कटिआ साचै सिरजणहारि ॥ भूला मारगि पाइओनु गुण अवगुण न बीचारि ॥ नानक तिसु सरणागती जि सगल घटा आधारु ॥ ४ ॥ १८ ॥ ८८ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ रसना सचा सिमरीऐ मनु तनु निरमलु होइ ॥ मात पिता साक अगले तिसु बिनु अवरु न कोइ ॥ मिहर करे जे आपणी चसा न विसरै सोइ ॥ १ ॥ मन मेरे साचा सेवि जिचरु सासु ॥ बिनु सचे सभ कूड़ु है अंते होइ बिनासु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साहिबु मेरा निरमला तिसु बिनु रहणु न जाइ ॥ मेरै मनि तनि भुख अति अगली कोई आणि मिलावै माइ ॥ चारे कुंडा भालीआ सह बिनु अवरु न जाइ ॥ २ ॥ तिसु आगै अरदासि करि जो मेले करतारु ॥ सतिगुरु दाता नाम का पूरा जिसु भंडारु ॥ सदा सदा सालाहीऐ अंतु न पारावारु ॥ ३ ॥ परवदगारु सालाहीऐ जिस दे चलत अनेक ॥ सदा सदा आराधीऐ एहा मति विसेख ॥ मनि तनि मिठा तिसु लगै जिसु मसतकि नानक लेख ॥ ४ ॥ १९ ॥ ८९ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ संत जनहु मिलि भाईहो सचा नामु समालि ॥ तोसा बंधहु जीअ का ऐथै ओथै नालि ॥ गुर पूरे ते पाईऐ अपणी नदरि निहालि ॥ करमि परापति तिसु होवै जिस नो होइ दइआलु ॥ १ ॥ मेरे मन गुर जेवडु अवरु न कोइ ॥ दूजा थाउ न को सुझै गुर मेले सचु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगल पदारथ तिसु मिले जिनि गुरु डिठा जाइ ॥ गुर चरणी जिन मनु लगा से वडभागी माइ ॥ गुरु दाता समरथु गुरु गुरु सभ महि रहिआ समाइ ॥ गुरु परमेसरु पारब्रहमु गुरु डुबदा लए तराइ ॥ २ ॥ कितु मुखि गुरु सालाहीऐ करण कारण समरथु ॥ से मथे निहचल रहे जिन गुरि धारिआ हथु ॥ गुरि अंम्रित नामु पीआलिआ जनम मरन का पथु ॥ गुरु

जान सकते हैं । प्रियतम एवं क्षमाशील प्रभु सद्संगत करने से ही मन में बसता है । जिस व्यक्ति ने अपने प्रभु की सेवा की है वह राजाओं का भी राजा है ॥ २ ॥ जिस समय भी परमात्मा का गुणानुवाद किया जाए, वह समय करोड़ों तीर्थों के स्नान के समान मूल्यवान है । जीभ से प्रभु–गुणानुवाद के समान अन्य कोई दान नहीं है । कृपा–दृष्टि समेत वह मेहरबान दयालु प्रभु तन–मन में आ बसता है । यह प्राण, शरीर एवं धन धान्य सब उस प्रभु का है और मैं सदा उस पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ३ ॥ जिसे प्रभु अपने से मिला लेता है वह फिर कभी नहीं बिछुड़ता है । उस सच्चे सर्जक प्रभु ने अपने दासों के बन्धन काट दिए हैं । प्रभु ने गुण–अवगुण का विचार किए बिना ही भूले भटके जीव को सही मार्ग बता दिया है । हे नानक, उस प्रभु की शरण में ही जाना चाहिए जो सभी जीवों का आधार है ॥ ४ ॥ १८ ॥ ८८ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ उस सत्यस्वरूप परमात्मा का मुख द्वारा सुमिरन करने से तन और मन निर्मल हो जाता है । माता पिता आदि सगे सम्बन्धी बहुत से हैं परन्तु उस एक के बिना दूसरा कोई भी वास्तविक सम्बन्धी नहीं । यदि उसकी अपनी ही कृपा हो तब वह क्षण भर के लिए भी विस्मृत नहीं होता ॥ १ ॥ हे मेरे मन ! उस सच्चे की तब तक सेवा करता रह जब तक तुझमें साँस बाकी है क्योंकि सत्य के बिना सब कुछ झूठा है और अन्ततः नाशवान है॥१॥ रहाउ ॥ मेरा साहिब पवित्र है और उसके बिना रहा नहीं जाता । मेरे मन तन में उसके लिए बहुत ही जिज्ञासा जग उठी है । हे मेरी माँ, कोई मुझे उससे मिला दे । मैंने चारों दिशाएं खोज ली हैं परन्तु उस पति प्रभु के बिना मेरे लिए कहीं भी कोई स्थान नहीं है ॥ २ ॥ हे मेरे मन, तू उसके सामने प्रार्थना कर जो उस कर्ता से मिला सकता है । सद्गुरु परमात्मा अपने नाम का भी दान देने वाला है और उसका भण्डार सदैव भरा हुआ है । सदा उसी का ही गुणानुवाद किया जाना चाहिए जिसके ओर–छोर का कोई अन्त नहीं है । उस परवरदिगार का ही गुणानुवाद करना चाहिए जिसकी लीला अनन्त है । सदा उसी की आराधना की जाए यही सबसे अच्छा निर्णय है । हे नानक, जिसके माथे पर लेख लिखे हैं उसी को ही तन एवं मन का सौन्दर्य अच्छा लगता है ॥ ४ ॥ १९ ॥ ८९॥ सिरी रागु महला ५ ॥ हे सन्त जन, मिल बैठकर उस सच्चे नाम का सुमिरन करो । जीव की सुखद यात्रा के लिए कुछ ऐसा दाना–पानी साथ ले लो जो इस लोक और उस लोक दोनों में सहायक हो । जब परमात्मा अपनी कृपा दृष्टि से निहारता है तभी पूर्ण गुरु के माध्यम से इस रहस्य का पता लगता है । जिस पर भी वह दयालु होता है उसी को ही अपनी कृपा से उपलब्धियां करवाता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, गुरु के समान अन्य कोई दूसरा नहीं है । केवल गुरु ही सत्य के साथ जोड़ता है और गुरु के अलावा दूसरा अन्य कोई स्थान नहीं सूझता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने स्वयं जाकर गुरु का दर्शन किया है उसे सब पदार्थ मिल जाते हैं । हे माँ, जिनका मन गुरु के चरणों में लग गया है वे ही भाग्यशाली हैं । गुरु रूप परमात्मा पूर्ण रूप से समर्थ एवं सब में रमा हुआ है । परमेश्वर परब्रह्म ही गुरु है और यह गुरु ही डूबते हुए को पार कर देता है ॥ २ ॥ करण–कारण समर्थ गुरु का गुणानुवाद किस मुँह से किया जाए अर्थात उसका गुणानुवाद संभव नहीं है । वे सिर गणनाओं को छोड़कर स्थिर हो गए हैं जिन पर गुरु ने अपना वरद हस्त रख दिया है । गुरु ने ऐसा अमृत नाम पिला दिया है जो जन्म–मरण के रोग के लिए औषधि है । गुरु रुपी

परमेसरु सेविआ भै भंजनु दुख लथु ॥ ३ ॥ सतिगुरु गहिर गभीरु है सुख सागरु अघ खंडु ॥ जिनि गुरु सेविआ आपणा जमदूत न लागै डंडु ॥ गुर नालि तुलि न लगई खोजि डिठा ब्रहमंडु ॥ नामु निधानु सतिगुरि दीआ सुखु नानक मन महि मंडु ॥ ४ ॥ २० ॥ ९० ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ मिठा करि कै खाइआ कउड़ा उपजिआ सादु ॥ भाई मीत सुरिद कीए बिखिआ रचिआ बादु ॥ जांदे बिलम न होवई विणु नावै बिसमादु ॥ १ ॥ मेरे मन सतगुर की सेवा लागु ॥ जो दीसै सो विणसणा मन की मति तिआगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ कूकरु हरकाइआ धावै दह दिस जाइ ॥ लोभी जंतु न जाणई भखु अभखु सभ खाइ ॥ काम क्रोध मदि बिआपिआ फिरि फिरि जोनी पाइ ॥ २ ॥ माइआ जालु पसारिआ भीतरि चोग बणाइ ॥ त्रिसना पंखी फासिआ निकसु न पाए माइ ॥ जिनि कीता तिसहि न जाणई फिरि फिरि आवै जाइ ॥ ३ ॥ अनिक प्रकारी मोहिआ बहु बिधि इहु संसारु ॥ जिस नो रखै सो रहै संम्रिथु पुरखु अपारु ॥ हरि जन हरि लिव उधरे नानक सद बलिहारु ॥ ४ ॥ २१ ॥ ९१ ॥ सिरीरागु महला ५ घरु २ ॥ गोइलि आइआ गोइली किआ तिसु डंफु पसारु ॥ मुहलति पुंनी चलणा तूं संमलु घर बारु ॥ १ ॥ हरि गुण गाउ मना सतिगुरु सेवि पिआरि ॥ किआ थोड़ड़ी बात गुमानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे रैणि पराहुणे उठि चलसहि परभाति ॥ किआ तूं रता गिरसत सिउ सभ फुला की बागाति ॥ २ ॥ मेरी मेरी किआ करहि जिनि दीआ सो प्रभु लोड़ि ॥ सरपर उठी चलणा छडि जासी लख करोड़ि ॥ ३ ॥ लख चउरासीह भ्रमतिआ दुलभ जनमु पाइओइ ॥ नानक नामु समालि तूं सो दिनु नेड़ा आइओइ ॥ ४ ॥ २२ ॥ ९२ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ तिचरु वसहि सुहेलड़ी जिचरु साथी नालि ॥ जा साथी उठी चलिआ ता धन खाकू रालि ॥ १ ॥ मनि बैरागु भइआ दरसनु देखणै का चाउ ॥ धंनु सु तेरा थानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिचरु वसिआ कंतु घरि जीउ जीउ सभि कहाति ॥ जा उठी चलसी कंतड़ा ता कोइ न पुछै तेरी बात ॥ २ ॥ पेईअड़ै सहु सेवि तूं साहुरड़ै सुखि वसु ॥ गुर मिलि चजु अचारु सिखु तुधु कदे न लगै दुखु ॥ ३ ॥ सभना साहुरै वंञणा

परमेश्वर की सेवा करने से मेरे सभी भय समाप्त हो गए हैं एवं दुख दूर हो गए हैं ॥ ३ ॥ सद्गुरु परमात्मा गहन गम्भीर सुखों का सागर एवं पाप का नाश करने वाला है । जिन्होंने अपने गुरु की सेवा की है उन्हें यमदूत की मार नहीं पड़ती । मैंने सारे ब्रहमाण्ड में खोज लिया है कि गुरु (परमात्मा) के समान अन्य कोई नहीं है । सद्गुरु ने नाम का खजाना प्रदान किया है । हे नानक, तू उसे अपने मन में धारण कर ॥ ४ ॥ २० ॥ ९० ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ संसार को मीठा समझकर उसके रसों को चखा परन्तु उसका स्वाद कड़वा ही पैदा हुआ । भाई-मित्र एवं सुहदय जन इकट्ठा किए और विषय विकारों के प्रपंचों की रचना की । परन्तु इन सब को जाते हुए एक क्षण भी नहीं लगता और यह आश्चर्यजनक है कि परमात्मा के नाम के बिना कुछ भी नहीं बचता ॥ १ ॥ हे मेरे मन, सद्गुरु परमात्मा की सेवा कर । जो दृष्टमान है वह सब विनाशशील है । इसलिए तू मन की गणनाओं का त्याग कर ॥ १ ॥ रहाउ॥ जैसे पागल हो चुका कुत्ता दसों दिशाओं में भागा फिरता है वैसे ही लोभी जीव समझे-बूझे बिना खाद्य-अखाद्य सब कुछ खाते चले जाते हैं । वे काम क्रोध एवं अन्य वासनाओं से भरे रहते हैं और पुनः पुनः योनियों में भटकते रहते हैं ॥ २ ॥ माया ने अपना जाल फेंका हुआ है और उस जाल में विषय विकारों का चुग्गा डाला हुआ है जिसमें से जीव निकल नहीं पा रहा है । जिस परमात्मा ने यह सब कुछ किया हुआ है उसे जीव जानता मानता नहीं और फलस्वरूप आवागमन में पड़ा रहता है ॥ ३ ॥ इस संसार को माया ने अनेक प्रकार से मोहित कर रखा है । जिसे वह समर्थ परमात्मा बचाता है वही इससे बच पाता है । प्रभु के भक्त प्रभु में लौ लगाए रहने के फलस्वरूप ही इस संसार से पार हुए हैं और नानक सदैव उन पर बलिहारी जाता है ॥ ४ ॥ २१ ॥ ९१ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ घरु दूसरा ॥ सूखे के दिनों में थोड़े दिनों के लिए यदि कोई गूजर अपने ढोर-डंगर को लेकर किसी अन्य चारागाह पर चराने के लिए ले जाता है तो वहां उसे अपने बड़प्पन का दिखावा शोभा नहीं देता । ऐसे ही हे जीव, तेरा इस जगत में रहने का समय जब समाप्त हो जाएगा तो तू यहाँ से चल देगा। इसलिए अपने असली घर को हमेशा याद रख ॥ १ ॥ हे मेरे मन! परमात्मा का गुणानुवाद किया कर और उस सद्गुरु की प्रेमपूर्वक सेवा किया कर । थोड़े से समय के लिए तू इस संसार में आया है और छोटी छोटी बात पर तू क्यों अभिमान करता है ॥ १ ॥ रहाउ॥ जैसे रात के समय आए हुए अतिथि दिन निकलते ही उठ कर चल देते हैं उसी तरह तू इस गृहस्थ रूपी बगीची में क्यों इतना लीन हो गया है । यह सारा संसार फूलों की बगीची ही है जिसमें फूल सदैव नहीं बने रहते ॥ २ ॥ तू मेरा-मेरा क्या कर रहा है तुझे यह सब कुछ जिसने दिया है उस प्रभु की खोज कर । यहाँ से निश्चित रूप से चले जाना ही पड़ेगा और तुझे यह लाखों-करोड़ों का धन यहीं छोड़ जाना होगा ॥ ३ ॥ चौरासी लाख योनियों में भटकते-भटकते अब तुझे दुर्लभ मानव जन्म प्राप्त हुआ है । हे नानक ! परमात्मा के नाम को हृदय में बसा ले क्योंकि यहां से कूच करने का दिन रोज पास आ रहा है ॥ ४ ॥ २२ ॥ ९२ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ हे काया, तू उतने समय तक ही सुखी बसेगी जितनी देर तक जीवात्मा रूपी साथी तेरे साथ है । जिस दिन जीवात्मा उठ कर चल पड़ी उसी दिन तू मिट्टी में मिल जाएगी ॥ १ ॥ वह शरीर भाग्यशाली है जिसके मन में वैराग्य अर्थात प्रेम एवं परमात्मा का दर्शन पाने का उत्साह जग पड़ा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब तक इस काया में इसका पति जीवात्मा बसता है तब तक सभी इस काया को जी-जी कहते फिरते हैं । परन्तु जैसे ही इस शरीर का स्वामी इसमें से निकल चलता है तो इस शरीर की कोई भी बात नहीं पूछता ॥ २ ॥ हे जीवात्मा, जितना समय तू संसार रूपी घर में है तू पति रूपी परमात्मा का स्मरण करती रह तभी तू ससुराल (परलोक) में जाकर सुख से बस सकेगी । ज्ञानवान व्यक्तियों से मिलकर तू जीवन जीने का ढंग सीख, अच्छा आचरण बना तो तुझे कभी भी दुख नहीं सहना पड़ेगा ॥ ३ ॥ सभी ने ससुराल जाना

सभि मुकलावणहार ॥ नानक धंनु सोहागणी जिन सह नालि पिआरु ॥ ४ ॥ २३ ॥ ९३॥ सिरीरागु महला ५ घरु ६ ॥ करण कारण एकु ओही जिनि कीआ आकारु ॥ तिसहि धिआवहु मन मेरे सरब को आधारु ॥ १ ॥ गुर के चरन मन महि धिआइ ॥ छोडि सगल सिआणपा साचि सबदि लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुखु कलेसु न भउ बिआपै गुर मंत्रु हिरदै होइ ॥ कोटि जतना करि रहे गुर बिनु तरिओ न कोइ ॥ २ ॥ देखि दरसनु मनु साधारै पाप सगले जाहि ॥ हउ तिन कै बलिहारणै जि गुर की पैरी पाहि ॥ ३ ॥ साधसंगति मनि वसै साचु हरि का नाउ ॥ से वडभागी नानका जिना मनि इहु भाउ ॥ ४ ॥ २४ ॥ ९४ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ संचि हरि धनु पूजि सतिगुरु छोडि सगल विकार ॥ जिनि तूं साजि सवारिआ हरि सिमरि होइ उधारु ॥ १ ॥ जपि मन नामु एकु अपारु ॥ प्रान मनु तनु जिनहि दीआ रिदे का आधारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कामि क्रोधि अहंकारि माते विआपिआ संसारु ॥ पउ संत सरणी लागु चरणी मिटै दूखु अंधारु ॥ २ ॥ सतु संतोखु दइआ कमावै एह करणी सार ॥ आपु छोडि सभि होइ रेणा जिसु देइ प्रभु निरंकारु ॥ ३ ॥ जो दीसै सो सगल तूंहै पसरिआ पासारु ॥ कहु नानक गुरि भरमु काटिआ सगल ब्रहम बीचारु ॥ ४ ॥ २५ ॥ ९५ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ दुक्रित सुक्रित मंधे संसारु सगलाणा ॥ दुहहूं ते रहत भगतु है कोई विरला जाणा ॥ १ ॥ ठाकुरु सरबे समाणा ॥ किआ कहउ सुणउ सुआमी तूं वड पुरखु सुजाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मान अभिमान मंधे सो सेवकु नाही ॥ तत समदरसी संतहु कोई कोटि मंधाही ॥ २ ॥ कहन कहावन इहु कीरति करला ॥ कथन कहन ते मुकता गुरमुखि कोई विरला ॥ ३ ॥ गति अवगति कछु नदरि न आइआ ॥ संतन की रेणु नानक दानु पाइआ ॥ ४ ॥ २६ ॥ ९६ ॥ सिरीरागु महला ५ घरु ७ ॥ तेरै भरोसै पिआरे मै लाड लडाइआ ॥ भूलहि चूकहि बारिक तूं हरि पिता माइआ ॥ १ ॥ सुहेला कहनु कहावनु ॥ तेरा बिखमु भावनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ माणु ताणु करउ तेरा हउ जानउ आपा ॥ सभ ही मधि सभहि ते बाहरि बेमुहताज बापा ॥ २ ॥ पिता हउ जानउ नाही तेरी कवन

है और सभी को वहाँ ले जाया जाएगा । हे नानक, वे सुहागिनें धन्य हैं जिनका परमेश्वर रूपी पति के साथ प्यार बना हुआ है ॥ ४ ॥ २३ ॥ ९३ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ घरु ६ ॥ कारण एवं कार्य केवल एक वही परमात्मा है जिसने सारे ब्रह्माण्ड को रचा है । हे मेरे मन ! वही सब का आधार है और तू उसी का ही ध्यान कर ॥ १ ॥ परमात्मा रूपी गुरु–चरणों का मन में ध्यान कर एवं समस्त चतुराईयों को छोड़कर केवल शब्द के माध्यम से उस सत्य–स्वरूप परमात्मा में लौ लगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु रूपी परमात्मा का मन्त्र हृदय में होने पर दुःख, कलेष एवं भय प्रभावित नहीं करते । करोड़ों लोग प्रयत्न कर चुके हैं परन्तु गुरु के बिना किसी का पार उतारा नहीं हो सका है । गुरु के साक्षात्कार के बाद जिनका मन केवल उसी का आश्रय ग्रहण कर लेता है उनके सभी पाप विनष्ट हो जाते हैं । जो गुरु के चरणों पर गिरे हुए हैं मैं उन व्यक्तियों पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ३ ॥ सद्संगत से मन में सत्य रूपी हरि के नाम का निवास हो जाता है । हे नानक, वे व्यक्ति भाग्यशाली हैं जिनके मन में सद्संगत में टिके रहने का प्रेम विद्यमान है ॥ ४ ॥ २४ ॥ ९४ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ हे जीव, परमात्मा के नाम धन को इकट्ठा कर, सद्गुरु परमात्मा की पूजा कर और सभी विकारों को छोड़ दे । उस परमात्मा के सुमिरन से ही तेरा उद्धार होगा जिसने तुझे पैदा करके सुन्दर रूप प्रदान किया है ॥ १ ॥ हे मन ! उस परमात्मा के नाम का सुमिरन कर जो केवल एक ही है एवं जो अपरंपार है तथा जिसने प्राण मन तन दिया है और वह स्वयं ही जीवों के हृदय का आधार है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मोह में ग्रस्त व्यक्ति काम, क्रोध एवं अहंकार में ही मदमस्त बने रहते हैं । शान्त हो चुके व्यक्तियों की शरण में आकर उनके चरणों को पकड़ने से दुःख एवं अज्ञान का अन्धकार दूर हो जाता है ॥ २ ॥ सारे आचरण का सार–तत्व यही है कि सत्य सन्तोष एवं दया को अपने आचरण की कमाई बनाया जाए । निराकार प्रभु जिस पर कृपा करता है वही अपने अभिमान को छोड़कर लोगों के चरणों की धूलि बनता है । हे प्रभु ! जो कुछ भी दृष्टमान है वह तू और तेरा प्रसार ही है । हे नानक ! ब्रह्म का चिन्तन करने से गुरु के माध्यम से भ्रम कट जाते हैं ॥ ४ ॥ २५ ॥ ९५ ॥ सिरी रागु महला ५॥ सारा संसार पुण्य कर्मों एवं पाप कर्मों के विचार में ही लगा हुआ है परन्तु परमात्मा की भक्ति करने वाला व्यक्ति इन दोनों विचारों से ऊपर रहता है । ऐसा व्यक्ति कोई बिरला ही होता है ॥ १ ॥ हे स्वामी ! तू सब में समाया हुआ है । हे मालिक, तू विशाल एवं सुजान है तेरे बारे में क्या कहा सुना जाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो व्यक्ति मान एवं अभिमान के बीच में ही विचरण कर रहा है वह परमात्मा का सेवक नहीं है । वास्तविकता को देखने वाला एवं समदर्शी रूप में, हे सन्तो, करोड़ों में कोई एक ही होता है ॥ २ ॥ संसार में शोभा प्राप्त करने का रास्ता केवल कथन वाचन ही बन गया है परन्तु कथन वाचन से मुक्त गुरमुख कोई बिरला ही है ॥ ३ ॥ मुझे तो यह पता ही नहीं कि मुक्ति अथवा ना–मुक्ति क्या है । नानक ने तो शान्त पुरुषों की चरण धूलि में रहने का दान प्राप्त किया है ॥४॥२६॥९६॥ सिरी रागु महला ५ ॥ घर ७ ॥ हे परमात्मा, मैं तो तेरे भरोसे में ही रहकर इस शरीर को लाड दुलार करता रहा। हम जीव भूल–चूक करने वाले बालक हैं परन्तु हे हरि, तू ही हमारी माता एवं पिता है (जो बच्चों को क्षमा कर देते हैं) । बातचीत करना बहुत ही सरल काम है परन्तु तुझे भा जाना बहुत ही विषम एवं कठिन कार्य है ॥ १॥ रहाउ॥ हे प्रभु मैं तुझ पर ही गर्व करता हूँ, तू ही मेरी शक्ति है और मैं तुझे ही अपना जानता हूँ ॥ हे मेरे बेमुहताज पिता, तू ही सबके अन्दर है और सबके बाहर भी है ॥ २ ॥ हे पिता, मैं नहीं जानता कि तुझे प्रसन्न करने का कौन सा ढंग

जुगता ॥ बंधन मुकतु संतहु मेरी राखै ममता ॥ ३ ॥ भए किरपाल ठाकुर रहिओ आवण जाणा ॥ गुर मिलि नानक पारब्रहमु पछाणा ॥ ४ ॥ २७ ॥ ९७ ॥ सिरीरागु महला ५ घरु १ ॥ संत जना मिलि भाईआ कटिअड़ा जमकालु ॥ सचा साहिबु मनि वुठा होआ खसमु दइआलु ॥ पूरा सतिगुरु भेटिआ बिनसिआ सभु जंजालु ॥ १ ॥ मेरे सतिगुरा हउ तुधु विटहु कुरबाणु ॥ तेरे दरसन कउ बलिहारणै तुसि दिता अंम्रित नामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन तूं सेविआ भाउ करि सेई पुरख सुजान ॥ तिना पिछै छुटीऐ जिन अंदरि नामु निधानु ॥ गुर जेवडु दाता को नही जिनि दिता आतम दानु ॥ २ ॥ आए से परवाणु हहि जिन गुरु मिलिआ सुभाइ ॥ सचे सेती रतिआ दरगह बैसणु जाइ ॥ करते हथि वडिआईआ पूरबि लिखिआ पाइ ॥ ३ ॥ सचु करता सचु करणहारु सचु साहिबु सचु टेक ॥ सचो सचु वखाणीऐ सचो बुधि बिबेक ॥ सरब निरंतरि रवि रहिआ जपि नानक जीवै एक ॥ ४ ॥ २८ ॥ ९८ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ गुरु परमेसुरु पूजीऐ मनि तनि लाइ पिआरु ॥ सतिगुरु दाता जीअ का सभसै देइ अधारु ॥ सतिगुर बचन कमावणे सचा एहु वीचारु ॥ बिनु साधू संगति रतिआ माइआ मोहु सभु छारु ॥ १ ॥ मेरे साजन हरि हरि नामु समालि ॥ साधू संगति मनि वसै पूरन होवै घाल ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु समरथु अपारु गुरु वडभागी दरसनु होइ ॥ गुरु अगोचरु निरमला गुर जेवडु अवरु न कोइ ॥ गुरु करता गुरु करणहारु गुरमुखि सची सोइ ॥ गुर ते बाहरि किछु नही गुरु कीता लोड़े सु होइ ॥ २ ॥ गुरु तीरथु गुरु पारजातु गुरु मनसा पूरणहारु ॥ गुरु दाता हरि नामु देइ उधरै सभु संसारु ॥ गुरु समरथु गुरु निरंकारु गुरु ऊचा अगम अपारु ॥ गुर की महिमा अगम है किआ कथे कथनहारु ॥ ३ ॥ जितड़े फल मनि बाछीअहि तितड़े सतिगुर पासि ॥ पूरब लिखे पावणे साचु नामु दे रासि ॥ सतिगुर सरणी आइआं बाहुड़ि नही बिनासु ॥ हरि नानक कदे न विसरउ एहु जीउ पिंडु तेरा सासु ॥ ४ ॥ २९ ॥ ९९ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ संत जनहु सुणि भाईहो छूटनु साचै नाइ ॥ गुर के चरण सरेवणे तीरथ हरि का नाउ ॥ आगै दरगहि

है । हे सन्त जनों, वह प्रभु बन्धन से मुक्त करने वाला है और सदैव मेरा ध्यान रखता है ॥ ३ ॥ उस ठाकुर परमात्मा ने जब कृपा की तो मेरा आवागमन छूट गया । नानक ने गुरु से मिलकर परब्रह्म परमात्मा को पहचान लिया है ॥ ४ ॥ २७ ॥ ९७ ॥ सिरी रागु महला ५ घरु १ ॥ शान्त व्यक्तियों से मिलकर हे भाईयो, यम का भय कट जाता है । जब वह स्वामी प्रभु दयालु होता है तभी वह सच्चा साहिब मन में बस जाता है । जब पूर्ण सद्गुरु (परमात्मा) मिलता है तो सभी जंजाल विनष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे सद्गुरु, मैं तुझ पर कुर्बान जाता हूँ । तेरे दर्शन के लिए मैं तुझ पर बलिहारी जाता हूँ और तूने ही कृपा करके मुझे अमृत नाम प्रदान किया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही व्यक्ति बुद्धिमान हैं जिन्होंने प्रेम पूर्वक तेरा स्मरण एवं तेरी सेवा की है । जिनके अन्दर नाम का खज़ाना विद्यमान है उनके पीछे लगकर जीव आवागमन से छूट जाता है । जिस गुरु ने ऊँची सुरति रूपी आत्मदान दिया है उसके जैसा दाता अन्य कोई नहीं है ॥ २ ॥ जिनको स्वाभाविक ही गुरु प्राप्त हो गया है उनका इस संसार में आना सफल है । वे ही सत्य में लीन बने रहते हैं और उनको ही परमात्मा के समक्ष बैठने का स्थान मिलता है । यह सब बड़प्पन उस कर्ता के हाथ में ही है और जीव को पूर्व में लिखे हुए लेखों के आधार पर ही यह प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ वह कर्ता सत्य है, वह सदैव क्रियाशील सत्य है, वह साहिब परमात्मा सत्य है और वह सब का आधार परमात्मा सत्य ही है । उस सत्य का ही सच्ची विवेक बुद्धि के द्वारा गुणानुवाद किया जाना चाहिए । हे नानक, जो व्यक्ति सब जीवों में व्याप्त उस एक ही प्रभु के नाम का स्मरण करता है वही आध्यात्मिक जीवन जीता है ॥ ४ ॥ २८ ॥ ९८ ॥ सिरी रागु महला ५ ॥ परमेश्वर रूपी गुरु की तन, मन से प्रेमपूर्वक आराधना की जानी चाहिए । वह सद्गुरु परमात्मा ही सबका दाता है; सब को जीवन का आधार प्रदान करता है । सच्चा विचार तो यह है कि सद्गुरु के वचनों के अनुरूप जीवन ढालना चाहिए । शान्त पुरुषों की संगत में रहने से माया-मोह आदि सभी भस्म हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे मित्र ! परमात्मा का नाम अपने हृदय में बसा । सद्संगत में ही वह मन में बसता है और तभी व्यक्ति की साधना पूर्ण होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु समर्थ एवं अपरंपार है और बड़े भाग्य से ही उसका दर्शन प्राप्त होता है । गुरु (परमात्मा) इन्द्रियों का विषय नहीं है, वह निर्मल है और उसके समान अन्य कोई नहीं है । परमात्मा ही सब कार्यों का कर्त्ता है और वह ही करणहार है तथा गुरमुख बनकर ही सच्ची शोभा बनती है । गुरु से बाहर कुछ भी नहीं है और जो गुरु (परमात्मा) चाहता है वहीं होता है ॥ २ ॥ गुरु ही तीर्थ है, सर्व इच्छाओं को पूर्ण करने वाला पारिजात वृक्ष है और गुरु ही सब आशाओं को पूरा करने वाला है । गुरु ही हरि नाम का दाता है जिससे सारे संसार का उद्धार होता है । गुरु समर्थ है, निराकार है, ऊँचा है, अगम्य है एवं अपरंपार है । गुरु की महिमा अनन्त है, कोई कथन करने वाला क्या बता सकता है । मनोवांछित जितने भी फल हैं वे सब सद्गुरु (परमात्मा) के पास है परन्तु पूर्वजन्म के कर्मों के आधार पर ही यह प्राप्त होते हैं और सत्यनाम की रास-पूंजी भी मिलती है । सद्गुरु की शरण में आने से व्यक्ति बार-बार नहीं मरता । हे नानक! ऐसा परमात्मा कभी भी विस्मृत न हो क्योंकि यह शरीर और यह श्वास् सब उसका ही दिया हुआ है ॥४॥२९॥९९॥ सिरी रागु महला ५ ॥ हे सन्त जन भाईयो, यह ध्यान से सुन लो कि सच्चे नाम मे लीन रहने पर ही छुटकारा होगा । अहम् त्याग कर गुरु चरणों की सेवा करनी और परमात्मा का नाम ही तीर्थों का तीर्थ है ।

मंनीअहि मिलै निथावे थाउ ॥ १ ॥ भाई रे साची सतिगुर सेव ॥ सतिगुर तुठै पाईऐ पूरन अलख अभेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुर विटहु वारिआ जिनि दिता सचु नाउ ॥ अनदिनु सचु सलाहणा सचे के गुण गाउ ॥ सचु खाणा सचु पैनणा सचे सचा नाउ ॥ २ ॥ सासि गिरासि न विसरै सफलु मूरति गुरु आपि ॥ गुर जेवडु अवरु न दिसई आठ पहर तिसु जापि ॥ नदरि करे ता पाईऐ सचु नामु गुणतासि ॥ ३ ॥ गुरु परमेसरु एकु है सभ महि रहिआ समाइ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ सेई नामु धिआइ ॥ नानक गुर सरणागती मरै न आवै जाइ ॥ ४ ॥ ३० ॥ १०० ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सिरीरागु महला १ घरु १ असटपदीआ ॥

आखि आखि मनु वावणा जिउ जिउ जापै वाइ ॥ जिस नो वाइ सुणाईऐ सो केवडु कितु थाइ ॥ आखण वाले जेतड़े सभि आखि रहे लिव लाइ ॥ १ ॥ बाबा अलहु अगम अपारु ॥ पाकी नाई पाक थाइ सचा परवदिगारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा हुकमु न जापी केतड़ा लिखि न जाणै कोइ ॥ जे सउ साइर मेलीअहि तिलु न पुजावहि रोइ ॥ कीमति किनै न पाईआ सभि सुणि सुणि आखहि सोइ ॥ २ ॥ पीर पैकामर सालक सादक सुहदे अउरु सहीद ॥ सेख मसाइक काजी मुला दरि दरवेस रसीद ॥ बरकति तिन कउ अगली पड़दे रहनि दरूद ॥ ३ ॥ पुछि न साजे पुछि न ढाहे पुछि न देवै लेइ ॥ आपणी कुदरति आपे जाणै आपे करणु करेइ ॥ सभना वेखै नदरि करि जै भावै तै देइ ॥ ४ ॥ थावा नाव न जाणीअहि नावा केवडु नाउ ॥ जिथै वसै मेरा पातिसाहु सो केवडु है थाउ ॥ अंबड़ि कोइ न सकई हउ किस नो पुछणि जाउ ॥ ५ ॥ वरना वरन न भावनी जे किसै वडा करेइ ॥ वडे हथि वडिआईआ जै भावै तै देइ ॥ हुकमि सवारे आपणै चसा न ढिल करेइ ॥ ६ ॥ सभु को आखै बहुतु बहुतु लैणै कै वीचारि ॥ केवडु दाता आखीऐ दे कै रहिआ सुमारि ॥ नानक तोटि न आवई तेरे जुगह जुगह भंडार ॥ ७ ॥ १ ॥ महला १ ॥ सभे कंत महेलीआ

परलोक में परमात्मा के दरबार में सम्मान और निराश्रितों को आश्रय मिलता है ॥ १ ॥ हे भाई, सद्गुरु की सेवा अवश्य सच्चा फल देती है । सद्गुरु के प्रसन्न होने पर उस पूर्ण अदृष्ट और रहस्यमय परमात्मा में लीन हुआ जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सच्चे नाम का आधार देने वाले सद्गुरु पर मैं कुर्बान जाता हूँ । रात–दिन सत्य की ही प्रशंसा की जानी चाहिए और सत्य का ही गुणानुवाद किया जाना चाहिए । खाना–पहनना आदि सब सत्य पर आधारित होना चाहिए और उस सत्य के सच्चे नाम में ही लीन बने रहना चाहिए ॥ २ ॥ सोते–खाते समय वह कभी भी विस्मृत न हो क्योंकि वह परमात्मा रूपी गुरु स्वयं ही फलदायक व्यक्तित्व है । गुरु के समान अन्य कोई नहीं दिखाई देता । इसलिए आठों प्रहर उसी का सुमिरन किया जाना चाहिए । परमात्मा स्वयं कृपा दृष्टि करे तो नाम रूपी सत्य का खजाना प्राप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ परमेश्वर एवं गुरु एक ही हैं क्योंकि वह ही सब में रम रहा है । पूर्व–जन्म के कर्मों के फलस्वरुप ही व्यक्ति नाम की आराधना करता है । हे नानक, जो परमात्मा रूपी गुरु की शरण में आया वह कभी मरता नहीं और न ही आवागमन में पड़ता है ॥ ४ ॥ ३० ॥ १०० ॥

१ओअंकार सतिगुर प्रसादि   सिरी रागु महला १ घरु १ अष्टपदियाँ (आठ पदों वाली रचना) ॥

जैसे–जैसे किसी जीव को प्रभु के गुणानुवाद की समझ पड़ती है तो वह यह भी जान जाता है कि कह कहकर केवल मन को व्याकुल करना ही है । क्योंकि जिसके बारे में कहा और सुनाया जाता है वह प्रभु कितना बड़ा है और कहाँ रहता है कुछ पता नहीं लगता । जितने भी उसका कथन करने वाले हैं सब को अन्ततः चुप ही होना पड़ता है और वे उसके प्रेम में ही लवलीन हो जाते है ॥ १ ॥ हे बाबा ! वह अल्लाह अगम्य एवं अपार है । उसका स्थान एवं उसका बड़प्पन पवित्र है और वही एक सच्चा परवरदिगार है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु ! किसी को भी यह पता नहीं चला कि तेरा हुकुम कितना अटल है क्योंकि कोई भी उसका वर्णन नहीं कर सका । यदि सौ कवियों को भी इक्टठा कर लिया जाए तो भी वे तेरे गुणों के तिल मात्र तक भी नहीं पहुँच सकते । कोई भी जीव तेरा मूल्य नहीं आंक पाया; सभी सुनी सुनाई बातें ही करते हैं ॥ २ ॥ दूसरों के मार्ग–दर्शक, पीर–पैगम्बर, शेख, काज़ी, मुल्ला, दरवेश जो तेरे दरवाजे तक पहुँचे हुए हैं उन सब ने भी हे प्रभु, तेरे गुणों का अन्त नहीं पाया है । हाँ, उनको बहुत प्रशंसा अवश्य मिली है और वे तेरे दरवाज़े पर दुआ (प्रार्थना) करते हैं ॥ ३ ॥ वह प्रभु सृष्टि सर्जना और इसके विनाश के लिए और न ही इसे कुछ लेने–देने के लिए किसी से कुछ पूछता हैं । परमात्मा अपनी कार्य शैली को स्वयं ही जानता है और स्वयं ही जगत–रचना करता है । सब जीवों पर कृपादृष्टि रखता है परन्तु जो उसको भाता है उसी को ही दान देता है ॥ ४ ॥ सभी स्थानों के नाम नहीं जाने जा सकते परन्तु उन नामों से भी सबसे बड़ा नाम परमात्मा है । वह स्थान कितना बड़ा है जहाँ सम्राटों का सम्राट मेरा प्रभु निवास करता है । किसी से भी नहीं पूछा जा सकता क्योंकि कोई जीव उस अवस्था में नहीं पहुँच सकता कि उसके नाम–स्थान के बारे में कुछ बता सके ॥ ५ ॥ किसी भी वर्ण–अवर्ण को वह विशेष रूप से नहीं चाहता । वह किसी वर्ण विशेष को बड़ा अथवा छोटा नहीं बनाता । उस महान प्रभु के हाथ में ही सब बड़प्पन है और जिसे वह चाहता है उसे ही प्रदान करता है । अपनी रज़ा में ही वह जीव के जीवन को संवार देता है और ऐसा करते हुए वह क्षण भर के लिए भी नहीं चूकता ॥ ६ ॥ परमात्मा से लेने के विचार के अन्तर्गत सभी जीव बहुत–बहुत प्रार्थनाएं करते हैं । केवल वही एक ऐसा दाता है जो दिए जा रहा है और उसके देने की कोई गिनती नहीं है । नानक का कथन है कि हे प्रभु ! तेरे भण्डार युगों–युगान्तरों तक के लिए है और उनमें कभी कमी नहीं आती ॥ ७ ॥ १ ॥ महला १ ॥ पति (प्रभु) की

सगलीआ करहि सीगारु ॥ गणत गणावणि आईआ सूहा वेसु विकारु ॥ पाखंडि प्रेमु न पाईऐ खोटा पाजु खुआरु ॥ १ ॥ हरि जीउ इउ पिरु रावै नारि ॥ तुधु भावनि सोहागणी अपणी किरपा लैहि सवारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर सबदी सीगारीआ तनु मनु पिर कै पासि ॥ दुइ कर जोड़ि खड़ी तकै सचु कहै अरदासि ॥ लालि रती सच भै वसी भाइ रती रंगि रासि ॥ २ ॥ प्रिअ की चेरी कांढीऐ लाली मानै नाउ ॥ साची प्रीति न तुटई साचे मेलि मिलाउ ॥ सबदि रती मनु वेधिआ हउ सद बलिहारै जाउ ॥ ३ ॥ सा धन रंड न बैसई जे सतिगुर माहि समाइ ॥ पिरु रीसालू नउतनो साचउ मरै न जाइ ॥ नित रवै सोहागणी साची नदरि रजाइ ॥ ४ ॥ साचु धड़ी धन माडीऐ कापड़ प्रेम सीगारु ॥ चंदनु चीति वसाइआ मंदरु दसवा दुआरु ॥ दीपकु सबदि विगासिआ राम नामु उर हारु ॥ ५ ॥ नारी अंदरि सोहणी मसतकि मणी पिआरु ॥ सोभा सुरति सुहावणी साचै प्रेमि अपार ॥ बिनु पिर पुरखु न जाणई साचे गुर कै हेति पिआरि ॥ ६ ॥ निसि अंधिआरी सुतीए किउ पिर बिनु रैणि विहाइ ॥ अंकु जलउ तनु जालीअउ मनु धनु जलि बलि जाइ ॥ जा धन कंति न रावीआ ता बिरथा जोबनु जाइ ॥ ७ ॥ सेजै कंत महेलड़ी सूती बूझ न पाइ ॥ हउ सुती पिरु जागणा किस कउ पूछउ जाइ ॥ सतिगुरि मेली भै वसी नानक प्रेमु सखाइ ॥ ८ ॥ २ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ आपे गुण आपे कथै आपे सुणि वीचारु ॥ आपे रतनु परखि तूं आपे मोलु अपारु ॥ साचउ मानु महतु तूं आपे देवणहारु ॥ १ ॥ हरि जीउ तूं करता करतारु ॥ जिउ भावै तिउ राखु तूं हरि नामु मिलै आचारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे हीरा निरमला आपे रंगु मजीठ ॥ आपे मोती ऊजलो आपे भगत बसीठु ॥ गुर कै सबदि सलाहणा घटि घटि डीठु अडीठु ॥ २ ॥ आपे सागरु बोहिथा आपे पारु अपारु ॥ साची वाट सुजाणु तूं सबदि लघावणहारु ॥ निडरिआ डरु जाणीऐ बाझु गुरू गुबारु ॥ ३ ॥ असथिरु करता देखीऐ होरु केती आवै जाइ ॥ आपे निरमलु एकु तूं होर बंधी धंधै पाइ ॥ गुरि राखे से उबरे साचे सिउ

सभी स्त्रियाँ श्रंगार करती है और अपने श्रंगार के बल पर वे अपनी गिनती गिनवाने आती है परन्तु उनका लाल रंग का वेश विकार ही पैदा करता है। दरअसल पाखण्डी प्रेम से उस प्रभु को नहीं पाया जा सकता और खोटे मन का पता लग जाने पर जीव रूपी स्त्री को ख्वार ही होना पड़ता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, ऐसी स्त्रियों के साथ तूं रमण करता है जो तुझे भाती हैं। ऐसी सुहागिन स्त्रियों का जीवन तू अपनी कृपा से संवार देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन्होंने शब्द–गुरु का श्रंगार किया है और तन–मन को प्रियतम प्रभु के हवाले कर दिया है वह दोनो हाथ जोड़कर पूरी श्रद्धा के साथ प्रभु–पति की ओर ही निहारती हैं और सच्चे मन से परमात्मा के समक्ष ही प्रार्थना करती हैं। वह प्रभु प्रियतम के प्रेम में लीन रहती हैं और सदैव स्थिर प्रभु के सम्मान के रंग में रंगी रहती हैं ॥ २ ॥ जो सेविका प्रभु नाम ही माँगती है वही प्रभु–पति की दासी कही जाती है; प्रभु के साथ उसकी प्रीति सदैव बनी रहती है; कभी टूटती नहीं। सदा स्थिर प्रभु की संगत में उसका मिलाप बना रहता है। शब्द–ब्रह्म के गुणानुवाद में वह रंगी रहती है। मैं ऐसी जीव रूपी स्त्री पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ३ ॥ यदि जीव स्त्री शब्द–गुरु में सुरति को लीन बनाए रखे तो वह कभी भी विधवा होकर अकेली नहीं बैठती अर्थात् परमात्मा सदैव उसके साथ रहता है। उस स्त्री का स्वामी भी आनन्द का स्रोत है जो सदैव नया है, स्थिर बना रहने वाला है और कभी भी समाप्त नहीं होता। वह ऐसी शीलवान सुहागिन जीव स्त्री को प्यार करता है और उसकी रज़ा की कृपादृष्टि उस पर बनी रहती है ॥ ४ ॥ सदैव सत्य रूपी प्रभु का स्मरण करने वाली स्त्री अपने केश विन्यास को सँवारती है और प्रभु प्रेम को कपड़ा एवं श्रंगार बनाती है। प्रभु को चित्त में बसाना उसका चन्दन का टीका है और ऐसी स्त्री ने ही दशम द्वार में अपने पति के लिए सुन्दर घर बनाया है। ऐसे घर मे उसने शब्द–ब्रह्म रूपी दीपक से उजाला किया है और परमात्मा के नाम को ही अपने गले का हार बनाया है ॥ ५ ॥ जिसने अपने माथे पर प्रभु–प्रेम का टीका लगाया है; जिसने सत्य के साथ प्रेम करके अपनी सुरति की शोभा सुहावनी बना ली है ऐसी जीव स्त्री बिना अपने प्रियतम परमात्मा के किसी अन्य को नहीं जानती मानती और परमात्मा के प्रेम में ही लीन बनी रहती है ॥ ६ ॥ माया मोह की अन्धकार युक्त रात्रि में सो रही जीव स्त्री, प्रभु पति के मिलाप के बिना जीवन की रात्रि सुख से नहीं बिता सकती। प्रिय विहीन होने से अच्छा है मेरा हृदय, शरीर, मन, तन, धन जल जाए। जिस स्त्री ने प्रियतम प्रभु के साथ रमण नहीं किया उसकी जवानी व्यर्थ ही चली गई है। भाग्यहीन जीव स्त्री प्रभु पति की शय्या पर सोयी पड़ी है पर उसे यह पता नहीं लग रहा है कि मैं सोयी हूँ और मेरा प्रियतम प्रभु जग रहा है। उसे मिलने के ढंग को अब मैं किससे पूछूँ। हे नानक, जिस जीव स्त्री को सद्गुरु ने अपने से मिला लिया है वह परमात्मा के भय एवं सम्मान में स्थिर बनी रहती है और परमात्मा का प्रेम उसका साथी बन जाता है ॥ ८ ॥ २ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ वह परमात्मा स्वयं ही गुण है, स्वयं ही गुणों का कथन करने वाला है और स्वयं ही सुनकर विचार करने वाला है। हे प्रभु! तू स्वयं ही रत्न है, उस रत्न का मूल्य आंकने वाला है और तू स्वयं ही अमूल्य है। सच्चा मान–सम्मान तू स्वयं ही है और तू स्वयं ही यह सब देने वाला है ॥ १ ॥ हे प्रभु! तू स्वयं ही कर्त्ता है; जैसे भी हो मेरी रक्षा कर ताकि मेरे आचरण में हरि नाम समाहित हो सके ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु स्वयं ही निर्मल हीरा एवं मजीठ का पक्का रंग है; स्वयं ही उज्जवल मोती है और स्वयं ही भक्तों को अपने से मिला लेने वाला बिचौलिया भी है। शब्द–गुरु के माध्यम से तेरा गुणानुवाद हो सकता है और प्रत्येक घट में हे अदृष्ट प्रभु, तू ही दिखाई दे रहा है ॥ २ ॥ तू स्वयं ही सागर एवं जहाज है और स्वयं ही इस रचना का ओर–छोर है। तू ही रास्ता है और तू ही सब कुछ जानता है। सत्य–गुरु के माध्यम से इस संसार से पार ले जाने वाला भी तू ही है। जो प्रभु का भय नहीं मानते वे ही इस संसार सागर में भयभीत जाने जाते हैं। गुरु के बिना इस संसार में घोर अन्धकार है। ॥ ३ ॥ कर्ता प्रभु ही स्थिर दिखाई देता है। अन्य सभी चलायमान हैं। हे प्रभु, एक तू ही मल रहित है, अन्य सारी सृष्टि विभिन्न प्रपंचों में लगी हुई है। जिन्हें गुरु ने बचा लिया है वे ही उबर सके हैं क्योंकि

लिव लाइ ॥ ४ ॥ हरि जीउ सबदि पछाणीऐ साचि रते गुर वाकि ॥ तितु तनि मैलु न लगई सच घरि जिसु ओताकु ॥ नदरि करे सचु पाईऐ बिनु नावै किआ साकु ॥ ५ ॥ जिनी सचु पछाणिआ से सुखीए जुग चारि ॥ हउमै त्रिसना मारि कै सचु रखिआ उरधारि ॥ जग महि लाहा एकु नामु पाईऐ गुर वीचारि ॥ ६ ॥ साचउ वखरु लादीऐ लाभु सदा सचु रासि ॥ साची दरगह बैसई भगति सची अरदासि ॥ पति सिउ लेखा निबड़ै राम नामु परगासि ॥ ७ ॥ ऊचा ऊचउ आखीऐ कहउ न देखिआ जाइ ॥ जह देखा तह एकु तूं सतिगुरि दीआ दिखाइ ॥ जोति निरंतरि जाणीऐ नानक सहजि सुभाइ ॥ ८ ॥ ३ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ मछुली जालु न जाणिआ सरु खारा असगाहु ॥ अति सिआणी सोहणी किउ कीतो वेसाहु ॥ कीते कारणि पाकड़ी कालु न टलै सिराहु ॥ १ ॥ भाई रे इउ सिरि जाणहु कालु ॥ जिउ मछी तिउ माणसा पवै अचिंता जालु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभु जगु बाधो काल को बिनु गुर कालु अफारु ॥ सचि रते से उबरे दुबिधा छोडि विकार ॥ हउ तिन कै बलिहारणै दरि सचै सचिआर ॥ २ ॥ सीचाने जिउ पंखीआ जाली बधिक हाथि ॥ गुरि राखे से उबरे होरि फाथे चोगै साथि ॥ बिनु नावै चुणि सुटीअहि कोइ न संगी साथि ॥ ३ ॥ सचो सचा आखीऐ सचे सचा थानु ॥ जिनी सचा मंनिआ तिन मनि सचु धिआनु ॥ मनि मुखि सूचे जाणीअहि गुरमुखि जिना गिआनु ॥ ४ ॥ सतिगुर अगै अरदासि करि साजनु देइ मिलाइ ॥ साजनि मिलिऐ सुखु पाइआ जमदूत मुए बिखु खाइ ॥ नावै अंदरि हउ वसां नाउ वसै मनि आइ ॥ ५ ॥ बाझु गुरू गुबारु है बिनु सबदै बूझ न पाइ ॥ गुरमती परगासु होइ सचि रहै लिव लाइ ॥ तिथै कालु न संचरै जोती जोति समाइ ॥ ६ ॥ तूंहै साजनु तूं सुजाणु तूं आपे मेलणहारु ॥ गुर सबदी सालाहीऐ अंतु न पारावारु ॥ तिथै कालु न अपड़ै जिथै गुर का सबदु अपारु ॥ ७ ॥ हुकमी सभे ऊपजहि हुकमी कार कमाहि ॥ हुकमी कालै वसि है हुकमी साचि समाहि ॥ नानक जो तिसु भावै सो थीऐ इना जंता वसि किछु नाहि ॥ ८ ॥ ४ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ मनि जूठै तनि जूठि है जिहवा

उन्होंने सत्य प्रभु में ध्यान लगा लिया है ॥४॥ परमात्मा को शब्द के माध्यम से एवं सत्य में लीन गुरु वाक्य रूपी शब्द–ब्रह्म के माध्यम से जाना जाता है । जिसका ठिकाना सत्य के घर में बन गया उसी व्यक्ति के तन को कभी विकारों की मैल नहीं लगती । वह प्रभु जिस पर कृपा दृष्टि करता है । उसी को सत्य का अनुभव होता है और उस प्रभु के नाम के बिना उससे सम्बन्ध कैसे बन सकता है ॥५॥ जिनका साक्षात्कार सत्य से हो गया है वह चारों युगों में सुखी रहते हैं क्योंकि अहंकार एवं तृष्णा को मार कर उन्होंने सत्य को हृदय में धारण कर रखा है । इस संसार में प्रभु नाम ही व्यक्ति के लिए परम लाभ है और यह नाम गुरु के विचारों पर चलकर ही पाया जा सकता है ॥ ६॥ सत्य रूपी सौदा इक्टठा करने पर ही सदैव सच्ची रास–पूंजी एकत्र होती है और लाभ प्राप्त होता है । जो व्यक्ति सच्चे हृदय से प्रार्थना एवं भक्ति करता है वही सत्य के दरबार में बैठने का स्थान पाता है । उसके जीवन का लेखा जोखा सम्मानपूर्वक निपट जाता है और उसके हृदय में राम नाम प्रकाशित हो उठता है ॥ ७ ॥ परमात्मा को ऊँचे से ऊँचा कहा जाता है परन्तु कोई भी उसे देख नहीं पाता है । जब सद्गुरु ने तेरा दर्शन करा दिया तो हे प्रभु जिधर देखूं एक तू ही नजर आता है । हे नानक! आध्यात्मिक स्थिरता वाली अवस्था में टिक कर प्रेम में लीन होकर ही यह समझ आती है कि परमात्मा की समरस ज्योति हर स्थान में मौजूद है ॥ ८ ॥ ३ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ अनजान मछली ने जाल को समझा नहीं और उसने यह भी नहीं समझा कि समुद्र बहुत ही गहरा एवं खारा है । बड़ी सुन्दर एवं चतुर दिखने वाली मछली को जाल पर भरोसा नहीं करना चाहिए । विश्वास कर लेने के कारण ही वह पकड़ी गई और उसके सिर पर काल अब टलता नहीं । हे भाई! सिर पर मौत को ऐसे ही समझो जैसे मछली को जाल अचानक ही आ पकड़ता है। मानव के लिए भी मौत का जाल अचानक उसे मछली की तरह पकड़ लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सारा संसार मौत के डर का बंधा हुआ है; गुरु की शरण आए बिना मौत का भय कभी नहीं मिटता । जो व्यक्ति सत्य में लीन रहते हैं और विकारों, दुविधाओं को छोड़ चुके होते हैं उनका ही उद्धार होता है । मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जो सत्य तक पहुँच कर सत्याचरण वाले बन जाते है ॥ २ ॥ जैसे सभी पक्षी बाज के वश में है और जैसे शिकारी के हाथ में जाल है वैसे ही सभी मनुष्य काल के वश में है । जिन्हें गुरु ने बचा लिया है वे बचे रहते है और जो दाने के मोह में पड़ते हैं वे जाल में फंस जाते हैं । जिनके पास नाम का सुमिरन नहीं है उन्हें चुनकर माया रूपी जाल में फंसाया जाता है। जहाँ कोई भी संगी साथी सहायता के लिए नहीं होता ॥ ३ ॥ जाल से बचने के लिए उस सत्य परमात्मा का स्मरण करना चाहिए जिसका स्थान एवं अस्तित्व सच्च है । जिन्होंने सत्य प्रभु का मनन किया है उनका मन सदैव सत्य के सुमिरन में ही लगा रहता है । जिनके मन एवं मुँह में परमात्मा टिक जाता है वही सच्चे जाने जाते हैं और ऐसे गुरमुख ही ज्ञानवान माने जाते हैं ॥ ४ ॥ हे मेरे मन ! तू सद्गुरु परमात्मा के आगे प्रार्थना कर कि वह सज्जनों के माध्यम से अपने में मिला ले । साजन प्रभु से मिलने पर सुख प्राप्त होता है और ऐसा लगता है कि मानो यमदूत अब विष खाकर स्वयं ही मर गए हैं । प्रभु नाम में अब जीव का निवास हो जाता है और नाम ही मन में आ बसता है ॥ ५॥ परमात्मा रूपी गुरु के बिना घोर अन्धकार है और शब्द के बिना गुरु को बूझा नहीं जा सकता । गुरमत का प्रकाश जिसके मन में हो जाता है वह सदा ही सत्य में लवलीन बना रहता है । ऐसी अवस्था वाले व्यक्ति के पास काल का संचलन नहीं होता और व्यक्ति की ज्योति उस परम ज्योति में समा जाती है ॥ ६ ॥ हे प्रभु, तू ही मेरा मित्र है, तू सब कुछ जानने वाला है और तू स्वयं ही मुझे अपने से मिला लेने में समर्थ है । शब्द–गुरु के माध्यम से ही उसका गुणानुवाद किया जाना चाहिए । जिस प्रभु का कोई ओर–छोर नहीं है, जहाँ शब्द रूपी गुरु का निवास है वहाँ काल पहुँच नहीं सकता ॥ ७ ॥ सभी जीव परमात्मा के हुकुम में उत्पन्न होते हैं और कार्यशील बने रहते हैं । उसके हुकुम के अन्तर्गत ही जीव काल के वश में पड़ते हैं और उसके हुकुम से ही सत्य में लीन बने रहते हैं । हे नानक, जो परमात्मा चाहता है वही होता है; इन जीवों के वश में कुछ भी नहीं है ॥८॥४॥ सिरी रागु महला १॥ यदि जीव का मन विकारों के कारण जूठा हो चुका है तो उसके शरीर में भी जूठन ही जूठन है और उसकी जीभ भी जूठी ही रहती है ।

जूठी होइ ॥ मुखि झूठै झूठु बोलणा किउ करि सूचा होइ ॥ बिनु अभ सबद न मांजीऐ साचे ते सचु होइ ॥ १ ॥ मुंधे गुणहीणी सुखु केहि ॥ पिरु रलीआ रसि माणसी साचि सबदि सुखु नेहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पिरु परदेसी जे थीऐ धन वांढी झूरेइ ॥ जिउ जलि थोड़ै मछुली करण पलाव करेइ ॥ पिर भावै सुखु पाईऐ जा आपे नदरि करेइ ॥ २ ॥ पिरु सालाही आपणा सखी सहेली नालि ॥ तनि सोहै मनु मोहिआ रती रंगि निहालि ॥ सबदि सवारी सोहणी पिरु रावे गुण नालि ॥ ३ ॥ कामणि कामि न आवई खोटी अवगणिआरि ॥ ना सुखु पेईऐ साहुरै झूठि जली वेकारि ॥ आवणु वंञणु डाखड़ो छोडी कंति विसारि ॥ ४ ॥ पिर की नारि सुहावणी मुती सो कितु सादि ॥ पिर कै कामि न आवई बोले फादिलु बादि ॥ दरि घरि ढोई ना लहै छूटी दूजै सादि ॥ ५ ॥ पंडित वाचहि पोथीआ ना बूझहि वीचारु ॥ अन कउ मती दे चलहि माइआ का वापारु ॥ कथनी झूठी जगु भवै रहणी सबदु सु सारु ॥ ६ ॥ केते पंडित जोतकी बेदा करहि बीचारु ॥ वादि विरोधि सलाहणे वादे आवणु जाणु ॥ बिनु गुर करम न छुटसी कहि सुणि आखि वखाणु ॥ ७ ॥ सभि गुणवंती आखीअहि मै गुणु नाही कोइ ॥ हरि वरु नारि सुहावणी मै भावै प्रभु सोइ ॥ नानक सबदि मिलावड़ा ना वेछोड़ा होइ ॥ ८ ॥ ५ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ जपु तपु संजमु साधीऐ तीरथि कीचै वासु ॥ पुंन दान चंगिआईआ बिनु साचे किआ तासु ॥ जेहा राधे तेहा लुणै बिनु गुण जनमु विणासु ॥ १ ॥ मुंधे गुण दासी सुखु होइ ॥ अवगण तिआगि समाईऐ गुरमति पूरा सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विणु रासी वापारीआ तके कुंडा चारि ॥ मूलु न बुझै आपणा वसतु रही घर बारि ॥ विणु वखर दुखु अगला कूड़ि मुठी कूड़िआरि ॥ २ ॥ लाहा अहिनिसि नउतना परखे रतनु वीचारि ॥ वसतु लहै घरि आपणै चलै कारजु सारि ॥ वणजारिआ सिउ वणजु करि गुरमुखि ब्रहमु बीचारि ॥ ३ ॥ संतां संगति पाईऐ जे मेले मेलणहारु ॥ मिलिआ होइ न विछुड़ै जिसु अंतरि जोति अपार ॥ सचै आसणि सचि रहै सचै प्रेम पिआर ॥ ४ ॥ जिनी आपु पछाणिआ घर महि महलु सुथाइ ॥ सचे सेती रतिआ सचो

झूठे मुँह के साथ झूठ बोलने का ही स्वभाव बन जाता है और ऐसा व्यक्ति भला पवित्र कैसे हो सकता है। शब्द–गुरु रूपी जल से मांजने के बिना व्यक्ति पवित्र नहीं हो सकता और उसे सत्य केवल उस सच्चे प्रभु से ही प्राप्त होता है ॥ १ ॥ हे मुग्धा जीव–स्त्री, गुणों से विहीन होकर भला तुझे कैसे सुख प्राप्त होगा। वही जीव स्त्री प्रियतम के साथ रस–रंग का आनन्द उठाती है जिसने सत्य रूपी शब्द–गुरु के साथ प्रेम करने का सुख अनुभव कर लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि प्रियतम परदेस में हो तो बिछुड़ी हुई प्रियतमा ऐसी शोकाकुल रहती है जैसे थोड़ा पानी होने पर मछली इधर–उधर तड़पती हुई घूमती है। यदि उस प्रभु की कृपा दृष्टि हो तो जीव स्त्री प्रियतम को अच्छी लगती है और सुख पाती है ॥ २ ॥ हे जीव स्त्री ! तू सखी सहेलियों के साथ मिलकर अर्थात सद्संगत में बैठकर अपने पति के गुण गा। ऐसा करने पर तेरे हृदय में प्रभु प्रकट हो जाएगा और तेरा तन–मन सुन्दर बनकर प्रभु के प्रेम में रंगकर धन्य हो जाएगा। शब्द–गुरु के माध्यम से जीवन संवर जाता है, वह गुणावान होकर सुन्दर बन जाती है और पति प्रभु उसके साथ रमण करता है। अवगुणों से भरी हुई कामिनी खोटी है और किसी काम की नहीं है। ऐसे झूठे विकारों में जली हुई स्त्री को ना मायके में और न ही ससुराल अर्थात परलोक में सुख प्राप्त होता है। उसके आवागमन का कठिन चक्र बना रहता है क्योंकि प्रभु–पति ने उसको भुला दिया होता है ॥ ४ ॥ परन्तु वह पति–प्रभु की सौन्दर्य से भरपूर स्त्री थी फिर भी किन चस्कों में फंसी हुई को त्याग दिया गया है ? वह प्रियतम के किसी काम की नहीं परन्तु फिर भी झूठा प्रलाप करती रहती है जो उसको कोई काम नहीं दे सकता है। वह जीव स्त्री माया के स्वादों के कारण त्याग दी गई है। उसको प्रभु के द्वार पर और प्रभु के महल में आश्रय नहीं मिलता और उसे सदैव भटकना पड़ता है। पंडित पुस्तकें तो पढ़ते हैं परन्तु पुस्तकों के मर्म को नहीं समझते; वे दूसरों को परामर्श देते घूमते हैं और दरअसल धन को कमाने का ही व्यापार करते हैं। सारा संसार झूठे कथन वादन में ही भटकता रहता है परन्तु वास्तविक मर्यादा शब्द ब्रह्म रूपी सार तत्व ही है ॥ ६ ॥ अनेकों ही पंडित ज्योतिषी आदि वेदों पर विचार करते हैं; परस्पर मतभेद एवं वाद–विवाद के कारण उन में से कईओं की प्रशंसा भी होती है परन्तु कोरे वाद–विवादों में पड़े रहने के कारण ही उनका आवागमन का चक्र भी बना रहता है। कहने–सुनने की इस कला से कुछ नहीं होता क्योंकि बिना परमात्मा की कृपा के व्यक्ति का छुटकारा नहीं होता है ॥ ७ ॥ सभी जीव स्त्रियां गुणवान हैं परन्तु मुझ में कोई गुण नहीं है। यदि प्रभु पति मुझे वास्तव में प्यारा लगने लग जाए तो मैं भी उसकी सुन्दर स्त्री बन सकती हूँ। हे नानक, शब्द गुरु के माध्यम से ही प्रभु से ऐसा मिलाप हो सकता है कि फिर बिछुड़ना नहीं होता ॥ ८ ॥ ५ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ यदि जप–तप, संयम, साधनाएँ की जाएं और तीर्थों पर निवास किया जाए तथा पुण्य कर्म दान आदि अच्छाईयों को धारण भी किया जाए तो भी प्रभु सुमिरन के बिना उपर्युक्त सारे कर्म काण्डों का कोई लाभ नहीं। व्यक्ति जैसा बोएगा वैसा ही उसे काटना पड़ेगा ॥ सद्गुणों के बिना मानव–जन्म विनष्ट हो जाता है ॥ १ ॥ हे मुग्धा जीव–स्त्री, गुणों की खातिर परमात्मा के गुणों की दासी हो जा तभी तुझे सुख प्राप्त होगा। अवगुणों को छोड़कर ही प्रभु चरणों में लीन हुआ जाता है और गुरमति को धारण करने पर ही वह पूर्ण प्रभु प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धन राशि के बिना व्यापारी चारों ओर देखता रहे तो कुछ कमाई नहीं होती। जो व्यक्ति यह मूल तथ्य नहीं समझता कि उसका वास्तविक प्रभु रूपी सौदा उसके अपने अन्दर शरीर रूपी घर में ही है तो वह कुछ भी सौदा लिए बिना बहुत दुख को प्राप्त होता है और झूठ के जाल में फंसा हुआ ही लुट जाता है ॥ २ ॥ जो व्यक्ति सोच–समझकर नाम रत्न को परखता है उसको दिन–रात लाभ ही लाभ होता है। ऐसा व्यक्ति अपने अन्दर ही बहुमूल्य सौदे का साक्षात्कार करता है और अपना कार्य पूरा करके यहाँ से चला जाता है। ऐसा व्यक्ति सद्संगी व्यापारियों के साथ मिलकर व्यापार एवं आदान–प्रदान करता है और गुरमुख बन कर प्रभु चिन्तन में लीन रहता है ॥ ३ ॥ यदि मिलाने वाला प्रभु मिला दे तो सद्संगत में आध्यात्मिक गुणों का खज़ाना मिल जाता है। जिसके अन्तर्मन में प्रभु की अपार ज्योति प्रकट हो जाती है वह फिर उस प्रभु से मिलकर कभी उससे बिछुड़ता नहीं। अब उसका सत्य प्रभु के साथ प्रेम–प्यार बन जाता है और सत्याचरण में रहकर वह उस सत्य रूपी स्थिर आसन को पा जाता है ॥ ४ ॥ जिन्होंने अपने–आप को पहचान लिया है उनको अपने हृदय में ही परमात्मा का निवास स्थान मिल जाता है। सत्य में लीन व्यक्ति के पास सत्य ही सत्य बना रहता

पलै पाइ ॥ त्रिभवणि सो प्रभु जाणीऐ साचो साचै नाइ ॥ ५ ॥ सा धन खरी सुहावणी जिनि पिरु जाता संगि ॥ महली महलि बुलाईऐ सो पिरु रावे रंगि ॥ सचि सुहागणि सा भली पिरि मोही गुण संगि ॥ ६ ॥ भूली भूली थलि चड़ा थलि चड़ि डूगरि जाउ ॥ बन महि भूली जे फिरा बिनु गुर बूझ न पाउ ॥ नावहु भूली जे फिरा फिरि फिरि आवउ जाउ ॥ ७ ॥ पुछहु जाइ पधाऊआ चले चाकर होइ ॥ राजनु जाणहि आपणा दरि घरि ठाक न होइ ॥ नानक एको रवि रहिआ दूजा अवरु न कोइ ॥ ८ ॥ ६ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ गुर ते निरमलु जाणीऐ निरमल देह सरीरु ॥ निरमलु साचो मनि वसै सो जाणै अभ पीर ॥ सहजै ते सुखु अगलो ना लागै जम तीरु ॥ १ ॥ भाई रे मैलु नाही निरमल जलि नाइ ॥ निरमलु साचा एकु तू होरु मैलु भरी सभ जाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का मंदरु सोहणा कीआ करणैहारि ॥ रवि ससि दीप अनूप जोति त्रिभवणि जोति अपार ॥ हाट पटण गड़ कोठड़ी सचु सउदा वापार ॥ २ ॥ गिआन अंजनु भै भंजना देखु निरंजन भाइ ॥ गुपतु प्रगटु सभ जाणीऐ जे मनु राखै ठाइ ॥ ऐसा सतिगुरु जे मिलै ता सहजे लए मिलाइ ॥ ३ ॥ कसि कसवटी लाईऐ परखे हितु चितु लाइ ॥ खोटे ठउर न पाइनी खरे खजानै पाइ ॥ आस अंदेसा दूरि करि इउ मलु जाइ समाइ ॥ ४ ॥ सुख कउ मागै सभु को दुखु न मागै कोइ ॥ सुखै कउ दुखु अगला मनमुखि बूझ न होइ ॥ सुख दुख सम करि जाणीअहि सबदि भेदि सुखु होइ ॥ ५ ॥ बेदु पुकारे वाचीऐ बाणी ब्रहम बिआसु ॥ मुनि जन सेवक साधिका नामि रते गुणतासु ॥ सचि रते से जिणि गए हउ सद बलिहारै जासु ॥ ६ ॥ चहु जुगि मैले मलु भरे जिन मुखि नामु न होइ ॥ भगती भाइ विहूणिआ मुहु काला पति खोइ ॥ जिनी नामु विसारिआ अवगण मुठी रोइ ॥ ७ ॥ खोजत खोजत पाइआ डरु करि मिलै मिलाइ ॥ आपु पछाणै घरि वसै हउमै त्रिसना जाइ ॥ नानक निरमल ऊजले जो राते हरि नाइ ॥ ८ ॥ ७ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ सुणि मन भूले बावरे गुर की चरणी लागु ॥ हरि जपि नामु धिआइ तू जमु डरपै दुख भागु ॥ दूखु घणो दोहागणी किउ थिरु रहै

है । यदि सत्य प्रभु के नाम में लीन रहा जाए तो तीनों लोकों में सर्वत्र रमे प्रभु को जान लिया जाता है ॥ ५ ॥ वह स्त्री सचमुच सुन्दर (जीवन वाली) है जिसने अपने पति प्रभु को अपने अंग–संग ही जान लिया है । उसी स्त्री को प्रभु–पति के महल में बुलाया जाता है और प्रभु–पति प्रेम रंग में सराबोर होकर उससे प्यार करता है । गुणों के कारण उसने पति–प्रभु को मोहित कर लिया होता है और उसे ही सच्ची सुहागिन और भली जीव रूपी स्त्री माना जाता है ॥ ६ ॥ संसार रूपी वन में यदि मैं भटकती रहूँ; धरती पर, पहाड़ों पर धूमती फिरती रहूँ तो भी मुझे कुछ समझ नहीं आता क्योंकि गुरु के बिना इस रास्ते का कुछ पता नहीं चलता । परमात्मा के नाम से विहीन होकर यदि मैं घूमती रहूँ तो पुनः पुनः आवागमन के चक्र में ही पड़ी रहूँगी ॥ ७ ॥ सही रास्ता जानने के लिए उस मार्ग के अन्य राहगीरों से पूछा जाना चाहिए जो प्रभु के सेवक बनकर उस रास्ते पर चल रहे हैं । क्योंकि वे परमात्मा को ही अपना राजा मानते हैं इसलिए उस राजा के द्वार पर उन्हें कोई रोकता नहीं । हे नानक, उनको हर स्थान पर एक परमात्मा ही दिखाई देता है अन्य दूसरा कोई नहीं दिखता ॥ ८ ॥ ६ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ गुरु के माध्यम से ही निर्मल प्रभु को जाना जाता है और उसके पवित्र नाम–जल से शरीर भी पवित्र हो जाता है । वह सत्य स्वरूप निर्मल प्रभु व्यक्ति के मन में प्रकट हो जाता है और उसकी वेदना को जान लेता है । सहज अवस्था में रहने से बहुत सुख मिलता है और यम का तीर भी व्यक्ति को नहीं लगता ॥ १ ॥ हे भाई ! पवित्र नाम जल में स्नान करने से मन पर विकारों की मैल नहीं रह जाती । हे परमात्मा, केवल तू ही सत्य–स्वरूप एक है, अन्य सब स्थान तो माया रूपी मल से भरे हुए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ व्यक्ति का हृदय परमात्मा का सुन्दर स्थान है जिसे प्रभु ने स्वयं ही तैयार किया है । तीनों लोकों में व्याप्त प्रभु की अनुपम ज्योति व्यक्ति के हृदय में जल उठती है और उसी के अन्दर ज्ञान का सूर्य और शान्ति का चन्द्रमा निकल आता है । व्यक्ति के मन में ही ऐसा नगर, बाजार और किला बन जाता है जहाँ केवल सत्य का ही सौदा होता है और सत्य का ही व्यापार होता है ॥ २ ॥ ज्ञान का अंजन भय–भंजन है । हे जीव, तू प्रेम के माध्यम से उस निरंजन परमात्मा में मन लगा कर देख । यदि व्यक्ति मन को एकाग्र करके रखे तो उसे गुप्त एवं प्रकट सारे विश्व में वह परमात्मा ही बस रहा प्रतीत होता है । ऐसा ज्ञान देने वाला यदि सद्गुरु मिल जाए तो वह आसानी से ही परमात्मा से मिला देता है ॥ ३ ॥ सोने को कसौटी पर कसकर बड़े ध्यानपूर्वक परखा जाता है । खोटे सिक्के की तरह खोटे व्यक्ति को भी उस प्रभु के खजाने में जगह नहीं मिलती परन्तु खरा व्यक्ति और सोना दोनों ही खजाने में स्वीकृत हो जाते है । हे भाई, तू भी यदि अपनी आशाओं और शंकाओं को दूर कर ले तो तेरी मैल दूर हो जाएगी और तू भी स्वीकृत हो जाएगा ॥ ४ ॥ हर व्यक्ति सुख माँगता है; दुख कोई भी नहीं माँगता । परन्तु मनमुख व्यक्ति समझ नहीं पाता कि सुखों की अत्यधिक आशा दुख ही पैदा करती है और वास्तव में सुख के बाद दुःख निश्चित ही है । जो व्यक्ति शब्द ब्रह्म के रहस्य को समझ लेता है वह सुख और दुःख को समान भाव से स्वीकार करता है ॥ ५ ॥ ज्ञानवानों का ज्ञान यही पढ़ता और पुकारता है कि शब्द ब्रह्म रूपी वाणी ही ब्रह्म का विस्तार है । वास्तविक मुनिजन, सेवक और साधक वे ही लोग है जो परमात्मा के नाम में रंगे हुए है । जो सत्य में रंगे गए वे ही इस संसार से जीतकर जाते है और मैं सदैव उन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ६ ॥ परन्तु वे व्यक्ति जो चारों युगों से मैले चले आ रहे हैं और जिनके मुख से प्रभु नाम का स्मरण नहीं होता, भक्ति–भाव से विहीन ऐसे व्यक्तियों का मुँह काला होता है और वे अपना सम्मान खो देते हैं । जिनको प्रभु–नाम विस्मृत हो गया वे अवगुणों से भरकर लुट जाते हैं और रोते है ॥ ७ ॥ खोजते रहने से ही इस बात की समझ पड़ती है कि परमात्मा से डरकर ही रहा जाए तो उसकी प्राप्ति होती है । जब व्यक्ति अपने को पहचान लेता है और अपने परमात्मा रूपी घर में ही स्थिर हो जाता है तो उसका अंहकार एवं तृष्णा चुक जाते है । हे नानक, ऐसे व्यक्ति निर्मल और उज्जवल हैं जो हरि नाम में ही लीन बने रहते हैं ॥ ८ ॥ ७ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ हे भूले बावरे मन, सुन और गुरु के चरणों में पड़ जा ॥ हरि का जाप कर और नाम का स्मरण कर, मौत तुझसे डरेगी और दुख भाग खड़ा होगा । दुहागिन स्त्री को अत्यधिक दुख होता है भला उसका सुहाग कैसे स्थिर रह सकता है क्योंकि वह कभी अपने प्रियतम का सुमिरन ही

सुहागु ॥ १ ॥ भाई रे अवरु नाही मै थाउ ॥ मै धनु नामु निधानु है गुरि दीआ बलि जाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति पति साबासि तिसु तिस कै संगि मिलाउ ॥ तिसु बिनु घड़ी न जीवऊ बिनु नावै मरि जाउ ॥ मै अंधुले नामु न वीसरै टेक टिकी घरि जाउ ॥ २ ॥ गुरू जिना का अंधुला चेले नाही ठाउ ॥ बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ बिनु नावै किआ सुआउ ॥ आइ गइआ पछुतावणा जिउ सुंञै घरि काउ ॥ ३ ॥ बिनु नावै दुखु देहुरी जिउ कलर की भीति ॥ तब लगु महलु न पाईऐ जब लगु साचु न चीति ॥ सबदि रपै घरु पाईऐ निरबाणी पदु नीति ॥ ४ ॥ हउ गुर पूछउ आपणे गुर पुछि कार कमाउ ॥ सबदि सलाही मनि वसै हउमै दुखु जलि जाउ ॥ सहजे होइ मिलावड़ा साचे साचि मिलाउ ॥ ५ ॥ सबदि रते से निरमले तजि काम क्रोधु अहंकारु ॥ नामु सलाहनि सद सदा हरि राखहि उर धारि ॥ सो किउ मनहु विसारीऐ सभ जीआ का आधारु ॥ ६ ॥ सबदि मरै सो मरि रहै फिरि मरै न दूजी वार ॥ सबदै ही ते पाईऐ हरि नामे लगै पिआरु ॥ बिनु सबदै जगु भूला फिरै मरि जनमै वारो वार ॥ ७ ॥ सभ सालाहै आप कउ वडहु वडेरी होइ ॥ गुर बिनु आपु न चीनीऐ कहे सुणे किआ होइ ॥ नानक सबदि पछाणीऐ हउमै करै न कोइ ॥ ८ ॥ ८ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ बिनु पिर धन सीगारीऐ जोबनु बादि खुआरु ॥ ना माणे सुखि सेजड़ी बिनु पिर बादि सीगारु ॥ दूखु घणो दोहागणी ना घरि सेज भतारु ॥ १ ॥ मन रे राम जपहु सुखु होइ ॥ बिनु गुर प्रेमु न पाईऐ सबदि मिलै रंगु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर सेवा सुखु पाईऐ हरि वरु सहजि सीगारु ॥ सचि माणे पिर सेजड़ी गूड़ा हेतु पिआरु ॥ गुरमुखि जाणि सिञाणीऐ गुरि मेली गुण चारु ॥ २ ॥ सचि मिलहु वर कामणी पिरि मोही रंगु लाइ ॥ मनु तनु साचि विगसिआ कीमति कहणु न जाइ ॥ हरि वरु घरि सोहागणी निरमल साचै नाइ ॥ ३ ॥ मन महि मनूआ जे मरै ता पिरु रावै नारि ॥ इकतु तागै रलि मिलै गलि मोतीअन का हारु ॥ संत सभा सुखु ऊपजै गुरमुखि नाम अधारु ॥ ४ ॥ खिन महि उपजै खिनि खपै खिनु आवै खिनु जाइ ॥ सबदु पछाणै रवि रहै ना तिसु

नहीं करती ॥ १ ॥ हे भाई! मेरा परमात्मा के अतिरिक्त अन्य कोई स्थान नहीं है। मेरे लिए तो प्रभु नाम ही धन है, नाम ही खजाना है जिसे गुरु ने मुझे प्रदान किया है और मैं उस पर बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरुमति के द्वारा ही सम्मान मिलता है और ऐसे गुरु को ही शाबाश है। मैं ऐसे ही गुरु को मिलना चाहता हूँ। उस गुरु के बिना मैं एक घड़ी भी नहीं रह सकता क्योंकि नाम-विहीन होकर मेरी मौत हो जाती है। माया-मोह से अन्धे बने मुझको उस प्रभु का नाम न भूल जाए और उस प्रभु पर टेक टिका कर ही मैं वापस अपने घर चला जाऊँ ॥ २ ॥ जिनका गुरु अन्धा है उसके चेलों का भी कहीं ठौर-ठिकाना नहीं। सद्गुरु के बिना नाम-धन की प्राप्ति नहीं होती और नाम-विहीन होकर जीने का भला क्या उद्देश्य है। जैसे सुनसान मकान में कौवा आता जाता है उसी तरह जीव भी इस संसार में आता जाता और पछताता रहता है ॥ ३ ॥ नाम-विहीन इस शरीर को ऐसे ही दुख मिलता रहता है जैसे चूने की दीवार प्रति क्षण क्षीण होती रहती है। उस परमात्मा का स्थान तब तक प्राप्त नहीं होता जब तक चित्त में सत्य का निवास नहीं होता। शब्द-गुरु के रंग में रंगकर अपने वास्तविक घर को पाया जाता है और फिर जीव निर्वाण अवस्था में रहकर मोक्ष पद का नित्य अधिकारी बन जाता है ॥ ४ ॥ मैं अपने गुरु को पूछता हूँ और गुरु के बताए मार्ग पर चल कर ही काम करता हूँ। शब्द-गुरु के माध्यम से उस प्रभु का गुणानुवाद होता है, वह मन में बसता है और अहंकार का दुख विनष्ट हो जाता है। सहज भाव में ही उससे मिलाप होता है और सत्य में लीन हुआ जाता है ॥ ५ ॥ जो काम, क्रोध, अहंकार को तजकर शब्द में लीन हो गए हैं वे ही निर्मल हैं। वे सदैव नाम का गुणानुवाद करते हैं और परमात्मा को सदैव हृदय में धारण करके रखते हैं। ऐसे प्रभु को भला क्यों भुलाया जाए जो सभी जीवों का आधार है ॥ ६ ॥ जो एक बार शब्द में लीन हो जाते हैं उन्होंने वास्तव में मरना सीख लिया है और वे दूसरी बार नहीं मरते। शब्द-गुरु के माध्यम से ही परमात्मा प्राप्त होता है और नाम के साथ प्रेम बनता है। शब्द-गुरु के बिना सारा संसार भूल-भुलैयां में पड़ा हुआ है और बार-बार मरता जन्मता रहता है ॥ ७ ॥ सभी केवल अपनी ही प्रशंसा करते रहते हैं ताकि उनका और अधिक मान-सम्मान हो परन्तु गुरु की शरण के बिना अपनी पहचान नहीं हो सकती और केवल बातों को कहने, सुनने से कुछ नहीं होता। हे नानक, शब्द के माध्यम से ही उस परमात्मा को पहचाना जाता है और फिर व्यक्ति अहंकार नहीं करता ॥ ८ ॥ ८ ॥ प्रियतम के बिना स्त्री का श्रृंगार एवं जवानी व्यर्थ और ख्वार करने वाली ही होती है। उसे कभी सुख की शय्या पर आनन्दित होने का अवसर नहीं मिलता। प्रियतम प्रभु के बिना उसका श्रृंगार व्यर्थ है। उस सुहागिन का दुख बहुत ज्यादा होता है जिसके पास न घर है, न शय्या है और न पति है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, राम का जाप कर तभी तुझे सुख मिलेगा। गुरु के बिना प्रेम की लगन नहीं लगती और शब्द के माध्यम से ही आनन्द प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की सेवा से सुख मिलता है और सहज अवस्था का श्रृंगार बनाया जाए तो परमात्मा रूपी वर प्राप्त होता है। ऐसी स्त्री प्रियतम की सेज पर सत्य का आनन्द लेती है और उसके प्रेम का रंग और गाढ़ा हो जाता है। गुरमुख बनकर ही उस प्रभु को पहचाना जाता है और गुरु ही उस सुन्दर गुणों वाले प्रभु से मिलाप करवाता है ॥ २ ॥ हे सुन्दर कामिनी, उस सत्य-प्रभु से मिली रह। पति-प्रभु ने जिस पर अपना रंग चढ़ाकर उसे अपनी तरफ मोहित कर लिया है उसका मन-तन सत्य-स्वरूप होकर खिल उठा है और उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता। ऐसी सुहागिन हरि रूपी वर को प्राप्त करने वाली स्त्री उस प्रभु के सच्चे नाम में निर्मल हो जाती है ॥ ३ ॥ यदि मन की आन्तरिक मनोकामनाएं समाप्त हो जाएं तभी जीव-स्त्री प्रिय पति के साथ रमण कर सकती है। ऐसी अवस्था में ही गले के मोतियों के हार के एक ही धागे द्वारा पिरोये जाने की तरह वे एक-दूसरे में अभेद हो जाते हैं। शान्त व्यक्तियों को सभी में सुख प्राप्त होता है और गुरमुख व्यक्तियों का केवल नाम ही आधार होता है ॥ ४ ॥ यह मन क्षण भर में ही बड़ा हो जाता है और क्षण भर में ही नष्ट हो जाता है। क्षण भर में यह इधर आता है और क्षण भर में ही उधर चला जाता है। यदि यह शब्द-गुरु की पहचान करके उसमें रमा रहे तो

कालु संताइ ॥ साहिबु अतुलु न तोलीऐ कथनि न पाइआ जाइ ॥ ५ ॥ वापारी वणजारिआ आए वजहु लिखाइ ॥ कार कमावहि सच की लाहा मिलै रजाइ ॥ पूंजी साची गुरु मिलै ना तिसु तिलु न तमाइ ॥ ६ ॥ गुरमुखि तोलि तोुलाइसी सचु तराजी तोलु ॥ आसा मनसा मोहणी गुरि ठाकी सचु बोलु ॥ आपि तुलाए तोलसी पूरे पूरा तोलु ॥ ७ ॥ कथनै कहणि न छुटीऐ ना पड़ि पुसतक भार ॥ काइआ सोच न पाईऐ बिनु हरि भगति पिआर ॥ नानक नामु न वीसरै मेले गुरु करतार ॥ ८ ॥ ९ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ सतिगुरु पूरा जे मिलै पाईऐ रतनु बीचारु ॥ मनु दीजै गुर आपणे पाईऐ सरब पिआरु ॥ मुकति पदारथु पाईऐ अवगण मेटणहारु ॥ १ ॥ भाई रे गुर बिनु गिआनु न होइ ॥ पूछहु ब्रहमे नारदै बेद बिआसै कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआनु धिआनु धुनि जाणीऐ अकथु कहावै सोइ ॥ सफलिओ बिरखु हरीआवला छाव घणेरी होइ ॥ लाल जवेहर माणकी गुर भंडारै सोइ ॥ २ ॥ गुर भंडारै पाईऐ निरमल नाम पिआरु ॥ साचो वखरु संचीऐ पूरै करमि अपारु ॥ सुखदाता दुख मेटणो सतिगुरु असुर संघारु ॥ ३ ॥ भवजलु बिखमु डरावणो ना कंधी ना पारु ॥ ना बेड़ी ना तुलहड़ा ना तिसु वंझु मलारु ॥ सतिगुरु भै का बोहिथा नदरी पारि उतारु ॥ ४ ॥ इकु तिलु पिआरा विसरै दुखु लागै सुखु जाइ ॥ जिहवा जलउ जलावणी नामु न जपै रसाइ ॥ घटु बिनसै दुखु अगलो जमु पकड़ै पछुताइ ॥ ५ ॥ मेरी मेरी करि गए तनु धनु कलतु न साथि ॥ बिनु नावै धनु बादि है भूलो मारगि आथि ॥ साचउ साहिबु सेवीऐ गुरमुखि अकथो काथि ॥ ६ ॥ आवै जाइ भवाईऐ पइऐ किरति कमाइ ॥ पूरबि लिखिआ किउ मेटीऐ लिखिआ लेखु रजाइ ॥ बिनु हरि नाम न छुटीऐ गुरमति मिलै मिलाइ ॥ ७ ॥ तिसु बिनु मेरा को नही जिस का जीउ परानु ॥ हउमै ममता जलि बलउ लोभु जलउ अभिमानु ॥ नानक सबदु वीचारीऐ पाईऐ गुणी निधानु ॥ ८ ॥ १० ॥ सिरीरागु महला १ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी जल कमलेहि ॥ लहरी नालि पछाड़ीऐ भी विगसै असनेहि ॥ जल महि

उसे काल भी सताता नहीं । उस मालिक प्रभु की हस्ती को नापा–तौला नहीं जा सकता और केवल कथन करने मात्र से ही उसे पाया नहीं जा सकता ॥ ५ ॥ सभी व्यापारी रूपी जीव अपना–अपना हिसाब लिखा कर लाए हैं । जो सत्य की कमाई करते है उन्हें उस प्रभु की रज़ा के अन्तर्गत लाभ प्राप्त होता है । जिसके पास सत्य की पूँजी है उसे गुरु प्राप्त होता है और उसके पास कोई छल, कपट और मोह नहीं होता ॥ ६ ॥ गुरमुख व्यक्ति ही तौल में सत्य के तराजू पर पूरा उतरता है क्योंकि उसने गुरु के सत्य शब्दों के माध्यम से मन को मोहने वाली आशाओं और मनोकामनाओं को रोक लिया होता है । वही जीव इस तौल में पूरा उतरता है जिसे प्रभु स्वयं कृपापूर्वक पूरा ठहरने की शक्ति देता है ॥ ७ ॥ केवल बातें करने से ही या पुस्तकों के ढेरों के ढेर पढ़ जाने से ही मन की आशाओं, वासनाओं से छूटा नहीं जा सकता । यदि परमात्मा का प्रेम और भक्ति मन में नहीं है तो केवल शरीर की स्वच्छता से ही वह प्राप्त नहीं होता । हे नानक! जिसे नाम विस्मृत नहीं होता उसे वह प्रभु गुरु अपने में मिला लेता है ॥ ८ ॥ ९ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ यदि पूर्ण सद्गुरु प्राप्त हो जाए तो विचार रूपी रत्न प्राप्त हो जाता है । यदि अपना मन गुरु के सम्मुख अर्पण कर दिया जाए तो सब को प्रेम करने की भावना प्राप्त हो जाती है । मुक्ति दिलाने वाला नाम रूपी पदार्थ भी प्राप्त हो जाता है जो विकारों एवं अवगुणों को मिटाने में समर्थ है ॥ १ ॥ हे भाई, बेशक ब्रह्मा, नारद, वेद व्यास आदि किसी से भी पूछ लो गुरु के बिना ज्ञान नहीं प्राप्त होता है ॥ रहाउ ॥ गुरु के पास ही ज्ञान, ध्यान और नाम की धुन को जाना जाता है और वह गुरु ही अकथनीय प्रभु के गुणों को विस्तार से कहता है । गुरु फलयुक्त हरा भरा वृक्ष है और उसकी छाँव भी घनी है । गुण रूपी लाल, जवाहिर एवं माणिक्य भी गुरु के भण्डार में ही हैं ॥ २ ॥ गुरु के भण्डार से ही निर्मल नाम का प्रेम प्राप्त होता है । अच्छे भाग्य से ही व्यक्ति इस संसार में सत्य रूपी सौदे का व्यापार करता है । सद्गुरु ही दुखों को मिटाने वाला, सुख देने वाला और विकार रूपी असुरों का संहार करने वाला है ॥ ३ ॥ संसार–सागर भयंकर रूप से डरावना है और इसका कोई ओर छोर नहीं है । जीव के पास न तो आधार के लिए लकड़ी के डंडे हैं, न नाव है, न बांस है और न ही मल्लाह है । सद्गुरु ही भव–सागर का जहाज है; वह जिस पर कृपा कर देता है वही पार उतर जाता है ॥ ४ ॥ यदि वह प्रियतम एक क्षण के लिए भी भूल जाए तो दुख लग जाता है और सुख उड़ जाता है । मेरी जीभ जल जाए जो प्रेमपूर्वक नाम का जाप नहीं करती। शरीर रूपी घड़े के नष्ट होने पर भी अत्यधिक दुःख मिलता है; यम व्यक्ति को पकड़ लेता है और तब व्यक्ति पछताता है ॥ ५ ॥ व्यक्ति मेरी मेरी करते हुए इस संसार से चले गए परन्तु तन, धन, स्त्री आदि कुछ भी साथ नहीं गया । प्रभु नाम के बिना धन व्यर्थ है परन्तु व्यक्ति फिर भी माया के मार्ग पर भूला भटक रहा है । सत्य रूपी प्रभु की सेवा की जानी चाहिए और गुरमुख बन कर ही उस अकथनीय का कथन किया जा सकता है ॥ ६ ॥ कर्मों द्वारा उत्पन्न संस्कारों के फलस्वरूप व्यक्ति आवागमन के चक्र में घूमता रहता है । पिछले कर्मों के अनुसार माथे का लिखा हुआ लेख जो कि उस परमात्मा की रज़ा में ही लिखा जाता है, कैसे मिट सकता है । परमात्मा के नाम के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती और गुरमति के अनुरूप चलने पर ही जीव परमात्मा से मिलता है ॥ ७ ॥ जिसने यह शरीर और प्राण दिए हैं उसके बिना अन्य कोई मेरा नहीं है । परमात्मा से दूर करने वाला मेरा अहंकार, मेरी ममता, अभिमान एवं लोभ पूर्ण रूप से जल जाएं । हे नानक, शब्द–गुरु का चिन्तन करना चाहिए; उसी से ही गुणों का खजाना प्रभु प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ १०॥ सिरी रागु महला १ ॥ हे मेरे मन, परमात्मा से ऐसा प्रेम कर जैसा कमल जल के साथ करता है । वह पानी की लहरों के साथ बेशक धक्के खाता है परन्तु फिर भी जल के प्रेम में खिला रहता है ।

जीअ उपाइ के बिनु जल मरणु तिनेहि ॥ १ ॥ मन रे किउ छूटहि बिनु पिआर ॥ गुरमुखि अंतरि रवि रहिआ बखसे भगति भंडार ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी मछुली नीर ॥ जिउ अधिकउ तिउ सुखु घणो मनि तनि सांति सरीर ॥ बिनु जल घड़ी न जीवई प्रभु जाणै अभ पीर ॥ २ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी चात्रिक मेह ॥ सर भरि थल हरीआवले इक बूंद न पवई केह ॥ करमि मिलै सो पाईऐ किरतु पइआ सिरि देह ॥ ३ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी जल दुध होइ ॥ आवटणु आपे खवै दुध कउ खपणि न देइ ॥ आपे मेलि विछुंनिआ सचि वडिआई देइ ॥ ४ ॥ रे मन ऐसी हरि सिउ प्रीति करि जैसी चकवी सूर ॥ खिनु पलु नीद न सोवई जाणै दूरि हजूरि ॥ मनमुखि सोझी ना पवै गुरमुखि सदा हजूरि ॥ ५ ॥ मनमुखि गणत गणावणी करता करे सु होइ ॥ ता की कीमति ना पवै जे लोचै सभु कोइ ॥ गुरमति होइ त पाईऐ सचि मिलै सुखु होइ ॥ ६ ॥ सचा नेहु न तुटई जे सतिगुरु भेटै सोइ ॥ गिआन पदारथु पाईऐ त्रिभवण सोझी होइ ॥ निरमलु नामु न वीसरै जे गुण का गाहकु होइ ॥ ७ ॥ खेलि गए से पंखणूं जो चुगदे सर तलि ॥ घड़ी कि मुहति कि चलणा खेलणु अजु कि कलि ॥ जिसु तूं मेलहि सो मिलै जाइ सचा पिड़ु मलि ॥ ८ ॥ बिनु गुर प्रीति न ऊपजै हउमै मैलु न जाइ ॥ सोहं आपु पछाणीऐ सबदि भेदि पतीआइ ॥ गुरमुखि आपु पछाणीऐ अवर कि करे कराइ ॥ ९ ॥ मिलिआ का किआ मेलीऐ सबदि मिले पतीआइ ॥ मनमुखि सोझी ना पवै वीछुड़ि चोटा खाइ ॥ नानक दरु घरु एकु है अवरु न दूजी जाइ ॥ १० ॥ ११ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ मनमुखि भुलै भुलाईऐ भूली ठउर न काइ ॥ गुर बिनु को न दिखावई अंधी आवै जाइ ॥ गिआन पदारथु खोइआ ठगिआ मुठा जाइ ॥ १ ॥ बाबा माइआ भरमि भुलाइ ॥ भरमि भुली डोहागणी ना पिर अंकि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भूली फिरै दिसंतरी भूली ग्रिहु तजि जाइ ॥ भूली डूंगरि थलि चड़ै भरमै मनु डोलाइ ॥ धुरहु विछुंनी किउ मिलै गरबि मुठी बिललाइ ॥ २ ॥ विछुड़िआ गुरु मेलसी हरि रसि नाम

जो जीव जल में उत्पन्न हुए हैं, जल विहीन होना उनके लिए मौत है ॥ १ ॥ हे मन, प्रभु प्यार के बिना तेरी मुक्ति कैसे होगी। गुरमुख के अन्तर्मन में ही वह परमात्मा रमण करता है एवं उसे भक्ति का भण्डार सौंप देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मन, परमात्मा से ऐसा प्रेम कर जैसा मछली का पानी के साथ होता है। जैसे जैसे पानी बढ़ता है तो साथ ही साथ मछली का सुख भी अधिक हो जाता है और उसका शरीर एवं मन अधिक आनन्दित हो जाते है। जल के बिना वह एक घड़ी भी जीवित नहीं रहती और फिर तो केवल प्रभु ही उसके हृदय की पीड़ा को जान सकता है ॥ २ ॥ हे मन, परमात्मा से ऐसा प्रेम कर जैसा पपीहे का बादल के साथ होता है। सरोवर भरे हुए होते है, धरती भी हरी-भरी होती है परन्तु यदि स्वांति नक्षत्र की एक बूंद पपीहे के मुँह में न पड़े तो उसको सारे पानी से कुछ लेना देना नहीं है। पर हे मन, उसकी कृपा हो तब कुछ मिलता है अन्यथा पूर्व जन्म का फल शरीर पर सहना ही पड़ता है ॥ ३ ॥ हे मन, परमात्मा से ऐसा प्यार कर जैसा पानी और दूध का प्यार होता है। पानी अग्नि की गर्मी स्वयं सहता है परन्तु दूध को जलने नहीं देता। वह प्रभु स्वयं ही बिछुड़े हुओं को मिलाता है और उन्हें सत्य रूपी बड़प्पन प्रदान करता है ॥ ४ ॥ हे मन, प्रभु से ऐसा प्रेम कर जैसा चकवी का प्यार सूर्य के साथ है। सूर्य के अस्त होते ही रात भर चकवी क्षण भर के लिए भी नहीं सोती और छिपे हुए सूर्य को भी अपने आस-पास ही देखने का उपक्रम करती रहती है। गुरमुख को भी परमात्मा अपने चारों ओर दिखाई देता रहता है परन्तु मनमुख को यह समझ नहीं पड़ता ॥ ५ ॥ मनमुख मन का गणित लगाता रहता है परन्तु जो कर्ता प्रभु करता है वही होता है। यदि सब लोग मिलकर भी चाहें तो उस प्रभु का मूल्य आंका नहीं जा सकता। गुरमति मिलने से ही व्यक्ति सत्य रूपी परमात्मा को प्राप्त करता है और उसके मिलने से ही आनन्द मिलता है ॥ ६ ॥ यदि सद्‌गुरु मिल जाए तो सच्चा प्रेम कभी भी टूटता नहीं। जीव को ज्ञान प्राप्त होने पर तीनों लोक सुझायी पड़ने लग जाते हैं और यदि व्यक्ति वास्तव में गुण को ग्रहण करने वाला है तो निर्मल नाम उसे कभी भी विस्मृत नहीं होता ॥ ७ ॥ जो जीव रूपी पक्षी इस संसार रूपी सरोवर पर दाना चुगते हैं वे जीवन का खेल खेलकर चले जाते हैं। प्रत्येक जीव-पक्षी ने घड़ी पल का खेल खेलकर यहां से चलते जाना है क्योंकि यहाँ का खेल एक-दो दिन में ही समाप्त हो जाता है। हे प्रभु, जिसे तू मिलाता है उसी का मिलाप होता है और वही जीवन की सच्ची बाजी जीतकर यहाँ से जाता है ॥ ८ ॥ गुरु के बिना प्रेम नहीं उपजता और अहंकार की मैल नहीं छूटती। मैं वहीं हूँ (जो प्रभु है) की पहचान शब्द-गुरु के मर्म को समझने से आती है और हृदय प्रसन्न होता है। गुरमुख बनकर स्वयं को पहचाना जाता है तथा जीव अन्य कोई उद्यम कर-करा ही नहीं सकता ॥ ९ ॥ जो शब्द के माध्यम से प्रभु को मिलकर संतुष्ट हो चुके हैं उन मिले हुओं को अब और क्या मिलाया जा सकता है। मनमुख व्यक्ति को यह समझ नहीं पड़ती और परमात्मा से बिछुड़ कर वह माया-मोह की चोटें खाता रहता है। हे नानक, जो प्रभु चरणों में मिल गया उसके लिए प्रभु का घर ही एक आसरा है, अन्य कोई स्थान उसके लिए नहीं है ॥ १० ॥ ११ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ मनमुख व्यक्ति भूला-भटका रहता है और ऐसी भूली हुई जीवात्मा को कोई भी ठिकाना नहीं मिलता। गुरु के बिना अन्य कोई भी उसे रास्ता नहीं दिखा पाता। माया से प्रभावित अन्धी जीव-स्त्री भटकती ही रहती हैं। जिसने भी अन्तर्मन के ज्ञान को खो दिया है वह ठगा जाता है और सांसारिक प्रपंचों द्वारा लूट लिया जाता है ॥ १ ॥ हे भाई, माया भ्रम में डालकर भटकाती रहती है और भ्रम में भूली हुई दुहागिन स्त्री प्रियतम के अंक में स्थान नहीं पा सकती ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसी जीव-स्त्री देश-देशान्तरों में भूलती-भटकती रहती है और वास्तव में भुलावे में आकर ही उसने घर-बार त्यागा होता है। भूली हुई जीव-स्त्री ही पहाड़ों की कन्दराओं मे कभी जा बैठती है तो कभी मैदान में अपना प्रपंच दिखाने के लिए आ बैठती है। भ्रम में पड़ी हुई इस जीव-स्त्री का मन सदा डोलता ही रहता है। जो परमात्मा की इच्छा के अन्तर्गत ही बिछुड़ गयी है वह भला कैसे मिल सकती है क्योंकि वह अपने अभिमान द्वारा लुटी हुई सदैव प्रलाप ही करती रहती है ॥२॥ गुरु बिछुड़े हुओं को मिला देता है और हरि-नाम के साथ प्यार करना और उसका रस लेना सिखा देता है।

पिआरि ॥ साचि सहजि सोभा घणी हरि गुण नाम अधारि ॥ जिउ भावै तिउ रखु तूं मै तुझ बिनु कवनु भतारु ॥ ३ ॥ अखर पड़ि पड़ि भुलीऐ भेखी बहुतु अभिमानु ॥ तीरथ नाता किआ करे मन महि मैलु गुमानु ॥ गुर बिनु किनि समझाईऐ मनु राजा सुलतानु ॥ ४ ॥ प्रेम पदारथु पाईऐ गुरमुखि ततु वीचारु ॥ सा धन आपु गवाइआ गुर कै सबदि सीगारु ॥ घर ही सो पिरु पाइआ गुर कै हेति अपारु ॥ ५ ॥ गुर की सेवा चाकरी मनु निरमलु सुखु होइ ॥ गुर का सबदु मनि वसिआ हउमै विचहु खोइ ॥ नामु पदारथु पाइआ लाभु सदा मनि होइ ॥ ६ ॥ करमि मिलै ता पाईऐ आपि न लइआ जाइ ॥ गुर की चरणी लगि रहु विचहु आपु गवाइ ॥ सचे सेती रतिआ सचो पलै पाइ ॥ ७ ॥ भुलण अंदरि सभु को अभुलु गुरू करतारु ॥ गुरमति मनु समझाइआ लागा तिसै पिआरु ॥ नानक साचु न वीसरै मेले सबदु अपारु ॥ ८ ॥ १२ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ त्रिसना माइआ मोहणी सुत बंधप घर नारि ॥ धनि जोबनि जगु ठगिआ लबि लोभि अहंकारि ॥ मोह ठगउली हउ मुई सा वरतै संसारि ॥ १ ॥ मेरे प्रीतमा मै तुझ बिनु अवरु न कोइ ॥ मै तुझ बिनु अवरु न भावई तूं भावहि सुखु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु सालाही रंग सिउ गुर कै सबदि संतोखु ॥ जो दीसै सो चलसी कूड़ा मोहु न वेखु ॥ वाट वटाऊ आइआ नित चलदा साथु देखु ॥ २ ॥ आखणि आखहि केतड़े गुर बिनु बूझ न होइ ॥ नामु वडाई जे मिलै सचि रपै पति होइ ॥ जो तुधु भावहि से भले खोटा खरा न कोइ ॥ ३ ॥ गुर सरणाई छुटीऐ मनमुख खोटी रासि ॥ असट धातु पातिसाह की घड़ीऐ सबदि विगासि ॥ आपे परखे पारखू पवै खजानै रासि ॥ ४ ॥ तेरी कीमति ना पवै सभ डिठी ठोकि वजाइ ॥ कहणै हाथ न लभई सचि टिकै पति पाइ ॥ गुरमति तूं सालाहणा होरु कीमति कहणु न जाइ ॥ ५ ॥ जितु तनि नामु न भावई तितु तनि हउमै वादु ॥ गुर बिनु गिआनु न पाईऐ बिखिआ दूजा सादु ॥ बिनु गुण कामि न आवई माइआ फीका सादु ॥ ६ ॥ आसा अंदरि जंमिआ आसा रस कस खाइ ॥ आसा बंधि चलाईऐ मुहे मुहि चोटा खाइ ॥ अवगणि बधा मारीऐ छूटै गुरमति नाइ ॥

परमात्मा के गुणों और नाम को जीवन का आधार बना लेने से सहज भाव से ही सत्य प्राप्त होता है और जीव–स्त्री की शोभा बहुत ही बढ़ जाती है। हे मेरे प्रियतम, मेरा तेरे सिवाय अन्य कोई नहीं है, तू जैसे भी हो मेरी रक्षा कर॥३॥ अक्षर पढ़कर अर्थात् विद्या से भी व्यक्ति भूल–भूलैयां में पड़ जाता है और विद्यावानों का वेश बनाने वाला व्यक्ति भी केवल अत्यधिक अभिमानी ही हो जाता है। तीर्थ–स्नान भी क्या कर सकता है यदि मन में अभिमान की मैल ज्यों की त्यों है। मन इतना बड़ा स्वेच्छाचारी राजा और सुल्तान है कि यह बात भी गुरु के बिना उसे अन्य कौन समझा सकता है ॥ ४ ॥ गुरमुख बनकर और तत्त्व का चिन्तन करके ही प्रेम पदार्थ पाया जा सकता है और जीव रूपी स्त्री ने भी शब्द–गुरु का श्रृंगार करके ही अपना अहंकार भाव समाप्त किया है। उसे अब गुरु के प्रेम के फलस्वरूप अपने हृदय रूपी घर में ही प्रियतम मिल गया है ॥ ५ ॥ गुरु की सेवा चाकरी करने से मन निर्मल होता है और सुख मिलता है। अन्तर्मन का अंहकार खोने पर ही शब्द–गुरु मन में आन बसता है। व्यक्ति को अब नाम रूपी धन प्राप्त हो जाता है जिससे उसका मन हमेशा लाभान्वित होता रहता है ॥ ६ ॥ उस प्रभु की कृपा हो तब ही वह प्राप्त होता है। स्वयं उसे नहीं पाया जा सकता। हे जीव, तू अपना अभिमान गवाँकर गुरु के चरणों में लगा रह। जो सत्य के रंग में रंग गया वह सत्य स्वरूप परमात्मा को प्राप्त हो गया है ॥ ४ ॥ सारा संसार भूल–चूक में है परन्तु कभी न भूल करने वाला केवल एक परमात्मा रूपी गुरु ही है। गुरमति के अनुसार जिसका मन समझ गया है उसे ही परमात्मा के साथ प्रेम हो गया है। हे नानक, जिस व्यक्ति का शब्द के माध्यम से उस प्रभु से मिलन हो जाता है उसे सत्य रूप प्रभु कभी भी विस्मृत नहीं होता ॥ ८ ॥ १२ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ पुत्र, बन्धुगण, घर, नारी आदि के रूप में माया की तृष्णा व्यक्ति का मन मोह रही है। लोभ, अहंकार, धन, यौवन आदि ने सारे संसार को ठग लिया है। मोह की ठग–बूटी ने मुझे भी ठग लिया है और सारे संसार में इसी का ही व्यवहार चल रहा है ॥ १ ॥ हे मेरे प्रियतम, तेरे बिना मेरा अन्य कोई नहीं है। मुझे तेरे सिवाय अन्य कोई भाता नहीं और तेरे साथ प्यार ही मुझे सुख देता है ॥ १ ॥ रहाउ॥ हे मन, प्रभु नाम में लीन होकर गुणानुवाद कर। शब्द–गुरु के माध्यम से ही तुझे सन्तुष्टि प्राप्त होगी। तू झूठे मोह में न पड़ क्योंकि जो कुछ भी दिखाई देता है वह चलायमान है। यहाँ तो जीव एक यात्री के रूप में आया है तू उनको देख जो तेरे देखते–देखते चले जा रहे है ॥ २ ॥ कथन कहने और करने वाले तो बहुत हैं परन्तु गुरु के बिना कुछ भी बूझा नहीं जा सकता। परमात्मा के नाम का गुणानुवाद का बड़प्पन यदि मिल जाए और यदि मन सत्य में लीन हो जाए तो यहाँ–वहाँ सम्मान प्राप्त होता है। जो तुझे भाते हैं वे ही भले हैं तथा खरा या खोटा यहाँ कोई भी नहीं है ॥ ३ ॥ गुरु की शरण में ही विकारों से मुक्ति प्राप्त होती है परन्तु मन के पीछे चलने वाला अर्थात मनमुख हमेशा खोटी रास–पूंजी को ही जोड़ता है। परमात्मा की रची हुई इस अष्टधातु मानव देह को यदि शब्द के माध्यम से सही रूप प्रदान किया जाए तो यह काया खिल उठती है। फिर वह परख करने वाला परमात्मा स्वयं ही उसको परख लेता है और अपने खज़ाने में डाल लेता है ॥ ४ ॥ हे प्रभु, मैंने सारा कुछ ठोक–बजा कर देख लिया है परन्तु मुझे तेरे जैसा अन्य कोई नहीं दिखा। केवल कथन करने मात्र से तेरे गुणों की थाह नहीं मिलती; सत्य में स्थित होने पर ही जीव को सम्मान प्राप्त होता है। गुरमति में टिक कर ही तेरा गुणानुवाद किया जाता है पर तेरे बराबर का ढूँढने के लिए कोई बोल नहीं बोला जा सकता ॥ ५ ॥ जिस व्यक्ति को नाम नहीं भाता उस व्यक्ति के अन्दर अहंकार एवं वाद–विवाद ही भरा रहता है। गुरु के बिना ज्ञान प्राप्त नहीं होता और परमात्मा के बिना बाकी सारे स्वाद विष के समान है। बिना गुरु के कुछ भी हाथ नहीं आता परन्तु माया का स्वाद बिल्कुल ही फीका है ॥ ६ ॥ जीव आशाओं में बँधा हुआ ही जन्म लेता है और आशाओं में लीन रहकर ही भक्ष्य, अभक्ष्य खाता रहता है। आशाओं के बन्धन में बंधा हुआ ही वह यहाँ से चला जाता है और उसे अपने मुँह पर चोटें सहन करनी पड़ती हैं। अवगुणों में बँधा हुआ ही वह मारा जाता है और उसका छुटकारा केवल गुरमति में रहकर और नाम के द्वारा ही हो सकता है

७ ॥ सरबे थाई एकु तूं जिउ भावै तिउ राखु ॥ गुरमति साचा मनि वसै नामु भलो पति साखु ॥ हउमै रोगु गवाईऐ सबदि सचै सचु भाखु ॥ ८ ॥ आकासी पातालि तूं त्रिभवणि रहिआ समाइ ॥ आपे भगती भाउ तूं आपे मिलहि मिलाइ ॥ नानक नामु न वीसरै जिउ भावै तिवै रजाइ ॥ ९ ॥ १३ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ राम नामि मनु बेधिआ अवरु कि करी वीचारु ॥ सबद सुरति सुखु ऊपजै प्रभ रातउ सुख सारु ॥ जिउ भावै तिउ राखु तूं मै हरि नामु अधारु ॥ १ ॥ मन रे साची खसम रजाइ ॥ जिनि तनु मनु साजि सीगारिआ तिसु सेती लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तनु बैसंतरि होमीऐ इक रती तोलि कटाइ ॥ तनु मनु समधा जे करी अनदिनु अगनि जलाइ ॥ हरि नामै तुलि न पुजई जे लख कोटी करम कमाइ ॥ २ ॥ अरध सरीरु कटाईऐ सिरि करवतु धराइ ॥ तनु हैमंचलि गालीऐ भी मन ते रोगु न जाइ ॥ हरि नामै तुलि न पुजई सभ डिठी ठोकि वजाइ ॥ ३ ॥ कंचन के कोट दतु करी बहु हैवर गैवर दानु ॥ भूमि दानु गऊआ घणी भी अंतरि गरबु गुमानु ॥ राम नामि मनु बेधिआ गुरि दीआ सचु दानु ॥ ४ ॥ मनहठ बुधी केतीआ केते बेद बीचार ॥ केते बंधन जीअ के गुरमुखि मोख दुआर ॥ सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचारु ॥ ५ ॥ सभु को ऊचा आखीऐ नीचु न दीसै कोइ ॥ इकनै भांडे साजिऐ इकु चानणु तिहु लोइ ॥ करमि मिलै सचु पाईऐ धुरि बखस न मेटै कोइ ॥ ६ ॥ साधु मिलै साधू जनै संतोखु वसै गुर भाइ ॥ अकथ कथा वीचारीऐ जे सतिगुर माहि समाइ ॥ पी अंम्रितु संतोखिआ दरगहि पैधा जाइ ॥ ७ ॥ घटि घटि वाजै किंगुरी अनदिनु सबदि सुभाइ ॥ विरले कउ सोझी पई गुरमुखि मनु समझाइ ॥ नानक नामु न वीसरै छूटै सबदु कमाइ ॥ ८ ॥ १४ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ चिते दिसहि धउलहर बगे बंक दुआर ॥ करि मन खुसी उसारिआ दूजै हेति पिआरि ॥ अंदरु खाली प्रेम बिनु ढहि ढेरी तनु छारु ॥ १ ॥ भाई रे तनु धनु साथि न होइ ॥ राम नामु धनु निरमलो गुरु दाति करे प्रभु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम नामु धनु निरमलो जे देवै देवणहारु ॥ आगै पूछ न होवई जिसु बेली गुरु करतारु ॥ आपि छडाए छुटीऐ

॥ ७ ॥ हे प्रभु, तू सर्वत्र व्याप्त है, जैसे भी तुझे अच्छा लगे मेरी रक्षा कर । गुरमति के अन्तर्गत ही सच्चा प्रभु मन में बसता है और दरअसल प्रभु नाम ही सम्मान और व्यक्ति की साख है । सत्य शब्द के माध्यम से ही अहंकार का रोग समाप्त होता है ॥ ८ ॥ हे प्रभु, तू आकाशों–पातालों और तीनों लोकों में समाहित है । तू स्वयं ही भक्ति और प्रेम है, तू स्वयं ही मिलता और मिला लेता है । हे नानक, मुझे कभी भी तेरा नाम विस्मृत ना हो; तू जैसे चाहे मैं वैसे ही तेरी रज़ा में प्रसन्न हूँ ॥ ९ ॥ १३ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ राम नाम ने मेरे मन को बाँध लिया है । इसलिए अब भला और कोई विचार क्या किया जाए । शब्द में सुरति लगाने से सुख उत्पन्न होता है और प्रभु में लीन होकर श्रेष्ठ सुख का अनुभव होता है । हे प्रभु, मुझे केवल हरि नाम का ही आश्रय है, तू जैसे भी हो मेरी रक्षा कर । हे मन, उस मालिक प्रभु की रज़ा ही सच्ची है । जिस प्रभु ने जीव के तन–मन को सजाया, सँवारा है मन को उसी में लवलीन रहना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि शरीर को छोटा–छोटा काटकर अग्नि में होम किया जाए, तन–मन को भी समिधा के रूप में प्रयुक्त करके हर दिन अग्नि प्रज्जवलित की जाए, तब भी ऐसे करोड़ो किए हुए कर्मकाण्ड परमात्मा के नाम के बराबर नहीं पहुँच सकते ॥ २ ॥ सिर पर आरा चलवाकर यदि शरीर को दो टुकड़ों में कटवा लिया जाए; तन को बर्फ के पहाड़ों में यदि गला भी दिया जाए तो भी मन से विकार दूर नहीं होते । मैंने सब ठोक–बजाकर देख लिया है कि ये हरि–नाम की बराबरी नहीं कर सकते ॥ ३ ॥ सोने के किले एवं बहुत से हाथी–घोड़े भी दान किए जाएँ; भूमि–दान और अनेकों गोदान भी करने पर मन में दरअसल अभिमान ही बढ़ता है । मन को राम–नाम में लीन करना ही सच्चा दान है जो गुरु की कृपा से ही संभव होता है ॥ ४ ॥ मन से हठपूर्वक अनेकों चतुराईयां की जाती है और अनेकों ही प्रकार से ज्ञान का चिन्तन किया जाता है । इस जीव के लिए अनेकों ही बन्धन हैं परन्तु गुरमुख बनकर ही इनसे मुक्ति का द्वार दिखाई देता है । सब कुछ सत्य से नीचे है; यदि कोई सत्य से ऊँचा है तो वह सत्याचरण ही है ॥ ५ ॥ सबको ऊँचा ही कहना चाहिए क्योंकि वास्वत में नीच तो कोई भी दिखाई नहीं पड़ता । तीनों लोको में उस एक प्रभु का ही प्रकाश है क्योंकि उस एक प्रभु ने ही सभी घट–रूप जीवों की सृजना की है । उस प्रभु की कृपा से ही सत्य प्राप्त होता है और जिस पर परमात्मा की कृपा होती है उसकी कृपा के प्रभाव को कोई मिटा नहीं सकता॥६॥ साधु व्यक्ति, साधु जनों में जब बैठता है तो गुरु के प्रेम के फलस्वरूप उसके हृदय में सन्तोष का निवास हो जाता है । यदि व्यक्ति सद्‌गुरु के उपदेश में लीन रहे तो प्रभु की अकथ कथा का विचार उसके मन में चल पड़ता है । वह नाम रूपी अमृत पीकर संतुष्ट हो जाता है और परमात्मा के द्वार में सम्मानपूर्वक प्रविष्ट कर लिया जाता है ॥ ४ ॥ घट–घट में दिन–रात शब्द के प्रकाश की स्वाभाविक वीणा बज रही है । यह किसी बिरले को ही सूझता है तथा गुरमुख यह रहस्य अपने मन को समझा लेता है । हे नानक, गुरमुख को प्रभु–नाम कभी भी विस्मृत नहीं होता और वह शब्द–गुरु के अनुसार आचरण करता हुआ मुक्त हो जाता है ॥ ८ ॥ १४ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ चित्रकारी किए हुए बड़े–बड़े महल और उनके द्वार भी उज्जवल एवं सुन्दर है । मन में खुशी भरकर इनका निर्माण किया गया और साथ ही साथ द्वैत भाव से मोह बढ़ाया गया । प्रभु प्रेम से विहीन यह सब गिरकर ढेर हो जाएँगे और ऐसे ही इसमें बसने वाला जीव भी राख बन जाता है ॥ १ ॥ हे भाई, तन और धन कभी भी साथ नहीं चलता । राम–नाम का धन ही निर्मल धन है जिसे प्रभु रूपी गुरु जीव को दान देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम–नाम का धन निर्मल है यदि वह देने वाला परमात्मा इसे जीव को दे दे । कर्ता रूपी गुरु जिसका मालिक है उसकी परलोक में कोई जाँच–पड़ताल नहीं होती । वह स्वयं जिसे मुक्त करता है वही छूटता है और वह परमात्मा ही क्षमा कर

आपे बखसणहारु ॥ २ ॥ मनमुखु जाणै आपणे धीआ पूत संजोगु ॥ नारी देखि विगासीअहि नाले हरखु सु सोगु ॥ गुरमुखि सबदि रंगावले अहिनिसि हरि रसु भोगु ॥ ३ ॥ चितु चलै वितु जावणो साकत डोलि डोलाइ ॥ बाहरि ढूंढि विगुचीऐ घर महि वसतु सुथाइ ॥ मनमुखि हउमै करि मुसी गुरमुखि पलै पाइ ॥ ४ ॥ साकत निरगुणिआरिआ आपणा मूलु पछाणु ॥ रकतु बिंदु का इहु तनो अगनी पासि पिराणु ॥ पवणै कै वसि देहुरी मसतकि सचु नीसाणु ॥ ५ ॥ बहुता जीवणु मंगीऐ मुआ न लोड़ै कोइ ॥ सुख जीवणु तिसु आखीऐ जिसु गुरमुखि वसिआ सोइ ॥ नाम विहूणे किआ गणी जिसु हरि गुर दरसु न होइ ॥ ६ ॥ जिउ सुपनै निसि भुलीऐ जब लगि निद्रा होइ ॥ इउ सरपनि कै वसि जीअड़ा अंतरि हउमै दोइ ॥ गुरमति होइ वीचारीऐ सुपना इहु जगु लोइ ॥ ७ ॥ अगनि मरै जलु पाईऐ जिउ बारिक दूधै माइ ॥ बिनु जल कमल सु ना थीऐ बिनु जल मीनु मराइ ॥ नानक गुरमुखि हरि रसि मिलै जीवा हरि गुण गाइ ॥ ८ ॥ १५ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ डूंगरु देखि डरावणो पेईअड़ै डरीआसु ॥ ऊचउ परबतु गाखड़ो ना पउड़ी तितु तासु ॥ गुरमुखि अंतरि जाणिआ गुरि मेली तरीआसु ॥ १ ॥ भाई रे भवजलु बिखमु डरांउ ॥ पूरा सतिगुरु रसि मिलै गुरु तारे हरि नाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चला चला जे करी जाणा चलणहारु ॥ जो आइआ सो चलसी अमरु सु गुरु करतारु ॥ भी सचा सालाहणा सचै थानि पिआरु ॥ २ ॥ दर घर महला सोहणे पके कोट हजार ॥ हसती घोड़े पाखरे लसकर लख अपार ॥ किस ही नालि न चलिआ खपि खपि मुए असार ॥ ३ ॥ सुइना रुपा संचीऐ मालु जालु जंजालु ॥ सभ जग महि दोही फेरीऐ बिनु नावै सिरि कालु ॥ पिंडु पड़ै जीउ खेलसी बदफैली किआ हालु ॥ ४ ॥ पुता देखि विगसीऐ नारी सेज भतार ॥ चोआ चंदनु लाईऐ कापड़ु रूपु सीगारु ॥ खेहू खेह रलाईऐ छोडि चलै घर बारु ॥ ५ ॥ महर मलूक कहाईऐ राजा राउ कि खानु ॥ चउधरी राउ सदाईऐ जलि बलीऐ अभिमान ॥ मनमुखि नामु विसारिआ जिउ डवि दधा कानु ॥ ६ ॥ हउमै करि करि जाइसी जो आइआ

देने वाला है ॥ २ ॥ पुत्र–पुत्रियाँ संयोग वश ही मिल जाते हैं परन्तु मनमुख व्यक्ति इन्हें अपना ही मान लेता है। स्त्री को देखकर भी व्यक्ति प्रसन्न हो उठता है परन्तु हर्ष के साथ ही साथ शोककुल भी हो उठता है कि कहीं यह पुत्र, पुत्री, स्त्री आदि छोड़कर न चल दें। गुरमुख व्यक्ति शब्द के माध्यम से ही आनन्द लेते हैं और रात–दिन हरि–रस का प्रेमपूर्वक पान करते हैं ॥ ३ ॥ जब धन जाने लगता है तो दुर्जन व्यक्ति डोल जाता है उसका चित्त चलायमान हो उठता है। व्यक्ति परमात्मा रूपी परम–तत्त्व को बाहर ढूँढ–ढूँढ कर ही भटकता रहता है जब कि वह वस्तु दरअसल उसके अन्दर ही विद्यमान रहती है। मनमुख व्यक्ति अपने अहंकार के कारण लुट जाता है और गुरमुख व्यक्ति के पल्ले सब कुछ आ पड़ता है ॥ ४ ॥ हे दुर्जन एवं गुण–विहीन जीव, तू अपने मूल को पहचान। रक्त और बिन्दु का यह बना हुआ तन अन्ततः आग में ही जलना है। प्रत्येक जीव के माथे पर यह सत्य रूप से लिखित है कि यह शरीर पवन रूपी श्वासों के अधीन ही है अर्थात इसके श्वास् सीमित संख्या में ही है ॥ ५ ॥ प्रत्येक जीव अधिक से अधिक जीवन माँगता है; मरना कोई नहीं चाहता। सुखी जीवन केवल उसी को कहा जा सकता है जिसमें गुरमुख होकर प्रभु नाम आ बसा है। नाम–विहीन लोगो को किस गिनती में रखा जाए जिन्हें कभी हरि–रूपी गुरु का दर्शन ही नहीं हुआ है ॥ ६ ॥ जैसे स्वप्न में कई चीजों का भ्रम हो जाता है परन्तु यह भ्रम केवल नींद के समय तक ही बना रहता है, वैसे ही जब तक जीव माया के वश में बना रहता है इसके अन्दर अहंकार एवं द्वैतभाव भी बना रहता है। गुरमति में चलकर ही यह विचार बनता है कि यह सारा संसार एक स्वप्न की तरह ही देखा जाना चाहिए ॥ ७ ॥ जैसे बच्चे की भूख माँ का दूध पीने से शान्त होती है इसी प्रकार तृष्णा रूपी अग्नि प्रभु–नाम रूपी जल से समाप्त होती है। पानी के बिना कमल नहीं रह सकता; पानी के बिना जैसे मछली मर जाती है वैसे ही हे नानक, गुरमुख रूप में मुझे हरि–नाम रूपी जल मिलता रहे और प्रभु गुणानुवाद करते हुए ही मैं आध्यात्मिक रूप से जीवित बना रहूँ ॥ ८ ॥ १५ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ आध्यात्मिक जीवन के शिखर को एक ऊँचे पहाड़ की तरह देख कर जीव–स्त्री को डर लगता है और मायके अर्थात् इस लोक में विचरण करते हुए भय बना रहता है। आध्यात्मिक जीवन एक दुर्गम ऊँचा पर्वत है जिस तक पहुँचने के लिए कोई सीढ़ी भी नहीं है; परन्तु जब गुरमुख बनकर आध्यात्मिक जीवन के शिखर परमात्मा को अन्तर्मन में ही स्थित जान लिया जाता है तो गुरु के माध्यम से प्रभु से मिली जीव–स्त्री इस संसार सागर को भी पार कर जाती है ॥ १ ॥ हे भाई, संसार–सागर अत्यन्त विषम एवं डरावना है। जिसे पूर्ण सदुगरु प्रेमपूर्वक मिल जाता है तो हरि–नाम के माध्यम से उसे गुरु संसार–सागर से पार कर देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि मैं स्मरण रखूँ कि आवश्यक रूप से इस संसार से चले जाना है; जो भी इस संसार में आया है उसने जाना है और गुरु रूपी परमात्मा ही अमर है तो फिर उस सत्य स्वरूप परमात्मा का गुणानुवाद करना चाहिए और उसके सच्चे स्थान अथवा सद्संगत के साथ प्यार बनाना चाहिए ॥ २ ॥ सुन्दर दरवाजे, सुन्दर महल, हजारों मज़बूत किले, हाथी, शीघ्रगामी घोड़े और लाखों की संख्या वाली अपार सेना किसी के भी साथ नहीं जा सके। मूर्ख व्यक्ति व्यर्थ ही इन सब के लिए जीवन भर मरते रहे ॥ ३ ॥ यदि सोना–चाँदी इक्ट्ठा करते रहें को यह सारा धन–माल जंजाल बनता जाता है। यदि सारे संसार में अपनी शक्ति की दुहाई एवं घोषणाएं करवा दी जाएँ फिर भी प्रभु–नाम से विहीन बने रहने पर सिर पर मौत का भय हमेशा बना रहता है। जब जीवन का खेल खेल लिया जाता है तो शरीर यहीं गिर जाता है। उस समय दुष्कर्म करने वालों का हाल बुरा ही होता है ॥ ४ ॥ पिता अपने पुत्रों को देखकर खुश होता है और पति अपनी शय्या पर स्त्री को देखकर खुश होता है। इस शरीर को इत्र–चन्दन आदि लगाया जाता है और सुन्दर गहनों कपड़ों आदि से श्रंगार किया जाता है। परन्तु अन्ततः शरीर मिट्टी होकर मिट्टी में मिल जाता है और अभिमान करने वाला जीव घर–बार छोड़कर चल पड़ता है ॥ ५ ॥ व्यक्ति अपने आप को सरदार, सम्राट, राजा राव, खान, चौधरी इत्यादि के रूप में बुलाया जाना चाहता है और इसी अभिमान में जला–भुना रहता है। मनमुख व्यक्ति ने प्रभु–नाम विस्मृत कर दिया और वह ऐसे जला हुआ है जैसे जंगल की आग में जला हुआ सरकंडा है ॥ ६ ॥ जो भी संसार में आया है वह अपने अहंकार का बखान करता हुआ यहाँ से

जग माहि ॥ सभु जगु काजल कोठड़ी तनु मनु देह सुआहि ॥ गुरि राखे से निरमले सबदि निवारी भाहि ॥ ७ ॥ नानक तरीऐ सचि नामि सिरि साहा पातिसाहु ॥ मै हरि नामु न वीसरै हरि नामु रतनु वेसाहु ॥ मनमुख भउजलि पचि मुए गुरमुखि तरे अथाहु ॥ ८ ॥ १६ ॥ सिरीरागु महला १ घरु २ ॥ मुकामु करि घरि बैसणा नित चलणै की धोख ॥ मुकामु ता परु जाणीऐ जा रहै निहचलु लोक ॥ १ ॥ दुनीआ कैसि मुकामे ॥ करि सिदकु करणी खरचु बाधहु लागि रहु नामे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोगी त आसणु करि बहै मुला बहै मुकामि ॥ पंडित वखाणहि पोथीआ सिध बहहि देव सथानि ॥ २ ॥ सुर सिध गण गंधरब मुनि जन सेख पीर सलार ॥ दरि कूच कूचा करि गए अवरे भि चलणहार ॥ ३ ॥ सुलतान खान मलूक उमरे गए करि करि कूचु ॥ घड़ी मुहति कि चलणा दिल समझु तूं भि पहूचु ॥ ४ ॥ सबदाह माहि वखाणीऐ विरला त बूझै कोइ ॥ नानकु वखाणै बेनती जलि थलि महीअलि सोइ ॥ ५ ॥ अलाहु अलखु अगंमु कादरु करणहारु करीमु ॥ सभ दुनी आवण जावणी मुकामु एकु रहीमु ॥ ६ ॥ मुकामु तिस नो आखीऐ जिसु सिसि न होवी लेखु ॥ असमानु धरती चलसी मुकामु ओही एकु ॥ ७ ॥ दिन रवि चलै निसि ससि चलै तारिका लख पलोइ ॥ मुकामु ओही एकु है नानका सचु बुगोइ ॥ ८ ॥ १७ ॥ महले पहिले सतारह असटपदीआ ॥

सिरीरागु महला ३ घरु १ असटपदीआ   १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

गुरमुखि क्रिपा करे भगति कीजै बिनु गुर भगति न होइ ॥ आपै आपु मिलाए बुझै ता निरमलु होवै कोइ ॥ हरि जीउ सचा सची बाणी सबदि मिलावा होइ ॥ १ ॥ भाई रे भगतिहीणु काहे जगि आइआ ॥ पूरे गुर की सेव न कीनी बिरथा जनमु गवाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे हरि जगजीवनु दाता आपे बखसि मिलाए ॥ जीअ जंत ए किआ वेचारे किआ को आखि सुणाए ॥ गुरमुखि आपे दे वडिआई आपे सेव कराए ॥ २ ॥ देखि कुटंबु मोहि लोभाणा चलदिआ

जाता है । यह सारा संसार काजल की कोठड़ी के समान है और इसके मोह में फंसने वाले का तन, मन एवं शरीर राख हो जाते हैं । जिन्हें गुरु ने बचा लिया है वे निर्मल व्यक्ति हैं और उनकी तृष्णा रूपी अग्नि शब्द के माध्यम से निवृत्त हो गई है ॥ ७ ॥ हे नानक, सत्य-नाम के माध्यम से ही संसार-सागर से तैरा जाता है क्योंकि परमात्मा का नाम ही सम्राटों का सम्राट है । मुझे कभी भी परमात्मा का नाम विस्मृत न हो क्योंकि हरि-नाम रूपी रत्न का ही मुझे भरोसा है । मनमुख व्यक्ति इस संसार-सागर में ख्वार होकर मर जाते हैं और गुरमुख व्यक्ति इस अथाह सागर को तैरकर पार हो जाते हैं ॥ ८ ॥ १६ ॥ सिरी रागु महला १ ॥ घरु २ ॥ दुनियाँ को पक्का ठिकाना समझकर घर में बैठ जाना भी संभव नहीं है क्योंकि यहाँ से चले जाने की चिन्ता तो सदैव लगी ही रहती है । संसार को पक्का ठिकाना तो तब जाना जाए जब यह सदा स्थिर बना रहने वाला लोक हो ॥ १ ॥ हे भाई, यह दुनियाँ कैसे टिके रहने का स्थान हो सकता है, क्योंकि यहाँ से तो जाना ही है । इसलिए सन्तोष को धारण करके अपने सत्याचरण का खर्चा पल्ले बाँध लो और सदैव प्रभु नाम में लगे रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ योगी आसन पर बैठता है और फकीर मुल्ला तकिए में डेरा लगाता है । पंडित धर्म-पुस्तकों की व्याख्या लोगों को सुनाते है और चमत्कारी सिद्ध पुरुष शिव-मन्दिर आदि में डेरा लगाते हैं ॥ २ ॥ देवता, सिद्धगण, गन्धर्व, मुनिजन, शेख, पीर एवं अनेकों सरदार अपनी-अपनी बारी से सभी यहाँ से कूच कर गए और बाकी के बचे हुए भी यहाँ से जाने वाले हैं ॥ ३ ॥ बादशाह, खान, राजा, अमीर, वज़ीर अपने-अपने स्थानों से कूच कर गए हैं । घड़ी दो घड़ी में हर एक ने यहाँ से चले जाना है और हे जीव, तू मन में समझ ले कि तुझे भी वहीं पहुँचना है ॥ ४ ॥ शब्दों के माध्यम से उस प्रभु का कथन तो किया जाता है परन्तु कोई बिरला ही उसके रहस्य को बूझता है । नानक प्रार्थना रूप में कहता है कि यहाँ अटल रहने वाला केवल एक परमात्मा ही है जो जल-थल एवं धरती-आकाश के मध्य सर्वत्र व्याप्त है ॥ ५ ॥ एक अल्लाह ही अलक्ष्य अगम्य एवं कृपा करने वाला तथा सृजनहार है । बाकी सारी दुनिया आने जाने वाली है । केवल सदैव टिका रहने वाला वह रहम दिल एक परमात्मा ही है ॥ ६ ॥ सदा बना रहने वाला सिर्फ उस परमात्मा को ही कहा जा सकता है जिसके मस्तक पर कोई लेखा नहीं लिखा हुआ है । यह धरती आसमान सभी चले जाएंगे केवल एक परमात्मा ही सदैव रहेगा ॥ ७ ॥ दिन और सूर्य चले जाएंगे, रात और चन्द्रमा चले जाएंगे; लाखों तारागण भी अलोप हो जाएंगे । हे नानक, तू कहता रह कि केवल एक परमात्मा ही सदा स्थिर रहने वाला है ॥ ८ ॥ १७ ॥ महला १ की सत्रह अष्टपदियां ॥

सिरीरागु महला ३ ॥ घरु १ ॥ अष्टपदियां १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

गुरमुख पर प्रभु कृपा करता है तो वह भक्ति में लीन होता है । गुरु के बिना भक्ति नहीं होती । यदि गुरु व्यक्ति को अपने से मिला ले तभी उसको समझ आती है और वह निर्मल होता है । वह परमात्मा सच्चा है, उसकी वाणी सच्ची है और शब्द के माध्यम से ही उससे मिलन होता है ॥ १ ॥ हे भाई, तू भक्ति-विहीन होकर इस संसार में क्या करने आया है । पूरे गुरु की तूने सेवा नहीं की है और व्यर्थ में ही अपना जन्म गंवा लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह जगजीवन-दाता स्वयं प्रभु ही है जो कृपा करके अपने से मिला लेता है । इन बेचारे जीव-जन्तुओं के बारे में भला कोई क्या कहे और क्या सुने । गुरमुख व्यक्ति को वह स्वयं ही बड़प्पन देता है और स्वयं ही उससे सेवा करवाता है ॥ २ ॥ जीव परिवार के मोह माया में फंस जाता है परन्तु यह संसार चलते समय साथ नहीं जाता ।

नालि न जाई ॥ सतिगुरु सेवि गुण निधानु पाइआ तिस की कीम न पाई ॥ प्रभु सखा हरि जीउ मेरा अंते होइ सखाई ॥ ३ ॥ पेईअड़ै जगजीवनु दाता मनमुखि पति गवाई ॥ बिनु सतिगुर को मगु न जाणै अंधे ठउर न काई ॥ हरि सुखदाता मनि नही वसिआ अंति गइआ पछुताई ॥ ४ ॥ पेईअड़ै जगजीवनु दाता गुरमति मंनि वसाइआ ॥ अनदिनु भगति करहि दिनु राती हउमै मोहु चुकाइआ ॥ जिसु सिउ राता तैसो होवै सचे सचि समाइआ ॥ ५ ॥ आपे नदरि करे भाउ लाए गुर सबदी बीचारि ॥ सतिगुरु सेविऐ सहजु ऊपजै हउमै त्रिसना मारि ॥ हरि गुणदाता सद मनि वसै सचु रखिआ उर धारि ॥ ६ ॥ प्रभु मेरा सदा निरमला मनि निरमलि पाइआ जाइ ॥ नामु निधानु हरि मनि वसै हउमै दुखु सभु जाइ ॥ सतिगुरि सबदु सुणाइआ हउ सद बलिहारै जाउ ॥ ७ ॥ आपणै मनि चिति कहै कहाए बिनु गुर आपु न जाई ॥ हरि जीउ भगति वछलु सुखदाता करि किरपा मंनि वसाई ॥ नानक सोभा सुरति देइ प्रभु आपे गुरमुखि दे वडिआई ॥ ८ ॥ १ ॥ १८ ॥

सिरीरागु महला ३ ॥ हउमै करम कमावदे जम डंडु लगै तिन आइ ॥ जि सतिगुरु सेवनि से उबरे हरि सेती लिव लाइ ॥ १ ॥ मन रे गुरमुखि नामु धिआइ ॥ धुरि पूरबि करतै लिखिआ तिना गुरमति नामि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विणु सतिगुर परतीति न आवई नामि न लागो भाउ ॥ सुपनै सुखु न पावई दुख महि सवै समाइ ॥ २ ॥ जे हरि हरि कीचै बहुतु लोचीऐ किरतु न मेटिआ जाइ ॥ हरि का भाणा भगती मंनिआ से भगत पए दरि थाइ ॥ ३ ॥ गुरु सबदु दिड़ावै रंग सिउ बिनु किरपा लइआ न जाइ ॥ जे सउ अंम्रितु नीरीऐ भी बिखु फलु लागै धाइ ॥ ४ ॥ से जन सचे निरमले जिन सतिगुर नालि पिआरु ॥ सतिगुर का भाणा कमावदे बिखु हउमै तजि विकारु ॥ ५ ॥ मनहठि कितै उपाइ न छूटीऐ सिम्रिति सासत्र सोधहु जाइ ॥ मिलि संगति साधू उबरे गुर का सबदु कमाइ ॥ ६ ॥ हरि का नामु निधानु है जिसु अंतु न पारावारु ॥ गुरमुखि सेई सोहदे जिन किरपा करे करतारु ॥ ७ ॥ नानक दाता एकु है दूजा अउरु न कोइ ॥ गुर परसादी पाईऐ

सद्गुरु की सेवा के माध्यम से ही गुणों का ख़ज़ाना मिलता है जिसकी कीमत आंकी नहीं जा सकती । परमात्मा ही मेरा सबसे शक्तिशाली मित्र है जो अंत में मददगार होता है ॥ ३ ॥ इस संसार रूपी मायके (मां और पिता के घर) में वह परमात्मा बस रहा है जो सबका प्राण है । मनमुख व्यक्ति ने उससे मुँह मोड़कर अपना सम्मान गंवा लिया है। सद्गुरु के बिना सही रास्ता किसी को सूझता नहीं और आध्यात्मिक रूप से अन्धे व्यक्ति का कोई ठौर ठिकाना नहीं। सुख देने वाला परमात्मा जिसके मन में नहीं बसा है वह अंत में पछताता हुआ ही यहाँ से गया है ॥ ४ ॥ पिता के घर रूपी इस संसार में वह दाता प्रभु है जो इस संसार का प्राण है । गुरमति को मन में बसाकर ही जीव यहाँ दिन–रात उसकी भक्ति करता है और अपने अहंकार एवं मोह को समाप्त कर देता है । व्यक्ति जिसका ध्यान करता है उसी के जैसा हो जाता और इसी तरह सच्चे प्रभु का ध्यान करने से व्यक्ति सच में ही समाहित हो जाता है ॥ ५ ॥ शब्द–गुरु के माध्यम से विचार करते हुए वह प्रभु अपनी कृपा–दृष्टि से जीव के मन में प्रेम पैदा करता है । अहंकार एवं तृष्णा को मार कर सद्गुरु की सेवा करने से व्यक्ति में पूर्ण ज्ञान एवं स्थिरता वाला सहज भाव उत्पन्न होता है। सत्य को मन में बसा लेने से गुण देने वाला वह प्रभु सदा मन में बसा रहता है ॥ ६ ॥ सदैव निर्मल बना रहने वाला प्रभु निर्मल मन से ही पाया जा सकता है । धन–सम्पति का खजाना प्रभु–नाम जब मन में बस जाता है तो अहंकार का दुख पूर्ण रूप से समाप्त हो जाता है । जिस सद्गुरु ने शब्द–ब्रह्म का अनुभव करवा लिया है मैं सदैव उस पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ७ ॥ मन–चित्त को बार–बार समझाने पर भी गुरु के बिना अहंकार दूर नहीं होता । परमात्मा भक्त–वत्सल सुखदाता है और उसकी अपनी कृपा से ही वह मन में बस जाता है । वह प्रभु स्वयं ही यश एवं ऊँची सुरति प्रदान करता है और स्वयं ही गुरमुख व्यक्ति को बड़प्पन देता है ॥ ८ ॥ १ ॥ १८ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ जो अहंकार–युक्त होकर काम करते है उन्हें यम के डंडे की मार सहनी पड़ती है । जो परमात्मा में लवलीन होकर सद्गुरु की सेवा करते हैं केवल उन्हीं का ही उद्धार होता है ॥ १ ॥ हे मन, गुरमुख बनकर नाम को धारण कर । प्रारम्भ से ही कर्त्ता परमात्मा ने जिनके लेख लिख दिये हैं वे गुरमति धारण करते हुए नाम में लीन बने रहते हैं ॥१॥ रहाउ ॥ सद्गुरु के बिना समझ नहीं आती और नाम के साथ प्रेम नहीं बनता ॥ नाम–विहीन को स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता और वह दुख में ही सोता रहता है ॥ २ ॥ यदि हरि का सुमिरन करना भी चाहें तब भी पूर्व जन्म के कर्मों से उत्पन्न संस्कारों को मिटाया नहीं जा सकता । जिन्होंने हरि के आदेश को ही उसकी भक्ति मान लिया है उन भक्तों को प्रभु–द्वार पर स्वीकृति मिल जाती है ॥ ३ ॥ गुरु प्रेमपूर्वक शब्द–ब्रह्म को ही मन में बिठाता है परन्तु यह भी उस प्रभु की कृपा के बिना लिया नहीं जाता । उसकी कृपा के बिना अमृत रूपी जल से सींचने पर भी विष के फल ही लगते हैं ॥ ४ ॥ वही व्यक्ति सच्चे एवं निर्मल हैं जिन्हें सद्गुरु (परमात्मा) के साथ प्यार है । वे सद्गुरु के आदेश के अनुसार कार्य करते हैं और इस प्रकार अहंकार रूपी विष के विकार को छोड़ देते हैं ॥ ५ ॥ स्मृतियों एवं शास्त्रों को ध्यानपूर्वक पढ़ने से भी यही पता लगता है कि मन के हठ से किये हुए किसी भी उपाय से व्यक्ति मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता है । सद्संगत में मिलकर ही शब्द–गुरु के अनुरुप जीवन ढालकर ही व्यक्ति का उद्धार होता है ॥ ६ ॥ प्रभु–नाम वह खजाना है जो अनन्त है एवं जिसका कोई ओर–छोर नहीं । वही गुरमुख सदा शोभायमान होते हैं जिन पर प्रभु कृपा करता है ॥ ७ ॥ हे नानक, दाता प्रभु एक है दूसरा अन्य कोई नहीं है । गुरु की कृपा और अच्छे

करमि परापति होइ ॥ ८ ॥ २ ॥ १९ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ पंखी बिरखि सुहावड़ा सचु चुगै गुर भाइ ॥ हरि रसु पीवै सहजि रहै उडै न आवै जाइ ॥ निज घरि वासा पाइआ हरि हरि नामि समाइ ॥ १ ॥ मन रे गुर की कार कमाइ ॥ गुर कै भाणै जे चलहि ता अनदिनु राचहि हरि नाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंखी बिरख सुहावड़े ऊडहि चहु दिसि जाहि ॥ जेता ऊडहि दुख घणे नित दाझहि तै बिललाहि ॥ बिनु गुर महलु न जापई ना अंम्रित फल पाहि ॥ २ ॥ गुरमुखि ब्रहमु हरीआवला साचै सहजि सुभाइ ॥ साखा तीनि निवारीआ एक सबदि लिव लाइ ॥ अंम्रित फलु हरि एकु है आपे देइ खवाइ ॥ ३ ॥ मनमुख ऊभे सुकि गए ना फलु तिंना छाउ ॥ तिंना पासि न बैसीऐ ओना घरु न गिराउ ॥ कटीअहि तै नित जालीअहि ओना सबदु न नाउ ॥ ४ ॥ हुकमे करम कमावणे पइऐ किरति फिराउ ॥ हुकमे दरसनु देखणा जह भेजहि तह जाउ ॥ हुकमे हरि हरि मनि वसै हुकमे सचि समाउ ॥ ५ ॥ हुकमु न जाणहि बपुड़े भूले फिरहि गवार ॥ मनहठि करम कमावदे नित नित होहि खुआरु ॥ अंतरि सांति न आवई ना सचि लगै पिआरु ॥ ६ ॥ गुरमुखीआ मुह सोहणे गुर कै हेति पिआरि ॥ सची भगती सचि रते दरि सचै सचिआर ॥ आए से परवाणु है सभ कुल का करहि उधारु ॥ ७ ॥ सभ नदरी करम कमावदे नदरी बाहरि न कोइ ॥ जैसी नदरि करि देखै सचा तैसा ही को होइ ॥ नानक नामि वडाईआ करमि परापति होइ ॥ ८ ॥ ३ ॥ २० ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ गुरमुखि नामु धिआईऐ मनमुखि बूझ न पाइ ॥ गुरमुखि सदा मुख ऊजले हरि वसिआ मनि आइ ॥ सहजे ही सुखु पाईऐ सहजे रहै समाइ ॥ १ ॥ भाई रे दासनि दासा होइ ॥ गुर की सेवा गुर भगति है विरला पाए कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सदा सुहागु सुहागणी जे चलहि सतिगुर भाइ ॥ सदा पिरु निहचलु पाईऐ ना ओहु मरै न जाइ ॥ सबदि मिली ना वीछुड़ै पिर कै अंकि समाइ ॥ २ ॥ हरि निरमलु अति ऊजला बिनु गुर पाइआ न जाइ ॥ पाठु पड़ै ना बूझई भेखी भरमि भुलाइ ॥ गुरमती हरि सदा पाइआ रसना हरि रसु समाइ ॥ ३ ॥ माइआ मोहु चुकाइआ

कर्मों के द्वारा वह प्रभु प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ २ ॥ १९ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ जो जीव–पक्षी इस शरीर रूपी वृक्ष में रहकर गुरु के प्रेम के माध्यम से सच्चे प्रभु के नाम का दाना चुगता है वह सुन्दर जीवन वाला हो जाता है। वह परमात्मा के नाम का रस पीता है, सहज अवस्था में स्थिर रहता है और इधर–उधर भटकता नहीं है। उसे सदैव अपने वास्तविक घर अर्थात् प्रभु–चरणों में निवास मिला रहता है और वह सदा प्रभु–नाम में लीन बना रहता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, गुरु के बताए हुए जीवन–मार्ग पर चल ! यदि तू गुरु के आदेश का पालन करेगा तो परमात्मा के नाम में लीन बना रहेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जीव रूपी पक्षी शरीर रूपी वृक्षों पर बैठे सुन्दर लगते हैं और इधर–उधर उड़ते–फिरते हैं वे चारों दिशाओं में भटकते अवश्य है परन्तु जितना ही दाना ढूँढने के लिए अधिक उड़ते हैं उतना ही अधिक दुख सहारते हैं और खीझ में भरकर प्रलाप करते है। गुरु की शरण के बिना उस परमात्मा का घर नहीं मिलता और न ही अमृत–रूपी फल प्राप्त होता है ॥ २ ॥ गुरमुख व्यक्ति ब्रह्म रूप होकर हरा–भरा बना रहता है और उसका स्वभाव सहज सत्य रूप हो जाता है। उसने एक शब्द–गुरु में ही लौ लगाकर त्रिगुणात्मक माया की तीनों शाखाओं को अपने से दूर कर दिया है। ऐसे वृक्ष को केवल नाम रूपी अमृत फल ही लगता है और वह प्रभु ही कृपा करके उसे यह फल चखा देता है ॥ ३ ॥ मनमुख व्यक्ति खड़े हुए उस सूखे वृक्ष की तरह है जिसे न तो फल लगता है और न ही उसकी छाया होती है। ऐसे व्यक्तियों के तो पास भी नहीं बैठना चाहिए क्योंकि न तो उनका कोई घर होता है और न ही कोई गाँव। ऐसे व्यक्ति तिल–तिल कटते एवं जलते रहते हैं क्योंकि न उनके पास शब्द–गुरु है और न ही परमात्मा का नाम है ॥ ४ ॥ प्रभु के हुकुम में ही जीव कर्म करते हैं और कर्मों के कारण ही भटकते फिरते हैं। हे प्रभु ! तेरे हुकुम के अन्तर्गत ही कई जीवों को तेरा दर्शन हो जाता है और जिधर तू उन्हें भेजता है वहीं उन्हें जाना होता है। 'हुकुम' में ही वह प्रभु मन में बसता है और प्रभु–हुकुम के अन्तर्गत ही जीव सत्य में समाहित होता है ॥ ५ ॥ जो मूर्ख प्रभु के हुकुम को नहीं समझते वे बेचारे अज्ञानियों की तरह भूलते भटकते रहते हैं। वे केवल अपने मन के हठ को पूरा करने के लिए ही कर्म करते है और सदा ख्वार होते रहते हैं। उनका अन्तर्मन कभी शान्त नहीं होता और न ही उनका प्रेम सत्य से लगता है ॥ ६ ॥ गुरमुखों के मुख गुरु से प्रेम करने के फलस्वरूप सदैव सुन्दर बने रहते है। वे सदैव सच्ची भक्ति के माध्यम से सत्य में लीन बने रहते हैं और सत्याचरण वाले होकर उस सत्य–प्रभु के द्वार पर ठिकाना पाते हैं। ऐसे व्यक्तियों का संसार में आना स्वीकृत माना जाता है और वे अपने साथ अपने कुल का भी उद्धार करने वाले बन जाते है ॥ ७ ॥ सब उस प्रभु की दृष्टि के नीचे ही कर्म करते हैं और उसकी दृष्टि से ओझल कुछ भी नहीं है। वह सत्य–प्रभु जिस तरह की नज़र से जिसको भी देखता है वह जीव वैसा ही हो जाता है। हे नानक, उसके नाम में ही सब बड़प्पन है और उसका नाम उसकी कृपा से ही प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ ३ ॥ २० ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ गुरमुख बनकर प्रभु नाम की आराधना होती है, मनमुख बनकर उसको बूझा नहीं जा सकता। हरि को मन में बसा लेने से गुरमुखों के मुख सदैव उज्जवल बने रहते है। सहजभाव में ही सुख मिलता है और व्यक्ति सहज में लीन बना रहता है ॥ १ ॥ हे भाई, तू प्रभु के दासों का भी दास बना रह। गुरु की सेवा ही गुरु की भक्ति है जिसे कोई बिरला ही प्राप्त करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि परमात्मा के प्रेम में ही चला जाए तो इस जीव रूपी स्त्री का सुहाग (प्रसन्नता) सदैव बना रहता है। उसे वह पति प्रभु मिल जाता है जो सदैव स्थित है, कभी मरता नहीं और न ही कभी जन्म लेता है। शब्द–गुरु के माध्यम से मिली हुई यह जीव–स्त्री अपने प्रभु से कभी भी नहीं बिछुड़ती और सदा प्रियतम प्रभु के अंक में बनी रहती है ॥ २ ॥ हरि अत्यन्त उज्जवल एवं निर्मल है परन्तु गुरु के बिना उसे पाया नहीं जा सकता है। धार्मिक पुस्तकों के पाठ रूपी कर्मकाण्ड से भी उसे बूझा नहीं जा सकता और ठग लोग स्वयं भ्रमों में पड़े हुए भूले रहते है। गुरमति में चलने से वह नित्य–प्रभु प्राप्त होता है और मनुष्य की जीभ पर हरि–रस का स्वाद बना रहता है ॥ ३ ॥ गुरमति के माध्यम

गुरमती सहजि सुभाइ ॥ बिनु सबदै जगु दुखीआ फिरै मनमुखा नो गई खाइ ॥ सबदे नामु धिआईऐ सबदे सचि समाइ ॥ ४ ॥ माइआ भूले सिध फिरहि समाधि न लगै सुभाइ ॥ तीने लोअ विआपत है अधिक रही लपटाइ ॥ बिनु गुर मुकति न पाईऐ ना दुबिधा माइआ जाइ ॥ ५ ॥ माइआ किस नो आखीऐ किआ माइआ करम कमाइ ॥ दुखि सुखि एहु जीउ बधु है हउमै करम कमाइ ॥ बिनु सबदै भरमु न चूकई ना विचहु हउमै जाइ ॥ ६ ॥ बिनु प्रीती भगति न होवई बिनु सबदै थाइ न पाइ ॥ सबदे हउमै मारीऐ माइआ का भ्रमु जाइ ॥ नामु पदारथु पाईऐ गुरमुखि सहजि सुभाइ ॥ ७ ॥ बिनु गुर गुण न जापनी बिनु गुण भगति न होइ ॥ भगति वछलु हरि मनि वसिआ सहजि मिलिआ प्रभु सोइ ॥ नानक सबदे हरि सालाहीऐ करमि परापति होइ ॥ ८ ॥ ४ ॥ २१ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ माइआ मोहु मेरै प्रभि कीना आपे भरमि भुलाए ॥ मनमुखि करम करहि नही बूझहि बिरथा जनमु गवाए ॥ गुरबाणी इसु जग महि चानणु करमि वसै मनि आए ॥ १ ॥ मन रे नामु जपहु सुखु होइ ॥ गुरु पूरा सालाहीऐ सहजि मिलै प्रभु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भरमु गइआ भउ भागिआ हरि चरणी चितु लाइ ॥ गुरमुखि सबदु कमाईऐ हरि वसै मनि आइ ॥ घरि महलि सचि समाईऐ जमकालु न सकै खाइ ॥ २ ॥ नामा छीबा कबीरु जोुलाहा पूरे गुर ते गति पाई ॥ ब्रहम के बेते सबदु पछाणहि हउमै जाति गवाई ॥ सुरि नर तिन की बाणी गावहि कोइ न मेटै भाई ॥ ३ ॥ दैत पुतु करम धरम किछु संजमु न पड़ै दूजा भाउ न जाणै ॥ सतिगुरु भेटिऐ निरमलु होआ अनदिनु नामु वखाणै ॥ एको पड़ै एको नाउ बूझै दूजा अवरु न जाणै ॥ ४ ॥ खटु दरसन जोगी संनिआसी बिनु गुर भरमि भुलाए ॥ सतिगुरु सेवहि ता गति मिति पावहि हरि जीउ मंनि वसाए ॥ सची बाणी सिउ चितु लागै आवणु जाणु रहाए ॥ ५ ॥ पंडित पड़ि पड़ि वादु वखाणहि बिनु गुर भरमि भुलाए ॥ लख चउरासीह फेरु पइआ बिनु सबदै मुकति न पाए ॥ जा नाउ चेतै ता गति पाए जा सतिगुरु मेलि मिलाए ॥ ६ ॥ सतसंगति महि

से ही सहज स्वाभाविक रूप से माया और मोह समाप्त हो जाता है । शब्द–ब्रह्म के बिना सारा जगत दुखी होकर भटकता है और मनुमुखों को माया ने खा लिया है । शब्द के माध्यम से ही नाम की आराधना होती है और शब्द–गुरु के माध्यम से ही सत्य में लीन हुआ जाता है ॥ ४ ॥ माया के प्रपंच में ही सिद्ध एवं योगी भटकते फिरते हैं परन्तु उनको स्वाभाविक समाधि प्राप्त नहीं होती । यह माया तीनों लोको में व्याप्त है और सबके साथ अत्याधिक रूप से लिपटी हुई है । गुरु के बिना मुक्ति प्राप्त नहीं होती और दुविधा रूपी माया पीछा नहीं छोड़ती ॥ ५ ॥ माया भला किसे कहा जाता हैं और माया के कर्म क्या हैं ? यह जीव दुख–सुख की तृष्णा में ही बँधा रहता है और अहंकार के वशीभूत होकर ही माया के प्रभाव के अन्तर्गत कार्य करता चला जाता है । शब्द–गुरु के बिना भ्रम का निवारण नहीं होता और न ही अन्तर्मन से अहंकार जाता है ॥ ६ ॥ प्रभु की प्रीति के बिना परमात्मा की भक्ति नहीं होती और शब्द–गुरु के बिना सम्मानजनक स्थान नहीं मिलता । शब्द के माध्यम से ही अहंकार को मारा जाता है और माया का भ्रम जाल टूट जाता है । गुरमुख को सहज एवं स्वाभाविक रूप से ही नाम रूपी धन की प्राप्ति हो जाती है ॥ ७ ॥ गुरु के बिना प्रभु के गुणों का अनुभव नहीं होता और गुणों के बिना भक्ति नहीं होती । भक्तवत्सल परमात्मा जब मन में आ बसता है तो सहज रूप में ही हरि का गुणानुवाद किया जाता है और यह उसकी कृपा से प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ ४ ॥ २१ ॥ सिरीरागु महला ३॥ माया–मोह मेरे प्रभु ने ही पैदा किया है और वह स्वयं ही जीवों को भ्रमों में भुलवाता भी है । मनमुख व्यक्ति कर्म करते हैं पर उसे बूझते नहीं और अपना जन्म व्यर्थ में ही गँवा जाते हैं । "गुरबाणी" इस संसार में प्रकाश के समान है और यह परमात्मा की कृपा से ही मन में बसती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, नाम जपने से ही तुझे सुख मिलेगा । पूर्ण गुरु का गुणानुवाद करने से ही सहज रूप में ही प्रभु की प्राप्ति हो जाती है॥१॥ रहाउ ॥ प्रभु के चरणों में चित्त लगाने से मेरा भ्रम और भय भाग खड़े हुए । गुरमुख बन कर शब्द को जीवन में उतारा जाए तो परमात्मा मन में आ बसता है । अपने वास्तविक घर में सत्य के माध्यम से ही जाया जाता है और फिर यम रूपी काल भी व्यक्ति को खा नहीं सकता ॥ २ ॥ छीपी का काम करने वाले नामदेव और कपड़ा बुनने वाले कबीर ने भी गुरु के माध्यम से ही ऊँची आध्यात्मिक अवस्था प्राप्त की । उन्होंने ब्रह्मवेता बनकर शब्द–ब्रह्म को पहचान लिया और अहंकार एवं जाति के ऊँच–नीच से ऊपर उठ गये । आध्यात्मिक पुरुषों की वाणी का गायन तो सुर–नर सभी करते हैं और उनके यश को कोई भी मिटा नहीं सकता ॥ ३ ॥ दैत्य पुत्र प्रहलाद धर्म–कर्म संयम आदि के ग्रन्थों को नहीं पढ़ता था परन्तु प्रभु के अतिरिक्त वह किसी अन्य के प्रेम को नहीं जानता–मानता था। सद्गुरु के मिलने पर ही उसका मन निर्मल हो गया और वह सदा प्रभु नाम का ही बखान करने लगा । अब वह केवल एक परमात्मा के नाम को ही पढ़ता–बूझता था और फलस्वरुप अन्य किसी को नहीं मानता था ॥ ४ ॥ छः दर्शन, योगी, संन्यासी आदि परमात्मा रूपी गुरु से विहीन होकर भ्रम में भटक जाते है । जब ये सद्गुरु परमात्मा की शरण में आते हैं तभी ऊँची मर्यादा और अवस्था वाले बनते हैं और परमात्मा को मन में बसाने में सहायक होते हैं । सच्ची वाणी से प्रेम हो जाने पर जीव का आवागमन स्थगित हो जाता है ॥ ५ ॥ पंडित शास्त्रार्थ आदि कर–कर के एवं पढ़–पढ़ कर केवल वाद–विवाद में ही पड़े रहते हैं और प्रभु की शरण के बिना भ्रमों में भटकते रहते हैं ॥ चौरासी लाख योनियों में उनका आवागमन बना रहता हैं और शब्द ब्रह्म के बिना उनकी मुक्ति नहीं होती । या तो वह प्रभु नाम सुमिरन से गति प्राप्त करते है और या फिर परमात्मा कृपा करके स्वयं ही उन्हें अपने में मिला लेता है ॥ ६ ॥ सद्संगत में

नामु हरि उपजै जा सतिगुरु मिलै सुभाए ॥ मनु तनु अरपी आपु गवाई चला सतिगुर भाए ॥ सद बलिहारी गुर अपुने विटहु जि हरि सेती चितु लाए ॥ ७ ॥ सो ब्राहमणु ब्रहमु जो बिंदे हरि सेती रंगि राता ॥ प्रभु निकटि वसै सभना घट अंतरि गुरमुखि विरलै जाता ॥ नानक नामु मिलै वडिआई गुर कै सबदि पछाता ॥ ८ ॥ ५ ॥ २२ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सहजै नो सभ लोचदी बिनु गुर पाइआ न जाइ ॥ पड़ि पड़ि पंडित जोतकी थके भेखी भरमि भुलाइ ॥ गुर भेटे सहजु पाइआ आपणी किरपा करे रजाइ ॥ १ ॥ भाई रे गुर बिनु सहजु न होइ ॥ सबदै ही ते सहजु ऊपजै हरि पाइआ सचु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजे गाविआ थाइ पवै बिनु सहजै कथनी बादि ॥ सहजे ही भगति ऊपजै सहजि पिआरि बैरागि ॥ सहजै ही ते सुख साति होइ बिनु सहजै जीवणु बादि ॥ २ ॥ सहजि सालाही सदा सदा सहजि समाधि लगाइ ॥ सहजे ही गुण ऊचरै भगति करे लिव लाइ ॥ सबदे ही हरि मनि वसै रसना हरि रसु खाइ ॥ ३ ॥ सहजे कालु विडारिआ सच सरणाई पाइ ॥ सहजे हरि नामु मनि वसिआ सची कार कमाइ ॥ से वडभागी जिनी पाइआ सहजे रहे समाइ ॥ ४ ॥ माइआ विचि सहजु न ऊपजै माइआ दूजै भाइ ॥ मनमुख करम कमावणे हउमै जलै जलाइ ॥ जंमणु मरणु न चूकई फिरि फिरि आवै जाइ ॥ ५ ॥ त्रिहु गुणा विचि सहजु न पाईऐ त्रै गुण भरमि भुलाइ ॥ पड़ीऐ गुणीऐ किआ कथीऐ जा मुंढहु घुथा जाइ ॥ चउथे पद महि सहजु है गुरमुखि पलै पाइ ॥ ६ ॥ निरगुण नामु निधानु है सहजे सोझी होइ ॥ गुणवंती सालाहिआ सचे सची सोइ ॥ भुलिआ सहजि मिलाइसी सबदि मिलावा होइ ॥ ७ ॥ बिनु सहजै सभु अंधु है माइआ मोहु गुबारु ॥ सहजे ही सोझी पई सचै सबदि अपारि ॥ आपे बखसि मिलाइअनु पूरे गुर करतारि ॥ ८ ॥ सहजे अदिसटु पछाणीऐ निरभउ जोति निरंकारु ॥ सभना जीआ का इकु दाता जोती जोति मिलावणहारु ॥ पूरै सबदि सलाहीऐ जिस दा अंतु न पारावारु ॥ ९ ॥ गिआनीआ का धनु नामु है सहजि करहि वापारु ॥ अनदिनु लाहा हरि नामु लैनि अखुट भरे भंडार ॥ नानक तोटि न आवई दीए

नाम–रूपी परमात्मा का साक्षात्कार होता है अथवा परमात्मा स्वयं ही जीव को सहज भाव से अपने में मिला लेता है। मैं अपना मन, तन, अहम भाव गँवा दूं और गुरु के प्रेम में ही जीवन गुज़ारूं। मैं अपने गुरु पर ही सदैव बलिहारी जाता हूँ जो गुरु मेरे मन को परमात्मा के प्रेम में लगाता है ॥ ७ ॥ ब्राह्मण वही है जो ब्रह्म को जानता है और हरि–रंग में लीन है। कोई बिरला गुरमुख ही जानता है कि प्रभु सबके पास सबके हृदय में ही बसता है। हे नानक, नाम की महिमा से ही बड़प्पन प्राप्त होता है और शब्द–गुरु के माध्यम से ही उस परमात्मा से पहचान बनती है ॥ ८ ॥ ५ ॥ २२ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सहज अथवा शान्त अवस्था को सभी चाहते हैं परन्तु गुरु के बिना यह प्राप्त नहीं होते। पंडित एवं ज्योतिष विद्या के विद्वान पुस्तकें पढ़–पढ़ कर थक चुके हैं और अन्य वेषधारी कर्मकाण्डी भी भ्रमों में भटक रहे हैं। गुरु से मिलने पर सहज अवस्था प्राप्त होती है और परमात्मा अपनी रज़ा के अन्तर्गत ही इस उपलब्धि के लिए कृपा करता है ॥ १ ॥ हे भाई, गुरु के बिना सहज भाव प्राप्त नहीं होता है। शब्द के माध्यम से ही सहज उत्पन्न होता है और सत्य स्वरूप परमात्मा प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहज भाव से किया हुआ गुणानुवाद ही स्वीकृत होता है और सहज के बिना अन्य सब कुछ कहना केवल वाद–विवाद ही है। सहज अवस्था में ही भक्ति पैदा होती है और सहज से ही प्रेम एवं वैराग्य भाव पैदा होते हैं। सहज ही से सुख एवं शान्ति मिलती है और सहज–विहीन जीवन व्यर्थ जीवन है ॥ २ ॥ हे जीव! तू सहज अवस्था में टिक कर सहज समाधि लगाकर परमात्मा का गुणानुवाद करता रह। जो व्यक्ति सहज में ही उसके गुणों का गायन करता है और एकाग्रता से उस प्रभु की भक्ति करता है, शब्द के माध्यम से ही हरि उसके मन में बस जाता है और उसकी जीभ हरि–रस का ही पान करती है ॥ ३ ॥ जिन्होंने सहज धारण किया है और सत्य की शरण ग्रहण की है; सहज भाव के कारण ही जिनके हृदय में हरि–नाम बस गया है और जो सदैव सत्य पर आधारित जीविका का अर्जन करते हैं वे बड़े भाग्यशाली हैं जिन्हें परमात्मा प्राप्त हो गया है और वे सत्य में ही लीन हो गये हैं ॥ ४ ॥ मायावी प्रपंचों में सहज–शान्ति नहीं पैदा होती और द्वैत भाव ही माया है। मनमुख व्यक्ति इस प्रकार के कर्म करता है कि वह अपने ही अहंकार में जलता और दूसरों को जलाता रहता है। उसका जन्म–मरण चुकता नहीं और वह बार–बार आवागमन में पड़ा रहता है ॥ ५ ॥ तीनों गुणों (सत्य गुण, रजो गुण, तमो गुण) के बस में बने रहने पर सहज भाव प्राप्त नहीं होता और इन तीनों गुणों के भ्रम में जीव भूलता भटकता रहता है। यदि जीव अपने मूल प्रभु से ही अलग–थलग पड़ गया है तो पढ़ने, विचारने और कथन आदि करने से कोई लाभ नहीं होता। तीनों गुणों से ऊपर चौथे पद (तुरीया) में ही वास्तविक सहजभाव है जो गुरमुख बनकर ही प्राप्त होता है ॥ ६ ॥ गुणातीत प्रभु का नाम ही सबसे बड़ा खजाना है जिसका पता सहज भाव में आने पर ही लगता है। गुणों वाले जीव ही उस प्रभु का गुणानुवाद करते हैं और सत्य में लीन होकर सत्य–रूप ही बन जाते हैं। सहज अवस्था में ही भूले हुए जीव का मिलाप प्रभु के साथ हो जाता है और यह मिलाप शब्द के माध्यम से ही होता है ॥७॥ सहज के बिना वास्तव में सब माया–मोह का गुबार एवं अन्धकार है। सहज भाव में ही उस अपरंपार शब्द–ब्रह्म की सूझ प्राप्त होती है। पूर्ण गुरु ने अर्थात कर्ता परमात्मा ने जीव को स्वयं ही कृपा करके अपने से मिला लिया है ॥ ८ ॥ सहज भाव में ही उस अदृष्ट, निर्भय, ज्योति–स्वरूप निराकार प्रभु का अनुभव होता है। वह परमात्मा ही सभी जीवों को देने वाला दाता है और सब की ज्योति को अपनी परम–ज्योति में मिला लेने वाला है। पूर्ण शब्द–गुरु के माध्यम से उस परमात्मा का गुणानुवाद करते रहना चाहिए जो अनन्त है एवं जिसका कोई ओर–छोर नहीं ॥९॥ ज्ञानवानों की पूंजी नाम है और वे सहज का व्यापार करते हैं। वे हमेशा लाभ प्राप्त करते हैं और हरि–नाम से अक्षय भण्डार भर लेते हैं। हे नानक, जिनको उस देने वाले प्रभु ने दिया है उनको कभी

देवणहारि ॥ १० ॥ ६ ॥ २३ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सतिगुरि मिलिऐ फेरु न पवै जनम मरण दुखु जाइ ॥ पूरै सबदि सभ सोझी होई हरि नामै रहै समाइ ॥ १ ॥ मन मेरे सतिगुर सिउ चितु लाइ ॥ निरमलु नामु सद नवतनो आपि वसै मनि आइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि जीउ राखहु अपुनी सरणाई जिउ राखहि तिउ रहणा ॥ गुर कै सबदि जीवतु मरै गुरमुखि भवजलु तरणा ॥ २ ॥ वडै भागि नाउ पाईऐ गुरमति सबदि सुहाई ॥ आपे मनि वसिआ प्रभु करता सहजे रहिआ समाई ॥ ३ ॥ इकना मनमुखि सबदु न भावै बंधनि बंधि भवाइआ ॥ लख चउरासीह फिरि फिरि आवै बिरथा जनमु गवाइआ ॥ ४ ॥ भगता मनि आनंदु है सचै सबदि रंगि राते ॥ अनदिनु गुण गावहि सद निरमल सहजे नामि समाते ॥ ५ ॥ गुरमुखि अंम्रित बाणी बोलहि सभ आतम रामु पछाणी ॥ एको सेवनि एकु अराधहि गुरमुखि अकथ कहाणी ॥ ६ ॥ सचा साहिबु सेवीऐ गुरमुखि वसै मनि आइ ॥ सदा रंगि राते सच सिउ अपुनी किरपा करे मिलाइ ॥ ७ ॥ आपे करे कराए आपे इकना सुतिआ देइ जगाइ ॥ आपे मेलि मिलाइदा नानक सबदि समाइ ॥ ८ ॥ ७ ॥ २४ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सतिगुरि सेविऐ मनु निरमला भए पवितु सरीर ॥ मनि आनंदु सदा सुखु पाइआ भेटिआ गहिर गंभीरु ॥ सची संगति बैसणा सचि नामि मनु धीर ॥ १ ॥ मन रे सतिगुरु सेवि निसंगु ॥ सतिगुरु सेविऐ हरि मनि वसै लगै न मैलु पतंगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सचै सबदि पति ऊपजै सचे सचा नाउ ॥ जिनी हउमै मारि पछाणिआ हउ तिन बलिहारै जाउ ॥ मनमुख सचु न जाणनी तिन ठउर न कतहू थाउ ॥ २ ॥ सचु खाणा सचु पैनणा सचे ही विचि वासु ॥ सदा सचा सालाहणा सचै सबदि निवासु ॥ सभु आतम रामु पछाणिआ गुरमती निज घरि वासु ॥ ३ ॥ सचु वेखणु सचु बोलणा तनु मनु सचा होइ ॥ सची साखी उपदेसु सचु सचे सची सोइ ॥ जिंनी सचु विसारिआ से दुखीए चले रोइ ॥ ४ ॥ सतिगुरु जिनी न सेविओ से कितु आए संसारि ॥ जम दरि बधे मारीअहि कूक न सुणै पूकार ॥ बिरथा जनमु गवाइआ मरि

कमी नहीं आती ॥ १० ॥ ६ ॥ २३ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सद्‌गुरु के मिल जाने से फिर आवागमन नहीं होता और जन्म–मरण का दुख समाप्त हो जाता है । शब्द–ब्रह्म के माध्यम से सब समझ आ जाती है और जीव हरि–नाम में ही लीन रहता है । हे मेरे मन, सद्‌गुरु (परमात्मा) के साथ चित्त लगा । निर्मल नाम सदा नवीन बना रहता है और इसी के माध्यम से वह प्रभु मन में आ बसता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु! मुझे अपनी शरण में रखो और आप जैसे रखोगे मैं वैसे ही रहूँगा । गुरु के शब्द के माध्यम से यदि व्यक्ति जीवन में ही अहम् भाव के प्रति मृत हो जाए तो वह गुरमुख बनकर संसार सागर को तैर कर पार कर सकता है ॥ २ ॥ अच्छे भाग्य से प्रभु–नाम की प्राप्ति होती है और गुरु की मति के अनुसार चलने पर ही जीव शोभायमान होता है । कर्त्ता–प्रभु स्वयं ही मन में आ बसता है और जीव सहज भाव में लीन बना रहता है ॥ ३ ॥ ऐसे भी मनमुख हैं जिन्हें शब्द–गुरु अच्छा नहीं लगता और वे बन्धनों में पड़े हुए आवागमन में पड़े रहते है । वे चौरासी लाख योनियों में बार–बार आते हैं और जन्म को व्यर्थ ही गवाँ देते है ॥ ४ ॥ भक्तों के मन में आनन्द होता है और वे सत्य–शब्द गुरु के रंग में रंगे रहते है । वे सदा निर्मल भाव से प्रभु के गुण गाते है और सहज भाव से ही नाम में लीन हो जाते है ॥ ५ ॥ गुरमुख व्यक्ति अमृत वाणी बोलते हैं और सभी जीवों में परमात्मा को पहचानते हैं ॥ वे एक प्रभु की ही सेवा–आराधना करते हैं और उस परमात्मा की कथा–कहानियाँ कहते, सुनते हैं ॥ ६ ॥ हे भाई, सच्चे प्रभु का ही सुमिरन करना चाहिए जो गुरमुख व्यक्तियों के मन में आ बसता है । ये व्यक्ति सदैव सत्य–रूप परमात्मा के रंग में ही रंगे रहते हैं और अपनी कृपा करके ही परमात्मा इन्हें अपने से मिला लेता है ॥ ७ ॥ वह प्रभु स्वयं ही सब कुछ करता–कराता है और कई माया में सोये हुए जीवों को भी जगा देता है । हे नानक, शब्द–गुरु में लीन हुए व्यक्तियों को वह स्वयं ही अपने में मिला लेता है ॥ ८ ॥ ७ ॥ २४ ॥ सिरीरागु महला ३ ॥ सद्‌गुरु की सेवा करने से मन भी निर्मल होता है और शरीर भी पवित्र हो जाता है । उस गहन् गम्भीर प्रभु के मिलाप से मन आनन्द एवं सुख से भर उठता है, सद्‌संगत में बैठने पर प्रभु का सच्चा नाम मन का धैर्य बन जाता है ॥ १ ॥ हे मन, बिना किसी हिचक के सद्‌गुरु की सेवा कर । सद्‌गुरु की सेवा करने से परमात्मा मन में बसता है और मैल का कीड़ा मन और शरीर को छूता नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सच्चे शब्द के माध्यम से ही सम्मान मिलता है और उस प्रभु के सत्य–नाम की प्राप्ति होती है । जिन्होनें अपने अहंकार को समाप्त करके उस प्रभु को पहचान लिया है मैं उनके बलिहरी जाता हूँ । मन की ओर मुख बनाए रखने वाले मनमुख व्यक्ति सत्य को नहीं जानते और उन्हें कहीं भी ठौर–ठिकाना नसीब नहीं होता ॥ २ ॥ सत्य ही जिनका भोजन, पहरावा और निवास–स्थान बन गया है; जिन्होंने सदा सच्चे परमात्मा का गुणानुवाद किया है और सच्चे शब्द–ब्रह्म में ही निवास बना लिया है उन्होंने सभी आत्माओं में रमण करने वाले प्रभु को पहचान लिया है और गुरु की मति को अपनाते हुए उन्होंने अपने मूल घर में निवास कर लिया है ॥ ३ ॥ जो व्यक्ति सत्य–प्रभु को सब स्थानों में देखता है, सत्य ही बोलता है, और जिसका तन–मन भी सच्चा है उसकी शिक्षा भी सच्ची है और उसकी शोभा भी सच्ची है । जिन्होंने सत्य को विस्मृत कर दिया है वे दुखी होकर इस संसार से रोते हुए जाते हैं ॥ ४ ॥ सद्‌गुरु (परमात्मा) की सेवा जिन्होंने नहीं की वे भला संसार में क्यों आये हैं । यम के द्वार पर बाँधकर उन्हें मारा जाता है और उनकी चीख पुकार को कोई भी नहीं सुनता । उन्होंने अपना जन्म व्यर्थ में ही गँवा दिया है;

जंमहि वारो वार ॥ ५ ॥ एहु जगु जलता देखि कै भजि पए सतिगुर सरणा ॥ सतिगुरि सचु दिड़ाइआ सदा सचि संजमि रहणा ॥ सतिगुर सचा है बोहिथा सबदे भवजलु तरणा ॥ ६ ॥ लख चउरासीह फिरदे रहे बिनु सतिगुर मुकति न होई ॥ पड़ि पड़ि पंडित मोनी थके दूजै भाइ पति खोई ॥ सतिगुरि सबदु सुणाइआ बिनु सचे अवरु न कोई ॥ ७ ॥ जो सचै लाए से सचि लगे नित सची कार करंनि ॥ तिना निज घरि वासा पाइआ सचै महलि रहंनि ॥ नानक भगत सुखीए सदा सचै नामि रचंनि ॥ ८ ॥ १७ ॥ ८ ॥ २५ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ जा कउ मुसकलु अति बणै ढोई कोइ न देइ ॥ लागू होए दुसमना साक भि भजि खले ॥ सभो भजै आसरा चुकै सभु असराउ ॥ चिति आवै ओसु पारब्रहमु लगै न तती वाउ ॥ १ ॥ साहिबु निताणिआ का ताणु ॥ आइ न जाई थिरु सदा गुर सबदी सचु जाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जे को होवै दुबला नंग भुख की पीर ॥ दमड़ा पलै ना पवै ना को देवै धीर ॥ सुआरथु सुआउ न को करे ना किछु होवै काजु ॥ चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निहचलु होवै राजु ॥ २ ॥ जा कउ चिंता बहुतु बहुतु देही विआपै रोगु ॥ ग्रिसति कुटंबि पलेटिआ कदे हरखु कदे सोगु ॥ गउणु करे चहु कुंट का घड़ी न बैसणु सोइ ॥ चिति आवै ओसु पारब्रहमु तनु मनु सीतलु होइ ॥ ३ ॥ कामि करोधि मोहि वसि कीआ किरपन लोभि पिआरु ॥ चारे किलविख उनि अघ कीए होआ असुर संघारु ॥ पोथी गीत कवित किछु कदे न करनि धरिआ ॥ चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निमख सिमरत तरिआ ॥ ४ ॥ सासत सिंम्रिति बेद चारि मुखागर बिचरे ॥ तपे तपीसर जोगीआ तीरथि गवनु करे ॥ खटु करमा ते दुगुणे पूजा करता नाइ ॥ रंगु न लगी पारब्रहमु ता सरपर नरके जाइ ॥ ५ ॥ राज मिलक सिकदारीआ रस भोगण बिसथार ॥ बाग सुहावे सोहणे चलै हुकमु अफार ॥ रंग तमासे बहु बिधी चाइ लगि रहिआ ॥ चिति न आइओ पारब्रहमु ता सरप की जूनि गइआ ॥ ६ ॥ बहुतु धनाढि अचारवंतु सोभा निरमल रीति ॥ मात पिता सुत भाईआ साजन संगि परीति ॥ लसकर तरकसबंद

और वे बार–बार जन्मते मरते रहते हैं ॥ ५ ॥ इस संसार को तृष्णाग्नि में जलता हुआ देखकर जो व्यक्ति सद्गुरु की शरण में आ गये हैं, गुरु उनके हृदय में सत्य को टिका देता है और उन्हें सदैव सत्य और संयम में रहने की युक्ति सुझा देता है । सद्गुरु ही सच्चा जहाज है और शब्द के माध्यम से ही जीव भव–सागर से पार होता है ॥ ६ ॥ जीव चौरासी लाख योनियों में भटकते रहें परन्तु सद्गुरु के बिना मुक्ति प्राप्त नहीं होती । कथन करने वाले पंडित और मौन धारण करने वाले साधक पढ़–पढ़ कर थक चुके हैं और द्वैतभाव को पैदा करके उन्होंने अपना सम्मान खो दिया है । सद्गुरु ही शब्द के माध्यम से बताता है कि उस सत्य–रूपी परमात्मा के बिना अन्य कोई नहीं है ॥ ४ ॥ जिन्हें सच्चे परमात्मा ने सत्य में लगा लिया है वे सदैव सच्चा काम–काज ही करते हैं । उन्होंने अपने वास्तविक घर में निवास कर लिया है और वे सदैव सत्य रूपी महल (परमात्मा) में ही रहते है । हे नानक, सच्चे नाम में लीन बने रहने वाले भक्तगण ही सदा सुखी बने रहते हैं ॥ ८ ॥ १७ ॥ ८ ॥ २५ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ जब जीव अत्यन्त कठिनाई में पड़ जाए और कोई भी उसे आश्रय देने वाला न हो; सभी दुश्मन उसे खदेड़ दें और सम्बन्धी भी भाग खड़े हों; उसके सभी आश्रय समाप्त हो जाएं तब यदि वह उस परब्रह्म प्रभु को अपने चित्त में पहचान ले तो उसका कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता ॥ १ ॥ हे प्रभु, तू ही निर्बलों का बल है । तू कभी न आता है और न जाता है अर्थात सदैव स्थिर रहता है और तुझे शब्द–गुरु के माध्यम से ही सत्य रूप में जाना जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि कोई दुर्बल हो और वस्त्रहीनता एवं भूख की पीड़ा से पीड़ित हो; उसके पास एक भी रुपया न हो और न ही उसे कोई धैर्य देने वाला हो, उसका हित और प्रयोजन कोई भी पूरा करने वाला न हो और उसका कोई भी कार्य न होता हो; यदि उसे परब्रह्म अपने चित्त में ही पहचान में आ जाए तो उसको सदैव अटल राज प्राप्त हो जाता है । अत्यधिक चिन्ता के कारण जिसकी देही में रोग फैल जाए; गृहस्थ एवं परिवार के पचड़ों में कभी उसे प्रसन्नता और कभी शोक प्राप्त होता हो; वह चारों दिशाओं में भागता फिरे और उसे घड़ी भर बैठने का भी अवसर न मिले; परन्तु यदि परमात्मा उसके चित्त में आ बसे तो उसका तन–मन सब शान्त हो जाते हैं ॥ ३ ॥ यदि किसी को काम–क्रोध, मोह, कृपणता और लोभ के प्यार ने अपने बस में कर लिया हो; चारों किस्म के पाप और अनेकों निकृष्ट कर्म उसने कर लिये हों और असुर की तरह मार–डाले जाने लायक हो; उसने कभी भी कोई धार्मिक पुस्तक गीत, कविता आदि न सुनी हो; परन्तु यदि उसके मन में परब्रह्म का स्मरण आ जाए को वह क्षण भर के सुमिरन के फलस्वरूप ही संसार सागर को पार कर जाता है ॥ ४ ॥ बेशक व्यक्ति शास्त्र, स्मृतियां, वेदों को मौखिक रूप से बोल सकता हो और उन पर विचार कर सकता हो; तपस्या करने वाले अनेको तपस्वी योगी यदि तीर्थों पर भ्रमण करें, व्यक्ति षटकर्मों से भी दुगने कर्म करे और स्नान आदि करके पूजा करे; परन्तु यदि उसे परब्रह्म प्रभु का प्रेम–रंग नहीं लगा तो वह अवश्य ही नर्कगामी होगा ॥ ५ ॥ धन–सम्पति, शासन और भोग्य पदार्थों के रस एवं उनका विस्तार होने के साथ–साथ यदि उसके पास सुन्दर बाग–बगीचे हों और उस अहंकार वाले व्यक्ति का आदेश भी सब जगह चलता हो; यदि वह दुनियाँ के कई प्रकार के रंग–तमाशों में अनेकों प्रकार से मौज करता रहे परन्तु यदि उसके चित्त में परब्रह्म परमात्मा का ध्यान नहीं आया तो वह सर्प की योनि में गया हुआ ही समझा जाना चाहिए ॥ ६ ॥ यदि कोई व्यक्ति बहुत धनवान, आचारवान और निर्मल शोभा का एवं व्यवहार का मालिक हो; माता–पिता, पुत्रों, भाईयों, अन्य स्वजनों के साथ उसका प्यार हो; यदि तरकशबंद धनुर्धारियों की सेना

बंद जीउ जीउ सगली कीत ॥ चिति न आइओ पारब्रहमु ता खड़ि रसातलि दीत ॥ ७ ॥ काइआ रोगु न छिद्रु किछु ना किछु काड़ा सोगु ॥ मिरतु न आवी चिति तिसु अहिनिसि भोगै भोगु ॥ सभ किछु कीतोनु आपणा जीइ न संक धरिआ ॥ चिति न आइओ पारब्रहमु जमकंकर वसि परिआ ॥ ८ ॥ किरपा करे जिसु पारब्रहमु होवै साधू संगु ॥ जिउ जिउ ओहु वधाईऐ तिउ तिउ हरि सिउ रंगु ॥ दुहा सिरिआ का खसमु आपि अवरु न दूजा थाउ ॥ सतिगुर तुठै पाइआ नानक सचा नाउ ॥ ९ ॥ १ ॥ २६ ॥ सिरीरागु महला ५ घरु ५ ॥ जानउ नही भावै कवन बाता ॥ मन खोजि मारगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धिआनी धिआनु लावहि ॥ गिआनी गिआनु कमावहि ॥ प्रभु किन ही जाता ॥ १ ॥ भगउती रहत जुगता ॥ जोगी कहत मुकता ॥ तपसी तपहि राता ॥ २ ॥ मोनी मोनिधारी ॥ सनिआसी ब्रहमचारी ॥ उदासी उदासि राता ॥ ३ ॥ भगति नवै परकारा ॥ पंडितु वेदु पुकारा ॥ गिरसती गिरसति धरमाता ॥ ४ ॥ इकसबदी बहुरूपि अवधूता ॥ कापड़ी कउते जागूता ॥ इकि तीरथि नाता ॥ ५ ॥ निरहार वरती आपरसा ॥ इकि लूकि न देवहि दरसा ॥ इकि मन ही गिआता ॥ ६ ॥ घाटि न किनही कहाइआ ॥ सभ कहते है पाइआ ॥ जिसु मेले सो भगता ॥ ७ ॥ सगल उकति उपावा ॥ तिआगी सरनि पावा ॥ नानकु गुर चरणि पराता ॥ ८ ॥ २ ॥ २७ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सिरीरागु महला १ घरु ३ ॥ जोगी अंदरि जोगीआ ॥ तूं भोगी अंदरि भोगीआ ॥ तेरा अंतु न पाइआ सुरगि मछि पइआलि जीउ ॥ १ ॥ हउ वारी हउ वारणै कुरबाणु तेरे नाव नो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुधु संसारु उपाइआ ॥ सिरे सिरि धंधे लाइआ ॥ वेखहि कीता आपणा करि कुदरति पासा ढालि जीउ ॥ २ ॥ परगटि पाहारै जापदा ॥ सभु नावै नो परतापदा ॥ सतिगुर बाझु न पाइओ सभ मोही माइआ जालि जीउ ॥ ३ ॥ सतिगुर कउ बलि जाईऐ ॥ जितु मिलिऐ परम गति पाईऐ ॥

उसको जी–जी कहती हो; परन्तु यदि परमात्मा उसके चित्त में नहीं आया तो ये सब उसके शरीर को ले जाकर रसातल में फेंक देंगे ॥ ७ ॥ यदि किसी व्यक्ति को कभी रोग न लगा हो, कोई कष्ट न आया हो, कोई चिन्ता या शोक न हो; यदि उसे मृत्यु का भी कभी स्मरण न आया हो, उसने दिन–रात भोग–विलास किये हों; यदि उसने संसार की प्रत्येक वस्तु को निस्संदेह अपना बना लिया हो परन्तु परमात्मा उसके चित्त में न बसा हो तो निश्चित् रूप से वह यमदूतों के वश में आ पड़ता है ॥ ८ ॥ प्रभु यदि कृपा करे तो साधु पुरुषों की संगत प्राप्त होती है। जैसे–जैसे यह संगत बढ़ती है वैसे–वैसे व्यक्ति हरि–रंग में रंगा जाता है। लोक–परलोक दोनों स्थानों का स्वामी प्रभु स्वयं है और जीव को अन्य कोई आश्रय नहीं है। हे नानक, सद्गुरु के प्रसन्न होने पर ही प्रभु का सच्चा नाम प्राप्त होता है ॥ ९ ॥ १ ॥ २६॥ सिरीरागु महला ॥ ५ ॥ घरु ५ ॥ मुझे पता नहीं कि परमात्मा को कौन–सी बात अच्छी लगती है। हे मन, तू उस तक ले जाने वाला मार्ग ढूँढ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ध्यानी पुरुष ध्यान लगाते हैं और ज्ञानी पुरुष ज्ञान–गोष्ठियाँ करते है परन्तु परमात्मा को किसी बिरले ने ही जाना है ॥ १॥ वैष्णवगण अनेकों संयमों में रहते हैं; योगी मुक्त होने की घोषणा करते हैं और तपस्या करने वाले तप में ही लीन रहते हैं ॥ २ ॥ मौन रहने वाले मौन धारण करते हैं। संन्यासी, ब्रह्मचारी एवं उदासीन साधु अपने–अपने वेश में ही मस्त रहते हैं ॥ ३ ॥ कुछ लोग भक्ति नौ प्रकार की मानते हैं ॥ पंडित ऊँचे स्वर में वेद–पाठ करते हैं और गृहस्थी अपने गृहस्थ धर्म में ही लीन हैं ॥ ४ ॥ कई अवधूत लोग केवल एक शब्द ''अलख अलख'' ही कहते हैं। कई लोग बहुरूपिये हैं, कई कविता एवं नाटक करने वाले हैं और कई नींद का त्याग कर जीवन व्यतीत करते हैं। कई ऐसे भी हैं जो तीर्थों पर ही स्नान किये जाने वाले है ॥ ५ ॥ कई व्रत धारण करने वाले और दूसरों के स्पर्श से बचने वाले हैं। कई गुफाओं में छिपे रहते है और लोगों को दर्शन नहीं देते हैं। कई केवल अपने मन में ही ज्ञानवान बने हुए हैं ॥ ६ ॥ कोई भी अपने–आप को किसी से कम नहीं कहलाता और सभी कहते हैं कि हमने परमात्मा प्रात कर लिया है। परन्तु वास्तव में भक्त वही है जिसे परमात्मा ने अपने में मिला लिया है ॥ ७ ॥ मैंने तो समस्त युक्तियों एवं उपायों को त्याग दिया है और तेरी शरण में आ गया हूँ। नानक तो गुरु (परमात्मा) के चरणों में आन पड़ा है ॥ ८ ॥ २ ॥ २७ ॥

१ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सिरीरागु महला १ ॥ घरु ३ ॥ हे प्रभु, योगियों के अन्दर योगी भी तू है और भोगियों के अन्दर तू ही सब पदार्थों को भोग रहा है। तेरा स्वर्ग, धरती एवं पाताल तीनों लोकों में अन्त नहीं पाया जा सकता ॥ १ ॥ हे प्रभु, मैं तेरे नाम पर बार–बार बलिहारी होता हूँ और कुर्बान जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमने संसार पैदा किया और सब को किसी न किसी कार्य में लगाया हुआ है। अपने पैदा किये हुए को तू स्वयं देख रहा है और कुदरत को तू पांसे के रूप में प्रयुक्त कर रहा है ॥ २ ॥ दृष्टमान जगत के प्रसार में वह स्वयं ही दिखाई देता है। प्रत्येक जीव प्रभु नाम को चाहता है परन्तु सद्गुरु के बिना वह प्राप्त नहीं होता है और सारी सृष्टि उसके माया–जाल में ही भ्रमित रहती है ॥ ३ ॥ सद्गुरु पर बलिहारी जाना चाहिए क्योंकि उसके मिलने से ही परम गति प्राप्त होती है।

सुरि नर मुनि जन लोचदे सो सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ ॥ ४ ॥ सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥ जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥ एको नामु हुकमु है नानक सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ ॥ ५ ॥ इहु जगतु भरमि भुलाइआ ॥ आपहु तुधु खुआइआ ॥ परतापु लगा दोहागणी भाग जिना के नाहि जीउ ॥ ६ ॥ दोहागणी किआ नीसाणीआ ॥ खसमहु घुथीआ फिरहि निमाणीआ ॥ मैले वेस तिना कामणी दुखी रैणि विहाइ जीउ ॥ ७ ॥ सोहागणी किआ करमु कमाइआ ॥ पूरबि लिखिआ फलु पाइआ ॥ नदरि करे कै आपणी आपे लए मिलाइ जीउ ॥ ८ ॥ हुकमु जिना नो मनाइआ ॥ तिन अंतरि सबदु वसाइआ ॥ सहीआ से सोहागणी जिन सह नालि पिआरु जीउ ॥ ९ ॥ जिना भाणे का रसु आइआ ॥ तिन विचहु भरमु चुकाइआ ॥ नानक सतिगुरु ऐसा जाणीऐ जो सभसै लए मिलाइ जीउ ॥ १० ॥ सतिगुरि मिलिऐ फलु पाइआ ॥ जिनि विचहु अहकरणु चुकाइआ ॥ दुरमति का दुखु कटिआ भागु बैठा मसतकि आइ जीउ ॥ ११ ॥ अंम्रितु तेरी बाणीआ ॥ तेरिआ भगता रिदै समाणीआ ॥ सुख सेवा अंदरि रखिऐ आपणी नदरि करहि निसतारि जीउ ॥ १२ ॥ सतिगुरु मिलिआ जाणीऐ ॥ जितु मिलिऐ नामु वखाणीऐ ॥ सतिगुर बाझु न पाइओ सभ थकी करम कमाइ जीउ ॥ १३ ॥ हउ सतिगुर विटहु घुमाइआ ॥ जिनि भ्रमि भुला मारगि पाइआ ॥ नदरि करे जे आपणी आपे लए रलाइ जीउ ॥ १४ ॥ तूं सभना माहि समाइआ ॥ तिनि करतै आपु लुकाइआ ॥ नानक गुरमुखि परगटु होइआ जा कउ जोति धरी करतारि जीउ ॥ १५ ॥ आपे खसमि निवाजिआ ॥ जीउ पिंडु दे साजिआ ॥ आपणे सेवक की पैज रखीआ दुइ कर मसतकि धारि जीउ ॥ १६ ॥ सभि संजम रहे सिआणपा ॥ मेरा प्रभु सभु किछु जाणदा ॥ प्रगट प्रतापु वरताइओ सभु लोकु करै जैकारु जीउ ॥ १७ ॥ मेरे गुण अवगन न बीचारिआ ॥ प्रभि अपणा बिरदु समारिआ ॥ कंठि लाइ कै रखिओनु लगै न तती वाउ जीउ ॥ १८ ॥ मै मनि तनि प्रभू धिआइआ ॥ जीइ इछिअड़ा फलु पाइआ ॥ साह पातिसाह सिरि खसमु तूं जपि नानक

देवता, मनुष्य एवं मुनिजन जिसकी सदैव आकाँक्षा करते हैं वह वास्तव में सद्गुरु ने समझा दिया है ॥ ४ ॥ सद्संगत कैसी होती है ? वहां केवल एक प्रभु–नाम का ही व्याख्यान होता है। हे नानक, सद्गुरु ने यह बात समझा दी है कि सद्संगत में केवल प्रभु नाम का स्मरण ही उस प्रभु का आदेश है ॥ ५ ॥ यह जगत माया के प्रपंचों में भटककर जीवन के सत्य–मार्ग से दूर जा रहा है। परन्तु हे प्रभु, तूने स्वयं ही कई जीवों को अपने से दूर कर के रखा हुआ है। भाग्यहीन एवं पति से बिछुड़ी हुई जीव रूपी स्त्रियों को बहुत दुख भोगना पड़ रहा है ॥ ६ ॥ दुहागिन स्त्री की क्या निशानी है ? वे अपने स्वामी से बिछुड़ कर तेजहीन होकर भटक रही हैं। उनका वेश अर्थात जीवन मैला हो जाता है एवं ऐसी जीव रूपी स्त्रियां दुख में ही इस जीवन रूपी रात्रि को व्यर्थ गँवा देती है ॥ ७ ॥ सुहागिन स्त्रियों का कौन सा अच्छा कार्य है जो उन्होंने किया है ? उन्होने अपने पूर्व–जन्म के लेखों का फल प्राप्त किया है क्योंकि प्रभु अपनी कृपा–दृष्टि से ही जीव रूपी स्त्री को अपने में मिला लेता है ॥ ८ ॥ जिन्होंने प्रभु के 'हुकुम' को माना है उन्होंने ही अपने अन्तर्मन में शब्द–गुरु को बसा लिया है। वे सहचारिणी जीव–स्त्रियाँ ही सुहागिन हैं जिन्हें वास्तव में प्रभु के साथ प्रेम है ॥ ९ ॥ जिनको प्रभु के आदेश में रस मिलने लग जाता है उनके अन्तर्मन से भ्रम चुक जाता है। हे नानक, सद्गुरु वही जाना जाता है जो सब को परस्पर मिला कर उस परमात्मा से मिला देता है ॥ १० ॥ सद्गुरु के मिलने का फल यह है कि अन्तर्मन का अहंकार चुक जाता है। दुर्मति का दुख कट जाता है और अच्छा भाग्य मस्तक पर प्रत्यक्ष हो जाता है ॥ ११ ॥ हे प्रभु, तेरी वाणी अमृत है जो तेरे भक्तों के हृदय में समायी रहती है। सुख देने वाली सेवा को हृदय में बसाने पर ही हे प्रभु तू कृपा करता है और जीवों का पार–उतारा कर देना है ॥ १२ ॥ सद्गुरु का मेल तभी समझा जाना चाहिए जब उससे मिलने पर केवल नाम की चर्चा करते रहा जाए। सद्गुरु के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं होता और सभी लोग अनेकों कर्म करते हुए थक जाते हैं ॥ १३ ॥ मैं उस सद्गुरु पर कुर्बान जाता हूँ जिसने मुझे भ्रम में भूले हुए को ठीक मार्ग पर डाल दिया है। वह प्रभु अपनी कृपा करे तो स्वयं ही अपने आप में जीव को मिला लेता है ॥ १४॥ हे प्रभु, तू सब जीवों में व्याप्त है परन्तु कर्त्ता, तूने फिर भी अपने आप को प्रछन्न ही रखा है। हे नानक! ऐसे गुरमुख के अन्दर ही वह प्रकट होता है जिसमें प्रभु ने अपनी ज्योति को प्रकाशित किया है ॥ १५ ॥ उस मालिक ने स्वयं ही अपने सेवक को बड़प्पन प्रदान किया है और प्राण एवं शरीर देकर उसको पैदा किया है। वह प्रभु दोनों हाथों को सेवक के मस्तक पर रखकर उसके सम्मान एवं बिरद की रक्षा करता है ॥ १६ ॥ सभी संयम और चतुराईयां उसको पाने में असमर्थ रहे हैं और मेरा प्रभु इन सब के उद्देश्य को भली–प्रकार जानता है। परमात्मा अपने तेज प्रताप को अपने सेवकों के माध्यम से प्रकट करता है और सारा जगत उनकी जय–जयकार करता है ॥ १७ ॥ मेरे गुणों एवं अवगुणों की प्रभु ने परवाह नहीं की और अपने बिरदपालक स्वभाव को हमेशा याद रखा है। उसने मुझे अपने गले से लगाकर बचा लिया है और विषय–विकारों का कोई भी दुख मेरा बाल बाँका नहीं कर सका है ॥ १८ ॥ मैंने मन–तन से प्रभु का ध्यान किया है और मुझे मनोवांछित फल प्राप्त हो गया है। हे प्रभु, तू सभी राजाओं का सम्राट है और नानक, प्रभु–नाम का स्मरण करके

जीवै नाउ जीउ ॥ १९ ॥ तुधु आपे आपु उपाइआ ॥ दूजा खेलु करि दिखलाइआ ॥ सभु सचो सचु वरतदा जिसु भावै तिसै बुझाइ जीउ ॥ २० ॥ गुर परसादी पाइआ ॥ तिथै माइआ मोहु चुकाइआ ॥ किरपा करि कै आपणी आपे लए समाइ जीउ ॥ २१ ॥ गोपी नै गोआलीआ ॥ तुधु आपे गोइ उठालीआ ॥ हुकमी भांडे साजिआ तूं आपे भंनि सवारि जीउ ॥ २२ ॥ जिन सतिगुर सिउ चितु लाइआ ॥ तिनी दूजा भाउ चुकाइआ ॥ निरमल जोति तिन प्राणीआ ओइ चले जनमु सवारि जीउ ॥ २३ ॥ तेरीआ सदा सदा चंगिआईआ ॥ मै राति दिहै वडिआईआं ॥ अणमंगिआ दानु देवणा कहु नानक सचु समालि जीउ ॥ २४ ॥ १ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ पै पाइ मनाई सोइ जीउ ॥ सतिगुर पुरखि मिलाइआ तिसु जेवडु अवरु न कोइ जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गोसाई मिहंडा इठड़ा ॥ अंम अबे थावहु मिठड़ा ॥ भैण भाई सभि सजणा तुधु जेहा नाही कोइ जीउ ॥ १ ॥ तेरै हुकमे सावणु आइआ ॥ मै सत का हलु जोआइआ ॥ नाउ बीजण लगा आस करि हरि बोहल बखस जमाइ जीउ ॥ २ ॥ हउ गुर मिलि इकु पछाणदा ॥ दुया कागलु चिति न जाणदा ॥ हरि इकतै कारै लाइओनु जिउ भावै तिंवै निबाहि जीउ ॥ ३ ॥ तुसी भोगिहु भुंचहु भाईहो ॥ गुरि दीबाणि कवाइ पैनाईओ ॥ हउ होआ माहरु पिंड दा बंनि आदे पंजि सरीक जीउ ॥ ४ ॥ हउ आइआ साम्है तिहंडीआ ॥ पंजि किरसाण मुजेरे मिहडिआ ॥ कंनु कोई कढि न हंघई नानक वुठा घुघि गिराउ जीउ ॥ ५ ॥ हउ वारी घुंमा जावदा ॥ इक साहा तुधु धिआइदा ॥ उजड़ु थेहु वसाइओ हउ तुध विटहु कुरबाणु जीउ ॥ ६ ॥ हरि इठै नित धिआइदा ॥ मनि चिंदी सो फलु पाइदा ॥ सभे काज सवारिअनु लाहीअनु मन की भुख जीउ ॥ ७ ॥ मै छडिआ सभो धंधड़ा ॥ गोसाई सेवी सचड़ा ॥ नउ निधि नामु निधानु हरि मै पलै बधा छिकि जीउ ॥ ८ ॥ मै सुखी हूं सुखु पाइआ ॥ गुरि अंतरि सबदु वसाइआ ॥ सतिगुरि पुरखि विखालिआ मसतकि धरि कै हथु जीउ ॥ ९ ॥ मै बधी सचु धरम साल है ॥ गुरसिखा लहदा भालि कै ॥ पैर धोवा पखा फेरदा तिसु निवि निवि

अनन्त जीवन प्राप्त कर लेता है ॥ १९ ॥ हे प्रभु, तूने स्वयं को जगत रूप में स्वयं ही प्रकट किया है। माया का द्वैत भाव वाला खेल भी तूने ही खेला कर दिखा दिया है। परन्तु वास्तव में तू सत्य रूप में ही सर्वत्र कार्यशील है और जिसे तू चाहता है उसे ही यह पता लग पाता है ॥ २० ॥ गुरु–कृपा से जिसने इस रहस्य को पा लिया है उसका माया–मोह आदि चुक गया है। प्रभु कृपा करके स्वयं ही उसे अपने में लीन कर लेता है ॥ २१ ॥ हे प्रभू, तू ही गोपी है, तू ही ग्वाला है और तूने ही सारी धरती को उठा रखा है। तेरे हुकुम में ही शरीर रूपी बर्तन बनते हैं और तू स्वयं ही उन्हें नाश करता और सँवारता है ॥ २२ ॥ सद्गुरु से चित्त लगाने वालों ने मन से द्वैत भाव चुका दिया है॥ ऐसे व्यक्तियों की जीवन–ज्योति निर्मल होती है और वे अपना जन्म सँवार कर यहाँ से जाते हैं ॥ २३ ॥ हे प्रभु, तेरे नित्य बने रहने वाले गुणों की मैं रात–दिन प्रशंसा करता रहता हूँ। हे नानक, वह बिना माँगे दान देने वाला प्रभु है और ऐसे सत्य–प्रभु को तू हमेशा हृदय में संभाल कर रख ॥ २४ ॥ १ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ हे भाईयो, मैं उस परमात्मा के चरणों में झुककर उसे मनाने का प्रयत्न करता हूँ। सद्गुरु परमात्मा से मिलने पर मुझे पता चला कि उसके जैसा अन्य दूसरा कोई भी नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा मालिक प्रभु इतना प्यारा है कि वह मुझे माँ–बाप से भी ज्यादा मीठा लगता है। हे प्रभु, बहन, भाई, मित्र आदि में तेरे जैसा अन्य कोई नहीं है ॥ १ ॥ तेरे ही 'हुकुम' से कृपा की वर्षा करने वाला सावन आया है और मैंने भी सत्य रूपी फल जोड़ लिया है। मैं भी इस आशा से तेरा नाम हृदय रूपी खेत में बोने लगा हूँ कि तेरी कृपा का धान रूपी ढेर इक्टठा हो जायेगा ॥ २ ॥ हे मेरे गुरु, तुझ से मिलकर मैं केवल एक तुझे ही पहचानता हूँ और तेरे नाम के बिना अन्य कोई लेखा लिखना मेरा चित्त नहीं जानता। हे प्रभु, तूने मुझे नाम–सुमिरन के एक ही कार्य में लगा दिया है, अब जैसे भी तू चाहे इस कार्य को सम्पूर्ण कर दे ॥ ३ ॥ हे मेरे भाईयो, तुम लोग भी प्रभु नाम के रस का आनन्द लो। प्रभु–गुरु ने मुझे अपने दरबार में सम्मानित वस्त्र पहना दिया है और अब मैं अपने इस शरीर का सेवक न बना रहकर सिद्धहस्त स्वामी बन गया हूँ। प्रभु कृपा से मैंने पाँचों ही विरोध करने वाले विकारों को बाँधकर सामने बिठा लिया है ॥ ४ ॥ हे प्रभु, मैं तेरी शरण में आया हूँ और अब पाँचों किसान अर्थात् पाँचों विकार मेरे अधीन हैं। कोई भी ज्ञानेन्द्रिय मेरे समक्ष सिर नहीं उठा सकती। हे नानक, अब यह मेरा शरीर रूपी गाँव सभी गुणों से युक्त होकर सुखपूर्वक बस रहा है ॥ ५ ॥ मैं तुझ पर बलिहारी जाता हूँ और लगातार तेरा सुमिरन करता हूँ। हे प्रभु, तूने मेरे उजड़े हुए मन रूपी टीले को बसा दिया है इसलिए मैं तुझ पर कुर्बान जाता हूँ ॥ ६ ॥ हे भाई, मैं सदा इष्ट परमात्मा का स्मरण करता हूँ क्योंकि मैंने मन में जो सोचा था वह फल मुझे मिल गया है। मेरे सभी कार्य सँवर गये हैं और मेरे मन की भूख समाप्त हो गई है ॥ ७ ॥ मैने सभी प्रपंचों को छोड़ दिया है और सच्चे प्रभु का ही मैं स्मरण करता हूँ ॥ वह प्रभु ही नव–निधियाँ दिलाने वाला नाम का भण्डार है जिसे मैंने अपने पल्लू में कस कर बाँध लिया है ॥ ८ ॥ मैंने सुखों के सुख (परमात्मा) को पा लिया है और गुरु ने मेरे अन्तर्मन में शब्द–ब्रह्म को बसा दिया है। सद्गुरु ने ही मेरे मस्तक पर हाथ रखकर मुझे शब्द–गुरु का साक्षात्कार करवा दिया है ॥ ९ ॥ मैंने सत्य चिन्तन की धर्मशाला का निर्माण किया है और गुरु के सिक्खों को मैं खोज–खोजकर यहाँ ले आता हूँ ॥ उनके चरण धोता हूँ, उन्हें पंखा झलता हूँ और झुक–झुक कर उनके चरणों को

लगा पाइ जीउ ॥ १० ॥ सुणि गला गुर पहि आइआ ॥ नामु दानु इसनानु दिड़ाइआ ॥ सभु मुकतु होआ सैसारड़ा नानक सची बेड़ी चाड़ि जीउ ॥ ११ ॥ सभ स्रिसटि सेवे दिनु राति जीउ ॥ दे कंनु सुणहु अरदासि जीउ ॥ ठोकि वजाइ सभ डिठीआ तुसि आपे लइअनु छडाइ जीउ ॥ १२ ॥ हुणि हुकमु होआ मिहरवाण दा ॥ पै कोइ न किसै रञाणदा ॥ सभ सुखाली वुठीआ इहु होआ हलेमी राजु जीउ ॥ १३ ॥ झिंमि झिंमि अंम्रितु वरसदा ॥ बोलाइआ बोली खसम दा ॥ बहु माणु कीआ तुधु उपरे तूं आपे पाइहि थाइ जीउ ॥ १४ ॥ तेरिआ भगता भुख सद तेरीआ ॥ हरि लोचा पूरन मेरीआ ॥ देहु दरसु सुखदातिआ मै गल विचि लैहु मिलाइ जीउ ॥ १५ ॥ तुधु जेवडु अवरु न भालिआ ॥ तूं दीप लोअ पइआलिआ ॥ तूं थानि थनंतरि रवि रहिआ नानक भगता सचु अधारु जीउ १६ ॥ हउ गोसाई दा पहिलवानड़ा ॥ मै गुर मिलि उच दुमालड़ा ॥ सभ होई छिंझ इकठीआ दयु बैठा वेखै आपि जीउ ॥ १७ ॥ वात वजनि टंमक भेरीआ ॥ मल लथे लैदे फेरीआ ॥ निहते पंजि जुआन मै गुर थापी दिती कंडि जीउ ॥ १८ ॥ सभ इकठे होइ आइआ ॥ घरि जासनि वाट वटाइआ ॥ गुरमुखि लाहा लै गए मनमुख चले मूलु गवाइ जीउ ॥ १९ ॥ तूं वरना चिहना बाहरा ॥ हरि दिसहि हाजरु जाहरा ॥ सुणि सुणि तुझै धिआइदे तेरे भगत रते गुणतासु जीउ ॥ २० ॥ मै जुगि जुगि दयै सेवड़ी ॥ गुरि कटी मिहडी जेवड़ी ॥ हउ बाहुड़ि छिंझ न नचऊ नानक अउसरु लधा भालि जीउ ॥ २१ ॥ २ ॥ २९ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सिरीरागु महला १ पहरे घरु १ ॥

पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा हुकमि पइआ गरभासि ॥ उरध तपु अंतरि करे वणजारिआ मित्रा खसम सेती अरदासि ॥ खसम सेती अरदासि वखाणै उरध धिआनि लिव लागा ॥ ना मरजादु आइआ कलि भीतरि बाहुड़ि जासी नागा ॥ जैसी कलम वुड़ी है मसतकि तैसी जीअड़े पासि ॥ कहु नानक

स्पर्श करता हूँ ॥ १० ॥ जो भी गुरु की बातों को सुनकर गुरु के पास आता है, गुरु उसे नाम, दान, स्नान का उपदेश देता है। हे नानक, इस प्रकार सत्य की नाव पर सवार होकर सारा संसार मुक्त हो गया है ॥ ११ ॥ हे प्रभु, सारी सृष्टि दिन-रात तेरी ही सेवा भक्ति करती है और तू बड़े ध्यान से सब की प्रार्थनाएं सुनता है। मैंने सब को ठोक बजाकर देख लिया है परन्तु कोई कुछ नहीं कर सकता; केवल तू ही प्रसन्न होकर सब को आवागमन से छुड़ा लेता है ॥ १२ ॥ अब उस मेहरबान परमात्मा का 'हुकुम' हो गया है कि कोई भी किसी को दुःख नहीं दे सकेगा। सब जीव सुख से बसेंगे क्योंकि उसके 'हुकुम' के अन्तर्गत ही अब विनम्रता का शासन हो गया है ॥ १३ ॥ अब मेरे अन्तर्मन में रिमझिम अमृत बरस रहा है और मैं उस मालिक की दी हुई शक्ति के कारण ही बोल रहा हूँ। हे प्रभु, मैंने तुझ पर ही गर्व किया है और निश्चित रूप से तू मुझे स्वीकार कर लेगा ॥ १४ ॥ तेरे भक्तों को सदैव तेरे दर्शन की भूख ही बनी रहती है। हे प्रभु, मेरी भी यह इच्छा पूरी कर। हे सुखदाता, मुझे दर्शन दे और अपने गले से लगा ले ॥ १५ ॥ तेरे जैसा अन्य कोई नहीं मिलता और तू ही सभी द्वीपों, लोकों एवं पातालों में बस रहा है। तू ही प्रत्येक स्थान पर व्याप्त है और हे नानक, भक्तों को केवल इसी सत्य का आश्रय है ॥ १६ ॥ मैं मालिक प्रभु का एक छोटा सा पहलवान था परन्तु परमात्मा रूपी गुरु से मिलकर मैं ऊँची पगड़ी वाला सम्मानित व्यक्ति बन गया हूँ। संसार रूपी अखाड़े में सभी लोग इक्ट्ठे हुए है और कर्ता-प्रभु स्वयं बैठा हुआ यह सब देख रहा है ॥ १७ ॥ हवाओं वाले वाद्य, नगाड़े और भेरियां बज रही हैं और इस संसार रूपी अखाड़े में मल्ल इधर-उधर फेरियाँ लगा रहे हैं। गुरु ने मेरी पीठ थपथपायी और मैंने कामादिक पाँचों जवान नियन्त्रण में कर लिये ॥ १८ ॥ इस संसार रूपी अखाड़े में आये तो सब इकट्ठे थे परन्तु वापस अपने घर को अलग-अलग योनियों में भ्रमण करते हुए अलग-अलग रास्ते से जाएंगे। गुरमुख व्यक्ति तो यहाँ से लाभान्वित होकर जाते हैं और मनमुख व्यक्ति अपने जीवन की पूँजी गँवाकर यहाँ से जाते है ॥ १९ ॥ हे प्रभु, तू वर्णों चिन्हों से दूर है और सदैव प्रत्यक्ष रूप में दिखाई देता रहता है। तेरे भक्त तेरे गुणों को सुन-सुनकर और उनमें लीन होकर तेरा ध्यान करते हैं ॥ २० ॥ मैं सदा हर युग में प्रभु की सेवा करता रहता हूँ इसलिए गुरु ने मेरा माया का बंधन काट दिया है। अब मैं बार-बार इस संसार रूपी अखाड़े में नहीं भटकूंगा क्योंकि हे नानक, मैंने प्रभु सुमिरन के लिए इस जीवन रूपी अवसर को खोजकर प्राप्त कर लिया है ॥ २१ ॥ २ ॥ २९ ॥

१ओअंकार सतिगुरु प्रसादि॥ सिरीरागु महला १ ॥ पहरे घरु १ ॥

प्रभु नाम का व्यापार करने आये हे मित्र, जीवन के पहले प्रहर में उस प्रभु के हुकुम से तूने मां के गर्भ में निवास किया है। हे व्यापारी मित्र, माँ के पेट में तू उलटा लटककर तपस्या करता रहा है और परमात्मा के समक्ष प्रार्थनाएं करता रहा है। जीव उस मालिक के आगे अरदास (प्रार्थना) करता है; उसका ध्यान करता है और सब मर्यादाओं के बोझ से विहीन इस कलियुगी संसार में आता है और पुनः यहाँ से नंगा ही चला जाता है। प्रभु की कलम के जैसे लेख उसके मस्तक पर लिखे हैं वैसे जीव के कर्म होते हैं। हे नानक, जीव ने परमात्मा के हुकुम के अन्तर्गत रात्रि

प्राणी पहिलै पहरै हुकमि पइआ गरभासि ॥ १ ॥ दूजै पहरै रैणि के वणजारिआ मित्रा विसरि गइआ धिआनु ॥ हथो हथि नचाईऐ वणजारिआ मित्रा जिउ जसुदा घरि कानु ॥ हथो हथि नचाईऐ प्राणी मात कहै सुतु मेरा ॥ चेति अचेत मूड़ मन मेरे अंति नही कछु तेरा ॥ जिनि रचि रचिआ तिसहि न जाणै मन भीतरि धरि गिआनु ॥ कहु नानक प्राणी दूजै पहरै विसरि गइआ धिआनु ॥ २ ॥ तीजै पहरै रैणि के वणजारिआ मित्रा धन जोबन सिउ चितु ॥ हरि का नामु न चेतही वणजारिआ मित्रा बधा छुटहि जितु ॥ हरि का नामु न चेतै प्राणी बिकलु भइआ संगि माइआ ॥ धन सिउ रता जोबनि मता अहिला जनमु गवाइआ ॥ धरम सेती वापारु न कीतो करमु न कीतो मितु ॥ कहु नानक तीजै पहरै प्राणी धन जोबन सिउ चितु ॥ ३ ॥ चउथै पहरै रैणि के वणजारिआ मित्रा लावी आइआ खेतु ॥ जा जमि पकड़ि चलाइआ वणजारिआ मित्रा किसै न मिलिआ भेतु ॥ भेतु चेतु हरि किसै न मिलिओ जा जमि पकड़ि चलाइआ ॥ झूठा रुदनु होआ दुोआलै खिन महि भइआ पराइआ ॥ साई वसतु परापति होई जिसु सिउ लाइआ हेतु ॥ कहु नानक प्राणी चउथै पहरै लावी लुणिआ खेतु ॥ ४ ॥ १ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बालक बुधि अचेतु ॥ खीरु पीऐ खेलाईऐ वणजारिआ मित्रा मात पिता सुत हेतु ॥ मात पिता सुत नेहु घनेरा माइआ मोहु सबाई ॥ संजोगी आइआ किरतु कमाइआ करणी कार कराई ॥ राम नाम बिनु मुकति न होई बूडी दूजै हेति ॥ कहु नानक प्राणी पहिलै पहरै छूटहिगा हरि चेति ॥ १ ॥ दूजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा भरि जोबनि मै मति ॥ अहिनिसि कामि विआपिआ वणजारिआ मित्रा अंधुले नामु न चिति ॥ राम नामु घट अंतरि नाही होरि जाणै रस कस मीठे ॥ गिआनु धिआनु गुण संजमु नाही जनमि मरहुगे झूठे ॥ तीरथ वरत सुचि संजमु नाही करमु धरमु नही पूजा ॥ नानक भाइ भगति निसतारा दुबिधा विआपै दूजा ॥ २ ॥ तीजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा सरि हंस उलथड़े आइ ॥ जोबनु घटै जरूआ जिणै

रूपी जीवन के पहले प्रहर में माँ के गर्भ में निवास लिया है ॥१॥ हे व्यापारी मित्र, जीवन की रात्रि के दूसरे प्रहर में जीव को प्रभु चरणों का ध्यान विस्मृत हो जाता है। हे व्यापारी मित्र, जन्म लेकर इस संसार में जीव हाथों-हाथ इस प्रकार नचाया-फुसलाया जाता है जैसे यशोदा के घर में कृष्ण को हाथों-हाथ दुलारा जाता है। व्यक्ति संसार के हाथों में नाचता फिरता है। हालांकि माँ यह कहती कि यह मेरा पुत्र है परन्तु हे मेरे मूर्ख एवं अचेत मन, तू अभी भी होश में आ क्योंकि अन्ततः तेरा कोई नहीं है। जिसने तेरी रचना की तू उसे ही नहीं जानता है; तू उसके ज्ञान को ही मन में धारण कर। हे नानक, जीवन रूपी रात्रि के दूसरे प्रहर में जीव को प्रभु का ध्यान भूल जाता है ॥ २॥ हरि-नाम का व्यापार करने आये मित्र, जीवन के तीसरे प्रहर में तेरा चित्त धन एवं यौवन मे ही लीन बना रहता है जिसके कारण तू बंधनों से नहीं छूटता है। उस प्रभु के नाम का स्मरण हे मित्र तू कभी नहीं करता। हरि-नाम का स्मरण न करके हे जीव, तू माया के प्रपंचों मे ही व्याकुल बना रहता है। धन और यौवन में लीन होकर तूने अपना जन्म निष्फल करके गँवा दिया है। तूने धर्म का व्यापार नहीं किया और शुभ-कर्मों को अपना मित्र नहीं बनाया। हे नानक, जीवन रूपी रात्रि के तीसरे पड़ाव में व्यक्ति धन और यौवन में ही लिप्त बना रहता है ॥ ३ ॥ जीवन-रात्रि के चौथे प्रहर में हे व्यापारी मित्र, जीवन रूपी खेत को काटने वाला यम आ पहुँचा है। यह यम जीव को कब लेकर चल पड़ा हे मित्र, इसका किसी को पता भी नहीं चला। जब यम जीव को ले चला तो यह रहस्य किसी की भी समझ में नहीं आ सका। अब व्यक्ति के चारों ओर झूठा ही रोना-धोना शुरू होता है और वही व्यक्ति क्षण भर में पराया हो जाता है। जीवन भर जैसे कर्म हितपूर्वक करता रहा अन्त समय जीव को वैसा ही फल मिल जाता है। हे नानक, जीवन के चौथे प्रहर में यम रूपी नौकर ने व्यक्ति के जीवन रूपी खेत को काट लिया है ॥ ४ ॥ १ ॥ सिरीरागु महला १ ॥ हे व्यापारी मित्र, जीवन-रात्रि के पहले प्रहर में व्यक्ति का व्यवहार बाल-बुद्धि के अनुरूप अचेत अवस्था वाला होता है। उसे दूध पिलाया जाता है, खेलाया जाता है और माता-पिता का भी अपने पुत्र के साथ बहुत प्यार होता है। सभी माया-मोह में फंसे होते हैं और माता-पिता का तो अपने पुत्र से स्नेह कुछ ज्यादा ही होता है। जीव तो अपने भाग्यवश ही इस जन्म में आया, पिछले कर्मों के प्रभाव के अनुसार जो उसने लेना था लिया और अब अपना कार्य कर रहा है। दुनियाँ माया के मोह में डूब रही है और परमात्मा के नाम-सुमिरन के बिना उसकी मुक्ति नहीं हो सकती। हे नानक, जीवन के पहले प्रहर में यदि परमात्मा का सुमिरन करे तब ही जीव का छुटकारा हो सकता है ॥ १ ॥ हे जीव मित्र, जीवन के दूसरे प्रहर में यौवन के कारण जीव मदमस्त बना रहता है। दिन-रात काम उसमें व्याप्त रहता है और इस अन्धे व्यापारी के चित्त में प्रभु नाम का सुमिरन कभी आता नहीं। राम-नाम हृदय में नहीं होता और अन्य सभी रसीले कसैले और मीठे पदार्थों के साथ इसकी पहचान घनी होती जाती है। ज्ञान-ध्यान, गुण संयम आदि न होने के कारण झूठा बनकर उसके जीवन का अन्त होता है। तीर्थ-व्रत, शौच, संयम, कर्म-धर्म, पूजा आदि से मुक्ति नहीं मिलती। हे नानक, द्वैत भाव में दुविधा बनी रहती है और इस संसार से पार-उतारा केवल प्रेमाभक्ति के कारण ही हो पाता है ॥ २ ॥ हरि-नाम के व्यापारी मित्र, जीवन के तीसरे प्रहर में जीवन रूपी सरोवर में हंस अर्थात् सफेद केश आ उतरते है। हे मित्र, जवानी कम होती जाती है और बुढ़ापा जीवन को जीतता चला जाता है।

वणजारिआ मित्रा आव घटै दिनु जाइ ॥ अंति कालि पछुतासी अंधुले जा जमि पकड़ि चलाइआ ॥ सभु किछु अपुना करि करि राखिआ खिन महि भइआ पराइआ ॥ बुधि विसरजी गई सिआणप करि अवगण पछुताइ ॥ कहु नानक प्राणी तीजै पहरै प्रभु चेतहु लिव लाइ ॥ ३ ॥ चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बिरधि भइआ तनु खीणु ॥ अखी अंधु न दीसई वणजारिआ मित्रा कंनी सुणै न वैण ॥ अखी अंधु जीभ रसु नाही रहे पराकउ ताणा ॥ गुण अंतरि नाही किउ सुखु पावै मनमुख आवण जाणा ॥ खड़ पकी कुड़ि भजै बिनसै आइ चलै किआ माणु ॥ कहु नानक प्राणी चउथै पहरै गुरमुखि सबदु पछाणु ॥ ४ ॥ ओड़कु आइआ तिन साहिआ वणजारिआ मित्रा जरु जरवाणा कंनि ॥ इक रती गुण न समाणिआ वणजारिआ मित्रा अवगण खड़सनि बंनि ॥ गुण संजमि जावै चोट न खावै ना तिसु जंमणु मरणा ॥ कालु जालु जमु जोहि न साकै भाइ भगति भै तरणा ॥ पति सेती जावै सहजि समावै सगले दूख मिटावै ॥ कहु नानक प्राणी गुरमुखि छूटै साचे ते पति पावै ॥ ५ ॥ २ ॥ सिरीरागु महला ४ ॥ पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा हरि पाइआ उदर मंझारि ॥ हरि धिआवै हरि उचरै वणजारिआ मित्रा हरि हरि नामु समारि ॥ हरि हरि नामु जपे आराधे विचि अगनी हरि जपि जीविआ ॥ बाहरि जनमु भइआ मुखि लागा सरसे पिता मात थीविआ ॥ जिस की वसतु तिसु चेतहु प्राणी करि हिरदै गुरमुखि बीचारि ॥ कहु नानक प्राणी पहिलै पहरै हरि जपीऐ किरपा धारि ॥ १ ॥ दूजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा मनु लागा दूजै भाइ ॥ मेरा मेरा करि पालीऐ वणजारिआ मित्रा ले मात पिता गलि लाइ ॥ लावै मात पिता सदा गल सेती मनि जाणै खटि खवाए ॥ जो देवै तिसै न जाणै मूड़ा दिते नो लपटाए ॥ कोई गुरमुखि होवै सु करै वीचारु हरि धिआवै मनि लिव लाइ ॥ कहु नानक दूजै पहरै प्राणी तिसु कालु न कबहूं खाइ ॥ २ ॥ तीजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा मनु लगा आलि जंजालि ॥ धनु चितवै धनु संचवै वणजारिआ मित्रा हरि नामा हरि न समालि ॥ हरि नामा हरि हरि कदे

हर दिन बीतने के साथ आयु घटती जाती है । जब यम पकड़ कर ले चलता है तो अन्धा, जीव अन्तिम समय पछताता है । जीवन भर जो कुछ उसने अपना मानकर संजोया था वह क्षण भर में पराया हो जाता है । बुद्धि विदा हो जाती है और चतुराई भी समाप्त हो जाती है । अवगुणों के कारण केवल पछताना बचता है । नानक कहता है कि हे प्राणी, जीवन के तीसरे प्रहर में मग्न होकर प्रभु का सुमिरन करो ॥ ३ ॥ जीवन के चौथे प्रहर में हे व्यापारी मित्र, वृद्धावस्था में तन क्षीण हो जाता है । आँखों से दिखाई नहीं देता और कानों को बोल नहीं सुनते । आँखे अन्धी हो जाती है, जीभ रस विहीन हो जाती है और बल एवं पराक्रम भी नहीं रहते । जब अन्तर्मन में गुण नहीं तो सुख क्योंकर मिलेगा । मनमुख व्यक्ति का आवागमन बना ही रहेगा । पकी हुई खेती चटककर टूटती है और नष्ट हो जाती है अर्थात वृद्धावस्था में कड़ा रह चुका शरीर भी नष्ट हो जाता है । ऐसे शरीर का भला कैसा अभिमान ? नानक कहता है हे प्राणी, इस चौथे प्रहर में गुरमुख बनकर शब्द–ब्रह्म को पहचान ॥ ४ ॥ हे हरि–नाम के व्यापारी मित्र, मिले हुए श्वासों का अन्त आ गया और जरावस्था कन्धे पर सवार हो गयी । हे मित्र, जिसके हृदय में रत्ती भर गुण भी न टिके हों उसे उसके अवगुण ही बाँधकर ले चलते हैं । जो गुणों के संयम के साथ जीवन व्यतीत करता है उसे न तो चोटें खानी पड़ती हैं और न ही उसे बार–बार जन्मना–मरना पड़ता है । काल अथवा माया का जाल उसको स्पर्श नहीं कर सकता क्योंकि उसने तो प्रेमाभक्ति के माध्यम से संसार सागर को पार करना है । वह सम्मान सहित जाता है और समस्त दुखों को मिटाकर सहज भाव में लीन हो जाता है । नानक कहता है कि प्राणी गुरमुख बनकर ही छूटता है और सत्याचरण से ही उसको सम्मान प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ २ ॥ सिरीरागु महला ४ ॥ जीवन के पहले प्रहर में हे व्यापारी मित्र, जीव को प्रभु ने माँ के पेट में स्थित किया है । वहाँ जीव प्रभु की आराधना और गुणानुवाद करता हरि–नाम का सुमिरन करता है। वह हरि–नाम का जाप–आराधना करता हुआ, हरि–नाम के फलस्वरूप अग्नि में भी जीवित रहता है । जन्म होते ही वह माता–पिता के सामने पड़ता है और माता–पिता प्रसन्न हो उठते हैं । जिस परमात्मा ने यह बालक रूपी वस्तु दी है उस परमात्मा का सुमिरन करो और गुरमुख बनकर हृदय में उसका विचार करो । नानक कहता है कि जीवन के पहले प्रहर में हे जीव, कृपा धारण करने वाले उस प्रभु का सुमिरन किया जाना चाहिए ॥ १ ॥ जीवन–रात्रि के दूसरे प्रहर में हे मित्र, मन द्वैत भाव में लग जाता है । मेरा–मेरा कहकर माता–पिता बालक को पालते हैं और उसे गले से लगाए रहते हैं । माता–पिता अपने मन में समझते हैं कि यह हमें कमाकर खिलाएगा । मूर्ख व्यक्ति देने वाले के साथ चित्त नहीं लगाता परन्तु जो दिया हुआ है उसके साथ लिपटता रहता है । यदि कोई गुरमुख बनकर विचार करे तो वह निश्चित रूप से मन लगाकर प्रभु का ही ध्यान करेगा । हे नानक, जीवन के दूसरे प्रहर में जिसने परमात्मा का ध्यान किया उसकी आध्यात्मिक मौत कभी भी नहीं होती ॥ २ ॥ हे मित्र, जीवन के तीसरे प्रहर में व्यक्ति का मन व्यर्थ के झंझटों में लगा रहता है । वह धन की इच्छा करता है, धन एकत्र करता है परन्तु हरि–नाम को मन में नहीं संभालता । अन्त में सहायक बनने वाले परमात्मा के नाम को वह कभी भी

न समालै जि होवै अंति सखाई ॥ इहु धनु संपै माइआ झूठी अंति छोडि चलिआ पछुताई ॥ जिस नो किरपा करे गुरु मेले सो हरि हरि नामु समालि ॥ कहु नानक तीजै पहरै प्राणी से जाइ मिले हरि नालि ॥ ३ ॥ चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा हरि चलण वेला आदी ॥ करि सेवहु पूरा सतिगुरू वणजारिआ मित्रा सभ चली रैणि विहादी ॥ हरि सेवहु खिनु खिनु ढिल मूलि न करिहु जितु असथिरु जुगु जुगु होवहु ॥ हरि सेती सद माणहु रलीआ जनम मरण दुख खोवहु ॥ गुर सतिगुर सुआमी भेदु न जाणहु जितु मिलि हरि भगति सुखांदी ॥ कहु नानक प्राणी चउथै पहरै सफलिओ रैणि भगता दी ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ पहिलै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा धरि पाइता उदरै माहि ॥ दसी मासी मानसु कीआ वणजारिआ मित्रा करि मुहलति करम कमाहि ॥ मुहलति करि दीनी करम कमाणे जैसा लिखतु धुरि पाइआ ॥ मात पिता भाई सुत बनिता तिन भीतरि प्रभू संजोइआ ॥ करम सुकरम कराए आपे इसु जंतै वसि किछु नाहि ॥ कहु नानक प्राणी पहिलै पहरै धरि पाइता उदरै माहि ॥ १ ॥ दूजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा भरि जुआनी लहरी देइ ॥ बुरा भला न पछाणई वणजारिआ मित्रा मनु मता अहंमेइ ॥ बुरा भला न पछाणै प्राणी आगै पंथु करारा ॥ पूरा सतिगुरु कबहूं न सेविआ सिरि ठाढे जम जंदारा ॥ धरम राइ जब पकरसि बवरे तब किआ जबाबु करेइ ॥ कहु नानक दूजै पहरै प्राणी भरि जोबनु लहरी देइ ॥ २ ॥ तीजै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा बिखु संचै अंधु अगिआनु ॥ पुत्रि कलत्रि मोहि लपटिआ वणजारिआ मित्रा अंतरि लहरि लोभानु ॥ अंतरि लहरि लोभानु परानी सो प्रभु चिति न आवै ॥ साधसंगति सिउ संगु न कीआ बहु जोनी दुखु पावै ॥ सिरजनहारु विसारिआ सुआमी इक निमख न लगो धिआनु ॥ कहु नानक प्राणी तीजै पहरै बिखु संचे अंधु अगिआनु ॥ ३ ॥ चउथै पहरै रैणि कै वणजारिआ मित्रा दिनु नेड़ै आइआ सोइ ॥ गुरमुखि नामु समालि तूं वणजारिआ मित्रा तेरा दरगह बेली होइ ॥ गुरमुखि नामु समालि पराणी अंते

नहीं धारण करता । यह धन–सम्पत्ति एवं माया सभी झूठे हैं जिन्हें अन्त में छोड़कर पछताता हुआ जीव जाता है । जिसे प्रभु कृपा करके गुरु से मिला देता है वह हरि–नाम का स्मरण करता है । नानक कहता है कि ऐसे व्यक्ति जीवन के तीसरे प्रहर में प्रभु से मिलाप कर लेते हैं ॥ ३ ॥ हे व्यापारी मित्र, जीवन–रात्रि के चौथे प्रहर में इस संसार से जाने का समय आ जाता है । पूर्ण सद्गुरु की सेवा करो क्योंकि हे मित्र, यह सारी जीवन–रात्रि गुजरती जा रही है । परमात्मा का प्रति क्षण सुमिरन करो और इस कार्य में क्षण–भर का भी विलम्ब मत करो । इस प्रकार तुम सभी युगों में स्थिर हो जाओगे। सदैव परमात्मा के साथ ही आनन्द का उपभोग करो और इस प्रकार जन्म–मरण के दुख को मिटा दो । गुरु, सद्गुरु और परमात्मा में तनिक भी भेद मत जानो क्योंकि इनके साथ लीन रहने पर ही परमात्मा की भक्ति भी सुखदायक बनती है । हे नानक, भक्त–जनों की ही जीवन–रात्रि का यह चौथा प्रहर सफल होता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ३ ॥ सिरीरागु महला ५ ॥ हरि–नाम का व्यापार करने वाले मित्र, जीवन–रात्रि के पहले प्रहर में परमात्मा जीव को माँ के पेट में स्थित कर देता है । फिर दस महीने में प्रभु जीव को मानव बना देता है और जीव (अच्छे–बुरे) कर्म करना प्रारम्भ कर देते हैं । जीव के कर्म करने का समय भी निश्चित कर दिया जाता है और परमात्मा के लिखे हुए लेखों के अनुसार ही जीव कर्म करता है । माता, पिता, भाई, पुत्र, स्त्री आदि के सम्बन्धों में परमात्मा जीव को संयुक्त कर देता है । वास्तव में कर्म, सुकर्म आदि वह परमात्मा स्वयं ही करवाता है और जीवों के वश में कुछ भी नहीं है । नानक कहता है कि प्राणी को इस प्रकार पहले प्रहर में माँ के पेट में टिका लिया जाता है ॥ १ ॥ जीवन के दूसरे प्रहर में यौवन जीव के अन्दर लहराने लगता है । बुरे–भले की पहचान नहीं रह जाती और मन अहंकार में मदमस्त हो जाता है । जीव बुरा–भला तो नहीं पहचानता परन्तु उसके सामने अभी जीवन का कठिन रास्ता तय करने के लिए पड़ा होता है । पूर्ण सद्गुरु (परमात्मा) का जिसने कभी भी सुमिरन नहीं किया उसके सिर पर भयानक यम सदा खड़ा रहता है । हे बावरे जीव! जब धर्मराज तुझे पकड़ेगा तब तू क्या जवाब देगा । हे नानक, जीवन के दूसरे प्रहर में इस प्रकार यौवन की लहरें उछाल मारने लगती हैं ॥ २ ॥ जीवन–रात्रि के तीसरे प्रहर में व्यक्ति अन्धा और अज्ञानी बन कर माया रूपी विष को एकत्र करता रहता है । पुत्र, स्त्री के मोह में लिपटे हुए व्यक्ति के अन्दर लोभ की लहरें उठती रहती हैं । प्राणी के अन्तर्मन में लोभ की लहरों के कारण उसे प्रभु का कभी भी स्मरण नहीं होता है । उसने सद्संगत नहीं की होती है और फलस्वरूप वह अनेक योनियों के दुखों को भोगता है । सृजनकर्ता उस स्वामी प्रभु को विस्मृत करके उसने कभी एक क्षण भी उसमें ध्यान नहीं लगाया है । हे नानक, इस प्रकार जीवन के तीसरे प्रहर में प्राणी अन्धा और अज्ञानी होकर विष का संचय करता है ॥३॥ हे व्यापारी मित्र, जीवन–रात्रि के चौथे प्रहर में अब व्यक्ति के जाने का दिन समीप आ जाता है । हे मित्र, तू गुरमुख बनकर प्रभु नाम को मन में बसा क्योंकि यही परलोक में तेरा रक्षक साथी बनेगा । हे जीव, गुरमुख बनकर तू राम को चित्त में बसा; यही तेरा अन्त में

होइ सखाई ॥ इहु मोहु माइआ तेरै संगि न चालै झूठी प्रीति लगाई ॥ सगली रैणि गुदरी अंधिआरी सेवि सतिगुरु चानणु होइ ॥ कहु नानक प्राणी चउथै पहरै दिनु नेड़ै आइआ सोइ ॥ ४ ॥ लिखिआ आइआ गोविंद का वणजारिआ मित्रा उठि चले कमाणा साथि ॥ इक रती बिलम न देवनी वणजारिआ मित्रा ओनी तकड़े पाए हाथ ॥ लिखिआ आइआ पकड़ि चलाइआ मनमुख सदा दुहेले ॥ जिनी पूरा सतिगुरु सेविआ से दरगह सदा सुहेले ॥ करम धरती सरीरु जुग अंतरि जो बोवै सो खाति ॥ कहु नानक भगत सोहहि दरवारे मनमुख सदा भवाति ॥ ५ ॥ १ ॥ ४ ॥

सिरीरागु महला ४ घरु २ छंत   १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

मुंध इआणी पेईअड़ै किउ करि हरि दरसनु पिखै ॥ हरि हरि अपनी किरपा करे गुरमुखि साहुरड़ै कंम सिखै ॥ साहुरड़ै कंम सिखै गुरमुखि हरि हरि सदा धिआए ॥ सहीआ विचि फिरै सुहेली हरि दरगह बाह लुडाए ॥ लेखा धरम राइ की बाकी जपि हरि हरि नामु किरखै ॥ मुंध इआणी पेईअड़ै गुरमुखि हरि दरसनु दिखै ॥ १ ॥ वीआहु होआ मेरे बाबुला गुरमुखे हरि पाइआ ॥ अगिआनु अंधेरा कटिआ गुर गिआनु प्रचंडु बलाइआ ॥ बलिआ गुर गिआनु अंधेरा बिनसिआ हरि रतनु पदारथु लाधा ॥ हउमै रोगु गइआ दुखु लाथा आपु आपै गुरमति खाधा ॥ अकाल मूरति वरु पाइआ अबिनासी ना कदे मरै न जाइआ ॥ वीआहु होआ मेरे बाबोला गुरमुखे हरि पाइआ ॥ २ ॥ हरि सति सते मेरे बाबुला हरि जन मिलि जंञ सुहंदी ॥ पेवकड़ै हरि जपि सुहेली विचि साहुरड़ै खरी सोहंदी ॥ साहुरड़ै विचि खरी सोहंदी जिनि पेवकड़ै नामु समालिआ ॥ सभु सफलिओ जनमु तिना दा गुरमुखि जिना मनु जिणि पासा ढालिआ ॥ हरि संत जना मिलि कारजु सोहिआ वरु पाइआ पुरखु अनंदी ॥ हरि सति सति मेरे बाबोला हरि जन मिलि जंञ सोहंदी ॥ ३ ॥ हरि प्रभु मेरे बाबुला हरि देवहु

मित्र होगा क्योंकि इस मोह–माया से जो तूने झूठी प्रीति लगा रखी है वह तेरे साथ जाने वाली नहीं है। जीवन रूपी सारी रात्रि अन्धकारमय बन कर गुजर गयी। केवल परमात्मा के सुमिरन से ही इसमें प्रकाश होता है। हे नानक! प्राणी के जीवन के चौथे प्रहर में उसका जाने का दिन पास आ जाता है ॥ ४ ॥ परमात्मा का लिखा हुआ संदेश जब आ पहुँचता है तो जीव जीवन भर की कमाई के साथ यहाँ से उठ चलता है। यमों ने भी इतने मज़बूत हाथों से पकड़ लिया होता है कि अब चलने में एक क्षण का समय भी नहीं दिया जाता। संदेशा आते ही जीव को पकड़कर धकेल लिया जाता है और मनमुख व्यक्ति सदा दुख में ही पड़े रहते हैं। परन्तु जिन्होंने पूर्ण सद्गुरु–परमात्मा का सुमिरन किया है वे परलोक में सदा सुखी रहते हैं। हे मित्र, मानव जीवन में शरीर कर्म कमाने के लिए धरती है जिसमें जो जैसा बोता है वही उसको खाने को मिलता है। हे नानक, प्रभु भक्ति करने वाले प्रभु–द्वार पर शोभा प्राप्त करते है और मन के पीछे चलने वाले मनमुख सदा आवागमन में पड़े रहते है ॥ ५ ॥ १ ॥ ४ ॥

सिरीरागु महला ४ ॥ घरु २ छंत १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

यदि जीव–स्त्री पिता के घर में सदा अनजान ही बनी रहे तो वह पति–प्रभु का दर्शन भला कैसे कर सकती है। जब परमात्मा कृपा करता है तो जीव–स्त्री गुरमुख बनकर ससुराल मे किये जाने वाले कार्यो को पहले ही सीख लेती है। ससुराल में किये जाने वाले कर्मों को सीखते हुए गुरमुख जीव–आत्मा सदैव हरि का सुमिरन करती रहती है। ऐसी जीव–स्त्री अपनी सखियों के बीच भी प्रसन्न रहती है और प्रभु–दरबार में भी आनन्दित होकर चिन्ता मुक्त रहती है। वह जीव–स्त्री प्रभु–नाम का सुमिरन करके धर्मराज के लेख का बकाया समाप्त कर लेती है। भोली जीव–स्त्री पिता के घर पर अर्थात् इस संसार में ही गुरमुख बनकर हरि दर्शन कर लेती है ॥१॥ हे मेरे पिता, प्रभु–पति के साथ मेरा विवाह हो गया है और गुरमुख बनकर मैंने उस परमात्मा को पा लिया है। गुरु द्वारा प्रचण्ड की हुई ज्ञान–अग्नि के कारण मेरे अन्दर का अज्ञान का अंधेरा नष्ट हो गया है। गुरु के माध्यम से मिले ज्ञान के कारण अंधेरा विनष्ट हो गया है और मुझे हरि–रत्न रूपी बहुमूल्य पदार्थ मिल गया है। गुरु की मति के अनुरूप चलने से मेरे अहंकार का रोग दूर हो गया है और अपना ज्ञान होने से मेरे अन्दर का अहम्–भाव समाप्त हो गया है। अविनाशी अकाल एवं सौन्दर्य मूर्ति जैसा वर मैंने पा लिया है जो न तो कभी जन्मता है और न ही मरता है। हे मेरे पिता, मेरा विवाह हो गया है और गुरमुख बनकर मैंने परमात्मा को पा लिया है ॥ २ ॥ हे मेरे पिता, प्रभु–पति सदैव–सदैव बना रहने वाला है और प्रभु के भक्तजन मिलकर एक सुन्दर बारात बनते हैं। जो जीव–स्त्री पिता के घर में अर्थात् इस जीवन में परमात्मा का नाम जपकर सुखी जीवन व्यतीत करती है वह ससुराल (परलोक) में भी बहुत सुन्दर शोभा वाली बनती है। ससुराल में वहीं शोभायुक्त होती है जिसने माता–पिता के घर में प्रभु–नाम को चित्त में बसा लिया होता है। गुरमुख बनने वाली जीव स्त्रियों का सारा जीवन सफल होता है क्योंकि उन्होंने मन को जीतकर जीवन के पांसे को खेला होता है। परमात्मा का सुमिरन करने वाले शान्त पुरुषों से मिलकर आनन्ददायक प्रभु रूपी वर से मिलाप होता है। हे मेरे पिता, प्रभु–पति सदा स्थिर बना रहने वाला है और प्रभु के भक्तजन मिलकर एक सुन्दर बरात बनते है ॥ ३ ॥ हे मेरे पिता,

दानु मै दाजो ॥ हरि कपड़ो हरि सोभा देवहु जितु सवरै मेरा काजो ॥ हरि हरि भगती काजु सुहेला गुरि सतिगुरि दानु दिवाइआ ॥ खंडि वरभंडि हरि सोभा होई इहु दानु न रलै रलाइआ ॥ होरि मनमुख दाजु जि रखि दिखालहि सु कूड़ु अहंकारु कचु पाजो ॥ हरि प्रभ मेरे बाबुला हरि देवहु दानु मै दाजो ॥ ४ ॥ हरि राम राम मेरे बाबोला पिर मिलि धन वेल वधंदी ॥ हरि जुगह जुगो जुग जुगह जुगो सद पीड़ी गुरू चलंदी ॥ जुगि जुगि पीड़ी चलै सतिगुर की जिनी गुरमुखि नामु धिआइआ ॥ हरि पुरखु न कब ही बिनसै जावै नित देवै चड़ै सवाइआ ॥ नानक संत संत हरि एको जपि हरि हरि नामु सोहंदी ॥ हरि राम राम मेरे बाबुला पिर मिलि धन वेल वधंदी ॥ ५ ॥ १ ॥

सिरीरागु महला ५ छंत १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

मन पिआरिआ जीउ मित्रा गोबिंद नामु समाले ॥ मन पिआरिआ जी मित्रा हरि निबहै तेरै नाले ॥ संगि सहाई हरि नामु धिआई बिरथा कोइ न जाए ॥ मन चिंदे सेई फल पावहि चरण कमल चितु लाए ॥ जलि थलि पूरि रहिआ बनवारी घटि घटि नदरि निहाले ॥ नानकु सिख देइ मन प्रीतम साधसंगि भ्रमु जाले ॥ १ ॥ मन पिआरिआ जी मित्रा हरि बिनु झूठु पसारे ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा बिखु सागरु संसारे ॥ चरण कमल करि बोहिथु करते सहसा दूखु न बिआपै ॥ गुरु पूरा भेटै वडभागी आठ पहर प्रभु जापै ॥ आदि जुगादी सेवक सुआमी भगता नामु अधारे ॥ नानकु सिख देइ मन प्रीतम बिनु हरि झूठ पसारे ॥ २ ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि लदे खेप सवली ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि दरु निहचलु मली ॥ हरि दरु सेवे अलख अभेवे निहचलु आसणु पाइआ ॥ तह जनम न मरणु न आवण जाणा संसा दूखु मिटाइआ ॥ चित्र गुपत का कागदु फारिआ जमदूता कछू न चली ॥ नानकु सिख देइ मन प्रीतम हरि लदे खेप सवली ॥ ३ ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा करि संता संगि निवासो ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि नामु जपत परगासो ॥ सिमरि सुआमी

मुझे हरि–प्रभु के नाम का दान रूपी दहेज दो। मुझे हरि–नाम रूपी कपड़े दो और हरि–नाम रूपी ही गहने, धन आदि दो जिससे मेरा विवाह कार्य सुन्दर बन जाए। परमात्मा की भक्ति के फलस्वरूप ही विवाह का उद्यम सुखदायी बनता है। जिसे सद्गुरु ने यह दान दिला दिया है, हरि–नाम के दहेज के साथ उसकी शोभा देश और ब्रह्माण्ड में हो जाती है और इस दहेज की कोई बराबरी नहीं कर सकता। मनमुख व्यक्ति जो अपने दहेज को दिखलाते हैं उनका यह दिखलाना वास्तव में झूठा अहंकार है और उनका यह कच्चा काम मात्र आडम्बर ही है। हे मेरे पिता, मुझे हरि–प्रभु के नाम का दान दे। यह मेरा दहेज है ॥ ४ ॥ हे मेरे पिता, सर्वत्र रमण करने वाले हरि रूपी पति के साथ मिलकर जीव रूपी स्त्री की पीढ़ी आगे चल पड़ती है। हरि रूपी गुरु की युगों–युगान्तरों से पीढ़ी चली आ रही है। सर्वशक्तिमान प्रभु कभी विनष्ट नहीं होता और उसका दिया हुआ दान सदैव बढ़ता ही रहता है। हे नानक, भक्तजन और प्रभु एक ही रूप है। परमात्मा का नाम स्मरण करते हुए जीव स्त्री सुन्दर जीवन वाली बन जाती है। हे मेरे पिता, सर्वत्र रमण करने वाले उस परमात्मा रूपी पति को मिलकर ही जीव स्त्री की पीढ़ी आगे चलती है अर्थात् अन्य अनेक जीव भी उसके सत्संग में सुमिरन का मार्ग पा जाते हैं ॥ ५ ॥ १ ॥

सिरीरागु महला ५ ॥ छन्द १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे प्यारे एवं मित्र मन, परमात्मा का नाम अपने अन्दर धारण कर। हे प्यारे एवं मित्र मन, केवल परमात्मा ही तेरे साथ निभेगा। परमात्मा के नाम का सुमिरन कर; यही तेरा सहायक होगा और जीवन का कोई भी क्षण तेरा व्यर्थ नहीं जाएगा। हे भाई, परमात्मा के चरण–कमल में चित्त लगाने से मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं क्योंकि जल–स्थल अथवा सर्वत्र व्याप्त परमात्मा प्रत्येक जीव को अपनी कृपा–दृष्टि से देखता रहता है। हे प्यारे मन, नानक तुझे शिक्षा देता है कि तू सद्संगत में रहकर अपने भटकाव को समाप्त कर ॥ १ ॥ हे मेरे प्यारे मित्र मन, परमात्मा के बिना अन्य सारा प्रपंच झूठा (अस्थिर) है। हे प्यारे मन, यह संसार विष का सागर है। तू कर्त्ता परमात्मा के चरण–कमलों को जहाज मान; तुझे कोई भी संशय और दुख प्रभावित नहीं करेगा। भाग्यशाली व्यक्ति पूर्ण गुरु परमात्मा की सेवा करता है और आठों प्रहर प्रभु का जाप करता है। आदि काल से ही परमात्मा अपने सेवकों का रक्षक है और भक्तों के लिए प्रभु–नाम ही जीवन का सहारा है। हे मन, नानक तुझे शिक्षा देता है कि उस प्रियतम प्रभु के बिना बाकी सारा प्रपंच झूठा है ॥ २ ॥ हे प्यारे एवं मित्र मन, तू प्रभु– नाम के सौदे का व्यापार कर और यही खेप तुझे लाभ देने वाली है। हे मित्र मन, तू परमात्मा के अटल द्वार पर बैठा रह। जो व्यक्ति उस अदृष्ट और अटल एवं रहस्यपूर्ण परमात्मा का द्वार पकड़े रहता है उसका जन्म–मरण, संशय एवं दुख मिट जाता है। चित्रगुप्त द्वारा लिखा हुआ उसके कर्मों का कागज भी फाड़ दिया जाता है और यमदूतों का भी उस पर कोई बस नहीं चलता है। हे मेरे प्रिय मन, नानक तुझे यही शिक्षा देता है कि परमात्मा रूपी सौदा ही लादकर ले जाना चाहिए ॥ ३ ॥ हे प्यारे मित्र मन, शान्त पुरुषों की संगत में अपना निवास कर। हे प्यारे मित्र मन, प्रभु नाम के सुमिरन से ही अन्तर्मन प्रकाशित होता है।

सुखह गामी इछ सगली पुंनीआ ॥ पुरबे कमाए स्रीरंग पाए हरि मिले चिरी विछुंनिआ ॥ अंतरि बाहरि सरबति रविआ मनि उपजिआ बिसुआसो ॥ नानकु सिख देइ मन प्रीतम करि संता संगि निवासो ॥ ४ ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि प्रेम भगति मनु लीना ॥ मन पिआरिआ जीउ मित्रा हरि जल मिलि जीवे मीना ॥ हरि पी आघाने अंम्रित बाने स्रब सुखा मन वुठे ॥ स्रीधर पाए मंगल गाए इछ पुंनी सतिगुर तुठे ॥ लड़ि लीने लाए नउ निधि पाए नाउ सरबसु ठाकुरि दीना ॥ नानक सिख संत समझाई हरि प्रेम भगति मनु लीना ॥ ५ ॥ १ ॥ २ ॥

सिरीराग के छंत महला ५ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

डखणा ॥ हठ मझाहू मा पिरी पसे किउ दीदार ॥ संत सरणाई लभणे नानक प्राण अधार ॥ १ ॥ छंतु ॥ चरन कमल सिउ प्रीति रीति संतन मनि आवए जीउ ॥ दुतीआ भाउ बिपरीति अनीति दासा नह भावए जीउ ॥ दासा नह भावए बिनु दरसावए इक खिनु धीरजु किउ करै ॥ नाम बिहूना तनु मनु हीना जल बिनु मछुली जिउ मरै ॥ मिलु मेरे पिआरे प्रान अधारे गुण साधसंगि मिलि गावए ॥ नानक के सुआमी धारि अनुग्रहु मनि तनि अंकि समावए ॥ १ ॥ डखणा ॥ सोहंदड़ो हभ ठाइ कोइ न दिसै डूजड़ो ॥ खुल्हड़े कपाट नानक सतिगुर भेटते ॥ १ ॥ छंतु ॥ तेरे बचन अनूप अपार संतन आधार बाणी बीचारीऐ जीउ ॥ सिमरत सास गिरास पूरन बिसुआस किउ मनहु बिसारीऐ जीउ ॥ किउ मनहु बेसारीऐ निमख नही टारीऐ गुणवंत प्रान हमारे ॥ मन बांछत फल देत है सुआमी जीअ की बिरथा सारे ॥ अनाथ के नाथे स्रब के साथे जपि जूऐ जनमु न हारीऐ ॥ नानक की बेनंती प्रभ पहि क्रिपा करि भवजलु तारीऐ ॥ २ ॥ डखणा ॥ धूड़ी मजनु साध खे साई थीए क्रिपाल ॥ लधे हभे थोकड़े नानक हरि धनु माल ॥ १ ॥ छंतु ॥ सुंदर सुआमी धाम भगतह बिस्राम आसा लगि जीवते जीउ ॥ मनि तने

• सुख देने वाले उस स्वामी प्रभु का सुमिरन कर जो समस्त इच्छाओं की पूर्ति करता है। पूर्व जन्म के कमाये हुए नेक संस्कारों के अनुसार बहुत समय से बिछुड़ा हुआ पति–प्रभु मिल जाता है। अब अन्दर–बाहर सर्वत्र रमण करने वाले परमात्मा के प्रति मन में पक्का विश्वास घर कर जाता है। हे मित्र मन, नानक तुझे शिक्षा देता है कि तू शान्त पुरुषों की संगत में बना रह ॥ ४ ॥ हे प्यारे मन, जो प्रभु की भक्ति में सदैव लीन रहता है वह इस प्रकार जीता है जैसे मछली पानी से मिलकर सुखपूर्वक जीती है। हरि–रस पीकर और उसकी अमृत–वाणी से अघाकर व्यक्ति के मन में सभी सुख आ बसते है। उसे परमात्मा प्राप्त हो जाता है और मंगल गान के फलस्वरूप एवं सद्गुरु की कृपा से उसकी सभी इच्छाएं पूरी हो जाती है। हे नानक, जिसे प्रभु ने अपना पल्लू थमा दिया है उसे तो मानो नव निधियाँ मिल गयी है क्योंकि प्रभु ने उसे अपना सर्वस्व रूपी नाम–धन दे दिया है। हे नानक, जिन्हें शान्त पुरुषों ने शिक्षा देकर समझा दिया है उनका मन परमात्मा की प्रेमा भक्ति में लीन बना रहता है ॥ ५ ॥ १ ॥ २ ॥

सिरीरागु के छन्त (छन्द) महला ५ १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥ डखणा ॥

मेरा प्यारा प्रभु–पति मेरे हृदय में है परन्तु उसका दीदार कैसे हो। हे नानक, प्राणों का आधार प्रभु केवल शान्त पुरुषों की शरण में आने पर ही प्राप्त होता है ॥ १ ॥ छन्त॥ प्रभु के सुन्दर चरणों के साथ प्रेम बनाए रखने की मर्यादा शान्त व्यक्तियों के मन में ही बसती है। परमात्मा के बिना किसी अन्य के साथ प्रेम रखना प्रभु के दासों को उलटी रीति एवं नीति प्रतीत होती है। प्रभु के दासों को प्रभु के दर्शन के बिना कोई अन्य जीवन ढंग पसन्द नहीं आता। नाम–विहीन तन–मन ऐसे ही प्रतीत होता है जैसे जल के बिना मछली मरने वाली हो जाती है। हे मेरे प्यारे एवं प्राण–आधार प्रभु, मुझे आन मिलो ताकि सदसंगत में मिलकर मैं तेरे गुण गा सकूँ। हे नानक के स्वामी प्रभु, कृपा कर ताकि तेरा दास नानक तन–मन से तेरी गोद में समाया रहे ॥ १ ॥ डखणा ॥ वह प्रभु सर्वत्र शोभायमान है और उसके बिना अन्य कोई दिखाई नहीं देता ॥ सद्गुरु परमात्मा से मिलते ही विकारों द्वारा बन्द पड़े हुए मन के द्वार खुल जाते है ॥ १ ॥ छन्त ॥ हे शान्त पुरुषों के आश्रय प्रभु, तेरी वाणी अनुपम एवं अपार है जिस पर सर्वत्र विचार किया जाता है। प्रत्येक श्वास के साथ तेरा सुमिरन करने से यह विश्वास पक्का हो जाता है कि उस प्रभु के नाम को मन से विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए। हे गुणवान एवं हमारे प्राण प्रभु, तुझे मन से एक क्षण के लिए भी भला कैसे भुलाया जाये और अपने से दूर क्यों किया जाए। स्वामी प्रभु मनोवांछित फल प्रदान करता है और प्रत्येक जीव की वेदना भी सुनता है। हे जीव, वह अनाथों का नाथ है और सब के साथ रहने वाला है। तू उसका सुमिरन कर और अपने जीवन को जूए की बाजी की तरह मत हार। परमात्मा के समक्ष नानक की यही प्रार्थना है कि हे प्रभु, कृपा करके मुझे संसार सागर से पार कर दे ॥ २ ॥ डखणा ॥ प्रभु की कृपा होने से ही साधु व्यक्तियों की चरण–धूलि में स्नान करने का अवसर मिलता है। हे नानक, तब व्यक्ति को सभी पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं और हरि रूपी धन माल भी प्राप्त हो जाता है ॥ १ ॥ छन्त ॥ प्रभु के सुन्दर चरण भक्तजनों का निवास स्थान होता है और वहीं टिके रहने की आशा में भक्तजन जीवन को उत्तरोत्तर ऊँचा बनाते जाते है।

गलतान सिमरत प्रभ नाम हरि अंम्रितु पीवते जीउ ॥ अंम्रितु हरि पीवते सदा थिरु थीवते बिखै बनु फीका जानिआ ॥ भए किरपाल गोपाल प्रभ मेरे साधसंगति निधि मानिआ ॥ सरबसो सूख आनंद घन पिआरे हरि रतनु मन अंतरि सीवते ॥ इकु तिलु नही विसरै प्रान आधारा जपि जपि नानक जीवते ॥ ३ ॥ डखणा ॥ जो तउ कीने आपणे तिना कूं मिलिओहि ॥ आपे ही आपि मोहिओहु जसु नानक आपि सुणिओहि ॥ १ ॥ छंतु ॥ प्रेम ठगउरी पाइ रीझाइ गोबिंद मनु मोहिआ जीउ ॥ संतन कै परसादि अगाधि कंठे लगि सोहिआ जीउ ॥ हरि कंठि लगि सोहिआ दोख सभि जोहिआ भगति लख्यण करि वसि भए ॥ मनि सरब सुख वुठे गोविद तुठे जनम मरणा सभि मिटि गए ॥ सखी मंगलो गाइआ इछ पुजाइआ बहुड़ि न माइआ होहिआ ॥ करु गहि लीने नानक प्रभ पिआरे संसारु सागरु नही पोहिआ ॥ ४ ॥ डखणा ॥ साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो ॥ जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो ॥ १ ॥ छंतु ॥ कहते पवित्र सुणते सभि धंनु लिखती कुलु तारिआ जीउ ॥ जिन कउ साधू संगु नाम हरि रंगु तिनी ब्रहमु बीचारिआ जीउ ॥ ब्रहमु बीचारिआ जनमु सवारिआ पूरन किरपा प्रभि करी ॥ करु गहि लीने हरि जसो दीने जोनि ना धावै नह मरी ॥ सतिगुर दइआल किरपाल भेटत हरे कामु क्रोधु लोभु मारिआ ॥ कथनु न जाइ अकथु सुआमी सदकै जाइ नानकु वारिआ ॥ ५ ॥ १ ॥ ३ ॥

सिरीरागु महला ४ वणजारा १ओ सति नामु गुर प्रसादि ॥

हरि हरि उतमु नामु है जिनि सिरिआ सभु कोइ जीउ ॥ हरि जीअ सभे प्रतिपालदा घटि घटि रमईआ सोइ ॥ सो हरि सदा धिआईऐ तिसु बिनु अवरु न कोइ ॥ जो मोहि माइआ चितु लाइदे से छोडि चले दुखु रोइ ॥ जन नानक नामु धिआइआ हरि अंति सखाई होइ ॥ १ ॥ मै हरि बिनु अवरु न कोइ ॥ हरि गुर सरणाई पाईऐ वणजारिआ मित्रा वडभागि परापति होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥

भक्तजन प्रभु सुमिरन में तन, मन से लीन बने रहते हैं और हरि रूपी अमृत का पान करते रहते हैं । वे विषयों के पानी को फीका मानते हुए सदैव हरि–नाम रूपी अमृत पीते हैं और अमर बने रहते है । सद्संगत को जिन्होंने हर प्रकार का खजाना मान लिया है प्रभु पिता उन्हीं पर ही कृपा करते हैं । उनको गहन आनन्द की अनुभूति होती है और ऐसे प्यारे व्यक्ति प्रभु के श्रेष्ठ नाम रत्न को सदैव मन में पिरोये रहते हैं । हे नानक, भक्तजनों को एक क्षण के लिए भी प्राणाधार परमात्मा विस्मृत नहीं होता और उसी का जाप करके वे सदैव जीवित बने रहते हैं ॥ ३ ॥ डखणा ॥ हे नानक, जिन भाग्यशालियों को तू अपना बना लेता है उनको ही तू प्राप्त होता है । तू स्वयं उन पर मोहित होता है और अपना गुणानुवाद सुनकर आनन्दित होता है ॥ १ ॥ छन्त ॥ प्रेमरूपी ठग मूरी (ठग बूटी) खिला कर परमात्मा का मन मोह लिया जाता है । भक्तजनों की ही कृपा से व्यक्ति अनन्त प्रभु के गले लगकर सुन्दर जीवन वाला बनता है । परमात्मा के गले लगने से व्यक्ति के सारे दुख मिट जाते है और प्रभु भक्ति–भाव के लक्षणों के माध्यम से जीव के वश में आ जाता है परमात्मा के प्रसन्न होने पर मन में सभी सुख आ बसते हैं और जन्म–मरण का चक्र मिट जाता हैं । मित्र भक्त–जन उसी के गीत गाते है क्योंकि उनके मन की मुरादें पूरी हो चुकी होती हैं और फिर माया के धक्के नहीं पड़ते। हे नानक, उस प्रिय प्रभु ने जिनका हाथ पकड़ लिया है उन पर संसार–सागर अपनी शक्ति नहीं दिखा सकता ॥ ४ ॥ डखणा ॥ उस प्रभु का नाम अमूल्य है जिसकी कीमत कोई नहीं आंक सकता । जिनके माथे पर भाग्यशाली होना लिखा है, हे नानक, वे व्यक्ति ही परमात्मा के मिलाप का आनन्द लेते है ॥ १ ॥ छन्त ॥ जो प्रभु का नाम कहते हैं वे पवित्र हैं, सुनने वाले धन्य हैं और लिखने वालों ने तो अपने कुल का ही उद्धार कर लिया है । अच्छे व्यक्तियों की संगत ने जिन पर हरि–नाम का रंग चढ़ गया है वे ही वास्तव में ब्रह्म का विचार करते हैं । ब्रह्म–विचार के कारण उनका जन्म सँवर जाता है और उन पर परमात्मा की पूर्ण कृपा हो जाती है । प्रभु हाथ पकड़कर उन्हें हरि–रस प्रदान करता है और वे न तो योनियों में आते हैं और न ही मरते हैं । दयालु, कृपालु परमात्मा के मिलाप के बाद जीव हरे–भरे हो जाते है और काम, क्रोध, लोभ को जीत लेते है । हे नानक! उस अकथनीय स्वामी का कथन नहीं किया जा सकता और मैं उस पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ५ ॥ १ ॥ ३ ॥

सिरीरागु महला ४ वणजारा ੴसति नामु गुरप्रसादि ॥

जिसने सब का सृजन किया है वह हरि–नाम ही सर्वोत्तम है । परमात्मा ही सभी जीवों का पालन–पोषण करता है और घट–घट में वह ही रम रहा है । ऐसे प्रभु को ही सदैव स्मरण करना चाहिए क्योंकि उसके बिना अन्य कोई नहीं है । जो जीव मोह–माया में चित्त लगाते हैं वे अन्त में दुखी होकर यहीं सब छोड़कर चले जाते है । हे दास नानक ! जिन्होंने हरि नाम का सुमिरन किया है अन्त समय में परमात्मा उनका सहायक अवश्य बनता है ॥ १ ॥ परमात्मा के बिना मेरा अन्य कोई आश्रय नहीं है । हे व्यापारी मित्र, गुरु की शरण में आने पर ही बड़े भाग्य के कारण परमात्मा प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥

संत जना विणु भाईआ हरि किनै न पाइआ नाउ ॥ विचि हउमै करम कमावदे जिउ वेसुआ पुतु निनाउ ॥ पिता जाति ता होईऐ गुरु तुठा करे पसाउ ॥ वडभागी गुरु पाइआ हरि अहिनिसि लगा भाउ ॥ जन नानकि ब्रहमु पछाणिआ हरि कीरति करम कमाउ ॥ २ ॥ मनि हरि हरि लगा चाउ ॥ गुरि पूरे नामु द्रिड़ाइआ हरि मिलिआ हरि प्रभ नाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब लगु जोबनि सासु है तब लगु नामु धिआइ ॥ चलदिआ नालि हरि चलसी हरि अंते लए छडाइ ॥ हउ बलिहारी तिन कउ जिन हरि मनि वुठा आइ ॥ जिनी हरि हरि नामु न चेतिओ से अंति गए पछुताइ ॥ धुरि मसतकि हरि प्रभि लिखिआ जन नानक नामु धिआइ ॥ ३ ॥ मन हरि हरि प्रीति लगाइ ॥ वडभागी गुरु पाइआ गुर सबदी पारि लघाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि आपे आपु उपाइदा हरि आपे देवै लेइ ॥ हरि आपे भरमि भुलाइदा हरि आपे ही मति देइ ॥ गुरमुखा मनि परगासु है से विरले केई केइ ॥ हउ बलिहारी तिन कउ जिन हरि पाइआ गुरमते ॥ जन नानकि कमलु परगासिआ मनि हरि हरि वुठड़ा हे ॥ ४ ॥ मनि हरि हरि जपनु करे ॥ हरि गुर सरणाई भजि पउ जिंदू सभ किलविख दुख परहरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घटि घटि रमईआ मनि वसै किउ पाईऐ कितु भति ॥ गुरु पूरा सतिगुरु भेटीऐ हरि आइ वसै मनि चिति ॥ मै धर नामु अधारु है हरि नामै ते गति मति ॥ मै हरि हरि नामु विसाहु है हरि नामे ही जति पति ॥ जन नानक नामु धिआइआ रंगि रतड़ा हरि रंगि रति ॥ ५ ॥ हरि धिआवहु हरि प्रभु सति ॥ गुर बचनी हरि प्रभु जाणिआ सभ हरि प्रभु ते उतपति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन कउ पूरबि लिखिआ से आइ मिले गुर पासि ॥ सेवक भाइ वणजारिआ मित्रा गुरु हरि हरि नामु प्रगासि ॥ धनु धनु वणजु वापारीआ जिन वखरु लदिअड़ा हरि रासि ॥ गुरमुखा दरि मुख उजले से आइ मिले हरि पासि ॥ जन नानक गुरु तिन पाइआ जिना आपि तुठा गुणतासि ॥ ६ ॥ हरि धिआवहु सासि गिरासि ॥ मनि प्रीति लगी तिना गुरमुखा हरि नामु जिना रहरासि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ १ ॥

हे भाई! शान्त पुरुषों के माध्यम के बिना हरि–नाम किसी को भी प्राप्त नहीं होता । जो व्यक्ति अहंकार–ग्रस्त होकर कर्म करते हैं वे वेश्या के पुत्र की तरह बेनाम ही होते हैं अर्थात् उनके अच्छे कर्म भी किसी गिनती में नहीं आते । पिता–प्रभु के वंश का तभी बना जा सकता है जब गुरु रूपी परमात्मा प्रसन्न होकर कृपा करता है । भाग्यशाली व्यक्ति को गुरु मिल जाता है और उसके मन में दिन–रात परमात्मा का प्रेम बना रहता है । दास नानक ने तो परमात्मा को पहचान लिया है और परमात्मा के गुणानुवाद के कर्म को कमा लिया है ॥ २ ॥ जिसके मन में परमात्मा से मिलने का चाव उमड़ पड़ा है, पूर्ण गुरु ने उसे नाम का रहस्य समझा दिया है और ऐसे व्यक्ति को परमात्मा और परमात्मा का नाम प्राप्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई, जब तक यौवन की शक्ति है तब तक नाम का सुमिरन करता रह । यहाँ से जाने वालों के साथ अन्त में परमात्मा ही चलता है और वह परमात्मा ही उन्हें यम–पाश से छुड़ा लेता है । मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जिनके मन में परमात्मा आन बसा है । जिन्होंने हरि नाम का सुमिरन नहीं किया वे अन्त में पछताते हुए यहाँ से चले जाते हैं । हे दास नानक, प्रभु ने अपनी ओर से ही जिस व्यक्ति के माथे पर सुमिरन करने का लेख लिख दिया है वही प्रभु के नाम का सुमिरन करता है ॥ ३ ॥ हे मन, हरि में प्रीति लगा । बड़े भाग्य से जिसको गुरु मिल जाता है वह शब्द–गुरु के माध्यम से ही संसार–सागर से पार उतर जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु स्वयं ही जीवों को उत्पन्न करता है और स्वयं ही उन्हें देता और उनसे लेता है । परमात्मा खुद ही जीवों को भ्रमित करता है और स्वयं ही उन्हें बुद्धि प्रदान करता है । केवल गुरमुखों के मन ही प्रकाशित बने रहते हैं परन्तु ऐसे व्यक्ति कई लोगों में से बिरले ही होते हैं । जिन्होंने गुरमति के माध्यम से परमात्मा को पा लिया है मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ । दास नानक का हृदय रूपी कमल भी खिल उठा है क्योंकि मन में अब परमात्मा आ बसा है ॥ ४ ॥ हे मन, केवल परमात्मा का ही जाप कर । तू दौड़ कर परमात्मा रूपी गुरु की शरण में आ जा क्योंकि केवल प्रभु ही सभी पापों और दुखों को दूर करता है ॥ १ ॥ रहाउ॥ परमात्मा घट–घट में रम रहा है उसे किस प्रकार पाया जा सकता है ? पूर्ण गुरु सद्गुरु को मिलने से ही वह मन और चित्त में ही आकर बसा हुआ दिखाई देने लग जाता है । मेरा तो केवल नाम ही आश्रय एवं आधार है और नाम के माध्यम से ही मुझे ऊँची गति एवं मति प्राप्त होती है । हरि–नाम ही मेरा भरोसा है और हरि नाम ही मेरी जाति एवं सम्मान है । हे दास नानक, जिस व्यक्ति ने परमात्मा के नाम का सुमिरन किया है वह परमात्मा के रंग में रंगा रहता है और परमात्मा के नाम में उसकी प्रीति बनी रहती है ॥ ५ ॥ सदैव उस सत्य रूपी प्रभु का ही ध्यान किया जाना चाहिए । शब्द–गुरु के माध्यम से ही हरि प्रभु को जाना जाता है और यह भी जाना जाता है कि सारी सृष्टि की उत्पत्ति उस प्रभु ने ही की है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनके पूर्व जन्म के लेख लिखे होते हैं वे ही गुरु के पास आ जाते हैं । हे व्यापारी मित्र, गुरु के प्रति सेवक भाव रखने से ही परमात्मा का नाम हृदय में प्रकाशित होता है । इस संसार में जीव रूपी वे ही व्यापारी धन्य हैं जिन्होंने हरि–नाम रूपी सौदे को अपनी पूँजी मानकर उसे लाद लिया है। गुरमुख व्यक्तियों के उस प्रभु द्वार पर मुख उज्जवल बने रहते है और वे ही परमात्मा का सानिध्य प्राप्त करते है । हे दास नानक, गुरु भी उन्हीं को मिलता है जिन पर गुणों का खजाना वह प्रभु स्वयं प्रसन्न होता है ॥ ६ ॥ उस परमात्मा का हर श्वास् के साथ एवं भोजन के हर कौर के साथ ध्यान किया जाना चाहिए । उन गुरमुखों के मन में ही उस प्रभु का प्रेम जगता है जिनका रहन–सहन का ढंग हरि–नाम का जाप ही बन जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ १ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ सिरीराग की वार महला ४ सलोका नालि ॥

सलोक मः ३ ॥ रागा विचि स्रीरागु है जे सचि धरे पिआरु ॥ सदा हरि सचु मनि वसै निहचल मति अपारु ॥ रतनु अमोलकु पाइआ गुर का सबदु बीचारु ॥ जिहवा सची मनु सचा सचा सरीर अकारु ॥ नानक सचै सतिगुरि सेविऐ सदा सचु वापारु ॥ १ ॥ मः ३ ॥ होरु बिरहा सभ धातु है जब लगु साहिब प्रीति न होइ ॥ इहु मनु माइआ मोहिआ वेखणु सुनणु न होइ ॥ सह देखे बिनु प्रीति न ऊपजै अंधा किआ करेइ ॥ नानक जिनि अखी लीतीआ सोई सचा देइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि इको करता इकु इको दीबाणु हरि ॥ हरि इकसै दा है अमरु इको हरि चिति धरि ॥ हरि तिसु बिनु कोई नाहि डरु भ्रमु भउ दूरि करि ॥ हरि तिसै नो सालाहि जि तुधु रखै बाहरि घरि ॥ हरि जिस नो होइ दइआलु सो हरि जपि भउ बिखमु तरि ॥ १ ॥ सलोक मः १ ॥ दाती साहिब संदीआ किआ चलै तिसु नालि ॥ इक जागंदे ना लहंनि इकना सुतिआ देइ उठालि ॥ १ ॥ मः १ ॥ सिदकु सबूरी सादिका सबरु तोसा मलाइकां ॥ दीदारु पूरे पाइसा थाउ नाही खाइका ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभ आपे तुधु उपाइ कै आपि कारै लाई ॥ तूं आपे वेखि विगसदा आपणी वडिआई ॥ हरि तुधहु बाहरि किछु नाही तूं सचा साई ॥ तूं आपे आपि वरतदा सभनी ही थाई ॥ हरि तिसै धिआवहु संत जनहु जो लए छडाई ॥ २ ॥ सलोक मः १ ॥ फकड़ जाती फकड़ु नाउ ॥ सभना जीआ इका छाउ ॥ आपहु जे को भला कहाए ॥ नानक ता परु जापै जा पति लेखै पाए ॥ १ ॥ मः २ ॥ जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ ॥ ध्रिगु जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तुधु आपे धरती साजीऐ चंदु सूरजु दुइ दीवे ॥ दस चारि हट तुधु साजिआ वापारु करीवे ॥ इकना नो हरि लाभु देइ जो गुरमुखि थीवे ॥ तिन जमकालु न विआपई जिन सचु अंम्रितु पीवे ॥ ओइ आपि छुटे परवार सिउ तिन पिछै सभु जगतु छुटीवे ॥ ३ ॥ सलोक मः १ ॥ कुदरति करि कै वसिआ सोइ ॥

१ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥ सिरीराग की वार महला ४ ॥ श्लोकों सहित ॥ श्लोक महला ३ ॥ यदि सत्य के साथ प्रेम बढ़ाने को उत्साहित करे तो रागों में सिरीराग श्रेष्ठ है । तब सदैव सत्य प्रभु मन में बसता है और अपार स्थिर मति प्राप्त होती है । शब्द–गुरु का चिन्तन करने से ही परमात्मा रूपी अमूल्य रत्न प्राप्त होता है । व्यक्ति की जीभ, मन एवं शरीर अर्थात् मानव–जन्म ही सफल हो जाता है । परन्तु हे नानक, सत्य का व्यापार तभी हो सकता है जब सच्चे सद्‌गुरु की सेवा की जाए ॥१॥ महला ३॥ जब तक साहिब परमात्मा के साथ प्रीति नहीं लगती तब तक अन्य सभी प्रेम नाशवान हैं । माया में लीन यह मन प्रभु को देख और सुन नहीं सकता परन्तु यह अन्धा मन क्या करे उस परमात्मा रूपी पति को देखे बिना उसका विश्वास नहीं बँधता । हे नानक, जिस प्रभु ने इसकी ज्ञान की आँखे ले ली हैं वही सत्यस्वरूप प्रभु उन्हें वापस दे सकता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ एक ही प्रभु कर्ता है और उस एक प्रभु का ही सबको आश्रय है । एक प्रभु का ही हुकुम चलता है और इसलिए केवल उस एक परमात्मा को ही हृदय में धारण किया जाना चाहिए । उस परमात्मा के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है इसलिए हे जीव, तू सारे भ्रम और भय दूर कर दे । केवल उस हरि का ही गुणानुवाद कर जो घर–बाहर तेरी रक्षा करता है । जिस पर परमात्मा दयालु होता है वह जीव उस प्रभु का सुमिरन करके विषम संसार सागर को तैरकर पार कर लेता है ॥ १ ॥ श्लोक महला १ ॥ सब दिए हुए दान उस मालिक प्रभु के ही हैं उसके आगे कोई जोर नहीं चल सकता । उसके दान कई जाग्रत जीवों को भी नहीं प्राप्त होते और दूसरी ओर वह कई सोये हुओं को उठाकर दे देता है ॥ १ ॥ महला १ ॥ धैर्यवान के पास विश्वास और आभार की और गुरमुखों के पास संतोष की रास–पूँजी होती है । इसीलिए वे पूरे प्रभु का दर्शन कर लेते है और केवल बातूनी लोगों को कहीं स्थान नहीं मिलता ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तूने आप ही सारी सृष्टि रचकर सब को काम–धन्धों में लगा दिया है । अपने बड़प्पन को देखकर भी तू स्वयं ही प्रसन्न हो रहा है । हे प्रभु, तू स्वयं ही सब स्थानों में कार्यशील है और हे सच्चे मालिक, तुझ से बाहर कुछ भी नहीं है । हे सन्त जनों, उस प्रभु का सुमिरन करो जो विकारों से छुड़ा लेता है ॥ २ ॥ श्लोक महला १ ॥ जाति एवं बड़े नाम का अहंकार व्यर्थ है क्योंकि सबका आश्रय वह केवल एक परमात्मा ही है । यदि कोई अपने आप को बड़ा कहलाए तो वह अच्छा नहीं बन जाता; वह तभी अच्छा जाना जाता है यदि परमात्मा के लेखे में आदर हासिल करे ॥ १ ॥ महला २ ॥ जिस प्यारे के साथ स्नेह हो उसके समक्ष अहंकार आदि की अकड़ के साथ जीवित बने रहना उचित नहीं । उस प्यारे को पीठ दिखाकर इस संसार में जीना मानों धिक्कार योग्य जीवन है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तूने स्वयं ही धरती की रचना की है और चन्द्रमा तथा सूर्य इसके लिए दो दीपक बनाये हैं । चौदह लोक रूपी दुकानें तूने बनायी हैं ताकि जीव सत्य का व्यापार कर सके। जो व्यक्ति गुरमुख बनकर यहाँ विचरण करते हैं प्रभु उन्हें लाभ ही लाभ देता है । जिन्होंने सत्य रूपी अमृत का पान किया है उन्हें यहाँ यमकाल प्रभावित नहीं कर सकता । वे स्वयं तो अपने परिवार सहित मुक्त होते ही है, उनके पीछे लगकर सारा जगत भी मुक्ति प्राप्त कर लेता है । श्लोक महला १ ॥ सृष्टि रचना करके प्रभु उसमें बस रहा है

वखतु वीचारे सु बंदा होइ ॥ कुदरति है कीमति नही पाइ ॥ जा कीमति पाइ त कही न जाइ ॥ सरै सरीअति करहि बीचारु ॥ बिनु बूझे कैसे पावहि पारु ॥ सिदकु करि सिजदा मनु करि मखसूदु ॥ जिह धिरि देखा तिह धिरि मउजूदु ॥ १ ॥ मः ३ ॥ गुर सभा एव न पाईऐ ना नेड़ै ना दूरि ॥ नानक सतिगुरु तां मिलै जा मनु रहै हदूरि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सपत दीप सपत सागरा नव खंड चारि वेद दस असट पुराणा ॥ हरि सभना विचि तूं वरतदा हरि सभना भाणा ॥ सभि तुझै धिआवहि जीअ जंत हरि सारगपाणा ॥ जो गुरमुखि हरि आराधदे तिन हउ कुरबाणा ॥ तूं आपे आपि वरतदा करि चोज विडाणा ॥ ४ ॥ सलोक मः ३ ॥ कलउ मसाजनी किआ सदाईऐ हिरदै ही लिखि लेहु ॥ सदा साहिब कै रंगि रहै कबहूं न तूटसि नेहु ॥ कलउ मसाजनी जाइसी लिखिआ भी नाले जाइ ॥ नानक सह प्रीति न जाइसी जो धुरि छोडी सचै पाइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ नदरी आवदा नालि न चलई वेखहु को विउपाइ ॥ सतिगुरि सचु द्रिड़ाइआ सचि रहहु लिव लाइ ॥ नानक सबदी सचु है करमी पलै पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि अंदरि बाहरि इकु तूं तूं जाणहि भेतु ॥ जो कीचै सो हरि जाणदा मेरे मन हरि चेतु ॥ सो डरै जि पाप कमावदा धरमी विगसेतु ॥ तूं सचा आपि निआउ सचु ता डरीऐ केतु ॥ जिना नानक सचु पछाणिआ से सचि रलेतु ॥ ५ ॥ सलोक मः ३ ॥ कलम जलउ सणु मसवाणीऐ कागदु भी जलि जाउ ॥ लिखण वाला जलि बलउ जिनि लिखिआ दूजा भाउ ॥ नानक पूरबि लिखिआ कमावणा अवरु न करणा जाइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ होरु कूड़ु पड़णा कूड़ु बोलणा माइआ नालि पिआरु ॥ नानक विणु नावै को थिरु नही पड़ि पड़ि होइ खुआरु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि की वडिआई वडी है हरि कीरतनु हरि का ॥ हरि की वडिआई वडी है जा निआउ है धरम का ॥ हरि की वडिआई वडी है जा फलु है जीअ का ॥ हरि की वडिआई वडी है जा न सुणई कहिआ चुगल का ॥ हरि की वडिआई वडी है अपुछिआ दानु देवका ॥ ६ ॥ सलोक मः ३ ॥ हउ हउ करती सभ मुई संपउ किसै न नालि ॥ दूजै भाइ दुखु पाइआ

और जो जीव मानव–जन्म रूपी अवसर के महत्त्व को पहचान लेता है वही उसका सेवक बन जाता है । प्रभु अपनी रचना में व्याप्त है, उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता; यदि कोई आंकने का प्रयत्न भी करे तब भी उसका मूल्य बताया नहीं जा सकता । सच्चे जीवन ढंग से उसका विचार किया जाना चाहिए और इस रहस्य को बूझे बिना भला कोई कैसे उसका किनारा पा सकता है । हे भाई, उस पर भरोसा रख कर उसके आगे सिर झुकाओ और अपने मन को समझाना जीवन का उद्देश्य बनाओ । जब ऐसा हो जाएगा तो जिस ओर भी देखा जाएगा वह प्रभु विद्यमान दिखाई देगा ॥ १ ॥ महला ३ ॥ गुरु के पास या गुरु से दूर बैठने पर गुरु की संगत प्राप्त नहीं होती । हे नानक, सद्गुरु तभी प्राप्त होता है जब मन उसमें लगा रहे ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सातों द्वीपों, सातों समुद्रों, नवखण्डों, चारों वेदों, अठारह पुराणों में हे प्रभु, तू ही बस रहा है और सबको प्यारा लगता है । हे धनुषधारी प्रभु, सारे जीव तेरा ही सुमिरन करते हैं । मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जो गुरमुख बनकर परमात्मा की आराधना करते हैं । हे प्रभु, आश्चर्यजनक लीला रचकर तू आप ही सब में व्याप्त है ॥ ४ ॥ श्लोक महला ३ ॥ कलम दवात क्या मंगायी जाए, हे जीव, तू हृदय में ही हरि का नाम लिख ले । इस प्रकार जीव यदि उस परमात्मा के रंग में सदा रंगा रहे तो उसका स्नेह उससे कभी भी नहीं टूटेगा । कलम दवात और उससे लिखा हुआ सब कुछ नाशवान है परन्तु हे नानक, प्रभु का प्यार कभी नष्ट नहीं होता क्योंकि इसे सच्चे प्रभु ने पहले से ही जीव के हृदय में डाल दिया होता है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ कोई बेशक निर्णय कर के देख ले, जो कुछ भी दृष्टमान है वह कभी भी साथ नहीं जाता । सद्गुरु ने सत्य का सुमिरन पक्का करवाया है इसलिए हे जीव, सत्य में ही लीन बना रह । हे नानक, यदि प्रभु कृपा करे तो शब्द के माध्यम से ही सत्य–स्वरूप परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अन्दर–बाहर हे प्रभु, एक तू ही है और तू ही सभी रहस्यों को जानता है । हे मेरे मन, तू संभल जा क्योंकि तू जो करता है वह हरि–प्रभु सब कुछ जानता है । जो पाप कमाते हैं वे ही भयभीत बने रहते है और धार्मिक व्यक्ति सदा खिला रहता है । जब तू सच्चा है, तेरा न्याय सच्चा है तो फिर भला किस बात का डर है । हे नानक, जिन्होंने सत्य को पहचान लिया है वे सत्य में ही लीन बने रहते हैं ॥ ५ ॥ श्लोक महला ३ ॥ वह कलम, दवात, कागज और लिखने वाला भी जल जाए जिसने केवल द्वैत भाव का ही लेखा लिखा है । हे नानक, जीव वही कुछ करता है जो संस्कार रूप में उसने पहले से ही अपने हृदय पर लिखा होता है अन्य वह कुछ नहीं कर सकता ॥ १ ॥ महला ३ ॥ पढ़ना, बोलना और प्रपंचयुक्त जीवन के साथ प्यार झूठा एवं व्यर्थ है । हे नानक, प्रभु नाम के बिना कुछ भी स्थिर नहीं है और जीव पढ़ पढ़कर अपने अहंकार में ही ख्वार होते रहते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिस परमात्मा का धर्म का न्याय है उसका गुणानुवाद ही श्रेष्ठ कार्य है । परमात्मा के बड़प्पन का गुणानुवाद ही जीवन का वास्तविक फल अथवा उद्देश्य है । परमात्मा के बड़प्पन का गुणानुवाद आवश्यक है क्योंकि वह किसी भी निन्दक का कुछ भी कहा हुआ नहीं सुनता। परमात्मा का बड़प्पन बहुत बड़ा है क्योंकि वह किसी को पूछकर दान नहीं देता अर्थात दिए ही चला जाता है ॥ ६ ॥ श्लोक महला ३ ॥ सारी सृष्टि अहंकार में मरती खपती जा रही है परन्तु धन–सम्पति किसी के साथ नहीं जाते । द्वैत भाव में ही सभी दुख पाते है

सभ जोही जमकालि ॥ नानक गुरमुखि उबरे साचा नामु समालि ॥ १ ॥ मः १ ॥ गली असी चंगीआ आचारी बुरीआह ॥ मनहु कुसुधा कालीआ बाहरि चिटवीआह ॥ रीसा करिह तिनाड़ीआ जो सेवहि दरु खड़ीआह ॥ नालि खसमै रतीआ माणहि सुखि रलीआह ॥ होदै ताणि निताणीआ रहहि निमानणीआह ॥ नानक जनमु सकारथा जे तिन कै संगि मिलाह ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तूं आपे जलु मीना है आपे आपे ही आपि जालु ॥ तूं आपे जालु वताइदा आपे विचि सेबालु ॥ तूं आपे कमलु अलिपतु है सै हथा विचि गुलालु ॥ तूं आपे मुकति कराइदा इक निमख घड़ी करि खिआलु ॥ हरि तुधहु बाहरि किछु नही गुर सबदी वेखि निहालु ॥ ७ ॥ सलोकु मः ३ ॥ हुकमु न जाणै बहुता रोवै ॥ अंदरि धोखा नीद न सोवै ॥ जे धन खसमै चलै रजाई ॥ दरि घरि सोभा महलि बुलाई ॥ नानक करमी इह मति पाई ॥ गुर परसादी सचि समाई ॥ १ ॥ मः ३ ॥ मनमुख नाम विहूणिआ रंगु कसुंभा देखि न भुलु ॥ इस का रंगु दिन थोड़िआ छोछा इस दा मुलु ॥ दूजै लगे पचि मुए मूरख अंध गवार ॥ बिसटा अंदरि कीट से पइ पचहि वारो वार ॥ नानक नाम रते से रंगुले गुर कै सहजि सुभाइ ॥ भगती रंगु न उतरै सहजे रहै समाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सिसटि उपाई सभ तुधु आपे रिजकु संबाहिआ ॥ इकि वलु छलु करि कै खावदे मुहहु कूड़ु कुसतु तिनी ढाहिआ ॥ तुधु आपे भावै सो करहि तुधु ओतै कंमि ओइ लाइआ ॥ इकना सचु बुझाइओनु तिना अतुट भंडार देवाइआ ॥ हरि चेति खाहि तिना सफलु है अचेता हथ तडाइआ ॥ ८ ॥ सलोक मः ३ ॥ पड़ि पड़ि पंडित बेद वखाणहि माइआ मोह सुआइ ॥ दूजै भाइ हरि नामु विसारिआ मन मूरख मिलै सजाइ ॥ जिनि जीउ पिंडु दिता तिसु कबहूं न चेतै जो देंदा रिजकु संबाहि ॥ जम का फाहा गलहु न कटीऐ फिरि फिरि आवै जाइ ॥ मनमुखि किछू न सूझै अंधुले पूरबि लिखिआ कमाइ ॥ पूरै भागि सतिगुरु मिलै सुखदाता नामु वसै मनि आइ ॥ सुखु माणहि सुखु पैनणा सुखे सुखि विहाइ ॥ नानक सो नाउ मनहु न विसारीऐ जितु दरि सचै सोभा पाइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ सतिगुरु

और यम सदैव उन्हें मारने के विचार से देखता रहता है । हे नानक, जिन्होंने गुरमुख बनकर प्रभु के सच्चे नाम को हृदय में धारण किया है केवल उन्हीं का ही उद्धार होता है ॥ १ ॥ महला १ ॥ बातों में तो हम बहुत अच्छे है परन्तु आचरण में हम सब बहुत ही बुरे हैं । बाहर से तो स्वच्छ एवं श्वेत दिखाई देते हैं परन्तु मन से खोटे और काले बने रहते हैं । जीव रूपी स्त्री नकल तो उसकी करती है जो जीव–स्त्री परमात्मा के द्वार पर खड़ी होकर सेवा करती है और अपने पति–प्रभु के साथ आनन्द का उपभोग कर रही होती है (परन्तु यह नहीं देखती कि) वे समस्त बलशाली होती हुई भी विनम्र एवं बलहीन बनी रहती है । हे नानक, हम सब का जन्म सार्थक हो जाए यदि हम ऐसी जीव–स्त्रियों से मिलें और उनके गुणों को अपनाएं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तू स्वयं ही जल है, मछली है और जाल भी है । तू स्वयं ही माया–मोह रूपी जाल फेंकता है और पानी के ऊपर सेवार भी तू ही है। तू स्वयं ही संसार रूपी जल से अलिप्त बना रहने वाला वह कमल है जो पानी में सौ हाथ की गहराई तक रहने पर भी लाल रंग वाला बना ही रहता है । हे प्रभु, एक निमेष मात्र तेरा ध्यान करने वाले को तू स्वयं ही जाल से मुक्त कर देता है। हे प्रभु, तुझ से बाहर कुछ भी नहीं है और शब्द–गुरु के द्वारा तुझे देखकर प्रसन्न हुआ जाता है ॥ ७॥ श्लोक महला ३ ॥ जो जीव परमात्मा के हुकुम को नहीं समझता उसे बहुत ज्यादा प्रलाप करना पड़ता है । उसके मन में चिन्ता ही बनी रहती है और इसलिए वह सुख की नींद नहीं सो सकता । यदि जीव–स्त्री प्रभु–पति की रज़ा में रहती है तो परलोक में और इस संसार मे भी उसकी शोभा होती है । हे नानक, प्रभु कृपा से ही यह सूझ बुद्धि प्राप्त होती है और गुरु की कृपा से ही जीव सत्य में लीन बना रहता है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ हे नाम से विहीन मनमुख, तू कच्चे रंग वाले फूल (माया) की शोभा देखकर भ्रमित मत हो क्योंकि यह रंग थोड़े दिनों के लिए ही है और इसका मूल्य भी बहुत थोड़ा है । द्वैतभाव में लगे हुए मूर्ख, अन्धे एवं गँवार जीव ख्वार होकर मरते है । वे विष्ठा के कीड़ों के समान बार–बार तड़पते एवं नष्ट होते रहते हैं । हे नानक, जो जीव गुरु के सहज स्वभाव में अपने को लीन कर देते हैं और नाम रंग में रंगे रहते हैं वे ही सुन्दर हैं । सहज अवस्था में बने रहने के कारण उनका भक्ति का रंग कभी नहीं उतरता ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तूने ही सृष्टि उत्पन्न करके सबको उनकी रोजी पहुँचायी है । कई जीव छल–कपट से पेट भरते हैं और मुँह से झूठ एवं असत्य बोलते हैं । हे प्रभु, जो तुझे अच्छा लगता है तू वही करता है और उन लोगों को तूने ही उस काम में लगा रखा है । जिनको परमात्मा ने अपने सच्चे नाम की सूझ शक्ति प्रदान की है उनको ही उसने अक्षय–भण्डार भी दे दिए हैं । जो जीव प्रभु को याद करके धन पदार्थ खाते हैं यह माया उन्हीं को फलती है और प्रभु सुमिरन से विहीन लोग सदैव हाथ फैलाए ही रहते हैं अर्थात उनकी तृष्णा कभी नहीं मिटती ॥ ८ ॥ श्लोक महला ३ ॥ केवल पढ़ पढ़कर धन के मोह में ही विद्वान लोग वेदों की व्याख्या करते हैं । जिस व्यक्ति ने धन के सामने हरि–नाम विस्मृत कर दिया है, मन से मूर्ख उस व्यक्ति को दण्ड मिलता है । ऐसा मूर्ख व्यक्ति उस प्रभु को कभी याद नहीं करता जिसने यह प्राण और शरीर तथा रोज़गार व्यक्ति को दिया है । ऐसे व्यक्तियों के गले में पड़ा यम का फन्दा कभी नहीं कटता और वे बार–बार आवागमन में पड़े रहते हैं । अन्धे मनमुख व्यक्ति को कुछ समझ नहीं पड़ती और वह जिस प्रकार के संस्कार अपने हृदय में बनाता रहा है उन्हीं के अनुरूप अभी भी काम किये चला जाता है । जिस व्यक्ति को पूर्व भाग्य से सुखदाता सद्गुरु मिल जाता है उसके मन में प्रभु–नाम आ बसता है । ऐसे व्यक्ति आध्यात्मिक आनन्द का अनुभव करते हैं और उनका खाना–पहनना सब कुछ सुखमय बन जाता है । हे नानक, ऐसा नाम मन से विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए जिसके कारण सच्चे प्रभु के द्वार में सम्मान प्राप्त होता है ॥ १ ॥ महला ३ ॥

सेवि सुखु पाइआ सचु नामु गुणतासु ॥ गुरमती आपु पछाणिआ राम नाम परगासु ॥ सचो सचु कमावणा वडिआई वडे पासि ॥ जीउ पिंडु सभु तिस का सिफति करे अरदासि ॥ सचै सबदि सालाहणा सुखे सुखि निवासु ॥ जपु तपु संजमु मनै माहि बिनु नावै ध्रिगु जीवासु ॥ गुरमती नाउ पाईऐ मनमुख मोहि विणासु ॥ जिउ भावै तिउ राखु तूं नानकु तेरा दासु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभु को तेरा तूं सभसु दा तूं सभना रासि ॥ सभि तुधै पासहु मंगदे नित करि अरदासि ॥ जिसु तूं देहि तिसु सभु किछु मिलै इकना दूरि है पासि ॥ तुधु बाझहु थाउ को नाही जिसु पासहु मंगीऐ मनि वेखहु को निरजासि ॥ सभि तुधै नो सालाहदे दरि गुरमुखा नो परगासि ॥ ९ ॥ सलोक मः ३ ॥ पंडितु पड़ि पड़ि उचा कूकदा माइआ मोहि पिआरु ॥ अंतरि ब्रहमु न चीनई मनि मूरखु गावारु ॥ दूजै भाइ जगतु परबोधदा ना बूझै बीचारु ॥ बिरथा जनमु गवाइआ मरि जंमै वारो वार ॥ १ ॥ मः ३ ॥ जिनी सतिगुरु सेविआ तिनी नाउ पाइआ बूझहु करि बीचारु ॥ सदा सांति सुखु मनि वसै चूकै कूक पुकार ॥ आपै नो आपु खाइ मनु निरमलु होवै गुर सबदी वीचारु ॥ नानक सबदि रते से मुकतु है हरि जीउ हेति पिआरु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि की सेवा सफल है गुरमुखि पावै थाइ ॥ जिसु हरि भावै तिसु गुरु मिलै सो हरि नामु धिआइ ॥ गुर सबदी हरि पाईऐ हरि पारि लघाइ ॥ मनहठि किनै न पाइओ पुछहु वेदा जाइ ॥ नानक हरि की सेवा सो करे जिसु लए हरि लाइ ॥ १० ॥ सलोक मः ३ ॥ नानक सो सूरा वरीआमु जिनि विचहु दुसटु अहंकरणु मारिआ ॥ गुरमुखि नामु सालाहि जनमु सवारिआ ॥ आपि होआ सदा मुकतु सभु कुलु निसतारिआ ॥ सोहनि सचि दुआरि नामु पिआरिआ ॥ मनमुख मरहि अहंकारि मरणु विगाड़िआ ॥ सभो वरतै हुकमु किआ करहि विचारिआ ॥ आपहु दूजै लगि खसमु विसारिआ ॥ नानक बिनु नावै सभु दुखु सुखु विसारिआ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ गुरि पूरै हरि नामु दिड़ाइआ तिनि विचहु भरमु चुकाइआ ॥ राम नामु हरि कीरति गाई करि चानणु मगु दिखाइआ ॥ हउमै मारि एक लिव लागी अंतरि

सद्गुरु की सेवा करने वालो को सत्य नाम रूपी गुणों का खज़ाना प्राप्त होता है। गुरमति के माध्यम से ही अपनी पहचान का पता लगता है और अन्तर्मन में राम–नाम प्रकाशित हो उठता है। ऐसा व्यक्ति सत्य को ही आचरण बनाता है और परमात्मा के समक्ष भी उसे आदर प्राप्त होता है। वह प्राण और शरीर सब कुछ प्रभु का मानकर प्रार्थना एवं गुणानुवाद करता है। शब्द के माध्यम से ही वह सत्य एवं सुखदायक प्रभु का गुणानुवाद करता है और सदा सुख में लीन रहता है। प्रभु का गुणानुवाद मन में बसाना ही उसके लिए जप, तप और संयम है और नाम–विहीन जीवन उसके लिए धिक्कार योग्य है। गुरमति में चलने से ही नाम प्राप्त होता है और मनमुख व्यक्ति मोह–माया में ही विनष्ट हो जाता है। हे प्रभु, तू जैसे भी हो हमारी रक्षा कर। यह नानक तेरा दास है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, सब कुछ तेरा है और तू सब का है और तू ही सब की रास–पूँजी है। नित्य प्रार्थनाएं करते हुए सब तुझसे ही माँगते है। जिसे तू देता है उसे सब कुछ मिल जाता है और तू ही किसी को दूर और किसी को पास दिखाई देता है। कोई भी मन में निर्णय करके देख ले कि तेरे बिना अन्य कोई ठिकाना नहीं जहाँ से कुछ माँगा जा सके। सब तेरे ही गुण गा रहे हैं और गुरमुख व्यक्तियों को ही तू प्रकाशित करता है एवं आदर देता है ॥ ९ ॥ श्लोक महला ३ ॥ पढ़–पढ़ कर पंडित ऊँचे स्वर में माया एवं मोह के प्यार में चीखता है। मन का मूर्ख एवं गँवार वह अपने ही अन्दर ब्रह्म को नहीं पहचानता। प्रभु के विचार को नहीं बूझता और द्वैत भाव में फंसा हुआ वह सारे संसार को प्रबुद्ध होने की शिक्षा देता है। वह व्यर्थ ही जन्म गँवा देता है और आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ यह विचार करके समझ लो कि जिन्होंने सद्गुरु की सेवा की है उनको ही नाम प्राप्त हुआ है। ऐसे व्यक्तियों का चीखना–चिल्लाना चुक जाता है और उनके मन में सदैव सुख और शान्ति बसती है। शब्द–गुरु का चिन्तन करने पर ही अपना अहम् स्वयं ही अपने आप को खा जाता है और मन निर्मल हो जाता है। हे नानक, जो शब्द में लीन हो गए हैं वे ही मुक्त हो गए हैं और उन्होंने ही प्रभु प्राप्ति के लिए प्रेम का मार्ग अपनाया है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु की भक्ति फलदायक है परन्तु गुरमुख की भक्ति ही स्वीकृत होती है। हरि जिसे चाहता है उसी को गुरु प्राप्त होता है और वह ही हरि–नाम को मन में धारण करता है। शब्द–गुरु से ही परमात्मा प्राप्त होता है और परमात्मा ही संसार–सागर से पार करता है। कोई चाहे तो वेदों से भी पूछ ले कि मन के हठ के फलस्वरूप किसी को भी परमात्मा प्राप्त नहीं हो सका। हे नानक, प्रभु की सेवा वही करता है जिसे प्रभु स्वयं सेवा में लगाता है ॥ १० ॥ श्लोक महला ३ ॥ हे नानक, वही बहादुर शूरवीर है जिसने दुष्ट अहंकार को अपने अन्दर से मार दिया है और ऐसे व्यक्ति ने ही गुरमुख बनकर प्रभु नाम का गुणानुवाद करके जन्म संवार लिया है। वह स्वयं तो नित्य–मुक्त हो गया है साथ ही साथ उसने अपने कुल का भी उद्धार कर लिया है। सत्य के द्वार पर वे ही सुन्दर लगते हैं जिन्होंने नाम के साथ प्रेम किया है। मनमुख व्यक्ति अहंकार में ही मरते हैं और उनका अन्त भी बुरा होता है। वे बेचारे भी क्या करें क्योंकि सारा कुछ उसी के हुकुम में ही होता है। द्वैत भाव में लगकर ऐसे लोगों ने स्वामी प्रभु को विस्मृत कर दिया है। हे नानक, नाम के बिना सब दुख ही दुख है और सुख तो भूल ही जाता है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ पूर्ण गुरु ने जिन लोगों के मन में हरि–नाम को बिठा दिया है उनके अन्तर्मन से भ्रम समाप्त हो गया है। वे राम–नाम अर्थात प्रभु–नाम की कीर्ति गाते हैं और उन्हें इसके प्रकाश में सीधा मार्ग दिखाई पड़ जाता है। उन्होंने अहंकार को दूर कर केवल एक प्रभु के साथ ही प्यार लगाया और

नामु वसाइआ ॥ गुरमती जमु जोहि न साकै साचै नामि समाइआ ॥ सभु आपे आपि वरतै करता जो भावै सो नाइ लाइआ ॥ जन नानकु नामु लए ता जीवै बिनु नावै खिनु मरि जाइआ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो मिलिआ हरि दीबाण सिउ सो सभनी दीबाणी मिलिआ ॥ जिथै ओहु जाइ तिथै ओहु सुरखरू उस कै मुहि डिठै सभ पापी तरिआ ॥ ओसु अंतरि नामु निधानु है नामो परवरिआ ॥ नाउ पूजीऐ नाउ मंनीऐ नाइ किलविख सभ हिरिआ ॥ जिनी नामु धिआइआ इक मनि इक चिति से असथिरु जगि रहिआ ॥ ११ ॥ सलोक मः ३ ॥ आतमा देउ पूजीऐ गुर कै सहजि सुभाइ ॥ आतमे नो आतमे दी प्रतीति होइ ता घर ही परचा पाइ ॥ आतमा अडोलु न डोलई गुर कै भाइ सुभाइ ॥ गुर विणु सहजु न आवई लोभु मैलु न विचहु जाइ ॥ खिनु पलु हरि नामु मनि वसै सभ अठसठि तीरथ नाइ ॥ सचे मैलु न लगई मलु लागै दूजै भाइ ॥ धोती मूलि न उतरै जे अठसठि तीरथ नाइ ॥ मनमुख करम करे अहंकारी सभु दुखो दुखु कमाइ ॥ नानक मैला ऊजलु ता थीऐ जा सतिगुर माहि समाइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ मनमुखु लोकु समझाईऐ कदहु समझाइआ जाइ ॥ मनमुखु रलाइआ ना रलै पइऐ किरति फिराइ ॥ लिव धातु दुइ राह है हुकमी कार कमाइ ॥ गुरमुखि आपणा मनु मारिआ सबदि कसवटी लाइ ॥ मन ही नालि झगड़ा मन ही नालि सथ मन ही मंझि समाइ ॥ मनु जो इछे सो लहै सचै सबदि सुभाइ ॥ अंम्रित नामु सद भुंचीऐ गुरमुखि कार कमाइ ॥ विणु मनै जि होरी नालि लुझणा जासी जनमु गवाइ ॥ मनमुखी मनहठि हारिआ कूड़ु कुसतु कमाइ ॥ गुर परसादी मनु जिणै हरि सेती लिव लाइ ॥ नानक गुरमुखि सचु कमावै मनमुखि आवै जाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि के संत सुणहु जन भाई हरि सतिगुर की इक साखी ॥ जिसु धुरि भागु होवै मुखि मसतकि तिनि जनि लै हिरदै राखी ॥ हरि अंम्रित कथा सरेसट ऊतम गुरबचनी सहजे चाखी ॥ तह भइआ प्रगासु मिटिआ अंधिआरा जिउ सूरज रैणि किराखी ॥ अदिसटु अगोचरु अलखु निरंजनु सो देखिआ गुरमुखि आखी ॥ १२ ॥ सलोकु मः ३ ॥

अन्तर्मन में नाम को बसा लिया है । गुरमति में चलने के फलस्वरूप यम उन्हें मार नहीं सकता और ऐसे व्यक्ति सच्चे नाम में ही लीन वने रहते हैं । कर्त्ता–प्रभु स्वयं ही सव में कार्यशील है और जिसे वह चाहता है उसी को ही नाम के साथ जोड़ता है । दास नानक भी नाम का सुमिरन करता है तो जी उठता है और क्षण भर भी नाम के बिना वह मरणासन्न हो जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो व्यक्ति प्रभु दरवार में मिला है उसे सव दरवारों में मिला हुआ मानकर आदर मिलता है । वह जहाँ भी जाता है प्रसन्नता में उसका चेहरा सुर्ख (प्रसन्न) वना रहता है और उसके दर्शन से सब पापी भी तर जाते हैं । उसके अन्तर्मन में नाम का भण्डार है और दरअसल वह नाम के माध्यम से ही बड़प्पन पा सका है । हे भाई, नाम का ही सुमिरन (ध्यान) करना चाहिए क्योंकि नाम के कारण ही सव पाप दूर हो जाते हैं । जिन्होंने एकाग्रचित्त होकर नाम का सुमिरन किया है वे संसार में सदा वने रहने वाले वन गए है ॥ ११ ॥ श्लोक महला ३ ॥ गुरु के शान्त स्वभाव के अनुरूप ही परमात्मा की अर्चना करनी चाहिए । जव जीव आत्मा को परमात्मा की सूझ हो जाए तो शरीर में ही अर्थात् सांसारिकता में ही उस प्रभु से मेल हो जाता है । स्वाभाविक रूप से ही आत्मा की भटकन दूर होकर वह अडोल हो जाती है । गुरु के बिना सहज भाव प्राप्त नहीं होता और मन के अन्दर लोभ की मैल समाप्त नहीं होती । एक क्षण भर के लिए यदि हरि–नाम मन में वस जाए तो वह ही अड़सठ तीर्थों के स्नान के तुल्य है । सच्चे व्यक्ति को कभी मैल नहीं लगती; मैल तो दरअसल द्वैत भाव गें ही लगती है । ऐसी मैल अड़सठ तीर्थों के स्नान से भी नहीं उतरती । मनमुख व्यक्ति अहंकार में ही सव कर्म करता है और दुख ही दुख कमाता जाता है । हे नानक, मैला मन तभी उज्जवल हो सकता है यदि वह सद्‌गुरु में लीन हो जाए ॥ १ ॥ महला ३ ॥ मनमुख व्यक्ति को यदि सारा संसार भी समझाए तो उसे समझाया नहीं जा सकता । अच्छे व्यक्तियों के मिलने पर भी वह किसी से साथ मिल नहीं पाता और पूर्व–कर्मों के फलस्वरूप भटकता फिरता है । प्रभु से प्रेम और धन–दौलत अर्थात संसार में आसक्ति यह दोनों ही अलग–अलग रास्ते हैं और व्यक्ति उस प्रभु के 'हुकुम' के अनुसार ही काम करता है । गुरमुख व्यक्ति शब्द–ब्रह्म की कसौटी पर अपना मन लगाकर उसे नियन्त्रण में कर लेता है । वह सदा मन के विकारों के साथ संघर्ष करता रहता है; शुभ वृत्तियों की पंचायत के साथ मन को समझाता है और अन्ततः बुरी वृत्तियों को मन की अच्छी वृत्तियों के साथ मिलाकर उनमें लीन कर देता है । सत्य शब्द के प्रेम में लीन होकर मन जो भी इच्छा करता है वह उसे प्राप्त हो जाता है । हे भाई, सदा नाम रूपी अमृत का ही पान करना चाहिए और गुरमुखों के आचरण के अनुरूप आचरण करना चाहिए । मन को छोड़कर जो शरीर आदि के साथ हठपूर्वक झगड़ा करता है वह दरअसल इस जन्म को व्यर्थ गँवा देता है । मनमुख व्यक्ति का मन, मन के हठ में ही जीवन की वाजी हार जाता है और सदैव झूठ ही झूठ का आचरण करता रहता है । हे नानक, गुरमुख व्यक्ति सद्‌गुरु की कृपा से मन को जीतता है, प्रभु के साथ प्रेम लगाता है और सदैव सत्याचरण करता है । मनमुख आवागमन के चक्कर में भटकता रहता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे हरि के सन्तजनों, उस सद्‌गुरु रूपी हरि की शिक्षा को सुनो । यह शिक्षा उसी व्यक्ति ने हृदय में धारण की है जिसके भाग्य में प्रारम्भ से ही लिखा है । हरि की अमृत कथा उत्तम एवं श्रेष्ठ है और उसका आनन्द गुरु के वचनों के माध्यम से ही सहज रूप में लिया जाता है । ऐसे व्यक्ति के मन का अन्धकार मिट जाता है और वह इस प्रकार प्रकाशित हो उठता है जैसे सूर्य रात्रि के अन्धकार को अपने में खींचकर समाप्त कर देता है । जो प्रभु अदृष्ट, अगोचर, अलख और निरंजन है वह गुरमुख बनकर गुरमुख की आँखों से ही देखा जाता है ॥ १२ ॥ श्लोक महला ३ ॥

सतिगुरु सेवे आपणा सो सिरु लेखै लाइ ॥ विचहु आपु गवाइ कै रहनि सचि लिव लाइ ॥ सतिगुरु जिनी न सेविओ तिना बिरथा जनमु गवाइ ॥ नानक जो तिसु भावै सो करे कहणा किछू न जाइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ मनु वेकारी वेड़िआ वेकारा करम कमाइ ॥ दूजै भाइ अगिआनी पूजदे दरगह मिलै सजाइ ॥ आतम देउ पूजीऐ बिनु सतिगुर बूझ न पाइ ॥ जपु तपु संजमु भाणा सतिगुरू का करमी पलै पाइ ॥ नानक सेवा सुरति कमावणी जो हरि भावै सो थाइ पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे जितु सदा सुखु होवै दिनु राती ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे जितु सिमरत सभि किलविख पाप लहाती ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे जितु दालदु दुख भुख सभ लहि जाती ॥ हरि हरि नामु जपहु मन मेरे मुखि गुरमुखि प्रीति लगाती ॥ जितु मुखि भागु लिखिआ धुरि साचै हरि तितु मुखि नामु जपाती ॥ १३ ॥ सलोक मः ३ ॥ सतिगुरु जिनी न सेविओ सबदि न कीतो वीचारु ॥ अंतरि गिआनु न आइओ मिरतकु है संसारि ॥ लख चउरासीह फेरु पइआ मरि जंमै होइ खुआरु ॥ सतिगुर की सेवा सो करे जिस नो आपि कराए सोइ ॥ सतिगुर विचि नामु निधानु है करमि परापति होइ ॥ सचि रते गुर सबद सिउ तिन सची सदा लिव होइ ॥ नानक जिस नो मेले न विछुड़ै सहजि समावै सोइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ सो भगउती जो भगवंतै जाणै ॥ गुर परसादी आपु पछाणै ॥ धावतु राखै इकतु घरि आणै ॥ जीवतु मरै हरि नामु वखाणै ॥ ऐसा भगउती उतमु होइ ॥ नानक सचि समावै सोइ ॥ २ ॥ मः ३ ॥ अंतरि कपटु भगउती कहाए ॥ पाखंडि पारब्रहमु कदे न पाए ॥ पर निंदा करे अंतरि मलु लाए ॥ बाहरि मलु धोवै मन की जूठि न जाए ॥ सतसंगति सिउ बादु रचाए ॥ अनदिनु दुखीआ दूजै भाइ रचाए ॥ हरि नामु न चेतै बहु करम कमाए ॥ पूरब लिखिआ सु मेटणा न जाए ॥ नानक बिनु सतिगुर सेवे मोखु न पाए ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ सतिगुरु जिनी धिआइआ से कड़ि न सवाही ॥ सतिगुरु जिनी धिआइआ से त्रिपति अघाही ॥ सतिगुरु जिनी धिआइआ तिन

जो व्यक्ति सद्गुरु (परमात्मा) की सेवा करता है उसने अपना सिर अर्थात् मानव जन्म सफल कर लिया है । ऐसे व्यक्ति हृदय में से अहंकार दूर करके सच्चे नाम में ही अपनी सुरति लगाए रहते हैं । जिन्होंने सद्गुरु की सेवा नहीं की उन्होंने अपना जीवन व्यर्थ ही गँवा लिया है । परन्तु हे नानक, किसी को कुछ नहीं कहा जा सकता क्योंकि जो उस प्रभु को अच्छा लगता है वह स्वयं ही करता जाता है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ विकारों में फंसा हुआ मन विकार युक्त कर्म ही करता है । द्वैतभाव में लीन जो अज्ञानी व्यक्ति प्रभु की पूजा करते हैं उन्हें लाभ की बजाए प्रभु दरबार में सजा ही मिलती है । आत्मा के देव परमात्मा की ही पूजा की जानी चाहिए परन्तु सद्गुरु के बिना यह समझ में नहीं आता । सद्गुरु का आदेश मानना ही जप, तप और संयम है और प्रभु कृपा से ही यह संभव होता है । हे नानक, प्रभु को अच्छी लगने वाली सेवा ही स्वीकृत होती है और यह सेवा भी पूर्ण रूप से सुरति को एकाग्र करके की जानी चाहिए ॥ २ ॥ पउड़ी॥ हे मेरे मन, हरि नाम का सुमिरन कर जिससे दिन–रात सुख प्राप्त होता है । हे मन, हरि का सुमिरन कर जिससे सब विकार एवं पाप पीछा छोड़ जाते है । हे मन, हरि नाम का सुमिरन कर जिससे दरिद्रता, दुख, भूख आदि सब समाप्त हो जाते है । हे मन, हरि नाम का सुमिरन कर जो गुरमुखों के साथ प्रेम लगवा देता है । जिसके माथे पर प्रारम्भ से ही उस सत्य प्रभु ने लेख लिखा है परमात्मा उसी के मुख से नाम का सुमिरन करवाता है ॥ १३ ॥ श्लोक महला ३॥ जिन्होंने सद्गुरु की सेवा नहीं की और शब्द गुरु का चिन्तन नहीं किया उनके अन्तर्मन में ज्ञान उत्पन्न नहीं हुआ और वे संसार में मृतक के समान ही है । चौरासी लाख योनियों का चक्कर उनको पड़ा रहता है और वे मरते–जन्मते ख्वार होते रहते है । जिससे परमात्मा करवाना चाहता है वही सद्गुरु की सेवा करता है । सद्गुरु के पास ही नाम का भण्डार है जो प्रभु–कृपा से ही प्राप्त होता है । जो व्यक्ति सच्चे मन से शब्द गुरु में लीन रहते हैं उनकी सुरति सत्य रूप ही हो जाती है । हे नानक, जिसको वह मिला लेता है वह कभी बिछुड़ता नहीं और सहज भाव में लीन हो जाता है । परमात्मा का भक्त वही है जो परमात्मा को जानता बूझता है । ऐसा व्यक्ति गुरु की कृपा से अपने आप को पहचान जाता है । वह दौड़ते हुए मन को एक स्थान पर टिका लेता है । विषय विकारों से वह जीवन में ही मुक्त हो जाता है और हरि नाम का जाप करता है । ऐसा भक्त ही उत्तम होता है और हे नानक, वही सत्य में लीन हो जाता है ॥ २ ॥ महला ३ ॥ अन्तर्मन से कपटी व्यक्ति यदि अपने आप को भक्त कहलाता है तो वह अपने पाखण्डों से परब्रह्म को कभी भी नहीं पा सकता । वह परायी निन्दा करता है और अन्तर्मन से मलीन बना रहता है । बाहर स्नान आदि से तो वह मन को साफ कर लेता है परन्तु उसके मन की जूठन समाप्त नहीं होती । वह सद्संगत में भी वाद–विवाद ही करता है और द्वैत भाव में हर दिन दुखी ही बना रहता है । वह हरि नाम का सुमिरन नहीं करता और अनेकों व्यर्थ–कामों में लगा रहता है । दरअसल पूर्व में लिखे लेख मिट नहीं सकते और हे नानक, सद्गुरु की सेवा के बिना मुक्ति प्राप्त नहीं होती ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जिन्होंने सद्गुरु की आराधना की है वे जल कर राख नहीं होते । सद्गुरु की आराधना करने वाले तृप्त होकर अघा जाते हैं । सद्गुरु की आराधना करने वालो को यम का डर भी नहीं रहता।

जम डरु नाही ॥ जिन कउ होआ क्रिपालु हरि से सतिगुर पैरी पाही ॥ तिन ऐथै ओथै मुख उजले हरि दरगह पैधे जाही ॥ १४ ॥ सलोक मः २ ॥ जो सिरु सांई ना निवै सो सिरु दीजै डारि ॥ नानक जिसु पिंजर महि बिरहा नही सो पिंजरु लै जारि ॥ १ ॥ मः ५ ॥ मुंढहु भुली नानका फिरि फिरि जनमि मुईआसु ॥ कसतूरी कै भोलड़ै गंदे डुंमि पईआसु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सो ऐसा हरि नामु धिआईऐ मन मेरे जो सभना उपरि हुकमु चलाए ॥ सो ऐसा हरि नामु जपीऐ मन मेरे जो अंती अउसरि लए छडाए ॥ सो ऐसा हरि नामु जपीऐ मन मेरे जु मन की त्रिसना सभ भुख गवाए ॥ सो गुरमुखि नामु जपिआ वडभागी तिन निंदक दुसट सभि पैरी पाए ॥ नानक नामु अराधि सभना ते वडा सभि नावै अगै आणि निवाए ॥ १५ ॥ सलोक मः ३ ॥ वेस करे कुरूपि कुलखणी मनि खोटै कूड़िआरि ॥ पिर कै भाणै ना चलै हुकमु करे गावारि ॥ गुर कै भाणै जो चलै सभि दुख निवारणहारि ॥ लिखिआ मेटि न सकीऐ जो धुरि लिखिआ करतारि ॥ मनु तनु सउपे कंत कउ सबदे धरे पिआरु ॥ बिनु नावै किनै न पाइआ देखहु रिदै बीचारि ॥ नानक सा सुआलिओ सुलखणी जि रावी सिरजनहारि ॥ १ ॥ मः ३ ॥ माइआ मोहु गुबारु है तिस दा न दिसै उरवारु न पारु ॥ मनमुख अगिआनी महा दुखु पाइदे डुबे हरि नामु विसारि ॥ भलके उठि बहु करम कमावहि दूजै भाइ पिआरु ॥ सतिगुरु सेवहि आपणा भउजलु उतरे पारि ॥ नानक गुरमुखि सचि समावहि सचु नामु उरधारि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि जलि थलि महीअलि भरपूरि दूजा नाहि कोइ ॥ हरि आपि बहि करे निआउ कूड़िआर सभ मारि कढोइ ॥ सचिआरा देइ वडिआई हरि धरम निआउ कीओइ ॥ सभ हरि की करहु उसतति जिनि गरीब अनाथ राखि लीओइ ॥ जैकारु कीओ धरमीआ का पापी कउ डंडु दीओइ ॥ १६ ॥ सलोक मः ३ ॥ मनमुख मैली कामणी कुलखणी कुनारि ॥ पिरु छोडिआ घरि आपणा पर पुरखै नालि पिआरु ॥ त्रिसना कदे न चुकई जलदी करे पूकार ॥ नानक बिनु नावै कुरूपि कुसोहणी

जिन पर प्रभु कृपा करता है वे ही सद्गुरु के चरणों में आ लगते हैं। उन व्यक्तियों के मुख यहाँ वहाँ उज्जवल बने रहते हैं और उन्हें प्रभु–दरबार में भी सम्मान मिलता है ॥ १४ ॥ श्लोक महला २ ॥ जो सिर परमात्मा के सामने नहीं झुकता उसे तो काट ही डालना चाहिए। हे नानक, जिस शरीर में प्रभु के लिए विरह नहीं है उस शरीर को तो जला ही देना चाहिए ॥ १ ॥ महला ५॥ हे नानक, जो जीव–स्त्री सबके मूल (परमात्मा) को भूल गयी है वह बार–बार जन्मती मरती है और कस्तूरी के भ्रम में वह गंदे गड्ढे में पड़ी हुई है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे मेरे मन, ऐसे नाम की आराधना कर जिसका 'हुकुम' सब पर चलता है। हे मन, ऐसे हरि–नाम का जाप कर जो अन्तिम समय में मौत के भय से छुड़ा लेता है। हे मन, ऐसा हरि–नाम जप जो मन की तृष्णा एवं भूख समाप्त कर देता है। भाग्यशाली गुरमुखों ने ही ऐसे नाम का जाप किया है और सभी निन्दक दुष्ट उनके चरणों में आ लगे हैं। हे नानक, सब से बड़े नाम की ही तू आराधना कर क्योंकि सभी नाम के सामने आकर झुक जाते हैं ॥ १५ ॥ श्लोक महला ३ ॥ झूठे एवं खोटे मन वाली कुलक्षणा एवं कुरूप स्त्री श्रृंगार तो करती है परन्तु पति की आज्ञा में नहीं चलती। मूर्ख स्त्री उस पर हुकुम चलाती है और दुखी वनी रहती है। जो सद्गुरु की रज़ा में चलती है वह सभी दुख दूर कर लेती है। दरअसल जो प्रारम्भ से ही परमात्मा ने लेख लिख दिया है वह मिटाया नहीं जा सकता। सुलक्षणा स्त्री अपना तन–मन पति को सौंप देती है और शव्द के साथ प्रेम लगाती है। हृदय में विचार करके देखा जा सकता है कि नाम सुमिरन के बिना किसी को भी प्रभु नहीं मिला है। हे नानक, सुलक्षणा एवं सुन्दर जीव–स्त्री वही है जिसके साथ सृजनहार पति प्रभु ने रमण किया है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ माया मोह ऐसा अन्धकार है जिसका कोई ओर–छोर दिखाई नहीं देता है। अज्ञानी मनमुख प्रभु नाम विस्मृत करके उस अन्धकार में ही डूबते, उतरते और दुख पाते रहते हैं। नित्य नए दिन नाम से विहीन बने रहकर वे अनेकों अन्य कामों में लगे रहते हैं और द्वैत भाव के साथ ही उनका प्यार बना रहता है। जो सद्गुरु की सेवा करते हैं वे संसार सागर से पार उतर जाते हैं। हे नानक, गुरमुख व्यक्ति ही सत्य में लीन होते हैं क्योंकि उन्होंने अपने हृदय में सत्यनाम को ही धारण किया होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ परमात्मा ही जल, स्थल, आकाश सव में व्याप्त है, अन्य दूसरा कोई नहीं है। परमात्मा इन सब स्थलों में बैठकर स्वयं न्याय करता हैं और झूठे लोगों को मार–भगाता है। परमात्मा का धार्मिक न्याय यह है कि सत्याचरण वालों को सम्मान देता है। सब को उस परमात्मा की ही स्तुति करनी चाहिए जिसने गरीबों अनाथों को आश्रय देकर उनकी रक्षा की है। हे भाई, सभी उस परमात्मा का गुणानुवाद करो जिसने पापियों को सदैव दण्ड दिया है ॥ १६ ॥ श्लोक महला ३ ॥ मनमुख, मलीन एवं कुलक्षणा स्त्री की तरह जिसने अपने हृदय रूपी घर में बस रहे पति को छोड़कर पर पुरुष के साथ प्यार किया हुआ है उसकी तृष्णा कभी भी समाप्त नहीं होती और वह जलती हुई सदैव चीत्कार करती रहती है। हे नानक, नाम से विहीन व्यक्ति उस कुरूप स्त्री के समान है

परहरि छोडी भतारि ॥ १ ॥ मः ३ ॥ सबदि रती सोहागणी सतिगुर कै भाइ पिआरि ॥ सदा रावे पिरु आपणा सचै प्रेमि पिआरि ॥ अति सुआलिउ सुंदरी सोभावंती नारि ॥ नानक नामि सोहागणी मेली मेलणहारि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि तेरी सभ करहि उसतति जिनि फाथे काढिआ ॥ हरि तुधनो करहि सभ नमसकारु जिनि पापै ते राखिआ ॥ हरि निमाणिआ तूं माणु हरि डाढी हूं तूं डाढिआ ॥ हरि अहंकारीआ मारि निवाए मनमुख मूड़ साधिआ ॥ हरि भगता देइ वडिआई गरीब अनाथिआ ॥ १७ ॥ सलोक मः ३ ॥ सतिगुर कै भाणै जो चलै तिसु वडिआई वडी होइ ॥ हरि का नामु उतमु मनि वसै मेटि न सकै कोइ ॥ किरपा करे जिसु आपणी तिसु करमि परापति होइ ॥ नानक कारणु करते वसि है गुरमुखि बूझै कोइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ नानक हरि नामु जिनी आराधिआ अनदिनु हरि लिव तार ॥ माइआ बंदी खसम की तिन अगै कमावै कार ॥ पूरै पूरा करि छोडिआ हुकमि सवारणहार ॥ गुर परसादी जिनि बुझिआ तिनि पाइआ मोख दुआरु ॥ मनमुख हुकमु न जाणनी तिन मारे जम जंदारु ॥ गुरमुखि जिनी अराधिआ तिनी तरिआ भउजलु संसारु ॥ सभि अउगण गुणी मिटाइआ गुरु आपे बखसणहारु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि की भगता परतीति हरि सभ किछु जाणदा ॥ हरि जेवडु नाही कोई जाणु हरि धरमु बीचारदा ॥ काड़ा अंदेसा किउ कीजै जा नाही अधरमि मारदा ॥ सचा साहिबु सचु निआउ पापी नरु हारदा ॥ सालाहिहु भगतहु कर जोड़ि हरि भगत जन तारदा ॥ १८ ॥ सलोक मः ३ ॥ आपणे प्रीतम मिलि रहा अंतरि रखा उरि धारि ॥ सालाही सो प्रभ सदा सदा गुर कै हेति पिआरि ॥ नानक जिसु नदरि करे तिसु मेलि लए साई सुहागणि नारि ॥ १ ॥ मः ३ ॥ गुर सेवा ते हरि पाईऐ जा कउ नदरि करेइ ॥ माणस ते देवते भए धिआइआ नामु हरे ॥ हउमै मारि मिलाइअनु गुर कै सबदि तरे ॥ नानक सहजि समाइअनु हरि आपणी क्रिपा करे ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हरि आपणी भगति कराइ वडिआई वेखालीअनु ॥ आपणी आपि करे

जिसे उसके पति ने दुत्कार दिया है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ सुहागिन स्त्री वह है जो शब्द–गुरु में लीन होकर सदैव सद्गुरु रूपी पति के प्रेम में लीन रहती है । वह सदैव अपने प्रियतम के साथ रमण करती है और सत्य के साथ अपने प्रेम प्यार को बनाए रखती है । वह अति सुन्दर और सुन्दर यश वाली जीव–स्त्री है । हे नानक, वह नाम में लीन होकर सुहागिन है और उसे परमात्मा ने आप मिला लिया है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ फंसे हुओं को बचा लेने वाले हे प्रभु, सब तेरी स्तुति कर रहे हैं । पापों से रक्षा करने वाले हे प्रभु, सब तुझे प्रणाम करते हैं । बलिष्ठों में से भी बलिष्ठ प्रभु तू ही अशक्त लोगों का आश्रय है । परमात्मा अहंकारियों को मारकर झुका देता है और मनमुख रूपी मूर्खों का शोधन कर देता है । गरीब अनाथों का प्रभु भक्तों को बड़प्पन प्रदान करता है ॥ १७ ॥ श्लोक महला ३ ॥ जो सद्गुरु के आदेश में चलता है उसका बड़प्पन भी और बड़ा हो जाता है । जिसके मन में हरि का उत्तम नाम बसता है उसे कोई मिटा नहीं सकता । प्रभु जिस पर अपनी कृपा करता है उसे उस कृपा के माध्यम से ही प्रभु मिलता है । हे नानक, कोई गुरमुख बनकर ही बूझ सकता है कि सृष्टि के सभी कारण उस कर्त्ता के ही वश में है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ हे नानक, जिन्होंने प्रतिदिन एक रस होकर परमात्मा के नाम की आराधना की है, यह माया क्योंकि परमात्मा की बाँदी है उन लोगों की सेवा करती है । उस पूर्ण प्रभु ने अपने हुकुम में ऐसे लोगों को पूर्ण बना कर सँवार दिया है । गुरु की कृपा द्वारा जिन्होंने इस रहस्य को बूझ लिया है उन्हीं को ही मुक्ति का द्वार प्राप्त हुआ है । मनमुख व्यक्ति उसके हुकुम को नहीं पहचानते और क्रूर यम उन्हें मार ही डालता है । परन्तु जिन्होंने गुरमुख बनकर प्रभु की आराधना की है उन्होंने ही इस संसार रूपी सागर को तैरकर पार कर लिया है । वह गुणवान प्रभु जीव के सभी अवगुण मिटा देता है और गुरु रूप में वह ही सब पर कृपा करने वाला है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ भक्त जनों को यह विश्वास है कि प्रभु सबके हृदय की बात जानता है । हरि जैसा अन्य कोई जानकार नहीं है और प्रभु ही धर्म–अधर्म का विचार करता है । यदि यह विश्वास हो कि प्रभु अधर्म के जरिए नहीं मारता तो कोई भी चिन्ता और डर नहीं रहता । उस सच्चे साहिब का सच्चा न्याय है और पापी व्यक्ति अन्त में हारता ही हारता है । हे भक्त जनों, हाथ जोड़कर उस प्रभु का गुणानुवाद करो क्योंकि वह परमात्मा भक्त जनों का उद्धार करता है ॥ १८ ॥ श्लोक महला ३ ॥ मन–आत्मा रूपी स्त्री यह चाहती है कि मैं सदैव अपने प्यारे प्रभु प्रियतम को मिली रहूँ और उसे हृदय में धारण किए रहूँ। गुरु के द्वारा लगाए प्रेम के कारण मैं सदैव उस प्रभु का गुणानुवाद करती रहूँ । परन्तु हे नानक, जिस पर वह कृपा करता है उसी को ही अपने साथ मिलाता है और वही जीव–स्त्री सुहागिन कहलाती है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ प्रभु जिस पर कृपा दृष्टि करता है वह गुरु की सेवा के माध्यम से प्रभु से मिल जाता है । परमात्मा के नाम–सुमिरन से मनुष्य भी देवता बन जाते हैं । जिनका अहंकार दूर करके प्रभु ने उन्हें अपने साथ मिला लिया है वे शब्द–गुरु के माध्यम से बच जाते हैं । हे नानक, प्रभु ने अपनी कृपा कर उनको स्थिर सहज अवस्था में मिला दिया है ॥ २॥ पउड़ी ॥ प्रभु ने भक्तजनों को अपनी भक्ति करवा के अपना बड़प्पन दिखाया है । प्रभु ने अपना विश्वास आप करवा कर

परतीति आपे सेव घालीअनु ॥ हरि भगता नो देइ अनंदु थिरु घरी बहालिअनु ॥ पापीआ नो न देई थिरु रहणि चुणि नरक घोरि चालिअनु ॥ हरि भगता नो देइ पिआरु करि अंगु निसतारिअनु ॥ १९ ॥ सलोक मः १ ॥ कुबुधि डूमणी कुदइआ कसाइणि पर निंदा घट चूहड़ी मुठी क्रोधि चंडालि ॥ कारी कढी किआ थीऐ जां चारे बैठीआ नालि ॥ सचु संजमु करणी कारां नावणु नाउ जपेही ॥ नानक अगै ऊतम सेई जि पापां पंदि न देही ॥ १ ॥ मः १ ॥ किआ हंसु किआ बगुला जा कउ नदरि करेइ ॥ जो तिसु भावै नानका कागहु हंसु करेइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ कीता लोड़ीऐ कंमु सु हरि पहि आखीऐ ॥ कारजु देइ सवारि सतिगुर सचु साखीऐ ॥ संता संगि निधानु अंम्रितु चाखीऐ ॥ भै भंजन मिहरवान दास की राखीऐ ॥ नानक हरि गुण गाइ अलखु प्रभु लाखीऐ ॥ २० ॥ सलोक मः ३ ॥ जीउ पिंडु सभु तिस का सभसै देइ अधारु ॥ नानक गुरमुखि सेवीऐ सदा सदा दातारु ॥ हउ बलिहारी तिन कउ जिनि धिआइआ हरि निरंकारु ॥ ओना के मुख सद उजले ओना नो सभु जगतु करे नमसकारु ॥ १ ॥ मः ३ ॥ सतिगुर मिलिऐ उलटी भई नव निधि खरचिउ खाउ ॥ अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरनि निज घरि वसै निज थाइ ॥ अनहद धुनी सद वजदे उनमनि हरि लिव लाइ ॥ नानक हरि भगति तिना कै मनि वसै जिन मसतकि लिखिआ धुरि पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हउ ढाढी हरि प्रभ खसम का हरि कै दरि आइआ ॥ हरि अंदरि सुणी पूकार ढाढी मुखि लाइआ ॥ हरि पुछिआ ढाढी सदि कै कितु अरथि तूं आइआ ॥ नित देवहु दानु दइआल प्रभ हरि नामु धिआइआ ॥ हरि दातै हरि नामु जपाइआ नानकु पैनाइआ ॥ २१ ॥ १ ॥ सुधु

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सिरीरागु कबीर जीउ का ॥ एकु सुआनु कै घरि गावणा

जननी जानत सुतु बडा होतु है इतना कु न जानै जि दिन दिन अवध घटतु है ॥ मोर मोर करि अधिक

स्वयं ही भक्त रूप होकर सेवा की है । भक्तों को आनन्द प्रदान करके परमात्मा ने उन्हें स्थिर ठिकाना देकर बैठने का सुख दिया है। पापियों को वह कभी स्थिर नहीं बैठने देता और उन्हें चुन–चुनकर घोर नर्क में धकेल देता है । भक्त जनों को प्यार देकर एवं उनका पक्ष लेकर प्रभु उनका उद्धार कर देता है ॥ १९ ॥ श्लोक महला १ ॥ कुबुद्धि व्यक्ति के अन्दर भाँड रूपी स्त्री है, बेरहमी कसाई रूपी स्त्री है, परायी निन्दा अन्दर की भंगिन है और क्रोध चाण्डालिन है जिसने व्यक्ति को ठग रखा है । यदि ये चारों अन्दर हो तो चौका आदि की पवित्रता के लिए लकीरें डालकर बाहरी लीपा–पोती का क्या लाभ ? हे नानक, जो व्यक्ति सत्य को स्वच्छता की युक्ति बनाते हैं, ऊँचे आचरण को चौके की लकीरें बनाते है; जो नाम का सुमिरन करते हैं और इसी को तीर्थ–स्नान समझते हैं एवं जो अन्य लोगों को भी पाप–कर्मों की शिक्षा नहीं देते, वे व्यक्ति ही प्रभु के समक्ष उत्तम गिने जाते है ॥ १ ॥ महला १ ॥ जिसकी ओर प्यार से वह प्रभु देख ले उसका बगुला या हँस होना कोई अर्थ नहीं रखता क्योंकि हे नानक, यदि प्रभु चाहे तो वह कौए तो भी हँस बना देता है अर्थात निकृष्ट आचरण वाले को भी उज्जवल बुद्धि प्रदान कर देता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मनोवांछित कार्य की पूर्ति की यदि चाहत हो तो उसके लिए परमात्मा के सामने प्रार्थना ही की जानी चााहिए । सद्गुरु की सच्ची शिक्षा के माध्यम से वह प्रभु ही सारे कार्यों को सँवार देता है । शान्त पुरुषों की संगत में नाम का भण्डार प्राप्त होता है और आध्यात्मिक जीवन देने वाला नाम जल चखा जाता है । यही कहना उपयुक्त है कि हे भय–भंजन कृपालु प्रभु, दास की लाज रख लो । हे नानक, इस प्रकार परमात्मा का गुणानुवाद करते हुए उस अदृष्ट प्रभु के दर्शन हो सकते है ॥ २० ॥ श्लोक महला ३ ॥ यह जीवन और यह शरीर सब उसी का है और उस परमात्मा ने ही सब को आश्रय दिया है । हे नानक, उस नित्य–दानी प्रभु की गुरमुख बनकर सेवा करनी चाहिए । मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने उस निराकार प्रभु में ध्यान लगाया है । उनके मुख सदैव उज्जवल बने रहते हैं और सारा जगत उन्हें ही प्रणाम करता है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ यदि गुरु मिल जाए तो मनुष्य की सुरति प्रपंचों की ओर से हट जाती है और उसे खाने खर्चने के लिए नवनिधियाँ प्राप्त हो जाती है । अब अठारहों सिद्धियाँ भी उसके पीछे दौड़ी फिरती हैं और वह व्यक्ति अपने मूल स्वरूप में अपना स्थिर स्थान बना लेता है । उसके अन्तर्मन में सदैव अनहद नाद बजा करता है और उसकी सुरति उन्मनि अर्थात् सांसारिकता से हटकर हरि में लीन हो जाती है । हे नानक, हरि–भक्ति केवल उनके मन में ही बसती है जिनके मस्तक पर शुरू से ही ऐसा होना लिखा रहता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मैं प्रभु–मालिक का भाट प्रभु के द्वार पर पहुँच गया है । प्रभु ने भाट की पुकार सुन ली और उसे सामने बुला भेजा है । परमात्मा ने भाट को बुलाकर पूछा कि तेरे यहाँ आने का तात्पर्य क्या है । मैंने प्रार्थना की कि हे दयालु प्रभु, मुझे यही दान दो कि मैं तेरे नाम का सुमिरन सदैव करता रहूँ । उस दानी प्रभु ने अपने नाम का जाप मुझसे कराया और मुझ नानक को बड़प्पन भी प्रदान किया ॥ २१ ॥ १ ॥ शुद्ध ॥

१ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सिरारागु कबीर जीउ का ॥ पन्ना २४ पर सिरीरागु महला १ घर चार वाले शब्द (एकु सुआनु दोए सुआनी) के स्वर में ही इसका गायन करना है ॥

माँ यह मानती है कि बेटा बड़ा हो रहा है परन्तु इतना भी नहीं जानती कि प्रतिदिन आयु घट रही है । वह कहती है यह मेरा पुत्र है, यह मेरा पुत्र है और उसके साथ बहुत लाड प्यार

लाडु धरि पेखत ही जम राउ हसै ॥ १ ॥ ऐसा तैं जगु भरमि लाइआ ॥ कैसे बूझै जब मोहिआ है माइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहत कबीर छोडि बिखिआ रस इतु संगति निहचउ मरणा ॥ रमईआ जपहु प्राणी अनत जीवण बाणी इन बिधि भव सागरु तरणा ॥ २ ॥ जां तिसु भावै ता लागै भाउ ॥ भरमु भुलावा विचहु जाइ ॥ उपजै सहजु गिआन मति जागै ॥ गुर प्रसादि अंतरि लिव लागै ॥ ३ ॥ इतु संगति नाही मरणा ॥ हुकमु पछाणि ता खसमै मिलणा ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ सिरीरागु त्रिलोचन का ॥ माइआ मोहु मनि आगलड़ा प्राणी जरा मरणु भउ विसरि गइआ ॥ कुटंबु देखि बिगसहि कमला जिउ पर घरि जोहहि कपट नरा ॥ १ ॥ दूड़ा आइओहि जमहि तणा ॥ तिन आगलड़ै मै रहणु न जाइ ॥ कोई कोई साजणु आइ कहै ॥ मिलु मेरे बीठुला लै बाहड़ी वलाइ ॥ मिलु मेरे रमईआ मै लेहि छडाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक अनिक भोग राज बिसरे प्राणी संसार सागर पै अमरु भइआ ॥ माइआ मूठा चेतसि नाही जनमु गवाइओ आलसीआ ॥ २ ॥ बिखम घोर पंथि चालणा प्राणी रवि ससि तह न प्रवेसं ॥ माइआ मोहु तब बिसरि गइआ जां तजीअले संसारं ॥ ३ ॥ आजु मेरै मनि प्रगटु भइआ है पेखीअले धरम राओ ॥ तह कर दल करनि महाबली तिन आगलड़ै मै रहणु न जाइ ॥ ४ ॥ जे को मूं उपदेसु करतु है ता वणि त्रिणि रतड़ा नाराइणा ॥ ऐ जी तूं आपे सभ किछु जाणदा बदति त्रिलोचनु रामईआ ॥ ५ ॥ २ ॥ स्रीरागु भगत कबीर जीउ का ॥ अचरज एकु सुनहु रे पंडीआ अब किछु कहनु न जाई ॥ सुरि नर गण गंध्रब जिनि मोहे त्रिभवण मेखुली लाई ॥ १ ॥ राजा राम अनहद किंगुरी बाजै ॥ जा की दिसटि नाद लिव लागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भाठी गगनु सिंङिआ अरु चुंङिआ कनक कलस इकु पाइआ ॥ तिसु महि धार चुऐ अति निरमल रस महि रसन चुआइआ ॥ २ ॥ एक जु बात अनूप बनी है पवन पिआला साजिआ ॥ तीनि भवन महि एको जोगी कहहु कवनु है राजा ॥ ३ ॥ ऐसे गिआन प्रगटिआ पुरखोतम कहु कबीर रंगि राता ॥ अउर दुनी सभ भरमि भुलानी मनु राम रसाइन माता ॥ ४ ॥ ३ ॥

करती है जिसे देखकर यमराज हँसता रहता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तूने जग को ऐसे भ्रम में डाल रखा है कि वह माया में ग्रस्त होकर कैसे इस बात के रहस्य को समझ सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कबीर कहता है, हे जीव, विषयों के रस का त्याग कर दे अन्यथा इनके रसों का साथ करने पर आध्यात्मिक तौर पर तुझे मरना ही मरना है। हे प्राणी, उस सर्वव्यापक प्रभु का जाप कर और उसकी वाणी ही तुझे अटल जीवन प्रदान करेगी और इस तरह तू भव सागर से पार हो सकेगा ॥ २ ॥ यदि उसे भा जाए तब ही उससे प्रेम लग पाता है और अन्तर्मन का भ्रम का भुलावा दूर हो जाता है। जीव की मति जाग्रत हो उठती है और सहज ज्ञान उत्पन्न हो जाता है। गुरु कृपा से उसकी लौ प्रभु में लग जाती है ॥ ३ ॥ इस प्रकार की संगत में मरण नहीं होता और उस प्रभु के हुकुम को जब पहचान लिया जाता है तब उस प्रभु से मिलाप भी हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ दूसरा ॥ सिरीरागु त्रिलोचन का ॥ हे जीव, तेरे मन में माया का बहुत मोह है; तुझे यह भी डर नहीं और तूने बुढ़ापे और मौत को विस्मृत कर दिया है। तू परिवार को देखकर कमल की तरह खिल उठता है और कपटी बन कर पराये घर में झांकता रहता है ॥ १ ॥ यम का पुत्र बुढ़ापा दूत बनकर उसका सन्देशा देने आ पहुँचा है। उसके आगे मैं टिका नहीं रह सकूँगा। कोई विरला भक्तजन ही प्रार्थना करता है कि हे प्रभु मुझे गले में बाँहे डालकर मिल जा। हे सर्वत्र व्यापक प्रभु, मुझे मोह–माया से छुड़ा ले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्राणी, माया के अनेक भोगों के कारण तू प्रभु को भुला बैठा है और यह मान रहा है कि इस संसार रूपी समुद्र में मैं सदैव बना रहूँ। माया से ठगे हुए हे प्राणी, तू उस परमात्मा को नहीं याद करता और आलसी बनकर तूने यह जन्म गँवा लिया है ॥ २ ॥ हे जीव, तू माया के ऐसे गहन अंधकार में चल रहा है जहां सूर्य एवं चन्द्र दोनों ही प्रकाश नहीं कर पाते। जब संसार को त्यागना पड़ेगा तो यह माया मोह के सम्बन्ध सभी छूट जाएंगे ॥ ३ ॥ आज यह मेरे मन में विदित् हो गया है कि धर्मराज का मुँह तो देखना ही पड़ेगा। वहाँ बड़े बलवानों को भी यमदूत हाथों से मसल देते हैं और उनके सामने मैं टिक नहीं सकूँगा ॥ ४ ॥ यदि कोई मुझे उपदेश देता है तो हे प्रभु, तू मुझे सर्वत्र दिखाई देने लग जाता है। हे सब में रमने वाले राम, त्रिलोचन यह कहता है कि तू ही सब कुछ समझता बूझता है ॥ ५ ॥ २ ॥ सिरी रागु भक्त कबीर जीउ का ॥ हे पंडित, एक अजीब बात सुन, हालांकि उसे अब कहना बड़ा कठिन लग रहा है। उस प्रभु ने सारे जगत को माया की मेखला से बाँधकर देवता, मनुष्य गण और गन्धर्वों आदि को सम्मोहित कर रखा है ॥ १ ॥ प्रभु के अनहद् नाद की किंगरी बज रही है और उसकी कृपा से मेरी सुरति शब्द में लीन हो गयी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा मस्तिष्क भट्ठी बना पड़ा है। बुरे कर्मों की ओर से संकोच मानों फालतू पानी बाहर फेंकने वाली नाली है; गुण ग्रहण करना मानों सोने का कलश है। मेरे शुद्ध हृदय में नाम–अमृत की बड़ी स्वच्छ धारा चू रही है और सब रसों से उत्तम नाम–रस आसवित किया जा रहा है ॥ २ ॥ एक अन्य बात बड़ी अच्छी बन गयी है कि मैंने श्वास को प्याला बना लिया है और श्वास–श्वास के साथ उस प्रभु–नाम का पान करने से वह प्रभु तीनों भुवनों में व्याप्त दिखाई दे रहा है। हे पंडित, बताओ अब उससे बड़ा और कौन हो सकता है ॥ ३॥ इस प्रकार उस प्रभु की पहचान का सर्वोत्तम ज्ञान मेरे अन्दर प्रकट हो उठा है और कबीर उसके रंग में रंगा गया है। सारा संसार तो भ्रमों में भूला पड़ा है परन्तु मेरा मन उस राम रसायण में मद्मस्त हो चुका है ॥ ४ ॥ ३ ॥

स्रीराग बाणी भगत बेणी जीउ की ॥ पहरिआ कै घरि गावणा ॥

੧ਓ सतिगुर प्रसादि ॥

रे नर गरभ कुंडल जब आछत उरध धिआन लिव लागा ॥ मिरतक पिंडि पद मद ना अहिनिसि एकु अगिआन सुनागा ॥ ते दिन संमलु कसट महा दुख अब चितु अधिक पसारिआ ॥ गरभ छोडि म्रित मंडल आइआ तउ नरहरि मनहु बिसारिआ ॥ १ ॥ फिरि पछुतावहिगा मूड़िआ तूं कवन कुमति भ्रमि लागा ॥ चेति रामु नाही जम पुरि जाहिगा जनु बिचरै अनराधा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बाल बिनोद चिंद रस लागा खिनु खिनु मोहि बिआपै ॥ रसु मिसु मेधु अंम्रितु बिखु चाखी तउ पंच प्रगट संतापै ॥ जपु तपु संजमु छोडि सुक्रित मति राम नामु न अराधिआ ॥ उछलिआ कामु काल मति लागी तउ आनि सकति गलि बांधिआ ॥ २ ॥ तरुण तेजु पर त्रिअ मुखु जोहहि सरु अपसरु न पछाणिआ ॥ उनमत कामि महा बिखु भूलै पापु पुंनु न पछानिआ ॥ सुत संपति देखि इहु मनु गरबिआ रामु रिदै ते खोइआ ॥ अवर मरत माइआ मनु तोले तउ भग मुखि जनमु विगोइआ ॥ ३ ॥ पुंडर केस कुसम ते धउले सपत पाताल की बाणी ॥ लोचन स्रमहि बुधि बल नाठी ता कामु पवसि माधाणी ॥ ता ते बिखै भई मति पावसि काइआ कमलु कुमलाणा ॥ अवगति बाणि छोडि म्रित मंडलि तउ पाछै पछुताणा ॥ ४ ॥ निकुटी देह देखि धुनि उपजै मान करत नही बूझै ॥ लालचु करै जीवन पद कारन लोचन कछू न सूझै ॥ थाका तेजु उडिआ मनु पंखी घरि आंगनि न सुखाई ॥ बेणी कहै सुनहु रे भगतहु मरन मुकति किनि पाई ॥ ५ ॥ सिरीरागु ॥ तोही मोही मोही तोही अंतरु कैसा ॥ कनक कटिक जल तरंग जैसा ॥ १ ॥ जउ पै हम न पाप करंता अहे अनंता ॥ पतित पावन नामु कैसे हुंता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्ह जु नाइक आछहु अंतरजामी ॥ प्रभ ते जनु जानीजै जन ते सुआमी ॥ २ ॥ सरीरु आराधै मोकउ बीचारु देहू ॥ रविदास सम दल समझावै कोऊ ॥ ३ ॥

सिरीरागु वाणी भगत बेणी जी की ॥ (पृष्ठ ७४ पर गुरु नानक देव जी की) 'पहरे' वाणी की धुन पर इसे गाना है ।

१ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे जीव, जब तू माँ के पेट में था तो तेरी सुरति ऊँचे प्रभु के ध्यान में लगी रहती थी । उस समय तुझे शरीर के अस्तित्व का कोई अहंकार नहीं था, दिन-रात तू एक प्रभु का सुमिरन करता था और तेरे अन्दर अज्ञान भी नहीं था । तू उन दिनों को याद कर जो बड़े कष्टकारक थे परन्तु अब तूने अपने मन को इधर-उधर दौड़ा रखा है । गर्भावस्था छोड़कर जब से तू इस मृत्युलोक में आया है तूने अपने प्रभु को विस्मृत कर दिया है ॥ १ ॥ हे मूर्ख, तू किस भ्रम और कुमति के पीछे लगा हुआ है । तू फिर हाथ मलता रह जाएगा; प्रभु का सुमिरन कर नहीं तो तू यमपुरी में धकेल दिया जाएगा क्योंकि तू इस संसार में किसी को भी न मानने वाले की तरह विचरण कर रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पहले तू बालपन के खेलों के ध्यान एवं स्वाद में लगा रहा और सदा मोह में ही फंसा रहा है । जब तूने माया रूपी विष को रसदायक और पवित्र अमृत समझ कर चखा तो तुझे पाँचों विकार प्रकट तौर से सता रहे हैं । जप-तप संयम और पुण्य कर्म करवाने वाली बुद्धि को तूने त्याग दिया है और तू प्रभु नाम का सुमिरन नहीं करता है । काम तेरे अन्दर पूर्ण उछाल पर है; तेरी बुद्धि कलुषित हो गयी है और तू स्त्री को गले लगाकर उसके मोह में लीन है ॥ २ ॥ जवानी के जोश में अच्छे बुरे अवसर को न पहचानता हुआ तू परायी स्त्री की ओर देखे जा रहा है । कामोन्मत्त होकर तू इसी गहरे विष में फंसा हुआ है और तुझे पाप-पुण्य की पहचान नहीं रह गयी है । पुत्र एवं सम्पत्ति देखकर तेरा मन अहंकारी हो चुका है और तूने राम-नाम को हृदय से भुला दिया है । अन्यों के मरने पर तू उनके धन की जाँच-परख करने लग जाता है और कामातुर होकर तूने जन्म व्यर्थ गँवा दिया है ॥ ३ ॥ तेरे केश कमल से भी अधिक श्वेत हो गए हैं और अब तेरी मद्धम आवाज भी पाताल से आती हुई लगती है । आँखों से पानी बह रहा है और तेरी चतुर बुद्धि भी कमजोर हो चुकी है । तो भी काम की मथनी तुझे मथे जा रही है और वासनाओं के कारण तेरी बुद्धि में विषय-विकारों की वर्षा हो रही है । तेरा शरीर रूपी कमल मुरझा गया है । उस अव्यक्त प्रभु का भजन-चिन्तन तू छोड़ बैठा है और इस संसार में समय व्यर्थ नष्ट करके तू बाद में हाथ मलता रह जाएगा ॥ ४॥ छोटे-छोटे बच्चों को देखकर तेरे अन्दर उत्साह उत्पन्न होता है और तू नासमझी में अभिमानी बन जाता है। तुझे बेशक आँखों से दिखाई भी नहीं दे रहा परन्तु फिर भी जीवन के प्रति तू लालच करता ही जाता है । शरीर का बल समाप्त हो जाता है; जीवन-पक्षी अन्त में उड़ जाता है और तब मृत व्यक्ति घर-आँगन में रखा हुआ भी अच्छा नहीं लगता । बेणी कहता है कि हे सन्त जनों, मरने के बाद मुक्ति प्राप्त नहीं होती (वास्तव में जीवन में ही विकारों से मुक्त हो जाना चाहिए) ॥ ५ ॥ सिरीरागु ॥ हे प्रभु, मेरे-तेरे और तेरे-मेरे में भला कैसा अन्तर है । यह अन्तर वैसा ही है जैसा सोने और सोने के कड़ों में तथा जल और जल की तरंगों में है ॥ १ ॥ हे अनन्त प्रभु, यदि हम पाप न करते तो भला तेरा नाम पतित पावन कैसे होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे अन्तर्यामी प्रभु, तुम सबके नायक हो । मालिक से ही नौकर की पहचान हो जाती है और सेवक से ही मालिक की परख हो जाती है ॥ २ ॥ प्रभु, मुझे यह बुद्धि प्रदान कर कि मेरा शरीर तेरी आराधना करे । रविदास को कोई सन्तजन यह भी समझा दे कि व्यक्तियों के सभी दलों में समान रूप से विचरण-रमण करने वाला तू ही सर्वव्यापक है ॥ ३॥

राग माझ चउपदे घरु १ महला ४

१ओ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

हरि हरि नामु मै हरि मनि भाइआ ॥ वडभागी हरि नामु धिआइआ ॥ गुरि पूरै हरि नाम सिधि पाई को विरला गुरमति चलै जीउ ॥ १ ॥ मै हरि हरि खरचु लइआ बंनि पलै ॥ मेरा प्राण सखाई सदा नालि चलै ॥ गुरि पूरै हरि नामु दिड़ाइआ हरि निहचलु हरि धनु पलै जीउ ॥ २ ॥ हरि हरि सजणु मेरा प्रीतमु राइआ ॥ कोई आणि मिलावै मेरे प्राण जीवाइआ ॥ हउ रहि न सका बिनु देखे प्रीतमा मै नीरु वहे वहि चलै जीउ ॥ ३ ॥ सतिगुरु मित्रु मेरा बाल सखाई ॥ हउ रहि न सका बिनु देखे मेरी माई ॥ हरि जीउ क्रिपा करहु गुरु मेलहु जन नानक हरि धनु पलै जीउ ॥ ४ ॥ १ ॥ माझ महला ४ ॥ मधुसूदन मेरे मन तन प्राना ॥ हउ हरि बिनु दूजा अवरु न जाना ॥ कोई सजणु संतु मिलै वडभागी मै हरि प्रभु पिआरा दसै जीउ ॥ १ ॥ हउ मनु तनु खोजी भालि भालाई ॥ किउ पिआरा प्रीतमु मिलै मेरी माई ॥ मिलि सतसंगति खोजु दसाई विचि संगति हरि प्रभु वसै जीउ ॥ २ ॥ मेरा पिआरा प्रीतमु सतिगुरु रखवाला ॥ हम बारिक दीन करहु प्रतिपाला ॥ मेरा मात पिता गुरु सतिगुरु पूरा गुर जल मिलि कमलु विगसै जीउ ॥ ३ ॥ मै बिनु गुर देखे नीद न आवै ॥ मेरे मन तनि वेदन गुर बिरहु लगावै ॥ हरि हरि दइआ करहु

१ओअंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

हे प्रभु, हरि–नाम मुझे प्यारा लग रहा है। मेरे बड़े भाग्य है कि मैंने प्रभु नाम का सुमिरन किया है। हरि–नाम की सिद्धि मैंने पूरे गुरु से प्राप्त की है और कोई बिरला ही गुरु की मति के अनुसार चलता है ॥ १ ॥ मैंने प्रभु नाम को जीवन यात्रा के खर्च के रूप में अपने पल्ले बाँध लिया है। प्राणसखा मेरा प्रभु सदैव मेरे साथ रहता है। पूर्ण गुरु ने हरि नाम मेरे हृदय में टिका दिया है और परमात्मा का अटल धन अब मेरे पल्लू में बँधा है ॥ २ ॥ परमात्मा मेरा स्वजन, प्रियतम एवं मेरा सम्राट है। मेरे प्राणों को जीवित रखने वाले उस प्रभु से कोई मुझे मिला दे। उस प्रियतम को देखे बिना रहा नहीं जा सकता और मेरी आँखों से पानी धारा के रूप में बह रहा है ॥ ३ ॥ हे मेरी माँ, सद्गुरु परमात्मा मेरा मित्र एवं बाल सखा है। मैं उसे देखे बिना रह नहीं सकता। दास नानक कहता है हे प्रभु, कृपा कर मुझे गुरु से मिला दे ताकि मेरे पास हरि–नाम रूपी धन एकत्र हो जाए ॥ ४ ॥ १ ॥ माझ महला ४ ॥ परमात्मा मेरे मन, तन एवं प्राणों में रमा हुआ है। परमात्मा के बिना मैं किसी अन्य को जीवन आश्रय के रूप में नहीं मानता हूँ। मेरे बड़े भाग्य से कोई शान्त पुरुष मुझे मिल जाए और मुझे उस प्यारे प्रभु का पता बता दे ॥ १ ॥ हे मेरी माँ, मुझे प्रियतम प्रभु मिल जाए उसके लिए खोजता, देखता अपने मन और शरीर को भी खोजता हुआ सद्संगत में भी उस प्रभु का पता पूँछता हूँ क्योंकि वास्तव में हरि प्रभु सद्संगत में ही बसता है ॥ २ ॥ मेरा प्यारा प्रियतम सद्गुरु (परमात्मा) ही मेरा रक्षक है। हम दीन बालक है, हे प्रभु, तू हमारी रक्षा कर। वह परमात्मा ही मेरी माता, मेरा पिता एवं गुरु है और उस गुरु रूपी जल से मिलकर मेरा हृदय कमल खिल उठता है। गुरु को देखे बिना मुझे नींद नहीं आती क्योंकि गुरु ही मेरे मन, तन में प्रभु के प्रति विरह वेदना को जगाता है। हे प्रभु, दया करके मुझे

गुरु मेलहु जन नानक गुर मिलि रहसै जीउ ॥ ४ ॥ २ ॥ माझ महला ४ ॥ हरि गुण पड़ीऐ हरि गुण गुणीऐ ॥ हरि हरि नाम कथा नित सुणीऐ ॥ मिलि सतसंगति हरिगुण गाए जगु भउजलु दुतरु तरीऐ जीउ ॥ १ ॥ आउ सखी हरि मेलु करेहा ॥ मेरे प्रीतम का मै देइ सनेहा ॥ मेरा मित्रु सखा सो प्रीतमु भाई मै दसे हरि नरहरीऐ जीउ ॥ २ ॥ मेरी बेदन हरि गुरु पूरा जाणै ॥ हउ रहि न सका बिनु नाम वखाणे ॥ मै अउखधु मंत्रु दीजै गुर पूरे मै हरि हरि नामि उधरीऐ जीउ ॥ ३ ॥ हम चात्रिक दीन सतिगुर सरणाई ॥ हरि हरि नामु बूंद मुखि पाई ॥ हरि जल निधि हम जल के मीने जन नानक जल बिनु मरीऐ जीउ ॥ ४ ॥ ३ ॥ माझ महला ४ ॥ हरि जन संत मिलहु मेरे भाई ॥ मेरा हरि प्रभु दसहु मै भुख लगाई ॥ मेरी सरधा पूरि जगजीवन दाते मिलि हरि दरसनि मनु भीजै जीउ ॥ १ ॥ मिलि सतसंगि बोली हरि बाणी ॥ हरि हरि कथा मेरै मनि भाणी ॥ हरि हरि अंम्रितु हरि मनि भावै मिलि सतिगुर अंम्रितु पीजै जीउ ॥ २ ॥ वडभागी हरि संगति पावहि ॥ भागहीन भ्रमि चोटा खावहि ॥ बिनु भागा सतसंगु न लभै बिनु संगति मैलु भरीजै जीउ ॥ ३ ॥ मै आइ मिलहु जगजीवन पिआरे ॥ हरि हरि नामु दइआ मनि धारे ॥ गुरमति नामु मीठा मनि भाइआ जन नानक नामि मनु भीजै जीउ ॥ ४ ॥ ४ ॥ माझ महला ४ ॥ हरि गुर गिआनु हरि रसु हरि पाइआ ॥ मनु हरि रंगि राता हरि रसु पीआइआ ॥ हरि हरि नामु मुखि हरि हरि बोली मनु हरि रसि टुलि टुलि पउदा जीउ ॥ १ ॥ आवहु संत मै गलि मेलाईऐ ॥ मेरे प्रीतम की मै कथा सुणाईऐ ॥ हरि के संत मिलहु मनु देवा जो गुरबाणी मुखि चउदा जीउ ॥ २ ॥ वडभागी हरि संतु मिलाइआ ॥ गुरि पूरै हरि रसु मुखि पाइआ ॥ भागहीन सतिगुरु नही पाइआ मनमुखु गरभ जूनी निति पउदा जीउ ॥ ३ ॥ आपि दइआलि दइआ प्रभि धारी ॥ मलु हउमै बिखिआ सभ निवारी ॥ नानक हट पटण विचि कांइआ हरि लैंदे गुरमुखि सउदा जीउ ॥ ४ ॥ ५ ॥ माझ महला ४ ॥ हउ गुण गोविंद हरि नामु धिआई ॥ मिलि संगति मनि नामु वसाई ॥ हरि प्रभ अगम अगोचर सुआमी

गुरु से मिला दो क्योंकि दास नानक का मन भी गुरु को मिलकर ही खिल उठता है ॥ ४ ॥ २ ॥ माझ महला ४ ॥ हरि-गुणों को पढ़ा और विचारा जाए अर्थात् सदैव हरि-नाम की कथा ही सुनी जाए ॥ सद्संगत में मिलकर हरि का गुणानुवाद करने से दुष्कर संसार सागर को तैरा जा सकता है ॥ १ ॥ हे सद्संगी मित्र, आओ प्रभु प्राप्ति वाला सत्संग किया जाए । जो मुझे प्रियतम प्रभु का संदेशा देता है वही मेरा मित्र, साथी, सज्जन और भाई है और वही मुझे परमात्मा के बारे में बताने वाला है ॥ २ ॥ परमात्मा रूपी गुरु मेरी पीड़ा को जानता है । परमात्मा के नाम के उच्चारण के बिना मुझे चैन नहीं पड़ता । हे पूर्ण सद्गुरु, मुझे अपने नाम की औषधि प्रदान कर और हरि-नाम के माध्यम से ही मेरा उद्धार कर ॥ ३ ॥ हम विनम्र चातक पक्षी हैं जो सद्गुरु की शरण में हैं और परमात्मा ने ही हरि-नाम रूपी बूँद हमारे मुख में डाली है । वह परमात्मा जल रूपी समुद्र है, हम उसकी मछलियाँ है और दास नानक उस प्रभु रूपी जल के बिना मरणासन्न बन जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ माझ महला ४ ॥ हे हरि जनों, शान्त पुरुषो एवं मेरे भाईयो, मेरे पास आओ और मुझे परमात्मा के बारे में बताओं क्योंकि मुझे उसके दर्शन की भूख लगी हुई है । हे जगजीवन दाता प्रभु, मेरी इच्छा पूर्ण करो क्योंकि प्रभु दर्शन से ही मेरा मन पूर्ण रूप से तृप्त होता है ॥ १ ॥ सद्संगत में प्रभु की वाणी का ही उच्चारण होता है और प्रभु-कथा ही मेरे मन को भाती है । प्रभु-नाम का जल ही मुझे अच्छा लगता है और यह नाम-जल सद्गुरु को मिलकर ही पीया जा सकता है ॥ २ ॥ भाग्यशाली लोग ही प्रभु को मिलाने वाली संगत पाते है और भाग्यहीन व्यक्ति भ्रम की चोटें खाते रहते हैं । बिना अच्छे भाग्य के सद्संगत नहीं मिलती और सद्संगत के बिना व्यक्ति का मन विषयों की मैल से भरा ही रहता है ॥ ३ ॥ हे जगत को जीवन देने वाले प्यारे प्रभु, मुझे आन मिल । हे प्रभु, मन में दया धारण कर और मुझे नाम प्रदान कर । दास नानक कहता है कि गुरमति में ही परमात्मा का नाम मीठा और प्यारा लगता है और व्यक्ति का मन प्रभु नाम में ही सराबोर बना रहता है ॥ ४ ॥ ४॥ माझ महला ४ ॥ गुरु की प्रदान की हुई परमात्मा के साथ गहरी पहचान मैंने प्राप्त कर ली है और मुझे परमात्मा का नाम-रस मिल गया है । प्रभु-नाम का रस पीने से मेरा मन परमात्मा के नाम-रंग में ही रंग गया है । अब मैं सदैव परमात्मा का नाम ही मुख से उच्चारण करता हूँ और परमात्मा के नाम रस के कारण मेरा मन अब उछल-उछल पड़ता है ॥ १ ॥ हे शान्त जनों, आओ मुझे गले से लगा लो और मुझे मेरे प्रियतम की कथा-वार्ता सुनाओ। हे हरि के शान्त पुरुषो मुझे मिलो क्योंकि जो कोई भी गुरु की वाणी का उच्चारण करता है मैं अपना मन उसे अर्पण करता हूँ ॥ २ ॥ बड़े भाग्य से परमात्मा ने मुझे शान्त पुरुष से मिला दिया है जिसने परमात्मा का नाम-रस मेरे मुख में उड़ेल दिया है । भाग्यहीनों को सद्गुरु नहीं मिलता और वे मनमुख बनकर सदैव योनियाँ धारण करते रहते हैं ॥ ३ ॥ दयालु प्रभु ने स्वयं दया करके मेरे अहंकार की मल और विकारों को दूर कर दिया है । हे नानक, गुरमुख व्यक्ति अपने शरीर रूपी शहर की हाट में ही टिककर परमात्मा रूपी सौदे को प्राप्त कर लेते है ॥ ४ ॥ ५ ॥ माझ महला ४ ॥ मैं गोविंद के गुण गाँऊ, हरि-नाम का सुमिरन करूँ और मेरी इच्छा है कि सद्संगत में बैठकर मैं परमात्मा का नाम अपने हृदय में बसाऊँ । हे अगम, अगोचर स्वामी प्रभु, सद्गुरु से मिलकर ही हरि-रस का आनन्द लिया

मिलि सतिगुर हरि रसु कीचै जीउ ॥ १ ॥ धनु धनु हरि जन जिनि हरि प्रभु जाता ॥ जाइ पुछा जन हरि की बाता ॥ पाव मलोवा मलि मलि धोवा मिलि हरि जन हरि रसु पीचै जीउ ॥ २ ॥ सतिगुर दातै नामु दिड़ाइआ ॥ वडभागी गुर दरसनु पाइआ ॥ अंम्रित रसु सचु अंम्रितु बोली गुरि पूरै अंम्रितु लीचै जीउ ॥ ३ ॥ हरि सतसंगति सतपुरखु मिलाईऐ ॥ मिलि सतसंगति हरि नामु धिआईऐ ॥ नानक हरि कथा सुणी मुखि बोली गुरमति हरि नामि परीचै जीउ ॥ ४ ॥ ६ ॥ माझ महला ४ ॥ आवहु भैणे तुसी मिलहु पिआरीआ ॥ जो मेरा प्रीतमु दसे तिस कै हउ वारीआ ॥ मिलि सतसंगति लधा हरि सजणु हउ सतिगुर विटहु घुमाईआ जीउ ॥ १ ॥ जह जह देखा तह तह सुआमी ॥ तू घटि घटि रविआ अंतरजामी ॥ गुरि पूरै हरि नालि दिखालिआ हउ सतिगुर विटहु सद वारिआ जीउ ॥ २ ॥ एको पवणु माटी सभ एका सभ एका जोति सबाईआ ॥ सभ इका जोति वरतै भिनि भिनि न रलई किसै दी रलाईआ ॥ गुर परसादी इकु नदरी आइआ हउ सतिगुर विटहु वताइआ जीउ ॥ ३ ॥ जनु नानकु बोलै अंम्रित बाणी ॥ गुरसिखां कै मनि पिआरी भाणी ॥ उपदेसु करे गुरु सतिगुरु पूरा गुरु सतिगुरु परउपकारीआ जीउ ॥ ४ ॥ ७ ॥ सत चउपदे महले चउथे के ॥

माझ महला ५ चउपदे घरु १ ॥

मेरा मनु लोचै गुर दरसन ताई ॥ बिलप करे चात्रिक की निआई ॥ त्रिखा न उतरै सांति न आवै बिनु दरसन संत पिआरे जीउ ॥ १ ॥ हउ घोली जीउ घोलि घुमाई गुर दरसन संत पिआरे जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा मुखु सुहावा जीउ सहज धुनि बाणी ॥ चिरु होआ देखे सारिंगपाणी ॥ धंनु सु देसु जहा तूं वसिआ मेरे सजण मीत मुरारे जीउ ॥ २ ॥ हउ घोली हउ घोलि घुमाई गुर सजण मीत मुरारे जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता ॥ हुणि कदि

जा सकता है ॥ १ ॥ वे परमात्मा के सेवक धन्य है जिन्होंने हरि प्रभु को जान लिया है । मैं उस प्रभु के सेवकों के पास जाकर परमात्मा की कथा–वार्ता पूछूँ उनके पैर दबाऊँ और उन्हे मल–मल कर धोऊँ, क्योंकि प्रभु के सेवकों को ही मिलकर हरि का नाम–रस पीया जा सकता है ॥ २ ॥ सद्गुरु ने परमात्मा का नाम मेरे हृदय में टिका दिया है और बड़े भाग्य से मुझे गुरु के दर्शन हुए हैं । अब अमृत रस से भरपूर मेरी बोली भी सत्यरूपी अमृत बन गयी है । पूर्ण गुरु से ही अमृत रस प्राप्त किया जा सकता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, मुझे सद्संगत और सद्पुरुषों से मिला दे । सद्संगत में ही हरि–नाम की आराधना होती है । हे नानक! मैं प्रभु के गुणानुवाद की बातें सुनता रहूँ और बोलता भी रहूँ । गुरुमति के माध्यम से ही परमात्मा में लीन हुआ जाता है ॥ ४ ॥ ६ ॥ माझ महला ४ ॥ हे प्यारी बहनों (सद्संगियों) आओ मिल बैठो । जो मेरे प्रीतम के बारे में बताएगी मैं उस पर से बलिहारी जाऊँगी ॥ १ ॥ सद्संगत में मिल बैठकर मैंने हरिरूपी सज्जन को पा लिया है और मैं सद्गुरु पर कुर्बान जाती हूँ । मैं जिधर देखती हूँ उधर ही वह स्वामी प्रभु दिखाई देता है । हे अन्तर्यामी, तू प्रत्येक हृदय में व्याप्त है । पूर्ण गुरु ने मुझे परमात्मा मेरे अन्दर ही दिखा दिया है और मैं उस सद्गुरु पर कुर्बान जाती हूँ ॥ २ ॥ सभी में एक ही हवा, मिट्टी और एक ही परमात्मा की ज्योति है । सब में एक ही ज्योति कार्यशील है परन्तु माया में ग्रस्त लोगों को किसी की ज्योति दूसरे की ज्योति के समान दिखाई नहीं देती । गुरु की कृपा से मुझे वह एक ही सब में दिखाई देने लग पड़ा है और मैं सद्गुरु पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ३ ॥ दास नानक अमृत वाणी का उच्चारण कर रहा है जो गुरु के सिक्खों को प्यारी लगती है। पूर्ण गुरु एवं सद्गुरु यही उपदेश देते हैं कि गुरु एवं सद्गुरु सब का भला करने वाले हैं ॥ ४ ॥ ७ ॥ सात चौपदे महले चौथे के ।

माझ महला ५ ॥ चौपदे घरु १

गुरु के दर्शन के लिए मेरे मन में बहुत इच्छा बनी हुई है । पपीहे की तरह मेरा मन पुकार रहा है । उस शान्त प्यारे सर्वव्यापक गुरु के दर्शन के बिना मेरी प्यास नहीं बूझती और मेरे मन को धैर्य नहीं आता । मैं प्यारे एवं शान्त गुरु के दर्शन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, तेरा मुँह शोभा युक्त और तेरी वाणी शुद्ध ज्ञान की धुन वाली है । हे धनुषधारी, तेरे किए हुए दर्शन को बहुत देर हो गयी है । हे मेरे सज्जन, मित्र एवं प्रभु, वह देश (स्थान) धन्य है जहाँ तूने निवास बनाया हुआ है ॥ २ ॥ हे मेरे सज्जन एवं मित्र प्रभु मैं तुझ पर कुर्बान एवं बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, जब मैं तुझे एक घड़ी भी नहीं मिलता था तो मेरे लिए तो मानों कलियुग ही हो जाता

मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता ॥ मोहि रैणि न विहावै नीद न आवै बिनु देखे गुर दरबारे जीउ ॥ ३ ॥ हउ घोली जीउ घोलि घुमाई तिसु सचे गुर दरबारे जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ ॥ प्रभु अबिनासी घर महि पाइआ ॥ सेव करी पलु चसा न विछुड़ा जन नानक दास तुमारे जीउ ॥ ४ ॥ हउ घोली जीउ घोलि घुमाई जन नानक दास तुमारे जीउ ॥ रहाउ ॥ १ ॥ ८ ॥ रागु माझ महला ५ ॥ सा रुति सुहावी जितु तुधु समाली ॥ सो कंमु सुहेला जो तेरी घाली ॥ सो रिदा सुहेला जितु रिदै तूं वुठा सभना के दातारा जीउ ॥ १ ॥ तूं साझा साहिबु बापु हमारा ॥ नउ निधि तेरै अखुट भंडारा ॥ जिसु तूं देहि सु त्रिपति अघावै सोई भगतु तुमारा जीउ ॥ २ ॥ सभु को आसै तेरी बैठा ॥ घट घट अंतरि तूं है वुठा ॥ सभे साझीवाल सदाइनि तूं किसै न दिसहि बाहरा जीउ ॥ ३ ॥ तूं आपे गुरमुखि मुकति कराइहि ॥ तूं आपे मनमुखि जनमि भवाइहि ॥ नानक दास तेरै बलिहारै सभु तेरा खेलु दसाहरा जीउ ॥ ४ ॥ २ ॥ ९ ॥ माझ महला ५ ॥ अनहदु वाजै सहजि सुहेला ॥ सबदि अनंद करे सद केला ॥ सहज गुफा महि ताड़ी लाई आसणु ऊच सवारिआ जीउ ॥ १ ॥ फिरि घिरि अपुने ग्रिह महि आइआ ॥ जो लोड़ीदा सोई पाइआ ॥ त्रिपति अघाइ रहिआ है संतहु गुरि अनभउ पुरखु दिखारिआ जीउ ॥ २ ॥ आपे राजनु आपे लोगा ॥ आपि निरबाणी आपे भोगा ॥ आपे तखति बहै सचु निआई सभ चूकी कूक पुकारिआ जीउ ॥ ३ ॥ जेहा डिठा मै तेहो कहिआ ॥ तिसु रसु आइआ जिनि भेदु लहिआ ॥ जोती जोति मिली सुखु पाइआ जन नानक इकु पसारिआ जीउ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १० ॥ माझ महला ५ ॥ जितु घरि पिरि सोहागु बणाइआ ॥ तितु घरि सखीए मंगलु गाइआ ॥ अनद बिनोद तितै घरि सोहहि जो धन कंति सिगारी जीउ ॥ १ ॥ सा गुणवंती सा वडभागणि ॥ पुत्रवंती सीलवंति सोहागणि ॥ रूपवंति सा सुघड़ि बिचखणि जो धन कंत पिआरी जीउ ॥ २ ॥ अचारवंति साई परधाने ॥ सभ सिंगार बणे तिसु गिआने ॥ सा कुलवंती सा सभराई जो पिरि कै रंगि सवारी जीउ ॥ ३ ॥ महिमा तिस की कहणु न जाए ॥ जो पिरि मेलि लई अंगि

था । अब बता हे प्रिय प्रभु, मिलन कब होगा । गुरु के दरबार के दर्शन के बिना न तो मेरी रात बीतती है और न ही मुझे सुख की नींद आती है ॥ ३ ॥ मैं सत्य–गुरु के दरबार पर कुर्बान हूँ जो सदा स्थिर बना रहने वाला है ॥ १॥ रहाउ ॥ बड़े भाग्य से गुरु रूपी शान्त पुरुष ने मुझे प्रभु से मिला दिया है । उस अविनाशी प्रभु को मैंने अपने अन्दर ही पा लिया है । दास नानक कहता है कि मैं सदैव सेवा करता रहूँ और तेरे सेवकों से मैं एक पल भर के लिए भी न बिछुड़ूँ ॥ ४ ॥ हे नानक, मैं प्रभु के दासों पर भी कुर्बान जाता हूँ ॥ रहाउ ॥ १ ॥ ८ ॥ रागु माझ महला ५ ॥ वह ऋतु सुहावनी है जिसमें तेरा सुमिरन किया जाता है । वह काम भी सुखदायी है जो तेरी सेवा के निमित्त है । वह हृदय भी अच्छा है जिसमें हे सब को देने वाले दाता तू बसा हुआ है ॥ १ ॥ हे दाता, तू सब का साझा पिता है । तेरे पास ही नवनिधियों के अक्षय भण्डार हैं । तेरे देने से ही व्यक्ति की तृप्ति होती है और पाने वाला तेरा भक्त ही होता है ॥ २ ॥ सब तेरी आस में बैठे हैं और तू ही प्रत्येक जीव के हृदय में बसा हुआ है । सभी तेरे भागीदार कहे जाते है और तू किसी के लिए भी बेगाना नज़र नहीं आता ॥ ३ ॥ तूं स्वयं ही व्यक्ति को गुरमुख बनाकर उसे मुक्त कर देता है और मनमुख जीवों को आवागमन में दौड़ाता रहता है । दास नानक तुझ पर बलिहारी है क्योंकि यह सारा संसार तेरा ही प्रकट खेल है ॥ ४ ॥ २ ॥ ९ ॥ माझ महला ५ ॥ सुखदायक अनहद् शब्द सहज रूप में ही बज रहा है । मन अब शब्द से आनन्दित होकर सच्ची क्रीड़ा कर रहा है । सहजरूपी गुफा में मेरी समाधि लग गयी है और मेरा आसन अब ऊँचे प्रभु ने सँवार दिया है ॥ १ ॥ मन घूमघाम कर पुनः अपने स्वरूप में ही टिक गया है और जिसे यह ढूँढ रहा था इसने उसे पा लिया है । हे शान्त पुरुषो, यह मन अब तृप्त होकर अघा गया है और गुरु ने अनुभव में आए हुए परमात्मा का दर्शन करा दिया है ॥ २ ॥ प्रभु स्वयं ही राजा है, स्वयं ही प्रजा है; स्वयं ही त्यागी है और स्वयं ही भोगी है । वह सिंहासन पर बैठकर स्वयं ही सच्चा न्याय करता है और मेरी चीख–पुकार अब समाप्त हो गयी है ॥ ३ ॥ जैसा मैंने उसे देखा है वैसा ही कह दिया है । जिसने इस रहस्य को जान लिया है उसी को ही मिलाप का आनन्द प्राप्त हुआ है । हे नानक! उस व्यक्ति की सुरति प्रभु की ज्योति में मिली रहती है, उसे आनन्द प्राप्त होता है और उस व्यक्ति को केवल परमात्मा ही सर्वत्र व्याप्त दृष्टिगोचर होता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १० ॥ माझ महला ५ ॥ हे सखी, जिस हृदय रूपी घर में प्रभु पति ने भाग्य जगा दिया उसमें ही उसके गुणानुवाद का गीत गाया जाता है । उसी हृदयरूपी घर में आनन्द के कौतुक अच्छे लगते हैं जिसे मालिक प्रभु ने सौन्दर्य युक्त किया हो ॥ १ ॥ प्रभु पति की प्यारी स्त्री ही भाग्यशाली, गुणवान, पुत्रवान, शीलवान, सुहागिन, रूपवान, सुघड़ एवं सयानी होती है ॥ २ ॥ जो प्रियतम के रंग में संवरी हुई है वही आचारवान, प्रमुख, ज्ञानरूपी श्रृंगार से युक्त कुलीन एवं भाईयों को प्यारी लगने वाली होती है ॥ ३ ॥ उसकी महिमा का कथन नहीं किया जा सकता जिसको प्रियतम ने अपने अंग लगाकर

लाए ॥ थिरु सुहागु वरु अगमु अगोचरु जन नानक प्रेम साधारी जीउ ॥ ४ ॥ ४ ॥ ११॥ माझ महला ५ ॥ खोजत खोजत दरसन चाहे ॥ भाति भाति बन बन अवगाहे ॥ निरगुणु सरगुणु हरि हरि मेरा कोई है जीउ आणि मिलावै जीउ ॥ १ ॥ खटु सासत बिचरत मुखि गिआना ॥ पूजा तिलकु तीरथ इसनाना ॥ निवली करम आसन चउरासीह इन महि सांति न आवै जीउ ॥ २ ॥ अनिक बरख कीए जप तापा ॥ गवनु कीआ धरती भरमाता ॥ इकु खिनु हिरदै सांति न आवै जोगी बहुड़ि बहुड़ि उठि धावै जीउ ॥ ३ ॥ करि किरपा मोहि साधु मिलाइआ ॥ मनु तनु सीतलु धीरजु पाइआ ॥ प्रभु अबिनासी बसिआ घट भीतरि हरि मंगलु नानकु गावै जीउ ॥ ४ ॥ ५ ॥ १२ ॥ माझ महला ५ ॥ पारब्रहम अपरंपर देवा ॥ अगम अगोचर अलख अभेवा ॥ दीन दइआल गोपाल गोबिंदा हरि धिआवहु गुरमुखि गाती जीउ ॥ १ ॥ गुरमुखि मधुसूदनु निसतारे ॥ गुरमुखि संगी क्रिसन मुरारे ॥ दइआल दमोदरु गुरमुखि पाईऐ होरतु कितै न भाती जीउ ॥ २ ॥ निरहारी केसव निरवैरा ॥ कोटि जना जा के पूजहि पैरा ॥ गुरमुखि हिरदै जा कै हरि हरि सोई भगतु इकाती जीउ ॥ ३ ॥ अमोघ दरसन बेअंत अपारा ॥ वड समरथु सदा दातारा ॥ गुरमुखि नामु जपीऐ तितु तरीऐ गति नानक विरली जाती जीउ ॥ ४ ॥ ६ ॥ १३ ॥ माझ महला ५ ॥ कहिआ करणा दिता लैणा ॥ गरीबा अनाथा तेरा माणा ॥ सभ किछु तूंहै तूंहै मेरे पिआरे तेरी कुदरति कउ बलि जाई जीउ ॥ १ ॥ भाणै उझड़ भाणै राहा ॥ भाणै हरि गुण गुरमुखि गावाहा ॥ भाणै भरमि भवै बहु जूनी सभ किछु तिसै रजाई जीउ ॥ २ ॥ ना को मूरखु ना को सिआणा ॥ वरतै सभ किछु तेरा भाणा ॥ अगम अगोचर बेअंत अथाहा तेरी कीमति कहणु न जाई जीउ ॥ ३ ॥ खाकु संतन की देहु पिआरे ॥ आइ पइआ हरि तेरै दुआरै ॥ दरसनु पेखत मनु आघावै नानक मिलणु सुभाई जीउ ॥ ४ ॥ ७ ॥ १४ ॥ माझ महला ५ ॥ दुखु तदे जा विसरि जावै ॥ भुख विआपै बहु बिधि धावै ॥ सिमरत नामु सदा सुहेला जिसु देवै दीन दइआला जीउ ॥ १ ॥ सतिगुरु मेरा वड

अपने में मिला लिया है। हे नानक, ऐसी जीव–स्त्री का ही सुहाग एवं वर सदैव बना रहने वाला अगम्य अगोचर प्रभु होता है क्योंकि ऐसी स्त्री का आश्रय केवल प्रेम ही प्रेम है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ११ ॥ माझ महला ५ ॥ अनेकों लोग उसे खोजते–खोजते उसके दर्शन की चाहत करते हैं और इसी तात्पर्य से उन्होंने अनेकों वनो को छान मारा है। वह निर्गुण, सगुण मेरा प्रभु ही है। कोई है जो मुझे उससे मिला दे ॥ १ ॥ लोग षटशास्त्रों का विचार करते हैं और मुख से ज्ञान की बाते करते हैं। तिलक लगाकर पूजा एवं तीर्थ स्नान किए जाते हैं। न्योली कर्म एवं चौरासी आसन करने पर भी व्यक्ति के मन में शान्ति नहीं आती ॥ २ ॥ अनेकों वर्षों तक जप और तप किया और धरती पर गमन करते हुए दूर–दूर तक भ्रमण किया गया। परन्तु एक क्षण के लिए भी हृदय शान्त नहीं होता और योगी बार–बार उठकर भागदौड़ में ही लगा रहता है ॥ ३ ॥ प्रभु ने कृपा करके मुझे गुरु से मिला दिया है जिससे मेरा मन, तन शीतल एवं धैर्यवान बन गया है। अब वह अविनाशी प्रभु शरीर के भीतर ही बसा हुआ प्रतीत होता है और नानक उसी की प्रशंसा के गीत गाता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ १२ ॥ माझ महला ५ ॥ वह प्रभु परब्रह्म अपरंपर, अगम, अगोचर, अलख एवं रहस्यातीत है। गुरमुख बनकर उस दीन दयालु, गोपाल, गोविंद प्रभु को ही स्मरण करना चाहिए जो सब को मुक्त करने वाला है। मधुसूदन रूप प्रभु गुरमुख का उद्धार करता है। कृष्ण मुरारि रूपी परमात्मा गुरमुख के अंग–संग बना रहता है। गुरमुख बनकर ही उस दयालु दामोदर प्रभु को पाया जाता है और उसके लिए अन्य कोई उपाय नहीं ॥ २ ॥ उस निरवैर एवं निराहारी प्रभु के चरणों को करोड़ों लोग पूजते है। गुरमुख बनकर जिसके हृदय में प्रभु आन बसा है वही प्रभु का अनन्य भक्त है ॥ ३ ॥ उस अनन्त एवं अपार प्रभु का दर्शन निष्फल नहीं होता क्योंकि वह पूर्ण समर्थ है और सदा दान देने वाला है। गुरमुख बनकर उसका जाप करने से संसार से पार हुआ जाता है परन्तु इस अवस्था को हे नानक, किसी बिरले ने ही जाना है ॥ ४ ॥ ६ ॥ १३ ॥ माझ महला ५ ॥ तेरा कहा हुआ ही किया जाता है और हे प्रभु, तेरा दिया हुआ ही लिया जाता है। गरीब अनाथों को तो तेरा ही आसरा है। हे प्यारे प्रभु, सब कुछ तू ही तू है और तेरी रचना पर मैं बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ प्रभु के हुकुम में ही जीव कुमार्ग पर चला जाता है और उसी के हुकुम में सीधे रास्ते पर चलता है। उसी के हुकुम में ही गुरमुख बनकर जीव प्रभु का गुणानुवाद करता है। उसके हुकुम में ही जीव भ्रमित होकर अनेकों योनियों में भटकता है और सब कुछ उस प्रभु की रजा में ही होता है ॥ २॥ कोई भी मूर्ख और सयाना नहीं है; हे प्रभु, यह सब तेरा ही आदेश है। तू अगम्य, अगोचर, अनन्त एवं अथाह है, तेरा मूल्य नहीं आंका जा सकता है ॥ ३ ॥ हे प्यारे प्रभु, मुझे शान्त पुरुषों की चरण धूलि प्रदान कर। मैं तेरे द्वार पर आ पड़ा हूँ। तेरे दर्शन से ही मेरा मन अघाता है और हे नानक, उस प्रभु से मेल सहज रूप में ही होता है ॥ ४ ॥ ७ ॥ १४ ॥ माझ महला ५ ॥ परमात्मा के विस्मृत होने पर ही जीव दुखी होता है, उसे विभिन्न प्रकार की भूख लगती है और वह इधर–उधर भागता दौड़ता है। जिसे दीन–दयालु प्रभु नाम सुमिरन में लगा देता है वही सदा सुखी बना रहता है ॥ १ ॥ मेरा सद्गुरु (परमात्मा) बहुत अधिक

समरथा ॥ जीइ समाली ता सभु दुखु लथा ॥ चिंता रोगु गई हउ पीड़ा आपि करे प्रतिपाला जीउ ॥ २ ॥ बारिक वांगी हउ सभ किछु मंगा ॥ देदे तोटि नाही प्रभ रंगा ॥ पैरी पै पै बहुतु मनाई दीन दइआल गोपाला जीउ ॥ ३ ॥ हउ बलिहारी सतिगुर पूरे ॥ जिनि बंधन काटे सगले मेरे ॥ हिरदै नामु दे निरमल कीए नानक रंगि रसाला जीउ ॥ ४ ॥ ८ ॥ १५ ॥ माझ महला ५ ॥ लाल गोपाल दइआल रंगीले ॥ गहिर गंभीर बेअंत गोविंदे ॥ ऊच अथाह बेअंत सुआमी सिमरि सिमरि हउ जीवां जीउ ॥ १॥ दुख भंजन निधान अमोले ॥ निरभउ निरवैर अथाह अतोले ॥ अकाल मूरति अजूनी संभौ मन सिमरत ठंढा थीवां जीउ ॥ २ ॥ सदा संगी हरि रंग गोपाला ॥ ऊच नीच करे प्रतिपाला ॥ नामु रसाइणु मनु त्रिपताइणु गुरमुखि अंम्रितु पीवां जीउ ॥ ३ ॥ दुखि सुखि पिआरे तुधु धिआई ॥ एह सुमति गुरू ते पाई ॥ नानक की धर तूंहै ठाकुर हरि रंगि पारि परीवां जीउ ॥ ४ ॥ ९ ॥ १६ ॥ माझ महला ५ ॥ धंनु सु वेला जितु मै सतिगुरु मिलिआ ॥ सफलु दरसनु नेत्र पेखत तरिआ ॥ धंनु मूरत चसे पल घड़ीआ धंनि सु ओइ संजोगा जीउ ॥ १ ॥ उदमु करत मनु निरमलु होआ ॥ हरि मारगि चलत भ्रमु सगला खोइआ ॥ नामु निधानु सतिगुरू सुणाइआ मिटि गए सगले रोगा जीउ ॥ २ ॥ अंतरि बाहरि तेरी बाणी ॥ तुधु आपि कथी तै आपि वखाणी ॥ गुरि कहिआ सभु एको एको अवरु न कोई होइगा जीउ ॥ ३ ॥ अंम्रित रसु हरि गुर ते पीआ ॥ हरि पैनणु नामु भोजनु थीआ ॥ नामि रंग नामि चोज तमासे नाउ नानक कीने भोगा जीउ ॥ ४ ॥ १० ॥ १७ ॥ माझ महला ५ ॥ सगल संतन पहि वसतु इक मांगउ ॥ करउ बिनंती मानु तिआगउ ॥ वारि वारि जाई लख वरीआ देहु संतन की धूरा जीउ ॥ १ ॥ तुम दाते तुम पुरख बिधाते ॥ तुम समरथ सदा सुखदाते ॥ सभ को तुम ही ते वरसावै अउसरु करहु हमारा पूरा जीउ ॥ २ ॥ दरसनि तेरै भवन पुनीता ॥ आतम गड़ु बिखमु तिना ही जीता ॥ तुम दाते तुम पुरख बिधाते तुधु जेवडु अवरु न सूरा जीउ ॥ ३ ॥

शक्तिशाली है । उसको हृदय में स्मरण करने से सभी दुख समाप्त हो जाते हैं । चिन्ता, रोग एवं अहंकार की मेरी पीड़ा समाप्त हो गयी है क्योंकि वह स्वयं जीवों की रक्षा करता है ॥ २ ॥ बालक की तरह मैं उस परमात्मा से सभी कुछ माँगता हूँ; वह सदा मुझे देता है और प्रभु के दिए हुए पदार्थों में कभी भी कमी नहीं आती । मैं उसके चरणों में गिर–गिरकर सदा ही उसे मनाता रहता हूँ क्योंकि वह प्रभु ही दीनों पर दया करने वाला है ॥ ३ ॥ मैं पूर्ण सद्गुरु पर बलिहारी जाता हूँ जिसने मेरे समस्त मायावी बन्धनों को काट दिया है । उसने मेरे हृदय में परमात्मा का नाम स्थिर करके मुझे निर्मल बना दिया है और नानक अब आध्यात्मिक आनन्द का घर बन गया है ॥ ४ ॥ ८ ॥ १५ ॥ माझ महला ५ ॥ हे प्यारे प्रभु, सृष्टि के रक्षक, दयालु, आनन्द–स्रोत, गहन एवं गम्भीर प्रभु, तू सबसे ऊँचा और अथाह है तेरा ही स्मरण करके मैं जीवन व्यतीत करता हूँ । हे दुखनाशक, अमूल्य भण्डार, निर्भय, निरवैर, अथाह, अतुलनीय, प्रभु, तुम काल–रहित, अयोनि एवं स्वयंभू अर्थात अपने आप से स्वयं ही प्रकट होने वाले हो । मन में तेरा सुमिरन करके मैं शान्त हो जाता हूँ ॥ २ ॥ सृष्टि का पोषण करने वाला परमात्मा सदैव सब जीवों के साथ–साथ रहता है और तथाकथित ऊँचे नीचे कहे जाने वाले सब जीवों का पालन–पोषण करता है। प्रभु–नाम का रसायन मन को तृप्त करने वाला है और गुरमुख बनकर उस अमृत को पीया जाता है । दुख–सुख में हे प्यारे प्रभु, तेरी आराधना करने की सुबुद्धि मैंने गुरु से प्राप्त की है । नानक का आश्रय हे प्रभु, तू ही है और मैं परमात्मा के प्रेम रंग में लीन होकर ही संसार–सागर से पार जा सकता हूँ ॥ ४ ॥ ९ ॥ १६ ॥ माझ महला ५ ॥ वह समय मेरे लिए सौभाग्य वाला है जिस समय मुझे सद्गुरु मिल गया है । आँखों से उसका सफल दर्शन करते ही मैं संसार–सागर से पार हो गया हूँ । मेरे लिए वह मूहूर्त, वह क्षण, वह पल और वह घड़ी सभी ही भाग्यशाली हैं, जब मेरा मिलाप गुरु से हुआ है । उद्यम करते हुए मेरा मन निर्मल हो गया है और परमात्मा के मार्ग पर चलते हुए मेरे सभी भ्रम खो गए हैं । सद्गुरु ने मुझे प्रभु का नाम सुना दिया है और मेरे सारे रोग मिट गए हैं ॥ २ ॥ हे प्रभु, मेरे अन्तर्मन और बाहर केवल तेरी ही वाणी की धुन सुनाई दे रही है । यह वाणी तुमने स्वयं ही कही है और स्वयं ही तूने उसकी व्याख्या की है । मेरे गुरु ने मुझे यह बताया है कि केवल एक ही प्रभु सब में रम रहा है और एक के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं है ॥ ३ ॥ हरि–नाम का अमृत रस मैंने गुरु से पीया है और अब हरि नाम ही मेरा भोजन और पहरावा बन गया है । प्रभु–नाम में लीन रहना ही मेरे लिए खुशियाँ और दुनियां के रंग–तमाशे हैं और हे नानक, प्रभु–नाम ही मेरे लिए भोग–विलास है ॥ ४ ॥ १० ॥ १७ ॥ माझ महला ५ ॥ शान्त पुरुषों से मैं केवल एक ही वस्तु माँगता हूँ और उनसे विनती करता हूँ कि मेरा अभिमान छूट जाए । इन शान्त पुरुषों पर मैं लाखों बार बलिहारी जाता हूँ और हे प्रभु, मुझे इनकी चरण–धूलि प्रदान करो ॥ १ ॥ हे प्रभु तुम दाता हो और विधाता भी हो। तुम समर्थ हो तथा सदा सुख देने वाले हो । सब तुमसे ही मनोवांछित फल प्राप्त करते हैं; तुम मेरा जन्म सँवारने की भी कृपा करो ॥ २ ॥ जिन्होंने अपने पवित्र शरीर रूपी घर में ही तेरे दर्शन कर लिए हैं उन्होंने ही आत्मा रूपी विषम किले को जीत लिया है । हे प्रभु, तुम ही दाता और विधाता हो तथा तुम्हारे जैसा शूरवीर अन्य कोई नहीं है ॥ ३ ॥

रेनु संतन की मेरै मुखि लागी ॥ दुरमति बिनसी कुबुधि अभागी ॥ सच घरि बैसि रहे गुण गाए नानक बिनसे कूरा जीउ ॥ ४ ॥ ११ ॥ १८ ॥ माझ महला ५ ॥ विसरु नाही एवड दाते ॥ करि किरपा भगतन संगि राते ॥ दिनसु रैणि जिउ तुधु धिआई एहु दानु मोहि करणा जीउ ॥ १ ॥ माटी अंधी सुरति समाई ॥ सभ किछु दीआ भलीआ जाई ॥ अनद बिनोद चोज तमासे तुधु भावै सो होणा जीउ ॥ २ ॥ जिस दा दिता सभु किछु लैणा ॥ छतीह अंम्रित भोजनु खाणा ॥ सेज सुखाली सीतलु पवणा सहज केल रंग करणा जीउ ॥ ३ ॥ सा बुधि दीजै जितु विसरहि नाही ॥ सा मति दीजै जितु तुधु धिआई ॥ सास सास तेरे गुण गावा ओट नानक गुर चरणा जीउ ॥ ४ ॥ १२ ॥ १९ ॥ माझ महला ५ ॥ सिफति सालाहणु तेरा हुकमु रजाई ॥ सो गिआनु धिआनु जो तुधु भाई ॥ सोई जपु जो प्रभ जीउ भावै भाणै पूर गिआना जीउ ॥ १ ॥ अंम्रितु नामु तेरा सोई गावै ॥ जो साहिब तेरै मनि भावै ॥ तूं संतन का संत तुमारे संत साहिब मनु माना जीउ ॥ २ ॥ तूं संतन की करहि प्रतिपाला ॥ संत खेलहि तुम संगि गोपाला ॥ अपुने संत तुधु खरे पिआरे तू संतन के प्राना जीउ ॥ ३ ॥ उन संतन कै मेरा मनु कुरबाने ॥ जिन तूं जाता जो तुधु मनि भाने ॥ तिन कै संगि सदा सुखु पाइआ हरि रस नानक त्रिपति अघाना जीउ ॥ ४ ॥ १३ ॥ २० ॥ माझ महला ५ ॥ तूं जलनिधि हम मीन तुमारे ॥ तेरा नामु बूंद हम चात्रिक तिखहारे ॥ तुमरी आस पिआसा तुमरी तुम ही संगि मनु लीना जीउ ॥ १ ॥ जिउ बारिकु पी खीरु अघावै ॥ जिउ निरधनु धनु देखि सुखु पावै ॥ त्रिखावंत जलु पीवत ठंढा तिउ हरि संगि इहु मनु भीना जीउ ॥ २ ॥ जिउ अंधिआरै दीपकु परगासा ॥ भरता चितवत पूरन आसा ॥ मिलि प्रीतम जिउ होत अनंदा तिउ हरि रंगि मनु रंगीना जीउ ॥ ३ ॥ संतन मोकउ हरि मारगि पाइआ ॥ साध क्रिपालि हरि संगि गिझाइआ ॥ हरि हमरा हम हरि के दासे नानक सबदु गुरू सचु दीना जीउ ॥ ४ ॥ १४ ॥ २१ ॥ माझ महला ५ ॥ अंम्रित नामु सदा निरमलीआ ॥ सुखदाई दूख बिडारन हरीआ ॥ अवरि साद चखि सगले देखे मन

शान्त पुरुषों की चरण–धूलि जब मेरे मुख पर लगी तो मेरी दुर्मति एवं अभागी कुबुद्धि का नाश हो गया। हे नानक, जो व्यक्ति सत्य के घर में टिक जाते हैं और प्रभु का गुणानुवाद करते हैं उनके झूठे संस्कार नष्ट हो जाते है ॥ ४ ॥ ११ ॥ १८ ॥ माझ महला ५ ॥ इतने बड़े हे दातार, तू मुझे विस्मृत न हो। हे भक्तों के संग रहने वाले प्रभु, तू कृपा कर और मुझे यह दान दे कि मैं दिन–रात तेरी ही आराधना करता रहूँ ॥ १ ॥ इस अन्धी मिट्टी से बने शरीर में तूने चैतन्य अर्थात् सोचने समझने की शक्ति डाल दी है। तूने इसे सब कुछ दिया है और जीवों को तूने अच्छे स्थान भी दिए हैं। यह जीव खुशियों में लीन खेल–तमाशे कर रहे हैं परन्तु सब तेरी रज़ा के अन्तर्गत ही हो रहा है ॥ २ ॥ हे भाई, उस प्रभु का दिया हुआ सब कुछ मिल रहा है और अमृत समान छत्तीस प्रकार के भोजन किए जा रहे हैं। सुखदायक पलंग मिले हुए हैं, ठण्डी हवा का और कई अन्य खेल–तमाशों का आनन्द हम ले रहे हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु, मुझे ऐसी सूझ बुद्धि प्रदान कर जिससे तू मुझे कभी भी विस्मृत न हो और मैं सदैव तेरी आराधना करता रहूँ। प्रत्येक श्वास के साथ मैं तेरे गुण गाऊँ क्योंकि नानक को केवल गुरुरूपी परमात्मा के चरणों का ही आश्रय है ॥ ४ ॥ १२ ॥ १९ ॥ माझ महला ५ ॥ तेरे हुकुम को रज़ा मानकर उसमें चलना ही तेरा गुणानुवाद है। ज्ञान–ध्यान भी वही है जो तुझे भाता है; जाप भी वही है जो प्रभु को अच्छा लगता है और तेरी रज़ा में रहना ही पूर्ण–ज्ञान है ॥ १ ॥ हे मालिक, जो तेरे मन को भाता है वही जीव तेरे अमृत–नाम का गायन करता है। शान्त पुरुषों का तू है और शान्तजीव तुम्हारे हैं। दरअसल शान्त पुरुषों का मन हे प्रभु, तुझमें लीन हो गया है ॥ २ ॥ शान्त पुरुषों की रक्षा तू स्वयं करता है और ये शान्त पुरुष हे प्रभु, तुम्हारे साथ खेलते कूदते हैं। अपने यह शान्त व्यक्ति तुझे बहुत ही प्यारे लगते हैं और तू ही इनका प्राण है ॥ ३ ॥ उन सद्पुरुषों पर मेरा मन कुर्बान है जिन्होंने तुझे जान लिया है और जो तेरे मन को भा गए हैं। उन्हीं के साथ सदैव सुख प्राप्त होता है और हे नानक, उन्हीं के साथ हरि–रस पाकर तृप्त हुआ जाता है ॥ ४ ॥ १३ ॥ २० ॥ माझ महला ५ ॥ हे प्रभु, तुम समुद्र हो और हम तुम्हारी मछलियां है। तेरा नाम बादल की बूँद के समान है और हम सब तेरे प्यासे पपीहे हैं। हमें तुम्हारी ही आशा है; तुम्हारी ही प्यास मन में है और तुम्हारे संग ही हमारा मन लीन हो गया है ॥ १ ॥ जैसे बच्चा दूध पीकर तृप्त हो जाता है; जैसे निर्धन व्यक्ति धन देखकर सुख प्राप्त करता है; प्यासा जल पीकर शान्ति प्राप्त करता है, वैसे ही मेरा यह मन परमात्मा के साथ रंगा हुआ एवं तृप्त है ॥ २ ॥ जैसे अन्धकार में दीपक जलाने से प्रकाश हो जाता है, पति को याद करती हुई स्त्री की आशा पूर्ण होती है और वह प्रीतम से मिलकर आनन्दित होती है वैसे ही मेरा यह मन हरि के प्रेम में रंग गया है ॥ ३ ॥ सद्पुरुषों ने मुझे परमात्मा का रास्ता दिखा दिया है और उन्होंने कृपा करके मेरे मन को परमात्मा के साथ लगे रहने की आदत बना दी है। परमात्मा हमारा है और हम हरि के दास हैं और हे नानक, शब्द–गुरु ने सत्य मुझे देकर मेरे हृदय में बिठा दिया है ॥ ४ ॥ १४ ॥ २१ ॥ माझ महला ५ ॥ हे मन, सुख देने वाला परमात्मा दुःख दूर करने वाला भी है और उसका अमृत रूपी नाम सदा निर्मल बना रहने वाला है। अन्य सभी पदार्थों के स्वाद चखकर मैंने देख लिए हैं परन्तु हे मेरे मन,

हरि रसु सभ ते मीठा जीउ ॥ १ ॥ जो जो पीवै सो त्रिपतावै ॥ अमरु होवै जो नाम रसु पावै ॥ नाम निधान तिसहि परापति जिसु सबदु गुरू मनि वूठा जीउ ॥ २ ॥ जिनि हरि रसु पाइआ सो त्रिपति अघाना ॥ जिनि हरि सादु पाइआ सो नाहि डुलाना ॥ तिसहि परापति हरि हरि नामा जिसु मसतकि भागीठा जीउ ॥ ३ ॥ हरि इकसु हथि आइआ वरसाणे बहुतेरे ॥ तिसु लगि मुकतु भए घणेरे ॥ नामु निधाना गुरमुखि पाईऐ कहु नानक विरली डीठा जीउ ॥ ४ ॥ १५ ॥ २२ ॥ माझ महला ५ ॥ निधि सिधि रिधि हरि हरि हरि मेरै ॥ जनमु पदारथु गहिर गंभीरै ॥ लाख कोट खुसीआ रंग रावै जो गुर लागा पाई जीउ ॥ १ ॥ दरसनु पेखत भए पुनीता ॥ सगल उधारे भाई मीता ॥ अगम अगोचरु सुआमी अपुना गुर किरपा ते सचु धिआई जीउ ॥ २ ॥ जा कउ खोजहि सरब उपाए ॥ वडभागी दरसनु को विरला पाए ॥ ऊच अपार अगोचर थाना ओहु महलु गुरू देखाई जीउ ॥ ३ ॥ गहिर गंभीर अंम्रित नामु तेरा ॥ मुकति भइआ जिसु रिदै वसेरा ॥ गुरि बंधन तिन के सगले काटे जन नानक सहजि समाई जीउ ॥ ४ ॥ १६ ॥ २३ ॥ माझ महला ५ ॥ प्रभ किरपा ते हरि हरि धिआवउ ॥ प्रभू दइआ ते मंगलु गावउ ॥ ऊठत बैठत सोवत जागत हरि धिआईऐ सगल अवरदा जीउ ॥ १ ॥ नामु अउखधु मोकउ साधू दीआ ॥ किलबिख काटे निरमलु थीआ ॥ अनदु भइआ निकसी सभ पीरा सगल बिनासे दरदा जीउ ॥ २ ॥ जिस का अंगु करे मेरा पिआरा ॥ सो मुकता सागर संसारा ॥ सति करे जिनि गुरू पछाता सो काहे कउ डरदा जीउ ॥ ३ ॥ जब ते साधू संगति पाए ॥ गुर भेटत हउ गई बलाए ॥ सासि सासि हरि गावै नानकु सतिगुर ढाकि लीआ मेरा पड़दा जीउ ॥ ४ ॥ १७ ॥ २४ ॥ माझ महला ५ ॥ ओति पोति सेवक संगि राता ॥ प्रभ प्रतिपाले सेवक सुखदाता ॥ पाणी पखा पीसउ सेवक कै ठाकुर ही का आहरु जीउ ॥ १ ॥ काटि सिलक प्रभि सेवा लाइआ ॥ हुकमु साहिब का सेवक मनि भाइआ ॥ सोई कमावै जो साहिब भावै सेवकु अंतरि बाहरि माहरु जीउ ॥ २ ॥ तूं दाना ठाकुरु सभ बिधि जानहि ॥

हरि–रस का स्वाद सबसे मीठा है ॥ १ ॥ इसे जो–जो पीता है वह तृप्त हो जाता है । नाम रस पाने वाला व्यक्ति अमर हो जाता है । नाम का खज़ाना उसे ही प्राप्त होता है जिसके मन में शब्द–गुरु बस जाता है ॥ २ ॥ जिसने हरि–रस पा लिया है वह तृप्त होकर अघा गया है । जिसने हरि–रस का स्वाद देख लिया है वह फिर कभी डोलता नहीं है । हरि–नाम उसे ही प्राप्त होता है जिसके माथे पर भाग्य के लेख लिखे हुए हों ॥ ३ ॥ हरि किसी एक के हाथ लगता है और वह आगे अनेकों लोगों का कल्याण करता है । उसके साथ लगकर बहुत लोग मुक्त हो जाते हैं । गुरमुख बनकर ही नाम का खज़ाना प्राप्त होता है और हे नानक, वह खज़ाना किसी बिरले को ही दिखाई देता है ॥ ४ ॥ १५ ॥ २२ ॥ माझ महला ५ ॥ मेरे लिए तो परमात्मा ही ऋद्धियों–सिद्धियों एवं निधियों का रूप है । जन्म रूपी पदार्थ का दान उस गहन–गम्भीर प्रभु के पास ही है । जो गुरु के चरणों में आ लगा है वह लाखों–करोड़ों खुशियों का आनन्द लेता है ॥ १ ॥ उस प्रभु का दर्शन देखते ही मैं पवित्र हो गया हूँ और मेरे भाई मित्र सबका उद्धार हो गया हैं । मेरा प्रभु अगम्य एवं अगोचर है और मैं गुरु की कृपा से ही उस परम सत्य–प्रभु की आराधना करता हूँ । जिसे सभी उपायों के साथ खोजा जाता है उसका दर्शन बड़े भाग्य वाला कोई बिरला व्यक्ति ही प्राप्त करता है । सबसे ऊँची हस्ती वाले अपार एवं अगोचर स्थान वाले उस प्रभु के ठिकाने को गुरु ही दिखाता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तेरा अमृत–नाम गहरा एवं गम्भीर है । जिसके हृदय में यह बस जाता है वह मुक्त हो जाता है । हे नानक, गुरु ने उसके समस्त बन्धनों को काट दिया है और वह सहज अवस्था में समाहित हो गया है ॥ ४ ॥ १६ ॥ २३ ॥ माझ महला ५ ॥ प्रभु की कृपा से ही मैं परमात्मा का सुमिरन करता हूँ और प्रभु की दया से ही मैं उसके गीत गाता हूं । उठते, बैठते, सोते, जागते अर्थात सारी आयु पर्यन्त उस प्रभु का सुमिरन किया जाना चाहिए । गुरु ने मुझे नामरूपी औषधि प्रदान की है जिससे मेरे पाप कट गए हैं और मैं निर्मल हो गया हूं । मेरी पीड़ा समाप्त हो गई है, मेरे सारे दर्द समाप्त हो गए हैं और अब मैं आनन्दित हो गया हूँ ॥ २ ॥ वह प्यारा प्रभु जिसके पक्ष में होता है वह संसार सागर के भय से मुक्त हो जाता है । जिसने गुरु को सत्य–रूप में पहचान लिया है उसे भला फिर डर क्यों होगा ॥ ३ ॥ जब से मुझे सद्संगत प्राप्त हुई है तब से गुरु के मिलते ही मेरी अहंकार रूपी बला दूर हो गई है । नानक उस प्रभु का श्वास्–प्रश्वास गुण गायन करता है इसलिए सद्गुरु ने मेरे अवगुणों पर पर्दा डालकर उन्हें ढक लिया है ॥ ४ ॥ १७ ॥ २४ ॥ माझ महला ५ ॥ प्रभु अपने सेवक के साथ पूर्ण रूप से ओत–प्रोत रहता है । वह सुखदाता प्रभु सेवक की रक्षा करता है । मैं उस सेवक का पानी भरता हूँ, उसे पंखा डुलाता हूँ और उसके लिए आटा पीसता हूं जिसका लक्ष्य सदा प्रभु मिलने का उद्यम ही है ॥ १ ॥ प्रभु ने मोह का फन्दा काटकर सेवक को अपनी सेवा भक्ति में लगा लिया है और अब उस सेवक के मन को भी साहिब का हुकुम भाने लगा है । अब सेवक वही करता है जो मालिक प्रभु को अच्छा लगता है और इस प्रकार वह अन्तर्जगत और बाहरी संसार के साथ प्रेम–व्यवहार का माहिर हो गया है ॥ २ ॥ हे प्रभु, तू बुद्धिमान है और तू सारे हालातों को जानता है ।

ठाकुर के सेवक हरि रंग माणहि ॥ जो किछु ठाकुर का सो सेवक का सेवकु ठाकुर ही संगि जाहरु जीउ ॥ ३ ॥ अपुनै ठाकुरि जो पहिराइआ ॥ बहुरि न लेखा पुछि बुलाइआ ॥ तिसु सेवक कै नानक कुरबाणी सो गहिर गभीरा गउहरु जीउ ॥ ४ ॥ १८ ॥ २५ ॥ माझ महला ५ ॥ सभ किछु घर महि बाहरि नाही ॥ बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही ॥ गुर परसादी जिनी अंतरि पाइआ सो अंतरि बाहरि सुहेला जीउ ॥ १ ॥ झिमि झिमि वरसै अंम्रित धारा ॥ मनु पीवै सुनि सबदु बीचारा ॥ अनद बिनोद करे दिन राती सदा सदा हरि केला जीउ ॥ २ ॥ जनम जनम का विछुड़िआ मिलिआ ॥ साध क्रिपा ते सूका हरिआ ॥ सुमति पाए नामु धिआए गुरमुखि होए मेला जीउ ॥ ३ ॥ जल तरंगु जिउ जलहि समाइआ ॥ तिउ जोती संगि जोति मिलाइआ ॥ कहु नानक भ्रम कटे किवाड़ा बहुड़ि न होईऐ जउला जीउ ॥ ४ ॥ १९ ॥ २६ ॥ माझ महला ५ ॥ तिसु कुरबाणी जिनि तूं सुणिआ ॥ तिसु बलिहारी जिनि रसना भणिआ ॥ वारि वारि जाई तिसु विटहु जो मनि तनि तुधु आराधे जीउ ॥ १ ॥ तिसु चरण पखाली जो तेरै मारगि चालै ॥ नैन निहाली तिसु पुरख दइआलै ॥ मनु देवा तिसु अपुने साजन जिनि गुर मिलि सो प्रभु लाधे जीउ ॥ २ ॥ से वडभागी जिनि तुम जाणे ॥ सभ कै मधे अलिपत निरबाणे ॥ साध कै संगि उनि भउजलु तरिआ सगल दूत उनि साधे जीउ ॥ ३ ॥ तिन की सरणि परिआ मनु मेरा ॥ माणु ताणु तजि मोहु अंधेरा ॥ नामु दानु दीजै नानक कउ तिसु प्रभ अगम अगाधे जीउ ॥ ४ ॥ २० ॥ २७ ॥ माझ महला ५ ॥ तूं पेडु साख तेरी फूली ॥ तूं सूखमु होआ असथूली ॥ तूं जलनिधि तूं फेनु बुदबुदा तुधु बिनु अवरु न भालीऐ जीउ ॥ १ ॥ तूं सूतु मणीए भी तूंहै ॥ तूं गंठी मेरु सिरि तूंहै ॥ आदि मधि अंति प्रभु सोई अवरु न कोइ दिखालीऐ जीउ ॥ २ ॥ तूं निरगुणु सरगुणु सुखदाता ॥ तूं निरबाणु रसीआ रंगि राता ॥ अपणे करतब आपे जाणहि आपे तुधु समालीऐ जीउ ॥ ३ ॥ तूं ठाकुरु सेवकु फुनि आपे ॥ तूं गुपतु परगटु प्रभ आपे ॥ नानक दासु सदा गुण गावै इक भोरी नदरि निहालीऐ

प्रभु–स्वामी के सेवक प्रभु की सब खुशियों का आनन्द लेते हैं । जो कुछ भी प्रभु का है वह सब सेवक का ही है और सेवक की शोभा उस प्रभु के कारण ही होती है ॥ ३ ॥ अपने मालिक (प्रभु) ने जिसको बड़प्पन प्रदान किया है उसका लेखा–जोखा फिर नहीं पूछा गया । हे नानक, मैं उस सेवक पर बलिहारी जाता हूँ क्योंकि वह सेवक गहन, गम्भीर और अमूल्य जीवन वाला हो जाता है ॥ ४ ॥ १८ ॥ २५ ॥ माझ महला ५ ॥ सब कुछ वास्तव में अपने अन्दर ही है वाहर कुछ भी नहीं । जो प्रभु को बाहर ढूँढते हैं वे भ्रमों में भूले फिरते हैं । गुरु की कृपा से जिन्होंने अपने अन्तर्मन में ही प्रभु को पा लिया है वे अन्दर–बाहर दोनों ओर से सुखी हो जाते हैं । प्रभु नाम की अमृत धारा रिमझिम रिमझिम बरसती रहती है और व्यक्ति का मन शब्द के विचार के माध्यम से उसे पीता रहता है । तब यह मन दिन–रात आनन्द–विनोद में लगा रहता है और परमात्मा के साथ मिलाप का सुख लेता रहता है ॥ २ ॥ शब्द की विचार के फलस्वरूप जन्म–जन्म के विछुड़े हुए जीव का मेल प्रभु के साथ हो जाता है । सद्पुरुषों की कृपा के फलस्वरूप व्यक्ति का सूख चुका मन हरा–भरा हो उठता है । अब व्यक्ति सुमति प्राप्त कर प्रभु–नाम का सुमिरन करता है और गुरमुख बनकर उसका मेल प्रभु से हो जाता है ॥ ३ ॥ जैसे जल की तरंगें जल में समा जाती हैं, उसी तरह व्यक्ति की आत्मिक ज्योति उस परम ज्योति के साथ मिल जाती है । हे नानक, शब्द–विचार से गुरमुख बने व्यक्ति के भ्रम के पर्दे नष्ट हो जाते हैं और अब जीव की भाग–दौड़ समाप्त हो जाती है ॥ ४ ॥ १९ ॥ २६ ॥ माझ महला ५ ॥ जिन्होंने तेरा नाम सुना है मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ; मैं उन पर भी बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने अपनी जीभ से तेरे नाम का उच्चारण किया है । मैं बार बार उन पर भी बलिहारी जाता हूँ जो मन तन से तेरी आराधना करते हैं ॥ १ ॥ जो तेरे मार्ग पर चलते हैं मैं उनके चरण धोता रहूँ । उस दयालु प्रभु को मैं अपनी आंखों से देखता रहूँ । मैं अपना मन उस सज्जन के हवाले करने को तत्पर हूँ जिसने गुरु से मिलकर प्रभु को ढूँढ लिया है ॥ २ ॥ वे भाग्यशाली हैं जिन्होंने तुझे जान लिया है । वे सबके बीच रहते हुए भी असंग एवं निर्लिप्त हैं । सद्पुरुषों के संग उन्होंने संसार–सागर को तैर कर पार कर लिया है और उन्होंने विकारादि दूतों को अपने नियन्त्रण में कर लिया है ॥ ३ ॥ हे भाई, अपनी शक्ति का अभिमान एवं मोह रूपी अन्धकार का त्याग कर मेरा मन ऐसे व्यक्तियों की शरण में आ गया है । हे अगम्य अगाध प्रभु, नानक की यह प्रार्थना है कि उसे भी नाम–दान देने की कृपा करो ॥ ४ ॥ २० ॥ २७ ॥ माझ महला ५ ॥ हे प्रभु, तू ऐसा पेड़ है जिसकी फली–फूली टहनियां यह सारी सृष्टि है । तू ही अदृष्ट एवं सूक्ष्म था जो अब स्थूल रूप में चारों ओर दृष्यमान है । तू ही समुद्र है, समूद्र की झाग है और तू ही पानी रूपी जीवन का बुलबुला है । तेरे बिना अन्य किसी की खोज की आवश्यकता नहीं है ॥ १ ॥ तू ही प्राण रूपी सूत्र सब में है और उस धागे पर जीवन रूपी मणि भी तू ही है । तू ही माला का गाँठ रूपी मेरू है और वास्तव में आदि, मध्य एवं अन्त में प्रभु के सिवाए अन्य कोई दिखाई नहीं देता ॥ २ ॥ तू सुखदायक, निर्गुण, सगुण स्वयं ही है । तू ही वासना–रहित है और सांसारिक रंगों में लीन रसिक भी तू ही है । अपने कार्यों को हे प्रभु, तू ही जानता है और तू स्वयं ही सब की संभाल कर रहा है ॥ ३ ॥ पुनः तू ही मालिक है और तू ही सेवक है । तू ही प्रछन्न रूप में सब में स्थित है और हे प्रभु, प्रकट रूप में भी तू ही है । हे प्रभु, थोड़ी सी कृपा–दृष्टि से मेरी ओर देख ताकि यह दास नानक सदा तेरा ही गुणानुवाद करता

जीउ ॥ ४ ॥ २१ ॥ २८ ॥ माझ महला ५ ॥ सफल सु बाणी जितु नामु वखाणी ॥ गुर परसादि किनै विरलै जाणी ॥ धंनु सु वेला जितु हरि गावत सुनणा आए ते परवाना जीउ ॥ १ ॥ से नेत्र परवाणु जिनी दरसनु पेखा ॥ से कर भले जिनी हरि जसु लेखा ॥ से चरण सुहावे जो हरि मारगि चले हउ बलि तिन संगि पछाणा जीउ ॥ २ ॥ सुणि साजन मेरे मीत पिआरे ॥ साधसंगि खिन माहि उधारे ॥ किलविख काटि होआ मनु निरमलु मिटि गए आवण जाणा जीउ ॥ ३ ॥ दुइ कर जोड़ि इकु बिनउ करीजै ॥ करि किरपा डुबदा पथरु लीजै ॥ नानक कउ प्रभ भए क्रिपाला प्रभ नानक मनि भाणा जीउ ॥ ४ ॥ २२ ॥ २९ ॥ माझ महला ५ ॥ अंम्रित बाणी हरि हरि तेरी ॥ सुणि सुणि होवै परम गति मेरी ॥ जलनि बुझी सीतलु होइ मनूआ सतिगुर का दरसनु पाए जीउ ॥ १ ॥ सूखु भइआ दुखु दूरि पराना ॥ संत रसन हरि नामु वखाना ॥ जल थल नीरि भरे सर सुभर बिरथा कोइ न जाए जीउ ॥ २ ॥ दइआ धारी तिनि सिरजनहारे ॥ जीअ जंत सगले प्रतिपारे ॥ मिहरवान किरपाल दइआला सगले त्रिपति अघाए जीउ ॥ ३ ॥ वणु त्रिणु त्रिभवणु कीतोनु हरिआ ॥ करणहारि खिन भीतरि करिआ ॥ गुरमुखि नानक तिसै अराधे मन की आस पुजाए जीउ ॥ ४ ॥ २३ ॥ ३० ॥ माझ महला ५ ॥ तूं मेरा पिता तूंहै मेरा माता ॥ तूं मेरा बंधपु तूं मेरा भ्राता ॥ तूं मेरा राखा सभनी थाई ता भउ केहा काड़ा जीउ ॥ १ ॥ तुमरी क्रिपा ते तुधु पछाणा ॥ तूं मेरी ओट तूंहै मेरा माणा ॥ तुझ बिनु दूजा अवरु न कोई सभु तेरा खेलु अखाड़ा जीउ ॥ २ ॥ जीअ जंत सभि तुधु उपाए ॥ जितु जितु भाणा तितु तितु लाए ॥ सभ किछु कीता तेरा होवै नाही किछु असाड़ा जीउ ॥ ३ ॥ नामु धिआइ महा सुखु पाइआ ॥ हरि गुण गाइ मेरा मनु सीतलाइआ ॥ गुरि पूरै वजी वाधाई नानक जिता बिखाड़ा जीउ ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३१ ॥ माझ महला ५ ॥ जीअ प्राण प्रभ मनहि अधारा ॥ भगत जीवहि गुण गाइ अपारा ॥ गुण निधान अंम्रितु हरि नामा हरि धिआइ धिआइ सुखु पाइआ जीउ ॥ १ ॥ मनसा धारि जो घर ते आवै ॥

रहे ॥ ४ ॥ २१ ॥ २८ ॥ माझ महला ५ ॥ वही वाणी फलदायक है जिसके माध्यम से प्रभु नाम का उच्चारण हो; परन्तु कोई बिरला ही गुरु की कृपा से इस वाणी को जानता-बूझता है। वह समय धन्य है जिसमें हरि के गुणानुवाद को सुना जाए; प्रभु गुणानुवाद करने सुनने वाले ही इस संसार में स्वीकृत होते हैं ॥ १ ॥ वे नेत्र स्वीकृत हैं जिन्होंने प्रभु का दर्शन किया है। वे हाथ भले हैं जिन्होंने हरि-यश लिखा है। वे पैर शोभायुक्त हैं जो प्रभु मार्ग पर चलते हैं। इन सबके माध्यम से प्रभु के साथ पहचान बनती है इसलिए मैं इन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ २॥ हे मेरे मित्र एवं सज्जन प्रभु, मुझे सद्संगत प्रदान कर क्योंकि उसमें क्षण भर में ही उद्धार हो जाता है। वहाँ सभी पाप कट जाते हैं, मन निर्मल हो जाता है और आवागमन समाप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ दोनों हाथ जोड़ कर परमात्मा के समक्ष एक अरदास (प्रार्थना) की जानी चाहिए कि हे प्रभु, कृपा कर और मुझ डूबते हुए पत्थर को बचा ले। नानक का प्रभु तुझ पर कृपालु हो गया है और नानक के मन में भी प्रभु प्यारा लगने लग गया है ॥ ४ ॥ २२ ॥ २९ ॥ माझ महला ५ ॥ हे प्रभु, तेरी वाणी अमृत है जिसे सुन सुन कर मेरी परमगति अर्थात मुक्ति हो गई है। सद्गुरु का दर्शन करके मेरी जलन बुझ गई है और मन शीतल हो गया है। शान्त पुरुषों ने अपने मुख से जब हरि-नाम का उच्चारण किया तो मेरा दुख दूर होकर अब चारों ओर सुख ही सुख हो गया है। जैसे वर्षा में तालाब, खड्डे एवं धरती जल से लबा-लब भर जाते हैं उसी प्रकार हरि-नाम की वर्षा में भी कोई खाली नहीं रहता ॥ २ ॥ उस सृजनहार प्रभु ने कृपा करके इस सृष्टि में समस्त जीव-जन्तुओं का पालन पोषण किया है। उस मेहरबान कृपालु दयालु प्रभु की कृपा से सभी तृप्त होकर अघा गए हैं ॥ ३ ॥ प्रभु-नाम की वर्षा ने वन-तृण एवं त्रिभुवन हरा-भरा कर दिया है और करनहार प्रभु ने यह सब किया भी एक क्षण में है। हे नानक, गुरमुख बनकर केवल उसी की आराधना कर जो सबके मन की आशाओं को पूरा कर देता है ॥ ४ ॥ २३ ॥ ३० ॥ माझ महला ५ ॥ हे प्रभु, तू ही मेरा पिता है और तू ही मेरी माता है; तू ही मेरा मित्र है और तू ही मेरा भाई है। जब सब स्थानों पर तू ही मेरा रक्षक है तो फिर भला मुझे किस बात की चिन्ता है ॥ १ ॥ तेरी कृपा से ही मैंने तुझे जाना है। तू ही मेरा आश्रय है और तुझ पर ही मैं गर्व करता हूँ। हे प्रभु, तेरे बिना अन्य कोई नहीं है और यह सारा संसार तेरे ही खेलने का अखाड़ा (स्थान) है ॥ २ ॥ सभी जीव-जन्तुओं को तूने उत्पन्न किया है और जिसे जैसा चाहा है वैसे ही कार्य में लगाया है। हे प्रभु, सब कुछ तेरा किया ही होता है इसमें हमारा कोई भी ज़ोर नहीं ॥ ३ ॥ हे भाई, नाम का सुमिरन करके मैंने महा सुख प्राप्त किया है और हरि गुणानुवाद से मेरा मन शीतल हो गया है। पूर्ण गुरु के माध्यम से मेरे अन्दर आध्यात्मिक उत्साह का मानो ढोल बज उठा है और इस संसार रूपी अखाड़े में विकारों से चल रही कुश्ती को मैंने जीत लिया है ॥ ४ ॥ २४ ॥ ३१ ॥ माझ महला ५ ॥ संसार के जीवों के प्राण एवं मन का आधार तू ही है। भक्त जन उस अपार प्रभु के गुण गायन करके ही जीवित बने रहते हैं। प्रभु का अमृत-नाम गुणों का खज़ाना है और प्रभु के नाम की आराधना करते-करते ही मैंने आनन्द प्राप्त किया है ॥ १ ॥ जो व्यक्ति प्रभु के दर्शन की बात मन

साधसंगि जनमु मरणु मिटावै ॥ आस मनोरथु पूरनु होवै भेटत गुर दरसाइआ जीउ ॥ २ ॥ अगम अगोचर किछु मिति नही जानी ॥ साधिक सिध धिआवहि गिआनी ॥ खुदी मिटी चूका भोलावा गुरि मन ही महि प्रगटाइआ जीउ ॥ ३ ॥ अनद मंगल कलिआण निधाना ॥ सूख सहज हरि नामु वखाना ॥ होइ क्रिपालु सुआमी अपना नाउ नानक घर महि आइआ जीउ ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३२ ॥ माझ महला ५ ॥ सुणि सुणि जीवा सोइ तुमारी ॥ तूं प्रीतमु ठाकुरु अति भारी ॥ तुमरे करतब तुम ही जाणहु तुमरी ओट गोपाला जीउ ॥ १ ॥ गुण गावत मनु हरिआ होवै ॥ कथा सुणत मलु सगली खोवै ॥ भेटत संगि साध संतन कै सदा जपउ दइआला जीउ ॥ २ ॥ प्रभु अपुना सासि सासि समारउ ॥ इह मति गुर प्रसादि मनि धारउ ॥ तुमरी क्रिपा ते होइ प्रगासा सरब मइआ प्रतिपाला जीउ ॥ ३ ॥ सति सति सति प्रभु सोई ॥ सदा सदा सद आपे होई ॥ चलित तुमारे प्रगट पिआरे देखि नानक भए निहाला जीउ ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३३ ॥ माझ महला ५ ॥ हुकमी वरसण लागे मेहा ॥ साजन संत मिलि नामु जपेहा ॥ सीतल सांति सहज सुखु पाइआ ठाढि पाई प्रभि आपे जीउ ॥ १ ॥ सभु किछु बहुतो बहुतु उपाइआ ॥ करि किरपा प्रभि सगल रजाइआ ॥ दाति करहु मेरे दातारा जीअ जंत सभि ध्रापे जीउ ॥ २ ॥ सचा साहिबु सची नाई ॥ गुर परसादि तिसु सदा धिआई ॥ जनम मरण भै काटे मोहा बिनसे सोग संतापे जीउ ॥ ३ ॥ सासि सासि नानकु सालाहे ॥ सिमरत नामु काटे सभि फाहे ॥ पूरन आस करी खिन भीतरि हरि हरि हरि गुण जापे जीउ ॥ ४ ॥ २७ ॥ ३४ ॥ माझ महला ५ ॥ आउ साजन संत मीत पिआरे ॥ मिलि गावह गुण अगम अपारे ॥ गावत सुणत सभे ही मुकते सो धिआईऐ जिनि हम कीए जीउ ॥ १ ॥ जनम जनम के किलबिख जावहि ॥ मनि चिंदे सेई फल पावहि ॥ सिमरि साहिबु सो सचु सुआमी रिजकु सभसु कउ दीए जीउ ॥ २ ॥ नामु जपत सरब सुखु पाईऐ ॥ सभु भउ बिनसै हरि हरि धिआईऐ ॥ जिनि सेविआ सो पारगिरामी कारज सगले थीए जीउ ॥ ३ ॥ आइ पइआ तेरी सरणाई ॥ जिउ भावै तिउ लैहि मिलाई ॥

में लेकर चलता है वह सद्संगत में जन्म–मरण को मिटा लेता है । गुरु का दर्शन करके उसकी आशा और मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं ॥ २ ॥ अनेकों साधक, सिद्ध और ज्ञानीजन उसकी आराधना करते हैं परन्तु उस अगम्य, अगोचर के ओर–छोर का पता नहीं चल सका । जब अहम् समाप्त हो गया और भ्रम दूर हो गया तो गुरु ने जीव के मन में ही उस अनन्त प्रभु को प्रकट कर दिया है ॥ ३ ॥ खुशी, आनन्द एवं मुक्ति का भण्डार तथा सहज अवस्था का सुख देने वाले प्रभु नाम का जब मैंने जाप किया तो दयालु स्वामी प्रभु ने कृपा करके नानक के हृदय रूपी घर में ही अपना नाम टिका दिया है ॥ ४ ॥ २५ ॥ ३२ ॥ माझ महला ५ ॥ मैं तुम्हारी महिमा सुनकर ही जीता हूँ । हे प्रियतम स्वामी, तुम अत्यन्त शक्तिशाली हो । अपने कार्यों को केवल तुम ही जानते हो मैं तो हे धरती के पालन –कर्त्ता, केवल तुम्हारे ही आश्रय में हूँ ॥ १ ॥ तुम्हारा गुणानुवाद करने से मन हरा–भरा हो जाता है और तुम्हारी कथा सुनकर सारा मल नष्ट हो जाता है । सद्संगत में मिल बैठकर मैं सदैव दयालु प्रभु का ही जाप करता हूँ ॥ २॥ प्रत्येक श्वास प्रश्वास के साथ अपने प्रभु का ही सुमिरन करता हूँ और यह सुबुद्धि गुरु कृपा से ही मेरे मन ने धारण की है । हे प्रभु, तुम्हारी कृपा से ही अन्तर्मन में प्रकाश होता है और सब पर दया करने वाले प्रभु तुम ही सब का पालन–पोषण करते हो ॥ ३ ॥ प्रभु सत्य है एवं सत्य ही है । वह सदा से ही निरन्तर विद्यमान है । हे प्रभु, तुम्हारे प्यारे कौतुक जो संसार में प्रकट हैं उन्हें देखकर दास नानक प्रसन्न हो रहा है ॥ ४ ॥ २६ ॥ ३३ ॥ माझ महला ५ ॥ तुम्हारे हुकुम से नाम रूपी अमृत बरसने लगा है । सत्संगी सज्जन पुरुष मिल बैठकर नाम का सुमिरन करते हैं । इस सद्संगत में प्रभु ने स्वयं ही शीतलता, शान्ति और सहज सुख का प्रसार कर दिया है ॥ १ ॥ सभी कुछ अत्यधिक उत्पन्न किया गया है, प्रभु ने कृपा करके सब को संतुष्ट कर दिया है । हे दाता प्रभु, तू दान देता है और सभी जीव अघा जाते हैं ॥ २ ॥ उस सत्य रूप परमात्मा का बड़प्पन सदा बना रहने वाला है और गुरु कृपा से मैं सदैव उसका सुमिरन करता हूँ । फलस्वरूप मेरे जन्म–मरण के डर एवं मोह कट गए हैं और मेरे सभी शोक, सन्ताप विनष्ट हो गए हैं ॥ ३ ॥ नानक अपने प्रत्येक श्वास के साथ उस प्रभु का गुणानुवाद करता है और नाम सुमिरन से उसके सभी बन्धन कट गए हैं । प्रभु ने नानक की यह आशा क्षण भर में ही पूरी कर दी और अब वह हर समय प्रभु के गुणों को ही स्मरण करता रहता है ॥ ४ ॥ २७ ॥ ३४ ॥ माझ महला ५ ॥ मेरे प्यारे मित्रो, सन्तो एवं सज्जनों, आओ सब मिल कर उस अगम्य अपार प्रभु के गुण गाएं । जिसके गुण गाने–सुनने से सभी मुक्त हो जाते हैं उस प्रभु का ही हम सुमिरन करें जिसने हमारी रचना की है । उसके सुमिरन से जन्म–जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं और मनोवांछित फल प्राप्त होता है । उस सत्य स्वरूप स्वामी प्रभु का ही सुमिरन किया जाना चाहिए जो सब का भरण–पोषण करता है ॥ २ ॥ नाम के जाप से सभी सुख प्राप्त होते हैं और हरि–सुमिरन से सभी भय समाप्त हो जाते हैं । जिसने उस प्रभु का सुमिरन किया है वह संसार–समुद्र के उस पार जाने योग्य हो जाता है और उसके सभी कार्य पूरे हो जाते हैं । हे प्रभु, मैं तेरी शरण में आन पड़ा हूँ और तुझे जैसे भी उचित लगे मुझे अपने से मिला ले।

करि किरपा प्रभु भगती लावहु सचु नानक अंम्रितु पीए जीउ ॥ ४ ॥ २८ ॥ ३५ ॥ माझ महला ५ ॥ भए क्रिपाल गोविंद गुसाई ॥ मेघु वरसै सभनी थाई ॥ दीन दइआल सदा किरपाला ठाढि पाई करतारे जीउ ॥ १ ॥ अपुने जीअ जंत प्रतिपारे ॥ जिउ बारिक माता संमारे ॥ दुख भंजन सुख सागर सुआमी देत सगल आहारे जीउ ॥ २ ॥ जलि थलि पूरि रहिआ मिहरवाना ॥ सद बलिहारि जाईऐ कुरबाना ॥ रैणि दिनसु तिसु सदा धिआई जि खिन महि सगल उधारे जीउ ॥ ३ ॥ राखि लीए सगले प्रभि आपे ॥ उतरि गए सभ सोग संतापे ॥ नामु जपत मनु तनु हरीआवलु प्रभ नानक नदरि निहारे जीउ ॥ ४ ॥ २९ ॥ ३६ ॥ माझ महला ५ ॥ जिथै नामु जपीऐ प्रभ पिआरे ॥ से असथल सोइन चउबारे ॥ जिथै नामु न जपीऐ मेरे गोइदा सेई नगर उजाड़ी जीउ ॥ १ ॥ हरि रुखी रोटी खाइ समाले ॥ हरि अंतरि बाहरि नदरि निहाले ॥ खाइ खाइ करे बदफैली जाणु विसू की वाड़ी जीउ ॥ २ ॥ संता सेती रंगु न लाए ॥ साकत संगि विकरम कमाए ॥ दुलभ देह खोई अगिआनी जड़ अपुणी आपि उपाड़ी जीउ ॥ ३ ॥ तेरी सरणि मेरे दीन दइआला ॥ सुख सागर मेरे गुर गोपाला ॥ करि किरपा नानकु गुण गावै राखहु सरम असाड़ी जीउ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ३७ ॥ माझ महला ५ ॥ चरण ठाकुर के रिदै समाणे ॥ कलि कलेस सभ दूरि पइआणे ॥ सांति सूख सहज धुनि उपजी साधू संगि निवासा जीउ ॥ १ ॥ लागी प्रीति न तूटै मूले ॥ हरि अंतरि बाहरि रहिआ भरपूरे ॥ सिमरि सिमरि सिमरि गुण गावा काटी जम की फासा जीउ ॥ २ ॥ अंम्रितु वरखै अनहद बाणी ॥ मन तन अंतरि सांति समाणी ॥ त्रिपति अघाइ रहे जन तेरे सतिगुरि कीआ दिलासा जीउ ॥ ३ ॥ जिस का सा तिस ते फलु पाइआ ॥ करि किरपा प्रभ संगि मिलाइआ ॥ आवण जाण रहे वडभागी नानक पूरन आसा जीउ ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ३८ ॥ माझ महला ५ ॥ मीहु पइआ परमेसरि पाइआ ॥ जीअ जंत सभि सुखी वसाइआ ॥ गइआ कलेसु भइआ सुखु साचा हरि हरि नामु समाली जीउ ॥ १ ॥ जिस के से तिन ही प्रतिपारे ॥ पारब्रहम प्रभ भए रखवारे ॥ सुणी

हे प्रभु, कृपा करके मुझे अपनी भक्ति में लीन कर लो ताकि नानक सदैव सत्य रूपी अमृत का पान करता रहे ॥ ४ ॥ २८ ॥ ३५ ॥ माझ महला ५ ॥ धरती के पालन–कर्ता प्रभु कृपालु हुए और उनकी कृपा का बादल सब के लिए बरस उठा । दीन दयालु प्रभु सदा ही कृपालु है और उस कर्त्ता के नाम की वर्षा ने चारों ओर शान्ति का प्रसार कर दिया है । जैसे माता अपने बच्चों को संभालती है वैसे परमात्मा भी अपने जीव–जन्तुओं का लालन–पालन करता है । सुखों का सागर और दुख भंजन वह स्वामी सब को ही आहार प्रदान करता है ॥ २ ॥ जल–स्थल सब में वह मेहरबान प्रभु बस रहा है; उस पर सदैव बलिहारी जाना चाहिए । जो क्षण भर में सबका उद्धार कर देता है जीव को चाहिए कि दिन–रात उसी का ही सुमिरन करे ॥ ३ ॥ प्रभु ने स्वयं ही सब जीवों की रक्षा की है और उनके शोक–सन्ताप समाप्त हो गए हैं । नाम के जाप से तन, मन हरा–भरा हो जाता है । नानक कहता है कि हे प्रभु मेरे पर भी कृपा दृष्टि करो ॥ ४ ॥ २९ ॥ ३६ ॥ माझ महला ५ ॥ जहाँ प्रभु के नाम का सुमिरन किया जाता है वे स्थान सोने से बने हुए ऊंचे स्थानों के बराबर है और जहाँ प्रभु नाम का जाप नहीं होता हे प्रभु, वे बसे हुए नगर भी निर्जन स्थानों की तरह हैं ॥ १ ॥ जो रूखी–सूखी रोटी खाकर भी प्रभु को याद करता है परमात्मा उसे अन्दर और बाहर कृपा दृष्टि से देखता है और जो खा–खाकर पाप कर्म करते हैं उन्हें यह समझ लो कि वे विष की खेती कर रहे हैं ॥ २ ॥ जो शान्त पुरुषों के साथ मिलकर प्रभु रंग में लीन नहीं होता और बुरे व्यक्तियों के साथ मिलकर कुकर्म करता है, उस अज्ञानी ने दुर्लभ मानव देह को व्यर्थ ही गँवाया है और अपनी जड़ को आप ही उखाड़ लिया है ॥ ३ ॥ हे सुखसागर, दीन दयालु मेरे प्रभु गुरु, मैं तेरी शरण में आ गया हूँ । नानक पर कृपा कर ताकि वह तुम्हारे गुण गाता रहे; हे प्रभु हमारी लाज रख लो ॥ ४ ॥ ३० ॥ ३७ ॥ माझ महला ५ ॥ सद्संगत में निवास करने वाले व्यक्तियों के हृदय में प्रभु चरण समाहित हो जाते हैं और उनके कलह–कलेष दूर हो जाते हैं । अब उनके जीवन में शान्ति, सुख एवं सहज की धुन बजती रहती है ॥ १ ॥ उस व्यक्ति की प्रभु चरणों से लगी हुई प्रीति नहीं टूटती । उसने परमात्मा को अन्दर–बाहर सब ओर व्याप्त देखा है जिसने उसका निरन्तर सुमिरन करके उसका गुणानुवाद किया है । उसके लिए यम–पाश भी कट जाता है ॥ २ ॥ जब नाम अमृत की और अनहद वाणी की वर्षा होती है तो मन, तन में शान्ति समा जाती है । हे सद्गुरु, तूने ऐसा दिलासा दिया है कि तेरे सेवक मायावी तृष्णाओं की परवाह न करते हुए पूर्ण रूप से तृप्त हो गए हैं ॥ ३ ॥ कृपा करके गुरु ने जिसे प्रभु के साथ मिला दिया है उसने जीवन के सभी फल प्राप्त कर लिए हैं । हे नानक, उस भाग्यशाली पुरुष का आवागमन समाप्त हो गया है और उसकी सभी आशाएं पूरी हो गई हैं ॥ ४ ॥ ३१ ॥ ३८ ॥ माझ महला ५ ॥ प्रभु ने अपनी कृपा की वर्षा की और सभी जीव जन्तु सुखी बसने लगे । हरि–नाम की आराधना से उन्हें सच्चा सुख मिला और उनका दुख क्लेष मिट गया है ॥ १ ॥ ये जीव जिस प्रभु के हैं वही इनकी पालना भी करता है । परब्रह्म प्रभु ही इनका रखवाला है ।

बेनंती ठाकुरि मेरै पूरन होई घाली जीउ ॥ २ ॥ सरब जीआ कउ देवणहारा ॥ गुर परसादी नदरि निहारा ॥ जल थल महीअल सभि त्रिपताणे साधू चरन पखाली जीउ ॥ ३ ॥ मन की इछ पुजावणहारा ॥ सदा सदा जाई बलिहारा ॥ नानक दानु कीआ दुख भंजनि रते रंगि रसाली जीउ ॥ ४ ॥ ३२ ॥ ३९ ॥ माझ महला ५ ॥ मनु तनु तेरा धनु भी तेरा ॥ तूं ठाकुरु सुआमी प्रभु मेरा ॥ जीउ पिंडु सभु रासि तुमारी तेरा जोरु गोपाला जीउ ॥ १ ॥ सदा सदा तूंहै सुखदाई ॥ निवि निवि लागा तेरी पाई ॥ कार कमावा जे तुधु भावा जा तूं देहि दइआला जीउ ॥ २ ॥ प्रभ तुम ते लहणा तूं मेरा गहणा ॥ जो तूं देहि सोई सुखु सहणा ॥ जिथै रखहि बैकुंठु तिथाई तूं सभना के प्रतिपाला जीउ ॥ ३ ॥ सिमरि सिमरि नानक सुखु पाइआ ॥ आठ पहर तेरे गुण गाइआ ॥ सगल मनोरथ पूरन होए कदे न होइ दुखाला जीउ ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ४० ॥ माझ महला ५ ॥ पारब्रहमि प्रभि मेघु पठाइआ ॥ जलि थलि महीअलि दह दिसि वरसाइआ ॥ सांति भई बुझी सभ त्रिसना अनदु भइआ सभ ठाई जीउ ॥ १ ॥ सुखदाता दुख भंजनहारा ॥ आपे बखसि करे जीअ सारा ॥ अपने कीते नो आपि प्रतिपाले पइ पैरी तिसहि मनाई जीउ ॥ २ ॥ जा की सरणि पइआ गति पाईऐ ॥ सासि सासि हरि नामु धिआईऐ ॥ तिसु बिनु होरु न दूजा ठाकुरु सभ तिसै कीआ जाई जीउ ॥ ३ ॥ तेरा माणु ताणु प्रभ तेरा ॥ तूं सचा साहिबु गुणी गहेरा ॥ नानकु दासु कहै बेनंती आठ पहर तुधु धिआई जीउ ॥ ४ ॥ ३४ ॥ ४१ ॥ माझ महला ५ ॥ सभे सुख भए प्रभ तुठे ॥ गुर पूरे के चरण मनि वुठे ॥ सहज समाधि लगी लिव अंतरि सो रसु सोई जाणै जीउ ॥ १ ॥ अगम अगोचरु साहिबु मेरा ॥ घट घट अंतरि वरतै नेरा ॥ सदा अलिपतु जीआ का दाता को विरला आपु पछाणै जीउ ॥ २ ॥ प्रभ मिलणै की एह नीसाणी ॥ मनि इको सचा हुकमु पछाणी ॥ सहजि संतोखि सदा त्रिपतासे अनदु खसम कै भाणै जीउ ॥ ३ ॥ हथी दिती प्रभि देवणहारै ॥ जनम मरण रोग सभि निवारे ॥ नानक दास कीए प्रभि अपुने हरि कीरतनि रंग माणे जीउ ॥ ४ ॥ ३५ ॥ ४२ ॥

मेरे ठाकुर ने मेरी विनती सुन ली और मेरी की हुई मेहनत को पूर्णत्व प्राप्त हो गया है ॥ २ ॥ वह प्रभु सब जीवों को देने वाला है । गुरु के प्रसाद स्वरूप उसने कृपा दृष्टि की है । मैं ऐसे साधु पुरुष के चरण धोता हूँ जिसके कारण जल, स्थल एवं आकाश आदि सभी तृप्त हो गए हैं ॥ ३ ॥ मन की इच्छा पूरी करने वाले उस प्रभु पर मैं सदा बलिहारी जाता हूँ । हे नानक, दु:ख नाशक प्रभु ने जिन्हें नाम का दान प्रदान किया वे सब उस प्रभु के रंग में रंगे गए हैं ॥ ४ ॥ ३२ ॥ ३९ ॥ माझ महला ५ ॥ हे मेरे प्रभु स्वामी, मेरा मन, तन और धन सब कुछ तेरा ही है । मेरा शरीर और इसके प्राण सब तेरी ही दी हुई रास पूँजी है और इनमें तेरा ही बल क्रियाशील है ॥ १ ॥ तू सदैव सुखदायक है और मैं झुक झुक कर तेरे चरणों का स्पर्श करता हूँ । मैं वही कार्य करूँ हे प्रभु, जो तू मुझे दे और जो तुझे अच्छा लगे ॥ २ ॥ हे प्रभु, तू ही मेरे लिए सौन्दर्यशाली गहना है और मुझे सदैव सब कुछ तुम ही से लेना है । जो तू देगा मैं उसी सुख का उपभोग करूँगा । हे सबके पालनहार प्रभु, तू मुझे जहाँ रखेगा वही मेरे लिए बैकुण्ठ धाम है । तेरा सुमिरन करते हुए ही नानक ने सुख प्राप्त किया है और आठों प्रहर तेरे गुणों का गायन किया है । मेरे सभी उद्देश्य पूर्ण हो गए हैं और अब मुझे कभी भी दुख प्रतीत नहीं होता है ॥ ४ ॥ ३३ ॥ ४० ॥ माझ महला ५ ॥ परब्रह्म प्रभु ने नाम रूपी बादल भेजा जो कि जल, स्थल, आकाश एवं दसों दिशाओं में बरस चुका है । फलस्वरूप सब स्थान आनन्दित हो उठे, सबकी तृष्णाएं समाप्त हो गई और सब ओर शान्ति व्याप्त हो गई है । वह प्रभु सुख-दाता एवं दुखनाशक है और आप ही कृपा करके जीवों की खबर-खोज लेता रहता है । मैं उसके चरणों पर गिरकर उसे प्रसन्न करने का प्रयत्न करता हूँ जो अपने किए हुए संसार का आप ही पालन-पोषण करता है ॥ २ ॥ जिसकी शरण में आने पर मुक्ति प्राप्त होती है, प्रत्येक श्वास के साथ उस हरि नाम का ही सुमिरन किया जाना चाहिए । उसके बिना अन्य कोई मालिक नहीं है क्योंकि सब स्थानों की रचना भी उसी ने ही की है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, मुझे तुझ पर ही गर्व है और तू ही मेरी शक्ति है । तू ही गम्भीर गुणों वाला सच्चा साहिब है । हे प्रभु, दास नानक यह विनती करता है कि मैं आठों प्रहर तेरा ही सुमिरन करता रहूँ ॥ ४ ॥ ३४ ॥ ४१ ॥ माझ महला ५ ॥ प्रभु के प्रसन्न होने पर सभी सुख प्राप्त हो जाते हैं और पूर्ण गुरु के चरणों का निवास मन में हो जाता है । अब जीव की सुरति सहज समाधि में लीन हो जाती है और तब वह जीव ही उसके रस को जान सकता है ॥ १ ॥ मेरा साहिब अगम्य एवं अगोचर है परन्तु घट घट में कार्यशील होने से वह बहुत समीप भी है । जीवों का दाता वह सदा अलिप्त भाव से विचरण करता है और कोई बिरला ही अपने अन्दर उसकी पहचान करता है ॥ २ ॥ प्रभु से मिलाप की यही निशानी है कि मन उस प्रभु के सत्य स्वरूप हुकुम को पहचान जाता है । अब वह सहज सन्तुष्टि एवं सदैव तृप्ति के भाव में बना रहता है और अब उसे मालिक प्रभु के आदेश में ही आनन्द का अनुभव होता है ॥ ३ ॥ देने वाले प्रभु ने अपने हाथ से ऐसी औषधि दी है कि जीव का आवागमन का चक्र और सभी रोग निवृत्त हो गए हैं। हे नानक, जिन को प्रभु ने अपना सेवक बना लिया है वे प्रभु के गुणानुवाद में ही आनन्दित रहते हैं ॥ ४ ॥ ३५ ॥ ४२ ॥

माझ महला ५ ॥ कीनी दइआ गोपाल गुसाई ॥ गुर के चरण वसे मन माही ॥ अंगीकारु कीआ तिनि करतै दुख का डेरा ढाहिआ जीउ ॥ १ ॥ मनि तनि वसिआ सचा सोई ॥ बिखड़ा थानु न दिसै कोई ॥ दूत दुसमण सभि सजण होए एको सुआमी आहिआ जीउ ॥ २ ॥ जो किछु करे सु आपे आपै ॥ बुधि सिआणप किछू न जापै ॥ आपणिआ संता नो आपि सहाई प्रभि भरम भुलावा लाहिआ जीउ ॥ ३ ॥ चरण कमल जन का आधारो ॥ आठ पहर राम नामु वापारो ॥ सहज अनंद गावहि गुण गोविंद प्रभ नानक सरब समाहिआ जीउ ॥ ४ ॥ ३६ ॥ ४३ ॥ माझ महला ५ ॥ सो सचु मंदरु जितु सचु धिआईऐ ॥ सो रिदा सुहेला जितु हरि गुण गाईऐ ॥ सा धरति सुहावी जितु वसहि हरिजन सचे नाम विटहु कुरबाणो जीउ ॥ १ ॥ सचु वडाई कीम न पाई ॥ कुदरति करमु न कहणा जाई ॥ धिआइ धिआइ जीवहि जन तेरे सचु सबदु मनि माणो जीउ ॥ २ ॥ सचु सालाहणु वडभागी पाईऐ ॥ गुर परसादी हरि गुण गाईऐ ॥ रंगि रते तेरै तुधु भावहि सचु नामु नीसाणो जीउ ॥ ३ ॥ सचे अंतु न जाणै कोई ॥ थानि थनंतरि सचा सोई ॥ नानक सचु धिआईऐ सद ही अंतरजामी जाणो जीउ ॥ ४ ॥ ३७ ॥ ४४ ॥ माझ महला ५ ॥ रैणि सुहावड़ी दिनसु सुहेला ॥ जपि अंम्रित नामु संतसंगि मेला ॥ घड़ी मूरत सिमरत पल वंञहि जीवणु सफलु तिथाई जीउ ॥ १ ॥ सिमरत नामु दोख सभि लाथे ॥ अंतरि बाहरि हरि प्रभु साथे ॥ भै भउ भरमु खोइआ गुरि पूरै देखा सभनी जाई जीउ ॥ २ ॥ प्रभु समरथु वड ऊच अपारा ॥ नउ निधि नामु भरे भंडारा ॥ आदि अंति मधि प्रभु सोई दूजा लवै न लाई जीउ ॥ ३ ॥ करि किरपा मेरे दीन दइआला ॥ जाचिकु जाचै साध रवाला ॥ देहि दानु नानकु जनु मागै सदा सदा हरि धिआई जीउ ॥ ४ ॥ ३८ ॥ ४५ ॥ माझ महला ५ ॥ ऐथै तूंहै आगै आपे ॥ जीअ जंत्र सभि तेरे थापे ॥ तुधु बिनु अवरु न कोई करते मै धर ओट तुमारी जीउ ॥ १ ॥ रसना जपि जपि जीवै सुआमी ॥ पारब्रहम प्रभ अंतरजामी ॥ जिनि सेविआ तिन ही सुखु पाइआ सो जनमु न जूऐ हारी जीउ ॥ २ ॥ नामु

माझ महला ५ ॥ सृष्टि के मालिक और पालनहार प्रभु ने जब कृपा की तो गुरु के चरण हृदय में आ बसे। कर्ता-प्रभु ने ऐसे व्यक्ति को स्वीकृत कर लिया अर्थात् अपना बना लिया और उसके दुख का डेरा ही नष्ट कर दिया ॥१॥ मन-तन में उस सत्य प्रभु के बसने से कोई भी स्थान अब कष्टकर नहीं प्रतीत होता। जिसने केवल एक परमात्मा की चाहना की है उसके सभी दुष्ट शत्रु अब सज्जन बन गए हैं ॥ २ ॥ वह जो भी करता है अपनी रज़ा में ही करता है और उसमें किसी की बुद्धि अथवा चतुराई दिखाई नहीं पड़ती। प्रभु भ्रमों और भुलावों को समाप्त करता है और शांत पुरुषों की सहायता स्वयं करता है ॥ ३ ॥ सेवकों के जीवन का आधार प्रभु के चरण-कमल हैं। वे आठों प्रहर राम नाम का ही कार्य व्यापार करते हैं। हे नानक ! वे सहज आनन्द की अवस्था में प्रभु के गुण गाते हैं और वह प्रभु सब में समाहित रहता है ॥ ४ ॥ ३६ ॥ ४३ ॥ माझ महला ५ ॥ जहाँ सदैव सत्य की आराधना होती है वही सच्चा स्थान है और वही हृदय सुख पूर्ण है जिसमें हरि का गुणानुवाद होता है। जहाँ प्रभु के सेवक बसते हैं वही धरती भी सुहावनी है और वे सत्य-नाम पर बलिहारी जाते हैं ॥ १ ॥ तेरा बड़प्पन सत्य है और उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता। तेरी कार्य-शैली और तेरी कृपा के बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। तेरे सेवक तेरी आराधना कर-कर के ही जीवित रहते हैं और तेरे सत्य-शब्द का आनन्द लेते हैं ॥ २ ॥ सत्य का गुणानुवाद बड़े भाग्य से मिलता है और गुरु कृपा से ही हरि-गुण-गान किया जाता है। जो तेरे प्रेम में रंग गए हैं, वे ही तुझे अच्छे लगते हैं; उनके पास तेरी प्रसन्नता का चिन्ह तेरा दिया हुआ सच्चा नाम है ॥ ३ ॥ उस सत्य-प्रभु का ओर-छोर कोई नहीं जानता। सब स्थान एवं स्थानांतरों में केवल वही सच्चा प्रभु विद्यमान है। हे नानक, उस सत्य-स्वरूप परमात्मा का सदैव सुमिरन किया जाना चाहिए क्योंकि वह सबके हृदय को जानने वाला सुजान है ॥ ४ ॥ ३७ ॥ ४४ ॥ माझ महला ५ ॥ यदि सद्संग में मिल बैठे और अमृत-नाम का जाप करे तो व्यक्ति की रात भी सुहावनी व्यतीत होती है और दिन भी सुखदायक बन जाता है। जिसकी हर घड़ी और हर पल प्रभु सुमिरन में ही व्यतीत हो उसी का जीवन सफल होता है ॥ १ ॥ नाम सुमिरन से सभी दुख मिट जाते हैं और अन्दर-बाहर अर्थात सब ओर प्रभु साथ में ही प्रतीत होता है। व्यक्ति का भय, भ्रम आदि पूर्ण गुरु मिटा देता है और अब परमात्मा सभी स्थानों में दिखाई देता है ॥ २ ॥ परमात्मा समर्थ है, महान है, ऊँचा है एवं अपार है। उसके नाम के भण्डार में नवनिधियों के खज़ाने भरे हैं। वह प्रभु ही सृष्टि-रचना के आदि में था और मध्य में भी है। मैं किसी दूसरे को अपने पास नहीं आने देता अर्थात प्रभु के बराबर नहीं मानता ॥ ३ ॥ हे दीन-दयालु, कृपा करो मैं याचक, साधु-पुरुषों की चरण धूलि मांगता हूँ। तेरा दास नानक तुझसे यही दान माँगता है कि हे हरि, मैं सदा तुम्हारा ही सुमिरन करता रहूं ॥४ ॥ ३८ ॥ ४५ ॥ माझ महला ५ ॥ इस लोक में भी तू है, आगे परलोक में भी हे प्रभु, तू ही है। तूने ही सब जीव जन्तुओं की रचना की है। हे कर्ता-प्रभु, तुम्हारे बिना अन्य कोई नहीं है और मुझे केवल तुम्हारा ही आसरा है ॥ १ ॥ हे स्वामी, एवं अन्तर्यामी परब्रह्म प्रभु, तेरा सेवक अपनी जीभ से तेरे नाम का जाप करके ही जीवित बना रहता है। दरअसल जिसने तेरा सुमिरन किया है उसी ने ही सुख पाया है और उसने अपने जीवन को जूए की बाजी की तरह नहीं हारा है ॥ २ ॥ तेरे जिस सेवक ने

अवखधु जिनि जन तैरै पाइआ ॥ जनम जनम का रोगु गवाइआ ॥ हरि कीरतनु गावहु दिनु राती सफल एहा है कारी जीउ ॥ ३ ॥ द्रिसटि धारि अपना दासु सवारिआ ॥ घट घट अंतरि पारब्रहमु नमसकारिआ ॥ इकसु विणु होरु दूजा नाही बाबा नानक इह मति सारी जीउ ॥ ४ ॥ ३९ ॥ ४६ ॥ माझ महला ५ ॥ मनु तनु रता राम पिआरे ॥ सरबसु दीजै अपना वारे ॥ आठ पहर गोविंद गुण गाईऐ बिसरु न कोई सासा जीउ ॥ १ ॥ सोई साजन मीतु पिआरा ॥ राम नामु साध संगि बीचारा ॥ साधू संगि तरीजै सागरु कटीऐ जम की फासा जीउ ॥ २ ॥ चारि पदारथ हरि की सेवा ॥ पारजातु जपि अलख अभेवा ॥ कामु क्रोधु किलबिख गुरि काटे पूरन होई आसा जीउ ॥ ३ ॥ पूरन भाग भए जिसु प्राणी ॥ साधसंगि मिले सारंगपाणी ॥ नानक नामु वसिआ जिसु अंतरि परवाणु गिरसत उदासा जीउ ॥ ४ ॥ ४० ॥ ४७ ॥ माझ महला ५ ॥ सिमरत नामु रिदै सुखु पाइआ ॥ करि किरपा भगती प्रगटाइआ ॥ संतसंगि मिलि हरि हरि जपिआ बिनसे आलस रोगा जीउ ॥ १ ॥ जा कै ग्रिहि नव निधि हरि भाई ॥ तिसु मिलिआ जिसु पुरब कमाई ॥ गिआन धिआन पूरन परमेसुर प्रभु सभना गला जोगा जीउ ॥ २ ॥ खिन महि थापि उथापनहारा ॥ आपि इकंती आपि पसारा ॥ लेपु नही जगजीवन दाते दरसन डिठे लहनि विजोगा जीउ ॥ ३ ॥ अंचलि लाइ सभ सिसटि तराई ॥ आपणा नाउ आपि जपाई ॥ गुर बोहिथु पाइआ किरपा ते नानक धुरि संजोगा जीउ ॥ ४ ॥ ४१ ॥ ४८ ॥ माझ महला ५ ॥ सोई करणा जि आपि कराए ॥ जिथै रखै सा भली जाए ॥ सोई सिआणा सो पतिवंता हुकमु लगै जिसु मीठा जीउ ॥ १ ॥ सभ परोई इकतु धागै ॥ जिसु लाइ लए सो चरणी लागै ॥ ऊंध कवलु जिसु होइ प्रगासा तिनि सरब निरंजनु डीठा जीउ ॥ २ ॥ तेरी महिमा तूंहै जाणहि ॥ अपणा आपु तूं आपि पछाणहि ॥ हउ बलिहारी संतन तेरे जिनि कामु क्रोधु लोभु पीठा जीउ ॥ ३ ॥ तूं निरवैरु संत तेरे निरमल ॥ जिन देखे सभ उतरहि कलमल ॥ नानक नामु धिआइ धिआइ जीवै

तेरी नाम रूपी औषधि पा ली है उसका जन्म–जन्मांतरों का रोग समाप्त हो गया है । हे भाई, दिन–रात परमात्मा के गुणानुवाद के गीत गायन करते रहो, यही कार्य लाभदायक है ॥ ३ ॥ प्रभु ने जिस सेवक पर कृपा–दृष्टि की, उसे सँवार दिया । अब वह प्रत्येक जीव में परमात्मा को देखकर अपना सिर झुकाता है । नानक कहता है कि हे बाबा, उस एक प्रभु के बिना अन्य कोई नहीं है और यही श्रेष्ठ मत है ॥ ४ ॥ ३९ ॥ ४६ ॥ माझ महला ५ ॥ मन–तन को उस प्यारे प्रभु में रंगा चाहने के लिए हे जीव, अपना सर्वस्व उस पर कुर्बान कर देना चाहिए । आठों प्रहर उस प्रभु के गुण गाने चाहिए और किसी भी श्वास में उसे भुलाना नहीं चाहिए ॥ १ ॥ वही सज्जन और प्यारा मित्र है जिसने सद्संगत में राम–नाम पर विचार किया है । सद्संगत में संसार–समुद्र के पार जाया जा सकता है और यम का फन्दा कट जाता है ॥ २ ॥ प्रभु की सेवा से ही चारों पदार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) प्राप्त होते हैं । उस अलख और रहस्यातीत प्रभु के नाम का जाप ही पारिजात वृक्ष की तरह है । गुरु ने काम, क्रोध आदि के पाप नष्ट कर दिए हैं और मेरी आशा पूर्ण हो गई है ॥ ३ ॥ जिस व्यक्ति का पूर्ण भाग्योदय हो गया है उसे सद्संगत में प्रभु मिल गया है । हे नानक, जिसके अन्तर्मन में प्रभु–नाम बस गया है वह गृहस्थ जीवन अथवा त्यागी जीवन, दोनों में ही स्वीकृत है ॥ ४ ॥ ४० ॥ ४७ ॥ माझ महला ५ ॥ नाम–सुमिरन से हृदय में सुख प्राप्त हो गया है और प्रभु ने कृपा करके भक्त जनों के माध्यम से नाम को प्रकट किया है । शान्त पुरुषों के साथ मिलकर हरि–नाम का जाप करने से जीव के सारे आलस्य आदि रोग दूर हो गए हैं ॥ १ ॥ हे भाई, जिस प्रभु के घर में नवनिधियां हैं वह उस व्यक्ति को मिलता है जिसके पूर्व जन्मों के नेक संस्कार जाग पड़ते हैं । अब उसे यह अनुभव हो जाता है कि पूर्ण परमेश्वर ही ज्ञान ध्यान है और वह सब करने में समर्थ है ॥ २ ॥ वह प्रभु क्षण–भर में ही स्थापित करके गिरा देने वाला भी है । वह आप ही निरगुण निराकार रूप में अकेला है और स्वयं ही चारों ओर पसरा हुआ भी है। वह जगजीवन दाता कहीं भी लिप्त नहीं है और उसके दर्शन से वियोग का दुख समाप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ उस प्रभु ने अपने आँचल से लगाकर सारी सृष्टि को पार कर लिया है और अपना नाम वह स्वयं ही जपाता है । हे नानक, प्रभु की कृपा और उसके द्वारा बनाए गए संयोग के कारण ही गुरु रूपी जहाज प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ४१ ॥ ४८ ॥ माझ महला ५ ॥ वही करना चाहिए जिसे वह करवाता है और जहाँ वह रखे वही भला स्थान है । वही व्यक्ति सयाना और सम्मानित है जिसे प्रभु का हुकम मीठा लगता है ॥ १ ॥ परमात्मा ने सारी सृष्टि को हुकम के ही एक सूत्र में पिरो रखा है । जिसको प्रभु लगाता है वही उसके चरणों में लगता है और जिसने निर्लिप्त प्रभु को सब स्थानों में देख लिया है उसका हृदय रूपी कमल खिल उठता है ॥ २ ॥ हे प्रभु, तेरी महिमा तू ही जानता है और तेरी स्वयं की पहचान भी केवल तुझे ही है । मैं उन शान्त पुरुषों पर बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने काम, क्रोध और लोभ आदि से मुँह फेर लिया है ॥३॥ तू निरवैर है और तेरे सन्त जन वे हैं जो निर्मल हैं और जिनको देखने मात्र से ही सब पाप उतर जाते हैं। हे नानक, नाम सुमिरन से जो व्यक्ति आध्यात्मिक जीवन प्राप्त कर लेता है उसके मन में से गहरे धंसे हुए भ्रमएवं

बिनसिआ भ्रमु भउ धीठा जीउ ॥ ४ ॥ ४२ ॥ ४९ ॥ माझ महला ५ ॥ झूठा मंगणु जे कोई मागै ॥ तिस कउ मरते घड़ी न लागै ॥ पारब्रहमु जो सद ही सेवै सो गुर मिलि निहचलु कहणा ॥ १ ॥ प्रेम भगति जिस कै मनि लागी ॥ गुण गावै अनदिनु निति जागी ॥ बाह पकड़ि तिसु सुआमी मेलै जिस कै मसतकि लहणा ॥ २ ॥ चरन कमल भगतां मनि वुठे ॥ विणु परमेसर सगले मुठे ॥ संत जनां की धूड़ि नित बांछहि नामु सचे का गहणा ॥ ३ ॥ ऊठत बैठत हरि हरि गाईऐ ॥ जिसु सिमरत वरु निहचलु पाईऐ ॥ नानक कउ प्रभ होइ दइआला तेरा कीता सहणा ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ५० ॥

रागु माझ असटपदीआ महला १ घरु १ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सबदि रंगाए हुकमि सबाए ॥ सची दरगह महलि बुलाए ॥ सचे दीन दइआल मेरे साहिबा सचे मनु पतीआवणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सबदि सुहावणिआ ॥ अंम्रित नामु सदा सुखदाता गुरमती मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना को मेरा हउ किसु केरा ॥ साचा ठाकुरु त्रिभवणि मेरा ॥ हउमै करि करि जाइ घणेरी करि अवगण पछोतावणिआ ॥ २ ॥ हुकमु पछाणै सु हरि गुण वखाणै ॥ गुर कै सबदि नामि नीसाणै ॥ सभना का दरि लेखा सचै छूटसि नामि सुहावणिआ ॥ ३ ॥ मनमुखु भूला ठउरु न पाए ॥ जम दरि बधा चोटा खाए ॥ बिनु नावै को संगि न साथी मुकते नामु धिआवणिआ ॥ ४ ॥ साकत कूड़े सचु न भावै ॥ दुबिधा बाधा आवै जावै ॥ लिखिआ लेखु न मेटै कोई गुरमुखि मुकति करावणिआ ॥ ५ ॥ पेईअड़ै पिरु जातो नाही ॥ झूठि विछुंनी रोवै धाही ॥ अवगणि मुठी महलु न पाए अवगण गुणि बखसावणिआ ॥ ६ ॥ पेईअड़ै जिनि जाता पिआरा ॥ गुरमुखि बूझै ततु बीचारा ॥ आवणु जाणा ठाकि रहाए सचै नामि समावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि बूझै अकथु कहावै ॥ सचे ठाकुर साचो भावै ॥ नानक सचु कहै बेनंती सचु मिलै गुण गावणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ माझ महला ३ घरु १ ॥ करमु होवै

भय निकल कर विनष्ट हो जाते हैं ॥ ४ ॥ ४२ ॥ ४९ ॥ माझ महला ५ ॥ जो नाशवान झूठे पदार्थों को मानता है उसको आध्यात्मिक रूप से मृत होने में घड़ी भर का समय भी नहीं लगता। जो व्यक्ति सदैव परब्रह्म का सुमिरन करता है ऐसे गुरु से मिले हुए व्यक्ति को अमर कहा जाता है ॥ १ ॥ जिसके मन में प्रभु की प्रेमाभक्ति लग गई है वह नित्य प्रतिदिन चेतनापूर्वक प्रभु का गुण–गायन करता है। उसकी बाँह पकड़ कर मालिक प्रभु उसे अपने साथ मिला लेता है जिसके मस्तक पर लाभ प्राप्त करना लिखा हुआ होता है ॥ २ ॥ भक्तजन प्रभु के चरण–कमल मन में बसा लेते हैं और जानते हैं कि परमेश्वर विहीन सभी लूट लिए जाते हैं। ऐसे शान्त पुरुषों की चरण धूलि चाहने वाले व्यक्तियों को सच्चे नाम का गहना प्राप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ उठते–बैठते उस हरि का गायन करते रहना चाहिए जिसके सुमिरन से अटल वरदान प्राप्त होता है। नानक का प्रभु जिस पर दयालु होता है उसको तेरा किया हुआ मानना अच्छा लगता है ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ५० ॥

राग माझ अष्टपदियाँ महला १ घरु १   १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जो शब्द में रंग गया है और जिन्होंने सब में एक हुकम को देख लिया है, हे प्रभु, उन्हें तेरे सच्चे स्थान एवं महल में बुला लिया जाता है। हे दीन–दयालु सच्चे साहिब, सत्य से ही मन मानता है ॥ १ ॥ मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जिनको शब्द सुहाना लगता है; जिनको प्रभु का अमृत–नाम सदा सुखदाता लगता है और जिन्होंने गुरमति को अपने हृदय में बसा लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोई भी मेरा नहीं है और मैं भी किसी का नहीं हूँ। तीनो लोकों में केवल एक सच्चा प्रभु ही मेरा है। अहंकार करती हुई यह सृष्टि–रचना यहाँ से चली जा रही है और साथ ही साथ अपने अवगुणों के कारण पछताती भी है ॥ २ ॥ जो हुकुम को पहचानता है वही हरि के गुणों का कथन करने वाला है। शब्द–गुरु के माध्यम से ही नाम प्रकट होता है। उस सच्चे प्रभु के दरबार में सब का लेखा–जोखा होगा और छूटेगा वही जिसने नाम के द्वारा अपने आप को सँवार लिया है ॥ ३ ॥ भ्रम में भूले हुए मनमुख को कहीं ठिकाना नहीं मिलता और यम के दरवाज़े पर बंधा हुआ वह चोट खाता रहता है। प्रभु–नाम के बिना कोई संगी–साथी नहीं है; केवल वे ही मुक्त होते हैं जिन्होंने नाम की आराधना की है ॥ ४ ॥ प्रपंचो में लीन झूठे व्यक्तियों को सच अच्छा नहीं लगता और दुविधा में बंधे हुए वे संसार में आते जाते हैं। लिखा हुआ संस्कारों का लेख कोई भी मिटा नहीं सकता। केवल गुरमुख होना ही मुक्त करा सकता है ॥ ५ ॥ पिता के घर अर्थात इस लोक में उस प्रियतम को जिसने नहीं जाना वह झूठी बन कर प्रियतम से बिछुड़ी रहती है और चीत्कार करती रहती है। अवगुणों के द्वारा लुट चुकी जीव–स्त्री को प्रभु के घर में जाना नसीब नहीं होता है क्योंकि वह न हीं जानती कि गुण धारण करके ही अवगुण नष्ट किए जाते हैं ॥ ६ ॥ जिसने इस लोक में ही प्यारे प्रभु को जान लिया है और गुरमुख बनकर तत्व का विचार किया है उसका आवागमन समाप्त हो जाता है और वह सच्चे नाम में ही समाहित हो जाता है ॥ ७ ॥ गुरमुख व्यक्ति ही उस अकथनीय प्रभु को बूझता है और उसके बारे में अन्यों को भी बताता है। सच्चे स्वामी–प्रभु को सच ही अच्छा लगता है। नानक की यह सच्ची विनती है कि वह परम सत्य उन्हीं को मिलता है जो प्रभु का गुणानुवाद करते हैं ॥ ८ ॥ १ ॥ माझ महला ३ घरु १ ॥ भाग्य में यदि हो तो

सतिगुरू मिलाए ॥ सेवा सुरति सबदि चितु लाए ॥ हउमै मारि सदा सुखु पाइआ माइआ मोहु चुकावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सतिगुर कै बलिहारणिआ ॥ गुरमती परगासु होआ जी अनदिनु हरि गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तनु मनु खोजे ता नाउ पाए ॥ धावतु राखै ठाकि रहाए ॥ गुर की बाणी अनदिनु गावै सहजे भगति करावणिआ ॥ २ ॥ इसु काइआ अंदरि वसतु असंखा ॥ गुरमुखि साचु मिलै ता वेखा ॥ नउ दरवाजे दसवै मुकता अनहद सबदु वजावणिआ ॥ ३ ॥ सचा साहिबु सची नाई ॥ गुर परसादी मंनि वसाई ॥ अनदिनु सदा रहै रंगि राता दरि सचै सोझी पावणिआ ॥ ४ ॥ पाप पुंन की सार न जाणी ॥ दूजै लागी भरमि भुलाणी ॥ अगिआनी अंधा मगु न जाणै फिरि फिरि आवण जावणिआ ॥ ५ ॥ गुर सेवा ते सदा सुखु पाइआ ॥ हउमै मेरा ठाकि रहाइआ ॥ गुर साखी मिटिआ अंधिआरा बजर कपाट खुलावणिआ ॥ ६ ॥ हउमै मारि मंनि वसाइआ ॥ गुर चरणी सदा चितु लाइआ ॥ गुर किरपा ते मनु तनु निरमलु निरमल नामु धिआवणिआ ॥ ७ ॥ जीवणु मरणा सभु तुधै ताई ॥ जिसु बखसे तिसु दे वडिआई ॥ नानक नामु धिआइ सदा तूं जंमणु मरणु सवारणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ २ ॥ माझ महला ३ ॥ मेरा प्रभु निरमलु अगम अपारा ॥ बिनु तकड़ी तोलै संसारा ॥ गुरमुखि होवै सोई बूझै गुण कहि गुणी समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि का नामु मंनि वसावणिआ ॥ जो सचि लागे से अनदिनु जागे दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपि सुणै तै आपे वेखै ॥ जिस नो नदरि करे सोई जनु लेखै ॥ आपे लाइ लए सो लागै गुरमुखि सचु कमावणिआ ॥ २ ॥ जिसु आपि भुलाए सु किथै हथु पाए ॥ पूरबि लिखिआ सु मेटणा न जाए ॥ जिन सतिगुरु मिलिआ से वडभागी पूरै करमि मिलावणिआ ॥ ३ ॥ पेईअड़ै धन अनदिनु सुती ॥ कंति विसारी अवगणि मुती ॥ अनदिनु सदा फिरै बिललादी बिनु पिर नीद न पावणिआ ॥ ४ ॥ पेईअड़ै सुखदाता जाता ॥ हउमै मारि गुर सबदि पछाता ॥ सेज सुहावी सदा पिरु

सच्चे गुरु से मेल होता है और वह गुरु सेवा में सुरति लगाता है और शब्द–गुरु को चित्त में धारण करवाता है। इस प्रकार जीव अहम् को समाप्त करके सदैव सुख पाता है और माया–मोह आदि को समाप्त कर देता है ॥ १ ॥ मैं अपने मन–चित्त से सद्गुरु पर बलिहारी जाता हूँ। गुरु के मत में चलने से ही अन्तर्मन प्रकाशित होता है और सदा हरि के गुण गाए जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब व्यक्ति तन और मन के विकारों को ध्यानपूर्वक देखता है तो उसे प्रभु–नाम की प्राप्ति हो जाती है। व्यक्ति भाग–दौड़ रहे मन को स्थिर करके रखे और गुरु की वाणी का नित्य गायन करे तो वह भक्ति में सहज भाव से ही लीन हो जाता है ॥ २ ॥ इस शरीर में अनेकों ही पदार्थ हैं जिन्हें गुरमुख बनकर सत्य में लीन होकर ही देखा जा सकता है। जब व्यक्ति शरीर के नौ–द्वारों की वासनाओं से ऊपर उठकर दसवें द्वार अर्थात मनन के क्षेत्र में पहुँच जाता है तो मुक्त हो जाता है और उसके अन्तर्मन में शब्द गूँज उठता है ॥ ३ ॥ उस सच्चे साहिब का बड़प्पन भी सच्चा है। गुरु की कृपा से उसे मन में बसाया जाता है। कृपा प्राप्त व्यक्ति सदैव प्रभु के रंग में रंगा रहता है और उसे ही प्रभु के द्वार की समझ प्राप्त होती है ॥ ४ ॥ जिस व्यक्ति को अच्छे बुरे की पहचान नहीं, जो द्वैतभाव में पड़ा हुआ भ्रम में ही भटकता फिरता है उस अज्ञानी अन्धे व्यक्ति को सही जीवन–मार्ग का पता ही नहीं चलता और वह आवागमन में ही पड़ा रहता है ॥ ५ ॥ गुरु–सेवा से सदा सुख प्राप्त होता है एवं अहंकार और ममता का प्रभाव रुक जाता है। गुरु की शिक्षा के द्वारा व्यक्ति के अन्तर्मन का अन्धकार मिट जाता है और अज्ञान के दुर्भेद्य किवाड़ खुल जाते हैं ॥ ६ ॥ जिसने अहंकार को मारकर उस प्रभु को मन में बसा लिया है और गुरु चरणों में सदैव मन को लगाए रखा है, गुरु की कृपा से ही उसका तन, मन निर्मल हो जाता है और वह निर्मल नाम का ही सुमिरन करता रहता है ॥ ७ ॥ जीना–मरना हे प्रभु, तेरे ही बस में है; जिस पर तू कृपा करता है उसे ही तू बड़प्पन प्रदान करता है। हे नानक ! तू सदा प्रभु–नाम की आराधना कर क्योंकि नाम ही जीवन से लेकर मौत तक व्यक्ति को सँवारने वाला है ॥ ८ ॥ १ ॥ २ ॥

माझ महला ३ ॥ मेरा निर्मल प्रभु अगम्य एवं अपरंपार है। वह बिना किसी पैमाने की सहायता से संसार को परख लेता है। गुरमुख बनकर ही यह रहस्य समझ में आता है और गुरमुख व्यक्ति ही गुणानुवाद करता हुआ उस परम गुणवान (प्रभु) में समाहित हो जाता है ॥ १ ॥ मैं सदा उन पर बलिहारी जाता हूँ जिनके मन में परमात्मा का नाम बसता है। जो सत्य में सुरति लगाए रहते हैं वे सदैव चेतन बने रहते हैं और सत्य–प्रभु के द्वार पर उन्हें ही शोभा प्राप्त होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु स्वयं ही जीवों के मन की व्यथा सुनता है और स्वयं ही उनकी संभाल करता है। जिस पर प्रभु कृपा दृष्टि करता है वही उसके द्वार पर स्वीकृत होता है। जिसे प्रभु अपने सुमिरन में लगाए रहता है वही उसमें लगता है और वही गुरमुख बनकर सत्य को जीवन में अपनाता है ॥ २ ॥ जिसे प्रभु खुद ही चक्करों में डाल दे वह भला अब किसका आश्रय ले सकता है। पूर्व–कर्मों के संस्कारों को मिटाया नहीं जा सकता है। जिन्हें सद्गुरु मिल गया है वे बड़े भाग्यशाली हैं और पूर्ण कृपा से प्रभु उन्हें अपने साथ मिलाए रखता है ॥ ३ ॥ जो जीव–स्त्री इस लोक में सदैव माया–मोह की नींद में मस्त बनी रही उसके पति–प्रभु ने उसके अवगुणों के कारण उसका त्याग कर दिया होता है। अब वह सदैव प्रलाप करती हुई भटकती फिरती है और प्रभु–पति के मिलाप के बिना उसे सुख की नींद नहीं आती ॥ ४ ॥ जिसने इस संसार में ही उस सुखदायक प्रभु को जान लिया और अपने अहंकार को मारकर सद्गुरु को पहचान लिया उसके हृदय की सेज सुन्दर बन गई है

रावे सचु सीगारु बणावणिआ ॥ ५ ॥ लख चउरासीह जीअ उपाए ॥ जिस नो नदरि करे तिसु गुरू मिलाए ॥ किलबिख काटि सदा जन निरमल दरि सचै नामि सुहावणिआ ॥ ६ ॥ लेखा मागै ता किनि दीऐ ॥ सुखु नाही फुनि दूऐ तीऐ ॥ आपे बखसि लए प्रभु साचा आपे बखसि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ आपि करे तै आपि कराए ॥ पूरे गुर कै सबदि मिलाए ॥ नानक नामु मिलै वडिआई आपे मेलि मिलावणिआ ॥ ८ ॥ २ ॥ ३ ॥ माझ महला ३ ॥ इको आपि फिरै परछंना ॥ गुरमुखि वेखा ता इहु मनु भिंना ॥ त्रिसना तजि सहज सुखु पाइआ एको मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी इकसु सिउ चितु लावणिआ ॥ गुरमती मनु इकतु घरि आइआ सचै रंगि रंगावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु जगु भूला तैं आपि भुलाइआ ॥ इकु विसारि दूजै लोभाइआ ॥ अनदिनु सदा फिरै भ्रमि भूला बिनु नावै दुखु पावणिआ ॥ २ ॥ जो रंगि राते करम बिधाते ॥ गुर सेवा ते जुग चारे जाते ॥ जिस नो आपि देइ वडिआई हरि कै नामि समावणिआ ॥ ३ ॥ माइआ मोहि हरि चेतै नाही ॥ जमपुरि बधा दुख सहाही ॥ अंना बोला किछु नदरि न आवै मनमुख पापि पचावणिआ ॥ ४ ॥ इकि रंगि राते जो तुधु आपि लिव लाए ॥ भाइ भगति तेरै मनि भाए ॥ सतिगुरु सेवनि सदा सुखदाता सभ इछा आपि पुजावणिआ ॥ ५ ॥ हरि जीउ तेरी सदा सरणाई ॥ आपे बखसिहि दे वडिआई ॥ जमकालु तिसु नेड़ि न आवै जो हरि हरि नामु धिआवणिआ ॥ ६ ॥ अनदिनु राते जो हरि भाए ॥ मेरै प्रभि मेले मेलि मिलाए ॥ सदा सदा सचे तेरी सरणाई तूं आपे सचु बुझावणिआ ॥ ७ ॥ जिन सचु जाता से सचि समाणे ॥ हरि गुण गावहि सचु वखाणे ॥ नानक नामि रते बैरागी निज घरि ताड़ी लावणिआ ॥ ८ ॥ ३ ॥ ४ ॥ माझ महला ३ ॥ सबदि मरै सु मुआ जापै ॥ कालु न चापै दुखु न संतापै ॥ जोती विचि मिलि जोति समाणी सुणि मन सचि समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि कै नाइ सोभा पावणिआ ॥ सतिगुरु सेवि सचि चितु लाइआ गुरमती सहजि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ कची कचा चीरु हंढाए ॥ दूजै लागी महलु न पाए॥

और सत्य का श्रृंगार करके वह प्रभु–पति के साथ रमण करती है ॥ ५ ॥ परमात्मा ने अनेको योनियों के जीव उत्पन्न किए हैं परन्तु जिस पर वह कृपा करता है उसी की गुरु से भेंट होती है । प्रभु के सेवकों के पाप कट जाते हैं और वे सदा निर्मल बने रहकर सच्चे नाम के आश्रय में प्रभु द्वार पर शोभायमान होते हैं ॥ ६ ॥ उस प्रभु द्वारा लेखा माँगने पर कौन लेखा दे सकता है। यदि कुछ गणनाओं के बल पर लेखा दिया भी जाए तब भी कोई सुख नहीं मिलता । वह सच्चा प्रभु स्वयं ही कृपा करेगा और कृपा करके अपने में मिला लेगा ॥ ७ ॥ हे प्रभु, तू ही करता है और कार्य करवाता है और पूर्ण शब्द–गुरु में जीव को लीन करता है । हे नानक, जिसे प्रभु नाम प्राप्त होता है उसको सर्वत्र आदर मिलता है और प्रभु स्वयं ही उसे अपने चरणों में जोड़ लेता है ॥ ८ ॥ २ ॥ ३ ॥ माझ महला ३ ॥ परमात्मा स्वयं ही प्रछन्नरूप से सब में विचरण कर रहा है । जिन्होंने गुरमुख बनकर उसे देखा है उनका ही मन तृप्त हो जाता है । तृष्णा को छोड़ कर ऐसे व्यक्तियों ने सहज सुख पा लिया है और एक ही प्रभु को मन में बसा लिया है ॥ १ ॥ मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने केवल एक परमात्मा के साथ मन को लगा लिया है । गुरु की शिक्षा लेकर जिनका मन परमात्मा के ही चरणों में टिक गया है वे ही उस सत्य रूपी प्रभु के रंग में रंगे गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुमार्ग पर पड़े हुए इस संसार को हे प्रभु, स्वयं तूने ही भटका रखा है । एक प्रभु को विस्मृत कर यह जगत् दूसरों के पीछे लालच में भाग रहा है । यह संसार सदैव भ्रम में भूला भटक रहा है और प्रभु नाम के बिना दुख पा रहा है ॥ २ ॥ जो कर्मों के विधाता प्रभु के रंग में रंग गए हैं वे गुरु की सेवा के माध्यम से चारों युगों में जाने माने जाते हैं । जिसे प्रभु स्वयं बड़प्पन प्रदान करे वह ही हरि–नाम में लीन हो जाता है ॥ ३ ॥ जिसने माया के मोह में परमात्मा को याद नहीं किया वह यमपुरी में बँधा हुआ दुख सहता है । उस अन्धे बहरे व्यक्ति को कुछ नज़र नहीं आता और उस मनमुख को उसके पाप ही नष्ट कर देते हैं ॥ ४ ॥ जिनकी सुरति को तूने स्वयं अपने में लगाया है वे ही उस एक के रंग में रंग जाते हैं । उनकी भावना–भक्ति हे प्रभु, तेरे मन को भी अच्छी लगती है । वे सदैव सुखदाता और सब इच्छाओं को पूर्ण करने वाले सद्गुरु परमात्मा की सेवा करते हैं ॥ ५ ॥ हे प्रभु, मैं सदा तुम्हारी शरण मैं ही हूँ । तू बड़प्पन देकर स्वयं ही कृपा करता है । जो प्रभु–नाम का सुमिरन करते हैं यम रूपी काल उनके पास नहीं आ सकता ॥ ६ ॥ जो प्रभु को भाते हैं वे ही सदैव उसके रंग में रंगे रहते हैं । मेरे प्रभु ने उनको अपने साथ मिला लिया है । ऐसे जीव ही उस सत्य रूपी परमात्मा की शरण में पड़े रहते हैं और हे प्रभु, तू स्वयं ही उन्हें सत्य की सूझ प्रदान करता है ॥ ७ ॥ जिन्होंने सत्य को जान लिया है वे सत्य में समाहित हो गए हैं । वे ही अब हरि–गुण गाते हैं और सत्य रूपी प्रभु का व्याख्यान करते हैं । हे नानक, परमात्मा के नाम में रंगे व्यक्ति माया के मोह से वैराग्यमान हो जाते हैं और सदैव अपने अन्दर ही ध्यान लगाए रहते हैं ॥ ८ ॥ ३ ॥ ४ ॥ माझ महला ३ ॥ शब्द के अन्तर्गत मर कर अर्थात लीन होकर ऐसा मृतक व्यक्ति सारे संसार में सम्मान प्राप्त करता है । उसे अब न तो काल दबाता है और न ही उसे दुख दुखी करता है; उसकी ज्योति परम ज्योति में मिल चुकी होती है और प्रभु का गुणगान करके वह सत्य में लीन हो जाता है ॥ १ ॥ मैं सदा उन पर बलिहारी जाता हूँ जो परमात्मा के नाम में लीन होकर शोभा प्राप्त करते हैं । उन्होंने सद्गुरु की सेवा करके और सत्य में चित्त को लगाकर गुरमति के अनुरूप चलते हुए सहज में लीनता प्राप्त कर ली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह शरीर कमज़ोर कपड़े की तरह नाशवान है परन्तु यह जीवन उसी जर्जर कपड़े को ही पहने चला जा रहा है । द्वैतभाव में लगा हुआ यह जीवन उस प्रभु का स्थान नहीं पा सकता।

अनदिनु जलदी फिरै दिनु राती बिनु पिर बहु दुखु पावणिआ ॥ २ ॥ देही जाति न आगै जाए ॥ जिथै लेखा मंगीऐ तिथै छुटै सचु कमाए ॥ सतिगुरु सेवनि से धनवंते ऐथै ओथै नामि समावणिआ ॥ ३ ॥ भै भाइ सीगारु बणाए ॥ गुर परसादी महलु घरु पाए ॥ अनदिनु सदा रवै दिनु राती मजीठै रंगु बणावणिआ ॥ ४ ॥ सभना पिरु वसै सदा नाले ॥ गुर परसादी को नदरि निहाले ॥ मेरा प्रभु अति ऊचो ऊचा करि किरपा आपि मिलावणिआ ॥ ५ ॥ माइआ मोहि इहु जगु सुता ॥ नामु विसारि अंति विगुता ॥ जिस ते सुता सो जागाए गुरमति सोझी पावणिआ ॥ ६ ॥ अपिउ पीऐ सो भरमु गवाए ॥ गुर परसादि मुकति गति पाए ॥ भगती रता सदा बैरागी आपु मारि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ आपि उपाए धंधै लाए ॥ लख चउरासी रिजकु आपि अपड़ाए ॥ नानक नामु धिआइ सचि राते जो तिसु भावै सु कार करावणिआ ॥ ८ ॥ ४ ॥ ५ ॥ माझ महला ३ ॥ अंदरि हीरा लालु बणाइआ ॥ गुर कै सबदि परखि परखाइआ ॥ जिन सचु पलै सचु वखाणहि सचु कसवटी लावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुर की बाणी मंनि वसावणिआ ॥ अंजन माहि निरंजनु पाइआ जोती जोति मिलावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसु काइआ अंदरि बहुतु पसारा ॥ नामु निरंजनु अति अगम अपारा ॥ गुरमुखि होवै सोई पाए आपे बखसि मिलावणिआ ॥ २ ॥ मेरा ठाकुरु सचु द्रिड़ाए ॥ गुर परसादी सचि चितु लाए ॥ सचो सचु वरतै सभनी थाई सचे सचि समावणिआ ॥ ३ ॥ वेपरवाहु सचु मेरा पिआरा ॥ किलविख अवगण काटणहारा ॥ प्रेम प्रीति सदा धिआईऐ भै भाइ भगति द्रिड़ावणिआ ॥ ४ ॥ तेरी भगति सची जे सचे भावै ॥ आपे देइ न पछोतावै ॥ सभना जीआ का एको दाता सबदे मारि जीवावणिआ ॥ ५ ॥ हरि तुधु बाझहु मै कोई नाही ॥ हरि तुधै सेवी तै तुधु सालाही ॥ आपे मेलि लैहु प्रभ साचे पूरै करमि तूं पावणिआ ॥ ६ ॥ मै होरु न कोई तुधै जेहा ॥ तेरी नदरी सीझसि देहा ॥ अनदिनु सारि समालि हरि राखहि गुरमुखि सहजि समावणिआ ॥ ७ ॥ तुधु जेवडु मै होरु न कोई ॥ तुधु आपे सिरजी आपे गोई ॥

यह कच्ची काया दिन–रात जलती हुई भटक रही है और इसे प्रियतम–प्रभु के बिना बहुत दुख मिल रहा है ॥ २ ॥ यह काया और जाति आदि आगे साथ नहीं जाते । हिसाब माँगने पर व्यक्ति तत्क्षण तभी छूटता है यदि उसने सत्य को आचरण बनाया हो । जो सद्‌गुरु की सेवा करते हैं वही धनवान हैं और वे ही इस लोक और परलोक में नाम में लीन बने रहते हैं ॥ ३ ॥ यदि पति–प्रभु के भय और प्रेम का श्रृंगार किया जाए तो गुरु कृपा से प्रभु–पति का ठिकाना अपने अन्दर ही मिल जाता है । ऐसा व्यक्ति हर रोज़, दिन–रात परमात्मा के नाम का सुमिरन करता है और अपने प्राणों पर मजीठ रंग जैसा पक्का प्रभु नाम का रंग चढ़ा लेता है ॥ ४ ॥ सबका प्रिय प्रभु उनके साथ ही बसता हैं परन्तु गुरु की कृपा से कोई बिरला ही उसको अपनी आँखों से देखकर प्रसन्न होता है । मेरा प्यारा प्रभु बहुत ही ऊँचा है और वह स्वयं ही कृपा करके जीवों को अपने साथ मिला लेता है ॥ ५ ॥ यह संसार माया मोह में सो रहा है और नाम का विस्मरण करके अन्ततः बर्बाद हुआ जा रहा है । जिसने इसे सुलाया है वह प्रभु ही इसे जगाएगा । यह तथ्य गुरु द्वारा सुझा दिए जाने पर ही सूझता है ॥ ६ ॥ जो नाम रूपी अमृत का पान कर लेता है उसके भ्रम दूर हो जाते हैं और गुरु की कृपा से वह मुक्ति एवं गति प्राप्त कर लेता है । भक्ति में लीन वह व्यक्ति सदा वैराग्यवान ही है और अपने अहम् को मार कर वह प्रेमपूर्वक प्रभु से मिलता है ॥ ७ ॥ उसने जीवों को स्वयं ही उत्पन्न किया है और उन्हें काम–धन्धों में लगाया है । चौरासी लाख योनियों के जीवों का वह स्वयं ही पालन पोषण करता है । हे नानक, जिन्होंने नाम का सुमिरन किया है वे सत्य में रंग गए हैं और जो प्रभु को अच्छा लगता है, वे वही कार्य करते हैं ॥ ८ ॥ ४ ॥ ५ ॥ माझ महला ३ ॥ मनुष्य के अन्दर ही नाम रूपी रत्न स्थित है जिसे शब्द–गुरु के माध्यम से ही देखा परखा जाता है । जिनके पास सत्य है वे सत्य ही कहते हैं और वे ही सत्य की कसौटी पर खरे उतरते हैं ॥ १ ॥ मैं उन पर बार बार बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने शब्द–गुरु रूपी वाणी को मन में बसा लिया है । उन्होंने ही इस संसार रूपी माया में रहते हुए निरंजन प्रभु को प्राप्त किया है और अपनी ज्योति को प्रभु की ज्योति में मिला दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मानव–शरीर में बहुत कुछ बिखरा हुआ पड़ा है । इसी में ही अगम्य अपार निरंजन प्रभु का नाम भी है । जो गुरमुख होता है वही इसकी सूझ प्राप्त करता है और प्रभु कृपा करके स्वयं ही उसे अपने से मिला लेता है ॥ २ ॥ मेरा स्वामी प्रभु सत्य को ही बार–बार समझाता है और जीव गुरु की कृपा से ही सत्य को चित्त में धारण करता है । सब स्थानों पर केवल सत्य का ही व्यवहार स्थाई हैं और सच्चे मन द्वारा ही उस परम सत्य में समाहित हुआ जाता है । मेरा प्यारा सत्य स्वरूप प्रभु बेपरवाह है ॥ ३ ॥ वही पापों को और मेरे अवगुणों को समाप्त करने वाला है । प्रेम और प्रीतिपूर्वक सदैव उसका सुमिरन किया जाना चाहिए क्योंकि उसके भय की भावना के साथ ही मन में भक्ति दृढ़ होती है ॥ ४ ॥ हे सत्य–प्रभु, यदि तुझे भाए तो ही तेरी भक्ति सच्ची है । वह प्रभु स्वयं देता है और पछताता नहीं है । सब जीवों को देने वाला दाता वह एक प्रभु ही है जो शब्द के माध्यम से विकारों की ओर से मृत करके जीव को नया जीवन प्रदान करता है ॥ ५ ॥ हे प्रभु, तेरे बिना मेरा कोई नहीं है । मैं तेरी ही सेवा करता हूँ और हे हरि, मैं तेरा ही गुणानुवाद करता हूँ । हे मेरे सच्चे प्रभु, मुझे अपने से मिला ले क्योंकि तुझे पूर्ण भाग्यशाली होने पर ही पाया जा सकता है ॥ ६ ॥ तेरे जैसा मेरे लिए अन्य कोई नहीं है । तेरी कृपादृष्टि से ही मेरी देह सफल होती है । हे प्रभु ! तू ही सदैव सबकी खोज खबर रखता है और गुरमुख बनकर ही सहज में समाया जा सकता है ॥ ७ ॥ तेरे जैसा मेरे लिए अन्य कोई नहीं है । हे प्रभु, तूने ही सृष्टि की सर्जना की है और तूने स्वयं ही उसे नष्ट भी किया है ।

तूं आपे ही घड़ि भंनि सवारहि नानक नामि सुहावणिआ ॥ ८ ॥ ५ ॥ ६ ॥
माझ महला ३ ॥ सभ घट आपे भोगणहारा ॥ अलखु वरतै अगम अपारा ॥
गुर कै सबदि मेरा हरि प्रभु धिआईऐ सहजे सचि समावणिआ ॥ १ ॥ हउ
वारी जीउ वारी गुर सबदु मंनि वसावणिआ ॥ सबदु सूझै ता मन सिउ लूझै
मनसा मारि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच दूत मुहहि संसारा ॥ मनमुख
अंधे सुधि न सारा ॥ गुरमुखि होवै सु अपणा घरु राखै पंच दूत सबदि
पचावणिआ ॥ २ ॥ इकि गुरमुखि सदा सचै रंगि राते ॥ सहजे प्रभु सेवहि
अनदिनु माते ॥ मिलि प्रीतम सचे गुण गावहि हरि दरि सोभा पावणिआ ॥ ३ ॥
एकम एकै आपु उपाइआ ॥ दुबिधा दूजा त्रिबिधि माइआ ॥ चउथी पउड़ी
गुरमुखि ऊची सचो सचु कमावणिआ ॥ ४ ॥ सभु है सचा जे सचे भावै ॥
जिनि सचु जाता सो सहजि समावै ॥ गुरमुखि करणी सचे सेवहि साचे जाइ
समावणिआ ॥ ५ ॥ सचे बाझहु को अवरु न दूआ ॥ दूजै लागि जगु खपि खपि
मूआ ॥ गुरमुखि होवै सु एको जाणै एको सेवि सुखु पावणिआ ॥ ६ ॥
जीअ जंत सभि सरणि तुमारी ॥ आपे धरि देखहि कची पकी सारी ॥
अनदिनु आपे कार कराए आपे मेलि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ तूं आपे मेलहि
वेखहि हदूरि ॥ सभ महि आपि रहिआ भरपूरि ॥ नानक आपे आपि वरतै
गुरमुखि सोझी पावणिआ ॥ ८ ॥ ६ ॥ ७ ॥ माझ महला ३ ॥ अंम्रित बाणी
गुर की मीठी ॥ गुरमुखि विरलै किनै चखि डीठी ॥ अंतरि परगासु महा रसु
पीवै दरि सचै सबदु वजावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुर चरणी
चितु लावणिआ ॥ सतिगुरु है अंम्रित सरु साचा मनु नावै मैलु चुकावणिआ
॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा सचे किनै अंतु न पाइआ ॥ गुर परसादि किनै विरलै
चितु लाइआ ॥ तुधु सालाहि न रजा कबहूं सचे नावै की भुख लावणिआ ॥ २ ॥
एको वेखा अवरु न बीआ ॥ गुर परसादी अंम्रितु पीआ ॥ गुर कै सबदि तिखा
निवारी सहजे सूखि समावणिआ ॥ ३ ॥ रतनु पदारथु पलरि तिआगै ॥
मनमुखु अंधा दूजै भाइ लागै ॥ जो बीजै सोई फलु पाए सुपनै सुखु न
पावणिआ ॥ ४ ॥ अपनी किरपा करे सोई जनु पाए ॥ गुर का सबदु

तू स्वयं ही बनाता तोड़ता और सँवारता है। हे नानक, प्रभु स्वयं ही अपने नाम की कृपा से जीवों के जीवन सुन्दर बनाता है ॥ ८ ॥ ५ ॥ ६ ॥ माझ महला ३ ॥ सभी शरीरों में व्याप्त होकर प्रभु स्वयं ही सब कुछ भोग रहा है। वह अदृष्ट रूप में सर्वत्र विद्यमान है, अगम्य है एवं अनन्त है। शब्द-गुरु के माध्यम से प्रभु का सुमिरन किया जाना चाहिए और ऐसा करने से स्वतः ही व्यक्ति सत्य में समाहित हो जाता है ॥ १ ॥ जिन्होंने शब्द गुरु को मन में बसाया है मैं सदा उन पर बलिहारी जाता हूँ। जब शब्द की पहचान हो जाती है तो व्यक्ति अपने मन के साथ संघर्ष करता है और मन की कामनाओं को समाप्त करके प्रभु में लीन हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच विकार सारे संसार को लूटते हैं और मनमुख अन्धे व्यक्ति को इसका पता ही नहीं चलता। गुरमुख बनकर अपने घर को बचाया जाता है और शब्द के माध्यम से इन पंच विकारों को नष्ट किया जाता है ॥ २ ॥ गुरमुख व्यक्ति सदा सत्य-प्रभु के रंग में रंगे रहते हैं और सहजभाव में ही प्रभु की सेवा करते हैं और सदैव मस्त रहते हैं। जो व्यक्ति प्रभु-प्रियतम को मिलकर उस सत्य-प्रभु के ही गुण गाते हैं, उन्हीं को ही प्रभु के द्वार पर शोभा प्राप्त होती है ॥ ३ ॥ पहले उस एक प्रभु ने स्वयं को प्रकट किया, दूसरा उसने द्वैत भाव और त्रिगुणात्मक माया को उत्पन्न किया। गुरमुख व्यक्ति माया से अप्रभावित ऊँची अवस्था में रहते हैं और केवल सत्य पर ही आचरण करते हैं ॥ ४ ॥ यदि प्रभु को अच्छा लगे तो व्यक्ति को भी सब कुछ सत्य ही प्रतीत होता है और जिन्होंने सत्य को जान लिया है वे सहज अवस्था में लीन हो जाते हैं। गुरमुख व्यक्ति सदैव अपने कर्म के सच्चे होते हैं; सत्य प्रभु का ही सुमिरन करते हैं तथा सत्य में ही समा जाते हैं ॥ ५ ॥ सत्य-प्रभु के बिना दूसरा अन्य कोई नहीं है और द्वैतभाव में लगकर संसार उलझ-उलझ कर मर रहा है। गुरमुख व्यक्ति केवल एक को ही जानता है और यह भी जानता है कि उस एक का सुमिरन करने से ही सुख प्राप्त होता है ॥ ६ ॥ हे प्रभु, संसार के सभी जीव-जन्तु सब तुम्हारी शरण में हैं। इस जगत की चौपड़ रूपी खेल को तू स्वयं ही कच्ची पक्की गोटियों से अर्थात कच्चे और स्वच्छ जीवन वाले व्यक्तियों से रच कर उनकी संभाल करता है। हर रोज़ प्रभु स्वयं ही जीवों से कार्य करवाता है और स्वयं ही उन्हें अपने से मिला लेता है ॥ ७ ॥ हे प्रभु, तू स्वयं ही सब की संभाल करता है और सब को अपने से मिलाता है। तू ही सब में व्याप्त है। हे नानक, सब स्थानों में वह प्रभु ही गतिशील है, केवल गुरमुख व्यक्तियों को ही यह बात समझ में आती है ॥ ८ ॥ ६ ॥ ७॥ माझ महला ३ ॥ गुरु की अमृत-वाणी बहुत ही मिठास देने वाली है परन्तु कोई बिरला गुरमुख ही इसे चख कर इसके प्रभाव को देखता है। इस श्रेष्ठ रस को पीने वाले व्यक्ति का हृदय प्रकाशमान हो उठता है और शब्द-गुरु उसे सत्य परमात्मा के द्वार पर टिकाए रखता है ॥ १ ॥ गुरु के चरणों में चित्त लगाने वालों पर मैं बार-बार बलिहारी जाता हूँ। सद्गुरु अमृत का सच्चा सरोवर है और प्रभु का नाम मन की मैल को समाप्त करने वाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे सत्य-प्रभु, कोई भी तेरा ओर-छोर नहीं जान सका। गुरु की कृपा से किसी बिरले ने ही प्रभु में चित्त लगाया है। तेरा गुणानुवाद करता हुआ मेरा मन कभी भी तृप्त न हो और तेरे सत्य-नाम की भूख मुझे सदा ही बनी रहे ॥ २ ॥ मैं केवल एक प्रभु को ही देखूँ अन्य किसी को नहीं क्योंकि गुरु की कृपा से मैंने अमृत रस का पान कर लिया है। गुरु के शब्द अर्थात शब्द-गुरु ने मेरी प्यास बुझा दी है और मैं सहज सुख में ही लीन हो गया हूँ ॥ ३ ॥ सांसारिक रत्नों एवं पदार्थों को मैंने धान की पुआल की तरह त्याग दिया है। केवल अन्धा मनमुख व्यक्ति ही द्वैत भाव में लगा रह सकता है। ऐसा व्यक्ति जो बोता है वही फल काटता है और उसे स्वप्न में भी सुख प्राप्त नहीं होता ॥ ४ ॥ जिस पर प्रभु कृपा करता है उसी व्यक्ति को सुख प्राप्त होता है और वही

मंनि वसाए ॥ अनदिनु सदा रहै भै अंदरि भै मारि भरमु चुकावणिआ ॥ ५ ॥
भरमु चुकाइआ सदा सुखु पाइआ ॥ गुरपरसादि परम पदु पाइआ ॥ अंतरु निरमलु
निरमल बाणी हरि गुण सहजे गावणिआ ॥ ६ ॥ सिम्रिति सासत बेद वखाणै ॥
भरमे भूला ततु न जाणै ॥ बिनु सतिगुर सेवे सुखु न पाए दुखो दुखु कमावणिआ
॥ ७ ॥ आपि करे किसु आखै कोई ॥ आखणि जाईऐ जे भूला होई ॥
नानक आपे करे कराए नामे नामि समावणिआ ॥ ८ ॥ ७ ॥ ८ ॥ माझ महला
३ ॥ आपे रंगे सहजि सुभाए ॥ गुर कै सबदि हरि रंगु चड़ाए ॥ मनु तनु रता
रसना रंगि चलूली भै भाइ रंगु चड़ावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी
निरभउ मंनि वसावणिआ ॥ गुर किरपा ते हरि निरभउ धिआइआ बिखु भउजलु
सबदि तरावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख मुगध करहि चतुराई ॥ नाता धोता
थाइ न पाई ॥ जेहा आइआ तेहा जासी करि अवगण पछोतावणिआ ॥ २ ॥
मनमुख अंधे किछू न सूझै ॥ मरणु लिखाइ आए नही बूझै ॥ मनमुख करम
करे नही पाए बिनु नावै जनमु गवावणिआ ॥ ३ ॥ सचु करणी सबदु है सारु ॥
पूरै गुरि पाईऐ मोख दुआरु ॥ अनदिनु बाणी सबदि सुणाए सचि राते रंगि
रंगावणिआ ॥ ४ ॥ रसना हरि रसि राती रंगु लाए ॥ मनु तनु मोहिआ
सहजि सुभाए ॥ सहजे प्रीतमु पिआरा पाइआ सहजे सहजि मिलावणिआ ॥ ५ ॥
जिसु अंदरि रंगु सोई गुण गावै ॥ गुर कै सबदि सहजे सुखि समावै ॥
हउ बलिहारी सदा तिन विटहु गुर सेवा चितु लावणिआ ॥ ६ ॥ सचा सचो
सचि पतीजै ॥ गुर परसादी अंदरु भीजै ॥ बैसि सुथानि हरि गुण गावहि आपे
करि सति मनावणिआ ॥ ७ ॥ जिस नो नदरि करे सो पाए ॥ गुर परसादी
हउमै जाए ॥ नानक नामु वसै मन अंतरि दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ ८ ॥ ८ ॥
९ ॥ माझ महला ३ ॥ सतिगुरु सेविऐ वडी वडिआई ॥ हरि जी अचिंतु
वसै मनि आई ॥ हरि जीउ सफलिओ बिरखु है अंम्रितु जिनि पीता तिसु
तिखा लहावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सचु संगति मेलि मिलावणिआ ॥
हरि सतसंगति आपे मेलै गुर सबदी हरि गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥

शब्द–गुरु को मन में बसाता है । वह सदैव उस प्रभु के भय में रहता है और भ्रम को मारकर समाप्त कर देता है ॥ ५ ॥ जब व्यक्ति का भ्रम चुक जाता है तो वह सदैव सुख प्राप्त करता है और गुरु की कृपा से उसे परम पद मिल जाता है । उसका अन्तर्मन निर्मल हो जाता है और वह निर्मल वाणी में टिक कर सहज भाव से ही प्रभु के गुणों का गायन करता रहता है ॥ ६ ॥ व्यक्ति स्मृति–शास्त्र वेद आदि की व्याख्या करता है परन्तु स्वयं भ्रमों में भूला रहता है और वास्तविकता को नहीं जानता । सद्गुरु की सेवा के बिना उसे सुख प्राप्त नहीं होता और वह दुख ही दुख पैदा करता चला जाता है ॥ ७ ॥ किसी को कोई क्या कहे वह प्रभु तो यह सब स्वयं ही कर रहा है । समझाया तो तब जाए यदि व्यक्ति सचमुच ही भूला हुआ हो (व्यक्ति जानबूझ कर पाप कर्म करता है) । हे नानक, परमात्मा स्वयं ही सब कर रहा है और जीवों के माध्यम से करवा रहा है । वह स्वयं ही सर्वव्यापक होकर नाम–रूप में स्वयं में ही लीन है ॥ ८ ॥ ७ ॥ ८ ॥ माझ महला ३ ॥ प्रभु स्वयं ही जीवों को स्वाभाविक रूप से अपने नाम में रंग देता है और परमात्मा यह रंग शब्द–गुरु के माध्यम से चढ़ाता है । ऐसे व्यक्तियों का शरीर, उनकी जीभ नाम–रंग में लाल हो जाती है और प्रभु के भय और प्रेम में रखते हुए स्वयं वह प्रभु ही उन पर रंग चढ़ाता है ॥ १ ॥ मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने निर्भय प्रभु को मन में बसा लिया है । गुरु की कृपा से निर्भय प्रभु की आराधना की जाती है और शब्द के माध्यम से विष रूपी संसार सागर पार किया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनमुख मूर्ख व्यक्ति अनेकों चतुराईयां करता है परन्तु उसका नहाना धोना किसी काम नहीं आता । वह जैसा आता है वैसा ही अवगुण धारण करके पछताता हुआ यहां से चला जाता है ॥ २ ॥ मनमुख वह अन्धा व्यक्ति है जिसे कुछ भी सूझता नहीं । वह यह नहीं जानता कि व्यक्ति संसार में मरने का समय लिखा कर ही आता है । मन के पीछे लगकर वह कर्म करता रहता है और कुछ भी प्राप्त नहीं करता हुआ नाम विहीन होकर जीवन गंवा देता है ॥ ३ ॥ सत्याचरण ही करने योग्य है और शब्द ही सार–तत्व है । पूर्ण गुरु के माध्यम से ही मुक्ति का द्वार पाया जाता है । पूर्ण गुरु ही हर दिन वाणी रूपी शब्द सुनाता है और व्यक्ति सत्य में लीन होकर शब्द के रंग में रंगा जाता है । जिस व्यक्ति की जीभ परमात्मा के नाम रस में रंगी जाती है उसका मन स्वतः ही मूल सहज स्वभाव की ओर आकर्षित हो जाता है । सहज भाव में ही प्यारा प्रियतम पाया जाता है और सहज भाव में ही उस परम सहज में मिला जाता है ॥ ५ ॥ जो अन्दर से रंगा हुआ है वही उस परमात्मा के गुण गाता है और शब्द–गुरु के माध्यम से सहज रूप में ही सुख में समाहित हो जाता है । जो गुरु की सेवा में चित्त लगाते हैं मैं सदा उन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ६ ॥ जिनका हृदय सत्य बनकर उस परम सत्य के साथ प्रसन्नता अनुभव करता है वे गुरु की कृपा से अर्न्तमन से नाम–रस में भीगे हुए होते हैं । वे अच्छे स्थान पर बैठकर प्रभु का गुणानुवाद करते हैं और प्रभु स्वयं ही उनको सत्य–निश्चय दृढ़ कराता है ॥ ७ ॥ जिस पर प्रभु की कृपा होती है वही उसे प्राप्त करता है और गुरु की कृपा से उसका अहंकार चुक जाता है । हे नानक, प्रभु–नाम जिनके मन में बसता है वही उसके सत्य–द्वार पर शोभायमान होते हैं ॥ ८ ॥ ८ ॥ ९ ॥ माझ महला ३ ॥ सद्गुरु की सेवा करने से बड़प्पन प्राप्त होता है और स्वाभाविक रूप से ही हरि मन में आ बसता है । परमात्मा वह सफल वृक्ष है जिसका अमृत जिसने भी पीया उसकी प्यास समाप्त हो जाती है ॥ १ ॥ मैं उस सदसंगत पर बार–बार बलिहारी जाता हूँ जो उस प्रभु से मिला देती है । शब्द–गुरु के माध्यम से सद्संगत स्वयं ही परमात्मा से मिला देती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥

सतिगुरु सेवी सबदि सुहाइआ ॥ जिनि हरि का नामु मंनि वसाइआ ॥ हरि निरमलु हउमै मैलु गवाए दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ २ ॥ बिनु गुर नामु न पाइआ जाइ ॥ सिध साधिक रहे बिललाइ ॥ बिनु गुर सेवे सुखु न होवी पूरै भागि गुरु पावणिआ ॥ ३ ॥ इहु मनु आरसी कोई गुरमुखि वेखै ॥ मोरचा न लागै जा हउमै सोखै ॥ अनहत बाणी निरमल सबदु वजाए गुर सबदी सचि समावणिआ ॥ ४ ॥ बिनु सतिगुर किहु न देखिआ जाइ ॥ गुरि किरपा करि आपु दिता दिखाइ ॥ आपे आपि आपि मिलि रहिआ सहजे सहजि समावणिआ ॥ ५ ॥ गुरमुखि होवै सु इकसु सिउ लिव लाए ॥ दूजा भरमु गुर सबदि जलाए ॥ काइआ अंदरि वणजु करे वापारा नामु निधानु सचु पावणिआ ॥ ६ ॥ गुरमुखि करणी हरि कीरति सारु ॥ गुरमुखि पाए मोख दुआरु ॥ अनदिनु रंगि रता गुण गावै अंदरि महलि बुलावणिआ ॥ ७ ॥ सतिगुरु दाता मिलै मिलाइआ ॥ पूरै भागि मनि सबदु वसाइआ ॥ नानक नामु मिलै वडिआई हरि सचे के गुण गावणिआ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ १० ॥ माझ महला ३ ॥ आपु वंञाए ता सभ किछु पाए ॥ गुर सबदी सची लिव लाए ॥ सचु वणंजहि सचु संघरहि सचु वापारु करावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि गुण अनदिनु गावणिआ ॥ हउ तेरा तूं ठाकुरु मेरा सबदि वडिआई देवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वेला वखत सभि सुहाइआ ॥ जितु सचा मेरे मनि भाइआ ॥ सचे सेविऐ सचु वडिआई गुर किरपा ते सचु पावणिआ ॥ २ ॥ भाउ भोजनु सतिगुरि तुठै पाए ॥ अन रसु चूकै हरि रसु मंनि वसाए ॥ सचु संतोखु सहज सुखु बाणी पूरे गुर ते पावणिआ ॥ ३ ॥ सतिगुरु न सेवहि मूरख अंध गवारा ॥ फिरि ओइ किथहु पाइनि मोख दुआरा ॥ मरि मरि जंमहि फिरि फिरि आवहि जम दरि चोटा खावणिआ ॥ ४ ॥ सबदै सादु जाणहि ता आपु पछाणहि ॥ निरमल बाणी सबदि वखाणहि ॥ सचे सेवि सदा सुखु पाइनि नउ निधि नामु मंनि वसावणिआ ॥ ५ ॥ सो थानु सुहाइआ जो हरि मनि भाइआ ॥ सतसंगति बहि हरि गुण गाइआ ॥ अनदिनु हरि सालाहहि साचा निरमल नादु वजावणिआ ॥

सद्‌गुरु की सेवा करने से शब्द मुझे अच्छा लगने लग गया है और हरि का नाम मेरे मन में बस गया है । वह निर्मल प्रभु अहंकार की मैल दूर कर देता है और ऐसा व्यक्ति सत्य–प्रभु के द्वार पर सम्मान पाता है ॥ २ ॥ गुरु के बिना नाम की प्राप्ति नहीं होती और इसीलिए सिद्ध एवं साधक गण इसे प्राप्त करने के लिए तड़पते रहते हैं। गुरु की सेवा के बिना सुख नहीं मिलता और गुरु की प्राप्ति पूर्ण भाग्योदय के साथ ही होती है ॥ ३ ॥ व्यक्ति का मन दर्पण के समान है परन्तु अपना मूल रूप कोई गुरमुख बनकर ही देख सकता है । यदि अहंकार चुक जाए तो इस मन रूपी दर्पण को जंग नहीं लगता । अनहद वाणी को निर्मल शब्द ही सुनाता है और शब्द–गुरु के माध्यम से ही सत्य में लीन हुआ जाता है ॥ ४ ॥ सदगुरु की शरण के बिना किसी भी तरह अपने आप को देखा परखा नहीं जा सकता । गुरु कृपा करके व्यक्ति का अपना आप उसे दिखा देता है । परमात्मा स्वयं ही सब में व्याप्त है और अपने आप को देखने परखने वाला व्यक्ति पूर्ण शान्त अवस्था में लीन हो जाता है ॥ ५ ॥ यदि व्यक्ति गुरमुख बने तब ही उसकी सुरति केवल एक ही प्रभु में लगती है । शब्द–गुरु द्वैतभाव के भ्रम को जला कर नष्ट कर देता है । तब व्यक्ति शरीर के अन्दर ही नाम का कार्य–व्यापार करता है और नाम–भण्डार के माध्यम से सत्य को प्राप्त करता है ॥ ६॥ गुरमुख व्यक्ति प्रभु गुणानुवाद को ही करने योग्य कार्य मानता है । गुरमुख बन कर ही व्यक्ति विकारों से मुक्ति का द्वार पाता है । वह प्रतिदिन प्रभु–रंग में रंगा हुआ उसके गुण गाता है और ऐसे व्यक्ति को ही प्रभु के महल में से बुलावा आता है ॥ ७ ॥ सद्‌गुरु ही यह गुणानुवाद का दान देने वाला है परन्तु पूर्ण भाग्योदय के बाद ही मन में शब्द–गुरु बसता है । उस सच्चे प्रभु के गुणानुवाद के कारण ही हे नानक, प्रभु नाम के बड़प्पन की कृपा प्राप्त होती है ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ माझ महला ३ ॥ जो व्यक्ति अपने अन्दर से अहंकार को भगा देता है उसे सब कुछ प्राप्त हो जाता है और उसी की सुरति शब्द–गुरु में लग जाती है । अब वह व्यक्ति सत्य का ही व्यापार करता है, सत्य का ही संग्रह करता है और सत्य का ही सौदा लेता है ॥ १ ॥ जो दिन–रात प्रभु का गुणानुवाद करते हैं मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ । हे मेरे ठाकुर, तू मेरा है और मैं तेरा हूँ और शब्द के माध्यम से ही तू बड़प्पन प्रदान करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही समय और मुहूर्त सुहावना है जिसमें वह सच्चा प्रभु मेरे मन को भाता रहता है । सत्य का सुमिरन करने से सत्य का बड़प्पन प्राप्त होता है और गुरु की कृपा से ही सत्य की प्राप्ति होती है ॥ २ ॥ सद्‌गुरु प्रसन्न हो जाए तो प्रेम का भोजन प्राप्त हो जाता है । अन्य रसों से मन उठ जाता है और हरि–रस मन में आ बसता है । सत्य, सन्तुष्टि, सहज और सुखदायक वाणी अर्थात शब्द पूर्ण गुरु (परमात्मा) से ही प्राप्त होते हैं ॥ ३ ॥ जो सद्‌गुरु का सुमिरन नहीं करते वे मूर्ख, अन्धे और गवाँर हैं फिर भला उन्हें मोक्ष का द्वार कैसे मिलेगा । वे मर–मर कर जन्मते पुनः आते जाते हैं और यम के द्वार पर मार खाते रहते हैं ॥ ४ ॥ जिन्होंने शब्द के स्वाद को जान लिया है उन्होंने वास्तव में अपने आप को पहचान लिया है । शब्द के माध्यम से ही प्रभु की निर्मल वाणी का व्याख्यान होता है । सत्य का सुमिरन करते हुए सदा सुख पाया जाता है और सत्य ही नवनिधियों के रूप प्रभु–नाम को मन में बसाने वाला होता है ॥ ५ ॥ जो स्थान प्रभु को अच्छा लगता है वही शोभायमान है । वहीं पर सद्‌संगत के रूप में बैठकर व्यक्ति प्रभु के गुण गाता है । सद्‌संगत में ही सदैव हरि की स्तुति की जाती है और सद्‌संगत में ही आध्यात्मिक मण्डल का

६ ॥ मनमुख खोटी रासि खोटा पासारा ॥ कूड़ु कमावनि दुखु लागै भारा ॥ भरमे भूले फिरनि दिन राती मरि जनमहि जनमु गवावणिआ ॥ ७ ॥ सचा साहिबु मै अति पिआरा ॥ पूरे गुर कै सबदि अधारा ॥ नानक नामि मिलै वडिआई दुखु सुखु सम करि जानणिआ ॥ ८ ॥ १० ॥ ११ ॥ माझ महला ३ ॥ तेरीआ खाणी तेरीआ बाणी ॥ बिनु नावै सभ भरमि भुलाणी ॥ गुर सेवा ते हरि नामु पाइआ बिनु सतिगुर कोइ न पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि सेती चितु लावणिआ ॥ हरि सचा गुर भगती पाईऐ सहजे मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु सेवे ता सभ किछु पाए ॥ जेही मनसा करि लागै तेहा फलु पाए ॥ सतिगुरु दाता सभना वथू का पूरै भागि मिलावणिआ ॥ २ ॥ इहु मनु मैला इकु न धिआए ॥ अंतरि मैलु लागी बहु दूजै भाए ॥ तटि तीरथि दिसंतरि भवै अहंकारी होरु वधेरै हउमै मलु लावणिआ ॥ ३ ॥ सतिगुरु सेवे ता मलु जाए ॥ जीवतु मरै हरि सिउ चितु लाए ॥ हरि निरमलु सचु मैलु न लागै सचि लागै मैलु गवावणिआ ॥ ४ ॥ बाझु गुरू है अंध गुबारा ॥ अगिआनी अंधा अंधु अंधारा ॥ बिसटा के कीड़े बिसटा कमावहि फिरि बिसटा माहि पचावणिआ ॥ ५ ॥ मुकते सेवे मुकता होवै ॥ हउमै ममता सबदे खोवै ॥ अनदिनु हरि जीउ सचा सेवी पूरै भागि गुरु पावणिआ ॥ ६ ॥ आपे बखसे मेलि मिलाए ॥ पूरे गुर ते नामु निधि पाए ॥ सचै नामि सदा मनु सचा सचु सेवे दुखु गवावणिआ ॥ ७ ॥ सदा हजूरि दूरि न जाणहु ॥ गुर सबदी हरि अंतरि पछाणहु ॥ नानक नामि मिलै वडिआई पूरे गुर ते पावणिआ ॥ ८ ॥ ११ ॥ १२ ॥ माझ महला ३ ॥ ऐथै साचे सु आगै साचे ॥ मनु सचा सचै सबदि राचे ॥ सचा सेवहि सचु कमावहि सचो सचु कमावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सचा नामु मंनि वसावणिआ ॥ सचे सेवहि सचि समावहि सचे के गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंडित पड़हि सादु न पावहि ॥ दूजै भाइ माइआ मनु भरमावहि ॥ माइआ मोहि सभ सुधि गवाई करि अवगण पछोतावणिआ ॥ २ ॥ सतिगुरु मिलै ता ततु पाए ॥ हरि का नामु मंनि

शब्द रूपी नाद प्रकट होता है ॥ ६ ॥ मनमुख व्यक्ति की रास भी खोटी होती है और उसके कार्य व्यापार का प्रसार भी खोटा होता है । मनमुख व्यक्ति झूठ की कमाई करते हैं और उन्हें भारी दुखों से गुजरना पड़ता है । वे दिन–रात भ्रमों में भूले फिरते हैं और बार–बार जन्मते मरते इस जीवन को गँवा देते हैं ॥ ७ ॥ वह सच्चा साहिब प्रभु मुझे अत्यन्त प्रिय है । पूर्ण शब्द–गुरु में लीन होकर मैंने प्रभु को अपने जीवन का आधार बना लिया है । हे नानक, प्रभु नाम में लीन होने पर ही बड़प्पन मिलता है और तब ही दुख–सुख को समान रूप में माना जाता है ॥ ८ ॥ १० ॥ ११ ॥ माझ महला ३॥ हे प्रभु, उत्पत्ति के स्रोत और विभिन्न जीवों की विभिन्न बोलियाँ सब तेरी ही हैं । नाम से विहीन जीव भ्रमों में भूले रहते हैं क्योंकि गुरु की सेवा से ही हरि–नाम की प्राप्ति होती है और सद्गुरु के बिना कोई कुछ नहीं पा सका है ॥ १ ॥ जिन्होंने परमात्मा के साथ चित्त जोड़ लिया है मैं उन पर बार–बार बलिहारी जाता हूँ । गुरु की सेवा से ही सत्य–प्रभु को पाया जाता है और स्वाभाविक ही वह मन में आ बसता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सद्गुरु की सेवा से सब कुछ प्राप्त हो जाता है । व्यक्ति जैसी मनोकामना से सेवा करता है वैसा ही उसको फल मिलता है । सद्गुरु (परमात्मा) सभी वस्तुओं का दाता है और पूर्ण भाग्योदय के साथ ही उससे मेल होता है ॥ २ ॥ जीव का मैला मन उस एक प्रभु की आराधना नहीं करता क्योंकि द्वैतभाव से उसके अन्तर्मन में मैल लगी हुई है । अहंकारी जीव, तीर्थों, देश, देशान्तरों, नदियों का भ्रमण करने पर और अधिक अहंकार बढ़ाकर मन को और अधिक मैल लगा लेता है ॥ ३ ॥ सद्गुरु की सेवा करे तभी यह मैल जाती है और यह तभी सम्भव है यदि जीवन में ही व्यक्ति विकारों की ओर से मृत हो जाए और परमात्मा में अपना चित्त लीन कर ले । निर्मल सत्य रूपी प्रभु को कभी मैल नहीं लगती । जो व्यक्ति सदा सत्य–प्रभु के सुमिरन में लगा रहता है वह अपने अन्तर्मन की मैल दूर कर लेता है ॥ ४ ॥ गुरु के बिना चारों ओर घोर अन्धकार है । अज्ञानी व्यक्ति अन्धा होकर मोह के अन्धकार में ठीक उसी तरह बना रहता है जैसे विष्ठा के कीड़े विष्ठा में ही बने रहते हैं और विष्ठा में ही मर–खप जाते हैं ॥ ५ ॥ मुक्त लोगों की सेवा करने से व्यक्ति स्वयं भी मुक्त हो जाता है और शब्द के माध्यम से अहम् एवं ममता को खो देता है । ऐसा व्यक्ति प्रतिदिन सत्य–प्रभु का सुमिरन करता है परन्तु पूर्ण भाग्य से ही प्रभु प्राप्त होता है ॥ ६ ॥ जिस पर प्रभु कृपा करता है और उसे अपने साथ मिला लेता है; उसी व्यक्ति को गुरु के माध्यम से नाम का भण्डार प्राप्त होता है । सत्य रूपी नाम में लीन होने से मन सच्चा बना रहता है और सत्य का सुमिरन ही सब दुखों को गँवा देता है ॥ ७ ॥ प्रभु सदा आस–पास ही है; उसे दूर मत समझो । शब्द–गुरु के माध्यम से प्रभु की पहचान अन्तर्मन में ही करो । हे नानक, प्रभु–नाम में लीन रहने से ही सम्मान प्राप्त होता है और वह नाम पूर्ण गुरु (परमात्मा) से ही पाया जाता है ॥ ८ ॥ ११ ॥ १२ ॥ माझ महला ३ ॥ जो इस लोक में सच्चा है वह परलोक में भी सच्चा ही रहता है । सत्य शब्द में लीन होकर ही मन सच्चा बनता है । जो सत्य का सुमिरन करता है और सत्य की कमाई करता है वह फिर सत्य का ही कार्य व्यापार करता चला जाता है ॥ १ ॥ प्रभु के सच्चे नाम को मन में बसाने वालों पर मैं बार–बार बलिहारी जाता हूँ। सत्य प्रभु के नाम का गुणानुवाद करने वाले सदैव सत्य का ही सुमिरन करते हैं और सत्य में ही समा जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंडित पढ़ते–लिखते तो बहुत हैं पर उन्हें आनन्द प्राप्त नहीं होता क्योंकि उनका मन मायावी द्वैतभाव में लगकर भटकता रहता है । माया से मोह लगाकर उन्होंने अपनी चेतनता गवाँ दी होती है और अब वे अपने अवगुणों के कारण पछता रहे होते हैं ॥ २ ॥ सद्गुरु प्राप्त हो तो वास्तविक तत्व रूपी परमात्मा का पता लगता है और प्रभु का नाम मन में बस जाता है ।

वसाए ॥ सबदि मरै मनु मारै अपुना मुकती का दरु पावणिआ ॥ ३ ॥ किलविख काटै क्रोधु निवारे ॥ गुर का सबदु रखै उर धारे ॥ सचि रते सदा बैरागी हउमै मारि मिलावणिआ ॥ ४ ॥ अंतरि रतनु मिलै मिलाइआ ॥ त्रिबिधि मनसा त्रिबिधि माइआ ॥ पड़ि पड़ि पंडित मोनी थके चउथे पद की सार न पावणिआ ॥ ५ ॥ आपे रंगे रंगु चड़ाए ॥ से जन राते गुर सबदि रंगाए ॥ हरि रंगु चड़िआ अति अपारा हरि रसि रसि गुण गावणिआ ॥ ६ ॥ गुरमुखि रिधि सिधि सचु संजमु सोई ॥ गुरमुखि गिआनु नामि मुकति होई ॥ गुरमुखि कार सचु कमावहि सचे सचि समावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि थापे थापि उथापे ॥ गुरमुखि जाति पति सभु आपे ॥ नानक गुरमुखि नामु धिआए नामे नामि समावणिआ ॥ ८ ॥ १२ ॥ १३ ॥ माझ महला ३ ॥ उतपति परलउ सबदे होवै ॥ सबदे ही फिरि ओपति होवै ॥ गुरमुखि वरतै सभु आपे सचा गुरमुखि उपाइ समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुरु पूरा मंनि वसावणिआ ॥ गुर ते साति भगति करे दिनु राती गुण कहि गुणी समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि धरती गुरमुखि पाणी ॥ गुरमुखि पवणु बैसंतरु खेलै विडाणी ॥ सो निगुरा जो मरि मरि जंमै निगुरे आवण जावणिआ ॥ २ ॥ तिनि करतै इकु खेलु रचाइआ ॥ काइआ सरीरै विचि सभु किछु पाइआ ॥ सबदि भेदि कोई महलु पाए महले महलि बुलावणिआ ॥ ३ ॥ सचा साहु सचे वणजारे ॥ सचु वणंजहि गुर हेति अपारे ॥ सचु विहाझहि सचु कमावहि सचो सचु कमावणिआ ॥ ४ ॥ बिनु रासी को वथु किउ पाए ॥ मनमुख भूले लोक सबाए ॥ बिनु रासी सभ खाली चले खाली जाइ दुखु पावणिआ ॥ ५ ॥ इकि सचु वणंजहि गुर सबदि पिआरे ॥ आपि तरहि सगले कुल तारे ॥ आए से परवाणु होए मिलि प्रीतम सुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ अंतरि वसतु मूड़ा बाहरु भाले ॥ मनमुख अंधे फिरहि बेताले ॥ जिथै वथु होवै तिथहु कोइ न पावै मनमुख भरमि भुलावणिआ ॥ ७ ॥ आपे देवै सबदि बुलाए ॥ महली महलि सहज सुखु: पाए ॥ नानक नामि मिलै वडिआई आपे सुणि सुणि धिआवणिआ ॥ ८ ॥ १३ ॥ १४ ॥ माझ महला ३ ॥ सतिगुर

शब्द–गुरु के माध्यम से जब व्यक्ति मन के विकारों को मारकर स्वयं उनके प्रति मृत हो जाता है तो उसे (जीवन में ही) मुक्ति का द्वार प्राप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ जो व्यक्ति शब्द–गुरु को हृदय में धारण कर लेता है वह अपने पाप एवं क्रोध आदि की निवृत्ति कर लेता है। जो व्यक्ति प्रभु के प्रेम रंग में रंगे रहते हैं वे सदैव वैराग्यवान हो कर और अपने अहंकार को मारकर प्रभु में लीन बने रहते हैं ॥ ४ ॥ व्यक्ति के अन्दर परमात्मा का ज्योति रूपी रत्न मौजूद है परन्तु यह प्रभु द्वारा अपने में मिला देने पर ही मिलता है। त्रिगुणात्मक माया से प्रभावित व्यक्ति की मनोकामनाएं भी तीनों गुणों वाली होती है। विद्वान पंडित पढ़–पढ़ कर और समाधि लगाने वाले मौन रह रह कर थक चुके हैं परन्तु उन्हें सहज अवस्था की सूझ प्राप्त नहीं होती ॥ ५ ॥ हे भाई, प्रभु प्रेम के रंग में ही मस्त रहता है और जिनको प्रभु ही शब्द–गुरु के रंग में रंगता है, वे ही उस प्रभु के प्रेम में मग्न रहते हैं। उन पर अनन्त प्रभु का प्रेम रंग चढ़ा रहता है और वे हरि–रस में भीगकर परमात्मा के गुण गाते रहते हैं ॥ ६ ॥ गुरमुख व्यक्ति के लिए वह प्रभु ही ऋद्धि–सिद्धि, सत्य एवं संयम है। गुरमुख के लिए ज्ञान और मुक्ति दोनों नाम की प्राप्ति में ही आ जाते हैं। गुरमुख व्यक्ति ही सच की कमाई करते हैं और सत्य–प्रभु में ही लीन हो जाते हैं ॥ ७ ॥ गुरमुख जानता है कि परमात्मा ही बनाता और नष्ट करता है। गुरमुख की जाति एवं सम्मान प्रभु स्वयं ही है। हे नानक, गुरमुख व्यक्ति नाम का सुमिरन करते हुए नामी प्रभु के नाम में ही लीन रहता है ॥ ८ ॥ १२ ॥ १३ ॥ माझ महला ३ ॥ शब्द से ही सृष्टि की उत्पत्ति होती है और शब्द में ही सृष्टि लय हो जाती है। पुनः शब्द से ही फिर उत्पत्ति होती है। गुरमुख जान जाता है कि सब स्थितियों में परमात्मा ही कार्यशील है और वह स्वयं ही पैदा करके सब को अपने में समाहित कर लेता है ॥ १ ॥ पूर्ण गुरु को मन में बसाने वालों पर मैं बार–बार बलिहारी जाता हूँ। गुरु से ही शान्ति एवं भक्ति प्राप्त होती है और दिन–रात प्रभु का गुणानुवाद करते हुए प्रभु में लीन हुआ जाता है ॥१॥ रहाउ॥ गुरमुख व्यक्ति जानता है कि धरती, पानी, पवन और अग्नि रूप में परमात्मा अद्भुत खेल, खेल रहा है। इनके मुकाबले में वह व्यक्ति जो शब्द–गुरु को नहीं मानता है वह निगुरा (गुरु–विहीन) है और आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है ॥ २ ॥ प्रभु कर्त्ता ने एक ऐसा खेल बनाया है कि मानव के शरीर में ही सब कुछ स्थित कर दिया है। शब्द के द्वारा बिंधकर कोई बिरला ही प्रभु के स्थान को पाता है और ऐसे व्यक्ति को ही प्रभु के महल में बुलाया जाता है ॥३॥ परमात्मा एक सच्चा साहूकार है और जगत के जीव वास्तविक रूप में उसी के व्यापारी हैं। वे गुरु के प्यार के माध्यम से सत्य रूपी सौदा ही खरीदते हैं। वे सत्य को ही लेते हैं, सत्य की ही कमाई करते हैं और सत्य में ही कार्यशील बने रहते हैं ॥ ४ ॥ जिसके पास नाम की रास पूँजी नहीं है वह भला कैसे कोई वस्तु यहाँ से खरीद सकता है। मन के पीछे चलने वाले अर्थात मनमुख सदैव कुमार्ग पर ही चलते रहते हैं। गुणों की पूँजी के बिना सभी खाली हाथ चले जाते हैं और खाली जाते हुए बहुत दुख पाते हैं ॥ ५ ॥ ऐसे भी व्यक्ति हैं जो शब्द–गुरु से प्रेम करते हैं और सत्य का व्यापार करते हैं। वे स्वयं तो भवसागर पार कर ही जाते हैं साथ ही साथ अपने कुल को भी पार उतार लेते हैं। ऐसे व्यक्तियों का संसार में आना स्वीकृत होता है और वे प्रीतम प्रभु से मिलकर सुख पाते रहते हैं ॥ ६ ॥ सब कुछ तो अन्दर ही है लेकिन मूर्ख व्यक्ति उसे बाहर ढूँढता फिरता है। मनमुख व्यक्ति अन्धे वेतालों की तरह भटकते रहते हैं। जिसके पास नाम रूपी पदार्थ है वहाँ से तो कोई कुछ लेता नहीं और मनमुख व्यक्ति भ्रमों में ही इधर–उधर भटकते रहते हैं ॥ ७॥ परमात्मा स्वयं ही शब्द में लीनता प्रदान करता है। ऐसे व्यक्ति प्रभु के हुजूर में रह कर सहज सुख को प्राप्त करते हैं। हे नानक, जो प्रभु नाम में लीन होता है उसे ही आदर प्राप्त होता है और वह प्रभु के गुण सुन–सुन कर उसकी आराधना में लीन बना रहता है ॥८॥१३॥१४॥ माझ महला ३ ॥ सद्गुरु की

साची सिख सुणाई ॥ हरि चेतहु अंति होइ सखाई ॥ हरि अगमु अगोचरु अनाथु अजोनी सतिगुर कै भाइ पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी आपु निवारणिआ ॥ आपु गवाए ता हरि पाए हरि सिउ सहजि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूरबि लिखिआ सु करमु कमाइआ ॥ सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाइआ ॥ बिनु भागा गुरु पाईऐ नाही सबदै मेलि मिलावणिआ ॥ २ ॥ गुरमुखि अलिपतु रहै संसारे ॥ गुर कै तकीऐ नामि अधारे ॥ गुरमुखि जोरु करे किआ तिस नो आपे खपि दुखु पावणिआ ॥ ३ ॥ मनमुखि अंधे सुधि न काई ॥ आतम घाती है जगत कसाई ॥ निंदा करि करि बहु भारु उठावै बिनु मजूरी भारु पहुचावणिआ ॥ ४ ॥ इहु जगु वाड़ी मेरा प्रभु माली ॥ सदा समाले को नाही खाली ॥ जेही वासना पाए तेही वरतै वासू वासु जणावणिआ ॥ ५ ॥ मनमुखु रोगी है संसारा ॥ सुखदाता विसरिआ अगम अपारा ॥ दुखीए निति फिरहि बिललादे बिनु गुर सांति न पावणिआ ॥ ६ ॥ जिनि कीते सोई बिधि जाणै ॥ आपि करे ता हुकमि पछाणै ॥ जेहा अंदरि पाए तेहा वरतै आपे बाहरि पावणिआ ॥ ७ ॥ तिसु बाझहु सचे मै होरु न कोई ॥ जिसु लाइ लए सो निरमलु होई ॥ नानक नामु वसै घट अंतरि जिसु देवै सो पावणिआ ॥ ८ ॥ १४ ॥ १५ ॥ माझ महला ३ ॥ अंम्रित नामु मंनि वसाए ॥ हउमै मेरा सभु दुखु गवाए ॥ अंम्रित बाणी सदा सलाहे अंम्रिति अंम्रितु पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी अंम्रित बाणी मंनि वसावणिआ ॥ अंम्रित बाणी मंनि वसाए अंम्रितु नामु धिआवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंम्रितु बोलै सदा मुखि वैणी ॥ अंम्रितु वेखै परखै सदा नैणी ॥ अंम्रित कथा कहै सदा दिनु राती अवरा आखि सुनावणिआ ॥ २ ॥ अंम्रित रंगि रता लिव लाए ॥ अंम्रितु गुर परसादी पाए ॥ अंम्रितु रसना बोलै दिनु राती मनि तनि अंम्रितु पीआवणिआ ॥ ३ ॥ सो किछु करै जु चिति न होई ॥ तिस दा हुकमु मेटि न सकै कोई ॥ हुकमे वरतै अंम्रित बाणी हुकमे अंम्रितु पीआवणिआ ॥ ४ ॥ अजब कंम करते हरि केरे ॥ इहु मनु भूला जांदा फेरे ॥ अंम्रित बाणी सिउ चितु लाए अंम्रित सबदि वजावणिआ ॥ ५ ॥

सच्ची शिक्षा ही मैंने कही है कि उस प्रभु का सुमिरन करो वही अन्त में सहायक होता है। वह परमात्मा ही अगम्य, अगोचर, स्थानातीत एवं अयोनि है। उसे सद्‌गुरु के प्रेम के माध्यम से ही पाया जा सकता है ॥ १ ॥ जिन्होंने अहम् का निवारण कर लिया है मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ। जीव जब अपना अहंकार गँवा देता है तब ही वह प्रभु को पाता है और प्रभु की कृपा से ही वह सहज में लीन हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव पूर्व में लिखे हुए लेखों के आधार पर ही कार्य करता है और सद्‌गुरु की सेवा करके ही सदा सुख प्राप्त करता है। बिना भाग्य के गुरु प्राप्त नहीं होता और शब्द के माध्यम से ही उस प्रभु से मेल होता है ॥ २ ॥ गुरमुख व्यक्ति संसार से अलिप्त बना रहता है। उसे केवल गुरु का ही आसरा होता है। गुरमुख के साथ ज़ोर–ज़बरदस्ती करने वाला स्वयं ही दुख पाते हुए मर–खप जाता है ॥ ३ ॥ मनमुख व्यक्ति अन्धा होता है और उसे कोई सुध–बुध नहीं होती। वह स्वयं को तबाह करने वाला और संसार के लिए कसाई–रूप है। वह निन्दा कर–कर के निन्दा का बहुत बड़ा बोझ उठाए घूमता है और बिना भाड़ा लिए ही उस भार को इधर से उधर पहुँचाता रहता है ॥ ४ ॥ यह जगत एक बगीचा है और मेरा प्रभु उसका माली है जो सदा उसकी संभाल करता है। कोई भी उसकी देख–भाल से विहीन नहीं रहता। जैसी सुगन्ध माली प्रभु जीव रूपी फूलों में डालता है वही उनके अन्दर काम करती है और उस सुगन्धि से ही बाहर का वातावरण जाना जाता है॥५॥ मनमुख व्यक्ति इस संसार में रोगी है क्योंकि उसने अगम्य अपार सुखदाता प्रभु को विस्मृत कर दिया है। नित्य तड़पते हुए ऐसे मनमुख दुखी होकर भटकते फिरते हैं; उन्हें गुरु के बिना शान्ति प्राप्त नहीं होती ॥ ६ ॥ जिस प्रभु ने उनकी यह हालत बनाई है वही इनका इलाज भी जानता है। प्रभु स्वयं ही कृपा करे तो इन्हें हुकुम की पहचान आ जाती है। प्रभु जैसा जीवन–बोध व्यक्ति को देता है वह उसी के अनुरूप व्यवहार करता है। प्रभु स्वयं ही जीवों को दृष्ट संसार की ओर भी प्रेरित करता रहता है ॥ ७ ॥ सत्य प्रभु के बिना मुझे अन्य किसी का आसरा नहीं है। जिसे प्रभु अपने साथ मिला ले वही निर्मल हो जाता है। हे नानक, उसकी कृपा से ही नाम मन में बसता है और जिसे प्रभु देता है उसे ही यह प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ १४ ॥ १५ ॥ माझ महला ३ ॥ जो व्यक्ति प्रभु के अमृत नाम को मन में बसाता है वह अहंकार, ममता आदि सब दुखों को गँवा देता है। वह सदैव अमृत वाणी के माध्यम से प्रभु का गुणानुवाद करता है और सदैव अमृत का ही पान करता रहता है ॥ १ ॥ अमृत वाणी को मन में बसाने वालों पर मैं बार–बार बलिहारी जाता हूँ। जो अमृत–वाणी को मन में बसाता है वही प्रभु के अमृत–नाम का सुमिरन करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो व्यक्ति अपने मुख से अपने वचनों के द्वारा अमृत–रस जैसे मीठे बोल बोलता है और सदैव अपनी आँखों से अमृत को ही देखता परखता है वह दिन–रात अमृतमयी कथा–वार्ता कहता है और दूसरों को भी सुनाता है ॥ २ ॥ जो व्यक्ति प्रभु के प्रेम रंग में रंगा हुआ प्रभु–चरणों में सुरति को लीन रखता है वह गुरु की कृपा से जीवन दाता प्रभु से मिल जाता है। उसकी जीभ से भी दिन–रात अमृत झरता है और उसका तन, मन अर्थात सब कुछ अमृत का पान करता रहता है ॥ ३ ॥ जो व्यक्ति के चित्त में भी नहीं होता प्रभु वह सब कुछ कर देता है। कोई भी जीव उसके हुकुम का उलंघन नहीं कर सकता। प्रभु के हुकुम के अनुसार ही उस प्रभु की जीवन देने वाली गुणानुवाद की वाणी कार्यशील हो जाती है और अपने हुकम के अन्तर्गत ही वह किसी भाग्यशाली को ही अपना नामामृत पिलाता है ॥ ४ ॥ उस कर्त्ता प्रभु के कार्य आश्चर्यजनक हैं। भटके हुए मन को प्रभु ही सही दिशा में टिका देता है। प्रभु ही मन को अपने गुणानुवाद की वाणी के साथ जोड़ देता है और जीव के मन में अमृत शब्द को प्रकट कर देता है ॥ ५ ॥

खोटे खरे तुधु आपि उपाए ॥ तुधु आपे परखे लोक सबाए ॥ खरे परखि खजानै पाइहि खोटे भरमि भुलावणिआ ॥ ६ ॥ किउ करि वेखा किउ सालाही ॥ गुर परसादी सबदि सलाही ॥ तेरे भाणे विचि अंम्रितु वसै तूं भाणै अंम्रितु पीआवणिआ ॥ ७ ॥ अंम्रित सबदु अंम्रित हरि बाणी ॥ सतिगुरि सेविऐ रिदै समाणी ॥ नानक अंम्रित नामु सदा सुखदाता पी अंम्रितु सभ भुख लहि जावणिआ ॥ ८ ॥ १५ ॥ १६ ॥ माझ महला ३ ॥ अंम्रितु वरसै सहजि सुभाए ॥ गुरमुखि विरला कोई जनु पाए ॥ अंम्रितु पी सदा त्रिपतासे करि किरपा त्रिसना बुझावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुरमुखि अंम्रितु पीआवणिआ ॥ रसना रसु चाखि सदा रहै रंगि राती सहजे हरि गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर परसादी सहजु को पाए ॥ दुबिधा मारे इकसु सिउ लिव लाए ॥ नदरि करे ता हरि गुण गावै नदरी सचि समावणिआ ॥ २ ॥ सभना उपरि नदरि प्रभ तेरी ॥ किसै थोड़ी किसै है घणेरी ॥ तुझ ते बाहरि किछु न होवै गुरमुखि सोझी पावणिआ ॥ ३ ॥ गुरमुखि ततु है बीचारा ॥ अंम्रिति भरे तेरे भंडारा ॥ बिनु सतिगुर सेवे कोई न पावै गुर किरपा ते पावणिआ ॥ ४ ॥ सतिगुरु सेवै सो जनु सोहै ॥ अंम्रित नामि अंतरु मनु मोहै ॥ अंम्रिति मनु तनु बाणी रता अंम्रितु सहजि सुणावणिआ ॥ ५ ॥ मनमुखु भूला दूजै भाइ खुआए ॥ नामु न लेवै मरै बिखु खाए ॥ अनदिनु सदा विसटा महि वासा बिनु सेवा जनमु गवावणिआ ॥ ६ ॥ अंम्रितु पीवै जिस नो आपि पीआए ॥ गुर परसादी सहजि लिव लाए ॥ पूरन पूरि रहिआ सभ आपे गुरमति नदरी आवणिआ ॥ ७ ॥ आपे आपि निरंजनु सोई ॥ जिनि सिरजी तिनि आपे गोई ॥ नानक नामु समालि सदा तूं सहजे सचि समावणिआ ॥ ८ ॥ १६ ॥ १७ ॥ माझ महला ३ ॥ से सचि लागे जो तुधु भाए ॥ सदा सचु सेवहि सहज सुभाए ॥ सचै सबदि सचा सालाही सचै मेलि मिलावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सचु सालाहणिआ ॥ सचु धिआइनि से सचि राते सचे सचि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह देखा सचु सभनी थाई ॥ गुर परसादी मंनि वसाई ॥ तनु सचा रसना सचि राती सचु सुणि आखि

हे प्रभु, खोटे–खरे जीव सब तूने ही पैदा किए हैं। तू स्वयं ही सभी लोगों को देखता परखता रहता है। खरे व्यक्तियों को शुद्ध सिक्के की तरह परख कर तू अपने खज़ाने में रख लेता है और खोटे व्यक्ति भ्रमों में भटकते फिरते हैं ॥ ६ ॥ हे प्रभु, मैं कैसे तुझे देखूँ और कैसे तेरा गुणानुवाद करूँ। गुरु की कृपा से मैं शब्द के माध्यम से तेरे गुण गाता हूँ। तेरे हुकुम में ही तेरा अमृत–नाम हृदय में बसता है और तू अपने हुकुम के अन्तर्गत ही अपना नाम रूपी अमृत जीवों को पिलाता है ॥ ७ ॥ यदि सद्गुरु पर टेक रखी जाए तब ही जीवन देने वाला शब्द प्रभु की वाणी के रूप में हृदय में आन बसता है। हे नानक, अमृत रूपी नाम सदैव सुख देने वाला है और इस अमृत को पीकर सारी भूख समाप्त हो जाती है ॥ ८ ॥ १५ ॥ १६ ॥ माझ महला ३ ॥ अमृत सहज रूप में ही बरसता है और कोई बिरला गुरमुख व्यक्ति ही उसे पाता है। अमृत पीकर सदा के लिए तृप्ति प्राप्त हो जाती है और प्रभु की कृपा से ही तृष्णा बुझ जाती है ॥ १ ॥ अमृत पिलाने वाले गुरमुखों पर मैं सदा बलिहारी जाता हूँ। उनकी जीभ नाम–रस चख कर प्रभु के प्रेम में सदा रंगी रहती है और वे सदैव सहज अवस्था में प्रभु के गुणों का गायन करते रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोई बिरला ही प्रभु की कृपा से सहज भाव को प्राप्त होता है और आन्तरिक दुविधा को समाप्त कर केवल एक प्रभु में ही सुरति लगाता है। प्रभु कृपा–दृष्टि करे तो जीव हरि–गुण का गायन करता है और उसकी कृपा से ही सत्य में समा जाता है ॥ २ ॥ सब पर हे प्रभु, तेरी ही कृपा–दृष्टि है बेशक वह किसी पर थोड़ी ज्यादा है और किसी पर थोड़ी कम है। गुरमुख व्यक्ति को यह सूझ बुद्धि होती है कि हे प्रभु, तेरे से बाहर कुछ भी नहीं है ॥ ३ ॥ गुरमुख विचार के इस सार तत्व को जानते हैं कि तेरे भण्डार अमृत से भरे पड़े हैं परन्तु सद्गुरु के सुमिरन के बिना उन्हें कोई नहीं पा सकता, गुरु की कृपा से ही उन्हें पाया जाता है ॥ ४ ॥ जो सद्गुरु का सुमिरन करते हैं वही जीव शोभायुक्त होते हैं और उनका अन्तर्मन प्रभु के अमृत नाम के प्रति आकर्षित बना रहता है। उनका मन, तन अमृत वाणी के रंग में रंगा रहता है और ऐसे व्यक्ति शब्द रूपी सहज नाद को सदैव सुनते रहते हैं। मन के पीछे चलने वाला व्यक्ति भटकता है और द्वैत भाव में ख्वार होता है। वह प्रभु–नाम को नहीं धारण करता और विकारों का विष खा–खा कर मरता है। उसका निवास सदैव विष्ठा में ही बना रहता है और सेवा से विहीन होकर वह जीवन को गँवा लेता है ॥ ६ ॥ जिसे वह पिलाता है वही अमृत–पान करता है और गुरु की कृपा से सहज भाव में लीन रहता है। पूर्ण प्रभु ही सब ओर स्वयं व्याप्त है और गुरु के मत में चलने पर ही वह दिखाई देता है ॥ ७ ॥ वह निरंजन प्रभु स्वयं ही सब कुछ है। जिसने यह सृष्टि रचना की है वही इसको आप ही मिटा भी देता है। हे नानक, तू परमात्मा का नाम सदा अपने हृदय में संभाल कर रख क्योंकि सहज भाव में ही उस परम सत्य में समाहित हुआ जाता है ॥ ८ ॥ १६ ॥ १७ ॥ माझ महला ३ ॥ हे प्रभु, जो तुझे अच्छे लगते हैं वे ही सत्य के साथ जुड़ते है और सहज स्वाभाविक रूप से ही वे सत्य को जीवन में धारण करते हैं। सत्य–शब्द के माध्यम से ही सत्य–प्रभु का गुणानुवाद होता है और सत्य से मेल बना रहता है ॥ १ ॥ सत्य का गुणानुवाद करने वालों पर मैं बलिहारी जाता हूँ। जो सत्य का सुमिरन करते हैं वे ही सत्य में रंगे रहते हैं और सत्य में ही समा जाते हैं ॥१॥ रहाउ॥ जिधर देखूँ सब ओर सत्य ही दिखाई देता है और यह सत्य गुरु की कृपा से ही मन में बसता है। सत्य का गुणानुवाद करने वाले व्यक्तियों की जीभ सत्य में ही रंगी रहती है और वे सत्य को ही सुनकर सत्य का ही

वखानणिआ ॥ २ ॥ मनसा मारि सचि समाणी ॥ इनि मनि डीठी सभ आवण जाणी ॥ सतिगुरु सेवे सदा मनु निहचलु निज घरि वासा पावणिआ ॥ ३ ॥ गुर कै सबदि रिदै दिखाइआ ॥ माइआ मोहु सबदि जलाइआ ॥ सचो सचा वेखि सालाही गुर सबदी सचु पावणिआ ॥ ४ ॥ जो सचि राते तिन सची लिव लागी ॥ हरि नामु समालहि से वडभागी ॥ सचै सबदि आपि मिलाए सतसंगति सचु गुण गावणिआ ॥ ५ ॥ लेखा पड़ीऐ जे लेखे विचि होवै ॥ ओहु अगमु अगोचरु सबदि सुधि होवै ॥ अनदिनु सच सबदि सालाही होरु कोइ न कीमति पावणिआ ॥ ६ ॥ पड़ि पड़ि थाके सांति न आई ॥ त्रिसना जाले सुधि न काई ॥ बिखु बिहाझहि बिखु मोह पिआसे कूड़ु बोलि बिखु खावणिआ ॥ ७ ॥ गुर परसादी एको जाणा ॥ दूजा मारि मनु सचि समाणा ॥ नानक एको नामु वरतै मन अंतरि गुर परसादी पावणिआ ॥ ८ ॥ १७ ॥ १८ ॥ माझ महला ३ ॥ वरन रूप वरतहि सभ तेरे ॥ मरि मरि जंमहि फेर पवहि घणेरे ॥ तूं एको निहचलु अगम अपारा गुरमती बूझ बुझावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी राम नामु मंनि वसावणिआ ॥ तिसु रूपु न रेखिआ वरनु न कोई गुरमती आपि बुझावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ एका जोति जाणै जे कोई ॥ सतिगुरु सेविऐ परगटु होई ॥ गुपतु परगटु वरतै सभ थाई जोती जोति मिलावणिआ ॥ २ ॥ तिसना अगनि जलै संसारा ॥ लोभु अभिमानु बहुतु अहंकारा ॥ मरि मरि जनमै पति गवाए अपणी बिरथा जनमु गवावणिआ ॥ ३ ॥ गुर का सबदु को विरला बूझै ॥ आपु मारे ता त्रिभवणु सूझै ॥ फिरि ओहु मरै न मरणा होवै सहजे सचि समावणिआ ॥ ४ ॥ माइआ महि फिरि चितु न लाए ॥ गुर कै सबदि सद रहै समाए ॥ सचु सलाहे सभ घट अंतरि सचो सचु सुहावणिआ ॥ ५ ॥ सचु सालाही सदा हजूरे ॥ गुर कै सबदि रहिआ भरपूरे ॥ गुर परसादी सचु नदरी आवै सचे ही सुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ सचु मन अंदरि रहिआ समाइ ॥ सदा सचु निहचलु आवै न जाइ ॥ सचे लागै सो मनु निरमलु गुरमती सचि समावणिआ ॥ ७ ॥ सचु सालाही अवरु न कोई ॥ जितु सेविऐ सदा सुखु

व्याख्यान करते हैं ॥ २ ॥ मन की वासनाओं को मारकर जिस व्यक्ति की सुरति सत्य में लीन हो गई है उसने अपने मन के माध्यम से आवागमन के चक्कर को समझ लिया है। ऐसा व्यक्ति सद्गुरु परमात्मा का आश्रय लेता है और उसका मन सदा के लिए स्थिर हो जाता है; वह अपने वास्तविक मूल स्थान अर्थात प्रभु चरणों में ठिकाना पा जाता है। शब्द–गुरु ने मुझे परमात्मा हृदय में ही दिखा दिया है और शब्द ने ही मेरे अन्तर्मन का मायावी मोह जला दिया है। मैं उस सत्य प्रभु को ही देखकर उसका गुणानुवाद करता हूँ और यह जानता हूँ कि शब्द–गुरु में लीन रहने वाले व्यक्ति उस सत्य–प्रभु का मिलाप प्राप्त कर लेते हैं। जो सत्य में रंग जाते हैं उनके अन्दर सच्ची लगन पैदा हो जाती है। वे भाग्यशाली व्यक्ति प्रभु नाम को मन में संभालते हैं। जिन्हें प्रभु स्वयं ही सच्चे शब्द के साथ मिला देता है वे सत्संगत में रहकर सत्य–प्रभु का गुणानुवाद करते हैं ॥ ५ ॥ उस परमात्मा के गुणों को तो तब जाना जाए यदि वह गुणों में ही समाप्त हो जाता हो अर्थात वह किसी हिसाब–किताब में नहीं आता। उस अगम्य अगोचर प्रभु की समझ शब्द के माध्यम से ही आती है। मैं सदैव सत्य शब्द के माध्यम से प्रभु का गुणानुवाद करता हूँ; कोई भी ऐसा नहीं है जो प्रभु की कीमत आंक सके ॥ ६ ॥ विद्वान पढ़ पढ़ कर थक गए हैं परन्तु उन्हें शान्ति प्राप्त नहीं होती। वे तृष्णाओं में ही जलते रहे और कुछ भी न जान सके। वे विष का ही व्यापार करते हैं और झूठ बोलकर उसी मोह रूपी विष का सेवन करते रहते हैं ॥ ७ ॥ गुरु की कृपा से जिसने केवल एक प्रभु ही जाना है और द्वैत भाव को मारकर मन को सत्य में लगा लिया है, हे नानक, उनके मन में केवल एक नाम ही कार्यशील रहता है और गुरु कृपा से वे परमात्मा से मेल प्राप्त कर लेते हैं ॥ ८ ॥ १७ ॥ १८ ॥ माझ महला ३ ॥ हे प्रभु, सारे संसार में तेरे ही रूप और वर्ण कार्यशील हैं। ये जन्मते हैं, मरते हैं और बार–बार इसी चक्र में फंसे रहते हैं। हे प्रभु, एक तू ही अटल, अगम्य एवं अपार है और तेरा रहस्य गुरुमति के अन्तर्गत ही बूझा जा सकता है ॥ १ ॥ जिन्होने राम नाम को मन में बसाया है, मैं उन पर बार–बार बलिहारी जाता हूँ। प्रभु का ना कोई रूप है, न कोई रेखा चित्र है और न ही कोई वर्ण है। उसको गुरुमति में चलकर ही बूझा जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि कोई अच्छी तरह से समझ ले तो यह सत्य है कि सब जीवों में एक ही परमात्मा की ज्योति विद्यमान है। सद्गुरु का सुमिरन करने से ही वह ज्योति प्रकट होती है। परमात्मा की ज्योति प्रत्यक्ष और प्रछन्न दोनों रूपों में ही सर्वत्र व्याप्त है। प्रभु की ज्योति ही प्रत्येक जीव की ज्योति में मिली हुई है ॥ २ ॥ सारा संसार तृष्णा की अग्नि में जल रहा है और लोभ–अभिमान एवं अहंकार इसमें पूरे जोरों पर हैं। इसमें ग्रस्त व्यक्ति जन्मता–मरता हुआ अपना सम्मान गँवा देता है और अपना जन्म भी व्यर्थ में ही लुटा देता है ॥ ३ ॥ गुरु के शब्द अर्थात शब्द–गुरु को कोई विरला ही बूझता है। व्यक्ति यदि अपने अहंकार को समाप्त कर दे तो उसे तीनों लोकों के रहस्य का पता चल जाता है। फिर उसकी मृत्यु नहीं होती और सहज अवस्था में लीन होकर वह सत्य–प्रभु में समा जाता है ॥ ४ ॥ जो शब्द–गुरु में सदा लीन रहता है उसका चित्त सांसारिक प्रपंचों में फिर नहीं लगता। वह सबके हृदयों में बसे सत्य प्रभु की प्रशंसा करता है और उसे सब के अन्दर सत्य–प्रभु ही शोभायमान दिखाई देता है ॥ ५ ॥ मैं सदैव उस सत्य–प्रभु का गुणानुवाद करता हूँ जो सभी के साथ ही बना रहता है। शब्द–गुरु के माध्यम से वह सब जगह व्याप्त दिखाई देता है। व्यक्ति को गुरु की कृपा से वह सत्य–प्रभु दिखता है और सत्य में ही लीन रहकर वह सुख प्राप्त करता है ॥ ६ ॥ सत्य प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर है। यह सत्य ही सदैव अटल है और इसका कभी जन्म–मरण नहीं होता है। जो सत्य में लीन हो जाते हैं उनका मन निर्मल हो जाता है और गुरुमति को धारण करते हुए वे सत्य में ही लीन बने रहते हैं ॥७॥ हे भाई, मैं सत्य का ही गुणगायन करता हूँ और मुझे अन्य कुछ नहीं दिखाई देता है। सत्य का सुमिरन करने से ही सदा सुख प्राप्त होता है।

होई ॥ नानक नामि रते वीचारी सचो सचु कमावणिआ ॥ ८ ॥ १८ ॥ १९ ॥
माझ महला ३ ॥ निरमल सबदु निरमल है बाणी ॥ निरमल जोति सभ माहि समाणी ॥ निरमल बाणी हरि सालाही जपि हरि निरमलु मैलु गवावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सुखदाता मंनि वसावणिआ ॥ हरि निरमलु गुर सबदि सलाही सबदो सुणि तिसा मिटावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरमल नामु वसिआ मनि आए ॥ मनु तनु निरमलु माइआ मोहु गवाए ॥ निरमल गुण गावै नित साचे के निरमल नादु वजावणिआ ॥ २ ॥ निरमल अंम्रितु गुर ते पाइआ ॥ विचहु आपु मुआ तिथै मोहु न माइआ ॥ निरमल गिआनु धिआनु अति निरमलु निरमल बाणी मंनि वसावणिआ ॥ ३ ॥ जो निरमलु सेवे सु निरमलु होवै ॥ हउमै मैलु गुर सबदे धोवै ॥ निरमल वाजे अनहद धुनि बाणी दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ ४ ॥ निरमल ते सभ निरमल होवै ॥ निरमलु मनूआ हरि सबदि परोवै ॥ निरमल नामि लगे बडभागी निरमलु नामि सुहावणिआ ॥ ५ ॥ सो निरमलु जो सबदे सोहै ॥ निरमल नामि मनु तनु मोहै ॥ सचि नामि मलु कदे न लागै मुखु ऊजलु सचु करावणिआ ॥ ६ ॥ मनु मैला है दूजै भाइ ॥ मैला चउका मैलै थाइ ॥ मैला खाइ फिरि मैलु वधाए मनमुख मैलु दुखु पावणिआ ॥ ७ ॥ मैले निरमल सभि हुकमि सबाए ॥ से निरमल जो हरि साचे भाए ॥ नानक नामु वसै मन अंतरि गुरमुखि मैलु चुकावणिआ ॥ ८ ॥ १९ ॥ २० ॥
माझ महला ३ ॥ गोविंदु ऊजलु ऊजल हंसा ॥ मनु बाणी निरमल मेरी मनसा ॥ मनि ऊजल सदा मुख सोहहि अति ऊजल नामु धिआवणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गोबिंद गुण गावणिआ ॥ गोबिदु गोबिदु कहै दिन राती गोबिद गुण सबदि सुणावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गोबिदु गावहि सहजि सुभाए ॥ गुर कै भै ऊजल हउमै मलु जाए ॥ सदा अनंदि रहहि भगति करहि दिनु राती सुणि गोबिद गुण गावणिआ ॥ २ ॥ मनूआ नाचै भगति द्रिड़ाए ॥ गुर कै सबदि मनै मनु मिलाए ॥ सचा तालु पूरे माइआ मोहु चुकाए सबदे निरति करावणिआ ॥ ३ ॥ ऊचा कूके तनहि पछाड़े ॥ माइआ मोहि

हे नानक, जो प्रभु–नाम के रंग में रंगे जाते हैं वे ही सच्चे विचारक हैं और वे ही सत्य को जीवन के व्यवहार में प्रयुक्त करते हैं ॥ ८ ॥ १८ ॥ १९ ॥ माझ महला ३ ॥ परमात्मा का शब्द और वाणी निर्मल हैं और निर्मल ज्योति के रूप में वह सब में समाहित है । परमात्मा की निर्मल वाणी के गुण गाकर पवित्र परमात्मा का जाप किया जाता है जो सबकी मैल को साफ कर देने वाला है ॥ १ ॥ जिन्होने सुखदाता प्रभु को मन में बसा लिया है मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ। पवित्र परमात्मा का शब्द–गुरु के माध्यम से गुणानुवाद किया जाता है और शब्द को सुनकर ही मन की प्यास मिटती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब पवित्र नाम मन में आ बसा तो मन–तन निर्मल हो जाता है और मोह माया चुक जाते हैं । ऐसा व्यक्ति उस सत्य–प्रभु के निर्मल गुणों का सदैव गायन करता है और प्रभु गुणानुवाद का निर्मल नाद उसके अन्तर्मन में बज उठता है ॥ २ ॥ जिस व्यक्ति ने गुरु के माध्यम से प्रभु का निर्मल अमृत प्राप्त कर लिया है उसके अन्तर्मन से अहंकार मर जाता है और मोह–माया वहाँ अब नहीं रहती । ऐसे व्यक्ति का ज्ञान–ध्यान अत्यन्त निर्मल हो जाता है और पवित्र वाणी उसके मन में बस जाती है ॥ ३ ॥ जो पवित्र प्रभु का सुमिरन करता है वह निर्मल हो जाता है और अहंकार की मैल को शब्द–गुरु के माध्यम से धो लेता है । उस व्यक्ति के अन्दर निर्मल–वाणी की धुन अनहद रूप में सदैव गूँजती रहती है और प्रभु के सत्य–द्वार पर वह ही शोभायमान होता है ॥ ४ ॥ पवित्र प्रभु से मूलतः सब कुछ निर्मल ही उत्पन्न होता है । मन निर्मल होकर शब्द रूपी परमात्मा में लीन हो जाता है । भाग्यशाली लोग निर्मल प्रभु–नाम में लीन होते हैं और पवित्र नाम के माध्यम से ही शोभा प्राप्त करते हैं । वही पवित्र जीवन वाला है जो शब्द–गुरु में लीन होकर शोभायमान बनता है । पवित्र–प्रभु के नाम में उसका मन–तन मस्त बना रहता है । प्रभु के सत्य–नाम को कभी भी मैल नहीं लगती और सत्य रूपी प्रभु नाम में लीन व्यक्ति का मुख उज्जवल कर देता है ॥ ६ ॥ द्वैतभाव में पड़े हुए व्यक्ति का मन मैला होता है । उसका हृदय रूपी स्थान एवं चौका मैले ही रहते हैं । मनमुख बनकर वह मलीन पदार्थ खाकर मैल को और बढ़ाता है और मैल में ही पड़ा हुआ दुख पाता रहता है ॥ ७ ॥ मैले और पवित्र जीव दरअसल उसके हुकुम के अन्तर्गत ही बने हैं । निर्मल वे हैं जो सत्य–प्रभु को भा जाते हैं । हे नानक, जब प्रभु–नाम मन में बस जाता है तो गुरमुख बनकर व्यक्ति अपनी मैल को समाप्त कर देता है ॥ ८ ॥ १९ ॥ २० ॥ माझ महला ३ ॥ उज्जवल प्रभु में लीन जीव भी उज्जवल हंस रूप हो जाते हैं । उनका मन और वाणी तथा मन की कामनाएं भी निर्मल हो जाती हैं । मन उज्जवल होने से उनका मुख सदैव शोभायमान रहता है और वे अत्यन्त उज्जवल उस प्रभु–नाम का सुमिरन करते रहते हैं ॥ १ ॥ प्रभु के गुण गाने वालों पर मैं बार–बार बलिहारी जाता हूँ । ऐसे व्यक्ति दिन–रात गोविंद प्रभु का उच्चारण करते हैं और शब्द–गुरु के माध्यम से दूसरों को भी प्रभु–नाम सुनाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो प्रभु–नाम का गुणानुवाद सहज रूप में ही करते हैं वे गुरु के प्रेम में बने रहकर उज्जवल हो जाते हैं और उनके अन्दर की अहंकार की मैल समाप्त हो जाती है । वे सदैव आनन्दित बने रहते हैं, दिन–रात भक्ति में लीन रहते हैं, और प्रभु के गुणों को सुनकर प्रभु का गुणानुवाद करते हैं ॥ २ ॥ प्रभु–भक्ति में दृढ़ होकर मन नाच उठता है और शब्द–गुरु के माध्यम से मन प्रभु–भक्ति में ही लीन बना रहता है । सत्य के ताल पर और माया–मोह को समाप्त कर ऐसा व्यक्ति शब्द के माध्यम से ही प्रभु के सम्मुख नृत्य कर उठता है ॥ ३ ॥ जो केवल चीख–चीख कर और तन को इधर–उधर पटककर भक्ति का ढोंग करते हैं उन्हें तो माया–मोह में फंसा कर यम ने काल रूप में निशाने पर लगा लिया है । मायावी प्रपंचों के मोह में

जोहिआ जमकाले ॥ माइआ मोहु इसु मनहि नचाए अंतरि कपटु दुखु पावणिआ ॥ ४ ॥ गुरमुखि भगति जा आपि कराए ॥ तनु मनु राता सहजि सुभाए ॥ बाणी वजै सबदि वजाए गुरमुखि भगति थाइ पावणिआ ॥ ५ ॥ बहु ताल पूरे वाजे वजाए ॥ ना को सुणे न मंनि वसाए ॥ माइआ कारणि पिड़ बंधि नाचै दूजै भाइ दुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ जिसु अंतरि प्रीति लगै सो मुकता ॥ इंद्री वसि सच संजमि जुगता ॥ गुर कै सबदि सदा हरि धिआए एहा भगति हरि भावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि भगति जुग चारे होई ॥ होरतु भगति न पाए कोई ॥ नानक नामु गुर भगती पाईऐ गुर चरणी चितु लावणिआ ॥ ८ ॥ २० ॥ २१ ॥ माझ महला ३ ॥ सचा सेवी सचु सालाही ॥ सचै नाइ दुखु कब ही नाही ॥ सुखदाता सेवनि सुखु पाइनि गुरमति मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सुख सहजि समाधि लगावणिआ ॥ जो हरि सेवहि से सदा सोहहि सोभा सुरति सुहावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभु को तेरा भगतु कहाए ॥ सेई भगत तेरै मनि भाए ॥ सचु बाणी तुधै सालाहनि रंगि राते भगति करावणिआ ॥ २ ॥ सभु को सचे हरि जीउ तेरा ॥ गुरमुखि मिलै ता चूकै फेरा ॥ जा तुधु भावै ता नाइ रचावहि तूं आपे नाउ जपावणिआ ॥ ३ ॥ गुरमती हरि मंनि वसाइआ ॥ हरखु सोगु सभु मोहु गवाइआ ॥ इकसु सिउ लिव लागी सद ही हरि नामु मंनि वसावणिआ ॥ ४ ॥ भगत रंगि राते सदा तेरै चाए ॥ नउ निधि नामु वसिआ मनि आए ॥ पूरै भागि सतिगुरु पाइआ सबदे मेलि मिलावणिआ ॥ ५ ॥ तूं दइआलु सदा सुखदाता ॥ तूं आपे मेलिहि गुरमुखि जाता ॥ तूं आपे देवहि नामु वडाई नामि रते सुखु पावणिआ ॥ ६ ॥ सदा सदा साचे तुधु सालाही ॥ गुरमुखि जाता दूजा को नाही ॥ एकसु सिउ मनु रहिआ समाए मनि मंनिऐ मनहि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि होवै सो सालाहे ॥ साचे ठाकुर वेपरवाहे ॥ नानक नामु वसै मन अंतरि गुर सबदी हरि मेलावणिआ ॥ ८ ॥ २१ ॥ २२ ॥ माझ महला ३ ॥ तेरे भगत सोहहि साचै दरबारे ॥ गुर कै सबदि नामि सवारे ॥ सदा अनंदि रहहि दिनु राती गुण कहि गुणी समावणिआ

जो अन्तर्मन में कपट रखते हुए प्रभु भक्ति में नाचने का ढोंग करता है वह दुख ही दुख पाता है ॥ ४ ॥ जब गुरमुख बनाकर प्रभु जीव से अपनी भक्ति करवाता है तो जीव का तन–मन सहज रूप में ही प्रभु के रंग में रंग जाता है। उसके अन्तर्मन में शब्द वाणी रूप में बजने लगता है और ऐसे गुरमुख व्यक्ति की भक्ति ही परमात्मा स्वीकार करता है ॥ ५ ॥ बहुत से तालों और वाद्यों को बजाकर जब कोई भक्ति का ढोंग करता है तो न तो उसको कोई सुनता है और न ही मन में बसाता है। जो धन के कारण ही मजमा लगाकर नाचता कूदता है वह द्वैत–भाव में पड़ा रहकर दुख पाता रहता है ॥ ६ ॥ इन्द्रियों को वश में करके सत्य और संयम की युक्ति के साथ जिसके मन में प्रभु की प्रीति लग जाती है वह व्यक्ति मुक्त हो जाता है। शब्द–गुरु के माध्यम से वह सदैव प्रभु का सुमिरन करता है और यही भक्ति परमात्मा को भाती है ॥ ७ ॥ गुरमुख बनकर भक्ति करने का नियम चारों युगों में अटल है। किसी अन्य को प्रभु–भक्ति प्राप्त नहीं होती। हे नानक, परमात्मा के नाम–सुमिरन के दान को गुरु की भक्ति के माध्यम से और गुरु के चरणों में चित्त को लगाने से ही पाया जा सकता है ॥ ८ ॥ २० ॥ २१ ॥ माझ महला ३ ॥ जो सत्य–प्रभु का सुमिरन करते हैं और उस सत्य स्वरूप परमात्मा का गुणानुवाद करते हैं उन्हें सच्चे नाम में लीन रहने से कभी भी दुःख नहीं झेलना पड़ता। वे सुखदायक प्रभु का सुमिरन करते हुए सुख प्राप्त करते हैं और गुरुमति को मन में धारण किए रहते हैं ॥ १ ॥ जो सदा सुखी मन से सहज समाधि में लीन बने रहते हैं, मैं उन पर बार–बार बलिहारी जाता हूँ। जो हरि का सुमिरन करते हैं वे सदा शोभायमान बने रहते हैं और उनकी सुरति सुहावनी बनकर सदा अडोल रहती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा भक्त होने का दावा तो सभी करते हैं परन्तु वास्तविक भक्त वे ही हैं जो तेरे मन को भाते हैं। वे सदैव सत्य–वाणी के माध्यम से तेरी प्रशंसा करते हैं और तेरे रंग में रंगे हुए भक्ति किए चले जाते हैं॥२॥ हे सत्य–प्रभु, सब जीव तेरे ही हैं परन्तु जब उनको कोई गुरमुख व्यक्ति मिल जाता है तभी उनका आवागमन का चक्र समाप्त होता है। यदि तुझे भी अच्छा लगे तो तू उन्हें अपना नाम जपाता है और उन्हें नाम में ही लीन कर लेता है॥३॥ गुरु की मति में चलकर मैंने प्रभु को मन में बसाया है और हर्ष, शोक एवं मोह मैंने गंवा (छोड़) दिया है। अब मेरी लौ केवल उस परमात्मा के साथ ही लगी रहती है और प्रभु का नाम अब सदैव मन में बसा रहता है ॥ ४ ॥ भक्तजन तेरे उत्साह में सदैव तेरे ही रंग में रंगे रहते हैं। नवनिधियाँ देने वाला प्रभु–नाम उनके मन में आन बसता है। जिस व्यक्ति ने पूर्ण भाग्यशाली बनकर सद्गुरु पा लिया है, शब्द के माध्यम से उसका प्रभु से मिलाप का वसीला बन जाता है ॥ ५ ॥ हे प्रभु, तू दयालु एवं सुख देने वाला है और गुरमुख व्यक्ति यह जानते हैं कि तू ही स्वयं जीव को अपने में मिला लेने वाला है। तू स्वयं ही व्यक्ति को नाम का बड़प्पन प्रदान करता है और तेरे नाम में रंगे हुए लोग सुख पाते ही जाते हैं ॥ ६ ॥ हे सत्य स्वरूप प्रभु, मैं सदैव तेरा ही गुणानुवाद करता रहूँ। गुरमुख व्यक्ति जानता है कि तेरे सिवाए अन्य कोई भी नहीं है। जिसका एक प्रभु में मन लीन हो गया है वह मन में ही लीन होकर मन के माध्यम से ही तुझसे आन मिलता है ॥ ७ ॥ गुरमुख बनकर ही तेरे गीत गाए जाते हैं और हे सबके मालिक स्वामी प्रभु, तू सत्य स्वरूप और बेपरवाह है। हे नानक, ऐसे व्यक्ति के मन में परमात्मा का नाम बस जाता है और शब्द–गुरु की कृपा से वह व्यक्ति परमात्मा के साथ परमात्मा में ही मिल जाता है ॥ ८ ॥ २१ ॥ २२ ॥ माझ महला ३ ॥ शब्द–गुरु एवं नाम के माध्यम से जिन्होंने अपने आप को सँवार लिया है ऐसे तेरे भक्त हे प्रभु, तेरे सच्चे दरबार में शोभायमान रहते हैं। वे दिन–रात आनन्द में स्थित रहते हैं और तेरे गुणों का उच्चारण करते हुए तुझमें ही समा जाते हैं

॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी नामु सुणि मंनि वसावणिआ ॥ हरि जीउ सचा ऊचो ऊचा हउमै मारि मिलावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि जीउ साचा साची नाई ॥ गुर परसादी किसै मिलाई ॥ गुर सबदि मिलहि से विछुड़हि नाही सहजे सचि समावणिआ ॥ २ ॥ तुझ ते बाहरि कछू न होइ ॥ तूं करि करि वेखहि जाणहि सोइ ॥ आपे करे कराए करता गुरमति आपि मिलावणिआ ॥ ३ ॥ कामणि गुणवंती हरि पाए ॥ भै भाइ सीगारु बणाए ॥ सतिगुरु सेवि सदा सोहागणि सच उपदेसि समावणिआ ॥ ४ ॥ सबदु विसारनि तिना ठउरु न ठाउ ॥ भ्रमि भूले जिउ सुंञै घरि काउ ॥ हलतु पलतु तिनी दोवै गवाए दुखे दुखि विहावणिआ ॥ ५ ॥ लिखदिआ लिखदिआ कागद मसु खोई ॥ दूजै भाइ सुखु पाए न कोई ॥ कूड़ु लिखहि तै कूड़ु कमावहि जलि जावहि कूड़ि चितु लावणिआ ॥ ६ ॥ गुरमुखि सचो सचु लिखहि वीचारु ॥ से जन सचे पावहि मोख दुआरु ॥ सचु कागदु कलम मसवाणी सचु लिखि सचि समावणिआ ॥ ७ ॥ मेरा प्रभु अंतरि बैठा वेखै ॥ गुर परसादी मिलै सोई जन लेखै ॥ नानक नामु मिलै वडिआई पूरे गुर ते पावणिआ ॥ ८ ॥ २२ ॥ २३ ॥ माझ महला ३ ॥ आतम राम परगासु गुर ते होवै ॥ हउमै मैलु लागी गुर सबदी खोवै ॥ मनु निरमलु अनदिनु भगती राता भगति करे हरि पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी आपि भगति करनि अवरा भगति करावणिआ ॥ तिना भगत जना कउ सद नमसकारु कीजै जो अनदिनु हरि गुण गावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे करता कारणु कराए ॥ जितु भावै तितु कारै लाए ॥ पूरै भागि गुर सेवा होवै गुर सेवा ते सुखु पावणिआ ॥ २ ॥ मरि मरि जीवै ता किछु पाए ॥ गुर परसादी हरि मंनि वसाए ॥ सदा मुकतु हरि मंनि वसाए सहजे सहजि समावणिआ ॥ ३ ॥ बहु करम कमावै मुकति न पाए ॥ देसंतरु भवै दूजै भाइ खुआए ॥ बिरथा जनमु गवाइआ कपटी बिनु सबदै दुखु पावणिआ ॥ ४ ॥ धावतु राखै ठाकि रहाए ॥ गुर परसादी परम पदु पाए ॥ सतिगुरु आपे मेलि मिलाए मिलि प्रीतम सुखु

॥ १ ॥ नाम को सुनकर उसे मन में बसाने वालों पर मैं बार–बार बलिहारी जाता हूँ । परमात्मा सच्चा एवं ऊँचे से ऊँचा है और वह अहम् को मार कर ही मिलता है ॥१॥ रहाउ ॥ प्रभु सच्चा है और उसका बड़प्पन भी सदैव बना रहने वाला है । गुरु की कृपा से कोई–कोई जीव ही उसे मिल पाता है । शब्द–गुरु के माध्यम से जो मिलते हैं वे फिर उससे बिछुड़ते नहीं हैं और स्वाभाविक रूप से ही वे सत्य में लीन हो जाते हैं ॥ २ ॥ हे प्रभु, तुझसे बाहर कुछ भी नहीं होता । तू ही संसार को पैदा करके उसकी देखभाल करता है और सब जीवों के मन की बात जानता है । वह कर्त्ता प्रभु स्वयं ही सब कुछ करता–कराता है और जीव को गुरुमति के माध्यम से ही अपने में मिला लेता है ॥ ३॥ गुणवान, कामिनी रूपी जीव स्त्री भय और आदर का श्रृंगार करके उस प्रभु को पा लेती है । सद्‌गुरु का सुमिरन करके वह सदा सुहागिन बनी रहती है और सत्य के उपदेश में ही लीन रहती है ॥ ४ ॥ जो शब्द–गुरु को विस्मृत कर देते हैं उनको कोई ठौर ठिकाना नहीं मिलता । वे ऐसे ही भ्रमों में भटकते रहते हैं जैसे निर्जन घर में कौआ व्यर्थ ही आता जाता रहता है । ऐसे व्यक्तियों ने इस लोक और परलोक को गँवा दिया होता है और उनका समय दुखों में ही व्यतीत होता है ॥ ५ ॥ द्वैतभाव में रहते हुए कई लोग लिखते–पढ़ते कागज़ और स्याही तक भी समाप्त कर देते हैं परन्तु उन्हें कोई भी सुख प्राप्त नहीं होता । वे झूठ ही लिखते हैं और उनका आचरण भी झूठा ही होता है क्योंकि उन्होंने झूठ में मन लगाया होता है इसलिए वे नष्ट हो जाते हैं ॥ ६ ॥ गुरमुख व्यक्ति सत्य और सत्य के विचार को ही लिखते हैं और ऐसे सच्चे व्यक्ति मोक्ष का द्वार पा जाते हैं । उनका कागज कलम स्याही आदि सब सत्य–प्रभु ही होता है इसलिए वे सत्य लिखते हुए सत्य में ही लीन हो जाते हैं ॥ ७ ॥ मेरा प्रभु अन्तर्मन में बैठा हुआ सब कुछ देखता है । गुरु की कृपा से जो उसे मिलता है वही स्वीकृत माना जाता है । हे नानक, परमात्मा के नाम से बड़प्पन प्राप्त होता है और यह बड़प्पन पूर्ण गुरु से ही पाया जाता है ॥ ८ ॥ २२ ॥ २३ ॥ माझ महला ३ ॥ आत्मा में राम–नाम का प्रकाश गुरु के माध्यम से ही होता है । मन में लगी हुई अहंकार की मैल को शब्द–गुरु ही समाप्त करता है। अब व्यक्ति का मन निर्मल हो जाता है और दिन–रात भक्ति के रंग में रंगा हुआ भक्ति करता हुआ ही वह प्रभु को पा लेता है ॥ १ ॥ जो स्वयं भक्ति करते हैं और दूसरों को भी करने के लिए प्रेरित करते हैं, मैं बार–बार उन पर बलिहारी जाता हूँ । जो सदैव हरि–गुण गाते हैं उन भक्त जनों को सदा प्रणाम किया जाना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कर्त्ता–प्रभु स्वयं ही सब कुछ करता–कराता है और जैसा चाहता है वह सब को कामों में लगाए रहता है । पूर्ण भाग्योदय से ही गुरु की सेवा प्राप्त होती है और गुरु की सेवा से ही सुख प्राप्त होता है ॥ २ ॥ विकारों के प्रति मरकर यदि व्यक्ति जीवित बना रहता है तभी वह कुछ हासिल कर सकता है और गुरु की कृपा से परमात्मा को मन में बसाए रहता है । जो हरि को मन में बसाता है वह सदैव मुक्त होता है और स्वाभाविक रूप में ही सहज अवस्था में लीन हो जाता है ॥ ३ ॥ अनेकों कर्म काण्ड करने से मुक्ति नहीं मिलती और द्वैत भाव में देश–देशान्तरों के भ्रमण में भी ख्वार ही होना पड़ता है । ऐसे कपटी व्यक्ति ने अपना जन्म व्यर्थ ही गँवा लिया है और शब्द से विहीन होकर वह दुख ही दुख पाता रहता है ॥ ४ ॥ जिसने दौड़ते हुए मन को रोक लिया है, गुरु की कृपा से उसको परम पद प्राप्त हो जाता है । सद्‌गुरु स्वयं ही उसको अपने में मिला लेता है और प्रियतम प्रभु को मिलकर उसे सुख ही सुख

पावणिआ ॥ ५ ॥ इकि कूड़ि लागे कूड़े फल पाए ॥ दूजै भाइ बिरथा जनमु गवाए ॥ आपि डुबे सगले कुल डोबे कूड़ु बोलि बिखु खावणिआ ॥ ६ ॥ इसु तन महि मनु को गुरमुखि देखै ॥ भाइ भगति जा हउमै सोखै ॥ सिध साधिक मोनिधारी रहे लिव लाइ तिन भी तन महि मनु न दिखावणिआ ॥ ७ ॥ आपि कराए करता सोई ॥ होरु कि करे कीतै किआ होई ॥ नानक जिसु नामु देवै सो लेवै नामो मंनि वसावणिआ ॥ ८ ॥ २३ ॥ २४ ॥ माझ महला ३ ॥ इसु गुफा महि अखुट भंडारा ॥ तिसु विचि वसै हरि अलख अपारा ॥ आपे गुपतु परगटु है आपे गुर सबदी आपु वंञावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी अंम्रित नामु मंनि वसावणिआ ॥ अंम्रित नामु महा रसु मीठा गुरमती अंम्रितु पीआवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउमै मारि बजर कपाट खुलाइआ ॥ नामु अमोलकु गुर परसादी पाइआ ॥ बिनु सबदै नामु न पाए कोई गुर किरपा मंनि वसावणिआ ॥ २ ॥ गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ ॥ अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥ जोती जोति मिली मनु मानिआ हरि दरि सोभा पावणिआ ॥ ३ ॥ सरीरहु भालणि को बाहरि जाए ॥ नामु न लहै बहुतु वेगारि दुखु पाए ॥ मनमुख अंधे सूझै नाही फिरि घिरि आइ गुरमुखि वथु पावणिआ ॥ ४ ॥ गुर परसादी सचा हरि पाए ॥ मनि तनि वेखै हउमै मैलु जाए ॥ बैसि सुथानि सद हरि गुण गावै सचै सबदि समावणिआ ॥ ५ ॥ नउ दर ठाके धावतु रहाए ॥ दसवै निज घरि वासा पाए ॥ ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती गुरमती सबदु सुणावणिआ ॥ ६ ॥ बिनु सबदै अंतरि आनेरा ॥ न वसतु लहै न चूकै फेरा ॥ सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरु खुलै नाही गुरु पूरै भागि मिलावणिआ ॥ ७ ॥ गुपतु परगटु तूं सभनी थाई ॥ गुर परसादी मिलि सोझी पाई ॥ नानक नामु सलाहि सदा तूं गुरमुखि मंनि वसावणिआ ॥ ८ ॥ २४ ॥ २५ ॥ माझ महला ३ ॥ गुरमुखि मिलै मिलाए आपे ॥ कालु न जोहै दुखु न संतापे ॥ हउमै मारि बंधन सभ तोड़ै गुरमुखि सबदि सुहावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि हरि नामि सुहावणिआ ॥ गुरमुखि गावै गुरमुखि

प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ ऐसे भी लोग हैं जो झूठ में ही लीन रहते हैं और झूठ का फल भी पाते हैं । ऐसे व्यक्तियों ने दुविधा में रहकर अपने जीवन को व्यर्थ ही गँवा दिया होता है; वे स्वयं तो डूबते ही हैं परन्तु अपने परिवार को भी डुबोते हैं और झूठ के बोलों का विष खाते रहते हैं ॥ ६ ॥ कोई बिरला ही गुरमुख बनकर इस तन के अन्दर रहने वाले मन की गति के प्रति चेतन बना रहता है और प्रेमाभक्ति के माध्यम से अपने अहंकार को समाप्त कर देता है । अनेकों सिद्ध-साधक एवं मौन व्रत का पालन करने वाले समाधियां लगाए रहते हैं परन्तु उन्होंने भी इस तन में रहने वाले मन को ठीक तरह से नहीं देखा है ॥ ७ ॥ वह कर्ता-प्रभु स्वयं ही सब कुछ करवाता है और किसी अन्य का किया हुआ भला कुछ क्या हो सकता है । हे नानक, जिसे प्रभु नाम देता है वही नाम को ग्रहण करता है और उसी के मन में नाम बस जाता है ॥ ८ ॥ २३ ॥ २४ ॥ माझ महला ३ ॥ इस शरीर रूपी गुफा में अक्षय भण्डार है और इसी शरीर में वह अलक्ष्य एवं अपरंपर परमात्मा बसता है । प्रभु इसमें स्वयं ही गुप्त रूप से विद्यमान है, स्वयं ही प्रकट होता है और शब्द-गुरु के माध्यम से व्यक्ति के अहंकार को दूर कर देता है ॥ १ ॥ अमृत-नाम को मन में बसाने वालों पर मैं बार-बार बलिहारी जाता हूँ । प्रभु का अमृत नाम रूपी महारस अत्यन्त मीठा है और गुरमत ही अमृत को पिलाने वाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की कृपा ने अमूल्य अमृत नाम को प्राप्त करवाया है । नाम ने अहंकार को मारकर व्यक्ति के अज्ञान के कठोर बन्द द्वारों को खोल दिया है । शब्द-गुरु के बिना किसी को नाम प्राप्त नहीं होता है और गुरु की कृपा से ही नाम मन में बसता है ॥ २ ॥ जब गुरु के ज्ञान का सच्चा अंजन आँखों में डाला गया तो अन्तर्मन प्रकाशित हो उठा और अज्ञान का अंधेरा नष्ट हो गया । जब जीव की ज्योति उस परम ज्योति में मिल जाती है तो व्यक्ति का मन प्रभु के प्रति आकर्षित हो जाता है । ऐसा व्यक्ति प्रभु के द्वार पर शोभायमान बना रहता है ॥ ३ ॥ प्रभु को शरीर में ही पूजने के लिए कई लोग बाहर भागते हैं । वे प्रभु-नाम को तो देखते नहीं और अनेकों बेगार जैसे कर्म-काण्ड करते हुए दुख पाते रहते हैं । ऐसे मनमुख अन्धे व्यक्तियों को कुछ सूझता नहीं और घूम फिर कर वे गुरमुख व्यक्तियों से ही हर वस्तु एवं युक्ति प्राप्त करते हैं ॥ ४ ॥ गुरु की कृपा से सदा स्थिर प्रभु को पाया जाता है और मन-तन के कार्य-व्यापार को बारीकी से देखने समझने पर अहंकार की मैल समाप्त हो जाती है । अब व्यक्ति उत्तम स्थान अर्थात सद्संगत में बैठकर सदा हरि का गुणानुवाद करता है और सत्य शब्द में लीन बना रहता है ॥ ५ ॥ जब व्यक्ति शरीर के नौ द्वारों को नियन्त्रण में रखकर भागते हुए मन को रोक लेता है तो दसवें द्वार अर्थात अपने मूल स्थान में उसका निवास हो जाता है । वहाँ उसे दिन-रात अनहद शब्द बजता हुआ सुनाई देता है और गुरमति में चलकर वह व्यक्ति गुणानुवाद की वाणी को ही अपनी सुरति में टिकाए रखता है ॥ ६ ॥ शब्द के बिना अन्तर्मन में अंधकार ही बना रहता है और अन्तर्मन में प्रभु-नाम रूपी वस्तु दिखाई नहीं देती तथा आवागमन समाप्त नहीं होता । प्रभु-द्वार की कुंजी सद्गुरु के ही हाथ में होती है और अन्य कोई उस द्वार को खोल नहीं सकता । पूर्ण भाग्योदय होने पर ही गुरु प्राप्त होता है ॥ ७ ॥ हे प्रभु, तू गुप्त एवं प्रकट रूप में सभी स्थानों पर विद्यमान है और यह सूझ बुद्धि गुरु की कृपा से ही मिलती है । हे नानक, तू सदा प्रभु के नाम का गुणानुवाद कर क्योंकि गुरमुख बनकर ही उसे मन में बसाया जा सकता है ॥ ८ ॥ २४ ॥ २५ ॥ माझ महला ३ ॥ गुरमुख व्यक्ति को वह स्वयं ही मिलता मिलाता है और गुरमुख व्यक्ति को न तो कोई दुख संताप होता है और न ही काल उसकी तरफ देखता है । गुरमुख व्यक्ति अहंकार को मारकर सब बन्धनों को तोड़ देता है और उसे शब्द ही सुहावना प्रतीत होता है ॥ १ ॥ जिनको हरि-नाम सुहावना लगता है मैं उन पर बार-बार बलिहारी जाता हूँ । गुरमुख बनकर ही व्यक्ति प्रभु के प्रेम में गाता

नाचै हरि सेती चितु लावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि जीवै मरै परवाणु ॥ आरजा न छीजै सबदु पछाणु ॥ गुरमुखि मरै न कालु न खाए गुरमुखि सचि समावणिआ ॥ २ ॥ गुरमुखि हरि दरि सोभा पाए ॥ गुरमुखि विचहु आपु गवाए ॥ आपि तरै कुल सगले तारे गुरमुखि जनमु सवारणिआ ॥ ३ ॥ गुरमुखि दुखु कदे न लगै सरीरि ॥ गुरमुखि हउमै चूकै पीर ॥ गुरमुखि मनु निरमलु फिरि मैलु न लागै गुरमुखि सहजि समावणिआ ॥ ४ ॥ गुरमुखि नामु मिलै वडिआई ॥ गुरमुखि गुण गावै सोभा पाई ॥ सदा अनंदि रहै दिनु राती गुरमुखि सबदु करावणिआ ॥ ५ ॥ गुरमुखि अनदिनु सबदे राता ॥ गुरमुखि जुग चारे है जाता ॥ गुरमुखि गुण गावै सदा निरमलु सबदे भगति करावणिआ ॥ ६ ॥ बाझु गुरू है अंध अंधारा ॥ जमकालि गरठे करहि पुकारा ॥ अनदिनु रोगी बिसटा के कीड़े बिसटा महि दुखु पावणिआ ॥ ७ ॥ गुरमुखि आपे करे कराए ॥ गुरमुखि हिरदै वुठा आपि आए ॥ नानक नामि मिलै वडिआई पूरे गुर ते पावणिआ ॥ ८ ॥ २५ ॥ २६ ॥ माझ महला ३ ॥ एका जोति जोति है सरीरा ॥ सबदि दिखाए सतिगुरु पूरा ॥ आपे फरकु कीतोनु घट अंतरि आपे बणत बणावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि सचे के गुण गावणिआ ॥ बाझु गुरू को सहजु न पाए गुरमुखि सहजि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूं आपे सोहहि आपे जगु मोहहि ॥ तूं आपे नदरी जगतु परोवहि ॥ तूं आपे दुखु सुखु देवहि करते गुरमुखि हरि देखावणिआ ॥ २ ॥ आपे करता करे कराए ॥ आपे सबदु गुर मंनि वसाए ॥ सबदे उपजै अंम्रित बाणी गुरमुखि आखि सुणावणिआ ॥ ३ ॥ आपे करता आपे भुगता ॥ बंधन तोड़े सदा है मुकता ॥ सदा मुकतु आपे है सचा आपे अलखु लखावणिआ ॥ ४ ॥ आपे माइआ आपे छाइआ ॥ आपे मोहु सभु जगतु उपाइआ ॥ आपे गुणदाता गुण गावै आपे आखि सुणावणिआ ॥ ५ ॥ आपे करे कराए आपे ॥ आपे थापि उथापे आपे ॥ तुझ ते बाहरि कछू न होवै तूं आपे कारै लावणिआ ॥ ६ ॥ आपे मारे आपि जीवाए ॥ आपे मेले मेलि मिलाए ॥ सेवा ते सदा सुखु पाइआ गुरमुखि सहजि

नाचता है और उसका चित्त प्रभु में लगा रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीने और मरने की दोनों अवस्थाओं में गुरमुख व्यक्ति प्रभु द्वार पर स्वीकृत माना जाता है क्योंकि उसने अपनी आयु को व्यर्थ नहीं गँवाया होता और वह शब्द को पहचानने वाला रहा होता है । गुरमुख व्यक्ति वास्तव में न तो मरता है और न उसे काल (समय) मिटा सकता है क्योंकि व्यक्ति गुरमुख बनकर सत्य-प्रभु में समाहित हो चुका होता है ॥ २ ॥ गुरमुख ने क्योंकि अन्तर्मन का अहंकार गँवा दिया होता है इसलिए वह प्रभु के द्वार पर सम्मान प्राप्त करता है । वह स्वयं संसार सागर को पार करता हुआ अपनी समस्त कुलों को भी पार करा देता है । इस प्रकार गुरमुख ने अपना जन्म सँवार लिया होता है ॥ ३ ॥ गुरमुख के शरीर को कभी भी कोई कष्ट नहीं होता क्योंकि गुरमुख के अहंकार की पीड़ा चुकी हुई होती है । गुरमुख के निर्मल मन को फिर मैल नहीं लगती और गुरमुख सहज में समाया हुआ होता है ॥ ४ ॥ गुरमुख को प्रभु-नाम का बड़प्पन प्राप्त होता है और ऐसी शोभा पाकर गुरमुख प्रभु का गुणानुवाद करता है । गुरमुख दिन-रात आनन्दित बना रहता है और शब्द की साधना करता है अर्थात शब्द के अनुरूप आचरण बनाता है ॥ ५ ॥ गुरमुख सदैव शब्द गुरु में रंगा रहता है और उसे चारों युगों में अच्छी तरह जाना जाता है । वह सदैव निर्मल प्रभु के गुण गाता है और शब्द-गुरु के माध्यम से भक्ति में लगा रहता है ॥ ६ ॥ गुरु के बिना चारों ओर घोर अंधकार है जिसमें यम के पंजे में फंसे हुए जीव चीखते पुकारते रहते हैं । ये जीव सदा के रोगी एवं विष्ठा के वे कीड़े हैं जो विष्ठा में ही बने रहकर दुख पाते हैं ॥ ७ ॥ गुरमुख जानता है कि प्रभु स्वयं ही सब कुछ करता कराता है । परमात्मा भी प्रसन्न होकर गुरमुख के हृदय में ही आन बसता है । हे नानक, प्रभु-नाम से ही आदर प्राप्त होता है और प्रभु का नाम पूर्ण-गुरु से ही पाया जाता है ॥ ८ ॥ २५ ॥ २६ ॥ माझ महला ३ ॥ सब शरीरों में एक प्रभु की ही ज्योति विद्यमान है और शब्द के माध्यम से पूर्ण सद्गुरु यह रहस्य समझा देता है । जीवों में दिखने वाले अन्तर को भी परमात्मा ने स्वयं ही रखा है और उसी ने ही सब जीवों को आकार प्रदान किया है । उस सत्य-प्रभु के गुण गाने वालों पर मैं बार-बार बलिहारी जाता हूँ । गुरु के बिना कोई भी सहज अवस्था को नहीं पा सकता और गुरमुख बनकर ही सहज में लीन हुआ जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, तू स्वयं ही सौन्दर्य है और तूने स्वयं ही जगत को मोहित किया हुआ है । तूने खुद ही अपनी कृपा-दृष्टि से सारे संसार को मर्यादा के सूत्र में पिरो रखा है । हे कर्त्ता प्रभु, तू स्वयं ही दुख-सुख देता है और गुरमुख व्यक्ति तुझे चारों ओर ही देखते हैं ॥ २ ॥ कर्त्ता प्रभु स्वयं ही सब कुछ करता कराता है और स्वयं ही शब्द-गुरु को जीवों के मन में बसाता है । शब्द से ही अमृत वाणी उत्पन्न होती है और गुरमुख व्यक्ति वह वाणी दूसरों को सुनाते हैं ॥ ३ ॥ प्रभु स्वयं ही कर्त्ता एवं भोक्ता है और स्वयं ही बन्धनों को तोड़ कर सदैव मुक्त बना रहता है । सदैव मुक्त बना रहने वाला प्रभु सत्य-स्वरूप है । वह अदृष्ट भी है और जीवों को दिखाई देने वाला भी है ॥ ४॥ प्रभु स्वयं ही माया और उस माया का प्रभाव है । प्रभु ने ही यह जगत एवं इसमें क्रियाशील मोह पैदा किया हुआ है । गुण देने वाला प्रभु स्वयं ही गुणगायन करने वाला भी है और स्वयं ही कहकर स्वयं ही सुनने वाला भी है ॥ ५॥ प्रभु स्वयं ही करने कराने वाला है और स्वयं ही पैदा करके नष्ट करने वाला भी है । हे प्रभु, तुझ से बाहर जाकर कुछ भी नहीं हो सकता है और तूने ही सब जीवों को विभिन्न कार्यों में लगा रखा है ॥ ६ ॥ मारने जिलाने वाला वह प्रभु स्वयं ही है जो स्वयं ही जीवों को अपने चरणों में लीन कर लेता है । सेवा करने से सदा सुख पाया जाता है और गुरमुख बन कर व्यक्ति सहज

समावणिआ ॥ ७ ॥ आपे ऊचा ऊचो होई ॥ जिसु आपि विखाले सु वेखै कोई ॥ नानक नामु वसै घट अंतरि आपे वेखि विखालणिआ ॥ ८ ॥ २६ ॥ २७ ॥ माझ महला ३ ॥ मेरा प्रभु भरपूरि रहिआ सभ थाई ॥ गुर परसादी घर ही महि पाई ॥ सदा सरेवी इक मनि धिआई गुरमुखि सचि समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी जगजीवनु मंनि वसावणिआ ॥ हरि जगजीवनु निरभउ दाता गुरमति सहजि समावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घर महि धरती धउलु पाताला ॥ घर ही महि प्रीतमु सदा है बाला ॥ सदा अनंदि रहै सुखदाता गुरमति सहजि समावणिआ ॥ २ ॥ काइआ अंदरि हउमै मेरा ॥ जंमण मरणु न चूकै फेरा ॥ गुरमुखि होवै सु हउमै मारे सचो सचु धिआवणिआ ॥ ३ ॥ काइआ अंदरि पापु पुंनु दुइ भाई ॥ दुही मिलि कै स्रिसटि उपाई ॥ दोवै मारि जाइ इकतु घरि आवै गुरमति सहजि समावणिआ ॥ ४ ॥ घर ही माहि दूजै भाइ अनेरा ॥ चानणु होवै छोडै हउमै मेरा ॥ परगटु सबदु है सुखदाता अनदिनु नामु धिआवणिआ ॥ ५ ॥ अंतरि जोति परगटु पासारा ॥ गुर साखी मिटिआ अंधिआरा ॥ कमलु बिगासि सदा सुखु पाइआ जोती जोति मिलावणिआ ॥ ६ ॥ अंदरि महल रतनी भरे भंडारा ॥ गुरमुखि पाए नामु अपारा ॥ गुरमुखि वणजे सदा वापारी लाहा नामु सद पावणिआ ॥ ७ ॥ आपे वथु राखै आपे देइ ॥ गुरमुखि वणजहि केई केइ ॥ नानक जिसु नदरि करे सो पाए करि किरपा मंनि वसावणिआ ॥ ८ ॥ २७ ॥ २८ ॥ माझ महला ३ ॥ हरि आपे मेले सेव कराए ॥ गुर कै सबदि भाउ दूजा जाए ॥ हरि निरमलु सदा गुणदाता हरि गुण महि आपि समावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी सचु सचा हिरदै वसावणिआ ॥ सचा नामु सदा है निरमलु गुर सबदी मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे गुरु दाता करमि बिधाता ॥ सेवक सेवहि गुरमुखि हरि जाता ॥ अंम्रित नामि सदा जन सोहहि गुरमति हरि रसु पावणिआ ॥ २ ॥ इसु गुफा महि इकु थानु सुहाइआ ॥ पूरै गुरि हउमै भरमु चुकाइआ ॥ अनदिनु नामु सलाहनि रंगि राते गुर किरपा ते पावणिआ ॥ ३ ॥

अवस्था में लीन बना रहता है ॥ ७ ॥ प्रभु ऊँचे से ऊँचा है परन्तु जिसे प्रभु स्वयं यह रहस्य बताए वह कोई बिरला व्यक्ति ही उसे जान सकता है । हे नानक, प्रभु नाम किसी भाग्यशाली के हृदय में ही बसता है और वह स्वयं देखकर अन्य लोगों को भी दिखा देता है ॥ ८ ॥ २६ ॥ २७ ॥ माझ महला ३ ॥ मेरा प्रभु सर्वत्र व्याप्त है परन्तु गुरु की कृपा से उसे अपने अन्दर ही प्राप्त किया जाता है । अब मैं उसका सदैव सुमिरन करता हूँ और एकाग्र मन से उसका ध्यान करता हूँ । गुरमुख बनकर ही व्यक्ति परमात्मा में लीन बना रहता है ॥ १ ॥ जिन्होंने संसार के जीवन प्रभु को मन में बसा लिया हैं मैं उन पर बार-बार बलिहारी जाता हूँ । जगत का जीवन प्रभु निर्भय रूप से दान देने वाला है और गुरमति के माध्यम से ही व्यक्ति स्वाभाविक रूप में ही उसमें लीन हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ व्यक्ति के हृदय में ही धरती और पाताल का आश्रय परमात्मा रूपी बैल स्थित है । इस शरीर में ही वह सदैव यौवन-पूर्ण प्रियतम बसता है । उस सुखदाता प्रभु का सुमिरन करने वाला व्यक्ति सदैव आनन्दित बना रहता है और गुरमति में चलता हुआ सहज अवस्था में लीन बना रहता है ॥ २ ॥ शरीर में अहंकार एवं ममता को बनाए रखने वाले जीवों का जन्म-मरण का चक्र समाप्त नहीं होता है । गुरमुख बनकर ही व्यक्ति अहंकार को समाप्त करता है और सदैव सत्य-प्रभु में ध्यान लगाए रहता है ॥ ३ ॥ पाप और पुण्य दोनों भाई हैं जो इस शरीर के अन्दर पैदा होते हैं । इन दोनों के मेल से ही सृष्टि उत्पन्न होती है । दोनों से ऊपर उठकर गुरमति के अनुरूप चलने वाला व्यक्ति सहज भाव में एक प्रभु के स्थान पर टिक जाता है ॥ ४ ॥ अन्तर्मन में ही द्वैतभाव और अन्धकार है परन्तु जब ज्ञान का प्रकाश हो जाता है तो अहंकार एवं ममता छूट जाते हैं । अब व्यक्ति के मन में सुखदाता शब्द प्रकट हो उठता है और वह हर समय प्रभु-नाम की आराधना में लग जाता है ॥ ५ ॥ मन में प्रभु की ज्योति जल जाने से अन्तर्मन के सभी आयाम प्रकट हो उठते हैं। गुरु की शिक्षा से अन्दर का अन्धकार मिट जाता है; हृदय कमल अब खिल उठता है और सुख को पाते हुए व्यक्ति की ज्योति उस परम ज्योति के साथ मिल जाती है ॥ ६ ॥ इस काया के अन्दर ही गुण रूपी रत्नों से भरे हुए भण्डार हैं परन्तु गुरमुख बनकर नाम के इस अपार भण्डार को पाया जाता है । गुरमुख व्यापारी बनकर गुण रूपी रत्नों का व्यापार करता है और सदा प्रभु नाम का लाभ प्राप्त करता है ॥ ७ ॥ प्रभु स्वयं ही नाम रूपी पदार्थ को जीवों को देता है और स्वयं ही उसे जीव के मन में टिकाए रहता है । गुरमुख बनकर अनेकों जीव नाम रूपी पदार्थ का व्यापार करते हैं । हे नानक, जिस व्यक्ति पर प्रभु की कृपा-दृष्टि होती है वही प्रभु-नाम रूपी सौदे को प्राप्त करता है और प्रभु कृपा करके ही जीव के मन में नाम बसाता है ॥ ८ ॥ २७ ॥ २८ ॥ माझ महला ३॥ परमात्मा स्वयं ही जीव को अपने से मिलाता और अपनी भक्ति रूपी सेवा करवाता है । शब्द-गुरु के माध्यम से ही जीव के मन से दुविधा भाव जाता रहता है । परमात्मा निर्मल एवं सदा गुणों का दान करने वाला है और परमात्मा इन गुणों में ही जीवों को लीन किए रहता है ॥ १ ॥ मैं उन पर सदा बलिहारी जाता हूँ जिन्होंने सत्य-प्रभु को हृदय में बसाया हुआ है । प्रभु का सच्चा नाम सदैव निर्मल है और शब्द-गुरु के माध्यम से उसे मन में बसाया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा स्वयं ही गुरु है; जीवों को दान देने वाला है तथा कर्मों का फल देने वाला विधाता है । प्रभु के सेवक उसकी सेवा करते हैं और गुरमुख बनकर उसे अच्छी तरह जान जाते हैं ॥ २ ॥ प्रभु के सेवकों के हृदय में प्रभु का अमृत-नाम सदा शोभायमान रहता है और वे गुरु की मति के अनुरूप चलकर प्रभु रूपी रस का आनन्द लेते हैं ॥ ३ ॥

गुर कै सबदि इहु गुफा वीचारे ॥ नामु निरंजनु अंतरि वसै मुरारे ॥ हरि गुण गावै सबदि सुहाए मिलि प्रीतम सुखु पावणिआ ॥ ४ ॥ जमु जागाती दूजै भाइ करु लाए ॥ नावहु भूले देइ सजाए ॥ घड़ी मुहत का लेखा लेवै रतीअहु मासा तोल कढावणिआ ॥ ५ ॥ पेईअड़ै पिरु चेते नाही ॥ दूजै मुठी रोवै धाही ॥ खरी कुआलिओ कुरूपि कुलखणी सुपनै पिरु नही पावणिआ ॥ ६ ॥ पेईअड़ै पिरु मंनि वसाइआ ॥ पूरै गुरि हदूरि दिखाइआ ॥ कामणि पिरु राखिआ कंठि लाइ सबदे पिरु रावै सेज सुहावणिआ ॥ ७ ॥ आपे देवै सदि बुलाए ॥ आपणा नाउ मंनि वसाए ॥ नानक नामु मिलै वडिआई अनदिनु सदा गुण गावणिआ ॥ ८ ॥ २८ ॥ २९ ॥ माझ महला ३ ॥ ऊतम जनमु सुथानि है वासा ॥ सतिगुरु सेवहि घर माहि उदासा ॥ हरि रंगि रहहि सदा रंगि राते हरि रसि मनु त्रिपतावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी पड़ि बुझि मंनि वसावणिआ ॥ गुरमुखि पड़हि हरि नामु सलाहहि दरि सचै सोभा पावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अलख अभेउ हरि रहिआ समाए ॥ उपाइ न किती पाइआ जाए ॥ किरपा करे ता सतिगुरु भेटै नदरी मेलि मिलावणिआ ॥ २ ॥ दूजै भाइ पड़ै नही बूझै ॥ त्रिबिधि माइआ कारणि लूझै ॥ त्रिबिधि बंधन तूटहि गुर सबदी गुर सबदी मुकति करावणिआ ॥ ३ ॥ इहु मनु चंचलु वसि न आवै ॥ दुबिधा लागै दह दिसि धावै ॥ बिखु का कीड़ा बिखु महि राता बिखु ही माहि पचावणिआ ॥ ४ ॥ हउ हउ करे तै आपु जणाए ॥ बहु करम करै किछु थाइ न पाए ॥ तुझ ते बाहरि किछू न होवै बखसे सबदि सुहावणिआ ॥ ५ ॥ उपजै पचै हरि बूझै नाही ॥ अनदिनु दूजै भाइ फिराही ॥ मनमुख जनमु गइआ है बिरथा अंति गइआ पछुतावणिआ ॥ ६ ॥ पिरु परदेसि सिगारु बणाए ॥ मनमुख अंधु ऐसे करम कमाए ॥ हलति न सोभा पलति न ढोई बिरथा जनमु गवावणिआ ॥ ७ ॥ हरि का नामु किनै विरलै जाता ॥ पूरे गुर कै सबदि पछाता ॥ अनदिनु भगति करे दिनु राती सहजे ही सुखु पावणिआ ॥ ८ ॥ सभ महि वरतै एको सोई ॥ गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥ नानक नामि रते जन सोहहि करि

शब्द–गुरु के माध्यम से ही इस शरीर–रूपी गुफा पर चिन्तन होता है और पता लगता है कि उसी में ही निरंजन एवं मुरारि नामों वाला प्रभु बसता है । ऐसा जान लेने वाले व्यक्तियों को सदैव शब्द ही सुन्दर लगता है और वे हरि के गुणों का गायन करते हुए प्रियतम से मिलकर सुख प्राप्त करते हैं ॥ ४ ॥ यम रूपी कर लेने वाला द्वैतभाव में फंसे हुए व्यक्तियों पर कर लगाकर उनसे कर वसूल करता है और प्रभु–नाम को भूल चुके लोगों को सज़ा देता है । वह उनसे जीवन के एक एक पल का एक एक घड़ी का हिसाब लेता है और एक एक रत्ती एक एक माशा जितना भी कुकर्मों वाला जीवन तौल लेता है ॥ ५ ॥ इस लोक में उस प्रियतम प्रभु को जीव स्त्री याद नहीं करती और द्वैत भाव में ठगी हुई अन्त में पुकार–पुकार कर रोती है । ऐसी स्त्री को बुरे घर वाली, कुरूप और कुलक्षणा कहा जाता है जिसने कभी सपने में भी प्रियतम प्रभु को न देखा हो ॥ ६ ॥ इस लोक में जिस जीव स्त्री ने प्रभु–पति को अपने मन में बनाए रखा पूर्ण–गुरु ने उसे सब ओर प्रभु दिखा दिया । वह स्त्री जिसने प्रभु–को सदैव अपने हृदय में बसाए रखा वह शब्द–गुरु के माध्यम से प्रभु–पति से मिलन का आनन्द लेती रहती है और उसके हृदय की सेज सुन्दर बनी रहती है ॥ ७॥ प्रभु स्वयं ही बुलाकर अपने नाम का दान देता है और अपने नाम को जीव के मन में बसा देता है । हे नानक, जिसे प्रभु नाम मिल जाता है उसे लोक–परलोक में सम्मान मिलता है और वह सदैव परमात्मा के गुण गाता रहता है ॥ ८॥ २८ ॥ २९ ॥ माझ महला ३ ॥ उनका जन्म उत्तम है जो सतसंगत में बने रहते हैं और सद्गुरु (परमात्मा) का सुमिरन करते हुए गृहस्थ जीवन में भी अलिप्त भाव से रहते हैं । वे सदैव हरि–रंग में रंगे रहते हैं और हरि–रस से ही अपने मन को तृप्त करते रहते हैं । गुरमुख व्यक्ति पढ़ते हैं और हरि–नाम का गुणानुवाद करते हैं तथा सत्य–प्रभु के समक्ष सम्मान प्राप्त करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अदृष्ट एवं रहस्यातीत प्रभु सभी जगह व्याप्त है । उसे किसी उपाय से भी नहीं पाया जा सकता । प्रभु कृपा करे तो सद्गुरु से मेल होता है और उसकी कृपादृष्टि से ही प्रभु–मिलाप सम्भव बनता है ॥ २ ॥ व्यक्ति दुविधा भाव में पड़ता है परन्तु उसे (प्रभु को) बूझता नहीं और त्रिगुणात्मक माया के प्रभाव के कारण ही झगड़ता एवं खीझता रहता है । शब्द–गुरु के माध्यम से ही त्रिविध बन्धन टूटते हैं और शब्द–गुरु ही मुक्ति प्रदान करता है ॥ ३ ॥ यह चंचल मन वश में नहीं आता और दुविधाओं में लीन यह दसों दिशाओं में भागता रहता है । विष का कीड़ा विष में ही लीन बना रहता है और अन्ततः विष में ही मर खप जाता है ॥ ४॥ व्यक्ति मैं–मैं करता हुआ अपने आप को जनवाता है । वह अनेकों कर्म काण्ड करता है परन्तु उसका किया हुआ कुछ भी स्वीकृत नहीं होता । हे प्रभु, तुझसे बाहर कुछ भी नहीं हो सकता और शब्द के माध्यम से ही हे सुन्दर प्रभु, तू जीवों का उद्धार कर देता है ॥ ५ ॥ जीव पैदा होता है, मरता है परन्तु परमात्मा को नहीं बूझता है और सदा दुविधा भाव में भटकता रहता है । मनमुख व्यक्ति का जन्म व्यर्थ हो जाता है और वह अन्त में पछताता हुआ ही यहाँ से जाता है ॥ ६ ॥ यदि प्रिय के परदेस में होने पर भी स्त्री सिंगार करती है तो वह मनमुख की तरह अन्धी बनकर ऐसे कर्मों में लगी हुई समझी जाती है । उसको न इस लोक में न उस लोक में स्थान मिलता है और उसका जन्म व्यर्थ ही चला जाता है ॥ ७ ॥ पूर्ण गुरु के उपदेश के माध्यम से कोई विरला व्यक्ति ही हरि–नाम के रहस्य को जान पाता है । ऐसा व्यक्ति दिन–रात भक्ति में लीन रहता है और स्वाभाविक रूप से ही सुख प्राप्त करता रहता है ॥ ८ ॥ कोई बिरला गुरमुख ही यह बूझता है कि सब में एक प्रभु ही कार्यशील है । हे नानक, जो प्रभु नाम में लीन हैं वे ही शोभायमान हैं और

किरपा आपि मिलावणिआ ॥ ९ ॥ २९ ॥ ३० ॥ माझ महला ३ ॥ मनमुख पड़हि पंडित कहावहि ॥ दूजै भाइ महा दुखु पावहि ॥ बिखिआ माते किछु सूझै नाही फिरि फिरि जूनी आवणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हउमै मारि मिलावणिआ ॥ गुर सेवा ते हरि मनि वसिआ हरि रसु सहजि पीआवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वेदु पड़हि हरि रसु नही आइआ ॥ वादु वखाणहि मोहे माइआ ॥ अगिआनमती सदा अंधिआरा गुरमुखि बूझि हरि गावणिआ ॥ २ ॥ अकथो कथीऐ सबदि सुहावै ॥ गुरमती मनि सचो भावै ॥ सचो सचु रवहि दिनु राती इहु मनु सचि रंगावणिआ ॥ ३ ॥ जो सचि रते तिन सचो भावै ॥ आपे देइ न पछोतावै ॥ गुर कै सबदि सदा सचु जाता मिलि सचे सुखु पावणिआ ॥ ४ ॥ कूड़ु कुसतु तिना मैलु न लागै ॥ गुर परसादी अनदिनु जागै ॥ निरमल नामु वसै घट भीतरि जोती जोति मिलावणिआ ॥ ५ ॥ त्रै गुण पड़हि हरि ततु न जाणहि ॥ मूलहु भुले गुर सबदु न पछाणहि ॥ मोह बिआपे किछु सूझै नाही गुर सबदी हरि पावणिआ ॥ ६ ॥ वेदु पुकारै त्रिबिधि माइआ ॥ मनमुख न बूझहि दूजै भाइआ ॥ त्रै गुण पड़हि हरि एकु न जाणहि बिनु बूझे दुखु पावणिआ ॥ ७ ॥ जा तिसु भावै ता आपि मिलाए ॥ गुर सबदी सहसा दूखु चुकाए ॥ नानक नावै की सची वडिआई नामो मंनि सुखु पावणिआ ॥ ८ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ माझ महला ३ ॥ निरगुणु सरगुणु आपे सोई ॥ ततु पछाणै सो पंडितु होई ॥ आपि तरै सगले कुल तारै हरि नामु मंनि वसावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी हरि रसु चखि सादु पावणिआ ॥ हरि रसु चाखहि से जन निरमल निरमल नामु धिआवणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो निहकरमी जो सबदु बीचारे ॥ अंतरि ततु गिआनि हउमै मारे ॥ नामु पदारथु नउ निधि पाए त्रै गुण मेटि समावणिआ ॥ २ ॥ हउमै करै निहकरमी न होवै ॥ गुर परसादी हउमै खोवै ॥ अंतरि बिबेकु सदा आपु वीचारे गुर सबदी गुण गावणिआ ॥ ३ ॥ हरि सरु सागरु निरमलु सोई ॥ संत चुगहि नित गुरमुखि होई ॥ इसनानु करहि सदा दिनु राती हउमै मैलु चुकावणिआ ॥ ४ ॥ निरमल हंसा प्रेम पिआरि ॥ हरि सरि वसै हउमै

उन्हें ही स्वयं प्रभु ने कृपा करके अपने से मिला लिया है ॥ ९ ॥ २९॥ ३० ॥ माझ महला ३ ॥ मनमुख व्यक्ति पढ़ते हैं और अपने को पंडित कहलाते हैं परन्तु द्वैत भाव में बने रहकर वे भयानक दुख पाते हैं । विषय-विकारों में डूबे हुए इन लोगों को कुछ सूझता नहीं और ये पुनः पुनः योनियों में आते जाते हैं ॥ १ ॥ जिन्होंने अहंकार को मारकर अपने को प्रभु में मिला लिया है मैं उन पर वार-बार बलिहारी जाता हूँ । गुरु की सेवा से ही प्रभु जीव के मन में आ बसता है और ऐसे व्यक्ति सहज भाव में हरि रस का आनन्द लेते रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विद्वान वेद पढ़ते हैं परन्तु उन्हें हरि रस प्राप्त नहीं होता । माया में ग्रस्त वे वाद-विवाद करते रहते हैं । अज्ञान में डूबे रहने से उनके मन में सदा माया-मोह का अन्धकार बना रहता है । गुरमुख बनकर ही व्यक्ति परमात्मा को जानता है और उसके गुण गाता है ॥ २ ॥ शब्द के माध्यम से सुहावने एवं अकथनीय प्रभु का कथन किया जाता है और गुरमति में मन लगाने से सत्य-प्रभु प्यारा लगने लगता है । सत्य में लीन व्यक्ति दिन-रात सत्य में ही रमण करते रहते हैं और उनका मन सत्य में रंगा रहता है ॥ ३ ॥ जो सत्य-प्रभु में लीन है उन्हें सत्य ही अच्छा लगता है । परमात्मा उन्हीं को देता है और पछताता नहीं है । सद्गुरु के माध्यम से सदैव सत्य को जाना जाता है और सत्य-प्रभु को मिलकर ही सुख प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ऐसे व्यक्तियों को झूठ, ठग-बुद्धि की मैल नहीं लगती और गुरु की कृपा से वे सदैव विकारों के प्रति जाग्रत बने रहते हैं । उनके मन में उनकी ज्योति को परम ज्योति से मिलाने वाला निर्मल नाम बस चुका होता है ॥ ५ ॥ जो व्यक्ति तीनों गुणों के पठन-पाठन में ही लगे रहते हैं वे हरि तत्व को नहीं जानते । वे वास्तव में भूले हुए भटकते रहते हैं और शब्द-गुरु को नहीं पहचानते । वे मोह में डूबे रहते हैं और उन्हें यह नहीं सूझता कि शब्द गुरु के माध्यम से ही प्रभु को पाया जाता है ॥ ७ ॥ जब उस प्रभु को अच्छा लगता है तो वह जीव को अपने में मिला लेता है और शब्द-गुरु के माध्यम से व्यक्ति के संशयों के दुख को समाप्त कर देता है । हे नानक, नाम का बड़प्पन ही सत्य है और नाम को मन में बसाकर ही सुख पाया जाता है ॥ ८ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ माझ महला ३ ॥ निर्गुण व सगुण प्रभु वह आप ही है । जो इस रहस्य को पहचान जाता है वह ही पंडित अथवा विद्वान माना जाता है । वह स्वयं संसार-सागर से पार हो जाता है और अपने समस्त कुल को प्रभु-नाम मन में बसाकर पार उतार लेता है ॥ १ ॥ जिन्होंने हरि-रस को चखकर उसका आनन्द लिया है मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ । हरि-रस को चखने वाले सेवक निर्मल हैं और निर्मल-नाम की ही आराधना करते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कर्म-बन्धन से पार जा चुका व्यक्ति वह है जो शब्द का चिन्तन करता है । उसके मन में तत्व-ज्ञान होता है और वह अहंकार को मार चुका होता है । उसी को ही नवनिधियों रूपी प्रभु-नाम प्राप्त होता है और तीनों गुणों को मिटाकर वह प्रभु में ही लीन हो जाता है ॥ २ ॥ अहंकार करने वाला व्यक्ति कर्म बन्धन से ऊपर नहीं उठ सकता परन्तु गुरु के आशिर्वाद के फलस्वरूप उसका अहंकार समाप्त हो जाता है । अब उसके अन्दर विवेक बुद्धि आ जाती है और वह सदा प्रभु का चिन्तन करता हुआ शब्द-गुरु के माध्यम से उस प्रभु का गुणानुवाद करता है ॥ ३ ॥ वह परमात्मा ही निर्मल सागर है और सन्त रूपी शान्त पुरुष गुरमुख रूपी हंस बनकर सदैव उस निर्मल सागर के किनारे राम रूपी मोती चुगते रहते हैं । वे दिन-रात उसी में स्नान करते हैं और अपने अहंकार की मैल को चुका देते हैं ॥ ४ ॥ निर्मल हंस वही है जिसका प्रेम प्यार प्रभु से है और जो अहंकार को मार कर परमात्मा रूपी सरोवर में बसता

मारि ॥ अहिनिसि प्रीति सबदि साचै हरि सरि वासा पावणिआ ॥ ५ ॥ मनमुखु सदा बगु मैला हउमै मलु लाई ॥ इसनानु करै परु मैलु न जाई ॥ जीवतु मरै गुर सबदु बीचारै हउमै मैलु चुकावणिआ ॥ ६ ॥ रतनु पदारथु घर ते पाइआ ॥ पूरै सतिगुरि सबदु सुणाइआ ॥ गुर परसादि मिटिआ अंधिआरा घटि चानणु आपु पछानणिआ ॥ ७ ॥ आपि उपाए तै आपे वेखै ॥ सतिगुरु सेवै सो जनु लेखै ॥ नानक नामु वसै घट अंतरि गुर किरपा ते पावणिआ ॥ ८ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ माझ महला ३ ॥ माइआ मोहु जगतु सबाइआ ॥ त्रै गुण दीसहि मोहे माइआ ॥ गुर परसादी को विरला बूझै चउथै पदि लिव लावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी माइआ मोहु सबदि जलावणिआ ॥ माइआ मोहु जलाए सो हरि सिउ चितु लाए हरि दरि महली सोभा पावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देवी देवा मूलु है माइआ ॥ सिंम्रिति सासत जिंनि उपाइआ ॥ कामु क्रोधु पसरिआ संसारे आइ जाइ दुखु पावणिआ ॥ २ ॥ तिसु विचि गिआन रतनु इकु पाइआ ॥ गुर परसादी मंनि वसाइआ ॥ जतु सतु संजमु सचु कमावै गुरि पूरै नामु धिआवणिआ ॥ ३ ॥ पेईअड़ै धन भरमि भुलाणी ॥ दूजै लागी फिरि पछोताणी ॥ हलतु पलतु दोवै गवाए सुपनै सुखु न पावणिआ ॥ ४ ॥ पेईअड़ै धन कंतु समाले ॥ गुर परसादी वेखै नाले ॥ पिर कै सहजि रहै रंगि राती सबदि सिंगारु बणावणिआ ॥ ५ ॥ सफलु जनमु जिना सतिगुरु पाइआ ॥ दूजा भाउ गुर सबदि जलाइआ ॥ एको रवि रहिआ घट अंतरि मिलि सतसंगति हरि गुण गावणिआ ॥ ६ ॥ सतिगुरु न सेवे सो काहे आइआ ॥ ध्रिगु जीवणु बिरथा जनमु गवाइआ ॥ मनमुखि नामु चिति न आवै बिनु नावै बहु दुखु पावणिआ ॥ ७ ॥ जिनि सिसटि साजी सोई जाणै ॥ आपे मेलै सबदि पछाणै ॥ नानक नामु मिलिआ तिन जन कउ जिन धुरि मसतकि लेखु लिखावणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ माझ महला ४ ॥ आदि पुरखु अपरंपरु आपे ॥ आपे थापे थापि उथापे ॥ सभ महि वरतै एको सोई गुरमुखि सोभा पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी निरंकारी नामु धिआवणिआ ॥

है । सत्य–शब्द के साथ दिन–रात उसकी प्रीति बनी रहती है और उसका निवास प्रभु रूपी सरोवर पर ही बना रहता है ॥५॥ मनमुख व्यक्ति वह बगुला है जो मैला है और जिसने अहंकार की मल अपने चारों ओर लगाई हुई है । वह स्नान तो किए जाता है पर उसकी मैल नहीं जाती है । जीवन में ही यदि वह विकारों के प्रति मृत हो जाए और शब्द–गुरु का विचार करे तो उसके अहंकार की मैल दूर हो सकती है ॥ ६ ॥ प्रभु–नाम का रत्न व्यक्ति के अन्दर ही पाया जाता है और ऐसा तब होता है जब पूर्ण सद्गुरु का शब्द सुना जाता है । गुरु की कृपा से ही अन्धकार मिटता है और अन्तर्मन में प्रकाश हो जाता है और अपने आप की पहचान हो जाती है ॥ ७ ॥ प्रभु स्वयं ही उत्पन्न करता है और स्वयं ही सब की संभाल करता है और जो सद्गुरु का सुमिरन करता है वही व्यक्ति स्वीकृत होता है । हे नानक, ऐसे व्यक्तियों के अन्तर्मन में प्रभु–नाम बस जाता है और ऐसा गुरु–कृपा से ही होता है ॥ ८ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ माझ महला ३ ॥ सारा संसार माया–मोह में लीन है और तीनों गुणों में सम्मोहित हुआ दिखाई दे रहा है । गुरु की कृपा से कोई विरला ही इस तथ्य को बूझता है और चौथे पद में सुरति लगाता है । जिन्होंने शब्द के माध्यम से माया मोह को जला दिया है मैं उन पर बार–बार बलिहारी जाता हूँ । जिन्होंने अन्तर्मन की मायावी शक्ति और मोह को जला दिया है उन्हीं का चित्त प्रभु में लगा है और उन्हीं को प्रभु–द्वार पर सम्मान प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह माया ही सुखों की कामना और दुखों के डर के रूप में देवी–देवताओं के रचे जाने का मूल कारण है । माया ने ही स्मृतियाँ और शास्त्र पैदा किए अर्थात इसी ने ही अनेकों कर्म–काण्ड रच दिए । सारे संसार में काम, क्रोध का प्रसार हो रहा है और जीव जन्म–मरण के चक्कर में पड़कर दुख पा रहे हैं ॥ २ ॥ इसी संसार में ही एक प्रभु–नाम के ज्ञान का रत्न भी स्थित है जो गुरु की कृपा से मन में बसता है । इसी ज्ञान के फलस्वरूप व्यक्ति सत्य, संयम एवं कामनाओं से परे जाने को जीवन का आचरण बनाता है और पूर्ण गुरु परमात्मा के नाम पर ध्यान टिकाता है ॥ ३ ॥ जीव–स्त्री इस लोक में भ्रमों में भूली रहती है और प्रभु को छोड़ अन्यों के पीछे लगकर पछताती रहती है । उसने इस लोक और परलोक दोनों को गँवा लिया होता है और उसे स्वप्न में भी सुख नहीं मिलता ॥ ४ ॥ जिसने इस लोक में ही अपने प्रियतम को मन में बसाए रखा है और गुरु की कृपा से उसे सदा अपने साथ ही देखा है, वह आत्मिक स्थिरता में टिकी रहती है और प्रभु पति के प्रेम रंग में रंगी हुई शब्द–गुरु का सिंगार धारण करती है ॥ ५ ॥ जिन्होंने सद्गुरु पा लिया है और शब्द–गुरु के माध्यम से द्वैतभाव को जला दिया है उनका यह जन्म सफल हो जाता है । उनके मन में सदैव एक प्रभु ही बसा रहता है और वे सद्संगत में मिलकर हरि–गुण गाते रहते हैं ॥ ६ ॥ जिसने सद्गुरु का सुमिरन नहीं किया वह भला इस संसार में क्यों आया । उसका जीना धिक्कार है और उसने अपना जन्म व्यर्थ ही गँवा दिया है । मनमुख व्यक्ति को कभी प्रभु–नाम का स्मरण नहीं होता और नाम से विहीन ऐसा व्यक्ति बहुत दुख पाता है ॥ ७ ॥ जिसने सृष्टि की रचना की है वही उसके बारे में जानता है। वह स्वयं ही शब्द के माध्यम से जीवों को अपनी पहचान करवाकर अपने में मिला लेता है । हे नानक, उन व्यक्तियों को परमात्मा का नाम प्राप्त होता है जिनके माथे पर प्रारम्भ में ही प्रभु के आदेश के अन्तर्गत ऐसा लेख लिखा होता है ॥ ८ ॥ १ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ माझ महला ४ ॥ वह प्रभु ही आदि पुरुष एवं अपरंपार है । वह स्वयं ही पैदा करता है, पालन करता है और सृष्टि को नष्ट भी कर देता है । वह एक प्रभु ही सब में बसा रहा है और जीव गुरमुख बनकर ही उसके सामने शोभायमान हो सकता है ॥ १ ॥ जो साकार देवी–देवताओं को छोड़कर केवल एक प्रभु के नाम का सुमिरन करते हैं मैं उन पर बार–बार बलिहारी जाता हूँ ।

तिसु रूपु न रेखिआ घटि घटि देखिआ गुरमुखि अलखु लखावणिआ ॥ १ ॥
रहाउ ॥ तू दइआलु किरपालु प्रभु सोई ॥ तुधु बिनु दूजा अवरु न कोई ॥
गुरु परसादु करे नामु देवै नामे नामि समावणिआ ॥ २ ॥ तूं आपे सचा
सिरजणहारा ॥ भगती भरे तेरे भंडारा ॥ गुरमुखि नामु मिलै मनु भीजै
सहजि समाधि लगावणिआ ॥ ३ ॥ अनदिनु गुण गावा प्रभ तेरे ॥ तुधु
सालाही प्रीतम मेरे ॥ तुधु बिनु अवरु न कोई जाचा गुर परसादी तूं
पावणिआ ॥ ४ ॥ अगमु अगोचरु मिति नही पाई ॥ अपणी क्रिपा करहि
तूं लैहि मिलाई ॥ पूरे गुर कै सबदि धिआईऐ सबदु सेवि सुखु पावणिआ ॥ ५ ॥
रसना गुणवंती गुण गावै ॥ नामु सलाहे सचे भावै ॥ गुरमुखि सदा रहै रंगि
राती मिलि सचे सोभा पावणिआ ॥ ६ ॥ मनमुखु करम करे अहंकारी ॥
जूऐ जनमु सभ बाजी हारी ॥ अंतरि लोभु महा गुबारा फिरि फिरि आवण
जावणिआ ॥ ७ ॥ आपे करता दे वडिआई ॥ जिन कउ आपि लिखतु धुरि
पाई ॥ नानक नामु मिलै भउ भंजनु गुर सबदी सुखु पावणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३४ ॥
माझ महला ५ घरु १ ॥ अंतरि अलखु न जाई लखिआ ॥ नामु रतनु लै
गुझा रखिआ ॥ अगमु अगोचरु सभ ते ऊचा गुर कै सबदि लखावणिआ ॥ १ ॥
हउ वारी जीउ वारी कलि महि नामु सुणावणिआ ॥ संत पिआरे सचै धारे
वडभागी दरसनु पावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधिक सिध जिसै कउ फिरदे ॥
ब्रहमे इंद्र धिआइनि हिरदे ॥ कोटि तेतीसा खोजहि ता कउ गुर मिलि
हिरदै गावणिआ ॥ २ ॥ आठ पहर तुधु जापे पवना ॥ धरती सेवक पाइक
चरना ॥ खाणी बाणी सरब निवासी सभना कै मनि भावणिआ ॥ ३ ॥ साचा
साहिबु गुरमुखि जापै ॥ पूरे गुर कै सबदि सिञापै ॥ जिन पीआ सेई
त्रिपतासे सचे सचि अघावणिआ ॥ ४ ॥ तिसु घरि सहजा सोई सुहेला ॥
अनद बिनोद करे सद केला ॥ सो धनवंता सो वड साहा जो गुर चरणी मनु
लावणिआ ॥ ५ ॥ पहिलो दे तैं रिजकु समाहा ॥ पिछो दे तैं जंतु उपाहा ॥
तुधु जेवडु दाता अवरु न सुआमी लवै न कोई लावणिआ ॥ ६ ॥ जिसु तूं तुठा
सो तुधु धिआए ॥ साध जना का मंत्रु कमाए ॥ आपि तरै सगले कुल तारे

उसकी रूप–रेखा कोई नहीं; वह सबके हृदय में दृष्टमान है और ऐसे अलख प्रभु को गुरमुख बनकर देखा जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु तू ही दयालु एवं कृपालु है, तेरे बिना अन्य दूसरा कोई नहीं है । गुरु कृपा करे और नाम का दान दे तब नामी प्रभु के नाम में लीन हुआ जाता है ॥ २ ॥ हे प्रभु, तू ही सच्चा सृजनहार है; तेरी भक्ति के भण्डार भरे पड़े हैं । गुरमुख बनकर व्यक्ति को तेरा–नाम प्राप्त होता है और उसका मन तृप्त होकर सहज समाधि में टिका रहता है ॥ ३ ॥ हे मेरे प्रियतम प्रभु, मैं दिन–रात तेरे गुण गाता रहूँ और तेरी ही प्रशंसा करता रहूँ । तेरे बिना मैं अन्य किसी से कुछ नहीं माँगता और गुरु की कृपा से मुझे तुझसे ही सब कुछ प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ हे अगम अगोचर प्रभु, तेरे बारे में कोई भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता । जिस पर तू अपनी कृपा करता है उसे तू अपने में मिला लेता है । पूर्ण शब्द–गुरु के माध्यम से तेरी आराधना की जाती है और शब्द के सुमिरन से ही सुख प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ वह जीभ गुणवन्ती है जो प्रभु के नाम का गुणानुवाद करती है और वह ही सत्य–प्रभु को भाती है । वह गुरमुख बनकर सदा प्रभु–रंग में रंगी रहती है और सत्य–प्रभु से मिलकर वह सम्मान प्राप्त करती है ॥ ६॥ मनमुख के सभी कर्म अहंकारी बनकर किए जाते हैं और वह जन्म को जूए की बाजी की तरह हार जाता है । उसके अन्तर्मन में लोभ का गहन अन्धकार रहता है और वह पुनः पुनः जन्म–मरण के चक्कर में पड़ा रहता है ॥ ७ ॥ जिन का प्रारम्भ से ही लेख लिखा होता है उनको कर्ता–प्रभु स्वयं ही बड़प्पन प्रदान करता है । हे नानक, जब भय–नाशक प्रभु–नाम प्राप्त होता है तो शब्द–गुरु के माध्यम से जीव को सुख मिलता रहता है ॥ ८ ॥ १ ॥ ३४ ॥ माझ महला ५ घरु १ ॥ वह अदृष्ट प्रभु अन्दर ही है परन्तु दिखाई नहीं देता है । हर जीव के अन्दर अमूल्य नाम–रत्न छिपा कर रखा हुआ होता है । अगम, अगोचर एवं सबसे ऊँचे प्रभु को शब्द–गुरु के माध्यम से ही देखा जाता है ॥ १ ॥ जो इस कलियुग में नाम की महिमा कमाते हैं मैं उन पर बार–बार बलिहारी जाता हूँ । सदा स्थिर परमात्मा ने जिनको अपना सच्चा नाम धारण करवा लिया है वे प्रभु के प्यारे बनकर शान्त–पुरुष हो गए हैं । सौभाग्यशालियों ने परमात्मा का दर्शन पा लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिद्ध–साधक जिस प्रभु के लिए भटकते फिरते हैं और ब्रह्मा इन्द्र आदि भी जिसका ध्यान करते हैं और जिसे तेतीस करोड़ देवतागण भी खोजते फिर रहे हैं, उसी का भाग्यशाली व्यक्ति गुरु से मिलकर गुणानुवाद करते रहते हैं ॥ २ ॥ हे प्रभु, पवन आठों प्रहर तेरा सुमिरन करती है और धरती भी तेरे चरणों की सेवक है । जीवन के चारों स्रोतों एवं समस्त वाणियों में हे प्रभु, तू ही निवास कर रहा है और तू ही सब जीवों के मन को भाने वाला है ॥ ३ ॥ गुरमुख बनकर ही सच्चे साहिब परमात्मा को जाना जाता है और शब्द–गुरु के माध्यम से ही प्रभु के साथ पहचान बनती है । जिन्होंने उसका अमृत–नाम–रस पीया है उनकी प्यास बुझ गई है और वे प्रभु के सत्य रूप का पान करके अघा गए हैं ॥ ४ ॥ प्रभु चरणों में लीन व्यक्ति का हृदय सहज एवं सुखी अवस्था में बना रहता है । ऐसा व्यक्ति आनन्द विनोद में सदा ही क्रीड़ा करता रहता है । जिसने गुरु चरणों में मन को लगा लिया है वही धनवान है और वही बड़ा साहूकार है ॥ ५ ॥ हे प्रभु, पहले तूने जीवों के खान–पान का प्रबन्ध किया है और बाद में तूने जीव–जन्तुओं की उत्पत्ति की है । हे स्वामी, तेरे जैसा दाता अन्य कोई नहीं है जो तेरी बराबरी में तेरे पास तक भी पहुँच सके । जिस पर तू प्रसन्न होता है वही तेरा सुमिरन करता है और साधना वाले व्यक्तियों के दिए हुए उपदेश पर आचरण करता है । वह स्वयं भवसागर से पार हो जाता है और अपने समस्त कुलों को भी पार उतार लेता है तथा

तिसु दरगह ठाक न पावणिआ ॥ ७ ॥ तूं वडा तूं ऊचो ऊचा ॥ तूं बेअंतु अति मूचो मूचा ॥ हउ कुरबाणी तेरै वंञा नानक दास दसावणिआ ॥ ८ ॥ १ ॥ ३५ ॥ माझ महला ५ ॥ कउणु सु मुकता कउणु सु जुगता ॥ कउणु सु गिआनी कउणु सु बकता ॥ कउणु सु गिरही कउणु उदासी कउणु सु कीमति पाए जीउ ॥ १ ॥ किनि बिधि बाधा किनि बिधि छूटा ॥ किनि बिधि आवणु जावणु तूटा ॥ कउण करम कउण निहकरमा कउणु सु कहै कहाए जीउ ॥ २ ॥ कउणु सु सुखीआ कउणु सु दुखीआ ॥ कउणु सु सनमुखु कउणु वेमुखीआ ॥ किनि बिधि मिलीऐ किनि बिधि बिछुरै इह बिधि कउणु प्रगटाए जीउ ॥ ३ ॥ कउणु सु अखरु जितु धावतु रहता ॥ कउणु उपदेसु जितु दुखु सुखु सम सहता ॥ कउणु सु चाल जितु पारब्रहमु धिआए किनि बिधि कीरतनु गाए जीउ ॥ ४ ॥ गुरमुखि मुकता गुरमुखि जुगता ॥ गुरमुखि गिआनी गुरमुखि बकता ॥ धंनु गिरही उदासी गुरमुखि गुरमुखि कीमति पाए जीउ ॥ ५ ॥ हउमै बाधा गुरमुखि छूटा ॥ गुरमुखि आवणु जावणु तूटा ॥ गुरमुखि करम गुरमुखि निहकरमा गुरमुखि करे सु सुभाए जीउ ॥ ६ ॥ गुरमुखि सुखीआ मनमुखि दुखीआ ॥ गुरमुखि सनमुखु मनमुखि वेमुखीआ ॥ गुरमुखि मिलीऐ मनमुखि विछुरै गुरमुखि बिधि प्रगटाए जीउ ॥ ७ ॥ गुरमुखि अखरु जितु धावतु रहता ॥ गुरमुखि उपदेसु दुखु सुखु सम सहता ॥ गुरमुखि चाल जितु पारब्रहमु धिआए गुरमुखि कीरतनु गाए जीउ ॥ ८ ॥ सगली बणत बणाई आपे ॥ आपे करे कराए थापे ॥ इकसु ते होइओ अनंता नानक एकसु माहि समाए जीउ ॥ ९ ॥ २ ॥ ३६ ॥ माझ महला ५ ॥ प्रभु अबिनासी ता किआ काड़ा ॥ हरि भगवंता ता जनु खरा सुखाला ॥ जीअ प्रान मान सुखदाता तूं करहि सोई सुखु पावणिआ ॥ १ ॥ हउ वारी जीउ वारी गुरमुखि मनि तनि भावणिआ ॥ तूं मेरा परबतु तूं मेरा ओला तुम संगि लवै न लावणिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरा कीता जिसु लागै मीठा ॥ घटि घटि पारब्रहमु तिनि जनि डीठा ॥ थानि थनंतरि तूंहै तूंहै इको इकु वरतावणिआ ॥ २ ॥ सगल मनोरथ तूं देवणहारा ॥ भगती भाइ भरे भंडारा ॥ दइआ धारि राखे

प्रभु दरबार में भी उसे कोई रोक सामने नहीं आती है ॥ ७ ॥ हे प्रभु, तू बड़ा है, ऊँचे से ऊंचा है, अनन्त है एवं बहुत ही अधिक विस्तार वाला है । हे नानक के प्रभु, मैं तुझ पर कुर्बान जाता हूँ और मैं तेरे दासों का भी दास हूँ। ॥ ८ ॥ १ ॥ ३५ ॥ माझ महला ५ ॥ मुक्त कौन है और परमात्मा के साथ संयुक्त कौन है ? ज्ञानवान कौन है और व्याख्यान करने वाला कौन है ? गृहस्थी कौन है और तटस्थ भाव में रहने वाला कौन है जो उस प्रभु का महत्व आंक सकता है ॥ १ ॥ जीव किस प्रकार बन्धन में पड़ जाता है और कैसे छूटता है ? जीव का आवागमन कैसे टूटता है ? कर्मों में लगा हुआ और कर्म बन्धन से परे चले जाने वाला किसे कहा जाता है ॥ २ ॥ सुखी कौन है और दुखी कौन है ? सामने बना रहने वाला गुरमुख कौन है और गुरु की ओर से मुँह फेर लेने वाला मनमुख कौन है ? कौन है जो यह बताए कि किस ढंग से प्रभु से मिला जाता है और जीव क्यों उससे बिछुड़ जाता है ? ॥ ३ ॥ शब्द के माध्यम से ऐसी कौन सी शिक्षा है जिससे दौड़ में लगा रहता मन स्थिर हो जाता है ? वह कौन सा उपदेश है जिसे सुनकर दुख–सुख समान रूप से सहन किए जाते हैं । कौन सा ढंग है जिससे परब्रह्म परमात्मा पर ध्यान लगता है और कौन सी विधि है जिससे प्रभु की कीर्ति का गान किया जाता है ॥ ४ ॥ गुरमुख ही मुक्त है और गुरमुख ही परमात्मा से संयुक्त है । गुरमुख ही ज्ञानवान है और गुरमुख ही व्याख्यान करने वाला है । गृहस्थ एवं तटस्थ भाव में रहने वाला गुरमुख ही धन्य है और गुरमुख ही प्रभु की कीमत जानता है ॥ ५ ॥ जीव अहंकार में पड़कर बंध जाता है और गुरमुख बनकर छूट जाता है । गुरमुख का ही आवागमन का चक्र टूटता है और गुरमुख ही कर्म करता है और गुरमुख ही निष्कर्म अर्थात कर्मों के दुष्प्रभाव से परे होता है । गुरमुख जो भी करता है वह सहज स्वाभाविक रूप में ही करता है ॥ ६ ॥ गुरमुख सुखी एवं मनमुख दुखी रहता है; गुरमुख ही प्रभु के सामने उपस्थित रहता है और मनमुख प्रभु से विमुख रहता है । गुरमुख बनकर व्यक्ति प्रभु से मिलता है; मनमुख बनकर प्रभु से बिछुड़ जाता है और मिलने और बिछुड़ने की विधियों को गुरमुख ही प्रकट कर सकता है ॥ ७ ॥ गुरु के मुख से उच्चारित अक्षर अर्थात 'गुरबाणी' ही के कारण दौड़ता भागता मन स्थिर हो जाता है । गुरु के मुख से निकला हुआ उपदेश ही है जिसे ग्रहण करके व्यक्ति दुख–सुख को एक ही मानकर समान भाव से भोगता है । परब्रह्म की आराधना करने वाला ही गुरमुख की भांति चलने वाला है और गुरमुख ही प्रभु कीर्ति का गायन करता है ॥ ८ ॥ परमात्मा ने स्वयं ही सारा मौका–मेल बनाया है और वह स्वयं ही सब कुछ करता कराता हुआ स्थापनाएं करता है । हे नानक, एक प्रभु ही अनन्त रूप हो जाता है और संसार के यह अनन्त रूप पुनः उस एक में ही समा जाते हैं ॥ ९ ॥ २ ॥ ३६ ॥ माझ महला ५ ॥ जब प्रभु अविनाशी विद्यमान है तो फिर भला किस बात की चिन्ता है । जीव यदि हरि की भक्ति करता है तो वह बहुत ही सुख पाता है । हे प्रभु, तू ही सबको प्राण, मान और सुख देने वाला है और जो तू देता है वही सुख सबको मिलता है ॥ १ ॥ तन–मन से प्रभु को चाहने वाले गुरमुख पर मैं बार–बार बलिहारी जाता हूँ । हे प्रभु, तू ही मेरा पर्वत के समान विशाल आश्रय है और तू ही मेरा हर प्रकार का पर्दा है । तेरे जैसा अन्य कोई आस–पास नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसे तेरा किया हुआ मीठा लगता है उस व्यक्ति ने हर एक शरीर में परब्रहम को देख लिया है । तू एक और एक ही रूप में सब देश–देशान्तरों में कार्यशील है ॥ २ ॥ सभी मनोकामनाओं का फल तू देने वाला है और तेरे भण्डार भक्ति–भाव से भरे पड़े हैं । जो भाग्यशाली होकर तुझमें लीन हो गए हैं हे प्रभु, तूने दया

तुधु सेई पूरे करमि समावणिआ ॥ ३ ॥ अंध कूप ते कढै चाड़े ॥ करि किरपा दास नदरि निहाले ॥ गुण गावहि पूरन अबिनासी कहि सुणि तोटि न आवणिआ ॥ ४ ॥ ऐथै ओथै तूंहै रखवाला ॥ मात गरभ महि तुम ही पाला ॥ माइआ अगनि न पोहै तिन कउ रंगि रते गुण गावणिआ ॥ ५ ॥ किआ गुण तेरे आखि समाली ॥ मन तन अंतरि तुधु नदरि निहाली ॥ तूं मेरा मीतु साजनु मेरा सुआमी तुधु बिनु अवरु न जानणिआ ॥ ६ ॥ जिस कउ तूं प्रभ भइआ सहाई ॥ तिसु तती वाउ न लगै काई ॥ तू साहिबु सरणि सुखदाता सतसंगति जपि प्रगटावणिआ ॥ ७ ॥ तूं ऊच अथाहु अपारु अमोला ॥ तूं साचा साहिबु दासु तेरा गोला ॥ तूं मीरा साची ठकुराई नानक बलि बलि जावणिआ ॥ ८ ॥ ३ ॥ ३७ ॥

माझ महला ५ घरु २ ॥ नित नित दयु समालीऐ ॥ मूलि न मनहु विसारीऐ ॥ रहाउ ॥ संता संगति पाईऐ ॥ जितु जम कै पंथि न जाईऐ ॥ तोसा हरि का नामु लै तेरे कुलहि न लागै गालि जीउ ॥ १ ॥ जो सिमरंदे सांईऐ ॥ नरकि न सेई पाईऐ ॥ तती वाउ न लगई जिन मनि वुठा आइ जीउ ॥ २ ॥ सेई सुंदर सोहणे ॥ साधसंगि जिन बैहणे ॥ हरि धनु जिनी संजिआ सेई गंभीर अपार जीउ ॥ ३ ॥ हरि अमिउ रसाइणु पीवीऐ ॥ मुहि डिठै जन कै जीवीऐ ॥ कारज सभि सवारि लै नित पूजहु गुर के पाव जीउ ॥ ४ ॥ जो हरि कीता आपणा ॥ तिनहि गुसाई जापणा ॥ सो सूरा परधानु सो मसतकि जिस दै भागु जीउ ॥ ५ ॥ मन मंधे प्रभु अवगाहीआ ॥ एहि रस भोगण पातिसाहीआ ॥ मंदा मूलि न उपजिओ तरे सची कारै लागि जीउ ॥ ६ ॥ करता मंनि वसाइआ ॥ जनमै का फलु पाइआ ॥ मनि भावंदा कंतु हरि तेरा थिरु होआ सोहागु जीउ ॥ ७ ॥ अटल पदारथु पाइआ ॥ भै भंजन की सरणाइआ ॥ लाइ अंचलि नानक तारिअनु जिता जनमु अपार जीउ ॥ ८ ॥ ४ ॥ ३८ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ माझ महला ५ घरु ३ ॥

हरि जपि जपे मनु धीरे ॥१॥ रहाउ ॥ सिमरि सिमरि गुरदेउ मिटि गए भै दूरे ॥१॥ सरनि

करके उनकी रक्षा की है ॥ ३ ॥ अपने सेवकों पर कृपा–दृष्टि करके तूने उन्हें निहाल कर दिया है और अज्ञान के अन्धे कुएं में से निकाल कर उन्हें किनारे पर ला खड़ा किया है । वे अब पूर्ण अविनाशी प्रभु के गुण गाते हैं और हे प्रभु, कहने और सुनने से तेरे गुणों में कमी नहीं आती ॥ ४ ॥ हे प्रभु, इस लोक और परलोक में तू ही रक्षक है और माता के गर्भ में तुम ने ही जीव को पाला–पोसा है । जो प्रभु रंग में रंगकर उसके गुण गाते हैं उन पर माया की अग्नि का कोई प्रभाव नहीं होता ॥ ५ ॥ तेरे किन–किन गुणों को मैं याद करूँ; मैं तो अपने तन, मन के अन्दर केवल तुझे ही देखता हूँ । तू ही मेरा मित्र, सज्जन और स्वामी है और तेरे बिना मैं अन्य किसी को नहीं जानता ॥ ६ ॥ हे प्रभु, जिसका सहायक तू बन गया उसे तो कभी दुखों की गर्म हवा भी नहीं लग सकती । तू ही अपनी शरण में लेने वाला सुखदायक मालिक है और सद्संगत में ही जाप के द्वारा तेरा साक्षात्कार होता है ॥ ७ ॥ तू ऊँचा अथाह, अपार एवं अमूल्य है; तू ही सच्चा साहिब है और मैं तेरा दास एवं गुलाम हूँ । हे मालिक, तेरी ठकुराई ही सच्ची है और नानक तुझ पर बलिहारी जाता है ॥ ८ ॥ ३ ॥ ३७ ॥ माझ महला ५ घरु २ ॥ नित्य–प्रतिदिन परमात्मा को याद किया जाना चाहिए और उसे कभी भी मन से भुलाना नहीं चाहिए ॥ रहाउ ॥ शान्त पुरुषों की संगत प्राप्त करनी चाहिए जिससे यम के मार्ग पर नहीं जाया जाता । हरि–नाम का सिक्का रास्ते के खर्च के लिए लिया जाना चाहिए ताकि तेरी कुल को कलंक न लगे ॥ १ ॥ जो प्रभु का सुमिरन करते हैं उन्हें नर्क में नहीं डाला जाता और प्रभु प्रसन्न होकर जिसके मन में आन बसा उसे तो गर्म हवा के सेंक जितना भी दुख नहीं लगता ॥ २ ॥ सुन्दर और शोभायमान वे ही हैं जो भले पुरुषों की संगत में बैठते हैं । जिन्होंने हरि रूपी धन को इकट्ठा किया है वे ही गम्भीर एवं अपरंपार व्यक्ति हैं ॥ ३ ॥ हरि रूपी अमृत की रसायन को पीया जाना चाहिए और भक्तजनों के दर्शन करके जीवित बने रहना चाहिए । हे जीव, प्रतिदिन गुरु के चरणों की वन्दना करके अपने सभी कार्यों को सँवार लेना चाहिए ॥ ४ ॥ जिसे परमात्मा ने अपना बना लिया है वह ही हरि का जाप करता है । वह ही प्रमुख शूरवीर है जिसके माथे पर भाग्यशाली लेख अंकित है ॥ ५ ॥ जिन्होंने अपने मन में प्रभु का गहन चिन्तन किया है वे ही बादशाहतों का आनन्द भोगते हैं । उनसे कुछ भी बुरा नहीं होता और सत्य के कार्यों में लगकर वे भवसागर तैर जाते हैं ॥ ६॥ जिसने कर्ता प्रभु को मन में बसा लिया उसने अपने जीवन का फल पा लिया है । उन्हें प्रभु पति के रूप में मन में अच्छा लगता है और इस प्रकार हे जीव स्त्री, तेरा सुहाग अटल बना रहता है ॥ ७ ॥ भय–भंजन प्रभु की शरण में आकर हरि–नाम रूपी अटल पदार्थ प्राप्त हो जाता है । हे नानक, प्रभु के आँचल को पकड़कर संसार–सागर को तैर लिया जाता है और इस अपार संभावनाओं वाले मानव–जीवन को जीत लिया जाता है ॥ ८ ॥ ४ ॥ ३८ ॥

१ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥ माझ महला ५ घरु ३ ॥

हरिनाम के जाप से मन धैर्यवान बनता है ॥१॥रहाउ॥ प्रभु गुरुदेव का सुमिरन करते हुए सभी भय मिटकर दूर चले जाते हैं॥१॥

आवै पारब्रहम की ता फिरि काहे झूरे ॥ २ ॥ चरन सेव संत साध के सगल मनोरथ पूरे ॥ ३ ॥ घटि घटि एकु वरतदा जलि थलि महीअलि पूरे ॥ ४ ॥ पाप बिनासनु सेविआ पवित्र संतन की धूरे ॥ ५ ॥ सभ छडाई खसमि आपि हरि जपि भई ठरूरे ॥ ६ ॥ करतै कीआ तपावसो दुसट मुए होइ मूरे ॥ ७ ॥ नानक रता सचि नाइ हरि वेखै सदा हजूरे ॥ ८ ॥ ५ ॥ ३९ ॥ १ ॥ ३२ ॥ १ ॥ ५ ॥ ३९ ॥

बारह माहा मांझ महला ५ घरु ४   १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥ चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम ॥ धेनु दुधै ते बाहरी कितै न आवै काम ॥ जल बिनु साख कुमलावती उपजहि नाही दाम ॥ हरि नाह न मिलीऐ साजनै कत पाईऐ बिसराम ॥ जितु घरि हरि कंतु न प्रगटई भठि नगर से ग्राम ॥ स्रब सीगार तंबोल रस सणु देही सभ खाम ॥ प्रभ सुआमी कंत विहूणीआ मीत सजण सभि जाम ॥ नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु ॥ हरि मेलहु सुआमी संगि प्रभ जिस का निहचल धाम ॥ १ ॥ चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा ॥ संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा ॥ जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा ॥ इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा ॥ जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा ॥ सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा ॥ जिनी राविआ सो प्रभू तिंना भागु मणा ॥ हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना ॥ चेति मिलाए सो प्रभू तिस कै पाइ लगा ॥ २ ॥ वैसाखि धीरनि किउ वाढीआ जिना प्रेम बिछोहु ॥ हरि साजनु पुरखु विसारि कै लगी माइआ धोहु ॥ पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु ॥ पलचि पलचि सगली मुई झूठै धंधै मोहु ॥ इकसु हरि के नाम बिनु अगै लईअहि खोहि ॥ दयु विसारि विगुचणा प्रभ बिनु अवरु न कोइ ॥ प्रीतम चरणी जो लगे तिन की निरमल सोइ ॥

जो जीव परब्रह्म की शरण में आ जाता है तो फिर उसे क्या चिन्ता है ॥ २ ॥ हे जीव, शान्त, पुरुषों एवं साधनाओं वाले व्यक्तियों के चरणों की सेवा करने से सभी मनोरथ पूरे हो जाते हैं ॥ ३ ॥ जल–थल एवं पाताल में वह एक कार्यशील प्रभु ही हर शरीर में गतिमान है ॥ ४ ॥ शान्त पुरुषों की पवित्र धूल के कारण ही पाप–विनाशक प्रभु का सुमिरन किया जाता है ॥ ५ ॥ मालिक प्रभु ने स्वयं ही सब ओर से जीव को छुड़ा लिया है और हरि का जाप करके जीव–स्त्री शान्त हो गई है । कर्त्ता–प्रभु ने न्याय किया है; दुष्ट व्यक्ति नष्ट हो गए हैं और ऐसे ही कई अन्य जड़ बन गए हैं ॥ ७ ॥ नानक उसके सदा स्थिर नाम में लीन बना रहता है और परमात्मा को सदा आस–पास ही देखता अनुभव करता रहता है ॥ ८ ॥ ५ ॥ ३९ ॥ १ ॥ ३२ ॥ १ ॥ ५ ॥ ३९ ॥

* बारह माहा मांझ महला ५ घरु ४   १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे प्रभु! मेरी तरह सभी लोग अपने किए हुए कर्मों के फलस्वरूप आपस में भी और तुझसे भी बिछुड़े हुए हैं; तू कृपा करके हमें अपने साथ मिला दे । हम चारों ओर दसों दिशाओं में भाग–दौड़ करके थक गए हैं और अब हे प्रभु, तेरी शरण में आ पहुँचे हैं । जैसे दूध के बिना गाय किसी काम की नहीं होती; जल के बिना पेड़–पौधों की खेती मुरझा जाती है और उससे धन नहीं कमाया जा सकता; इसी तरह प्रभु–पति के न मिलने पर व्यक्ति को भला कैसे सुख मिल सकता है । जिसके हृदय रूपी घर में प्रभु–पति प्रकट नहीं हुआ उसके लिए तो ये गाँव और नगर सभी भट्ठी में झोंक डालने योग्य हैं । शरीर के सारे सिंगार पान के बीड़े और देही समेत अन्य रस सभी कच्चे एवं नाशवान है । प्रभु–स्वामी पति से विहीन होकर जीने पर मित्र, सज्जन सभी यम बनकर मिलते हैं । नानक की विनती है कि हे प्रभु, कृपा करके मुझे दान में अपना नाम प्रदान कर । हे प्रभु, मुझे अपने चरणों से मिलाए रख क्योंकि मैं यह जानता हूँ कि प्रभु का नाम ही अटल नाम है ॥ १ ॥ पूरे चेतन होकर चैत्र के महीने में प्रभु की आराधना करने से अत्याधिक आनन्द प्राप्त होता है । परन्तु जीभ से नाम–सुमिरन का दान शान्त पुरुषों से मिलकर ही प्राप्त होता है । जिसने अपने प्रभु को इस जन्म में पा लिया है उसका ही इस संसार में आना किसी गिनती में आता है । एक क्षण भर के लिए भी उस प्रभु के बिना जीवन और जन्म व्यर्थ ही जाना जाता है । वह प्रभु जल में, स्थल में, आकाश में एवं वनों में अर्थात सर्वत्र व्याप्त है । नानक के मन में भी उस हरि के दर्शन करने की लालसा है । स्वयं चेतन होकर चैत्र के महीने में जो मुझे उस प्रभु से मिला दे मैं उसके चरणों का स्पर्श करूँगा ॥ २ ॥ जैसे पेड़ से कटी हुई डाली को सुख नहीं मिल सकता, वैसे ही प्रभु से बिछुड़े हुओं को भला कैसे धैर्य मिल सकता है । जीव–स्त्री उस प्रभु रूपी साजन को विस्मृत करके माया के प्रपंच में लीन बनी रहती है (उसको भला धैर्य कैसे हो सकता है) । पुत्र, स्त्री, धन आदि कुछ भी साथ नहीं चलता क्योंकि साथ चलने बाला अविनाशी प्रभु ही है । यह सारी सृष्टि माया के जाल में बार–बार फंसी हुई झूठे धन्धों के मोह में ग्रस्त होकर शारीरिक और आध्यात्मिक मौत मरती जा रही है । एक प्रभु नाम के बिना अन्य जो कुछ भी जीव के पास होता है, परलोक में वह सब छीन लिया जाता है । प्रभु को विस्मृत करके केवल ख्वार ही होना होता है क्योंकि प्रभु के बिना अन्य कोई साथी नहीं होता है । जो प्रियतम प्रभु के चरणों में लीन हो जाते हैं उनकी शोभा निर्मल बनी रहती है ।

* विस्तार के लिए परिशिष्ट 2 देखें ।

नानक की प्रभ बेनती प्रभ मिलहु परापति होइ ॥ वैसाखु सुहावा तां लगै जा संतु भेटै हरि सोइ ॥ ३ ॥ हरि जेठि जुड़ंदा लोड़ीऐ जिसु अगै सभि निवंनि ॥ हरि सजण दावणि लगिआ किसै न देई बंनि ॥ माणक मोती नामु प्रभ उन लगै नाही संनि ॥ रंग सभे नाराइणै जेते मनि भावंनि ॥ जो हरि लोड़े सो करे सोई जीअ करंनि ॥ जो प्रभि कीते आपणे सेई कहीअहि धंनि ॥ आपण लीआ जे मिलै विछुड़ि किउ रोवंनि ॥ साधू संगु परापते नानक रंग माणंनि ॥ हरि जेठु रंगीला तिसु धणी जिस कै भागु मथंनि ॥ ४ ॥ आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि ॥ जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस ॥ दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास ॥ जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु ॥ रैणि विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास ॥ जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु ॥ करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस ॥ प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि ॥ आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास ॥ ५ ॥ सावणि सरसी कामणी चरन कमल सिउ पिआरु ॥ मनु तनु रता सच रंगि इको नामु अधारु ॥ बिखिआ रंग कूड़ाविआ दिसनि सभे छारु ॥ हरि अंम्रित बूंद सुहावणी मिलि साधू पीवणहारु ॥ वणु तिणु प्रभ संगि मउलिआ संम्रथ पुरख अपारु ॥ हरि मिलणै नो मनु लोचदा करमि मिलावणहारु ॥ जिनी सखीए प्रभु पाइआ हंउ तिन कै सद बलिहार ॥ नानक हरि जी मइआ करि सबदि सवारणहारु ॥ सावणु तिना सुहागणी जिन राम नामु उरि हारु ॥ ६ ॥ भादुइ भरमि भुलाणीआ दूजै लगा हेतु ॥ लख सीगार बणाइआ कारजि नाही केतु ॥ जितु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु ॥ पकड़ि चलाइनि दूत जम किसै न देनी भेतु ॥ छडि खड़ोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु ॥ हथ मरोड़ै तनु कपे सिआहहु होआ सेतु ॥ जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥ नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ प्रभ देतु ॥ से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखण वाला हेतु ॥ ७ ॥ असुनि प्रेम उमाहड़ा किउ

नानक की यह विनती है कि हे प्रभु मुझे तुझसे भरपूर मिलन प्राप्त हो । वैशाख का महीना तभी सुहावना लगता है यदि हरि रूपी सन्त प्रभु से मिलाप हो जाए ॥ ३ ॥ जिसके आगे सभी झुकते हैं उस ज्येष्ठ हस्ती रूपी परमात्मा के साथ जेठ महीने में लीन बने रहना चाहिए । यदि हरि–सज्जन का आँचल पकड़े रखा जाए तो वह फिर व्यक्ति को बाँधकर आगे यम की ओर नहीं भेजता । प्रभु–नाम ऐसा माणिक और मोती है जिसे कभी भी चोरी नहीं किया जा सकता । प्रभु के जितने भी कौतुक हो रहे हैं भक्त व्यक्ति के मन को वे सभी सुन्दर लगते हैं और यह भी सत्य है कि जो प्रभु चाहता है जीव वही कर पाते हैं । जिनको प्रभु ने अपना बना लिया है उन्हें धन्य ही कहा जाना चाहिए । यदि उससे मेल जीवों के अपने वश में होता तो वे प्रभु से बिछुड़ कर रोते क्यों रहते ? हे नानक, वह व्यक्ति ही प्रभु के रंग का आनन्द प्राप्त करते हैं जिन्हें गुरु रूप साधु की संगत प्राप्त हो जाती है । जिस व्यक्ति के मस्तक का भाग्य जग चुका है उसी को ज़ेठ का महीना सुहावना लगता है और उसे ही प्रभु स्वामी प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ आषाढ़ का महीना उन्हें ही जला देने वाला लगता है जिनके पास प्रभु–पति नहीं है क्योंकि ऐसी जीव–स्त्रियों ने उस जगजीवन प्रभु को त्याग कर अपनी आशाओं को साधारण व्यक्तियों पर लगाया होता है । द्वैतभाव में फंसा हुआ व्यक्ति भटकता और ख्वार होता है तथा उसके गले में यम का फन्दा भी पड़ा रहता है । जो बोया जाता है उसे ही काटा जाता है अथवा जो कुछ भाग्य में लिखा होता है वही प्राप्त होता है । द्वैतभाव में फंसे व्यक्तियों की जीवन–रात्रि पछतावे में ही बीत जाती है और जीव स्त्री निराश होकर इस संसार से चली जाती है । जिन व्यक्तियों को गुरु मिल जाता है वे परमात्मा के समक्ष मुक्त–भाव से बने रहते हैं । हे प्रभु, अपनी कृपा करो ताकि तेरे दर्शन की प्यास हमेशा बनी रहे । नानक की तो केवल एक ही अरदास (प्रार्थना) है कि हे प्रभु, तेरे बिना मेरे लिए अन्य दूसरा कोई कुछ भी नहीं है । जलाने वाला आषाढ़ का महीना उन्हें सुहावना लगता है जिनका प्रभु चरणों में निवास बना होता है ॥५॥ सावन माह में जीवन रूपी वे पौधे रस वाले बनकर उस स्त्री की तरह आनन्दित बने रहते हैं जिनका प्रभु चरणों से प्यार बना हुआ है । ऐसी जीव–स्त्री का मन और तन प्रभु के सच्चे रंग में रंगा रहता है और उसे केवल एक नाम का ही आश्रय दिखाई देता है । विषय–विकारों के सभी रंग झूठे हैं और वे सभी राख के समान दिखाई देते हैं । ऐसे व्यक्ति को सावन का बरसता हुआ पानी हरि रूपी अमृत की बूँद के समान सुहावना लगता है और इसको पीना गुरु को मिलकर ही संभव होता है । उस अपरंपर समर्थ प्रभु के साथ मिलकर इस सृष्टि की सम्पूर्ण वनस्पति खिल उठती है । ऐसे प्रभु को मिलने की तीव्र इच्छा मेरे मन में है परन्तु केवल अच्छे कर्मों एवं उसकी कृपा से ही यह मिलना संभव होता है । जिन सखियों ने उस प्रभु को पा लिया है मैं सदैव उन पर बलिहारी जाती हूँ । हे नानक, तू परमात्मा से कह कि हे प्रभु मुझ पर कृपा करो और तुम ही शब्द के माध्यम से मेरे जीवन को सँवार देने के योग्य हो । सावन उन्हीं सुहागिन स्त्रियों को भाता है जिन्होंने अपने हृदय पर राम नाम की माला अर्थात प्रभु–नाम को धारण कर रखा है ॥ ६ ॥ भादों को महीने में जीव द्वैतभाव के भ्रमों में भटकता हुआ प्रभु को छोड़कर अन्यों में प्रेम लगा लेता है । इसके लिए जीव ने श्रृँगार रूपी जो कर्मकाण्ड बनाए हैं अन्त में उसके किसी काम के नहीं होते । जिस दिन यह देह विनष्ट हो जाएगी उसी दिन इसे लोग प्रेत–प्रेत कहना शुरू कर देंगे । यमदूत उसे पकड़ कर चल देंगे और किसी को पता भी नहीं चलेगा । जिनसे बहुत प्रेम था वे ही एक क्षण में छोड़कर अलग जा खड़े होंगे । काल को सामने देख कर व्यक्ति हाथों को मरोड़ता है, उसका तन काँपता है और उसका रंग कभी काला और कभी सफेद होता जाता है । यह संसार तो कर्म–भूमि है यहाँ जो जैसा बोता है वैसा ही उसे काटना पड़ता है । हे नानक, जो प्रभु की शरण में आ जाते हैं उन्हें प्रभु अपने चरण रूपी जहाज़ पर बिठा लेता है और वे फिर द्वैतभाव के नर्क में नहीं जाते क्योंकि उनका रक्षक परमात्मा रूपी गुरु स्वयं होता है ॥ ७ ॥ आश्विन के महीने में प्रेम उमड़ पड़ता है और मन में यह

मिलीऐ हरि जाइ ॥ मनि तनि पिआस दरसन घणी कोई आणि मिलावै माइ ॥ संत सहाई प्रेम के हउ तिन कै लागा पाइ ॥ विणु प्रभ किउ सुखु पाईऐ दूजी नाही जाइ ॥ जिंन्ही चाखिआ प्रेम रसु से त्रिपति रहे आघाइ ॥ आपु तिआगि बिनती करहि लेहु प्रभू लड़ि लाइ ॥ जो हरि कंति मिलाईआ सि विछुड़ि कतहि न जाइ ॥ प्रभ विणु दूजा को नही नानक हरि सरणाइ ॥ असू सुखी वसंदीआ जिना मइआ हरि राइ ॥ ८ ॥ कतिकि करम कमावणे दोसु न काहू जोगु ॥ परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग ॥ वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग ॥ खिन महि कउड़े होइ गए जितड़े माइआ भोग ॥ विचु न कोई करि सकै किस थै रोवहि रोज ॥ कीता किछू न होवई लिखिआ धुरि संजोग ॥ वडभागी मेरा प्रभु मिलै तां उतरहि सभि बिओग ॥ नानक कउ प्रभ राखि लेहि मेरे साहिब बंदी मोच ॥ कतिक होवै साधसंगु बिनसहि सभे सोच ॥ ९ ॥ मंघिरि माहि सोहंदीआ हरि पिर संगि बैठड़ीआह ॥ तिन की सोभा किआ गणी जि साहिबि मेलड़ीआह ॥ तनु मनु मउलिआ राम सिउ संगि साध सहेलड़ीआह ॥ साध जना ते बाहरी से रहनि इकेलड़ीआह ॥ तिन दुखु न कबहू उतरै से जम कै वसि पड़ीआह ॥ जिनी राविआ प्रभु आपणा से दिसनि नित खड़ीआह ॥ रतन जवेहर लाल हरि कंठि तिना जड़ीआह ॥ नानक बांछै धूड़ि तिन प्रभ सरणी दरि पड़ीआह ॥ मंघिरि प्रभु आराधणा बहुड़ि न जनमड़ीआह ॥ १० ॥ पोखि तुखारु न विआपई कंठि मिलिआ हरि नाहु ॥ मनु बेधिआ चरनारबिंद दरसनि लगड़ा साहु ॥ ओट गोविंद गोपाल राइ सेवा सुआमी लाहु ॥ बिखिआ पोहि न सकई मिलि साधू गुण गाहु ॥ जह ते उपजी तह मिली सची प्रीति समाहु ॥ करु गहि लीनी पारब्रहमि बहुड़ि न विछुड़ीआहु ॥ बारि जाउ लख बेरीआ हरि सजणु अगम अगाहु ॥ सरम पई नाराइणै नानक दरि पईआहु ॥ पोखु सुोहंदा सरब सुख जिसु बखसे वेपरवाहु ॥ ११ ॥ माघि मजनु संगि साधूआ धूड़ी करि इसनानु ॥ हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु ॥ जनम करम मलु उतरै मन ते जाइ

आता है कि कैसे उस प्रभु–पति को मिला जाए। हे माँ, मेरे मन–तन में उसके दर्शन की प्यास गहरी हो गई है; कोई मुझे उससे मिला दे। शान्त पुरुष प्रभु से प्रेम करने वालों की सहायता करते हैं और मैं उनके चरणों से लगा हुआ हूँ। प्रभु के बिना सुख प्राप्त नहीं होता क्योंकि प्रभु के अतिरिक्त किसी व्यक्ति का अन्य कोई ठिकाना नहीं है। जिन्होंने प्रभु के प्रेम के रस को चख लिया है उनकी पूर्ण तृप्ति हो जाती है। वे अब अहं भाव त्याग कर यही प्रार्थना किया करते हैं कि हे प्रभु, हमें अपना आँचल थमाए रख। जिस जीव स्त्री को प्रभु पति ने अपने साथ मिला लिया है वह प्रभु से बिछुड़ कर अन्य कहीं नहीं जाती। हे नानक, प्रभु की शरण के बिना अन्य कोई स्थान नहीं है और वह सदा प्रभु की शरण में ही बनी रहती है। जिन पर परमात्मा की कृपा होती है आश्विन के महीने में वे जीव स्त्रियाँ सुखपूर्वक बसती हैं ॥ ८ ॥ कार्तिक की सुहावनी ऋतु में भी यदि प्रभु से वियोग बना रहता है तो यह किसी अन्य का दोष नहीं; अपने किए हुए कर्मों का ही फल है। परमात्मा को भूलकर वास्तव में सब प्रकार के रोग शरीर को आ घेरते है। परमात्मा से विमुख होने पर जन्मों–जन्मों की उससे दूरी बन जाती है और माया के भोग्य पदार्थ जितने भी हैं वे क्षण भर में दुखदायक हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में किसी के सामने भी दुख रोने का कोई लाभ नहीं क्योंकि ऐसी अवस्था में कोई भी बिचौलिया नहीं बन सकता। व्यक्ति का अपना किया हुआ कुछ भी नहीं होता क्योंकि प्रारम्भ में ही उसके भाग्य लेख ही ऐसे लिखे हुए होते हैं। बड़े भाग्य होने से यदि मेरा प्रभु मिल जाए तो वियोग के सभी दुख समाप्त हो जाते हैं। हे प्रभु, तू बन्धनों को काटने वाला मेरा साहिब है; कृपा कर और नानक की माया–मोह से रक्षा कर। कार्तिक के महीने में जिनको सद्संगत मिल जाती है उनकी सभी चिन्ताएं विनष्ट हो जाती हैं ॥ ९ ॥ अगहन (मार्गशीर्ष) के महीने में वही जीव स्त्रियां सुन्दर लगती हैं जो प्रभु पति के साथ बैठी हुई होती हैं। जो साहिब से मिली हुई हैं उनकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। सत्संगी सहेलियों के साथ प्रभु में चित्त लगाकर उनका तन–मन खिला रहता है। परन्तु जो सत्संगियों के बिना रहती हैं वे अकेली ही रह जाती हैं; उनका दुख कभी भी समाप्त नहीं होता और वे यम के वशीभूत बनी रहती हैं। जिन्होंने प्रभु पति के साथ रमण किया है वे सदैव चेतन होकर खड़ी दिखाई देती हैं। परमात्मा का गुणानुवाद उनके हृदय में उसी प्रकार बना रहता है जैसे हीरे, जवाहिर और लालों का हार गले में पड़ा हुआ होता है। नानक उन सत्संगियों के चरणों की धूलि मांगता है जो प्रभु के द्वार पर पड़े रहते हैं। अगहन के महीने में प्रभु का सुमिरन करने से आवागमन का चक्र समाप्त हो जाता है ॥ १० ॥ पौष के महीने में जो स्त्री प्रभु–पति के गले लगी हुई हो उसको बर्फीला तुषारापात प्रभावित नहीं करता। उसका मन प्रभु के चरण–कमलों में बिंधा रहता है और उसकी सुरति प्रभु के दर्शन की अभिलाषा में लगी रहती है। जिस जीव–स्त्री ने गोविंद, गोपाल प्रभु का आश्रय लिया है वास्तव में उसी ने ही प्रभु–पति की सेवा का लाभ प्राप्त किया है। माया उसे प्रभावित नहीं कर सकती और उसी ने ही वास्तव में साधु रूपी प्रभु के गुणानुवाद में अपनी सुरति लगाई हुई होती है। जिस परमात्मा से उसने जन्म लिया है उसी में वह लीन बनी रहती है और उसकी सुरति प्रभु की प्रीति में लगी रहती है। परब्रह्म प्रभु ने हाथ पकड़ कर उसे अपने चरणों में इस प्रकार जोड़ा हुआ होता है कि पुनः वह बिछुड़ती नहीं। उस अगम्य, अगाध प्रभु रूपी सज्जन पर मैं बार–बार बलिहारी जाता हूँ। हे नानक, प्रभु के दर पर गिरे हुए की उस प्रभु को लाज रखनी ही पड़ती है। जिस पर वह बेपरवाह प्रभु कृपा करता है पौष का महीना उसके लिए सर्व सुखदायक होता है॥११॥ तीर्थों पर कर्मकाण्डी तरीके से स्नान करने की बजाए हे जीव, तू माघ के महीने में, गुरमुखों की संगत में बैठ। उनकी चरण–धूलि में स्नान कर; हरि–नाम की आराधना कर, हरि–नाम सुन और सबको प्रभु–नाम का दान बाँट दे। कई जन्मों के किए हुए कर्मों से उत्पन्न विकारों की मैल तेरे मन से उतर जाएगी और तेरे मन का अहंकार भी दूर हो जाएगा।

गुमानु ॥ कामि करोधि न मोहीऐ बिनसै लोभु सुआनु ॥ सचै मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु ॥ अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु ॥ जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु ॥ जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबानु ॥ माघि सुचे से कांढीअहि जिन पूरा गुरु मिहरवानु ॥ १२ ॥ फलगुणि अनंद उपारजना हरि सजण प्रगटे आइ ॥ संत सहाई राम के करि किरपा दीआ मिलाइ ॥ सेज सुहावी सरब सुख हुणि दुखा नाही जाइ ॥ इछ पुनी वडभागणी वरु पाइआ हरि राइ ॥ मिलि सहीआ मंगलु गावही गीत गोविंद अलाइ ॥ हरि जेहा अवरु न दिसई कोई दूजा लवै न लाइ ॥ हलतु पलतु सवारिओनु निहचल दितीअनु जाइ ॥ संसार सागर ते रखिअनु बहुड़ि न जनमै धाइ ॥ जिहवा एक अनेक गुण तरे नानक चरणी पाइ ॥ फलगुणि नित सलाहीऐ जिस नो तिलु न तमाइ ॥ १३ ॥ जिनि जिनि नामु धिआइआ तिन के काज सरे ॥ हरि गुरु पूरा आराधिआ दरगह सचि खरे ॥ सरब सुखा निधि चरण हरि भउजलु बिखमु तरे ॥ प्रेम भगति तिन पाईआ बिखिआ नाहि जरे ॥ कूड़ गए दुबिधा नसी पूरन सचि भरे ॥ पारब्रहमु प्रभु सेवदे मन अंदरि एकु धरे ॥ माह दिवस मूरत भले जिस कउ नदरि करे ॥ नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे ॥ १४ ॥ १ ॥

माझ महला ५ दिन रैणि ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

सेवी सतिगुरु आपणा हरि सिमरी दिन सभि रैण ॥ आपु तिआगि सरणी पवां मुखि बोली मिठड़े वैण ॥ जनम जनम का विछुड़िआ हरि मेलहु सजणु सैण ॥ जो जीअ हरि ते विछुड़े से सुखि न वसनि भैण ॥ हरि पिर बिनु चैनु न पाईऐ खोजि डिठे सभि गैण ॥ आप कमाणै विछुड़ी दोसु न काहू देण ॥ करि किरपा प्रभ राखि लेहु होरु नाही करण करेण ॥ हरि तुधु विणु खाकू रूलणा कहीऐ किथै वैण ॥ नानक की बेनंतीआ हरि सुरजनु देखा नैण ॥ १ ॥ जीअ की बिरथा सो सुणे हरि संम्रिथ पुरखु अपारु ॥ मरणि जीवणि

अब तू काम, क्रोध के चंगुल में नहीं फंसेगा और लोभ रूपी कुत्ता भी तेरे अन्दर से विनष्ट हो जाएगा । सत्य के मार्ग पर चलने वालों की सारा संसार प्रशंसा करता है । अड़सठ तीर्थों का स्नान, समस्त पुण्य–कार्य एवं जीव दया आदि कर्म सभी सत्य–मार्ग के अन्तर्गत ही आ जाते हैं । परमात्मा कृपा करके जिस व्यक्ति को नाम–सुमिरन प्रदान करता है वही व्यक्ति सयाना माना जाता है । नानक कहता है कि जिनको प्यारा प्रभु मिल गया मैं उन पर कुर्बान जाता हूँ। माघ के महीने में वे जीव पवित्र व्यक्ति जाने जाते हैं जिन पर पूर्ण गुरु (परमात्मा) दयालु होता है और उन्हें सुमिरन में लगाता है ॥ १२ ॥ फागुन के महीने में वे ही जीव–स्त्रियाँ आनन्दित होती है जिनके हृदय में प्रभु रूपी साजन प्रकट होता है । प्रभु से मिलवाने में सहायक, प्रभु के शान्त पुरुष होते हैं जो व्यक्ति को प्रभु के साथ मिला देते हैं । मिलने वाले व्यक्तियों की हृदय रूपी सेज सुन्दर बन जाती है और उनको सारे ही सुख प्राप्त हो जाते हैं । अब दुखों के लिए उनके अन्तर्मन में कोई स्थान नहीं बचता । उन भाग्यशाली जीव–स्त्रियों की मनोकामना पूरी हो जाती है; उनको प्रभु–पति मिल जाता है और वे अपनी सत्संगी सहेलियों के साथ मिलकर प्रभु के गुणानुवाद के गीतों का आलाप करती हैं । उन्हें अब परमात्मा जैसा अन्य कोई भी दिखाई नहीं देता । परमात्मा ने अब उनका लोक–परलोक संवार दिया होता है और उनको अपने चरणों में पक्का ठिकाना दे दिया होता है । प्रभु ने ही उन्हें संसार–सागर से बचा लिया होता है और अब वे जन्म–मरण के चक्र में नहीं पड़ी रहती । नानक कहता है कि हे प्रभु, हमारे एक ही जीभ है और तेरे गुण अनेक हैं (इसलिए उनका वर्णन करने के योग्य मैं नहीं हूँ) । जिन्होंने उसके चरणों का आश्रय लिया है वे भव–सागर को पार कर जाते हैं । फाल्गुन के महीने में अन्य तमाशों की अपेक्षा सदा उस परमात्मा का गुणानुवाद करना चाहिए जिसे अपनी बड़ाई करवाने का जरा भी लालच नहीं है ॥ १३ ॥ जिन्होंने परमात्मा के नाम का सुमिरन किया है उन सब के कार्य सफल हो गए हैं । जिन्होंने हरि रूपी पूर्ण गुरु का सुमिरन किया है वे ही प्रभु की दरगाह में सच्चे बनकर खड़े रहते हैं । प्रभु के चरण सर्व सुखों का खजाना हैं और उन्हीं की कृपा से विषम भव–सागर को तैरकर पार किया जाता है । पार जाने वालों ने ही प्रभु–प्रेम की भक्ति प्राप्त की होती है और विषय विकारों की अग्नि में वे नहीं जलते हैं । व्यर्थ के उनके झूठे लालच समाप्त हो जाते हैं, उनके मन की दुविधा भाग जाती है और वे पूर्ण रूप से सत्य से भरपूर बन जाते हैं। वे सदैव केवल एक प्रभु को मन में धारण कर उस परब्रह्म का सुमिरन करते हैं । जिन पर प्रभु की कृपा दृष्टि बनी रहती है उनके लिए सभी मास, दिवस एवं मुहूर्त भले ही भले हैं । हे प्रभु, कृपा कर; मैं नानक तेरे दर्शन का दान तुझसे माँगता हूँ ॥ १४ ॥ १ ॥

माझ महला ५ दिन–रात १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

मैं अपने सद्गुरु की सेवा करूँ और दिन–रात प्रभु का सुमिरन करता रहूँ । अपना अहम् भाव त्याग कर मैं गुरु की शरण में आ जाऊँ और मुख से मीठे बोल बोलता रहूँ कि हे गुरु, मैं जन्म–जन्मों से प्रभु से बिछुड़ा हुआ हूँ मुझे उससे मिला दो । हे बहन, जो जीव प्रभु से बिछुड़े हुए हैं वे कभी सुख से नहीं बस सकते । प्रियतम प्रभु के बिना शान्ति प्राप्त नहीं होती क्योंकि मैंने सभी धरती, आकाशों को खोजकर देख लिया है और समझ लिया है कि प्रभु–पति से मेल के बिना कभी सुख नहीं मिलता । हे बहन, मैं अपने किए हुए कर्मों के कारण ही पति–प्रभु से बिछुड़ी हूँ और इस संदर्भ में मैं किसी अन्य को दोष नहीं देती हूँ । हे प्रभु, कृपा कर मेरी रक्षा कर क्योंकि तेरे बिना अन्य कोई भी करने कराने की शक्ति नहीं रखता । हे प्रभु, तेरे बिना तो मिट्टी में ही मिल जाना पड़ता है; अब तू ही बता कि अपना यह विलाप किसे सुनाएं । नानक की यही विनती है कि मैं किसी प्रकार अपने नेत्रों से उस उत्तम पुरुष परमात्मा का दर्शन करूँ ॥१॥ जीव की व्यथा केवल वही सुनता है जो प्रभु सब शक्तियों का स्वामी है और अपरंपार है । जीते–मरते केवल

आराधणा सभना का आधारु ॥ ससुरै पेईऐ तिसु कंत की वडा जिसु परवारु ॥ ऊचा अगम अगाधि बोध किछु अंतु न पारावारु ॥ सेवा सा तिसु भावसी संता की होइ छारु ॥ दीना नाथ दैआल देव पतित उधारणहारु ॥ आदि जुगादी रखदा सचु नामु करतारु ॥ कीमति कोइ न जाणई को नाही तोलणहारु ॥ मन तन अंतरि वसि रहे नानक नही सुमारु ॥ दिनु रैणि जि प्रभ कंउ सेवदे तिन कै सद बलिहार ॥ २ ॥ संत अराधनि सद सदा सभना का बखसिंदु ॥ जीउ पिंडु जिनि साजिआ करि किरपा दितीनु जिंदु ॥ गुर सबदी आराधीऐ जपीऐ निरमल मंतु ॥ कीमति कहणु न जाईऐ परमेसुरु बेअंतु ॥ जिसु मनि वसै नराइणो सो कहीऐ भगवंतु ॥ जीअ की लोचा पूरीऐ मिलै सुआमी कंतु ॥ नानकु जीवै जपि हरी दोख सभे ही हंतु ॥ दिनु रैणि जिसु न विसरै सो हरिआ होवै जंतु ॥ ३ ॥ सरब कला प्रभ पूरणो मंञु निमाणी थाउ ॥ हरि ओट गही मन अंदरे जपि जपि जीवां नाउ ॥ करि किरपा प्रभ आपणी जन धूड़ी संगि समाउ ॥ जिउ तूं राखहि तिउ रहा तेरा दिता पैना खाउ ॥ उदमु सोई कराइ प्रभ मिलि साधू गुण गाउ ॥ दूजी जाइ न सुझई किथै कूकण जाउ ॥ अगिआन बिनासन तम हरण ऊचे अगम अमाउ ॥ मनु विछुड़िआ हरि मेलीऐ नानक एहु सुआउ ॥ सरब कलिआणा तितु दिनि हरि परसी गुर के पाउ ॥ ४ ॥ १ ॥

वार माझ की तथा सलोक महला १

मलक मुरीद तथा चंद्रहड़ा सोहीआ की धुनी गावणी ॥

१ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

सलोकु मः १ ॥ गुरु दाता गुरु हिवै घरु गुरु दीपकु तिह लोइ ॥ अमर पदारथु नानका मनि मानिऐ सुखु होइ ॥ १ ॥ मः १ ॥ पहिलै पिआरि लगा थण दुधि ॥ दूजै माइ बाप की सुधि ॥ तीजै भया भाभी बेब ॥ चउथै पिआरि उपंनी खेड ॥ पंजवै खाण पीअण की धातु ॥ छिवै कामु न पुछै जाति ॥ सतवै संजि कीआ घर वासु ॥ अठवै क्रोधु होआ तन नासु ॥ नावै धउले उभे साह ॥ दसवै दधा होआ सुआह ॥ गए सिगीत पुकारी धाह ॥ उडिआ हंसु दसाए राह ॥

उसी का सुमिरन किया जाना चाहिए जो सबका आश्रय है । जिस प्रभु–पति का परिवार बहुत बड़ा है, जीव–स्त्री इस लोक और परलोक में उसके आश्रय में ही रह सकती है । परमात्मा ऊँचा, अगम्य एवं अगाध ज्ञान का स्वामी है और उसका कोई भी ओर–छोर नहीं जाना जा सकता । उसको वही सेवा भाती है जो उसके शान्त पुरुषों की चरण धूलि बनकर की जाए । वह दीनों का नाथ है, दयालु देव है और पतितों का उद्धार करने वाला है । वह अनादि काल से ही जीवों की रक्षा करता आ रहा है और उस कर्त्ता का नाम ही सदैव स्थिर बना रहने वाला है । उसकी कीमत कोई नहीं आंक सकता और कोई उसकी व्यापकता का अनुमान नहीं लगा सकता । हे नानक, प्रभु प्रत्येक जीव के मन और तन में बसा रहने वाला है और उसके गुणों का कोई अन्त नहीं । जो जीव दिन–रात प्रभु का सुमिरन करते हैं मैं सदैव उन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ २ ॥ जिसने सब जीवों का सृजन करके कृपा पूर्वक उन्हें प्राण दिए हैं और शान्त पुरुष अर्थात सन्त जन भी जिस सदा कृपालु प्रभु की आराधना करते हैं, शब्द–गुरु के माध्यम से उसी का निर्मल जाप किया जाना चाहिए । उस अनन्त परमेश्वर की कीमत को आंका और कहा नहीं जा सकता है । जिसके मन में नारायण प्रभु आ बसता है उसे ही भाग्यवान कहा जाता है । जिसे प्रभु–पति प्राप्त हो जाता है उस जीव–स्त्री की कामनाएं पूरी हो जाती हैं । नानक सभी दुखों के हंता प्रभु का सुमिरन करके ही जीवित बना हुआ है । जिस जीव को दिन–रात प्रभु विस्मृत नहीं होता वह सदैव आनन्द में खिला रहता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तू सर्व–शक्तिमान है और मुझ निर्मल का आसरा भी तू ही है । हे प्रभु, मैंने अपने मन में तेरा ही आश्रय लिया है और प्रभु–नाम का सुमिरन कर करके ही मैं जीवित बना हुआ हूँ । हे प्रभु, कृपा कर ताकि मैं तेरे सेवकों की चरण–धूलि में लीन बना रहूँ । तू जिस हाल में मुझे रखता है मैं उसी हाल में रहता हूँ और जो कुछ तू मुझे देता है वही मैं पहनता खाता हूँ । हे प्रभु, मुझसे वही उद्यम करा जिससे मैं साधु–पुरुषों के साथ मिल कर तेरे गुण गाता रहूँ । मुझे दूसरा अन्य कोई स्थान नहीं सूझता और अब तेरे बिना मैं अपना विलाप सुनाने के लिए कहां जाऊँ । हे अज्ञान का विनाश करने वाले, माया मोह का अन्धकार हरने वाले ऊँचे, अगम्य एवं अनन्त प्रभु, नानक का यही मनोरथ है कि मेरे बिछुड़े हुए मन को अपने से मिला ले । जिस दिन मैं प्रभु रूपी गुरु के चरणों का स्पर्श कर लूँगा तो मेरा उसी दिन सर्व–कल्याण हो जाएगा ॥ ४ ॥ १ ॥

वार माझ की तथा श्लोक महला १

मलिक मुरीद तथा चन्द्रहड़ा सोहीया की धुन पर गायन करना है । (उत्तर–पश्चिम के सीमा प्रांत के लोकयान के प्रसिद्ध वीरों के लिए गाए जाते शौर्य गीतों की धुन पर इस वार (शौर्य गीत) को गाने का निर्देश है) ।*

१ओअंकार सतिनामु करता पुरख गुर प्रसादि ॥ श्लोक महला १ ॥

गुरु ही दाता है, गुरु ही ठण्डक का स्रोत है, गुरु ही प्रकाशित करने वाला दीपक है जो तीनों लोकों को प्रकाशित करता है । हे नानक, सदैव बने रहने वाले प्रभु–नाम रूपी पदार्थ में यदि मन लीन हो जाए तो सदैव सुख ही सुख प्राप्त होता है ॥ महला १ ॥ मनुष्य की पूरी आयु को दस भागों में बाँटने पर पता चलता है कि सर्वप्रथम जीव का प्यार माँ के दूध के साथ बनता है । दूसरी अवस्था में इसे माता–पिता की पहचान होती है । तीसरी अवस्था में भाई, बहन आदि की समझ पड़ती है । चौथी अवस्था में खेल खेलने में प्यार बनता है । पाँचवी अवस्था में केवल खाने–पीने की ही लालसा बनी रहती है और छठी अवस्था में जीव में काम–वासना उत्पन्न होती है जो ऊँच–नीच कुछ भी नहीं देखती। सातवीं अवस्था में धन–माल इकट्ठा करके व्यक्ति घर का निवास बनाता है । आठवीं अवस्था में (सभी कामनाओं की पूर्ति न होने के कारण) व्यक्ति में क्रोध पैदा होता है और उसके तन का नाश होना शुरू हो जाता है। नौवीं अवस्था में उसके केश श्वेत् हो जाते हैं और अब सांस खींच–खींच कर आना शुरू हो जाता है अर्थात दम फूलने लगता है। दसवीं और अन्तिम अवस्था में पहुँच कर व्यक्ति जल कर राख हो जाता है । जो साथी श्मशान–भूमि तक जाते हैं वे जोर–जोर से पुकार–पुकार कर रोते हैं परन्तु जीवात्मा शरीर में से निकल कर अब आगे का रास्ता पूछता है ।

* विस्तार के लिए परिशिष्ट 3 देखें ।

आइआ गइआ मुइआ नाउ ॥ पिछै पतलि सदिहु काव ॥ नानक मनमुखि अंधु पिआरु ॥ बाझु गुरू डुबा संसारु ॥ २ ॥ मः १ ॥ दस बालतणि बीस रवणि तीसा का सुंदरु कहावै ॥ चालीसी पुरु होइ पचासी पगु खिसै सठी के बोढेपा आवै ॥ सतरि का मतिहीणु असीहां का विउहारु न पावै ॥ नवै का सिहजासणी मूलि न जाणै अप बलु ॥ ढंढोलिमु ढूढिमु डिठु मै नानक जगु धूए का धवलहरु ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ तूं करता पुरखु अगंमु है आपि स्रिसटि उपाती ॥ रंग परंग उपारजना बहु बहु बिधि भाती ॥ तूं जाणहि जिनि उपाईऐ सभु खेलु तुमाती ॥ इकि आवहि इकि जाहि उठि बिनु नावै मरि जाती ॥ गुरमुखि रंगि चलूलिआ रंगि हरि रंगि राती ॥ सो सेवहु सति निरंजनो हरि पुरखु बिधाती ॥ तूं आपे आपि सुजाणु है वड पुरखु वडाती ॥ जो मनि चिति तुधु धिआइदे मेरे सचिआ बलि बलि हउ तिन जाती ॥ १ ॥ सलोक मः १ ॥ जीउ पाइ तनु साजिआ रखिआ बणत बणाइ ॥ अखी देखै जिहवा बोलै कंनी सुरति समाइ ॥ पैरी चलै हथी करणा दिता पैनै खाइ ॥ जिनि रचि रचिआ तिसहि न जाणै अंधा अंधु कमाइ ॥ जा भजै ता ठीकरु होवै घाड़त घड़ी न जाइ ॥ नानक गुर बिनु नाहि पति पति विणु पारि न पाइ ॥ १ ॥ मः २ ॥ देंदे थावहु दिता चंगा मनमुखि ऐसा जाणीऐ ॥ सुरति मति चतुराई ता की किआ करि आखि वखाणीऐ ॥ अंतरि बहि कै करम कमावै सो चहु कुंडी जाणीऐ ॥ जो धरमु कमावै तिसु धरम नाउ होवै पापि कमाणै पापी जाणीऐ ॥ तूं आपे खेल करहि सभि करते किआ दूजा आखि वखाणीऐ ॥ जिचरु तेरी जोति तिचरु जोती विचि तूं बोलहि विणु जोती कोई किछु करिहु दिखा सिआणीऐ ॥ नानक गुरमुखि नदरी आइआ हरि इको सुघड़ु सुजाणीऐ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तुधु आपे जगतु उपाइ कै तुधु आपे धंधै लाइआ ॥ मोह ठगउली पाइ कै तुधु आपहु जगतु खुआइआ ॥ तिसना अंदरि अगनि है नह तिपतै भुखा तिहाइआ ॥ सहसा इहु संसारु है मरि जंमै आइआ जाइआ ॥ बिनु सतिगुर मोहु न तुटई सभि थके करम कमाइआ ॥ गुरमती नामु धिआईऐ सुखि रजा जा तुधु भाइआ ॥ कुलु

जीव जगत में आया और चला भी गया, उसका नाम भी (लोगों को) भूल जाता है और मरणोपरान्त पत्तों की थाली आदि में भोजन रखकर कौओं को बुलाने का कर्मकाण्ड लोग करते हैं। हे नानक, मन के पीछे चलने वाले व्यक्ति का प्रेम अन्धा प्रेम है और पूर्ण गुरु प्रभु के बिना यह संसार डूबा चला जा रहा है ॥२॥ महला १॥ दस वर्षों का जीव बचपन में होता है, बीस वर्षों तक पहुँच कर (यौवन में) रमण करने योग्य हो जाता है और तीस वर्षों का सुन्दर कहलाने लगता है। चालीस वर्षों तक पहुँचते हुए वह पूर्ण रूप से संसारी बन जाता है और उसकी अधिकतर कामनाएँ (विवाह, बच्चे, मकान आदि का बनना) पूरी हो जाती हैं। पचास वर्ष पर पहुँच कर यौवन की ढलान शुरू हो जाती है और पाँव इधर के उधर पड़ने शुरू हो जाते हैं। साठ वर्ष का जीव बुढ़ापे में प्रवेश कर जाता है। सत्तर वर्ष का व्यक्ति विवेक बुद्धि से विहीन हो जाता है और अस्सी वर्षों तक पहुँच कर करने योग्य और न करने योग्य व्यवहार पर उसका नियन्त्रण नहीं रहता है। नब्बे वर्ष का होकर उसका आसन अब उसकी खटिया ही बन जाता है और इतना बलहीन हो जाता है कि अपने आप को संभाल भी नहीं पाता। हे नानक, मैंने अच्छी तरह से देखा भाला है कि यह जगत् क्षणिक सफेद धुएँ जैसा बना हुआ बहुत बड़ा मकान है अर्थात् देखने में तो सुन्दर लगता है परन्तु स्थिर रहने वाला नहीं है॥३॥ पउड़ी (यह एक छन्द का नाम है) हे प्रभु ! तू सृजनहार है, अगम्य है और तुमने ही सम्पूर्ण सृष्टि उत्पन्न की है। यह सृष्टि भी अनेकों रंगों रूपों की है जिन्हें विभिन्न तरीकों से बनाया गया है। यह सब तुम्हारा ही खेल है और चूंकि तूने ही इसे बनाया है इसलिए तू ही इसके बारे में जानता है। इस सृष्टि में कई जीव आ रहे हैं कई चले जा रहे हैं परन्तु जो प्रभु नाम से विहीन हैं वे बार-बार मर कर अर्थात दुखी होकर यहाँ से जाते हैं। गुरमुख व्यक्ति प्रभु-प्रेम के पक्के रंग में रंगे हुए हैं। हे भाईयो, उस सर्वव्यापक विधाता एवं सत्य स्वरूप निरंजन प्रभु का ही सुमिरन करो। हे प्रभु, तू ही सबसे बड़ा है और तू ही सब कुछ जानने वाला सुजान है। हे मेरे सच्चे प्रभु, जो मन लगाकर पूर्ण चित्त को तुझमें लीन करके तेरा सुमिरन करते हैं मैं उन पर बार-बार बलिहारी जाता हूँ ॥१॥ श्लोक महला१॥ प्रभु ने जीवों को उत्पन्न कर उनके शरीरों को बनाया है और एक सुन्दर आकार दिया है। जीव आँखों से देखता, जीभ से बोलता है और उसके कानों में सुनने की शक्ति दी है। वह पाँव से चलता है हाथों से काम करता है और प्रभु का दिया ही पहनता खाता है। परन्तु जिसने इसकी रचना की है उसको यह अन्धा जीव पहचानता भी नहीं है और अन्धों वाले कार्य करता हुआ इधर-उधर भटकता रहता है। जब यह शरीर रूपी बर्तन टूटता है तो इस टूटे हुए ठीकरे से पुनः इसको पुरानी बनावट नहीं दी जा सकती। हे नानक, गुरु अर्थात् ज्ञान के बिना सम्मान नहीं है और सम्मान के बिना इस विषम सागर-संसार से पार नहीं हुआ जा सकता ॥१॥ महला२॥ मनमुख उसको कहा जाता है जो देने वाले की अपेक्षा दी हुई वस्तु को अच्छा समझता है। ऐसे व्यक्ति की बुद्धि, चतुराई और सुरति ऐसी निम्न-स्तर की होती है कि उसके बारे में कुछ कहा ही नहीं जा सकता है। वह अन्दर बैठकर छिपकर ऐसे-ऐसे कुकर्म करता है कि उन्हें चारों दिशाओं में जाना जाता है। प्रकृति का यह नियम ही है कि जो व्यक्ति धर्म का काम करता है उसका नाम धार्मिक हो जाता है और जो व्यक्ति पाप करता है उसे पापी के नाम से जाना जाता है। हे कर्त्ता प्रभु, यह सब तो तेरे ही खेल हैं। तुझसे अलग भला किसका नाम लिया जाए। जब तक तेरी ज्योति है तू उस ज्योति में स्वयं ही विद्यमान रहता है परन्तु जब तेरी ज्योति व्यक्ति में से निकल जाती है तब भला कोई कुछ कर के दिखाए तब माना जाए अर्थात तेरी ज्योति के बिना कुछ नहीं किया जा सकता। हे नानक, गुरमुख बनकर ही व्यक्ति को सर्वत्र एक ही प्रभु सुजान एवं सुघड़ रूप में नज़र आता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तूने स्वयं ही इस संसार को बनाया है और उसे विभिन्न कामों मे लगा लिया है। मोह की ठग-बूटी लोगों को तूने पिला दी है और तू स्वयं ही जगत् को ख्वार कर रहा है। जीव के अन्दर तृष्णा रूपी अग्नि है और इस लिए भूख-प्यास की ओर से वह कभी तृप्त नहीं होता। यह संसार है ही दुविधा से भरा हुआ और इसी दुविधा में जीव मरता-जन्मता इस संसार में आता जाता रहता है। सद्गुरु के बिना यह मोह का बन्धन टूटता नहीं यद्यपि सभी लोग अनेकों प्रकार के कर्म काण्ड करके थक चुके हैं। गुरमति के माध्यम से ही प्रभु के नाम का सुमिरन किया जाता है और हे प्रभु, जब तुझे भाता है तो जीव सुखी होकर तृप्त हो जाता है।

उधारे आपणा धंनु जणेदी माइआ ॥ सोभा सुरति सुहावणी जिनि हरि सेती चितु लाइआ ॥ २ ॥ सलोकु मः २ ॥ अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा ॥ पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ॥ जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा ॥ नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा ॥ १ ॥ मः २ ॥ दिसै सुणीऐ जाणीऐ साउ न पाइआ जाइ ॥ रुहला टुंडा अंधुला किउ गलि लगै धाइ ॥ भै के चरण कर भाव के लोइण सुरति करेइ ॥ नानकु कहै सिआणीए इव कंत मिलावा होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सदा सदा तूं एकु है तुधु दूजा खेलु रचाइआ ॥ हउमै गरबु उपाइ कै लोभु अंतरि जंता पाइआ ॥ जिउ भावै तिउ रखु तू सभ करे तेरा कराइआ ॥ इकना बखसहि मेलि लैहि गुरमती तुधै लाइआ ॥ इकि खड़े करहि तेरी चाकरी विणु नावै होरु न भाइआ ॥ होरु कार वेकार है इकि सची कारै लाइआ ॥ पुतु कलतु कुटंबु है इकि अलिपतु रहे जो तुधु भाइआ ॥ ओहि अंदरहु बाहरहु निरमले सचै नाइ समाइआ ॥ ३ ॥ सलोकु मः १ ॥ सुइने कै परबति गुफा करी कै पाणी पइआलि ॥ कै विचि धरती कै आकासी उरधि रहा सिरि भारि ॥ पुरु करि काइआ कपड़ु पहिरा धोवा सदा कारि ॥ बगा रता पीअला काला बेदा करी पुकार ॥ होइ कुचीलु रहा मलु धारी दुरमति मति विकार ॥ ना हउ ना मै ना हउ होवा नानक सबदु वीचारि ॥ १ ॥ मः १ ॥ वसत्र पखालि पखाले काइआ आपे संजमि होवै ॥ अंतरि मैलु लगी नही जाणै बाहरहु मलि मलि धोवै ॥ अंधा भूलि पइआ जम जाले ॥ वसतु पराई अपुनी करि जानै हउमै विचि दुखु घाले ॥ नानक गुरमुखि हउमै तुटै ता हरि हरि नामु धिआवै ॥ नामु जपे नामो आराधे नामे सुखि समावै ॥ २ ॥ पवड़ी ॥ काइआ हंसि संजोगु मेलि मिलाइआ ॥ तिन ही कीआ विजोगु जिनि उपाइआ ॥ मूरखु भोगे भोगु दुख सबाइआ ॥ सुखहु उठे रोग पाप कमाइआ ॥ हरखहु सोगु विजोगु उपाइ खपाइआ ॥ मूरख गणत गणाइ झगड़ा पाइआ ॥ सतिगुर हथि निबेड़ु झगड़ु चुकाइआ ॥ करता करे सु होगु न चलै चलाइआ ॥ ४ ॥ सलोकु मः १ ॥ कूड़ु बोलि मुरदारु खाइ ॥

उसकी जननी अर्थात् माँ धन्य है क्योंकि ऐसे तृप्त व्यक्ति ने अपने सारे कुल का उद्धार कर लिया होता है। जिसने प्रभु में अपना चित्त लगा लिया है उसकी महिमा और उसकी सुरति शोभायमान बनी रहती है ॥ २॥ श्लोक महला २ ॥ विकार–युक्त आँख के बिना देखना और विकार से विहीन कान से सुनना, विकारों की ओर पैरों को न जाने देना, विकारातीत् होकर हाथों से काम करना और विषय–विकारों वाली जीभ के बिना बोलना ही जीवित रहते हुए मरना कहा जाता है। हे नानक, यदि (इन इन्द्रियों के सही प्रयोग से सम्बन्धित) हुकम की पहचान कर ली जाए तो उस मालिक–प्रभु से मेल हो जाता है ॥ १ ॥ महला २ ॥ प्रभु इस रचना में दिख भी रहा है, उसे सुना भी जाता है और उसे जाना भी जाता है, फिर भी उसे मिलने का रस जीव को प्राप्त नहीं होता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि जीव के पास न तो सही दिशा में चलने वाले पैर हैं, न हाथ हैं और न ही आँखें हैं; फिर यह भला दौड़कर कैसे प्रभु के गले से लिपट सकता है। यदि जीव उसके भय में चलने को अपने पाँव बनाए, प्रेम के हाथ बनाए और प्रभु में लीन रहने वाली सुरति को अपनी आँखें बनाए तो नानक कहता है कि हे सयानी जीव–स्त्री, इस प्रकार प्रभु पति से मिला जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तू तो सदैव एक ही है परन्तु तूने ही सृष्टि रचना का यह दूसरा खेल रचा है। तूने ही अहंकार, लोभ आदि उत्पन्न करके इन्हें जीवों के अन्तर्मन में स्थित किया है। हे प्रभु, जैसे तुझे अच्छा लगे तू इन जीवों की रक्षा कर क्योंकि इन सब का कार्यशील होना सब तेरा ही किया–कराया है। कई जीवों को तू बख्श लेता है और उन्हें गुरमति में लगा देता है। कई जीव चेतन मन से तेरी बन्दगी रूपी चाकरी कर रहे हैं और तेरे नाम के बिना अन्य उन्हें कुछ भी भाता नहीं। ऐसे व्यक्तियों को जिन्हें तूने इस सच्चे कार्य में लगाया है उन्हें तेरा नाम विस्मृत करके अन्य कोई भी काम करना बेगार लगता है। तुझे प्यारे लगने वाले जीव पुत्र, स्त्री–परिवार आदि के मोह से अलिप्त रहते हैं, वे अन्दर–बाहर से पूरी तरह निर्मल बने रहते हैं और तेरे सत्य रूपी नाम में लीन बने रहते है ॥ ३ ॥ श्लोक महला १ ॥ मैं बेशक स्वर्ण पर्वत पर गुफा बना लूँ, चाहे नीचे पानी में रहूँ, धरती पर और चाहे आकाश पर शीर्षासन करके खड़ा रहूँ; शरीर को पूर्ण रूप से कपड़ों से ढक लूँ और चाहे शरीर को सदैव धोता–मांजता ही रहूँ; मैं श्वेत, लाल, पीले या काले कपड़े पहन कर वेदों का उच्चारण करूँ और चाहे मलीन बनकर गन्दा बना रहूँ परन्तु हे प्रभु, यह सारे कर्म दुर्मति के विकार हैं। हे नानक, मैं तो यही चाहता हूँ कि शब्द–चिन्तन के माध्यम से मेरा अहंकार विनिष्ट हो जाए ॥ १ ॥ महला १॥ वस्त्रों को धोकर और काया को धोकर यदि कोई संयमी बन बैठता है तो उसे अन्तर्मन की मैल का तो पता ही नहीं होता और वह केवल बाहर से ही मल–मल कर शरीर और कपड़ों को धोता रहता है। ऐसा अन्धा भटका हुआ व्यक्ति यम के जाल में पड़ा रहता है। वह अहंकार में दुख पैदा करता रहता है क्योंकि वह शरीर रूपी पराए माल को अपना समझ बैठता है। हे नानक, गुरमुख बनकर जब ऐसे व्यक्ति का अहंकार दूर होता है तब वह प्रभु–नाम का सुमिरन करता है और प्रभु–नाम की ही आराधना करता हुआ अनन्त सुख में टिका रहता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ शरीर और जीवात्मा का संयोग करा कर परमात्मा ने मनुष्य को बना दिया है। जिस प्रभु ने शरीर और जीव को पैदा किया है, उसी ने ही इनके वियोग की व्यवस्था भी की है। मूर्ख व्यक्ति भोगों को भोगता हुआ सर्वदा दुखी बना रहता है और शारीरिक सुखों में से ही उसके पाप कर्मों के कारण अनेकों रोग उठ खड़े होते हैं। सुख से शोक (चिन्ता) एवं वियोग उत्पन्न करके परमात्मा जीव को मुश्किलों में डाले रहता है। मूर्ख व्यक्ति सुख–दुख, खुशी–चिन्ता की गिनती के झगड़े में ही पड़ा रहता है। जन्म–मरण के झगड़े को सुलझाने की शक्ति केवल सद्गुरु परमात्मा के हाथ में ही है और वास्तव में जो प्रभु करता है वही होता है तथा जीव की अपनी चतुराई नहीं चल पाती ॥ ४ ॥ श्लोक महला १ ॥ जो व्यक्ति झूठ बोल कर दूसरे का हक छीनता है

अवरी नो समझावणि जाइ ॥ मुठा आपि मुहाए साथै ॥ नानक ऐसा आगू जापै ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जिस दै अंदरि सचु है सो सचा नामु मुखि सचु अलाए ॥ ओहु हरि मारगि आपि चलदा होरना नो हरि मारगि पाए ॥ जे अगै तीरथु होइ ता मलु लहै छपड़ि नातै सगवी मलु लाए ॥ तीरथु पूरा सतिगुरू जो अनदिनु हरि हरि नामु धिआए ॥ ओहु आपि छुटा कुटंब सिउ दे हरि हरि नामु सभ स्रिसटि छडाए ॥ जन नानक तिसु बलिहारणै जो आपि जपै अवरा नामु जपाए ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ इकि कंद मूलु चुणि खाहि वण खंडि वासा ॥ इकि भगवा वेसु करि फिरहि जोगी संनिआसा ॥ अंदरि त्रिसना बहुतु छादन भोजन की आसा ॥ बिरथा जनमु गवाइ न गिरही न उदासा ॥ जमकालु सिरहु न उतरै त्रिबिधि मनसा ॥ गुरमती कालु न आवै नेड़ै जा होवै दासनि दासा ॥ सचा सबदु सचु मनि घर ही माहि उदासा ॥ नानक सतिगुरु सेवनि आपणा से आसा ते निरासा ॥ ५ ॥ सलोकु मः १ ॥ जे रतु लगै कपड़ै जामा होइ पलीतु ॥ जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु ॥ नानक नाउ खुदाइ का दिलि हछै मुखि लेहु ॥ अवरि दिवाजे दुनी के झूठे अमल करेहु ॥ १ ॥ मः १ ॥ जा हउ नाही ता किआ आखा किहु नाही किआ होवा ॥ कीता करणा कहिआ कथना भरिआ भरि भरि धोवां ॥ आपि न बुझा लोक बुझाई ऐसा आगू होवां ॥ नानक अंधा होइ कै दसे राहै सभसु मुहाए साथै ॥ अगै गइआ मुहे मुहि पाहि सु ऐसा आगू जापै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ माहा रुती सभ तूं घड़ी मूरत वीचारा ॥ तूं गणतै किनै न पाइओ सचे अलख अपारा ॥ पड़िआ मूरखु आखीऐ जिसु लबु लोभु अहंकारा ॥ नाउ पड़ीऐ नाउ बुझीऐ गुरमती वीचारा ॥ गुरमती नामु धनु खटिआ भगती भरे भंडारा ॥ निरमलु नामु मंनिआ दरि सचै सचिआरा ॥ जिस दा जीउ पराणु है अंतरि जोति अपारा ॥ सचा साहु इकु तूं होरु जगतु वणजारा ॥ ६ ॥ सलोकु मः १ ॥ मिहर मसीति सिदकु मुसला हकु हलालु कुराणु ॥ सरम सुंनति सीलु रोजा होहु मुसलमाणु ॥ करणी काबा सचु पीरु कलमा करम निवाज ॥ तसबी सा तिसु

और दूसरों को झूठ न बोलने की शिक्षा देता है तो हे नानक, ऐसा मार्ग दर्शक अन्त में स्वयं तो ठगा ही जा रहा होता है, वह अपने साथियों को भी लुटवा देता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जिसके हृदय में सत्य है वह सदा सत्य नाम का उच्चारण करता है। वह स्वयं भी प्रभु के मार्ग पर चलता है और अन्यों को भी प्रभु का मार्ग बतलाता है। स्नान करने के लिए पानी का तीर्थ सरोवर यदि विशाल हो तो स्नान करने वाले की मैल उतर जाती है परन्तु कीचड़ वाले छोटे से तलाब पर नहाने से शरीर को और भी मैल लग जाती है। पूर्ण सद्गुरु विशाल तीर्थ सरोवर के समान है जो सदैव हरि–नाम में ही लीन बना रहता है। वह स्वयं अपने परिवार समेत विकारों से बचा हुआ होता है और सबको प्रभु–नाम जपा कर वह सारी सृष्टि को भी बचाता है। हे दास नानक, जो स्वयं नाम जपता है एवं दूसरों को भी जपाता है मैं उस पर बार–बार बलिहारी जाता हूँ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ कई व्यक्ति कन्दमूल आदि खाते हैं और वनों में निवास करते हैं; कई भगवा वेष धारण कर योगी संन्यासी बने हुए घूमते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों के अन्तर्मन में कपड़े और भोजन की लालसा प्रबल रूप से बनी ही रहती है। ऐसे व्यक्ति न ही घरबारी हैं और न ही उदासीन। उन्होंने अपना जन्म व्यर्थ ही गंवा लिया है। त्रिगुणात्मक मनोकामनाओं के कारण यमकाल का भय सदैव उनके सिर पर बना ही रहता है। गुरमति धारण करने से और प्रभु के दासों का दास बन जाने से मौत का भय पास ही नहीं आता। सत्य शब्द को मन में टिका कर जो घर में ही रहते हुए निर्लिप्त भाव में स्थित रहते हैं, हे नानक, ऐसे व्यक्ति अपने गुरु की आज्ञा में चलते हैं और तमाम आशाओं से अलेप बने रहते हैं ॥ ५ ॥ श्लोक महला १ ॥ यदि शरीर के कपड़ों पर रक्त के दाग लग जाएं तो वे कपड़े अपवित्र हुए मान लिए जाते हैं परन्तु जो व्यक्ति मनुष्यों का रक्त पीते रहते हैं अर्थात् ज़ोर–ज़बरदस्ती से हराम की कमाई खाते हैं उनका मन कैसे निर्मल बना रह सकता है। हे नानक, हृदय को पवित्र करके मुँह से खुदा का नाम लिया जाना चाहिए अन्यथा सभी कार्य दुनियांदारी के झूठे दिखावे हैं ॥ १ ॥ महला १ ॥ जब मैं हूँ ही कुछ नहीं तो मैं भला अन्य लोगों को क्या उपदेश दूँ। अन्दर कोई भी गुण न होने के बावजूद तेरा कराया हुआ ही करता और तेरा बताया हुआ ही कथन करता हूँ। पापों से भरा हुआ पुनः पुनः अपने को भरता हूँ और फिर पापों को धोता हूँ। मुझे स्वयं को तो सूझता कुछ नहीं है परन्तु मैं ऐसा मार्गदर्शक हूँ जो दूसरों को समझाता फिरता हूँ। हे नानक, जो व्यक्ति स्वयं अन्धा है परन्तु दूसरों को राह दिखाता है वह अपने सभी साथियों को लुटवा देता है। आगे चलकर ऐसे मार्गदर्शक को मुँह पर चोटें खानी पड़ती हैं और तब उसका वास्तविक स्वरूप लोगों के सामने आता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, सभी महीनों ऋतुओं घड़ियों में और मुहूर्तों में तेरा सुमिरन किया जा सकता है। हे सत्य अलख एवं अपार प्रभु, केवल गणनाओं के बल पर तुझे कोई नहीं पा सका है। ऐसी गणनाओं को पढ़ने पढ़ाने वाला व्यक्ति मूर्ख कहा जाता है जिसके अन्दर लोभ एवं अहंकार बना हुआ है। जिन्होंने गुरमति के अनुरूप विचार कर प्रभु–नाम को पढ़ा और बूझा है उन्होंने गुरमति में चलते हुए प्रभु नाम रूपी धन की कमाई की है और अपनी भक्ति के भण्डारों को भर लिया है। जिन्होंने प्रभु के निर्मल नाम में मन को लगा लिया है वे सत्य–प्रभु के द्वार पर सत्याचरण वाले बनकर विद्यमान रहते हैं। जीवन, प्राण एवं अन्तर्मन की अपार ज्योति देने वाले हे प्रभु, तू ही सच्चा साहूकार है और सारा संसार तेरा ही लेन–देन कर रहा है ॥ ६ ॥ श्लोक महला १ ॥ दया की मस्जिद हो, श्रद्धा का मुसल्ला और हक–हलाल की कमाई को कुरान–शरीफ माना जाए; विकारों को देखकर लज्जित होना सुन्नत बनाई जाए और शीलवान स्वभाव को रोज़ा बनाया जाए तो हे भाई, तू इस प्रकार का मुसलमान बन। ऊँचा आचरण हो, अन्दर–बाहर से अर्थात कथनी–करनी की सत्यता पीर हो, नेक कर्मों को नमाज और कलमा बनाया जाए और प्रभु की रज़ा को सिर माथे पर मानना माला हो

भावसी नानक रखै लाज ॥ १ ॥ मः १ ॥ हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥ गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ ॥ गली भिसति न जाईऐ छुटै सचु कमाइ ॥ मारण पाहि हराम महि होइ हलालु न जाइ ॥ नानक गली कूड़ीई कूड़ो पलै पाइ ॥ २ ॥ मः १ ॥ पंजि निवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ ॥ पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ ॥ चउथी नीअति रासि मनु पंजवी सिफति सनाइ ॥ करणी कलमा आखि कै ता मुसलमाणु सदाइ ॥ नानक जेते कूड़िआर कूड़ै कूड़ी पाइ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ इकि रतन पदारथ वणजदे इकि कचै दे वापारा ॥ सतिगुरि तुठै पाईअनि अंदरि रतन भंडारा ॥ विणु गुर किनै न लधिआ अंधे भउकि मुए कूड़िआरा ॥ मनमुख दूजै पचि मुए ना बूझहि वीचारा ॥ इकसु बाझहु दूजा को नही किसु अगै करहि पुकारा ॥ इकि निरधन सदा भउकदे इकना भरे तुजारा ॥ विणु नावै होरु धनु नाही होरु बिखिआ सभु छारा ॥ नानक आपि कराए करे आपि हुकमि सवारणहारा ॥ ७ ॥ सलोकु मः १ ॥ मुसलमाणु कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमाणु कहावै ॥ अवलि अउलि दीनु करि मिठा मसकल माना मालु मुसावै ॥ होइ मुसलिमु दीन मुहाणै मरण जीवण का भरमु चुकावै ॥ रब की रजाइ मंने सिर उपरि करता मंने आपु गवावै ॥ तउ नानक सरब जीआ मिहरंमति होइ त मुसलमाणु कहावै ॥ १ ॥ महला ४ ॥ परहरि काम क्रोधु झूठु निंदा तजि माइआ अहंकारु चुकावै ॥ तजि कामु कामिनी मोहु तजै ता अंजन माहि निरंजनु पावै ॥ तजि मानु अभिमानु प्रीति सुत दारा तजि पिआस आस राम लिव लावै ॥ नानक साचा मनि वसै साच सबदि हरि नामि समावै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ राजे रयति सिकदार कोइ न रहसीओ ॥ हट पटण बाजार हुकमी ढहसीओ ॥ पके बंक दुआर मूरखु जाणै आपणे ॥ दरबि भरे भंडार रीते इकि खणे ॥ ताजी रथ तुखार हाथी पाखरे ॥ बाग मिलख घर बार किथै सि आपणे ॥ तंबू पलंघ निवार सराइचे लालती ॥ नानक सच दातारु सिनाखतु कुदरती ॥ ८ ॥ सलोकु मः १ ॥ नदीआ होवहि धेणवा सुंम होवहि दुधु घीउ ॥ सगली

तो हे नानक, ऐसा मुसलमान खुदा की और अपनी भी लाज रखता है ॥ १ ॥ महला १ ॥ हे नानक, पराया हक मुसलमान के लिए सूअर है और हिन्दू के लिए गाय (का मांस) है । गुरु अथवा पीर तभी सिफारिश करता है जब व्यक्ति बेइमानी की कमाई अथवा हराम का माल न खाए । केवल बातें करने से बहिश्त (स्वर्ग) में नहीं जाया जा सकता । सत्य पर आचरण करने से ही वास्तविक मुक्ति मिलती है । हराम की कमाई में बड़ी-बड़ी बातों के मसाले डालने से वह हक की कमाई नहीं बन जाती । हे नानक, झूठी बातें करने से झूठ ही मिलता है ॥ २ ॥ महला १ ॥ मुसलमान की पाँच नमाज़ों के पाँच नाम हैं । सच बोलना पहला नाम है । हक की कमाई दूसरी नमाज़ है, परमात्मा से सब का भला माँगना तीसरी नमाज़ है । नीयत को साफ रखना चौथी नमाज़ है और प्रभु का गुणानुवाद करना पाँचवीं नमाज़ है । इन सब के साथ ऊँचे आचरण का कलमा पढ़ा जाए तो मुसलमान कहलाया जाता है । हे नानक, जितने पाखण्डी और कर्मकाण्डी हैं वे सब झूठ के व्यापारी हैं और उनकी इज्जत भी झूठी ही होती है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ कुछ लोग तो रत्नों का व्यापार करते हैं और कुछ लोग साधारण काँच का व्यापार ही करते हैं । सद्गुरु की कृपा होने पर व्यक्ति को उसके अन्दर ही भरे हुए रत्नों के भण्डार मिल जाते हैं । गुरु विहीन होकर किसी को भी यह भण्डार नहीं मिला है और अन्धे अज्ञानी, झूठे लोग कुत्तों की तरह भौंक भौंक कर मर जाते हैं परन्तु उन्हें कुछ भी प्राप्त नहीं होता । मनमुख व्यक्ति द्वैत भाव में चल कर तबाह हो जाते हैं क्योंकि वे प्रभु के विचार को बूझने का उपक्रम नहीं करते । वे किसके आगे पुकार लगाएं क्योंकि एक प्रभु के बिना अन्य कोई भी सहायता करने वाला नहीं है । नाम विहीन कंगाल व्यक्ति सदैव चीख-पुकार करते रहते हैं परन्तु साथ ही साथ कई ऐसे भी हैं जिनके हृदय रूपी भण्डार भक्ति रूपी धन से भरे रहते हैं । प्रभु-नाम के बिना अन्य कोई धन नहीं है; बाकी सब कुछ विषय-विकारों की राख मात्र है । हे नानक, यह सब वह स्वयं ही कर-करा रहा है और स्वयं ही अपने हुकुम में व्यक्तियों के जीवन को सँवारने वाला है ॥ ७ ॥ श्लोक महला १ ॥ मुसलमान कहलाना बड़ा कठिन है; यदि वास्तव में वह ऐसा बन जाए तब ही अपने आप को मुसलमान कहलाए । सबसे पहले कर्म प्यारा लगना चाहिए, फिर जैसे रेती के साथ मोर्चा (जंग) साफ किया जाता है इसी प्रकार वह अपने धन-माल को लोगों को देकर अपने धन का अहंकार दूर करे । धर्म के मार्ग-दर्शन में चलकर मुसलमान बने और जीने मरने के भ्रम को चुका दे । खुदा की रज़ा को सिर माथे पर स्वीकार करे और उस खुदा को कादिर मानते हुए अपना अहंकार त्याग दे । इस प्रकार हे नानक, सब लोगों से प्यार करे और यदि ऐसा हो तो अपने आप को मुसलमान कहलाए ॥ १ ॥ महला ४ ॥ यदि व्यक्ति काम, क्रोध, झूठ, निन्दा आदि को छोड़कर अपने प्रपंचों के अहंकार को त्याग दे; यदि काम और कामनाओं के मोह को तज दे तो व्यक्ति कालिख से भरे हुए इस संसार में रहते हुए भी शुद्ध निरंजन (प्रभु) को पा लेता है । यदि व्यक्ति अहंकार तज के पुत्र स्त्री का मोह छोड़ दे और सांसारिक आशाओं और तृष्णाओं को छोड़कर प्रभु में अपनी सुरति लीन कर ले तो हे नानक, वह सच्चा प्रभु मन में बस जाता है और व्यक्ति सत्य-शब्द के माध्यम से हरि-नाम में लीन हो जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ राजा-प्रजा चौधरी कोई भी सदैव नहीं बना रहेगा । हाट-बाजार, नगर, प्रभु के हुकुम में सब नष्ट हो जाएंगे । मूर्ख व्यक्ति सुन्दर पक्के मकानों के द्वारों को अपना समझता है परन्तु यह नहीं जानता कि धन से भरे हुए खजाने क्षण-भर में ही खाली हो जाते हैं । बढ़िया घोड़े, रथ, ऊँट, हाथी, बाग, जमीन, घर-घाट, तम्बू, नेवारी पलंग और कीमखाब की बेशकीमती कनात आदि जिनको व्यक्ति अपना समझता है वे कहीं भी साथ नहीं जाते । हे नानक, वह सदैव स्थिर प्रभु ही यह सब पदार्थ देने वाला है और उसकी पहचान उसकी रचना में से ही होती है। श्लोक महला १ ॥ यदि सारी नदियां, गाय बन जाएं और पर्वतों के जल-स्रोत दूध और घी बन जाएं; सारी धरती

धरती सकर होवै खुसी करे नित जीउ ॥ परबतु सुइना रुपा होवै हीरे लाल जड़ाउ ॥ भी तूंहै सालाहणा आखण लहै न चाउ ॥ १ ॥ मः १ ॥ भार अठारह मेवा होवै गरुड़ा होइ सुआउ ॥ चंदु सूरजु दुइ फिरदे रखीअहि निहचलु होवै थाउ ॥ भी तूंहै सालाहणा आखण लहै न चाउ ॥ २ ॥ मः १ ॥ जे देहै दुखु लाईऐ पाप गरह दुइ राहु ॥ रतु पीणे राजे सिरै उपरि रखीअहि एवै जापै भाउ ॥ भी तुंहै सालाहणा आखण लहै न चाउ ॥ ३ ॥ मः १ ॥ अगी पाला कपड़ु होवै खाणा होवै वाउ ॥ सुरगै दीआ मोहणीआ इसतरीआ होवनि नानक सभो जाउ ॥ भी तूंहै सालाहणा आखण लहे न चाउ ॥ ४ ॥ पवड़ी ॥ बदफैली गैबाना खसमु न जाणई ॥ सो कहीऐ देवाना आपु न पछाणई ॥ कलहि बुरी संसारि वादे खपीऐ ॥ विणु नावै वेकारि भरमे पचीऐ ॥ राह दोवै इकु जाणै सोई सिझसी ॥ कुफर गोअ कुफराणै पइआ दझसी ॥ सभ दुनीआ सुबहानु सचि समाईऐ ॥ सिझै दरि दीवानि आपु गवाईऐ ॥ ९ ॥ मः १ सलोकु ॥ सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ ॥ नानक अवरु न जीवै कोइ ॥ जे जीवै पति लथी जाइ ॥ सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥ राजि रंगु मालि रंगु ॥ रंगि रता नचै नंगु ॥ नानक ठगिआ मुठा जाइ ॥ विणु नावै पति गइआ गवाइ ॥ १ ॥ मः १ ॥ किआ खाधै किआ पैधै होइ ॥ जा मनि नाही सचा सोइ ॥ किआ मेवा किआ घिउ गुड़ु मिठा किआ मैदा किआ मासु ॥ किआ कपड़ु किआ सेज सुखाली कीजहि भोग बिलास ॥ किआ लसकर किआ नेब खवासी आवै महली वासु ॥ नानक सचे नाम विणु सभे टोल विणासु ॥ २ ॥ पवड़ी ॥ जाती दै किआ हथि सचु परखीऐ ॥ महुरा होवै हथि मरीऐ चखीऐ ॥ सचे की सिरकार जुगु जुगु जाणीऐ ॥ हुकमु मंने सिरदारु दरि दीबाणीऐ ॥ फुरमानी है कार खसमि पठाइआ ॥ तबलबाज बीचार सबदि सुणाइआ ॥ इकि होए असवार इकना साखती ॥ इकना बधे भार इकना ताखती ॥ १० ॥ सलोकु मः १ ॥ जा पका ता कटिआ रही सु पलरि वाड़ि ॥ सणु कीसारा चिथिआ कणु लइआ तनु झाड़ि ॥ दुइ पुड़ चकी जोड़ि कै पीसण आइ बहिठु ॥ जो दरि रहे सु उबरे नानक अजबु डिठु ॥ १ ॥ मः १ ॥ वेखु जि

शक्कर बन जाए जिसे देखकर मेरा मन आनन्दित हो उठे; यदि सोने, चाँदी, हीरे, लाल से जड़ित पर्वत बन जाएं तो भी इन सब की ओर आकर्षित न होकर मैं तेरा ही गुणानुवाद करूँ और मेरा यह उत्साह कभी भी समाप्त न हो ॥ १ ॥ महला १ ॥ यदि सारी वनस्पति मेवा बन जाए जिसका स्वाद बहुत ही रसदायक हो और मेरे रहने का स्थान अटल हो जाए एवं चन्द्र और सूर्य मेरी सेवा में लगाए जाएं तो भी मैं केवल तेरा ही गुणानुवाद करता रहूँ और मेरा यह उत्साह कभी भी समाप्त न हो ॥ २ ॥ महला १ ॥ यदि शरीर को दुख लग जाए और आम लोगों द्वारा पापों के ग्रह माने जाने वाले दोनों ग्रह राहु एवं केतु मेरे शरीर को लग जाएं; अत्याचारी खून पीने वाले राजा मेरे सिर पर खड़े हो परन्तु यदि तेरा प्रेम मेरे साथ बना रहे तो भी हे प्रभु, मैं तेरा ही गुणानुवाद करूँ और मेरा यह उत्साह कभी भी न समाप्त हो ॥ ३ ॥ महला १ ॥ यदि धूप और कठोर सर्दी मेरे कपड़े बन जाएं, यदि हवा मेरा भोजन हो और यदि स्वर्ग की अप्सराएं भी मेरे पास हों तो भी हे नानक, ये सब नाशवान है। मैं फिर भी तेरा ही गुणनुवाद करता रहूँ और ऐसा करने के लिए मेरा उत्साह कभी भी समाप्त न हो ॥ ४ ॥ पउड़ी ॥ जो लुक–छिप कर पाप करता है और मालिक प्रभु को नहीं जानता उसको पागल कहना चाहिए क्योंकि वह अपने मूल स्वरूप को नहीं पहचानता। कलह, कलेष इस संसार में बहुत बुरा है और व्यक्ति वाद–विवाद में ही मर–खप जाता है तथा प्रभु–नाम को छोड़कर कुकर्मों में भटकता हुआ ख्वार होता रहता है। जीवन के दो ही रास्ते हैं, अर्थात माया और नाम–सुमिरन। इस जीवन में वह ही सफल होता है जो केवल एक परमात्मा को सदैव याद रखता है नहीं तो झूठ (माया) में डूबा हुआ व्यक्ति सदैव जलता ही रहता है। सुमिरन वाले के लिए सारा संसार सुन्दर होता है। वह व्यक्ति सत्य–प्रभु में समाहित बना रहता है। वह अपना अहंकार मिटाकर प्रभु के समक्ष आनन्दित बना रहता है ॥ ९ ॥ महला १ श्लोक ॥ वास्तव में वही मनुष्य जीवित माना जाता है जिसके मन में प्रभु बसा होता है। हे नानक, भक्ति–विहीन अन्य कोई भी जीवित नहीं है। यदि व्यक्ति जीवित है परन्तु उसकी इज्जत उतारी जा रही है तो वह जो कुछ भी खाता पीता है सब हराम ही है। जो राग–रंग में मस्त है और माल के मोह में है वह राज माल के मोह में लीन होकर नंगा नाचता है अर्थात बेशर्म हो जाता है। हे नानक, ऐसा व्यक्ति ठगा और लूटा जा रहा है और प्रभु–नाम से विहीन होकर वह अपना सम्मान खोकर यहाँ से जाता है ॥ १ ॥ महला १ ॥ यदि सच्चा प्रभु हृदय में नहीं बसता तो खाने और पहनने में क्या रस है। क्या हुआ यदि मेवा, घी, मीठा, गुड़, मैदा, मांस आदि का प्रयोग किया गया; क्या हुआ यदि कपड़े और सुन्दर शय्या मिल गई और भोग–विलास कर लिया; कौन सी बड़ी बात है यदि फौज, नौकर चाकर आदि मिल गए और महलों में निवास सम्भव हो गया। हे नानक, परमात्मा के बिना ये सभी पदार्थ नाशवान हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जाति के अभिमान में कुछ नहीं रखा है। केवल व्यक्ति के सत्य–आचरण की परख करनी चाहिए। यदि हाथ में विष रखा हुआ हो तो उसके खाने से व्यक्ति मर ही जाएगा चाहे वह किसी भी जाति का हो। प्रभु का यह न्याय सभी युगों में एक समान बना रहा है। जो प्रभु का हुकुम मानता है वही उसके दरबार में सिरदार अर्थात् सम्मानित पुरुष माना जाता है। प्रभु ने जीव को हुकुम मानने का आदेश देकर इस संसार में भेजा है और नगाड़ची रूपी गुरु ने विचारपूर्वक यह बात लोगों को सुनाई है। यह सुनकर कईयों ने सवार होकर कमर कस ली है; कई तैयार हो गए हैं; कईयों ने अपना सामान लाद लिया है और कई दौड़ निकले हैं ॥ १० ॥ श्लोक महला १ ॥ जब पौधा पक जाता है तो उसे ऊपर से काट लिया जाता है और उसका फूस और खेत की बाड़ पीछे बची रह जाती है। अब इस फसल का बाली समेत गाहन कर लिया जाता है और ढेर को हवा में उड़ाकर दाने निकाल लिए जाते हैं। इसे बाद में चक्की के दोनों पाट रख कर प्राणी इन दानों को पीसने के लिए आ बैठता है परन्तु हे नानक, यह आश्चर्यजनक दृष्य है कि जो दाने चक्की की कीली के साथ लगे रहते हैं वे पिसने से बच जाते हैं अर्थात् प्रभु के साथ जुड़े हुए व्यक्ति संसार के विषय–विकारों के कष्ट से बचे रहते हैं ॥ १ ॥ महला १ ॥

मिठा कटिआ कटि कुटि बधा पाइ ॥ खुंढा अंदरि रखि कै देनि सु मल सजाइ ॥ रसु कसु टटरि पाईऐ तपै तै विललाइ ॥ भी सो फोगु समालीऐ दिचै अगि जालाइ ॥ नानक मिठै पतरीऐ वेखहु लोका आइ ॥ २ ॥ पवड़ी ॥ इकना मरणु न चिति आस घणेरिआ ॥ मरि मरि जंमहि नित किसै न केरिआ ॥ आपनड़ै मनि चिति कहनि चंगेरिआ ॥ जमराजै नित नित मनमुख हेरिआ ॥ मनमुख लूण हाराम किआ न जाणिआ ॥ बधे करनि सलाम खसम न भाणिआ ॥ सचु मिलै मुखि नामु साहिब भावसी ॥ करसनि तखति सलामु लिखिआ पावसी ॥ ११ ॥ मः १ सलोकु ॥ मछी तारू किआ करे पंखी किआ आकासु ॥ पथर पाला किआ करे खुसरे किआ घर वासु ॥ कुते चंदनु लाईऐ भी सो कुती धातु ॥ बोला जे समझाईऐ पड़ीअहि सिंम्रिति पाठ ॥ अंधा चानणि रखीऐ दीवे बलहि पचास ॥ चउणे सुइना पाईऐ चुणि चुणि खावै घासु ॥ लोहा मारणि पाईऐ ढहै न होइ कपास ॥ नानक मूरख एहि गुण बोले सदा विणासु ॥ १ ॥ मः १ ॥ कैहा कंचनु तुटै सारु ॥ अगनी गंढु पाए लोहारु ॥ गोरी सेती तुटै भतारु ॥ पुतीं गंढु पवै संसारि ॥ राजा मंगै दितै गंढु पाइ ॥ भुखिआ गंढु पवै जा खाइ ॥ काला गंढु नदीआ मीह झोल ॥ गंढु परीती मिठे बोल ॥ बेदा गंढु बोले सचु कोइ ॥ मुइआ गंढु नेकी सतु होइ ॥ एतु गंढि वरतै संसारु ॥ मूरख गंढु पवै मुहि मार ॥ नानकु आखै एहु बीचारु ॥ सिफती गंढु पवै दरबारि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ आपे कुदरति साजि कै आपे करे बीचारु ॥ इकि खोटे इकि खरे आपे परखणहारु ॥ खरे खजानै पाईअहि खोटे सटीअहि बाहर वारि ॥ खोटे सची दरगह सुटीअहि किसु आगै करहि पुकार ॥ सतिगुर पिछै भजि पवहि एहा करणी सारु ॥ सतिगुरु खोटिअहु खरे करे सबदि सवारणहारु ॥ सची दरगह मंनीअनि गुर कै प्रेम पिआरि ॥ गणत तिना दी को किआ करे जो आपि बखसे करतारि ॥ १२ ॥ सलोकु मः १ ॥ हम जेर जिमी दुनीआ पीरा मसाइका राइआ ॥ मे रवदि बादिसाहा अफजू खुदाइ ॥ एक तूही एक तुही ॥ १ ॥ मः १ ॥ न देव दानवा नरा ॥ न सिध साधिका धरा ॥ असति एक

हे भाई । मीठा देखकर गन्ने को काटा जाता है और छील–छाल कर रस्सी से उसके गट्ठर बाँध लिए जाते हैं । फिर वेलन के अन्दर डाल कर उसे तगड़े व्यक्ति पेरते हैं । ऐसा लगता है जैसे गन्ने को मीठा होने की सज़ा दी जा रही हो । इसके रस को बड़े कड़ाह में डालकर आग में तपाया जाता है और रस तड़पता हुआ प्रतीत होता है । गन्ने के चूरे को भी संभाल लिया जाता है और आग में जला दिया जाता है । हे भाइयो, आओ देखो कि मीठा होने के कारण भी जैसे गन्ने को जलना पड़ता है उसी प्रकार व्यक्ति को माया का मीठा मोह ख्वार करता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ कई व्यक्ति ऐसे होते हैं जिन्होंने बहुत सी आशाएं मन में लगाई हुई होती हैं और मरने की याद उनके चित्त में बिल्कुल ही नहीं होती । वास्तव में वे रोज़ ही पैदा होते और मरते रहते हैं और कभी भी किसी के लिए कुछ भी करने के योग्य नहीं बनते । वे अपने मन में स्वयं को बहुत ही अच्छा कहते हैं परन्तु उन मनमुखों पर यमराज सदैव ही नज़र गड़ाए रहता है । मनमुख व्यक्ति नमकहरामं बनकर उस प्रभु के उपकारों को नहीं बूझते; वे मजबूरी में ही प्रभु के आगे सिर झुकाते हैं और ऐसे व्यक्ति उस मालिक को अच्छे नहीं लगते । जिस व्यक्ति ने सत्य को पा लिया है और जिसके मुख में प्रभु का नाम बना रहता है वह ही प्रभु को अच्छा लगता है । जो सिंहासन पर बैठे हुए प्रभु को प्रणाम करते हैं वे वास्तव में अपने लेखों का अच्छा फल प्राप्त करते हैं ॥ ११ ॥ महला १ ॥ मछली को भला पानी क्या कर सकता है और आकाश पक्षी के लिए क्या है । भीषण पाला पत्थर को प्रभावित नहीं करता और परिवार में रहना नपुंसक व्यक्ति (हिजड़े) पर कोई असर नहीं डालता अर्थात वह वैसे का वैसा ही बना रहता है । यदि कुत्ते को चन्दन भी लगा दिया जाए तब भी उसकी अपनी वास्तविकता बनी ही रहती है । बहरे व्यक्ति को जितना मर्जी समझाया जाए और उसके पास स्मृति आदि ग्रन्थों का पाठ भी किया जाए तो भी वह सुन नहीं सकता । पचासों दीपक जलाकर यदि अन्धे व्यक्ति को उनके प्रकाश में रखा जाए तब भी उसे कुछ दिखाई नहीं देता । घास चरने के लिए गए हुए पशुओं के सामने यदि सोना भी बिखेर दिया जाए तो भी वे पशु चुन–चुनकर केवल घास ही खाएंगे । लोहे को खूब पीटा भी जाए तो भी वह कपास जैसा (नर्म) नहीं बन सकता । हे नानक, इसी प्रकार मूर्ख व्यक्ति भी ऐसा ही है जिसे जितना मर्जी समझाया जाए परन्तु वह जब भी बोलेगा तो ऐसा ही बोलेगा जिससे किसी न किसी का विनाश (नुक्सान) अवश्य हो ॥ १ ॥ महला १ ॥ यदि कांसा, सोना अथवा लोहा टूट जाए तो लोहार अग्नि में डालकर इनको जोड़ देता है । यदि पत्नी के साथ पति नाराज हो जाए तो बच्चों के माध्यम से वे फिर जुड़ जाते हैं । राजा टैक्स माँगता है तो देने वाली प्रजा का कर देकर उसके साथ मेल बना रहता है । व्यक्ति का अपने शरीर के साथ मेल भोजन खाने के साथ बना रहता है । अकाल भी समाप्त हो जाते हैं यदि भरपूर वर्षा होकर नदियां बहने लगें । मीठे वचनों के माध्यम से प्यार का जोड़–मेल पैदा होता है और वेद आदि ज्ञान की पुस्तकों के साथ व्यक्ति की गाँठ तब पक्की होती है जब व्यक्ति सच बोले । मरे हुए व्यक्तियों का सम्बन्ध संसार से उनके भलाई के कार्यो के कारण मरने के बाद भी बना रहता है । इस प्रकार के सम्बन्धों (गाँठों) से ही संसार का व्यवहार चलता रहता है । मुँह पर मारने से मूर्ख व्यक्ति की मूर्खता को रोक लगती है । नानक यह चिन्तन करने योग्य बात कहता है कि गुणानुवाद के माध्यम से प्रभु के दरबार में व्यक्ति का जोड़ मेल बनता है अर्थात प्रभु के साथ उसकी गाँठ पक्की बनती है ॥ २ ॥पउड़ी ॥ परमात्मा स्वयं ही रचना करके उसका ध्यान रखता है परन्तु यहां कई जीव सिक्के की तरह खोटे और खरे होते हैं और इन सबकी परख करने वाला स्वयं परमात्मा ही है । खरे व्यक्ति (सिक्के) प्रभु दरबार रूपी खजाने में डाल लिए जाते हैं और खोटे सिक्कों (व्यक्तियों) को बाहर फेंक दिया जाता है । खोटे को सच्चे दरबार में धक्के मिलते हैं और वे किसी के आगे फरियाद भी नहीं कर सकते । ऐसे व्यक्तियों के लिए तो यही अच्छा है कि वे दौड़ कर सद्गुरु की शरण में आ जाएं । सद्गुरु शब्द के माध्यम से खोटे को खरा करके संवार देता है । प्रभु के सच्चे दरबार में सद्गुरु के प्रेम प्यार के माध्यम से ही सम्मान मिलता है जिन पर कर्त्ता प्रभु ने कृपा कर दी है उनके कर्मो की जाँच परख अव भला कोई क्या करेगा ॥ १२ ॥ श्लोक महला १ ॥ पीर, शेख, राय आदि सारी दुनियाँ अन्ततः मिट्टी के नीचे दव जाएगी । बादशाह आदि भी नष्ट हो जाने वाले हैं और सदा बना रहने वाला खुदा एक तू ही है ॥ १ ॥ महला १ ॥ देव–दानव, सिद्ध साधक कोई भी धरती पर बचा नहीं रह सका है । सदा स्थिर बना रहने वाला

दिगरि कुई ॥ एक तुई एक तुई ॥ २ ॥ मः १ ॥ न दादे दिहंद आदमी ॥ न सपत जेर जिमी ॥ असति एक दिगरि कुई ॥ एक तुई एक तुई ॥ ३ ॥ मः १ ॥ न सूर ससि मंडलो ॥ न सपत दीप नह जलो ॥ अंन पउण थिरु न कुई ॥ एकु तुई एकु तुई ॥ ४ ॥ मः १ ॥ न रिजकु दसत आ कसे ॥ हमा रा एकु आस वसे ॥ असति एकु दिगर कुई ॥ एक तुई एकु तुई ॥ ५ ॥ मः १ ॥ परंदए न गिराह जर ॥ दरखत आब आस कर ॥ दिहंद सुई ॥ एक तुई एक तुई ॥ ६ ॥ मः १ ॥ नानक लिलारि लिखिआ सोइ ॥ मेटि न साकै कोइ ॥ कला धरै हिरै सुई ॥ एकु तुई एकु तुई ॥ ७ ॥ पउड़ी ॥ सचा तेरा हुकमु गुरमुखि जाणिआ ॥ गुरमती आपु गवाइ सचु पछाणिआ ॥ सचु तेरा दरबारु सबदु नीसाणिआ ॥ सचा सबदु वीचारि सचि समाणिआ ॥ मनमुख सदा कूड़िआर भरमि भुलाणिआ ॥ विसटा अंदरि वासु सादु न जाणिआ ॥ विणु नावै दुखु पाइ आवण जाणिआ ॥ नानक पारखु आपि जिनि खोटा खरा पछाणिआ ॥ १३ ॥ सलोकु मः १ ॥ सीहा बाजा चरगा कुहीआ एना खवाले घाह ॥ घाहु खानि तिना मासु खवाले एहि चलाए राह ॥ नदीआ विचि टिबे देखाले थली करे असगाह ॥ कीड़ा थापि देइ पातिसाही लसकर करे सुआह ॥ जेते जीअ जीवहि लै साहा जीवाले ता कि असाह ॥ नानक जिउ जिउ सचे भावै तिउ तिउ देइ गिराह ॥ १ ॥ मः १ ॥ इकि मासहारी इकि त्रिणु खाहि ॥ इकना छतीह अंम्रित पाहि ॥ इकि मिटीआ महि मिटीआ खाहि ॥ इकि पउण सुमारी पउण सुमारि ॥ इकि निरंकारी नाम आधारि ॥ जीवै दाता मरै न कोइ ॥ नानक मुठे जाहि नाही मनि सोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ पूरे गुर की कार करमि कमाईऐ ॥ गुरमती आपु गवाइ नामु धिआईऐ ॥ दूजी कारै लगि जनमु गवाईऐ ॥ विणु नावै सभ विसु पैझै खाईऐ ॥ सचा सबदु सालाहि सचि समाईऐ ॥ विणु सतिगुर सेवे नाही सुखि निवासु फिरि फिरि आईऐ ॥ दुनीआ खोटी रासि कूड़ु कमाईऐ ॥ नानक सचु खरा सालाहि पति सिउ जाईऐ ॥ १४ ॥ सलोकु मः १ ॥ तुधु भावै ता वावहि गावहि तुधु भावै जलि नावहि ॥

हे प्रभु तेरे बिना कौन है – केवल तू ही है तू ही है ॥ २ ॥ मः १ ॥ न तो न्याय करने वाले व्यक्ति और न ही धरती के नीचे वाले सातों पाताल सदैव बने रहने वाले हैं। तेरे सिवाय सदा स्थित अन्य कोई नहीं है –एक तू ही है एक तू ही है ॥ ३ ॥ मः १ ॥ सूर्य, चन्द्रमा, आकाश, धरती को सातों द्वीप, जल, अन्न पवन आदि कोई भी स्थिर बना रहने वाला नहीं है। सदा रहने वाला हे प्रभु, एक तू ही है एक तू ही है ॥ ४ ॥ महला १ ॥ सभी जीवों की रोज़ी किसी अन्य के हाथ में नहीं है और सभी जीवों को बस एक प्रभु की ही आस है क्योंकि सदा स्थिर रहने वाला अन्य कौन है। हे प्रभु, एक तू ही है तू ही है ॥ ५ ॥ महला १ ॥ पक्षियों के पल्ले धन नहीं है और उनकी आशाएं वृक्षों और पानी पर ही केन्द्रित होती हैं। उन्हें भी देने वाला केवल प्रभु ही है। हे प्रभु, एक तू ही है तू ही है ॥६॥ महला१॥ हे नानक, जीवों के माथे पर जो प्रभु ने लिख दिया है उसे कोई मिटा नहीं सकता; जीव के अन्दर जीवन–शक्ति वह ही रखता है और वह ही उसका हरण भी कर लेता है। यह सब करने वाला हे प्रभु, एक तू ही है एक तू ही है ॥ ७ ॥ पउड़ी ॥ केवल गुरमुख व्यक्ति ही तेरे सच्चे हुकुम को बूझते हैं। गुरु की मति में चलकर जिसने अपने अहम् को दूर कर लिया है उसी ने उस परम सत्य को पहचान लिया है। हे प्रभु, तेरा दरबार सदैव बना रहने वाला है और शब्द (गुरु) वहाँ तक पहुंचने के लिए पहचान–पत्र है। जिन्होंने सत्य–शब्द का मनन एवँ चिन्तन किया है वे ही सत्य में लीन हो गए हैं। झूठा मनमुख व्यक्ति सदैव भ्रमों में भूला हुआ भटकता रहता है। उसका निवास सदा गन्दगी में ही बना रहता है और शब्द–गुरु के आनन्द को वह समझ नहीं पाता। नाम से विहीन ऐसे व्यक्ति आवागमन में ही पड़े रहते हैं। हे नानक, परखने वाला स्वयं वह प्रभु है जो खोटे एवं खरे को पहचान लेता है ॥ १३॥ श्लोक महला १ ॥ शेर, बाज, चरग (चील की जाति का एक पक्षी), कुही (शाहीन–बाज जाति का एक पक्षी) आदि मांसाहारी पक्षियों को यदि वह चाहे तो घास खिला देता है और जो घास खाने वाले जीव हैं यदि प्रभु चाहे तो उन्हें मांस खिलाकर इस रास्ते पर चला देता है अर्थात उनके स्वभाव में आमूल–चूल पविर्तन कर देता है। प्रभु नदियों में टीले दिखा देता है और रेतीले स्थानों को गहरे पानी वाले बना देता है। एक छोटे से कीड़े को भी यदि प्रभु बादशाह बना दे तो वह भी सेनाओं के झुण्डों को राख कर देता है। जितने भी जीव जीवित हैं वे सांस लेकर जीते हैं परन्तु यदि प्रभु चाहे तो जीवित रहने के लिए उनका श्वास पर मोहताज होना भी जरूरी नहीं है। हे नानक, प्रभु जैसे–जैसे चाहता है वैसे–वैसे ही सब जीवों को रोजी देता है ॥ १ ॥ महला १ ॥ कई जीव मांसाहारी और कई जीव घास खाने वाले हैं। कई छत्तीस प्रकार के भोजन करने वाले हैं और कई मिट्टी में रहकर मिट्टी ही खाने वाले होते हैं। कई पवन अर्थात प्राणायाम का अभ्यास करने वाले उसके नाम के आश्रय में जीवित बने रहते हैं। जो व्यक्ति यह मानकर चलते हैं कि उनके सिर पर उन्हें जीवित रखने वाला दाता एक प्रभु ही है तो वे कभी भी भयभीत नहीं होते हैं। हे नानक, जिनके मन में इस प्रकार का विचार नहीं है वे ही इस संसार में ठगे जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ पूर्ण गुरु द्वारा बतलाया गया जीवन–व्यवहार भाग्यशाली होने पर ही जीवन में धारण किया जाता हैं। गुरु की मति में चलकर अहम् भाव गँवाया जाता है और प्रभु नाम का सुमिरन किया जाता है। अन्य कामों में लगकर व्यक्ति अपना जन्म गवाँता ही है और प्रभु–नाम को विस्मृत करके जो कुछ भी खाया पहना जाता है वह सब विष के समान हो जाता है। सत्य–शब्द रूपी परमात्मा का गुणानुवाद करके ही सत्य में लीन हुआ जाता है; सद्गुरु के सुमिरन के बिना कभी भी सुख में निवास नहीं बनता और आवागमन बना ही रहता है। सांसारिकता झूठी रास पूँजी है जिससे केवल झूठ ही कमाया जा सकता है। हे नानक, निर्मल सत्य का गुणानुवाद करके ही व्यक्ति सम्मान सहित यहाँ से जाता है ॥ १४ ॥ श्लोक महला १ ॥ हे प्रभु, जव तुझे भाता है तो जीव बजाते हैं, गाते हैं और तीर्थो पर स्नान करते हैं।

जा तुधु भावहि ता करहि बिभूता सिंङी नादु वजावहि ॥ जा तुधु भावै ता पड़हि कतेबा मुला सेख कहावहि ॥ जा तुधु भावै ता होवहि राजे रस कस बहुतु कमावहि ॥ जा तुधु भावै तेग वगावहि सिर मुंडी कटि जावहि ॥ जा तुधु भावै जाहि दिसंतरि सुणि गला घरि आवहि ॥ जा तुधु भावै नाइ रचावहि तुधु भाणे तूं भावहि ॥ नानकु एक कहै बेनंती होरि सगले कूड़ु कमावहि ॥ १ ॥ मः १ ॥ जा तूं वडा सभि वडिआंईआ चंगै चंगा होई ॥ जा तूं सचा ता सभु को सचा कूड़ा कोइ न कोई ॥ आखणु वेखणु बोलणु चलणु जीवणु मरणा धातु ॥ हुकमु साजि हुकमै विचि रखै नानक सचा आपि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सतिगुरु सेवि निसंगु भरमु चुकाईऐ ॥ सतिगुरु आखै कार सु कार कमाईऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु त नामु धिआईऐ ॥ लाहा भगति सु सारु गुरमुखि पाईऐ ॥ मनमुखि कूड़ु गुबारु कूड़ु कमाईऐ ॥ सचे दे दरि जाइ सचु चवांईऐ ॥ सचै अंदरि महलि सचि बुलाईऐ ॥ नानक सचु सदा सचिआरु सचि समाईऐ ॥ १५ ॥ सलोकु मः १ ॥ कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ॥ कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ ॥ हउ भालि विकुंनी होई ॥ आधेरै राहु न कोई ॥ विचि हउमै करि दुखु रोई ॥ कहु नानक किनि बिधि गति होई ॥ १ ॥ मः ३ ॥ कलि कीरति परगटु चानणु संसारि ॥ गुरमुखि कोई उतरै पारि ॥ जिस नो नदरि करे तिसु देवै ॥ नानक गुरमुखि रतनु सो लेवै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ भगता तै सैसारीआ जोड़ु कदे न आइआ ॥ करता आपि अभुलु है न भुलै किसै दा भुलाइआ ॥ भगत आपे मेलिअनु जिनी सचो सचु कमाइआ ॥ सैसारी आपि खुआइअनु जिनी कूड़ु बोलि बोलि बिखु खाइआ ॥ चलण सार न जाणनी कामु करोधु विसु वधाइआ ॥ भगत करनि हरि चाकरी जिनी अनदिनु नामु धिआइआ ॥ दासनि दास होइ कै जिनी विचहु आपु गवाइआ ॥ ओना खसमै कै दरि मुख उजले सचै सबदि सुहाइआ ॥ १६ ॥ सलोकु मः १ ॥ सबाही सालाह जिनी धिआइआ इक मनि ॥ सेई पूरे साह वखतै उपरि लड़ि मुए ॥ दूजै बहुते राह मन कीआ मती खिंडीआ ॥ बहुतु पए असगाह

तेरे हुकुम में ही वे तन पर भभूत लगाते हैं और सींग के बने हुए वाद्य बजाते हैं । कई लोग तेरे ही हुकुम में कुरान आदि धार्मिक पुस्तकें पढ़ते हैं और अपने आप को मुल्ला और शेख कहलाते हैं । कई राजा कहलाते हैं और विभिन्न स्वाद वाले भोजनों का प्रयोग करते हैं । तेरे ही हुकुम में कई तलवार चलाते हैं और गर्दनों पर से सिर कट जाते हैं । तेरी आज्ञा में कई परदेसों में जाते हैं और वहाँ की कथाएं वार्ताएं देख–सुन कर पुनःअपने घर आ जाते हैं । यह तेरा ही हुकुम है कि कई व्यक्ति नाम में लीन बने रहते हैं और जो तेरे हुकुम में चलते हैं वही तुझे अच्छे भी लगते हैं । नानक प्रार्थना करता है कि प्रभु–नाम में लीन होने के अतिरिक्त अन्य जितने भी कार्य हैं वे सब झूठे एवं व्यर्थ हैं ॥ १ ॥ महला १ ॥ तू सब से बड़ा है इसलिए तुझमें से बड़प्पन ही निकलता है क्योंकि अच्छे में से अच्छा ही उत्पन्न होता है । जब तू सत्य–स्वरूप में है तो दृश्यमान सब कुछ (क्षण–भंगुर तो हो सकता है पर) सत्य ही है । कुछ भी झूठा नहीं है । कहना, देखना, बोल–चाल, जीवन–मरण क्षणिक है क्योंकि वास्तविकता तो केवल प्रभु ही है । हे नानक, सत्य–प्रभु अपने हुकुम के अन्तर्गत सब जीवों की रचना करके उन्हें हुकुम के अन्दर ही रखता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सद्गुरु की आज्ञा मानने से भ्रम एवं भटकन दूर हो जाती है । जो सद्गुरु का हुकुम है वही कार्य करना चाहिए । सद्गुरु दयालु हो तभी प्रभु नाम का सुमिरन होता है । भक्ति रूपी सार तत्व ही इस जीवन का लाभ है जिसे गुरमुख बनकर प्राप्त किया जाता है । मनमुख व्यक्ति घोर अंधकार में पड़ा हुआ अपने कर्मों द्वारा अधिक अंधकार का वातावरण बनाए चला जाता है । यदि सत्य–प्रभु के चरणों में लीन होकर सत्य का ही जाप किया जाए तो सत्य अथवा सत्याचरण के माध्यम से ही प्रभु के समक्ष बुलाकर सम्मान दिया जाता है । हे नानक, सत्याचरण वाले व्यक्ति के पास सदैव सत्य की पूँजी होती है और वह सदा सत्य में ही लीन रहता है ॥ १५ ॥ श्लोक महला १ ॥ जीवों का घोर कलियुगी स्वभाव छुरी है और फलस्वरूप राजागण कसाई की तरह निर्दयी हैं तथा धर्म भी पंख लगाकर उड़ गया है । झूठ का प्रभाव अमावस की काली रात की तरह है जिसमें सत्य रूपी चन्द्रमा कहीं दिखाई नहीं देता। मैं उस सत्य को ढूंढ ढूँढ कर व्याकुल हो गई हूँ और अन्धकार में रास्ता सुझाई नहीं पड़ता । अपने अहम् में ही यह सारी सृष्टि दुखी होकर विलाप कर रही है । हे नानक, इसकी मुक्ति कैसे होगी ॥ १ ॥ महला ३ ॥ झूठ के अन्धकार को दूर करने के लिए कलियुग में प्रभु–गुणानुवाद प्रत्यक्ष रूप से सारे संसार को प्रकाशित कर सकता है । कोई गुरमुख ही प्रभु गुणानुवाद के इस रत्न को प्राप्त करता है और संसार के अन्धेरे से भरे हुए समुद्र से पार हो जाता है । प्रभु जिस पर कृपा करता है उसी को ही देता है और हे नानक, यह मिलता उसी को है जो गुरमुख बनकर इस रत्न को खोज लेता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ भक्तों और दुनियांदारों का परस्पर कभी मेल नहीं बैठता है । उसने अपने भक्तगण अपने में लीन किए हुए हैं जो सदैव सत्य की ही कमाई करते हैं । दुनियांदारों को भी उसने स्वयं ही ख्वार किया हुआ है और झूठ बोल–बोल कर वे सांसारिकता का विष खाये चले जा रहे हैं । संसार में रहकर संसार के व्यवहार के सार तत्व (परमात्मा) को वे नहीं जानते और सदैव काम, क्रोध आदि विकारों का विष बढ़ाते चले जाते हैं । भक्तगण अपने कार्य–व्यवहार से उस प्रभु की ही चाकरी कर रहे हैं और हर समय प्रभु के नाम का सुमिरन कर रहे हैं। प्रभु के सेवकों का भी सेवक बनकर जिन्होंने अपने अहंकार को चुका दिया है, प्रभु द्वार पर उनके मुख उज्जवल बने रहते हैं और सत्य शब्द में स्थित रहने के फलस्वरूप वे सदैव प्रभु द्वार पर शोभा प्राप्त करते हैं,॥ १६ ॥ श्लोक महला१ ॥ जो व्यक्ति प्रातः एकाग्र चित्त होकर प्रभु का गुणानुवाद और सुमिरन करते हैं वे ही सच्चे बादशाह (शूरवीर) हैं जो तनिक भी समय नहीं गँवाते और मन से युद्ध करने के लिए समय का सदुपयोग करते हैं । दूसरे प्रहर में तो मन की वासनाएं कई ओर बिखर जाती हैं और व्यक्ति सांसारिक उलझनों के समुद्र में गोते खाने शुरू कर देते हैं तथा

गोते खाहि न निकलहि ॥ तीजे मुही गिराह भुख तिखा दुइ भउकीआ ॥ खाधा होइ सुआह भी खाणे सिउ दोसती ॥ चउथै आई ऊंघ अखी मीटि पवारि गइआ ॥ भी उठि रचिओनु वादु सै वर्हिआ की पिड़ बधी ॥ सभे वेला वखत सभि जे अठी भउ होइ ॥ नानक साहिबु मनि वसै सचा नावणु होइ ॥ १ ॥ मः २ ॥ सेई पूरे साह जिनी पूरा पाइआ ॥ अठी वेपरवाह रहनि इकतै रंगि ॥ दरसनि रूपि अथाह विरले पाईअहि ॥ करमि पूरै पूरा गुरू पूरा जा का बोलु ॥ नानक पूरा जे करे घटै नाही तोलु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जा तूं ता किआ होरि मै सचु सुणाईऐ ॥ मुठी धंधै चोरि महलु न पाईऐ ॥ एनै चिति कठोरि सेव गवाईऐ ॥ जितु घटि सचु न पाइ सु भंनि घड़ाईऐ ॥ किउ करि पूरै वटि तोलि तुलाईऐ ॥ कोइ न आखै घटि हउमै जाईऐ ॥ लईअनि खरे परखि दरि बीनाईऐ ॥ सउदा इकतु हटि पूरै गुरि पाईऐ ॥ १७ ॥ सलोक मः २ ॥ अठी पहरी अठ खंड नावा खंडु सरीरु ॥ तिसु विचि नउ निधि नामु एकु भालहि गुणी गहीरु ॥ करमवंती सालाहिआ नानक करि गुरु पीरु ॥ चउथै पहरि सबाह कै सुरतिआ उपजै चाउ ॥ तिना दरीआवा सिउ दोसती मनि मुखि सचा नाउ ॥ ओथै अंम्रितु वंडीऐ करमी होइ पसाउ ॥ कंचन काइआ कसीऐ वंनी चड़ै चड़ाउ ॥ जे होवै नदरि सराफ की बहुड़ि न पाई ताउ ॥ सती पहरी सतु भला बहीऐ पड़िआ पासि ॥ ओथै पापु पुंनु बीचारीऐ कूड़ै घटै रासि ॥ ओथै खोटे सटीअहि खरे कीचहि साबासि ॥ बोलणु फादलु नानका दुखु सुखु खसमै पासि ॥ १ ॥ मः २ ॥ पउणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥ दिनसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु ॥ चंगिआईआ बुरिआईआ वाचे धरमु हदूरि ॥ करमी आपो आपणी के नेड़ै के दूरि ॥ जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि ॥ नानक ते मुख उजले होर केती छुटी नालि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचा भोजनु भाउ सतिगुरि दसिआ ॥ सचे ही पतीआइ सचि विगसिआ ॥ सचै कोटि गिरांइ निज घरि वसिआ ॥ सतिगुरि तुठै नाउ प्रेमि रहसिआ ॥ सचै दै दीबाणि कूड़ि न जाईऐ ॥ झूठो झूठु वखाणि सु महलु खुआईऐ ॥

उससे निकल नहीं पाते । दिन के तीसरे प्रहर में भूख और प्यास दोनों भड़क उठती हैं; सब खाया पीया भस्म हो जाता है और पुनः खाने के साथ दोस्ती अर्थात प्रेम जग उठता है । चौथे प्रहर में नींद आ दबाती है और आँख बन्द करके व्यक्ति गाढ़ी नींद में सो जाता हैं । पुनः उठकर जगत के धन्धों का वही झमेला शुरू हो जाता है और व्यक्ति सैंकडों वर्षो तक जीवित बना रहने का घमासान शुरू कर देता है । यदि आठों प्रहर प्रभु का भय–प्रेम मन में बना रहे तो केवल प्रातःकाल ही नहीं ब्लकि सभी समय पवित्र हैं । हे नानक, यदि साहिब परमात्मा मन में बसा हुआ हो तो ही व्यक्ति वास्तविक रूप से स्नान करता है ॥ १ ॥ महला २ ॥ जिन्होंने पूर्ण प्रभु को पा लिया है वे ही पूरे बादशाह है । वे आठों प्रहर मस्त बने रहकर एक ही रंग में रंगे रहते हैं । परन्तु उस अथाह प्रभु के दर्शन में लीन व्यक्ति बिरले ही होते हैं । अपने कथन की पूर्णता वाला गुरु, व्यक्ति को पूर्ण बना देता है । ऐसे व्यक्ति की मर्यादा की गुरुता कम नहीं होती अर्थात वह सदा प्रभु के साथ जुड़ा रहता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मैं सत्य कहता हूँ कि हे प्रभु, जब तू मेरा रक्षक है तो फिर भला मुझे अन्य का मोहताज होने की क्या जरूरत है । परन्तु जिस जीव–स्त्री को सांसारिकता के चोर ने मोहित कर रखा है उसको तेरा स्थान मिलता नहीं; उसका चित्त इतना कठोर है कि उसने की हुई मेहनत भी व्यर्थ ही गँवा ली है । जिसके हृदय में सत्य नहीं बसता वह सदा बनता टूटता रहता है । किए कर्मो का लेखा होने पर वह भला तौल में कैसे पूरा उतर सकता है । परन्तु यदि उसने अपने अहंकार को समाप्त कर लिया है तो उसको कोई भी कम तौल वाला नहीं कहता । प्रभु–द्वार पर खरे जीव परख लिए जाते हैं और प्रभु से मिला लेने वाला सौदा पूर्ण गुरु के स्थान पर ही प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ श्लोक महला २ ॥ सृष्टि–रचना के नव खण्डों में से जो नौवां खण्ड है वह व्यक्ति का यह शरीर है जिसमें नव निधि रूपी प्रभु–नाम स्थित है जिसे गम्भीर गुणवान लोग खोजा करते हैं । हे नानक, किसी भाग्यवान ने ही गुरु और पीर के माध्यम से प्रभु–नाम की खोज की है । सुबह के चौथे प्रहर में जो ऊंची सुरति वाले लोग हैं उनके मन में प्रभु–नाम के लिए उत्साह पैदा होता है । वे नाम के प्रवाह को मन में धारण करने वाले उन गुरमुखों के साथ दोस्ती बनाते हैं जिनके मन में और मुँह में सच्चा नाम बसता है । गुरमुखों की संगत में नाम रूपी अमृत बांटा जाता है और प्रभु कृपा से उनको नाम का दान प्राप्त होता है । इस कंचन रूपी काया को कसौटी पर कस लिया जाता है और उस पर इसकी (नाम की) सुन्दर आभा बन जाती है । यदि प्रभु रूपी सुनार की कृपा हो जाए तो इस शरीर को पुनः आवागमन के चक्कर में तपना नहीं पड़ता । बाकी के सातों प्रहर भला आचरण बनाने के लिए विद्वान गुरमुखों के पास बैठना चाहिए क्योंकि वहाँ पाप और पुण्य कर्मो पर विचार किया जाता है और व्यक्ति की झूठ की पुँजी में कमी आ जाती है । उनकी संगत में खोटे कामों को हटा लिया जाता है और खरे कामों की प्रशंसा की जाती है । हे नानक, वहाँ यह भी पता चल जाता है कि दुख–सुख सब प्रभु स्वयं ही देता है इसलिए किसी दुख पर अफसोस प्रकट करना व्यर्थ है ॥ १ ॥ महला २ ॥ वायु गुरु है, पानी सबका पिता है और विशाल धरती सबकी माँ है । दिन और रात दोनों खेलाने वाली धाय और सेवक के समान है जिनकी गोद में सारा संसार खेल रहा है । धर्मराज जीवों के किए हुए अच्छे बुरे कर्मो को बड़ी बारीकी से देखता विचारता है । अपने कर्मो के ही कारण कई जीव प्रभु के पास पहुँचते जा रहे हैं और कई उससे दूर होते चले जा रहे हैं । हे नानक, जिन्होंने नाम का सुमिरन किया है वे अपनी मेहनत को सफल कर गए हैं । उनके अपने मुख तो उज्जवल होते ही है, उनके साथ अनेकों अन्य भी मुक्ति प्राप्त कर जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सद्गुरु ही बताता है कि वास्तविक भोजन प्रभु का प्रेम ही है । ऐसा भोजन खाने वाला व्यक्ति सत्य में ही लीन हो जाता है और सत्य में ही खिला रहता है । अपने मूल स्वरूप में टिका हुआ व्यक्ति ऐसा लगता है मानो वह किसी सुदृढ़ किले में रह रहा हो । सद्गुरु (परमात्मा) के प्रसन्न होने पर ही प्रेम में बने रहकर प्रसन्न रहा जाता है । उस सत्य–प्रभु के दरबार में झूठे वनकर नहीं जाया जा सकता ; झूठ बोल–बोल कर तो उस प्रभु–महल को गँवा ही दिया जाता है ।

सचै सबदि नीसाणि ठाक न पाईऐ ॥ सचु सुणि बुझि वखाणि महलि बुलाईऐ ॥ १८ ॥ सलोकु मः १ ॥ पहिरा अगनि हिवै घरु बाधा भोजनु सारु कराई ॥ सगले दूख पाणी करि पीवा धरती हाक चलाई ॥ धरि ताराजी अंबरु तोली पिछै टंकु चड़ाई ॥ एवडु वधा मावा नाही सभसै नथि चलाई ॥ एता ताणु होवै मन अंदरि करी भि आखि कराई ॥ जेवडु साहिबु तेवड दाती दे दे करे रजाई ॥ नानक नदरि करे जिसु उपरि सचि नामि वडिआई ॥ १ ॥ मः २ ॥ आखणु आखि न रजिआ सुनणि न रजे कंन ॥ अखी देखि न रजीआ गुण गाहक इक वंन ॥ भुखिआ भुख न उतरै गली भुख न जाइ ॥ नानक भुखा ता रजै जा गुण कहि गुणी समाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ विणु सचे सभु कूड़ु कूड़ु कमाईऐ ॥ विणु सचे कूड़िआरु बंनि चलाईऐ ॥ विणु सचे तनु छारु छारु रलाईऐ ॥ विणु सचे सभ भुख जि पैझै खाईऐ ॥ विणु सचे दरबारु कूड़ि न पाईऐ ॥ कूड़ै लालचि लगि महलु खुआईऐ ॥ सभु जगु ठगिओ ठगि आईऐ जाईऐ ॥ तन महि त्रिसना अगि सबदि बुझाईऐ ॥ १९ ॥ सलोक मः १ ॥ नानक गुरु संतोखु रुखु धरमु फुलु फल गिआनु ॥ रसि रसिआ हरिआ सदा पकै करमि धिआनि ॥ पति के साद खादा लहै दाना कै सिरि दानु ॥ १ ॥ मः १ ॥ सुइने का बिरखु पत परवाला फुल जवेहर लाल ॥ तितु फल रतन लगहि मुखि भाखित हिरदै रिदै निहालु ॥ नानक करमु होवै मुखि मसतकि लिखिआ होवै लेखु ॥ अठिसठि तीरथ गुर की चरणी पूजे सदा विसेखु ॥ हंसु हेतु लोभु कोपु चारे नदीआ अगि ॥ पवहि दझहि नानका तरीऐ करमी लगि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जीवदिआ मरु मारि न पछोताईऐ ॥ झूठा इहु संसारु किनि समझाईऐ ॥ सचि न धरे पिआरु धंधै धाईऐ ॥ कालु बुरा खै कालु सिरि दुनीआईऐ ॥ हुकमी सिरि जंदारु मारे दाईऐ ॥ आपे देइ पिआरु मंनि वसाईऐ ॥ मुहतु न चसा विलंमु भरीऐ पाईऐ ॥ गुर परसादी बुझि सचि समाईऐ ॥ २० ॥ सलोकु मः १ ॥ तुमी तुमा विसु अकु धतूरा निमु फलु ॥ मनि मुखि वसहि तिसु जिसु तूं चिति न आवही ॥ नानक कहीऐ किसु हंढनि करमा बाहरे ॥ १ ॥ मः १ ॥ मति पंखेरू किरतु साथि

जब सत्य–शब्द का पहचान–पत्र पास में हो ते कोई भी रुकावट सामने नहीं आती। प्रभु का नाम सुनकर समझकर और उसका सुमिरन करने के फलस्वरूप प्रभु के महल में जीव को बुलाया जाता है ॥ १८ ॥ श्लोक महला १॥ यदि मैं अग्नि को वस्त्र की तरह पहन लूं , बर्फ में घर बना कर बैठ सकूँ, लोहे को भोजन के तौर पर खा सकूँ; यदि मैं सारे दुखों को पानी की तरह पी जाऊँ और धरती को अपने हुकम में चला सकूँ; यदि सारे आकाश को तराजू में रखकर पीछे चार माशे भर का बाट रखकर तौल लूँ, अपने शरीर को इतना बड़ा कर लूँ कि कहीं भी समा न सकूँ, सबको कान से पकड़ कर अपने हुकम में चला सकूँ; मुझमें इतनी शक्ति आ जाए कि मैं जो चाहे करूँ और अन्यों से भी करा सकूँ तो भी यह सब तुच्छ है। प्रभु जितना बड़ा स्वयं है उतने ही बड़े उसके दान है जो वह सब को देकर तृप्त करता रहता है। हे नानक, तथ्य यह है कि जिस व्यक्ति पर प्रभु कृपा करता है उसे सच्चे नाम का बड़प्पन प्राप्त हो जाता है जिसके सामने यह सभी शक्तियाँ तुच्छ है ॥ १ ॥ महला २ ॥ मुँह बोल–बोलकर नहीं थकता, कान सुन सुन कर नहीं तृप्त होते और आँखें देख–देख कर नहीं थकती। यह सभी इन्द्रियाँ अपने–अपने गुणों की ग्राहक हैं परन्तु कभी तृप्त नहीं होती। इनको समझाने पर भी इन इन्द्रियों की आदत छूटती नहीं। हे नानक, तृष्णाओं से भरा हुआ भूखा व्यक्ति तभी तृप्त हो सकता है यदि गुणानुवाद करता हुआ उस गुणी प्रभु में लीन बना रहे ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सत्य–प्रभु के बिना सब कुछ झूठ है और सारा कार्य–व्यवहार ही झूठा है। सत्य–विहीन व्यक्ति झूठा है और उसे बन्धनों में डालकर आगे धकेला जाता है। सत्य के बिना यह शरीर राख है और राख में ही मिल जाता है। सत्य के बिना जो कुछ खाया पहना जाता है वह और भूख पैदा करता है। प्रभु का नाम विस्मृत करके झूठ में लगकर प्रभु के दरबार में स्थान नहीं पाया जा सकता। झूठे लालच में फंसकर प्रभु–द्वार भी छिन जाता है और इस प्रकार ठगा हुआ सारा संसार आवागमन में पड़ा रहता है। मन की तृष्णाओं की अग्नि केवल शब्द के माध्यम से ही बुझ सकती है ॥ १९ ॥ श्लोक महला १ ॥ हे नानक, सन्तोष रूपी गुरु नामक वृक्ष को धर्म का फूल और ज्ञान के फल लगते हैं। प्रेम–जल से सींचा हुआ यह वृक्ष सदैव हरा रहता है। प्रभु–चरणों में ध्यान लगाने से इसका ज्ञान रूपी फल पकता है जिसे सम्मानपूर्वक व्यक्ति आनन्दित होकर खाता रहता है क्योंकि उसके लिए यही सबसे श्रेष्ठ दान है (जो प्रभु ने उसे दिया है) ॥ १ ॥ महला १ ॥ परमात्मा मानों सोने का वृक्ष है, श्रेष्ठ वचन उसके पत्ते हैं और उसमें गुरु द्वारा उच्चारित श्रेष्ठ वचन रूपी फल लगे हुए हैं। प्रभु अपने मन में सदैव खिला हुआ प्रसन्न रहता है। हे नानक, जिस व्यक्ति पर प्रभु की कृपा हो और जिसके मस्तक पर लेख लिखे हुए हों वह अड़सठ तीर्थों के तुल्य गुरु के चरणों की सदैव पूजा करता रहता है। निर्दयता, मोह, लोभ और क्रोध यह चारों आग की नदियाँ है। जो व्यक्ति इन नदियों में घुसते हैं वे जल जाते हैं। हे नानक, प्रभु की कृपा से ही इन नदियों को पार किया जा सकता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे भाई, जीवन में ही इन तृष्णाओं को मार ताकि अन्त में पछताना न पड़े। कैसे समझाया जाय कि यह संसार झूठा है। व्यक्ति धन्धों में भटकता हुआ सत्य के साथ प्यार नहीं करता और यह भी अनुभव नहीं करता कि सारी दुनियाँ के सिर पर भयंकर काल सदैव खड़ा रहता है। प्रभु के हुकम में ही यह भयंकर काल मारने का दाँव लगाए रहता है। परन्तु जीव के वश में यह सब नहीं है और प्रभु स्वयं ही प्रेम को व्यक्ति के मन में बसाता है। जब व्यक्ति का समय आ जाता है तो क्षण भर की भी देर नहीं लगायी जाती। सद्गुरु की कृपा से कोई विरला ही सोच समझकर सत्य में लीन होता है ॥ २० ॥ श्लोक महला १ ॥ हे प्रभु, जिस व्यक्ति के चित्त में तेरा स्मरण नहीं उसके मन में, मुख में आक, धतूरा, नीम आदि के कड़वे फल बसते हैं अर्थात वह मन और मुख दोनों से ही कड़वाहट वाला होता है। हे नानक, किसे इनके बारे में बताया जाय ? ऐसे व्यक्ति कर्महीन है और बदनसीबी में भटकते फिरते हैं ॥ १ ॥ महला १ ॥ व्यक्ति की बुद्धि एक ऐसा पक्षी है जिसके साथ

कब उतम कब नीच ॥ कब चंदनि कब अकि डालि कब उची परीति ॥ नानक हुकमि चलाईऐ साहिब लगी रीति ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ केते कहहि वखाण कहि कहि जावणा ॥ वेद कहहि वखिआण अंतु न पावणा ॥ पड़िऐ नाही भेदु बुझिऐ पावणा ॥ खटु दरसन कै भेखि किसै सचि समावणा ॥ सचा पुरखु अलखु सबदि सुहावणा ॥ मंने नाउ बिसंख दरगह पावणा ॥ खालक कउ आदेसु ढाढी गावणा ॥ नानक जुगु जुगु एकु मनि वसावणा ॥ २१ ॥ सलोकु महला २ ॥ मंत्री होइ अठूहिआ नागी लगै जाइ ॥ आपण हथी आपणै दे कूचा आपे लाइ ॥ हुकमु पइआ धुरि खसम का अती हू धका खाइ ॥ गुरमुख सिउ मनमुखु अड़े डुबै हकि निआइ ॥ दुहा सिरिआ आपे खसमु वेखै करि विउपाइ ॥ नानक एवै जाणीऐ सभ किछु तिसहि रजाइ ॥ १ ॥ महला २ ॥ नानक परखे आप कउ ता पारखु जाणु ॥ रोगु दारू दोवै बुझै ता वैदु सुजाणु ॥ वाट न करई मामला जाणै मिहमाणु ॥ मूलु जाणि गला करे हाणि लाए हाणु ॥ लबि न चलई सचि रहै सो विसटु परवाणु ॥ सरु संधे आगास कउ किउ पहुचै बाणु ॥ अगै ओहु अगंमु है वाहेदड़ु जाणु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नारी पुरख पिआरु प्रेमि सीगारीआ ॥ करनि भगति दिनु राति न रहनी वारीआ ॥ महला मंझि निवासु सबदि सवारीआ ॥ सचु कहनि अरदासि से वेचारीआ ॥ सोहनि खसमै पासि हुकमि सिधारीआ ॥ सखी कहनि अरदासि मनहु पिआरीआ ॥ बिनु नावै ध्रिगु वासु फिटु सु जीविआ ॥ सबदि सवारीआसु अंम्रितु पीविआ ॥ २२ ॥ सलोकु मः १ ॥ मारू मीहि न त्रिपतिआ अगी लहै न भुख ॥ राजा राजि न त्रिपतिआ साइर भरे किसुक ॥ नानक सचे नाम की केती पुछा पुछ ॥ १ ॥ महला २ ॥ निहफलं तसि जनमसि जावतु ब्रहम न बिंदते ॥ सागरं संसारसि गुर परसादी तरहि के ॥ करण कारण समरथु है कहु नानक बीचारि ॥ कारणु करते वसि है जिनि कल रखी धारि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ खसमै कै दरबारि ढाढी वसिआ ॥ सचा खसमु कलाणि कमलु बिगसिआ ॥ खसमहु पूरा पाइ मनहु रहसिआ ॥ दुसमन कढे मारि सजण सरसिआ ॥ सचा सतिगुरु सेवनि सचा

उसके संस्कार बने रहते हैं जो उसे कभी ऊँचाई की ओर और कभी नीचे की ओर ले जाते हैं । कभी यह पक्षी चन्दन पर बैठता है, कभी आक की डाली पर और कभी इसके मन में ऊँचा प्रभु–प्रेम जग पड़ता है । हे नानक, इसके बस में कुछ नहीं है और यह परम्परा से चले आ रहे नियम के अनुसार हुकुम में ही चल फिर रहा है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अनेकों जीव परमात्मा के गुणों का वर्णन करते आये हैं और संसार से ऐसा ही करते हुए चले गए हैं । वेद भी उसका बखान करते हैं पर उसका अन्त नहीं जान सके । केवल पढ़ने मात्र से उसके रहस्य को नहीं जाना जा सकता । उसको जानने के लिए गम्भीरता से उसे बूझना पड़ता है । षटदर्शन के विभिन्न वेशों और कर्मकाण्डों से भला कोई सत्य में लीन हो सका है ? वह सदा स्थिर रहने वाला प्रभु बेशक देखा नहीं जा सकता परन्तु शब्द के माध्यम से उसके सौन्दर्य को अनुभव किया जा सकता है । जो व्यक्ति अनन्त प्रभु के नाम का मनन करता है वह प्रभु के दरबार में पहुँच जाता है । प्रभु के आदेश में वह उसकी बिरुदावली गाता है और हे नानक, प्रत्येक युग में बने रहने वाले केवल एक प्रभु को ही मन में बसाता है ॥ २१ ॥ श्लोक महला २ ॥ बिच्छू का मन्त्र जानने वाला होकर यदि साँप पर हाथ डालता है तो समझ लो वह अपने हाथ से ही अपने को आग लगाने का काम करता है । प्रभु का आदेश ही ऐसा है कि इस प्रकार मूर्खता की हद तक जाकर काम करने वाले को धक्के ही पड़ते हैं । इसी प्रकार मनमुख व्यक्ति यदि गुरमुख के साथ धक्का करने का प्रयत्न करता है तो सत्य के न्याय के अन्तर्गत वह डूब जाता है । परन्तु दोनों ओर स्वयं प्रभु ही मालिक है जो स्वयं ही देखता और निर्णय करता है । हे नानक, इस सब को ऐसे ही जाना जाए कि सब कुछ उसकी रज़ा में ही हो रहा है ॥ १ ॥ महला २ ॥ हे नानक, यदि व्यक्ति अपने बलबूते को परखता रहे तो उसे ही वास्तविक परख करने वाला समझा जाना चाहिए । बुद्धिमान वैद्य वही है जो रोग के बारे में भी जानता हो और रोग के इलाज को भी समझता हो । ऐसा सुजान व्यक्ति जीवन–मार्ग में अपने आप को मेहमान जानता हुआ व्यर्थ के झंझटों में नहीं फंसता । वह अपने मूल स्वभाव अर्थात प्रभु के साथ गहरा सम्बन्ध बना कर अपने सत्संगियों में मिल बैठकर अपना समय व्यतीत करता है । ऐसा व्यक्ति लोभ के सहारे नहीं चलता और अन्यों के लिए प्रामाणिक बिचौलिया बन जाता है । परन्तु मनमुख बनकर यदि तीर को आकाश की तरफ चलाया जाएगा तो वह भला निशाने पर कैसे लगेगा । आकाश तो अगम्य है इसलिए वह तीर चलाने वाले पर ही पुनः आ गिरेगा ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन स्त्रियों का प्रभु–पति के साथ स्नेह है वे सदैव प्रेम का सिंगार किया करती हैं । वे दिन–रात भक्ति में लगी रहती हैं और किसी के रोके नहीं रुकती। शब्द के माध्यम से संवरे हुए जीवन वाली यह जीव स्त्रियाँ महलों में बसती हैं । पूर्ण विचारवान होकर वे मन से सच्ची अरदास (प्रार्थना) करती रहती हैं । प्रभु के हुकुम में चलती हुई वे अपने स्वामी के पास शोभायमान बनी रहती हैं । वह जीवन धिक्कार योग्य है और उस निवास को भी धिक्कार है जो प्रभु–नाम से विहीन है । जिसने शब्द के माध्यम से अपने जीवन को सँवारा है वास्तव में उसी ने नाम रूपी अमृत–पान किया है ॥ २२ ॥ श्लोक महला १ ॥ मरुस्थल कभी वर्षा से तृप्त नहीं होता और अग्नि की भूख कभी ईंधन से नहीं मिटती । कोई भी राजा कभी राज–सुख से तृप्त नहीं हुआ है और समुद्र को भला सूखे की गर्मी क्या कह सकती है । इसी प्रकार हे नानक, सच्चे नाम की भूख इतना अधिक होती है कि यह पूछा बताया नहीं जा सकता ॥ १ ॥ महला २ ॥ जब तक व्यक्ति प्रभु को नहीं पहचानता तब तक उसका जीवन निष्फल है । परन्तु गुरु की कृपा से व्यक्ति संसार समुद्र से तैर कर पार हो जाते हैं । हे नानक, प्रभु करने वाला एवं कारण–रूप में पूर्ण समर्थ है जिसने सारी सृष्टि को धारण कर रखा है । सभी कारण उस कर्त्ता के वश में है, उसी का ध्यान एवं विचार किया जाना चाहिए ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो गुणानुवाद करने वाला है वह सदैव प्रभु–मालिक के सामने उपस्थित बना रहता है । सच्चे मालिक के गुण गाकर उस व्यक्ति का हृदय रूपी कमल खिला रहता है । स्वामी–प्रभु से पूरी शाबास प्राप्त कर वह मन में प्रसन्न बना रहता है क्योंकि उसने विकार रूपी शत्रुओं को मारकर निकाल दिया होता है और वह साजन प्रभु में लीन बना रहता । सच्चे सद्गुरु के सुमिरन से

मारगु दसिआ ॥ सचा सबदु बीचारि कालु विधउसिआ ॥ ढाढी कथे अकथु सबदि सवारिआ ॥ नानक गुण गहि रासि हरि जीउ मिले पिआरिआ ॥ २३ ॥ सलोकु मः १ ॥ खतिअहु जंमे खते करनि त खतिआ विचि पाहि ॥ धोते मूलि न उतरहि जे सउ धोवण पाहि ॥ नानक बखसे बखसीअहि नाहि त पाही पाहि ॥ १ ॥ मः १ ॥ नानक बोलणु झखणा दुख छडि मंगीअहि सुख ॥ सुखु दुखु दुइ दरि कपड़े पहिरहि जाइ मनुख ॥ जिथै बोलणि हारीऐ तिथै चंगी चुप ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ चारे कुंडा देखि अंदरु भालिआ ॥ सचै पुरखि अलखि सिरजि निहालिआ ॥ उझड़ि भुले राह गुरि वेखालिआ ॥ सतिगुर सचे वाहु सचु समालिआ ॥ पाइआ रतनु घराहु दीवा बालिआ ॥ सचै सबदि सलाहि सुखीए सच वालिआ ॥ निडरिआ डरु लगि गरबि सि गालिआ ॥ नावहु भुला जगु फिरै बेतालिआ ॥ २४ ॥ सलोकु मः ३ ॥ भै विचि जंमै भै मरै भी भउ मन महि होइ ॥ नानक भै विचि जे मरै सहिला आइआ सोइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ भै विणु जीवै बहुतु बहुतु खुसीआ खुसी कमाइ ॥ नानक भै विणु जे मरै मुहि कालै उठि जाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सतिगुरु होइ दइआलु त सरधा पूरीऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु न कबहूं झूरीऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता दुखु न जाणीऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता हरि रंगु माणीऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता जम का डरु केहा ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता सद ही सुखु देहा ॥ सतिगुरु होइ दइआलु ता नव निधि पाईऐ ॥ सतिगुरु होइ दइआलु त सचि समाईऐ ॥ २५ ॥ सलोकु मः १ ॥ सिरु खोहाइ पीअहि मलवाणी जूठा मंगि मंगि खाही ॥ फोलि फदीहति मुहि लैनि भड़ासा पाणी देखि सगाही ॥ भेडा वागी सिरु खोहाइनि भरीअनि हथ सुआही ॥ माऊ पीऊ किरतु गवाइनि टबर रोवनि धाही ॥ ओना पिंडु न पतलि किरिआ न दीवा मुए किथाऊ पाही ॥ अठसठि तीरथ देनि न ढोई ब्रहमण अंनु न खाही ॥ सदा कुचील रहहि दिनु राती मथै टिके नाही ॥ झुंडी पाइ बहनि निति मरणै दड़ि दीबाणि न जाही ॥ लकी कासे हथी फुंमण अगो पिछी जाही ॥ ना ओइ जोगी ना ओइ जंगम

इसे सत्य का मार्ग मिल जाता है । सच्चे शब्द के चिन्तन, मनन के फलस्वरूप ऐसा व्यक्ति काल का भी विध्वंस कर देता है । शब्द–गुरु के माध्यम से संवरे हुए जीवन वाला प्रभु गुण–गायक उस प्रभु के अकथनीय गुणों का गायन करता रहता है । इस प्रकार हे नानक, ऐसा व्यक्ति प्रभु के गुणों की पूँजी इकट्ठी कर प्रभु–प्यार में लीन हो जाता है ॥ २३ ॥ श्लोक महला ३ ॥ अपनी की हुई भूलों के कारण इस जीवन में आये हुए लोग यहाँ भी पाप कर्म ही करते हैं और आगे भी अपने संस्कारों के कारण पापों में ही पड़े रहेंगे । शरीर को धोने मात्र से पाप कदापि नहीं उतरते बेशक उसे सौ बार धोया जाए। हे नानक, यदि प्रभु कृपा करे और क्षमा कर दे तो ये समाप्त हो सकते हैं अन्यथा जूतों की मार ही पड़ेगी ॥ २ ॥ महला १ ॥ हे नानक, दुख को छोड़कर सुख मांगते चले जाना केवल व्यर्थ का प्रलाप ही है । सुख और दुख दोनों उस परमात्मा के दिए हुए कपड़े हैं जिसे व्यक्ति इस जीवन में यहाँ पहनते हैं । अतः यहाँ इनके बारे में बोलना व्यर्थ है और यहाँ चुप रहने में ही भलाई है अर्थात उसकी रज़ा में चलना ही सबसे अच्छा है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिसने चारों दिशाओं को छोड़कर केवल प्रभु को अपने अन्दर खोजा है उसको पता चल जाता है कि उस अलख सत्य–प्रभु ने इस सृष्टि को पैदा किया है और इसका पोषण भी स्वयं ही कर रहा है। राह से भटके हुए मनुष्य को गुरु ने रास्ता दिखाया है और सच्चा सद्गुरु धन्य है जिसने सत्य को हृदय में धारण कर रखा है । ज्ञान का दीपक जलने से प्रभु–नाम रूपी रत्न हृदय रूपी घर में से ही प्राप्त हो जाता है । सत्य–शब्द के गुणानुवाद से व्यक्ति सुखी और सत्यवान बन जाते हैं । जो प्रभु के भय से विहीन हैं वो सदैव भयभीत रहते हैं और जो अहंकारी बने रहते हैं उन्हें अहंकार ही गला देता है । प्रभु–नाम को भूला हुआ जगत बेताल होकर ही इधर–उधर भटकता रहता है ॥ २४ ॥ श्लोक महला ३ ॥ जगत भय में जन्म लेता है, भय में ही मरता है और इस प्रकार भय ही सदैव इसके मन में बना रहता है । परन्तु हे नानक, यदि व्यक्ति प्रभु–भय में अपने अहंकार को मार ले तो उसका इस संसार में आना सफल हो जायेगा ॥ १ ॥ महला ३ ॥ परमात्मा के भय से विहीन जो व्यक्ति लम्बी आयु और अनेकों प्रकार की खुशियों को भोगता रहे तो भी हे नानक, प्रभु के भय को हृदय में धारण किए बिना ही यदि वह मरता है तो वह अपना काला मुँह लेकर ही यहाँ से जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिस पर सद्गुरु (परमात्मा) दयालु हो जाए तो उसका विश्वास पक्का हो जाता है । सद्गुरु की कृपा होने से कभी भी पछतावे के क्षणों से नहीं गुजरना पड़ता है, सद्गुरु की दयालुता के फलस्वरूप दुख दुख रूप में नहीं जाना जाता । सद्गुरु के दयालु होने पर प्रभु–प्रेम का आनन्द लिया जाता है । यदि सद्गुरु दयालु हो जाए तो फिर भला यम का डर कैसे हो सकता है । सद्गुरु के दयालु होने पर व्यक्ति का शरीर सदैव सुखी रहता है । सद्गुरु की दयालुता के फलस्वरूप व्यक्ति नवनिधियाँ पा लेता है और सद्गुरु यदि दयालु हो जाए तो जीव सत्य में समाहित हो जाता है अर्थात सत्याचरण वाला बन जाता है ॥ २५ ॥ श्लोक महला २ ॥ कई ऐसे भी लोग हैं जो सिर के बालों को नुचवाते हैं; मैला पानी पीते हैं तथा जूठी रोटी माँग–माँग कर खाते हैं । अपने पाखाने को भी कुरेदते हैं (ताकि कोई कीड़ा न मर जाए); गन्दी हवा को सूंघते है और साथ ही साथ पानी को देखकर उससे विमुख होते हैं अर्थात जल को प्रयोग नहीं करते । भेड़ों की तरह बाल नुचवाते हैं और नोचने वालों के हाथ भी राख से भर जाते हैं । माता–पिता के धर्म को अर्थात कमाकर परिवार के पोषण के कार्य को ये छोड़ बैठते हैं और इनका परिवार विलाप करता है । हिन्दू मत के अनुसार ये मरणोंपरान्त जीव के लिए पिण्ड दान, दीप–दान आदि का कर्म काण्ड नहीं करते हैं और इनके मृतक पता नहीं कहाँ जाते हैं । हिन्दूओं के अड़सठ तीर्थो पर भी ये नहीं जाते और ब्राह्मण लोग इनका अन्न नहीं खाते । रात–दिन ये कुचील अवस्था में बने रहते हैं और माथे पर तिलक आदि भी नहीं लगाते अर्थात शरीर को स्वच्छ भी नहीं करते । गर्दन गिराकर ये ऐसे बैठते हैं जैसे किसी मृतक के शोक में बैठे हो । ये किसी सत्संग आदि में भी नहीं जाते । कमर के साथ इन्होंने प्याले बाँधे हुए हैं और हाथों में रास्ता साफ करने के लिए झाड़ू जैसा चंवर पकड़े हुए एक ही लाईन में चलते हैं (ताकि जीव हिंसा न हो जाए) । न तो ये योगी हैं न ही जंगम है और न ही

ना ओइ काजी मुंला ॥ दयि विगोए फिरहि विगुते फिटा वतै गला ॥ जीआ मारि जीवाले सोई अवरु न कोई रखै ॥ दानहु तै इसनान्हु वंजे भसु पई सिरि खुथै ॥ पाणी विचहु रतन उपंने मेरु कीआ माधाणी ॥ अठसठि तीरथ देवी थापे पुरबी लगै बाणी ॥ नाइ निवाजा नातै पूजा नावनि सदा सुजाणी ॥ मुइआ जीवदिआ गति होवै जां सिरि पाईऐ पाणी ॥ नानक सिरखुथे सैतानी एना गल न भाणी ॥ वुठै होइऐ होइ बिलावलु जीआ जुगति समाणी ॥ वुठै अंनु कमादु कपाहा सभसै पड़दा होवै ॥ वुठै घाहु चरहि निति सुरही सा धन दही विलोवै ॥ तितु घिइ होम जग सद पूजा पइऐ कारजु सोहै ॥ गुरू समुंदु नदी सभि सिखी नातै जितु वडिआई ॥ नानक जे सिरखुथे नावनि नाही ता सत चटे सिरि छाई ॥ १ ॥ मः २ ॥ अगी पाला कि करे सूरज केही राति ॥ चंद अनेरा कि करे पउण पाणी किआ जाति ॥ धरती चीजी कि करे जिसु विचि सभु किछु होइ ॥ नानक ता पति जाणीऐ जा पति रखै सोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तुधु सचे सुबहानु सदा कलाणिआ ॥ तूं सचा दीबाणु होरि आवण जाणिआ ॥ सचु जि मंगहि दानु सि तुधै जेहिआ ॥ सचु तेरा फुरमानु सबदे सोहिआ ॥ मंनिऐ गिआनु धिआनु तुधै ते पाइआ ॥ करमि पवै नीसानु न चलै चलाइआ ॥ तूं सचा दातारु नित देवहि चड़हि सवाइआ ॥ नानकु मंगै दानु जो तुधु भाइआ ॥ २६ ॥ सलोकु मः २ ॥ दीखिआ आखि बुझाइआ सिफती सचि समेउ ॥ तिन कउ किआ उपदेसीऐ जिन गुरु नानक देउ ॥ १ ॥ मः १ ॥ आपि बुझाए सोई बूझै ॥ जिसु आपि सुझाए तिसु सभु किछु सूझै ॥ कहि कहि कथना माइआ लूझै ॥ हुकमी सगल करे आकार ॥ आपे जाणै सरब वीचार ॥ अखर नानक अखिओ आपि ॥ लहै भराति होवै जिसु दाति ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हउ ढाढी वेकारु कारै लाइआ ॥ राति दिहै कै वार धुरहु फुरमाइआ ॥ ढाढी सचै महलि खसमि बुलाइआ ॥ सची सिफति सालाह कपड़ा पाइआ ॥ सचा अंम्रित नामु भोजनु आइआ ॥ गुरमती खाधा रजि तिनि सुखु पाइआ ॥ ढाढी करे पसाउ सबदु वजाइआ ॥ नानक सचु सालाहि पूरा पाइआ ॥ २७ ॥ सुधु

इनका व्यवहार काजी मुल्लाओं जैसा है । परमात्मा से विहीन ये भटकते फिरते हैं और इनका सारा झुण्ड ही बिगड़ा (भटका) हुआ है । ये नहीं जानते कि जीवों को मारने–जिलाने वाला प्रभु स्वयं ही है और प्रभु के बिना अन्य कोई भी इन्हें जीवित नहीं रख सकता । दान और स्नान से विहीन होना तो नुचे हुए सिर पर राख डालने के समान है । ये नहीं जानते कि जब सुमेर पर्वत को मथानी बना कर समुद्र मन्थन किया गया बताया जाता है तब पानी में से ही रत्न निकले माने जाते हैं । (पानी के रत्नों को पानी में जाकर ही निकाला जाता है यह बात सब जानते हैं परन्तु ये नहीं समझते) । (तथाकथित) देवताओं ने भी अड़सठ तीर्थ जल के किनारे ही बनाएं जहाँ पर पर्व मनाए जाते हैं और कथा वार्ता होती है । नहाकर ही नमाज़ अदा की जाती है और नहाकर ही पूजा होती है । सुजान व्यक्ति नित्य स्नान करते हैं; जीवन भर और मरणोपरान्त भी व्यक्ति तभी उत्तम रूप से गतिशील बना रहता है यदि वह जल से स्नान करे । परन्तु हे नानक, इन केश–विहीन उपद्रवियों को स्नान वाली बात अच्छी नहीं लगी है । पानी के बरसने से सब में खुशी पैदा होती है, जीवों के जीवन की मुक्ति पानी में ही बनी हुई है । वर्षा से अन्न पैदा होता है, गन्ना उगता है, कपास पैदा होती है जो सबके लिए कपड़े के रूप में पर्दा बनती है । वर्षा में उगा हुआ घास गाएं खाती हैं; गाय के दूध दही का घर की स्त्री मन्थन करती है और बने हुए घी से होम, यज्ञ पूजा आदि के कार्य शोभायुक्त बनते हैं । गुरु समुद्र है और उसकी सिख (जिज्ञासु) संगत नदियाँ हैं जिनमें नहाने से बड़प्पन प्राप्त होता है । हे नानक, ये सिर नोचने वाले न तो जल में स्नान करते हैं और न ही गुरु रूपी समुद्र में सदसंगत के माध्यम से स्नान करते हैं । इनका यह कार्य सिर में सात मुट्ठी राख डालने वाला ही है ॥ १ ॥ महला २ ॥ आग का सर्दी क्या बिगाड़ सकती है, रात सूर्य का कुछ नहीं बिगाड़ सकती, अन्धकार चन्द्रमा को कोई हानि नहीं पहुँचा सकता, कोई भी ऊँची–नीची जाति हवा और पानी को भ्रष्ट नहीं कर सकती । जिस धरती पर प्रत्येक वस्तु उत्पन्न होती है ये वस्तुएं इस धरती का कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती क्योंकि ये तो पैदा ही धरती में से हुई हैं । हे नानक, असली सम्मान वही समझा जाए जो सम्मान प्रभु की ओर से मिलता है अर्थात प्रभु से सम्मान पाने के लिए उद्यमशील बने रहना चाहिए ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे सच्चे प्रभु, मैं तुझे सदा पवित्र कहकर तेरा गुणानुवाद करता हूँ । तुम ही सदा बने रहने वाले हाकिम हो बाकी अन्य तो सभी जन्मते मरते रहते हैं । जो तेरा सत्य नाम रूपी दान तुझसे माँगते हैं वे तेरे जैसे ही हो जाते हैं । हे प्रभु, तेरा हुकुम अटल है और शब्द के बड़प्पन के कारण यह जीवों को अच्छा लगता है । तेरा हुकम मानने से ज्ञान एवं ध्यान तुझसे प्राप्त होता है । तेरी कृपा से ऐसे व्यक्तियों के माथे के लेख सुन्दर लिखे जाते हैं जो किसी के मिटाए मिटते नहीं । हे प्रभु, तू ही सच्चा दाता है और रोज़ एक दूसरे दिन से बढ़कर दान दिए जाता है । नानक वही दान तुझसे माँगता है जो तुझे अच्छा लगता है ॥ २६ ॥ श्लोक महला २ ॥ हे नानक, जिन के गुरु ने शिक्षा देकर उन्हें यह समझाया है कि सत्य और प्रभु गुणानुवाद में लीन बने रहो, उनको भला और समझाने की क्या ज़रूरत है ॥ १ ॥ महला १॥ जिसे प्रभु स्वयं ही समझाता है वही बूझता है । जिसे वह स्वयं सूझ देता है उसे सब कुछ पता चल जाता है ॥ केवल बातों से कथन किए जाना दरअसल मायावी प्रपंचों में जलते रहना है । सभी जीव प्रभु स्वयं ही अपने हुकम के अन्तर्गत रचता है और उनके बारे में विचारों को प्रभु स्वयं ही जानता है । हे नानक, प्रभु ने यह स्वयं कहा है अर्थात यह शब्द प्रभु की ओर से आया है कि जिसको यह पता होने का दान प्राप्त हो जाता है उसके भ्रम निवृत्त हो जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु के गुणों का गायक मैं बेकार था परन्तु परमात्मा ने मुझे असली काम में लगा दिया है और शुरू में ही कह दिया है कि रात–दिन उसका गुणानुवाद करो । मुझ गायक को प्रभु ने अपने सत्य रूपी महल में बुलाया और सत्य–गुणानुवाद के रूप में मुझे सम्मानित वस्त्र प्रदान किया । मुझे भोजन के रूप में सच्चा अमृत रूपी नाम दिया गया । यह ऐसा भोजन है कि गुरमति के अनुरूप चलकर इसे जिसने भी खाया है उसने सुख प्राप्त किया है । यह गायक उस प्रभु रूपी शब्द को प्रकट करके जगह–जगह उसका प्रचार प्रसार कर रहा है । हे नानक, सच्चे प्रभु का गुणानुवाद करने से ही वह पूर्ण गुरु प्रभु प्राप्त होता है ॥ २७ ॥ शुद्ध॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला १ चउपदे दुपदे

ੴ सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

भउ मुचु भारा वडा तोलु ॥ मन मति हउली बोले बोलु ॥ सिरि धरि चलीऐ सहीऐ भारु ॥ नदरी करमी गुर बीचारु ॥ १ ॥ भै बिनु कोइ न लंघसि पारि ॥ भै भउ राखिआ भाइ सवारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भै तनि अगनि भखै भै नालि ॥ भै भउ घड़ीऐ सबदि सवारि ॥ भै बिनु घाड़त कचु निकच ॥ अंधा सचा अंधी सट ॥ २ ॥ बुधी बाजी उपजै चाउ ॥ सहस सिआणप पवै न ताउ ॥ नानक मनमुखि बोलणु वाउ ॥ अंधा अखरु वाउ दुआउ ॥ ३ ॥ १ ॥ गउड़ी महला १ ॥ डरि घरु घरि डरु डरि डरु जाइ ॥ सो डरु केहा जितु डरि डरु पाइ ॥ तुधु बिनु दूजी नाही जाइ ॥ जो किछु वरतै सभ तेरी रजाइ ॥ १ ॥ डरीऐ जे डरु होवै होरु ॥ डरि डरि डरणा मन का सोरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ना जीउ मरै न डूबै तरै ॥ जिनि किछु कीआ सो किछु करै ॥ हुकमे आवै हुकमे जाइ ॥ आगै पाछै हुकमि समाइ ॥ २ ॥ हंसु हेतु आसा असमानु ॥ तिसु विचि भूख बहुतु नै सानु ॥ भउ खाणा पीणा आधारु ॥ विणु खाधे मरि होहि गवार ॥ ३ ॥ जिस का कोइ कोई कोइ कोइ ॥ सभु को तेरा तूं सभना का सोइ ॥ जा के जीअ जंत धनु मालु ॥ नानक आखणु बिखमु बीचारु ॥ ४ ॥ २ ॥ गउड़ी महला १ ॥ माता मति पिता संतोखु ॥ सतु भाई करि एहु विसेखु ॥ १ ॥ कहणा है किछु कहणु न जाइ ॥ तउ कुदरति कीमति

रागु गउड़ी गुआरेरी महला १ चौपदे दुपदे

१ओअंकार सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि ॥

प्रभु का भय विशाल है और उसका विस्तार भी बहुत बड़ा है। मन के पीछे चलने वाली मति ओछी होती है और व्यक्ति ओछे वचन ही बोलता है। यदि प्रभु के भय को स्वीकार करके जीवन व्यतीत किया जाए और उस भय को गम्भीरता से सहन किया जाए तो प्रभु की कृपा-दृष्टि से गुरु के बताए हुए मार्ग का विचार ही जीवन बन जाता है ॥ १ ॥ प्रभु-भय (प्रेम) को मन में बसाए बिना कोई भी संसार से पार नहीं जा सका है; प्रभु के भय में और उसके प्रेम के माध्यम से जीवन को सँवार कर रखा जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु-भय में रहने से उससे मिलने की इच्छा रूपी अग्नि और तेज हो जाती है। शब्द-गुरु के माध्यम से इस भय और प्रेम का आकार स्पष्ट रूप धारण कर लेता है। प्रभु-भय-विहीन बनाया हुआ आचरण बिल्कुल कच्चा ही रह जाता है और जीवन को रूप देने वाला ढाँचा भी किसी आदर्श को दिखाने वाला नहीं होता तथा उसकी बनावट के लिए अन्धा-धुन्ध व्यवहार की चोटें पड़ती हैं। किसी विशिष्ट लय में न पड़ने वाली वे चोटें सही नहीं होतीं अर्थात जीवन ऊबड़-खाबड़ सा ही बना रहता है ॥ २ ॥ हे नानक, मनमुख की बुद्धि खेल-तमाशों में ही लगी रहती है और ऐसे तमाशों के लिए उसके अन्दर चाव बना रहता है। उसकी हजारों चतुराईयाँ भी उसके जीवन को ठीक आकार नहीं दे पाती और ऐसे मनमुख व्यक्ति का बोल भी बेढंगा होता है और उसकी बातें भी ऊल जलूल होती हैं ॥ ३ ॥ १ ॥ गउड़ी महला १ ॥ तेरे भय में रहने से मन तेरे चरणों में लगा रहता है। तेरा हृदय में और सब में बसने का विश्वास पक्का हो जाता है और तेरे भय में रहने से अन्य हर प्रकार का भय दूर हो जाता है। हे प्रभु, तेरे बिना जीव का अन्य कोई आश्रय नहीं और इस संसार में सब कुछ तेरी रज़ा में ही हो रहा है ॥ १ ॥ यदि जीव के हृदय में कोई अन्य भय बना रहे तो जीव सदैव भयभीत रहता है और मन की घबराहट सदैव बनी रहती है ॥ १ रहाउ ॥ प्रभु-भय में रहने से जीव न तो मरता है, न डूबता है और न ही तैरता है। जिस प्रभु ने यह जगत बनाया है वही सब कुछ कर रहा है और उसके हुकुम में ही जीव जन्मता-मरता रहता है। लोक-परलोक में जीव को उसके हुकुम में ही बना रहना पड़ता है ॥ २ ॥ जिस जीव में मोह एवं अहंकार बना हुआ है उसके मन में तृष्णाएं नदी की लहरों की तरह आसमान को छूती रहती है। प्रभु का भय ही वास्तव में भोजन है। जो यह भोजन नहीं खाते वे सांसारिक भय में मर मर कर पागल हुए घूमते हैं ॥ ३॥ संसार में जिसका कोई सहायक बनता है वह कोई विरला ही होता है परन्तु हे प्रभु, सब जीव तेरे हैं और तू ही इन की खोज खबर रखने वाला है। हे नानक, जिस प्रभु, ने ये सभी जीव पैदा किए हैं, जीवों के लिए यह धन माल भी उसी का बनाया हुआ है। इस सारे कार्य-व्यापार के बारे में कहना बहुत ही विषम कार्य है ॥ ४ ॥ २ ॥ गउड़ी महला १ ॥ ऊँची मति जीव की माँ है और सन्तोषी जीवन उसका पिता है। सत्य को इस जीव द्वारा सच्चा भाई बनाया जाना चाहिए ॥ १॥ हे प्रभु, तेरे बारे में कुछ भी कहा जाए वह थोड़ा है और तेरी लीला का मूल्य

नही पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरम सुरति दुइ ससुर भए ॥ करणी कामणि
करि मन लए ॥ २ ॥ साहा संजोगु वीआहु विजोगु ॥ सचु संतति कहु नानक
जोगु ॥ ३ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला १ ॥ पउणै पाणी अगनी का मेलु ॥ चंचल
चपल बुधि का खेलु ॥ नउ दरवाजे दसवा दुआरु ॥ बुझु रे गिआनी एहु
बीचारु ॥ १ ॥ कथता बकता सुनता सोई ॥ आपु बीचारे सु गिआनी होई ॥ १ ॥
रहाउ ॥ देही माटी बोलै पउणु ॥ बुझु रे गिआनी मूआ है कउणु ॥ मूई सुरति
बादु अहंकारु ॥ ओहु न मूआ जो देखणहारु ॥ २ ॥ जै कारणि तटि तीरथ
जाही ॥ रतन पदारथ घट ही माही ॥ पड़ि पड़ि पंडितु बादु वखाणै ॥ भीतरि
होदी वसतु न जाणै ॥ ३ ॥ हउ न मूआ मेरी मुई बलाइ ॥ ओहु न मूआ जो
रहिआ समाइ ॥ कहु नानक गुरि ब्रहमु दिखाइआ ॥ मरता जाता नदरि न
आइआ ॥ ४ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला १ दखणी ॥ सुणि सुणि बूझै मानै नाउ ॥
ता कै सद बलिहारै जाउ ॥ आपि भुलाए ठउर न ठाउ ॥ तूं समझावहि मेलि
मिलाउ ॥ १ ॥ नामु मिलै चलै मै नालि ॥ बिनु नावै बाधी सभ कालि ॥ १ ॥
रहाउ ॥ खेती वणजु नावै की ओट ॥ पापु पुंनु बीज की पोट ॥ कामु क्रोधु
जीअ महि चोट ॥ नामु विसारि चले मनि खोट ॥ २ ॥ साचे गुर की साची
सीख ॥ तनु मनु सीतलु साचु परीख ॥ जल पुराइनि रस कमल परीख ॥ सबदि
रते मीठे रस ईख ॥ ३ ॥ हुकमि संजोगी गड़ि दस दुआर ॥ पंच वसहि मिलि जोति
अपार ॥ आपि तुलै आपे वणजार ॥ नानक नामि सवारणहार ॥ ४ ॥ ५ ॥
गउड़ी महला १ ॥ जातो जाइ कहा ते आवै ॥ कह उपजै कह जाइ समावै ॥ किउ
बाधिओ किउ मुकती पावै ॥ किउ अबिनासी सहजि समावै ॥ १ ॥ नामु रिदै
अंम्रितु मुखि नामु ॥ नरहर नामु नरहर निहकामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजे आवै
सहजे जाइ ॥ मन ते उपजै मन माहि समाइ ॥ गुरमुखि मुकतो बंधु न पाइ ॥
सबदु बीचारि छुटै हरि नाइ ॥ २ ॥ तरवर पंखी बहु निसि बासु ॥ सुख
दुखीआ मनि मोह विणासु ॥ साझ बिहाग तकहि आगासु ॥ दह दिसि धावहि करमि

नहीं आंका जा सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उद्यम और ऊँची सुरति जीव स्त्री के सास और ससुर बनें और हे मन, जीव सुन्दर जीवन को पत्नी बना ले ॥ २ ॥ यदि सत्संग में जाने को प्रभु से मिलने का शुभ संयोग माना जाय और संसार के प्रति निर्लिप्त रहने को विवाह माना जाय तो हे नानक ऐसे विवाह में से सत्य रूपी सन्तान पैदा होती है और यही प्रभु से सच्चा मिलाप होता है ॥ ३ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला १ ॥ यह शरीर पवन पानी और अग्नि का मेल है और इसमें चपल एवं चंचल बुद्धि कई खेल खेलती रहती है। इसमें नौ द्वार हैं और इनसे ऊपर दशमद्वार है। इस सारे शरीर के रचना और कार्य व्यापार को ज्ञानवान बनकर ही समझा जा सकता है ॥ १ ॥ कहने सुनने वाला केवल वह परमात्मा ही है और जो व्यक्ति इस शरीर के अन्दर परमात्मा के स्वरूप का चिन्तन करता है वही ज्ञानवान है ॥ १ ॥ रहाउ॥ यह देही मिट्टी है और इसमें श्वास-प्रश्वास के रूप में वायु चलती रहती है। हे ज्ञानी पुरुष, तू बूझकर बता कि इसमें मरने वाला कौन है। वास्तव में माया में लदी हुई सुरति और वाद-विवादों से उत्पन्न विकार इत्यादि ही मरते हैं परन्तु शरीर के इन सारे कार्य-व्यापारों को देखने वाला कभी नहीं मरता ॥ २ ॥ जिसके लिए लोग तीर्थाटन करते हैं वह नाम रूपी रत्न व्यक्ति के अन्दर ही बसता है। पुस्तकें पढ़ पढ़ कर पंडितजन वाद-विवाद करते हैं परन्तु शरीर में ही बसे हुए नाम-पदार्थ से पहचान नहीं बनाते॥ ३ ॥ दरअसल मैं नहीं मरा ब्लकि मेरी विपदाएं मर गईं हैं। जो प्रभु सब में समाहित है वह नहीं मरता। हे नानक, गुरु ने परमात्मा के दर्शन करा दिए हैं और अब ऐसे व्यक्ति को कोइ भी मरता हुआ एवं जाता हुआ दिखाई नहीं देता॥ ४ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला १ दखणी ॥ जो व्यक्ति प्रभु के बारे में सुनता है, बूझता है और उसके नाम का मनन करता है मैं उस पर सदैव बलिहारी जाता हूँ। जिस व्यक्ति को प्रभु आध्यात्मिक तौर से भुलावे में डाल देता है उसका कोई भी और ठिकाना नहीं रह जाता। हे प्रभु, यदि तुम ही सूझ-शक्ति दो तो व्यक्ति का तेरे साथ मेल-मिलाप हो सकता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, मुझे तेरा नाम प्राप्त हो जाए क्योंकि यही मेरे साथ चलने वाला है। नाम-विहीन सारी सृष्टि को काल ने बाँध कर रखा हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खेती और व्यापार सब प्रभु के नाम के आश्रय में ही होता है एवं यहाँ किए हुए पाप और पुण्य जीव के लिए अगले जन्म में बीज की पोटली बन जाते हैं (और समय-समय पर प्रस्फुटित होते रहते हैं) जो हृदय पर काम क्रोध की चोटें खाते रहते हैं वे प्रभु का नाम विस्मृत करके मन में खोट लेकर ही यहाँ से जाते हैं ॥ २ ॥ सच्चे गुरु की शिक्षा भी सच्ची होती है और सत्य की परख आ जाने पर तन मन शान्त हो जाता है। जैसे जल पर उगने वाली वनस्पति और जल रूपी रस को अपने अन्दर रखने वाले कमल जल के बिना परीक्षा में फंसे हुए लगते हैं अर्थात जल के बिना जीवित नहीं रह सकते उसी प्रकार सद्गुरु की सच्ची शिक्षा लेने वाले प्रभु-नाम से बिछुड़ कर नहीं रह पाते। वे शब्द-गुरु के रंग में रंगे हुए ऐसे मीठे स्वभाव वाले बन जाते हैं जैसे गन्ने का रस मीठा होता है॥ ३ ॥ प्रभु के हुकुम में ही दस द्वारों वाला यह शरीर रूपी किला बना हुआ है जिसमें पहुँचे हुए लोग इस प्रभु की ज्योति के साथ मिलकर निवास करते हैं। प्रभु स्वयं ही व्यापारी है और स्वयं ही सौदे के रूप में तौला जा रहा है। हे नानक, प्रभु ही उन पहुँचे हुए पंच जनों को अपने नाम में लीन करके उनके जीवन को सँवारने वाला है ॥ ४ ॥ ५ ॥ गउड़ी महला १ ॥ यह जीव कहाँ जाता है और कहाँ से आता है, यह कैसे उत्पन्न होता है और किसमें जा के समा जाता है; यह बन्धन में क्यों रहता है और कैसे मुक्त होता है और कैसे उस अविनाशी प्रभु में सहज भाव से लीन होता है ॥ १ ॥ जिस व्यक्ति के हृदय और मुख में परमात्मा का अमृत-नाम बसता है वह प्रभु-नाम के माध्यम से प्रभु की तरह ही सब कामनाओं से ऊपर चला जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुदरत के सहज प्रबन्ध में ही जीव आता है और जाता है। मन के संकल्पों, विकल्पों के अनुसार ही व्यक्ति जन्म लेता है और किसी बन्धन में नहीं पड़ता। वह शब्द-गुरु के माध्यम से विचार करके प्रभु नाम के अन्तर्गत वासनाओं के जाल से छूटा रहता है ॥ २ ॥ संसार रूपी वृक्ष पर इस जीवन-रात्रि में बहुत से जीव रूपी पक्षी आकर निवास कर लेते हैं। सुखी और दुखी रहने वाले ये जीव रूपी पक्षी मन में मोह के कारण विनाश को प्राप्त होते हैं। रात बीतने पर दिन निकलने के साथ ये फिर आकाश की ओर ताकते हैं और पुनः उसी भटकन में पड़ जाते हैं। लिखे हुए लेखों के अनुसार यह दसों दिशाओं में भाग-दौड़ शुरू कर देते हैं।

लिखिआसु ॥ ३ ॥ नाम संजोगी गोइलि थाटु ॥ काम क्रोध फूटै बिखु माटु ॥
बिनु वखर सूनो घरु हाटु ॥ गुर मिलि खोले बजर कपाट ॥ ४ ॥ साधु मिलै
पूरब संजोग ॥ सचि रहसे पूरे हरि लोग ॥ मनु तनु दे लै सहजि सुभाइ ॥
नानक तिन कै लागउ पाइ ॥ ५ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला १ ॥ कामु क्रोधु माइआ
महि चीतु ॥ झूठ विकारि जागै हित चीतु ॥ पूंजी पाप लोभ की कीतु ॥
तरु तारी मनि नामु सुचीतु ॥ १ ॥ वाहु वाहु साचे मै तेरी टेक ॥ हउ पापी
तूं निरमलु एक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अगनि पाणी बोलै भड़वाउ ॥ जिहवा इंद्री
एकु सुआउ ॥ दिसटि विकारी नाही भउ भाउ ॥ आपु मारे ता पाए नाउ ॥ २ ॥
सबदि मरै फिरि मरणु न होइ ॥ बिनु मूए किउ पूरा होइ ॥ परपंचि विआपि
रहिआ मनु दोइ ॥ थिरु नाराइणु करे सु होइ ॥ ३ ॥ बोहिथि चड़उ जा आवै
वारु ॥ ठाके बोहिथ दरगह मार ॥ सचु सालाही धंनु गुरदुआरु ॥ नानक दरि
घरि एकंकारु ॥ ४ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला १ ॥ उलटिओ कमलु ब्रहमु बीचारि ॥
अंम्रित धार गगनि दस दुआरि ॥ त्रिभवणु बेधिआ आपि मुरारि ॥ १ ॥
रे मन मेरे भरमु न कीजै ॥ मनि मानिऐ अंम्रित रसु पीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥
जनमु जीति मरणि मनु मानिआ ॥ आपि मूआ मनु मन ते जानिआ ॥ नजरि भई
घरु घर ते जानिआ ॥ २ ॥ जतु सतु तीरथु मजनु नामि ॥ अधिक बिथारु
करउ किसु कामि ॥ नर नाराइण अंतरजामि ॥ ३ ॥ आन मनउ तउ पर घर
जाउ ॥ किसु जाचउ नाही को थाउ ॥ नानक गुरमति सहजि समाउ ॥ ४ ॥ ८ ॥
गउड़ी महला १ ॥ सतिगुरु मिलै सु मरणु दिखाए ॥ मरण रहण रसु अंतरि
भाए ॥ गरबु निवारि गगन पुरु पाए ॥ १ ॥ मरणु लिखाइ आए नही रहणा ॥
हरि जपि जापि रहणु हरि सरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु मिलै त दुबिधा
भागै ॥ कमलु बिगासि मनु हरि प्रभ लागै ॥ जीवतु मरै महा रसु आगै ॥ २ ॥
सतिगुरि मिलिऐ सच संजमि सूचा ॥ गुर की पउड़ी ऊचो ऊचा ॥ करमि
मिलै जम का भउ मूचा ॥ ३ ॥ गुरि मिलिऐ मिलि अंकि समाइआ ॥ करि
किरपा घरु महलु दिखाइआ ॥ नानक हउमै मारि मिलाइआ ॥ ४ ॥ ९ ॥

॥ ३ ॥ जो प्रभु नाम से संयुक्त हैं वे इस संसार को चारागाह में बनी झुग्गी की तरह कच्चा समझते हैं । उनके अन्दर से काम, क्रोध आदि का विष का घड़ा टूट जाता है । नाम रूपी सौदे से विहीन व्यक्ति की हृदय रूपी दुकान खाली ही पड़ी रहती है । गुरु को मिलकर ही उसके अज्ञान के कठोर द्वार खुलते हैं । जिन व्यक्तियों को उनके पूर्व-जन्म के संस्कारों के फलस्वरूप साधु पुरुष मिल जाते हैं वे ही प्रभु के पूर्ण व्यक्ति हैं और वे सदैव सत्य में बने रहकर खिले रहते हैं । हे नानक, जो व्यक्ति अपना मन एवं शरीर गुरु को अर्पण कर सहज अवस्था में टिक कर प्रभु प्रेम में लीन हो जाते हैं मैं उनके चरण-स्पर्श करता हूँ ॥ ५ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला १ ॥ हे प्रभु, मेरे अन्दर प्रबल काम और क्रोध है और मेरा मन मायावी संसार में मग्न रहता है । झूठ के विकार में मेरा मोह से भरा हुआ चित्त सदैव लगा रहता है । मैंने पाप और लोभ की पूँजी इकट्ठी की हुई है । यदि मेरे मन में तेरा नाम बस जाए तो यही मेरे लिए तैरा कर ले जाने वाली नाव है । ॥ १ ॥ हे आश्चर्यजनक प्रभु, मुझे तेरा ही आसरा है । मैं पापी हूं और एक तू ही निर्मल भी है और निर्मल करने वाला भी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव के अन्दर अग्नि और पानी की प्रबलता के कारण यह ऊँच-नीच बोलता रहता है । जीभ आदि प्रत्येक इन्द्रियां अपने-अपने स्वाद में लीन हैं । दृष्टि विकारों की तरफ रहती है और भय तथा प्रेम से विहीन है । यदि व्यक्ति अपने अहंकार भाव को मारे तभी इसे प्रभु नाम की प्राप्ति हो सकती है ॥ २ ॥ शब्द-गुरु के माध्यम से जब व्यक्ति विकारों की ओर से मृत हो जाता है तो फिर उसकी आध्यात्मिक मौत कभी नहीं होती । अहम् भाव से मृत हुए बिना व्यक्ति पूर्ण नहीं हो सकता है । मन सदैव माया के प्रपंच में द्वैत भाव में फंसा रहता है । जिसे प्रभु ही स्थिरता प्रदान करता है वही शान्त भाव में स्थित रहता है ॥ ३ ॥ प्रभु-नाम रूपी जहाज में तभी चढ़ा जा सकता है जब अच्छे कर्मो के फलस्वरूप बारी आए । जो इस जहाज में नहीं चढ़ पाते वे प्रभु के समक्ष ख्वार ही होते हैं । दरअसल गुरु का द्वार (गुरुद्वारा) धन्य है जहाँ सत्य स्वरूप प्रभु का गुणानुवाद किया जाता है और हे नानक, इस द्वार पर टिके रहने से ही परमात्मा का दर्शन होता है ॥ ४ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला १ ॥ प्रभु गुणानुवाद में और चिन्तन में लीन बने रहने से हृदय रूपी कमल माया की ओर से उलट गया है और अब मस्तिष्क (दशम द्वार) में नाम रूपी अमृत की वर्षा हो रही है । अब परमात्मा तीनों लोकों में व्याप्त दिखाई देता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, किसी प्रकार के भ्रम में मत पड़ और खूब जी भर कर अमृत रस का पान कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस जन्म को जीत लेने पर ही मन को स्वार्थ-विहीन बनना अच्छा लगने लगा है। मन अपने ज्योति स्वरूप के माध्यम से सूझ-बुद्धि प्राप्त करता है और जान जाता है कि अब मेरा अहंकार समाप्त हो गया है । जब प्रभु की कृपा-दृष्टि होती है तो प्रभु-चरणों में लीनता के अनुभव का पता लग जाता है ॥ २ ॥ यतीत्व, सतीत्व एवं तीर्थो के स्नान सब प्रभु-नाम के अन्तर्गत ही है; इसलिए अनेकों प्रपंच पूर्ण विस्तार भला किस काम के हैं क्योंकि प्रभु तो स्वयं अन्तर्यामी है ॥ ३ ॥ यदि मैं किसी अन्य को मानता होऊं तभी तो दूसरे स्थान पर जाऊँ। मैं किससे याचना करूँ; मेरे लिए अन्य कोई भी स्थान नहीं है । हे नानक, केवल गुरु की मति में चलने से ही सहज भाव में लीन हुआ जाता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ गउड़ी महला १ ॥ सद्गुरु जीव से मिलकर उसे विकारों की ओर से मरने की दृष्टि समझा देता है और अब जीव के मरने जीने का रहस्य अच्छा लगने लग जाता है । अहंकार को त्याग कर ही व्यक्ति दशम द्वार की सूझ-बुद्धि प्राप्त करता है ॥ १ ॥ जीव मौत को लिखाकर लाता है इस लिए यहाँ सदैव बने रहना नहीं होता है । प्रभु के सुमिरन से ही प्रभु की शरण में रहा जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब सद्गुरु मिल जाता है तो दुविधा भाग खड़ी होती है तथा हृदय रूपी कमल खिल जाता है और मन प्रभु में लीन हो जाता है । जीवन में मृत बने रहने वालों के लिए ही प्रभु-प्रेम का महारस सदैव प्रत्यक्ष बना रहता है ॥ २ ॥ सद्गुरु से मिलने पर सत्य, संयम एवं पवित्रता को प्राप्त किया जाता है और ज्ञान की सीढ़ियों पर चढ़कर जीव ऊँचा उठता चला जाता है । जिस पर प्रभु की कृपा होती है उसका यम का भय समाप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ गुरु मिलने पर व्यक्ति प्रभु-सुमिरन के माध्यम से प्रभु-चरणों में लीन बना रहता है । गुरु व्यक्ति को उसके अन्तर्मन में ही प्रभु का स्थान दिखा देता है । हे नानक, व्यक्ति का अहम् दूर करके गुरु उसे प्रभु में समाहित कर देता है ॥ ४ ॥ ९ ॥

गउड़ी महला १ ॥ किरतु पइआ नह मेटै कोइ ॥ किआ जाणा किआ आगै होइ ॥ जो तिसु भाणा सोई हूआ ॥ अवरु न करणै वाला दूआ ॥ १ ॥ ना जाणा करम केवड तेरी दाति ॥ करमु धरमु तेरे नाम की जाति ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू एवडु दाता देवणहारु ॥ तोटि नाही तुधु भगति भंडार ॥ कीआ गरबु न आवै रासि ॥ जीउ पिंडु सभु तेरै पासि ॥ २ ॥ तू मारि जीवालहि बखसि मिलाइ ॥ जिउ भावी तिउ नामु जपाइ ॥ तूं दाना बीना साचा सिरि मेरै ॥ गुरमति देइ भरोसै तेरै ॥ ३ ॥ तन महि मैलु नाही मनु राता ॥ गुर बचनी सचु सबदि पछाता ॥ तेरा ताणु नाम की वडिआई ॥ नानक रहणा भगति सरणाई ॥ ४ ॥ १० ॥ गउड़ी महला १ ॥ जिनि अकथु कहाइआ अपिओ पीआइआ ॥ अन भै विसरे नामि समाइआ ॥ १ ॥ किआ डरीऐ डरु डरहि समाना ॥ पूरे गुर कै सबदि पछाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु नर रामु रिदै हरि रासि ॥ सहजि सुभाइ मिले साबासि ॥ २ ॥ जाहि सवारै साझ बिआल ॥ इत उत मनमुख बाधे काल ॥ ३ ॥ अहिनिसि रामु रिदै से पूरे ॥ नानक राम मिले भ्रम दूरे ॥ ४ ॥ ११ ॥ गउड़ी महला १ ॥ जनमि मरै त्रै गुण हितकारु ॥ चारे बेद कथहि आकारु ॥ तीनि अवसथा कहहि वखिआनु ॥ तुरीआवसथा सतिगुर ते हरि जानु ॥ १ ॥ राम भगति गुर सेवा तरणा ॥ बाहुड़ि जनमु न होइ है मरणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारि पदारथ कहै सभु कोई ॥ सिंम्रिति सासत पंडित मुखि सोई ॥ बिनु गुर अरथु बीचारु न पाइआ ॥ मुकति पदारथु भगति हरि पाइआ ॥ २ ॥ जा कै हिरदै वसिआ हरि सोई ॥ गुरमुखि भगति परापति होई ॥ हरि की भगति मुकति आनंदु ॥ गुरमति पाए परमानंदु ॥ ३ ॥ जिनि पाइआ गुरि देखि दिखाइआ ॥ आसा माहि निरासु बुझाइआ ॥ दीना नाथु सरब सुखदाता ॥ नानक हरि चरणी मनु राता ॥ ४ ॥ १२ ॥ गउड़ी चेती महला १ ॥ अंम्रित काइआ रहै सुखाली बाजी इहु संसारो ॥ लबु लोभु मुचु कूड़ु कमावहि बहुतु उठावहि भारो ॥ तूं काइआ मै रुलदी देखी जिउ धर उपरि छारो ॥ १ ॥ सुणि सुणि सिख हमारी ॥ सुक्रितु कीता रहसी मेरे जीअड़े

गउड़ी महला १ ॥ कर्मों के लेख मिटाए नहीं मिटते और मैं क्या जानूँ कि भविष्य में क्या होने वाला है । जो प्रभु को अच्छा लगेगा वही होगा क्योंकि दूसरा कोई भी कुछ कर सकने वाला नहीं है ॥ १ ॥ मैं अपने कर्मो को और उनके मुकाबले तुम्हारी कृपा के विस्तार को नहीं जानता । मेरे लिए तो सब धर्म–कर्म तेरे नाम के ही अन्तर्गत है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू देने वाला दाता ऐसा है कि तेरी भक्ति के भण्डार में कभी कमी नहीं आती । व्यक्ति का किया हुआ अभिमान उसका कुछ नहीं सँवार सकता है । हे प्रभु, व्यक्ति के शरीर एवं उसके प्राणों को केवल तेरा ही आसरा है ॥ २ ॥ हे प्रभु! तू मार के जीवित भी करता है और कृपा करके अपने में मिला भी लेता है । तुझे जैसे भी अच्छा लगे मुझसे अपने नाम का सुमिरन करवा । तू सब कुछ जानने और देखने वाला सत्य–प्रभु मेरे सिर पर खड़ा है । मुझे तेरा ही भरोसा है इसलिए मुझे गुरु की मति प्रदान करने की कृपा कर ॥ ३ ॥ जिनका तन भी पवित्र है और मन भी प्रभु रंग में रंगा हुआ है उन्होने गुरु के वचनों के माध्यम से सत्य रूपी शब्द ब्रह्म को पहचान लिया है । तेरे नाम का बड़प्पन ही तेरी शक्ति है और हे नानक, इस रहस्य को समझने वाले सदैव तेरी शरण में बने रहकर भक्ति में लीन रहते हैं ॥ ४ ॥ १०॥ गउड़ी महला १ ॥ जिस गुरु ने अकथनीय प्रभु का वर्णन कह सुनाया और व्यक्ति को अमृत का पान करा दिया उसके अन्य सभी भय दूर हो गए और वह नाम में लीन हो गया है । जिस व्यक्ति ने शब्द–गुरु को पूर्ण रूप से पहचान लिया है उसका सांसारिक भय प्रभु के प्रेम रूपी भय में लीन होकर समाप्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस व्यक्ति के हृदय में परमात्मा है और हरि का नाम जिसकी पूँजी है उसे बिना किसी प्रयत्न के प्रभु भी मिल जाता है और सांसारिक शोभा भी प्राप्त होती है ॥ २ ॥ जिन व्यक्तियों को सुबह शाम माया की नींद में प्रभु सुलाए रहता है वे इस लोक और परलोक में मनमुख बने रहकर काल के बन्धन में पड़े रहते हैं । दूसरी ओर जिनके हृदय में हर रोज हरि का निवास है वे पूर्णता को प्राप्त हो जाते हैं । हे नानक, पूर्णता प्राप्त होने से सभी भ्रम दूर हो जाते हैं ॥ ४ ॥ ११ ॥ गउड़ी महला १ ॥ जिस जीव का प्रेम त्रिगुणात्मक माया से बँधा रहता है वह जन्मता मरता रहता है । चारों वेदों का ज्ञान भी केवल दृष्ट संसार का ही वर्णन है । यह तीनों अवस्थाओं का ही बखान करते हैं परन्तु तुरीयावस्था के बारे में सद्गुरु रूपी प्रभु से ही जाना जाता है ॥ १ ॥ प्रभु की भक्ति और गुरु की सेवा से ही संसार सागर से तैरा जाता है और व्यक्ति का फिर जन्म–मरण नहीं होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब कोई चार पदार्थों (धर्म, अर्थ, काम मोक्ष) की बात करता है और स्मृति–शास्त्र तथा पण्डित भी ऐसा ही कहते हैं । गुरु के बिना इन सब का विचार और भीतरी रहस्य नहीं पाया जा सकता । मुक्ति रूपी पदार्थ केवल प्रभु भक्ति से ही प्राप्त होता है ॥ २ ॥ जिसके हृदय में परमात्मा का निवास हो गया है उसे गुरमुख बनकर प्रभु भक्ति प्राप्त हो जाती है । प्रभु की भक्ति में ही मुक्ति और आनन्द विद्यमान हैं तथा गुरमति के माध्यम से ही जीव को परम आनन्द प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ जिसने भी प्राप्त किया है वह गुरु के माध्यम से ही प्राप्त होता देखा गया है । गुरु ही आशाओं में रहते हुए तटस्थ भाव में बने रहने की सूझ बुद्धि प्रदान करता है । दीनानाथ प्रभु सब सुखों को देने वाला है और हे नानक, ऐसा समझ लेने वाले व्यक्ति का मन सदैव प्रभु–चरणों में लीन बना रहता है ॥ ४ ॥ १२ ॥ गउड़ी चेती महला १ ॥ यह शरीर अपने आप को अमर मानकर सुख भोगता रहता है और यह नहीं जानता कि यह सारा संसार एक खेल है ॥ १ ॥ हे मेरे शरीर, तू बहुत लोभ में पड़कर झूठ की कमाई कर रहा है और अत्याधिक भार को उठाए घूम रहा है । तेरे जैसों को मैंने इस प्रकार भटकते देखा है जैसे धरती पर दिशा विहीन होकर राख भटकती रहती है ॥ १ ॥ हे जीव, मेरी शिक्षा ध्यान से सुन । कीए गए नेक काम ही तेरे साथ चलेंगे और तुझे

बहुड़ि न आवै वारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ तुधु आखा मेरी कांइआ तूं सुणि सिख हमारी ॥ निंदा चिंदा करहि पराई झूठी लाइतबारी ॥ वेलि पराई जोहहि जीअड़े करहि चोरी बुरिआरी ॥ हंसु चलिआ तूं पिछै रहीएहि छुटड़ि होईअहि नारी ॥ २ ॥ तूं काइआ रहीअहि सुपनंतरि तुधु किआ करम कमाइआ ॥ करि चोरी मै जा किछु लीआ ता मनि भला भाइआ ॥ हलति न सोभा पलति न ढोई अहिला जनमु गवाइआ ॥ ३ ॥ हउ खरी दुहेली होई बाबा नानक मेरी बात न पुछै कोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ताजी तुरकी सुइना रुपा कपड़ केरे भारा ॥ किस ही नालि न चले नानक झड़ि झड़ि पए गवारा ॥ कूजा मेवा मै सभ किछु चाखिआ इकु अंम्रितु नामु तुमारा ॥ ४ ॥ दे दे नीव दिवाल उसारी भसमंदर की ढेरी ॥ संचे संचि न देई किस ही अंधु जाणै सभ मेरी ॥ सोइन लंका सोइन माड़ी संपै किसै न केरी ॥ ५ ॥ सुणि मूरख मंन अजाणा ॥ होगु तिसै का भाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साहु हमारा ठाकुरु भारा हम तिस के वणजारे ॥ जीउ पिंडु सभ रासि तिसै की मारि आपे जीवाले ॥ ६ ॥ १ ॥ १३ ॥ गउड़ी चेती महला १ ॥ अवरि पंच हम एक जना किउ राखउ घर बारु मना ॥ मारहि लूटहि नीत नीत किसु आगै करी पुकार जना ॥ १ ॥ स्रीराम नामा उचरु मना ॥ आगै जम दलु बिखमु घना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसारि मड़ोली राखै दुआरा भीतरि बैठी सा धना ॥ अंम्रित केल करे नित कामणि अवरि लुटेनि सु पंच जना ॥ २ ॥ ढाहि मड़ोली लूटिआ देहुरा सा धन पकड़ी एक जना ॥ जम डंडा गलि संगलु पड़िआ भागि गए से पंच जना ॥ ३ ॥ कामणि लोड़ै सुइना रुपा मित्र लुड़ेनि सु खाधाता ॥ नानक पाप करे तिन कारणि जासी जमपुरि बाधाता ॥ ४ ॥ २ ॥ १४ ॥ गउड़ी चेती महला १ ॥ मुंद्रा ते घट भीतरि मुंद्रा कांइआ कीजै खिंथाता ॥ पंच चेले वसि कीजहि रावल इहु मनु कीजै डंडाता ॥ १ ॥ जोग जुगति इव पावसिता ॥ एकु सबदु दूजा होरु नासति कंद मूलि मनु लावसिता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूंडि मुंडाइऐ जे गुरु पाईऐ हम गुरु कीनी गंगाता ॥ त्रिभवण तारणहारु सुआमी एकु न चेतसि अंधाता ॥ २ ॥ करि पटंबु गली मनु लावसि संसा मूलि न

दुबारा यह मौका नहीं मिलेगा॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरे शरीर, तू मेरी शिक्षा को सुन जो मैं तुझसे कह कर रहा हूँ। तू दूसरों की निन्दा में ध्यान लगाए रहता है और झुठी चुगली करता रहता है। हे जीव, तू परायी स्त्री को देखता रहता है अन्य चोरियाँ एवं बुराईयाँ करता रहता है। जब जीवात्मा चल देगा तो हे मेरी काया, तू परित्यकता स्त्री की तरह यहीं पड़ी रह जाएगी ॥ २॥ हे मेरे शरीर, तू मायावी सपनों में ही लीन रहा और भला यह तूने क्या काम किया है। मैं चोरी आदि करके जो कुछ लाता रहा तुझे वही अच्छा लगता रहा। इस प्रकार न तो इस लोक में ही तूने सम्मान प्राप्त किया और न ही तुझे परलोक में आश्रय मिला। मूल्यवान मानव जीवन तूने व्यर्थ कर दिया है ॥ ३ ॥ बाबा अब मैं बहुत दुखी हूँ क्योंकि हे नानक, अब मेरा कोई भी आश्रय नहीं बचा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बढ़िया घोड़े, सोना चाँदी कपड़ों के गटठ्र हे नानक, किसी के भी साथ नहीं जाते और सब यहीं रह जाते हैं। मिश्री, मेवे आदि भी मैंने सब चखे हैं परन्तु हे प्रभु केवल एक तेरा नाम ही अमृत के समान मीठा है ॥ ४ ॥ गहरी नींव डालकर मकान बनाए गए परन्तु यह सब तो राख की ढेरी हैं। व्यक्ति इकट्टा किया हुआ धन किसी को नहीं देता और मूर्ख यह मानता है कि यह सब मेरा ही है। दरअसल तो सोने की लंका और सोने के महल आदि सम्पत्ति भी किसी के नहीं हो सके अर्थात यहीं छूट गए हैं ॥ ५ ॥ हे मूर्ख अनजान मन, तू यह सुन ले कि होगा वही ज़ो प्रभु को अच्छा लगेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मालिक प्रभु बहुत बड़ा है और हम सब उसके ही कार्य–व्यापार को करने वाले हैं। यह शरीर और जीव उसी की दी हुई रास–पूँजी है और वह स्वयं ही जीवों को मारता भी है और जीवित भी कर देता है ॥ ६ ॥ १ ॥ १३ ॥ गउड़ी चेती महला ॥ १ ॥ हे मेरे मन, अन्य विकार तो पाँच हैं और मैं अकेला हूँ। इन से मैं अपने घर के गहने रूपी गुणों को क़ैसे बचाऊँ। हे भाई यह रोज मारते हैं, लूटते हैं, मैं किसके आगे पुकार लगाऊँ ॥ १ ॥ हे मन, प्रभु के नाम का सुमिरन कर क्योंकि आगे यमराज की भारी फौज दिखाई दे रही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा ने नौ द्वार बनाकर यह शरीर रूपी झोंपड़ी बनायी है जिसमें जीव–स्त्री रह रही है। यह अपने को अमर समझकर खेल–तमाशे करती रहती है और पाँचों (विकार) इसे लूटते रहते हैं ॥ २ ॥ मौत ने उसके घर को गिरा कर और लूट कर अकेली जीव स्त्री को पकड़ लिया है। जब यम का डंडा इसके सिर पर पड़ा और गले में जंजीरें डाल दी गई तब लूटने वाले पाँचों साथी भाग निकले हैं। जीवन भर स्त्री, सोना और धन माँगती रहती है और मित्रगण खाने पीने वाले पदार्थ माँगते रहते हैं। हे नानक, जीव इन्हीं सब के कारण जीवन भर पाप करता रहता है और अन्ततः बन्धनों में बंधा हुआ यमपुरी में ले जाया जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ १४ ॥ गउड़ी चेती महला ॥ १ ॥ शरीर के बीच वासनाओं को रोकना ही वास्तव में कानों में मुद्राऐं धारण करना है। शरीर को नाशवान मानना गुदड़ी धारण करने के समान है। हे रावल (योगी) अन्यों को चेले बनाने की बजाए तुम अपने पाँच विकारों पर नियन्त्रण रखो और अपने मन को अपने हाथ में पकड़ा हुआ डण्डा बनाओ ॥ १ ॥ योग की युक्ति तू तब जानेगा जब कन्द–मूल आदि में मन न लगाकर तू केवल एक शब्द–गुरु में लीन होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि बाल मुड़ंवाने से गुरु रूपी प्रभु मिलता हो तो मैंने गुरु को ही गंगा बना लिया है अर्थात गुरु ही पवित्र तीर्थ है। हे अज्ञानी, तू उस एक प्रभु का सुमिरन नहीं करता जो सब का स्वामी और तीनों लोकों का उद्धार करने वाला है ॥ २ ॥ हे योगी, तू पाखण्ड पूर्ण बातों में मन लगाए रहता है परन्तु तेरे मन से संशय बिल्कुल ही दूर नहीं होता।

जावसिता ॥ एकसु चरणी जे चितु लावहि लबि लोभि की धावसिता ॥ ३ ॥ जपसि निरंजनु रचसि मना ॥ काहे बोलहि जोगी कपटु घना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ कमली हंसु इआणा मेरी मेरी करत बिहाणीता ॥ प्रणवति नानकु नागी दाझै फिरि पाछै पछुताणीता ॥ ४ ॥ ३ ॥ १५ ॥ गउड़ी चेती महला १ ॥ अउखध मंत्र मूलु मन एकै जे करि द्रिड़ु चितु कीजै रे ॥ जनम जनम के पाप करम के काटनहारा लीजै रे ॥ १ ॥ मन एको साहिबु भाई रे ॥ तेरे तीनि गुणा संसारि समावहि अलखु न लखणा जाई रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सकर खंडु माइआ तनि मीठी हम तउ पंड उचाई रे ॥ राति अनेरी सूझसि नाही लजु टूकसि मूसा भाई रे ॥ २ ॥ मनमुखि करहि तेता दुखु लागै गुरमुखि मिलै वडाई रे ॥ जो तिनि कीआ सोई होआ किरतु न मेटिआ जाई रे ॥ ३ ॥ सुभर भरे न होवहि ऊणे जो राते रंगु लाई रे ॥ तिन की पंक होवै जे नानकु तउ मूड़ा किछु पाई रे ॥ ४ ॥ ४ ॥ १६ ॥ गउड़ी चेती महला १ ॥ कत की माई बापु कत केरा किदू थावहु हम आए ॥ अगनि बिंब जल भीतरि निपजे काहे कंमि उपाए ॥ १ ॥ मेरे साहिबा कउणु जाणै गुण तेरे ॥ कहे न जानी अउगण मेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केते रुख बिरख हम चीने केते पसू उपाए ॥ केते नाग कुली महि आए केते पंख उडाए ॥ २ ॥ हट पटण बिज मंदर भंनै करि चोरी घरि आवै ॥ अगहु देखै पिछहु देखै तुझ ते कहा छपावै ॥ ३ ॥ तट तीरथ हम नव खंड देखे हट पटण बाजारा ॥ लै कै तकड़ी तोलणि लागा घट ही महि वणजारा ॥ ४ ॥ जेता समुंदु सागरु नीरि भरिआ तेते अउगण हमारे ॥ दइआ करहु किछु मिहर उपावहु डुबदे पथर तारे ॥ ५ ॥ जीअड़ा अगनि बराबरि तपै भीतरि वगै काती ॥ प्रणवति नानकु हुकमु पछाणै सुखु होवै दिनु राती ॥ ६ ॥ ५ ॥ १७ ॥ गउड़ी बैरागणि महला १ ॥ रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ ॥ हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ ॥ १ ॥ नामु न जानिआ राम का ॥ मूड़े फिरि पाछै पछुताहि रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनता धनु धरणी धरे अनत न चाहिआ जाइ ॥ अनत कउ चाहन जो गए से आए अनत गवाइ ॥ २ ॥ आपण लीआ जे मिलै ता सभु को

यदि तू एक प्रभु–चरणों में चित्त लगा ले तो तू जान जायेगा कि लोभ, मोह के पीछे दौड़ने का कोई लाभ नहीं है और तेरी भटकन दूर हो जायेगी ॥ ३ ॥ हे योगी, निरंजन प्रभु का जाप कर और उसी में मन लीन कर ।तू क्यों इतने कपट के बोलों में लीन बना हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह देही पागल है और इसमें जीव बचकाना है । इसीलिए इसकी सारी आयु मेरी–मेरी करते हुए ही निकल जाती है । नानक विनती करता है कि इस देही नंगी को ही जला दिया जाता है और समय बीत चुका होने के कारण जीव बाद में पछताता रहता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १५॥ गउड़ी चेती महला १ ॥ यदि उसे चित्त में बार–बार स्मरण किया जाए तो हे मन, सब औषधि एवं मन आदि वह एक प्रभु ही है । इस प्रकार तू जन्मों जन्मान्तरों के पाप काटने वाले प्रभु को प्राप्त कर लेगा ॥ १ ॥ हे मन, मुझे तो केवल एक मालिक प्रभु ही अच्छा लगा है । जिन तीन गुणों को तू जानता है उनकी पहुँच तो केवल इस संसार तक ही है और उनके माध्यम से तू उस अलख प्रभु को नहीं देख पाएगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई, हम सबने तो माया रूपी मीठी लगने वाली शक्कर का गट्ठर उठाया हुआ है । जीवन की रात्रि अन्धकार–पूर्ण है और हमें पता ही नहीं लग रहा है कि काल रूपी चूहा जीवन रूपी रस्सी को काटे चला जा रहा है ॥ २ ॥ मन के पीछे लगकर जितने भी कार्य किए जाते हैं वे दुख देते हैं और गुरमुख बनने पर ही बड़प्पन प्राप्त होता है । जो उस प्रभु ने किया है वही होता चला आया है और पूर्व कर्मो के अनुसार बना हुआ कार्यक्रम मिटाया नहीं जा सकता ॥ ३ ॥ जो प्रेम पूर्वक प्रभु के रंग में रंगे हुए हैं वे भरे हुए सरोवर की तरह प्रेम–रंग में लबा–लब भरे रहते हैं । नानक कहता है कि यदि उनकी चरण–धूलि बन जाए तो यह मूर्ख जीव कुछ न कुछ प्राप्त करने योग्य हो सकता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १६ ॥ गउड़ी चेती महला १ ॥ मेरी माँ कहाँ की है, मेरा पिता कहाँ है और किन–किन योनियों में भटकते हुए किन स्थानों से हम यहाँ आये हैं । हमें यह भी पता न हीं है कि हमारे यहाँ आने का उद्देश्य क्या है और कैसे हम माता के पेट की अग्नि और पिता के वीर्य रूपी जल से पैदा हुए हैं ॥ १ ॥ हे प्रभु, तेरे गुण नहीं जाने जा सकते और मेरे अवगुणों का बखान नहीं किया जा सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेकों वृक्षों, अनेकों पशु योनियों, अनेकों नाग–कुल के जन्मों और अनेकों पक्षी बनकर उड़ने वालों के रूप में हम पैदा होते रहे हैं ॥ २ ॥ व्यक्ति हाट बाजार और बड़े–बड़े घरों के ताले तोड़ कर चोरी का माल घर ले आता है । वह बचने के लिए आगे–पीछे तो देखता है पर हे प्रभु, तुझसे वह क्या छुपा सकता है ॥ ३ ॥ नदियों के तट तीर्थ, हाट–बाजार, नगर और पृथ्वी के नव खण्डों को हमने देखा भाला है । परन्तु जब मैं न्याय के तराजू पर अपने आप को रखकर तौलने लगा तो मुझे यह पता लग गया कि वह प्रभु तो मेरे हृदय में ही विराजमान हैं (और उससे कुछ भी छिपाया नहीं जा सकता) ॥ ४ ॥ हे प्रभु, जैसे अपरिमित जल से सागर भरा हुआ है वैसे ही हम जीवों के अवगुण भी बहुत अधिक हैं । हे प्रभु, तू ही दया कर और कृपा पूर्वक हम सब का उद्धार कर लो क्योंकि तुमने तो डूबते हुए पत्थरों को भी पार कर दिया है ॥ ५ ॥ जीव आग की तरह जलता रहता है और उसके चित्त में (तृष्णा रूपी) छुरी चलती रहती है । नानक विनती करता है कि जो व्यक्ति परमात्मा के हुकुम को पहचान लेता है और उसे मानता है तो उसके अन्तर्मन में दिन–रात आनन्द ही बना रहता है ॥ ६ ॥ ५ ॥ १७ ॥ गउड़ी बैरागणि महला १ ॥ जीव ने रात सोकर गवाँ दी और दिन खाने में ही गवाँ दिया । उसका यह जन्म हीरे के समान मूल्यवान है जो कौड़ियों के भाव बीतता चला जा रहा है ॥ १ ॥ हे मूर्ख जीव, तूने राम–नाम को नहीं जाना और समय बीत जाने पर तू फिर पछताता रह जाएगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाशवान धन को तू धरती में दबाकर रखता है पर उस अनन्त प्रभु को पाने की इच्छा तुझे नहीं होती । जो धन धान्य की ही इच्छाएं रखते हुए यहाँ से गए हैं उन्होंने उस अनन्त प्रभु को गँवा लिया है ॥ २ ॥ वह प्रभु यदि पाखण्डपूर्ण प्रयत्नों से ही मिल जाए तो सभी

भागटु होइ ॥ करमा उपरि निबड़ै जे लोचै सभु कोइ ॥ ३ ॥ नानक करणा जिनि कीआ सोई सार करेइ ॥ हुकमु न जापी खसम का किसै वडाई देइ ॥ ४ ॥ १ ॥ १८ ॥ गउड़ी बैरागणि महला १ ॥ हरणी होवा बनि बसा कंद मूल चुणि खाउ ॥ गुर परसादी मेरा सहु मिलै वारि वारि हउ जाउ जीउ ॥ १ ॥ मै बनजारनि राम की ॥ तेरा नामु वखरु वापारु जी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोकिल होवा अंबि बसा सहजि सबद बीचारु ॥ सहजि सुभाइ मेरा सहु मिलै दरसनि रूपि अपारु ॥ २ ॥ मछुली होवा जलि बसा जीअ जंत सभि सारि ॥ उरवारि पारि मेरा सहु वसै हउ मिलउगी बाह पसारि ॥ ३ ॥ नागनि होवा धर वसा सबदु वसै भउ जाइ ॥ नानक सदा सोहागणी जिन जोती जोति समाइ ॥ ४ ॥ २ ॥ १९ ॥

गउड़ी पूरबी दीपकी महला १ १ओ सतिगुर प्रसादि ॥

जै घरि कीरति आखीऐ करते का होइ बीचारो ॥ तितु घरि गावहु सोहिला सिवरहु सिरजणहारो ॥ १ ॥ तुम गावहु मेरे निरभउ का सोहिला ॥ हउ वारी जाउ जितु सोहिलै सदा सुखु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नित नित जीअड़े समालीअनि देखैगा देवणहारु ॥ तेरे दानै कीमति ना पवै तिसु दाते कवणु सुमारु ॥ २ ॥ संबति साहा लिखिआ मिलि करि पावहु तेलु ॥ देहु सजण आसीसड़ीआ जिउ होवै साहिब सिउ मेलु ॥ ३ ॥ घरि घरि एहो पाहुचा सदड़े नित पवंनि ॥ सदणहारा सिमरीऐ नानक से दिह आवंनि ॥ ४ ॥ १ ॥ २० ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी ॥ महला ३ चउपदे ॥ १ओ सतिगुर प्रसादि ॥

गुरि मिलिऐ हरि मेला होई ॥ आपे मेलि मिलावै सोई ॥ मेरा प्रभु सभ बिधि आपे जाणै॥ हुकमे मेले सबदि पछाणै ॥ १ ॥ सतिगुर कै भइ भ्रमु भउ जाइ ॥ भै राचै सच रंगि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरि मिलिऐ हरि मनि वसै सुभाइ ॥ मेरा प्रभु भारा कीमति नही पाइ॥ सबदि सालाहे अंतु न पारावारु ॥ मेरा प्रभु बखसे बखसणहारु ॥ २ ॥ गुरि मिलिऐ

भाग्यशाली बन जाएं । जीव अपने हिसाब से कुछ भी चाहता रहे वास्तव में अन्तिम निर्णय तो व्यक्ति के आचरण पर ही निर्भर होगा ॥ ३ ॥ हे नानक, जिसने यह सब कुछ उत्पन्न किया है वही इसकी देखभाल भी करता है । हम लोग नहीं जान सकते कि उस प्रभु का हुकुम किस प्रकार कार्य करता है परन्तु यह स्पष्ट है कि वह जिसे चाहे उसे ही बड़प्पन प्रदान करता है ॥ ४ ॥ १ ॥ १९ ॥ गउड़ी बैरागणि महला १ ॥ हे प्रभु, मैं यदि हिरणी बन जाऊँ तो कन्द–मूल के रूप में मैं तेरे नाम को ही अपना आहार बनाए रखूँ । गुरु की कृपा से मुझे मेरा प्रभु–पति मिल जाए और मैं बार–बार उस पर बलिहारी जाऊँ । प्रभु तेरी कृपा हो तो मैं तेरे नाम का व्यापार करने वाली बन जाऊँ और तेरा नाम ही मेरा लाभदायक सौदा बने ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं कोयल बनूँ, आम के वृक्ष पर बैठूँ और आनन्दपूर्वक प्रभु–गुणानुवाद के शब्द का चिन्तन करती रहूँ । सहज–स्वभाव में लीन होने पर ही मुझे अपरंपार रूपवान प्रभु–पति दर्शन देगा और मेरा उससे मिलन होगा ॥ २ ॥ यदि मैं मछली बनूँ तो सदैव उस जल रूपी प्रभु में स्थित बनी रहूँ जो सभी जीवों की देखभाल करता है । प्यारा प्रभु–पति संसार–रूपी सागर के इस पार और उस पार तथा सर्वत्र बसता है और मैं भी अपनी बाहें पसार कर उसको मिल लूँगी ॥ ३ ॥ यदि मैं नागिन बनूँ और धरती में निवास करूँ तो जिस प्रकार नागिन बीन की ध्वनि पर सब कुछ भूल जाती है वैसे ही मेरे मन में भी शब्द–गुरु का निवास हो और मेरे सभी भय दूर हो जाएं । हे नानक, जिन जीव–स्त्रियों की सुरति रूपी ज्योति उस ज्योति स्वरूप प्रभु में लीन बनी रहती हैं वे जीव स्त्रियां सदा सुहागिन बनी रहने वाली (भाग्यशाली) हैं ॥ ४ ॥ २ ॥ १९ ॥

गउड़ी पूरबी दीपकी महला १   १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जिस घर में परमात्मा का गुणानुवाद और उस कर्त्ता के गुणों का विचार किया जाता है उसी घर (सत्संगत) में हे जीव, तू प्रभु मिलाप के लिए गीत गाया कर और उस सृजनहार को स्मरण किया कर ॥ १ ॥ तू उस निर्भय–प्रभु के ही गुण–गायन किया कर। मैं उस गुणानुवाद पर बलिहारी जाता हूँ जिसके कारण सदा आनन्द प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस मालिक द्वारा सदा ही जीवों को सम्भाला जा रहा है वही दाता सदा देता रहेगा । जब उसके उपहारों का मूल्य नहीं आंका जा सकता तब उस दाता के पारावार का अनुमान कहाँ सम्भव है ॥ २ ॥ हे जीव रूपी नवयौवना, (संसार छोड़कर) उस प्रभु–पति से मिलने का संवत एवं तिथि तो निधार्रित है । तू यह अरदास (प्रार्थना) कर कि ऐ मेरी सहेलियो (सद्संगियो), सब मिलकर मुझे प्रेम का उबटन आदि लगाओ और यह भी शुभ कामनाएं दो कि प्रभु–पति से मेरा सुखद मिलाप हो सके ॥ ३ ॥ प्रत्येक घर में जीव–स्त्री के साथ यही घटने वाला है और रोज़ इस प्रकार ले जाने के लिए सन्देश आ रहे हैं । अपने पास बुला लेने वाले प्रभु का सदैव स्मरण करते रहना चाहिए क्योंकि हर एक के लिए यह दिन आने वाला है ॥ ४ ॥ १ ॥ २०॥

राग गउड़ी गुआरेरी ॥ महला ३ चौपदे ॥   १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

गुरु के मिलने से प्रभु से मिलाप हो जाता है और प्रभु स्वयं ही जीव को अपने में मिला लेता है । मेरा प्रभु मिलाप की सब युक्तियों को जानता है और शब्द–गुरु की पहचान के माध्यम से अपने हुकुम के अन्तर्गत ही वह जीव को अपने में लीन करता है ॥ १ ॥ सद्गुरु (परमात्मा) के भय के माध्यम से संसार के भ्रमों के भय दूर हो जाते हैं और प्रभु के भय में लीन व्यक्ति सत्य के रंग में समाहित बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के माध्यम से प्रभु स्वाभाविक रुप से ही मन में आन बसता है । मेरा प्रभु इतना गरिमामय है कि उसकी विशालता को आंका नहीं जा सकता है । उस प्रभु का कोई आदि और अन्त नहीं है और उसका गुणानुवाद केवल शब्द के माध्यम से ही होता है । मेरा प्रभु क्षमाशील है और सब को क्षमा कर देता है ॥ २ ॥ गुरु से मिलाप के साथ

सभ मति बुधि होइ ॥ मनि निरमल वसै सचु सोइ ॥ साचि वसिऐ साची सभ कार ॥ ऊतम करणी सबद बीचार ॥ ३ ॥ गुर ते साची सेवा होइ ॥ गुरमुखि नामु पछाणै कोइ ॥ जीवै दाता देवणहारु ॥ नानक हरि नामे लगै पिआरु ॥ ४ ॥ १ ॥ २१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ गुर ते गिआनु पाए जनु कोइ ॥ गुर ते बूझै सीझै सोइ ॥ गुर ते सहजु साचु बीचारु ॥ गुर ते पाए मुकति दुआरु ॥ १ ॥ पूरै भागि मिलै गुरु आइ ॥ साचै सहजि साचि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरि मिलिऐ त्रिसना अगनि बुझाए ॥ गुर ते सांति वसै मनि आए ॥ गुर ते पवित पावन सुचि होइ ॥ गुर ते सबदि मिलावा होइ ॥ २ ॥ बाझु गुरू सभ भरमि भुलाई ॥ बिनु नावै बहुता दुखु पाई ॥ गुरमुखि होवै सु नामु धिआई ॥ दरसनि सचै सची पति होई ॥ ३ ॥ किस नो कहीऐ दाता इकु सोई ॥ किरपा करे सबदि मिलावा होई ॥ मिलि प्रीतम साचे गुण गावा ॥ नानक साचे साचि समावा ॥ ४ ॥ २ ॥ २२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ सु थाउ सचु मनु निरमलु होइ ॥ सचि निवासु करे सचु सोइ ॥ सची बाणी जुग चारे जापै ॥ सभु किछु साचा आपे आपै ॥ १ ॥ करमु होवै सतसंगि मिलाए ॥ हरि गुण गावै बैसि सु थाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जलउ इह जिहवा दूजै भाइ ॥ हरि रसु न चाखै फीका आलाइ ॥ बिनु बूझे तनु मनु फीका होइ ॥ बिनु नावै दुखीआ चलिआ रोइ ॥ २ ॥ रसना हरि रसु चाखिआ सहजि सुभाइ ॥ गुर किरपा ते सचि समाइ ॥ साचे राती गुर सबदु वीचार ॥ अंम्रितु पीवै निरमल धार ॥ ३ ॥ नामि समावै जो भाडा होइ ॥ ऊंधै भांडै टिकै न कोइ ॥ गुर सबदी मनि नामि निवासु ॥ नानक सचु भांडा जिसु सबद पिआस ॥ ४ ॥ ३ ॥ २३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ इकि गावत रहे मनि सादु न पाइ ॥ हउमै विचि गावहि बिरथा जाइ ॥ गावणि गावहि जिन नाम पिआरु ॥ साची बाणी सबद बीचारु ॥ १ ॥ गावत रहै जे सतिगुर भावै ॥ मनु तनु राता नामि सुहावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इकि गावहि इकि भगति करेहि ॥ नामु न पावहि बिनु असनेह ॥ सची भगति गुर सबद पिआरि ॥ अपना पिरु राखिआ

बुद्धि स्पष्ट हो जाती है और मन स्वच्छ हो जाता है। मन के स्वच्छ होने पर उसमें सत्य का निवास होता है और सत्य के निवास होने के फलस्वरूप व्यक्ति का कार्य–व्यवहार सत्य वाला बन जाता है। वह उत्तम कार्यशीलता के कारण शब्द–गुरु का चिन्तन करता रहता है ॥ ३ ॥ गुरु के माध्यम से ही जीव सच्ची सेवा में प्रवृत्त होता है और कोई बिरला ही गुरमुख बनकर प्रभु नाम की पहचान हृदय में धारण किए रहता है। हे नानक, जिसका प्यार प्रभु–नाम के साथ बन जाता है वह अच्छी तरह जान जाता है कि सब कुछ देने वाला एक दाता प्रभु ही है जो सदैव जीता जागता हुआ सब में स्थित है ॥ ४ ॥ १ ॥ २१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ कोई बिरला ही गुरु से ज्ञान प्राप्त करता है। जो गुरु से इस रहस्य को बूझ लेता है वही जीवन में सफल होता है। उसे ही गुरु से सहजभाव और सत्य का चिन्तन प्राप्त होता है और गुरु से ही उसे मुक्ति का द्वार मिलता है ॥ १ ॥ पूर्ण भाग्यशाली व्यक्ति गुरु से आ मिलता है और सत्याचरण वाला बनके स्वाभाविक रूप से ही सत्य में लीन बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु से मिलकर व्यक्ति तृष्णा रूपी अग्नि को बुझा लेता है और गुरु से ही व्यक्ति के मन में शांति का आवास होता है। गुरु ही व्यक्ति को पावन, पवित्र एवं स्वच्छ बना देता है और गुरु के माध्यम से ही शब्द–गुरु में लीन होकर परमात्मा से मेल हो जाता है ॥ २ ॥ गुरु के बिना सभी भ्रमों में भूले रहते हैं और नाम–विहीन बनकर बहुत दुख उठाते हैं। गुरु की शरण में आने पर व्यक्ति प्रभु–नाम का सुमिरन करता है और सत्य–प्रभु के दर्शन के फलस्वरूप उसको सदा स्थिर बना रहने वाला सम्मान प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ अन्य किसको पुकारा जाय क्योंकि वह दाता प्रभु एक ही है जो कृपा करता है और शब्द–गुरु के माध्यम से उससे मेल हो पाता है। नानक की यही प्रार्थना है कि मैं भी प्रियतम प्रभु को मिलकर उस सत्य स्वरूप का गुणानुवाद करूँ और सत्य परमात्मा में लीन बना रहूँ ॥ ४ ॥ २ ॥ २२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ वह स्थान सच्चा है जहाँ मन निर्मल हो जाता है। वहां मन सदा सत्य में निवास करता है और व्यक्ति की सच्ची शोभा को भी बढ़ाता है। सच्ची वाणी (शब्द) के माध्यम से व्यक्ति चारों युगों में जाना जाता है और वह यह जान जाता है कि समस्त सृष्टि में प्रभु स्वयं ही विद्यमान है ॥ १ ॥ प्रभु–कृपा हो तो वह सद्संगत से मेल कराता है जहाँ बैठकर व्यक्ति प्रभु का गुणानुवाद करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अन्य स्वादों में लगे रहने वाली जीभ जल जाए यदि यह प्रभु–नाम के रस को नहीं चखती और फीके बोल बोलती है। प्रभु–रस को जाने बिना व्यक्ति का तन मन फीका बना रहता है और ऐसा नाम से विहीन व्यक्ति दुखी होकर रोता हुआ यहाँ से जाता है ॥ २ ॥ जिस जीभ ने हरि–रस चखा है वह अपने मूल सहज स्वभाव में स्थित हो जाती है और गुरु की कृपा से सत्य में लीन बनी रहती है। सत्य प्रभु के रंग में रंगी हुई वह शब्द–गुरु को अपने विचारों का उद्देश्य बनाती है और प्रभु नाम के अमृत की निर्मल धारा को पीती रहती है ॥ ३ ॥ यदि हृदय रूपी बर्तन ठीक हो तो उसमें नाम स्थित बना रहता है। औंधे बर्तन में कुछ भी टिकता नहीं। शब्द–गुरु के माध्यम से मन में नाम का निवास बन जाता है और हे नानक, उस व्यक्ति का हृदय वह सच्चा बर्तन है जिसे सदैव परमात्मा रूपी शब्द की प्यास बनी ही रहती है ॥ ४ ॥ ३ ॥ २३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ कई उसके गीत तो गाते रहते हैं परन्तु उनके मन में रस उत्पन्न नहीं होता। अहम् वाले बन कर जितने भी गाते हैं उनका गुणानुवाद व्यर्थ हो जाता है। सच्चे गीत गाने वाले केवल वे ही हैं जिन्हें प्रभु नाम के साथ प्यार होता है और उनकी सच्ची वाणी में शब्द–गुरु का विचार निहित होता है ॥ १ ॥ परमात्मा को यदि अच्छा लगे तो ही व्यक्ति उसके गुण गाता रहता है और ऐसे व्यक्ति का तन मन प्रभु रंग में रंगा हुआ शोभायमान बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कई गाते हैं और रास–लीलाएं करते हैं। परन्तु प्रभु के प्रेम के बिना प्रभु नाम की प्राप्ति नहीं होती। सच्ची भक्ति उन्हीं की है जो शब्द–गुरु के माध्यम से प्रेम सम्बन्ध बनाते हैं और सदैव अपने प्रियतम प्रभु को

सदा उरि धारि ॥ २ ॥ भगति करहि मूरख आपु जणावहि ॥ नचि नचि टपहि बहुतु दुखु पावहि ॥ नचिऐ टपिऐ भगति न होइ ॥ सबदि मरै भगति पाए जनु सोइ ॥ ३ ॥ भगति वछलु भगति कराए सोइ ॥ सची भगति विचहु आपु खोइ ॥ मेरा प्रभु साचा सभ बिधि जाणै ॥ नानक बखसे नामु पछाणै ॥ ४ ॥ ४ ॥ २४ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ मनु मारे धातु मरि जाइ ॥ बिनु मूए कैसे हरि पाइ ॥ मनु मरै दारू जाणै कोइ ॥ मनु सबदि मरै बूझै जनु सोइ ॥ १ ॥ जिस नो बखसे दे वडिआई ॥ गुर परसादि हरि वसै मनि आई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि करणी कार कमावै ॥ ता इसु मन की सोझी पावै ॥ मनु मै मतु मैगल मिकदारा ॥ गुरु अंकसु मारि जीवालणहारा ॥ २ ॥ मनु असाधु साधै जनु कोइ ॥ अचरु चरै ता निरमलु होइ ॥ गुरमुखि इहु मनु लइआ सवारि ॥ हउमै विचहु तजे विकार ॥ ३ ॥ जो धुरि राखिअनु मेलि मिलाइ ॥ कदे न विछुड़हि सबदि समाइ ॥ आपणी कला आपे ही जाणै ॥ नानक गुरमुखि नामु पछाणै ॥ ४ ॥ ५ ॥ २५ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ हउमै विचि सभु जगु बउराना ॥ दूजै भाइ भरमि भुलाना ॥ बहु चिंता चितवै आपु न पछाना ॥ धंधा करतिआ अनदिनु विहाना ॥ १ ॥ हिरदै रामु रमहु मेरे भाई ॥ गुरमुखि रसना हरि रसन रसाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि हिरदै जिनि रामु पछाता ॥ जगजीवनु सेवि जुग चारे जाता ॥ हउमै मारि गुर सबदि पछाता ॥ क्रिपा करे प्रभ करम बिधाता ॥ २ ॥ से जन सचे जो गुर सबदि मिलाए ॥ धावत वरजे ठाकि रहाए ॥ नामु नव निधि गुर ते पाए ॥ हरि किरपा ते हरि वसै मनि आए ॥ ३ ॥ राम राम करतिआ सुखु सांति सरीर ॥ अंतरि वसै न लागै जम पीर ॥ आपे साहिबु आपि वजीर ॥ नानक सेवि सदा हरि गुणी गहीर ॥ ४ ॥ ६ ॥ २६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ सो किउ विसरै जिस के जीअ पराना ॥ सो किउ विसरै सभ माहि समाना ॥ जितु सेविऐ दरगह पति परवाना ॥ १ ॥ हरि के नाम विटहु बलि जाउ ॥ तूं विसरहि तदि ही मरि जाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिन तूं विसरहि जि तुधु

हृदय में धारण किए रहते हैं ॥ २ ॥ भक्ति के नाम पर रास लीलाओं में मूर्ख व्यक्ति केवल अपने आप को ही जन वाने की कोशिश करते हैं और नाचते कूदते हुए बहुत दुख प्राप्त करते हैं । नाचने कूदने से भक्ति नहीं होती और शब्द के माध्यम से विकारों की ओर से मरने पर मानव को भक्ति प्राप्त होती है ॥ ३ ॥ वह भक्तवत्सल प्रभु अपनी भक्ति स्वयं ही कराता है और सच्ची भक्ति में व्यक्ति अपने अहंकार को खो देता है । हे नानक, मेरा सच्चा प्रभु सब युक्तियों को जानता पहचानता है और वही सच्चे नाम की पहचान करने की शक्ति देता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ २४ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ॥ ३ ॥ विकारों की ओर से मन को मार लेने पर मन की भटकन समाप्त हो जाती है और इस प्रकार मरने के बिना भला परमात्मा को कैसे पाया जा सकता है । मन को मारने की औषधि यदि किसी को पता लग जाए तो वह यह जान जाता है कि मन शब्द–गुरु के माध्यम से ही मारकर नियन्त्रण में लाया जा सकता है ॥ १ ॥ जिसको प्रभु स्वयं बड़प्पन प्रदान करे, गुरु कृपा से परमात्मा उसके मन में आन बसता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब व्यक्ति गुरमुख वाले कार्य–व्यवहार को अपनाता है तब उसे इस मन की गहराइयों की सूझ प्राप्त होती है । मन शराब पीए हुए हाथी के समान अपने अहंकार में मस्त बना रहता है । केवल गुरु ही इसे अंकुश मारकर इसके होश को कायम रखता है ॥ २ ॥ मन असाध्य है इसे कोई बिरला ही सीधे रास्ते पर लाता है। यदि सूक्ष्म विषय–विकारों को व्यक्ति समाप्त कर दे तब ही यह मन निर्मल हो सकता है । गुरमुख व्यक्तियों ने अपने अन्दर से अहंकार और अन्य विकारों को तजकर इस मन को सुन्दर बना लिया है ॥ ३ ॥ जिनको प्रभु ने प्रारम्भ से ही विषय–विकारों की ओर से मोड़ कर अपने में मिला लिया है वे कभी भी नहीं बिछुड़ते और सत्य के माध्यम से प्रभु में समाहित बने रहते हैं। हे नानक, परमात्मा अपनी अदृष्ट शक्ति को स्वयं ही जानता है और गुरमुख बनकर ही नाम की पहचान प्राप्त होती है ॥४॥ ५॥२५॥ गउडी गुआरेरी महला ॥ ३ ॥ अहंकार में सारा संसार ही पागल बना हुआ है और दुविधा भाव में पड़कर भ्रमों में भटक रहा है । अनेकों चिन्ताएं उसने लगा रखी हैं परन्तु अपने आप को व्यक्ति पहचानता नहीं। अनेक प्रकार के धन्धों में लीन वह अपने दिन व्यर्थ ही व्यतीत किए जा रहा है ॥ १ ॥ हे मेरे भाई, हृदय में राम का सुमिरन करो और गुरमुख बनकर अपनी जीभ को राम–रस से मीठा करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुख बनकर जिन्होंने हृदय में ही प्रभु को पहचान लिया है वे जगत के जीवन प्रभु का सुमिरन करके चारों युगों में जाने गए हैं । जिन पर कर्मों को बनाने वाला प्रभु कृपा करता है उन्होंने अपने अहंकार को मारकर शब्द गुरु को पहचान लिया है ॥ २ ॥ वे ही व्यक्ति सच्चे हैं जो शब्द–गुरु के माध्यम से परमात्मा से मिल गए हैं और उन्होंने दौड़ते हुए मन को मोड़ कर रोक लिया है । प्रभु–नाम रूपी नवनिधियाँ उन्होंने गुरु से प्राप्त की हैं और प्रभु की कृपा से ही प्रभु उनके मन में आन बसा है ॥ ३ ॥ प्रभु–नाम का सुमिरन करते रहने से शरीर को सुख एवं शान्ति मिलती है । जिस व्यक्ति के मन में प्रभु बसता है उसे यम पीड़ित नहीं कर सकता । वह प्रभु स्वयं ही राजा है और स्वयं ही अपना मन्त्री भी है; हे नानक, सदा विशाल गुणों वाले परमात्मा के नाम का सुमिरन कर ॥ ४ ॥ ६ ॥ २६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ हे भाई, जान एवं प्राणों को देने वाले सब में व्याप्त, जिसकी सेवा करने से प्रभु दरबार में सम्मान मिलता है उस प्रभु को कभी भी विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए ॥ १ ॥ प्रभु–नाम पर मैं बलिहारी जाता हूँ । हे प्रभु, जब तू मुझे भूल जाता है तो मेरी आध्यात्मिक मृत्यु हो जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उन लोगों को ही तू विस्मृत हो जाता है जिन्हें तू

आपि भुलाए ॥ तिन तूं विसरहि जि दूजै भाए ॥ मनमुख अगिआनी जोनी पाए ॥ २ ॥ जिन इक मनि तुठा से सतिगुर सेवा लाए ॥ जिन इक मनि तुठा तिन हरि मंनि वसाए ॥ गुरमती हरि नामि समाए ॥ ३ ॥ जिना पोतै पुंनु से गिआन बीचारी ॥ जिना पोतै पुंनु तिन हउमै मारी ॥ नानक जो नामि रते तिन कउ बलिहारी ॥ ४ ॥ ७ ॥ २७ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ तूं अकथु किउ कथिआ जाहि ॥ गुर सबदु मारणु मन माहि समाहि ॥ तेरे गुण अनेक कीमति नह पाहि ॥ १ ॥ जिस की बाणी तिसु माहि समाणी ॥ तेरी अकथ कथा गुर सबदि वखाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह सतिगुरु तह सतसंगति बणाई ॥ जह सतिगुरु सहजे हरि गुण गाई ॥ जह सतिगुरु तहा हउमै सबदि जलाई ॥ २ ॥ गुरमुखि सेवा महली थाउ पाए ॥ गुरमुखि अंतरि हरि नामु वसाए ॥ गुरमुखि भगति हरि नामि समाए ॥ ३ ॥ आपे दाति करे दातारु ॥ पूरे सतिगुर सिउ लगै पिआरु ॥ नानक नामि रते तिन कउ जैकारु ॥ ४ ॥ ८ ॥ २८ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ एकसु ते सभि रूप हहि रंगा ॥ पउणु पाणी बैसंतरु सभि सहलंगा ॥ भिंन भिंन वेखै हरि प्रभु रंगा ॥ १ ॥ एकु अचरजु एको है सोई ॥ गुरमुखि वीचारे विरला कोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहजि भवै प्रभु सभनी थाई ॥ कहा गुपतु प्रगटु प्रभि बणत बणाई ॥ आपे सुतिआ देइ जगाई ॥ २ ॥ तिस की कीमति किनै न होई ॥ कहि कहि कथनु कहै सभु कोई ॥ गुर सबदि समावै बूझै हरि सोई ॥ ३ ॥ सुणि सुणि वेखै सबदि मिलाए ॥ वडी वडिआई गुर सेवा ते पाए ॥ नानक नामि रते हरि नामि समाए ॥ ४ ॥ ९ ॥ २९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ मनमुखि सूता माइआ मोहि पिआरि ॥ गुरमुखि जागे गुण गिआन बीचारि ॥ से जन जागे जिन नाम पिआरि ॥ १ ॥ सहजे जागै सवै न कोइ ॥ पूरे गुर ते बूझै जनु कोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ असंतु अनाड़ी कदे न बूझै ॥ कथनी करे तै माइआ नालि लूझै ॥ अंधु अगिआनी कदे न सीझै ॥ २ ॥ इसु जुग महि राम नामि निसतारा ॥ विरला को पाए गुर सबदि वीचारा ॥ आपि तरै सगले कुल उधारा ॥ ३ ॥

स्वयं ही भुलवाता है । वे ही तुझे भूलते हैं जो द्वैतभाव में बने रहते हैं और ऐसे मनमुख अज्ञानियों को तू योनियों के चक्कर में डाल देता है ॥ २ ॥ जिन पर प्रभु प्रसन्न होता है उन्हें सद्गुरु की सेवा में लगा लेता है, उन्हीं के मन में परमात्मा अपने आप को बसा लेता है ॥ वे व्यक्ति ही गुरमति के माध्यम से परमात्मा के नाम में लीन बने रहते हैं ॥ ३ ॥ जिन व्यक्तियों के पास अच्छा भाग्य होता है वे ज्ञानवान होकर प्रभु-चिन्तन करते हैं और अपने अहंकार को समाप्त कर लेते हैं । हे नानक, मैं उन पर सदा बलिहारी जाता हूँ जो प्रभु-नाम के रंग में रंगे रहते हैं ॥ ४ ॥ ७ ॥ २७ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ हे प्रभु तू अकथनीय है तेरा कथन कैसे किया जा सकता है । जिसके पास शब्द-गुरु रूपी सब विकारों को गला देने वाला मसाला है उसके मन में हे प्रभु, तू स्वयं आ बसता है । तेरे गुण अनन्त है जिनका मूल्य नहीं आंका जा सकता ॥ १ ॥ हे प्रभु, तेरा यह गुणानुवाद तुझमें ही लीन बना रहता है और तेरे गुणों की कहानी का वर्णन नहीं किया जा सकता । इस तथ्य को शब्द-गुरु ने ही मुझे बताया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनके हृदय में सद्गुरु का निवास है वहीं सद्संगत की रचना हो जाती है । जहाँ सद्गुरु है वहाँ सहज भाव में प्रभु के गुण गाये जाते हैं और व्यक्ति के अहंकार को शब्द-गुरु के माध्यम से जला दिया जाता है । गुरमुख बनकर सेवा में लगे रहने से परमात्मा के समक्ष स्थान प्राप्त हो जाता है और व्यक्ति अन्तर्मन में हरि-नाम को बसा लेता है । गुरमुख व्यक्ति भक्ति के माध्यम से हरि-नाम में लीन बना रहता है ॥ ३ ॥ देने में स्मर्थ प्रभु स्वयं ही देता जाता है और व्यक्ति का पूर्ण सद्गुरु के साथ प्रेम बना रहता है । हे नानक, जो व्यक्ति प्रभु-नाम में रंगे रहते हैं उनकी सदैव जय-जयकार होती रहती है ॥ ४ ॥ ८ ॥ २८ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ दृष्टमान सभी रूप रंग उस एक परमात्मा से ही पैदा हुए हैं । उस एक से ही वायु, जल, अग्नि आदि साथी बने हैं । इन सभी विभिन्न रंगों और कौतुकों को प्रभु स्वयं देखता रहता है ॥ १ ॥ यह आश्चर्यजक है कि परमात्मा स्वयं ही सर्वत्र विद्यमान है । कोई विरला गुरमुख ही इस तथ्य पर विचार करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु सहज भाव में सब स्थानों में रमण करता है; कहीं पर वह गुप्त है और कहीं प्रभु प्रत्यक्ष रूप में अपनी इस रचना को बना सँवार रहा है । मोह निद्रा में ग्रस्त व्यक्तियों को प्रभु स्वयं ही जगाता रहता है । प्रभु के विस्तार को कोई नहीं आंक सकता बेशक प्रत्येक जीव उसी का कथन कर रहा है । शब्द-गुरु के माध्यम से उसमें लीन हुआ जाता है और प्रभु के रहस्यों को बूझा जाता है ॥ ३ ॥ वह सब को सुन-सुन कर उनको संभालता है और शव्द के माध्यम से अपने में मिलाता है । गुरु की सेवा से ही जीव बड़प्पन प्राप्त करता है और हे नानक, जो प्रभु-नाम में रंग जाते हैं वे प्रभु-नाम में ही लीन बने रहते हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥ २९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ मनमुख व्यक्ति माया मोह की वासना में ही सोया रहता है । गुरमुख व्यक्ति जाग्रत अवस्था में बना रहकर प्रभु के गुणों को जानता है और उन पर चिन्तन करता रहता है। वास्तव में जिन्हें प्रभु के नाम के साथ सच्चा प्रेम होता है वे ही सदैव चेतन बने रहते हैं ॥ १ ॥ कोई बिरला ही सहजभाव में चेतन बना रहता है और माया-मोह की नींद में सोता नहीं । कोई बिरला ही पूर्ण गुरु से इस रहस्य को समझता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ असन्त और अनाड़ी अर्थात हठी व्यक्ति यह कभी भी नहीं जान पाता । वह ज्ञान की बातें तो करता है पर साथ ही साथ धन सम्पदा में भी लीन बना रहता है । ऐसा अन्धा और ज्ञानहीन व्यक्ति कभी भी सफल नहीं हो पाता ॥ २ ॥ इस जीवन के समय में केवल राम-नाम अर्थात परमात्मा के नाम के माध्यम से ही उद्धार हो सकता है । कोई बिरला व्यक्ति ही शब्द-गुरु के माध्यम से इस कथन पर गहरा चिन्तन करता है । परन्तु, जो ऐसा करता है वह स्वयं तो संसार सागर पार कर ही जाता है, अपने कुल का भी उद्धार कर लेता है ॥ ३ ॥

इसु कलिजुग महि करम धरमु न कोई ॥ कली का जनमु चंडाल कै घरि होई ॥ नानक नाम बिना को मुकति न होई ॥ ४ ॥ १० ॥ ३० ॥ गउड़ी महला ३ गुआरेरी ॥ सचा अमरु सचा पातिसाहु ॥ मनि साचै राते हरि वेपरवाहु ॥ सचै महलि सचि नामि समाहु ॥ १ ॥ सुणि मन मेरे सबदु वीचारि ॥ राम जपहु भवजलु उतरहु पारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भरमे आवै भरमे जाइ ॥ इहु जगु जनमिआ दूजै भाइ ॥ मनमुखि न चेतै आवै जाइ ॥ २ ॥ आपि भुला कि प्रभि आपि भुलाइआ ॥ इहु जीउ विडाणी चाकरी लाइआ ॥ महा दुखु खटे बिरथा जनमु गवाइआ ॥ ३ ॥ किरपा करि सतिगुरू मिलाए ॥ एको नामु चेते विचहु भरमु चुकाए ॥ नानक नामु जपे नाउ नउ निधि पाए ॥ ४ ॥ ११ ॥ ३१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ जिना गुरमुखि धिआइआ तिन पूछउ जाइ ॥ गुर सेवा ते मनु पतीआइ ॥ से धनवंत हरि नामु कमाइ ॥ पूरे गुर ते सोझी पाइ ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपहु मेरे भाई ॥ गुरमुखि सेवा हरि घाल थाइ पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपु पछाणै मनु निरमलु होइ ॥ जीवन मुकति हरि पावै सोइ ॥ हरि गुण गावै मति ऊतम होइ ॥ सहजे सहजि समावै सोइ ॥ २ ॥ दूजै भाइ न सेविआ जाइ ॥ हउमै माइआ महा बिखु खाइ ॥ पुति कुटंबि ग्रिहि मोहिआ माइ ॥ मनमुखि अंधा आवै जाइ ॥ ३ ॥ हरि हरि नामु देवै जनु सोइ ॥ अनदिनु भगति गुर सबदी होइ ॥ गुरमति विरला बूझै कोइ ॥ नानक नामि समावै सोइ ॥ ४ ॥ १२ ॥ ३२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ गुर सेवा जुग चारे होई ॥ पूरा जनु कार कमावै कोई ॥ अखुटु नाम धनु हरि तोटि न होई ॥ ऐथै सदा सुखु दरि सोभा होई ॥ १ ॥ ए मन मेरे भरमु न कीजै ॥ गुरमुखि सेवा अंम्रित रसु पीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरु सेवहि से महा पुरख संसारे ॥ आपि उधरे कुल सगल निसतारे ॥ हरि का नामु रखहि उर धारे ॥ नामि रते भउजल उतरहि पारे ॥ २ ॥ सतिगुरु सेवहि सदा मनि दासा ॥ हउमै मारि कमलु परगासा ॥ अनहदु वाजै निज घरि वासा ॥ नामि रते घर माहि उदासा ॥ ३ ॥ सतिगुरु सेवहि तिन की सची बाणी ॥ जुगु जुगु भगती आखि वखाणी ॥ अनदिनु

इस कलियुग में धर्म–कर्म की कोई जिज्ञासा नहीं रह गई है । ऐसा लगता है कि कलियुग का जन्म किसी चाण्डाल के घर में हुआ है अर्थात इस घोर समय में लोगों का स्वभाव चाण्डाल हो गया है । हे नानक, प्रभु–नाम के बिना मुक्ति नहीं हो सकती ॥ ४ ॥ १० ॥ ३० ॥ गउड़ी महला ३ गुआरेरी ॥ नित्य प्रभु रूपी बादशाह का हुकम भी सच्चा है । जिनके मन सत्य–स्वरूप हो गए हैं वे उस बेपरवाह प्रभु में लीन हो गए हैं । वे सदैव सत्य–प्रभु के समक्ष बने रहकर सत्य–नाम में लीनता प्राप्त कर लेते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू शब्द–गुरु के विचार को ध्यान से सुन । यदि तू प्रभु का सुमिरन करेगा तो संसार सागर से पार हो जाएगा ॥ २ ॥ द्वैत भाव में पैदा हुआ यह संसार भ्रम में भी भटकता हुआ जन्मता–मरता रहता है । मन के पीछे चलने के फलस्वरूप यह चेतता नहीं और इसका आवागमन बना रहता है ॥ ३ ॥ यह जीव स्वयं भूला है या प्रभु ने इसे भुला दिया है । यह अन्यों (विकारों) की नौकरी करता है तथा गम्भीर दुख को अर्जित करता हुआ व्यर्थ में जन्म गँवा देता है । प्रभु जब कृपा करके सद्गुरु से मिला देता है तो जीव केवल एक नाम का ही सुमिरन करता है और उसके भ्रम चुक जाते हैं । हे नानक, ऐसा व्यक्ति सदैव प्रभु–सुमिरन करता है और उसे नवनिधियाँ प्राप्त हो जाती है ॥ ४ ॥ २२ ॥ ३१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३॥ जिन्होंने गुरमुख बनकर प्रभु–सुमिरन किया है मैं उनसे इसकी युक्ति पूछता हूँ । दरअसल गुरु की सेवा से ही मन सन्तुष्ट होता है । जो हरि–नाम की कमाई करते हैं वे ही धनवान बन जाते हैं । यह समझ पूर्ण–गुरु से ही प्राप्त होती है । हे भाई, सदैव प्रभु–नाम का सुमिरन करते रहो । गुरमुख बनकर की गई सेवा ही प्रभु द्वारा स्वीकार की जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब व्यक्ति अपने आप को पहचान लेता है तो उसका मन निर्मल हो जाता है और ऐसा जीवन–मुक्त व्यक्ति प्रभु को पा लेता है । हरि गुण गाने से श्रेष्ठ मति वाला बनकर जीव स्वाभाविक रूप से ही सहज में लीन हो जाता है ॥ २ ॥ दुविधा–भाव में उसका सुमिरन नहीं किया जा सकता और व्यक्ति अहंकार और मायावी प्रपंचों का घोर विष खाता रहता है । पुत्र परिवार और घर के मोह के माध्यम से सांसारिक माया ठगती रहती है और इसमें फंसा मनमुख व्यक्ति अन्धा बनकर आवागमन में पड़ा रहता है ॥ ३ ॥ जिसे प्रभु हरि–नाम देता है वही उसका सेवक माना जाता है और वह शब्द–गुरु के माध्यम से दिन–रात उसकी भक्ति में लीन रहता है । गुरु की मति को अर्थात गुरमति को कोई बिरला ही बूझता है और हे नानक, ऐसा जीव परमात्मा के नाम में ही लीन बना रहता है ॥ ४ ॥ १२ ॥ ३२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ प्रभु रूपी गुरु की सेवा का नियम चारों युगों में ही स्वीकृत है । कोई पूर्ण सेवक ही इस ओर कार्यशील बनता है । ऐसे व्यक्ति के पास प्रभु–नाम का अक्षय भण्डार आ जाता है और उसे कभी भी कमी नहीं आती । उसे इस लोक में भी सुख प्राप्त होता है और प्रभु के द्वार पर भी उसका सम्मान होता है । हे मेरे मन, तू भ्रमों में न पड़ और गुरमुख बनकर सेवा रूपी अमृत–रस का पान कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो सद्गुरु की सेवा करते हैं वे इस संसार में महापुरुष जाने जाते हैं । उनका स्वयं का उद्धार होता है और अपने सम्पूर्ण कुल को भी वे पार उतार लेते हैं । वे सदैव हरि–नाम को हृदय में धारण किए रहते हैं और नाम में रंगे हुए वे संसार–सागर से पार चले जाते हैं ॥ २ ॥ सद्गुरु की सेवा करने वाले मन से सब के सेवक बने रहते हैं । वे अहंकार को मारकर अपने हृदय रूपी कमल को खिला लेते हैं । उनके अन्तर्मन में निरन्तर गुणानुवाद का अनहत शब्द बजता रहता है और उनकी सुरति अपने मूल स्वरूप अर्थात परमात्मा में टिकी रहती है । नाम में लीन ऐसे व्यक्ति गृहस्थी होते हुए भी माया से निर्लिप्त बने रहते हैं ॥ ३ ॥ परमात्मा रूपी गुरु का सुमिरन करने वाले की वाणी अटल हो जाती है और प्रत्येक युग में भक्तों द्वारा उसका उच्चारण एवं व्याख्यान किया जाता है ।

जपहि हरि सारंगपाणी ॥ नानक नामि रते निहकेवल निरबाणी ॥ ४ ॥ १३ ॥ ३३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ सतिगुरु मिलै वडभागि संजोग ॥ हिरदै नामु नित हरि रस भोग ॥ १ ॥ गुरमुखि प्राणी नामु हरि धिआइ ॥ जनमु जीति लाहा नामु पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआनु धिआनु गुर सबदु है मीठा ॥ गुर किरपा ते किनै विरलै चखि डीठा ॥ २ ॥ करम कांड बहु करहि अचार ॥ बिनु नावै ध्रिगु ध्रिगु अहंकार ॥ ३ ॥ बंधनि बाधिओ माइआ फास ॥ जन नानक छूटै गुर परगास ॥ ४ ॥ १४ ॥ ३४ ॥ महला ३ गउड़ी बैरागणि ॥ जैसी धरती ऊपरि मेघुला बरसतु है किआ धरती मधे पाणी नाही ॥ जैसे धरती मधे पाणी परगासिआ बिनु पगा वरसत फिराही ॥ १ ॥ बाबा तूं ऐसे भरमु चुकाही ॥ जो किछु करतु है सोई कोई है रे तैसे जाइ समाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसतरी पुरख होइ कै किआ ओइ करम कमाही ॥ नाना रूप सदा हहि तेरे तुझ ही माहि समाही ॥ २ ॥ इतने जनम भूलि परे से जा पाइआ ता भूले नाही ॥ जा का कारजु सोई परु जाणै जे गुर कै सबदि समाही ॥ ३ ॥ तेरा सबदु तूंहै हहि आपे भरमु कहा ही ॥ नानक ततु तत सिउ मिलिआ पुनरपि जनमि न आही ॥ ४ ॥ १ ॥ १५ ॥ ३५ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ सभु जगु कालै वसि है बाधा दूजै भाइ ॥ हउमै करम कमावदे मनमुखि मिलै सजाइ ॥ १ ॥ मेरे मन गुर चरणी चितु लाइ ॥ गुरमुखि नामु निधानु लै दरगह लए छडाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लख चउरासीह भरमदे मनहठि आवै जाइ ॥ गुर का सबदु न चीनिओ फिरि फिरि जोनी पाइ ॥ २ ॥ गुरमुखि आपु पछाणिआ हरि नामु वसिआ मनि आइ ॥ अनदिनु भगती रतिआ हरि नामे सुखि समाइ ॥ ३ ॥ मनु सबदि मरै परतीति होइ हउमै तजे विकार ॥ जन नानक करमी पाईअनि हरि नामा भगति भंडार ॥ ४ ॥ २ ॥ १६ ॥ ३६ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ पेईअड़ै दिन चारि है हरि हरि लिखि पाइआ ॥ सोभावंती नारि है गुरमुखि गुण गाइआ ॥ पेवकड़ै गुण संमलै साहुरै वासु पाइआ ॥ गुरमुखि सहजि समाणीआ हरि हरि मनि भाइआ ॥ १ ॥ ससुरै पेईऐ पिरु वसै कहु कितु बिधि पाईऐ ॥ आपि निरंजनु

भक्तजन सदा उस प्रभु का ही सुमिरन करते हैं और हे नानक, नाम–रंग में रंगकर वे निर्लिप्त एवं मुक्त बन जाते हैं ॥ ४ ॥ १३ ॥ ३३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ३ ॥ प्रभु रूपी गुरु बड़े भाग्य और अच्छे संयोग के कारण ही मिलता है। जिसे वह मिल जाता है उसके हृदय में प्रभु–नाम का वास हो जाता है और वह नाम–रस पान करने के फलस्वरूप आनन्दित हो जाता है ॥ १ ॥ गुरमुख बनकर प्राणी हरि–नाम का सुमिरन करता है और नाम का लाभ प्राप्त करके इस जन्म में सब कुछ जीत लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शब्द–गुरु ही मीठा ज्ञान एवं ध्यान है जिसे गुरु की कृपा से किसी बिरले ने ही चखकर देखा है ॥ २ ॥ व्यक्ति अनेकों प्रकार के कर्मकाण्ड एवं आचरण धारण करते हैं परन्तु नाम से विहीन बनकर यह उनका अहंकार ही होता है जो बार–बार धिक्कार योग्य है ॥ ३ ॥ जीव माया के बन्धन की फांस में बंधा रहता है परन्तु हे दास नानक, उसकी मुक्ति ज्ञान के प्रकाश से ही होती है ॥ ४ ॥ १४ ॥ ३४ ॥ महला ३ गउड़ी बैरागणि ॥ धरती पर बादल बरसता है तो क्या धरती में पानी नहीं है। जैसे धरती में से पानी निकल आता है वैसे ही बादल भी बिना पैरों के इधर–उधर चलते हुए वर्षा करते हैं ॥ २ ॥ हे बाबा, तू अपने भ्रमों को दूर कर। जो कोई भी कुछ कर रहा है वह प्रभु ही करवा रहा है। जैसे बादल का जल धरती के जल से आ मिलता है वैसे ही जीवात्मा, परमात्मा जैसी होने के कारण उसमें जा मिलती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्त्री और पुरुष का अलग–अलग रूप धारण कर जीव कैसे कर्म करता डोलता है ? ये अनेकों रूप होकर भी तेरे ही रूप है और हे प्रभु तुझमें ही समा जाते हैं ॥ २ ॥ अनेकों जन्मों तक जीव भूला हुआ था परन्तु जब उसे प्रभु का ज्ञान हो गया तो अब वह उसे नहीं भूल सकता। यदि जीव शब्द–गुरु में टिके रहें तो उन्हें पता चल जाता है कि इस रचे हुए संसार को परमात्मा ही अच्छी तरह समझता है ॥ ३ ॥ तेरा शब्द और तू एक ही है। जब इस तथ्य का पता लग जाए तो भ्रम की गुंजाइश कहाँ रहती है। हे नानक, जिनका यह भ्रम दूर हो गया उनकी ज्योति उस परम ज्योति में लीन हो जाती है और वे दुबारा जन्म–मरण में नहीं आते ॥ ४ ॥ १५ ॥ ३५ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ द्वैतभाव में लीन यह संसार बन्धनों में बंधा हुआ काल के वश में है। यहाँ मनमुख व्यक्ति अहंकार के वशीभूत होकर कर्म करते हैं और उन्हें उपयुक्त सजा मिलती है। हे मेरे मन, गुरु के चरणों में चित्त को लगा। गुरमुख बन कर तू नाम के खजाने को प्राप्त कर यही तुम्हें परमात्मा के समक्ष छुड़ा लेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करते रहते हैं और मन के विकारों के हठ के कारण आवागमन में पड़े रहते हैं। वे शब्द–गुरु को नहीं पहचानते और पुनः पुनः योनियों में पड़ते रहते हैं। गुरमुख बनकर जिसने अपने आप को पहचान लिया उसके हृदय में प्रभु नाम आन बसता है। वह सदैव भक्ति रंग में रंगा रहता है और हरि–नाम के माध्यम से अनन्त सुख में लीन बना रहता है ॥ ३ ॥ शब्द के माध्यम से जब मन के विकार समाप्त हो जाते हैं तो प्रेम जगता है और अहंकार का त्याग हो जाता है। दास नानक कहता है कि भाग्यशाली होकर ही हरि–नाम की भक्ति के भण्डार को प्राप्त किया जाता है ॥४॥२॥१६॥३६॥ गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ प्रभु ने पहले ही लिख दिया है कि सांसारिक पिता के घर में चार दिनों अर्थात थोड़े समय के लिए ही रहना है। इस घर में वही जीव–स्त्री सौन्दर्यशाली होती है जो गुरमुख बनकर प्रभु के गुण गाती है। यदि पिता के घर में गुणों को सीख ले तो ससुराल में उसका पक्का निवास बन जाता है। गुरमुख बनकर सहज में समाया जाता है और प्रभु को यही अच्छा लगता है ॥ १ ॥ इस लोक और उस लोक में प्रियतम प्रभु ही बसता है तो उसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है। प्रभु विषय–विकारों की कालिमाओं से विहीन एवं अलख है और वह

अलखु है आपे मेलाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपे ही प्रभु देहि मति हरि नामु धिआईऐ ॥ वडभागी सतिगुरु मिलै मुखि अंम्रितु पाईऐ ॥ हउमै दुबिधा बिनसि जाइ सहजे सुखि समाईऐ ॥ सभु आपे आपि वरतदा आपे नाइ लाईऐ ॥ २ ॥ मनमुखि गरबि न पाइओ अगिआन इआणे ॥ सतिगुर सेवा ना करहि फिरि फिरि पछुताणे ॥ गरभ जोनी वासु पाइदे गरभे गलि जाणे ॥ मेरे करते एवै भावदा मनमुख भरमाणे ॥ ३ ॥ मेरै हरि प्रभि लेखु लिखाइआ धुरि मसतकि पूरा ॥ हरि हरि नामु धिआइआ भेटिआ गुरु सूरा ॥ मेरा पिता माता हरि नामु है हरि बंधपु बीरा ॥ हरि हरि बखसि मिलाइ प्रभ जनु नानकु कीरा ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७ ॥ ३७ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ सतिगुर ते गिआनु पाइआ हरि ततु बीचारा ॥ मति मलीण परगटु भई जपि नामु मुरारा ॥ सिवि सकति मिटाईआ चूका अंधिआरा ॥ धुरि मसतकि जिन कउ लिखिआ तिन हरि नामु पिआरा ॥ १ ॥ हरि कितु बिधि पाईऐ संत जनहु जिसु देखि हउ जीवा ॥ हरि बिनु चसा न जीवती गुर मेलिहु हरि रसु पीवा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ हरि गुण गावा नित हरि सुणी हरि हरि गति कीनी ॥ हरि रसु गुर ते पाइआ मेरा मनु तनु लीनी ॥ धनु धनु गुरु सतपुरखु है जिनि भगति हरि दीनी ॥ जिसु गुर ते हरि पाइआ सो गुरु हम कीनी ॥ २ ॥ गुणदाता हरि राइ है हम अवगणिआरे ॥ पापी पाथर डूबदे गुरमति हरि तारे ॥ तूं गुणदाता निरमला हम अवगणिआरे ॥ हरि सरणागति राखि लेहु मूड़ मुगध निसतारे ॥ ३ ॥ सहजु अनंदु सदा गुरमती हरि हरि मनि धिआइआ ॥ सजणु हरि प्रभु पाइआ घरि सोहिला गाइआ ॥ हरि दइआ धारि प्रभ बेनती हरि हरि चेताइआ ॥ जन नानकु मंगै धूड़ि तिन जिन सतिगुरु पाइआ ॥ ४ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ३८ ॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ चउथा चउपदे १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

पंडितु सासत सिम्रिति पड़िआ ॥ जोगी गोरखु गोरखु करिआ ॥ मै मूरख हरि हरि जपु पड़िआ ॥ १ ॥ ना जाना किआ गति राम हमारी ॥ हरि भजु मन मेरे तरु भउजलु तू

अपने से मेल स्वयं ही करवाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु स्वयं ही मति प्रदान करता है जिससे जीव हरि–नाम का सुमिरन करता है । बड़े भाग्य से सद्गुरु मिलता है और उसी के माध्यम से जीव के मुख में अमृत–रस पड़ता है । अब उसका अहंकार एवं दुविधा विनष्ट हो जाते हैं और वह सहज भाव से सुख में लीन हो जाता है । जीव को यह पता लग जाता है कि प्रभु ही सर्वत्र कार्यशील है और स्वयं ही अपने नाम में लीन करता है ॥ २ ॥ गर्व में बने रहने वाले मनमुख अज्ञानी एवं बच्चे हैं जो प्रभु को प्राप्त नहीं कर सकते । वे सद्गुरु की सेवा नहीं करते और बार–बार पछताते रहते हैं । योनियों के माध्यम से उनका आवास गर्भ में ही बना रहता है और गर्भ में आने जाने के चक्कर में ही वे नष्ट हो जाते हैं । मेरे कर्त्ता प्रभु को यही अच्छा लगता है कि मनमुख भटकते फिरें ॥ ३ ॥ मेरे मालिक प्रभु ने मेरे माथे पर पूर्ण भाग्य का आदेश लिखा है जिससे मेरी भेंट बलशाली गुरु से हो गई है और मैंने हरि–नाम का सुमिरन कर लिया है । हरि–नाम ही मेरा माता, पिता, मित्र और भाई है । यह नानक तेरा विनम्र दास है, हे प्रभु, इस पर कृपा कर और इसे अपने में लीन बनाए रख ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७ ॥ ३७ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥ सद्गुरु से ज्ञान पाकर व्यक्ति हरि–तत्व का चिन्तन करता है । प्रभु–नाम के सुमिरन से उसकी मलीन मति भी निखर जाती है । कल्याणकारी प्रभु मायावी शक्ति के प्रभाव को मिटा देता है और व्यक्ति का अज्ञान रूपी अहंकार समाप्त हो जाता है । पहले से ही जिनके मस्तक पर अंकित होता है उन्हीं को ही हरि–नाम प्यारा लगता है ॥ १ ॥ हे शान्त पुरुषो, जिस प्रभु को देख कर मैं जीवित बना रहता हूँ उसे किस युक्ति से प्राप्त किया जा सकता है । मैं क्षण भर के लिए भी प्रभु के बिना जीवित नहीं रह सकती । हे गुरु, मुझे उससे मिला दो ताकि मैं हरि–रस का पान कर सकूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं नित्य हरि के गुण गाता हूँ उन्हें सुनता हूँ और प्रभु ने मुझे ऊँची आध्यात्मिक अवस्था प्रदान कर दी है । यह हरि–रस मुझे गुरु से प्राप्त हुआ है जिससे मेरा मन–तन उसमें लीन हो गया है । वह सदैव बना रहने वाला गुरु रूपी प्रभु धन्य है जिसने मुझे प्रभु–भक्ति प्रदान की है । जिस गुरु के माध्यम से मुझे प्रभु मिला है उस गुरु को मैंने अपना बना लिया है ॥ २ ॥ हम सब अवगुणी है और गुणदाता केवल एक प्रभु है । पापी जीव पत्थरों की तरह डूबने वाले हैं परन्तु गुरमति के माध्यम से प्रभु उन्हें तैरा लेता है । हे प्रभु, तू निर्मल गुण देने वाला है और हम अवगुणों से भरे हुए हैं । हे प्रभु मैं तेरा शरणागत हूँ मेरी रक्षा कर; क्योंकि तूने अनेक घोर मूर्खों को भी पार उतारा है ॥ ३ ॥ गुरु की मति के फलस्वरूप सहज आनन्द प्राप्त होता है तथा मन में हरि का सुमिरन किया जाता है । जब साजन प्रभु को प्राप्त कर लिया जाता है तब मन में हरि–रस का गुणानुवाद होता है । हे प्रभु, कृपा कर मेरी विनती को सुन और मुझे अपने नाम के प्रति चेतन बनाए रख । दास नानक तो उन व्यक्तियों की चरण–धूलि माँगता है जिन्होंने सद्गुरु को प्राप्त कर लिया है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ३८ ॥

गउड़ी गुआरेरी महला ४ चौथा ॥ चौपदे ॥ १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

पंडित शास्त्रों एवं स्मृतियों को पढ़ता है और योगी बार–बार गोरख का स्मरण करता है परन्तु मेरे जैसे मूर्ख ने परमात्मा के नाम का सुमिरन करना ही सीखा है ॥ १ ॥ हे मेरे राम, मैं नहीं जानता कि मेरी हालत क्या होगी । हे मेरे मन तू परमात्मा के नाम का सुमिरन कर और संसार समुद्र से

तारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संनिआसी बिभूत लाइ देह सवारी ॥ पर त्रिअ तिआगु करी ब्रहमचारी ॥ मै मूरख हरि आस तुमारी ॥ २ ॥ खत्री करम करे सूरतणु पावै ॥ सूदु वैसु पर किरति कमावै ॥ मै मूरख हरि नामु छडावै ॥ ३ ॥ सभ तेरी स्रिसटि तूं आपि रहिआ समाई ॥ गुरमुखि नानक दे वडिआई ॥ मै अंधुले हरि टेक टिकाई ॥ ४ ॥ १ ॥ ३९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ निरगुण कथा कथा है हरि की ॥ भजु मिलि साधू संगति जन की ॥ तरु भउजलु अकथ कथा सुनि हरि की ॥ १ ॥ गोबिंद सतसंगति मेलाइ ॥ हरि रसु रसना राम गुन गाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो धन धिआवहि हरि हरि नामा ॥ तिन दासनि दास करहु हम रामा ॥ जन की सेवा ऊतम कामा ॥ २ ॥ जो हरि की हरि कथा सुणावै ॥ सो जनु हमरै मनि चिति भावै ॥ जन पग रेणु वडभागी पावै ॥ ३ ॥ संत जना सिउ प्रीति बनि आई ॥ जिन कउ लिखतु लिखिआ धुरि पाई ॥ ते जन नानक नामि समाई ॥ ४ ॥ २ ॥ ४० ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ माता प्रीति करे पुतु खाइ ॥ मीने प्रीति भई जलि नाइ ॥ सतिगुर प्रीति गुरसिख मुखि पाइ ॥ १ ॥ ते हरि जन हरि मेलहु हम पिआरे ॥ जिन मिलिआ दुख जाहि हमारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ मिलि बछरे गऊ प्रीति लगावै ॥ कामनि प्रीति जा पिरु घरि आवै ॥ हरि जन प्रीति जा हरि जसु गावै ॥ २ ॥ सारिंग प्रीति बसै जल धारा ॥ नरपति प्रीति माइआ देखि पसारा ॥ हरि जन प्रीति जपै निरंकारा ॥ ३ ॥ नर प्राणी प्रीति माइआ धनु खाटे ॥ गुरसिख प्रीति गुरु मिलै गलाटे ॥ जन नानक प्रीति साध पग चाटे ॥ ४ ॥ ३ ॥ ४१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ भीखक प्रीति भीख प्रभ पाइ ॥ भूखे प्रीति होवै अंनु खाइ ॥ गुरसिख प्रीति गुर मिलि आघाइ ॥ १ ॥ हरि दरसनु देहु हरि आस तुमारी ॥ करि किरपा लोच पूरि हमारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चकवी प्रीति सूरजु मुखि लागै ॥ मिलै पिआरे सभ दुख तिआगै ॥ गुरसिख प्रीति गुरू मुखि लागै ॥ २ ॥ बछरे प्रीति खीरु मुखि खाइ ॥ हिरदै बिगसै देखै माइ ॥ गुरसिख प्रीति गुरू मुखि लाइ ॥ ३ ॥ होरु सभ प्रीति माइआ मोहु काचा ॥ बिनसि जाइ कूरा कचु पाचा ॥ जन नानक

पार हो जा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संन्यासी देह को भभूत लगाकर सँवारता है और ब्रह्मचारी ने परायी स्त्री का त्याग किया हुआ है । हे प्रभु, मुझ मूर्ख को तो केवल एक तुझसे ही आशा है ॥ २ ॥ क्षत्रिय शौर्य के कार्य करता है और शूद्र एवं वैश्य दूसरों की सेवा करते हैं परन्तु मुझ मूर्ख को तो केवल हरि-नाम ही बचाएगा ॥ ३ ॥ सब तेरी ही रचना है और तू स्वयं ही उसमें विद्यमान है । हे नानक, वह गुरमुख को ही सम्मान देता है; मुझ अज्ञानी की टेक तो केवल प्रभु पर ही टिकी हुई है ॥ ४ ॥ १ ॥ ३९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ हरि-कथा अकथनीय एवं गुणातीत है । हे जीव, दौड़ कर साधु जनों की संगत में जा मिल और प्रभु की अवर्णनीय कथा को सुनकर संसार-सागर से पार हो जा ॥ १ ॥ हे प्रभु, मुझे सद्संगत से मिलाप करवाने की कृपा कर ताकि मेरी जीभ हरि-रस में रंगी हुई प्रभु-नाम का गुणानुवाद करती रहे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, जो व्यक्ति राम-नाम का सुमिरन करते हैं मुझे उनके दासों का भी दास बना दे । तेरे दासों की सेवा सब से उत्तम कार्य है ॥ २ ॥ जो व्यक्ति मुझे प्रभु की कथा-वार्ता सुनाता है वह मेरे मन-चित्त को बहुत अच्छा लगता है । ऐसे सेवकों के चरणों की धूलि कोई भाग्यशाली ही प्राप्त करता है । जिनका प्रारम्भ से ही लेख लिखा होता है उनका शान्त पुरुषों से प्रेम बना रहता है । हे नानक, ऐसे व्यक्ति ही प्रभु-नाम में लीन बने रहते हैं । गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ जब बेटा कुछ खाता है तो माँ को बड़ा आनन्द मिलता है । जल में डूब कर मछली को बहुत खुशी होती है । सद्गुरु को खुशी होती है जब कोई गुरु के सिक्ख को कुछ खिला पिला कर उसकी सेवा करता है ॥ हे मेरे प्यारे प्रभु, मुझे ऐसे प्रभु के सेवकों से मिला दे जिनको मिलने से मेरे दुख दूर हो जाएं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे बछड़े को मिलकर गाय उसे प्यार करती है और स्त्री को प्रियतम के घर वापस आने पर खुशी होती है उसी तरह से हरि-यश का गायन करने में प्रभु के सेवकों को आनन्द मिलता है ॥ २ ॥ पपीहे को बरसते हुए पानी में और राजा को धन-सम्पत्ति के फैलाव को देखकर खुशी मिलती है । वैसे ही प्रभु के सेवक को निरंकार परमात्मा का सुमिरन करने से खुशी मिलती है ॥ ३ ॥ धन-सम्पत्ति की कमाई करके प्रत्येक व्यक्ति को खुशी मिलती है परन्तु गुरु के सिक्ख को गुरु से गले मिलने पर ही आनन्द प्राप्त होता है । हे नानक, प्रभु के सेवक को किसी गुरमुख व्यक्ति के चरण चूमने से ही खुशी होती है ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ भिखारी को मालिक से भीख मिलने पर खुशी प्राप्त होती है और भूखे व्यक्ति को अन्न खाकर प्रसन्नता मिलती है । गुरु के सिक्ख को तब खुशी मिलती है जब वह गुरु से मिलकर मायावी तृष्णा की ओर से संतुष्ट हो जाता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, कृपा कर मुझे दर्शन देकर मेरी इच्छा को पूर्ण कर । मुझे केवल तुम्हारी ही सहायता की आशा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सूर्य को देखने पर चकवी को सुख मिलता है और अपने प्रियतम से मिलकर वह सब दुखों के दूर कर लेती है । गुरु के सिक्ख को तब खुशी मिलती है जब उसे गुरु का मुखमण्डल दिखाई देता है ॥ २ ॥ बच्चे को दूध पीकर खुशी मिलती है और माँ को देखकर उसका हृदय खिल उठता है । इसी प्रकार गुरु का दर्शन करके गुरु के सिक्ख को आनन्द मिलता है ॥ ३ ॥ अन्य सब खुशियाँ माया-मोह की है जो कि झूठी हैं, कच्ची हैं और नाशवान हैं । हे दास नानक,

प्रीति त्रिपति गुरु साचा ॥ ४ ॥ ४ ॥ ४२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ सतिगुर सेवा सफल है बणी ॥ जितु मिलि हरि नामु धिआइआ हरि धणी ॥ जिन हरि जपिआ तिन पीछै छूटी घणी ॥ १ ॥ गुरसिख हरि बोलहु मेरे भाई ॥ हरि बोलत सभ पाप लहि जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब गुरु मिलिआ तब मनु वसि आइआ ॥ धावत पंच रहे हरि धिआइआ ॥ अनदिनु नगरी हरि गुण गाइआ ॥ २ ॥ सतिगुर पग धूरि जिना मुखि लाई ॥ तिन कूड़ तिआगे हरि लिव लाई ॥ ते हरि दरगह मुख ऊजल भाई ॥ ३ ॥ गुर सेवा आपि हरि भावै ॥ क्रिसनु बलभद्रु गुर पग लगि धिआवै ॥ नानक गुरमुखि हरि आपि तरावै ॥ ४ ॥ ५ ॥ ४३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ हरि आपे जोगी डंडाधारी ॥ हरि आपे रवि रहिआ बनवारी ॥ हरि आपे तपु तापै लाइ तारी ॥ १ ॥ ऐसा मेरा रामु रहिआ भरपूरि ॥ निकटि वसै नाही हरि दूरि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि आपे सबदु सुरति धुनि आपे ॥ हरि आपे वेखै विगसै आपे ॥ हरि आपि जपाइ आपे हरि जापे ॥ २ ॥ हरि आपे सारिंग अंम्रितधारा ॥ हरि अंम्रितु आपि पीआवणहारा ॥ हरि आपि करे आपे निसतारा ॥ ३ ॥ हरि आपे बेड़ी तुलहा तारा ॥ हरि आपे गुरमती निसतारा ॥ हरि आपे नानक पावै पारा ॥ ४ ॥ ६ ॥ ४४ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ साहु हमारा तूं धणी जैसी तूं रासि देहि तैसी हम लेहि ॥ हरि नामु वणंजह रंग सिउ जे आपि दइआलु होइ देहि ॥ १ ॥ हम वणजारे राम के ॥ हरि वणजु करावै दे रासि रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लाहा हरि भगति धनु खटिआ हरि सचे साह मनि भाइआ ॥ हरि जपि हरि वखरु लदिआ जमु जागाती नेड़ि न आइआ ॥ २ ॥ होरु वणजु करहि वापारीए अनंत तरंगी दुखु माइआ ॥ ओइ जेहै वणजि हरि लाइआ फलु तेहा तिन पाइआ ॥ ३ ॥ हरि हरि वणजु सो जनु करे जिसु क्रिपालु होइ प्रभु देई ॥ जन नानक साहु हरि सेविआ फिरि लेखा मूलि न लेई ॥ ४ ॥ १ ॥ ७ ॥ ४५ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जिउ जननी गरभु पालती सुत की करि आसा ॥ वडा होइ धनु खाटि देइ करि भोग बिलासा ॥ तिउ हरि जन प्रीति हरि राखदा

जिसे सत्य–रूप गुरु मिल जाता है उसे ही वास्तविक आनन्द मिलता है क्योंकि उसे सन्तुष्टि प्राप्त हो जाती है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ४२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ सद्गुरु की सेवा लाभदायक हो जाती है क्योंकि इसके माध्यम से मालिक प्रभु के नाम का सुमिरन किया जाता है । जिन्होंने हरि के नाम का जाप किया है उनका अनुसरण कर अनेकों लोग मुक्त हो जाते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे भाई, गुरु के सिक्खो, प्रभु नाम का सुमिरन करो क्योंकि हरि–नाम के जाप से सब पाप दूर हो जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब गुरु मिल जाता है तब मन काबू में आ जाता है और प्रभु सुमिरन से ही इधर उधर दौड़ने वाली पाँचों ज्ञान–इन्द्रियां स्थिर एवं शान्त हो जाती हैं । अब इस शरीर के स्वामी प्रभु के हर रोज़ गुण गाये जाते हैं ॥ २ ॥ जिन्होंने सद्गुरु के चरणों की धूलि मुख पर लगा ली उन्होंने झूठ को छोड़कर प्रभु–चरणों में लौ लगा ली है । हे भाई, परलोक में उन्हीं का मुख उज्जवल होता है ॥ ३ ॥ परमात्मा को भी गुरु की सेवा अच्छी लगती है । कृष्ण और बलभद्र जैसे भी गुरु चरणों के माध्यम से हरि–नाम का सुमिरन करते थे । हे नानक, जो गुरमुख बन जाता है उसे परमात्मा स्वयं संसार–सागर से पार उतार लेता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ४३॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ डंडा धारण करने वाला योगी प्रभु स्वयं ही है और बनवारी रूप में सब में रमण करने वाला प्रभु स्वयं आप ही है । प्रभु स्वयं ही तपस्वी बनकर ध्यान एकाग्र करके तप साधना करने वाला है ॥ १ ॥ मेरा राम ऐसा है कि वह सब जगह व्याप्त है । वह प्रभु रूपी राम जीव के बहुत पास ही बसता है; वह दूर नहीं है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा स्वयं ही शब्द है, सुरति है और अनहत् ध्वनि भी है । परमात्मा स्वयं ही अपने कौतुक देख कर प्रसन्न बना रहता है । परमात्मा स्वयं ही सबके अन्तर्मन में स्थित होकर अपना जाप कर रहा है ॥२॥ परमात्मा स्वयं ही पपीहा है और वर्षा की धारा भी स्वयं ही है । परमात्मा स्वयं ही अमृत–रस है और स्वयं ही वह रस पिलाने वाला है । प्रभु स्वयं ही जीवों को पैदा करता है और स्वयं ही उनका उद्धार करता है ॥ ३ ॥ परमात्मा स्वयं ही नाव है, पतवार है और स्वयं ही पार ले जाने वाला है । प्रभु स्वयं ही गुरु की मति के अनुसार जीवों को चलाकर उन्हें बचाता है । हे नानक, परमात्मा स्वयं ही संसार–समुद्र से पार ले जाता है ॥ ४ ॥ ६ ॥ ४४ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ हे प्रभु, तू ही हमारा मालिक और साहूकार है और जैसी तू रास–पूँजी प्रदान करेगा वही हम लोग लेंगे । यदि तू कृपा करके अपने नाम की पूँजी हमें दे तो हम प्रेम पूर्वक तेरे नाम का ही लेन–देन कर लें ॥१॥ हे भाई, हम सभी जीव परमात्मा रूपी साहूकार के भेजे हुए व्यापारी हैं, वह स्वयं नाम की रास पूँजी देकर हम जीवों से व्यापार कार्य करवाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन्होंने प्रभु भक्ति रूपी धन कमाया है वे उस सत्य रूपी साहूकार के मन को अच्छे लगते हैं; जिन्होंने प्रभु का जाप करके प्रभु रूपी सौदे को लेकर लाद लिया है उनके पास कर लेने वाला यम नहीं आता ॥ २ ॥ जो अन्य प्रकार का व्यापार करते हैं वे माया प्रसूत विभिन्न प्रकार के दुखों को भोगते हैं । जीव के वश में कुछ नहीं है; जैसे व्यापार में परमात्मा ने उसे लगा दिया है उसे वैसा ही फल मिलता जाता है ॥ ३ ॥ जिसे प्रभु कृपा करके देता है परमात्मा के नाम के सौदे का व्यापार वही करता है । हे दास नानक, जिसने प्रभु रूपी साहूकार की सेवा भक्ति की है उससे वह साहूकार कभी भी लेखा जोखा नहीं माँगता ॥ ४ ॥ १ ॥ ७ ॥ ४५ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जैसे कोई माँ पुत्र–जन्म की आशा में अपने गर्भ की सम्भाल करती है और सोचती है कि बड़ा होकर यह धन कमाकर सुखपूर्ण जीवन के लिए उसे देगा वैसे ही प्रभु अपने सेवकों के साथ

दे आपि हथासा ॥ १ ॥ मेरे राम मै मूरख हरि राखु मेरे गुसईआ ॥ जन की उपमा तुझहि वडईआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मंदरि घरि आनंदु हरि हरि जसु मनि भावै ॥ सभ रस मीठे मुखि लगहि जा हरि गुण गावै ॥ हरि जनु परवारु सधारु है इकीह कुली सभु जगतु छडावै ॥ २ ॥ जो किछु कीआ सो हरि कीआ हरि की वडिआई ॥ हरि जीअ तेरे तूं वरतदा हरि पूज कराई ॥ हरि भगति भंडार लहाइदा आपे वरताई ॥ ३ ॥ लाला हाटि विहाझिआ किआ तिसु चतुराई ॥ जे राजि बहाले ता हरि गुलामु घासी कउ हरि नामु कढाई ॥ जनु नानकु हरि का दासु है हरि की वडिआई ॥ ४ ॥ २ ॥ ८ ॥ ४६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ किरसाणी किरसाणु करे लोचै जीउ लाइ ॥ हलु जोतै उदमु करे मेरा पुतु धी खाइ ॥ तिउ हरि जनु हरि हरि जपु करे हरि अंति छडाइ ॥ १ ॥ मै मूरख की गति कीजै मेरे राम ॥ गुर सतिगुर सेवा हरि लाइ हम काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लै तुरे सउदागरी सउदागरु धावै ॥ धनु खटै आसा करै माइआ मोहु वधावै ॥ तिउ हरि जनु हरि हरि बोलता हरि बोलि सुखु पावै ॥ २ ॥ बिखु संचै हटवाणीआ बहि हाटि कमाइ ॥ मोह झूठु पसारा झूठ का झूठे लपटाइ ॥ तिउ हरि जनि हरि धनु संचिआ हरि खरचु लै जाइ ॥ ३ ॥ इहु माइआ मोह कुटंबु है भाइ दूजै फास ॥ गुरमती सो जनु तरै जो दासनि दास ॥ जनि नानकि नामु धिआइआ गुरमुखि परगास ॥ ४ ॥ ३ ॥ ९ ॥ ४७ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ नित दिनसु राति लालचु करे भरमै भरमाइआ ॥ वेगारि फिरै वेगारीआ सिरि भारु उठाइआ ॥ जो गुर की जनु सेवा करे सो घर कै कंमि हरि लाइआ ॥ १ ॥ मेरे राम तोड़ि बंधन माइआ घर कै कंमि लाइ ॥ नित हरि गुण गावह हरि नामि समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नरु प्राणी चाकरी करे नरपति राजे अरथि सभ माइआ ॥ कै बंधै कै डानि लेइ कै नरपति मरि जाइआ ॥ धंनु धनु सेवा सफल सतिगुरू की जितु हरि हरि नामु जपि हरि सुखु पाइआ ॥ २ ॥ नित सउदा सूदु कीचै बहु भाति करि माइआ कै ताई ॥ जा लाहा देइ ता सुखु मने तोटै मरि जाई ॥ जो गुण साझी गुर सिउ करे नित नित सुखु पाई ॥ ३ ॥

अपने प्रेम को बलपूर्वक बनाए रहता है ॥ १ ॥ हे मेरे मालिक प्रभु, मुझ मूर्ख की रक्षा कर क्योंकि तेरे सेवक के सम्मान में तेरा ही बड़प्पन है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसको परमात्मा का गुणानुवाद अच्छा लगता है उसके हृदय रूपी घर में सदा आनन्द बना रहता है। प्रभु के गुण गाने पर सब प्रकार के मीठे रस उसके मुख में जा रहे प्रतीत होते हैं। प्रभु का सेवक अपने परिवार का आधार तो बनता ही है साथ ही साथ अपनी इक्कीस कुलों के संसार को भी मुक्त करा देता है ॥ १ ॥ जो कुछ संसार में कार्य रूप में दिखता है वह सब कारण रूप परमात्मा ने पैदा किया है। हे प्रभु, सभी जीव तेरे ही पैदा किए हुए हैं और तू ही इनमें कार्यशील है। परमात्मा स्वयं अपनी पूजा भक्ति करवा रहा है। अपनी भक्ति के भण्डार जीवों को दिखाता है और स्वयं ही उनमें बाँटता चला जाता है ॥ ३ ॥ खरीदा हुआ गुलाम भला अपने मालिक के सामने क्या चतुराई दिखा सकता है। मुझे तो तू यदि राज पर भी बिठा दे तो भी मैं प्रभु का गुलाम ही रहूँगा और यदि तू मुझे घसियारा बना दे तो भी मुझसे हरि-नाम रूपी घास निकलवाएगा अर्थात प्रत्येक अवस्था में मैं तेरा ही जाप करूँगा। हे भाई, दास नानक परमात्मा का गुलाम है और इसमें भी प्रभु का बड़प्पन ही है (कि मैं उसका गुलाम हूँ) ॥ ४ ॥ २ ॥ ८ ॥ ४६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ४ ॥ किसान खेती का काम मन लगाकर करता है। हल चलाता है, मेहनत करता है और इच्छा रखता है कि मेरे बेटे बेटियाँ इस फसल को खाएं। इसी प्रकार प्रभु का सेवक हरि का जाप करता है ताकि वह उस को अन्तिम समय में मुक्ति प्रदान कर दे ॥ १ ॥ हे मेरे राम, मुझ मूर्ख को ऐसी ऊँची बुद्धि प्रदान कर जिससे मैं सद्गुरु की सेवा के माध्यम से प्रभु में लीन बना रहूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सौदागर सौदागरी करने के लिए घोड़े लेकर निकल पड़ता है। वह धन कमाता है, अधिक आशाएं लगाता है और धन के साथ अपने मोह को बढ़ाता जाता है। उसी प्रकार प्रभु का दास प्रभु का सुमिरन करता है और नाम सुमिरन से आनन्दित होता ही रहता है ॥ २ ॥ दुकानदार दुकान में बैठकर कमाई करता है और भविष्य रूपी धन को इकट्ठा करता है ॥ उसके चारों ओर यह सब केवल मोह और झूठ का ही प्रसार है और वह झूठ में ही लीन बना रहता है। इसी प्रकार प्रभु के दास ने हरि-नाम रूपी धन इकट्ठा किया होता है जिसे वह जीवन यात्रा के खर्च के तौर पर लेकर जाता है ॥ ३ ॥ यह सब माया-मोह का प्रसार है जिसमें कुटुम्ब आदि के माध्यम से व्यक्ति द्वैतभाव में लीन होकर बसा रहता है। जो गुरु की मति लेकर गुरु के दासों का भी दास बन जाता है केवल वही इस माया के प्रसार को लांघकर पार हो जाता है। दास नानक ने भी गुरमुख बनकर एवं प्रभु के नाम के प्रकाश को प्राप्त कर उसके नाम का सुमिरन किया है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ९ ॥ ४७ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जो दिन-रात लालच करता हुआ भ्रमों में भागा फिरता है वह उस बेगारी की तरह है जो अन्यों का भार उठाकर जीवन को एक बेगार समझता है। जो व्यक्ति गुरु की सेवा करता है उसे परमात्मा ने उसके अपने काम अर्थात नाम-सुमिरन में लगा दिया है ॥ १ ॥ हे राम, माया के बन्धनों को तोड़कर हमें हमारे वास्तविक काम में लगा दे ताकि हम सब हरि-नाम में लीन होकर सदा हरि-गुण गाते रहें ॥ १ ॥ रहाउ ॥ केवल धन की खातिर जब कोई व्यक्ति किसी राजा की नौकरी करता है तो राजा कई बार उसकी गलती के लिए उसे कैद भी कर लेता है अथवा उसे सज़ा आदि भी दे देता है अथवा राजा जब स्वयं ही मर जाता है तो उस व्यक्ति की नौकरी समाप्त हो जाती है। परन्तु सद्गुरु परमात्मा की सेवा सदैव फलदायक और प्रशंसनीय है क्योंकि इस सेवा के माध्यम से व्यक्ति प्रभु-नाम का सुमिरन कर सदैव सुख पाता रहता है ॥ २ ॥ व्यक्ति धन आदि के लिए रोज़ कई किस्म के सामान खरीदता और बेचता है। उनसे यदि लाभ होता है तो उसके मन को सुख मिलता है परन्तु यदि घाटा होता है तो वह मरने जैसा हो जाता है। यदि गुरु के साथ प्रेम करके गुणों का व्यापार करे तो व्यक्ति को सदैव सुख मिलता रहता है ॥ ३ ॥

जितनी भूख अन रस साद है तितनी भूख फिरि लागै ॥ जिसु हरि आपि क्रिपा करे सो वेचे सिरु गुर आगै ॥ जन नानक हरि रसि त्रिपतिआ फिरि भूख न लागै ॥ ४ ॥ ४ ॥ १० ॥ ४८ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ हमरै मनि चिति हरि आस नित किउ देखा हरि दरसु तुमारा ॥ जिनि प्रीति लाई सो जाणता हमरै मनि चिति हरि बहुतु पिआरा ॥ हउ कुरबानी गुर आपणे जिनि विछुड़िआ मेलिआ मेरा सिरजनहारा ॥ १ ॥ मेरे राम हम पापी सरणि परे हरि दुआरि ॥ मतु निरगुण हम मेलै कबहूं अपुनी किरपा धारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमरे अवगुण बहुतु बहुतु है बहु बार बार हरि गणत न आवै ॥ तूं गुणवंता हरि हरि दइआलु हरि आपे बखसि लैहि हरि भावै ॥ हम अपराधी राखे गुर संगती उपदेसु दीओ हरि नामु छडावै ॥ २ ॥ तुमरे गुण किआ कहा मेरे सतिगुरा जब गुरु बोलह तब बिसमु होइ जाइ ॥ हम जैसे अपराधी अवरु कोई राखै जैसे हम सतिगुरि राखि लीए छडाइ ॥ तूं गुरु पिता तूंहै गुरु माता तूं गुरु बंधपु मेरा सखा सखाइ ॥ ३ ॥ जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥ हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥ धंनु धंनु गुरू नानक जन केरा जितु मिलिऐ चूके सभि सोग संतापे ॥ ४ ॥ ५ ॥ ११ ॥ ४९ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ कंचन नारी महि जीउ लुभतु है मोहु मीठा माइआ ॥ घर मंदर घोड़े खुसी मनु अन रसि लाइआ ॥ हरि प्रभु चिति न आवई किउ छूटा मेरे हरि राइआ ॥ १ ॥ मेरे राम इह नीच करम हरि मेरे ॥ गुणवंता हरि हरि दइआलु करि किरपा बखसि अवगण सभि मेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किछु रूपु नही किछु जाति नाही किछु ढंगु न मेरा ॥ किआ मुहु लै बोलह गुण बिहून नामु जपिआ न तेरा ॥ हम पापी संगि गुर उबरे पुंनु सतिगुर केरा ॥ २ ॥ सभु जीउ पिंडु मुखु नकु दीआ वरतण कउ पाणी ॥ अंनु खाणा कपड़ु पैनणु दीआ रस अनि भोगाणी ॥ जिनि दीए सु चिति न आवई पसू हउ करि जाणी ॥ ३ ॥ सभु कीता तेरा वरतदा तूं अंतरजामी ॥ हम जंत विचारे किआ करह सभु खेलु तुम सुआमी ॥ जन नानकु हाटि विहाझिआ हरि

अन्य रसों की भूख को स्वाद लेकर जितना तृप्त किया जाता है उतनी ही वह भूख और लगती है । जिस व्यक्ति पर परमात्मा कृपालु होता है वह अपना सिर अर्थात अपना सर्वस्व गुरु को अर्पण कर देता है । दास नानक तो प्रभु के नाम–रस से तृप्त हो चुका है; इसे अब भूख नहीं लगती ॥ ४ ॥ ४ ॥ १० ॥ ४८॥ गउड़ी बैरागणि महला ४॥ मेरे मन में हे प्रभु हमेशा ही यह इच्छा बनी रहती है कि कैसे भी मैं तुम्हारा दर्शन करूँ । जिस प्रभु ने मेरे अन्दर यह प्रीति जगाई है वही जानता है कि मेरे मन में प्रभु का प्रेम बहुत अधिक है । मैं अपने गुरु पर बलिहारी जाता हूँ जिसने बिछुड़ा हुआ सृजनहार प्रभु मुझे फिर मिला दिया है ॥ १ ॥ हे मेरे राम, मैं पापी तेरी शरण में आकर तेरे द्वार पर आ गिरा हूँ और यह आशा करता हूँ कि शायद कभी कृपा करके तू मेरे जैसे गुणहीन को अपने साथ मिला ले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, मेरे अवगुण अनेक हैं और बार–बार गिनने पर भी वे गिने नहीं जा सकते । तू गुणवान दयालु प्रभु है । हे प्रभु, यदि तुझे अच्छा लगे तो तू मुझे माफ कर दे । हम जैसे पापियों को प्रभु गुरु की संगत में रख कर उपदेश देता है और उसका नाम विषय–विकारों से मुक्त करदेता है ॥ २ ॥ हे प्रभु, मैं तेरे गुणों का क्या बखान करूँ क्योंकि जब मैं गुरु का जाप करता हूँ तब आश्चर्य (विस्माद्) का रूप हो जाता हूँ । मेरे जैसे पापियों को तेरे जैसे सच्चे गुरु रूपी परमात्मा ने छुड़ा लिया है । अन्य भला कौन इस प्रकार रक्षा कर सकता है । हे प्रभु, तू ही मेरा गुरु, मेरा पिता, माता, भाई और मित्र है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, जो मेरी हालत हुआ करती थी उस हालत को तू ही जानता है । मैं इधर–उधर भटकता फिरता था और कोई भी मेरी खोज–खबर लेने वाला नहीं था । परमात्मा रूपी गुरु के चरणों में लगकर मुझ कीट को तुम ही ने बड़प्पन प्रदान किया है । दास नानक का गुरु धन्य है जिसको मिलकर मेरे सारे शोक–सन्ताप समाप्त हो गए हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ११ ॥ ४९॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ मेरे प्राण स्त्री और कंचन के मोह में फंसे हुए हैं और धन सम्पदा का मोह मुझे मीठा लग रहा है ॥ घर, पक्के महल, घोड़े आदि को देखकर मुझे प्रसन्नता होती है और मेरा मन अन्य रसों में लगा हुआ है । हे प्रभु, हे मेरे राजन, मुझे परमात्मा के सुमिरन का कभी भी ध्यान नहीं आता । मैं इन सब के बन्धनों से कैसे छूटूँ ॥ १ ॥ हे मेरे राम, ऐसे मेरे नीच कर्म हैं; तू गुणवान दयालु है । मुझ पर कृपा कर और मेरे अवगुणों को क्षमा कर दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ न तो मेरे पास रूप है न तथाकथित ऊँची जाति है और न ही मेरा कोई जीने का ढंग है । मैं किस मुंह से बात करूँ क्योंकि मैंने कभी तेरे नाम का सुमिरन नहीं किया और मैं पूर्णतः गुण विहीन हूँ । यह सद्‌गुरु की कृपा ही है कि मुझ जैसा पापी गुरु के साथ रहकर पापों से बच गया है ॥ २ ॥ हे प्रभु, तूने मुझे प्राण, शरीर, मुँह, नाक, पानी आदि प्रयोग करने के लिए दिये हैं । खाने के लिए मुझे अन्न, पहनने के लिए कपड़ा एवं अन्य स्वादिष्ट पदार्थ भोगने के लिए दिए हैं परन्तु जिसने यह सब दिये हैं वह कभी भी चित्त में याद नहीं आता । फिर भी मैं पशु अपने आप को बड़ा मानता हूँ ॥ ३ ॥ हे प्रभु, यह सब तेरा ही किया धरा है और तू ही अन्तर्यामी है । हे स्वामी, हम जीवों के वश में भला क्या है क्योंकि यह सब खेल तो तुम्हारा ही है । तेरा दास नानक तो तेरी सद्‌संगत और तेरे सुन्दर नाम के बदले में बिका हुआ

गुलम गुलामी ॥ ४ ॥ ६ ॥ १२ ॥ ५० ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जिउ जननी सुतु जणि पालती राखै नदरि मझारि ॥ अंतरि बाहरि मुखि दे गिरासु खिनु खिनु पोचारि ॥ तिउ सतिगुरु गुरसिख राखता हरि प्रीति पिआरि ॥ १ ॥ मेरे राम हम बारिक हरि प्रभ के है इआणे ॥ धंनु धंनु गुरू गुरु सतिगुरु पाधा जिनि हरि उपदेसु दे कीए सिआणे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसी गगनि फिरंती ऊडती कपरे बागे वाली ॥ ओह राखै चीतु पीछै बिचि बचरे नित हिरदै सारि समाली ॥ तिउ सतिगुर सिख प्रीति हरि हरि की गुरु सिख रखै जीअ नाली ॥ २ ॥ जैसे काती तीस बतीस है विचि राखै रसना मास रतु केरी ॥ कोई जाणहु मास काती कै किछु हाथि है सभ वसगति है हरि केरी ॥ तिउ संत जना की नर निंदा करहि हरि राखै पैज जन केरी ॥ ३ ॥ भाई मत कोई जाणहु किसी कै किछु हाथि है सभ करे कराइआ ॥ जरा मरा तापु सिरति सापु सभु हरि कै वसि है कोई लागि न सकै बिनु हरि का लाइआ ॥ ऐसा हरि नामु मनि चिति निति धिआवहु जन नानक जो अंती अउसरि लए छडाइआ ॥ ४ ॥ ७ ॥ १३ ॥ ५१ ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जिसु मिलिऐ मनि होइ अनंदु सो सतिगुरु कहीऐ ॥ मन की दुबिधा बिनसि जाइ हरि परम पदु लहीऐ ॥ १ ॥ मेरा सतिगुरु पिआरा कितु बिधि मिलै ॥ हउ खिनु खिनु करी नमसकारु मेरा गुरु पूरा किउ मिलै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि किरपा हरि मेलिआ मेरा सतिगुरु पूरा ॥ इछ पुंनी जन केरीआ ले सतिगुर धूरा ॥ २ ॥ हरि भगति द्रिड़ावै हरि भगति सुणै तिसु सतिगुर मिलीऐ ॥ तोटा मूलि न आवई हरि लाभु निति द्रिड़ीऐ ॥ ३ ॥ जिस कउ रिदै विगासु है भाउ दूजा नाही ॥ नानक तिसु गुर मिलि उधरै हरि गुण गावाही ॥ ४ ॥ ८ ॥ १४ ॥ ५२ ॥ महला ४ गउड़ी पूरबी ॥ हरि दइआलि दइआ प्रभि कीनी मेरै मनि तनि मुखि हरि बोली ॥ गुरमुखि रंगु भइआ अति गूड़ा हरि रंगि भीनी मेरी चोली ॥ १ ॥ अपुने हरि प्रभ की हउ गोली ॥ जब हम हरि सेती मनु मानिआ करि दीनो जगतु सभु गोल अमोली ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करहु बिबेकु संत जन भाई खोजि हिरदै देखि ढंढोली ॥ हरि हरि रूपु सभ जोति

तेरे गुलामों का भी गुलाम है ॥ ४ ॥ ६ ॥ १२ ॥ ५० ॥ गउड़ी बैरागणि महला ४ ॥ जैसे माँ पुत्र को जन्म देकर अपनी नजर के सामने उसका पालन पोषण करती है; उसको अन्दर–बाहर आती जाती पुचकारती भी है और उसके मुख में खाना भी देती रहती है, उसी प्रकार सद्गुरु गुरसिख को अपना प्यार देकर उसकी सम्भाल करता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, हम तो तेरे अनजान बच्चे हैं। वह गुरु धन्य धन्य है जिसने सद्गुरु के रूप में उपदेशक बनकर परमात्मा का उपदेश देकर हमें सयाने बना दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आसमान में श्वेत परों वाली कूंज उड़ती जाती है परन्तु उसका मन पीछे छोड़े हुए बच्चों में लगा रहता है और हृदय में उनकी याद को सम्भाले रहती है। इसी प्रकार गुरु और सिक्ख का प्रेम है। गुरु अपने सिक्खों को प्रभु–प्रीति देकर उन्हें सदैव अपने प्राणों के साथ बनाए रखता है। जिस प्रकार तीस–बत्तीस दाँतों वाली कैंची के बीच रक्त और माँस की बनी हुई जीभ को सम्भाला जाता है तो किसी को यह नहीं मानना चाहिए कि यह जीभ अथवा कैंची के हाथ में है। यह सब तो प्रभु के ही वश में है। इसी प्रकार लोग तो शान्त पुरुषों की निन्दा करते हैं परन्तु प्रभु उनके सम्मान को बनाए रखता है ॥ ३ ॥ हे भाई, यह कोई मत जानो कि किसी के भी कुछ हाथ में है। केवल प्रभु ही सब कुछ करता–कराता है। बुढ़ापा, मौत एवं शरीर के अन्य ताप तथा दुःख कलेश परमात्मा के वश में ही है। परमात्मा द्वारा लगाए हुए ही रोग लगते हैं अन्यथा कोई रोग जीव को लग नहीं सकता। हे दास नानक, जो हरि–नाम अन्तिम समय में बन्धन मुक्त कर देता है उसका ही अपने मन, चित्त में सुमिरन करते रहो ॥ ४ ॥ ७ ॥ १३ ॥ ५१ ॥ गउड़ी बैरागणी महला ४ ॥ जिसे मिलने पर मन आनन्दित हो उठे, मन की दुविधा नष्ट हो जाए और परमात्मा रूपी परम पद प्राप्त हो जाए उसे ही सद्गुरु कहा जाता है ॥ १ ॥ प्यारा सद्गुरु किस युक्ति से मिल सकता है ? मैं हर क्षण उस व्यक्ति के सामने प्रणाम करता हूँ जो मुझे यह बता दे कि पूर्ण गुरु से कैसे मिला जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु ने कृपा करके जिस व्यक्ति को गुरु से मिला दिया है सद्गुरु की चरण धूलि लेकर उस सेवक की इच्छा पूरी हो गई है ॥ २ ॥ ऐसे सद्गुरु को मिलते रहना चाहिए जो हरि–भक्ति को मन में बिठा देता है और हरि–भक्ति की कथा–वार्ता ही सुनता है। ऐसे सद्गुरु रूपी परमात्मा को मिलने से कभी भी घाटा नहीं पड़ता और सदैव लाभ ही लाभ बना रहता है ॥ ३ ॥ जिसका हृदय खिला हुआ है और जो द्वैत भाव वाला नहीं है, हे नानक, ऐसे गुरु को मिलकर उद्धार होता है क्योंकि वह प्रभु का गुणानुवाद करवाता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ १४ ॥ ५२ ॥ महला ४ गउड़ी पूरबी ॥ दयालु प्रभु ने मेरे ऊपर कृपा की है और मेरे मन में, तन में, मुख में प्रभु के गुणानुवाद की बोली स्थित करवा दी है। गुरमुख बनकर प्रभु–नाम के रंग से मेरा अन्तर्मन भीग उठा है और प्रभु के प्रेम का रंग और गाढ़ा हो गया है ॥ १ ॥ मैं अपने प्रभु की दासी हूँ और जब मेरा मन परमात्मा के सुमिरन में लग गया तो परमात्मा ने सम्पूर्ण जगत को मेरा निशुल्क दास बना दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे शान्त पुरुषो, तुम सब अपने हृदय में खोज कर विचार करो तो तुम पाओगे कि सब में परमात्मा की ही ज्योति है और

सबाई हरि निकटि वसै हरि कोली ॥ २ ॥ हरि हरि निकटि वसै सभ जग कै अपरंपर पुरखु अतोली ॥ हरि हरि प्रगटु कीओ गुरि पूरै सिरु वेचिओ गुर पहि मोली ॥ ३ ॥ हरि जी अंतरि बाहरि तुम सरणागति तुम वड पुरख वडोली ॥ जनु नानकु अनदिनु हरि गुण गावै मिलि सतिगुर गुर वेचोली ॥ ४ ॥ १ ॥ १५ ॥ ५३ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ जगजीवन अपरंपर सुआमी जगदीसुर पुरख बिधाते ॥ जितु मारगि तुम प्रेरहु सुआमी तितु मारगि हम जाते ॥ १ ॥ राम मेरा मनु हरि सेती राते ॥ सतसंगति मिलि राम रसु पाइआ हरि रामै नामि समाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि हरि नामु हरि हरि जगि अवखधु हरि हरि नामु हरि साते ॥ तिन के पाप दोख सभि बिनसे जो गुरमति राम रसु खाते ॥ २ ॥ जिन कउ लिखतु लिखे धुरि मसतकि ते गुर संतोख सरि नाते ॥ दुरमति मैलु गई सभ तिन की जो राम नाम रंगि राते ॥ ३ ॥ राम तुम आपे आपि आपि प्रभु ठाकुर तुम जेवड अवरु न दाते ॥ जनु नानकु नामु लए तां जीवै हरि जपीऐ हरि किरपा ते ॥ ४ ॥ २ ॥ १६ ॥ ५४ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ करहु क्रिपा जगजीवन दाते मेरा मनु हरि सेती राचे ॥ सतिगुरि बचनु दीओ अति निरमलु जपि हरि हरि हरि मनु माचे ॥ १ ॥ राम मेरा मनु तनु बेधि लीओ हरि साचे ॥ जिह काल कै मुखि जगतु सभु ग्रसिआ गुर सतिगुर कै बचनि हरि हम बाचे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन कउ प्रीति नाही हरि सेती ते साकत मूड़ नर काचे ॥ तिन कउ जनमु मरणु अति भारी विचि विसटा मरि मरि पाचे ॥ २ ॥ तुम दइआल सरणि प्रतिपालक मोकउ दीजै दानु हरि हम जाचे ॥ हरि के दास दास हम कीजै मनु निरति करे करि नाचे ॥ ३ ॥ आपे साह वडे प्रभ सुआमी हम वणजारे हहि ता चे ॥ मेरा मनु तनु जीउ रासि सभ तेरी जन नानक के साह प्रभ साचे ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७ ॥ ५५ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ तुम दइआल सरब दुख भंजन इक बिनउ सुनहु दे काने ॥ जिस ते तुम हरि जाने सुआमी सो सतिगुरु मेलि मेरा प्राने ॥ १ ॥ राम हम सतिगुर पारब्रहम करि माने ॥ हम मूड़ मुगध असुध मति होते गुर सतिगुर कै बचनि हरि हम जाने ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जितने रस अन रस

परमात्मा प्रत्येक जीव के अत्यन्त निकट ही विद्यमान रहता है ॥ २ ॥ वह अपरंपार एवं अतुल्य परमात्मा सारे संसार के साथ और पास में ही बसता है । पूर्ण गुरु ने मेरा परमात्मा से साक्षात्कार करवाया है । ऐसे गुरु के पास मोल के रूप में मैंने अपना सिर बेच दिया है अर्थात बदले में उसे जीवन अर्पण कर दिया है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, अन्दर बाहर तुम ही हो; तुम महानतम हो और मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ । सद्‌गुरु के माध्यम से यह दास नानक हर रोज़ प्रभु के ही गुण गाता रहता है ॥ ४ ॥ १ ॥ १५ ॥ ५३ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हे जगत के जीवन, अपरंपार, स्वामी, जगदीश्वर एवं विधाता प्रभु, तुम जिस मार्ग पर चलने के लिए प्रेरणा दोगे हम उसी मार्ग पर जाएंगे ॥ १ ॥ हे राम, मेरा मन तुझमें रंगा रहे। जिन्होंने सद्संगत में बैठकर राम–रस को पा लिया है वे सदैव परमात्मा के नाम में ही लीन बने रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु का नाम ही इस जगत में औषधि है और प्रभु–नाम ही शान्ति प्रदान करने वाला है । जो गुरमति रूपी राम–रस का सेवन करते हैं उनके सभी पाप और दोष विनष्ट हो जाते हैं ॥ २ ॥ जिनके मस्तक पर प्रारम्भ से ही लिखा हुआ है वे गुरु रूपी संतुष्टि के सरोवर में स्नान करते हैं अर्थात उनका जीवन सन्तोष वाला हो जाता है । जो प्रभु–नाम के रंग में रंगे जाते हैं उनकी दुर्मति रूपी मैल निकल जाती है ॥ ३ ॥ हे परमात्मा, तुम स्वयं ही सबके मालिक हो और तुम्हारे जैसा अन्य कोई दाता नहीं है । दास नानक जब परमात्मा के नाम का सुमिरन करता है तो जीवित बना रहता है परन्तु प्रभु–नाम का जाप भी उसी की कृपा से ही हो सकता है ॥४॥२॥१६॥५४॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हे संसार के जीवन–दाता प्रभु, मुझ पर कृपा करो ताकि मेरा मन तेरी याद में लीन बना रहे । सद्‌गुरु ने मुझे बहुत ही निर्मल उपदेश दिया है और अब मेरा मन प्रभु–नाम का सुमिरन करके अत्यन्त प्रसन्न है ॥ १ ॥ हे राम, तुमने मेरे मन और तन को अपने चरणों में लगा लिया है । सारा संसार जिस काल के मुख में जाता रहता है, सद्‌गुरु के उपदेश के फलस्वरूप हे प्रभु, मैं उस काल से बच गया हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिन्हें प्रभु के साथ प्रेम नहीं है वे व्यक्ति कच्चे हैं और प्रभु से टूटे हुए हैं । उनका जीवन और मरण अत्यन्त संकटमय होता है और वे गन्दगी में ही मर–मर कर ख्वार होते हैं ॥ २ ॥ हे हरि, तुम दयालु होकर शरणागत की रक्षा करने वाले हो मैं तुझसे हरि–नाम के दान की याचना करता हूँ । मुझे अपने दासों का दास बनाए रखो ताकि मेरा मन प्रसन्न होकर सदैव खुशी में नाचता रहे ॥ ३ ॥ प्रभु स्वयं ही बड़ा साहूकार है और हम सब जीव उस बड़े साहूकार के भेजे हुए छोटे व्यापारी है । हे दास नानक के सदैव स्थिर साहूकार प्रभु, मेरा मन, तन एवं प्राण सब तेरी ही दी हुई रासपूंजी है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७ ॥ ५५ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ सर्वदुखों को दूर करने वाले दयालु प्रभु, तुम मेरी एक विनती जरा ध्यान लगाकर सुनो । मुझे ऐसा सद्‌गुरु मिलवा दो जिसके माध्यम से तुम जाने जा सकते हो ॥ १ ॥ हे राम, हमने सद्‌गुरु को ही परब्रहम के रूप में माना है क्योंकि हम मूर्खों, मलीन बुद्धि वालों ने सद्‌गुरु के उपदेश के माध्यम से ही हरि को जान लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमने जितने भी खाद्य, अखाद्य देखें हैं

हम देखे सभ तितने फीक फीकाने ॥ हरि का नामु अंम्रित रसु चाखिआ मिलि सतिगुर मीठ रस गाने ॥ २ ॥ जिन कउ गुरु सतिगुरु नही भेटिआ ते साकत मूड़ दिवाने ॥ तिन के करमहीन धुरि पाए देखि दीपकु मोहि पचाने ॥ ३ ॥ जिन कउ तुम दइआ करि मेलहु ते हरि हरि सेव लगाने ॥ जन नानक हरि हरि हरि जपि प्रगटे मति गुरमति नामि समाने ॥ ४ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ५६ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ मेरे मन सो प्रभु सदा नालि है सुआमी कहु किथै हरि पहु नसीऐ ॥ हरि आपे बखसि लए प्रभु साचा हरि आपि छडाए छुटीऐ ॥ १ ॥ मेरे मन जपि हरि हरि हरि मनि जपीऐ ॥ सतिगुर की सरणाई भजि पउ मेरे मना गुर सतिगुर पीछै छुटीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे मन सेवहु सो प्रभ स्रब सुखदाता जितु सेविऐ निज घरि वसीऐ ॥ गुरमुखि जाइ लहहु घरु अपना घसि चंदनु हरि जसु घसीऐ ॥ २ ॥ मेरे मन हरि हरि हरि हरि हरि जसु ऊतमु लै लाहा हरि मनि हसीऐ ॥ हरि हरि आपि दइआ करि देवै ता अंम्रितु हरि रसु चखीऐ ॥ ३ ॥ मेरे मन नाम बिना जो दूजै लागे ते साकत नर जमि घुटीऐ ॥ ते साकत चोर जिना नामु विसारिआ मन तिन कै निकटि न भिटीऐ ॥ ४ ॥ मेरे मन सेवहु अलख निरंजन नरहरि जितु सेविऐ लेखा छुटीऐ ॥ जन नानक हरि प्रभि पूरे कीए खिनु मासा तोलु न घटीऐ ॥ ५ ॥ ५ ॥ १९ ॥ ५७ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हमरे प्रान वसगति प्रभ तुमरै मेरा जीउ पिंडु सभ तेरी ॥ दइआ करहु हरि दरसु दिखावहु मेरै मनि तनि लोच घणेरी ॥ १ ॥ राम मेरै मनि तनि लोच मिलण हरि केरी ॥ गुर क्रिपालि क्रिपा किंचत गुरि कीनी हरि मिलिआ आइ प्रभु मेरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो हमरै मन चिति है सुआमी सा बिधि तुम हरि जानहु मेरी ॥ अनदिनु नामु जपी सुखु पाई नित जीवा आस हरि तेरी ॥ २ ॥ गुरि सतिगुरि दातै पंथु बताइआ हरि मिलिआ आइ प्रभु मेरी ॥ अनदिनु अनदु भइआ वडभागी सभ आस पुजी जन केरी ॥ ३ ॥ जगंनाथ जगदीसुर करते सभ वसगति है हरि केरी ॥ जन नानक सरणागति आए हरि राखहु पैज जन केरी ॥ ४ ॥ ६ ॥ २० ॥ ५८ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ इहु

सब फीके और बेकार हैं । सद्‌गुरु को मिलकर गन्ने को समान मीठा हरि–नाम का अमृत रस हमने चख लिया है ॥ २ ॥ जिनको सद्‌गुरु नहीं मिला है वे प्रभु से टूटे हुए मूर्ख एवं दीवाने लोग हैं । वे भाग्यहीन लोग हैं जिनके भाग्य में परमात्मा ने ही ऐसे लेख लिखे हैं कि वे उसी तरह धन सम्पदा के मोह में जलते रहते हैं जैसे दीपक को देखकर मोह वश पतंगा जल जाता है ॥ ३ ॥ जिन्हें दया करके तुम मिला देते हो वे ही प्रभु के सुमिरन में लगे रहते हैं । हे दास नानक, वे परमात्मा के नाम का जाप करते हुए संसार में प्रकट बने रहते हैं और गुरमति के माध्यम से प्रभु नाम में लीन रहते हैं ॥ ४ ॥ ४ ॥ १८ ॥ ५६ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हे मेरे मन, तू प्रभु के पास से भागकर कहाँ जाएगा क्योंकि वह स्वामी परमात्मा सदैव तेरे साथ बना हुआ है । वह सत्य–प्रभु स्वयं ही कृपा करता है और उसी के द्वारा छुड़ाये जाने पर जीव आवागमन से छूटता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, सदा हरि–नाम का जाप कर । सद्‌गुरु की शरण में चला जा क्योंकि गुरु की शरण में आ जाने पर ही व्यक्ति तमाम बन्धनों से मुक्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरे मन, सदैव सर्व सुखदाता प्रभु का ही सुमिरन करना चाहिए ताकि अपने वास्तविक घर (निज स्वरूप) में बसा जा सके । गुरमुख बनकर अपना वास्तविक घर ढूँढ लो और इस प्रकार हरि यश में लीन होकर ऐसे सुगन्धित बन जाओ जैसे चन्दन घिसने पर और सुगन्धित हो जाता है ॥ २ ॥ हे मेरे मन, प्रभु गुणानुवाद सबसे श्रेष्ठ है और हरि–नाम का लाभ ही आध्यात्मिक तौर पर व्यक्ति को हंसाता है अर्थात प्रसन्न करता है । जब प्रभु स्वयं दयालु होकर देता है तभी हरि रस रूपी अमृत का पान किया जा सकता है ॥ ३ ॥ हे मेरे मन, नाम विहीन होकर जो द्वैत भाव में लगे हुए हैं वे प्रभु से टूटे हुए व्यक्ति हैं और यम उन्हें ही दबाएगा । प्रभु–नाम को विस्मृत करने वाले प्रभु से टूटे हुए चोर हैं । हे मेरे मन, उनका तो स्पर्श भी नहीं करना चाहिए ॥ ४ ॥ हे मेरे मन, उस अलख निरंजन नरसिंह रूपी परमात्मा का सुमिरन करना चाहिए जिसके सुमिरन से व्यक्ति सब गणनाओं से बच जाता है । हे दास नानक, जिन को प्रभु ने पूर्णतः शुद्ध जीवन वाला बना दिया है उनके आध्यात्मिक जीवन में एक तोला क्या एक माशा भर भी दुर्बलता नहीं आती ॥ ५ ॥ ५ ॥ १९ ॥ ५७ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हे प्रभु, हमारे प्राण तुम्हारे ही वश में हैं और मेरा शरीर और जीभ सब तेरे ही हैं । मेरे मन तन में बहुत प्रबल इच्छा है कि हे प्रभु दया करके मुझे दर्शन दे दो ॥१॥ हे राम, तुझसे मिलने की मेरी तीव्र इच्छा है । कृपालु होकर गुरु ने थोड़ी सी कृपा की और मेरा हरि–प्रभु से मेल हो गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे स्वामी, जो मेरे मन और चित्त में है मेरी उस अवस्था को तुम जानते ही हो । मैं हर रोज प्रभु–नाम का सुमिरन करके सुख प्राप्त करूँ और केवल तुम्हारी ही आशा में सदैव आध्यात्मिक रूप से जीवित बना रहूँ ॥ २ ॥ सद्‌गुरु दाता ने मुझे ऐसा रास्ता बताया है कि मेरा प्रभु मुझसे आन मिला है । अब रोज़ आनन्द का वातावरण बना रहता है और बड़े भाग्य से तेरे इस दास की आशा पूर्ण हो गयी है ॥ ३ ॥ हे जगत के नाथ, जगदीश्वर, कर्त्ता प्रभु, यह सब कुछ तेरे ही वश में है। दास नानक, हे हरि, तेरी शरण में आया है और तू मुझ दास की लाज रख ॥ ४ ॥ ६ ॥ २० ॥ ५८ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ यह मन एक क्षण के लिए भी नहीं टिकता और

मनूआ खिनु न टिकै बहु रंगी दह दह दिसि चलि चलि हाढे ॥ गुरु पूरा पाइआ वडभागी हरि मंत्रु दीआ मनु ठाढे ॥ १ ॥ राम हम सतिगुर लाले कांढे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमरै मसतकि दागु दगाना हम करज गुरू बहु साढे ॥ परउपकारु पुंनु बहु कीआ भउ दुतरु तारि पराढे ॥ २ ॥ जिन कउ प्रीति रिदै हरि नाही तिन कूरे गाढन गाढे ॥ जिउ पाणी कागदु बिनसि जात है तिउ मनमुख गरभि गलाढे ॥ ३ ॥ हम जानिआ कछू न जानह आगै जिउ हरि राखै तिउ ठाढे ॥ हम भूल चूक गुर किरपा धारहु जन नानक कुतरे काढे ॥ ४ ॥ ७ ॥ २१ ॥ ५९ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ कामि करोधि नगरु बहु भरिआ मिलि साधू खंडल खंडा हे ॥ पूरबि लिखत लिखे गुरु पाइआ मनि हरि लिव मंडल मंडा हे ॥ १ ॥ करि साधू अंजुली पुंनु वडा हे ॥ करि डंडउत पुनु वडा हे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साकत हरि रस सादु न जानिआ तिन अंतरि हउमै कंडा हे ॥ जिउ जिउ चलहि चुभै दुखु पावहि जमकालु सहहि सिरि डंडा हे ॥ २ ॥ हरि जन हरि हरि नामि समाणे दुखु जनम मरण भव खंडा हे ॥ अबिनासी पुरखु पाइआ परमेसरु बहु सोभ खंड ब्रहमंडा हे ॥ ३ ॥ हम गरीब मसकीन प्रभ तेरे हरि राखु राखु वड वडा हे ॥ जन नानक नामु अधारु टेक है हरि नामे ही सुखु मंडा हे ॥ ४ ॥ ८ ॥ २२ ॥ ६० ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ इसु गड़ महि हरि राम राइ है किछु सादु न पावै धीठा ॥ हरि दीन दइआलि अनुग्रहु कीआ हरि गुर सबदी चखि डीठा ॥ १ ॥ राम हरि कीरतनु गुर लिव मीठा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि अगमु अगोचरु पारब्रहमु है मिलि सतिगुर लागि बसीठा ॥ जिन गुर बचन सुखाने हीअरै तिन आगै आणि परीठा ॥ २ ॥ मनमुख हीअरा अति कठोरु है तिन अंतरि कार करीठा ॥ बिसीअर कउ बहु दूधु पीआईऐ बिखु निकसै फोलि फुलीठा ॥ ३ ॥ हरि प्रभ आनि मिलावहु गुरु साधू घसि गरुड़ु सबदु मुखि लीठा ॥ जन नानक गुर के लाले गोले लगि संगति करूआ मीठा ॥ ४ ॥ ९ ॥ २३ ॥ ६१ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हरि हरि अरथि सरीरु हम बेचिआ पूरे गुर कै आगे ॥ सतिगुर दातै नामु दिड़ाइआ मुखि मसतकि भाग सभागे ॥ १ ॥ राम

अनेकों रंगों में रंगा हुआ दसों दिशाओं में घूम घूम कर टक्कर मारता रहता है । बड़े भाग्य से पूर्ण गुरु मिला, उसने प्रभु–नाम का मन्त्र दिया और यह मन शान्त होकर टिक गया है ॥ १ ॥ हे राम, मैं सद्गुरु का सेवक कहलाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूर्ण गुरु ने बहुत परोपकार करके मुझे इस संसार सागर से पार कर दिया है । इस सागर से पार होना बहुत ही कठिन कार्य था । गुरु के उपकार का यह कर्ज इकट्ठा होता ही गया जिसको में उतार नहीं सका और बदले में मेरे माथे पर गुरु के सेवक होने का निशान दाग दिया गया है ॥ २ ॥ जिनके हृदय में प्रभु–प्रीति नहीं है उनके बनाए हुए सभी सम्बन्ध एवं युक्तियाँ झूठी हैं । जैसे पानी में पड़ा रहने वाला कागज नष्ट हो जाता है वैसे ही मनमुख व्यक्ति योनियों में पड़ा रहकर गलता मरता रहता है ॥ ३ ॥ न तो हमने पहले कुछ जाना था और न ही कुछ आगे की जानते हैं; हमें तो जैसे प्रभु रखेगा हम वैसे ही बने रहेंगे । दास नानक कहता है कि हे गुरु हमारी भूल–चूक को न देखकर हम पर कृपा करो क्योंकि हम आपके दरवाज़े के कूकर(कूत्ते) कहलाते हैं ॥ ४ ॥ ७ ॥ २१ ॥ ५९ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ मनुष्य का शरीर रूपी नगर काम और क्रोध के साथ भरा रहता है । गुरु के माध्यम से काम, क्रोध का भेदन किया जा सकता है। पूर्वजन्मों में किए हुए कर्मो के संयोगवश गुरु मिल जाता है और मन में परमात्मा की लौ लग जाती है ॥ १ ॥ हे भाई, गुरु के आगे हाथ जोड़ क्योंकि यही भला काम है । गुरु के आगे नतमस्तक हो जा क्योंकि यही नेक काम है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो लोग परमात्मा से टूटे हुए हैं वे उसके नाम के रस को समझ नहीं सकते क्योंकि उनके मन में अहंकार रूपी काँटा गड़ा हुआ होता है ॥ जैसे–जैसे वे चलते हैं अर्थात सांसारिक व्यवहार में लीन होते हैं, यह अहम् का काँटा और अधिक चुभना शुरु हो जाता है । वे दुख पाते हैं और अपने सिर पर सदा ही यम दण्ड के डर को झेलते रहते हैं ॥ २ ॥ दूसरी ओर परमात्मा के प्यारे जीव परमात्मा के नाम में लीन बने रहते हैं; उनका संसार का आवागमन का दुख कट जाता है । उन्हें अविनाशी एवं सर्वव्यापक परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है और विश्व के सभी खण्डों ब्रह्माण्डों में उनकी शोभा फैल जाती है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, हम तेरे द्वार पर खड़े बहुत ही तुच्छ जीव है, तू ही सबसे बड़ा सहायक है; तू विकारों से हमारी रक्षा कर । हे प्रभु, तेरे दास नानक को तेरे नाम का ही आसरा है । तेरा नाम ही एक हमारी टेक है क्योंकि तेरे नाम में लीन होने पर ही सुख प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ २२ ॥ ६० ॥ गउड़ी पूरबी महला ४॥ इस शरीर रूपी किले में परमात्मा रूपी राजा बसता है परन्तु नीच व्यक्ति को परमात्मा के मिलाप का कोई अनुभव नहीं होता । जिस व्यक्ति पर दीन दयालु परमात्मा ने अनुग्रह किया है उसने शब्द–गुरु के माध्यम से प्रभु–नाम के रस को चखकर देख लिया है ॥ १ ॥ गुरु चरणों में लीन होकर प्रभु का गुणानुवाद किया जाना चाहिए क्योंकि यही सबसे मीठा रस है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा अगम्य, अगोचर परब्रह्म है और सद्गुरु रूपी वकील के माध्यम से ही प्राप्त होता है । जिनको गुरु के वचन हृदय में प्यारे लगते हैं गुरु उनके आगे परमात्मा का नाम–अमृत परोस देता है ॥ २ ॥ मनमुख व्यक्ति का हृदय अत्यन्त कठोर और अन्दर से काला–कलूटा बना रहता है । जैसे साँप को बहुत दूध पिलाने पर भी उसके अन्दर से विष ही निकलता है उसी तरह मनमुख के हृदय को भी देखने जाँचने पर उसमें से बुराई का विष ही निकलेगा ॥ ३ ॥ हे प्रभु, मुझे साधु गुरु से मिला दे ताकि मैं शब्द–गुरु को अपने मुँह में धारण करूँ और मेरे अन्दर से विकारों का विष दूर हो जाए । दास नानक कहता है कि हम गुरु के सेवक हैं और गुरु की संगत में बैठकर हमारा कड़वा स्वभाव मीठा हो जाता है ॥ ४ ॥ ९ ॥ २३ ॥ ६१ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ परमात्मा की प्राप्ति के लिए मैंने अपने शरीर को गुरु के आगे बेच दिया है । दाता रूपी सद्गुरु ने मेरे हृदय में हरि नाम को पक्का कर दिया है और मेरे मुख और मस्तक के भाग्य के लेख जगने पर मैं भाग्यशाली हो गया हूँ ॥ १ ॥ हे भाई,

गुरमति हरि लिव लागे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घटि घटि रमईआ रमत राम राइ गुर सबदि गुरू लिव लागे ॥ हउ मनु तनु देवउ काटि गुरू कउ मेरा भ्रमु भउ गुर बचनी भागे ॥ २ ॥ अंधिआरै दीपक आनि जलाए गुर गिआनि गुरू लिव लागे ॥ अगिआनु अंधेरा बिनसि बिनासिओ घरि वसतु लही मन जागे ॥ ३ ॥ साकत बधिक माइआधारी तिन जम जोहनि लागे ॥ उन सतिगुर आगै सीसु न बेचिआ ओइ आवहि जाहि अभागे ॥ ४ ॥ हमरा बिनउ सुनहु प्रभ ठाकुर हम सरणि प्रभू हरि मागे ॥ जन नानक की लज पाति गुरू है सिरु बेचिओ सतिगुर आगे ॥ ५ ॥ १० ॥ २४ ॥ ६२ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हम अहंकारी अहंकार अगिआन मति गुरि मिलिऐ आपु गवाइआ ॥ हउमै रोगु गइआ सुखु पाइआ धनु धंनु गुरू हरि राइआ ॥ १ ॥ राम गुर कै बचनि हरि पाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरै हीअरै प्रीति राम राइ की गुरि मारगु पंथु बताइआ ॥ मेरा जीउ पिंडु सभु सतिगुर आगै जिनि विछुड़िआ हरि गलि लाइआ ॥ २ ॥ मेरै अंतरि प्रीति लगी देखन कउ गुरि हिरदे नालि दिखाइआ ॥ सहज अनंदु भइआ मनि मोरै गुर आगै आपु बेचाइआ ॥ ३ ॥ हम अपराध पाप बहु कीने करि दुसटी चोर चुराइआ ॥ अब नानक सरणागति आए हरि राखहु लाज हरि भाइआ ॥ ४ ॥ ११ ॥ २५ ॥ ६३ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ गुरमति बाजै सबदु अनाहदु गुरमति मनूआ गावै ॥ वडभागी गुर दरसनु पाइआ धनु धंनु गुरू लिव लावै ॥ १ ॥ गुरमुखि हरि लिव लावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हमरा ठाकुरु सतिगुरु पूरा मनु गुर की कार कमावै ॥ हम मलि मलि धोवह पाव गुरू के जो हरि हरि कथा सुनावै ॥ २ ॥ हिरदै गुरमति राम रसाइणु जिहवा हरि गुण गावै ॥ मन रसकि रसकि हरि रसि आघाने फिरि बहुरि न भूख लगावै ॥ ३ ॥ कोई करै उपाव अनेक बहुतेरे बिनु किरपा नामु न पावै ॥ जन नानक कउ हरि किरपा धारी मति गुरमति नामु द्रिड़ावै ॥ ४ ॥ १२ ॥ २६ ॥ ६४ ॥ रागु गउड़ी माझ महला ४ ॥ गुरमुखि जिंदू जपि नामु करंमा ॥ मति माता मति जीउ नामु मुखि रामा ॥ संतोखु पिता

गुरमति को धारण करने पर ही प्रभु–चरणों में सुरति लीन होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह प्रभु हर शरीर में व्याप्त है फिर भी शब्द–गुरु के माध्यम से ही उसमें लौ लगती है । मैं गुरु को अपना मन, तन काट कर अर्पण करता हूँ क्योंकि उसके शब्दों के माध्यम से ही मेरा भ्रम और भय दूर होते हैं ॥ २ ॥ अज्ञान के अन्धेरे में गुरु ही ज्ञान का दीपक जलाता है और प्रभु में लवलीनता बनती है । अज्ञान का अन्धेरा विनष्ट हो जाता है और मन को मोह की निद्रा से जाग्रत होकर अपने अन्दर ही प्रभु का नाम पदार्थ मिल जाता है ॥ ३ ॥ परमात्मा से टूटे हुए, हिंसक एवं धन–दौलत के पीछे चलने वाले लोगों को सदैव यमराज मारने के लिए देखता ही रहता है । उन्होंने सद्‌गुरु के आगे अपना शीश (अभिमान आदि) अर्पण नहीं किया इसलिए वे भाग्यहीन लोग आवागमन में पड़े रहते हैं ॥ ४ ॥ हे प्रभु, हमारी विनती सुनो क्योंकि हम प्रभु की ही शरण मांग रहे हैं । दास नानक की तो लाज और सम्मान बचाने वाला गुरु ही है क्योंकि मैंने तो अपना सिर सद्‌गुरु के समक्ष अर्पण कर दिया है ॥ ५ ॥ १० ॥ २४ ॥ ६२ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ हम अहंकारी और अज्ञान की मति वाले हैं परन्तु गुरु को मिलकर हमने अपना अहंकार गँवा दिया है । परमात्मा रूपी गुरु धन्य एवं सारा सुख सम्पदा है जिसे मिलकर अहंकार रूपी रोग समाप्त हो जाता है ॥ १ ॥ गुरु के उपदेश के कारण ही राम रूपी हरि के साथ मिलाप होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे हृदय में उस प्रभु की प्रीति है जिस पर चलने का ढंग मुझे गुरु के द्वारा पता चला है । मेरा प्राण और शरीर सब कुछ सद्‌गुरु के आगे अर्पण हैं क्योंकि उसने ही मुझ बिछुड़े हुए को परमात्मा के गले से लगा दिया है ॥ २ ॥ मेरे अन्दर प्रभु दर्शन की इच्छा बनी है और गुरु ने मुझे मेरे अन्तर्मन में ही परमात्मा दिखा दिया है । मेरे मन में अब सहज आनन्द आ गया है क्योंकि मैनें अपने आप को गुरु के हवाले कर दिया है ॥ ३ ॥ हमने अनेकों अपराध और पाप किए हैं और अनेक दुष्टताएं करके चोर बनके चोरियां की हैं । इस सब के बाद हे नानक, अब प्रभु की शरण में आए हैं और हे प्रभु, अब मेरी लाज रखो जिससे मैं तुझे अच्छा लग सकूँ ॥ ४ ॥ ११ ॥ २५ ॥ ६३ ॥ गउड़ी पूरबी महला ४ ॥ गुरमति के अनुकूल चलने से अनहद शब्द सदैव मन में बजता रहता है । गुरु के उपदेश के कारण ही मन परमात्मा के गुणों के गीत गाता रहता है । कोई भाग्यशाली व्यक्ति ही गुरु का दर्शन प्राप्त करता है । वह गुरु धन्य है जो व्यक्ति की परमात्मा में लौ लगाता है ॥ १ ॥ गुरमुख बनकर ही व्यक्ति प्रभु में लवलीन बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा प्रभु ही मेरा पूर्ण सद्‌गुरु है और मेरा मन गुरु की सेवा में ही लगा रहता है । जो प्रभु की कथा वार्ता सुनाता है उस गुरु के चरणों को हम मल–मल कर धोते हैं ॥ २ ॥ जिनके हृदय में सब रसों का रस प्रभु–नाम का रस बस जाता है और जो प्रभु के गुण गाते हैं उनके मन सदैव आनन्दित होकर परमात्मा के नाम–रस में तृप्त बने रहते हैं । धन–दौलत की उन्हें भूख नहीं रहती ॥ ३ ॥ बेशक कोई कितने ही उपाय करके देख ले उस प्रभु की कृपा के बिना प्रभु–नाम प्राप्त नहीं होता । प्रभु ने दास नानक पर कृपा की है जिससे वह गुरमति के अनुकूल चलकर प्रभु–नाम का सुमिरन कर रहा है ॥ ४ ॥ १२ ॥ २६ ॥ ६४ ॥ रागु गउड़ी माझ महला ४ ॥ हे मेरे प्राण, गुरु की शरण में आकर नाम का जाप कर । मति को माँ बना और विवेक को ही जीवन का आश्रय बना तथा मुख से राम नाम का जाप कर ।

करि गुरु पुरखु अजनमा ॥ वडभागी मिलु रामा ॥ १ ॥ गुरु जोगी पुरखु मिलिआ रंगु माणी जीउ ॥ गुरु हरि रंगि रतड़ा सदा निरबाणी जीउ ॥ वडभागी मिलु सुघड़ सुजाणी जीउ ॥ मेरा मनु तनु हरि रंगि भिंना ॥ २ ॥ आवहु संतहु मिलि नामु जपाहा ॥ विचि संगति नामु सदा लै लाहा जीउ ॥ करि सेवा संता अंम्रितु मुखि पाहा जीउ ॥ मिलु पूरबि लिखिअड़े धुरि करमा ॥ ३ ॥ सावणि वरसु अंम्रिति जगु छाइआ जीउ ॥ मनु मोरु कुहुकिअड़ा सबदु मुखि पाइआ ॥ हरि अंम्रितु वुठड़ा मिलिआ हरि राइआ जीउ ॥ जन नानक प्रेमि रतंना ॥ ४ ॥ १ ॥ २७ ॥ ६५ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ आउ सखी गुण कामण करीहा जीउ ॥ मिलि संत जना रंगु माणिह रलीआ जीउ ॥ गुर दीपकु गिआनु सदा मनि बलीआ जीउ ॥ हरि तुठै ढुलि ढुलि मिलीआ जीउ ॥ १ ॥ मेरै मनि तनि प्रेमु लगा हरि ढोले जीउ ॥ मै मेले मित्रु सतिगुरु वेचोले जीउ ॥ मनु देवां संता मेरा प्रभु मेले जीउ ॥ हरि विटड़िअहु सदा घोले जीउ ॥ २ ॥ वसु मेरे पिआरिआ वसु मेरे गोविदा हरि करि किरपा मनि वसु जीउ ॥ मनि चिंदिअड़ा फलु पाइआ मेरे गोविंदा गुरु पूरा वेखि विगसु जीउ ॥ हरि नामु मिलिआ सोहागणी मेरे गोविंदा मनि अनदिनु अनदु रहसु जीउ ॥ हरि पाइअड़ा वडभागीई मेरे गोविंदा नित लै लाहा मनि हसु जीउ ॥ ३ ॥ हरि आपि उपाए हरि आपे वेखै हरि आपे कारै लाइआ जीउ ॥ इकि खावहि बखस तोटि न आवै इकना फका पाइआ जीउ ॥ इकि राजे तखति बहहि नित सुखीए इकना भिख मंगाइआ जीउ ॥ सभु इको सबदु वरतदा मेरे गोविदा जन नानक नामु धिआइआ जीउ ॥ ४ ॥ २ ॥ २८ ॥ ६६ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ मन माही मन माही मेरे गोविंदा हरि रंगि रता मन माही जीउ ॥ हरि रंगु नालि न लखीऐ मेरे गोविदा गुरु पूरा अलखु लखाही जीउ ॥ हरि हरि नामु परगासिआ मेरे गोविंदा सभ दालद दुख लहि जाही जीउ ॥ हरि पदु ऊतमु पाइआ मेरे गोविंदा वडभागी नामि समाही जीउ ॥ १ ॥ नैणी मेरे पिआरिआ नैणी मेरे गोविदा किनै हरि प्रभु डिठड़ा नैणी जीउ ॥ मेरा मनु

सन्तोष को पिता बना और अयोनि कालातीत प्रभु रूपी गुरु की शरण में जा । हे मेरे प्राण, तू राम से मिल क्योंकि तेरा भाग्य अच्छा बन गया है ॥ १ ॥ मुझे प्रभु रूपी योगी गुरु मिल गया है और मैं अब आनन्दित हो रहा हूँ । गुरु सदैव प्रभु रंग में रंगा रहता है और सब वासनाओं से रहित है । भाग्यशाली बनकर उस सुघड़ एवं सुजान गुरु को मिलो । गुरु की कृपा से ही मेरा मन तन परमात्मा के प्रेम–रंग में पूर्णतः भीग गया है ॥ २ ॥ हे शान्त पुरुषो, आओ सब मिलकर प्रभु नाम का सुमिरन करें । हे जीव, सद्संगत में बैठकर सदा हरि नाम की कमाई का लाभ प्राप्त कर । शान्त पुरुषों की सेवा करके अपने मुँह में अमृत का भोजन डाला जाना चाहिए । अपने पूर्व जन्मों के लेखों के आधार पर प्रभु से मिलाप करना चाहिए ॥ ३ ॥ सावन में बादल बरसता है और सारे संसार को जलपूर्ण कर देता है । मोर अपनी मीठी बोली बोलता है और गुरु नाम–अमृत के माध्यम से जीव को हरि प्रभु के साथ मिला देता है । हे दास नानक, जिसके हृदय में नाम–अमृत आन बसता है वह प्रभु प्रेम में रंग जाता है ॥ ४ ॥ १॥ २७ ॥ ६५ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ हे सखियो, आओ हम सब प्रभु के गुणों के नाम का जादू–टोना तैयार करें और शान्त पुरुषों से मिलकर प्रभु मिलाप के आनन्द को भोगें । मन में गुरु के दिए हुए ज्ञान का दीपक जलाएं और यदि प्रभु प्रसन्न हो तो आगे बढ़ बढ़ कर उसके चरणों में लीन हो जाएं ॥ १ ॥ मेरे मन में हरि मित्र का प्रेम पैदा हो चुका है । अब सद्गुरु बिचौलिया बनकर मुझे मित्र–प्रभु से मिला दे । मैं अपना मन शान्त पुरुषों के हवाले कर दूँ जो मुझे मेरा प्रभु मिला दें । मैं सदैव उस प्रभु पर बलिहारी जाती हूँ ॥ २ ॥ हे मेरे प्यारे गोबिन्द प्रभु, कृपा कर मेरे मन में आन बसो । तुझे मिलने से मनोवांछित फल प्राप्त हो जाता है और गुरु के दर्शन करके मन खिल उठता है । जिस सुहागिन को हरि–नाम मिल जाता है वह सदैव आनन्दित बनी रहती है । हे प्रभु, जिन्होंने भाग्यशाली होकर तुझे पा लिया है वे हरि–नाम की कमाई करके मन में सदैव आनन्दित बनी रहती हैं ॥ ३ ॥ प्रभु स्वयं ही जीवों को उत्पन्न करता है, उनकी सम्भाल करता है और उन्हें काम में लगाता है । कई तो खाते हैं और उन्हें कोई कमी नहीं आती और ऐसे लोग भी हैं जिन्हें बहुत थोड़ा सा प्राप्त होता है । एक ऐसे हैं जो राजा बनकर सिंहासन पर बैठते हैं और एक ऐसे भी हैं जिनसे प्रभु भीख मंगवाता है । दास नानक कहता है कि हे प्रभु, हर स्थान पर तेरा ही हुकुम चल रहा है और उसी के अन्तर्गत तेरे नाम का सुमिरन किया जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ २८ ॥ ६६॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ हे प्रभु, तेरी कृपा से व्यक्ति मन ही मन में हरि–नाम के रंग में रंगा रहता है । हरि–नाम का रंग तो प्रत्येक जीव के साथ है परन्तु हर जीव इसका आनन्द नहीं ले पाता । जिनको पूर्ण गुरु मिल जाता है वे उस परमात्मा को पा जाते हैं । जिनके अन्दर हे प्रभु, हरि–नाम प्रकाशित हो उठता है उनके सभी दुख एवं दरिद्रताएं नष्ट हो जाती हैं । हे मेरे प्रभु, हरि मिलाप की उत्तम अवस्था को प्राप्त भाग्यशाली व्यक्ति सदैव हरि नाम में समाहित बने रहते हैं ॥ १ ॥ हे मेरे प्यारे प्रभु, तुझे अपनी आँखों से किसी बिरले ने ही देखा है । हे प्रभु, मेरा मन तन

तनु बहुतु बैरागिआ मेरे गोविंदा हरि बाझहु धन कुमलैणी जीउ ॥ संत जना मिलि पाइआ मेरे गोविदा मेरा हरि प्रभु सजणु सैणी जीउ ॥ हरि आइ मिलिआ जगजीवनु मेरे गोविंदा मै सुखि विहाणी रैणी जीउ ॥ २ ॥ मै मेलहु संत मेरा हरि प्रभु सजणु मै मनि तनि भुख लगाईआ जीउ ॥ हउ रहि न सकउ बिनु देखे मेरे प्रीतम मै अंतरि बिरहु हरि लाईआ जीउ ॥ हरि राइआ मेरा सजणु पिआरा गुरु मेले मेरा मनु जीवाईआ जीउ ॥ मेरै मनि तनि आसा पूरीआ मेरे गोविंदा हरि मिलिआ मनि वाधाईआ जीउ ॥ ३ ॥ वारी मेरे गोविंदा वारी मेरे पिआरिआ हउ तुधु विटड़िअहु सद वारी जीउ ॥ मेरै मनि तनि प्रेमु पिरंम का मेरे गोविदा हरि पूंजी राखु हमारी जीउ ॥ सतिगुरु विसटु मेलि मेरे गोविंदा हरि मेले करि रैबारी जीउ ॥ हरि नामु दइआ करि पाइआ मेरे गोविंदा जन नानकु सरणि तुमारी जीउ ॥ ४ ॥ ३ ॥ २९ ॥ ६७ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ चोजी मेरे गोविंदा चोजी मेरे पिआरिआ हरि प्रभु मेरा चोजी जीउ ॥ हरि आपे कान्हु उपाइदा मेरे गोविंदा हरि आपे गोपी खोजी जीउ ॥ हरि आपे सभ घट भोगदा मेरे गोविंदा आपे रसीआ भोगी जीउ ॥ हरि सुजाणु न भुलई मेरे गोविंदा आपे सतिगुरु जोगी जीउ ॥ १ ॥ आपे जगतु उपाइदा मेरे गोविदा हरि आपि खेलै बहु रंगी जीउ ॥ इकना भोग भोगाइदा मेरे गोविंदा इकि नगन फिरहि नंग नंगी जीउ ॥ आपे जगतु उपाइदा मेरे गोविदा हरि दानु देवै सभ मंगी जीउ ॥ भगता नामु आधारु है मेरे गोविंदा हरि कथा मंगहि हरि चंगी जीउ ॥ २ ॥ हरि आपे भगति कराइदा मेरे गोविंदा हरि भगता लोच मनि पूरी जीउ ॥ आपे जलि थलि वरतदा मेरे गोविदा रवि रहिआ नही दूरी जीउ ॥ हरि अंतरि बाहरि आपि है मेरे गोविदा हरि आपि रहिआ भरपूरी जीउ ॥ हरि आतम रामु पसारिआ मेरे गोविंदा हरि वेखै आपि हदूरी जीउ ॥ ३ ॥ हरि अंतरि वाजा पउणु है मेरे गोविंदा हरि आपि वजाए तिउ वाजै जीउ ॥ हरि अंतरि नामु निधानु है मेरे गोविंदा गुर सबदी हरि प्रभु गाजे जीउ ॥ आपे सरणि पवाइदा मेरे गोविंदा हरि भगत जना राखु लाजे

बहुत वैराग्यवान हो उठा है और प्रभु के बिना यह जीव रूपी स्त्री उदास हो गई है । हे प्रभु, शान्त पुरुषों को मिलकर ही मुझे वह वास्तविक सज्जन एवं मित्र प्रभु मिला है । अब वह सारे जगत का जीवन हरि मुझे आन मिला है और मेरी जीवन रूपी रात्रि आनन्द में व्यतीत हो रही है ॥ २ ॥ हे शान्त पुरुषो, मेरे हृदय में प्रभु को मिलने की तीव्र इच्छा पैदा हो रही है; मुझे मेरा सज्जन प्रभु मिला दो । प्रियतम को देखे बिना मुझसे रहा नहीं जाता और मेरे अन्दर उससे बिछुड़ने की पीड़ा उठ रही है । परमात्मा ही मेरा राजा है और मेरा प्यारा सज्जन है जिसे जब मेरा गुरु मिला देता है तो मेरा मन जी उठता है । हे प्रभु, जब तू मुझे मिल जाता है तो मेरे हृदय की आशा पूरी हो जाती है और मेरा मन उत्साहित हो उठता है ॥ ३ ॥ हे मेरे प्यारे प्रभु, मैं तुझ पर बलिहारी एवं बार-बार बलिहारी जाता हूँ । मेरे मन में उस प्रियतम का प्रेम जग उठा है । मेरे इस प्रेम की पूँजी की हे प्रभु तू रक्षा कर । हे प्रभु, मुझे बिचौलिया सद्गुरु मिला दे जिसके मार्गदर्शन में मैं हरि को मिल सकूँगा । हे मेरे गोविन्द, मैं दास नानक तेरी शरण में आया हूँ और तेरी ही कृपा से मुझे तेरा हरि-नाम प्राप्त हुआ है ॥ ४ ॥ ३ ॥ २९ ॥ ६७ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ हे मेरे प्यारे गोविन्द, तू अपनी इच्छा से कार्य करने वाला मेरा हरि-प्रभु है । प्रभु स्वयं ही कृष्ण को पैदा करने वाला है और कृष्ण को खोजने वाली गोपी भी है । सब शरीरों में व्याप्त होकर सबके आनन्द को भोगता हुआ वह प्रभु स्वयं ही रसिक रूप में है । परन्तु इस सब के बावजूद वह गोबिन्द प्रभु सुजान है और कुछ भी भूलता नहीं । वह सद्गुरु रूप में सब भोगों से अलिप्त बना रहने वाला योगी भी है ॥ १ ॥ प्रभु स्वयं ही जगत् उत्पन्न करता है और स्वयं ही अनेकों प्रकार के खेल खेलता है । कईयों को वह पदार्थ भोगने के लिए देता है और कई उसके इस संसार में नंगे ही घूमते हैं । वह स्वयं ही जगत उत्पन्न करता है, जीवों को दान देता है और सभी उससे ही माँगते हैं । प्रभु-नाम ही भक्तों का आश्रय है और वे प्रभु के गुणानुवाद माँगने को ही अच्छा समझते हैं ॥ २ ॥ प्रभु स्वयं ही भक्ति करवाता है और भक्तों की मनोकामनाओं को पूर्ण करता है । प्रभु दूर नहीं है ब्लकि वह जल, स्थल अर्थात सर्वत्र रमा हुआ है । अन्दर बाहर वह स्वयं ही है और प्रभु सब जगह व्याप्त है । आत्मा रूप में उस प्रभु का ही प्रसार चारों ओर है और सब में स्थित होकर परमात्मा स्वयं ही सबकी देखभाल करता है ॥ ३ ॥ प्राण-रूप में वह परमात्मा वाद्य बनकर सब में बज रहा है । प्रत्येक जीव के अन्दर प्रभु नाम का भण्डार विद्यमान है परन्तु वह शब्द-गुरु के माध्यम से हरि रूप में व्यक्ति के अन्दर ही प्रकट होता है । प्रभु स्वयं ही जीवों को प्रेरणा देकर अपनी शरण में लाता है और स्वयं ही भक्तजनों के सम्मान की रक्षा करता है ।

जीउ ॥ वडभागी मिलु संगती मेरे गोविंदा जन नानक नाम सिधि काजै जीउ ॥ ४ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ६८ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ मै हरि नामै हरि बिरहु लगाई जीउ ॥ मेरा हरि प्रभु मितु मिलै सुखु पाई जीउ ॥ हरि प्रभु देखि जीवा मेरी माई जीउ ॥ मेरा नामु सखा हरि भाई जीउ ॥ १ ॥ गुण गावहु संत जीउ मेरे हरि प्रभ केरे जीउ ॥ जपि गुरमुखि नामु जीउ भाग वडेरे जीउ ॥ हरि हरि नामु जीउ प्रान हरि मेरे जीउ ॥ फिरि बहुड़ि न भवजल फेरे जीउ ॥ २ ॥ किउ हरि प्रभ वेखा मेरै मनि तनि चाउ जीउ ॥ हरि मेलहु संत जीउ मनि लगा भाउ जीउ ॥ गुर सबदी पाईऐ हरि प्रीतम राउ जीउ ॥ वडभागी जपि नाउ जीउ ॥ ३ ॥ मेरै मनि तनि वडड़ी गोविंद प्रभ आसा जीउ ॥ हरि मेलहु संत जीउ गोविद प्रभ पासा जीउ ॥ सतिगुर मति नामु सदा परगासा जीउ ॥ जन नानक पूरिअड़ी मनि आसा जीउ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३१ ॥ ६९ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ मेरा बिरही नामु मिलै ता जीवा जीउ ॥ मन अंदरि अंम्रितु गुरमति हरि लीवा जीउ ॥ मनु हरि रंगि रतड़ा हरि रसु सदा पीवा जीउ ॥ हरि पाइअड़ा मनि जीवा जीउ ॥ १ ॥ मेरै मनि तनि प्रेमु लगा हरि बाणु जीउ ॥ मेरा प्रीतमु मित्रु हरि पुरखु सुजाणु जीउ ॥ गुरु मेले संत हरि सुघड़ु सुजाणु जीउ ॥ हउ नाम विटहु कुरबाणु जीउ ॥ २ ॥ हउ हरि हरि सजणु हरि मीतु दसाई जीउ ॥ हरि दसहु संतहु जी हरि खोजु पवाई जीउ ॥ सतिगुरु तुठड़ा दसे हरि पाई जीउ ॥ हरि नामे नामि समाई जीउ ॥ ३ ॥ मै वेदन प्रेमु हरि बिरहु लगाई जीउ ॥ गुर सरधा पूरि अंम्रितु मुखि पाई जीउ ॥ हरि होहु दइआलु हरि नामु धिआई जीउ ॥ जन नानक हरि रसु पाई जीउ ॥ ४ ॥ ६ ॥ २० ॥ १८ ॥ ३२ ॥ ७० ॥

महला ५ रागु गउड़ी गुआरेरी चउपदे ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

किन बिधि कुसलु होत मेरे भाई ॥ किउ पाईऐ हरि राम सहाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कुसलु न ग्रिहि मेरी सभ माइआ ॥ ऊचे मंदर सुंदर छाइआ ॥ झूठे लालचि जनमु

हे दास नानक, तू भी संगत में मिलकर भाग्यशाली बन अर्थात प्रभु का सुमिरन कर । प्रभु–नाम के कारण ही जीवन उद्देश्य सिद्ध होता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ६८ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ प्रभु ने मेरे अन्दर हरि–नाम की इच्छा को जागृत कर दिया है । मेरा मित्र हरि प्रभु जब मुझे मिल जाएगा तब ही मैं आनन्दित होऊँगा । हे माँ, प्रभु को देखकर ही मुझे जीवन प्राप्त होता है । मुझे यह निश्चिय हो गया है कि प्रभु–नाम ही मेरा मित्र है और मेरा भाई है ॥ १ ॥ हे सन्तजनों, मेरे हरि–प्रभु का गुणानुवाद करो । गुरमुख बनकर हरि–नाम का सुमिरन करने से व्यक्ति बड़ा भाग्यशाली बन जाता है । प्रभु का नाम मेरे प्राणों का आश्रय है और जो उसका सुमिरन करता है उसे संसार समुद्र में से जन्म–मरण के चक्र में नहीं फंसना पड़ता ॥ २ ॥ मेरे मन में उत्साह बना रहता है कि मैं कैसे हरि–प्रभु के दर्शन कर सकूं । हे शान्त पुरुषो, मेरे मन में हरि–दर्शन की तीव्र इच्छा बन रही है इसलिए मुझे प्रभु मिला दो । गुरु के शब्द के माध्यम से बड़े भाग्यवान बनकर हरि–नाम का सुमिरन करके प्रियतम हरि को मिला जा सकता है ॥ ३ ॥ हे सन्तजनों, मेरे मन और हृदय में गोबिन्द प्रभु को मिलने की आशा बनी हुई है । हे सन्तजनों, वह प्रभु मिला दो जो मेरे अन्दर ही बसता है । हे दास नानक, गुरु की मति के अनुरूप चलकर ही सदैव हरि–नाम का प्रकाश मन में होता है और व्यक्ति के मन की प्रभु–मिलाप की आशा पूर्ण हो जाती है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३१ ॥ ६९ ॥ गउड़ी माझ महला ४ ॥ बिछुड़ा हुआ प्यारा प्रभु–नाम मुझे मिले तो मैं आध्यात्मिक तौर पर जीवन प्राप्त करता रहूँ । मन के अन्दर ही नाम रूपी अमृत है परन्तु उसे गुरु की शिक्षा के माध्यम से ही प्राप्त किया जा सकता है । प्रभु कृपा से यदि मन परमात्मा के प्रेम–रंग में रंग जाए तो मैं सदैव हरि–रस का पान करता रहूँ । जब प्रभु मिल जाता है तो मैं अपने मन में जीवित होने का अनुभव करने लग जाता हूँ ॥ १ ॥ मेरे मन और तन में प्रभु–प्रेम का बाण लगा हुआ है । मेरा सुजान मित्र हरि ही मेरा प्रियतम है । गुरु ही उस सन्त, सुजान रूपी हरि के साथ मिलाता है । मैं प्रभु–नाम पर कुर्बान जाता हूँ ॥ २ ॥ मुझे हरि रूपी सज्जन मित्र के बारे में बताओ और हे शान्त पुरुषो मुझे उसका पता बताओ। मैं उसको खोजता फिर रहा हूँ । प्रसन्न होकर ही सद्गुरु हरि–प्रभु का पता बताता है और तब ही मैं उस हरि नाम में समाहित होता हूँ ॥ ३ ॥ मेरे हृदय में प्रभु–वियोग की पीड़ा उठ रही है । हे गुरु, मेरी इच्छा पूर्ण करो और मेरे मुख में उसके अमृत नाम को डाल दो । हे प्रभु, मुझ पर दयालु बनो ताकि मैं तेरे नाम का सुमिरन कर सकूँ और यह दास नानक तेरे हरि–नाम के रस को प्राप्त कर सके ॥ ४ ॥ ६ ॥ २० ॥ १८ ॥ ३२ ॥ ७० ॥

महला ५ रागु गउड़ी गुआरेरी चउपदे । १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे भाई, किस विधि से कुशल–क्षेम प्राप्त हो सकता है और सदा सहायक हरि रूपी राम को कैसे पाया जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घर के मोह में और मेरा–मेरा समझने में भी सुख नहीं । ऊँचे महल और सुन्दर छायादार वृक्षों में भी सुख नहीं । इनमें सुख मानने वाले ने झूठे लालच में ही अपना जन्म

गवाइआ ॥ १ ॥ हसती घोड़े देखि विगासा ॥ लसकर जोड़े नेब खवासा ॥ गलि जेवड़ी हउमै के फासा ॥ २ ॥ राजु कमावै दह दिस सारी ॥ माणै रंग भोग बहु नारी ॥ जिउ नरपति सुपनै भेखारी ॥ ३ ॥ एकु कुसलु मोकउ सतिगुरू बताइआ ॥ हरि जो किछु करे सु हरि किआ भगता भाइआ ॥ जन नानक हउमै मारि समाइआ ॥ ४ ॥ इन बिधि कुसल होत मेरे भाई ॥ इउ पाईऐ हरि राम सहाई ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ किउ भ्रमीऐ भ्रमु किस का होई ॥ जा जलि थलि महीअलि रविआ सोई ॥ गुरमुखि उबरे मनमुख पति खोई ॥ १ ॥ जिसु राखै आपि रामु दइआरा ॥ तिसु नही दूजा को पहुचनहारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ महि वरतै एकु अनंता ॥ ता तूं सुखि सोउ होइ अचिंता ॥ ओहु सभु किछु जाणै जो वरतंता ॥ २ ॥ मनमुख मुए जिन दूजी पिआसा ॥ बहु जोनी भवहि धुरि किरति लिखिआसा ॥ जैसा बीजहि तैसा खासा ॥ ३ ॥ देखि दरसु मनि भइआ विगासा ॥ सभु नदरी आइआ ब्रहमु परगासा ॥ जन नानक की हरि पूरन आसा ॥ ४ ॥ २ ॥ ७१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ कई जनम भए कीट पतंगा ॥ कई जनम गज मीन कुरंगा ॥ कई जनम पंखी सरप होइओ ॥ कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ ॥ १ ॥ मिलु जगदीस मिलन की बरीआ ॥ चिरंकाल इह देह संजरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कई जनम सैल गिरि करिआ ॥ कई जनम गरभ हिरि खरिआ ॥ कई जनम साख करि उपाइआ ॥ लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ ॥ २ ॥ साधसंगि भइओ जनमु परापति ॥ करि सेवा भजु हरि हरि गुरमति ॥ तिआगि मानु झूठु अभिमानु ॥ जीवत मरहि दरगह परवानु ॥ ३ ॥ जो किछु होआ सु तुझ ते होगु ॥ अवरु न दूजा करणै जोगु ॥ ता मिलीऐ जा लैहि मिलाइ ॥ कहु नानक हरि हरि गुण गाइ ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ करम भूमि महि बोअहु नामु ॥ पूरन होइ तुमारा कामु ॥ फल पावहि मिटै जम त्रास ॥ नित गावहि हरि हरि गुंण जास ॥ १ ॥ हरि हरि नामु अंतरि उरि धारि ॥ सीघर कारजु लेहु सवारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने प्रभ सिउ होहु सावधानु ॥ ता तूं दरगह पावहि

गँवा लिया है ॥ १ ॥ व्यक्ति हाथी घोड़ों को देखकर खुशी का अनुभव करता है और सेनाओं को एकत्र करता है । नायब, सलाहकार एवं नौकर रखता है परन्तु वास्तव में उसके गले में अहंकार का फन्दा ही पड़ता जाता है ॥ २ ॥ दसों दिशाओं में धरती पर राज करता है और बहुत सी स्त्रियों के साथ भोग–विलास का आनन्द लेता है परन्तु यह सब ऐसे ही है जैसे कोई राजा सपने में भिखारी बनकर दुख भोगता है ॥ ३ ॥ सद्‌गुरु ने मुझे सुख का एक मार्ग बताया है और वह यह है कि प्रभु जो करता है वही उसके भक्तों को अच्छा लगता है । हे दास नानक, भाग्यशाली व्यक्ति अहंकार को मारकर परमात्मा में ही लीन बना रहता है ॥ ४ ॥ हे मेरे भाई, इसी तरह से ही सुख प्राप्त किया जाता है और इसी तरह से ही वास्तविक सहायता करने वाला परमात्मा प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूसरा ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जब प्रभु ही जल, थल और आकाश में व्याप्त है तो फिर भला भ्रमों में पड़कर भटकने की क्या जरूरत है । गुरमुख व्यक्ति ही भ्रमों से उबरते हैं परन्तु मनमुख अपने सम्मान को गँवा लेते हैं ॥ १ ॥ दयालु प्रभु जिसकी स्वयं रक्षा करता है उस व्यक्ति तक अन्य कोई भी नहीं पहुँच पाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब सब में वह एक अनन्त प्रभु ही कार्यशील है तो हे व्यक्ति तू निश्चिन्त होकर सो जा । प्रभु यह सब कुछ जानता है कि कहाँ क्या हो रहा है ॥ २ ॥ द्वैतभाव रूपी तृष्णा रखने वाले मनमुख मर–खप जाते हैं और अपने पूर्व के लेखों के अनुरूप अनेकों योनियों में चक्कर लगाते रहते हैं । वे जैसा बोते हैं वैसा ही खाते हैं ॥ ३ ॥ प्रभु–दर्शन करके व्यक्ति का मन खिल उठता है और उसे सब ओर परमात्मा प्रकाशित हुआ नज़र आता है । हे नानक, ऐसे दास की प्रभु सम्पूर्ण इच्छाएं पूरी करता है ॥ ४ ॥ २ ॥ ७१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हे भाई, तू कई जन्मों तक कीड़ा–पतंगा, हाथी, मछली, हिरन आदि बनता रहा है । कई जन्मों तक तुम पक्षी, सर्प, घोड़े, वृक्ष, बैल आदि की योनियों में पड़े रहे ॥ १ ॥ हे भाई, बहुत समय के बाद तुझे यह मानव शरीर मिला है और यही अवसर है जब तू संसार के स्वामी प्रभु से मिल सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कई जन्मों तक तुझे चट्टान, पहाड़ आदि बनाया गया । तेरे कई जन्म गर्भ में ही पड़े–पड़े नष्ट हो गए । कई जन्मों तक तुझे शाखाओं और वनस्पति के रूप में पैदा किया गया और इस प्रकार चौरासी लाख योनियों में तुझे भ्रमण करवाया गया ॥ २ ॥ किसी अच्छी संगत के फलस्वरूप तुझे अब यह जन्म प्राप्त हुआ है इसलिए तू सेवा कर, भजन कर और गुरु की मति के अनुरूप चल । मान, अभिमान, झूठ आदि का त्याग कर दे । जब तू जीवन में रहते हुए भीविषय–विकारों से मृत हो जाएगा तभी तू प्रभु के दरबार में स्वीकृत हो पाएगा ॥ ३ ॥ जो भी हुआ है और जो होना है वह तुझसे ही होगा क्योंकि अन्य कोई भी कुछ भी करने योग्य नहीं है । तुझसे उसी का मिलाप होता है जिसे तू मिलाता है और नानक कहता है तभी व्यक्ति हरि के गुणों का भी गान करने की शक्ति प्राप्त करता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ ७२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हे व्यक्ति, इस शरीर रूपी कर्म–भूमि में नाम का बीज डालो तभी तुम्हारी इच्छा पूरी हो सकेगी । तुझे ऐसा फल मिलेगा जिससे तेरा यम का भय मिट जाएगा और तू सदैव हरि के गुणों का यश गायन करता रहेगा ॥ १ ॥ हरि–नाम को अन्तर्मन में धारण कर ले और हे जीव, तू शीघ्र ही अपने उद्देश्य को प्राप्त कर ले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने प्रभु की ओर सदैव ध्यान लगाए रख तभी तू प्रभु–दरबार में सम्मान प्राप्त कर सकेगा ।

मानु ॥ उकति सिआणप सगली तिआगु ॥ संत जना की चरणी लागु ॥ २ ॥ सरब जीअ हहि जा कै हाथि ॥ कदे न विछुड़ै सभ कै साथि ॥ उपाव छोडि गहु तिस की ओट ॥ निमख माहि होवै तेरी छोटि ॥ ३ ॥ सदा निकटि करि तिस नो जाणु ॥ प्रभ की आगिआ सति करि मानु ॥ गुर कै बचनि मिटावहु आपु ॥ हरि हरि नामु नानक जपि जापु ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ गुर का बचनु सदा अबिनासी ॥ गुर कै बचनि कटी जम फासी ॥ गुर का बचनु जीअ कै संगि ॥ गुर कै बचनि रचै राम कै रंगि ॥ १ ॥ जो गुरि दीआ सु मन कै कामि ॥ संत का कीआ सति करि मानि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर का बचनु अटल अछेद ॥ गुर कै बचनि कटे भ्रम भेद ॥ गुर का बचनु कतहु न जाइ ॥ गुर कै बचनि हरि के गुण गाइ ॥ २ ॥ गुर का बचनु जीअ कै साथ ॥ गुर का बचनु अनाथ को नाथ ॥ गुर कै बचनि नरकि न पवै ॥ गुर कै बचनि रसना अंम्रितु रवै ॥ ३ ॥ गुर का बचनु परगटु संसारि ॥ गुर कै बचनि न आवै हारि ॥ जिसु जन होए आपि क्रिपाल ॥ नानक सतिगुर सदा दइआल ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७४ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जिनि कीता माटी ते रतनु ॥ गरभ महि राखिआ जिनि करि जतनु ॥ जिनि दीनी सोभा वडिआई ॥ तिसु प्रभ कउ आठ पहर धिआई ॥ १ ॥ रमईआ रेनु साध जन पावउ ॥ गुर मिलि अपुना खसमु धिआवउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि कीता मूड़ ते बकता ॥ जिनि कीता बेसुरत ते सुरता ॥ जिसु परसादि नवै निधि पाई ॥ सो प्रभु मन ते बिसरत नाही ॥ २ ॥ जिनि दीआ निथावे कउ थानु ॥ जिनि दीआ निमाने कउ मानु ॥ जिनि कीनी सभ पूरन आसा ॥ सिमरउ दिनु रैनि सास गिरासा ॥ ३ ॥ जिसु प्रसादि माइआ सिलक काटी ॥ गुर प्रसादि अंम्रितु बिखु खाटी ॥ कहु नानक इस ते किछु नाही ॥ राखनहारे कउ सालाही ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७५ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ तिस की सरणि नाही भउ सोगु ॥ उस ते बाहरि कछू न होगु ॥ तजी सिआणप बल बुधि बिकार ॥ दास अपने की राखनहार ॥ १ ॥ जपि मन मेरे राम राम रंगि ॥ घरि बाहरि तेरै सद संगि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिस की टेक मनै महि

सभी युक्तियों, चतुराईयों आदि का त्याग कर दे और शान्त पुरुषों के चरणों में बना रह ॥ २ ॥ सभी के प्राण जिस प्रभु के हाथ में हैं वह वास्तविक रूप में कभी भी व्यक्ति से बिछुड़ता नहीं और सदैव सब के साथ बना रहता है। प्रपंचपूर्ण उपायों को छोड़कर केवल उसका आसरा देख और ऐसा करने से क्षण भर में तेरी मुक्ति हो जाएगी ॥३॥ उसे सदैव अपने निकट ही समझ और प्रभु की आज्ञा को सिर झुकाकर स्वीकार कर । गुरु के उपदेश के माध्यम से अपना अहंकार मिटा दे और हे नानक, सदैव हरि–नाम का ही जाप करता रह ॥ ४ ॥ ४ ॥ ७३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ गुरु का उपदेश अविनाशी है और यम के फन्दे को काटने वाला है । गुरु का उपदेश सदा जीव के साथ बना रहता है और गुरु के वचन के कारण व्यक्ति राम–रंग में लीन बना रहता है ॥ १ ॥ गुरु जो कुछ भी देता है वह व्यक्ति की आत्मा के काम आने वाला है । शान्त पुरुषों का किया हुआ कार्य सिर झुका कर स्वीकार करना चाहिए॥१॥ रहाउ ॥ गुरु का उपदेश अटल होता है और उसे कोई भी नहीं काट सकता । गुरु के उपदेश से ही भ्रम एवं दुविधाएं कट जाती हैं । गुरु का उपदेश कभी भी इधर–उधर नहीं होता अर्थात किसी समय विशेष के लिए न होकर सदा के लिए होता है । गुरु के उपदेश के फलस्वरूप ही हरि गुण गाए जाते हैं ॥ २ ॥ गुरु का उपदेश व्यक्ति के प्राणों का साथ देने वाला होता है और गुरु का उपदेश ही अनाथों के नाथ के रूप में बना रहता है । गुरु के उपदेश को मानने से व्यक्ति नर्क में नहीं जाता और उसकी जीभ सदा अमृत रस में बनी रहती है ॥ ३ ॥ गुरु का उपदेश संसार में प्रत्यक्ष रूप से सबके सामने होता है और गुरु के उपदेश के माध्यम से जीवन व्यतीत करने वाला व्यक्ति कभी भी हारता नहीं । जिस व्यक्ति पर प्रभु स्वयं कृपालु हो जाए हे नानक, सद्गुरु भी सदैव उस पर दयालु बना रहता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७४ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जिस प्रभु ने मिट्टी से बने इस शरीर को अमूल्य रत्न में रूपान्तरित कर दिया है; माता के गर्भ में प्रयत्लपूर्वक इसकी रक्षा की है तथा इसको शोभा एवं बड़प्पन प्रदान किया है उस प्रभु का हे जीव तू आठों प्रहर सुमिरन कर ॥ १ ॥ हे राम, यदि मैं साधु जनों की चरण–धूलि पा जाऊँ तो गुरु को मिलकर अपने स्वामी प्रभु का सुमिरन करता रहूँ ॥ १ ॥ हे जीव, जिस प्रभु ने तुझे मूर्ख से सुन्दर वक्ता बना दिया, नासमझ से समझदार बना दिया और जिसकी कृपा से तुझे नौ निधियां प्राप्त हो गईं ऐसे प्रभु को कभी भी मन से विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए ॥ २ ॥ जिस प्रभु ने निराश्रित जीव को आश्रय दिया, शक्तिहीन को गौरव दिया और जिस प्रभु ने सभी आशाओं को पूर्ण किया है उस प्रभु का श्वांस–प्रश्वास सुमिरन किया जाना चाहिए । जिसकी कृपा से माया का बन्धन कट गया उसी गुरु की कृपा से विष भी अमृत बन गया । नानक कहता है कि हे प्रभु, इस जीव से तो कुछ नहीं हो सकता इसलिए मैं इसके रक्षक परमात्मा का गुणानुवाद करता हूँ ॥ ४ ॥ ६ ॥ ७५ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ प्रभु की शरण में आने से भय और शोक नहीं रहता और यह भी तथ्य है कि जो कुछ होता है उसकी मर्जी से ही होता है । हे प्रभु, मैंने अपने बल, बुद्धि एवं विकारों वाली चतुराइयों को छोड़ दिया है क्योंकि मुझे पता लग गया है कि अपने दास की रक्षा तू स्वयं ही करता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, प्रेमपूर्वक राम–नाम का सुमिरन कर क्योंकि घर–बाहर सदैव यही तेरे संग बना रहने वाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु की टेक ही मन में धारण किए रह

राखु ॥ गुर का सबदु अंम्रित रसु चाखु ॥ अवरि जतन कहहु कउन काज ॥ करि किरपा राखै आपि लाज ॥ २ ॥ किआ मानुख कहहु किआ जोरु ॥ झूठा माइआ का सभु सोरु ॥ करण करावनहार सुआमी ॥ सगल घटा के अंतरजामी ॥ ३ ॥ सरब सुखा सुखु साचा एहु ॥ गुर उपदेसु मनै महि लेहु ॥ जा कउ राम नाम लिव लागी ॥ कहु नानक सो धंनु वडभागी ॥ ४ ॥ ७ ॥ ७६ ॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ सुणि हरि कथा उतारी मैलु ॥ महा पुनीत भए सुख सैलु ॥ वडै भागि पाइआ साधसंगु ॥ पारब्रहम सिउ लागो रंगु ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपत जनु तारिओ ॥ अगनि सागरु गुरि पारि उतारिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करि कीरतनु मन सीतल भए ॥ जनम जनम के किलविख गए ॥ सरब निधान पेखे मन माहि ॥ अब ढूढन काहे कउ जाहि ॥ २ ॥ प्रभ अपुने जब भए दइआल ॥ पूरन होई सेवक घाल ॥ बंधन काटि कीए अपने दास ॥ सिमरि सिमरि सिमरि गुणतास ॥ ३ ॥ एको मनि एको सभ ठाइ ॥ पूरन पूरि रहिओ सभ जाइ ॥ गुरि पूरै सभु भरमु चुकाइआ ॥ हरि सिमरत नानक सुखु पाइआ ॥ ४ ॥ ८ ॥ ७७ ॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ अगले मुए सि पाछै परे ॥ जो उबरे से बंधि लकु खरे ॥ जिह धंधे महि ओइ लपटाए ॥ उन ते दुगुण दिड़ी उन माए ॥ १ ॥ ओह बेला कछु चीति न आवै ॥ बिनसि जाइ ताहू लपटावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आसा बंधी मूरख देह ॥ काम क्रोध लपटिओ असनेह ॥ सिर ऊपरि ठाढो धरम राइ ॥ मीठी करि करि बिखिआ खाइ ॥ २ ॥ हउ बंधउ हउ साधउ बैरु ॥ हमरी भूमि कउणु घालै पैरु ॥ हउ पंडितु हउ चतुरु सिआणा ॥ करणैहारु न बुझै बिगाना ॥ ३ ॥ अपुनी गति मिति आपे जानै ॥ किआ को कहै किआ आखि वखानै ॥ जितु जितु लावहि तितु तितु लगना ॥ अपना भला सभ काहू मंगना ॥ ४ ॥ सभ किछु तेरा तूं करणैहारु ॥ अंतु नाही किछु पारावारु ॥ दास अपने कउ दीजै दानु ॥ कबहू न विसरै नानक नामु ॥ ५ ॥ ९ ॥ ७८ ॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ अनिक जतन नही होत छुटारा ॥ बहुतु सिआणप आगल भारा ॥ हरि की सेवा निरमल हेत ॥ प्रभ की दरगह

और शब्द गुरु के अमृत–रस का पान कर । अन्य प्रयत्न भला तेरे किस काम आएंगे । वह प्रभु ही कृपा करेगा और तेरी लाज को बचाएगा ॥ २ ॥ हे मानव, तू क्या अपने बल की बात करता है; तेरे आस–पास सब मायावी शोर–शराबा है । करने कराने वाला वह स्वामी प्रभु है जो सब के हृदय की बातों को जानता है ॥ ३ ॥ सब सुखों में से सच्चा सुख यही है कि गुरु के उपदेश को मन में धारण किया जाना चाहिए । जिस व्यक्ति की राम–नाम में लौ लग गई है, नानक कहता है कि वही व्यक्ति धन्य और भाग्यशाली है ॥ ४ ॥ ७ ॥ ७६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ प्रभु कथा सुनकर मैंने मन की मैल उतार ली है; मैं पवित्र हो गया हूँ और मुझे सुखपूर्वक विचरण करने का अवसर मिल गया है । बड़े भाग्य से मैंने साधक व्यक्तियों की संगत पा ली है और अब मेरा प्रेम परब्रह्म से लग गया है ॥ १ ॥ हरि नाम के जाप से सेवक को प्रभु ने पार उतार लिया है । परमात्मा रूपी गुरु ने तृष्णा–अग्नि के सागर में से पार करा दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु गुणानुवाद से मन शीतल हो गया है और जन्मों जन्मान्तरों के पाप दूर हो गए हैं । अब सब निधियों का स्वामी मन में ही देख लिया है इसलिए अब उसे बाहर ढूँढने के लिए इधर–उधर भागने की आवश्यकता नहीं है ॥ २ ॥ जब प्रभु दयालु होते हैं तो सेवक जनों का परिश्रम सफल हो जाता है । प्रभु ने जीवों के मायावी बन्धन काट कर उन्हें अपना दास बना लिया है और ऐसे व्यक्ति गुणों के भण्डार प्रभु का ही सुमिरन करते रहते हैं ॥ ३ ॥ वह एक ही प्रभु मेरे मन में भी है, सब स्थानों में भी है और पूर्ण रूप से सब ओर वही व्याप्त है । पूर्ण गुरु के माध्यम से सभी भ्रम चुक जाते हैं और हे नानक ऐसा व्यक्ति प्रभु का सुमिरन करते हुए आनन्दित बना रहता है ॥ ४ ॥ ८ ॥ ७७ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ व्यक्ति के पूर्वज मर कर यह भूल ही जाते हैं कि एकत्र की हुई धन सम्पदा पीछे ही छूट गई है । जो पीछे बचते हैं अब वे कमर कस के खड़े हैं । जिस धन्धे में वे पूर्वज लपटते–झपटते रहे अब बचने वालों ने उनसे भी दुगनी धन सम्पदा का मन बना लिया है ॥ १ ॥ व्यक्ति को पूर्वजों के चले जाने और सब कुछ पीछे ही छोड़ जाने की बात बिल्कुल भी मन में नहीं आती और वे जो सब कुछ नाशवान है फिर उसी से चिपटे रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूर्ख व्यक्ति का शरीर आशाओं तृष्णाओं में ही जकड़ा हुआ है और वह काम, क्रोध के मोह प्यार में ही लीन बना हुआ है । उधर सिर पर धर्मराज खड़ा है और इधर यह विष रूपी माया को मीठा समझकर खाए चला जा रहा है ॥ २ ॥ मूर्ख व्यक्ति यह कहता है कि मैं उसको पकड़ लूँगा, उससे बदला ले लूँगा और कौन ऐसा है जो हमारी भूमि पर पैर भी रख सकता है । मैं ही विद्वान हूँ, चतुर हूँ और सबसे समझदार हूँ । नासमझ व्यक्ति इन्हीं बातों में पड़ा हुआ उस कर्त्ता–प्रभु के रहस्य को समझने की बिल्कुल भी कोशिश नहीं करता ॥ ३ ॥ परमात्मा अपने विस्तार और मर्यादा को स्वयं ही जानता है । कोई उसके लिए क्या कह सकता है और क्या बखान कर सकता है । प्रभु व्यक्तियों को जिधर लगाता है उन्हें उधर ही लगना होता है और सभी जीव परमात्मा से अपना भला ही मांगते हैं ॥ ४ ॥ हे प्रभु, सब कुछ तेरा ही है और तू ही सब कुछ करने योग्य है । तेरी शक्तियां अनन्त है एवं उनका कोई ओर–छोर नहीं पाया जाता । हे प्रभु, अपने दास नानक को कृपा करके यही दान दो कि उसे कभी भी तुम्हारा नाम विस्मृत न हो ॥ ५ ॥ ९ ॥ ७८ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला५॥ सांसारिक बन्धनों से निकलने के लिए अनेकों यत्न करने पर भी छुटकारा नहीं मिलता ब्लकि अधिक चतुराईयां व्यक्ति के सिर पर बोझ को और बढ़ा देती हैं । निर्मल भाव से यदि प्रभु की सेवा भक्ति की जाए तो प्रभु के दरबार में

सोभा सेत ॥ १ ॥ मन मेरे गहु हरि नाम का ओला ॥ तुझै न लागै ताता झोला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ बोहिथु भै सागर माहि ॥ अंधकार दीपक दीपाहि ॥ अगनि सीत का लाहसि दूख ॥ नामु जपत मनि होवत सूख ॥ २ ॥ उतरि जाइ तेरे मन की पिआस ॥ पूरन होवै सगली आस ॥ डोलै नाही तुमरा चीतु ॥ अंम्रित नामु जपि गुरमुखि मीत ॥ ३ ॥ नामु अउखधु सोई जनु पावै ॥ करि किरपा जिसु आपि दिवावै ॥ हरि हरि नामु जा कै हिरदै वसै ॥ दूखु दरदु तिह नानक नसै ॥ ४ ॥ १० ॥ ७९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ बहुतु दरबु करि मनु न अघाना ॥ अनिक रूप देखि नह पतीआना ॥ पुत्र कलत्र उरझिओ जानि मेरी ॥ ओह बिनसै ओइ भसमै ढेरी ॥ १ ॥ बिनु हरि भजन देखउ बिललाते ॥ ध्रिगु तनु ध्रिगु धनु माइआ संगि राते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ बिगारी कै सिरि दीजहि दाम ॥ ओइ खसमै कै ग्रिहि उन दूख सहाम ॥ जिउ सुपनै होइ बैसत राजा ॥ नेत्र पसारै ता निरारथ काजा ॥ २ ॥ जिउ राखा खेत ऊपरि पराए ॥ खेतु खसम का राखा उठि जाए ॥ उसु खेत कारणि राखा कड़ै ॥ तिस कै पालै कछू न पड़ै ॥ ३ ॥ जिस का राजु तिसै का सुपना ॥ जिनि माइआ दीनी तिनि लाई त्रिसना ॥ आपि बिनाहे आपि करे रासि ॥ नानक प्रभ आगै अरदासि ॥ ४ ॥ ११ ॥ ८० ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ बहु रंग माइआ बहु बिधि पेखी ॥ कलम कागद सिआनप लेखी ॥ महर मलूक होइ देखिआ खान ॥ ता ते नाही मनु त्रिपतान ॥ १ ॥ सो सुखु मोकउ संत बतावहु ॥ त्रिसना बूझै मनु त्रिपतावहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ असु पवन हसति असवारी ॥ चोआ चंदनु सेज सुंदरि नारी ॥ नट नाटिक आखारे गाइआ ॥ ता महि मनि संतोखु नपाइआ ॥ २ ॥ तखतु सभा मंडन दोलीचे ॥ सगल मेवे सुंदर बागीचे ॥ आखेड़ बिरति राजन की लीला ॥ मनु न सुहेला परपंचु हीला ॥ ३ ॥ करि किरपा संतन सचु कहिआ ॥ सरब सूख इहु आनंदु लहिआ ॥ साधसंगि हरि कीरतनु गाईऐ ॥ कहु नानक वडभागी पाईऐ ॥ ४ ॥ जा कै हरि धनु सोई सुहेला ॥ प्रभ किरपा ते साधसंगि मेला ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १२ ॥ ८१ ॥ गउड़ी गुआरेरी

सम्मान सहित पहुँचा जाता है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, प्रभु–नाम का ही आसरा ले; तुझे तृष्णाओं की गर्म हवा का झोंका भी नहीं लगेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे भयंकर सागर में बचाने वाला जहाज है, अन्धकार में प्रकाश देने वाला दीपक है और सर्दी में अग्नि दुख दूर कर देती है उसी प्रकार नाम का सुमिरन करने से मन आनन्दित बना रहता है ॥ २ ॥ नाम–सुमिरन से तेरे मन की प्यास बुझ जाएगी और तेरी समस्त आशाएं पूर्ण हो जाएंगी । हे मित्र, गुरमुख बनकर अमृत रूपी नाम का जाप करने से तुम्हारा चित्त कभी भी डोलेगा नहीं ॥ ३ ॥ नाम रूपी औषधि उसी व्यक्ति को प्राप्त होती है जिसे कृपा करके प्रभु स्वयं दिलाता है । प्रभु का नाम जिसके हृदय में बस जाता है, हे नानक, उसके दुख और पीड़ाएं भाग खड़ी होती हैं ॥ ४ ॥ १० ॥ ७९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ बहुत अधिक द्रव्य (धन–माल) होने पर भी मन अघाता नहीं । अनेकों रूप–सौन्दर्य को देख कर भी इसे सन्तुष्टि नहीं मिलती । यह पुत्र और स्त्री को अपनी मान कर उन्हीं में उलझा रहता है और नहीं जानता कि सुन्दरता नष्ट हो जाती है और स्त्री, पुत्र सब राख की ढेरी के समान ही हैं ॥ १ ॥ मैं देखता हूँ कि हरि–भजन के बिना जीव रोते चिल्लाते हैं । जो तन, धन एवं प्रपंचों में ही लीन बने रहते हैं उनका यह सब कुछ धिक्कार योग्य है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे किसी नौकर को कुछ धन दिया जाए तो उसको कोई लाभ नहीं होता क्योंकि वह धन तो उसके मालिक के पास चला जाएगा और नौकर ने तो केवल आने जाने का दुख ही उठाया है । जैसे व्यक्ति स्वप्न में राजा बन जाता है परन्तु आँखें खोलता है तो उसके सारे स्वप्न में किए हुए काम निष्फल हो जाते हैं ॥ २ ॥ जैसे पराये खेत पर रखवाली करने वाला जाता रहता है परन्तु खेत तो मालिक का है और अन्ततः उस रखवाले को वहाँ से जाना पड़ता है । उस खेत के लिए वह रखवाला अनेकों कष्ट उठाता है परन्तु आखिर में उसके पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता ॥ ३ ॥ दरअसल जिसका दिया हुआ यह राज होता है उसी का दिया हुआ यह स्वप्न भी होता है । जिस प्रभु ने व्यक्ति को धन–सम्पदा दी है उसी ने ही उसको तृष्णाएं भी दी हैं । वह स्वयं ही जीव का नाश भी करता है और स्वयं ही जीव के मनोरथ को सफल भी करता है । हे नानक, प्रभु के समक्ष तो सदैव उसके नाम–दान के लिए ही अरदास करते रहना चाहिए ॥ ४ ॥ ११ ॥ ८० ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ मैंने विभिन्न रंगों रूपों में मोहित करने वाली माया को विभिन्न तरीकों से देखा है । कईयों ने कागज कलम से विद्वतापूर्ण आलेख लिखे हैं । कईयों ने चौधरी, सुल्तान और खान बनकर देख लिया है परन्तु किसी का भी मन इस मायावी प्रपंच से तृप्त नहीं हो सका ॥ १ ॥ हे प्रभु के शान्त पुरुषो, मुझे ऐसे आनन्द का मार्ग बताओ जिस पर चलकर मेरी तृष्णा समाप्त हो जाए और मन तृप्त हो जाए ॥१॥ रहाउ ॥ हाथियों, पवन–वेग से चलने वाले घोड़ों की सवारी, इत्र, चन्दन, सुन्दर स्त्रियों की शय्या पर रमण, नटों के नाटक और विभिन्न अखाड़ों में मैंने गाने वालों के गीत भी सुने हैं परन्तु फिर भी मन सन्तुष्ट नहीं हो सका है ॥२॥ सिंहासन, सभाओं की सजावटें और सुन्दर गलीचे तथा समस्त मेवे, सुन्दर उद्यान, राजाओं के शौक वाले शिकार एवं अन्य खेल आदि भी मैंने देख लिए हैं परन्तु मन को आनन्द नहीं मिला और यह सारा प्रयत्न छल–मात्र ही बनकर रह गया है ॥ ३ ॥ शान्त पुरुषों को मिलने पर उन्होंने कृपा करके यह सत्य मुझसे कहा कि सभी सुख और आनन्द प्राप्त हो जाएंगे यदि साधना वाले पुरुषों की संगत में बैठकर हरि–यश का कीर्तन किया जाए । हे नानक, यह सब बड़े भाग्य से ही प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ जिसके पास हरि–नाम रूपी धन है वही वास्तविक में सफल एवं सुखी है, परन्तु सद्संगत से मिलाप प्रभु–कृपा से ही होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूसरा ॥ १२ ॥ ८१ ॥ गउड़ी गुआरेरी

महला ५ ॥ प्राणी जाणै इहु तनु मेरा ॥ बहुरि बहुरि उआहू लपटेरा ॥ पुत्र कलत्र गिरसत का फासा ॥ होनु न पाईऐ राम के दासा ॥ १ ॥ कवन सु बिधि जितु राम गुण गाइ ॥ कवन सु मति जितु तरै इह माइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो भलाई सो बुरा जानै ॥ साचु कहै सो बिखै समानै ॥ जाणै नाही जीत अरु हार ॥ इहु वलेवा साकत संसार ॥ २ ॥ जो हलाहल सो पीवै बउरा ॥ अंम्रितु नामु जानै करि कउरा ॥ साधसंग कै नाही नेरि ॥ लख चउरासीह भ्रमता फेरि ॥ ३ ॥ एकै जालि फहाए पंखी ॥ रसि रसि भोग करहि बहु रंगी ॥ कहु नानक जिसु भए क्रिपाल ॥ गुरि पूरै ता के काटे जाल ॥ ४ ॥ १३ ॥ ८२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ तउ किरपा ते मारगु पाईऐ ॥ प्रभ किरपा ते नामु धिआईऐ ॥ प्रभ किरपा ते बंधन छुटै ॥ तउ किरपा ते हउमै तुटै ॥ १ ॥ तुम लावहु तउ लागह सेव ॥ हम ते कछू न होवै देव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुधु भावै ता गावा बाणी ॥ तुधु भावै ता सचु वखाणी ॥ तुधु भावै ता सतिगुर मइआ ॥ सरब सुखा प्रभ तेरी दइआ ॥ २ ॥ जो तुधु भावै सो निरमल करमा ॥ जो तुधु भावै सो सचु धरमा ॥ सरब निधान गुण तुम ही पासि ॥ तूं साहिबु सेवक अरदासि ॥ ३ ॥ मनु तनु निरमलु होइ हरि रंगि ॥ सरब सुखा पावउ सतसंगि ॥ नामि तेरै रहै मनु राता ॥ इहु कलिआणु नानक करि जाता ॥ ४ ॥ १४ ॥ ८३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ आन रसा जेते तै चाखे ॥ निमख न त्रिसना तेरी लाथे ॥ हरि रस का तूं चाखहि सादु ॥ चाखत होइ रहहि बिसमादु ॥ १ ॥ अंम्रितु रसना पीउ पिआरी ॥ इह रस राती होइ त्रिपतारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे जिहवे तूं राम गुण गाउ ॥ निमख निमख हरि हरि हरि धिआउ ॥ आन न सुनीऐ कतहूं जाईऐ ॥ साधसंगति वडभागी पाईऐ ॥ २ ॥ आठ पहर जिहवे आराधि ॥ पारब्रहम ठाकुर आगाधि ॥ ईहा ऊहा सदा सुहेली ॥ हरि गुण गावत रसन अमोली ॥ ३ ॥ बनसपति मउली फल फुल पेडे ॥ इह रस राती बहुरि न छोडे ॥ आन न रस कस लवै न लाई ॥ कहु नानक गुर भए है सहाई ॥ ४ ॥ १५ ॥ ८४ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ मनु मंदरु तनु साजी बारि ॥

महला ५ ॥ प्राणी यह मानता है कि यह शरीर मेरा ही बना रहेगा और बार–बार उसी से ही लिपटा रहता है। जब तक पुत्र, स्त्री एवं गृहस्थी का मोह पाश बना रहेगा तब तक परमात्मा का दास बनना सम्भव नहीं होता ॥ १ ॥ वह कौन सी विधि है जिससे प्रभु का गुणानुवाद किया जाता है और वह कौन सी शिक्षा है जिसे ग्रहण कर माया के उस पार जाया जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ व्यक्ति अपनी भलाई के कार्यों को बुरा जानता है और कहा हुआ सत्य इसे विष के समान लगता है। इसे वास्तविक जीत और हार का कुछ पता नहीं है और माया में फंसे हुए व्यक्ति की यही कार्य–शैली है। ऐसा व्यक्ति परमात्मा से टूटा हुआ और संसार में लीन बना हुआ व्यक्ति होता है ॥ २ ॥ बावरा व्यक्ति जो ज़हर है उसे तो पीता है और प्रभु के अमृत–नाम को कड़वा मानता है। सद्संगत के वह पास भी नहीं जाता और इस प्रकार चौरासी लाख योनियों के चक्र में आता जाता रहता है ॥ ३ ॥ एक माया के ही जाल में सभी जीव रूपी पक्षी फंसे हुए हैं और उसी का ही अनेकों प्रकार से रसिक बनकर भोग कर रहे हैं। नानक कहता है कि जिस पर वह प्रभु कृपालु हो जाता है, गुरु के माध्यम से उसके सभी बन्धन कट जाते हैं ॥ ४ ॥ १३ ॥ ८२॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हे प्रभु, तेरी कृपा से ही सही रास्ता प्राप्त होता है और प्रभु कृपा से ही नाम–सुमिरन किया जाता है। प्रभु कृपा से ही बन्धन मुक्त हुआ जाता है और हे प्रभु, तेरी कृपा से ही अहंकार टूटता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, मुझसे तो कुछ नहीं बन पड़ता। यदि तुम ही लगाओ तो सेवा भक्ति में लगा जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरी रज़ा हो तो मैं वाणी का गायन करूँ और तुझे ही अच्छा लगे तभी मैं सत्य का बखान कर सकता हूँ। तुझे ही अच्छा लगता है तो सद्गुरु भी कृपा करता है और हे प्रभु, सभी प्रकार के सुख तेरी ही दया दृष्टि के कारण प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥ जो तुझे अच्छे लगते हैं वही कर्म निर्मल हैं और वही सच्चे कर्त्तव्य हैं। सब प्रकार के गुणों के भण्डार हे प्रभु, तेरे ही पास हैं। तू ही मेरा मालिक है और इस सेवक ने तो मात्र तेरे सामने अरदास (प्रार्थना) ही करनी है ॥ ३ ॥ प्रभु के प्रेम में रंगकर मन तन निर्मल हो जाता है और सद्संगत में सभी सुख प्राप्त हो जाते हैं। तेरे नाम में मेरा मन लीन बना रहे हे नानक, यही मेरे लिए सब से ऊँचा आनन्द है ॥ ४ ॥ १४ ॥ ८३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ नाम–रस के बिना अन्य जितने भी रसों का तुमने पान किया है, हे जीव, वे एक क्षण–भर के लिए भी तेरी तृष्णा को समाप्त नहीं कर पाए हैं। जब तू हरि–रस का स्वाद चखेगा तो उसे चखते ही तू आश्चर्य–भावना से भर कर आनन्दित हो उठेगा ॥ १ ॥ हे मेरी प्यारी जीभ, तू अमर करने वाला नाम–रस पी और इस रस में लीन होकर तू तृप्त हो जायेगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे जिहवा, तू राम के गुण गा और प्रत्येक क्षण हरि सुमिरन किए जा। अन्य कुछ भी न सुना जाए और बड़े भाग्य से मिली हुई साधु संगत के बिना और कहीं भी नहीं जाना चाहिए ॥ २ ॥ हे जीभ, आठों प्रहर उस परब्रह्म ठाकुर एवं अथाह परमात्मा की आराधना कर। ऐसा करने वाली जिहवा इस लोक और परलोक दोनों में ही सुखी रहेगी और हरि–गुण गाते हुए अमूल्य बन जाएगी ॥ ३ ॥ वनस्पति खिली रहती हैं, वृक्षों पौधों पर फूल फल लगे होते हैं परन्तु जिस व्यक्ति की जीभ प्रभु–नाम के रस में लीन है वह इस बाहरी सौन्दर्य के लिए नाम–रस का त्याग नहीं करती। हे नानक, वह गुरु जिसका सहायक बन जाता है वह अन्य प्रकार के खाद्य–अखाद्य पदार्थों को अपने पास भी नहीं आने देता ॥ ४ ॥ १५ ॥ ८४॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ इस मन रूपी मकान के चारों ओर तन रुपी बाड़ की रचना की गई है।

इस ही मधे बसतु अपार ॥ इस ही भीतरि सुनीअत साहु ॥ कवनु बापारी जा का ऊहा विसाहु ॥ १ ॥ नाम रतन को को बिउहारी ॥ अंम्रित भोजनु करे आहारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु तनु अरपी सेव करीजै ॥ कवन सु जुगति जितु करि भीजै ॥ पाइ लगउ तजि मेरा तेरै ॥ कवनु सु जनु जो सउदा जोरै ॥ २ ॥ महलु साह का किन बिधि पावै ॥ कवन सु बिधि जितु भीतरि बुलावै ॥ तूं वड साहु जा के कोटि वणजारे ॥ कवनु सु दाता ले संचारे ॥ ३ ॥ खोजत खोजत निज घरु पाइआ ॥ अमोल रतनु साचु दिखलाइआ ॥ करि किरपा जब मेले साहि ॥ कहु नानक गुर कै वेसाहि ॥ ४ ॥ १६ ॥ ८५ ॥ गउड़ी महला ५ गुआरेरी ॥ रैणि दिनसु रहै इक रंगा ॥ प्रभ कउ जाणै सद ही संगा ॥ ठाकुर नामु कीओ उनि वरतनि ॥ त्रिपति अघावनु हरि कै दरसनि ॥ १ ॥ हरि संगि राते मन तन हरे ॥ गुर पूरे की सरनी परे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरण कमल आतम आधार ॥ एकु निहारहि आगिआकार ॥ एको बनजु एको बिउहारी ॥ अवरु न जानहि बिनु निरंकारी ॥ २ ॥ हरख सोग दुहहूं ते मुकते ॥ सदा अलिपतु जोग अरु जुगते ॥ दीसहि सभ महि सभ ते रहते ॥ पारब्रहम का ओइ धिआनु धरते ॥ ३ ॥ संतन की महिमा कवन वखानउ ॥ अगाधि बोधि किछु मिति नही जानउ ॥ पारब्रहम मोहि किरपा कीजै ॥ धूरि संतन की नानक दीजै ॥ ४ ॥ १७ ॥ ८६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ तूं मेरा सखा तूंही मेरा मीतु ॥ तूं मेरा प्रीतमु तुम संगि हीतु ॥ तूं मेरी पति तूहै मेरा गहणा ॥ तुझ बिनु निमखु न जाई रहणा ॥ १ ॥ तूं मेरे लालन तूं मेरे प्रान ॥ तूं मेरे साहिब तूं मेरे खान ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ तुम राखहु तिव ही रहना ॥ जो तुम कहहु सोई मोहि करना ॥ जह पेखउ तहा तुम बसना ॥ निरभउ नामु जपउ तेरा रसना ॥ २ ॥ तूं मेरी नव निधि तूं भंडारु ॥ रंग रसा तूं मनहि अधारु ॥ तूं मेरी सोभा तुम संगि रचीआ ॥ तूं मेरी ओट तूहै मेरा तकीआ ॥ ३ ॥ मन तन अंतरि तुही धिआइआ ॥ मरमु तुमारा गुर ते पाइआ ॥ सतिगुर ते द्रिड़िआ इकु एकै ॥ नानक दास हरि हरि हरि टेकै ॥ ४ ॥ १८ ॥ ८७ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥

इस शरीर रूपी मकान में ही अनेकों वस्तुएं हैं और सुना जाता है कि इसी के भीतर वह सब से बड़ा साहूकार बसता है ॥ ऐसा यह कौन सा व्यापारी है जिसकी इतनी बड़ी साख है ॥ १ ॥ नाम रूपी रत्न का कारोबार करने वाला कौन है जिसका आहार अमृत रूपी भोजन है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं मन, तन उसको अर्पण करके उसकी सेवा करूँगा और जानने का प्रयत्न करूँगा कि वह कौन सी विधि है जिससे वह प्रसन्न होता है । मेरा तेरा की भावना छोड़कर मैं उसके चरण पकडूँगा और जानना चाहूँगा कि कौन सा ऐसा प्रभु सेवक है जो मुझे भी नाम रूपी सौदा दिलवा दे ॥ २ ॥ उस साहूकार का ठिकाना किस विधि से पाया जा सकता है और वह कौन सा ढंग है जिससे वह भीतर अपने पास बुलाता है । हे प्रभु, तू बड़ा साहूकार है जिसके छोटे–छोटे करोडों ही व्यापारी है । ऐसा कौन सा दाता है जो हमें वहाँ ले चल कर हमारा प्रवेश वहाँ करवा दे ॥ ३ ॥ खोजते–खोजते मैंने उसे अपने घट के अन्दर ही पा लिया है और वहीं मुझे सत्य रूपी अमूल्य रत्न का साक्षात्कार हुआ है । हे नानक, जब वह प्रभु रूपी साहूकार कृपा करके अपने से मिला लेता है तो गुरु के माध्यम से हमारी साख भी बन जाती है ॥ ४ ॥ १६ ॥ ८५ ॥ गउड़ी महला ५ गुआरेरी ॥ प्रभु–रंग में रंगे हुए लोग रात–दिन प्रभु के एक नाम–रंग में ही लीन बने रहते हैं । वे सदैव प्रभु को अपने साथ ही मानते हैं; उनका पूरा व्यवहार प्रभु–नाम पर ही आधारित होता है और प्रभु के दर्शन करके वे पूर्ण रूप से तृप्त बने रहते हैं ॥ १ ॥ जो सदैव प्रभु में लीन बने रहते हैं उनका मन तन हरा भरा बना रहता है और वे पूर्ण–गुरु की शरण में टिके रहते हैं ॥ २ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा के पवित्र चरण–कमल उनकी आत्मा का आधार होते हैं और वे आज्ञाकारी बन कर एक प्रभु की ओर ही एक टक देखते रहते हैं । उनका एक ही व्यापार और व्यवहार होता है कि वे निराकार प्रभु के बिना अन्य किसी को नहीं जानते मानते ॥ २ ॥ हर्ष और शोक दोनों से ही वे मुक्त बने रहते हैं और एक ओर तो वे युक्ति पूर्ण सांसारिक जीवन व्यतीत करते हैं और दूसरी ओर उस प्रभु से भी जुड़े रहकर सदैव अलिप्त भाव मन में धारण किए रहते हैं । वे दिखाई तो सब लोगों के बीच में पड़ते हैं परन्तु सदैव सबसे अलग ही दृष्टिगोचर होते हैं । परमात्मा का ध्यान उन्हें सदा बना रहता है ॥३॥ ऐसे शान्त पुरुषों की महिमा का क्या बखान किया जाए । वह बुद्धि से परे की बात है और हे प्रभु, मेरे पर कृपा करो तथा मुझ नानक को ऐसे शान्त पुरुषों की चरण–धूलि प्रदान करो ॥ ४ ॥ १७ ॥ ८६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हे प्रभु, तू ही मेरा साथी और तू ही मेरा मित्र है; तुम मेरे प्रियतम हो और मेरा प्रेम केवल तुम्हारे से ही है । तुम ही मेरा सम्मान और आभूषण हो; तेरे बिना एक क्षण भी रहना सम्भव नहीं है ॥ १ ॥ तू ही मुझे दुलारने वाला और मेरा प्राण है तथा तू ही मेरा साहिब और तू ही मेरा मार्ग दर्शक है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम हमें जैसा भी रखते हो हमें वैसे ही रहना होता है और हे प्रभु, जो तुम कहते हो मैं वही करता हूँ । मैं जिधर भी देखता हूँ मुझे तुम ही सर्वत्र बसे हुए दिखाई देते हो । हे निर्भय प्रभु, मैं अपनी जीभ से सदैव तेरे नाम का सुमिरन करता हूँ ॥ २ ॥ मेरी नौ निधियाँ तू ही है और तू ही मेरा भण्डार है । मैं तेरे रंग में रंगा हुआ हूँ और तू ही मेरे मन का आसरा है । तुम ही मेरी शोभा हो और मैं तुम्हारे साथ ही रचा–बसा हुआ हूँ । मैं तुम्हारी ही शरण में हूँ और तू ही मेरा आसरा है ॥ ३ ॥ मैं तन मन से तुम्हारा ही सुमिरन करता हूँ और तुम्हारे रहस्य को मैंने गुरु से जाना है । सद्गुरु के साध्यम से ही मैंने केवल एक प्रभु की ही आराधना की है और दास नानक को केवल एक हरि की ही टेक है ॥ ४ ॥ १८ ॥ ८७ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला५॥

बिआपत हरख सोग बिसथार ॥ बिआपत सुरग नरक अवतार ॥ बिआपत धन निरधन पेखि सोभा ॥ मूलु बिआधी बिआपसि लोभा ॥ १ ॥ माइआ बिआपत बहु परकारी ॥ संत जीवहि प्रभ ओट तुमारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिआपत अहंबुधि का माता ॥ बिआपत पुत्र कलत्र संगि राता ॥ बिआपत हसति घोड़े अरु बसता ॥ बिआपत रूप जोबन मद मसता ॥ २ ॥ बिआपत भूमि रंक अरु रंगा ॥ बिआपत गीत नाद सुणि संगा ॥ बिआपत सेज महल सीगार ॥ पंच दूत बिआपत अंधिआर ॥ ३ ॥ बिआपत करम करै हउ फासा ॥ बिआपति गिरसत बिआपत उदासा ॥ आचार बिउहार बिआपत इह जाति ॥ सभ किछु बिआपत बिनु हरि रंग रात ॥ ४ ॥ संतन के बंधन काटे हरि राइ ॥ ता कउ कहा बिआपै माइ ॥ कहु नानक जिनि धूरि संत पाई ॥ ता के निकटि न आवै माई ॥ ५ ॥ १९ ॥ ८८ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ नैनहु नीद पर द्रिसटि विकार ॥ स्रवण सोए सुणि निंद वीचार ॥ रसना सोई लोभि मीठै सादि ॥ मनु सोइआ माइआ बिसमादि ॥ १ ॥ इसु ग्रिह महि कोई जागतु रहै ॥ साबतु वसतु ओहु अपनी लहै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगल सहेली अपनै रस माती ॥ ग्रिह अपुने की खबरि न जाती ॥ मुसनहार पंच बटवारे ॥ सूने नगरि परे ठगहारे ॥ २ ॥ उन ते राखै बापु न माई ॥ उन ते राखै मीतु न भाई ॥ दरबि सिआणप ना ओइ रहते ॥ साध संगि ओइ दुसट वसि होते ॥ ३ ॥ करि किरपा मोहि सारिंगपाणि ॥ संतन धूरि सरब निधान ॥ साबतु पूंजी सतिगुर संगि ॥ नानकु जागै पारब्रहम कै रंगि ॥ ४ ॥ सो जागै जिसु प्रभु किरपालु ॥ इह पूंजी साबतु धनु मालु ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ २० ॥ ८९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जा कै वसि खान सुलतान ॥ जा कै वसि है सगल जहान ॥ जा का कीआ सभु किछु होइ ॥ तिस ते बाहरि नाही कोइ ॥ १ ॥ कहु बेनंती अपुने सतिगुर पाहि ॥ काज तुमारे देइ निबाहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभ ते ऊच जा का दरबारु ॥ सगल भगत जा का नामु अधारु ॥ सरब बिआपित पूरन धनी ॥ जा की सोभा घटि घटि बनी ॥ २ ॥ जिसु सिमरत दुख डेरा ढहै ॥ जिसु सिमरत जमु किछू न कहै ॥ जिसु सिमरत

हर्ष–शोक अपने विस्तृत रूप में सर्वत्र व्याप्त हैं । स्वर्ग–नरक में जाने की माया भी सर्वत्र व्याप्त है । धनी और निर्धन अपनी शोभा एवं अपनी धनहीनता को देखने वाले भी फैले हुए हैं और सबसे अधिक सब व्याधियों का मूल लोभ सवर्त्र व्याप्त है ॥ १ ॥ माया अनेकों विधियों से जीवों को प्रभावित करती है परन्तु हे प्रभु, शान्त पुरुष (सन्त) केवल तुम्हारे आश्रय में ही जीवित बने रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अहंकार में लीन लोग भी तथा पुत्र–स्त्री में रमें रहने वाले लोग भी चारों ओर बिखरे पड़े हैं । हाथी, घोड़े और सुन्दर वस्त्रों का लोभ भी फैला हुआ है और चारों ओर रूप, यौवन और मदमस्ती भी व्याप्त है ॥२॥ इन सभी विधियों से माया प्रभावित कर रही है । कहीं धरती का स्वामित्व है, कहीं कंगाली है, कहीं गीत नाद सुनाया जा रहा है तो कहीं सुन्दर श्रंगार शय्या की लालसा है । कहीं काम, क्रोध आदि पाँचों दूतों ने अन्धकार फैला रखा है ॥३॥ कहीं कोई कर्म करता हुआ अहंकार में फंसा हुआ है और कहीं कोई गृहस्थी में रहता हुआ उदासीन रूप में रह रहा है । कोई धार्मिक कर्म–काण्डों में लीन है और किसी को अपनी जाति का अभिमान है । यह सब कुछ इसी लिए प्रभावित करता है क्योंकि व्यक्ति हरि–रंग में लीन नहीं होता ॥ ४॥ परमात्मा ने जिन शान्त पुरुषों के बन्धन काट दिए हैं उनको माया भला कैसे प्रभावित कर सकती है । नानक कहता है कि जिन्होंने शान्त पुरुषों की चरण–धूलि प्राप्त कर ली है यह माया उनके पास तक नहीं आती ॥ ५ ॥ १९ ॥ ८८ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ विकार पूर्ण दृष्टि से परायी वस्तु को देखना आँखों में नींद के समान है और निन्दा के विचारों को सुन ना कानों के सोये होने जैसा है । लोभ रूपी मीठे स्वाद को लेना जीभ के सोने के समान है और माया की मस्ती में डूबे रहना मन के सोने के समान है ॥ १ ॥ हे भाई, इस शरीर रूपी घर में कोई विरला ही जागता रहता है और जो चेतन बना रहता है वह अपने घर के सामान और रास पूँजी को सम्भाले रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विषय विकार रूपी सारी सहेलियाँ अपने–अपने रस में मस्त बनी रहती है और उन्हें अपने वास्तविक घर की जरा भी खोज खबर पता नहीं लगती । इसे लूटने वाले पाँच चोर हैं जो इस सूने घर को देखकर इसे लूटने आ पहुँचते हैं ॥ २ ॥ इन पाँचों से माता–पिता, मित्र, भाई कोई भी रक्षा नहीं कर सकता । धन देने और चतुराईयों के फलस्वरूप भी यह चोर पीछे नहीं हटते । ये दुष्ट तो केवल सद्संगत में ही वश में आते हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु, मुझ पर कृपा कर, मुझे शान्त पुरुषों (सन्तों) के चरणों की धूलि दे । यही मेरे लिए हर प्रकार का खजाना है । सद्गुरु की संगत में ही रहकर मेरी रास पूँजी बची रह सकती है । सेवक नानक परमात्मा के प्रेम–रंग में ही रंगकर चेतन बना रह सकता है ॥ ४ ॥ जिस पर प्रभु कृपा करे वही होश में बना रहता है और केवल उसी की जीवन रूपी रास पूँजी और गुण ठीक–ठाक बचे रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूसरा ॥ २० ॥ ८९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जिस प्रभु के वश में सिपहसालार, सुल्तान और सारा संसार है; जिसका किया सब कुछ होता है उससे बाहर अन्य कोई भी नहीं है ॥ १ ॥ हे भाई, अपने सद्गुरु के पास विनती कर जिससे तुम्हारे सभी उद्देश्य पूरे हो जाएं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसका दरबार सबसे ऊँचा है और सभी भक्तों को जिसके नाम का ही आसरा है वह पूर्ण मालिक सव में व्याप्त है और प्रत्येक हृदय में शोभायमान है ॥ २ ॥ उसी के सुमिरन से दुख का डेरा टूट जाता है; उसके सुमिरन से यम कुछ नहीं कहता;

होत सूके हरे ॥ जिसु सिमरत डूबत पाहन तरे ॥ ३ ॥ संत सभा कउ सदा जैकारु ॥ हरि हरि नामु जन प्रान अधारु ॥ कहु नानक मेरी सुणी अरदासि ॥ संत प्रसादि मोकउ नाम निवासि ॥ ४ ॥ २१ ॥ ९० ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ सतिगुर दरसनि अगनि निवारी ॥ सतिगुर भेटत हउमै मारी ॥ सतिगुर संगि नाही मनु डोलै ॥ अंम्रित बाणी गुरमुखि बोलै ॥ १ ॥ सभु जगु साचा जा सच महि राते ॥ सीतल साति गुर ते प्रभ जाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत प्रसादि जपै हरि नाउ ॥ संत प्रसादि हरि कीरतनु गाउ ॥ संत प्रसादि सगल दुख मिटे ॥ संत प्रसादि बंधन ते छुटे ॥ २ ॥ संत क्रिपा ते मिटे मोह भरम ॥ साध रेण मजन सभि धरम ॥ साध क्रिपाल दइआल गोविंदु ॥ साधा महि इह हमरी जिंदु ॥ ३ ॥ किरपा निधि किरपाल धिआवउ ॥ साधसंगि ता बैठणु पावउ ॥ मोहि निरगुण कउ प्रभि कीनी दइआ ॥ साधसंगि नानक नामु लइआ ॥ ४ ॥ २२ ॥ ९१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ साधसंगि जपिओ भगवंतु ॥ केवल नामु दीओ गुरि मंतु ॥ तजि अभिमान भए निरवैर ॥ आठ पहर पूजहु गुर पैर ॥ १ ॥ अब मति बिनसी दुसट बिगानी ॥ जब ते सुणिआ हरि जसु कानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहज सूख आनंद निधान ॥ राखनहार रखि लेइ निदान ॥ दूख दरद बिनसे भै भरम ॥ आवण जाण रखे करि करम ॥ २ ॥ पेखै बोलै सुणै सभु आपि ॥ सदा संगि ता कउ मन जापि ॥ संत प्रसादि भइओ परगासु ॥ पूरि रहे एकै गुणतासु ॥ ३ ॥ कहत पवित्र सुणत पुनीत ॥ गुण गोविंद गावहि नित नीत ॥ कहु नानक जा कउ होहु क्रिपाल ॥ तिसु जन की सभ पूरन घाल ॥ ४ ॥ २३ ॥ ९२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ बंधन तोड़ि बोलावै रामु ॥ मन महि लागै साचु धिआनु ॥ मिटहि कलेस सुखी होइ रहीऐ ॥ ऐसा दाता सतिगुरु कहीऐ ॥ १ ॥ सो सुखदाता जि नामु जपावै ॥ करि किरपा तिसु संगि मिलावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसु होइ दइआलु तिसु आपि मिलावै ॥ सरब निधान गुरू ते पावै ॥ आपु तिआगि मिटै आवण जाणा ॥ साध कै संगि पारब्रहमु पछाणा ॥ २ ॥ जन ऊपरि प्रभ भए दइआल ॥

उसके सुमिरन से सूखे भी हरे हो जाते हैं और उसी के सुमिरन से डूबते हुए पत्थर भी तैरने लगते हैं । शान्त पुरुषों की सद्संगत के सामने सदा सिर झुकाया जाना चाहिए क्योंकि प्रभु के सेवकों का आधार केवल हरि–नाम ही होता है । हे नानक, मेरी अरदास सुन ली गई और शान्त पुरुषों की कृपा से मेरा निवास नाम में ही बन गया ॥ ४ ॥ २१ ॥ ९० ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ सद्गुरु के दर्शन से अन्तर्मन की अग्नि निवृत्त हो गई । सद्गुरु को मिलने से मेरा अहंकार समाप्त हो गया है । सद्गुरु के संग रहने से मन चंचल नहीं होता और व्यक्ति गुरमुख बनकर अमृत रूपी वाणी का उच्चारण करते हैं ॥ १ ॥ जब व्यक्ति सत्य में लीन हो जाता है तो उसे सारा जगत सत्य–प्रभु जैसा ही दिखाई देता है । गुरु के माध्यम से प्रभु को जानकर हृदय शीतल एवं शान्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शान्त पुरुष (संत) की कृपा से ही हरि–नाम का जाप एवं प्रभु की कीर्ति का गुणानुवाद होता है । शान्त पुरुषों की कृपा से ही सभी दुख मिट जाते हैं और व्यक्ति बन्धनों से छूट जाता है ॥ २ ॥ शान्त पुरुषों की कृपा से ही मोह और भ्रम मिट जाते हैं और गुरु रूपी साधु की चरण–धूलि में स्नान ही सभी धर्मो का धर्म है । साधु पुरुषों की यदि कृपा हो तो प्रभु भी दयालु हो जाता है; इसी लिए मेरे प्राण ऐसे पुरुषों में ही लीन बने रहते हैं ॥ ३ ॥ कृपा के खजाने कृपालु प्रभु का सुमिरन किया जाए तो साधुसंगत में बैठने का अवसर प्राप्त होता है । हे नानक, मुझ गुणहीन पर प्रभु ने दया की है जिससे साधु संगत में मैं प्रभु नाम का सुमिरन करने लग गया हूँ ॥ ४ ॥ २२ ॥ ९१ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जिन्होंने सद्संगत में प्रभु का नाम जपा है और जिन्हें केवल प्रभु–नाम ही गुरुमन्त्र के रूप में दे दिया गया है वे अभिमान को त्याग कर निरवैर हो गये हैं । हर व्यक्ति को आठों प्रहर गुरु की ही चरण वन्दना करनी चाहिए ॥ १ ॥ जब से मैंने अपने कानों से हरि–यश को सुना है तो मेरे अन्दर बेगानापन अनुभव कराने वाली दुष्ट मति नष्ट हो गयी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह प्रभु सहज सुख एवं आनन्द का खजाना है और अन्त में वही सब का रक्षक है । ऐसा मानने वालों के दुख, दर्द भय एवं भ्रम नष्ट हो जाते हैं और प्रभु कृपा करके उन्हें आवागमन के चक्कर से बचा लेता है ॥ २ ॥ जो देखता, बोलता और सब कुछ स्वयं ही सुनता है, हे मन, सदैव उसी का जाप कर । शान्त पुरुषों की कृपा से ही वह मन में प्रकाशित होता है और गुणों का भण्डार वह प्रभु सर्वत्र अनुभव होता है ॥ ३ ॥ जिनके कहने और सुनने से व्यक्ति पवित्र एवं पुनीत हो जाता है हे भाई, उसी प्रभु के सदैव गुण गाते रहना चाहिए । दास नानक कहता है कि जिस पर वह प्रभु कृपा करता है उसकी मेहनत पूर्ण रूप से सफल हो जाती है ॥ ४ ॥ २३ ॥ ९२ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जो बन्धन को तोड़ता है, राम नाम का सुमिरन कराता है, मन को सत्य पर केन्द्रित करता है; जिसके मिलने से क्लेष मिट जाते हैं और व्यक्ति सुखी हो जाता है ऐसे दाता को सद्गुरु कहा जाता है ॥ १ ॥ सुखदाता वही है जो नाम का जाप कराता है और कृपा करके प्रभु से मिला देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस पर प्रभु दयालु होता है उसे स्वयं ही अपने से मिला लेता है । प्रभु रूपी गुरु से ही सभी खजाने प्राप्त होते हैं । जब व्यक्ति अहं भाव त्याग देता है तो उसका आवागमन छूट जाता है गुरु के साथ उसे परब्रह्म की पहचान भी हो जाती है ॥ २ ॥ प्रभु अपने सेवक पर दयालु बना रहता है और

जन की टेक एक गोपाल ॥ एका लिव एको मनि भाउ ॥ सरब निधान जन कै हरि नाउ ॥ ३ ॥ पारब्रहम सिउ लागी प्रीति ॥ निरमल करणी साची रीति ॥ गुरि पूरै मेटिआ अंधिआरा ॥ नानक का प्रभु अपर अपारा ॥ ४ ॥ २४ ॥ ९३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जिसु मनि वसै तरै जनु सोइ ॥ जा कै करमि परापति होइ ॥ दूखु रोगु कछु भउ न बिआपै ॥ अंम्रित नामु रिदै हरि जापै ॥ १ ॥ पारब्रहमु परमेसुरु धिआईऐ ॥ गुर पूरे ते इह मति पाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करण करावनहार दइआल ॥ जीअ जंत सगले प्रतिपाल ॥ अगम अगोचर सदा बेअंता ॥ सिमरि मना पूरे गुर मंता ॥ २ ॥ जा की सेवा सरब निधानु ॥ प्रभ की पूजा पाईऐ मानु ॥ जा की टहल न बिरथी जाइ ॥ सदा सदा हरि के गुण गाइ ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ अंतरजामी ॥ सुख निधान हरि अलख सुआमी ॥ जीअ जंत तेरी सरणाई ॥ नानक नामु मिलै वडिआई ॥ ४ ॥ २५ ॥ ९४ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जीअ जुगति जा कै है हाथ ॥ सो सिमरहु अनाथ को नाथु ॥ प्रभ चिति आए सभु दुखु जाइ ॥ भै सभ बिनसहि हरि कै नाइ ॥ १ ॥ बिनु हरि भउ काहे का मानहि ॥ हरि बिसरत काहे सुखु जानहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिनि धारे बहु धरणि अगास ॥ जा की जोति जीअ परगास ॥ जा की बखस न मेटै कोइ ॥ सिमरि सिमरि प्रभु निरभउ होइ ॥ २ ॥ आठ पहर सिमरहु प्रभ नामु ॥ अनिक तीरथ मजनु इसनानु ॥ पारब्रहम की सरणी पाहि ॥ कोटि कलंक खिन महि मिटि जाहि ॥ ३ ॥ बेमुहताजु पूरा पातिसाहु ॥ प्रभ सेवक साचा वेसाहु ॥ गुरि पूरै राखे दे हाथ ॥ नानक पारब्रहम समराथ ॥ ४ ॥ २६ ॥ ९५ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ गुर परसादि नामि मनु लागा ॥ जनम जनम का सोइआ जागा ॥ अंम्रित गुण उचरै प्रभ बाणी ॥ पूरे गुर की सुमति पराणी ॥ १ ॥ प्रभ सिमरत कुसल सभि पाए ॥ घरि बाहरि सुख सहज सबाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोई पछाता जिनहि उपाइआ ॥ करि किरपा प्रभि आपि मिलाइआ ॥ बाह पकरि लीनो करि अपना ॥ हरि हरि कथा सदा जपु जपना ॥ २ ॥ मंत्रु तंत्रु अउखधु पुनहचारु ॥

प्रभु के सेवक की टेक भी केवल एक प्रभु ही होता है । उसके मन में केवल एक ही भाव बना रहता है और उसकी सुरति केवल एक में ही लीन बनी रहती है । प्रभु नाम ही सेवक के लिए सब प्रकार का खजाना है ॥ ३ ॥ जब परब्रह्म से प्रेम लग जाता है तो व्यक्ति का कार्य व्यवहार निर्मल हो जाता है और उसका जीवन ढंग भी सत्य पूर्ण हो जाता है । पूर्ण गुरु ही अन्धकार का विनाश करता है और नानक का प्रभु अपरंपर एवं ओर-छोर से परे है ॥ ४ ॥ २४ ॥ ९३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ जिस के मन में प्रभु बस जाता है वह सेवक संसार-सागर से पार उतर जाता है । जिसके भाग्य में है उसे ही वह प्राप्त होता है । प्रभु का अमृत-नाम हृदय से सुमिरन करने पर दुख, रोग, भय आदि व्यक्ति को प्रभावित नहीं करते । पूर्ण गुरु से यही आदेश मिलता है कि केवल उस परब्रह्म परमेश्वर की ही आराधना की जानी चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दयालु प्रभु सब कुछ करने कराने वाला है; सब जीवों का पालन करने वाला है; हे मन, तू पूर्ण गुरु के उपदेश के अनुसार उस अगम्य, अगोचर एवं अनन्त प्रभु का सुमिरन कर ॥ २ ॥ उसकी सेवा सुमिरन करने से सभी खजाने मिल जाते हैं और प्रभु के सुमिरन से ही सम्मान प्राप्त होता है । प्रभु की की हुई सेवा व्यर्थ नहीं जाती इसलिए सदा प्रभु के ही गुण गाए जाने चाहिए ॥ ३ ॥ हे अन्तर्यामी प्रभु, तू कृपा कर; तू ही सुखों का भण्डार है और अदृष्ट रूप से बना रहने वाला सबका स्वामी है । सृष्टि के सभी जीव-जन्तु तेरी शरण में हैं और हे नानक, प्रभु नाम से ही बड़प्पन प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ २५ ॥ ९४॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हे भाई, सब जीवों की प्रबन्ध-युक्ति जिसके हाथ में है, अनाथों के नाथ उसी प्रभु का सुमिरन करो । प्रभु चित्त में बसने पर सभी दुख दूर हो जाते हैं और प्रभु-नाम के कारण ही सभी भय नष्ट हो जाते हैं ॥ १ ॥ प्रभु-भय के बिना अन्य भला किसका भय है और हरि को भूल जाने पर भला कैसे सुख जाना जा सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने अनेकों धरतियों और आकाशों को धारणकर रखा है; जिसकी ज्योति से सभी जीव प्रकाशमान है; जिसके दिए हुए को कोई छीन नहीं सकता; हे भाई, पूर्ण रूप से निर्भय होकर ऐसे प्रभु का सुमिरन करो ॥ २ ॥ आठों प्रहर प्रभु-नाम सुमिरन ही अनेकों तीर्थों के स्नान का फल देने वाला है । परमात्मा की शरण में आ जाने पर करोड़ों कलंक क्षण भर में मिट जाते हैं । प्रभु के सेवकों का सच्चा आश्रय एवं भरोसा वह पूर्ण रूप से बेमुहताज बादशाह प्रभु ही है । हे नानक, पूर्ण गुरु के माध्यम से वह अपने वरद हस्त द्वारा सेवकों की रक्षा करता है क्योंकि केवल परमात्मा ही सर्व समर्थ है ॥ ४ ॥ २६ ॥ ९५ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ गुरु की कृपा से जब मन में प्रभु-नाम आ बसता है तो जन्म-जन्मान्तरों से सोया हुआ व्यक्ति जाग जाता है । अब वह अपनी वाणी के माध्यम से प्रभु के अमृत-गुणों का उच्चारण करता है और पूर्ण गुरु की सुमति धारण कर लेता है ॥ १ ॥ प्रभु-सुमिरन से सभी सुख प्राप्त होते हैं और घर-बाहर सदैव स्थिर बने रहने वाले सुखों में ही वास बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रभु ने पैदा किया है उसकी पहचान हो जाती है और प्रभु कृपा करके स्वयं ही अपने में मिला लेता है । प्रभु ने बाँह पकड़कर अपने सेवक को अपना बना लिया है और ऐसा व्यक्ति सदैव प्रभु-नाम का ही जाप करता है ॥ २ ॥ मन्त्र-तन्त्र, औषधियाँ एवं अनेकों प्रायश्चित कर्म आदि

हरि हरि नामु जीअ प्रान अधारु ॥ साचा धनु पाइओ हरि रंगि ॥ दुतरु तरे साध कै संगि ॥ ३ ॥ सुखि बैसहु संत सजन परवारु ॥ हरि धनु खटिओ जा का नाहि सुमारु ॥ जिसहि परापति तिसु गुरु देइ ॥ नानक बिरथा कोइ न हेइ ॥ ४ ॥ २७ ॥ ९६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हसत पुनीत होहि ततकाल ॥ बिनसि जाहि माइआ जंजाल ॥ रसना रमहु राम गुण नीत ॥ सुखु पावहु मेरे भाई मीत ॥ १ ॥ लिखु लेखणि कागदि मसवाणी ॥ राम नाम हरि अंम्रित बाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इह कारजि तेरे जाहि बिकार ॥ सिमरत राम नाही जम मार ॥ धरम राइ के दूत न जोहै ॥ माइआ मगन न कछूऐ मोहै ॥ २ ॥ उधरहि आपि तरै संसारु ॥ राम नाम जपि एकंकारु ॥ आपि कमाउ अवरा उपदेस ॥ राम नाम हिरदै परवेस ॥ ३ ॥ जा कै माथै एहु निधानु ॥ सोई पुरखु जपै भगवानु ॥ आठ पहर हरि हरि गुण गाउ ॥ कहु नानक हउ तिसु बलि जाउ ॥ ४ ॥ २८ ॥ ९७ ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ५ चउपदे दुपदे १ओ सतिगुर प्रसादि ॥

जो पराइओ सोई अपना ॥ जो तजि छोडन तिसु सिउ मनु रचना ॥ १ ॥ कहहु गुसाई मिलीऐ केह ॥ जो बिबरजत तिस सिउ नेह ॥ १ ॥ रहाउ ॥ झूठु बात सा सचु करि जाती ॥ सति होवनु मनि लगै न राती ॥ २ ॥ बावै मारगु टेढा चलना ॥ सीधा छोडि अपूठा बुनना ॥ ३ ॥ दुहा सिरिआ का खसमु प्रभु सोई ॥ जिसु मेले नानक सो मुकता होई ॥ ४ ॥ २९ ॥ ९८ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ कलिजुग महि मिलि आए संजोग ॥ जिचरु आगिआ तिचरु भोगहि भोग ॥ १ ॥ जलै न पाईऐ राम सनेही ॥ किरति संजोगि सती उठि होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ देखा देखी मनहठि जलि जाईऐ ॥ प्रिअ संगु न पावै बहु जोनि भवाईऐ ॥ २ ॥ सील संजमि प्रिअ आगिआ मानै ॥ तिसु नारी कउ दुखु न जमानै ॥ ३ ॥ कहु नानक जिनि प्रिउ परमेसरु करि जानिआ ॥ धंनु सती दरगह परवानिआ ॥ ४ ॥ ३० ॥ ९९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हम धनवंत भागठ सच नाइ ॥ हरि गुण गावह

सब के प्राणों के आधार प्रभु–नाम के अन्तर्गत ही आ जाते हैं। प्रभु–नाम में रंगे हुए व्यक्ति ने वास्तव में सच्चा धन प्राप्त कर लिया होता है और साधुजनों की संगत में वह विषम सागर को पार कर लेता है ॥ ३ ॥ हे सन्त जनों, एक परिवार बन कर दूसरे से प्रेम करते हुए सुखपूर्वक आनन्दित होकर मिल बैठो। इस प्रकार ऐसे हरि रूपी धन की कमाई होगी जिसका कोई अन्त नहीं पाया जा सकता। हे नानक, जिसके भाग्य में लिखा होता है उसी को ही गुरु यह नाम–धन प्रदान करता है। गुरु के द्वार पर आकर किसी व्यक्ति का आना व्यर्थ नहीं जाता है ॥ ४ ॥ २७ ॥ ९६ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ हे मित्र, अपनी जीभ से सदैव प्रभु के गुण गाओ जिससे तुम्हारे हाथ भी सेवा करने के फल स्वरूप तुरन्त पवित्र हो जाएंगे; तुम्हारे माया के भ्रम रूपी जाल नष्ट हो जाएंगे और तुम्हे सुख ही सुख प्राप्त होगा ॥ १ ॥ हे मेरे भाई, कागज कलम और स्याही की दवात लेकर राम–नाम और प्रभु की अमृत–वाणी का लेख ही लिखो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस कार्य से तेरी विकार–युक्त वासनाएँ दूर हो जाएंगी और प्रभु–सुमिरन से तुझे यम की मार नहीं पड़ेगी। धर्मराज के दूत तेरी ओर ध्यान नहीं लगाएंगे और माया की मस्ती तुझे कुछ भी मोहित नहीं कर सकती ॥ २ ॥ केवल राम–नाम का मात्र एक ओअंकार रूप में ही सुमिरन करते रहना चाहिए जिससे तेरा स्वयं का उद्धार तो होगा ही संसार के अन्य लोग भी पार उतर जाएंगे। पहले स्वयं आचरण में उतारो और फिर दूसरों को उपदेश दो तभी राम–नाम हृदय में प्रवेश कर सकेगा ॥ ३ ॥ जिसके माथे पर सुमिरन के इस खजाने के लेख लिखे हुए हैं वही व्यक्ति भगवान का सुमिरन करता है। हे नानक, मैं उसी व्यक्ति पर बलिहारी जाता हूँ जो आठों प्रहर प्रभु के गुण गाता है ॥ ४ ॥ ८८ ॥ ९७ ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ५ चउपदे दुपदे   १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

व्यक्ति पराए को ही अपना मानता है और जिसका त्याग किया जाना चाहिए उसी में ही मन लगाता है ॥ १ ॥ कहो भाई, वह गोसाई प्रभु कैसे मिलेगा क्योंकि जो विवर्जित है तेरा प्रेम उसी से बना हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ झूठी बात को तूने सत्य माना हुआ है और जिसने अन्ततः सत्य होना है उसमें तेरा मन रत्ती भर भी नहीं लगता ॥ २ ॥ विषय–विकारों से भरे हुए काम–मार्ग पर तू टेढ़ी चाल से चलता है और जीवन के सीधे और सरल रास्ते को छोड़कर तू उलटी बुनाई में ही उलझा हुआ है ॥ ३ ॥ इस लोक और उस लोक (वाम मार्ग और दक्षिण मार्ग) इन सब का स्वामी और इन सब से ऊपर वह प्रभु ही है। हे नानक, जिस व्यक्ति को परमात्मा अपने से मिला लेता है वही इन सांसारिक जीवन पद्धितियों से मुक्त बना रहता है ॥ ४ ॥ २९ ॥ ९८ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ इस क्लेषपूर्ण संसार में पूर्व संयोगों के कारण (पति–पत्नि) एक दूसरे से मिलते है। जब तक प्रभु की आज्ञा होती है तब तक वह इस संसार के भोगों को भोगते हैं ॥ १ ॥ पति के साथ चिता पर जल जाने से उस प्यार करने वाले प्रभु पति को नहीं पाया जा सकता। जीव–स्त्री किए हुए कर्मों से बने संयोग के अनुसार जल कर सती हो जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संसार में ऐसे हो रहे कर्म की देखा देखी मन में हठ धारण कर स्त्री जल मरती है परन्तु इस प्रकार प्रियतम का साथ नहीं पाया जाता और अनेकों योनियों में भटका जाता है ॥ २ ॥ जो स्त्री शीलवान और संयमी होकर प्रियतम की आज्ञा में रहती है उस स्त्री को संसार का कोई दुख नहीं मिलता। हे नानक, जिसने भी प्रभु–परमेश्वर को अपना प्रियतम माना है (और उसकी आज्ञा में जीवन व्यतीत किया है) वही सती धन्य है और प्रभु के समक्ष स्वीकृत होती है ॥ ४ ॥ ३० ॥ ९९ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥ सहज स्वाभाविक रूप से ही प्रभु के गुण गाते गाते हम सब सच्चे नाम रूपी धन के कारण धनवान और भाग्यशाली बनते जा रहे हैं।

सहजि सुभाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पीऊ दादे का खोलि डिठा खजाना ॥ ता मेरै मनि भइआ निधाना ॥ १ ॥ रतन लाल जा का कछू न मोलु ॥ भरे भंडार अखूट अतोल ॥ २ ॥ खावहि खरचहि रलि मिलि भाई ॥ तोटि न आवै वधदो जाई ॥ ३ ॥ कहु नानक जिसु मसतकि लेखु लिखाइ ॥ सु एतु खजानै लइआ रलाइ ॥ ४ ॥ ३१ ॥ १०० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ डरि डरि मरते जब जानीऐ दूरि ॥ डरु चूका देखिआ भरपूरि ॥ १ ॥ सतिगुर अपने कउ बलिहारै ॥ छोडि न जाई सरपर तारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूखु रोगु सोगु बिसरै जब नामु ॥ सदा अनंदु जा हरि गुण गामु ॥ २ ॥ बुरा भला कोई न कहीजै ॥ छोडि मानु हरि चरन गहीजै ॥ ३ ॥ कहु नानक गुर मंत्रु चितारि ॥ सुखु पावहि साचै दरबारि ॥ ४ ॥ ३२ ॥ १०१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जा का मीतु साजनु है समीआ ॥ तिसु जन कउ कहु का की कमीआ ॥ १ ॥ जा की प्रीति गोबिंद सिउ लागी ॥ दूखु दरदु भ्रमु ता का भागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कउ रसु हरि रसु है आइओ ॥ सो अन रस नाही लपटाइओ ॥ २ ॥ जा का कहिआ दरगह चलै ॥ सो किस कउ नदरि लै आवै तलै ॥ ३ ॥ जा का सभु किछु ता का होइ ॥ नानक ता कउ सदा सुखु होइ ॥ ४ ॥ ३३ ॥ १०२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जा कै दुखु सुखु सम करि जापै ॥ ता कउ काड़ा कहा बिआपै ॥ १ ॥ सहज अनंद हरि साधू माहि ॥ आगिआकारी हरि हरि राइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै अचिंतु वसै मनि आइ ॥ ता कउ चिंता कतहूं नाहि ॥ २ ॥ जा कै बिनसिओ मन ते भरमा ॥ ता कै कछू नाही डरु जमा ॥ ३ ॥ जा कै हिरदै दीओ गुरि नामा ॥ कहु नानक ता कै सगल निधाना ॥ ४ ॥ ३४ ॥ १०३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ अगम रूप का मन महि थाना ॥ गुर प्रसादि किनै विरलै जाना ॥ १ ॥ सहज कथा के अंम्रित कुंटा ॥ जिसहि परापति तिसु लै भुंचा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनहत बाणी थानु निराला ॥ ता की धुनि मोहे गोपाला ॥ २ ॥ तह सहज अखारे अनेक अनंता ॥ पारब्रहम के संगी संता ॥ ३ ॥ हरख अनंत सोग नही बीआ ॥ सो घरु गुरि नानक कउ दीआ ॥ ४ ॥ ३५ ॥ १०४ ॥ गउड़ी मः ५ ॥ कवन रूपु तेरा आराधउ ॥ कवन जोग काइआ ले साधउ ॥ १ ॥

॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब मैंने पिता और दादा अर्थात् गुरु नानक से गुरु राम दास तक सभी गुरुजनों का वाणी रूप खजाना खोलकर देखा तो मेरे मन का आध्यात्मिक आनन्द का भण्डार भर गया ॥ १ ॥ इस वाणी रूपी भण्डार में परमात्मा के गुणानुवाद के अमूल्य रत्नों एवं लालों के भण्डार मैंने देखे जो न तो कभी तौले जा सकते हैं और न ही कभी समाप्त हो सकते हैं ॥ २ ॥ हे भाई, व्यक्ति सत्संग में मिल बैठकर इस भण्डार को खाते खर्चते हैं तो भी इस भण्डार में कमी नहीं आती और यह नित्य बढ़ता ही जाता है ॥ ३ ॥ हे नानक, जिस व्यक्ति के मस्तक पर भाग्य लेख लिखे रहते हैं उन्हें ही इस भण्डार का साझेदार बनाया जाता है अर्थात वे ही सद्संगत में बैठकर आनन्दित होते हैं ॥ ४ ॥ ३१ ॥ १०० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जब प्रभु को दूर जाना जाता है तभी भ्रमों दुविधाओं के भय में रहकर बार-बार मरना पड़ता है। जब प्रभु को चारों ओर व्याप्त देखा जाता है तो डर चुक जाता है ॥ १ ॥ मैं अपने सद्गुरु पर बलिहारी जाता हूँ क्योंकि वह दुख में हमें छोड़ता नहीं और आवश्यक रूप में हमारा उद्धार कर देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब प्रभु-नाम विस्मृत हो जाता है तब दुख, रोग, शोक सभी प्रभावित करते हैं और जब हरि-गुणों का गायन किया जाता है तो सदैव आनन्द बना रहता है ॥ २ ॥ किसी को बुरा-भला न कहकर एवं अभिमान को छोड़कर प्रभु-चरणों को पकड़े रहना चाहिए ॥ ३ ॥ हे नानक, गुरु के उपदेश को अपने मन में याद रख तभी तू उस सत्य-प्रभु के दरबार में रहकर सुख प्राप्त कर सकेगा ॥ ४ ॥ ३२ ॥ १०१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसका मित्र और सज्जन सर्वत्र समान रूप से व्याप्त परमात्मा है उस व्यक्ति को भला किस बात की कमी हो सकती है ॥ १ ॥ जिसका प्रेम परमात्मा से लग गया है उसके दुख, दर्द एवं भ्रम भाग खड़े होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने हरि-रस में रस लेना शुरू कर दिया है अब वह अन्य रसों में लीन नहीं होता ॥ २ ॥ जिसका कहा हुआ प्रभु के समक्ष भी स्वीकृत होता है वह भला किसको अपनी नज़र के नीचे रखेगा अर्थात् किसकी परवाह करेगा ॥ ३ ॥ जिसने अपना सब कुछ उस प्रभु का मान लिया है हे नानक, उसे सदैव सुख मिलता रहता है ॥ ४ ॥ ३३ ॥ १०२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो दुख और सुख को समान भाव से जानता है उसको किसी प्रकार का भी क्लेष नहीं होता ॥ १ ॥ प्रभु के भक्त के मन में सहज आनन्द बना रहता है और वह सदैव प्रभु की आज्ञा का ही पालन करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके मन में चिन्ताओं से परे रहने वाला प्रभु आन बसता है उसको कभी भी कोई चिन्ता नहीं सताती ॥२॥ जिसके मन का भ्रम विनष्ट हो चुका है उसको मौत का कोई भय नहीं रहता ॥ ३ ॥ जिसके हृदय में गुरु ने प्रभु-नाम स्थित कर दिया है, हे नानक, उसको सभी खज़ाने प्राप्त हो गए हैं ॥ ४ ॥ ३४ ॥ १०३॥ गउड़ी महला ५॥ अगम्य प्रभु का स्थान व्यक्ति के मन में ही है परन्तु गुरु की कृपा से कोई विरला ही इस तथ्य को जान पाता है ॥१॥ सहज का रहस्य बताने वाली कथा-वार्ता के अमृत भण्डार जिसे प्राप्त हो जाते हैं वही इनका आनन्द लेता है ॥ १॥ रहाउ ॥ हे भाई, हृदय रूपी स्थान आश्चर्यजनक है जिसमें आध्यात्मिक आनन्द रूपी अनहद वाणी बसती है। इसकी धुन परमात्मा को भी मोहित कर लेती है ॥ २ ॥ वहीं पर सहजभाव वाले अनेकों अखाड़े बने रहते हैं जिनमें परमात्मा के संगी-साथी शान्त पुरुष एकत्र होते हैं ॥ ३ ॥ वहाँ अनन्त आनन्द बना रहता है और अन्य कोई भी शोक आदि नहीं होता। गुरु ने ऐसा ही आध्यात्मिक घर मुझ नानक को भी दे दिया है ॥ ४ ॥ ३५ ॥ १०४ ॥ गउड़ी महला ५॥ हे प्रभु, तेरे कौन से रूप का सुमिरन किया जाए और किस योग के माध्यम से शरीर की साधना की जाए ॥ १ ॥

कवन गुनु जो तुझु लै गावउ ॥ कवन बोल पारब्रहम रीझावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कवन सु पूजा तेरी करउ ॥ कवन सु बिधि जितु भवजल तरउ ॥ २ ॥ कवन तपु जितु तपीआ होइ ॥ कवनु सु नामु हउमै मलु खोइ ॥ ३ ॥ गुण पूजा गिआन धिआन नानक सगल घाल ॥ जिसु करि किरपा सतिगुरु मिलै दइआल ॥ ४ ॥ तिस ही गुनु तिन ही प्रभु जाता ॥ जिस की मानि लेइ सुखदाता ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ३६ ॥ १०५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ आपन तनु नही जा को गरबा ॥ राज मिलख नही आपन दरबा ॥ १ ॥ आपन नही का कउ लपटाइओ ॥ आपन नामु सतिगुर ते पाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुत बनिता आपन नही भाई ॥ इसट मीत आप बापु न माई ॥ २ ॥ सुइना रूपा फुनि नही दाम ॥ हैवर गैवर आपन नही काम ॥ ३ ॥ कहु नानक जो गुरि बखसि मिलाइआ ॥ तिस का सभु किछु जिस का हरि राइआ ॥ ४ ॥ ३७ ॥ १०६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुर के चरण ऊपरि मेरे माथे ॥ ता ते दुख मेरे सगले लाथे ॥ १ ॥ सतिगुर अपुने कउ कुरबानी ॥ आतम चीनि परम रंग मानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरण रेणु गुर की मुखि लागी ॥ अहंबुधि तिनि सगल तिआगी ॥ २ ॥ गुर का सबदु लगो मनि मीठा ॥ पारब्रहमु ता ते मोहि डीठा ॥ ३ ॥ गुरु सुखदाता गुरु करतारु ॥ जीअ प्राण नानक गुरु आधारु ॥ ४ ॥ ३८ ॥ १०७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ रे मन मेरे तूं ता कउ आहि ॥ जा कै ऊणा कछहू नाहि ॥ १ ॥ हरि सा प्रीतमु करि मन मीत ॥ प्रान अधारु राखहु सद चीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रे मन मेरे तूं ता कउ सेवि ॥ आदि पुरख अपरंपर देव ॥ २ ॥ तिसु ऊपरि मन करि तूं आसा ॥ आदि जुगादि जा का भरवासा ॥ ३ ॥ जा की प्रीति सदा सुखु होइ ॥ नानकु गावै गुर मिलि सोइ ॥ ४ ॥ ३९ ॥ १०८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मीतु करै सोई हम माना ॥ मीत के करतब कुसल समाना ॥ १ ॥ एका टेक मेरै मनि चीत ॥ जिसु किछु करणा सु हमरा मीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मीतु हमारा वेपरवाहा ॥ गुर किरपा ते मोहि असनाहा ॥ २ ॥ मीतु हमारा अंतरजामी ॥ समरथ पुरखु पारब्रहमु सुआमी ॥ ३ ॥ हम दासे तुम

मुझमें कौन सा गुण हो जिसमें मैं तेरा गायन करता रहूँ और मेरा बोल कैसा हो जिससे परब्रह्म परमात्मा मुझ पर प्रसन्न हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरी कौन सी पूजा मैं करूँ और वह कौन सी विधि है जिससे संसार-सागर पार किया जा सके ॥ २ ॥ ऐसा कौन सा तथ्य है जिसे वास्तव में तपस्या कहा जा सके और ऐसा कौन सा नाम है जिससे अहंकार रूपी मल नष्ट हो जाए ॥ ३ ॥ गुण, पूजा, ज्ञान, ध्यान और हे नानक, सारी मेहनत इसी में ही सफल हो जाती है यदि प्रभु कृपा करे और सद्गुरु से मेल हो जाए ॥ ४ ॥ वही गुणी है और उसने ही प्रभु को जान लिया है जिसकी विनती सारे सुखों का दाता प्रभु मान लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूसरा ॥ ३६ ॥ १०५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे भाई, जिस शरीर का तुझे गर्व है और जिस राज और धन सम्पदा को तू अपना द्रव्य मानता है वे सब तेरे अपने नहीं है ॥ १ ॥ जब ये अपने नहीं है तो तू क्यों इनसे लिपटा हुआ है ॥ तेरा अपना तो केवल प्रभु-नाम ही है जो सद्गुरु से प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई, पुत्र, स्त्री आदि अपने नहीं हैं और घनिष्ठ मित्र पिता और माँ भी अपने नहीं है ॥ २ ॥ सोना, रुपया और धन, घोड़े, हाथी अन्त में अपने किसी काम नहीं आने वाले हैं ॥ ३ ॥ हे नानक, जिसे गुरु ने कृपा करके प्रभु से मिला दिया है, जिस व्यक्ति का परमात्मा साथी बन गया है यह सब कुछ उसी का ही अपना है ॥ ४ ॥ ३७ ॥ १०६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुरु के चरण मेरे मस्तक में टिके हुए हैं और इससे मेरे समस्त दुख दूर हो गए हैं ॥ १ ॥ मैं अपने सद्गुरु पर बलिहारी जाता हूँ जिसके माध्यम से मैं आत्मा से पहचान बनाकर परम प्रेम में लीन हो गया हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की चरण-धूलि जिसके मुख पर लग जाती है वह अहंकार-युक्त बुद्धि का त्याग कर देता है ॥ २ ॥ शब्द-गुरु मेरे मन को मीठा लगा है । इसी से मुझे परब्रह्म के दर्शन हो गए है ॥ ३ ॥ गुरु ही सुखों का दाता एवं गुरु ही कर्त्ता है । हे नानक, गुरु ही जीवों के प्राणों का आधार है ॥ ४ ॥ ३८ ॥ १०७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मेरे मन, तू उसकी चाहत कर जिसके घर में किसी भी वस्तु की कमी नहीं है ॥ १ ॥ हे मेरे मित्र मन, प्रभु को अपना प्रियतम बना और उस प्राणाधार को सदैव चित्त में बसा के रख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरे मन, तू उसका सुमिरन कर जो आदि काल से सबका मूल है, सर्वव्यापक है, परे से परे है और प्रकाश स्वरूप है ॥ २ ॥ हे मन, तू उस पर ही अपनी आशाएं लगा जिसका आदि युगादि से लोगों को भरोसा है ॥ ३ ॥ जिससे प्रेम करने से सदा सुख मिलता है, नानक अपने गुरु (शब्द) में लीन होकर उसी का गुणानुवाद करता है ॥ ४ ॥ ३९ ॥ १०८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मित्र प्रभु जो कुछ करता है वह हमें स्वीकार है और उस मित्र के सभी कार्य हमारे लिए कुशल मंगल वाले हैं ॥ १ ॥ मेरे मन में उस एक ही प्रभु की टेक है और मैं यह जानता हूँ कि जो कुछ भी करने योग्य है वह हमारे मित्र प्रभु ने ही करना है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरा मित्र प्रभु बेपरवाह है और गुरु की कृपा से ही मेरी पहचान उससे बनी है ॥ २ ॥ हमारा मित्र अन्तर्यामी है और वही समर्थ पुरुष परब्रह्म है और सबका स्वामी है ॥ ३ ॥ हे मेरे मालिक, हम

ठाकुर मेरे ॥ मानु महतु नानक प्रभु तेरे ॥ ४ ॥ ४० ॥ १०९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जा कउ तुम भए समरथ अंगा ॥ ता कउ कछु नाही कालंगा ॥ १ ॥ माधउ जा कउ है आस तुमारी ॥ ता कउ कछु नाही संसारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै हिरदै ठाकुरु होइ ॥ ता कउ सहसा नाही कोइ ॥ २ ॥ जा कउ तुम दीनी प्रभ धीर ॥ ता कै निकटि न आवै पीर ॥ ३ ॥ कहु नानक मै सो गुरु पाइआ ॥ पारब्रहम पूरन देखाइआ ॥ ४ ॥ ४१ ॥ ११० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ दुलभ देह पाई वडभागी ॥ नामु न जपहि ते आतम घाती ॥ १ ॥ मरि न जाही जिना बिसरत राम ॥ नाम बिहून जीवन कउन काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खात पीत खेलत हसत बिसथार ॥ कवन अरथ मिरतक सीगार ॥ २ ॥ जो न सुनहि जसु परमानंदा ॥ पसु पंखी त्रिगद जोनि ते मंदा ॥ ३ ॥ कहु नानक गुरि मंत्रु द्रिड़ाइआ ॥ केवल नामु रिद माहि समाइआ ॥ ४ ॥ ४२ ॥ १११ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ का की माई का को बाप ॥ नाम धारीक झूठे सभि साक ॥ १ ॥ काहे कउ मूरख भखलाइआ ॥ मिलि संजोगि हुकमि तूं आइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एका माटी एका जोति ॥ एको पवनु कहा कउनु रोति ॥ २ ॥ मेरा मेरा करि बिललाही ॥ मरणहारु इहु जीअरा नाही ॥ ३ ॥ कहु नानक गुरि खोले कपाट ॥ मुकतु भए बिनसे भ्रम थाट ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ११२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ वडे वडे जो दीसहि लोग ॥ तिन कउ बिआपै चिंता रोग ॥ १ ॥ कउन वडा माइआ वडिआई ॥ सो वडा जिनि राम लिव लाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भूमीआ भूमि ऊपरि नित लुझै ॥ छोडि चलै त्रिसना नही बुझै ॥ २ ॥ कहु नानक इहु ततु बीचारा ॥ बिनु हरि भजन नाही छुटकारा ॥ ३ ॥ ४४ ॥ ११३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ पूरा मारगु पूरा इसनानु ॥ सभु किछु पूरा हिरदै नामु ॥ १ ॥ पूरी रही जा पूरै राखी ॥ पारब्रहम की सरणि जन ताकी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूरा सुखु पूरा संतोखु ॥ पूरा तपु पूरन राजु जोगु ॥ २ ॥ हरि कै मारगि पतित पुनीत ॥ पूरी सोभा पूरा लोकीक ॥ ३ ॥ करणहारु सद वसै हदूरा ॥ कहु नानक मेरा सतिगुरु पूरा ॥ ४ ॥ ४५ ॥ ११४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ संत की धूरि

तुम्हारे दास हैं और नानक कहता है कि यह मान और बड़प्पन हे प्रभु, सब तेरा ही है ॥ ४ ॥ ४० ॥ १०९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे समर्थ प्रभु, जिसके तुम सहायक बन गए हो उसे कोई भी कलंक नहीं लग सकता ॥ १ ॥ हे परमात्मा, जिसका आश्रय तुम ही हो उसके लिए सांसारिकता कुछ भी नहीं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके हृदय में प्रभु बसता है उसको कोई भी संशय अथवा परेशानी नहीं होती ॥ २ ॥ हे प्रभु, जिसे तुमने धैर्य प्रदान किया है, पीड़ा उसके निकट भी नहीं आती ॥ ३ ॥ नानक कहता है कि मुझे ऐसा गुरु मिल गया है जिसने मुझे पूर्ण परब्रह्म परमात्मा दिखा दिया है ॥ ४ ॥ ४१ ॥ ११० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ बड़े भाग्य से यह दुर्लभ देही मिली है परन्तु इसे पाकर भी जो प्रभु–नाम का सुमिरन नहीं करते वे आत्मघात पर उतारू हैं ॥ १ ॥ जिन्होंने प्रभु को विस्मृत कर दिया है उन्हें तो मर ही जाना चाहिए क्योंकि नाम विहीन जीवन किस काम का है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अत्यधिक खाना, पीना, हँसना, खेलना वैसे ही व्यर्थ है जैसे मृत व्यक्ति के श्रृंगार का कोई अर्थ नहीं होता ॥ २ ॥ जो परम आनन्द देने वाले प्रभु–यश को नहीं सुनते उनका हाल तो पशु, पक्षी एवं सर्प आदि से भी बुरा है ॥ ३ ॥ नानक कहता है कि गुरु ने मुझे प्रभु–सुमिरन करवाया है और फलस्वरूप केवल प्रभु–नाम ही मेरे हृदय में बसा हुआ है ॥ ४ ॥ ४२ ॥ १११॥ गउड़ी महला ५ ॥ कौन किस की माँ है और कौन किसा का बाप; ये सभी सम्बन्ध झूठे और नाम मात्र को ही हैं ॥१॥ हे मूर्ख, तू क्यों झूठा प्रलाप कर रहा है । तू तो संयोगवश प्रभु के हुकुम के अन्तर्गत ही संसार में आया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सब में एक ही मिट्टी, एक ही ज्योति है । एक ही पवन रूपी श्वास सब में होता है । तू व्यर्थ में किसे रो रहा है । मेरा–मेरा करते हुए तू व्यर्थ ही चीत्कार कर रहा है; यह आत्मा तो मरने वाली नहीं है ॥ ३ ॥ हे नानक, गुरु ने मेरे सभी पर्दे हटा दिए हैं और मैं मुक्त हो गया हूँ तथा मेरे स्वयं–रचित भ्रम विनष्ट हो गए हैं ॥ ४ ॥ ४३ ॥ ११२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ बड़े–बड़े जो लोग दिखाई देते हैं वे सब चिन्ता–रोग से ग्रस्त हैं ॥ १॥ धन–सम्पदा के अधिक होने से कोई बड़ा नहीं हो सकता । वही बड़ा है जिसने अपनी सुरति प्रभु नाम में लीन कर ली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जमींदार जमीन के लिए रोज लड़ता झगड़ता है परन्तु उसका लोभ समाप्त नहीं होता है और अन्त में उसे यह सब छोड़कर जाना पड़ता है ॥ २ ॥ हे नानक, इस सारे विचार का सार–तत्व यही है कि हरि भजन के बिना मुक्ति सम्भव नहीं है ॥ ३ ॥ ४४ ॥ ११३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ व्यक्ति का अपनाया हुआ मार्ग भी सफल है, उसका स्नान भी सफल है और वास्तव में उसका सब कुछ ही सफल है यदि उसके हृदय में प्रभु–नाम का निवास है ॥ १ ॥ जिस सेवक ने परमात्मा की शरण का आश्रय लिया है उसकी ही पूर्ण प्रभु ने इज़्ज़त बचा ली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसे व्यक्ति को ही पूर्ण संतुष्टि एवं सुख प्राप्त होता है । ऐसे व्यक्ति का ही तप एवं राजयोग पूर्ण होता है ॥ २ ॥ प्रभु मार्ग पर चलने से पतित व्यक्ति भी पवित्र हो जाता है । उसकी शोभा भी पूर्ण होती है और वह लोकाचार में भी पूर्ण होता है ॥ ३ ॥ ऐसा व्यक्ति उस करणहार प्रभु के साथ बसता है और हे नानक, पूर्ण तो केवल मेरा सद्गुरु (परमात्मा) ही है ॥ ४ ॥ ४५ ॥ ११४ ॥ गउड़ी महला ५॥ शान्त पुरुष की

मिटे अघ कोट ॥ संत प्रसादि जनम मरण ते छोट ॥ १ ॥ संत का दरसु पूरन इसनानु ॥ संत क्रिपा ते जपीऐ नामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संत कै संगि मिटिआ अहंकारु ॥ द्रिसटि आवै सभु एकंकारु ॥ २ ॥ संत सुप्रसंन आए वसि पंचा ॥ अंम्रितु नामु रिदै लै संचा ॥ ३ ॥ कहु नानक जा का पूरा करम ॥ तिसु भेटे साधू के चरन ॥ ४ ॥ ४६ ॥ ११५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि गुण जपत कमलु परगासै ॥ हरि सिमरत त्रास सभ नासै ॥ १ ॥ सा मति पूरी जितु हरि गुण गावै ॥ वडै भागि साधू संगु पावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधसंगि पाईऐ निधि नामा ॥ साधसंगि पूरन सभि कामा ॥ २ ॥ हरि की भगति जनमु परवाणु ॥ गुर किरपा ते नामु वखाणु ॥ ३ ॥ कहु नानक सो जनु परवानु ॥ जा कै रिदै वसै भगवानु ॥ ४ ॥ ४७ ॥ ११६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ एकसु सिउ जा का मनु राता ॥ विसरी तिसै पराई ताता ॥ १ ॥ बिनु गोबिंद न दीसै कोई ॥ करन करावन करता सोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनहि कमावै मुखि हरि हरि बोलै ॥ सो जनु इत उत कतहि न डोलै ॥ २ ॥ जा कै हरि धनु सो सच साहु ॥ गुरि पूरै करि दीनो विसाहु ॥ ३ ॥ जीवन पुरखु मिलिआ हरि राइआ ॥ कहु नानक परम पदु पाइआ ॥ ४ ॥ ४८ ॥ ११७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ नामु भगत कै प्रान अधारु ॥ नामा धनु नामो बिउहारु ॥ १ ॥ नाम वडाई जनु सोभा पाए ॥ करि किरपा जिसु आपि दिवाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु भगत कै सुख असथानु ॥ नाम रतु सो भगतु परवानु ॥ २ ॥ हरि का नामु जन कउ धारै ॥ सासि सासि जनु नामु समारै ॥ ३ ॥ कहु नानक जिसु पूरा भागु ॥ नाम संगि ता का मनु लागु ॥ ४ ॥ ४९ ॥ ११८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ संत प्रसादि हरि नामु धिआइआ ॥ तब ते धावतु मनु त्रिपताइआ ॥ १ ॥ सुख बिस्रामु पाइआ गुण गाइ ॥ स्रमु मिटिआ मेरी हती बलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कमल अराधि भगवंता ॥ हरि सिमरन ते मिटी मेरी चिंता ॥ २ ॥ सभ तजि अनाथु एक सरणि आइओ ॥ ऊच असथानु तब सहजे पाइओ ॥ ३ ॥ दूखु दरदु भरमु भउ नसिआ ॥ करणहारु नानक मनि बसिआ ॥ ४ ॥ ५० ॥ ११९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ कर करि टहल रसना गुण गावउ॥

चरण–धूलि प्राप्त होने से करोड़ों पाप मिट जाते हैं और शान्त पुरुषों की कृपा से ही जन्म–मरण से छुटकारा मिल जाता है ॥ १ ॥ शान्त पुरुष रूपी सन्त का दर्शन ही एक सफल स्नान है और ऐसे शान्त व्यक्ति की कृपा से ही प्रभु–नाम का सुमिरन किया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसे शान्त व्यक्ति के साथ अहंकार नष्ट हो जाता है और चारों ओर केवल एक ही परमात्मा दृष्टि गोचर होने लगता है ॥ २ ॥ ऐसे सन्त यदि प्रसन्न हो जाएं तो पाँचों विकार वश में आ जाते हैं और प्रभु का अमृत–नाम हृदय में स्थिर हो जाता है ॥ ३ ॥ हे नानक, जिसका पूर्ण भाग्य हो वही साधु पुरुषों के चरणों को स्पर्श करता है ॥ ४ ॥ ४६ ॥ ११५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु–गुणानुवाद से हृदय–कमल खिल उठता है और प्रभु सुमिरन से ही सभी भय भाग खड़े होते हैं ॥ १ ॥ वही बुद्धि पूर्ण एवं सफल है जिसके माध्यम से हरि–गुण गाए जाते हैं और बड़े भाग्यशाली होने पर ही सद्पुरुषों की संगत प्राप्त होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु संगत में नाम का खजाना प्राप्त होता है और सभी कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं ॥ २ ॥ प्रभु–भक्ति के फलस्वरूप यह मानव जन्म सफल हो जाता है और गुरु की कृपा से प्रभु–नाम का उच्चारण किया जाता है ॥ ३ ॥ हे नानक, वही सेवक स्वीकृत होता है जिसके हृदय में प्रभु का नाम बसता है ॥ ४ ॥ ४७ ॥ ११६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसका एक प्रभु में ही मन लीन हो गया है उसे दूसरों से ईर्ष्या करना भूल जाता है ॥ १ ॥ उस प्रभु के बिना अन्य कोई दिखाई नहीं देता और सब कुछ करने कराने वाला वह कर्त्ता प्रभु ही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन से साधना करे और मुख से प्रभु–नाम का उच्चारण करने वाला सेवक इस लोक में और उस लोक में कहीं भी डोलता नहीं ॥ जिसके पास हरि रूपी धन है वही सच्चा साहूकार है और पूर्ण गुरु ने हम लोगों का भरोसा उस पर बनवा दिया है ॥ ३ ॥ सब के जीवन का आधार प्रभु जब मिल गया है तो हे नानक, मुझे परम पद प्राप्त हो गया है ॥ ४ ॥ ४८ ॥ ११७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ भक्त व्यक्ति के प्राण का आधार नाम ही है; नाम ही उसका धन है और नाम में ही वह कार्यशील बना रहता है ॥ १ ॥ नाम के बड़प्पन से ही उस व्यक्ति को सम्मान मिलता है जिसको कृपा करके वह प्रभु स्वयं दिलवाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भक्त का आनन्ददायक आश्रय नाम ही है और जो नाम में लीन रहता है वही भक्त स्वीकृत होता है ॥ २ ॥ हरि–नाम ही सेवक का उद्धार करता है और प्रभु का दास प्रत्येक श्वास के साथ नाम सुमिरन करता रहता है ॥ ३ ॥ हे नानक, पूर्ण भाग्यशाली व्यक्ति का मन ही नाम में लीन बना रहता है ॥ ४ ॥ ४९ ॥ ११८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जब से शान्त पुरुषों की कृपा से मैंने हरि–नाम पर ध्यान लगाया है तब से इधर–उधर भागता हुआ मेरा मन शान्त होकर तृप्त हो गया है ॥ १ ॥ प्रभु गुण गाकर मैंने आनन्द और विश्राम प्राप्त कर लिया है। मेरी मेहनत अब समाप्त हो गई है और मेरी वलाएं नष्ट हो गई हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमात्मा के चरण–कमलों की आराधना और हरि सुमिरन से मेरी चिन्ता मिट गई है ॥ २ ॥ जब सब कुछ त्याग कर मैं अनाथ केवल एक प्रभु की शरण में आया हूँ तो सहजभाव में ही मैंने सबसे ऊँचा स्थान अथवा परम पद पा लिया है ॥ ३ ॥ हे नानक, जब सब कुछ करने वाला प्रभु मेरे मन में आन बसा है तो मेरा दुख, दर्द, भ्रम आदि भाग खड़ा हुआ है ॥ ४ ॥ ५० ॥ ११९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सेवा कर कर के

चरन ठाकुर के मारगि धावउ ॥ १ ॥ भलो समो सिमरन की बरीआ ॥ सिमरत नामु भै पारि उतरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नेत्र संतन का दरसनु पेखु ॥ प्रभ अविनासी मन महि लेखु ॥ २ ॥ सुणि कीरतनु साध पहि जाइ ॥ जनम मरण की त्रास मिटाइ ॥ ३ ॥ चरण कमल ठाकुर उरि धारि ॥ दुलभ देह नानक निसतारि ॥ ४ ॥ ५१ ॥ १२० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जा कउ अपनी किरपा धारै ॥ सो जनु रसना नामु उचारै ॥ १ ॥ हरि बिसरत सहसा दुखु बिआपै ॥ सिमरत नामु भरमु भउ भागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि कीरतनु सुणै हरि कीरतनु गावै ॥ तिसु जन दूखु निकटि नही आवै ॥ २ ॥ हरि की टहल करत जनु सोहै ॥ ता कउ माइआ अगनि न पोहै ॥ ३ ॥ मनि तनि मुखि हरि नामु दइआल ॥ नानक तजीअले अवरि जंजाल ॥ ४ ॥ ५२ ॥ १२१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ छाडि सिआनप बहु चतुराई ॥ गुर पूरे की टेक टिकाई ॥ १ ॥ दुख बिनसे सुख हरि गुण गाइ ॥ गुरु पूरा भेटिआ लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि का नामु दीओ गुरि मंत्रु ॥ मिटे विसूरे उतरी चिंत ॥ २ ॥ अनद भए गुर मिलत क्रिपाल ॥ करि किरपा काटे जम जाल ॥ ३ ॥ कहु नानक गुरु पूरा पाइआ ॥ ता ते बहुरि न बिआपै माइआ ॥ ४ ॥ ५३ ॥ १२२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ राखि लीआ गुरि पूरै आपि ॥ मनमुख कउ लागो संतापु ॥ १ ॥ गुरू गुरू जपि मीत हमारे ॥ मुख ऊजल होवहि दरबारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर के चरण हिरदै वसाइ ॥ दुख दुसमन तेरी हतै बलाइ ॥ २ ॥ गुर का सबदु तेरै संगि सहाई ॥ दइआल भए सगले जीअ भाई ॥ ३ ॥ गुरि पूरै जब किरपा करी ॥ भनति नानक मेरी पूरी परी ॥ ४ ॥ ५४ ॥ १२३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ अनिक रसा खाए जैसे ढोर ॥ मोह की जेवरी बाधिओ चोर ॥ १ ॥ मिरतक देह साधसंग बिहूना ॥ आवत जात जोनी दुख खीना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक बसत्र सुंदर पहिराइआ ॥ जिउ डरना खेत माहि डराइआ ॥ २ ॥ सगल सरीर आवत सभ काम ॥ निहफल मानुखु जपै नही नाम ॥ ३ ॥ कहु नानक जा कउ भए दइआला ॥ साधसंगि मिलि भजहि गोपाला ॥ ४ ॥ ५५ ॥ १२४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥

जीभ से प्रभु के गुण गाए जाने चाहिए और पाँव से प्रभु–मार्ग पर चलना चाहिए ॥ १ ॥ यह भला अवसर है जहाँ सुमिरन करने की बारी है। प्रभु–नाम सुमिरन से भव–सागर से पार उतरा जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नेत्रों से शान्त पुरुष के दर्शन करो और अविनाशी प्रभु को मन में बसाए रखो ॥ २ ॥ प्रभु–गुणानुवाद सुनने के लिए साधु पुरुषों की संगत में जाना चाहिए और इस प्रकार जन्म–मरण के भय को मिटा देना चाहिए ॥ ३ ॥ प्रभु के चरण कमलों को हृदय में धारण करके हे नानक, इस दुर्लभ देही को सफल कर दो ॥ ४ ॥ ५१ ॥ १२० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिस पर प्रभु अपनी कृपा करता है वही व्यक्ति अपनी जीभ से प्रभु–नाम का सुमिरन करता रहता है ॥ १ ॥ प्रभु विस्मृत हो जाने से संशय एवं दुख प्रभावित करते हैं परन्तु प्रभु–नाम सुमिरन से भ्रम एवं भय भाग खड़े होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो प्रभु की कीर्ति को सुनता और गाता है दुख उस व्यक्ति के पास नहीं आ पाता ॥ २ ॥ जो व्यक्ति प्रभु सेवा करने की शोभा प्राप्त करता है, तृष्णा रूपी मायावी अग्नि का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ॥ ३ ॥ हे भाई, मन–तन और मुख से उस दयालु प्रभु का नाम सुमिरन करना चाहिए और हे नानक, जो सांसारिक अन्य प्रपंच हैं उनको त्याग देना चाहिए ॥ ४ ॥ ५२ ॥ १२१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मैंने सब चतुराई और बुद्धिमता को छोड़कर पूर्ण गुरु पर ही टेक लगा ली है ॥ १ ॥ प्रभु का गुणानुवाद करने से दुखों का विनाश हो जाता है और सुख प्राप्त होता है। अब मैंने प्रभु में लौ लगाकर पूर्ण गुरु से मिलाप कर लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु ने मुझे हरि–नाम का मन्त्र दिया है और मन आनन्दित हो उठा है गुरु ने कृपा करके मेरे यम के बन्धन को काट दिया है अर्थात अब मुझे मौत का भय नहीं रहा ॥ ३ ॥ हे नानक, मैंने पूरा गुरु (परमात्मा) प्राप्त कर लिया है जिससे अब मुझ पर माया का कोई प्रभाव नहीं पड़ता ॥ ४ ॥ ५३ ॥ १२२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ पूर्ण गुरु ने स्वयं मुझे बचा लिया है और मन के पीछे चलने वाले व्यक्ति को सन्ताप लगा ही रहता है ॥ १ ॥ हे मेरे मित्र, गुरु का ही जाप करते रहो क्योंकि इसी से ही प्रभु के दरबार में मुख उज्जवल बना रहेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के चरण हृदय में बसा ले जिससे तेरा दुख रूपी दुश्मन और अनेक अन्य परेशानियां समाप्त हो जाएंगी ॥ २ ॥ शब्द–गुरु ही तेरा संगी एवं सहायक है और इसी कारण सभी जीव–जन्तु तुझ पर दयालु बने रहेंगे ॥ ३ ॥ जब पूर्ण गुरु ने कृपा की तो नानक कहता है कि मेरी मेहनत सफल हो गई ॥ ४ ॥ ५४ ॥ १२३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे जीव, तू पशुओं की तरह अनेकों खाद्य पदार्थ खाता जाता है और इनके मोह की रस्सी में ऐसे ही बँध जाता है जैसे चोर को बाँधा जाता है ॥ १ ॥ साधु संगत करने के बिना यह शरीर मृतक के समान है और आवागमन के फलस्वरूप दुखों के कारण जीव क्षीण होता जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह अनेकों सुन्दर वस्त्र पहनता हैं जो इस तरह लगते हैं मानो खेत में डराने के लिए मनुष्य का बनावटी ढाँचा खड़ा किया गया हो ॥ २ ॥ सभी शरीर हर प्रकार के काम में आते हैं परन्तु जो प्रभु–नाम का सुमिरन नहीं करता उस मनुष्य का शरीर किसी काम नहीं आता ॥३॥ हे नानक, जिस पर प्रभु दयालु होता है वही साधु पुरुषों की संगत में मिल बैठकर प्रभु का सुमिरन करता है ॥ ४ ॥ ५५ ॥ १२४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥

कलि कलेस गुर सबदि निवारे ॥ आवण जाण रहे सुख सारे ॥ १ ॥ भै बिनसे निरभउ हरि धिआइआ ॥ साधसंगि हरि के गुण गाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कवल रिद अंतरि धारे ॥ अगनि सागर गुरि पारि उतारे ॥ २ ॥ बूडत जात पूरे गुरि काढे ॥ जनम जनम के टूटे गाढे ॥ ३ ॥ कहु नानक तिसु गुर बलिहारी ॥ जिसु भेटत गति भई हमारी ॥ ४ ॥ ५६ ॥ १२५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ साधसंगि ता की सरनी परहु ॥ मनु तनु अपना आगै धरहु ॥ १ ॥ अंम्रित नामु पीवहु मेरे भाई ॥ सिमरि सिमरि सभ तपति बुझाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तजि अभिमानु जनम मरणु निवारहु ॥ हरि के दास के चरण नमसकारहु ॥ २ ॥ सासि सासि प्रभु मनहि समाले ॥ सो धनु संचहु जो चालै नाले ॥ ३ ॥ तिसहि परापति जिसु मसतकि भागु ॥ कहु नानक ता की चरणी लागु ॥ ४ ॥ ५७ ॥ १२६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सूके हरे कीए खिन माहे ॥ अंम्रित द्रिसटि संचि जीवाए ॥ १ ॥ काटे कसट पूरे गुरदेव ॥ सेवक कउ दीनी अपुनी सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मिटि गई चिंत पुनी मन आसा ॥ करी दइआ सतिगुरि गुणतासा ॥ २ ॥ दुख नाठे सुख आइ समाए ॥ ढील न परी जा गुरि फुरमाए ॥ ३ ॥ इछ पुनी पूरे गुर मिले ॥ नानक ते जन सुफल फले ॥ ४ ॥ ५८ ॥ १२७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ ताप गए पाई प्रभि सांति ॥ सीतल भए कीनी प्रभ दाति ॥ १ ॥ प्रभ किरपा ते भए सुहेले ॥ जनम जनम के बिछुरे मेले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सिमरत सिमरत प्रभ का नाउ ॥ सगल रोग का बिनसिआ थाउ ॥ २ ॥ सहजि सुभाइ बोलै हरि बाणी ॥ आठ पहर प्रभ सिमरहु प्राणी ॥ ३ ॥ दूखु दरदु जमु नेड़ि न आवै ॥ कहु नानक जो हरि गुन गावै ॥ ४ ॥ ५९ ॥ १२८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ भले दिनस भले संजोग ॥ जितु भेटे पारब्रहम निरजोग ॥ १ ॥ ओह बेला कउ हउ बलि जाउ ॥ जितु मेरा मनु जपै हरि नाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सफल मूरतु सफल ओह घरी ॥ जितु रसना उचरै हरि हरी ॥ २ ॥ सफलु ओहु माथा संत नमसकारसि ॥ चरण पुनीत चलहि हरि मारगि ॥ ३ ॥ कहु नानक भला मेरा करम ॥ जितु भेटे साधू के चरन ॥ ४ ॥ ६० ॥ १२९ ॥

शब्द–गुरु ने मेरे सभी दुख एवं क्लेष दूर कर दिए हैं। मेरा आवागमन समाप्त हो गया है और मुझे सभी सुख प्राप्त हो गए हैं ॥ १ ॥ जब मैंने निर्भय प्रभु का सुमिरन किया तो मेरे सभी भय नष्ट हो गए तथा मैंने साधक पुरुषों की संगत में हरि का गुण–गायन प्रारम्भ कर दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के चरण कमल हृदय में धारण करने से गुरु ने मुझे सांसारिकता की अग्नि के सागर से पार उतार दिया है ॥ २ ॥ मुझ डूबते हुए को पूर्ण गुरु परमात्मा ने बाहर निकाल लिया और जन्मों–जन्मों से प्रभु की ओर से टूटे हुए मुझको फिर से अपने साथ जोड़ लिया है ॥ ३ ॥ नानक कहता है कि मैं उस गुरु पर बलिहारी जाता हूँ जिसके मिलाप से मुझे मुक्ति प्राप्त हो गई ॥ ४ ॥ ५६ ॥ १२५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे भाई, साधु संगत में उस प्रभु की शरण में पड़ा रह और अपना मन, तन उस प्रभु के आगे अपर्ण कर दे ॥ १ ॥ हे भाई, अमृत–नाम का पान करो और प्रभु नाम सुमिरन करते हुए अपनी सब प्रकार की जलन को बुझा लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपने अभिमान को त्याग कर अपने जन्म–मरण को समाप्त कर लो तथा प्रभु के दास के चरणों में नमस्कार करो ॥ २ ॥ हर साँस के साथ प्रभु को मन में याद करो और ऐसे धन का संचय करो जो तुम्हारे साथ अन्त में निभने वाला हो ॥ ३ ॥ जिसके मस्तक पर भाग्य लेख लिखे हैं उसे ही यह धन प्राप्त होता है। नानक कहता है कि हे भाई, ऐसे भाग्यशाली व्यक्ति के चरणों में लगा रह ॥ ४ ॥ ५७ ॥ १२६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ परमात्मा ने सूखे हुए को क्षण–भर में हरा कर दिया है और अपनी अमृत दृष्टि के माध्यम से मुर्दों को जीवित कर दिया है ॥ १ ॥ पूर्ण गुरुदेव (परमात्मा) ने अपने सेवक के सभी कष्ट समाप्त कर दिए हैं और उसे अपनी सेवा में लगा लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु सेवक की सभी चिन्ताएं मिट गई और मन की आशाएं पूरी हो गई हैं। गुणों के भण्डार सद्गुरु ने उस पर दया कर दी है ॥ २ ॥ जब गुरु ने आज्ञा कर दी तो तनिक भी ढील न करके दुख भाग खड़े हुए हैं और सुख प्राप्त हो गए हैं ॥ ३ ॥ हे नानक, पूर्ण गुरु के मिलने से सेवक की इच्छाएँ पूर्ण होती हैं और जीवन फलता–फूलता है ॥ ४ ॥ ५८ ॥ १२७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु ने शान्ति प्रदान की और सभी कष्ट दूर हो गए हैं। प्रभु ने कृपा की तो व्यक्ति शीतल हो गया है ॥ १ ॥ प्रभु की कृपा से ही व्यक्ति सुख पूर्ण हो जाता है और जन्मों–जन्मान्तरों से बिछुड़ा हुआ जीव उस प्रभु से मिल जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु नाम का सुमिरन करते रहने से जीव के सभी रोगों का कारण नष्ट हो गया है। अब जीव सहज भाव से ही प्रभु की वाणी का उच्चारण करता है और आठों प्रहर प्रभु का सुमिरन करता है ॥ ३ ॥ हे नानक, जो प्रभु के गुणों का गायन करता है, दुख दर्द और यम उसके पास नहीं आते है ॥ ४ ॥ ५९ ॥ १२८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ वही दिन और वही मुहूर्त भला है जिसमें निर्लेप प्रभु से मिलाप हो जाए ॥ १ ॥ मैं उस बेला (समय) पर बलिहारी जाता हूँ जिसमें मेरा मन प्रभु–नाम का सुमिरन करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह मुहूर्त और वह घड़ी सफल है जिसमें जीभ हरि–नाम का उच्चारण करती है ॥ २ ॥ वह माथा सफल है जो शान्त पुरुषों को प्रणाम करता है और वे चरण पवित्र हैं जो प्रभु के मार्ग पर चलते हैं ॥ ३ ॥ हे नानक, मेरा वही कर्म भला है जिसके माध्यम से मैं साधु पुरुषों के चरणों का स्पर्श करता हूँ ॥ ४ ॥ ६० ॥ १२९ ॥

गउड़ी महला ५ ॥ गुर का सबदु राखु मन माहि ॥ नामु सिमरि चिंता सभ जाहि ॥ १ ॥ बिनु भगवंत नाही अन कोइ ॥ मारै राखै एको सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर के चरण रिदै उरि धारि ॥ अगनि सागरु जपि उतरहि पारि ॥ २ ॥ गुर मूरति सिउ लाइ धिआनु ॥ ईहा ऊहा पावहि मानु ॥ ३ ॥ सगल तिआगि गुर सरणी आइआ ॥ मिटे अंदेसे नानक सुखु पाइआ ॥ ४ ॥ ६१ ॥ १३० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसु सिमरत दूखु सभु जाइ ॥ नामु रतनु वसै मनि आइ ॥ १ ॥ जपि मन मेरे गोविंद की बाणी ॥ साधू जन रामु रसन वखाणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इकसु बिनु नाही दूजा कोइ ॥ जा की द्रिसटि सदा सुखु होइ ॥ २ ॥ साजनु मीतु सखा करि एकु ॥ हरि हरि अखर मन महि लेखु ॥ ३ ॥ रवि रहिआ सरबत सुआमी ॥ गुण गावै नानकु अंतरजामी ॥ ४ ॥ ६२ ॥ १३१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ भै महि रचिओ सभु संसारा ॥ तिसु भउ नाही जिसु नामु अधारा ॥ १ ॥ भउ न विआपै तेरी सरणा ॥ जो तुधु भावै सोई करणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सोग हरख महि आवण जाणा ॥ तिनि सुखु पाइआ जो प्रभ भाणा ॥ २ ॥ अगनि सागरु महा विआपै माइआ ॥ से सीतल जिन सतिगुरु पाइआ ॥ ३ ॥ राखि लेइ प्रभु राखनहारा ॥ कहु नानक किआ जंत विचारा ॥ ४ ॥ ६३ ॥ १३२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तुमरी क्रिपा ते जपीऐ नाउ ॥ तुमरी क्रिपा ते दरगह थाउ ॥ १ ॥ तुझ बिनु पारब्रहम नही कोइ ॥ तुमरी क्रिपा ते सदा सुखु होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम मनि वसे तउ दूखु न लागै ॥ तुमरी क्रिपा ते भ्रमु भउ भागै ॥ २ ॥ पारब्रहम अपरंपर सुआमी ॥ सगल घटा के अंतरजामी ॥ ३ ॥ करउ अरदासि अपने सतिगुर पासि ॥ नानक नामु मिलै सचु रासि ॥ ४ ॥ ६४ ॥ १३३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ कण बिना जैसे थोथर तुखा ॥ नाम बिहून सूने से मुखा ॥ १ ॥ हरि हरि नामु जपहु नित प्राणी ॥ नाम बिहून ध्रिगु देह बिगानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाम बिना नाही मुखि भागु ॥ भरत बिहून कहा सोहागु ॥ २ ॥ नामु बिसारि लगै अन सुआइ ॥ ता की आस न पूजै काइ ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ अपनी दाति ॥ नानक नामु जपै

गउड़ी महला ५ ॥ हे भाई, शब्द–गुरु को मन में बसा और नाम का सुमिरन कर जिससे तेरी सभी चिन्ताएं दूर हो जाएं ॥ १ ॥ प्रभु के बिना अन्य कोई भी नहीं है क्योंकि मारने बचाने वाला वह एक प्रभु ही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के चरणों को हृदय में धारण करो और प्रभु का नाम सुमिरन करते हुए तृष्णा रूपी अग्नि के समुद्र को अर्थात इस संसार को पार कर लो ॥ २॥ शब्द–गुरु की शब्द–मूर्ति पर ध्यान लगाने से इस लोक और उस लोक में सम्मान प्राप्त होता है । हे नानक, सभी चिन्ताएं समाप्त हो जाती हैं और सुख प्राप्त हो जाता है ॥४॥६१॥१३०॥ गउड़ी महला ५॥ हे मेरे मन, जिसके सुमिरन से सभी दुख चले जाते हैं और नाम रूपी रत्न मन में आन बसता है उस परमात्मा की वाणी का जाप कर ॥ १ ॥ हे मन, परमात्मा के गुणानुवाद की वाणी का उच्चारण कर क्योंकि इस वाणी के माध्यम से ही साधुजन अपनी जीभ से परमात्मा के गुण गाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक प्रभु के बिना दूसरा अन्य कोई नहीं है जिसकी दृष्टि मात्र से सभी सुख प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥ उस एक प्रभु को ही अपना साजन मित्र और साथी बना और हरि–नाम के अक्षरों को अपने मन में अच्छी तरह लिख ॥ ३ ॥ वह स्वामी प्रभु सब में रमण कर रहा है और उसी अन्तर्यामी प्रभु के गुण नानक गाता है ॥ ४ ॥ ६२ ॥ १३१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सारा संसार भय में ही लीन है परन्तु जिस व्यक्ति का आश्रय प्रभु–नाम है उसे किसी का भी भय नहीं सताता ॥ १ ॥ तेरी शरण में आने से कोई डर प्रभावित नहीं करता । हे प्रभु, जो तुझे अच्छा लगता है हमें वही करना है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शोक और हर्ष में बने रहने से आवागमन भी बना रहता है । वास्तविक आनन्द उसे मिलता है जो प्रभु की प्रसन्नता प्राप्त करता है ॥ २ ॥ इस संसार को तृष्णा की आग लगी हुई है परन्तु इस आग में भी वे ही शीतल बनें रहते हैं जिन्हें सद्गुरु प्राप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ नानक कहता है कि हे रक्षक प्रभु, तू ही रक्षा कर । इन जीवों के हाथ में भला क्या है ॥ ४ ॥ ६३ ॥ १३२ ॥ गउड़ी महला५॥ हे प्रभु, तुम्हारी कृपा से ही तुम्हारे नाम का जाप किया जाता है और तुम्हारी कृपा से ही तुम्हारे दरबार में स्थान मिलता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम्हारे बिना अन्य कोई नहीं है और तुम्हारी कृपा से ही सदैव सुख प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ॥ तुम मन में बसते हो तो दुख पास नहीं आता और तुम्हारी ही कृपा से भ्रम एवं भय भाग खड़े होते हैं ॥ २ ॥ हे प्रभु, तुम ही अपरंपर स्वामी हो और सबके हृदय की बातों को जानने वाले हो ॥ ३ ॥ हे नानक, मैं अपने सद्गुरु के समक्ष अरदास करता हूँ कि मुझे प्रभु नाम और सत्य की रास–पूँजी प्राप्त हो ॥ ४ ॥ ६४ ॥ १३३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिस प्रकार चावल का छिलका चावल के बिना खाली, थोथा एवं व्यर्थ है उसी प्रकार प्रभु–नाम से विहीन मुख सूने एवं निष्फल हैं ॥ १ ॥ हे प्राणी, सदैव हरि–नाम का जाप करो क्योंकि नाम से विहीन धिक्कार योग यह शरीर पराया है अर्थात मौत की सम्पत्ति है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाम–विहीन मुख भाग्यशाली नहीं है क्योंकि पति–विहीन को भला कैसे सुहागिन माना जा सकता है ॥ २ ॥ जो प्रभु नाम को विस्मृत करके अन्य स्वादों में लगे रहते हैं उनकी कोई भी आशा पूरी नहीं होती ॥ ३ ॥ हे प्रभु, अपनी कृपा का दान दे ताकि नानक दिन–रात प्रभु–नाम का ही सुमिरन करता रहे।

दिन राति ॥ ४ ॥ ६५ ॥ १३४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तूं समरथु तूंहै मेरा सुआमी ॥ सभु किछु तुम ते तूं अंतरजामी ॥ १ ॥ पारब्रहम पूरन जन ओट ॥ तेरी सरणि उधरहि जन कोटि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जेते जीअ तेते सभि तेरे ॥ तुमरी क्रिपा ते सूख घनेरे ॥ २ ॥ जो किछु वरतै सभ तेरा भाणा ॥ हुकमु बूझै सो सचि समाणा ॥ ३ ॥ करि किरपा दीजै प्रभ दानु ॥ नानक सिमरै नामु निधानु ॥ ४ ॥ ६६ ॥ १३५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ ता का दरसु पाईऐ वडभागी ॥ जा की राम नामि लिव लागी ॥ १ ॥ जा कै हरि वसिआ मन माही ॥ ता कउ दुखु सुपनै भी नाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरब निधान राखे जन माहि ॥ ता कै संगि किलविख दुख जाहि ॥ २ ॥ जन की महिमा कथी न जाइ ॥ पारब्रहमु जनु रहिआ समाइ ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ बिनउ सुनीजै ॥ दास की धूरि नानक कउ दीजै ॥ ४ ॥ ६७ ॥ १३६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि सिमरत तेरी जाइ बलाइ ॥ सरब कलिआण वसै मनि आइ ॥ १ ॥ भजु मन मेरे एको नाम ॥ जीअ तेरे कै आवै काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रैणि दिनसु गुण गाउ अनंता ॥ गुर पूरे का निरमल मंता ॥ २ ॥ छोडि उपाव एक टेक राखु ॥ महा पदारथु अंम्रित रसु चाखु ॥ ३ ॥ बिखम सागरु तेई जन तरे ॥ नानक जा कउ नदरि करे ॥ ४ ॥ ६८ ॥ १३७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हिरदै चरन कमल प्रभ धारे ॥ पूरे सतिगुर मिलि निसतारे ॥ १ ॥ गोविंद गुण गावहु मेरे भाई ॥ मिलि साधू हरि नामु धिआई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुलभ देह होई परवानु ॥ सतिगुर ते पाइआ नाम नीसानु ॥ २ ॥ हरि सिमरत पूरन पदु पाइआ ॥ साधसंगि भै भरम मिटाइआ ॥ ३ ॥ जत कत देखउ तत रहिआ समाइ ॥ नानक दास हरि की सरणाइ ॥ ४ ॥ ६९ ॥ १३८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुर जी के दरसन कउ बलि जाउ ॥ जपि जपि जीवा सतिगुर नाउ ॥ १ ॥ पारब्रहम पूरन गुरदेव ॥ करि किरपा लागउ तेरी सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरन कमल हिरदै उर धारी ॥ मन तन धन गुर प्रान अधारी ॥ २ ॥ सफल जनमु होवै परवाणु ॥ गुरु पारब्रहमु निकटि करि जाणु ॥ ३ ॥ संत धूरि पाईऐ वडभागी ॥ नानक गुर

४ ॥ ६५ ॥ १३४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तू ही समर्थ और मेरा स्वामी है तथा हे अन्तर्यामी सब कुछ तुम्हारे ही कारण है ॥ १ ॥ प्रभु के सेवक को पूर्ण परब्रह्म का ही आसरा है। हे प्रभु, तेरी शरण में आकर करोड़ों सेवकों का उद्धार हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जितने भी जीव है सब तेरे ही है और तुम्हारी कृपा से अनेकों सुख प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥ जो कुछ भी हो रहा है सब तेरा ही हुक्म है और जो हुक्म को बूझ लेता है वही सत्य में समाहित हो जाता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, कृपा कर नानक को यह दान दे कि वह सदा प्रभु–नाम के भण्डार का सुमिरन करता रहे ॥ ४ ॥ ६६ ॥ १३५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसकी सुरति राम नाम में लग गई है उसका दर्शन बड़े भाग्य से प्राप्त होता है ॥ १ ॥ जिसके मन में हरि आन बसा है उसको स्वप्न में भी दुख नहीं मिलता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के सेवक के पास सब प्रकार के खज़ाने रखे रहते हैं और ऐसे सेवक की संगत में सभी पाप दूर हो जाते हैं ॥ २ ॥ प्रभु के सेवक की महिमा का कथन नहीं किया जा सकता क्योंकि परमात्मा अपने सेवक में ही समाहित रहता है। हे प्रभु, कृपा करके मेरी विनती सुनिए और नानक को अपने सेवक की चरण–धूलि प्रदान कीजिए ॥४॥६७॥१३६॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु–सुमिरन से तेरे सभी कष्ट दूर हो जाते हैं तथा सर्व कल्याण की भावना मन में आन बसती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, केवल एक नाम का ही सुमिरन कर क्योंकि अन्ततः वही तेरे प्राणों के काम आएगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूर्ण गुरु का यही उपदेश है कि रात–दिन उस अनन्त प्रभु का गुणानुवाद करो ॥ २ ॥ सब उपायों को छोड़कर केवल एक प्रभु पर टेक रखो और इस प्रकार अमृत–रस रूपी उत्तम पदार्थ चखो ॥ ३ ॥ हे नानक, जिस पर प्रभु कृपा दृष्टि करता है वही विषम संसार–सागर को पार कर जाता है ॥ ४ ॥ ६८ ॥ १३७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसने हृदय में प्रभु के चरण–कमल धारण कर लिए, पूर्ण सद्गुरु से मिलकर उसी का ही पार–उतारा हो गया है ॥ १ ॥ मेरे भाई, प्रभु के गुण गाओ और साधुजनों के साथ मिलकर हरि–नाम का सुमिरन करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने हरि–नाम का स्वीकृति–चिन्ह सद्गुरु के माध्यम से प्राप्त कर लिया है उसकी यह दुर्लभ देह सफल हो गई है ॥ २ ॥ हरि सुमिरन से ही उत्तम पद प्राप्त किया जाता है और साधु संगत में ही भय, भ्रम मिटाया जाता है ॥ ३ ॥ जिधर भी मैं देखता हूँ उधर ही प्रभु समाया हुआ दिखाई देता है। दास नानक भी उसी प्रभु की शरण में आन पड़ा है ॥ ४ ॥ ६९ ॥ १३८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुरु के दर्शन पर मैं बलिहारी जाता हूँ और सद्गुरु परमात्मा के नाम का सुमिरन कर कर के ही जीवित बना रहता हूँ ॥ १ ॥ हे परब्रह्म, पूर्ण गुरुदेव कृपा कर जिससे मैं तुम्हारी सेवा में लगा रहूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम्हारे चरण–कमल मेरे हृदय में बसें और मेरा मन, तन, धन एवं प्राणों का आधार मेरा गुरु ही बना रहे ॥ २ ॥ मेरा जन्म सफल एवं स्वीकृत हो और परब्रह्म रूपी गुरु को मैं अपने निकट ही बसा हुआ जानता रहूँ ॥ ३ ॥ बड़े भाग्य से शान्त पुरुषों की चरण–धूलि प्राप्त होती है ॥ हे नानक, गुरु से मिलते ही

भेटत हरि सिउ लिव लागी ॥ ४ ॥ ७० ॥ १३९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ करै दुहकरम दिखावै होरु ॥ राम की दरगह बाधा चोरु ॥ १ ॥ रामु रमै सोई रामाणा ॥ जलि थलि महीअलि एकु समाणा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतरि बिखु मुखि अंम्रितु सुणावै ॥ जम पुरि बाधा चोटा खावै ॥ २ ॥ अनिक पड़दे महि कमावै विकार ॥ खिन महि प्रगट होहि संसार ॥ ३ ॥ अंतरि साचि नामि रसि राता ॥ नानक तिसु किरपालु बिधाता ॥ ४ ॥ ७१ ॥ १४० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ राम रंगु कदे उतरि न जाइ ॥ गुरु पूरा जिसु देइ बुझाइ ॥ १ ॥ हरि रंगि राता सो मनु साचा ॥ लाल रंग पूरन पुरखु बिधाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतह संगि बैसि गुन गाइ ॥ ता का रंगु न उतरै जाइ ॥ २ ॥ बिनु हरि सिमरन सुखु नही पाइआ ॥ आन रंग फीके सभ माइआ ॥ ३ ॥ गुरि रंगे से भए निहाल ॥ कहु नानक गुर भए है दइआल ॥ ४ ॥ ७२ ॥ १४१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सिमरत सुआमी किलविख नासे ॥ सूख सहज आनंद निवासे ॥ १ ॥ राम जना कउ राम भरोसा ॥ नामु जपत सभु मिटिओ अंदेसा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधसंगि कछु भउ न भराती ॥ गुण गोपाल गाईअहि दिनु राती ॥ २ ॥ करि किरपा प्रभ बंधन छोट ॥ चरण कमल की दीनी ओट ॥ ३ ॥ कहु नानक मनि भई परतीति ॥ निरमल जसु पीवहि जन नीति ॥ ४ ॥ ७३ ॥ १४२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि चरणी जा का मनु लागा ॥ दूखु दरदु भ्रमु ता का भागा ॥ १ ॥ हरि धन को वापारी पूरा ॥ जिसहि निवाजे सो जनु सूरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कउ भए क्रिपाल गुसाई ॥ से जन लागे गुर की पाई ॥ २ ॥ सूख सहज सांति आनंदा ॥ जपि जपि जीवे परमानंदा ॥ ३ ॥ नाम रासि साधसंगि खाटी ॥ कहु नानक प्रभि अपदा काटी ॥ ४ ॥ ७४ ॥ १४३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि सिमरत सभि मिटहि कलेस ॥ चरण कमल मन महि परवेस ॥ १ ॥ उचरहु राम नामु लख बारी ॥ अंम्रित रसु पीवहु प्रभ पिआरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सूख सहज रस महा अनंदा ॥ जपि जपि जीवे परमानंदा ॥ २ ॥ काम क्रोध लोभ मद खोए ॥ साध कै संगि किलबिख सभ धोए ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभ दीन दइआला ॥ नानक दीजै

सुरति प्रभु में लीन हो जाती है ॥ ४ ॥ ७० ॥ १३९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो दुष्कर्म करता है परन्तु बाहर से कुछ और ही करने का नाटक करता है वह प्रभु के दरबार में चोर की तरह बाँधा जाता है ॥ १ ॥ जो राम में लीन बना रहता है उसी को राम का कहा जाता है । जल में, स्थल में और आकाश में केवल एक ही प्रभु समाया हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके हृदय में तो विष भरा हो परन्तु बाहर से अमृत की बातें करता हो वह यमपुरी में बँधा हुआ चोटें खाता रहता है ॥ २ ॥ व्यक्ति अनेक पर्दों के भीतर विकारयुक्त कार्य करता रहता है जो कि क्षण भर में ही संसार के समक्ष प्रकट हो जाते हैं ॥ ३ ॥ जिसके अन्तर्मन में भी सत्य है और जो नाम-रस में लीन है हे नानक, विधाता प्रभु उस पर कृपालु बना रहता है ॥ ४ ॥ ७१ ॥ १४० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ पूर्ण गुरु जिसे समझा देता है उस व्यक्ति का राम-रंग कभी भी नहीं उतरता ॥ १ ॥ हरि-रंग में लीन मन ही सच्चा होता है और ऐसे लाल रंग वाला पूर्ण गुरु संसार का विधाता बन जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो शान्त पुरुषों के साथ बैठकर प्रभु का गुणानुवाद करता है उसके प्रेम का रंग कभी भी नहीं उतरता ॥ २ ॥ हरि-सुमिरन के बिना कभी सुख नहीं पाया जा सकता क्योंकि अन्य सभी प्रकार के प्रेम-रंग फीके मायावी प्रपंच होते हैं ॥ ३ ॥ जिनको गुरु ने प्रेम रंग में रंग दिया है वे प्रसन्न हो उठे हैं और नानक कहता है कि ऐसे व्यक्तियों पर गुरु दयालु हो उठा है ॥ ४ ॥ ७२ ॥ १४१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ उस मालिक के सुमिरन से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं तथा सहज सुख तथा आनन्द में व्यक्ति का निवास बन जाता है ॥ १ ॥ राम (परमात्मा) के सेवकों को केवल परमात्मा का ही भरोसा होता है और प्रभु-नाम का जाप करने से सभी चिन्ताएं मिट जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु-पुरुषों की संगत में कोई भय और भ्रम नहीं रहता तथा दिन-रात धरती के स्वामी प्रभु का ही गुणानुवाद किया जाता है ॥ २ ॥ प्रभु ने कृपा करके मुझे व्यर्थ के बन्धनों से छूट दे दी है तथा अपने चरण-कमल का आश्रय मुझे प्रदान कर दिया है ॥ ३ ॥ हे नानक, मेरे मन में अब यह यकीन बन गया है कि व्यक्ति को सदैव प्रभु के निर्मल यश का ही पान करते रहना चाहिए ॥ ४ ॥ ७३ ॥ १४२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसका मन हरि चरणों में लीन हो गया है उसके दुख, दर्द एवं भ्रम भाग खड़े हुए है ॥ १ ॥ हरि धन का लेन-देन करने वाला व्यक्ति ही पूर्ण व्यक्ति है । प्रभु जिसे सम्मान देता है वही व्यक्ति वास्तव में शूरवीर है ॥१॥ रहाउ ॥ जिन पर प्रभु दयालु होता है वे सेवक गुरु के चरणों में आ जाते हैं ॥ २ ॥ उन्हें सहज सुख, शान्ति एवं सहज आनन्द प्राप्त होता है क्योंकि वे परम आनन्द रूपी परमात्मा का सुमिरन कर-कर के ही जीवित बने रहते हैं ॥३॥ जिन्होंने साधु संगत में नाम रूपी रास-पूँजी की कमाई की है, हे नानक, प्रभु ने उनकी सब आपदाओं (मुसीबतों) को काट डाला है ॥ ४ ॥ ७४ ॥ १४३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु सुमिरन से सभी क्लेष मिट जाते हैं और प्रभु के चरण-कमल मन में स्थायी रूप से प्रविष्ट हो जाते है ॥ १ ॥ हे मेरी प्यारी जीभ, लाखों बार प्रभु-नाम का उच्चारण करो और अमृत-रस का पान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परम आनन्द रूपी प्रभु का सुमिरन करके आध्यात्मिक तौर से जीवित बने रहो और सहज रस और महा आनन्द को प्राप्त करते रहो ॥ २ ॥ साधु की संगत में सब पाप धुल जाते हैं तथा काम, क्रोध, लोभ, अंहकार आदि खो जाते है ॥ ३ ॥ हे दीन-दयालु प्रभु, कृपा कर और नानक को

साध रवाला ॥ ४ ॥ ७५ ॥ १४४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिस का दीआ पैनै खाइ ॥ तिसु सिउ आलसु किउ बनै माइ ॥ १ ॥ खसमु बिसारि आन कंमि लागहि ॥ कउडी बदले रतनु तिआगहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभू तिआगि लागत अन लोभा ॥ दासि सलामु करत कत सोभा ॥ २ ॥ अंम्रित रसु खावहि खान पान ॥ जिनि दीए तिसहि न जानहि सुआन ॥ ३ ॥ कहु नानक हम लूण हरामी ॥ बखसि लेहु प्रभ अंतरजामी ॥ ४ ॥ ७६ ॥ १४५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभ के चरन मन माहि धिआनु ॥ सगल तीरथ मजन इसनानु ॥ १ ॥ हरि दिनु हरि सिमरनु मेरे भाई ॥ कोटि जनम की मलु लहि जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि की कथा रिद माहि बसाई ॥ मन बांछत सगले फल पाई ॥ २ ॥ जीवन मरणु जनमु परवानु ॥ जा कै रिदै वसै भगवानु ॥ ३ ॥ कहु नानक सेई जन पूरे ॥ जिना परापति साधू धूरे ॥ ४ ॥ ७७ ॥ १४६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ खादा पैनदा मूकरि पाइ ॥ तिस नो जोहहि दूत धरम राइ ॥ १ ॥ तिसु सिउ बेमुखु जिनि जीउ पिंडु दीना ॥ कोटि जनम भरमहि बहु जूना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साकत की ऐसी है रीति ॥ जो किछु करै सगल बिपरीति ॥ २ ॥ जीउ प्राण जिनि मनु तनु धारिआ ॥ सोई ठाकुरु मनहु बिसारिआ ॥ ३ ॥ बधे बिकार लिखे बहु कागर ॥ नानक उधरु क्रिपा सुख सागर ॥ ४ ॥ पारब्रहम तेरी सरणाइ ॥ बंधन काटि तरै हरि नाइ ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ ७८ ॥ १४७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ अपने लोभ कउ कीनो मीतु ॥ सगल मनोरथ मुकति पदु दीतु ॥ १ ॥ ऐसा मीतु करहु सभु कोइ ॥ जा ते बिरथा कोइ न होइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपुनै सुआइ रिदै लै धारिआ ॥ दूख दरद रोग सगल बिदारिआ ॥ २ ॥ रसना गीधी बोलत राम ॥ पूरन होए सगले काम ॥ ३ ॥ अनिक बार नानक बलिहारा ॥ सफल दरसनु गोबिंदु हमारा ॥ ४ ॥ ७९ ॥ १४८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ कोटि बिघन हिरे खिन माहि ॥ हरि हरि कथा साधसंगि सुनाहि ॥ १ ॥ पीवत राम रसु अंम्रित गुण जासु ॥ जपि हरि चरण मिटी खुधि तासु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सरब कलिआण सुख सहज निधान ॥ जा कै रिदै वसहि भगवान

साधु–जनों की चरण–धूलि प्रदान करो ॥ ४ ॥ ७५ ॥ १४४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मेरी माँ, व्यक्ति जिसका दिया हुआ पहनता और खाता है उसके प्रति क्यों आलसी बना रहता है । व्यक्ति प्रभु को विस्मृत करके अन्य कामों में लगा रहता है और इस प्रकार कौड़ियों को पाकर रत्नों को छोड़ता चला जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु को त्यागने से अन्य कई प्रकार के लोभ लग जाते हैं । प्रभु की दासी माया को प्रणाम करने से भला कैसे मान और शोभा प्राप्त होंगें ॥ २ ॥ अमृत के समान रसों को खाया–पीया जाता है परन्तु यह कुक्कुर व्यक्ति उसे नहीं जानता जिसने उसे दिया है ॥ ३ ॥ नानक कहता है कि हम तो नमकहराम हैं; हे अन्तर्यामी प्रभु हमें बचा ले ॥ ४ ॥ ७६ ॥ १४५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु के चरणों का हृदय में ध्यान धरना ही सभी तीर्थों के स्नान के बराबर है ॥ १ ॥ हे मेरे भाई, प्रत्येक दिन हरि का सुमिरन करो जिससे तुम्हारे करोड़ों जन्मों की मल उतर जाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने प्रभु की कथा को मन में बसा लिया है उसको सभी मनोवांछित फल प्राप्त हो जाते हैं ॥ २ ॥ उसका जन्म, जीवन, मरण सभी सफल हो जाते हैं जिसके हृदय में परमात्मा बसता है ॥ ३ ॥ नानक कहता है कि वे ही व्यक्ति पूर्ण हैं जिन्हें साधु–पुरुषों की चरण–धूलि प्राप्त हो जाती है ॥ ४ ॥ ७७ ॥ १४६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो खाता, पहनता हुआ भी प्रभु का धन्यवाद करने से मुकर जाता है उसको मारने के लिए धर्मराज के दूत हमेशा आँखें गड़ाए रहते हैं ॥ १ ॥ जो व्यक्ति उस प्रभु से विमुख बना रहता है जिसने यह प्राण और शरीर दिए है, वह करोड़ों जन्मों तक अनेकों योनियों में भटकता रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु से विमुख व्यक्ति का जीवन ढंग ऐसा है कि वह जो कुछ भी करता है वह सब कुछ उलटा ही होता है ॥ २ ॥ जिसने जीवन प्राण एवं व्यक्ति के मन तन को धारण कर रखा है उसी प्रभु को ऐसे व्यक्ति ने मन से विस्मृत कर रखा है ॥ ३ ॥ उसके बढ़ चुके विकारों को अनेकों लेखों में लिखा गया है और हे नानक, प्रभु की कृपा होने पर ही उसका उद्धार हो सकता है और वह सुख–सागर प्रभु को पा सकता है ॥ ४ ॥ हे प्रभु, तेरी शरण में आने से बन्धन कट जाते हैं और हरि–नाम के कारण व्यक्ति का उद्धार हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ दूसरा ॥ ७८ ॥ १४७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ बेशक अपने लोभ के कारण ही परमात्मा को अपना मित्र बनाया है परन्तु फिर भी परमात्मा उसके सभी मनोरथों को पूरा करते हुए उसे मुक्ति पद भी दे देता है ॥ १ ॥ सबको ऐसा प्रभु ही मित्र बनाना चाहिए क्योंकि उसका किया हुआ कोई भी कार्य व्यर्थ नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसने अपने स्वार्थ के लिए भी उसे अपने हृदय में धारण किया है, परमात्मा ने उसके भी सारे दुख–दर्द और रोग मिटा दिए हैं॥२॥ जिसकी जीभ को राम–नाम का उच्चारण करने की आदत पड़ गई है उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण हो गई हैं ॥ ३ ॥ हे नानक, जिस प्रभु का दर्शन निष्फल नही होता मैं उस पर अनेकों बार बलिहारी जाता हूँ ॥ ४ ॥ ७९ ॥ १४८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ साधुसंगत में हरि–कथा सुनने पर मेरे करोड़ों विघ्न क्षण भर में दूर हो गए हैं ॥ १ ॥ अमृत के समान गुण वाला राम–रस पीते ही तथा प्रभु चरणों का सुमिरन करते ही मेरी भूख और प्यास मिट गई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके हृदय में प्रभु बसता है उसके पास सर्व कल्याण कारी सुखों का ईश्वरीय भण्डार

॥ २ ॥ अउखध मंत्र तंत सभि छारु ॥ करणैहारु रिदे महि धारु ॥ ३ ॥
तजि सभि भरम भजिओ पारब्रहमु ॥ कहु नानक अटल इहु धरमु ॥ ४ ॥
८० ॥ १४९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ करि किरपा भेटे गुर सोई ॥ तितु
बलि रोगु न बिआपै कोई ॥ १ ॥ राम रमण तरण भै सागर ॥ सरणि सूर
फारे जम कागर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सतिगुरि मंत्रु दीओ हरि नाम ॥ इह आसर
पूरन भए काम ॥ २ ॥ जप तप संजम पूरी वडिआई ॥ गुर किरपाल हरि
भए सहाई ॥ ३ ॥ मान मोह खोए गुरि भरम ॥ पेखु नानक पसरे
पारब्रहम ॥ ४ ॥ ८१ ॥ १५० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ बिखै राज ते अंधुला
भारी ॥ दुखि लागै राम नामु चितारी ॥ १ ॥ तेरे दास कउ तुही वडिआई ॥
माइआ मगनु नरकि लै जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रोग गिरसत चितारे नाउ ॥
बिखु माते का ठउर न ठाउ ॥ २ ॥ चरन कमल सिउ लागी प्रीति ॥ आन
सुखा नही आवहि चीति ॥ ३ ॥ सदा सदा सिमरउ प्रभ सुआमी ॥ मिलु
नानक हरि अंतरजामी ॥ ४ ॥ ८२ ॥ १५१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ आठ पहर
संगी बटवारे ॥ करि किरपा प्रभि लए निवारे ॥ १ ॥ ऐसा हरि रसु रमहु
सभु कोइ ॥ सरब कला पूरन प्रभु सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महा तपति सागर
संसार ॥ प्रभ खिन महि पारि उतारणहार ॥ २ ॥ अनिक बंधन तोरे नही
जाहि ॥ सिमरत नाम मुकति फल पाहि ॥ ३ ॥ उकति सिआनप इस ते कछु
नाहि ॥ करि किरपा नानक गुण गाहि ॥ ४ ॥ ८३ ॥ १५२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥
थाती पाई हरि को नाम ॥ बिचरु संसार पूरन सभि काम ॥ १ ॥ वडभागी
हरि कीरतनु गाईऐ ॥ पारब्रहम तूं देहि त पाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि
के चरण हिरदै उरि धारि ॥ भव सागरु चड़ि उतरहि पारि ॥ २ ॥ साधू संगु
करहु सभु कोइ ॥ सदा कलिआण फिरि दूखु न होइ ॥ ३ ॥ प्रेम भगति भजु
गुणी निधानु ॥ नानक दरगह पाईऐ मानु ॥ ४ ॥ ८४ ॥ १५३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥
जलि थलि महीअलि पूरन हरि मीत ॥ भ्रम बिनसे गाए गुण नीत ॥ १ ॥ ऊठत सोवत
हरि संगि पहरूआ ॥ जा कै सिमरणि जम नही डरूआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चरण

आ जाता है ॥ २ ॥ औषधियां, मन्त्र, तन्त्र सब राख के समान हैं । हे जीव तू अपने हृदय में सब कुछ कर सकने वाले प्रभु को धारण कर ॥ ३ ॥ हे नानक, व्यक्ति का यही अटल कर्त्तव्य एवं धर्म है कि वह सभी भ्रमों को छोड़कर केवल परब्रह्म परमात्मा का ही सुमिरन करे ॥ ४ ॥ ८० ॥ १४९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु जिस पर कृपा करता है वही गुरु से मिल पाता है और गुरु के बल के कारण उस व्यक्ति को कोई भी रोग प्रभावित नहीं कर पाता ॥ १ ॥ राम में लीन होना भवसागर को पार करना है । बलशाली गुरु की शरण में आने पर यम भी लेखा के कागज़ फाड़ देता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सद्‌गुरु ने हरि–नाम का मन्त्र दिया और उसके कारण सभी कामनाएं पूर्ण हो गईं ॥ २ ॥ जब गुरु कृपालु हुआ और परमात्मा ने सहायता की तो जाप, तपस्या, संयम आदि का पूर्ण बड़प्पन प्राप्त हो गया ॥३॥ गुरु ने अभिमान, मोह एवं भ्रम को समाप्त कर दिया; अब हे नानक, चारों ओर व्याप्त परमात्मा के ही दर्शन कर ॥ ४ ॥ ८१ ॥ १५० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ विषयों में लीन राजा से वह अन्धा व्यक्ति बड़ा है जो कम से कम दुःख लगने पर तो प्रभु–नाम का सुमिरन करता है ॥ १ ॥ अपने दास को तू ही बड़प्पन प्रदान करता है और प्रपंचों में लीन व्यक्ति को नर्क में ले जाया जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रोग में ग्रस्त व्यक्ति परमात्मा का नाम लेता है परन्तु विषयों में लीन का कोई ठौर–ठिकाना नहीं ॥ २ ॥ जब प्रभु के चरण कमलों से प्रीति लग जाती है तो फिर अन्य सांसारिक सुखों का ख्याल नहीं आता ॥ ३ ॥ हे नानक, सदैव स्वामी प्रभु का ही सुमिरन करो और इस प्रकार अन्तर्यामी प्रभु से मिलाप कर लो ॥ ४ ॥ ८२ ॥ १५१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ आठों प्रहर काम, क्रोध आदि डाकू साथ बने रहते हैं परन्तु कृपा करके प्रभु ने हमें इनसे बचा लिया है ॥ १ ॥ सभी लोग हरि–रस में रमण करें क्योंकि सर्व कलाओं में पूर्ण वह प्रभु ही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह संसार–सागर बहुत कष्टदायक है परन्तु प्रभु क्षण भर में ही उसे पार उतार लेता है ॥ २ ॥ न तोड़े जा सकने वाले अनेकों बन्धन व्यक्ति के चारों ओर होते हैं परन्तु नाम–सुमिरन से उनसे मुक्ति का फल प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ जीव के पास कोई युक्ति और सयानापन नहीं है । हे नानक, यदि प्रभु ही कृपा करे तो यह उसके गुण गा सकता है ॥ ४ ॥ ८३ ॥ १५२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जीव को हरि–नाम की अमानत प्राप्त हुई है जिसे लेकर यदि वह संसार में विचरण करे तो उसके सभी काम पूरे हो जाएं ॥ १ ॥ बड़े भाग्य से प्रभु की कीर्ति का गायन किया जाता है परन्तु हे प्रभु, यदि तू ही शक्ति दे तो यह गुणानुवाद प्राप्त हो सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे जीव, अपने हृदय में प्रभु–चरणों को धारण कर तभी तू चरण रूपी जहाज पर बैठकर भव–सागर से पार हो सकता है ॥ २ ॥ सब को साधु–पुरुषों का संग करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से सदैव कल्याण होता है और फिर दुःख नहीं होता ॥ ३ ॥ प्रेम–पूर्ण भक्ति के साथ उस गुण–निधान का सुमिरन करना चाहिए और ऐसा करने से हे नानक, प्रभु–दरबार में सम्मान मिलता है ॥ ४ ॥ ८४ ॥ १५३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ उस हरि रूपी मित्र को जल, थल और आकाश में व्याप्त मानने पर भ्रमों का नाश हो जाता है और सदैव उसका गुणानुवाद किया जाता है ॥१॥ सोते जागते परमात्मा हमारे साथ पहरेदार है जिसके सुमिरन से यम का डर नहीं रहता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के चरण

कमल प्रभ रिदै निवासु ॥ सगल दूख का होइआ नासु ॥ २ ॥ आसा माणु ताणु धनु एक ॥ साचे साह की मन महि टेक ॥ ३ ॥ महा गरीब जन साध अनाथ ॥ नानक प्रभि राखे दे हाथ ॥ ४ ॥ ८५ ॥ १५४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि हरि नामि मजनु करि सूचे ॥ कोटि ग्रहण पुंन फल मूचे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के चरण रिदे महि बसे ॥ जनम जनम के किलविख नसे ॥ १ ॥ साधसंगि कीरतन फलु पाइआ ॥ जम का मारगु द्रिसटि न आइआ ॥ २ ॥ मन बच क्रम गोविंद अधारु ॥ ता ते छुटिओ बिखु संसारु ॥ ३ ॥ करि किरपा प्रभि कीनो अपना ॥ नानक जापु जपे हरि जपना ॥ ४ ॥ ८६ ॥ १५५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ पउ सरणाई जिनि हरि जाते ॥ मनु तनु सीतलु चरण हरि राते ॥ १ ॥ भै भंजन प्रभ मनि न बसाही ॥ डरपत डरपत जनम बहुतु जाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कै रिदै बसिओ हरि नाम ॥ सगल मनोरथ ता के पूरन काम ॥ २ ॥ जनमु जरा मिरतु जिसु वासि ॥ सो समरथु सिमरि सासि गिरासि ॥ ३ ॥ मीतु साजनु सखा प्रभु एक ॥ नामु सुआमी का नानक टेक ॥ ४ ॥ ८७ ॥ १५६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ बाहरि राखिओ रिदै समालि ॥ घरि आए गोविंदु लै नालि ॥ १ ॥ हरि हरि नामु संतन कै संगि ॥ मनु तनु राता राम कै रंगि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर परसादी सागरु तरिआ ॥ जनम जनम के किलविख सभि हिरिआ ॥ २ ॥ सोभा सुरति नामि भगवंतु ॥ पूरे गुर का निरमल मंतु ॥ ३ ॥ चरण कमल हिरदे महि जापु ॥ नानकु पेखि जीवै परतापु ॥ ४ ॥ ८८ ॥ १५७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ धंनु इहु थानु गोविंद गुण गाए ॥ कुसल खेम प्रभि आपि बसाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिपति तहा जहा हरि सिमरनु नाही ॥ कोटि अनंद जह हरि गुन गाही ॥ १ ॥ हरि बिसरिऐ दुख रोग घनेरे ॥ प्रभ सेवा जमु लगै न नेरे ॥ २ ॥ सो वडभागी निहचल थानु ॥ जह जपीऐ प्रभ केवल नामु ॥ ३ ॥ जह जाईऐ तह नालि मेरा सुआमी ॥ नानक कउ मिलिआ अंतरजामी ॥ ४ ॥ ८९ ॥ १५८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो प्राणी गोविंदु धिआवै ॥ पड़िआ अणपड़िआ परम गति पावै ॥ १ ॥ साधू संगि सिमरि गोपाल ॥ बिनु नावै झूठा धनु मालु ॥ १ ॥ रहाउ ॥

कमल को हृदय में टिका लेने से समस्त दुःखों का नाश हो जाता है ॥ २ ॥ केवल एक प्रभु ही व्यक्ति का सम्मान, शक्ति एवं धन है । ऐसे सच्चे साहूकार की ही टेक मन में बनाए रखनी चाहिए ॥ ३ ॥ मैं महा गरीब साधक और अनाथ सेवक हूँ; हे नानक, प्रभु ने मुझे अपना हाथ देकर बचा लिया ॥ ४ ॥ ८५ ॥ १५४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि-नाम में स्नान करके पवित्र होने का फल करोड़ों ग्रहणों पर दान, पुण्य के फल से भी अधिक होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरि के चरण हृदय में आ बसने पर जन्मों-जन्मों के पाप भाग खड़े होते हैं ॥ १ ॥ साधु-संगत में प्रभु-कीर्ति के गायन के फलस्वरूप यम का मार्ग तो दृष्टि से ओझल ही हो जाता है ॥ २ ॥ जिसको मन, वचन और कर्म से केवल एक परमात्मा का ही आश्रय है, यह विष-रूपी संसार उससे बहुत पीछे छूट जाता है ॥ ३ ॥ प्रभु ने कृपा करके उसे अपना बना लिया है और हे नानक, अब वह हरि-जाप में ही लीन बना रहता है ॥ ४ ॥ ८६ ॥ १५५॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे भाई, जिन्होंने हरि को जान लिया है उनकी शरण में जा क्योंकि प्रभु-चरणों में लीन होने पर मन तन शीतल एवं शान्त हो जाता है ॥ १ ॥ भय-नाशक प्रभु को यदि मन में नहीं बसाया गया तो अनेकों जन्म डरते-डरते ही बीत जाएंगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके हृदय में हरि-नाम बस गया है उसके सभी उद्देश्य और काम पूरे हो जाते हैं ॥ २ ॥ जन्म लेना, बुढ़ापा और मृत्यु जिसके वश में है हे जीव, उस समर्थ प्रभु का हर साँस के साथ सुमिरन करता रह ॥ ३ ॥ एक प्रभु ही वास्तविक मित्र, प्रियतम एवं साथी है, इसीलिए हे नानक, उस प्रभु का नाम ही जीव की वास्तविक टेक है ॥ ४ ॥ ८७ ॥ १५६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ शान्त पुरुष बाहर भी प्रभु को हृदय में धारण किए रहते हैं और घर (गृहस्थी) में भी उसे अपने साथ ही अनुभव करते हैं ॥ १ ॥ शान्त पुरुषों की संगत में हरि-नाम प्राप्त होता है और मन तन प्रभु के रंग में रंग जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु की कृपा से व्यक्ति भवसागर को पार कर जाता है और उसके जन्मों-जन्मान्तरों के पाप दूर हो जाते हैं ॥२॥ प्रभु-नाम में सुरति को बनाएं रखने से शोभा प्राप्त होती है और व्यक्ति भाग्यशाली बन जाता है; यही पूर्ण गुरु का निर्मल उपदेश है ॥ ३ ॥ नानक उस प्रभु के प्रताप को ही देखकर जीवित बना रहता है और उसके चरण-कमलों का हृदय में जाप करता रहता है ॥ ४ ॥ ८८ ॥ १५७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ वह स्थान धन्य है जहाँ गोबिन्द प्रभु के गुण गाए जाते हैं । सब सुख शान्ति प्रभु ने यहां पर बसा दी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विपत्ति तो वहां है जहां हरि-सुमिरन नहीं होता ॥ जहां प्रभु के गुण गाए जाते हैं वहां करोड़ों आनन्द बसे रहते हैं ॥ १ ॥ परमात्मा के विस्मृत हो जाने से अनेकों दुःख रोग आ घेरते हैं परन्तु प्रभु का सुमिरन करने से यम पास तक नहीं आ सकता ॥ २ ॥ वह स्थान अटल एवं भाग्यशाली है जहां केवल प्रभु-नाम का ही जाप होता है ॥ ३ ॥ मैं जहां जाता हूँ मेरा स्वामी प्रभु मेरे साथ होता है । नानक को वह अन्तर्यामी प्रभु मिल गया है ॥ ४ ॥ ८९ ॥ १५८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो प्राणी प्रभु पर ध्यान लगाता है वह चाहे पढ़ा अथवा अनपढ़ हो तब भी उसको परम पद प्राप्त हो जाता है ॥ १ ॥ हे भाई, साधु-संगत में प्रभु का सुमिरन करो क्योंकि प्रभु-नाम से विहीन यह धन माल अस्थिर एवं झूठा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥

रूपवंतु सो चतुरु सिआणा ॥ जिनि जनि मानिआ प्रभ का भाणा ॥ २ ॥ जग महि आइआ सो परवाणु ॥ घटि घटि अपणा सुआमी जाणु ॥ ३ ॥ कहु नानक जा के पूरन भाग ॥ हरि चरणी ता का मनु लाग ॥ ४ ॥ ९० ॥ १५९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि के दास सिउ साकत नही संगु ॥ ओहु बिखई ओसु राम को रंगु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन असवार जैसे तुरी सीगारी ॥ जिउ कापुरखु पुचारै नारी ॥ १ ॥ बैल कउ नेत्रा पाइ दुहावै ॥ गऊ चरि सिंघ पाछै पावै ॥ २ ॥ गाडर ले कामधेनु करि पूजी ॥ सउदे कउ धावै बिनु पूंजी ॥ ३ ॥ नानक राम नामु जपि चीत ॥ सिमरि सुआमी हरि सा मीत ॥ ४ ॥ ९१ ॥ १६० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सा मति निरमल कहीअत धीर ॥ राम रसाइणु पीवत बीर ॥ १ ॥ हरि के चरण हिरदै करि ओट ॥ जनम मरण ते होवत छोट ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो तनु निरमलु जितु उपजै न पापु ॥ राम रंगि निरमल परतापु ॥ २ ॥ साधसंगि मिटि जात बिकार ॥ सभ ते ऊच एहो उपकार ॥ ३ ॥ प्रेम भगति राते गोपाल ॥ नानक जाचै साध रवाल ॥ ४ ॥ ९२ ॥ १६१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ ऐसी प्रीति गोविंद सिउ लागी ॥ मेलि लए पूरन वडभागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भरता पेखि बिगसै जिउ नारी ॥ तिउ हरि जनु जीवै नामु चितारी ॥ १ ॥ पूत पेखि जिउ जीवत माता ॥ ओति पोति जनु हरि सिउ राता ॥ २ ॥ लोभी अनदु करै पेखि धना ॥ जन चरन कमल सिउ लागो मना ॥ ३ ॥ बिसरु नही इकु तिलु दातार ॥ नानक के प्रभ प्रान अधार ॥ ४ ॥ ९३ ॥ १६२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ राम रसाइणि जो जन गीधे ॥ चरन कमल प्रेम भगती बीधे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आन रसा दीसहि सभि छारु ॥ नाम बिना निहफल संसार ॥ १ ॥ अंध कूप ते काढे आपि ॥ गुण गोविंद अचरज परताप ॥ २ ॥ वणि त्रिणि त्रिभवणि पूरन गोपाल ॥ ब्रहम पसारु जीअ संगि दइआल ॥ ३ ॥ कहु नानक सा कथनी सारु ॥ मानि लेतु जिसु सिरजनहारु ॥ ४ ॥ ९४ ॥ १६३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ नितप्रति नावणु राम सरि कीजै ॥ झोलि महा रसु हरि अंम्रितु पीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरमल उदकु गोविंद का नाम ॥ मजनु करत पूरन

वही व्यक्ति रूपवान, चतुर एवं सयाना है जिसने प्रभु की रज़ा को आनन्दपूर्वक मान लिया है ॥ २ ॥ जिसने प्रत्येक हृदय में परमात्मा को जान लिया है, इस संसार में उसी का आना ही सफल कहा जाता है ॥ ३ ॥ हे नानक, जो पूर्ण भाग्यशाली है उसी का मन प्रभु-चरणों में लीन है ॥ ४ ॥ ९० ॥ १५९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु के सेवक का और माया में लिप्त एवं प्रभु से टूटे हुए व्यक्ति का साथ नहीं बनता क्योंकि वह तो विषयों में लीन बना रहता है और प्रभु का सेवक प्रभु रंग में रंगा रहता है ॥ १ ॥ रहाउ । सजाई हुई घोड़ी पर मन की कल्पना में ही सवारी नहीं की जा सकती। नपुंसक व्यक्ति स्त्री से प्यार नहीं कर सकता ॥ १ ॥ बैल को रस्सी से बाँधकर उसको दुहना और गऊ पर सवार होकर शेर का पीछा नहीं किया जा सकता ॥ २ ॥ भेड़ को यदि कामधेनु की तरह पूजा जाए तो ऐसा करना व्यर्थ ही होता है । बिना रास पूँजी के सौदा लेने जाना भी बेकार है ॥३॥ हे नानक, अपने चित्त में राम-नाम का जाप कर और सभी कार्यों की पूर्ति के लिए प्रभु जैसे मित्र का सुमिरन कर तथा व्यर्थ में अपनी शक्ति न गँवा ॥४॥९१॥१६०॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे भाई, वही मति निर्मल और धैर्य देने वाली है जो राम रूपी रसायन पिलाती है ॥ १ ॥ अपने हृदय में प्रभु-चरणों का आसरा ले तो तू जन्म-मरण से छूट जाएगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वही शरीर निर्मल है जिसमें से पाप पैदा नहीं होते । राम-रंग में रंगकर ही निर्मल शोभा प्राप्त होती है ॥ २ ॥ व्यक्ति का अपने साथ यही सबसे बड़ा उपकार है कि वह साधु-संगत में विकारों को मिटा ले ॥ ३ ॥ जो प्रेम भक्ति में रंग कर उस प्रभु में लीन है, नानक उन साधु-पुरुषों की चरण-धूलि माँगता है ॥ ४ ॥ ९२ ॥ १६१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु से मेरा ऐसा गहरा प्रेम बन गया है कि मुझे उस पूर्ण प्रभु ने अपने साथ मिला लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे स्त्री पति को देखकर प्रसन्न होती है उसी प्रकार प्रभु-नाम सुमिरन करके प्रभु के दास जीवित बने रहते हैं ॥ १ ॥ जैसे माँ पुत्र को देखकर प्रसन्न हो उठती है उसी प्रकार प्रभु का दास प्रभु में लीन बना रहता है ॥ २ ॥ धन को देखकर जैसे लोभी व्यक्ति आनन्दित होता है उसी तरह प्रभु के सेवक का मन प्रभु के चरण-कमलों में लीन बना रहता है ॥ ३ ॥ नानक के प्राण आधार हे प्रभु, तुम मुझे एक क्षण के लिए भी विस्मृत न हो ॥ ४ ॥ ९३ ॥ १६२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो राम के नाम रूपी रसायन को पान करने के आदी हो गए हैं वे प्रभु के चरण कमल के प्रेम और भक्ति में पूरी तरह से बिंध गए हैं॥१॥ रहाउ ॥ उन्हें अन्य सभी रस राख के समान लगते हैं और नाम के बिना यह संसार भी निष्फल लगता है ॥ १ ॥ उस प्रभु के गुण एवं प्रताप आश्चर्यजनक हैं, क्योंकि उसने स्वयं ही संसार के माया रूपी अन्धे कुएं में से अपने भक्त को निकाल लिया है ॥ २ ॥ वह प्रभु वनों में वनस्पति में एवं तीनों लोकों में परिव्याप्त है ॥ उस दयालु प्रभु का ही प्रसार चारों ओर है ॥ ३ ॥ हे नानक, उसी की बात सारयुक्त मानी जानी चाहिए जिसे वह सृजनहार प्रभु मान ले ॥४॥९४॥१६३॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे जीव, सदैव राम-नाम के अमृत सरोवर में स्नान करो और पूर्णतः आनन्दित होकर प्रभु नाम के अमृत का महारस पान करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु का नाम ही निर्मल जल है जिसमें स्नान करने से

सभि काम ॥ १ ॥ संतसंगि तह गोसटि होइ ॥ कोटि जनम के किलविख खोइ ॥ २ ॥ सिमरहि साध करहि आनंदु ॥ मनि तनि रविआ परमानंदु ॥ ३ ॥ जिसहि परापति हरि चरण निधान ॥ नानक दास तिसहि कुरबान ॥ ४ ॥ ९५ ॥ १६४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सो किछु करि जितु मैलु न लागै ॥ हरि कीरतन महि एहु मनु जागै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एको सिमरि न दूजा भाउ ॥ संतसंगि जपि केवल नाउ ॥ १ ॥ करम धरम नेम ब्रत पूजा ॥ पारब्रहम बिनु जानु न दूजा ॥ २ ॥ ता की पूरन होई घाल ॥ जा की प्रीति अपुने प्रभ नालि ॥ ३ ॥ सो बैसनो है अपर अपारु ॥ कहु नानक जिनि तजे बिकार ॥ ४ ॥ ९६ ॥ १६५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जीवत छाडि जाहि देवाने ॥ मुइआ उन ते को वरसांने ॥ १ ॥ सिमरि गोविंदु मनि तनि धुरि लिखिआ ॥ काहू काज न आवत बिखिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिखै ठगउरी जिनि जिनि खाई ॥ ता की त्रिसना कबहूं न जाई ॥ २ ॥ दारन दुख दुतर संसारु ॥ राम नाम बिनु कैसे उतरसि पारि ॥ ३ ॥ साधसंगि मिलि दुइ कुल साधि ॥ राम नाम नानक आराधि ॥ ४ ॥ ९७ ॥ १६६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गरीबा उपरि जि खिंजै दाड़ी ॥ पारब्रहमि सा अगनि महि साड़ी ॥ १ ॥ पूरा निआउ करे करतारु ॥ अपुने दास कउ राखनहारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आदि जुगादि प्रगटि परतापु ॥ निंदकु मुआ उपजि वड तापु ॥ २ ॥ तिनि मारिआ जि रखै न कोइ ॥ आगै पाछै मंदी सोइ ॥ ३ ॥ अपुने दास राखै कंठि लाइ ॥ सरणि नानक हरि नामु धिआइ ॥ ४ ॥ ९८ ॥ १६७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ महजरु झूठा कीतोनु आपि ॥ पापी कउ लागा संतापु ॥ १ ॥ जिसहि सहाई गोबिंदु मेरा ॥ तिसु कउ जमु नही आवै नेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साची दरगह बोलै कूड़ु ॥ सिरु हाथ पछोड़ै अंधा मूड़ु ॥ २ ॥ रोग बिआपे करदे पाप ॥ अदली होइ बैठा प्रभु आपि ॥ ३ ॥ अपन कमाइऐ आपे बाधे ॥ दरबु गइआ सभु जीअ कै साथै ॥ ४ ॥ नानक सरनि परे दरबारि ॥ राखी पैज मेरै करतारि ॥ ५ ॥ ९९ ॥ १६८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जन की धूरि मन मीठ खटानी ॥ पूरबि करमि लिखिआ धुरि प्रानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥

सभी कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं ॥ १ ॥ ऐसी अवस्था में शान्त पुरुषों के साथ विचार चर्चा होती है और करोड़ों जन्मों के पाप समाप्त हो जाते हैं ॥ २ ॥ साधु पुरुष प्रभु का सुमिरन करते हुए आनन्दित बने रहते हैं और उनके मन, तन में परमानन्द रूपी प्रभु रमण करता रहता है ॥ ३ ॥ जिसे हरि–चरण रूपी भण्डार प्राप्त हो गया दास नानक उस पर कुर्बान जाता है ॥ ४ ॥ ९५ ॥ १६४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे भाई, ऐसे काम कर जिससे तुझे बुरे कर्मों की मैल न लगे। मन का जागरण प्रभु गुणानुवाद में ही होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ द्वैतभाव को छोड़कर केवल एक प्रभु का ही सुमिरन कर तथा साधु–संगत में केवल प्रभु–नाम का ही जाप कर ॥ २ ॥ जिसकी प्रीति अपने प्रभु के साथ लग गई है उसकी मेहनत सफल हो जाती है ॥ ३ ॥ हे नानक, जिसने विकारों को त्याग दिया है वही वैष्णव सबसे उत्तम है ॥ ४ ॥ ९६ ॥ १६५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मूर्ख, जो सम्बन्धी जीते जी ही सब को छोड़कर अलग बने रहते हैं, मरने के बाद उनसे भला क्या लाभ लिया जा सकता है अर्थात मरने के बाद व्यक्ति के लिए किया कर्मकाण्ड भ्रम और दिखावा मात्र है ॥ १ ॥ प्रारम्भ से ही हमारे मन, तन में लिखा हुआ जो गोबिन्द नाम है उसका सुमिरन किया जाना चाहिए क्योंकि विषय विकार रूपी विष किसी काम नहीं आते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विषयों की ठग–बूटी जिस जिस ने भी खा ली है उसकी तृष्णा कभी समाप्त नहीं होती ॥ २ ॥ यह संसार भयानक दुखों वाला एवं बहुत कठिनाई से तैरा जा सकने वाला है। राम नाम के बिना भला कोई इसमें से कैसे पार उतरेगा ॥ ३ ॥ साधु–संगत में मिल बैठ कर दोनों लोकों को साध ले और हे नानक, राम नाम की आराधना कर ॥ ४ ॥ ९७ ॥ १६६॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो विनम्र एवं गरीब पर अपनी दाढ़ी को हिला–हिला कर खीझता है परमात्मा उस दाढ़ी को उसके अपने ही क्रोध की अग्नि में जला देता है। वह कर्ता प्रभु पूरा न्याय करता है और अपने सेवक की रक्षा करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के सेवक का प्रताप प्रारम्भ से लेकर युगों–युगों तक प्रकट बना रहता है जब कि निन्दक व्यक्ति अनेकों कष्ट सहता हुआ मर जाता है ॥ २ ॥ जब प्रभु मारता है तो उसकी कोई रक्षा नहीं कर सकता और ऐसे व्यक्ति की इस लोक और परलोक में बदनामी ही होती है ॥ ३ ॥ प्रभु अपने सेवक को गले से लगा कर रखता है और हे नानक, तू भी उस परमात्मा की शरण में जाकर प्रभु नाम का सुमिरन कर ॥ ४ ॥ ९८ ॥ १६७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे भाई, निन्दक के शिकायत–पत्र को प्रभु ने स्वयं ही झूठा सिद्ध कर दिया है और झूठे व्यक्तियों को बहुत ही क्लेष का अनुभव हुआ है ॥ १ ॥ मेरा प्रभु जिसकी सहायता करता है यमदूत उसके पास भी नहीं आ पाता है। जो सच्चे दरबार में झूठ बोलता है वह मूर्ख व्यक्ति प्रभु के समक्ष हाथों से अपना सिर पीटता है अर्थात पछताता है ॥ २ ॥ पाप करने वाले लोभी बने रहते हैं क्योंकि न्याय करना स्वयं प्रभु के अपने हाथ में है ॥ ३ ॥ अपने किए हुए कर्मों के कारण ही व्यक्ति स्वयं बंधे रहते हैं परन्तु प्राण निकलने के साथ ही यह सब धन–माल जीव के हाथों से निकल जाता है ॥ ४ ॥ हे नानक, जो व्यक्ति परमात्मा की शरण में आ जाते हैं और परमात्मा के दरबार में आ गिरते हैं, मेरें कर्त्ता–प्रभु ने सदैव उनकी इज्जत बचाई है ॥ ५ ॥ ९९ ॥ १६८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिस प्राणी के पूर्व लिखे हुए कर्म होते हैं उसी को परमात्मा के सेवक की चरण–धूलि अच्छी लगती है ॥ १ ॥ रहाउ॥

अहंबुधि मन पूरि थिधाई ॥ साध धूरि करि सुध मंजाई ॥ १ ॥ अनिक जला जे धोवै देही ॥ मैलु न उतरै सुधु न तेही ॥ २ ॥ सतिगुरु भेटिओ सदा क्रिपाल ॥ हरि सिमरि सिमरि काटिआ भउ काल ॥ ३ ॥ मुकति भुगति जुगति हरि नाउ ॥ प्रेम भगति नानक गुण गाउ ॥ ४ ॥ १०० ॥ १६९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जीवन पदवी हरि के दास ॥ जिन मिलिआ आतम परगासु ॥ १ ॥ हरि का सिमरनु सुनि मन कानी ॥ सुखु पावहि हरि दुआर परानी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आठ पहर धिआईऐ गोपालु ॥ नानक दरसनु देखि निहालु ॥ २ ॥ १०१ ॥ १७० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सांति भई गुर गोबिदि पाई ॥ ताप पाप बिनसे मेरे भाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम नामु नित रसन बखान ॥ बिनसे रोग भए कलिआन ॥ १ ॥ पारब्रहम गुण अगम बीचार ॥ साधू संगमि है निसतार ॥ २ ॥ निरमल गुण गावहु नित नीत ॥ गई बिआधि उबरे जन मीत ॥ ३ ॥ मन बच क्रम प्रभु अपना धिआई ॥ नानक दास तेरी सरणाई ॥ ४ ॥ १०२ ॥ १७१॥ गउड़ी महला ५ ॥ नेत्र प्रगासु कीआ गुरदेव ॥ भरम गए पूरन भई सेव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सीतला ते रखिआ बिहारी ॥ पारब्रहम प्रभ किरपा धारी ॥ १ ॥ नानक नामु जपै सो जीवै ॥ साधसंगि हरि अंम्रितु पीवै ॥ २ ॥ १०३ ॥ १७२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ धनु ओहु मसतकु धनु तेरे नेत ॥ धनु ओइ भगत जिन तुम संगि हेत ॥ १ ॥ नाम बिना कैसे सुखु लहीऐ ॥ रसना राम नाम जसु कहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तिन ऊपरि जाईऐ कुरबाणु ॥ नानक जिनि जपिआ निरबाणु ॥ २ ॥ १०४ ॥ १७३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तूहै मसलति तूहै नालि ॥ तूहै राखहि सारि समालि ॥ १ ॥ ऐसा रामु दीन दुनी सहाई ॥ दास की पैज रखै मेरे भाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आगै आपि इहु थानु वसि जा कै ॥ आठ पहर मनु हरि कउ जापै ॥ २ ॥ पति परवाणु सचु नीसाणु ॥ जा कउ आपि करहि फुरमानु ॥ ३ ॥ आपे दाता आपि प्रतिपालि ॥ नित नित नानक राम नामु समालि ॥ ४ ॥ १०५ ॥ १७४॥ गउड़ी महला ५ ॥ सतिगुरु पूरा भइआ क्रिपालु ॥ हिरदै वसिआ सदा गुपालु ॥ १ ॥ रामु रवत

अहंकार से पूर्ण मन पूरी तरह चिकना बना रहता है परन्तु साधु पुरुष की चरण–धूलि से माँजा हुआ मन शुद्ध और साफ हो जाता है ॥ १ ॥ बेशक अनेक प्रकार के जल से शरीर को धोया जाए परन्तु उसकी मैल नहीं उतरती और यह वैसा शुद्ध नहीं होता जैसा साधु–संगत में होता है ॥ २ ॥ जिसका मेल सदा कृपालु बने रहने वाले सद्‌गुरु से हो गया उसने प्रभु का सुमिरन कर–कर के मौत के भय का जाल काट डाला है ॥ ३ ॥ मुक्ति, जीवन की युक्ति एवं योग की विभूति प्रभु–नाम के अन्तर्गत ही है। हे नानक, तू प्रेमाभक्ति में लीन होकर परमात्मा का गुणानुवाद करता रह ॥ ४ ॥ १०० ॥ १६९ ॥ प्रभु के सेवकों को ऊँचा जीवन पद प्राप्त होता है और उनसे मिलने पर आध्यात्मिक प्रकाश प्राप्त होता है ॥ १ ॥ मन से और कानों से यदि हरि–सुमिरन सुना जाए तो हे प्राणी, तू प्रभु के द्वार पर सुख प्राप्त करेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आठों प्रहर प्रभु का ध्यान करने से हे नानक, उसके दर्शन से मन आनन्दित हो उठता है ॥ २ ॥ १०१ ॥ १७० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ परमात्मा रूपी गुरु ने शान्ति प्रदान कर दी है जिससे हे मेरे भाई, सन्ताप और पाप विनष्ट हो गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपनी जीभ से सदैव राम नाम का उच्चारण करो जिससे रोग नष्ट होकर तुम्हारा कल्याण हो जाएगा ॥ १ ॥ परमात्मा के अगम्य गुणों का विचार कर क्योंकि साधु–पुरुषों के संग बने रहकर ही उद्धार होगा। हे मित्र, सदैव उस निर्मल प्रभु के गुणों का गायन करो जिससे तुम्हारी व्याधियां दूर हो जाएंगी और विकारों से बचे रहोगे ॥ ३ ॥ मन, वचन और कर्म के द्वारा मैं अपने प्रभु का सुमिरन करता रहूँ इसीलिए दास नानक तेरी शरण में आया है ॥ ४ ॥ १०२ ॥ १७१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसे परमात्मा रूपी गुरु ने ज्ञान के नेत्रों का प्रकाश प्रदान किया है उसके सभी भ्रम चुक जाते हैं और उसकी मेहनत सफल हो जाती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शीतला के प्रकोप से हे प्रभु तुमने रक्षा की है (अन्य कोई देवी देवता शारीरिक कष्टों को दूर करने के लिए काम नहीं आता)। हे परमात्मा, यह सब तेरी कृपा से ही हो सका है ॥ १ ॥ हे नानक, जो प्रभु–नाम का जाप करता है वही जीवित बना रहता है तथा साधु–संगत में प्रभु रूपी अमृत का पान करता है ॥ २ ॥ १०३ ॥ १७२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तेरा मस्तक और तेरे नेत्र महान हैं। तेरे वे भक्त भी महान हैं जिनका तुम्हारे साथ प्रेम बना हुआ है ॥ १ ॥ जीभ से राम–नाम के यश का उच्चारण करते रहना चाहिए क्योंकि नाम के बिना भला कैसे सुख प्राप्त होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे नानक, जिन्होंने उस अलिप्त प्रभु का सुमिरन किया है उन पर मैं कुर्बान जाता हूँ ॥ २ ॥ १०४ ॥ १७३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे प्रभु, तू ही मेरा सलाहकार है और तू सदैव मेरे साथ बना रहता है। तू ही सदैव मेरी खोज–खबर रखता है ॥ १ ॥ हे मेरे भाई, प्रभु दुनियां में दीनों का ऐसा सहायक है कि सदैव अपने सेवक की इज़्ज़त की रक्षा करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस लोक में जिसका नियन्त्रण है उसी प्रभु के वश में परलोक भी है। आठों प्रहर मेरा मन प्रभु का सुमिरन करता रहता है ॥२॥ हे प्रभु, उसी का सम्मान स्वीकृत माना जाता है और उसी पर सत्य का चिन्ह अंकित होता है जिसे ऐसा करने एवं होने की प्रभु की ओर से आज्ञा है ॥ ३ ॥ हे नानक, तू सदैव उस राम नाम को याद कर जो स्वयं ही दाता और प्रतिपालक है ॥४॥१०५॥ १७४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जब सद्‌गुरु कृपा करता है तो हृदय में प्रभु सदा के लिए बस जाता है ॥१॥

सद ही सुखु पाइआ ॥ मइआ करी पूरन हरि राइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
कहु नानक जा के पूरे भाग ॥ हरि हरि नामु असथिरु सोहागु ॥ २ ॥ १०६ ॥
गउड़ी महला ५ ॥ धोती खोलि विछाए हेठि ॥ गरधप वांगू लाहे पेटि ॥ १ ॥
बिनु करतूती मुकति न पाईऐ ॥ मुकति पदारथु नामु धिआईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥
पूजा तिलक करत इसनानां ॥ छुरी काढि लेवै हथि दाना ॥ २ ॥ बेदु पड़ै
मुखि मीठी बाणी ॥ जीआं कुहत न संगै पराणी ॥ ३ ॥ कहु नानक जिसु
किरपा धारै ॥ हिरदा सुधु ब्रहमु बीचारै ॥ ४ ॥ १०७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥
थिरु घरि बैसहु हरि जन पिआरे ॥ सतिगुरि तुमरे काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥
दुसट दूत परमेसरि मारे ॥ जन की पैज रखी करतारे ॥ १ ॥ बादिसाह साह
सभ वसि करि दीने ॥ अंम्रित नाम महा रस पीने ॥ २ ॥ निरभउ होइ भजहु
भगवान ॥ साधसंगति मिलि कीनो दानु ॥ ३ ॥ सरणि परे प्रभ अंतरजामी ॥
नानक ओट पकरी प्रभ सुआमी ॥ ४ ॥ १०८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि संगि
राते भाहि न जलै ॥ हरि संगि राते माइआ नही छलै ॥ हरि संगि राते नही
डूबै जला ॥ हरि संगि राते सुफल फला ॥ १ ॥ सभ भै मिटहि तुमारै नाइ ॥
भेटत संगि हरि हरि गुन गाइ ॥ रहाउ ॥ हरि संगि राते मिटै सभ चिंता ॥ हरि
सिउ सो रचै जिसु साध का मंता ॥ हरि संगि राते जम की नही त्रास ॥ हरि
संगि राते पूरन आस ॥ २ ॥ हरि संगि राते दूखु न लागै ॥ हरि संगि राता
अनदिनु जागै ॥ हरि संगि राता सहज घरि वसै ॥ हरि संगि राते भ्रमु भउ
नसै ॥ ३ ॥ हरि संगि राते मति ऊतम होइ ॥ हरि संगि राते निरमल सोइ ॥ कहु
नानक तिन कउ बलि जाई ॥ जिन कउ प्रभु मेरा बिसरत नाही ॥ ४ ॥ १०९ ॥
गउड़ी महला ५ ॥ उदमु करत सीतल मन भए ॥ मारगि चलत सगल दुख गए ॥
नामु जपत मनि भए अनंद ॥ रसि गाए गुन परमानंद ॥ १ ॥ खेम भइआ
कुसल घरि आए ॥ भेटत साधसंगि गई बलाए ॥ रहाउ ॥ नेत्र पुनीत पेखत ही
दरस ॥ धनि मसतक चरन कमल ही परस ॥ गोबिंद की टहल सफल इह

पूर्ण प्रभु ने कृपा की है और नाम का सुमिरन करने के फलस्वरूप मैंने सदा सुख ही प्राप्त किया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे नानक, जिसके भाग्य पूर्ण हैं वह सदा परमात्मा का नाम जपता है और सदा स्थिर बने रहने वाले मालिक परमात्मा का हाथ उसके सिर पर बना रहता है ॥ २ ॥ १०६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ ढोंगी ब्राह्मण धोती को खोलकर नीचे बिछा लेता है और गधे की तरह खाए चला जाकर पेट को भरता जाता है ॥ १ ॥ केवल कर्मकाण्डी बनकर और बिना अच्छे कर्मों के मुक्ति नहीं मिल सकती । नाम के सुमिरन से ही मोक्ष रूपी पदार्थ प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूजा करने, तिलक लगाने, एवं स्नान करने के बाद कर्मकाण्डी व्यक्ति जबरदस्ती दान लेने का उपक्रम करता है ॥ २ ॥ मीठे स्वर में वेद–पाठ करता है परन्तु अन्य जीवों को मार डालने के लिए उसे ज़रा भी झिझक महसूस नहीं होती ॥३॥ हे नानक, जिस पर प्रभु की कृपा हो उसी का हृदय शुद्ध होता है और वह ही सच्चा ब्राह्मण बन कर ब्रह्म का चिन्तन करता है ॥ ४ ॥ १०७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे प्यारे प्रभु के सेवक, तुम अपनी भटकन समाप्त करके सहज अवस्था में स्थिर हो जाओ । प्रभु ने तुम्हारे सभी कार्य संवार दिए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परमेश्वर ने सभी दुष्ट विषय विकारों को समाप्त कर अपने सेवक की मान मर्यादा बचा ली है । जिन्होंने अमृत–नाम का महारस पी लिया है, साहूकार सम्राट आदि सभी उसके वश में आ जाते हैं ॥ २ ॥ निर्भय होकर प्रभु का सुमिरन करो और सद्संगत में मिलकर दान आदि कर्म को करो । उस अन्तर्यामी प्रभु की शरण में जाकर हे नानक, मैंने भी उस मालिक प्रभु का आसरा पकड़ लिया है ॥ ४ ॥ १०८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु में लीन रहने से व्यक्ति विकारों की अग्नि में नहीं जलता । प्रभु में लीन रहने से माया नहीं छल सकती । प्रभु में लीन रहने से विषय–विकारों के जल में व्यक्ति डूबता नहीं । प्रभु में लीन रहने से ही अच्छा फल प्राप्त होता है ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम्हारे नाम के कारण सभी भय मिट जाते हैं और प्रभु–मिलाप के फलस्वरूप प्रभु–गुणानुवाद ही होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु रंग में रंगे रहने से सभी चिन्ताएं मिट जाती हैं परन्तु गुरु रूपी साधु की शिक्षा के फलस्वरूप ही प्रभु में लीन हुआ जाता है । प्रभु में लीन बने रहने से यम का भय नहीं रहता और सभी आशाएं पूर्ण हो जाती हैं ॥ २ ॥ प्रभु में लीन होने से दुख नहीं लगता और प्रभु में लीन व्यक्ति दिन–रात चेतन बना रहता है । प्रभु में लीन व्यक्ति सहज भाव में बसता है और उसके भ्रम एवं भय भाग खड़े होते हैं । प्रभु में लीन व्यक्ति की बुद्धि उत्तम होती है और उसकी शोभा भी बहुत निर्मल होती है । हे नानक, जिनके हृदय से मेरा प्रभु कभी भी विस्मृत नहीं होता मैं उन पर सदैव बलिहारी जाता हूँ ॥ ४ ॥ १०९ ॥ गउड़ी महला ५॥ मेहनत करते हुए मन शीतल हो गया और प्रभु के मार्ग पर चलने से सभी दुख चले गए हैं । जब मैंने रसपूर्ण होकर प्रभु के गुणों का गायन किया तो प्रभु के नाम का सुमिरन करते हुए मेरा मन आनन्दित हो उठा ॥ १ ॥ कुशल क्षेम के साथ मैं वापस अपने मूल स्थान पर आ गया हूँ और साधु संगत में मेरे सभी कष्ट दूर हो गए हैं ॥ रहाउ ॥ प्रभु के दर्शन करते ही मेरे नेत्र पवित्र हो गए हैं और चरण–कमलों का स्पर्श करने पर मेरा मस्तक धन्य हो गया है ।

कांइआ ॥ संत प्रसादि परम पदु पाइआ ॥ २ ॥ जन की कीनी आपि सहाइ ॥ सुखु पाइआ लगि दासह पाइ ॥ आपु गइआ ता आपहि भए ॥ क्रिपा निधान की सरनी पए ॥ ३ ॥ जो चाहत सोई जब पाइआ ॥ तब ढूंढन कहा को जाइआ ॥ असथिर भए बसे सुख आसन ॥ गुर प्रसादि नानक सुख बासन ॥ ४ ॥ ११० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ कोटि मजन कीनो इसनान ॥ लाख अरब खरब दीनो दानु ॥ जा मनि वसिओ हरि को नामु ॥ १ ॥ सगल पवित गुन गाइ गुपाल ॥ पाप मिटहि साधू सरनि दइआल ॥ रहाउ ॥ बहुतु उरध तप साधन साधे ॥ अनिक लाभ मनोरथ लाधे ॥ हरि हरि नाम रसन आराधे ॥ २ ॥ सिंम्रिति सासत बेद बखाने ॥ जोग गिआन सिध सुख जाने ॥ नामु जपत प्रभ सिउ मन माने ॥ ३ ॥ अगाधि बोधि हरि अगम अपारे ॥ नामु जपत नामु रिदे बीचारे ॥ नानक कउ प्रभ किरपा धारे ॥ ४ ॥ १११ ॥ गउड़ी मः ५ ॥ सिमरि सिमरि सिमरि सुखु पाइआ ॥ चरन कमल गुर रिदै बसाइआ ॥ १ ॥ गुर गोबिंदु पारब्रहमु पूरा ॥ तिसहि अराधि मेरा मनु धीरा ॥ रहाउ ॥ अनदिनु जपउ गुरू गुर नाम ॥ ता ते सिधि भए सगल कांम ॥ २ ॥ दरसन देखि सीतल मन भए ॥ जनम जनम के किलबिख गए ॥ ३ ॥ कहु नानक कहा भै भाई ॥ अपने सेवक की आपि पैज रखाई ॥ ४ ॥ ११२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ अपने सेवक कउ आपि सहाई ॥ नित प्रतिपारै बाप जैसे माई ॥ १ ॥ प्रभ की सरनि उबरै सभ कोइ ॥ करन करावन पूरन सचु सोइ ॥ रहाउ ॥ अब मनि बसिआ करनैहारा ॥ भै बिनसे आतम सुख सारा ॥ २ ॥ करि किरपा अपने जन राखे ॥ जनम जनम के किलबिख लाथे ॥ ३ ॥ कहनु न जाइ प्रभ की वडिआई ॥ नानक दास सदा सरनाई ॥ ४ ॥ ११३ ॥

रागु गउड़ी चेती महला ५ दुपदे ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

राम को बलु पूरन भाई ॥ ता ते ब्रिथा न बिआपै काई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जो चितवै दासु हरि माई ॥ सो सो करता आपि कराई ॥ १ ॥ निंदक की प्रभि पति गवाई ॥ नानक हरि गुण निरभउ

प्रभु की सेवा करने से मेरा शरीर सफल हो गया है और शान्त पुरुषों की कृपा से मैंने परम पद प्राप्त कर लिया है ॥ २ ॥ सेवक की प्रभु ने स्वयं सहायता की और प्रभु के दासों के चरणों के स्पर्श से मैंने सुख प्राप्त किया। जब अहंकार चला गया तो व्यक्ति परमात्मा का ही रूप हो जाता है और ऐसा सम्भव उस कृपा के भण्डार प्रभु की शरण में जाने पर ही होता है ॥ ३ ॥ मनोवांछित जब मिल गया है तो अब उसे ढूँढने के लिए क्यों और कहाँ जाया जाए। स्थिर बनकर सुख के आसन पर अब शान्त होकर बैठ गए हैं और हे नानक, गुरु की कृपा से सुखों में आवास बन गया है ॥ ४ ॥ ११० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसके मन में हरि-नाम बस गया तो समझ लो उसने करोड़ों स्नान कर लिए और लाखों अरबों खरबों के दान का फल पा लिया है ॥ १ ॥ प्रभु के गुण गाने से सभी पवित्र हो जाते हैं और दयालु साधु-पुरुष की शरण में आने पर पाप मिट जाते हैं ॥ रहाउ ॥ जीभ से हरि-नाम की आराधना करने पर, उलटे लटक कर तप साधनाओं के फल मिल जाते हैं और अनेकों लाभ एवं उद्देश्य प्राप्त हो जाते हैं ॥ २ ॥ स्मृतियों, शास्त्रों, वेदों की व्याख्याएं योग के फलस्वरूप उत्पन्न ज्ञान, एवं सिद्धियों के सुख, प्रभु नाम के जाप में मन के लीन हो जाने पर प्राप्त हो जाते हैं ॥ ३ ॥ प्रभु अगम्य, अगाध बोध वाला है। हे प्रभु, नानक पर कृपा कर कि वह प्रभु-नाम को ही हृदय में जपता रहे और उस पर विचार करता रहे ॥ ४ ॥ १११ ॥ गउड़ी महला ५॥ बार-बार सुमिरन करने से ही सुख प्राप्त होता है और गुरु के माध्यम से चरण-कमल हृदय में बस जाते हैं ॥ १ ॥ परब्रह्म प्रभु मेरा पूर्ण गुरु है जिसकी आराधना करके मेरे मन को धैर्य प्राप्त हुआ है ॥ रहाउ ॥ प्रतिदिन गुरु के नाम का ही जाप करने से समस्त कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं ॥ २ ॥ उसके दर्शन से मन शीतल हो जाता है और जन्म-जन्म के पाप छूट जाते है ॥ ३ ॥ हे नानक, अब किस बात का भय है क्योंकि परमात्मा ने अपने सेवक के सम्मान की रक्षा की है ॥ ४ ॥ ११२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु अपने सेवक की स्वयं सहायता करता है और माँ-बाप की तरह सदैव उसका पालन-पोषण करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे मन में अब कर्त्ता-प्रभु बस गया है जिससे मेरा भय विनष्ट हो गया है और आत्मा को वास्तविक सुख मिल गया है ॥ २ ॥ प्रभु ने कृपा करके अपने सेवकों की रक्षा की है और उनके जन्मों-जन्मान्तरों के पाप मिट गए है ॥ ३ ॥ प्रभु के बड़प्पन का कथन नहीं किया जा सकता और दास नानक सदा उसी की शरण में है ॥ ४ ॥ ११३ ॥

रागु गउड़ी चेती महला ५ दुपदे १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे भाई, प्रभु का बल (सहारा) इतना पूर्ण है कि व्यक्ति को कोई दुख प्रभावित नहीं कर सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे माँ, प्रभु का सेवक जो जो सोचता है कर्ता-प्रभु स्वयं ही सब कुछ कर देता है ॥ १ ॥ प्रभु निन्दक की इज़्ज़त समाप्त कर देता है इसलिए हे नानक, निर्भय होकर हरि का गुणानुवाद

गाई ॥ २ ॥ ११४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ भुज बल बीर ब्रहम सुख सागर गरत परत गहि लेहु अंगुरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्रवनि न सुरति नैन सुंदर नही आरत दुआरि रटत पिंगुरीआ ॥ १ ॥ दीना नाथ अनाथ करुणामै साजन मीत पिता महतरीआ ॥ चरन कवल हिरदै गहि नानक भै सागर संत पारि उतरीआ ॥ २ ॥ २ ॥ ११५ ॥

रागु गउड़ी बैरागणि महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

दय गुसाई मीतुला तूं संगि हमारै बासु जीउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुझ बिनु घरी न जीवना ध्रिगु रहणा संसारि ॥ जीअ प्राण सुखदातिआ निमख निमख बलिहारि जी ॥ १ ॥ हसत अलंबनु देहु प्रभ गरतहु उधरु गोपाल ॥ मोहि निरगुन मति थोरीआ तूं सद ही दीन दइआल ॥ २ ॥ किआ सुख तेरे संमला कवन बिधी बीचार ॥ सरणि समाई दास हित ऊचे अगम अपार ॥ ३ ॥ सगल पदारथ असट सिधि नाम महा रस माहि ॥ सुप्रसंन भए केसवा से जन हरि गुण गाहि ॥ ४ ॥ मात पिता सुत बंधपो तूं मेरे प्राण अधार ॥ साधसंगि नानकु भजै बिखु तरिआ संसारु ॥ ५॥ १ ॥ ११६ ॥

गउड़ी बैरागणि रहोए के छंत के घरि मः ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

है कोई राम पिआरो गावै ॥ सरब कलिआण सूख सचु पावै ॥ रहाउ ॥ बनु बनु खोजत फिरत बैरागी ॥ बिरले काहू एक लिव लागी ॥ जिनि हरि पाइआ से वडभागी ॥ १ ॥ ब्रहमादिक सनकादिक चाहै ॥ जोगी जती सिध हरि आहै ॥ जिसहि परापति सो हरि गुण गाहै ॥ २ ॥ ता की सरणि जिन बिसरत नाही ॥ वडभागी हरि संत मिलाही ॥ जनम मरण तिह मूले नाही ॥ ३ ॥ करि किरपा मिलु प्रीतम पिआरे ॥ बिनउ सुनहु प्रभ ऊच अपारे ॥ नानकु मांगतु नामु अधारे ॥ ४ ॥ १ ॥ ११७ ॥

कर ॥ २ ॥ ११४ ॥ गउड़ी महला ५॥ हे बलशाली भुजाओं वाले वीर और सुखों के सागर प्रभु, मुझे संसार रूपी गड्ढे में गिरते हुए को उंगली पकड़ कर वचा ले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे कानों में सुनने की शक्ति नहीं, मेरी आँखे सुन्दर नहीं और मैं दुखी होकर पंगु रूप में तुम्हारे द्वार पर पुकार लगा रहा हूँ । हे अनाथों के नाथ करुणामय प्रभु, तुम ही मेरे साजन, मित्र, पिता और माँ हो । जिसके चरण–कमलों को पकड़कर शान्त पुरुष भवसागर से पार उतरते हैं, हे नानक तू भी उन्हीं चरण–कमलों को हृदय में संभालकर रख ॥ २ ॥ २ ॥ ११५ ॥

रागु गउड़ी बैरागणि महला ५ १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे कर्ता, धरती के मालिक प्रभु, हे मित्र प्रभु, तू हमारे अन्तर्मन में ही बसता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तेरे बिना एक घड़ी भर के लिए जीना और संसार में बना रहना धिक्कार योग्य है । हे मेरे जीवन, प्राण और सुख देने वाले प्रभु मैं हर–क्षण तुझ पर बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ हे प्रभु, मुझे अपने हाथ का सहारा दे और विषय–विकारों के गर्त से मेरा उद्धार कर ले ॥ मैं गुणहीन और थोड़ी मति वाला हूँ परन्तु तू सदा ही दीनों पर दयालु बना रहने वाला है ॥ २ ॥ मैं तुम्हारे कौन–कौन से सुख को याद करूँ और किस प्रकार तुम्हारा विचार करूँ । हे ऊँचे, अगम्य एवं अपार प्रभु, तू अपनी शरण में आए हुए सेवकों का हित करने वाला है ॥ ३ ॥ आठों सिद्धियाँ प्रभु के नाम के महारस के अन्तर्गत ही आ जाती हैं और जिन पर प्रभु प्रसन्न होते हैं वे ही दास बनकर परमात्मा के गुण गाते हैं ॥ ४ ॥ हे प्रभु, तू ही मेरा माता, पिता, पुत्र, बन्धु और प्राणों का आधार है । नानक ने साधु संगत में उसका सुमिरन करके विष रूपी संसार–सागर को तैर कर पार कर लिया है ॥ ५ ॥ १ ॥ ११६ ॥

गउड़ी बैरागणि रहोए के छन्त के घरि (एक पुराने लोकगीत की धुन पर गायन करना है) ॥ महला ५ ॥

१ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

कोई ऐसा है जो प्यारे प्रभु रूपी राम का गुणानुवाद करे और सभी सुखों का आनन्द लेता हुआ सत्य को प्राप्त कर ले ॥ रहाउ ॥ वैराग्यवान वनों में उसे खोजते फिरते हैं परन्तु किसी बिरले की ही लौ उस एक प्रभु में लगती है । वे भाग्यशाली हैं जिन्होंने प्रभु को पा लिया है ॥ १ ॥ ब्रह्मा, सनक सनन्दन आदि भी उसी को चाहते हैं और योगी, यति सिद्ध भी परमात्मा को ही चाहते हैं । परन्तु जिसे वह प्राप्त हो जाता है वह हरि के गुणों का गम्भीरता पूर्वक अवगाहन करता है ॥ २ ॥ मैं तो उसकी शरण में हूँ जिन्हें प्रभु विस्मृत नहीं होता । बड़े भाग्य से प्रभु ऐसे शान्त पुरुषों से मिलाता है । ऐसे व्यक्ति आवागमन के फेर में बिल्कुल ही नहीं पड़ते ॥ ३ ॥ हे प्रियतम, कृपा कर और आन मिल । हे ऊँचे अपरंपर प्रभु, मेरी विनती सुन । नानक केवल तेरे नाम का ही आधार (आसरा) माँगता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ११७ ॥

राग गउड़ी पूरबी महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

कवन गुन प्रानपति मिलउ मेरी माई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रूप हीन बुधि बल हीनी मोहि परदेसनि दूर ते आई ॥ १ ॥ नाहिन दरबु न जोबन माती मोहि अनाथ की करहु समाई ॥ २ ॥ खोजत खोजत भई बैरागनि प्रभ दरसन कउ हउ फिरत तिसाई ॥ ३ ॥ दीन दइआल क्रिपाल प्रभ नानक साधसंगि मेरी जलनि बुझाई ॥ ४ ॥ १ ॥ ११८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभ मिलबे कउ प्रीति मनि लागी ॥ पाइ लगउ मोहि करउ बेनती कोऊ संतु मिलै बडभागी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु अरपउ धनु राखउ आगै मन की मति मोहि सगल तिआगी ॥ जो प्रभ की हरि कथा सुनावै अनदिनु फिरउ तिसु पिछै विरागी ॥ १ ॥ पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥ मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी ॥ २ ॥ २ ॥ ११९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ निकसु रे पंखी सिमरि हरि पांख ॥ मिलि साधू सरणि गहु पूरन राम रतनु हीअरे संगि राखु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भ्रम की कूई त्रिसना रस पंकज अति तीख्यण मोह की फास ॥ काटनहार जगत गुर गोबिद चरन कमल ता के करहु निवास ॥ १ ॥ करि किरपा गोबिंद प्रभ प्रीतम दीना नाथ सुनहु अरदासि ॥ करु गहि लेहु नानक के सुआमी जीउ पिंडु सभु तुमरी रासि ॥ २ ॥ ३ ॥ १२० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि पेखन कउ सिमरत मनु मेरा ॥ आस पिआसी चितवउ दिनु रैनी है कोई संतु मिलावै नेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सेवा करउ दास दासन की अनिक भांति तिसु करउ निहोरा ॥ तुला धारि तोले सुख सगले बिनु हरि दरस सभो ही थोरा ॥ १ ॥ संत प्रसादि गाए गुन सागर जनम जनम को जात बहोरा ॥ आनद सूख भेटत हरि नानक जनमु क्रितारथु सफलु सवेरा ॥ २ ॥ ४ ॥ १२१ ॥

रागु गउड़ी पूरबी महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

किन बिधि मिलै गुसाई मेरे राम राइ ॥ कोई ऐसा संतु सहज सुखदाता मोहि मारगु देइ बताई

राग़ु गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे मेरी माँ, मैं किन गुणों को धारण करूँ ताकि अपने प्राणपति प्रभु से मिल सकूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं रूप–विहीन, बुद्धि–बल–विहीन परदेसन हूँ जो बहुत दूर से चलकर यहाँ पहुँची हूँ ॥ १ ॥ न तो मेरे पास धन है और न यौवन की मस्ती; हे प्रभु, मुझ अनाथ को अपने में समाहित कर लो। प्रभु को खोजते–खोजते मैं वैराग्यवान हो गई हूँ और (दर्शन) प्यासी इधर–उधर डोल रही हूँ ॥ ३ ॥ हे नानक, दीन–दयालु प्रभु ने कृपा की और साधु–संगत से मेरी जलन शान्त हो गई है ॥ ४ ॥ १ ॥ ११८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु को मिलने के लिए मेरे मन में तीव्र प्रेम जग उठा है। मिलाने वाला भाग्यशाली कोई शान्त पुरुष मिल जाए, मैं उसके चरण–स्पर्श करती हूँ और उससे बार–बार प्रार्थना करती हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं मन एवं धन सभी अर्पण कर दूँगी और मैंने मन की स्वेच्छाचारिता का सम्पूर्ण त्याग कर दिया है। जो भी मुझे प्रभु की कथा–वार्ता सुनाएगा मैं सदैव प्रेम–पूर्वक उसके पीछे लगी रहूँगी ॥ १ ॥ जब पूर्व कर्मों के अंकुर फूट निकले तो मुझे वह प्रभु–पति मिल गया जो रसिक भी है और सब रसों से परे रहने वाला वैराग्यवान भी है। हे नानक, प्रभु से मिलते ही मन का अन्धकार मिट गया है और जन्मों–जन्मान्तरों से माया की नींद में सोई हुई अब मैं जग गई हूँ ॥ २ ॥ २ ॥ ११९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे पक्षी रूपी जीव, प्रभु सुमिरन से तू अपने पंख निकाल अर्थात् माया–मोह से स्वतन्त्र हो जा। साधुजनों से मिलकर पूर्ण प्रभु की शरण को मजबूती से पकड़ ले और प्रभु–नाम रूपी रत्न को हृदय में सम्भाल कर रख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई, मन की चंचलता और भटकन वह कुआँ है जिसमें तृष्णा एवं सांसारिक रस का कीचड़ भरा हुआ है। इस पर मोह का फन्दा यहाँ पर अत्यन्त शक्तिशाली है। उस फन्दे को काटने वाला सारे संसार का गुरु परमात्मा है। हे भाई, उसके चरण–कमलों में ही अपना निवास बनाए रख। हे दीनानाथ गोबिन्द प्रभु, कृपा करो और मेरी अरदास को सुन लो। हे नानक के स्वामी, मुझे हाथ पकड़ कर निकाल लो, मेरे प्राण और शरीर सब तुम्हारी ही दी हुई रास–पूँजी है ॥ २ ॥ ३ ॥ १२० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मेरा मन उस प्रभु का सुमिरन उसके दर्शन करने के लिए कर रहा है। प्रभु की आशा और दर्शनों की प्यास वाली बनकर मैं दिन–रात उसका चिन्तन करती हूँ; कोई ऐसा शान्त पुरुष है जो मुझे उसके पास ले जाकर उससे मिला दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसके लिए मैं प्रभु के सेवकों की सेवा करती हूँ और अनेकों प्रकार से उनकी मिन्नत करती हूँ। मैंने तराजू पर रखकर सभी सुखों को तौल लिया है परन्तु वे सभी सुख प्रभु दर्शन के सामने हल्के सिद्ध हुए हैं ॥ १ ॥ शान्त पुरुषों की कृपा से जब मैंने गुणों के सागर उस प्रभु का गुणानुवाद किया तो आवागमन के चक्र में जाते–जाते मुझ को प्रभु ने बचा लिया। हे नानक, प्रभु के मिलने से सुख एवं आनन्द प्राप्त हुआ है और मेरा जन्म कृतार्थ हो गया है तथा मुझे समय रहते जीवन मार्ग पर सफलता प्राप्त हो गयी है ॥ २ ॥ ४ ॥ १२१ ॥

रागु गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे मेरे मन के राजन राम, वह कौन सी विधि है जिससे परमात्मा मिल सकता है। कोई ऐसा शान्त पुरुष मिल जाए

॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतरि अलखु न जाई लखिआ विचि पड़दा हउमै पाई ॥ माइआ मोहि सभो जगु सोइआ इहु भरमु कहहु किउ जाई ॥ १ ॥ एका संगति इकतु ग्रिहि बसते मिलि बात न करते भाई ॥ एक बसतु बिनु पंच दुहेले ओह बसतु अगोचर ठाई ॥ २ ॥ जिस का ग्रिहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई ॥ अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई ॥ ३ ॥ जिन के बंधन काटे सतिगुर तिन साधसंगति लिव लाई ॥ पंच जना मिलि मंगलु गाइआ हरि नानक भेदु न भाई ॥ ४ ॥ मेरे राम राइ इन बिधि मिलै गुसाई ॥ सहजु भइआ भ्रमु खिन महि नाठा मिलि जोती जोति समाई ॥ १ ॥ रहाउ दूजा ॥ १ ॥ १२२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ ऐसो परचउ पाइओ ॥ करी क्रिपा दइआल बीठुलै सतिगुर मुझहि बताइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जत कत देखउ तत तत तुम ही मोहि इहु बिसुआसु होइ आइओ ॥ कै पहि करउ अरदासि बेनती जउ सुनतो है रघुराइओ ॥ १ ॥ लहिओ सहसा बंधन गुरि तोरे तां सदा सहज सुखु पाइओ ॥ होणा सा सोई फुनि होसी सुखु दुखु कहा दिखाइओ ॥ २ ॥ खंड ब्रहमंड का एको ठाणा गुरि परदा खोलि दिखाइओ ॥ नउ निधि नामु निधानु इक ठाई तउ बाहरि कैठै जाइओ ॥ ३ ॥ एकै कनिक अनिक भाति साजी बहु परकार रचाइओ ॥ कहु नानक भरमु गुरि खोई है इव ततै ततु मिलाइओ ॥ ४ ॥ २ ॥ १२३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ अउध घटै दिनसु रैनारे ॥ मन गुर मिलि काज सवारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करउ बेनंती सुनहु मेरे मीता संत टहल की बेला ॥ ईहा खाटि चलहु हरि लाहा आगै बसनु सुहेला ॥ १ ॥ इहु संसारु बिकारु सहसे महि तरिओ ब्रहम गिआनी ॥ जिसहि जगाइ पीआए हरि रसु अकथ कथा तिनि जानी ॥ २ ॥ जा कउ आए सोई बिहाझहु हरि गुर ते मनहि बसेरा ॥ निज घरि महलु पावहु सुख सहजे बहुरि न होइगो फेरा ॥ ३ ॥ अंतरजामी पुरख बिधाते सरधा मन की पूरे ॥ नानकु दासु इही सुखु मागै मोकउ करि संतन की धूरे ॥ ४ ॥ ३ ॥ १२४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ राखु पिता प्रभ मेरे ॥ मोहि निरगुनु सभ गुन तेरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच बिखादी एकु गरीबा राखहु राखनहारे ॥ खेदु

जो मुझे सहज सुख को देने वाले प्रभु का रास्ता बता दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अन्दर बसते हुए उस अलक्ष्य प्रभु को देखा नहीं जा सकता क्योंकि अहंकार का पर्दा बीच में आन पड़ता है । जब सारा ही संसार माया एवं मोह में लीन होकर सोया हुआ है तो फिर भला अभिमान का भ्रम कैसे जा सकता है ॥ १ ॥ एक ही घर में जीवात्मा और परमात्मा साथ-साथ ही रहते हैं परन्तु हे भाई, अहंकार का पर्दा बीच में होने पर इनका परस्पर वार्तालाप नहीं हो पाता । एक नाम रूपी वस्तु से विहीन पांचों इन्द्रियां दुखी हैं और यह नाम रूपी वस्तु अनुभव रूपी अगोचर स्थान पर बनी रहती हैं ॥ २ ॥ जिसका यह घर रूपी शरीर है उस प्रभु ही ने उसे भ्रम रूपी ताला लगाया हुआ है और इसकी कुंजी गुरु को सौंप दी है । अनेकों उपाय करने के बावजूद भी सद्गुरु की शरण में जाए बिना यह कुंजी प्राप्त नहीं होती ॥ ३॥ सद्गुरु ने जिनके भ्रम के बन्धन काट दिए हैं उनकी सुरति साध-संगत में लीन हो गई है । अब पांचों ही ज्ञान इन्द्रियां प्रसन्नता के गीत गा रही हैं क्योंकि हे नानक, अब उनमें और प्रभु में कोई भेद नहीं रहा ॥ ४ ॥ हे मेरे राम, इस प्रकार वह प्रभु मिलता है । जब आत्मा-परमात्मा में समाहित हो जाती है तो क्षण भर में भ्रम भाग खड़ा होता है और जीव सहज अवस्था में स्थित हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूसरा ॥ १ ॥ १२२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु से ऐसा परिचय हो गया है कि उस दयालु ने कृपा करके मुझे सद्गुरु का पता बता दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अब मुझे यह विश्वास हो गया है कि मैं जिधर भी देखूँगा उधर तुम ही तुम मुझे दिखाई दोगे । अब अन्य किसके आगे अरदास (प्रार्थना) करूँ जब कि परमात्मा ही मेरी व्यथा सुन लेने वाला है ॥ १ ॥ गुरु ने बन्धन खोल दिए हैं; मेरा संशय समाप्त हो गया है तथा इस प्रकार मुझे सहज सुख प्राप्त हो गया है । जो होना था वह जरूर होकर रहेगा तो फिर भला दुख और सुख कहां दिखाई देगा ॥ २ ॥ सभी खण्डों एवं ब्रह्माण्ड का एक ही ठिकाना वह प्रभु है जिसे गुरु ने भ्रम का पर्दा हटाकर दिखा दिया है । नौनिधियों जैसा नाम का भण्डार एक ही स्थान में अन्दर ही स्थित है तो फिर बाहर कहां जाया जाए ॥ ३ ॥ सोना आभूषणों के रूप में अनेक प्रकार के रूप रचता एवं धारण करता है । नानक कहता है कि गुरु ही विभिन्न रूपों के भ्रम को मिटाकर वास्तविक तत्त्व के साथ साक्षात्कार करा देता है ॥ ४ ॥ २ ॥ १२३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ दिन-रात आयु घटती जा रही है । हे मेरे मन गुरु को मिलकर मानव जीवन के उद्देश्य को प्राप्त कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे मेरे मित्रो, मेरी विनती को सुनो कि (मानव जीवन) शान्त पुरुषों की सेवा करने का अवसर है । इस जन्म में प्रभु के नाम का लाभ प्राप्त कर लोगे तो परलोक में रहना सुखद हो जाएगा ॥ १ ॥ यह जगत विकारों से भरा हुआ है और यहां सभी जीव संशयों में डूब-उतरा रहे हैं । इस अवस्था से वही निकल पाता है जिसने परमात्मा का ज्ञान पाकर उससे जान-पहचान बना ली है । जिसको प्रभु स्वयं जगाकर नाम रूपी अमृत का पान कराता है उसने दरअसल अवर्णनीय प्रभु की बातें अर्थात उसका गुणानुवाद करने की विधि सीख ली है ॥ २ ॥ हे जीव, जिस लाभ के लिए तुम इस संसार में आए हो उसी का कार्य-व्यापार करो । वह हरि-नाम गुरु के माध्यम से ही मन में टिकता है । यदि गुरु की शरण में आओगे तो आध्यात्मिक आनन्द एवं स्थिरता को परमात्मा के निवास के रूप में अन्दर ही प्राप्त कर लोगे । पुनः आवागमन का चक्र समाप्त हो जाएगा ॥ ३ ॥ हे अन्तर्यामी प्रभु, मेरे मन की इच्छा पूरी करो । दास नानक यही सुख मांगता है कि मुझे शान्त पुरुषों के चरणों की धूलि बना दो ॥ ४ ॥ ३ ॥ १२४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मेरे पिता प्रभु, मेरी रक्षा कर । मैं पूर्णतः गुण-विहीन हूँ और सभी गुण तुझमें हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे रक्षक प्रभु, मेरे साथ पांच (विकार) लड़ने वाले हैं और मैं गरीब अकेला ही हूँ । ये मुझे बहुत दुखी करते

करहि अरु बहुतु संतावहि आइओ सरनि तुहारे ॥ १ ॥ करि करि हारिओ अनिक बहु भाती छोडहि कतहूं नाही ॥ एक बात सुनि ताकी ओटा साधसंगि मिटि जाही ॥ २ ॥ करि किरपा संत मिले मोहि तिन ते धीरजु पाइआ ॥ संती मंतु दीओ मोहि निरभउ गुर का सबदु कमाइआ ॥ ३ ॥ जीति लए ओइ महा बिखादी सहज सुहेली बाणी ॥ कहु नानक मनि भइआ परगामा पाइआ पदु निरबाणी ॥ ४ ॥ ४ ॥ १२५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ ओहु अबिनासी राइआ ॥ निरभउ संगि तुमारै बसते इहु डरनु कहा ते आइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक महलि तूं होहि अफारो एक महलि निमानो ॥ एक महलि तूं आपे आपे एक महलि गरीबानो ॥ १ ॥ एक महलि तूं पंडितु बकता एक महलि खलु होता ॥ एक महलि तूं सभु किछु ग्राहजु एक महलि कछू न लेता ॥ २ ॥ काठ की पुतरी कहा करै बपुरी खिलावनहारो जानै ॥ जैसा भेखु करावै बाजीगरु ओहु तैसो ही साजु आनै ॥ ३ ॥ अनिक कोठरी बहुतु भाति करीआ आपि होआ रखवारा ॥ जैसे महलि राखै तैसै रहना किआ इहु करै बिचारा ॥ ४ ॥ जिनि किछु कीआ सोई जानै जिनि इह सभ बिधि साजी ॥ कहु नानक अपरंपर सुआमी कीमति अपुने काजी ॥ ५ ॥ ५ ॥ १२६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ छोडि छोडि रे बिखिआ के रसूआ ॥ उरझि रहिओ रे बावर गावर जिउ किरखै हरिआइओ पसूआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो जानहि तूं अपुने काजै सो संगि न चालै तेरै तसूआ ॥ नागो आइओ नाग सिधासी फेरि फिरिओ अरु कालि गरसूआ ॥ १ ॥ पेखि पेखि रे कसुंभ की लीला राचि माचि तिनहूं लउ हसूआ ॥ छीजत डोरि दिनसु अरु रैनी जीअ को काजु न कीनो कछूआ ॥ २ ॥ करत करत इव ही बिरधानो हारिओ उकते तनु खीनसूआ ॥ जिउ मोहिओ उनि मोहिनी बाला उस ते घटै नाही रुच चसूआ ॥ ३ ॥ जगु ऐसा मोहि गुरहि दिखाइओ तउ सरणि परिओ तजि गरबसूआ ॥ मारगु प्रभ को संति बताइओ द्रिड़ी नानक दास भगति हरि जसूआ ॥ ४ ॥ ६ ॥ १२७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तुझ बिनु कवनु हमारा ॥ मेरे प्रीतम प्रान अधारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंतर की बिधि तुम ही जानी तुम ही सजन सुहेले ॥ सरब सुखा मै तुझ ते पाए

और सताते हैं इसलिए मैं आप की शरण में आया हूँ ॥ १ ॥ मैं अनेकों उपाय कर के हार गया हूँ परन्तु ये मुझे छोड़ते ही नहीं । मैंने केवल एक बात ही सुनकर तुम्हारा आश्रय लिया है कि ये साधु-संगत में नष्ट हो जाएंगे ॥ २॥ शान्त पुरुष मुझे कृपा करके मिलें तो तब ही मुझे धैर्य प्राप्त होगा । शान्त पुरुषों ने मुझे निर्भय करने वाला उपदेश दिया और मैंने शब्द-गुरु की साधना की ॥ ३ ॥ मैंने उन पांचों झगड़ालुओं को अब जीत लिया है और मेरी वाणी भी अब सहज से भरपूर सुखदायक हो गयी है । हे नानक, अब मेरे मन में सत्य का प्रकाश हो गया है और मैंने दुख कलेषों से ऊपर उठकर निर्वाण पद प्राप्त कर लिया है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १२५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे प्रभु, तू अविनाशी राजा है । जो जीव तेरे चरणों में टिके रहते हैं वे निर्भय हो जाते हैं ॥ उन्हें भला डर कहां से आएगा ॥ १ ॥ रहाउ॥ एक शरीर में तो तू स्वयं ही अहंकारी बना हुआ है और एक शरीर में तू विनम्र बना हुआ है । एक शरीर में तो तू स्वयं ही कर्ता-धर्ता है और एक शरीर में तू गरीब और कंगाल के रूप में बना हुआ है ॥ १ ॥ किसी व्यक्ति के शरीर में तो तू विद्वान वक्ता के रूप में है और किसी शरीर में तू मूर्ख बना बैठा है । किसी शरीर में बैठकर तू गरीबों निर्बलों से सब कुछ छीन लेने वाला है और एक शरीर में तू कुछ भी न लेने वाला विरक्त है ॥ २ ॥ हे भाई, ये जीव तो बेचारा काठ की पुतली की तरह है; यह क्या कर सकता है और क्या जानता है कि नचाने वाला इसे कैसे नचा रहा है । जैसा स्वांग वह प्रभु रूपी बाजीगर इससे करवाता है यह वैसा ही सज-धज कर नाटक करता रहता है ॥ ३ ॥ प्रभु ने शरीर रूपी अनेकों कोठरियां बना दी हैं और स्वयं सबका रखवाला बना हुआ है । जीव को जैसे शरीर रूपी महल में प्रभु रखता है उसे वैसे ही रहना होता है अन्यथा जीव बेचारा कर भी क्या सकता है ॥ ४ ॥ जिसने यह सारा प्रपंच बनाया है वही इसके बारे में जानता है । नानक कहता है कि जिस परमात्मा ने यह संसार बनाया है वही इसके भेद को जानता है । यह परमात्मा परे से परे है और अपने कार्यों का मूल्य स्वयं ही जानता है ॥ ५ ॥ ५ ॥ १२६॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे भाई, विषयों के रसों को छोड़ दे । हे बावरे, तू अन्य रसों में ऐसे ही लीन होकर उलझा हुआ है जैसे कोई पशु हरे-भरे खेत में मस्त होकर खाता रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसे तू अपने काम आने वाला समझता है वह ज़रा भी तेरे साथ नहीं जाता । तू इस संसार में नंगा आया था नंगा ही चला जाएगा और तू व्यर्थ में ही काल से ग्रस्त होकर आवागमन के चक्र में घूम रहा है ॥ १ ॥ हे जीव, तू संसार को कच्चे रंग वाले कुसुम्भ के फूल की तरह देख देख कर ही उसी में मस्त हो रहा है और सांसारिक पदार्थों में ही लीन होकर प्रसन्न हो रहा है । दिन-रात तेरी आयु की डोरी निर्बल होती जा रही है और तूने अपने प्राणों के काम आने वाला कोई भी कार्य नहीं किया है ॥ २ ॥ ऐसे ही काम करते-करते तू बूढ़ा हो गया है; तेरी बुद्धि ने काम करना बन्द कर दिया है और तेरा शरीर क्षीण हो गया है । जैसे यौवन में तुझे माया रूपी मोहिनी ने मोह लिया था अब बुढ़ापे में भी तेरी उसके प्रति रुचि ज़रा भी कम नहीं हुई है ॥ ३ ॥ हे नानक, मुझे गुरु ने दिखा दिया है कि जगत का मोह किस प्रकार का है । तभी से मैं अभिमान छोड़कर प्रभु की शरण में आन पड़ा हूँ । शान्त पुरुषों ने मुझे परमात्मा से मिलने का मार्ग बता दिया है और मैंने भी प्रभु की भक्ति एवं गुणानुवाद हृदय में पक्का कर लिया है ॥ ४ ॥ ६ ॥ १२७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मेरे प्राणों के आधार प्रियतम, तेरे बिना हमारा कौन है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरे अन्दर की अवस्था को तुमने ही जाना है और तुम ही मेरे सुखदायक स्वजन हो । हे मेरे अथाह एवं अतुलनीय प्रभु मैंने सभी सुख

मेरे ठाकुर अगह अतोले ॥ १ ॥ बरनि न साकउ तुमरे रंगा गुण निधान सुखदाते ॥ अगम अगोचर प्रभ अबिनासी पूरे गुर ते जाते ॥ २ ॥ भ्रमु भउ काटि कीए निहकेवल जब ते हउमै मारी ॥ जनम मरण को चूको सहसा साधसंगति दरसारी ॥ ३ ॥ चरण पखारि करउ गुर सेवा बारि जाउ लख बरीआ ॥ जिह प्रसादि इहु भउजलु तरिआ जन नानक प्रिअ संगि मिरीआ ॥ ४ ॥ ७ ॥ १२८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तुझ बिनु कवनु रीझावै तोही ॥ तेरो रूपु सगल देखि मोही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुरग पइआल मिरत भूअ मंडल सरब समानो एकै ओही ॥ सिव सिव करत सगल कर जोरहि सरब मइआ ठाकुर तेरी दोही ॥ १ ॥ पतित पावन ठाकुर नामु तुमरा सुखदाई निरमल सीतलोही ॥ गिआन धिआन नानक वडिआई संत तेरे सिउ गाल गलोही ॥ २ ॥ ८ ॥ १२९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मिलहु पिआरे जीआ ॥ प्रभ कीआ तुमारा थीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक जनम बहु जोनी भ्रमिआ बहुरि बहुरि दुखु पाइआ ॥ तुमरी क्रिपा ते मानुख देह पाई है देहु दरसु हरि राइआ ॥ १ ॥ सोई होआ जो तिसु भाणा अवरु न किन ही कीता ॥ तुमरै भाणै भरमि मोहि मोहिआ जागतु नाही सूता ॥ २ ॥ बिनउ सुनहु तुम प्रानपति पिआरे किरपा निधि दइआला ॥ राखि लेहु पिता प्रभ मेरे अनाथह करि प्रतिपाला ॥ ३ ॥ जिस नो तुमहि दिखाइओ दरसनु साधसंगति कै पाछै ॥ करि किरपा धूरि देहु संतन की सुखु नानकु इहु बाछै ॥ ४ ॥ ९ ॥ १३० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हउ ता कै बलिहारी ॥ जा कै केवल नामु अधारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महिमा ता की केतक गनीऐ जन पारब्रहम रंगि राते ॥ सूख सहज आनंद तिना संगि उन समसरि अवर न दाते ॥ १ ॥ जगत उधारण सेई आए जो जन दरस पिआसा ॥ उन की सरणि परै सो तरिआ संतसंगि पूरन आसा ॥ २ ॥ ता कै चरणि परउ ता जीवा जन कै संगि निहाला ॥ भगतन की रेणु होइ मनु मेरा होहु प्रभू किरपाला ॥ ३ ॥ राजु जोबनु अवध जो दीसै सभु किछु जुग महि घाटिआ ॥ नामु निधानु सद नवतनु निरमलु इहु नानक हरि धनु खाटिआ ॥ ४ ॥ १० ॥ १३१ ॥

तुमसे ही प्राप्त किए हैं ॥ १ ॥ हे गुणों के भण्डार एवं सुख देने वाले प्रभु मैं तुम्हारे कौतुकों का वर्णन नहीं कर सकता । हे अगम्य, अगोचर अविनाशी प्रभु मैंने तेरी महिमा को पूर्ण गुरु के माध्यम से ही जाना है ॥ २ ॥ जब से मैंने अहंकार को मार लिया है तभी से तुमने मेरे भ्रमों को दूर करके मुझे शुद्ध एवं निर्मल बना दिया है। साधसंगत के दर्शनों के फलस्वरूप मेरा जन्म मरण का भय चुक गया है ॥ ३ ॥ गुरु के चरणों को धोकर मैं गुरु की सेवा करता हूँ और लाखों बार उस पर बलिहारी जाता हूँ ॥ गुरु की कृपा से ही यह संसार-सागर मैंने पार किया है और मैं प्रभु के चरणों में लीन हो गया हूँ ॥ ४ ॥ ७ ॥ १२८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे प्रभु, तेरा सौन्दर्य देखकर सभी मोहित हो जाते हैं । तुझे तेरे बिना अन्य कोई प्रसन्न नहीं कर सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्वर्गलोक, पाताललोक, मृत्युलोक सम्पूर्ण भूमण्डल में समान रूप से सब में निहित केवल एक परमात्मा ही है। हे सब पर दया करने वाले सब के स्वामी, सभी जीव तुझे ही कल्याणकारी मानते हुए तुझे ही सहायता के लिए पुकारते हैं । हे प्रभु, तुम्हारा नाम पतितों को पावन करने वाला सुखदायी, निर्मल एवं शीतल है । हे नानक, मेरा ज्ञान, ध्यान और बड़प्पन शान्त पुरुषों के साथ विचार-विमर्श करना ही है ॥ २ ॥ ८ ॥ १२९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे जीवों को प्यार करने वाले प्रभु मुझे मिल । तुम्हारा ही किया हुआ सब कुछ होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं अनेक योनियों और जन्मों में भटका हूँ और मैंने अत्याधिक दुख पाया है । हे प्रभु राजा, तुम्हारी कृपा से ही मुझे मानव देह मिली है । तू मुझे दर्शन दे ॥ १ ॥ जो वह चाहता है वही होता है अन्य कोई भी कुछ नहीं कर सका है । तुम्हारी रज़ा में ही जीव भ्रमों के मोह में ग्रस्त होकर सोया हुआ है और जागता नहीं है ॥ २ ॥ हे प्राण-पति प्रियतम एवं कृपा के समुद्र दयालु प्रभु मेरी यह विनती सुन लो; हे मेरे पिता प्रभु, मेरी रक्षा करो और मुझ अनाथ का पालन-पोषण कर लो ॥ ३ ॥ जिसे साधु-संगत के फलस्वरूप तूने अपना दर्शन दिया है नानक यही चाहना करता है कि कृपा करके मुझे भी सद्संगत वाले ऐसे शान्त पुरुषों की चरण-धूलि प्रदान करो ॥ ४ ॥ ९ ॥ १३० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जिसे केवल नाम का ही आश्रय है मैं उस पर बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो सेवक परब्रह्म के रंग में रंगे हुए हैं उनकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता । उनके साथ रहने से सदैव सहज आनन्द एवं सुख बना रहता है और उनके समान अन्य कोई दाता नहीं है ॥ १ ॥ जिनको प्रभु-दर्शन की प्यास बनी हुई है वे जगत का उद्धार करने के लिए आए हैं । उनकी शरण में आने वाला पार उतर जाता है और शान्त पुरुषों के साथ बने रहने पर आशाएं पूर्ण हो जाती हैं ॥ २ ॥ प्रभु के सेवकों के साथ रहकर मैं प्रसन्न बना रहता हूँ और उनके चरणों में पड़कर ही मुझे जीवन प्राप्त होता है । हे प्रभु, कृपा करो ताकि मेरा मन भक्तों की चरण-धूलि बना रहे ॥ ३ ॥ राज, यौवन, आयु आदि जो कुछ भी दिखाई देता है इस संसार में वह प्रति क्षण घटता जाता है । नाम का भण्डार सदैव नया बना रहता है और हे नानक, यह हरि-धन ही निर्मल धन है जिसकी मैंने कमाई की है ॥ ४ ॥ १० ॥ १३१ ॥

गउड़ी महला ५ ॥ जोग जुगति सुनि आइओ गुर ते ॥ मोकउ सतिगुर सबदि बुझाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नउ खंड प्रिथमी इसु तन महि रविआ निमख निमख नमसकारा ॥ दीखिआ गुर की मुंद्रा कानी द्रिड़िओ एकु निरंकारा ॥ १ ॥ पंच चेले मिलि भए इकत्रा एकसु कै वसि कीए ॥ दस बैरागनि आगिआकारी तब निरमल जोगी थीए ॥ २ ॥ भरमु जराइ चराई बिभूता पंथु एकु करि पेखिआ ॥ सहज सूख सो कीनी भुगता जो ठाकुरि मसतकि लेखिआ ॥ ३ ॥ जह भउ नाही तहा आसनु बाधिओ सिंगी अनहत बानी ॥ ततु बीचारु डंडा करि राखिओ जुगति नामु मनि भानी ॥ ४ ॥ ऐसा जोगी वडभागी भेटै माइआ के बंधन काटै ॥ सेवा पूज करउ तिसु मूरति की नानकु तिसु पग चाटै ॥ ५ ॥ ११ ॥ १३२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ अनूप पदारथु नामु सुनहु सगल धिआइले मीता ॥ हरि अउखधु जा कउ गुरि दीआ ता के निरमल चीता ॥ १॥ रहाउ ॥ अंधकारु मिटिओ तिह तन ते गुरि सबदि दीपकु परगासा ॥ भ्रम की जाली ता की काटी जा कउ साधसंगति बिस्वासा ॥ १ ॥ तारी ले भवजलु तारू बिखड़ा बोहिथ साधू संगा ॥ पूरन होई मन की आसा गुरु भेटिओ हरि रंगा ॥ २ ॥ नाम खजाना भगती पाइआ मन तन त्रिपति अघाए ॥ नानक हरि जीउ ता कउ देवै जा कउ हुकमु मनाए ॥ ३ ॥ १२ ॥ १३३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ दइआ मइआ करि प्रानपति मोरे मोहि अनाथ सरणि प्रभ तोरी ॥ अंध कूप महि हाथ दे राखहु कछू सिआनप उकति न मोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करन करावन सभ किछु तुम ही तुम समरथ नाही अन होरी ॥ तुमरी गति मिति तुम ही जानी से सेवक जिन भाग मथोरी ॥ १॥ अपुने सेवक संगि तुम प्रभ राते ओति पोति भगतन संगि जोरी ॥ प्रिउ प्रिउ नामु तेरा दरसनु चाहै जैसे द्रिसटि ओह चंद चकोरी ॥ २ ॥ राम संत महि भेदु किछु नाही एकु जनु कई महि लाख करोरी ॥ जा कै हीऐ प्रगटु प्रभु होआ अनदिनु कीरतनु रसन रमोरी ॥ ३॥ तुम समरथ अपार अति ऊचे सुखदाते प्रभु प्रान अधोरी ॥ नानक कउ प्रभ कीजै किरपा

गउड़ी महला ५॥ योग की युक्ति मैं गुरु से सुन आया हूँ; मुझे सद्गुरु ने शब्द के माध्यम से यह समझा दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर में बसने वाले परमात्मा को प्रति क्षण नमस्कार करते रहना ही योगियों के नवखण्ड धरती पर भ्रमण करते रहने के समान है । गुरु की शिक्षा ही मेरे कान की मुद्राएं हैं और मैंने केवल एक निराकार परमात्मा पर ध्यान टिकाया है ॥ १ ॥ पांचों ज्ञान इन्द्रियां शिष्य रूप में इकट्ठी होकर मेरी ऊँची सुरति के अधीन हो गई हैं । विकारों से उदासीन होकर दसों इन्द्रियां जब आज्ञाकारी हो जाती हैं तब व्यक्ति निर्मल योगी बन जाता है ॥ २ ॥ भ्रम को जलाकर मैंने उसकी राख अपने शरीर पर मल ली है और सब स्थानों में एक प्रभु को ही देखना मेरे लिए योग मार्ग है । सहजभाव में रहना ही मेरा भोजन है जो परमात्मा ने मेरे भाग्य में लिख दिया है ॥ ३ ॥ सव प्रकार के भय से ऊपर जाकर मैंने आसन लगाया है और प्रभु की अनहद् वाणी ही मेरे लिए सिंगी बजाना है । तत्व-विचार का डण्डा मैंने अपने पास रखा है और मेरे मन को नाम की युक्ति भा गयी है ॥ ४ ॥ बड़े भाग्य से ऐसा योगी भाग्यशाली बनकर और माया के बन्धनों को काट कर परमात्मा में लीन हो जाता है । ऐसी युक्ति को अपनाने वाला योगी बड़े भाग्य से मिलता है और जिसे यह मिलता है उसके माया-मोह के बन्धन काट देता है । मैं भी परमात्मा रूपी ऐसे योगी की सेवा-पूजा करता हूँ । नानक ऐसे योगी के चरण स्पर्श करता है ॥ ५ ॥ ११ ॥ १३२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मित्रो, परमात्मा का नाम एक अनुपम पदार्थ है और सभी उसका सुमिरन करो । जिनको गुरु ने परमात्मा की नाम रूपी औषधि दे दी है उनके चित्त स्वच्छ बन गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसका भरोसा साधु-संगत में बन गया है उसके भ्रम की जाली कट गई है और शब्द-गुरु रूपी दीपक के प्रकाश से उसके मन, तन का अन्धकार मिट गया है ॥ १ ॥ जिसने गुरु की संगत रूपी जहाज का आसरा लिया वह इस अथाह एवं विषम संसार-सागर को तैर गया है । जिसे प्रभु की प्रीति के रंग में रंगा हुआ गुरु मिल गया है उसके मन की आशाएं पूर्ण हो गई हैं ॥ २ ॥ जिन भक्तों ने प्रभु-नाम का खज़ाना पा लिया है उनके तन, मन तृप्त होकर अघा गए हैं । हे नानक, प्रभु यह सब उन्हीं को देता है जिनको हुकुम मानने की शक्ति प्रदान करता है ॥ ३ ॥ १२ ॥ १३३ ॥ हे मेरे प्राणों के स्वामी मुझ पर दया करो क्योंकि मैं अनाथ तेरी शरण में हूँ । मेरे पास कोई बुद्धि की चतुराई नहीं है; मुझे अपना हाथ देकर इस अन्धे कुएं में से वचा लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करने कराने वाले सब तुम ही हो; तुम ही समर्थ हो अन्य कोई नहीं है । अपने विस्तार और अपनी सीमाओं को तुम ही जानते हो और वही तुम्हारे सेवक हैं जिनके माथे पर भाग्य के लेख लिखे हुए हैं ॥ १ ॥ हे प्रभु, तुम भी अपने सेवकों के साथ लीन बने रहते हो और पूर्णतः भक्तों के साथ जुड़े रहते हो । जैसी चकोर की दृष्टि चन्द्रमा पर लगी रहती है वैसी ही दृष्टि तेरे भक्त की होती है । तुझे प्रिय प्रिय कहकर तेरा भक्त तेरे दर्शन करने के लिए तेरे ही नाम का सुमिरन करता है ॥ २ ॥ हे भाई, परमात्मा और संत में कुछ अन्तर नहीं होता परन्तु ऐसा व्यक्ति लाखों करोड़ों में कोई एक ही होता है । जिसके हृदय में प्रभु प्रकाशित हो जाता है वह व्यक्ति सदैव अपनी जीभ के साथ प्रभु की कीर्ति का गायन करता रहता है ॥ ३ ॥ हे समर्थ, अपार एवं अत्यन्त ऊँचे प्रभु, तुम ही मेरे प्राणों का आधार हो । हे प्रभु, मुझ नानक पर कृपा करो ताकि

उन संतन के संगि संगोरी ॥ ४ ॥ १३ ॥ १३४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तुम हरि सेती राते संतहु ॥ निबाहि लेहु मोकउ पुरख बिधाते ओड़ि पहुचावहु दाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुमरा मरमु तुमा ही जानिआ तुम पूरन पुरख बिधाते ॥ राखहु सरणि अनाथ दीन कउ करहु हमारी गाते ॥ १ ॥ तरण सागर बोहिथ चरण तुमारे तुम जानहु अपुनी भाते ॥ करि किरपा जिसु राखहु संगे ते ते पारि पराते ॥ २ ॥ ईत ऊत प्रभ तुम समरथा सभु किछु तुमरै हाथे ॥ ऐसा निधानु देहु मोकउ हरि जन चलै हमारै साथे ॥ ३ ॥ निरगुनीआरे कउ गुनु कीजै हरि नामु मेरा मनु जापे ॥ संत प्रसादि नानक हरि भेटे मन तन सीतल ध्रापे ॥ ४ ॥ १४ ॥ १३५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सहजि समाइओ देव ॥ मोकउ सतिगुर भए दइआल देव ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काटि जेवरी कीओ दासरो संतन टहलाइओ ॥ एक नाम को थीओ पूजारी मोकउ अचरजु गुरहि दिखाइओ ॥ १ ॥ भइओ प्रगासु सरब उजीआरा गुर गिआनु मनहि प्रगटाइओ ॥ अंम्रितु नामु पीओ मनु त्रिपतिआ अनभै ठहराइओ ॥ २ ॥ मानि आगिआ सरब सुख पाए दूखह ठाउ गवाइओ ॥ जउ सुप्रसंन भए प्रभ ठाकुर सभु आनद रूपु दिखाइओ ॥ ३ ॥ ना किछु आवत ना किछु जावत सभु खेलु कीओ हरि राइओ ॥ कहु नानक अगम अगम है ठाकुर भगत टेक हरि नाइओ ॥ ४ ॥ १५ ॥ १३६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ पारब्रहम पूरन परमेसुर मन ता की ओट गहीजै रे ॥ जिनि धारे ब्रहमंड खंड हरि ता को नामु जपीजै रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन की मति तिआगहु हरि जन हुकमु बूझि सुखु पाईऐ रे ॥ जो प्रभु करै सोई भल मानहु सुखि दुखि ओही धिआईऐ रे ॥ १ ॥ कोटि पतित उधारे खिन महि करते बार न लागै रे ॥ दीन दरद दुख भंजन सुआमी जिसु भावै तिसहि निवाजै रे ॥ २ ॥ सभ को मात पिता प्रतिपालक जीअ प्रान सुख सागरु रे ॥ देंदे तोटि नाही तिसु करते पूरि रहिओ रतनागरु रे ॥ ३ ॥ जाचिकु जाचै नामु तेरा सुआमी घट घट अंतरि सोई रे ॥ नानकु दासु ता की सरणाई जा ते ब्रिथा न कोई रे ॥ ४ ॥ १६ ॥ १३७ ॥

मैं ऐसे संतों की संगत में बना रहूँ ॥ ४ ॥ १३ ॥ १३४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे संत जनों, तुम प्रभु के साथ लीन हो । मुझे अपने साथ निभा लो और विधाता प्रभु, मुझे मेरी मंज़िल तक पहुँचा दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुम पूर्ण विधाता हो और तुम्हारा रहस्य केवल तुम ही जानते हो । मुझ अनाथ दीन को अपनी शरण में रख लो और भव–जाल से मुझे छुटकारा दिला दो ॥ १ ॥ तुम्हारे चरण संसार सागर को पार करवाने वाले जहाज हैं और पार कराने की तुम्हारी अपनी ही रीति है । कृपा करके जिन्हें अपने साथ रखते हो वे ही पार उतरते हैं ॥ २ ॥ इस लोक और परलोक में तुम्हीं समर्थ हो और सब कुछ तुम्हारे ही हाथ में है । इस सेवक को ऐसा खज़ाना दो जो सदैव साथ बना रहे ॥३॥ मुझ गुणहीन को ऐसे गुण प्रदान करो जिससे मेरा मन हरि–नाम जपता रहे । शान्त पुरुषों की कृपा से हे नानक, प्रभु से मिलाप होता है और मन तन शीतल होकर तृप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ १४ ॥ १३५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे प्रभु, मैं वास्तविक ज्ञान वाली सहज अवस्था में लीन हो गया हूँ क्योंकि सद्गुरु मुझ पर दयालु हो गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मोह की रस्सी काट कर, मुझे दास बनाकर उन्होंने संतों की सेवा में लगा दिया है । गुरु ने मुझे आश्चर्य रूपी परमात्मा दिखा दिया है जिससे मैं अब केवल एक नाम का ही पुजारी बन कर रह गया हूँ ॥ १ ॥ गुरु के माध्यम से मन में ज्ञान प्रकट होने से मेरे चारों ओर सब कुछ प्रकाशमान हो गया है । अमृत रूपी नाम पीकर मेरा मन तृप्त हो गया है और मेरे सभी भय चुक गए हैं ॥ २ ॥ प्रभु की आज्ञा मानकर मैंने सभी सुख पा लिए हैं और दुखों ने अपना स्थान खो दिया है । जब प्रभु प्रसन्न हो गया तो सब ओर उसका ही आनन्द रूप दिखाई देने लग गया है ॥ ३ ॥ यहां कुछ भी आता जाता नहीं; यह सब तो प्रभु का किया हुआ एक खेल है । नानक कहता है कि वह स्वामी प्रभु अगम्य है और भक्तों को केवल उसके नाम की ही टेक है ॥ ४ ॥ १५ ॥ १३६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मन, परमेश्वर पूर्ण परब्रह्म है; तू उसी का ही आसरा देख । जिस प्रभु ने सभी ब्रह्माण्डों एवं खण्डों को धारण कर रखा है केवल उसी के नाम का जाप कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु के सेवक, मन की मति का त्याग कर क्योंकि परमात्मा के हुकुम को बूझने पर ही सुख पाया जाता है । प्रभु के किए हुए को भला मानो और सुख–दुख में उसी का सुमिरन करो ॥ १॥ परमात्मा ने करोड़ों पतितों का क्षण–भर में उद्धार कर दिया है और ऐसा करने के लिए उसे ज़रा भी देरी नहीं लगी । दीनों के दुख–दर्द का नाश करने वाला स्वामी प्रभु जिसे चाहता है उसी को बड़प्पन प्रदान करता है ॥ २ ॥ वह सब का माता–पिता, पोषण कर्ता और सब के प्राणों को सुख देने वाला सागर है । देते हुए उसे कभी भी कमी नहीं आती क्योंकि वह रत्नों का पूर्ण भण्डार है ॥ ३ ॥ यह याचक, हे घट–घट में बसने वाले स्वामी, तेरे नाम की याचना करता है । दास नानक उस प्रभु की ही शरण में है जिससे कोई भी खाली नहीं है ॥ ४ ॥ १६ ॥ १३७ ॥

राગु गउड़ी पूरबी महला ५ ੧ਓੰ सतिगुर प्रसादि ॥

हरि हरि कबहू न मनहु बिसारे ॥ ईहा ऊहा सरब सुखदाता सगल घटा प्रतिपारे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महा कसट काटै खिन भीतरि रसना नामु चितारे ॥ सीतल सांति सूख हरि सरणी जलती अगनि निवारे ॥ १ ॥ गरभ कुंड नरक ते राखै भवजलु पारि उतारे ॥ चरन कमल आराधत मन महि जम की त्रास बिदारे ॥ २ ॥ पूरन पारब्रहम परमेसुर ऊचा अगम अपारे ॥ गुण गावत धिआवत सुख सागर जूए जनमु न हारे ॥ ३ ॥ कामि क्रोधि लोभि मोहि मनु लीनो निरगुण के दातारे ॥ करि किरपा अपुनो नामु दीजै नानक सद बलिहारे ॥ ४ ॥ १ ॥ १३८ ॥

रागु गउड़ी चेती महला ५ ੧ਓੰ सतिगुर प्रसादि ॥

सुखु नाही रे हरि भगति बिना ॥ जीति जनमु इहु रतनु अमोलकु साधसंगति जपि इक खिना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुत संपति बनिता बिनोद ॥ छोडि गए बहु लोग भोग ॥ १ ॥ हैवर गैवर राज रंग ॥ तिआगि चलिओ है मूड़ नंग ॥ २ ॥ चोआ चंदन देह फूलिआ ॥ सो तनु धर संगि रूलिआ ॥ ३ ॥ मोहि मोहिआ जानै दूरि है ॥ कहु नानक सदा हदूरि है ॥ ४ ॥ १ ॥ १३९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मन धर तरबे हरि नाम नो ॥ सागर लहरि संसा संसारु गुरु बोहिथु पार गरामनो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कलि कालख अंधिआरीआ ॥ गुर गिआन दीपक उजिआरीआ ॥ १ ॥ बिखु बिखिआ पसरी अति घनी ॥ उबरे जपि जपि हरि गुनी ॥ २ ॥ मतवारो माइआ सोइआ ॥ गुर भेटत भ्रमु भउ खोइआ ॥ ३ ॥ कहु नानक एकु धिआइआ ॥ घटि घटि नदरी आइआ ॥ ४ ॥ २ ॥ १४० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ दीबानु हमारो तुही एक ॥ सेवा थारी गुरहि टेक ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक जुगति नही पाइआ ॥ गुरि चाकर लै लाइआ ॥ १ ॥ मारे पंच बिखादीआ ॥ गुर किरपा ते दलु साधिआ ॥ २ ॥ बखसीस वजहु मिलि एकु नाम ॥ सूख सहज आनंद बिस्राम ॥ ३ ॥

राग गउड़ी पूरबी महला ५ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

परमात्मा को कभी भी मन से विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इस लोक और उस लोक में वह सभी जीवों का प्रतिपालक है और सर्व सुखदाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीभ से उसका नाम सुमिरन करने से क्षण भर में बड़े-बड़े कष्ट समाप्त हो जाते हैं। प्रभु शरण में व्यक्ति सुखी, शान्त, शीतल हो जाता है और उसकी तृष्णा रूपी जल रही अग्नि दूर हो जाती है ॥ १ ॥ प्रभु ही गर्भ-कुण्ड जैसे विषम स्थान में रक्षा करता है और संसार-सागर से पार उतारता है। प्रभु के चरण-कमलों की आराधना मन से मौत के भय को नष्ट कर देती है ॥ २ ॥ ऊँचा, अगम्य परमेश्वर पूर्ण परब्रह्म एवं अपरंपर है। उस सुख सागर प्रभु के गुणों का गायन करते हुए उसका सुमिरन करना चाहिए और इस जन्म को जुए के खेल की तरह व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए ॥ ३ ॥ हे गुणहीनों के दाता, मेरा मन काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि में लीन हुआ पड़ा है। नानक सदैव तुझ पर बलिहारी जाता है; उसे कृपा करके अपना नाम प्रदान करो ॥ ४ ॥ १ ॥ १३८ ॥

राग गउड़ी चेती महला ५ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे भाई, प्रभु भक्ति के बिना सुख नहीं। सद्संगत में क्षण-भर के लिए नाम का सुमिरन कर इस अमूल्य रत्न रूपी जन्म को जीत लो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पुत्र, धन, स्त्री, अनेकों विनोद और भोग छोड़कर बहुत से लोग चले गए हैं। घोड़े, हाथी, राजसी मस्तियों को छोड़कर मूर्ख जीव नंगा ही चल पड़ा है ॥ २ ॥ इत्र चन्दन आदि लगाकर जिस देह में फूला नहीं समाता था वही शरीर अब मिट्टी में मिल गया है ॥ ३ ॥ मोह में ग्रस्त व्यक्ति यह मानता है कि परमात्मा दूर है परन्तु दास नानक कहता है कि वह सदैव सामने ही है ॥ ४ ॥ १ ॥ १३९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मन, प्रभु का नाम तैरने के लिए आधार है। संसार भ्रम का समुद्र है और इसकी लहरों से पार ले जाने वाला जहाज गुरु है॥१॥ रहाउ ॥ कलियुग में अज्ञान के अन्धेरे की कालिमा में गुरु का ज्ञान रूपी दीपक प्रकाश करता है ॥ १ ॥ माया रूपी विष सघन रूप से बहुत फैला हुआ है। केवल हरि-गुणों का जाप करने वाले ही इससे बच सके हैं ॥ २ ॥ व्यक्ति माया में मतवाला होकर सो रहा है परन्तु गुरु से मिलते ही उसके भ्रम एवं भय खो जाते हैं ॥ ३ ॥ नानक कहता है कि जब एक परमात्मा का सुमिरन किया गया तो वह प्रत्येक हृदय में दृष्टिगोचर होने लगा ॥ ४ ॥ २ ॥ १४० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे प्रभु, तू ही एक हमारा हाकिम है। गुरु का आसरा लेकर मैं तेरी सेवा करता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ॥ अनेकों युक्तियां लड़ाने पर भी वह मुझे नहीं मिला था परन्तु गुरु ने मुझे अपना सेवक बना लिया है ॥ १ ॥ पांचों दुष्टों को मैंने मार गिराया है और गुरु की कृपा से विकारों के दल को मैंने जीत लिया है ॥ २ ॥ बख्शीश के तौर पर मुझे एक प्रभु का नाम मिला है जो कि सभी सुखों एवं सहज आनन्द का पूर्ण विश्राम स्थल है ॥ ३ ॥

प्रभ के चाकर से भले ॥ नानक तिन मुख ऊजले ॥ ४ ॥ ३ ॥ १४१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जीअरे ओल्हा नाम का ॥ अवरु जि करन करावनो तिन महि भउ है जाम का ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अवर जतनि नही पाईऐ ॥ वडै भागि हरि धिआईऐ ॥ १ ॥ लाख हिकमती जानीऐ ॥ आगै तिलु नही मानीऐ ॥ २ ॥ अहंबुधि करम कमावने ॥ ग्रिह बालू नीरि बहावने ॥ ३ ॥ प्रभु क्रिपालु किरपा करै ॥ नामु नानक साधू संगि मिलै ॥ ४ ॥ ४ ॥ १४२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ बारनै बलिहारनै लख बरीआ ॥ नामो हो नामु साहिब को प्रान अधरीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करन करावन तुही एक ॥ जीअ जंत की तुही टेक ॥ १ ॥ राज जोबन प्रभ तूं धनी ॥ तूं निरगुन तूं सरगुनी ॥ २ ॥ ईहा ऊहा तुम रखे ॥ गुर किरपा ते को लखे ॥ ३ ॥ अंतरजामी प्रभ सुजानु ॥ नानक तकीआ तुही ताणु ॥ ४ ॥ ५ ॥ ॥ १४३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि हरि हरि आराधीऐ ॥ संतसंगि हरि मनि वसै भरमु मोहु भउ साधीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेद पुराण सिम्रिति भने ॥ सभ ऊच बिराजित जन सुने ॥ १ ॥ सगल असथान भै भीत चीन ॥ राम सेवक भै रहत कीन ॥ २ ॥ लख चउरासीह जोनि फिरहि ॥ गोबिंद लोक नही जनमि मरहि ॥ ३ ॥ बल बुधि सिआनप हउमै रही ॥ हरि साध सरणि नानक गही ॥ ४ ॥ ६ ॥ १४४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मन राम नाम गुन गाईऐ ॥ नीत नीत हरि सेवीऐ सासि सासि हरि धिआईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ संतसंगि हरि मनि वसै ॥ दुखु दरदु अनेरा भ्रमु नसै ॥ १ ॥ संत प्रसादि हरि जापीऐ ॥ सो जनु दूखि न विआपीऐ ॥ २ ॥ जा कउ गुरु हरि मंत्रु दे ॥ सो उबरिआ माइआ अगनि ते ॥ ३ ॥ नानक कउ प्रभु मइआ करि ॥ मेरै मनि तनि वासै नामु हरि ॥ ४ ॥ ७ ॥ १४५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ रसना जपीऐ एकु नाम ॥ ईहा सुखु आनंदु घना आगै जीअ कै संगि काम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कटीऐ तेरा अहं रोगु ॥ तूं गुर प्रसादि करि राज जोगु ॥ १ ॥ हरि रसु जिनि जनि चाखिआ ॥ ता की त्रिसना लाथीआ ॥ २ ॥ हरि बिस्राम निधि पाइआ ॥ सो बहुरि न कत ही धाइआ ॥ ३ ॥ हरि हरि नामु जा कउ गुरि दीआ ॥ नानक ता का भउ गइआ ॥ ४ ॥ ८ ॥ १४६ ॥

जो प्रभु के सेवक हैं वे भले हैं; हे नानक, उनके मुख उज्जवल हैं ॥ ४ ॥ ३ ॥ १४१ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे जीव, केवल प्रभु नाम ही एक आश्रय है । अन्य जो कुछ भी किया कराया जाता है उसमें सदा मौत का भय बना ही रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अन्य (कर्मकाण्डी) उपायों से उसे नहीं पाया जा सकता और बड़ा भाग्य होने से ही प्रभु की आराधना होती है ॥ १ ॥ बेशक लाखों चतुराईयां जानते हो परन्तु प्रभु के सामने ज़रा भी नहीं चलती ॥ २ ॥ अभिमान से भरकर कर्म करना वैसा ही है जैसे रेत के घर को पानी से बहा दिया जाए ॥ ३ ॥ कृपालु प्रभु यदि कृपा करे तो हे नानक, साधु संगत में प्रभु-नाम प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १४२ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मैं लाखों बार बलिहारी जाता हूँ क्योंकि उस मालिक का नाम ही केवल मेरे प्राणों का आश्रय है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ करने कराने वाला एक तू ही है और सब जीव-जन्तुओं की टेक भी तू ही है ॥ १ ॥ हे प्रभु, राज और यौवन का मालिक भी तू ही है । गुणों से परे भी तू ही है और गुणों के अन्दर भी तू ही है ॥ २ ॥ गुरु की कृपा से ही कोई जान पाता है कि यहाँ वहाँ तू ही रक्षक है ॥ ३ ॥ प्रभु अन्तर्यामी एवं सुजान है और हे नानक, तू ही आश्रय है और तू ही बल है ॥ ४ ॥ ५ ॥ १४३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ बार-बार हरि का सुमिरन किया जाना चाहिए । वह शान्त पुरुषों की संगत में मन में आन बसता है और भ्रम मोह एवं भय दूर कर लिए जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वेद, पुराण और स्मृतियां भी यही कहती हैं कि प्रभु के सेवक सब से ऊँची अवस्था में विराजमान बने रहते हैं ॥ १ ॥ सभी स्थान किसी न किसी भय के प्रतीक हैं । केवल प्रभु सेवक ही भय-रहित बने रहते हैं ॥ २ ॥ अन्य लोग चौरासी लाख योनियों में घूमते रहते हैं । केवल प्रभु के सेवक जन्म-मरण में नहीं आते ॥ ३ ॥ हे नानक, जब से प्रभु के साधकों की शरण मैंने पकड़ी है, मेरा बल, मेरी बुद्धि, चतुराई एवं अहंकार छूट गया है ॥ ४ ॥ ६ ॥ १४४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मन, राम नाम का गुणानुवाद करना चाहिए; सदैव प्रभु की सेवा करनी चाहिए तथा हर श्वास् के साथ हरि-सुमरिन किया जाना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शान्त पुरुषों की संगत में प्रभु मन में आन बसता है तथा दुख दरिद्रता एवं भ्रम का अन्धकार भाग खड़ा होता है ॥ १ ॥ जो व्यक्ति शान्त पुरुषों की कृपा से हरि का जाप करता है उसे कभी भी दुःख नहीं होता ॥ २ ॥ जिसे गुरु ने हरि-मन्त्र दे दिया है वह माया की अग्नि से बच जाता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, नानक पर कृपा करो ताकि मेरे तन मन में प्रभु नाम का वास हो जाए ॥ ४ ॥ ७ ॥ १४५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जीभ से केवल एक प्रभु का नाम ही जपना चाहिए । जीव को यहां बहुत सुख मिलेगा और परलोक में भी प्रभु-नाम ही काम आएगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इससे तेरा अहंकार का रोग कट जाएगा और तुझे गुरु की कृपा से राज-योग अर्थात् गृहस्थी में ही निर्लिप्त बने रहने की विधि प्राप्त हो जाएगी ॥ १ ॥ जिस-जिस ने भी हरि-रस को चख लिया है उसकी सारी प्यास बुझ गयी है ॥ २ ॥ जिसने प्रभु रूपी विश्राम का भण्डार प्राप्त कर लिया है वह फिर इधर-उधर भागा नहीं फिरता ॥ ३ ॥ गुरु ने जिसे प्रभु-नाम दे दिया है, हे नानक, उसका सारा भय समाप्त हो गया है ॥ ४ ॥ ८ ॥ १४६॥

गउड़ी महला ५ ॥ जा कउ बिसरै राम नाम ताहू कउ पीर ॥ साधसंगति मिलि हरि रवहि से गुणी गहीर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा कउ गुरमुखि रिदै बुधि ॥ ता कै कर तल नव निधि सिधि ॥ १ ॥ जो जानहि हरि प्रभ धनी ॥ किछु नाही ता कै कमी ॥ २ ॥ करणैहारु पछानिआ ॥ सरब सूख रंग माणिआ ॥ ३ ॥ हरि धनु जा कै ग्रिहि वसै ॥ कहु नानक तिन संगि दुखु नसै ॥ ४ ॥ ९ ॥ १४७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गरबु बडो मूलु इतनो ॥ रहनु नही गहु कितनो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेबरजत बेद संतना उआहू सिउ रे हितनो ॥ हार जूआर जूआ बिधे इंद्री वसि लै जितनो ॥ १ ॥ हरन भरन संपूरना चरन कमल रंगि रितनो ॥ नानक उधरे साधसंगि किरपा निधि मै दितनो ॥ २ ॥ १० ॥ १४८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मोहि दासरो ठाकुर को ॥ धानु प्रभ का खाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसो है रे खसमु हमारा ॥ खिन महि साजि सवारणहारा ॥ १ ॥ कामु करी जे ठाकुर भावा ॥ गीत चरित प्रभ के गुन गावा ॥ २ ॥ सरणि परिओ ठाकुर वजीरा ॥ तिना देखि मेरा मनु धीरा ॥ ३ ॥ एक टेक एको आधारा ॥ जन नानक हरि की लागा कारा ॥ ४ ॥ ११ ॥ १४९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ है कोई ऐसा हउमै तोरै ॥ इसु मीठी ते इहु मनु होरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अगिआनी मानुखु भइआ जो नाही सो लोरै ॥ रैणि अंधारी कारीआ कवन जुगति जितु भोरै ॥ १ ॥ भ्रमतो भ्रमतो हारिआ अनिक बिधी करि टोरै ॥ कहु नानक किरपा भई साधसंगति निधि मोरै ॥ २ ॥ १२ ॥ १५० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ चिंतामणि करुणा मए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दीन दइआला पारब्रहम ॥ जा कै सिमरणि सुख भए ॥ १ ॥ अकाल पुरख अगाधि बोध ॥ सुनत जसो कोटि अघ खए ॥ २ ॥ किरपा निधि प्रभ मइआ धारि ॥ नानक हरि हरि नाम लए ॥ ३ ॥ १३ ॥ १५१ ॥ गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ मेरे मन सरणि प्रभू सुख पाए ॥ जा दिनि बिसरै प्रान सुखदाता सो दिनु जात अजाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक रैण के पाहुन तुम आए बहु जुग आस बधाए ॥ ग्रिह मंदर संपै जो दीसै जिउ तरवर की छाए ॥ १ ॥ तनु मेरा संपै सभ मेरी बाग मिलख सभ जाए ॥ देवनहारा बिसरिओ ठाकुरु खिन महि होत

गउड़ी महला ५ ॥ पीड़ा उसी को ही होती है जिसको राम–नाम भूल गया है । जो साधु–संगत में मिल बैठकर प्रभु का सुमिरन करते हैं वे व्यक्ति अपने इस गुण के कारण बहुत गम्भीर बन जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुख बनकर जिनके हृदय में समझ आ गई है नौ निधियाँ और सिद्धियाँ उनकी हथेली पर आ बैठती हैं ॥ १ ॥ जो हरि–प्रभु को ही मालिक समझते हैं उनको किसी प्रकार की भी कमी नहीं आती ॥ २ ॥ करने वाले प्रभु को पहचान कर सर्व सुखों के आनन्द को भोगा जाता है ॥ ३ ॥ जिसके घर में हरि धन रूपी सम्पत्ति है नानक कहता है ऐसे व्यक्ति के पास से दुख भाग खड़े होते हैं ॥ ४ ॥ ९ ॥ १४७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ व्यक्ति का वास्तविक मूल (बीज) तो छोटा सा है परन्तु उसका अहंकार बहुत बड़ा है । रहना तो उसने इस संसार में थोड़े ही दिनों के लिए होता है परन्तु उसकी पकड़ कितनी मज़बूत होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ज्ञान और शान्त पुरुषों के दृष्टिकोण से जो कुछ विवर्जित है हे जीव, तेरा प्रेम उन्हीं पदार्थों के संग बना रहता है । तू जुआरी के जुए में हारने की तरह हार रहा है और यह इन्द्रियाँ अपने वश में लेकर तुझे जीत रही हैं ॥ १ ॥ ले लेने वाले और दे देने वाले प्रभु के चरण–कमलों की प्रीति से तू खाली ही पड़ा हुआ है । हे नानक, साधु–संगत की कृपा ने जो मुझे नाम का खज़ाना दिया है उसी के कारण मैं बच गया हूँ ॥ २ ॥ १० ॥ १४८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मैं उस स्वामी प्रभु का सेवक हूँ और प्रभु द्वारा दान में दिया हुआ अन्न खाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई, हमारा स्वामी प्रभु ऐसा है जो क्षण–भर में बना कर संवार देता है । मैं वही काम करूँगा जो मेरे मालिक को अच्छा लगे । गीतों और वृत्तांतों के माध्यम से मैं प्रभु के गुण गाए चला जाता हूँ ॥ २ ॥ प्रभु के वज़ीर गुरु की शरण में मैं आन पड़ा हूँ और गुरु को देखकर ही मेरे मन में धीरज बँध गया है ॥ ३ ॥ मेरी टेक और आधार एक प्रभु पर ही है और दास नानक प्रभु के कार्य में लग गया है ॥ ४ ॥ ११ ॥ १४९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ कोई ऐसा है जो अभिमान को नष्ट कर दे और मन को इस मीठे दुर्गुण की ओर जाने से रोक ले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनुष्य इतना अज्ञानी हो गया है कि जो है नहीं उसके पीछे ही दौड़ता फिरता है । इसकी जीवन रूपी रात्रि घोर अन्धकारमय एवं काली है । ऐसी कौन सी युक्ति है जिससे सुबह का प्रकाश अर्थात ज्ञान का प्रकाश दिखाई दे सके ॥ १ ॥ भ्रमण करते–करते और अनेकों उपायों से खोजते खोजते मैं हार गया हूँ । दास नानक कहता है कि मुझ पर कृपा हुई है और मुझे साधु–संगत रूपी खजाना मिल गया है ॥ २ ॥ १२ ॥ १५०॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे प्रभु, तू एक करूणामयी चिन्तामणि है जो सभी इच्छाओं की पूर्ति करती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परब्रह्म ही केवल ऐसा दीन दयालु है जिसके सुमिरन से सुख प्राप्त होता है ॥ १ ॥ कालातीत प्रभु इतने अथाह रूप में प्रबुद्ध है कि उसका यश सुनने से करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ २ ॥ हे कृपानिधि प्रभु, कृपा कर ताकि नानक हरि–नाम का ही सुमिरन करता रहे ॥ ३ ॥ १३ ॥ १५१ ॥ गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ हे मेरे मन, प्रभु की शरण में ही सुख पाया जाता है । जिस दिन प्राणों को सुख देने वाला प्रभु विस्मृत हो जाता है वह दिन व्यर्थ चला जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे भाई, तुम एक रात के अतिथि के रूप में यहां आए हो परन्तु तुमने अनेकों युगों तक यहां बने रहने की आशाओं से अपने आप को बांध लिया है । यह घर, महल सम्पत्ति आदि जो दिखाई दे रहे हैं; वे सब एक वृक्ष की छाया की तरह हैं जो कभी स्थिर नहीं रहती ॥ १ ॥ तू ऐसा मानता है कि यह तन मेरा है, सम्पत्ति मेरी है, बाग, धरती आदि सब मेरे हैं; परन्तु हे व्यक्ति तू यह नहीं जानता कि तूने यह सब कुछ देने वाले

पराए ॥ २ ॥ पहिरे बागा करि इसनाना चोआ चंदन लाए ॥ निरभउ निरंकारु नही चीनिआ जिउ हसती नावाए ॥ ३ ॥ जउ होइ क्रिपाल त सतिगुरु मेलै सभि सुख हरि के नाए ॥ मुकतु भइआ बंधन गुरि खोले जन नानक हरि गुण गाए ॥ ४ ॥ १४ ॥ १५२ ॥ गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ मेरे मन गुरु गुरु गुरु सद करीऐ ॥ रतन जनमु सफलु गुरि कीआ दरसन कउ बलिहरीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जेते सास ग्रास मनु लेता तेते ही गुण गाईऐ ॥ जउ होइ दैआलु सतिगुरु अपुना ता इह मति बुधि पाईऐ ॥ १ ॥ मेरे मन नामि लए जम बंध ते छूटहि सरब सुखा सुख पाईऐ ॥ सेवि सुआमी सतिगुरु दाता मन बंछत फल आईऐ ॥ २ ॥ नामु इसटु मीत सुत करता मन संगि तुहारै चालै ॥ करि सेवा सतिगुर अपुने की गुर ते पाईऐ पालै ॥ ३ ॥ गुरि किरपालि क्रिपा प्रभि धारी बिनसे सरब अंदेसा ॥ नानक सुखु पाइआ हरि कीरतनि मिटिओ सगल कलेसा ॥ ४ ॥ १५ ॥ १५३ ॥

रागु गउड़ी महला ५   १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

त्रिसना बिरले ही की बुझी हे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कोटि जोरे लाख क्रोरे मनु न होरे ॥ परै परै ही कउ लुझी हे ॥ १ ॥ सुंदर नारी अनिक परकारी पर ग्रिह बिकारी ॥ बुरा भला नही सुझी हे ॥ २ ॥ अनिक बंधन माइआ भरमतु भरमाइआ गुण निधि नही गाइआ ॥ मन बिखै ही महि लुझी हे ॥ ३ ॥ जा कउ रे किरपा करै जीवत सोई मरै साधसंगि माइआ तरै ॥ नानक सो जनु दरि हरि सिझी हे ॥ ४ ॥ १ ॥ १५४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सभहू को रसु हरि हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काहू जोग काहू भोग काहू गिआन काहू धिआन ॥ काहू हो डंड धरि हो ॥ १ ॥ काहू जाप काहू ताप काहू पूजा होम नेम ॥ काहू हो गउनु करि हो ॥ २ ॥ काहू तीर काहू नीर काहू बेद बीचार ॥ नानका भगति प्रिअ हो ॥ ३ ॥ २ ॥ १५५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुन कीरति निधि मोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूंही रस तूंही जस तूंही रूप तूंही रंग ॥ आस ओट प्रभ तोरी ॥ १ ॥ तूही मान तूंही धान तूही पति तूही प्रान ॥ गुरि तूटी लै

स्वामी को भुला दिया है । यह सब क्षण–भर में पराये हो जाएँगे ॥ २ ॥ तू श्वेत वस्त्र पहनता है और स्नान करके इत्र, चन्दन आदि लगाता है परन्तु यदि तूने उस निर्भय, निराकार प्रभु को नहीं पहचाना तो यह सब हाथी को नहलाने के समान व्यर्थ होकर रह जाता है ॥ ३ ॥ यदि प्रभु कृपालु हो जाए तो सद्गुरु मिल जाता है जिससे पता लग जाता है कि सब सुख हरि–नाम में ही हैं । दास नानक के बन्धनों को गुरु ने खोल दिया है जिससे वह मुक्त हो गया है और प्रभु का गुणानुवाद करता है ॥ ४ ॥ १४ ॥ १५२ ॥ गउड़ी पूरबी महला ५ ॥ हे मन, सदैव गुरु का सुमिरन कर । गुरु ने रत्न रूपी जन्म को सफल कर दिया है और मैं उस गुरु के दर्शन पर बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ व्यक्ति जितनी बार श्वास् लेता है या भोजन का ग्रास खाता है उतनी बार ही उसे प्रभु का गुणानुवाद करते रहना चाहिए; परन्तु यदि सद्गुरु दयालु हो जाए तो तभी यह समझ बुद्धि प्राप्त होती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, नाम–सुमिरन से यम के पाश से छूटा जाता है और सर्वोच्च सुख प्राप्त हो जाता है । उस स्वामी दाता रूप सद्गुरु का सुमिरन करने से मनोवांछित फल आन मिलते हैं ॥ २ ॥ हे मन, नाम ही तेरा इष्ट, मित्र, पुत्र एवं कर्ता–प्रभु है जो अन्त में तुम्हारे साथ चलता है । अपने सद्गुरु की सेवा कर क्योंकि वह नाम गुरु से ही पाया जाता है ॥ ३ ॥ कृपालु प्रभु गुरु ने कृपा की तो मेरी सभी चिन्ताएं विनष्ट हो गई । हे नानक, प्रभु की कीर्ति के गायन से मुझे सुख प्राप्त हुआ है और मेरे सारे दुख मिट गए हैं ॥ ४ ॥ १५ ॥ १५३ ॥

रागु गउड़ी महला ५ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

धन सम्पदा की तृष्णा किसी विरले की ही शान्त हुई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ व्यक्ति लाखों करोड़ों जोड़ता है परन्तु अपने मन को नहीं रोकता । वह दूर से दूर जाकर भी धन सम्पत्ति के लिए झगड़ता फिरता है ॥ १ ॥ अपने पास अनेकों प्रकार की सुन्दर स्त्रियां होने के बावजूद वह पराये घर में जाकर मन में विकार पैदा करता है । उसको बुरा–भला कुछ भी नहीं सूझता ॥ २ ॥ माया के अनेकों बन्धनों में पड़ा हुआ यह भ्रमों में ही भटकता रहता है और गुणों के खजाने प्रभु का गायन नहीं करता । उसका मन विषयों में ही फंसा रहता है ॥ ३ ॥ जिस पर प्रभु कृपा करता है वह जीवन में ही विषयों के प्रति मर जाता है और साधु–संगत में मायावी संसार को पार कर जाता है । हे नानक, ऐसा ही सेवक प्रभु द्वार पर सफल होता है ॥ ४ ॥ १ ॥ १५४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सब के लिए परमात्मा ही एक महान रस है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किसी को योग का किसी को भोग का, किसी को ज्ञान का, किसी को ध्यान का और किसी को दंडाधारी बनने का ही रस है ॥ १ ॥ किसी को जाप का, तप का, पूजा का, हवन यज्ञ करने का और किसी को केवल भ्रमण करने का ही रस है ॥ २ ॥ किसी को नदी के किनारों पर बने हुए तीर्थों का, स्नान का और वेद के विचार का ही रस है; परन्तु हे नानक, वह प्रभु भक्ति को ही प्रिय (रस) मानता है ॥ ३ ॥ १ ॥ १५५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रभु की कीर्ति का गुणानुवाद ही मेरा खज़ाना है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, मुझे तेरा ही आसरा है क्योंकि तू ही रस, यश, रूप एवं रंग हो ॥ १ ॥ तुम ही मान, धन, प्रतिष्ठा एवं प्राण हो । गुरु ने ही मुझ टूटे हुए को

जोरी ॥ २ ॥ तूही ग्रिहि तूंही बनि तूंही गाउ तूही सुनि ॥ है नानक नेर नेरी ॥ ३ ॥ ३ ॥ १५६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मातो हरि रंगि मातो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ओही पीओ ओही खीओ गुरहि दीओ दानु कीओ ॥ उआहू सिउ मनु रातो ॥ १ ॥ ओही भाठी ओही पोचा उही पिआरो उही रूचा ॥ मनि ओहो सुखु जातो ॥ २ ॥ सहज केल अनद खेल रहे फेर भए मेल ॥ नानक गुर सबदि परातो ॥ ३ ॥ ४ ॥ १५७ ॥

रागु गौड़ी मालवा महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

हरि नामु लेहु मीता लेहु आगै बिखम पंथु भैआन ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सेवत सेवत सदा सेवि तेरै संगि बसतु है कालु ॥ करि सेवा तूं साध की हो काटीऐ जम जालु ॥ १ ॥ होम जग तीरथ कीए बिचि हउमै बधे बिकार ॥ नरकु सुरगु दुइ भुंचना होइ बहुरि बहुरि अवतार ॥ २ ॥ सिव पुरी ब्रहम इंद्र पुरी निहचलु को थाउ नाहि ॥ बिनु हरि सेवा सुखु नही हो साकत आवहि जाहि ॥ ३ ॥ जैसो गुरि उपदेसिआ मै तैसो कहिआ पुकारि ॥ नानकु कहै सुनि रे मना करि कीरतनु होइ उधारु ॥ ४ ॥ १ ॥ १५८ ॥

रागु गउड़ी माला महला ५ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

पाइओ बाल बुधि सुखु रे ॥ हरख सोग हानि मिरतु दूख सुख चिति समसरि गुर मिले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जउ लउ हउ किछु सोचउ चितवउ तउ लउ दुखनु भरे ॥ जउ क्रिपालु गुरु पूरा भेटिआ तउ आनद सहजे ॥ १ ॥ जेती सिआनप करम हउ कीए तेते बंध परे ॥ जउ साधू करु मसतकि धरिओ तब हम मुकत भए ॥ २ ॥ जउ लउ मेरो मेरो करतो तउ लउ बिखु घेरे ॥ मनु तनु बुधि अरपी ठाकुर कउ तब हम सहजि सोए ॥ ३ ॥ जउ लउ पोट उठाई चलिअउ तउ लउ डान भरे ॥ पोट डारि गुरु पूरा मिलिआ तउ नानक निरभए ॥ ४ ॥ १ ॥ १५९ ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ भावनु तिआगिओ री तिआगिओ ॥ तिआगिओ मै गुर मिलि तिआगिओ ॥ सरब सुख आनंद मंगल रस मानि गोबिंदै

जोड़ लिया है ॥ २ ॥ तुम ही घर, मन, गांव, एवं सुनसान हो । हे नानक, वह सर्वत्र है इसलिए बहुत ही निकट से भी निकट है ॥ ३ ॥ ३ ॥ १५६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मैं हरि–रंग में ही मस्त हो गया हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैंने उसका नाम रूपी मद पीया है और पीकर मैं मस्त हो रहा हूँ । गुरु ने ही मुझे यह नाम दिया है और उसी नाम रूपी शराब के साथ मेरा मन रंगा हुआ है ॥ १ ॥ परमात्मा का नाम ही भट्ठी है और नाम ही ठण्डा रखने वाली नली पर लेप है । प्रभु का नाम ही प्याला है और उसी में मेरी रुचि है । मैं अपने मन में उसी का आनन्द ले रहा हूँ ॥ २ ॥ जिसका मन शब्द–गुरु में लीन हो गया है वह सहज आनन्द के खेल का आनन्द लेता है और उसका प्रभु के साथ मिलाप हो जाता है ॥ ३ ॥ ४ ॥ १५७ ॥

राागु गउड़ी मालवा महला ५ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे मित्र, प्रभु नाम का सुमिरन कर क्योंकि आगे का मार्ग विषम एवं भयानक है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सदैव उसका सुमिरन करता रह क्योंकि तेरे साथ ही तेरा काल बस रहा है । तू साधु पुरुष की सेवा कर जिससे तेरा यम जाल कट जाए ॥ १ ॥ अहंकार से बंधे हुए तुमने जो हवन, यज्ञ और तीर्थ स्नान किए हैं उनके कारण तुझे स्वर्ग, नर्क दोनों में बार–बार जन्म लेकर आना जाना पड़ेगा ॥ २ ॥ शिव पुरी, ब्रह्म एवं इन्द्रपुरी आदि कोई भी स्थान अटल नहीं है । प्रभु के सुमिरन के बिना सुख नहीं है और प्रभु से टूटा हुआ व्यक्ति आवागमन में पड़ा रहता है ॥ ३ ॥ मुझे जैसा उपदेश गुरु ने दिया है मैं वैसा ही पुकार–पुकार कर कह रहा हूँ । नानक कहता है कि हे मेरे मन, तू प्रभु की कीर्ति का गायन कर, उसी से तेरा उद्धार होगा ॥ ४ ॥ १ ॥ १५८ ॥

रागु गउड़ी माला महला ५ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

बालक के समान सरल बुद्धि पाने पर ही सुख मिला है । खुशी, गमी, हानि, मृत्यु, दुख–सुख को व्यक्ति का चित्त तभी समान भाव से जानता है जब उसे गुरु मिल जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब तक मैं सोचता हुआ चिन्ताओं में घिरा रहता हूँ तब तक मैं दुखों से भरा रहता हूँ परन्तु जब कृपालु गुरु से मेरा मिलाप हो गया है तब से मैं सहज आनन्द को भोग रहा हूँ ॥ १ ॥ जब तक मैं चतुराईयों वाले कर्म करता रहा तब तक मैं बन्धनों में पड़ा रहा परन्तु जब गुरु ने मेरे माथे पर अपना वरद हस्त रखा तो मैं मुक्त हो गया ॥ २ ॥ व्यक्ति जब तक मेरा–मेरा करता है तब तक वह विकारों के विष से घिरा रहता है । परन्तु जब मैंने अपना मन, तन एवं बुद्धि परमात्मा को अर्पण कर दी तब मैं चिन्ता–मुक्त होकर सो गया ॥ ३ ॥ जब तक माया की पोटली उठा कर चलता रहा तब तक मैं सज़ा पाता रहा । जब मैंने पोटली फेंक दी और मुझे पूरा गुरु मिल गया तो हे नानक, मैं निर्भय हो गया ॥ ४ ॥ १ ॥ १५९ ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ हे सखी मैंने गुरु से मिलकर पसन्द–नापसन्द की भावना को त्याग दिया है । प्रभु की आज्ञा मानने से अब मुझे सब प्रकार का आनन्द मंगल

आगिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मानु अभिमानु दोऊ समाने मसतकु डारि गुर पागिओ ॥ संपत हरखु न आपत दूखा रंगु ठाकुरै लागिओ ॥ १ ॥ बास बासरी एकै सुआमी उदिआन द्रिसटागिओ ॥ निरभउ भए संत भ्रमु डारिओ पूरन सरबागिओ ॥ २ ॥ जो किछु करतै कारणु कीनो मनि बुरो न लागिओ ॥ साधसंगति परसादि संतन कै सोइओ मनु जागिओ ॥ ३ ॥ जन नानक ओड़ि तुहारी परिओ आइओ सरणागिओ ॥ नाम रंग सहज रस माणे फिरि दूखु न लागिओ ॥ ४ ॥ २ ॥ १६० ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ पाइआ लालु रतनु मनि पाइआ ॥ तनु सीतलु मनु सीतलु थीआ सतगुर सबदि समाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लाथी भूख त्रिसन सभ लाथी चिंता सगल बिसारी ॥ करु मसतकि गुरि पूरै धरिओ मनु जीतो जगु सारी ॥ १ ॥ त्रिपति अघाइ रहे रिद अंतरि डोलन ते अब चूके ॥ अखुटु खजाना सतिगुरि दीआ तोटि नही रे मूके ॥ २ ॥ अचरजु एकु सुनहु रे भाई गुरि ऐसी बूझ बुझाई ॥ लाहि परदा ठाकुरु जउ भेटिओ तउ बिसरी ताति पराई ॥ ३ ॥ कहिओ न जाई एहु अचंभउ सो जानै जिनि चाखिआ ॥ कहु नानक सच भए बिगासा गुरि निधानु रिदै लै राखिआ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६१ ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ उबरत राजा राम की सरणी ॥ सरब लोक माइआ के मंडल गिरि गिरि परते धरणी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सासत सिंम्रिति बेद बीचारे महा पुरखन इउ कहिआ ॥ बिनु हरि भजन नाही निसतारा सूखु न किनहूं लहिआ ॥ १ ॥ तीनि भवन की लखमी जोरी बूझत नाही लहरे ॥ बिनु हरि भगति कहा थिति पावै फिरतो पहरे पहरे ॥ २ ॥ अनिक बिलास करत मन मोहन पूरन होत न कामा ॥ जलतो जलतो कबहू न बूझत सगल ब्रिथे बिनु नामा ॥ ३ ॥ हरि का नामु जपहु मेरे मीता इहै सार सुखु पूरा ॥ साधसंगति जनम मरणु निवारै नानक जन की धूरा ॥ ४ ॥ ४ ॥ १६२ ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ मोकउ इह बिधि को समझावै ॥ करता होइ जनावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनजानत किछु इनहि कमानो जप तप कछू न साधा ॥ दह दिसि लै इहु मनु दउराइओ कवन करम करि बाधा ॥ १ ॥ मन तन धन भूमि का ठाकुरु हउ इस का

प्राप्त हो गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के चरणों पर मस्तक रखने से मान–अभिमान दोनों ही मेरे लिए समान हो गए हैं । प्रभु के रंग में मैं ऐसा रंग गया हूँ कि न तो मुझे सम्पति मिलने से हर्ष होता है और न विपत्ति में दुख होता है ॥ १ ॥ वह एक ही प्रभु घर में भी बसता है और वह ही बाहर उद्यानों में भी दृष्टिगोचर होता है । शान्त पुरुषों के साथ भ्रम का निवारण कर मैं निर्भय हो गया हूँ और वह प्रभु पूर्ण सर्वज्ञ मुझे दिखाई देने लगा है ॥ २ ॥ अब वह कर्त्ता जो कुछ भी करता है वह मुझे बुरा नहीं लगता । साधु–संगत एवं शान्त पुरुषों की कृपा से मेरा सोया हुआ मन जग गया है ॥ ३ ॥ दास नानक तुम्हारे ही आश्रय में आकर तुम्हारा शरणागत् बन गया है । नाम–रंग में लीन होकर यह सहज रस का आनन्द ले रहा है और उसे अब दुख नहीं सताता ॥ ४ ॥ २ ॥ १६० ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ मैंने मन में ही वह लाल और रत्न रूपी प्रभु पा लिया है । मेरा मन और तन शीतल हो गया है और सद्गुरु का उपदेश मेरे मन में समा गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरी भूख और प्यास समाप्त हो गई है और सभी चिन्ताएं भूल गयी हैं । पूर्ण गुरु ने जब अपना हाथ मेरे माथे पर रखा तो मन को जीतते हुए सारा जगत जीत लिया गया ॥ १॥ अब हृदय के अन्दर संतुष्टि आ गयी है और चंचलता चुक गयी है । सद्गुरु ने अक्षय भण्डार दे दिया है जिसमें कोई कमी नहीं आती और वह कभी समाप्त नहीं होता ॥ २ ॥ हे भाई, एक आश्चर्य की बात सुनो; मुझे गुरु ने ऐसी शिक्षा दी कि जब मैंने भ्रम के सभी पर्दों को हटाकर प्रभु का साक्षात्कार किया तो मेरे अन्तर्मन में दूसरों के प्रति ईर्ष्या भाव अलोप हो गया ॥ ३ ॥ इस अचम्भे का कथन नहीं किया जा सकता; इसे वही जानता है जिसने इसे चख कर देखा है । हे नानक, सत्य के कारण मन प्रसन्न हो उठा है और मैंने गुरु रूपी खजाने को हृदय में संभाल लिया है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६१ ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ प्रभु की शरण में ही उद्धार होता है । माया के सभी मण्डल एवं लोक अन्ततः धरती पर आ गिरते हैं अर्थात् मिट्टी बन जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ महापुरुषों ने वेदों, शास्त्रों एवं स्मृतियों को विचार कर यह कहा है कि प्रभु सुमिरन के बिना माया के बन्धन से छुटकारा नहीं मिलता और कोई भी सुख प्राप्त नहीं कर सकता ॥ १ ॥ तीनों लोकों की धन–सम्पदा को इकट्ठा कर लेने पर भी लोभ की लहरें समाप्त नहीं होती। प्रभु भक्ति के बिना टिकाव प्राप्त नहीं होता और व्यक्ति हर समय भागा दौड़ा ही रहता है ॥ २ ॥ यह मन अनेकों प्रकार के निष्फल काम करता है परन्तु उसकी कामनाएं फिर भी पूरी नहीं होती । इसके अन्दर की जलन, तृष्णा कभी नहीं बुझती और प्रभु–नाम के बिना सब कुछ व्यर्थ हो जाता है ॥ ३ ॥ हे मेरे मित्र, सभी सुखों के सार प्रभु–नाम का सुमिरन करो । साधु–संगत ही जन्म–मरण का निवारण करती है और नानक तो सदा प्रभु सेवक की चरण धूलि के समान है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १६२ ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ मुझे कौन समझा सकता है । कोई यदि कर्ता हो तो वही उस प्रभु के रहस्य को बता सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जीव भी अनजानेपन में ही कर्म करता है और जप, तप कुछ भी नहीं करता । यह जीव किन कर्मों के कारण बंधा हुआ है और मन को दसों दिशाओं में दौड़ाए रहता है ॥ १ ॥ जीव यही मानता है कि मन, तन, धन मेरा है । मैं धरती का मालिक हूँ । यह मेरा है और मैं उसका हूँ । इसी भ्रम

इहु मेरा ॥ भरम मोह कछु सूझसि नाही इह पैखर पए पैरा ॥ २ ॥ तब इहु कहा कमावन परिआ जब इहु कछू न होता ॥ जब एक निरंजन निरंकार प्रभ सभु किछु आपहि करता ॥ ३ ॥ अपने करतब आपे जानै जिनि इहु रचनु रचाइआ ॥ कहु नानक करणहारु है आपे सतिगुरि भरमु चुकाइआ ॥ ४ ॥ ५ ॥ १६३ ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ हरि बिनु अवर क्रिआ बिरथे ॥ जप तप संजम करम कमाणे इहि ओरै मूसे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बरत नेम संजम महि रहता तिन का आढु न पाइआ ॥ आगै चलणु अउरु है भाई ऊंहा कामि न आइआ ॥ १ ॥ तीरथि नाइ अरु धरनी भ्रमता आगै ठउर न पावै ॥ ऊहा कामि न आवै इह बिधि ओहु लोगन ही पतीआवै ॥ २ ॥ चतुर बेद मुख बचनी उचरै आगै महलु न पाईऐ ॥ बूझै नाही एकु सुधाखरु ओहु सगली झाख झखाईऐ ॥ ३ ॥ नानकु कहतो इहु बीचारा जि कमावै सु पार गरामी ॥ गुरु सेवहु अरु नामु धिआवहु तिआगहु मनहु गुमानी ॥ ४ ॥ ६ ॥ १६४ ॥ गउड़ी माला ५ ॥ माधउ हरि हरि हरि मुखि कहीऐ ॥ हम ते कछू न होवै सुआमी जिउ राखहु तिउ रहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किआ किछु करै कि करणैहारा किआ इसु हाथि बिचारे ॥ जितु तुम लावहु तित ही लागा पूरन खसम हमारे ॥ १ ॥ करहु क्रिपा सरब के दाते एक रूप लिव लावहु ॥ नानक की बेनंती हरि पहि अपुना नामु जपावहु ॥ २ ॥ ७ ॥ १६५ ॥

रागु गउड़ी माझ महला ५ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

दीन दइआल दमोदर राइआ जीउ ॥ कोटि जना करि सेव लगाइआ जीउ ॥ भगत वछलु तेरा बिरदु रखाइआ जीउ ॥ पूरन सभनी जाई जीउ ॥ १ ॥ किउ पेखा प्रीतमु कवण सुकरणी जीउ ॥ संता दासी सेवा चरणी जीउ ॥ इहु जीउ वताई बलि बलि जाई जीउ ॥ तिसु निवि निवि लागउ पाई जीउ ॥ २ ॥ पोथी पंडित बेद खोजंता जीउ ॥ होइ बैरागी तीरथि नावंता जीउ ॥ गीत नाद कीरतनु गावंता जीउ ॥ हरि निरभउ नामु धिआई जीउ ॥ ३ ॥ भए क्रिपाल सुआमी मेरे जीउ ॥ पतित पवित लगि

और मोह में पड़े हुए को वास्तविकता का पता नहीं चल पाता और यही भ्रम उसके पैरों को बांधने वाली रस्सी बन जाता है ॥ २ ॥ जब जीव का अस्तित्व ही नहीं था तब यह सब कौन करता था । जब एक निरंजन निराकार प्रभु ही था तव भी वह ही स्वयं सब कुछ करता था ॥ ३ ॥ जिसने यह सब रचना की है, अपने कामों को वही जानता है । नानक कहता है कि सद्‌गुरु ने मेरा भ्रम समाप्त कर मुझे बता दिया है कि सब कुछ करने वाला वह प्रभु स्वयं ही है ॥ ४ ॥ ५ ॥ १६३ ॥ गउड़ी माला महला ५ ॥ प्रभु के बिना अन्य सभी क्रियाएं व्यर्थ हैं । जप, तप, संयम आदि हठ कर्म प्रभु दरबार से पहले ही क्षीण हो जाते हैं अर्थात् वहां तक नहीं पहुँच पाते ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो व्रत, नियम, संयम आदि में लगे रहते हैं उनका मूल्य आधी कौड़ी भी नहीं है । हे भाई, उस लोक की मर्यादा तो अलग ही है । यह व्रत नियम, संयम आदि वहां काम नहीं आते ॥ १ ॥ तीर्थों पर नहाने वाले और धरती पर इधर उधर भ्रमण करने वाले को उस लोक में कोई स्थान नहीं मिलता है । उस लोक में उसका कोई काम नहीं बनता इसलिए वह यहीं पर अपने साथ कर्मकाण्डियों को प्रसन्न करने में लगा रहता है ॥ २ ॥ चारों वेदों का उच्चारण करने पर भी प्रभु के समक्ष स्थान नहीं मिलता । यदि वह एक शुद्ध अक्षर (प्रभु नाम) के रहस्य को नहीं जान पाता तो वह व्यर्थ में ही झख मारता रहता है ॥ ३ ॥ नानक एक विचार सामने रखता है जिस पर यदि कोई चलता है तो वह संसार–सागर से पार हो जाता है । गुरु की सेवा करो, नाम का सुमिरन करो और मन का अभिमान त्याग दो ॥ ४ ॥ ६ ॥ १६४ ॥ गउड़ी माला ५ ॥ हे प्रभु, हम मुख से हरि–हरि का ही उच्चारण करते रहें । हे स्वामी, हमसे कुछ नहीं बन पड़ता, तुम जैसे रखते हो हम वैसे ही रहते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह जीव क्या कर सकता है; इस बेचारे के हाथ में ही क्या है । हे हमारे पूर्ण स्वामी, तुमने इसे जिधर लगा दिया है यह उधर ही लगा रहता है ॥ १ ॥ हे सब के दाता प्रभु, कृपा करो और केवल अपने ही स्वरूप में मेरा ध्यान जोड़ो । नानक की प्रभु से यह विनती है कि मुझसे अपने नाम का ही सुमिरन करवाओ ॥ २ ॥ ७ ॥ १६५ ॥

रागु गउड़ी माझ महला ५ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे दीन दयालु दामोदर, राजा प्रभु, तूने करोड़ों भक्त पैदा करके उन्हें अपनी सेवा में लगा दिया है । भक्तों को प्यार करना तेरा प्रारम्भ से ही बिरद है । तू सब स्थानों में व्याप्त है ॥ १ ॥ कौन सा अच्छा कार्य किया जाए और कैसे प्रियतम को देखा जाए । शान्त पुरुषों की दासी बनकर उनके चरणों की सेवा करूँ और बार–बार अपने प्राण न्योछावर करूँ । झुक–झुक कर उनके चरण स्पर्श करूँ ॥ २ ॥ पंडितगण वेदों एवं अन्य पुस्तकों में उसे खोजते हैं और वैरागी बन कर तीर्थों पर स्नान करते हैं । गीत–नाद के माध्यम से वे प्रभु की कीर्ति का गान करते हैं । प्रभु के निर्भय नाम पर ही ध्यान लगाना चाहिए ॥ ३ ॥ मेरा स्वामी कृपालु

गुर के पैरे जीउ ॥ भ्रमु भउ काटि कीए निरवैरे जीउ ॥ गुर मन की आस पूराई जीउ ॥ ४ ॥ जिनि नाउ पाइआ सो धनवंता जीउ ॥ जिनि प्रभु धिआइआ सु सोभावंता जीउ ॥ जिसु साधू संगति तिसु सभ सुकरणी जीउ ॥ जन नानक सहजि समाई जीउ ॥ ५ ॥ १ ॥ १६६ ॥ गउड़ी महला ५ माझ ॥ आउ हमारै राम पिआरे जीउ ॥ रैणि दिनसु सासि सासि चितारे जीउ ॥ संत देउ संदेसा पै चरणारे जीउ ॥ तुधु बिनु कितु बिधि तरीऐ जीउ ॥ १ ॥ संगि तुमारै मै करे अनंदा जीउ ॥ वणि तिणि त्रिभवणि सुख परमानंदा जीउ ॥ सेज सुहावी इहु मनु बिगसंदा जीउ ॥ पेखि दरसनु इहु सुखु लहीऐ जीउ ॥ २ ॥ चरण पखारि करी नित सेवा जीउ ॥ पूजा अरचा बंदन देवा जीउ ॥ दासनि दासु नामु जपि लेवा जीउ ॥ बिनउ ठाकुर पहि कहीऐ जीउ ॥ ३ ॥ इछ पुंनी मेरी मनु तनु हरिआ जीउ ॥ दरसन पेखत सभ दुख परहरिआ जीउ ॥ हरि हरि नामु जपे जपि तरिआ जीउ ॥ इहु अजरु नानक सुखु सहीऐ जीउ ॥ ४ ॥ २ ॥ १६७ ॥ गउड़ी माझ महला ५ ॥ सुणि सुणि साजन मन मित पिआरे जीउ ॥ मनु तनु तेरा इहु जीउ भि वारे जीउ ॥ विसरु नाही प्रभ प्राण अधारे जीउ ॥ सदा तेरी सरणाई जीउ ॥ १ ॥ जिसु मिलिऐ मनु जीवै भाई जीउ ॥ गुर परसादी सो हरि हरि पाई जीउ ॥ सभ किछु प्रभ का प्रभ कीआ जाई जीउ ॥ प्रभ कउ सद बलि जाई जीउ ॥ २ ॥ एहु निधानु जपै वडभागी जीउ ॥ नाम निरंजन एक लिव लागी जीउ ॥ गुरु पूरा पाइआ सभु दुखु मिटाइआ जीउ ॥ आठ पहर गुण गाइआ जीउ ॥ ३ ॥ रतन पदारथ हरि नामु तुमारा जीउ ॥ तूं सचा साहु भगतु वणजारा जीउ ॥ हरि धनु रासि सचु वापारा जीउ ॥ जन नानक सद बलिहारा जीउ ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६८ ॥

रागु गउड़ी माझ महला ५   १ओ सतिगुर प्रसादि ॥

तूं मेरा बहु माणु करते तूं मेरा बहु माणु ॥ जोरि तुमारै सुखि वसा सचु सबदु नीसाणु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभे गला जातीआ सुणि कै चुप कीआ ॥ कद ही सुरति न लधीआ माइआ मोहड़िआ ॥ १ ॥ देइ

हुआ है और गुरु के चरणों में लगकर हम पतित लोग भी पवित्र हो गए हैं। गुरु ने भ्रम एवं भय समाप्त कर हमें बैर–भाव से मुक्त कर दिया है और मन की आशा पूर्ण कर दी है ॥ ४ ॥ जिसको नाम प्राप्त हो गया है वह धनवान है और जिसने प्रभु का सुमिरन किया है वही शोभायुक्त है। जो साधु–संगत में है उसके सभी कार्य अच्छे हैं। हे नानक, प्रभु का ऐसा सेवक पूर्ण ज्ञान एवं स्थिरता वाली स्थिति में समा जाता है ॥ ५ ॥ १ ॥ १६६ ॥ गउड़ी महला ५ माझ ॥ हे मेरे प्यारे प्रभु, मेरे मन में निवास करो। हम तुम्हारा दिन–रात प्रत्येक श्वास् के साथ सुमिरन करते हैं। शान्त पुरुषों के माध्यम से मैं चरणों में गिर कर सन्देश भेज रहा हूँ। तेरे बिना कैसे संसार–सागर से तैरा जा सकता है ॥ १ ॥ तुम्हारे साथ बने रहकर ही मैंने आनन्द को भोगा है और मुझे वन, तृण एवं तीनों लोकों में प्रभु का सुख ही सुख दिखाई देता है। संसार रूपी तेरी शय्या को देखकर यह मन खिला रहता है और तुम्हारे दर्शन करके ही यह सुख प्राप्त किया जाता है ॥ २ ॥ तुम्हारे चरण धोकर सदैव तुम्हारी सेवा करूँगा और तुम्हारी पूजा अर्चना, वन्दना आदि मेरे लिए यही है कि तुम्हारे दासों का दास होकर मैं नाम सुमिरन कर लेता हूँ। मेरी सारी विनती उस स्वामी के सामने ही है ॥ ३ ॥ मेरी इच्छा पूरी हो गई, मेरा मन, तन खिल उठा और प्रभु दर्शन करते ही मेरे सभी दुख दूर हो गए हैं। प्रभु के नाम–सुमिरन से ही संसार–सागर को तैरा जाता है एवं हे नानक, इस असह्यनीय सुख को सहा (भोगा) जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ १६७ ॥ गउड़ी माझ महला ५ ॥ हे मेरे मन के मीत साजन, मेरी बात सुन। यह मन तन सब तेरा ही है और मैं तुझ पर अपने प्राण भी कुर्बान कर देता हूँ। हे मेरे प्राणों के आधार, तू मुझे कभी भी विस्मृत न हो। मैं सदैव तेरी शरण में ही हूँ ॥ १ ॥ हे भाई, जिसे मिलने से यह मन जीवित बना रहता है अर्थात वास्तविक जीवन जीता है वह प्रभु गुरु की कृपा से ही प्राप्त होता है। सब कुछ प्रभु का ही है और प्रभु ने ही सभी स्थानों की रचना की है। मैं प्रभु पर सदैव बलिहारी जाता हूँ ॥ २ ॥ भाग्यशाली व्यक्ति ही नाम रूपी खज़ाने का सुमिरन करता है और उसकी लौ एक निरंजन प्रभु के नाम में ही लगी रहती है। पूर्ण–गुरु पा लेने पर सभी दुख मिट जाते हैं और आठों प्रहर प्रभु के गुण गाए जाते हैं ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तुम्हारा नाम रत्न जैसा मूल्यवान है। तू ही सच्चा साहूकार है और भक्त तेरे साथ ही कार्य–व्यापार करते हैं। प्रभु रूपी धन उनकी पूंजी है और उनका व्यापार सत्य का व्यापार है। दास नानक सदैव उन पर बलिहारी जाता है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १६८ ॥

रागु गउड़ी माझ महला ५   १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे कर्ता प्रभु, मुझे तुझ पर ही बहुत अधिक गर्व है। तुम्हारे बल के आश्रय में ही मैं सुख पूर्वक बसता हूँ और सत्य शब्द के अनुरूप जीवन यापन करने का निशान (प्रभु का स्वीकृति चिन्ह) मुझ पर अंकित हो गया है ॥१॥ रहाउ॥ सब कुछ जान बूझ कर मैंने लापरवाही की है। मैं कभी भी होश में नहीं आया और सदैव माया से मोहित बना रहा॥१॥

बुझारत सारता से अखी डिठड़िआ ॥ कोई जि मूरखु लोभीआ मूलि न सुणी कहिआ ॥ २ ॥ इकसु दुहु चहु किआ गणी सभ इकतु सादि मुठी ॥ इकु अधु नाइ रसीअड़ा का विरली जाइ वुठी ॥ ३ ॥ भगत सचे दरि सोहदे अनद करहि दिन राति ॥ रंगि रते परमेसरै जन नानक तिन बलि जात ॥ ४ ॥ १ ॥ १६९ ॥ गउड़ी महला ५ मांझ ॥ दुख भंजनु तेरा नामु जी दुख भंजनु तेरा नामु ॥ आठ पहर आराधीऐ पूरन सतिगुर गिआनु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जितु घटि वसै पारब्रहमु सोई सुहावा थाउ ॥ जम कंकरु नेड़ि न आवई रसना हरि गुण गाउ ॥ १ ॥ सेवा सुरति न जाणीआ ना जापै आराधि ॥ ओट तेरी जगजीवना मेरे ठाकुर अगम अगाधि ॥ २ ॥ भए क्रिपाल गुसाईआ नठे सोग संताप ॥ तती वाउ न लगई सतिगुरि रखे आपि ॥ ३ ॥ गुरु नाराइणु दयु गुरु गुरु सचा सिरजणहारु ॥ गुरि तुठै सभ किछु पाइआ जन नानक सद बलिहार ॥ ४ ॥ २ ॥ १७० ॥ गउड़ी माझ महला ५ ॥ हरि राम राम राम रामा ॥ जपि पूरन होए कामा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम गोबिंद जपेदिआ होआ मुखु पवित्रु ॥ हरि जसु सुणीऐ जिस ते सोई भाई मित्रु ॥ १ ॥ सभि पदारथ सभि फला सरब गुणा जिसु माहि ॥ किउ गोबिंदु मनहु विसारीऐ जिसु सिमरत दुख जाहि ॥ २ ॥ जिसु लड़ि लगिऐ जीवीऐ भवजलु पईऐ पारि ॥ मिलि साधू संगि उधारु होइ मुख ऊजल दरबारि ॥ ३ ॥ जीवन रूप गोपाल जसु संत जना की रासि ॥ नानक उबरे नामु जपि दरि सचै साबासि ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७१ ॥ गउड़ी माझ महला ५ ॥ मीठे हरि गुण गाउ जिंदू तूं मीठे हरि गुण गाउ ॥ सचे सेती रतिआ मिलिआ निथावे थाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ होरि साद सभि फिकिआ तनु मनु फिका होइ ॥ विणु परमेसर जो करे फिटु सु जीवणु सोइ ॥ १ ॥ अंचलु गहि कै साध का तरणा इहु संसारु ॥ पारब्रहमु आराधीऐ उधरै सभ परवारु ॥ २ ॥ साजनु बंधु सुमित्रु सो हरि नामु हिरदै देइ ॥ अउगण सभि मिटाइ कै परउपकारु करेइ ॥ ३ ॥ मालु खजाना थेहु घरु हरि के चरण निधान ॥ नानकु जाचकु दरि तेरै प्रभ तुध नो मंगै दानु ॥ ४ ॥ ४ ॥ १७२ ॥

प्रभु यह संकेत देता रहता है कि माया झूठ है और जीव आँखों से देख भी लेता है । यह ऐसा मूर्ख और लोभी है कि बिल्कुल सुनता ही नहीं ॥ २ ॥ एक, दो, चार की क्या गिनती गिनूँ सब एक ही माया के स्वाद में ठगे जा रहे हैं । जहां कोई एकाध प्रभु नाम का रसिक है ऐसा स्थान कोई बिरला ही है ॥ ३ ॥ तेरे भक्त तेरे सच्चे द्वार पर शोभायमान बने रहते हैं और दिन–रात आनन्दित होते रहते हैं । जो प्रभु के रंग में रंगे रहते हैं दास नानक ऐसे भक्तों पर बलिहारी जाता है ॥ ४ ॥ १ ॥ १६९ ॥ गउड़ी महला ५ मांझ ॥ हे प्रभु, तेरा नाम दुखों का नाश करने वाला है । उसका सुमिरन आठों प्रहर करते रहना चाहिए और पूर्ण सद्गुरु से उसका ज्ञान प्राप्त करना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस शरीर में परब्रहम का निवास है वही शरीर रूपी स्थान सुहावना है। जीभ से प्रभु का गुणानुवाद करो जिससे यम का दूत तेरे पास भी नहीं आ सकता ॥ १ ॥ मेरी सुरति ने न तो सेवा को जाना है और न ही सुमिरन को जाना है । हे मेरे अगम्य, अथाह संसार को जीवन देने वाले प्रभु, मुझे केवल तेरा ही आसरा है ॥ २ ॥ जब प्रभु कृपालु हो गया है तो शोक एवं संताप भाग खड़े हुए हैं । जिसे परमात्मा स्वयं बचा लेता है उसे थोड़ी सी गर्म हवा तक भी स्पर्श नहीं कर पाती अर्थात उसे तनिक सा दुख भी नहीं लगता ॥ ३ ॥ वह प्रभु ही पूज्य है और गुरु है ॥ वह सच्चा सृजनहार प्रभु ही गुरु है । गुरु के प्रसन्न होने पर सब कुछ प्राप्त हो जाता है और दास नानक सदैव उस पर बलिहारी जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ १७० ॥ गउड़ी माझ महला ५ ॥ जिसका सुमिरन करने से सभी कामनाएं पूर्ण हो गई हैं वह प्रभु ही सर्वत्र रमण करने वाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राम रूपी प्रभु का सुमिरन करने से मुख पवित्र हो जाता है । जिससे भी हरि–यश सुना जाता है वही वास्तव में हमारा भाई और मित्र है ॥ १ ॥ जिसके पास सभी पदार्थ, सभी फल और सभी गुण हैं; ऐसे धरती के आश्रय प्रभु को क्यों मन से विस्मृत किया जाए जिसके सुमिरन से सभी दुख दूर हो जाते हैं ॥ २ ॥ जिसके पीछे लगने से जीवन मिलता है और संसार–सागर से पार जाया जाता है ऐसे साधु रूपी प्रभु को मिलने से उद्धार होता है और परलोक में मुख उज्जवल बना रहता है ॥ ३ ॥ शान्त पुरुषों की रास पूँजी और प्राण प्रभु–यश गायन ही है । हे नानक, वे नाम सुमिरन के फलस्वरूप ही उबर जाते हैं और प्रभु के सत्य द्वार पर उन्हें शाबाशी मिलती है ॥ ४ ॥ ३ ॥ १७१ ॥ गउड़ी माझ महला ५ ॥ हे मेरे जीव, तू सदैव प्रभु के मीठे लगने वाले गुणों का गुणानुवाद कर । सत्य में लीन बने रहने से निराश्रित व्यक्ति को भी आसरा मिल जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अन्य सभी स्वाद फीके हैं और उनसे तन एवं मन भी फीका हो जाता है । परमेश्वर से विमुख होकर जो कोई कुछ भी करता है उसका जीवन धिक्कार योग्य है ॥ १ ॥ साधक व्यक्ति का आंचल पकड़ कर इस संसार–सागर को तैरा जाता है और परब्रहम का सुमिरन करने से सारे परिवार का ही उद्धार हो जाता है ॥ २ ॥ जो प्रभु नाम को हृदय में स्थापित करे वही साजन है, वही बंधु है और वही अच्छा मित्र है । वह सभी अवगुणों को मिटाकर परोपकार करता चला जाता है ॥ ३ ॥ प्रभु का चरण रूपी खज़ाना ही माल, धन का विशाल भण्डार है । हे प्रभु, यह याचक नानक तेरे द्वार पर खड़ा है और तुझसे (तेरे नाम का ही) दान माँग रहा है ॥ ४ ॥ ४ ॥ १७२॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी महला ९ ॥

साधो मन का मानु तिआगउ ॥ कामु क्रोधु संगति दुरजन की ता ते अहिनिसि भागउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुखु दुखु दोनो सम करि जानै अउरु मानु अपमाना ॥ हरख सोग ते रहै अतीता तिनि जगि ततु पछाना ॥ १ ॥ उसतति निंदा दोऊ तिआगै खोजै पदु निरबाना ॥ जन नानक इहु खेलु कठनु है किनहूं गुरमुखि जाना ॥ २ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ साधो रचना राम बनाई ॥ इकि बिनसै इक असथिरु मानै अचरजु लखिओ न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम क्रोध मोह बसि प्रानी हरि मूरति बिसराई ॥ झूठा तनु साचा करि मानिओ जिउ सुपना रैनाई ॥ १ ॥ जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाई ॥ जन नानक जगु जानिओ मिथिआ रहिओ राम सरनाई ॥ २ ॥ २ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ प्रानी कउ हरि जसु मनि नही आवै ॥ अहिनिसि मगनु रहै माइआ मै कहु कैसे गुन गावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूत मीत माइआ ममता सिउ इह बिधि आपु बंधावै ॥ म्रिग त्रिसना जिउ झूठो इहु जग देखि तासि उठि धावै ॥ १ ॥ भुगति मुकति का कारनु सुआमी मूड़ ताहि बिसरावै ॥ जन नानक कोटन मै कोऊ भजनु राम को पावै ॥ २ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ साधो इहु मनु गहिओ न जाई ॥ चंचल त्रिसना संगि बसतु है या ते थिरु न रहाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कठन करोध घट ही के भीतरि जिह सुधि सभ बिसराई ॥ रतनु गिआनु सभ को हिरि लीना ता सिउ कछु न बसाई ॥ १ ॥ जोगी जतन करत सभि हारे गुनी रहे गुन गाई ॥ जन नानक हरि भए दइआला तउ सभ बिधि बनि आई ॥ २ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ साधो गोबिंद के गुन गावउ ॥ मानस जनमु अमोलकु पाइओ बिरथा काहि गवावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पतित पुनीत दीन बंध हरि सरनि ताहि तुम आवउ ॥ गज को त्रासु मिटिओ जिह सिमरत तुम काहे बिसरावउ ॥ १ ॥ तजि अभिमान मोह माइआ फुनि भजन राम चितु लावउ ॥ नानक कहत मुकति पंथ इहु गुरमुखि होइ तुम पावउ ॥ २ ॥ ५ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ कोऊ माई

१ ओअंकार सतिगुरु प्रसादि ॥ रागु गउड़ी महला ९ ॥

हे साधुजनों, मन के अहंकार को त्याग दो और काम, क्रोध, दुर्जनों की संगत से रात–दिन दूर बने रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो सुख–दुख एवं मान–अपमान दोनों को समान भाव से स्वीकार करता है एवं हर्ष तथा शोक से अतीत बना रहता है, उसने ही वास्तव में इस संसार की वास्तविकता को पहचान लिया है ॥ १ ॥ वह स्तुति एवं निन्दा दोनों का त्याग करके परम पद को अर्थात निर्वाण को पा लेता है। परन्तु हे दास नानक, यह खेल बहुत ही कठिन है और कोई गुरमुख बनकर ही इसे जान पाता है ॥ २ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ हे साधु पुरुषो, यह रचना प्रभु ने ही बनाई है। यहाँ यह आश्चर्य समझ में नहीं आता कि कोई तो विनष्ट हो रहा है और कोई अपने आप को स्थिर मानकर बैठा हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम, क्रोध एवं मोह के वश में होकर जीव ने सौन्दर्य रूपी प्रभु को भुला दिया है। यह उस झूठे शरीर को सदा बना रहने वाला मान रहा है जैसा कि सोते समय रात में सपने को ही सच्चा माना जाता है। जो भी दृष्टमान है उसका बादल की छाया की तरह अन्त हो जाता है। दास नानक ने तो इस संसार को नश्वर जान लिया है और इसीलिए प्रभु की शरण में आ गया है ॥ २ ॥ २ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ व्यक्ति को हरि–यश की याद नहीं आती। यह गुणों का गायन भी कैसे करे क्योंकि यह रात–दिन प्रपंचों में लीन रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पुत्र, मित्र, अहंकार के जाल में यह स्वयं ही अपने आप को बाँधे रहता है और मृगतृष्णा जैसे इस झूठे संसार को देखकर उसकी ओर भागता रहता है ॥ १ ॥ भोग और मोक्ष के कारण प्रभु को यह मूर्ख भुला देता है। हे दास नानक, करोड़ों में कोई एक ही प्रभु का गुणानुवाद प्राप्त करता है ॥ २ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ हे साधु ज़नों, यह मन पकड़ में नहीं आता। इसके साथ तृष्णा सदैव बनी रहती है इसलिए यह शान्त नहीं होता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसके ही अन्दर भीषण क्रोध भरा हुआ है जिसने उसका सारा होश भुला दिया है। इसी क्रोध ने ज्ञान रूपी रत्न को चुरा लिया है और इसी कारण अब इसके कुछ भी वश में नहीं रह गया ॥ १ ॥ योगी भी सभी प्रयत्न करके हार चुके हैं और गुणी जन भी प्रभु का गुणानुवाद कर रहे हैं। हे नानक, जब प्रभु दयालु होता है तो सभी अच्छे संयोग बन जाते हैं ॥ २ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ हे साधुजनों प्रभु के गुण गाओ। यह अमूल्य मानव जन्म प्राप्त हुआ है इसे व्यर्थ में क्यों गँवा रहे हो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्राणी, तुम उस प्रभु की शरण में आ जाओ जो पतितों को पवित्र करने वाला दीन–बन्धु है जिसका सुमिरन करने से घड़ियाल के मुँह में फँसे गजराज का भय समाप्त हो गया; तुम उसके सुमिरन को क्यों भुलाते हो ॥ १ ॥ अभिमान, मोह, माया को त्याग कर प्रभु के सुमिरन में चित्त को लगाओ। हे नानक, सुमिरन ही मुक्ति का मार्ग है और गुरमुख बन कर तुम इस पर चलो ॥ २ ॥ ५ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ हे मां,

भूलिओ मनु समझावै ॥ बेद पुरान साध मग सुनि करि निमख न हरि गुन गावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुरलभ देह पाइ मानस की बिरथा जनमु सिरावै ॥ माइआ मोह महा संकट बन ता सिउ रुच उपजावै ॥ १ ॥ अंतरि बाहरि सदा संगि प्रभु ता सिउ नेहु न लावै ॥ नानक मुकति ताहि तुम मान्हु जिह घटि रामु समावै ॥ २ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ साधो राम सरनि बिसरामा ॥ बेद पुरान पड़े को इह गुन सिमरे हरि को नामा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लोभ मोह माइआ ममता फुनि अउ बिखिअन की सेवा ॥ हरख सोग परसै जिह नाहनि सो मूरति है देवा ॥ १ ॥ सुरग नरक अंम्रित बिखु ए सभ तिउ कंचन अरु पैसा ॥ उसतति निंदा ए सम जा कै लोभु मोहु फुनि तैसा ॥ २ ॥ दुखु सुखु ए बाधे जिह नाहनि तिह तुम जानउ गिआनी ॥ नानक मुकति ताहि तुम मानउ इह बिधि को जो प्रानी ॥ ३ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ मन रे कहा भइओ तै बउरा ॥ अहिनिसि अउध घटै नही जानै भइओ लोभ संगि हउरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो तनु तै अपनो करि मानिओ अरु सुंदर ग्रिह नारी ॥ इन मैं कछु तेरो रे नाहनि देखो सोच बिचारी ॥ १ ॥ रतन जनमु अपनो तै हारिओ गोबिंद गति नही जानी ॥ निमख न लीन भइओ चरनन सिंउ बिरथा अउध सिरानी ॥ २ ॥ कहु नानक सोई नरु सुखीआ राम नाम गुन गावै ॥ अउर सगल जगु माइआ मोहिआ निरभै पदु नही पावै ॥ ३ ॥ ८ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ नर अचेत पाप ते डरु रे ॥ दीन दइआल सगल भै भंजन सरनि ताहि तुम परु रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बेद पुरान जास गुन गावत ता को नामु हीऐ मो धरु रे ॥ पावन नामु जगति मै हरि को सिमरि सिमरि कसमल सभ हरु रे ॥ १ ॥ मानस देह बहुरि नह पावै कछू उपाउ मुकति का करु रे ॥ नानक कहत गाइ करुना मै भव सागर कै पारि उतरु रे ॥ २ ॥ ९ ॥ २५१ ॥

रागु गउड़ी असटपदीआ महला १ गउड़ी गुआरेरी १ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥ निधि सिधि निरमल नामु बीचारु ॥ पूरन पूरि रहिआ बिखु मारि ॥ त्रिकुटी छूटी बिमल मझारि॥

कोई मेरे भूले हुए मन को समझा दे । वेद, पुराण एवं साधना के मार्ग के बारे में सुनकर भी यह क्षण भर के लिए भी प्रभु के गुण नहीं गाता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुर्लभ मानव देह को पाकर भी यह अपने जन्म को व्यर्थ बना रहा है । माया–मोह के विकराल संकट वाले वन में इसकी रूचि बढ़ती ही रहती है ॥ १ ॥ जो प्रभु सदैव अन्दर–बाहर साथ बना रहता है यह मन उससे प्रेम नहीं लगाता ॥ हे नानक, उसी को ही तुम मुक्त हुआ मानों जिस शरीर में प्रभु का सुमिरन बसा रहता है ॥ २ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ हे साधु जनों, प्रभु की शरण ही वास्तविक विश्राम स्थल है । वेद, पुराण पढ़ने का यही लाभ होना चाहिए कि व्यक्ति प्रभु नाम का सुमिरन करे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस व्यक्ति को लोभ, मोह, माया, ममता, विषयों का सेवन, हर्ष, शोक आदि स्पर्श नहीं करते वही वास्तव में प्रभु के समान है ॥ १ ॥ स्वर्ग–नर्क, अमृत–विष, सोना–तांबा, स्तुति–निन्दा आदि को जो समान मानता है लोभ, मोह को भी वह वैसा ही जानता है ॥ २ ॥ जिसे सुख–दुख बाँध नहीं सकता उसे ही तुम ज्ञानवान समझो और जो ऐसा प्राणी हो, हे नानक, उसे ही तुम मुक्त व्यक्ति जानो ॥ ३ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ हे मन, तू ऐसा बावला क्यों हो गया है कि दिन–रात आयु घट रही है और तू यह भी नहीं जानता तथा लोभ में फँसकर तू अपने आप को तुच्छ बना रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस सुन्दर स्त्री, घर और शरीर को तूने अपना मान रखा है इनमें से तू विचार कर देख ले तेरा कुछ भी नहीं है ॥ १ ॥ तूने प्रभु की कार्य–प्रणाली (हुकुम) को नहीं जाना है और अपना रत्न रूपी जन्म गँवा दिया है । तू क्षण भर के लिए भी प्रभु–चरणों में लीन नहीं हुआ इसलिए तेरी आयु व्यर्थ ही बीत गई है ॥ २ ॥ हे नानक, जो राम–नाम के गुणों का गायन करता है वही व्यक्ति सुखी है तथा अन्य सारा संसार प्रपंचों में लिप्त बना हुआ अभय पद को प्राप्त नहीं कर पाता है ॥ ३ ॥ ८ ॥ गउड़ी महला ९ ॥ हे सोये हुए व्यक्ति, पापों से डर । वही दीन दयालु समस्त भय–भंजन प्रभु है; तुम उसकी शरण में पड़े रहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके गुण वेद पुराण भी गाते हैं उसी प्रभु के नाम को हृदय में धारण कर । संसार में प्रभु का नाम ही पावन है और तू उसी का सुमिरन कर कर के अपने सभी पापों को दूर कर ॥ १ ॥ तुझे मानव देह दुवारा नहीं मिल पाएगी इसलिए तू मुक्ति का कुछ उपाय कर ले । हे नानक, उस करुणामय प्रभु का गुणानुवाद करके भवसागर से पार उतर जा ॥ २ ॥ ९ ॥ २५१ ॥

रागु गउड़ी अष्टपदियां

महला १ गउड़ी गुआरेरी १ ओअंकार सतिनामु करता पुरखु गुरु प्रसादि ॥

निधियां और सिद्धियां वास्तव में निर्मल प्रभु के नाम का चिन्तन करना ही है । इसी से विष रूपी माया को समाप्त करके वह पूर्ण प्रभु सर्वत्र व्याप्त दिखता है । त्रिगुणात्मक माया पवित्र प्रभु में लीन होने से छूट गई है और गुरु की

गुर की मति जीइ आई कारि ॥ १ ॥ इन बिधि राम रमत मनु मानिआ ॥
गिआन अंजनु गुर सबदि पछानिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इकु सुखु मानिआ सहजि
मिलाइआ ॥ निरमल बाणी भरमु चुकाइआ ॥ लाल भए सूहा रंगु माइआ ॥
नदरि भई बिखु ठाकि रहाइआ ॥ २ ॥ उलट भई जीवत मरि जागिआ ॥
सबदि रवे मनु हरि सिउ लागिआ ॥ रसु संग्रहि बिखु परहरि तिआगिआ ॥
भाइ बसे जम का भउ भागिआ ॥ ३ ॥ साद रहे बादं अहंकारा ॥ चितु हरि
सिउ राता हुकमि अपारा ॥ जाति रहे पति के आचारा ॥ द्रिसटि भई सुखु
आतम धारा ॥ ४ ॥ तुझ बिनु कोइ न देखउ मीतु ॥ किसु सेवउ किसु देवउ
चीतु ॥ किसु पूछउ किसु लागउ पाइ ॥ किसु उपदेसि रहा लिव लाइ ॥ ५ ॥
गुर सेवी गुर लागउ पाइ ॥ भगति करी राचउ हरि नाइ ॥ सिखिआ दीखिआ
भोजन भाउ ॥ हुकमि संजोगी निज घरि जाउ ॥ ६ ॥ गरब गतं सुख आतम
धिआना ॥ जोति भई जोती माहि समाना ॥ लिखतु मिटै नही सबदु नीसाना ॥
करता करणा करता जाना ॥ ७ ॥ नह पंडितु नह चतुरु सिआना ॥ नह भूलो
नह भरमि भुलाना ॥ कथउ न कथनी हुकमु पछाना ॥ नानक गुरमति सहजि
समाना ॥ ८ ॥ १ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ मनु कुंचरु काइआ
उदिआनै ॥ गुरु अंकसु सचु सबदु नीसानै ॥ राज दुआरै सोभ सु मानै ॥ १ ॥
चतुराई नह चीनिआ जाइ ॥ बिनु मारे किउ कीमति पाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ घर
महि अंम्रितु तसकरु लेई ॥ नंनाकारु न कोइ करेई ॥ राखै आपि वडिआई देई ॥ २ ॥
नील अनील अगनि इक ठाई ॥ जलि निवरी गुरि बूझ बुझाई ॥ मनु दे लीआ
रहसि गुण गाई ॥ ३ ॥ जैसा घरि बाहरि सो तैसा ॥ बैसि गुफा महि आखउ
कैसा ॥ सागरि डूगरि निरभउ ऐसा ॥ ४ ॥ मूए कउ कहु मारे कउनु ॥ निडरे
कउ कैसा डरु कवनु ॥ सबदि पछानै तीने भउन ॥ ५ ॥ जिनि कहिआ तिनि कहनु
वखानिआ ॥ जिनि बूझिआ तिनि सहजि पछानिआ ॥ देखि बीचारि मेरा मनु
मानिआ ॥ ६ ॥ कीरति सूरति मुकति इक नाई ॥ तही निरंजनु रहिआ समाई ॥
निज घरि बिआपि रहिआ निज ठाई ॥ ७ ॥ उसतति करहि केते मुनि प्रीति ॥

मति आत्मा के लिए लाभदायक वन गई है ॥ १ ॥ इस प्रकार प्रभु–नाम में लीन होने से मन संतुष्ट हो गया है । शब्द–गुरु के माध्यम से मैंने ज्ञान रूपी अंजन को पहचान लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वास्तविक सुख यह मिला है कि सहजभाव में मैं लीन हो गया हूँ तथा निर्मल वाणी (शब्द) ने मेरा भ्रम दूर कर दिया है । माया के गाढ़े परन्तु कच्चे रंग को मैंने जान लिया है और इसलिए प्रेम के असली लाल रंग में रंग गया हूँ ॥ प्रभु की कृपा दृष्टि हो गई है और उसने माया के विष को रोक दिया है ॥ २ ॥ जीवन पलट गया है और जीवन में ही मरण के रहस्य को जानकर मैं जग उठा हूँ । मैंने शब्द के माध्यम से सुमिरन किया है और मेरा मन प्रभु में लीन हो गया है । अव वह नाम–रस का संग्रह करता है और विष को त्याग देता है । प्रभु के प्रेम में लीन होने से यम का भय भाग खड़ा हुआ है ॥ ३॥ स्वाद, विवाद एवं अहंकार आदि समाप्त हो गए हैं और अब यह चित्त उस प्रभु के अपार हुकुम में लीन हो गया है। जाति और लोक लाज के लिए किए हुए सभी कर्म पीछे छूट गए हैं और प्रभु की कृपा दृष्टि होने से आत्मा ने नित्य–सुख को धारण कर लिया है ॥ ४ ॥ हे मित्र प्रभु, तेरे बिना मैं किसी को भी नहीं देखता हूँ । इसलिए मैं अव किसका सुमिरन करूँ, किसको मन अर्पण करूँ, किससे पूछूँ, किसके पाँव पड़ूँ और किसके उपदेश में अपने ध्यान को जोड़ूँ॥५॥ गुरु का सुमिरन करो, गुरु के चरण पकड़ो और प्रभु के नाम में लीन होकर उसकी भक्ति की जानी चाहिए । प्रभु का प्रेम ही मेरे लिए शिक्षा, दीक्षा और भोजन है । उसके हुकुम में संयुक्त तथा लीन होकर ही अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हुआ जाता है ॥ ६ ॥ इस प्रकार अहंकार चला गया है और आत्मा में लीन होने का सुख प्राप्त हो गया है। मेरी ज्योति प्रज्जवलित हो उठी है और मैं परम–ज्योति में लीन हो गया हूँ ॥ यह प्रारम्भ में ही मेरे लेखों में लिखा हुआ था इसीलिए शब्द का चिन्ह मेरे तन मन पर अंकित हो उठा है । मैंने अव कर्त्ता और कारण को केवल एक प्रभु रूप में ही जान लिया है ॥ ७ ॥ अव मैं न तो पंडित और न ही चतुर–सयाना रह गया हूँ; न ही मैं भूला हुआ होकर भ्रमों में भटक रहा हूँ । मैंने हुकुम को पहचान लिया है इसलिए अव कुछ कहने को नहीं वचा है । हे नानक, गुरुमति के माध्यम से मैं सहज में लीन हो गया हूँ ॥ ८ ॥ १ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ शरीर रूपी जंगल में मन हाथी की तरह दौड़ता फिरता है । हाथी को वश में रखने के लिए ज्ञान (गुरु) अंकुश के समान है और ज्ञानवान मन पर ही सत्य शब्द का चिन्ह अंकित हो जाता है । तभी यह हाथी रूपी मन प्रभु द्वार पर शोभा प्राप्त करता है ॥ १ ॥ केवल चतुराई से प्रभु पहचाना नहीं जा सकता और मन को वश किए विना प्रभु के रहस्य को जाना नहीं जा सकता है । शरीर रूपी घर में ही अमृत है जिसे चोर लूट रहा है और कोई भी उसको रोकता नहीं । वह प्रभु ही रक्षा कर सकता है और बड़प्पन प्रदान करता है ॥ २ ॥ संख्याओं से भी परे की गणना वाली तृष्णा रूपी अग्नि जो मन में इक्ट्ठी हुई थी वह विचार रूपी जल से शान्त हो गई है और गुरु के माध्यम से ही यह पहेली सुलझी है । अव मन गुरु को अर्पण करके यह स्थिति प्राप्त की गई है और प्रसन्न होकर प्रभु के गुण गाए गए हैं ॥ ३ ॥ गुफाओं में वैठकर मैं उसका क्या कथन करूँ क्योंकि वह तो घर–वाहर समान रूप से व्याप्त है । सागर और पर्वतों पर भी वह निर्भय प्रभु उसी तरह से व्याप्त है ॥४॥ जीवित भाव से मरे हुए को अव और कौन मार सकता है और जो निडर हो चुका है अव उसे और किस बात का डर हो सकता है । जो शब्द के माध्यम से प्रभु को पहचानता है उसे वह तीनों लोकों में ही व्याप्त दिखाई देता है ॥५॥ जो केवल कहता है वह अपने कहे हुए को ही वढ़ाता चढ़ाता रहता है परन्तु जिसने उसके रहस्य को बूझ लिया है उसी ने ही सहज भाव के माध्यम से उसको पहचान लिया है । उसको देखने और उसका चिन्तन करने से मेरा मन संतुष्ट हो उठा है ॥६॥ प्रसिद्धि, अच्छा रूप एवं मुक्ति उस प्रभु के एक नाम में ही निहित हैं क्योंकि उस नाम में ही निरंजन रूपी प्रभु बसा रहता है । वह अपने स्वरूप में ही अपने ही स्थान पर अर्थात् सारे विश्व में व्याप्त बना रहता है ॥७॥ तन, मन और चित्त को स्वच्छ करके अनेकों मुनिजन प्रीतिपूर्वक उसकी स्तुति करते हैं।

तनि मनि सूचै साचु सु चीति ॥ नानक हरि भजु नीता नीति ॥ ८ ॥ २ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ ना मनु मरै न कारजु होइ ॥ मनु वसि दूता दुरमति दोइ ॥ मनु मानै गुर ते इकु होइ ॥ १ ॥ निरगुण रामु गुणह वसि होइ ॥ आपु निवारि बीचारे सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु भूलो बहु चितै विकारु ॥ मनु भूलो सिरि आवै भारु ॥ मनु मानै हरि एकंकारु ॥ २ ॥ मनु भूलो माइआ घरि जाइ ॥ कामि बिरूधउ रहै न ठाइ ॥ हरि भजु प्राणी रसन रसाइ ॥ ३ ॥ गैवर हैवर कंचन सुत नारी ॥ बहु चिंता पिड़ चालै हारी ॥ जूऐ खेलणु काची सारी ॥ ४ ॥ संपउ संची भए विकार ॥ हरख सोक उभे दरवारि ॥ सुखु सहजे जपि रिदै मुरारि ॥ ५ ॥ नदरि करे ता मेलि मिलाए ॥ गुण संग्रहि अउगण सबदि जलाए ॥ गुरमुखि नामु पदारथु पाए ॥ ६ ॥ बिनु नावै सभ दूख निवासु ॥ मनमुख मूड़ माइआ चित वासु ॥ गुरमुखि गिआनु धुरि करमि लिखिआसु ॥ ७ ॥ मनु चंचलु धावतु फुनि धावै ॥ साचे सूचे मैलु न भावै ॥ नानक गुरमुखि हरि गुण गावै ॥ ८ ॥ ३ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ हउमै करतिआ नह सुखु होइ ॥ मनमति झूठी सचा सोइ ॥ सगल बिगूते भावै दोइ ॥ सो कमावै धुरि लिखिआ होइ ॥ १ ॥ ऐसा जगु देखिआ जूआरी ॥ सभि सुख मागै नामु बिसारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अदिसटु दिसै ता कहिआ जाइ ॥ बिनु देखे कहणा बिरथा जाइ ॥ गुरमुखि दीसै सहजि सुभाइ ॥ सेवा सुरति एक लिव लाइ ॥ २ ॥ सुखु मांगत दुखु आगल होइ ॥ सगल विकारी हारु परोइ ॥ एक बिना झूठे मुकति न होइ ॥ करि करि करता देखै सोइ ॥ ३ ॥ त्रिसना अगनि सबदि बुझाए ॥ दूजा भरमु सहजि सुभाए ॥ गुरमती नामु रिदै वसाए ॥ साची बाणी हरि गुण गाए ॥ ४ ॥ तन महि साचो गुरमुखि भाउ ॥ नाम बिना नाही निज ठाउ ॥ प्रेम पराइण प्रीतम राउ ॥ नदरि करे ता बूझै नाउ ॥ ५ ॥ माइआ मोहु सरब जंजाला ॥ मनमुख कुचील कुछित बिकराला ॥ सतिगुरु सेवे चूकै जंजाला ॥ अंम्रित नामु सदा सुखु नाला ॥ ६ ॥ गुरमुखि बूझै एक लिव लाए ॥ निज घरि वासै साचि समाए ॥ जंमणु मरणा ठाकि रहाए ॥ पूरे गुर ते इह मति पाए ॥ ७ ॥ कथनी

हे नानक, सदैव प्रभु का ही सुमिरन करता रह ॥ ८ ॥ २ ॥ गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ जब तक मन विषय विकारों की ओर से नहीं मरता तब तक व्यक्ति का जीवन उद्देश्य पूरा नहीं होता । मन तो काम आदि और दुर्मति के वश में बना रहता है । मन की संतुष्टि गुरु से ही होती है और वह एक प्रभु का रूप ही हो जाता है ॥ १ ॥ निर्गुण प्रभु अच्छे गुणों के वश में रहता है और इस तथ्य पर वही चिन्तन करता है जिसने अहमं भाव समाप्त कर दिया होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ भटकता हुआ मन अनेक विकारों में लीन बना रहता है और इस भूले हुए मन पर पापों का बोझ बढ़ता ही जाता है । परन्तु यदि मन संतुष्ट हो जाए तो वह एक हरि रूप ही हो जाता है ॥ २ ॥ भूला हुआ मन प्रपंचों वाले स्थान पर टिका रहता है । वह काम में उलझा हुआ कोई भी ठिकाना नहीं प्राप्त कर पाता है । हे प्राणी, तू रसपूर्वक अपनी जीभ से प्रभु का भजन कर ॥ ३ ॥ हाथी, घोड़े, सोना, पुत्र और नारी की अत्यधिक चिन्ता में ही पड़ा हुआ व्यक्ति संसार रूपी मैदान में हार जाता है क्योंकि इस जुए को खेलने की सभी गोटें वास्तव में नाशवान होती हैं ॥४॥ सम्पत्ति को जोड़ने से विकार पैदा होते हैं और दुख–सुख सदैव दरवाजे पर ही खड़े रहते हैं । वास्तविक सुख सहजभाव में और हृदय में प्रभु का सुमिरन करने में ही होता है ॥ ५ ॥ वह कृपा–दृष्टि करे तो अपने में मिला लेता है और व्यक्ति गुणों का संग्रह करता है तथा अवगुणों को शब्द के माध्यम से जला देता है । वह गुरमुख बन कर ही नाम रूपी सम्पत्ति प्राप्त करता है ॥ ६ ॥ नाम के बिना दुखों में ही निवास करता है । मन के पीछे चलने वाले मूर्ख मनमुख व्यक्ति का चित्त सदैव माया में ही लीन बना रहता है । यदि शुरू से ही भाग्य में लिखा हो तो गुरमुख बनकर ज्ञान प्राप्ति होती है ॥ ७ ॥ यह चंचल मन दौड़ता रहता है और इधर–उधर भागता रहता है । जो सच्चे और पवित्र होते हैं उन्हें संसार की माया रूपी मैल अच्छी नहीं लगती । हे नानक, गुरमुख बन कर ही हरि का गुणानुवाद होता है ॥८॥३॥ गउड़ी गुआरेरी महला १ ॥ अहंकार भाव में रहकर सुख नहीं मिलता । अपने मन की मति झूठी है और वह प्रभु ही सच्चा है । द्वैत भाव को चाहने वाले समस्त जीव ख्वार ही होते हैं । जीव वही करता है जो शुरू से उसके लिए लिखा होता है ॥ १ ॥ मैंने ऐसा चालबाज़ संसार देखा है जो प्रभु–नाम को भुला कर संसार के सभी सुखों को मांगता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अदृष्ट प्रभु यदि ज्ञान की आंखों से दिखाई दे जाए तब भी उसके बारे कुछ कहा नहीं जा सकता परन्तु उसको देखे बिना तो कुछ भी कहना व्यर्थ है । गुरमुख बनकर वह सहज स्वाभाविक रूप से ही दिख जाता है और जीव को सेवा सुमिरन में लीन कर देता है ॥ २ ॥ सुख मांगने से दुख बहुत ज्यादा मिल जाता है और व्यक्ति सभी विकारों को गले की माला की तरह धारण कर लेता है । उसे प्रभु के बिना झूठा आचरण रखते हुए मुक्ति नहीं मिलती और वह कर्त्ता–प्रभु सब को पैदा करके सब की देखभाल स्वयं करता है ॥ ३ ॥ तृष्णा रूपी अग्नि शब्द ही बुझाता है और द्वैत के भ्रम में पड़े हुओं को सहज स्वभाव से पहचान करा देता है । गुरु की मति में रहने वाला व्यक्ति प्रभु–नाम को हृदय में धारण करता है और सच्चे शब्द (वाणी) के माध्यम से प्रभु का गुणानुवाद करता है ॥४॥ जिनका गुरु के माध्यम से सत्य के साथ प्रेम बन गया है वे जानते हैं कि प्रभु–नाम के बिना अपने वास्तविक स्थान का पता नहीं लगता । प्रियतम राजा प्रभु प्रेम के ही वश में रहता है और यदि कृपा करे तो व्यक्ति नाम के रहस्य को जान लेता है ॥५॥ माया–मोह सभी जंजाल हैं और इनमें लीन मनमुख व्यक्ति गन्दा, निन्दित एवं डरावना बना रहता है। यदि वह सद्गुरु का सुमिरन करे तो उसके सभी जंजाल चुक जाते हैं और सदा सुख देने वाला अमृत रूपी नाम उसके साथ बना रहता है॥६॥ गुरमुख रहस्य को जानता है और एक प्रभु में ही सुरति लगाता है । वह अपने वास्तविक घर में बसता है और सत्य में लीन बना रहता है । वह आवागमन को रोक लेता है और पूर्ण गुरु से ही इस विद्या को प्राप्त करता है ॥ ७॥

कथउ न आवै ओरु ॥ गुरु पुछि देखिआ नाही दरु होरु ॥ दुखु सुखु भाणै तिसै रजाइ ॥ नानकु नीचु कहै लिव लाइ ॥ ८ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला १ ॥ दूजी माइआ जगत चित वासु ॥ काम क्रोध अहंकार बिनासु ॥ १ ॥ दूजा कउणु कहा नही कोई ॥ सभ महि एकु निरंजनु सोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दूजी दुरमति आखै दोइ ॥ आवै जाइ मरि दूजा होइ ॥ २ ॥ धरणि गगन नह देखउ दोइ ॥ नारी पुरख सबाई लोइ ॥ ३ ॥ रवि ससि देखउ दीपक उजिआला ॥ सरब निरंतरि प्रीतमु बाला ॥ ४ ॥ करि किरपा मेरा चितु लाइआ ॥ सतिगुरि मोकउ एकु बुझाइआ ॥ ५ ॥ एकु निरंजनु गुरमुखि जाता ॥ दूजा मारि सबदि पछाता ॥ ६ ॥ एको हुकमु वरतै सभ लोई ॥ एकसु ते सभ ओपति होई ॥ ७ ॥ राह दोवै खसमु एको जाणु ॥ गुर कै सबदि हुकमु पछाणु ॥ ८ ॥ सगल रूप वरन मन माही ॥ कहु नानक एको सालाही ॥ ९ ॥ ५ ॥ गउड़ी महला १ ॥ अधिआतम करम करे ता साचा ॥ मुकति भेदु किआ जाणै काचा ॥ १ ॥ ऐसा जोगी जुगति बीचारै ॥ पंच मारि साचु उरिधारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस कै अंतरि साचु वसावै ॥ जोग जुगति की कीमति पावै ॥ २ ॥ रवि ससि एको ग्रिह उदिआनै ॥ करणी कीरति करम समानै ॥ ३ ॥ एक सबद इक भिखिआ मागै ॥ गिआनु धिआनु जुगति सचु जागै ॥ ४ ॥ भै रचि रहै न बाहरि जाइ ॥ कीमति कउण रहै लिव लाइ ॥ ५ ॥ आपे मेले भरमु चुकाए ॥ गुर परसादि परम पदु पाए ॥ ६ ॥ गुर की सेवा सबदु वीचारु ॥ हउमै मारे करणी सारु ॥ ७ ॥ जप तप संजम पाठ पुराणु ॥ कहु नानक अपरंपर मानु ॥ ८ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला १ ॥ खिमा गही ब्रतु सील संतोखं ॥ रोगु न बिआपै ना जम दोखं ॥ मुकत भए प्रभ रूप न रेखं ॥ १ ॥ जोगी कउ कैसा डरु होइ ॥ रूखि बिरखि ग्रिहि बाहरि सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निरभउ जोगी निरंजनु धिआवै ॥ अनदिनु जागै सचि लिव लावै ॥ सो जोगी मेरै मनि भावै ॥ २ ॥ कालु जालु ब्रहम अगनी जारे ॥ जरा मरण गतु गरबु निवारे ॥ आपि तरै पितरी निसतारे ॥ ३ ॥ सतिगुरु सेवे सो जोगी होइ ॥ भै रचि रहै सु निरभउ होइ ॥ जैसा सेवै तैसो होइ ॥

उसका कथन करने से भी उसका ओर–छोर पता नहीं लगता । मैं गुरु से ही पूछता हूँ क्योंकि मेरे पास अन्य कोई द्वार नहीं है । विनम्र नानक ध्यानपूर्वक विचार कर यह कहता है कि सुख–दुख उसी की रज़ा में प्राप्त होता है ॥८॥४॥ गउड़ी महला १ ॥ माया ही द्वैतभाव है जो जगत के चित्त में बस रहा है और यह संसार काम, क्रोध अहंकार के कारण विनष्ट हो रहा है ॥ १ ॥ दूसरा किसे कहा जाए क्योंकि सब में तो एक प्रभु ही बसा हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह दुर्मति ही द्वैतभाव है जो सबको अलग–अलग कहती है और इस तरह जीव आवागमन में मरता हुआ द्वैतभाव वाला ही बन जाता है ॥ २ ॥ धरती आकाश में द्वैतभाव दिखाई नहीं देता और इसी तरह नारी पुरुष और समस्त लोगों में कोई दूसरापन नहीं है ॥ ३ ॥ सूरज–चांद दीपक के रूप में सर्वत्र प्रकाश देते हैं और सभी में वह प्रियतम यौवन वाला बनकर बसा रहता है ॥ ४ ॥ सद्गुरु ने मुझे एक ही प्रभु के मर्म को समझा दिया है और मेरा चित्त कृपा करके प्रभु में लगा दिया है ॥ ५ ॥ गुरमुख ही केवल एक निरंजन को जानता है और द्वैतभाव को मारकर शब्द के माध्यम से उसे पहचान लेता है ॥ ६ ॥ एक प्रभु का ही हुकम सभी लोकों में व्याप्त है और उस एक से ही सब की उत्पत्ति होती है ॥ ७ ॥ अन्तर्मन में ढूँढने और उसे बाहर ढूँढने के रास्ते तो चाहे दो हैं पर वह प्रभु एक ही है जिसके हुकम को शब्द–गुरु के माध्यम से पहचाना जाता है ॥ ८ ॥ जो समस्त आकारों, वर्णों, एवं मन में है, नानक कहता है कि केवल एक उसी का गुणानुवाद किया जाना चाहिए ॥ ९ ॥ ५ ॥ गउड़ी महला १ ॥ आध्यात्मिक कर्म करने वाला ही जीव सच्चा होता है । जो प्राणी व्यवहार में कच्चा है वह मुक्ति के रहस्य को क्या जान पाएगा ॥ १ ॥ योगी वही है जो ऐसी विधि को अपनाए कि पांचों दुष्टों को मारकर सत्य को हृदय में धारण कर ले ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिसके अन्तर्मन में सत्य बस जाता है वही योग–साधनाओं की कीमत को आंक पाता है ॥ २ ॥ उसको घर और वन, सूर्य की ऊष्णता और चन्द्रमा की ठण्डक एक जैसी ही दिखाई पड़ती है और प्रभु की कीर्ति का गायन करना उसका व्यवहार बन गया है ॥ ३ ॥ वह एक ही शब्द–गुरु को पकड़ता है और एक ही वस्तु मांगता है कि ज्ञान–ध्यान की युक्ति से उसके अन्दर सत्य की चेतना जग जाए ॥ ४ ॥ वह प्रभु के भय में बना रहता है और उससे बाहर नहीं जाता ॥ वह इस प्रकार सुरति को प्रभु में जोड़े रहता है कि उसका कोई भी मूल्य नहीं आंका जा सकता ॥ ५ ॥ भ्रम को समाप्त कर प्रभु स्वयं ही अपने में मिलाता है और व्यक्ति गुरु की कृपा से परम पद को प्राप्त कर लेता है ॥ ६ ॥ शब्द का चिन्तन करना ही गुरु की सेवा करना है और जो अहंकार को मार देता है उसको व्यवहार का सार तत्व समझ आ जाता है ॥ ७॥ जप, तप एवं पुराणों आदि का पाठ मन को संयमित करने की ही क्रिया है । नानक कहता है कि उस अपरंपर परमात्मा को मानने में ही यह सभी क्रियाएं आ जाती हैं ॥ ८ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला १ ॥ क्षमा को धारण करना ही व्रत है और संतुष्ट बने रहना ही शीलवान होना है । ऐसा व्यक्ति रोगी नहीं होता और उसे यम का भय भी नहीं रहता । ऐसे व्यक्ति ही रूप रेखा से परे प्रभु रूप हो जाते हैं ॥ १ ॥ योगी को भला कैसा डर ? क्योंकि घर, बाहर वृक्षों आदि में वह एक प्रभु ही विराजमान है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निर्भय योगी ही परमात्मा का सुमिरन करता है और रात दिन चेतना पूर्ण बनकर सत्य में अपनी सुरति को लीन करता है । ऐसा योगी ही मेरे मन को अच्छा लगता है ॥ २ ॥ वह ब्रह्म ज्ञान की अग्नि से काल के जाल को जला देता है और अहंकार को छोड़कर बुढ़ापा, मृत्यु आदि को पीछे छोड़ देता है । वह स्वयं तो पार होता ही है, अपने पूर्वजों का भी उद्धार कर देता है ॥ ३ ॥ जो सद्गुरु का सुमिरन करता है वही योगी होता है और जो प्रभु के भय में बना रहता है वही निर्भय होता है । व्यक्ति जैसा चित्त में सुमिरन करता है

४ ॥ नर निहकेवल निरभउ नाउ ॥ अनाथह नाथ करे बलि जाउ ॥ पुनरपि जनमु नाही गुण गाउ ॥ ५ ॥ अंतरि बाहरि एको जाणै ॥ गुर कै सबदे आपु पछाणै ॥ साचै सबदि दरि नीसाणै ॥ ६ ॥ सबदि मरै तिसु निज घरि वासा ॥ आवै न जावै चूकै आसा ॥ गुर कै सबदि कमलु परगासा ॥ ७ ॥ जो दीसै सो आस निरासा ॥ काम क्रोध बिखु भूख पिआसा ॥ नानक बिरले मिलहि उदासा ॥ ८ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला १ ॥ ऐसो दासु मिलै सुखु होई ॥ दुखु विसरै पावै सचु सोई ॥ १ ॥ दरसनु देखि भई मति पूरी ॥ अठसठि मजनु चरनह धूरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नेत्र संतोखे एक लिव तारा ॥ जिहवा सूची हरि रस सारा ॥ २ ॥ सचु करणी अभ अंतरि सेवा ॥ मनु त्रिपतासिआ अलख अभेवा ॥ ३ ॥ जह जह देखउ तह तह साचा ॥ बिनु बूझे झगरत जगु काचा ॥ ४ ॥ गुरु समझावै सोझी होई ॥ गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥ ५ ॥ करि किरपा राखहु रखवाले ॥ बिनु बूझे पसू भए बेताले ॥ ६ ॥ गुरि कहिआ अवरु नही दूजा ॥ किसु कहु देखि करउ अन पूजा ॥ ७ ॥ संत हेति प्रभि त्रिभवण धारे ॥ आतमु चीनै सु ततु बीचारे ॥ ८ ॥ साचु रिदै सचु प्रेम निवास ॥ प्रणवति नानक हम ता के दास ॥ ९ ॥ ८ ॥ गउड़ी महला १ ॥ ब्रहमै गरबु कीआ नही जानिआ ॥ बेद की बिपति पड़ी पछुतानिआ ॥ जह प्रभ सिमरे तही मनु मानिआ ॥ १ ॥ ऐसा गरबु बुरा संसारै ॥ जिसु गुरु मिलै तिसु गरबु निवारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बलि राजा माइआ अहंकारी ॥ जगन करै बहु भार अफारी ॥ बिनु गुर पूछे जाइ पइआरी ॥ २ ॥ हरीचंदु दानु करै जसु लेवै ॥ बिनु गुर अंतु न पाइ अभेवै ॥ आपि भुलाइ आपे मति देवै ॥ ३ ॥ दुरमति हरणाखसु दुराचारी ॥ प्रभु नाराइणु गरब प्रहारी ॥ प्रहलाद उधारे किरपा धारी ॥ ४ ॥ भूलो रावणु मुगधु अचेति ॥ लूटी लंका सीस समेति ॥ गरबि गइआ बिनु सतिगुर हेति ॥ ५ ॥ सहसबाहु मधु कीट महिखासा ॥ हरणाखसु ले नखहु बिधासा ॥ दैत संघारे बिनु भगति अभिआसा ॥ ६ ॥ जरासंधि कालजमुन संघारे ॥ रकतबीजु कालुनेमु बिदारे ॥ दैत संघारि संत निसतारे ॥ ७ ॥ आपे

वह वैसा ही हो जाता है ॥ ४ ॥ वह प्रभु निर्भय, पवित्र एवं बलशाली नाम–स्वरूप है । वह अनाथों को स्वामी बना देता है; मैं उस पर बलिहारी जाता हूँ । उसका गुणानुवाद करने से फिर जन्म–मरण नहीं होता ॥ ५ ॥ अन्दर बाहर जो उस एक प्रभु को ही जानता है और जिसने शव्द–गुरु के माध्यम से अपने आप को पहचान लिया है, सच्चे शब्द के माध्यम से प्रभु द्वार पर उसकी पहचान अंकित कर दी जाती है ॥ ६ ॥ शब्द में इच्छाओं के सन्दर्भ में मर जाने वाला व्यक्ति अपने वास्तविक ठिकाने पर निवास बना लेता है । उसका आवागमन और आशाएं चुक जाती हैं । शब्द–गुरु के माध्यम से ही उसका हृदय रूपी कमल खिल उठता है ॥ ७ ॥ कोई आशाओं में और कोई निराशाओं में डूबा हुआ दिखाई देता है । कईयों को काम, क्रोध रूपी विष की भूख और प्यास लगी हुई है । हे नानक, कोई विरले ही हैं जो सांसारिकता के प्रति उदासीन बने रहते हैं ॥ ८ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला १ ॥ मुझे ऐसा कोई प्रभु का सेवक मिल जाए जिसको मिलने से मुझे सुख मिले, मेरा दुख विस्मृत हो जाए और वह सत्य रूपी प्रभु प्राप्त हो जाए । ऐसे सेवक के दर्शन करके मेरी बुद्धि पूर्ण हो गई और उसकी चरण धूलि ही मेरे लिए अड़सठ तीर्थों का स्नान बन गई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उस एक प्रभु में सुरति लग जाने से मेरे नेत्र तृप्त होकर बन्द हो गए हैं और हरि रस को गृहण करके मेरी जीभ पवित्र हो गई है ॥ २ ॥ जिनका व्यवहार सच्चा है और अन्तर्मन में सेवा की भावना है उनका मन अलख एवं सभी रहस्यों से परे रहने वाले प्रभु के दर्शन के कारण तृप्त हो गया है ॥ ३ ॥ मैं जहां जहां देखता हूँ वहीं वहीं वह सत्य–प्रभु दिखाई देता है परन्तु उसे बूझे बिना यह नश्वर संसार आपस में ही झगड़ता रहता है ॥ ४ ॥ गुरु समझाता है तो सूझ–बुद्धि प्राप्त होती है और कोई बिरला गुरमुख बनकर ही उसे बूझ पाता है ॥ ५ ॥ हे रक्षक प्रभु, कृपा कर हमारी रक्षा करो क्योंकि तुम्हें जाने बिना हम सब पशुओं की तरह वेताल बनकर रह गए हैं ॥ ६ ॥ गुरु ने यह बताया है कि परमात्मा के बिना अन्य दूसरा कोई भी (पूज्य) नहीं है फिर भला किसको देखकर मैं अन्य किसी की पूजा करूँ । शान्त पुरुषों के हित के लिए ही प्रभु ने तीनों लोकों को धारण किया है और यहां रहकर जो अपनी आत्मा को पहचान लेता है वही तत्व का विचार करने वाला माना जाता है ॥ ८ ॥ जिसके हृदय में सत्य है और जो सदा तत्व और प्रेम में ही विश्वास करता है नानक कहता है कि हम उसी के सेवक हैं ॥ ९ ॥ ८ ॥ गउड़ी महला १ ॥ ब्रह्मा ने अभिमान किया और प्रभु की शक्ति को नहीं पहचाना परन्तु वेदों के खो जाने की आपदा जब सिर पर आ पड़ी तव उसे पछतावा हुआ । जव उसने प्रभु का सुमिरन किया तभी उसका मन शान्त हुआ ॥ १ ॥ हे संसार वालो ऐसा अभिमान बुरा है । जिसे गुरु मिल जाता है उसका गर्व निवृत्त हो जाता है॥१॥ रहाउ ॥ राजा बलि को भी धन–सम्पदा का अहंकार हो गया था । वह यज्ञों के गर्व में फूला नहीं समाता था । गुरु की आज्ञा में न चलने से उसे भी अन्ततः पाताल में जाना पड़ा ॥ २ ॥ हरिशचन्द्र दान करता था और यश कमाता था परन्तु गुरु के बिना उसे भी रहस्यातीत प्रभु का पता नहीं चल सका । प्रभु स्वयं ही भुलवाता है और स्वयं ही बुद्धि प्रदान करता है ॥ ३ ॥ दुराचारी हिरण्यकश्यप भी दुर्वुद्धि वाला था । नारायण प्रभु ने उसके गर्व का भी खण्डन किया और कृपा करके प्रहलाद का उद्धार किया ॥ ४ ॥ मूर्ख रावण प्रभु को भूल गया था इसी से उसके सिर समेत उसकी लंका लूट ली गई । सद्गुरु से प्रेम न रखने के कारण वह अहंकार में ही नष्ट हो गया ॥ ५ ॥ सहस्त्रबाहु, मधु कैटभ, महिषासुर आदि भी नष्ट हो गए । हिरण्यकश्यप को तो नाखूनों से ही फाड़ दिया गया । इन सभी दैत्यों का भक्ति–विहीन होने के कारण संहार हुआ ॥ ६ ॥ ज़रासन्ध, कालयमुन भी मारे गए और रक्तबीज, कालनेमि आदि दैत्य भी नष्ट हो गए । प्रभु ने दैत्यों का संहार कर सन्तों का उद्धार किया ॥ ७ ॥ स्वयं प्रभु ही सद्गुरु बनकर

सतिगुरु सबदु बीचारे ॥ दूजे भाइ दैत संघारे ॥ गुरमुखि साचि भगति निसतारे ॥ ८ ॥ बूडा दुरजोधनु पति खोई ॥ रामु न जानिआ करता सोई ॥ जन कउ दूखि पचै दुखु होई ॥ ९ ॥ जनमेजै गुर सबदु न जानिआ ॥ किउ सुखु पावै भरमि भुलानिआ ॥ इकु तिलु भूले बहुरि पछुतानिआ ॥ १० ॥ कंसु केसु चांडूरु न कोई ॥ रामु न चीनिआ अपनी पति खोई ॥ बिनु जगदीस न राखै कोई ॥ ११ ॥ बिनु गुर गरबु न मेटिआ जाइ ॥ गुरमति धरमु धीरजु हरि नाइ ॥ नानक नामु मिलै गुण गाइ ॥ १२ ॥ ९ ॥ गउड़ी महला १ ॥ चोआ चंदनु अंकि चड़ावउ ॥ पाट पटंबर पहिरि हढावउ ॥ बिनु हरि नाम कहा सुखु पावउ ॥ १ ॥ किआ पहिरउ किआ ओढि दिखावउ ॥ बिनु जगदीस कहा सुखु पावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कानी कुंडल गलि मोतीअन की माला ॥ लाल निहाली फूल गुलाला ॥ बिनु जगदीस कहा सुखु भाला ॥ २ ॥ नैन सलोनी सुंदर नारी ॥ खोड़ सीगार करै अति पिआरी ॥ बिनु जगदीस भजे नित खुआरी ॥ ३ ॥ दर घर महला सेज सुखाली ॥ अहिनिसि फूल बिछावै माली ॥ बिनु हरि नाम सु देह दुखाली ॥ ४ ॥ हैवर गैवर नेजे वाजे ॥ लसकर नेब खवासी पाजे ॥ बिनु जगदीस झूठे दिवाजे ॥ ५ ॥ सिधु कहावउ रिधि सिधि बुलावउ ॥ ताज कुलह सिरि छत्रु बनावउ ॥ बिनु जगदीस कहा सचु पावउ ॥ ६ ॥ खानु मलूकु कहावउ राजा ॥ अबे तबे कूड़े है पाजा ॥ बिनु गुर सबद न सवरसि काजा ॥ ७ ॥ हउमै ममता गुर सबदि विसारी ॥ गुरमति जानिआ रिदै मुरारी ॥ प्रणवति नानक सरणि तुमारी ॥ ८ ॥ १० ॥ गउड़ी महला १ ॥ सेवा एक न जानसि अवरे ॥ परपंच बिआधि तिआगै कवरे ॥ भाइ मिलै सचु साचै सचु रे ॥ १ ॥ ऐसा राम भगतु जनु होई ॥ हरि गुण गाइ मिलै मलु धोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऊंधो कवलु सगल संसारै ॥ दुरमति अगनि जगत परजारै ॥ सो उबरै गुर सबदु बीचारै ॥ २ ॥ भ्रिंग पतंगु कुंचरु अरु मीना ॥ मिरगु मरै सहि अपुना कीना ॥ त्रिसना राचि ततु नही बीना ॥ ३ ॥ कामु चितै कामणि हितकारी ॥ क्रोधु बिनासै सगल विकारी ॥ पति मति खोवहि नामु

शब्द का चिन्तन करता है और द्वैतभाव वाले दैत्यों का संहार करता है । गुरमुखों को उनके सत्य और भक्ति के कारण संसार–सागर से पार उतार देता है । दुर्योधन भी अपना सम्मान गँवा कर संसार सागर में डूब गया क्योंकि उसने कर्त्ता राम (प्रभु) को नहीं जाना । जो प्रभु के सेवकों को दुख देता है वह स्वयं दुखी होकर ख्वार होता है ॥ ९ ॥ जनमेजय ने गुरु के उपदेश को नहीं माना । भ्रमों में भूला हुआ वह भला कैसे सुख पा सकता था । एक क्षण भर के लिए वह प्रभु को भूल गया और उसे बहुत पछताना पड़ा ॥ १० ॥ कंस, केशी, चाण्डूर आदि के समान कोई नहीं हुआ है । इन्होंने प्रभु को नहीं समझा और अपनी इज़्ज़त गँवा बैठे । संसार के स्वामी प्रभु के बिना कोई रक्षा नहीं कर सकता ॥ ११ ॥ गुरु के बिना अभिमान मिटता नहीं और गुरमति धारण करके हरि–नाम का सुमिरन करते हुए धर्म और धैर्य प्राप्त होते हैं । हे नानक, प्रभु नाम उसके गुणानुवाद से ही प्राप्त होता है ॥ १२ ॥ ९ ॥ गउड़ी महला १ ॥ इत्र, चन्दन शरीर पर लगाया जाए और रेशम के वस्त्र पहने जाएं तब भी प्रभु नाम के बिना सुख कहां प्राप्त होता है ॥ १ ॥ क्या पहनूँ और क्या ओढ़कर दिखाऊँ क्योंकि बिना परमात्मा के सुख भला कहां मिलता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कानों में कुण्डल, गले में मोतियों की माला, लाल कपड़े वाला फूलों से अंकित गद्दा आदि होने पर भी परमात्मा के बिना कहां सुख प्राप्त होता है ॥ २ ॥ सुन्दर नैनों वाली सुन्दर स्त्री, सोलह श्रृंगार करने पर अत्यन्त प्यारी लगती है परन्तु परमात्मा के सुमिरन से विहीन होने पर उसके साथ किया हुआ रमण सदैव ख्वार करने वाला ही होता है ॥ ३ ॥ सुन्दर मकान, सुन्दर क्षेत्र और सुखदायक सेज जिस पर माली दिन–रात फूल बिछाता रहता है, वह भी यदि हरि–नाम से विहीन है तो शरीर को दुख देने वाली ही बन जाती है ॥ ४ ॥ घोड़े, हाथी, शस्त्र, वाद्य, सेना, नायव और सेवक आदि कई प्रकार के प्रपंच परमात्मा के बिना केवल झूठे दिखावे ही हैं ॥ ५ ॥ सिद्ध कहलाया जाए और ऋद्धियों सिद्धियों को भी वुला सका जाए; सिर पर ताज और छत्र सजाया जाए तब भी परमात्मा के बिना वास्तविक सत्य की अनुभूति कैसे हो सकती है ॥ ६ ॥ व्यक्ति का खान, बादशाह, राजा कहलाना और नौकरों पर उसका रोव झाड़ना सव झूठा एवं व्यर्थ कार्य है । शब्द–गुरु के बिना कोई भी कार्य सँवर नहीं सकता ॥ ७ ॥ शव्द–गुरु के माध्यम से अहंकार एवं मैं की भावना भुलायी जाती है और गुरमति का अर्थ बूझने से हृदय में परमात्मा आ वसता है । नानक विनती करता है कि हे प्रभु, मैं तुम्हारी शरण में आन पड़ा हूँ ॥८॥१०॥ गउड़ी महला १ ॥ जो एक प्रभु की सेवा करता है वह किसी अन्य (देवी–देवता) को नहीं जानता। वह प्रपंचों को व्याधि मानता है और इनको कड़वे अर्थात रसहीन समझकर त्याग देता है । प्रेम भाव से ही उस निर्मल सत्य स्वरूप को वह प्राप्त करता है ॥ १ ॥ प्रभु का भक्त सेवक ऐसा होता है कि वह प्रभु गुणानुवाद से प्रभु में लीन होकर अपने मन की मैल को धो लेता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सारे संसार का हृदय रूपी कमल उलटा (प्रभु विमुख) पड़ा हुआ है और यह संसार दुर्मति की अग्नि में जल रहा है । जो शव्द–गुरु का चिन्तन करता है उसी का ही उद्धार होता है ॥ २ ॥ भँवरा, पतंगा, हाथी, मछली एवं मृग अपने किए हुए कर्म के कारण वासना के अधीन होकर मर जाते हैं। तृष्णा में लीन होकर ये परम तत्व को नहीं पहचानते ॥३॥ स्त्री का प्रेमी सदैव काम वासना पर ही ध्यान लगाए रहता है परन्तु विकारों वाले समस्त लोगों को क्रोध ही नष्ट कर देता है । प्रभु–नाम को भुलाकर वे अपना सम्मान

विसारी ॥ ४ ॥ पूर घरि चीतु मनमुखि डोलाइ ॥ गलि जेवरी धंधै लपटाइ ॥ गुरमुखि छूटसि हरि गुण गाइ ॥ ५ ॥ जिउ तनु बिधवा पर कउ देई ॥ कामि दामि चितु पर वसि सेई ॥ बिनु पिर त्रिपति न कबहूं होई ॥ ६ ॥ पड़ि पड़ि पोथी सिंम्रिति पाठा ॥ बेद पुराण पड़ै सुणि थाटा ॥ बिनु रस राते मनु बहु नाटा ॥ ७ ॥ जिउ चात्रिक जल प्रेम पिआसा ॥ जिउ मीना जल माहि उलासा ॥ नानक हरि रसु पी त्रिपतासा ॥ ८ ॥ ११ ॥ गउड़ी महला १ ॥ हठु करि मरै न लेखै पावै ॥ वेस करै बहु भसम लगावै ॥ नामु बिसारि बहुरि पछुतावै ॥ १ ॥ तूं मनि हरि जीउ तूं मनि सूख ॥ नामु बिसारि सहहि जम दूख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चोआ चंदन अगर कपूरि ॥ माइआ मगनु परम पदु दूरि ॥ नामि बिसारिऐ सभु कूड़ो कूरि ॥ २ ॥ नेजे वाजे तखति सलामु ॥ अधकी त्रिसना विआपै कामु ॥ बिनु हरि जाचे भगति न नामु ॥ ३ ॥ वादि अहंकारि नाही प्रभ मेला ॥ मनु दे पावहि नामु सुहेला ॥ दूजै भाइ अगिआनु दुहेला ॥ ४ ॥ बिनु दम के सउदा नही हाट ॥ बिनु बोहिथ सागर नही वाट ॥ बिनु गुर सेवे घाटे घाटि ॥ ५ ॥ तिस कउ वाहु वाहु जि वाट दिखावै ॥ तिस कउ वाहु वाहु जि सबदु सुणावै ॥ तिस कउ वाहु वाहु जि मेलि मिलावै ॥ ६ ॥ वाहु वाहु तिस कउ जिस का इहु जीउ ॥ गुर सबदी मथि अंम्रितु पीउ ॥ नाम वडाई तुधु भाणै दीउ ॥ ७ ॥ नाम बिना किउ जीवा माइ ॥ अनदिनु जपतु रहउ तेरी सरणाइ ॥ नानक नामि रते पति पाइ ॥ ८ ॥ १२॥ गउड़ी महला १ ॥ हउमै करत भेखी नही जानिआ ॥ गुरमुखि भगति विरले मनु मानिआ ॥ १ ॥ हउ हउ करत नही सचु पाईऐ ॥ हउमै जाइ परम पदु पाईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउमै करि राजे बहु धावहि ॥ हउमै खपहि जनमि मरि आवहि ॥ २ ॥ हउमै निवरै गुर सबदु वीचारै ॥ चंचल मति तिआगै पंच संघारै ॥ ३ ॥ अंतरि साचु सहज घरि आवहि ॥ राजनु जाणि परम गति पावहि ॥ ४ ॥ सचु करणी गुरु भरमु चुकावै ॥ निरभउ कै घरि ताड़ी लावै ॥ ५ ॥ हउ हउ करि मरणा किआ पावै ॥ पूरा गुरु भेटे सो झगरु चुकावै ॥ ६ ॥ जेती है तेती किहु नाही ॥ गुरमुखि गिआन भेटि

और बुद्धि खो देते हैं ॥ ४ ॥ मनमुख व्यक्ति पराये घर में चित्त लगाने से सदैव चंचल बना रहता है और गले में वासनाओं की रस्सी बांधे हुए धन्धों में फँसा रहता है । गुरमुख व्यक्ति प्रभु के गुण गाते हुए इन बन्धनों से छूट जाते हैं ॥ ५॥ जैसे एक विधवा अपना तन पराए व्यक्ति को दे देती है और काम–वासना तथा धन की खातिर अपने चित्त को दूसरे के वश में दे देती है परन्तु उसे अपने प्रियतम के बिना कभी भी तृप्ति का अनुभव नहीं होता है ॥ ६ ॥ पोथियां पढ़ना, स्मृतियों का पाठ करना, वेद पुराण आदि पढ़ने सुनने का ठाठ बनाना प्रभु–नाम के रस में लीनता के बगैर केवल मन का नाचना और नाटक भर करना है ॥ ७ ॥ जैसे चातक का जल के साथ प्रेम होता है और जिस प्रकार मछली पानी में अत्यधिक प्रसन्न होती है उसी प्रकार नानक भी हरि रस का पान करके तृप्त हो गया है ॥ ८ ॥ ११ ॥ गउड़ी महला १ ॥ जो हठ–साधना करते हुए मर जाते हैं वे किसी भी गणना में नहीं आते। जो विभिन्न वेष धारण करके भस्म आदि लगाए रहते हैं, प्रभु–नाम को भुला कर वे बार बार पछताते हैं ॥ १ ॥ हे जीव, तू प्रभु को मन में बसा और मन में ही सुख ले । नाम को भुलाकर तुझे यम का दुख सहना पड़ेगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इत्र, चन्दन, अगर, कर्पूर आदि के साथ जो सांसारिकता में लीन बना रहता है उससे उच्चतम आध्यात्मिक पद हमेशा दूर ही बना रहता है । प्रभु नाम को भुला देने से सब झूठ ही झूठ बनकर रह जाता है ॥ २ ॥ शस्त्र, वाद्य, सिंहासन और सलाम करने वाले लोग होने पर तृष्णा अधिक होती जाती है और कामनाएं बढ़ती जाती हैं । प्रभु की आवश्यकता अनुभव करने के बिना न तो भक्ति मिलती है और न ही प्रभु–नाम प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ विवाद और अहंकार का प्रभु प्राप्ति से मेल नहीं बैठता । मन प्रभु को सौंप कर ही सुखदायक नाम की प्राप्ति होती है । द्वैतभाव रखने से दुखदायी अज्ञान ही मिलता है ॥ ४ ॥ बिना पैसे के दुकान से सौदा नहीं मिलता और बिना जहाज के समुद्र का सफर नहीं होता । इसी प्रकार बिना गुरु के सुमिरन के घाटा ही घाटा बना रहता है ॥ ५ ॥ वह धन्य है जो सीधा रास्ता दिखाता है । वह भी आश्चर्यजनक है जो शब्द को सुनाता है और वह भी धन्य है जो उस प्रभु से मेल करा देता है ॥ ६ ॥ उसका आभार है जिसके यह दिए हुए प्राण हैं । हे जीव, शब्द–गुरु के माध्यम से मंथन करके तू अमृत का पान कर । प्रभु की आज्ञा में चलने पर ही तुझे प्रभु–नाम का बड़प्पन मिल सका है ॥ ७॥ हे माँ, मैं प्रभु नाम के बिना जीवित कैसे रहूँ । हे प्रभु, मैं हर रोज़ तेरा जाप करता हुआ तेरी शरण में पड़ा रहूँ । हे नानक, नाम में लीन बने रहने पर ही वास्तविक सम्मान प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ १२ ॥ गउड़ी महला १॥ अभिमानी बने रहकर विभिन्न वेषों के माध्यम से तूने उस प्रभु को नहीं जाना। कोई विरला ही है जिसका मन गुरमुख बनकर भक्ति के माध्यम से शान्त हो गया है ॥ १ ॥ मैं–मैं करते हुए सत्य प्राप्त नहीं होता परन्तु जैसे ही अभिमान छूट जाता है तो परम पद प्राप्त हो जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अहंकार करते हुए ही राजा–गण इधर उधर दौड़ते हैं और अहंकार में ही वे जन्मते–मरते आते जाते रहते हैं ॥ २ ॥ गुरु के उपदेश पर विचार करने से ही अंधकार का निवारण होता है और व्यक्ति चंचल मति को त्याग कर काम, क्रोध आदि पांचों का संहार कर देता है ॥ ३ ॥ जब अन्तर्मन में सत्य आन बसता है तो जीव पूर्ण ज्ञान अर्थात् सहजभाव को प्राप्त कर लेता है । अब वह परमात्मा रूपी राजन को जानकर परम गति को प्राप्त कर लेता है ॥ ४ ॥ सत्य के कार्य–व्यवहार से गुरु भ्रम को चुका देता है और निर्भय–प्रभु के घर में ध्यान टिका देता है ॥ ५ ॥ जो मैं, मेरी करते हुए मर जाते हैं उनको भला क्या प्राप्त होता है? परन्तु जो पूर्ण गुरु से मेल कर लेते हैं उनके सारे वाद–विवाद समाप्त हो जाते हैं ॥ ६ ॥ जितना कुछ दृष्टमान है वह वास्तव में कुछ भी नहीं है । व्यक्ति गुरमुख बनकर और ज्ञानवान होकर ही उस प्रभु के गुण गाता है

गुण गाही ॥ ७ ॥ हउमै बंधन बंधि भवावै ॥ नानक राम भगति सुखु पावै ॥ ८ ॥ १३ ॥ गउड़ी महला १ ॥ प्रथमे ब्रहमा कालै घरि आइआ ॥ ब्रहम कमलु पइआलि न पाइआ ॥ आगिआ नही लीनी भरमि भुलाइआ ॥ १ ॥ जो उपजै सो कालि संघारिआ ॥ हम हरि राखे गुर सबदु बीचारिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माइआ मोहे देवी सभि देवा ॥ कालु न छोडै बिनु गुर की सेवा ॥ ओहु अबिनासी अलख अभेवा ॥ २ ॥ सुलतान खान बादिसाह नही रहना ॥ नामहु भूलै जम का दुखु सहना ॥ मै धर नामु जिउ राखहु रहना ॥ ३ ॥ चउधरी राजे नही किसै मुकामु ॥ साह मरहि संचहि माइआ दाम ॥ मै धनु दीजै हरि अंम्रित नामु ॥ ४ ॥ रयति महर मुकदम सिकदारै ॥ निहचलु कोइ न दिसै संसारै ॥ अफरिउ कालु कूड़ु सिरि मारै ॥ ५ ॥ निहचलु एकु सचा सचु सोई ॥ जिनि करि साजी तिनहि सभ गोई ॥ ओहु गुरमुखि जापै तां पति होई ॥ ६ ॥ काजी सेख भेख फकीरा ॥ वडे कहावहि हउमै तनि पीरा ॥ कालु न छोडै बिनु सतिगुर की धीरा ॥ ७ ॥ कालु जालु जिहवा अरु नैणी ॥ कानी कालु सुणै बिखु बैणी ॥ बिनु सबदै मूटे दिनु रैणी ॥ ८ ॥ हिरदै साचु वसै हरि नाइ ॥ कालु न जोहि सकै गुण गाइ ॥ नानक गुरमुखि सबदि समाइ ॥ ९ ॥ १४ ॥ गउड़ी महला १ ॥ बोलहि साचु मिथिआ नही राई ॥ चालहि गुरमुखि हुकमि रजाई ॥ रहहि अतीत सचे सरणाई ॥ १ ॥ सच घरि बैसै कालु न जोहै ॥ मनमुख कउ आवत जावत दुखु मोहै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अपिउ पीअउ अकथु कथि रहीऐ ॥ निज घरि बैसि सहज घरु लहीऐ ॥ हरि रसि माते इहु सुखु कहीऐ ॥ २ ॥ गुरमति चाल निहचल नही डोलै ॥ गुरमति साचि सहजि हरि बोलै ॥ पीवै अंम्रितु ततु विरोलै ॥ ३ ॥ सतिगुरु देखिआ दीखिआ लीनी ॥ मनु तनु अरपिओ अंतरगति कीनी ॥ गति मिति पाई आतमु चीनी ॥ ४ ॥ भोजनु नामु निरंजन सारु ॥ परम हंसु सचु जोति अपार ॥ जह देखउ तह एकंकारु ॥ ५ ॥ रहै निरालमु एका सचु करणी ॥ परम पदु पाइआ सेवा गुर चरणी ॥ मन ते मनु मानिआ चूकी अहं भ्रमणी ॥ ६ ॥ इन बिधि कउणु कउणु नही तारिआ ॥ हरि जसि संत भगत

और उसकी अनंतता में आश्चर्य विभोर होता है ॥ ७ ॥ अहंकार बन्धनों में वांध कर भटकाता है । हे नानक, केवल प्रभु की भक्ति के माध्यम से ही सुख प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ १३ ॥ गउड़ी महला १ ॥ सवसे पहले तो ब्रह्मा ही मौत के वश में आ गया । विष्णु की नाभि से उत्पन्न कमल के छोर को ढूँढता-ढूँढता वह पाताल तक चला गया परन्तु उसका अन्त नहीं पा सका । उसने प्रभु की आज्ञा को शिरोधार्य नहीं किया इसीलिए भ्रमों में भूलता भटकता रहा ॥ १ ॥ जो भी उत्पन्न होता है काल उसका संहार करता है । शब्द-गुरु का चिन्तन करने के फलस्वरूप प्रभु ने हमारी रक्षा कर ली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभी देवी-देवताओं को माया ने सम्मोहित कर रखा है । गुरु की सेवा के विना काल किसी को नहीं छोड़ता । प्रभु ही अविनाशी अलख एवं रहस्यातीत है ॥ २ ॥ सुल्तान, खान, वादशाह कोई भी यहां वच नहीं पाएगा और प्रभु-नाम को भुलाकर सबको यम का दुख सहना पड़ेगा । मेरा आसरा तो केवल प्रभु-नाम ही है; वह जैसा रखेगा मुझे वैसा ही रहना पड़ेगा ॥ ३ ॥ चौधरी एवं राजागण आदि का भी कोई ठिकाना नहीं है । धन-सम्पत्ति इकट्ठा करने वाले साहूकार भी मर जाते हैं । हे प्रभु, मुझे अमृत नाम रूपी धन प्रदान करो ॥४॥ प्रजा, मुखिया, सरदार, चौधरी आदि कोई भी संसार में स्थिर दिखाई नहीं देता । भयानक काल झूठे मनुष्य को सिर से पकड़कर मारता है॥५॥ वह एक ही सच्चा प्रभु स्थिर है जिसने सारी सृष्टि की रचना की है और उसको लय भी करता है । व्यक्ति यदि गुरमुख होकर सुमिरन करे तव उसको सम्मान मिलता है ॥ ६ ॥ काज़ी, शेख, अनेकों वेषों वाले फकीर अपने आप को बड़े कहलाते हैं परन्तु उनके मन में भी अहंकार की पीड़ा बनी ही रहती है । सद्गुरु के आश्रय के बिना काल किसी को नहीं छोड़ता ॥ ७ ॥ काल रूपी जाल जीव की आँखों, कानों आदि के स्वादों के माध्यम से चारों ओर फैला हुआ है। कान का काल अथवा मौत, बुरी बातों को सुनना अथवा निन्दा सुनना ही है । शब्द के बिना यह सभी दिन-रात लूटे जा रहे हैं ॥ ८ ॥ प्रभु-नाम के माध्यम से हृदय में सत्य आन बसता है और प्रभु के गुणानुवाद के फलस्वरूप काल व्यक्ति की ओर देख भी नहीं पाता । हे नानक, गुरमुख बनकर शब्द में लीन हुआ जाता है ॥ ९ ॥ १४ ॥ गउड़ी महला१ ॥ गुरमुख सदैव प्रभु के हुकुम को रज़ा मान कर उसमें चलते हैं और तनिक भी झूठ न बोलते हुए केवल सच ही बोलते हैं । वे सदैव विरक्त बने रहकर सत्य रूपी प्रभु की शरण में पड़े रहते हैं ॥ १ ॥ सत्य पर टिकने से काल देख नहीं पाता परन्तु मनमुख व्यक्ति को आवागमन के दुःख में पड़ा रहना पड़ता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अमृत का पान करें और अकथनीय हरि का कथन करते रहें । इस प्रकार अपने स्वरूप में स्थिर होकर सहज पद प्राप्त किया जाता है । यहां पहुँच कर यही सुख है कि जीव हरि-रस में लीन बना रहता है ॥ २ ॥ गुरमति के अनुकूल व्यवहार बनाने से व्यक्ति स्थिर हो जाता है और डोलता नहीं । गुरमति के माध्यम से ही व्यक्ति सत्य और सहज में स्थिर होकर प्रभु-नाम का जाप करता है । वह नाम-अमृत का पान करता है और तत्व का चिन्तन करते हुए उसका मन्थन करता है ॥३॥ मैंने सद्गुरु को देखा और उससे शिक्षा ग्रहण की । उसे तन, मन अर्पण करके उसकी शिक्षा को चित्त में बिठा लिया। मैंने आत्मा को पहचान लिया है और उसके ओर छोर को जान लिया है ॥४॥ पवित्र प्रभु-नाम ही उत्तम भोजन है और परमहंस रूपी गुरमुख को उस सत्य-प्रभु की ज्योति ही दिखाई देती है । ऐसी स्थिति में जिधर देखा जाए वह प्रभु एकंकार रूप में दिखाई पड़ता है ॥५॥ प्रभु निर्लिप्त रहता है और सत्य ही उसकी कार्य-शैली है । व्यक्ति गुरु के चरणों में आकर सेवा करते हुए परम पद प्राप्त करता है । मन अपने ज्योति स्वरूप को देखकर संतुष्ट हो जाता है और उसके अभिमान की भटकन चुक जाती है ॥६॥ इस विधि से भला किस-किस का उद्धार नहीं हुआ । हरि यश ने

निसतारिआ ॥ प्रभ पाए हम अवरु न भारिआ ॥ ७ ॥ साच महलि गुरि अलखु लखाइआ ॥ निहचल महलु नही छाइआ माइआ ॥ साचि संतोखे भरमु चुकाइआ ॥ ८ ॥ जिन कै मनि वसिआ सचु सोई ॥ तिन की संगति गुरमुखि होई ॥ नानक साचि नामि मलु खोई ॥ ९ ॥ १५ ॥ गउड़ी महला १ ॥ रामि नामि चितु रापै जा का ॥ उपजंपि दरसनु कीजै ता का ॥ १ ॥ राम न जपहु अभागु तुमारा ॥ जुगि जुगि दाता प्रभु रामु हमारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति रामु जपै जनु पूरा ॥ तितु घट अनहत बाजे तूरा ॥ २ ॥ जो जन राम भगति हरि पिआरि ॥ से प्रभि राखे किरपा धारि ॥ ३ ॥ जिन कै हिरदै हरि हरि सोई ॥ तिन का दरसु परसि सुखु होई ॥ ४ ॥ सरब जीआ महि एको रवै ॥ मनमुखि अहंकारी फिरि जूनी भवै ॥ ५ ॥ सो बूझै जो सतिगुरु पाए ॥ हउमै मारे गुर सबदे पाए ॥ ६ ॥ अरध उरध की संधि किउ जानै ॥ गुरमुखि संधि मिलै मनु मानै ॥ ७ ॥ हम पापी निरगुण कउ गुणु करीऐ ॥ प्रभ होइ दइआलु नानक जन तरीऐ ॥ ८ ॥ १६ ॥ सोलह असटपदीआ गुआरेरी गउड़ी कीआ ॥

गउड़ी बैरागणि महला १ ੧ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जिउ गाई कउ गोइली राखहि करि सारा ॥ अहिनिसि पालहि राखि लेहि आतम सुखु धारा ॥ १ ॥ इत उत राखहु दीन दइआला ॥ तउ सरणागति नदरि निहाला ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह देखउ तह रवि रहे रखु राखनहारा ॥ तूं दाता भुगता तूंहै तूं प्राण अधारा ॥ २ ॥ किरतु पइआ अध ऊरधी बिनु गिआन बीचारा ॥ बिनु उपमा जगदीस की बिनसै न अंधिआरा ॥ ३ ॥ जगु बिनसत हम देखिआ लोभे अहंकारा ॥ गुर सेवा प्रभु पाइआ सचु मुकति दुआरा ॥ ४ ॥ निज घरि महलु अपार को अपरंपरु सोई ॥ बिनु सबदै थिरु को नही बूझै सुखु होई ॥ ५ ॥ किआ लै आइआ ले जाइ किआ फासहि जम जाला ॥ डोलु बधा कसि जेवरी आकासि पताला ॥ ६ ॥ गुरमति नामु न वीसरै सहजे पति पाईऐ ॥ अंतरि सबदु निधानु है मिलि आपु गवाईऐ ॥ ७ ॥ नदरि करे प्रभु आपणी गुण अंकि समावै ॥ नानक

सन्तों–भक्तों को पार उतार दिया है । प्रभु को प्राप्त करके अब मैंने अन्य भ्रमपूर्ण खोजों को त्याग दिया है ॥ ७ ॥ गुरु ने मुझे सच्चे प्रभु का ठिकाना दिखा दिया है जो कि स्थिरता का स्वरूप है और जहां कोई भी माया–छाया आदि नहीं है । सत्य के माध्यम से संतुष्टि मिल गई है और मेरा भ्रम चुक गया है ॥ ८ ॥ जिनके मन में सत्य आन बसा है उनकी संगत गुरमुख व्यक्तियों के साथ ही होती है । हे नानक, सच्चे नाम के माध्यम से ही मन की मैल समाप्त होती है ॥ ९ ॥ १५ ॥ गउड़ी महला १ ॥ जिसका मन राम नाम में रंग गया है, प्रातः सदैव उसी का ही दर्शन किया जाना चाहिए ॥ १ ॥ राम का जाप न करना तुम्हारा दुर्भाग्य है क्योंकि सब में रमण करने वाला प्रभु युगों युगों से जीवों का दाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमति के माध्यम से पूर्ण सेवक प्रभु नाम का जाप करता है और उसके हृदय में आनन्द के अनहत् वाद्य बजने लगते हैं । जिन सेवकों को प्रभु–भक्ति और प्रभु से प्रेम होता है, प्रभु कृपा करके उनकी रक्षा कर लेता है ॥ ३ ॥ जिनके हृदय में वह प्रभु बसता है । उनका दर्शन और स्पर्श करने से ही सुख प्राप्त हो जाता है ॥ ४ ॥ सभी जीवों में वह एक ही प्रभु रमण करता है परन्तु मनमुख एवं अहंकारी व्यक्ति इस बात को नहीं जानता और योनियों में भटकता रहता है ॥ ५ ॥ जिन्हें सद्गुरु बुद्धि देता है वही उसे बूझते हैं और अहंकार को मारकर शब्द–गुरु के माध्यम से उस प्रभु को पा जाते हैं ॥ ६ ॥ जीव और परमात्मा की दूरी को भला कैसे समझा जा सकता है । गुरमुख बनकर ही मन संतुष्ट होता है और यह दूरी समाप्त हो जाती है ॥ ७ ॥ हे प्रभु, हम पापी गुणहीनों को भी गुणवान कर दो ताकि दास नानक भी पार उतर जाए ॥ ८ ॥ १६ ॥ सोलह अष्टपदियां गुआरेरी गउड़ी की ॥

गउड़ी बैरागणि महला १ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जैसे चरवाहा गऊओं को संभालता है, हे प्रभु वैसे ही दिन–रात तुम हम सब की रक्षा करते हो और आध्यात्मिक सुख देते हो ॥ १ ॥ हे दीनदयालु, यहां वहां सर्वत्र हमारी रक्षा करो । हे दृष्टि भर से प्रसन्न करने वाले प्रभु, मैं तेरी शरण में आया हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जहां देखता हूँ वहीं तू रमण कर रहा है इसलिए हे रक्षक तू रक्षा कर । तू ही देने वाला, भोगने वाला और तू ही प्राणों का आसरा है ॥ २ ॥ जीव अपने कर्मों के अनुसार ही और अपने ज्ञान से विहीन होकर ही स्वर्ग नर्क में पड़ता है । परमात्मा के गुणानुवाद के बिना अज्ञान रूपी अंधकार नष्ट नहीं होता ॥ ३ ॥ लोभ और अहंकार में हमने संसार को नष्ट होते हुए देखा है । केवल गुरु की सेवा के फलस्वरूप ही हे प्रभु, सत्य और मुक्ति का द्वार प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ उस अपरंपर प्रभु का ठिकाना उसके अपने स्वरूप में ही निहित है । शब्द के बिना कोई भी स्थिर नहीं है और जो इस तथ्य को बूझ लेता है वही सुख प्राप्त करता है ॥ ५॥ हे जीव, तू क्या लेकर यहां आया और क्या लेकर यहां से जाएगा; तू व्यर्थ ही यम के जाल में फंसा हुआ है । यह जीव उस गागर के समान कस कर रस्सी से बँधा हुआ है जो कुएँ से कभी आकाश की तरफ आती है और कभी पाताल की तरफ जाती है ॥ ६ ॥ गुरुमति में चलने से नाम विस्मृत नहीं होता और सहजभाव में सम्मान प्राप्त होता है । जीव के अन्दर ही सभी सुखों के घर शब्द का निवास है जिसे अनुभव करके अहंकार का त्याग किया जाता है ॥ ७ ॥ यदि प्रभु अपनी कृपा दृष्टि करे तो गुणी बनकर प्रभु की गोद में लीन हुआ जाता है । हे नानक,

मेलु न चूकई लाहा सचु पावै ॥ ८ ॥ १ ॥ १७ ॥ गउड़ी महला १ ॥ गुर परसादी बूझि ले तउ होइ निबेरा ॥ घरि घरि नामु निरंजना सो ठाकुरु मेरा ॥ १ ॥ बिनु गुर सबद न छूटीऐ देखहु बीचारा ॥ जे लख करम कमावही बिनु गुर अंधिआरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंधे अकली बाहरे किआ तिन सिउ कहीऐ ॥ बिनु गुर पंथु न सूझई कितु बिधि निरबहीऐ ॥ २ ॥ खोटे कउ खरा कहै खरे सार न जाणै ॥ अंधे का नाउ पारखू कली काल विडाणै ॥ ३ ॥ सूते कउ जागतु कहै जागत कउ सूता ॥ जीवत कउ मूआ कहै मूए नही रोता ॥ ४ ॥ आवत कउ जाता कहै जाते कउ आइआ ॥ पर की कउ अपुनी कहै अपुनो नही भाइआ ॥ ५ ॥ मीठे कउ कउड़ा कहै कड़ूए कउ मीठा ॥ राते की निंदा करहि ऐसा कलि महि डीठा ॥ ६ ॥ चेरी की सेवा करहि ठाकुरु नही दीसै ॥ पोखरु नीरु विरोलीऐ माखनु नही रीसै ॥ ७ ॥ इसु पद जो अरथाइ लेइ सो गुरू हमारा ॥ नानक चीनै आप कउ सो अपर अपारा ॥ ८ ॥ सभु आपे आपि वरतदा आपे भरमाइआ ॥ गुर किरपा ते बूझीऐ सभु ब्रहमु समाइआ ॥ ९ ॥ २ ॥ १८ ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ३ असटपदीआ   १ओ सतिगुर प्रसादि ॥

मन का सूतकु दूजा भाउ ॥ भरमे भूले आवउ जाउ ॥ १ ॥ मनमुखि सूतकु कबहि न जाइ ॥ जिचरु सबदि न भीजै हरि कै नाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभो सूतकु जेता मोहु आकारु ॥ मरि मरि जंमै वारो वार ॥ २ ॥ सूतकु अगनि पउणै पाणी माहि ॥ सूतकु भोजनु जेता किछु खाहि ॥ ३ ॥ सूतकि करम न पूजा होइ ॥ नामि रते मनु निरमलु होइ ॥ ४ ॥ सतिगुरु सेविऐ सूतकु जाइ ॥ मरै न जनमै कालु न खाइ ॥ ५ ॥ सासत सिंम्रिति सोधि देखहु कोइ ॥ विणु नावै को मुकति न होइ ॥ ६ ॥ जुग चारे नामु उतमु सबदु बीचारि ॥ कलि महि गुरमुखि उतरसि पारि ॥ ७ ॥ साचा मरै न आवै जाइ ॥ नानक गुरमुखि रहै समाइ ॥ ८ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ गुरमुखि सेवा प्रान अधारा ॥ हरि जीउ राखहु हिरदै उर धारा ॥ गुरमुखि सोभा साच दुआरा ॥ १ ॥ पंडित हरि पड़ु तजहु विकारा ॥ गुरमुखि भउजलु उतरहु पारा

यह संयोग फिर कभी टूटता नहीं और जीव को सत्य का लाभ प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ १ ॥ १७ ॥ गउड़ी महला १॥ जब गुरु की कृपा से जीव रहस्य को बूझ लेता है तो सभी विवाद निपट जाते हैं । जीव जान जाता है कि जो पवित्र नाम प्रत्येक शरीर में विद्यमान है वही मेरा मालिक है ॥ १ ॥ इस वात को अच्छी तरह से विचार कर देख लो कि शब्द–गुरु के बिना सांसारिक बन्धनों से छूटा नहीं जा सकता। लाखों कर्मकाण्ड करने पर भी गुरु के बिना अन्धकार ही बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बुद्धि–विहीन अन्धे लोगों से क्या कहा जाए; गुरु के बिना मार्ग का पता नहीं चलता और अन्य कौन सी विधि है जिससे जीवन का निर्वाह ठीक ढंग से हो । जीव खोटे को खरा कहता है और खरे की वास्तविकता को ही नहीं समझता । कलियुग में यही आश्चर्य है कि अन्धे अज्ञानी को लोग वहुत वड़ा समझदार और परखने वाला कहते हैं ॥ ३ ॥ धन के नशे में सोये हुए को चेतन कहते हैं और जो वास्तव में संसार की असारता के प्रति जगा हुआ है उसे सोया हुआ कहते हैं । आध्यात्मिक तौर से जीवित व्यक्ति को तो मरा हुआ मानते हैं और जो मरा हुआ है उसे कोई रोने वाला ही नहीं है ॥ ४ ॥ जो परमात्मा की तरफ आने वाला है उसे तो गया–गुजरा समझते हैं और जो वास्तव में गया–गुजरा है उसे सयाना और समझदार मानते हैं । परायी सम्पदा को तो लोग अपनी कहते हैं और प्रभु जो वास्तव में अपना है उससे कोई प्रेम नहीं डाला जाता ॥ ५ ॥ आध्यात्मिक मीठा आनन्द लोगों के द्वारा कड़वा कहा जाता है और त्यागने योग्य पदार्थ व्यक्ति को मीठे लगते हैं । यह कलियुग में ही दिखाई पड़ता है कि जो प्रभु रंग में रंगा हुआ है उसकी निन्दा की जाती है ॥६॥ माया रूपी दासी की तो सेवा की जाती है और उसका मालिक प्रभु तो व्यक्ति को दिखाई ही नहीं देता । तालाव के पानी का मन्थन करने से कभी भी मक्खन नहीं निकल सकता ॥ ७ ॥ इस पद का जो सही अर्थ कर ले वही हमारा गुरु है । हे नानक, जो अपने आप को जान ले वही अपरंपर है ॥ ८ ॥ प्रभु स्वयं ही सव में कार्यशील है और स्वयं ही जीवों को भ्रम में डालता है । गुरु की कृपा से ही यह जाना जाता है कि वह परब्रहम सभी में समाया हुआ है ॥ ९ ॥ २ ॥ १८ ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ३ अष्टपदियां १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

द्वैतभाव ही मन की अपवित्रता है और भ्रमों में भटक रहा व्यक्ति ही आवागमन में पड़ा रहता है ॥ १ ॥ मनमुख व्यक्ति की अपवित्रता तब तक नहीं जाती जब तक वह प्रभु–नाम और शब्द में पूर्ण रूप से रंग न जाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मोह का साकार रूप सभी अशुद्धियों का चिन्ह है और मोह में फंसा व्यक्ति बार–बार जन्मता मरता है ॥ २ ॥ पवन, पानी, अग्नि आदि से जीवों के प्रति हिंसा होने पर इन्हें भी अशुद्ध कहा जाता है और इस प्रकार जो कुछ खाया जाता है वह सभी अशुद्ध माना जाता है ॥ ३ ॥ कर्मकाण्ड भी अशुद्ध है इसलिए पूजा अर्चना नहीं हो सकती; केवल प्रभु–नाम में लीन होकर ही मन पवित्र बना रहता है ॥ ४ ॥ सद्गुरु के सुमिरन से सभी अशुद्धियां समाप्त हो जाती हैं; फिर व्यक्ति न तो जन्मता है और न ही मरता है और न ही उसे काल खाता है ॥ ५ ॥ बेशक कोई शास्त्रों स्मृतियों का गम्भीर अध्ययन करके देख ले, प्रभु नाम के बिना कोई भी मुक्त नहीं हो सकता ॥ ६ ॥ चारों युगों में नाम और शब्द का चिन्तन ही उत्तम है क्योंकि कलियुग में गुरमुख बनकर ही पार उतरा जा सकता है ॥ ७ ॥ सच्चा व्यक्ति न तो मरता है और न ही आवागमन में पड़ता है । हे नानक, गुरमुख ही उस प्रभु में लीन बना रहता है ॥ ८ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ गुरमुख बनकर सेवा करना ही प्राणों का आसरा है । जीव को अपने हृदय में प्रभु को धारण करके रखना चाहिए । गुरमुख व्यक्तियों की ही उस प्रभु रूपी सत्य के द्वार पर महिमा होती है ॥ १ ॥ हे पंडित, केवल हरि का जाप करो और विकारों को त्याग दो । इस प्रकार गुरमुख बनकर

॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि विचहु हउमै जाइ ॥ गुरमुखि मैलु न लागै आइ ॥ गुरमुखि नामु वसै मनि आइ ॥ २ ॥ गुरमुखि करम धरम सचि होई ॥ गुरमुखि अहंकारु जलाए दोई ॥ गुरमुखि नामि रते सुखु होई ॥ ३ ॥ आपणा मनु परबोधहु बूझहु सोई ॥ लोक समझावहु सुणे न कोई ॥ गुरमुखि समझहु सदा सुखु होई ॥ ४ ॥ मनमुखि डंफु बहुतु चतुराई ॥ जो किछु कमावै सु थाइ न पाई ॥ आवै जावै ठउर न काई ॥ ५ ॥ मनमुख करम करे बहुतु अभिमाना ॥ बग जिउ लाइ बहै नित धिआना ॥ जमि पकड़िआ तब ही पछुताना ॥ ६ ॥ बिनु सतिगुर सेवे मुकति न होई ॥ गुर परसादि मिलै हरि सोई ॥ गुरु दाता जुग चारे होई ॥ ७ ॥ गुरमुखि जाति पति नामे वडिआई ॥ साइर की पुत्री बिदारि गवाई ॥ नानक बिनु नावै झूठी चतुराई ॥ ८ ॥ २ ॥ गउड़ी मः ३ ॥ इसु जुग का धरमु पड़हु तुम भाई ॥ पूरै गुरि सभ सोझी पाई ॥ ऐथै अगै हरि नामु सखाई ॥ १ ॥ राम पड़हु मनि करहु बीचारु ॥ गुर परसादी मैलु उतारु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वादि विरोधि न पाइआ जाइ ॥ मनु तनु फीका दूजै भाइ ॥ गुर कै सबदि सचि लिव लाइ ॥ २ ॥ हउमै मैला इहु संसारा ॥ नित तीरथि नावै न जाइ अहंकारा ॥ बिनु गुर भेटे जमु करे खुआरा ॥ ३ ॥ सो जनु साचा जि हउमै मारै ॥ गुर कै सबदि पंच संघारै ॥ आपि तरै सगले कुल तारै ॥ ४ ॥ माइआ मोहि नटि बाजी पाई ॥ मनमुख अंध रहे लपटाई ॥ गुरमुखि अलिपत रहे लिव लाई ॥ ५ ॥ बहुते भेख करै भेखधारी ॥ अंतरि तिसना फिरै अहंकारी ॥ आपु न चीनै बाजी हारी ॥ ६ ॥ कापड़ पहिरि करे चतुराई ॥ माइआ मोहि अति भरमि भुलाई ॥ बिनु गुर सेवे बहुतु दुखु पाई ॥ ७ ॥ नामि रते सदा बैरागी ॥ ग्रिही अंतरि साचि लिव लागी ॥ नानक सतिगुरु सेवहि से वडभागी ॥ ८ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ ब्रहमा मूलु वेद अभिआसा ॥ तिस ते उपजे देव मोह पिआसा ॥ त्रै गुण भरमे नाही निज घरि वासा ॥ १ ॥ हम हरि राखे सतिगुरू मिलाइआ ॥ अनदिनु भगति हरि नामु द्रिड़ाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रै गुण बाणी ब्रहम जंजाला ॥ पड़ि वादु

तुम संसार सागर से पार उतर जाओगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुख बनने से अन्तर्मन का अहंकार चला जाता है और गुरमुख को विकारों की मैल नहीं लगती । गुरमुख बनने से प्रभु–नाम मन में आन बसता है ॥ २ ॥ गुरमुख का कर्म सत्य और धर्म पर आचरण होता है । गुरमुख अहंकार और द्वैत भाव को जला देता है । गुरमुख बनकर प्रभु–नाम में लीन बने रहने से ही सुख प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ हे प्राणी, अपने मन को जगाओ और उसके कार्य–कलाप को समझो । लोगों को समझाते हो पर तुम्हारी कोई नहीं सुन रहा है (क्योंकि तुम स्वयं मायावी प्रपंचों में लीन हो) । गुरमुख बनकर यदि स्वयं समझोगे तो सदैव आनन्द मिलता रहेगा ॥ ४ ॥ मनमुख व्यक्ति के पास बहुत अधिक दिखावा और चतुराई होती है इसलिए वह जो कुछ भी करता है प्रभु–दरबार में स्वीकृत नहीं होता । उसका कोई ठौर–ठिकाना नहीं होता और वह आवागमन में पड़ा रहता है ॥ ५ ॥ मनमुख व्यक्ति कर्मकाण्ड में पड़ा रहकर बहुत अभिमानी बन जाता है और बगुले की तरह शिकार पर ध्यान लगाए रहता है । जब स्वयं उसको यम आ पकड़ता है तो वह पछताता है ॥ ६ ॥ सद्गुरु (परमात्मा) का सुमिरन करने के बिना मुक्ति नहीं होती और गुरु की कृपा से ही वह प्रभु मिलता है । चारों युगों में वह प्रभु ही दाता है ॥ ७ ॥ गुरमुख व्यक्ति की जाति एवं सम्मान सब कुछ प्रभु–नाम के बड़प्पन में ही है क्योंकि गुरमुख ने सागर से उत्पन्न लक्ष्मी अर्थात माया को मारकर दूर हटा दिया होता है । हे नानक, नाम के बिना सभी चतुराईयां झूठी हैं ॥ ८ ॥ २ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ हे भाई, इस युग का धर्म जानो कि पूर्ण गुरु से ही सारी समझ प्राप्त होती है और इस लोक तथा परलोक में प्रभु–नाम ही मित्र बनता है ॥ १ ॥ राम को जानो और मन में उसका विचार करो और गुरु की कृपा से मन की मैल को उतार फेंको ॥ १ ॥ रहाउ ॥ विवादों और विरोधों के फलस्वरूप प्रभु को पाया नहीं जा सकता । द्वैतभाव में व्यक्ति का मन और तन फीका पड़ा रहता है । शब्द–गुरु के माध्यम से ही सत्य में सुरति लगी रहती है ॥ २ ॥ अहंकार के कारण ही यह संसार मैला है । यह रोज़ तीर्थ–स्नान करता है परन्तु फिर भी इसका अहंकार नहीं जाता । गुरु को प्राप्त किए बिना यह यम के द्वारा ख्वार किया जाता है ॥ ३ ॥ जो व्यक्ति अहंकार को मार लेता है वही सच्चा है और वही शब्द–गुरु के माध्यम से पांचों विकारों का संहार कर देता है । वह स्वयं भी पार उतर जाता है और समस्त कुल का भी उद्धार कर देता है ॥ ४ ॥ प्रभु रूपी नट ने माया और मोह का यह खेल बनाया है जिसमें मनमुख व्यक्ति अन्धे होकर लिपटे पड़े हैं । गुरमुख व्यक्ति ही प्रभु–नाम में सुरति लगाकर इससे अलिप्त बने रहते हैं ॥ ५ ॥ कपटी व्यक्ति अनेकों वेष धारण करता है परन्तु उसके अन्तर्मन की तृष्णा बनी रहती है और वह अहंकारी बनकर भटकता रहता है । वह अपने मूल स्वरूप को नहीं पहचानता और जीवन की बाज़ी को हार जाता है ॥ ६ ॥ विभिन्न प्रकार के वस्त्र पहनकर व्यक्ति चतुराई दिखाता है तथा माया–मोह में पड़कर भ्रमों में भूला रहता है । गुरु के सुमिरन के बिना वह बहुत दुख पाता है ॥ ७ ॥ बैरागी वह है जो सदैव प्रभु–नाम में रंगा रहे । गृहस्थी वह है जो सदैव सत्याचरण का ध्यान बनाए रखता है । हे नानक जो सद्गुरु (प्रभु) का सुमिरन करते हैं वे ही भाग्यशाली हैं ॥ ८ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ वेद–अभ्यास का मूल ब्रह्मा माना जाता है जिससे मोह और तृष्णा वाले अन्य देवता पैदा हुए । यह सभी लोग माया के तीनों गुणों में भ्रमण करते रहे और इन्होंने अपने निज स्वरूप में अपना ठिकाना नहीं बनाया (क्योंकि यह केवल प्रेमाभक्ति से सम्भव था) ॥ १ ॥ सद्गुरु से मेल होने पर हमें प्रभु ने बचा लिया और गुरु ने सदा प्रभु–नाम और उसकी भक्ति को ही मन में पक्का कर दिया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रह्मा की वाणी त्रिगुणात्मक जंजाल वाली है जिसके माध्यम से

वखाणहि सिरि मारे जमकाला ॥ ततु न चीनहि बंनहि पंड पराला ॥ २ ॥ मनमुख अगिआनि कुमारगि पाए ॥ हरि नामु बिसारिआ बहु करम द्रिड़ाए ॥ भवजलि डूबे दूजै भाए ॥ ३ ॥ माइआ का मुहताजु पंडितु कहावै ॥ बिखिआ राता बहुतु दुखु पावै ॥ जम का गलि जेवड़ा नित कालु संतावै ॥ ४ ॥ गुरमुखि जमकालु नेड़ि न आवै ॥ हउमै दूजा सबदि जलावै ॥ नामे राते हरि गुण गावै ॥ ५ ॥ माइआ दासी भगता की कार कमावै ॥ चरणी लागै ता महलु पावै ॥ सद ही निरमलु सहजि समावै ॥ ६ ॥ हरि कथा सुणहि से धनवंत दिसहि जुग माही ॥ तिन कउ सभि निवहि अनदिनु पूज कराही ॥ सहजे गुण रवहि साचे मन माही ॥ ७ ॥ पूरै सतिगुरि सबदु सुणाइआ ॥ त्रै गुण मेटे चउथै चितु लाइआ ॥ नानक हउमै मारि ब्रहम मिलाइआ ॥ ८ ॥ ४ ॥

गउड़ी महला ३ ॥ ब्रहमा वेदु पड़ै वादु वखाणै ॥ अंतरि तामसु आपु न पछाणै ॥ ता प्रभु पाए गुर सबदु वखाणै ॥ १ ॥ गुर सेवा करउ फिरि कालु न खाइ ॥ मनमुख खाधे दूजै भाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुखि प्राणी अपराधी सीधे ॥ गुर कै सबदि अंतरि सहजि रीधे ॥ मेरा प्रभु पाइआ गुर कै सबदि सीधे ॥ २ ॥ सतिगुरि मेले प्रभि आपि मिलाए ॥ मेरे प्रभ साचे कै मनि भाए ॥ हरि गुण गावहि सहजि सुभाए ॥ ३ ॥ बिनु गुर साचे भरमि भुलाए ॥ मनमुख अंधे सदा बिखु खाए ॥ जम डंडु सहहि सदा दुखु पाए ॥ ४ ॥ जमूआ न जोहै हरि की सरणाई ॥ हउमै मारि सचि लिव लाई ॥ सदा रहै हरि नामि लिव लाई ॥ ५ ॥ सतिगुरु सेवहि से जन निरमल पविता ॥ मन सिउ मनु मिलाइ सभु जगु जीता ॥ इन बिधि कुसलु तेरै मेरे मीता ॥ ६ ॥ सतिगुरू सेवे सो फलु पाए ॥ हिरदै नामु विचहु आपु गवाए ॥ अनहद बाणी सबदु वजाए ॥ ७ ॥ सतिगुर ते कवनु कवनु न सीधो मेरे भाई ॥ भगती सीधे दरि सोभा पाई ॥ नानक राम नामि वडिआई ॥ ८ ॥ ५ ॥

गउड़ी महला ३ ॥ त्रै गुण वखाणै भरमु न जाइ ॥ बंधन न तूटहि मुकति न पाइ ॥ मुकति दाता सतिगुरु जुग माहि ॥ १ ॥ गुरमुखि प्राणी भरमु गवाइ ॥ सहज धुनि उपजै हरि लिव लाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रै गुण कालै की

वाद–विवादों का कथन किया गया है जिनमें लीन होने से यम की चोट सिर पर सहनी पड़ती है । वह वाणी तत्व को नहीं पहचानती और कर्मकाण्ड के गट्ठरों को ही बँधवा कर व्यक्ति के सिर पर सवार होती है ॥ २ ॥ मनमुख व्यक्ति अज्ञान के कारण उलटा रास्ता पकड़ता है तथा हरि–नाम को भुला कर व्यक्ति को कर्मकाण्डों में पक्का करता है । द्वैतभाव में लीन ऐसे व्यक्ति संसार–सागर में ही डूब मरते हैं ॥ ३ ॥ धन का मोहताज अपने को पंडित कहलाता है और विषयों के विष में लीन होकर बहुत दुःख पाता है । उसके गले में सदैव यम का पाश पड़ा ही रहता है और काल उसे सदैव सताता ही रहता है ॥ ४ ॥ यम–काल गुरमुख व्यक्ति के पास भी नहीं आता क्योंकि गुरमुख शब्द के माध्यम से अहंकार एवं द्वैतभाव को नष्ट कर देता है तथा नाम में लीन होकर प्रभु का गुणानुवाद करता है ॥ ५ ॥ माया भक्तों की सेवक बनकर उनके लिए काम करती है । जो व्यक्ति ऐसे भक्तों के चरण–स्पर्श करता है उसे प्रभु के महल में ठिकाना मिल जाता है । वह सदा ही निर्मल बना रहकर सहजभाव में लीन हो जाता है ॥ ६ ॥ जो प्रभु की कथा–वार्ता सुनते हैं इस युग में वही धनवान दिखाई देते हैं । सभी उनके सामने आदर से झुकते हैं और अपना सम्मान करवाते हैं । वे स्वाभाविक रूप से ही प्रभु के गुणों में लीन बने रहते हैं और मन से सच्चे अर्थात पवित्र बने रहते हैं ॥ ७ ॥ पूर्ण सद्गुरु ने जब शब्द के मर्म को बता दिया तो तीनों गुणों को मिटाकर मेरे अन्दर चौथे पद के लिए लगन लगा दी है । हे नानक, गुरु ने ही मेरे अहंकार को मारकर मुझे परमात्मा से मिला दिया है ॥ ८ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ ब्रह्मा वेद पाठ करता हुआ वाद–विवाद का बखान करता है । उसके अन्तर्मन में क्रोध आदि प्रबल रूप में होने से वह अपने आप को पहचानता नहीं और यह नहीं समझता कि शब्द–गुरु के बखान एवं चिन्तन से ही प्रभु को पाया जाता है ॥ १ ॥ गुरु की सेवा करने से ही काल प्रभावित नहीं करता परन्तु द्वैतभाव में बने रहने वाले मनमुख काल के द्वारा खा लिए जाते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुख व्यक्ति अपराधियों को भी शुद्ध एवं सीधे बना देता है और गुरु के उपदेश के फलस्वरूप उनका अन्तर्मन स्वाभाविक रूप से ही प्रेम से भर जाता है । मेरे प्रभु को सीधे ही शब्द–गुरु के माध्यम से पाया जाता है ॥ २ ॥ यदि सत्य–प्रभु को अच्छा लगे तब ही प्रभु स्वयं सद्गुरु के माध्यम से व्यक्ति को अपने से मिला लेता है । व्यक्ति तब स्वाभाविक रूप से ही प्रभु के गुण गाता चला जाता है ॥ ३ ॥ सत्य–गुरु के बिना सभी भ्रमों में भटकते हैं और मनमुख अन्धे व्यक्ति सदा विकारों का विष ही खाते रहते हैं । वे ही यम दण्ड को सहते तथा सदा दुखी बने रहते हैं ॥ ४ ॥ यदि अहंकार को मारकर सत्य में सुरति लगाकर प्रभु की शरण में आ जाया जाए तो मारने के लिए यम जीव को ढूँढता नहीं फिरता । सत्य में लीन व्यक्ति सदा प्रभु–नाम में सुरति को जोड़े रहता है ॥ ५ ॥ जो सद्गुरु का सुमिरन करते हैं वे व्यक्ति निर्मल और पवित्र होते हैं । वे ज्योति–स्वरूप मन में अपने विकारी मन को लीन करके सारे संसार को जीत लेने की शक्ति प्राप्त कर लेते हैं । हे मित्र, इसी विधि से ही तू सुख एवं आनन्द प्राप्त कर सकता है ॥ ६ ॥ जो सद्गुरु का सुमिरन करता है, फल रूप में उसके हृदय में प्रभु–नाम आ बसता है तथा उसका अहंकार चुक जाता है । उसके हृदय में अनहत् वाणी रूपी शब्द की गूँज पड़ जाती है ॥ ७ ॥ हे मेरे भाई, सद्गुरु से भला कौन कौन पवित्र नहीं बना । सभी उसकी भक्ति के माध्यम से शुद्ध हो गए हैं और सबने प्रभु द्वार पर सम्मान पाया है । हे नानक, यह सब राम–नाम का ही बड़प्पन है ॥ ८ ॥ ५ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ तीनों गुणों के बखान मात्र से भ्रम नहीं जाता, बन्धन नहीं टूटता और मुक्ति नहीं प्राप्त होती । इस युग में सद्गुरु ही मुक्ति का दाता है ॥ १ ॥ गुरमुख व्यक्ति भ्रमों को दूर करता है और प्रभु में सुरति जोड़ने से उसके अन्तर्मन में सहज अर्थात समरसता की ध्वनि उत्पन्न होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥

सिरि कारा ॥ नामु न चेतहि उपावणहारा ॥ मरि जंमहि फिरि वारो वारा ॥ २ ॥ अंधे गुरू ते भरमु न जाई ॥ मूलु छोडि लागे दूजै भाई ॥ बिखु का माता बिखु माहि समाई ॥ ३ ॥ माइआ करि मूलु जंत्र भरमाए ॥ हरि जीउ विसरिआ दूजै भाए ॥ जिसु नदरि करे सो परम गति पाए ॥ ४ ॥ अंतरि साचु बाहरि साचु वरताए ॥ साचु न छपै जे को रखै छपाए ॥ गिआनी बूझहि सहजि सुभाए ॥ ५ ॥ गुरमुखि साचि रहिआ लिव लाए ॥ हउमै माइआ सबदि जलाए ॥ मेरा प्रभु साचा मेलि मिलाए ॥ ६ ॥ सतिगुरु दाता सबदु सुणाए ॥ धावतु राखै ठाकि रहाए ॥ पूरे गुर ते सोझी पाए ॥ ७ ॥ आपे करता स्रिसटि सिरजि जिनि गोई ॥ तिसु बिनु दूजा अवरु न कोई ॥ नानक गुरमुखि बूझै कोई ॥ ८ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ नामु अमोलकु गुरमुखि पावै ॥ नामो सेवे नामि सहजि समावै ॥ अंम्रितु नामु रसना नित गावै ॥ जिस नो क्रिपा करे सो हरि रसु पावै ॥ १ ॥ अनदिनु हिरदै जपउ जगदीसा ॥ गुरमुखि पावउ परम पदु सूखा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हिरदै सूखु भइआ परगासु ॥ गुरमुखि गावहि सचु गुणतासु ॥ दासनि दास नित होवहि दासु ॥ ग्रिह कुटंब महि सदा उदासु ॥ २ ॥ जीवन मुकतु गुरमुखि को होई ॥ परम पदारथु पावै सोई ॥ त्रै गुण मेटे निरमलु होई ॥ सहजे साचि मिलै प्रभु सोई ॥ ३ ॥ मोह कुटंब सिउ प्रीति न होइ ॥ जा हिरदै वसिआ सचु सोइ ॥ गुरमुखि मनु बेधिआ असथिरु होइ ॥ हुकमु पछाणै बूझै सचु सोइ ॥ ४ ॥ तूं करता मै अवरु न कोइ ॥ तुझु सेवी तुझ ते पति होइ ॥ किरपा करहि गावा प्रभु सोइ ॥ नाम रतनु सभ जग महि लोइ ॥ ५ ॥ गुरमुखि बाणी मीठी लागी ॥ अंतरु बिगसै अनदिनु लिव लागी ॥ सहजे सचु मिलिआ परसादी ॥ सतिगुरु पाइआ पूरै वडभागी ॥ ६ ॥ हउमै ममता दुरमति दुख नासु ॥ जब हिरदै राम नाम गुणतासु ॥ गुरमुखि बुधि प्रगटी प्रभ जासु ॥ जब हिरदै रविआ चरण निवासु ॥ ७ ॥ जिसु नामु देइ सोई जनु पाए ॥ गुरमुखि मेले आपु गवाए ॥ हिरदै साचा नामु वसाए ॥ नानक सहजे साचि समाए ॥ ८ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ मन ही मनु सवारिआ भै सहजि

तीनों गुणों के अधीन बने रहने वालों के सिर पर काल की लकीर हमेशा वनी रहती है क्योंकि वे पैदा करने वाले प्रभु–नाम का सुमिरन नहीं करते। वे बार–वार जन्मते मरते रहते हैं ॥ २ ॥ अज्ञानी गुरु से भ्रम दूर नहीं होता क्योंकि वह हरि रूपी मूल तत्व को छोड़कर द्वैतभाव में लगा रहता है। विष में लीन व्यक्ति अन्ततः विष में ही नष्ट हो जाता है ॥ ३ ॥ माया को ही मूल तत्व समझकर भ्रमों में भटक रहे द्वैत भाव में लीन उन्होंने प्रभु को भुला दिया है। प्रभु ही जिस पर कृपा दृष्टि करे ऐसी स्थिति में वही परम गति को पाता है ॥ ४ ॥ जिसके अन्तर्मन में सत्य है उसका वाहर व्यवहार भी सत्य ही होगा क्योंकि सत्य छिपाये रहने से भी नहीं छिपता। ज्ञानवान व्यक्ति स्वाभाविक रूप से ही सत्य को पहचान जाता है ॥ ५ ॥ अहंकार एवं माया को शव्द के माध्यम से नष्ट करके गुरमुख व्यक्ति सत्य में लीन वना रहता है। मेरा सच्चा प्रभु ही ऐसे व्यक्ति से मेल कराता है ॥ ६ ॥ दाता सद्गुरु उपदेश रूपी शब्द सुनाता है और भटकते हुए मन को रोक लेता है। पूर्ण गुरु के माध्यम से ही यह समझ प्राप्त होती है। जिसने इस सृष्टि की रचना करके इसको लय भी किया है वही कर्ता–प्रभु स्वयं ही सब कुछ है। उसके विना अन्य दूसरा कोई नहीं है। हे नानक, कोई विरला गुरमुख ही इस तथ्य को समझता है ॥ ८ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ गुरमुख व्यक्ति ही अमूल्य नाम को प्राप्त करता है; वह नाम का ही सुमिरन करता है, नाम में ही सहजभाव से लीन हो जाता है और सदैव अपनी जीभ से अमृत–नाम का गायन करता है। जिस पर प्रभु कृपा करे वही इस हरि–रस को प्राप्त कर पाता है ॥ १ ॥ प्रतिदिन हृदय में प्रभु का जाप करते हुए गुरमुख बनकर हे प्राणी, परम पद के सुख को प्राप्त करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरमुख व्यक्ति के हृदय में प्रभु का प्रकाश होने से सुख ही सुख हो गया है और वह गुणों के खज़ाने सत्य–प्रभु का गुणानुवाद करता है। वह सदैव प्रभु के दासों का भी दास बना रहता है तथा घर–परिवार में रहता हुआ भी (कर्त्तव्य कर्मों का पालन करता हुआ) संसार से अलिप्त बना रहता है ॥ २ ॥ जो गुरमुख जीवन–मुक्त होता है वही प्रभु रूपी परम पदार्थ को प्राप्त करता है। वह तीनों गुणों को समाप्त कर पवित्र बन जाता है और सहज भाव से सत्य के माध्यम से प्रभु को पा लेता है ॥ ३ ॥ जिसके हृदय में सत्य आन बसा है उसे पारिवारिक मोह का लगाव नहीं होता। प्रभु–नाम में विंधा हुआ गुरमुख का मन प्रभु के हुकुम को पहचानता हुआ सत्य को जान लेता है एवं स्थिर बना रहता है ॥ ४ ॥ हे प्रभु, तू ही कर्ता है और मेरा अन्य कोई नहीं है। मैं तेरा ही सुमिरन करता हूँ और तुझसे ही मुझे सम्मान प्राप्त होता है। तेरी कृपा होती है तभी हे प्रभु, मैं तेरे गुण गाता हूँ क्योंकि मेरे लिए नाम रूपी रत्न ही सारे संसार को प्रकाशित करने वाला है ॥ ५ ॥ गुरमुख व्यक्ति को प्रभु वाणी सदैव मीठी लगती है जिससे उसका अन्तर्मन खिल उठता है और उसकी सुरति हमेशा उसी में लगी रहती है ॥ स्वाभाविक रूप से ही उसे प्रसाद रूप में सत्य प्राप्त हो जाता है और पूर्ण भाग्यशाली बनकर वह सद्गुरु रूपी परमात्मा को पा लेता है ॥ ६ ॥ जव हृदय में प्रभु–नाम रूपी भण्डार का पता लग जाता है तव अहंकार, स्वार्थ, दुर्मति और दुखों का नाश हो जाता है। प्रभु के यश–गायन से ही गुरमुख व्यक्तियों वाली बुद्धि प्रकट हो उठती है। ऐसा तभी सम्भव होता है जव हृदय में प्रभु चरणों का निवास हो जाता है ॥ ७ ॥ प्रभु जिसे नाम दान देता है वही सेवक इसे पाता है। गुरमुखों का अहंकार भाव चुका कर प्रभु उन्हें अपने से मिला लेता है और उनके हृदय में सच्चा प्रभु नाम बसा देता है। हे नानक, ऐसे गुरमुख स्वाभाविक रूप से ही सत्य में समाहित हो जाते हैं ॥ ८ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ प्रभु के भय में मन ने स्वयं ही मन को

सुभाइ ॥ सबदि मनु रंगिआ लिव लाइ ॥ निज घरि वसिआ प्रभ की रजाइ ॥ १ ॥ सतिगुरु सेविऐ जाइ अभिमानु ॥ गोविदु पाईऐ गुणी निधानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु बैरागी जा सबदि भउ खाइ ॥ मेरा प्रभु निरमला सभ तै रहिआ समाइ ॥ गुर किरपा ते मिलै मिलाइ ॥ २ ॥ हरि दासन को दासु सुखु पाए ॥ मेरा हरि प्रभु इन बिधि पाइआ जाए ॥ हरि किरपा ते राम गुण गाए ॥ ३ ॥ ध्रिगु बहु जीवणु जितु हरि नामि न लगै पिआरु ॥ ध्रिगु सेज सुखाली कामणि मोह गुबारु ॥ तिन सफलु जनमु जिन नामु अधारु ॥ ४ ॥ ध्रिगु ध्रिगु ग्रिहु कुटंबु जितु हरि प्रीति न होइ ॥ सोई हमारा मीतु जो हरि गुण गावै सोइ ॥ हरि नाम बिना मै अवरु न कोइ ॥ ५ ॥ सतिगुर ते हम गति पति पाई ॥ हरि नामु धिआइआ दूखु सगल मिटाई ॥ सदा अनंदु हरि नामि लिव लाई ॥ ६ ॥ गुरि मिलिऐ हम कउ सरीर सुधि भई ॥ हउमै त्रिसना सभ अगनि बुझई ॥ बिनसे क्रोध खिमा गहि लई ॥ ७ ॥ हरि आपे क्रिपा करे नामु देवै ॥ गुरमुखि रतनु को विरला लेवै ॥ नानकु गुण गावै हरि अलख अभेवै ॥ ८ ॥ ८ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥

सतिगुर ते जो मुह फेरे ते वेमुख बुरे दिसंनि ॥ अनदिनु बधे मारीअनि फिरि वेला ना लहंनि ॥ १ ॥ हरि हरि राखहु क्रिपा धारि ॥ सतसंगति मेलाइ प्रभ हरि हिरदै गुण सारि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ से भगत हरि भावदे जो गुरमुखि भाइ चलंनि ॥ आपु छोडि सेवा करनि जीवत मुए रहंनि ॥ २ ॥ जिस दा पिंडु पराण है तिस की सिरि कार ॥ ओहु किउ मनहु विसारीऐ हरि रखीऐ हिरदै धारि ॥ ३ ॥ नामि मिलिऐ पति पाईऐ नामि मंनिऐ सुखु होइ ॥ सतिगुर ते नामु पाईऐ करमि मिलै प्रभु सोइ ॥ ४ ॥ सतिगुर ते जो मुहु फेरे ओइ भ्रमदे ना टिकंनि ॥ धरति असमानु न झलई विचि विसटा पए पचंनि ॥ ५ ॥ इहु जगु भरमि भुलाइआ मोह ठगउली पाइ ॥ जिना सतिगुरु भेटिआ तिन नेड़ि न भिटै माइ ॥ ६ ॥ सतिगुरु सेवनि सो सोहणे हउमै मैलु

सहज स्वाभाविक रूप से सँवार कर शुद्ध कर लिया है । अब शब्द के माध्यम से ध्यान लगाकर मन प्रभु रंग में रंग गया है और प्रभु की रज़ा को मानते हुए अपने वास्तविक घर में आ टिका है ॥ १ ॥ सद्गुरु की सेवा में आ जाने पर अभिमान दूर हो जाता है और गुणों का भण्डार परमात्मा मिल जाता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब व्यक्ति परमात्मा के सर्वत्र होने के भय को अपना भोजन बनाता है तो उसका मन मोह के प्रति वैराग्यवान हो उठता है । गुरु की कृपा से गुरु द्वारा मिलाया हुआ वह व्यक्ति परमात्मा से मिल जाता है ॥ २ ॥ जो परमात्मा के सेवकों का भी सेवक बन जाता है वह आनन्द प्राप्त करता है । हे भाई, इस विधि से ही प्रभु पाया जाता है और प्रभु कृपा से ही परमात्मा के गुण गाए जाते हैं ॥ ३ ॥ ऐसा लम्बा जीवन धिक्कार है जिसमें प्रभु नाम से प्रेम उत्पन्न नहीं हुआ । सुखदायक सेज, सुन्दर स्त्री, मोह आदि का अन्धकार भी धिक्कार योग्य है । उन्हीं का जन्म सफल होता है जिनके जीवन का आधार प्रभु–नाम है ॥ ४ ॥ वह घर–परिवार बार बार धिक्कार योग्य है जिसके माध्यम से प्रभु–प्रेम पैदा नहीं होता । हमारा मित्र वही है जो प्रभु के गुण गाता है क्योंकि प्रभु–नाम के बिना कोई भी मेरा अपना नहीं है ॥ ५ ॥ सच्चे गुरु से ही हमने जीवन ढंग और सम्मान प्राप्त किया है । प्रभु–नाम के सुमिरन से ही समस्त दुख समाप्त होते हैं । सदा प्रभु–नाम में सुरति लगाए रहने से सदैव आनन्द प्राप्त होता रहता है ॥ ६ ॥ गुरु के माध्यम से हमको शरीर और उसके गुण अवगुणों के प्रति समझ मिली; इसी कारण हमारी तृष्णा एवं अहंकार की अग्नि शान्त हो गई है । जब व्यक्ति क्षमा धारण कर लेता है तो उसका क्रोध भी विनष्ट हो जाता है ॥ ७ ॥ प्रभु स्वयं कृपा करता है तो अपना नाम प्रदान करता है और इस नाम रत्न को कोई बिरला ही गुरमुख बनकर प्राप्त करता है । नानक तो उस अदृष्ट एवं रहस्यमय परमात्मा के गुण सदैव गाता चला जाता है ॥ ८ ॥ ८ ॥

१ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी बैरागणि महला ३ ॥

जो सद्गुरु से मुँह फेर लेते हैं वे विमुख व्यक्ति बुरे दिखाई देते हैं । हर दिन उनको बांध कर मारा जाता है और फिर उन्हें पश्चाताप करने का अवसर भी नहीं मिलता ॥ १ ॥ हे प्रभु, कृपा करके रक्षा करो । मुझे सद्संगत से मिला दो ताकि प्रभु के गुणों का सुमिरन मैं हृदय में बनाए रखूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु को वही भक्त भाते हैं जो गुरमुख वाले स्वभाव में जीवनयापन करते हैं । वे अपने अभिमान को छोड़कर सेवा करते हैं और जीवित बने रहकर विकारों की ओर से मृत हो जाते हैं ॥ २ ॥ जिस प्रभु का यह शरीर और प्राण हैं, व्यक्ति के माथे पर उसी की सेवा करने का लेख लिखा है । उस प्रभु को ही हृदय में धारण करके रखा जाना चाहिए और उसे भला क्यों भुलाया जाए ॥ ३॥ नाम प्राप्त होने से सम्मान मिलता है और प्रभु–नाम को मानने से आनन्द प्राप्त होता है । सद्गुरु से ही नाम की प्राप्ति होती है और उसी की कृपा से प्रभु से मिलाप होता है ॥ ४ ॥ सद्गुरु से जो मुँह फेर लेते हैं वे भ्रमों में भटकते रहते हैं और कहीं टिकते नहीं । ऐसे व्यक्तियों को धरती और आकाश कोई भी सहन नहीं करता और वे गन्दगी में पड़े हुए ही ख्वार होते रहते हैं ॥ ५ ॥ मोह की ठगबूटी को खाकर यह संसार भ्रमों में भूला हुआ है परन्तु जिसका सम्पर्क सद्गुरु से बन गया है माया उसे स्पर्श भी नहीं कर पाती ॥ ६ ॥ सद्गुरु की सेवा करने वाले

गवाइ ॥ सबदि रते से निरमले चलहि सतिगुर भाइ ॥ ७ ॥ हरि प्रभ दाता एकु तूं तूं आपे बखसि मिलाइ ॥ जनु नानकु सरणागती जिउ भावै तिवै छडाइ ॥ ८ ॥ १ ॥ ९ ॥

रागु गउड़ी पूरबी महला ४ करहले १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

करहले मन परदेसीआ किउ मिलीऐ हरि माइ ॥ गुरु भागि पूरै पाइआ गलि मिलिआ पिआरा आइ ॥ १ ॥ मन करहला सतिगुरु पुरखु धिआइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन करहला वीचारीआ हरि राम नाम धिआइ ॥ जिथै लेखा मंगीऐ हरि आपे लए छडाइ ॥ २ ॥ मन करहला अति निरमला मलु लागी हउमै आइ ॥ परतखि पिरु घरि नालि पिआरा विछुड़ि चोटा खाइ ॥ ३ ॥ मन करहला मेरे प्रीतमा हरि रिदै भालि भालाइ ॥ उपाइ कितै न लभई गुरु हिरदै हरि देखाइ ॥ ४ ॥ मन करहला मेरे प्रीतमा दिनु रैणि हरि लिव लाइ ॥ घरु जाइ पावहि रंग महली गुरु मेले हरि मेलाइ ॥ ५ ॥ मन करहला तूं मीतु मेरा पाखंडु लोभु तजाइ ॥ पाखंडि लोभी मारीऐ जम डंडु देइ सजाइ ॥ ६ ॥ मन करहला मेरे प्रान तूं मैलु पाखंडु भरमु गवाइ ॥ हरि अंम्रित सरु गुरि पूरिआ मिलि संगती मलु लहि जाइ ॥ ७ ॥ मन करहला मेरे पिआरिआ इक गुर की सिख सुणाइ ॥ इहु मोहु माइआ पसरिआ अंति साथि न कोई जाइ ॥ ८ ॥ मन करहला मेरे साजना हरि खरचु लीआ पति पाइ ॥ हरि दरगह पैनाइआ हरि आपि लइआ गलि लाइ ॥ ९ ॥ मन करहला गुरि मंनिआ गुरमुखि कार कमाइ ॥ गुर आगै करि जोदड़ी जन नानक हरि मेलाइ ॥ १० ॥ १ ॥ गउड़ी महला ४ ॥ मन करहला वीचारीआ वीचारि देखु समालि ॥ बन फिरि थके बन वासीआ पिरु गुरमति रिदै निहालि ॥ १ ॥ मन करहला गुर गोविंदु समालि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन करहला वीचारीआ मनमुख फाथिआ महा जालि ॥ गुरमुखि प्राणी मुकतु है हरि हरि नामु समालि ॥ २ ॥ मन करहला मेरे पिआरिआ सतसंगति सतिगुरु भालि ॥ सतसंगति लगि हरि धिआईऐ हरि हरि चलै तेरै नालि ॥ ३ ॥ मन करहला वडभागीआ

अहंकार की मैल को त्याग कर सुन्दर बन जाते हैं । वे शब्द में लीन होकर पवित्र वन जाते हैं और सद्गुरु के हुकुम में ही बने रहते हैं ॥ ७ ॥ हे प्रभु, तू एक ही दाता है और तू कृपा करके हमें अपने से मिला ले । दास नानक तो तेरी शरण में पड़ा है उसे जैसे चाहे बन्धन मुक्त कर दे ॥ ८ ॥ १ ॥ ९ ॥

राग़ु गउड़ी पूरबी महला ४ करहले १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

हे सदैव भटकते रहने वाले ऊँट की वृद्धि वाले परदेसी मन, उस माँ रूपी परमात्मा को कैसे मिला जाए । पूर्ण भाग्यशाली होने से ही गुरु मिलता है और प्रभु प्यारे से भी गले मिलना सम्भव होता है ॥ १ ॥ हे ऊँट के समान वेलगाम मन, तू परमात्मा रूपी गुरु को सदैव याद रख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे विचारवान परन्तु भटकते हुए मन, तू प्रभु–नाम का सुमिरन कर । ऐसा करने से तुझसे जहां भी जीवन का हिसाव पूछा जाएगा वहीं तुझे प्रभु सहायता करके छुड़ा लेगा ॥ २ ॥ हे भटकते हुए मन, तू अत्यन्त निर्मल है परन्तु तुझे अहंकार की मैल छू गई है । तेरे साथ ही तेरा प्रियतम प्रभु प्रत्यक्ष रूप में बना रहता है परन्तु तू फिर भी उससे बिछुड़ कर दुःख की चोटें खाता रहता है ॥ ३ ॥ हे ऊँट की तरह भटकते हुए मेरे प्यारे मन, तू प्रभु की खोज अपने हृदय में ही कर । वह अन्य किसी उपाय से भी प्राप्त नहीं होगा; केवल गुरु ही तुम्हें हृदय में दिखा सकेगा ॥ ४ ॥ हे भटकते हुए मन, दिन–रात प्रभु में अपनी सुरति वनाए रख। तुझे प्रभु के रंग महल में स्थान मिल जाएगा और ऐसा सम्भव गुरु के माध्यम से ही होगा ॥ ५ ॥ हे मेरे भटकते हुए मित्र मन, तू पाखण्ड और लोभ का त्याग कर दे क्योंकि पाखण्डी और लोभी व्यक्ति अन्ततः मार खाता है और यम भी उसे सज़ा देता है ॥ ६ ॥ हे मेरे प्राण रूपी मन, तू विकारों की मैल, पाखण्ड और भ्रमों को छोड़ दे । परमात्मा अमृत का सरोवर है जिसे गुरु ने पूरा भरा हुआ है । तू साधु–संगत में मिल वैठ कर उसमें स्नान कर जिससे तेरी मैल उतर जाएगी ॥ ७ ॥ हे मेरे प्यारे भटकते हुए मन, गुरु के एक उपदेश को ध्यान से सुन । माया मोह का यह प्रसार अन्त समय में साथ देने वाला नहीं है ॥ ८ ॥ हे मेरे भटकते हुए सज्जन मन, जीवन यात्रा के लिए जिसने प्रभु से खर्चा प्राप्त कर लिया है वह सम्मान प्राप्त करता है और प्रभु के दरबार में उसी को प्रभु सम्मान सहित अपने गले से लगाता है ॥ ९ ॥ हे बेलगाम मन, गुरु का कहना मान और गुरमुख की जीवन–शैली अपना । हे दास नानक, गुरु के आगे प्रार्थना कर कि वह तुझे प्रभु से मिला दे ॥ १० ॥ १ ॥ गउड़ी महला ४ ॥ हे भटकते हुए विचारवान मन, तू अच्छी तरह से विचार के देख कि तू संसार रूपी वनों में भटक भटक कर थक चुका है । तेरा प्रियतम तेरे अन्दर ही बस रहा है; तू गुरु की मति के अनुरूप चलकर उसे अन्दर ही देख ॥ १ ॥ हे भटकते हुए मन, गुरु रूपी परमात्मा को तू हृदय में संभाल कर रख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे विचारवान मन, तू देख ले कि मनमुख व्यक्ति संसार के महाजाल में फंसा हुआ है । दूसरी ओर प्रभु नाम का सुमिरन करने वाला गुरमुख व्यक्ति सभी वन्धनों से मुक्त है ॥ २ ॥ हे मेरे भटकते हुए मन, तू सद्संगत में ही सद्गुरु की तलाश कर । सद्संगत की शरण में आकर ही प्रभु का सुमिरन किया जाता है और यही प्रभु सदा तुम्हारे साथ चलने वाला होता है ॥ ३ ॥ हे भाग्यशाली परन्तु भटकते हुए मन,

हरि एक नदरि निहालि ॥ आपि छडाए छुटीऐ सतिगुर चरण समालि ॥ ४ ॥ मन करहला मेरे पिआरिआ विचि देही जोति समालि ॥ गुरि नउ निधि नामु विखालिआ हरि दाति करी दइआलि ॥ ५ ॥ मन करहला तूं चंचला चतुराई छडि विकरालि ॥ हरि हरि नामु समालि तूं हरि मुकति करे अंत कालि ॥ ६ ॥ मन करहला वडभागीआ तूं गिआनु रतनु समालि ॥ गुर गिआनु खड़गु हथि धारिआ जमु मारिअड़ा जमकालि ॥ ७ ॥ अंतरि निधानु मन करहले भ्रमि भवहि बाहरि भालि ॥ गुरु पुरखु पूरा भेटिआ हरि सजणु लधड़ा नालि ॥ ८ ॥ रंगि रतड़े मन करहले हरि रंगु सदा समालि ॥ हरि रंगु कदे न उतरै गुर सेवा सबदु समालि ॥ ९ ॥ हम पंखी मन करहले हरि तरवरु पुरखु अकालि ॥ वडभागी गुरमुखि पाइआ जन नानक नामु समालि ॥ १० ॥ २ ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ५ असटपदीआ १ੴ सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

जब इहु मन महि करत गुमाना ॥ तब इहु बावरु फिरत बिगाना ॥ जब इहु हूआ सगल की रीना ॥ ता ते रमईआ घटि घटि चीना ॥ १ ॥ सहज सुहेला फलु मसकीनी ॥ सतिगुर अपुनै मोहि दानु दीनी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब किस कउ इहु जानसि मंदा ॥ तब सगले इसु मेलहि फंदा ॥ मेर तेर जब इनहि चुकाई ॥ ता ते इसु संगि नही बैराई ॥ २ ॥ जब इनि अपुनी अपनी धारी ॥ तब इस कउ है मुसकलु भारी ॥ जब इनि करणैहारु पछाता ॥ तब इस नो नाही किछु ताता ॥ ३ ॥ जब इनि अपुनो बाधिओ मोहा ॥ आवै जाइ सदा जमि जोहा ॥ जब इस ते सभ बिनसे भरमा ॥ भेदु नाही है पारब्रहमा ॥ ४ ॥ जब इनि किछु करि माने भेदा ॥ तब ते दूख डंड अरु खेदा ॥ जब इनि एको एकी बूझिआ ॥ तब ते इस नो सभु किछु सूझिआ ॥ ५ ॥ जब इहु धावै माइआ अरथी ॥ नह त्रिपतावै नह तिस लाथी ॥ जब इस ते इहु होइओ जउला ॥ पीछै लागि चली उठि कउला ॥ ६ ॥ करि किरपा जउ सतिगुरु मिलिओ ॥ मन मंदर महि दीपकु जलिओ ॥ जीत हार की सोझी करी ॥ तउ इसु घर की

केवल एक परमात्मा को ही देखकर प्रसन्न हो। जब परमात्मा स्वयं छुड़वाता है तभी वन्धन छूटते हैं इसलिए तू सद्गुरु के चरणों की सेवा करता रह ॥ ४ ॥ हे मेरे प्यारे मन, तू इस शरीर के अन्दर बस रही परमात्मा की ज्योति पर ध्यान लगा। गुरु ने सभी निधियों के स्वरूप प्रभु–नाम से भेंट करवा दी है और प्रभु ने भी कृपा करके यह दान तुझे दिया है ॥ ५ ॥ हे चंचल एवं भटकते हुए मन, तू खतरनाक चतुराईयों को छोड़ दे, हरि–नाम का सुमिरन कर और परमात्मा ही अन्ततः तुझे मुक्त करेगा ॥ ६ ॥ हे भाग्यशाली परन्तु ऊँट की तरह भटकते हुए मन, तू ज्ञान रूपी रत्न को संभाल। गुरु का दिया हुआ ज्ञान वह खड्ग है जिसको हाथ में पकड़कर यम को भी मार दिया जाता है ॥ ७ ॥ हे भटकते हुए मन, तेरे अन्दर ही खज़ाना है और तू भ्रमों में पड़ा हुआ उसे वाहर ढूँढ रहा है। परमात्मा रूपी गुरु जिसे मिल जाता है वह व्यक्ति परमात्मा को अपने साथ ही बसता हुआ पा जाता है ॥ ८ ॥ हे बेलगाम मन, तू माया के मोह में लगा हुआ है; तू प्रभु के प्रेम–रंग को अपने अन्दर सम्भाल कर रख क्योंकि प्रभु के प्यार का रंग कभी फीका नहीं पड़ता। इसके लिए तू गुरु की सेवा में रह और शब्द–गुरु को अपने अन्दर सम्भाल कर रख ॥ ९ ॥ हे वेलगाम मन, हम सभी जीव पक्षी हैं और वह सर्वव्यापक अकाल परमात्मा एक विशाल वृक्ष है जो सभी पक्षियों का शरणस्थल है। हे दास नानक, गुरमुख बनकर बड़े भाग्य से प्रभु–नाम को हृदय में संभाल कर जीव रूपी पक्षियों ने प्रभु रूपी वृक्ष को प्राप्त किया है ॥ १० ॥ २ ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी महला ५ अष्टपदियां १ओअंकार सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

जब जब यह मन अभिमान करता है, तब तब यह बावला बनकर बेगानों की तरह भटकता रहता है। जब वह सब की चरण धूलि बन जाता है तो उस समय इसने प्रत्येक जीव में परमात्मा को पहचान लिया होता है ॥ १ ॥ विनम्रता धारण करने का यह फल है कि मैं सहज भाव से ही मुक्त हो गया हूँ। मेरे सद्गुरु ने ही यह दान मुझे दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब यह किसी को बुरा जानता है तब तो समझ लो इसने अपने चारों ओर फैले हुए जाल के फन्दों को स्वयं ही कस लिया। जब इसने मेरा–तेरा भाव दूर कर लिया तब इसका कोई भी शत्रु नहीं रहता ॥ २ ॥ जब इसने मेरी मेरी ही करना शुरू कर दिया तब इसने भारी मुश्किलें पैदा कर ली। जब इसने कर्त्ता–प्रभु को पहचान लिया तब इसमें कोई ईर्ष्या अथवा जलन नहीं बची ॥ ३ ॥ जब इसने मोह के बन्धन में स्वयं को बांध लिया तो इसका आवागमन चलता रहेगा और यम इस पर निशाना साधे रहेगा। जब इसने सभी भ्रमों को नष्ट कर दिया तव इसमें और परब्रह्म में कोई अन्तर नहीं रह जाता ॥ ४ ॥ जब यह कुछ भी करता हुआ अपने और दूसरे में ऊँच नीच का भेद मानता है तब इसे दुख, दण्ड एवं पछतावा भोगना पड़ता है। जब इसने केवल एक प्रभु को ही जाना बूझा है तब से इसको सब कुछ सुझायी देने लगा है ॥ ५ ॥ जब यह धन आदि के लिए दौड़ता–भागता है तव इसकी न तो तृष्णा समाप्त होती है और न ही इसे तृप्ति प्राप्त होती है। जव यह माया से अलग हो जाता है तो धनलक्ष्मी इसके पीछे पीछे चल पड़ती है ॥ ६ ॥ प्रभु कृपा से जब यह सद्गुरु से मिलाप करता है तो इसके मन में ज्ञान का दीपक जल उठता है। अब इसे वास्तविक जीत और हार की समझ आ जाती है और इस

कीमति परी ॥ ७ ॥ करन करावन सभु किछु एकै ॥ आपे बुधि बीचारि बिबेकै ॥ दूरि न नेरै सभ कै संगा ॥ सचु सालाहणु नानक हरि रंगा ॥ ८ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुर सेवा ते नामे लागा ॥ तिस कउ मिलिआ जिसु मसतकि भागा ॥ तिस कै हिरदै रविआ सोइ ॥ मनु तनु सीतलु निहचलु होइ ॥ १ ॥ ऐसा कीरतनु करि मन मेरे ॥ ईहा ऊहा जो कामि तेरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जासु जपत भउ अपदा जाइ ॥ धावत मनूआ आवै ठाइ ॥ जासु जपत फिरि दूखु न लागै ॥ जासु जपत इह हउमै भागै ॥ २ ॥ जासु जपत वसि आवहि पंचा ॥ जासु जपत रिदै अंम्रितु संचा ॥ जासु जपत इह त्रिसना बुझै ॥ जासु जपत हरि दरगह सिझै ॥ ३ ॥ जासु जपत कोटि मिटहि अपराध ॥ जासु जपत हरि होवहि साध ॥ जासु जपत मनु सीतलु होवै ॥ जासु जपत मलु सगली खोवै ॥ ४ ॥ जासु जपत रतनु हरि मिलै ॥ बहुरि न छोडै हरि संगि हिलै ॥ जासु जपत कई बैकुंठ वासु ॥ जासु जपत सुख सहजि निवासु ॥ ५ ॥ जासु जपत इह अगनि न पोहत ॥ जासु जपत इहु कालु न जोहत ॥ जासु जपत तेरा निरमल माथा ॥ जासु जपत सगला दुखु लाथा ॥ ६ ॥ जासु जपत मुसकलु कछू न बनै ॥ जासु जपत सुणि अनहत धुनै ॥ जासु जपत इह निरमल सोइ ॥ जासु जपत कमलु सीधा होइ ॥ ७ ॥ गुरि सुभ द्रिसटि सभ ऊपरि करी ॥ जिस कै हिरदै मंत्रु दे हरी ॥ अखंड कीरतनु तिनि भोजनु चूरा ॥ कहु नानक जिसु सतिगुरु पूरा ॥ ८ ॥ २ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुर का सबदु रिद अंतरि धारै ॥ पंच जना सिउ संगु निवारै ॥ दस इंद्री करि राखै वासि ॥ ता कै आतमै होइ परगासु ॥ १ ॥ ऐसी द्रिड़ता ता कै होइ ॥ जा कउ दइआ मइआ प्रभ सोइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साजनु दुसटु जा कै एक समानै ॥ जेता बोलणु तेता गिआनै ॥ जेता सुनणा तेता नामु ॥ जेता पेखनु तेता धिआनु ॥ २ ॥ सहजे जागणु सहजे सोइ ॥ सहजे होता जाइ सु होइ ॥ सहजि बैरागु सहजे ही हसना ॥ सहजे चूप सहजे ही जपना ॥ ३ ॥ सहजे भोजनु सहजे भाउ ॥ सहजे मिटिओ सगल दुराउ ॥ सहजे होआ साधू संगु ॥ सहजि मिलिओ पारब्रहमु निसंगु ॥ ४ ॥ सहजे

शरीर रूपी अवसर के मूल्य का पता चल जाता है ॥ ७ ॥ वह एक प्रभु ही सब कुछ करने कराने वाला है और वह स्वयं ही बुद्धि, विचार और विवेक है । वह दूर या पास न होकर सबके साथ ही बना हुआ है इसलिए हे नानक, ऐसे सत्य रूपी परमात्मा का प्रेमपूर्वक गुणानुवाद करना चाहिए ॥ ८ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुरु की सेवा से ही व्यक्ति नाम में लीन होता है और जो भाग्यशाली होता है उसी को ही प्रभु–नाम प्राप्त होता है । उसके हृदय में प्रभु–नाम बस जाता है और उसका मन–तन शीतल एवं स्थिर अवस्था में बना रहता है ॥ १ ॥ हे मन, तू प्रभु की कीर्ति का ऐसा गायन कर जो यहां और वहां तेरे काम आएगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु के जाप से भय और आपदा दूर हो जाती है और भटकता हुआ मन एक स्थान पर टिक जाता है । प्रभु के जाप से दुख नहीं प्रभावित करता और प्रभु जाप से ही यह अहंकार भाग खड़ा होता है ॥ २ ॥ प्रभु यश के जाप से पांचों विकार वश में आ जाते हैं और हृदय में अमृत का संचार हो जाता है । प्रभु के जाप से तृष्णा मिट जाती है और व्यक्ति प्रभु के दरवार में सफल हो जाता है ॥ ३॥ प्रभु जाप से करोड़ों अपराध समाप्त हो जाते हैं और व्यक्ति गुरमुख बन जाता है । प्रभु के जाप से मन शीतल हो जाता है और सब प्रकार का मल उतर जाता है ॥ ४ ॥ प्रभु–यश का गायन करने से हरि रूपी रत्न प्राप्त होता है और व्यक्ति का ऐसा स्वभाव बन जाता है कि वह फिर प्रभु को छोड़ता नहीं । प्रभु–जाप से वैकुण्ठों में निवास मिलता है और व्यक्ति सहज सुख में स्थान पा जाता है ॥ ५ ॥ प्रभु के जाप से तृष्णा रूपी अग्नि प्रभावित नहीं करती और मौत अपना निशाना नहीं साधे रहती । प्रभु के जाप से तेरा मस्तक पवित्र हो जाता है और समस्त दुख समाप्त हो जाते हैं ॥ ६ ॥ प्रभु–जाप से कोई भी मुश्किल सामने नहीं आती और प्रभु–जाप से आध्यात्मिक आनन्द की अनहत् धुन सुनाई देती है । प्रभु जाप से निर्मल शोभा प्राप्त होती है और प्रभु जाप से ही हृदय रूपी कमल सीधा होकर खिल जाता है ॥ ७ ॥ गुरु के माध्यम से कृपा की दृष्टि प्रभु उस पर डालता है जिसके हृदय में प्रभु ने अपना उद्देश्य स्थिर कर दिया है । प्रभु का अखण्ड कीर्तन ही ऐसे व्यक्तियों का भोजन (चूर्मा) बन जाता है और नानक कहता है कि ऐसा उन्हीं के साथ होता है जिनका सद्गुरु पूर्ण होता है ॥८॥२॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो व्यक्ति शव्द–गुरु को हृदय में धारण करता है, पांचों विकारों का साथ छोड़ देता है, दसों इन्द्रियों को वश में करता है उसकी आत्मा में ही ज्ञान का प्रकाश होता है ॥ १ ॥ ऐसी दृढ़ता उसी में होती है जिस पर प्रभु की कृपा और स्नेह होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसे व्यक्ति को सज्जन और दुष्ट एक–समान लगते हैं । ऐसे व्यक्ति जितना भी बोलते हैं उसमें ज्ञान ही ज्ञान होता है । वे जितना सुनते हैं वह प्रभु–नाम ही होता है और जितना देखते हैं वह प्रभु का ध्यान ही होता है ॥ २ ॥ वे सहजभाव में जागते और सोते हैं और उनका किया जो कुछ भी होता है, सहजभाव में ही होता है । वे सहजभाव में ही वैराग्यवान बनते हैं और सहज में ही प्रसन्न होते हुए हँसते हैं । सहजभाव में ही वे शान्त बने रहते हैं और सहज में ही वे प्रभु का जाप करते हैं ॥ ३ ॥ उनका प्रेम और भोजन सहज ही होता है और स्वाभाविक रूप से ही वे सभी दूरियों को मिटा देते हैं । सहजभाव में ही वे गुरमुख रूपी साधुओं से मिलते हैं और सहजभाव में ही वे परमात्मा से मेल करते हैं॥४॥

ग्रिह महि सहजि उदासी ॥ सहजे दुबिधा तन की नासी ॥ जा कै सहजि मनि भइआ अनंदु ॥ ता कउ भेटिआ परमानंदु ॥ ५ ॥ सहजे अंम्रितु पीओ नामु ॥ सहजे कीनो जीअ को दानु ॥ सहज कथा महि आतमु रसिआ ॥ ता कै संगि अबिनासी वसिआ ॥ ६ ॥ सहजे आसणु असथिरु भाइआ ॥ सहजे अनहत सबदु वजाइआ ॥ सहजे रुण झुणकारु सुहाइआ ॥ ता कै घरि पारब्रहमु समाइआ ॥ ७ ॥ सहजे जा कउ परिओ करमा ॥ सहजे गुरु भेटिओ सचु धरमा ॥ जा कै सहजु भइआ जो जाणै ॥ नानक दास ता कै कुरबाणै ॥ ८ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ प्रथमे गरभ वास ते टरिआ ॥ पुत्र कलत्र कुटंब संगि जुरिआ ॥ भोजनु अनिक प्रकार बहु कपरे ॥ सरपर गवनु करहिगे बपुरे ॥ १ ॥ कवनु असथानु जो कबहु न टरै ॥ कवनु सबदु जितु दुरमति हरै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इंद्र पुरी महि सरपर मरणा ॥ ब्रहम पुरी निहचलु नही रहणा ॥ सिव पुरी का होइगा काला ॥ त्रै गुण माइआ बिनसि बिताला ॥ २ ॥ गिरि तर धरणि गगन अरु तारे ॥ रवि ससि पवणु पावकु नीरारे ॥ दिनसु रैणि बरत अरु भेदा ॥ सासत सिंम्रिति बिनसहिगे बेदा ॥ ३ ॥ तीरथ देव देहुरा पोथी ॥ माला तिलकु सोच पाक होती ॥ धोती डंडउति परसादन भोगा ॥ गवनु करैगो सगलो लोगा ॥ ४ ॥ जाति वरन तुरक अरु हिंदू ॥ पसु पंखी अनिक जोनि जिंदू ॥ सगल पासारु दीसै पासारा ॥ बिनसि जाइगो सगल आकारा ॥ ५ ॥ सहज सिफति भगति ततु गिआना ॥ सदा अनंदु निहचलु सचु थाना ॥ तहा संगति साध गुण रसै ॥ अनभउ नगरु तहा सद वसै ॥ ६ ॥ तह भउ भरमा सोगु न चिंता ॥ आवणु जावणु मिरतु न होता ॥ तह सदा अनंद अनहत आखारे ॥ भगत वसहि कीरतन आधारे ॥ ७ ॥ पारब्रहम का अंतु न पारु ॥ कउणु करै ता का बीचारु ॥ कहु नानक जिसु किरपा करै ॥ निहचल थानु साधसंगि तरै ॥ ८ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो इसु मारे सोई सूरा ॥ जो इसु मारे सोई पूरा ॥ जो इसु मारे तिसहि वडिआई ॥ जो इसु मारे तिस का दुखु जाई ॥ १ ॥ ऐसा कोइ जि दुबिधा मारि गवावै ॥ इसहि मारि राज जोगु कमावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥

सहजभाव में ही वे गृहस्थ में उदासीन बने रहते हैं । सहज में ही उनकी तन, मन की दुविधा नष्ट हो जाती है । सहजभाव में जिसका मन आनन्दित हो उठा तो समझ लो उसने परम आनन्द स्वरूप परमात्मा के दर्शन कर लिए ॥ ५ ॥ जिसने सहजभाव में नाम रूपी अमृत का पान कर लिया, सहजभाव में जीभ के अवगुणों को त्याग दिया, जिसकी आत्मा में प्रभु की सहज कथा का रस भर गया ऐसे व्यक्ति के साथ अविनाशी प्रभु स्वयं आन बसता है ॥ ६ ॥ जो सहज में आसन लगाकर शान्तभाव में स्थिर हो गया, जो सहजभाव में अनहत् शब्द को बजता हुआ सुनने लगा और जिसे सहजभाव में ही प्रभु के संगीत की झनकार सुनने लगी और जो इसे सुनकर प्रसन्न हो उठा उस व्यक्ति के हृदय में परब्रह्म स्वयं समाहित हो जाता है ॥ ७ ॥ सहज जिसके भाग्य में ही पड़ा हुआ है वह गुरु से मिलकर सत्य धर्म को प्राप्त होता है । जो सहज में आ गया वही उसके आनन्द को जानता है और दास नानक उस पर कुर्बान जाता है ॥ ८ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ पहले तो व्यक्ति गर्भवास से बचकर संसार में आता है; फिर वह पुत्र, स्त्री, कुटुम्ब आदि के साथ जुड़ जाता है । हे बेचारे जीव, भोजन, अनेकों प्रकार के वस्त्र आदि जल्दी ही नष्ट हो जाने वाले हैं ॥ १ ॥ वह कौन सा स्थान है जो अटल है और कौन सा शब्द है जिससे दुर्मति नष्ट होती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तथा कथित इन्द्रपुरी में भी शीघ्र मरना पड़ेगा; ब्रह्मपुरी में भी सदैव रहना सम्भव नहीं होगा । शिवपुरी में भी काल स्थित रहेगा और तीनों गुणों में लीन वेतालों जैसे जीव नष्ट ही होंगे ॥ २ ॥ पर्वत, वृक्ष, धरती, आकाश, तारागण, सूर्य, चन्द्रमा, पवन, अग्नि, पानी, दिन–रात अनेकों प्रकार के व्रत, शास्त्र, स्मृति एवं ज्ञान के अन्य ग्रन्थ, वेद–वेदांग अन्ततः सभी विनष्ट हो जाएंगे ॥ ३ ॥ तीर्थ, देवता, मन्दिर, पोथी, माला, तिलक, पवित्र रसोई, यज्ञ की अग्नि प्रज्जवलित करने वाला, धोती, दण्डवत, विभिन्न भोजन भोग आदि हे लोगो, सभी यहां से चले जाएंगे ॥ ४ ॥ जाति, वर्ण, तुर्क, हिन्दु, पशु, पक्षी अनेक प्रकार के प्राणी तथा दिखाई देने वाला सारा विस्तार और प्रपंच अपने सभी रूपों समेत विनष्ट हो जाएगा ॥ ५ ॥ सहजभाव की प्रभु–कीर्ति, भक्ति एवं तत्व ज्ञान सदैव आनन्दपूर्ण सत्य स्थान वाले होते हैं । वहां पर ही संगत रूप में बैठकर व्यक्ति हरि गुणों का रस–विभोर होकर उच्चारण करते हैं । इस अनुभूति के नगर में प्रभु स्वयं बसता है ॥ ६ ॥ वहां भय, भ्रम, शोक, चिन्ता आदि नहीं होते । आवागमन और मृत्यु नहीं होती । वहां सदैव आनन्द देने वाले और अनहद् शब्द सुनाने वाले अनेकों स्थान (अखाड़े) होते हैं और ऐसे भक्त वहां बसते हैं जिनका जीवन आधार प्रभु की कीर्ति ही होता है ॥ ७ ॥ उस परब्रह्म प्रभु के रहस्य और विस्तार का भला कौन विचार कर सकता है । हे नानक, जिस पर प्रभु कृपा करता है उसी को वह अटल स्थान प्राप्त होता है और साधु–संगत में वही संसार सागर को पार करता है ॥ ८ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो इस दुविधा को मारता है वही शूरवीर एवं पूर्ण पुरुष है । जो इस दुविधा को मारता है उसी को बड़प्पन प्राप्त होता है और उसी का दुख दूर हो जाता है ॥ १ ॥ कोई है जो दुविधा को मारकर त्याग दे और तदोपरान्त राजयोग का आचरण धारण करे अर्थात संसार में रहते हुए भी संसारी न बने ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो इसे मारता है

जो इसु मारे तिस कउ भउ नाहि ॥ जो इसु मारे सु नामि समाहि ॥ जो इसु मारे तिस की त्रिसना बुझै ॥ जो इसु मारे सु दरगह सिझै ॥ २ ॥ जो इसु मारे सो धनवंता ॥ जो इसु मारे जो पतिवंता ॥ जो इसु मारे सोई जती ॥ जो इसु मारे तिसु होवै गती ॥ ३ ॥ जो इसु मारे तिस का आइआ गनी ॥ जो इसु मारे सु निहचलु धनी ॥ जो इसु मारे सो वडभागा ॥ जो इसु मारे सु अनदिनु जागा ॥ ४ ॥ जो इसु मारे सु जीवन मुकता ॥ जो इसु मारे तिस की निरमल जुगता ॥ जो इसु मारे सोई सुगिआनी ॥ जो इसु मारे सु सहज धिआनी ॥ ५ ॥ इसु मारी बिनु थाइ न परै ॥ कोटि करम जाप तप करै ॥ इसु मारी बिनु जनमु न मिटै ॥ इसु मारी बिनु जम ते नही छुटै ॥ ६ ॥ इसु मारी बिनु गिआनु न होई ॥ इसु मारी बिनु जूठि न धोई ॥ इसु मारी बिनु सभु किछु मैला ॥ इसु मारी बिनु सभु किछु जउला ॥ ७ ॥ जा कउ भए क्रिपाल क्रिपा निधि ॥ तिसु भई खलासी होई सगल सिधि ॥ गुरि दुबिधा जा की है मारी ॥ कहु नानक सो ब्रहम बीचारी ॥ ८ ॥ ५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हरि सिउ जुरै त सभु को मीतु ॥ हरि सिउ जुरै त निहचलु चीतु ॥ हरि सिउ जुरै न विआपै काढ़ा ॥ हरि सिउ जुरै त होइ निसतारा ॥ १ ॥ रे मन मेरे तूं हरि सिउ जोरु ॥ काजि तुहारै नाही होरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वडे वडे जो दुनीआदार ॥ काहू काजि नाही गावार ॥ हरि का दासु नीच कुलु सुणहि ॥ तिस कै संगि खिन महि उधरहि ॥ २ ॥ कोटि मजन जा कै सुणि नाम ॥ कोटि पूजा जा कै है धिआन ॥ कोटि पुंन सुणि हरि की बाणी ॥ कोटि फला गुर ते बिधि जाणी ॥ ३ ॥ मन अपुने महि फिरि फिरि चेत ॥ बिनसि जाहि माइआ के हेत ॥ हरि अबिनासी तुमरै संगि ॥ मन मेरे रचु राम कै रंगि ॥ ४ ॥ जा कै कामि उतरै सभ भूख ॥ जा कै कामि न जोहहि दूत ॥ जा कै कामि तेरा वड गमरु ॥ जा कै कामि होवहि तूं अमरु ॥ ५ ॥ जा के चाकर कउ नही डान ॥ जा के चाकर कउ नही बान ॥ जा कै दफतरि पुछै न लेखा ॥ ता की चाकरी करहु बिसेखा ॥ ६ ॥ जा कै ऊन नाही काहू बात ॥ एकहि आपि अनेकहि भाति ॥ जा की द्रिसटि होइ सदा निहाल ॥ मन मेरे करि ता की घाल ॥ ७ ॥ ना को चतुरु नाही को मूड़ा ॥ ना को

उसे कोई भय नहीं रहता । जो इसे मारता है वह नाम में लीन हो जाता है, उसकी तृष्णा बुझ जाती है और वह प्रभु–दरबार में सफल माना जाता है ॥ २ ॥ जो इसे मारता है वही धनवान् है, सम्मान योग्य है, यति है और केवल वही मुक्त होता है ॥ ३ ॥ इसको मारने वाले का इस संसार में आना किसी गिनती में आ जाता है और वही एक अटल रूप से बना रहने वाला धनवान माना जाता है । जो इस दुविधा को मारता है वही भाग्यशाली है और वही हर रोज़ चेतन बना रहता है ॥ ४ ॥ दुविधा को मारने वाला ही जीवनमुक्त है और उसी की जीवन–विधि पवित्र होती है; जो इसको मारता है वही ज्ञानवान और सहज ध्यान में लीन वना रहने वाला माना जाता है ॥ ५ ॥ करोड़ों कर्मकाण्ड, जाप एवं तपस्याएं भी इस दुविधा को मारे विना स्वीकृत एवं सफल नहीं होते । इसे मारे बिना आवागमन नहीं मिटता और यम से मुक्ति प्राप्त नहीं होती ॥ ६ ॥ इस दुविधा को मारे विना ज्ञान प्राप्त नहीं होता और मन की अपवित्रता नहीं धुलती । इसे मारे विना सव कुछ मैला ही बना रहता है और इस दुविधा को मारे बिना सब कुछ चलाएमान बना रहता है ॥ ७ ॥ जिस पर कृपा का समुद्र प्रभु कृपालु हो गया, उसकी मुक्ति हो गई और उसको पूरी सफलता प्राप्त हो जाती है । गुरु ने जिसकी दुविधा को समाप्त कर दिया है हे नानक, वही वास्तविक ब्रह्मवेता है ॥ ८ ॥ ५ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ जो व्यक्ति प्रभु से जुड़ जाता है उसके सभी मित्र हो जाते हैं । प्रभु के संग एक हो जाने पर चित्त भी स्थिर हो जाता है । प्रभु के साथ जुड़ जाने से कोई दुख प्रभावित नहीं करता और प्रभु से जुड़ जाने पर मुक्ति प्राप्त हो जाती है ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू प्रभु के साथ ही अपने आप को जोड़ क्योंकि अन्य कोई भी तुम्हारे काम नहीं आ सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो बड़े बड़े दुनियांदारी वाले लोग हैं वे मूर्ख किसी भी काम के नहीं । प्रभु का सेवक यदि तथाकथित नीच कुल वाला भी सुना जाए तो भी उसके साथ रहने से क्षण भर में व्यक्ति का उद्धार हो जाता है ॥ २ ॥ प्रभु के सेवक के लिए प्रभु नाम सुनना ही करोड़ों स्नान जैसा है । प्रभु–सेवक का ध्यान करोड़ों पूजा अर्चनाओं के समान है । प्रभु की वाणी को सुनना करोड़ों पुण्य कर्मों के तुल्य है । ऐसे करोड़ों फलों को प्राप्त करने की विधि गुरु से ही जानी जाती है ॥ ३ ॥ हे मन, तू स्वयं वार वार जागरूक वना रह अन्यथा माया के मोह में तू विनष्ट हो जाएगा । अविनाशी प्रभु तुम्हारे साथ है इसलिए हे मेरे मन तू राम के रंग में ही लीन बना रह ॥ ४ ॥ जिसका कार्य करने से सारी भूख समाप्त हो जाए, जिस प्रभु के सुमिरन रूपी कार्य करने से यमदूत मारने के लिए देखते नहीं रहते, जिसके काम से तू वड़ा प्रभावशाली वनता है, जिसके काम से तू अमर हो जाता है ॥ ५ ॥ जिसके नौकर को कोई सज़ा नहीं मिलती और कोई घाटा नहीं पड़ता, जिसके दफतर में कोई लेखा नहीं पूछता; हे प्राणी, तुम विशेष रूप से उसी की चाकरी करते रहो ॥ ६ ॥ जिसके पास किसी बात की भी कमी नहीं है, जो एक स्वयं ही अनेक प्रकार का है और जिसकी दृष्टि मात्र से जीव सदैव प्रसन्न हो उठता है; हे मेरे मन, तू उसी की ही सेवा कर ॥ ७ ॥ यहां न तो कोई चतुर है, न कोई मूर्ख है । न कोई बलहीन है और न ही

हीणु नाही को सूरा ॥ जितु को लाइआ तित ही लागा ॥ सो सेवकु नानक जिसु भागा ॥ ८ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ बिनु सिमरन जैसे सरप आरजारी ॥ तिउ जीवहि साकत नामु बिसारी ॥ १ ॥ एक निमख जो सिमरन महि जीआ ॥ कोटि दिनस लाख सदा थिरु थीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिनु सिमरन ध्रिगु करम करास ॥ काग बतन बिसटा महि वास ॥ २ ॥ बिनु सिमरन भए कूकर काम ॥ साकत बेसुआ पूत निनाम ॥ ३ ॥ बिनु सिमरन जैसे सीङ छतारा ॥ बोलहि कूरु साकत मुखु कारा ॥ ४ ॥ बिनु सिमरन गरधभ की निआई ॥ साकत थान भरिसट फिराही ॥ ५ ॥ बिनु सिमरन कूकर हरकाइआ ॥ साकत लोभी बंधु न पाइआ ॥ ६ ॥ बिनु सिमरन है आतम घाती ॥ साकत नीच तिसु कुलु नही जाती ॥ ७ ॥ जिसु भइआ क्रिपालु तिसु सतसंगि मिलाइआ ॥ कहु नानक गुरि जगतु तराइआ ॥ ८ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुर के बचनि मोहि परम गति पाई ॥ गुरि पूरै मेरी पैज रखाई ॥ १ ॥ गुर के बचनि धिआइओ मोहि नाउ ॥ गुर परसादि मोहि मिलिआ थाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर के बचनि सुणि रसन वखाणी ॥ गुर किरपा ते अंम्रित मेरी बाणी ॥ २ ॥ गुर के बचनि मिटिआ मेरा आपु ॥ गुर की दइआ ते मेरा वड परतापु ॥ ३ ॥ गुर के बचनि मिटिआ मेरा भरमु ॥ गुर के बचनि पेखिओ सभु ब्रहमु ॥ ४ ॥ गुर के बचनि कीनो राजु जोगु ॥ गुर के संगि तरिआ सभु लोगु ॥ ५ ॥ गुर के बचनि मेरे कारज सिधि ॥ गुर के बचनि पाइआ नाउ निधि ॥ ६ ॥ जिनि जिनि कीनी मेरे गुर की आसा ॥ तिस की कटीऐ जम की फासा ॥ ७ ॥ गुर के बचनि जागिआ मेरा करमु ॥ नानक गुरु भेटिआ पारब्रहमु ॥ ८ ॥ ८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ तिसु गुर कउ सिमरउ सासि सासि ॥ गुरु मेरे प्राण सतिगुरु मेरी रासि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर का दरसनु देखि देखि जीवा ॥ गुर के चरण धोइ धोइ पीवा ॥ १ ॥ गुर की रेणु नित मजनु करउ ॥ जनम जनम की हउमै मलु हरउ ॥ २ ॥ तिसु गुर कउ झूलावउ पाखा ॥ महा अगनि ते हाथु दे राखा ॥ ३ ॥ तिसु गुर के ग्रिहि ढोवउ पाणी ॥ जिसु गुर ते अकल गति जाणी ॥ ४ ॥ तिसु गुर के ग्रिहि पीसउ नीत ॥

कोई शूरवीर है । प्रभु ने जिसे जहां लगाया है वह वहीं लगा हुआ है । हे नानक, जो भाग्यशाली है वही उसका सेवक बनकर उसकी सेवा में है ॥ ८ ॥ ६ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सुमिरन के बिना व्यक्ति उस सर्प की तरह है जिसकी व्यर्थ में ही जीने वाली बहुत लम्बी आयु होती है । इसी प्रकार से परमात्मा से टूटा हुआ व्यक्ति प्रभु–नाम को भुलाकर व्यर्थ में ही जीता चला जाता है ॥ १ ॥ जो एक क्षण के लिए भी सुमिरन में लगा वह समझो लाखों–करोड़ों दिनों तक शान्त हो गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुमिरन के बिना किए हुए कर्म धिक्कार योग्य हैं और ऐसे व्यक्तियों के मुख उस कौए के समान हैं जिसका सदैव विष्ठा में ही वास वना रहता है ॥ २ ॥ सुमिरन के विना व्यक्ति कुत्ते के कर्म वाले होते हैं। प्रभु से टूटे हुए लोग पिता के एक नाम से विहीन वेश्या के पुत्र के समान होते हैं ॥ ३ ॥ सुमिरन के बिना व्यक्ति सींगों वाले बकरे के समान होता है और मनमुख बनकर अपने काले मुँह से झूठ ही वोलता है ॥ ४ ॥ सुमिरन के बिना व्यक्ति गधे की तरह होता है और मनमुख व्यक्ति की तरह भ्रष्ट होकर भटकता रहता है ॥ ५ ॥ प्रभु सुमिरन के बिना व्यक्ति पागल कुत्ते की तरह है और ऐसे ही मनमुख लोभी व्यक्ति अपने को किसी मर्यादा में नहीं रखते ॥६॥ प्रभु सुमिरन के बिना व्यक्ति आत्मघाती है और ऐसे ही मनमुख नीच व्यक्ति की कोई कुल अथवा जाति नहीं होती अर्थात उसे मानव जाति के किसी वर्ग में नहीं रक्खा जा सकता ॥ ७ ॥ जिस पर प्रभु कृपा करता है वही सत्संग में आन मिलता है और हे नानक, प्रभु के माध्यम से ही जगत का उद्धार होता है ॥ ८ ॥ ७ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ गुरु के उपदेश से ही मुझे उत्तम पद अर्थात मुक्ति प्राप्त हुई । पूर्ण गुरु ने ही मेरे सम्मान की रक्षा की ॥ १ ॥ गुरु के उपदेश के माध्यम से ही मैंने नाम सुमिरन किया है । गुरु की कृपा से ही मुझे ठिकाना मिला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के उपदेश को सुनकर मैं अपनी जीभ से उसका उच्चारण करता हूँ और गुरु की कृपा से ही मेरी वातचीत अमृत के समान मीठी होती है ॥ २ ॥ गुरु के उपदेश से ही मेरा अहंकार मिट गया है और गुरु की दया से ही मेरा प्रताप और अधिक हो गया है ॥ ३ ॥ गुरु के उपदेश से ही मेरा भ्रम मिट गया है और मैंने सब स्थानों पर प्रभु ही देखा है ॥ ४ ॥ गुरु के उपदेश से ही मैंने राजयोग का जीवन धारण किया है और गुरु के साथ वने रहने से ही सभी लोग पार उतर गये हैं ॥ ५ ॥ गुरु के उपदेश से ही मेरे कार्य पूरे हो गए हैं और मैंने नाम रूपी खज़ाना पा लिया है ॥ ६ ॥ जिसने भी गुरु पर आस रखी है उसका यम का फन्दा कट गया है । गुरु के उपदेश से ही मेरा भाग्य जग उठा है और हे नानक, मुझे परब्रह्म रूपी गुरु मिल गया है ॥ ८ ॥ ८ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ ऐसे गुरु का सुमिरन प्रत्येक श्वास के साथ किया जाना चाहिए क्योंकि गुरु ही मेरा प्राण है और गुरु ही मेरी पूँजी है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु का दर्शन देख देख कर ही मैं जीवित बना हुआ हूँ और गुरु के चरणों को मैं धो धोकर पीता हूँ ॥ १ ॥ गुरु की चरण–धूलि में सदैव स्नान करो और जन्मों जन्मों के अहंकार की मैल को दूर कर लो ॥ २ ॥ ऐसे गुरु को मैं पंखा झुलाता हूँ जिसने संसार की महा अग्नि (माया) से मुझे हाथ देकर बचा लिया है ॥ ३ ॥ जिस गुरु के माध्यम से उस निराकार प्रभु की गति को मैंने जाना है उसके घर पर मैं पानी ढोता हूँ ॥ ४ ॥ उस गुरु की सदैव मैं चक्की पीसता हूँ जिसकी

जिसु परसादि वैरी सभ मीत ॥ ५ ॥ जिनि गुरि मोकउ दीना जीउ ॥ आपुना दासरा आपे मुलि लीउ ॥ ६ ॥ आपे लाइओ अपना पिआरु ॥ सदा सदा तिसु गुर कउ करी नमसकारु ॥ ७ ॥ कलि कलेस भै भ्रम दुख लाथा ॥ कहु नानक मेरा गुरु समराथा ॥ ८ ॥ ९ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मिलु मेरे गोबिंद अपना नामु देहु ॥ नाम बिना ध्रिगु ध्रिगु असनेहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नाम बिना जो पहिरै खाइ ॥ जिउ कूकरु जूठन महि पाइ ॥ १ ॥ नाम बिना जेता बिउहारु ॥ जिउ मिरतक मिथिआ सीगारु ॥ २ ॥ नामु बिसारि करे रस भोग ॥ सुखु सुपनै नही तन महि रोग ॥ ३ ॥ नामु तिआगि करे अन काज ॥ बिनसि जाइ झूठे सभि पाज ॥ ४ ॥ नाम संगि मनि प्रीति न लावै ॥ कोटि करम करतो नरकि जावै ॥ ५ ॥ हरि का नामु जिनि मनि न आराधा ॥ चोर की निआई जम पुरि बाधा ॥ ६ ॥ लाख अडंबर बहुतु बिसथारा ॥ नाम बिना झूठे पासारा ॥ ७ ॥ हरि का नामु सोई जनु लेइ ॥ करि किरपा नानक जिसु देइ ॥ ८ ॥ १० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ आदि मधि जो अंति निबाहै ॥ सो साजनु मेरा मनु चाहै ॥ १ ॥ हरि की प्रीति सदा संगि चालै ॥ दइआल पुरख पूरन प्रतिपालै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिनसत नाही छोडि न जाइ ॥ जह पेखा तह रहिआ समाइ ॥ २ ॥ सुंदरु सुघड़ु चतुरु जीअ दाता ॥ भाई पूतु पिता प्रभु माता ॥ ३ ॥ जीवन प्रान अधार मेरी रासि ॥ प्रीति लाई करि रिदै निवासि ॥ ४ ॥ माइआ सिलक काटी गोपालि ॥ करि अपुना लीनो नदरि निहालि ॥ ५ ॥ सिमरि सिमरि काटे सभि रोग ॥ चरण धिआन सरब सुख भोग ॥ ६ ॥ पूरन पुरखु नवतनु नित बाला ॥ हरि अंतरि बाहरि संगि रखवाला ॥ ७॥ कहु नानक हरि हरि पदु चीन ॥ सरबसु नामु भगत कउ दीन ॥ ८ ॥ ११ ॥

रागु गउड़ी माझ महला ५   १ओ सतिगुर प्रसादि ॥

खोजत फिरे असंख अंतु न पारीआ ॥ सेई होए भगत जिना किरपारीआ ॥ १ ॥ हउ वारीआ हरि वारीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुणि सुणि पंथु डराउ बहुतु भैहारीआ ॥ मै तकी ओट संताह लेहु उबारीआ ॥

कृपा से मेरे शत्रु भी मित्र बन गए हैं ॥ ५ ॥ जिस गुरु ने मुझे प्राण का दान दिया है उसने दास बनाकर मुझे मोल ही ले लिया है ॥ ६ ॥ जिसने स्वयं ही अपना प्यार जगाया है ऐसे गुरु को मैं सदा नमस्कार करता हूँ ॥ ७ ॥ हे नानक, मेरा गुरु इतना समर्थ है कि उसने मेरे झगड़े, क्लेष, भय, भ्रम, दुख आदि मिटा दिए हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥ गउड़ी महला५॥ हे मेरे प्रभु, मुझे आन मिल और मुझे अपना नाम दे। नाम के बिना जितना भी प्यार है वह धिक्कार योग्य है ॥ १॥ रहाउ ॥ नाम सुमिरन के बिना पहनने खाने वाले वैसे ही हैं जैसे कुत्ता जूठन में मुख डालता है ॥ १ ॥ नाम के बिना जितना भी कार्य कलाप है वह ऐसा ही है जैसे मृतक व्यक्ति को किया गया सिंगार व्यर्थ है ॥ २ ॥ प्रभु नाम को भुलाकर रसों को भोगने वाले को सपने में भी सुख नहीं मिलता और उसके तन में रोग भी उत्पन्न हो जाता है ॥ ३ ॥ नाम को त्याग कर किए गए अन्य सभी कार्य झूठे पाखण्ड की तरह विनष्ट हो जाते हैं ॥ ४ ॥ नाम के संग जो मन से प्रेम नहीं करता वह करोड़ों कर्मकाण्ड करता हुआ भी नर्क में ही जाता है ॥ ५ ॥ जिसने प्रभु–नाम का सुमिरन मन में नहीं किया वह यमपुरी में चोर की तरह बाँधा जाता है ॥ ६ ॥ लाखों प्रकार के आडम्बर एवं बड़े बड़े प्रपंच प्रभु–नाम के बिना झूठे प्रसार ही बन कर रह जाते हैं ॥ ७ ॥ हे नानक, प्रभु–नाम का सुमिरन वही सेवक करता है जिस पर प्रभु कृपा करके उसे देता है ॥ ८ ॥ १० ॥ गउड़ी महला ५ ॥ वह प्रियतम प्रभु मेरे मन को अच्छा लगता है जो आदि, मध्य और अन्त तक साथ देता है ॥ १ ॥ प्रभु की प्रीति सदा साथ देती है क्योंकि वह दयालु पुरुष परमात्मा पूर्ण रूप से सबका पालन करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वह कभी नष्ट नहीं होता और कभी छोड़कर नहीं जाता और जहां भी मैं देखता हूँ वह वहीं पर समाया हुआ दिखाई देता है ॥ २ ॥ वह सुन्दर है, सयाना है, चतुर है, जीवन–दाता है, भाई है, पुत्र है, पिता है और वही प्रभु माता भी है ॥ ३ ॥ वह प्रभु मेरे जीवन और प्राणों का आसरा है, मैंने उसी को अपने हृदय का निवासी बना कर उसके साथ प्रीति लगाई है ॥ ४ ॥ प्रभु ने माया की रस्सी को काट दिया है और अपना बनाकर मुझे अपनी कृपा दृष्टि से आनन्दित कर दिया है ॥ ५ ॥ उसके सुमिरन से सभी रोग कट गए हैं और उसके चरणों का ध्यान करने से सभी सुख भोग प्राप्त हो गए हैं ॥ ६ ॥ वह पूर्ण पुरुष सदैव नूतन एवं जवान बना रहने वाला है और वही प्रभु अन्दर–बाहर साथ बना रहने वाला रक्षक भी है ॥ ७ ॥ हे नानक, जव से मैंने प्रभु चरणों को जान लिया है प्रभु ने सब प्रकार के धन पदार्थों को नाम रूप में अपने भक्त को दे दिया है ॥ ८ ॥ ११ ॥

रागु गउड़ी माझ महला ५   १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

असंख्य लोग उसे ढूँढते रहते हैं परन्तु फिर भी उसके रहस्य को कोई नहीं जान पाता है। भक्त वे ही हैं जिनपर प्रभु कृपा करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु तक पहुँचने के मार्ग के बारे में सुनकर मैं डरकर बहुत भयभीत हो गई हूँ, मैंने केवल शान्त पुरुषों

२ ॥ मोहन लाल अनूप सरब साधारीआ ॥ गुर निवि निवि लागउ पाइ देहु दिखारीआ ॥ ३ ॥ मै कीए मित्र अनेक इकसु बलिहारीआ ॥ सभ गुण किस ही नाहि हरि पूर भंडारीआ ॥ ४ ॥ चहु दिसि जपीऐ नाउ सूखि सवारीआ ॥ मै आही ओड़ि तुहारि नानक बलिहारीआ ॥ ५ ॥ गुरि काढिओ भुजा पसारि मोह कूपारीआ ॥ मै जीतिओ जनमु अपारु बहुरि न हारीआ ॥ ६ ॥ मै पाइओ सरब निधानु अकथु कथारीआ ॥ हरि दरगह सोभावंत बाह लुडारीआ ॥ ७ ॥ जन नानक लधा रतनु अमोलु अपारीआ ॥ गुर सेवा भउजलु तरीऐ कहउ पुकारीआ ॥ ८ ॥ १२ ॥

गउड़ी महला ५   १ओ सतिगुर प्रसादि ॥

नाराइण हरि रंग रंगो ॥ जपि जिहवा हरि एक मंगो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तजि हउमै गुर गिआन भजो ॥ मिलि संगति धुरि करम लिखिओ ॥ १ ॥ जो दीसै सो संगि न गइओ ॥ साकतु मूड़ु लगे पचि मुइओ ॥ २ ॥ मोहन नामु सदा रवि रहिओ ॥ कोटि मधे किनै गुरमुखि लहिओ ॥ ३ ॥ हरि संतन करि नमो नमो ॥ नउ निधि पावहि अतुलु सुखो ॥ ४ ॥ नैन अलोवउ साध जनो ॥ हिरदै गावहु नाम निधो ॥ ५ ॥ काम क्रोध लोभु मोहु तजो ॥ जनम मरन दुहु ते रहिओ ॥ ६ ॥ दूखु अंधेरा घर ते मिटिओ ॥ गुरि गिआनु द्रिड़ाइओ दीप बलिओ ॥ ७ ॥ जिनि सेविआ सो पारि परिओ ॥ जन नानक गुरमुखि जगतु तरिओ ॥ ८ ॥ १ ॥ १३ ॥ महला ५ गउड़ी ॥ हरि हरि गुरु गुरु करत भरम गए ॥ मेरै मनि सभि सुख पाइओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बलतो जलतो तउकिआ गुर चंदनु सीतलाइओ ॥ १ ॥ अगिआन अंधेरा मिटि गइआ गुर गिआनु दीपाइओ ॥ २ ॥ पावकु सागरु गहरो चरि संतन नाव तराइओ ॥ ३ ॥ ना हम करम न धरम सुच प्रभि गहि भुजा आपाइओ ॥ ४ ॥ भउ खंडनु दुख भंजनो भगति वछल हरि नाइओ ॥ ५ ॥ अनाथह नाथ क्रिपाल दीन संम्रिथ संत ओटाइओ ॥ ६ ॥ निरगुनीआरे की बेनती देहु दरसु हरि राइओ ॥ ७ ॥ नानक सरनि तुहारी ठाकुर सेवकु दुआरै आइओ ॥ ८ ॥ २ ॥ १४ ॥

की शरण ली है ॥ २ ॥ हे प्रभु, मुझे बचा लो । हे मोहन, अनुपम एवं सवके आधार प्रभु–गुरु मैं झुक झुक कर आपके चरणों पर पड़ता हूँ, मुझे दर्शन दो ॥ ३ ॥ मैंने अनेकों मित्र बनाए लेकिन मैं उस एक प्रभु पर ही बलिहारी जाता हूँ । किसी अन्य में सभी गुण नहीं हैं और केवल प्रभु ही गुणों के पूर्ण भण्डारों वाला है ॥ ४ ॥ चारों दिशाओं में तेरे नाम का ही जाप चल रहा है और जपने वाले सभी सुख में संवरे हुए हैं । मुझे तो केवल तुम्हारा ही आसरा है । हे प्रभु, नानक तुझ पर बलिहारी जाता है ॥ ५ ॥ गुरु ने वाँह लम्वी करके मुझे मोह के कुँए में से निकाल लिया है । मैंने इस जन्म को जीत लिया है और अव मैं नहीं हारूँगा ॥ ६ ॥ मुझे वह सम्पूर्ण खजाना मिल गया है जिसकी कथा कही नहीं जा सकती । मुझे प्रभु दरवार में वाहें लहराते हुए प्रसन्नतापूर्वक शोभायमान होना है ॥ ७ ॥ दास नानक को प्रभु रूपी अपार एवं अमूल्य रत्न मिल गया है और मैं पुकार कर यह कहता हूं कि गुरु की सेवा से ही संसार सागर पार किया जाता है ॥ ८ ॥ १२ ॥

गउड़ी महला ५ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

प्रभु प्रेम में अपने को रंगो और जीभ से सुमिरन करते हुए केवल एक प्रभु की ही चाहना करो ॥ १ ॥ रहाउ॥ अहंकार को त्याग कर गुरु से प्राप्त ज्ञान का सुमिरन करो परन्तु सद्संगत में वही मिलते हैं जिनके भाग्य में प्रभु की ओर से ही लिखा हुआ होता है ॥ १ ॥ जो दिखाई देता है वह साथ नहीं जाता परन्तु फिर भी मनमुख व्यक्ति मूर्ख बनकर उन्हीं पदार्थों में लीन बना रहता है और ख्वार होकर मर जाता है ॥ २ ॥ प्रभु–नाम सदैव व्यापक है और इस तथ्य को करोड़ों में कोई बिरला गुरमुख ही जान पाता है ॥ ३ ॥ प्रभु के शान्त पुरुषों को प्रणाम करो और नवनिधियों के अतुलनीय सुख को प्राप्त करो ॥ ४ ॥ हे साधु पुरुषो, प्रभु को अपनी (ज्ञान की) आँखों से देखो और हृदय में नाम के भण्डार का गुणानुवाद करो ॥ ५ ॥ काम, क्रोध, लोभ, मोह का त्याग करो; ऐसा करके मैं जन्म–मरण दोनों से ही छूट गया हूँ ॥ ६ ॥ मेरे अन्दर के दुख का अन्धकार मिट गया है क्योंकि गुरु ने ज्ञान को समझाते हुए मेरे अर्न्तमन में दीपक जला दिया है ॥ ७ ॥ जिसने सुमिरन किया वही पार हो गया ॥ दास नानक कहता है कि गुरमुख बनकर ही सारा संसार पार उतरता है ॥ ८ ॥ १ ॥ १३ ॥ महला ५ ॥ गउड़ी ॥ प्रभु प्रभु, गुरु गुरु का सुमिरन करते रहने से भ्रम समाप्त हो गए और मेरे मन ने सव प्रकार का सुख प्राप्त कर लिया ॥ १ ॥ रहाउ॥ मुझ जलते हुए पर गुरु ने (नाम रूपी) जल का छींटा डाला और मुझे चन्दन की तरह शीलत कर दिया ॥ १ ॥ गुरु के ज्ञान का दीपक जलने से मेरा अज्ञान का अंधेरा मिट गया है ॥ २ ॥ संसार रूपी अग्नि का समुद्र बहुत गहरा है और शान्त पुरुषों ने नाम रूपी नाव पर चढ़ाकर मुझे पार कर दिया है ॥ ३ ॥ हम धर्म–कर्म वाले पवित्र व्यक्ति भी नहीं है परन्तु प्रभु ने हमारी बाँह पकड़कर हमें अपना बना लिया है ॥ ४ ॥ प्रभु का नाम भय को और दुख को दूर करने वाला है तथा साथ ही साथ भक्तवत्सल भी है ॥ ५ ॥ अनाथों का नाथ, दीनों पर कृपालु प्रभु समर्थ है एवं सन्त पुरुषों का आसरा है ॥ ६ ॥ मुझ गुण विहीन की यह अरदास विनती है कि हे राजन प्रभु, मुझे दर्शन दो ॥ ७ ॥ नानक तुम्हारी शरण में है और हे मालिक, सेवक वनकर तुम्हारे द्वार पर आया है ॥ ८ ॥ २ ॥ १४ ॥

गउड़ी महला ५ ॥ रंग संगि बिखिआ के भोगा इन संगि अंध न जानी ॥ १ ॥ हउ संचउ हउ खाटता सगली अवध बिहानी ॥ रहाउ ॥ हउ सूरा परधानु हउ को नाही मुझहि समानी ॥ २ ॥ जोबनवंत अचार कुलीना मन महि होइ गुमानी ॥ ३ ॥ जिउ उलझाइओ बाध बुधि का मरतिआ नही बिसरानी ॥ ४ ॥ भाई मीत बंधप सखे पाछे तिनहू कउ संपानी ॥ ५ ॥ जितु लागो मनु बासना अंति साई प्रगटानी ॥ ६ ॥ अहंबुधि सुचि करम करि इह बंधन बंधानी ॥ ७ ॥ दइआल पुरख किरपा करहु नानक दास दसानी ॥ ८ ॥ ३ ॥ १५ ॥ ४४ ॥ जुमला

१ओ सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी पूरबी छंत महला १ ॥

मुंध रैणि दुहेलड़ीआ जीउ नीद न आवै ॥ सा धन दुबलीआ जीउ पिर कै हावै ॥ धन थीई दुबलि कंत हावै केव नैणी देखए ॥ सीगार मिठ रस भोग भोजन सभु झूठु कितै न लेखए ॥ मै मत जोबनि गरबि गाली दुधा थणी न आवए ॥ नानक सा धन मिलै मिलाई बिनु पिर नीद न आवए ॥ १ ॥ मुंध निमानड़ीआ जीउ बिनु धनी पिआरे ॥ किउ सुखु पावैगी बिनु उर धारे ॥ नाह बिनु घर वासु नाही पुछहु सखी सहेलीआ ॥ बिनु नाम प्रीति पिआरु नाही वसहि साचि सुहेलीआ ॥ सचु मनि सजन संतोखि मेला गुरमती सहु जाणिआ ॥ नानक नामु न छोडै सा धन नामि सहजि समाणीआ ॥ २ ॥ मिलु सखी सहेलड़ीहो हम पिरु रावेहा ॥ गुर पुछि लिखउगी जीउ सबदि सनेहा ॥ सबदु साचा गुरि दिखाइआ मनमुखी पछुताणीआ ॥ निकसि जातउ रहै असथिरु जामि सचु पछाणिआ ॥ साच की मति सदा नउतन सबदि नेहु नवेलओ ॥ नानक नदरी सहजि साचा मिलहु सखी सहेलीहो ॥ ३ ॥ मेरी इछ पुनी जीउ हम घरि साजनु आइआ ॥ मिलि वरु नारी मंगलु गाइआ ॥ गुण गाइ मंगलु प्रेमि रहसी मुंध मनि ओमाहओ ॥ साजन रहंसे दुसट विआपे साचु जपि सचु लाहओ ॥ कर जोड़ि सा धन करै बिनती रैणि दिनु रसि भिंनीआ ॥ नानक पिरु धन करहि

गउड़ी महला ५ ॥ विषय–विकारों के भोगों में लीन होकर अन्धे मनुष्य ने यह नहीं समझा कि वह क्या कर रहा है ॥ १ ॥ मैं कमाता हूँ, मैं इक्ट्ठा करता हूँ कहते करते ही सारी आयु व्यतीत हो गई ॥ रहाउ ॥ मैं ही प्रधान शूरवीर हूँ और मेरे समान अन्य कोई नहीं है ॥ २ ॥ व्यक्ति मन में अभिमान से भरकर यह कहता है; मैं ही जवान, अच्छे आचरण वाला एवं कुलीन व्यक्ति हूँ ॥ ३ ॥ व्यक्ति जिस प्रकार की मिथ्या वुद्धि (माया, धन, सम्पदा) में शुरु से ही उलझा हुआ है, वह मरते दम तक वैसे ही वनी रहती है ॥ ४ ॥ मरने पर उसकी धन–सम्पदा, भाई–मित्र, रिश्तेदार एवं साथियों को सौंप दी जाती है ॥ ५ ॥ जिस वासना में व्यक्ति का मन आयु भर लगा रहता है, अन्तिम समय में भी वही वासना बलपूर्वक प्रकट होती है ॥ ६ ॥ अहंकारी वनकर पवित्रता से संवंधित कर्मकाण्ड करके व्यक्ति इन्हीं के बन्धनों में बँधा रहता है ॥ ७ ॥ नानक कहता है कि हे दयालु प्रभु, मुझ पर कृपा करो और मुझे अपने सेवकों का सेवक बनाए रखो ॥ ८ ॥ ३ ॥ १५ ॥ ४४ ॥ कुल जोड़ ॥

१ओअंकार सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी पूरवी छन्द महला १

पति से बिछुड़ी हुई सुन्दर स्त्री की रात दुख में बीतती है और उसे नींद नहीं आती; प्रियतम की चिन्ता में वह दुबली होती चली जाती है । वह दुर्वल स्त्री सदैव चाहती है कि किस प्रकार अपने पति को देख पाए । श्रृंगार, मीठे रस, भोजन आदि उसे किसी हिसाव से भी अच्छे नहीं लगते । जवानी के अहंकार में इस प्रकार लीन स्त्री वैसी ही लगती है जैसे कोई शराब में मस्त हो जाए । ऐसी स्त्री को न तो पति मिलाप मिलता है और न ही सुहागिन का आनन्द प्राप्त होता है । हे नानक, ऐसी स्त्री को सारी जीवन रूपी रात भर प्रभु–पति से मिलाप नसीब नहीं देता और न ही उसे शान्ति प्राप्त होती है । वह केवल गुरु के माध्यम से ही प्रभु पति को मिल सकती है ॥ १ ॥ पति के बिना मुग्धा स्त्री उत्साहहीन बनी रहती है । विना पति की छाती से लगे उसे कैसे सुख मिलेगा । सखी–सहेलियों से पूछ कर देख लो कि पति के बिना घर रूपी संसार में निवास नहीं मिलेगा । प्रभु–नाम के बिना प्रेम–प्यार नहीं होता और न ही सच्चे होकर सुखपूर्वक निवास किया जाता है । सज्जन प्रभु का सत्य मन में हो और सन्तोषपूर्वक मिलाप किया जाए तो गुरमति के माध्यम से प्रभु–पति को जाना जाता है । हे नानक, नाम के माध्यम से ही प्रभु–पति में लीन हुआ जाता है । इसीलिए जीव–रूपी स्त्री नाम का पल्ला नहीं छोड़ती ॥ २ ॥ हे सखियो, आओ मिलकर प्रियतम का सुमिरन करें । गुरु के उपदेश के माध्यम से मैं शब्द का संन्देश भेजूँगी । गुरु ने सच्चा शब्द दिखा दिया है परन्तु मनमुख व्यक्ति सदैव पछताता ही रहता है । जब सत्य की पहचान हो जाती है तो निकलकर भागता हुआ मन स्थिर हो जाता है । सत्य से उत्पन्न मति सदैव ताजा बनी रहती है और शब्द के माध्यम से लगा हुआ प्रभु–प्रेम सदैव नवीन बना रहता है । हे नानक, सच्चा प्रभु अपनी कृपा से सहजभाव में ही मिलता है इसलिए हे सत्संगी सहेलियो, आओ उससे मिल लो ॥ ३ ॥ मेरे घर में साजन आन बसा है इसलिए मेरी इच्छा पूर्ण हो गई है । जीव रूपी स्त्री ने प्रभु रूपी वर से मिलकर खुशी के गीत गाए हैं । प्रेम में भीगकर गुणानुवाद रूपी मंगल गीत गाने से मुग्धा स्त्री रूपी जीव के मन में उत्साह भर गया है । साजन प्रसन्न हो गया है और दुष्टजन विपदा में फंस गए हैं । जीव–स्त्री ने सत्य का जाप करके सत्य का मार्ग प्राप्त कर लिया है । वह जीव रूपी स्त्री हाथ जोड़कर दिन–रात प्रभु के रंग में भीगकर विनती करती है कि हे नानक, जीव और प्रभु का रमण बना रहे । इस प्रकार

रलीआ इछ मेरी पुंनीआ ॥ ४ ॥ १ ॥ गउड़ी छंत महला १ ॥ सुणि नाह प्रभू जीउ एकलड़ी बन माहे ॥ किउ धीरैगी नाह बिना प्रभ वेपरवाहे ॥ धन नाह बाझहु रहि न साकै बिखम रैणि घणेरीआ ॥ नह नीद आवै प्रेमु भावै सुणि बेनंती मेरीआ ॥ बाझहु पिआरे कोइ न सारे एकलड़ी कुरलाए ॥ नानक सा धन मिलै मिलाई बिनु प्रीतम दुखु पाए ॥ १ ॥ पिरि छोडिअड़ी जीउ कवणु मिलावै ॥ रसि प्रेमि मिली जीउ सबदि सुहावै ॥ सबदे सुहावै ता पति पावै दीपक देह उजारै ॥ सुणि सखी सहेली साचि सुहेली साचे के गुण सारै ॥ सतिगुरि मेली ता पिरि रावी बिगसी अंम्रित बाणी ॥ नानक सा धन ता पिरु रावे जा तिस कै मनि भाणी ॥ २ ॥ माइआ मोहणी नीघरीआ जीउ कूड़ि मुठी कूड़िआरे ॥ किउ खूलै गल जेवड़ीआ जीउ बिनु गुर अति पिआरे ॥ हरि प्रीति पिआरे सबदि वीचारे तिस ही का सो होवै ॥ पुंन दान अनेक नावण किउ अंतर मलु धोवै ॥ नाम बिना गति कोइ न पावै हठि निग्रहि बेबाणै ॥ नानक सच घरु सबदि सिञापै दुबिधा महलु कि जाणै ॥ ३ ॥ तेरा नामु सचा जीउ सबदु सचा वीचारो ॥ तेरा महलु सचा जीउ नामु सचा वापारो ॥ नाम का वापारु मीठा भगति लाहा अनदिनो ॥ तिसु बाझु वखरु कोइ न सूझै नामु लेवहु खिनु खिनो ॥ परखि लेखा नदरि साची करमि पूरै पाइआ ॥ नानक नामु महा रसु मीठा गुरि पूरै सचु पाइआ ॥ ४ ॥ २ ॥

रागु गउड़ी पूरबी छंत महला ३ ੴ सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

सा धन बिनउ करे जीउ हरि के गुण सारे ॥ खिनु पलु रहि न सकै जीउ बिनु हरि पिआरे ॥ बिनु हरि पिआरे रहि न साकै गुर बिनु महलु न पाईऐ ॥ जो गुरु कहै सोई परु कीजै तिसना अगनि बुझाईऐ ॥ हरि साचा सोई तिसु बिनु अवरु न कोई बिनु सेविऐ सुखु न पाए ॥ नानक सा धन मिलै मिलाई जिस नो आपि मिलाए ॥ १ ॥ धन रैणि सुहेलड़ीए जीउ हरि सिउ चितु लाए ॥ सतिगुरु सेवे भाउ करे जीउ विचहु आपु गवाए ॥ विचहु आपु गवाए हरि गुण गाए अनदिनु लागा भाओ ॥ सुणि सखी सहेली

मेरी इच्छा पूरी हो गई है ॥ ४ ॥ १ ॥ गउड़ी छन्द महला १ ॥ हे प्रभु पति, इस संसार रूपी जंगल में मैं अकेली हूँ और प्रभु बेपरवाह है तो भला जीव स्त्री को कैसे धैर्य आएगा। पति के बिना इस भयंकर रात्रि में स्त्री नहीं रह सकती। हे प्रभु, मुझे नींद नहीं आती; तू मेरी विनती को सुन। प्यारे पति के बिना कोई खबर नहीं लेता और जीव स्त्री अकेली ही रो रो कर पुकारती है। हे नानक, ऐसी स्त्री गुरु के द्वारा मिलाए जाने पर ही प्रभु से मिलती है अन्यथा उस प्रियतम के बिना वह दुखी बनी रहती है ॥ १ ॥ जिसे प्रियतम ने छोड़ ही दिया है उसे कौन मिलाए। वह प्रेम–रस में लीन होकर सुहावने शब्द के माध्यम से ही प्रभु से मिलती है। शब्द में लीन बनी रहे तो ही वह पति को प्राप्त करती है और ज्ञान रूपी दीपक से उसके तन–मन में उजाला हो जाता है। हे सखी, सत्य के माध्यम से ही सुखी हुआ जाता है और सत्य रूपी प्रभु के गुणों का सुमिरन किया जाता है। सद्गुरु ने जब मिलाया तभी प्रियतम के साथ रमण हुआ और अमृत्त–वाणी के माध्यम से जीव रूपी स्त्री आनन्दित हो उठी। हे नानक, वही जीव–स्त्री प्रभु के साथ रमण करती है जो उसके मन को अच्छी लगती है ॥ २ ॥ मोहिनी माया ने जीव रूपी स्त्री को घर से बेघर कर दिया है और जीव स्त्री झूठ में ही लूट ली गई। गले में पड़ी हुई रस्सी अत्यन्त प्यारे गुरु के बिना भला कैसे खुल सकती है। जो प्रभु को प्रेम सहित प्यार करता है और शब्द के माध्यम से चिन्तन करता है वह प्रभु का ही हो जाता है। अनेकों पुण्य–कार्य, दान और स्नान करने से भी भला अन्तर्मन की मैल कैसे धुल सकती है। हठ, संयम एवं वनों में निवास करने पर भी नाम के बिना कोई भी मुक्ति नहीं पा सकता। हे नानक, शब्द के माध्यम से सच्चे घर की पहचान बनती है; दुविधा में रहकर प्रभु के वास्तविक महल (ठिकाने) को भला कैसे जाना जा सकता है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, तेरा नाम भी सच्चा है, शब्द भी सच्चा है और शब्द का विचार भी सच्चा है। तेरा स्थान भी सच्चा है और तेरे नाम पर आधारित कार्य व्यापार भी सच्चा है। नाम का सौदा मीठा है जिससे प्रतिदिन भक्ति रूपी लाभ प्राप्त होता रहता है। उस प्रभु के बिना अन्य कोई सौदा दिखाई नहीं देता इसलिए प्रति क्षण उसके नाम का ही सुमिरन किया जाना चाहिए। यह सौदा देख–परख कर पूर्ण भाग्य एवं प्रभु की सत्य स्वरूप दृष्टि के फलस्वरूप ही प्राप्त किया है। हे नानक, प्रभु–नाम, महारस एवं मीठा है और यह सत्य केवल पूर्ण गुरु के माध्यम से ही प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ २ ॥

रागु गउड़ी पूरबी छन्द महला ३ ॥ १ओअंकार सतिनामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

जीव स्त्री प्रार्थना करती है कि हे प्रभु, सभी गुण तुम्हारे ही है। वह एक क्षण भर के लिए भी प्यारे प्रभु के बिना रह तो नहीं सकती परन्तु गुरु के बिना उसे ठिकाने का पता भी नहीं लगता। मिलने के लिए जो गुरु कहता है वही करना चाहिए और तृष्णा रूपी अग्नि को बुझाना चाहिए। वह प्रभु ही सच्चा है। उसके बिना अन्य कोई नहीं है और उसकी सेवा के बिना सुख भला कैसे पाया जा सकता है। हे नानक, वह जीव रूपी स्त्री ही उसे मिल पाती है जिसे वह स्वयं मिला लेता है ॥ १ ॥ यदि वह प्रभु के साथ मन लगा ले तो उस स्त्री की जीवन रूपी रात्रि सुखपूर्वक बीतती है। वह प्रेमपूर्वक सद्गुरु की सेवा करे और अपने अहंकार को गँवा दे। जब वह अहंकार को गँवा देती है और प्रभु का गुणानुवाद करती है तो सदा बना रहने वाला प्रेम लग जाता है। हे सखी–सहेलियो,

जीअ की मेली गुर कै सबदि समाओ ॥ हरि गुण सारी ता कंत पिआरी नामे धरी पिआरो ॥ नानक कामणि नाह पिआरी राम नामु गलि हारो ॥ २ ॥ धन एकलड़ी जीउ बिनु नाह पिआरे ॥ दूजै भाइ मुठी जीउ बिनु गुर सबद करारे ॥ बिनु सबद पिआरे कउणु दुतरु तारे माइआ मोहि खुआई ॥ कूड़ि विगुती ता पिरि मुती सा धन महलु न पाई ॥ गुर सबदे राती सहजे माती अनदिनु रहै समाए ॥ नानक कामणि सदा रंगि राती हरि जीउ आपि मिलाए ॥ ३ ॥ ता मिलीऐ हरि मेले जीउ हरि बिनु कवणु मिलाए ॥ बिनु गुर प्रीतम आपणे जीउ कउणु भरमु चुकाए ॥ गुरु भरमु चुकाए इउ मिलीऐ माए ता सा धन सुखु पाए ॥ गुर सेवा बिनु घोर अंधारु बिनु गुर मगु न पाए ॥ कामणि रंगि राती सहजे माती गुर कै सबदि वीचारे ॥ नानक कामणि हरि वरु पाइआ गुर कै भाइ पिआरे ॥ ४ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ पिर बिनु खरी निमाणी जीउ बिनु पिर किउ जीवा मेरी माई ॥ पिर बिनु नीद न आवै जीउ कापड़ु तनि न सुहाई ॥ कापरु तनि सुहावै जा पिर भावै गुरमती चितु लाईऐ ॥ सदा सुहागणि जा सतिगुरु सेवे गुर कै अंकि समाईऐ ॥ गुर सबदै मेला ता पिरु रावी लाहा नामु संसारे ॥ नानक कामणि नाह पिआरी जा हरि के गुण सारे ॥ १ ॥ सा धन रंगु माणे जीउ आपणे नालि पिआरे ॥ अहिनिसि रंगि राती जीउ गुर सबदु वीचारे ॥ गुर सबदु वीचारे हउमै मारे इन बिधि मिलहु पिआरे ॥ सा धन सोहागणि सदा रंगि राती साचै नामि पिआरे ॥ अपुने गुर मिलि रहीऐ अंम्रितु गहीऐ दुबिधा मारि निवारे ॥ नानक कामणि हरि वरु पाइआ सगले दूख विसारे ॥ २ ॥ कामणि पिरहु भुली जीउ माइआ मोहि पिआरे ॥ झूठी झूठि लगी जीउ कूड़ि मुठी कूड़िआरे ॥ कूड़ु निवारे गुरमति सारे जूऐ जनमु न हारे ॥ गुर सबदु सेवे सचि समावै विचहु हउमै मारे ॥ हरि का नामु रिदै वसाए ऐसा करे सीगारो ॥ नानक कामणि सहजि समाणी जिसु साचा नामु अधारो ॥ ३ ॥ मिलु मेरे प्रीतमा जीउ तुधु बिनु खरी निमाणी ॥ मै नैणी नीद न आवै जीउ भावै अंनु न पाणी ॥ पाणी अंनु न भावै मरीऐ हावै बिनु पिर किउ सुखु

शब्द–गुरु में लीन होकर हृदय से उसके साथ मिलो । प्रभु के गुणों का सुमिरन किया जाएगा और प्रभु नाम के साथ प्यार किया जाएगा तभी वह पति को प्यारी लगेगी । हे नानक, जिसने प्रभु नाम को गले में हार की तरह धारण कर लिया है वही स्त्री प्रभु–पति को अच्छी लगती है ॥ २ ॥ प्यारे पति के विना जीव–स्त्री अकेली है । बलवान शब्द–गुरु से विहीन होकर यह द्वैतभाव में पड़कर लूट ली गई है । शब्द के बिना इस संसार–सागर से कौन पार उतारे । जीव–स्त्री माया–मोह में ख्वार होकर भटक रही है । जव यह झूठ में लीन होकर खराव हो गई तब पति ने उसे छोड़ दिया । ऐसी स्त्री पति का ठिकाना नहीं पा सकती । शव्द–गुरु में लीन और सहजभाव में मस्त हुई सदैव प्रभु में लीन बनी रहती है । हे नानक, ऐसी स्त्री सदैव प्रभु–रंग में रंगी रहती है और प्रभु उसे आप ही मिला लेता है ॥ ३ ॥ प्रभु मिलाता है तभी मिला जाता है और प्रभु के विना दूसरा कौन मिला सकता है । अपने प्रियतम गुरु के बिना कौन भ्रमों को दूर कर सकता है । गुरु द्वारा भ्रम समाप्त करके, हे माँ, उससे मिला जाता है और ऐसी स्त्री सदैव सुखी रहती है । गुरु की सेवा के बिना घोर अन्धकार है और गुरु के विना मार्ग सुझाई नहीं देता । शव्द–गुरु के चिन्तन–मनन के फलस्वरूप जीव–स्त्री उसके रंग में रंगकर सहज भाव में आनन्दित वनी रहती है । हे नानक, गुरु के प्रेम के माध्यम से जीव–स्त्री प्रभु–पति को प्राप्त कर लेती है ॥ ४ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ प्रियतम के बिना मैं बहुत ही मान विहीन होकर खड़ी हूँ और हे मेरी माँ, मैं प्रियतम के विना कैसे जीवित रहूँ । प्रियतम के बिना मुझे नींद नहीं आती और वस्त्र भी मेरे तन को अच्छे नहीं लगते । गुरमति में जव मन टिकाया जाता है, तब ही प्रियतम को अच्छा लगा जाता है और वस्त्र भी शरीर पर अच्छे लगते हैं । गुरु की गोद में वैठकर जव सद्गुरु (परमात्मा) का सुमिरन किया जाए तभी जीव–स्त्री सदा सुहागिन वनती है । शव्द–गुरु के माध्यम से यदि मिलाप हो तभी प्रियतम के साथ रमण किया जाता है और इस संसार में प्रभु–नाम का लाभ प्राप्त होता है । प्रभु नाम का सुमिरन करने वाली जीव स्त्री, हे नानक, अपने पति को अच्छी लगती है ॥ १ ॥ वह स्त्री अपने प्रियतम के साथ आनन्दित बनी रहती है जो रात–दिन शब्द गुरु के विचार के रंग में रंगी रहती है । शव्द का चिन्तन करके अहम् को मारने की विधि से प्यारे प्रभु को मिला जाता है । प्रभु के सच्चे नाम में रंगी हुई जीव–स्त्री सदैव सुहागिन बनी रहती है । अपने गुरु की शरण में पड़े रहकर अमृत को प्राप्त किया जाता है और दुविधा मारकर उसका निवारण किया जाता है । हे नानक, जब जीव–स्त्री ने हरि रूपी पति पा लिया तो उसके सभी दुख दूर हो जाते है ॥ २ ॥ माया–मोह के प्यार में जीव–स्त्री प्रभु पति को भूल गई है । वह झूठ में ही बनी रहती है और इस तरह से झूठी बनकर झूठ द्वारा ही ठग ली जाती है । जब वह गुरमति के सार को समझती है तो झूठ का त्याग कर देती है और अपने जीवन को जुए में नहीं हारती । वह शब्द–गुरु का सुमिरन करती हुई अन्तर्मन से अहंकार को नष्ट करके सत्य में लीन हो जाती है । वह प्रभु–नाम को मन में बसाने का श्रृंगार करती है और हे नानक, जिसको सच्चे नाम का ही आसरा है वह जीव–स्त्री सहज भाव में ही लीन बनी रहती है ॥ ३ ॥ मेरे प्रियतम, मुझे आन मिलो मैं तुम्हारे बिना अपने आप को दुर्बल महसूस कर रही हूँ । मेरी आँखों में नींद नहीं आती और अन्न पानी भी मुझे नहीं भाता । अन्न–पानी अच्छा नहीं लगता और तेरी ही याद में मरी जाती हूँ । प्रियतम के बिना भला कैसे सुख मिल सकता है । मैं गुरु के सम्मुख

पाईऐ ॥ गुर आगै करउ बिनंती जे गुर भावै जिउ मिलै तिवै मिलाईऐ ॥ आपे मेलि लए सुखदाता आपि मिलिआ घरि आए ॥ नानक कामणि सदा सुहागणि ना पिरु मरै न जाए ॥ ४ ॥ २ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ कामणि हरि रसि बेधी जीउ हरि कै सहजि सुभाए ॥ मनु मोहनि मोहि लीआ जीउ दुबिधा सहजि समाए ॥ दुबिधा सहजि समाए कामणि वरु पाए गुरमती रंगु लाए ॥ इहु सरीरु कूड़ि कुसति भरिआ गल ताई पाप कमाए ॥ गुरमुखि भगति जितु सहज धुनि उपजै बिनु भगती मैलु न जाए ॥ नानक कामणि पिरहि पिआरी विचहु आपु गवाए ॥ १ ॥ कामणि पिरु पाइआ जीउ गुर कै भाइ पिआरे ॥ रैणि सुखि सुती जीउ अंतरि उरि धारे ॥ अंतरि उरि धारे मिलीऐ पिआरे अनदिनु दुखु निवारे ॥ अंतरि महलु पिरु रावे कामणि गुरमती वीचारे ॥ अंम्रितु नामु पीआ दिन राती दुबिधा मारि निवारे ॥ नानक सचि मिली सोहागणि गुर कै हेति अपारे ॥ २ ॥ आवहु दइआ करे जीउ प्रीतम अति पिआरे ॥ कामणि बिनउ करे जीउ सचि सबदि सीगारे ॥ सचि सबदि सीगारे हउमै मारे गुरमुखि कारज सवारे ॥ जुगि जुगि एको सचा सोई बूझै गुर बीचारे ॥ मनमुखि कामि विआपी मोहि संतापी किसु आगै जाइ पुकारे ॥ नानक मनमुखि थाउ न पाए बिनु गुर अति पिआरे ॥ ३ ॥ मुंध इआणी भोली निगुणीआ जीउ पिरु अगम अपारा ॥ आपे मेलि मिलीऐ जीउ आपे बखसणहारा ॥ अवगण बखसणहारा कामणि कंतु पिआरा घटि घटि रहिआ समाई ॥ प्रेम प्रीति भाइ भगती पाईऐ सतिगुरि बूझ बुझाई ॥ सदा अनंदि रहै दिनु राती अनदिनु रहै लिव लाई ॥ नानक सहजे हरि वरु पाइआ सा धन नउ निधि पाई ॥ ४ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ माइआ सरु सबलु वरतै जीउ किउ करि दुतरु तरिआ जाइ ॥ राम नामु करि बोहिथा जीउ सबदु खेवटु विचि पाइ ॥ सबदु खेवटु विचि पाए हरि आपि लघाए इन बिधि दुतरु तरीऐ ॥ गुरमुखि भगति परापति होवै जीवतिआ इउ मरीऐ ॥ खिन महि राम नामि किलविख काटे भए पवितु सरीरा ॥ नानक राम नामि निसतारा कंचन भए मनूरा ॥ १ ॥

बिनती करती हूँ कि हे गुरु, यदि तुझे अच्छा लगे तो जैसे भी मेल हो सके करा दे । ऐसी भावना के फलस्वरूप वह सुखदाता प्रभु स्वयं ही मिला लेता है और स्वयं ही मन में प्रकट होकर मिल जाता है । हे नानक, ऐसी जीव–स्त्री सदा सुहागिन होती है और उसका पति न तो मरता है और न ही कहीं जाता है ॥ ४ ॥ २ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ प्रभु के शान्त स्वभाव में लीन जीव–स्त्री हरि–रस में बिंधी रहती है । उसकी दुविधा सहज में लीन होकर समाप्त हो जाती है क्योंकि अब उसका मन प्रभु ने मोह लिया होता है । प्रियतम मिलने से कामिनी दुविधा को त्याग कर सहज में लीन हो जाती है और गुरु के उपदेश के रंग में रंगी रहती है । यह शरीर तो पाप कमाकर गले तक झूठ से भरा हुआ है । गुरमुख बनकर भक्ति होती है जिससे आध्यात्मिक आनन्द की दशा उत्पन्न होती है । भक्ति के बिना अन्तर्मन की मैल नहीं छूटती । हे नानक, अभिमान गँवा कर स्त्री उस पति की प्यारी बन जाती है ॥ १ ॥ गुरु से प्रेम करके जीव–स्त्री ने प्रियतम को पा लिया है । उसे मन में धारण करके वह जीवन–रात्रि में सुखपूर्वक सोई रहती है । अन्तर्मन में रात–दिन उस प्रियतम को धारण करने से दुख निवृत हो जाते हैं । गुरु के उपदेश के माध्यम से जीव–स्त्री अपने अन्तर्मन में ही प्रियतम के साथ रमण करने की युक्ति जान जाती है । ऐसी अवस्था में दिन–रात अमृत–नाम का पान किया जाता है और दुविधा को मारकर दूर कर दिया जाता है । हे नानक, गुरु के प्रेम के माध्यम से सुहागिन रूपी जीव–स्त्री सत्य के माध्यम से प्रभु को जान लेती है ॥ २ ॥ दया करके हे मेरे अत्यन्त प्यारे प्रियतम मेरे पास आ जाओ। सत्य शव्द का सिंगार करके जीव–स्त्री, हे प्रभु, प्रार्थना कर रही है । सत्य–शव्द के सिंगार से अहंकार को मारा जाता है और गुरमुख बनकर जीवन के कार्यों को सँवारा जाता है । गुरु के उपदेश से पता चलता है कि युगों–युगों में एक प्रभु ही सच्चा एवं सदैव बना रहने वाला है । मनमुख व्यक्ति काम और मोह में भ्रष्ट होकर दुखी बना रहता है । वह भला किसके आगे पुकार लगाए । हे नानक, अत्यन्त प्यारे गुरु की शरण के विना मनमुख व्यक्ति को अन्य कोई ठिकाना नहीं मिलता ॥ ३ ॥ मुग्धा स्त्री छोटी, भोली एवं गुणविहीन है परन्तु प्रियतम अगम्य एवं अपार है । प्रभु आप मिलाए तभी मिलाप होता है और वह प्रभु ही कृपा करने वाला है । अवगुणों को क्षमा करने वाला, जीव–स्त्री का प्यारा पति प्रत्येक हृदय में समाया हुआ है । उसे प्रेम, प्रीति, भावना और भक्ति से पाया जाता है–यह तथ्य सद्‌गुरु ने ही मुझे समझाया है । ऐसी समझ के साथ दिन–रात आनन्द बना रहता है और व्यक्ति की सुरति सदैव उसमें लीन बनी रहती है । हे नानक, सहजभाव में ही प्रभु रूपी पति प्राप्त होता है और ऐसी जीव–स्त्री को सभी सम्पदाओं के भण्डार मिल जाते हैं ॥ ४ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ माया का सरोवर वहुत बलवान होकर उछल रहा है; इस दुष्तर सरोवर को कैसे तैरा जाए । हे जीव, राम–नाम को जहाज बना और शव्द को खेवट के रूप में प्रयुक्त कर । जब शव्द को मल्लाह के तौर पर साथ ले लिया जाता है तो प्रभु स्वयं पार ले जाता है और इस प्रकार इस दुष्तर सागर को तैरा जाता है । गुरमुख बनकर भक्ति प्राप्त होती है और इस प्रकार जीवित रहकर विकारों की ओर से मरा जाता है । राम–नाम क्षण भर में पापों को काट देता है और शरीर पवित्र हो जाता है । हे नानक, राम–नाम के माध्यम से ही मुक्ति मिलती है और लोहे की मैल में भी सोने के गुण आ जाते हैं ॥ १ ॥

इसतरी पुरख कामि विआपे जीउ राम नाम की बिधि नही जाणी ॥ मात पिता सुत भाई खरे पिआरे जीउ डूबि मुए बिनु पाणी ॥ डूबि मुए बिनु पाणी गति नही जाणी हउमै धातु संसारे ॥ जो आइआ सो सभु को जासी उबरे गुर वीचारे ॥ गुरमुखि होवै राम नामु वखाणै आपि तरै कुल तारे ॥ नानक नामु वसै घट अंतरि गुरमति मिले पिआरे ॥ २ ॥ राम नाम बिनु को थिरु नाही जीउ बाजी है संसारा ॥ द्रिडु भगति सची जीउ राम नामु वापारा ॥ राम नामु वापारा अगम अपारा गुरमती धनु पाईऐ ॥ सेवा सुरति भगति इह साची विचहु आपु गवाईऐ ॥ हम मति हीण मूरख मुगध अंधे सतिगुरि मारगि पाए ॥ नानक गुरमुखि सबदि सुहावे अनदिनु हरि गुण गाए ॥ ३ ॥ आपि कराए करे आपि जीउ आपे सबदि सवारे ॥ आपे सतिगुरु आपि सबदु जीउ जुगु जुगु भगत पिआरे ॥ जुगु जुगु भगत पिआरे हरि आपि सवारे आपे भगती लाए ॥ आपे दाना आपे बीना आपे सेव कराए ॥ आपे गुणदाता अवगुण काटे हिरदै नामु वसाए ॥ नानक सद बलिहारी सचे विटहु आपे करे कराए ॥ ४ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ गुर की सेवा करि पिरा जीउ हरि नामु धिआए ॥ मंञहु दूरि न जाहि पिरा जीउ घरि बैठिआ हरि पाए ॥ घरि बैठिआ हरि पाए सदा चितु लाए सहजे सति सुभाए ॥ गुर की सेवा खरी सुखाली जिस नो आपि कराए ॥ नामो बीजे नामो जंमै नामो मंनि वसाए ॥ नानक सचि नामि वडिआई पूरबि लिखिआ पाए ॥ १ ॥ हरि का नामु मीठा पिरा जीउ जा चाखहि चितु लाए ॥ रसना हरि रसु चाखु मुये जीउ अन रस साद गवाए ॥ सदा हरि रसु पाए जा हरि भाए रसना सबदि सुहाए ॥ नामु धिआए सदा सुखु पाए नामि रहै लिव लाए ॥ नामे उपजै नामे बिनसै नामे सचि समाए ॥ नानक नामु गुरमती पाईऐ आपे लए लवाए ॥ २ ॥ एह विडाणी चाकरी पिरा जीउ धन छोडि परदेसि सिधाए ॥ दूजै किनै सुखु न पाइओ पिरा जीउ बिखिआ लोभि लुभाए ॥ बिखिआ लोभि लुभाए भरमि भुलाए ओहु किउ करि सुखु पाए ॥ चाकरी विडाणी खरी दुखाली आपु वेचि धरमु

स्त्री–पुरुष काम वासना में लीन हैं और इन्होंने प्रभु–नाम सुमिरन की विधि को नहीं जाना है। इनके माता–पिता, पुत्र, भाई और अत्यन्त प्यारे लोग इस माया–मोह के समुद्र में डूब कर मर चुके हैं। वे माया में डूबे हैं क्योंकि उन्होंने पार जाने की विधि को अहंकार के वश में होकर नहीं जाना है। जो यहाँ आया है उसे यहाँ से जाना ही जाना है; केवल गुरु के उपदेश से ही उसका उद्धार हो सकता है। जब व्यक्ति गुरमुख बनता है और प्रभु–नाम का जाप करता है तो वह स्वयं तो पार होता ही है, अपने परिवार को भी पार उतार लेता है। हे नानक, जब हृदय में नाम बस जाए तो गुरमति के माध्यम से प्यारा प्रभु मिल जाता है ॥ २ ॥ यह संसार एक तमाशे की तरह अस्थिर है; यहाँ राम–नाम के बिना कुछ भी स्थिर नहीं है। हे जीव, तू भक्ति भाव को पक्का कर और प्रभु–नाम का व्यापारी बन। प्रभु–नाम का व्यापार अगम्य तथा अपार है और इससे गुरु रूपी धन प्राप्त होता है। यही सच्ची भक्ति है, सेवा है और चेतनता है जिसके माध्यम से अभिमान को गँवा दिया जाता है। हम जीव मतिहीन, मूर्ख एवं अन्धे अज्ञानी हैं, सद्गुरु ने ही हमें सही मार्ग पर डाला है। हे नानक, गुरमुख बनने से शब्द–प्रभु अच्छा लगता है और हर रोज व्यक्ति प्रभु के गुण गाता है ॥ ३ ॥ वह प्रभु स्वयं ही करता कराता है और शब्द के माध्यम से ही हमारा जीवन संवारता है। वह स्वयं ही सद्गुरु है, स्वयं ही शब्द है और स्वयं ही युगों–युगों से भक्तों को प्यार करता है। युगों–युगों से भक्तों को प्यार करके प्रभु स्वयं ही उन्हें अच्छा बनाता है और भक्ति में लगाता है। वह स्वयं ही जानने वाला, देखने वाला और स्वयं ही सुमिरन कराने वाला है। गुण दाता प्रभु स्वयं ही अवगुण दूर करता है और हृदय में प्रभु–नाम बसाता है। हे नानक, वह स्वयं ही करता कराता है और मैं उस सत्य–प्रभु पर बलिहारी जाता हूँ ॥ ४ ॥ ४ ॥ गउड़ी महला ३ ॥ हे मेरे प्यारे मन, तू गुरु की सेवा कर और प्रभु–नाम का सुमिरन कर। हे मेरे प्यारे मन, तू मुझ से दूर मत भाग और घर बैठकर अन्दर ही प्रभु को प्राप्त कर। घर बैठकर प्रभु प्राप्त कर, सदा प्रभु में चित्त लगा और सहज में ही अपना सत्य–स्वभाव बना। गुरु की सेवा उसके लिए बहुत ही सुखदाई है जिससे वह प्रभु स्वयं करवाता है। ऐसा व्यक्ति नाम ही बोता है, नाम ही पैदा करता है और नाम को ही मन में बसाता है। हे नानक, सच्चे नाम का बड़प्पन भाग्य में लिखा हुआ हो तभी प्राप्त होता है ॥ १ ॥ हे मेरे प्रिय मन, यदि चित्त लगाकर तू इसको चखे तो प्रभु–नाम अत्यन्त मीठा है। हे मुई जीभ, तू हरि–रस को चखकर देख और अन्य रसों के स्वाद को छोड़ दे। सदैव हरि–रस तब ही मिलता है यदि प्रभु को अच्छा लगे और जीभ पर शब्द शोभायमान हो। व्यक्ति नाम का ही सुमिरन करे और नाम में ही लीन बना रहकर सदैव ही सुख को प्राप्त करे। प्रभु–नाम से ही जीव पैदा होता है, विनष्ट होता है और उसी में ही समाहित हो जाता है। हे नानक, नाम को गुरु की मति के अनुसार चलकर ही पाया जा सकता है और प्रभु स्वयं ही व्यक्ति को नाम में लीन कर लेता है ॥ २ ॥ हे मेरे प्यारे मन, अपने घर को छोड़कर विकारों के पीछे देस–परदेस में भटकना बेगानी चाकरी करने के समान है। हे मेरे मन, द्वैत भाव में किसी ने कभी सुख नहीं पाया और वह सदैव लोभ रूपी विष में ही लीन बना रहता है। लोभ के विष में लीन रहकर व्यक्ति भ्रमों में भटकता है; उसे भला सुख कैसे मिल सकता है।

गवाए ॥ माइआ बंधन टिकै नाही खिनु खिनु दुखु संताए ॥ नानक माइआ का दुखु तदे चूकै जा गुर सबदी चितु लाए ॥ ३ ॥ मनमुख मुगध गावारु पिरा जीउ सबदु मनि न वसाए ॥ माइआ का भ्रमु अंधु पिरा जीउ हरि मारगु किउ पाए ॥ किउ मारगु पाए बिनु सतिगुर भाए मनमुखि आपु गणाए ॥ हरि के चाकर सदा सुहेले गुर चरणी चितु लाए ॥ जिस नो हरि जीउ करे किरपा सदा हरि के गुण गाए ॥ नानक नामु रतनु जगि लाहा गुरमुखि आपि बुझाए ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७ ॥

रागु गउड़ी छंत महला ५ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

मेरै मनि बैरागु भइआ जीउ किउ देखा प्रभ दाते ॥ मेरे मीत सखा हरि जीउ गुर पुरख बिधाते ॥ पुरखो बिधाता एकु स्रीधरु किउ मिलह तुझै उडीणीआ ॥ कर करहि सेवा सीसु चरणी मनि आस दरस निमाणीआ ॥ सासि सासि न घड़ी विसरै पलु मूरतु दिनु राते ॥ नानक सारिंग जिउ पिआसे किउ मिलीऐ प्रभ दाते ॥ १ ॥ इक बिनउ करउ जीउ सुणि कंत पिआरे ॥ मेरा मनु तनु मोहि लीआ जीउ देखि चलत तुमारे ॥ चलता तुमारे देखि मोही उदास धन किउ धीरए ॥ गुणवंत नाह दइआलु बाला सरब गुण भरपूरए ॥ पिर दोसु नाही सुखह दाते हउ विछुड़ी बुरिआरे ॥ बिनवंति नानक दइआ धारहु घरि आवहु नाह पिआरे ॥ २ ॥ हउ मनु अरपी सभु तनु अरपी अरपी सभि देसा ॥ हउ सिरु अरपी तिसु मीत पिआरे जो प्रभ देइ सदेसा ॥ अरपिआ त सीसु सुथानि गुर पहि संगि प्रभू दिखाइआ ॥ खिन माहि सगला दूखु मिटिआ मनहु चिंदिआ पाइआ ॥ दिनु रैणि रलीआ करै कामणि मिटे सगल अंदेसा ॥ बिनवंति नानकु कंतु मिलिआ लोड़ते हम जैसा ॥ ३ ॥ मेरै मनि अनदु भइआ जीउ वजी वाधाई ॥ घरि लालु आइआ पिआरा सभ तिखा बुझाई ॥ मिलिआ त लालु गुपालु ठाकुरु सखी मंगलु गाइआ ॥ सभ मीत बंधप हरखु उपजिआ दूत थाउ गवाइआ ॥ अनहत वाजे वजहि घर महि पिर संगि सेज विछाई ॥ बिनवंति नानकु सहजि रहै हरि मिलिआ

दूसरे की नौकरी बहुत दुखदायक है क्योंकि व्यक्ति इसमें अपनी आत्मा को बेचकर अपने कर्त्तव्य कर्म को छोड़ देता है । सासांरिक प्रपंचों के बन्धनों में वह स्थिर नहीं रह पाता और प्रत्येक क्षण दुखी होता रहता है । हे नानक, माया का दुख तभी समाप्त होता है जब शब्द–गुरु में चित्त लगाया जाता है ॥ ३ ॥ हे मनमुख, मुग्ध, गँवार मन, तू शब्द को अपने अन्तर्मन में धारण नहीं करता है । हे प्यारे मन, माया का भ्रम अज्ञान रूप है और इसमें फँसकर प्रभु का मार्ग भला क्योंकर पाया जा सकता है । मनमुख व्यक्ति अपने को जनवाने में लगा रहता है और प्रभु को अच्छा लगे विना वह भला जीवन का सही मार्ग कैसे पा सकता है । प्रभु के सेवक सदा सुखी वने रहते हैं क्योंकि उन्होंने अपना चित्त प्रभु के चरणों में लगा लिया होता है । जिस पर प्रभु कृपा करता है वह सदैव प्रभु का गुणानुवाद करता है । हे नानक, प्रभु स्वयं ही गुरमुखों को समझा देता है कि इस संसार में केवल नाम रूपी रत्न ही लाभदायक है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७ ॥

राागु गउड़ी छन्द महला ५   १ओअंकार सतिगुर प्रसादि

मेरा मन उदास हो गया है; मैं दाता प्रभु को कैसे मिलूँ । हे मेरे मित्र, साथी प्रभु रूपी गुरु ही ऐसा वलशाली है जो तुझे मिलने की विधि वताने और वनाने वाला है । हे प्रभु, हम व्याकुल स्त्रियाँ तुझे कैसे मिलें । हमारे हाथ सेवा में लगे हुए है और सिर विश्वास और श्वास इस आशा के साथ चरणों में झुका हुआ है कि हम गरीवों को तेरा दर्शन हो जाए । श्वास, एक पल भर के लिए और दिन–रात तू कभी भी विस्मृत नहीं होता । हे नानक, पर्पाहे की तरह हम प्यासे उस प्रभु दाता से कैसे मिले ॥ १ ॥ हे प्यारे पति प्रभु, मैं तुझसे एक विनती करती हूँ । तुम्हारे कौतुकों को देखकर मेरा मन तन मोहित हो उठा है । तुम्हारे कौतुक देखकर मेरा मन मोहित हो गया परन्तु मुझ उदास स्त्री को धैर्य कैसे प्राप्त हो । गुणवन्त पति दयालु सदैव जवान वना रहता है और सव गुणों से भरपूर रहता है । मेरे प्रियतम का कोई दोप नहीं । हे सुखदाता प्रभु, मैं स्वयं वूढ़ी होने के कारण उससे विछुड़ी हुई हूँ । नानक विनती करता है कि हे प्यारे पति प्रभु, दया करके मेरे घर में आन वसो ॥ २ ॥ मैं मन, तन और सव कुछ अर्पण कर दूँ; मैं उस प्यारे मित्र को अपना सिर अर्पण कर दूँ जो मुझे प्रभु का सन्देश आ सुनाए । जव सद्संगत में गुरु के आगे सिर अर्पण कर दिया अर्थात अपना अभिमान गँवा दिया तो उसी क्षण प्रभु के दर्शन हो गए । क्षण भर में मेरे सारे दुख मिट गए और मुझे मनोवांछित फल प्राप्त हो गए । अव सारे संशय मिटा कर जीव–स्त्री दिन–रात प्रभु–पति के साथ रमण करती है । नानक रूपी जीव स्त्री विनती करती है कि जिस तरह का प्रियतम हम ढूँढते थे वैसा ही मिल गया है ॥ ३ ॥ मेरा मन आनन्दित हो उठा और खुशी के वाद्य वजने लगे । मेरे हृदय में प्यारा प्रभु आन वसा और मेरी सारी तृष्णा बुझ गई है । जब मुझे लाल–गोपाल प्रभु मिला तो सखी–सहेलियों ने भी मंगल गीत गाए । सभी मित्र और सखा प्रसन्न हो उठे और कामादिक शत्रुओं का नामोनिशान मिटा दिया गया । मन में अनहद नाद बजने लगा और मेरी सेज प्रियतम के साथ बिछ गई । नानक रूपी जीव स्त्री कहती है कि जबसे सुखदायक प्रभु–पति मिल गया है तब से वह पूर्ण शान्ति वाली

कंतु सुखदाई ॥ ४ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ मोहन तेरे ऊचे मंदर महल अपारा ॥ मोहन तेरे सोहनि दुआर जीउ संत धरम साला ॥ धरम साल अपार दैआर ठाकुर सदा कीरतनु गावहे ॥ जह साध संत इकत्र होवहि तहा तुझहि धिआवहे ॥ करि दइआ मइआ दइआल सुआमी होहु दीन क्रिपारा ॥ बिनवंति नानक दरस पिआसे मिलि दरसन सुखु सारा ॥ १ ॥ मोहन तेरे बचन अनूप चाल निराली ॥ मोहन तूं मानहि एकु जी अवर सभ राली ॥ मानहि त एकु अलेखु ठाकुरु जिनहि सभ कल धारीआ ॥ तुधु बचनि गुर कै वसि कीआ आदि पुरखु बनवारीआ ॥ तूं आपि चलिआ आपि रहिआ आपि सभ कल धारीआ ॥ बिनवंति नानक पैज राखहु सभ सेवक सरनि तुमारीआ ॥ २ ॥ मोहन तुधु सतसंगति धिआवै दरस धिआना ॥ मोहन जमु नेड़ि न आवै तुधु जपहि निदाना ॥ जमकालु तिन कउ लगै नाही जो इक मनि धिआवहे ॥ मनि बचनि करमि जि तुधु अराधहि से सभे फल पावहे ॥ मल मूत मूड़ जि मुगध होते सि देखि दरसु सुगिआना ॥ बिनवंति नानक राजु निहचलु पूरन पुरख भगवाना ॥ ३ ॥ मोहन तूं सुफलु फलिआ सणु परवारे ॥ मोहन पुत्र मीत भाई कुटंब सभि तारे ॥ तारिआ जहानु लहिआ अभिमानु जिनी दरसनु पाइआ ॥ जिनी तुध नो धंनु कहिआ तिन जमु नेड़ि न आइआ ॥ बेअंत गुण तेरे कथे न जाही सतिगुर पुरख मुरारे ॥ बिनवंति नानक टेक राखी जितु लगि तरिआ संसारे ॥ ४ ॥ २ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सलोकु ॥ पतित असंख पुनीत करि पुनह पुनह बलिहार ॥ नानक राम नामु जपि पावको तिन किलबिख दाहनहार ॥ १ ॥ छंत ॥ जपि मना तूं राम नराइणु गोविंदा हरि माधो ॥ धिआइ मना मुरारि मुकंदे कटीऐ काल दुख फाधो ॥ दुख हरण दीन सरण स्रीधर चरन कमल अराधीऐ ॥ जम पंथु बिखड़ा अगनि सागरु निमख सिमरत साधीऐ ॥ कलिमलह दहता सुधु करता दिनसु रैणि अराधो ॥ बिनवंति नानक करहु किरपा गोपाल गोबिंद माधो ॥ १ ॥ सिमरि मना दामोदरु दुखहरु भै भंजनु हरि राइआ ॥ स्रीरंगो दइआल मनोहरु भगति वछलु बिरदाइआ ॥

दशा में रहती है ॥ ४ ॥ १ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे प्रभु, तेरे ऊँचे एवं विशाल महल हैं । तेरे ही धर्म के स्थान एवं उनमें शान्त पुरुष शोभायमान हैं । हे दयालु, तेरे धर्म का क्षेत्र अपार है और सभी तेरी कीर्ति का गायन करते हैं । जहाँ जहाँ भी साधु सन्त एकत्र होते हैं वे तेरा ही सुमिरन करते हैं । हे दयालु, स्वामी, दया करो और दीनों पर कृपा करो । नानक विनती करता है कि हम सभी तेरे दर्शन के प्यासे हैं; तू सारे सुखों का सार-तत्व अपना दर्शन दे ॥ १ ॥ हे प्रभु, तेरे वचन अनुपम हैं और तेरी कार्य विधि निराली है । हे प्रभु, सभी जीव केवल तुझे ही मानते हैं क्योंकि अन्य सब कुछ नाशवान है। केवल एक तुझको ही स्थिर अलेख एवं सब का पालनहार और सारी सृष्टि को धारण करने वाला माना जाता है । हे प्रभु, तुझे तेरे भक्तों ने गुरु के वचनों के माध्यम से प्यार करके वश में किया हुआ है; तू ही सबका मूल है सर्वव्यापक है और सारे जगत का मालिक है । इस संसार में से जीवात्मा के चले जाने के साथ तू भी चला गया माना जाता है परन्तु फिर भी तू सदैव बना रहने वाला है और जगत में तेरी ही शक्ति से कार्य व्यवहार हो रहा है । नानक विनती करता है कि हे प्रभु, मेरी लाज रखो । मैं सब सेवकों के साथ तेरी शरण में आन पड़ा हूँ ॥ २ ॥ हे मोहन प्रभु, सद्संगत तेरा सुमिरन करती है और तेरे दर्शन पर ध्यान टिकाए रहती है । एक मन से सुमिरन करने वालों को मौत का भय पास नहीं आता । जो मन, वचन और कर्म से तेरी आराधना करते हैं उनको सभी फल प्राप्त हो जाते हैं । हे प्रभु, नीच, कुकर्मी और महामूर्ख भी तेरा दर्शन करके ज्ञानवान बन जाते हैं ॥ नानक विनती पूर्वक कथन करता है कि हे प्रभु, तेरा शासन सदा बना रहने वाला है ॥ ३ ॥ हे प्रभु, संसार विशाल परिवार के रूप में तू ही फला फूला हुआ है । हे प्रभु, पुत्रों, मित्रों और भाईयों के बड़े बड़े परिवार तू संसार समुद्र से पार उतार देता है । हे प्रभु, जिन्होंने तेरा दर्शन कर लिया है उनके अन्दर से तूने अहंकार भावना दूर कर दी है । जिन भाग्यशालियों ने तेरा गुणानुवाद किया है, आध्यात्मिक मौत उनके पास भी नहीं आ पाती । हे सद्गुरु रूपी प्रभु, तेरे गुण अनन्त है जिनका कथन नहीं किया जा सकता । नानक विनती करता है कि मैंने तेरा ही आसरा देखा है जिसके कारण मैं संसार-सागर से पार हो रहा हूँ ॥ ४ ॥ २ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ श्लोक ॥ जिसने असंख्य पतितों को पवित्र कर दिया है उसी पर बार-बार बलिहारी जाओ । हे नानक, राम-नाम रूपी अग्नि का सुमिरन करो क्योंकि वही पाप के तिनकों को जला देने वाली है ॥ १॥ छन्द ॥ हे मन, तू प्रभु नारायण, गोविन्द हरि अर्थात किसी भी नाम से उस प्रभु का जाप कर । मन से उस प्रभु का ध्यान करने पर काल और दुख का फन्दा कट जाता है । वह प्रभु दुखों का हरण करने वाला, दीनों को शरण में रखने वाला ऐश्वर्यमान है; सदैव उसके चरण-कमलों का ध्यान किया जाना चाहिए । यम का मार्ग बहुत ही विषम और अग्नि का सागर है परन्तु क्षण भर के सुमिरन से ही वह सध जाता है । वह प्रभु ही पापों की कालिमा एवं सब विकारों की मैल को जलाकर शुद्ध करने वाला है; इसलिए दिन-रात उसी की आराधना करो । नानक विनती करता है कि गोपाल, गोविन्द माधव प्रभु, मुझ पर कृपा करो ॥ १ ॥ हे मेरे मन, वह राजन हरि दुख और भय को हर लेने वाला है; उसका सुमिरन करो । वह ऐश्वर्यवान, दयालु, मनोहर, भक्तवत्सल एवं अपने बिरद का पालन करने वाला है ।

भगति वछल पुरख पूरन मनहि चिंदिआ पाईऐ ॥ तम अंध कूप ते उधारै नामु मंनि वसाईऐ ॥ सुर सिध गण गंधरब मुनि जन गुण अनिक भगती गाइआ ॥ बिनवंति नानक करहु किरपा पारब्रहम हरि राइआ ॥ २ ॥ चेति मना पारब्रहमु परमेसरु सरब कला जिनि धारी ॥ करुणा मै समरथु सुआमी घट घट प्राण अधारी ॥ प्राण मन तन जीअ दाता बेअंत अगम अपारो ॥ सरणि जोगु समरथु मोहनु सरब दोख बिदारो ॥ रोग सोग सभि दोख बिनसहि जपत नामु मुरारी ॥ बिनवंति नानक करहु किरपा समरथ सभ कल धारी ॥ ३ ॥ गुण गाउ मना अचुत अबिनासी सभ ते ऊच दइआला ॥ बिसंभरु देवन कउ एकै सरब करै प्रतिपाला ॥ प्रतिपाल महा दइआल दाना दइआ धारे सभ किसै ॥ कालु कंटकु लोभु मोहु नासै जीअ जा कै प्रभु बसै ॥ सुप्रसंन देवा सफल सेवा भई पूरन घाला ॥ बिनवंत नानक इछ पुनी जपत दीन दैआला ॥ ४ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ सुणि सखीए मिलि उदमु करेहा मनाइ लैहि हरि कंतै ॥ मानु तिआगि करि भगति ठगउरी मोहह साधू मंतै ॥ सखी वसि आइआ फिरि छोडि न जाई इह रीति भली भगवंतै ॥ नानक जरा मरण भै नरक निवारै पुनीत करै तिसु जंतै ॥ १ ॥ सुणि सखीए इह भली बिनंती एहु मतांतु पकाईऐ ॥ सहजि सुभाइ उपाधि रहत होइ गीत गोविंदहि गाईऐ ॥ कलि कलेस मिटहि भ्रम नासहि मनि चिंदिआ फलु पाईऐ ॥ पारब्रहम पूरन परमेसर नानक नामु धिआईऐ ॥ २ ॥ सखी इछ करी नित सुख मनाई प्रभ मेरी आस पुजाए ॥ चरन पिआसी दरस बैरागनि पेखउ थान सबाए ॥ खोजि लहउ हरि संत जना संगु संम्रिथ पुरख मिलाए ॥ नानक तिन मिलिआ सुरिजनु सुखदाता से वडभागी माए ॥ ३ ॥ सखी नालि वसा अपुने नाह पिआरे मेरा मनु तनु हरि संगि हिलिआ ॥ सुणि सखीए मेरी नीद भली मै आपनड़ा पिरु मिलिआ ॥ भ्रमु खोइओ सांति सहजि सुआमी परगासु भइआ कउलु खिलिआ ॥ वरु पाइआ प्रभु अंतरजामी नानक सोहागु न टलिआ ॥ ४ ॥ ४ ॥ २ ॥ ५ ॥ ११ ॥

वह पूर्ण प्रभु भक्तवत्सल है और उससे मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं । प्रभु व्यक्ति को संसार रूपी अन्धे कुँए में से बाहर निकाल लेता है और हे व्यक्ति, तू प्रभु नाम को अपने चित्त में बसा । देवता, सिद्ध पुरुष, गन्धर्व, मुनिजन, भक्तिपूर्वक तेरे अनेक गुणों का गायन करते हैं । हे परब्रह्म परमेश्वर प्रभु, नानक विनती करता है कि मुझ पर कृपा करो ॥ २ ॥ हे मेरे मन, उस परब्रह्म परमेश्वर का सुमिरन कर जो सर्वशक्तिमान है । प्रभु दयालु है समर्थ है और प्रत्येक जीव के प्राण का आधार है । वह अनन्त, अगम्य एवं अपार प्रभु, जीवन, तन एवं आत्मा का दाता है । वह शरण दे सकने योग्य, समर्थ, मन को मोहित करने वाला और सब दुखों का नाश करने वाला है । प्रभु के नाम–सुमिरन से सभी रोग, शोक दुख आदि नष्ट हो जाते हैं । नानक विनती करता है कि हे प्रभु, मुझ पर दया करो, सारी शक्तियाँ तूने ही धारण कर रखी हैं ॥ ३ ॥ हे मेरे मन, तू उस अटल, अविनाशी और सबसे ऊँचे दयालु प्रभु का गुणानुवाद कर । केवल प्रभु ही सब का भरण–पोषण करने वाला है । वह प्रतिपालक, महा दयालु, दान देने वाला, सब पर करुणा करता है । जिसके मन में प्रभु का वास हो जाता है उसके लोभ, मोह और काल रूपी काँटे भाग खड़े होते हैं । जिससे प्रभु प्रसन्न हो जाता है उसकी सेवा सफल हो जाती है और उसकी मेहनत पूरी हो जाती है । नानक विनती करता है कि दीन दयालु प्रभु का सुमिरन करने से मेरी इच्छाएं पूरी हो गई हैं ॥ ४ ॥ ३ ॥ गउड़ी महला ५ ॥ हे मेरी सखियो, आओ मिल कर प्रयत्न करें और पति–परमेश्वर को मना लें । अहंकार त्याग कर श्रद्धा प्रेम और भक्ति की ठगबूटी के माध्यम से उसे साधु पुरुषों के उपदेश के माध्यम से मोहित करें । हे सखी, यह उस प्रभु की अच्छी परम्परा है कि यदि वह एक बार वश में आ जाए तो वह फिर छोड़कर नहीं जाता । हे नानक, जिस पर वह प्रसन्न होता है उसका वह बुढ़ापा, मौत और नर्क का भय दूर कर उसे पवित्र कर देता है ॥ १ ॥ हे सखियो, मेरी यह प्रार्थना बहुत ही ठीक है; आओ एक पक्का निर्णय लें । सभी रोगों से पीछा छुड़ाकर आओ सहज स्वाभाविक रूप से ही सृष्टि के स्वामी प्रभु का गुणानुवाद करें । ऐसा करने से मनोवांछित फल मिल जाएगा और कलह, क्लेष एवं भ्रम नष्ट होकर मिट जाएंगें । हे नानक, आओ उस पूर्ण परब्रह्म परमेश्वर के नाम का सुमिरन करें ॥ २ ॥ हे सखी, मैं सदैव उसी प्रभु की आकांक्षा रखती हूँ । उसी से यह माँगती हूँ कि प्रभु मेरी आशा पूर्ण करो। उसके चरणों की प्यासी उसके दर्शन के लिए वैराग्यवान मैं उसे सर्वत्र देखती हूँ । शान्त पुरुषों के साथ मैं उस प्रभु को खोज लूंगी क्योंकि साधु व्यक्ति समर्थ प्रभु को मिला देता है । नानक कहता है, हे मेरी माँ, वे भाग्यशाली हैं जिन्हें देवताओं को भी सुख देने वाला प्रभु मिल गया है ॥ ३ ॥ हे सखी, अब मैं अपने प्यारे पति के साथ रहती हूँ और मेरा मन एवं तन प्रभु के साथ हिल–मिल गए हैं । हे सखी सुनो, मेरी नींद भी मुझे अच्छी लगती है क्योंकि स्वप्न में मैं अपने प्रियतम से मिलती हूँ । मेरा भ्रम दूर हो गया है । मुझे शान्ति और सहजभाव प्राप्त हो गए हैं क्योंकि प्रभु का प्रकाश मेरे अन्दर हो गया है और मेरा हृदय रूपी कमल खिल उठा है । अन्तर्यामी प्रभु को मैंने अपने पति के रूप में पा लिया है । हे नानक, अब मेरा सुहागिन का जीवन कभी भी समाप्त नहीं होगा ॥ ४ ॥ ४ ॥ २ ॥ ५ ॥ ११ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गउड़ी बावन अखरी महला ५ ॥

सलोकु ॥ गुरदेव माता गुरदेव पिता गुरदेव सुआमी परमेसुरा ॥ गुरदेव सखा अगिआन भंजनु गुरदेव बंधिप सहोदरा ॥ गुरदेव दाता हरि नामु उपदेसै गुरदेव मंतु निरोधरा ॥ गुरदेव सांति सति बुधि मूरति गुरदेव पारस परस परा ॥ गुरदेव तीरथु अंम्रित सरोवरु गुर गिआन मजनु अपरंपरा ॥ गुरदेव करता सभि पाप हरता गुरदेव पतित पवित करा ॥ गुरदेव आदि जुगादि जुगु जुगु गुरदेव मंतु हरि जपि उधरा ॥ गुरदेव संगति प्रभ मेलि करि किरपा हम मूड़ पापी जितु लगि तरा ॥ गुरदेव सतिगुरु पारब्रहमु परमेसरु गुरदेव नानक हरि नमसकरा ॥ १ ॥ सलोकु ॥ आपहि कीआ कराइआ आपहि करनै जोगु ॥ नानक एको रवि रहिआ दूसर होआ न होगु ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ओअं साध सतिगुर नमसकारं ॥ आदि मधि अंति निरंकारं ॥ आपहि सुंन आपहि सुख आसन ॥ आपहि सुनत आप ही जासन ॥ आपन आपु आपहि उपाइओ ॥ आपहि बाप आप ही माइओ ॥ आपहि सूखम आपहि असथूला ॥ लखी न जाई नानक लीला ॥ १ ॥ करि किरपा प्रभ दीन दइआला ॥ तेरे संतन की मनु होइ रवाला ॥ रहाउ ॥ सलोकु ॥ निरंकार आकार आपि निरगुन सरगुन एक ॥ एकहि एक बखाननो नानक एक अनेक ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ओअं गुरमुखि कीओ अकारा ॥ एकहि सूति परोवनहारा ॥ भिंन भिंन त्रै गुण बिसथारं ॥ निरगुन ते सरगुन द्रिसटारं ॥ सगल भाति करि करहि उपाइओ ॥ जनम मरन मन मोहु बढाइओ ॥ दुहू भाति ते आपि निरारा ॥ नानक अंतु न पारावारा ॥ २ ॥ सलोकु ॥ सेई साह भगवंत से सचु संपै हरि रासि ॥ नानक सचु सुचि पाईऐ तिह संतन कै पासि ॥ १ ॥ पवड़ी ॥ ससा सति सति सति सोऊ ॥ सति पुरख ते भिंन न कोऊ ॥ सोऊ सरनि परै जिह पायं ॥ सिमरि सिमरि गुन गाइ सुनायं ॥ संसै भरमु नही कछु बिआपत ॥ प्रगट प्रतापु ताहू को जापत ॥ सो साधू इह पहुचनहारा ॥ नानक ता कै सद बलिहारा ॥ ३ ॥ सलोकु ॥ धनु धनु कहा पुकारते माइआ मोह

१ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥ गउड़ी बावन अखरी (अक्षरों वाली) महला ५ ॥

श्लोक ॥ दिव्य गुरु ही मेरी माँ है दिव्य गुरु ही मेरा पिता है और दिव्य गुरु ही मेरा प्रभु परमेश्वर है । दिव्य गुरु ही मेरा साथी, अज्ञान को दूर करने वाला वन्धु एवं भाई है । दिव्य गुरु ही दाता है, हरि नाम का उपदेश देने वाला है और दिव्य गुरु ही मेरा अचूक मंत्र है । दिव्य गुरु ही सत्य, शान्ति एवं वुद्धि की प्रतिमूर्ति है और दिव्य गुरु ही ऐसा पारस है जिसका स्पर्श करके प्राणी पारस हो जाता है (पारस तो लोहे को सोना वनाता है परन्तु गुरु रूपी पारस तो लोहे रूपी व्यक्ति को पारस ही वना देता है) । दिव्य गुरु ही तीर्थ, अमृत–सरोवर है और गुरु के ज्ञान में स्नान करने से उस अपरंपर प्रभु से मेल हो जाता है । दिव्य गुरु ही कर्त्ता, सव पापों का नाश करने वाला और पतितों को पवित्र वना देने वाला है । परमात्मा रूपी दिव्य गुरु ही आदि युगादि और समस्त युगों में वना रहने वाला है । निराकार दिव्य गुरु प्रभु–नाम का मंत्र है जिसका जाप करने से उद्धार हो जाता है । हे प्रभु, कृपा करके मुझे दिव्य गुरु की संगत के साथ जोड़ दे ताकि मैं मूढ़ एवं पापी संसार–सागर से पार हो जाँऊ । दिव्य गुरु सद्गुरु परव्रह्म परमेश्वर है और नानक उस प्रभु को प्रणाम करता है ॥ १ ॥ श्लोक ॥ यह सव किया–कराया उसी का है जो सव कुछ करने योग्य है । हे नानक, एक प्रभु ही सर्वत्र व्याप्त है; अन्य कोई न हुआ है न होगा ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ मैं एक परमात्मा एवं साधु रूप सच्चे गुरु को नमस्कार करता हूँ । वही आदि, मध्य एवं अन्त में वना रहने वाला निराकार प्रभु है । प्रभु स्वयं ही शून्य समाधि है और स्वयं ही आनन्द के आसन पर विराजमान है । वह अपना यश आप ही सुनता है। वह स्वयंभू है अर्थात स्वयं अपने से ही पैदा हुआ है । वह अपना पिता और माता स्वयं ही है । वह स्वयं ही सूक्ष्म एवं स्वयं ही स्थूल है; हे नानक, उसके खेल को समझा नहीं जा सकता है । हे दयावान प्रभु, मुझ पर कृपा करो ताकि मेरा हृदय शान्त पुरुषों की चरण–धूलि वन जाए ॥ रहाउ ॥ श्लोक ॥ वह अनन्त आकार वाला एक ही प्रभु निराकार है जो स्वयं ही सव गुणों वाला है और सव गुणों से परे भी है । हे नानक, उसे केवल एक ही जानो क्योंकि वह एक ही अनेक रूपों में विद्यमान है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ एक प्रभु ने ही सभी आकारों की सृजना की है । उस एक ने ही सबको जीवन के धागे में पिरोया हुआ है । उसी ने ही भिन्न–भिन्भ तीनों गुणों का विस्तार किया हुआ है और वह गुणों से परे होता हुआ भी सगुण दिखाई देता है । प्रभु ने समस्त प्रकार की रचना उत्पन्न की है और जन्म–मरण, ममता, मोह आदि मानव मन में बिठा दिए हैं । दोनों प्रकार से वह स्वयं निराला वना रहता है और हे नानक, उसका कोई भी अन्त या ओर–छोर नहीं है ॥ २ ॥ वे साहुकार ही भाग्यशाली हैं जिनके पास सत्य की सम्पति और प्रभु–नाम की पूँजी है । हे नानक, ऐसे शान्त पुरुषों से ही सत्य एवं पवित्रता प्राप्त की जाती है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ स–वह प्रभु सत्य एवं केवल सत्य है और उस सत्य परमात्मा से अलग कोई नहीं है । केवल वही उसकी शरण में आता है जिसे वह खुद ले आता है । वही उस प्रभु के गुणों का सुमिरन कर करके सब को सुनाता है । संशय एवं भ्रम उसे बिल्कुल ही स्पर्श नहीं करते। उसे प्रभु का प्रताप प्रत्यक्ष दिखाई देता है । वास्तविक साधु वही है जो इस अवस्था तक पहुँच जाता है । नानक उस पर सदैव बलिहारी जाता है ॥ ३ ॥ श्लोक ॥ तू धन–सम्पदा के लिए क्यों चीख–चिल्ला रहा है ? पदार्थों का माया–मोह

सभ कूर ॥ नाम बिहूने नानका होत जात सभु धूर ॥ १ ॥ पवड़ी ॥ धधा धूरि पुनीत तेरे जनूआ ॥ धनि तेऊ जिह रुच इआ मनूआ ॥ धनु नही बाछहि सुरग न आछहि ॥ अति प्रिअ प्रीति साध रज राचहि ॥ धंधे कहा बिआपहि ताहू ॥ जो एक छाडि अन कतहि न जाहू ॥ जा कै हीऐ दीओ प्रभ नाम ॥ नानक साध पूरन भगवान ॥ ४ ॥ सलोक ॥ अनिक भेख अरु ङिआन धिआन मनहठि मिलिअउ न कोइ ॥ कहु नानक किरपा भई भगतु ङिआनी सोइ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ङंङा ङिआनु नही मुख बातउ ॥ अनिक जुगति सासत्र करि भातउ ॥ ङिआनी सोइ जा कै द्रिड़ सोऊ ॥ कहत सुनत कछु जोगु न होऊ ॥ ङिआनी रहत आगिआ द्रिड़ु जा कै ॥ उसन सीत समसरि सभ ता कै ॥ ङिआनी ततु गुरमुखि बीचारी ॥ नानक जा कउ किरपा धारी ॥ ५ ॥ सलोकु ॥ आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर ॥ नानक गुरमुखि सो बुझै जा कै भाग मथोर ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ या जुग महि एकहि कउ आइआ ॥ जनमत मोहिओ मोहनी माइआ ॥ गरभ कुंट महि उरध तप करते ॥ सासि सासि सिमरत प्रभु रहते ॥ उरझि परे जो छोडि छडाना ॥ देवनहारु मनहि बिसराना ॥ धारहु किरपा जिसहि गुसाई ॥ इत उत नानक तिसु बिसरहु नाही ॥ ६ ॥ सलोकु ॥ आवत हुकमि बिनास हुकमि आगिआ भिंन न कोइ ॥ आवन जाना तिह मिटै नानक जिह मनि सोइ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ एऊ जीअ बहुतु ग्रभ वासे ॥ मोह मगन मीठ जोनि फासे ॥ इनि माइआ त्रै गुण बसि कीने ॥ आपन मोह घटे घटि दीने ॥ ए साजन कछु कहहु उपाइआ ॥ जा ते तरउ बिखम इह माइआ ॥ करि किरपा सतसंगि मिलाए ॥ नानक ता कै निकटि न माए ॥ ७ ॥ सलोकु ॥ किरत कमावन सुभ असुभ कीने तिनि प्रभि आपि ॥ पसु आपन हउ हउ करै नानक बिनु हरि कहा कमाति ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ एकहि आपि करावनहारा ॥ आपहि पाप पुंन बिसथारा ॥ इआ जुग जितु जितु आपहि लाइओ ॥ सो सो पाइओ जु आपि दिवाइओ ॥ उआ का अंतु न जानै कोऊ ॥ जो जो करै सोऊ फुनि होऊ ॥ एकहि ते सगला बिसथारा ॥ नानक आपि सवारनहारा ॥ ८ ॥ सलोकु ॥ राचि रहे बनिता बिनोद कुसम रंग बिख सोर ॥ नानक तिह

सब झूठा है । हे नानक, प्रभु नाम से विहीन सभी मिट्टी में मिलते जा रहे हैं ॥ १ ॥ पवड़ी ॥ ध–तेरे सेवकों की चरण–धूलि, हे प्रभु पवित्र है; जिनमें इसके लिए रुचि उत्पन्न हुई है वे धन्य हैं । वे धन और स्वर्ग की इच्छा नहीं रखते । वे प्रियतम के परम प्रेम और सन्तों की चरण–धूलि में ही लीन बने रहते हैं । सांसारिक कार्य–व्यापार ऐसे व्यक्तियों को प्रभावित नहीं करते जो एक प्रभु को छोड़कर अन्य कहीं नहीं जाते । प्रभु ने जिसके हृदय में अपना नाम बसा दिया है हे नानक, ऐसा व्यक्ति ही परमात्मा का पूर्ण साधु पुरुष है ॥ ४ ॥ श्लोक ॥ अनेकों वेश और ज्ञान, ध्यान और हठयोग आदि के माध्यम से कोई भी प्रभु से नहीं मिल सका है । हे नानक, जिस पर प्रभु की कृपा हो गई वही भक्त और ज्ञानवान हो जाता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ङ – ब्रह्मज्ञान केवल बातों से ही प्राप्त नहीं होता और शास्त्रों की अनेकों युक्तियों के माध्यम से भी इसे प्राप्त नहीं किया जा सकता । केवल वही ज्ञानवान है जिसके चित्त में दृढ़ता से प्रभु विद्यमान बना हुआ है । केवल कहने, सुनने से ही व्यक्ति किसी योग्य नहीं बनता; ज्ञानवान वही है जो प्रभु की आज्ञा (हुकुम) मानने के लिए सदैव तैयार रहता है । उसको गर्मी और सर्दी अर्थात् ऊँचापन और नीचापन एक ही समान लगता है । वास्तविक ज्ञानवान वही है जिसने गुरमुख बनकर परम तत्व का विचार किया है और हे नानक, ऐसा व्यक्ति वह है जिस पर प्रभु कृपा करता है ॥ ५॥ श्लोक ॥ सृष्टि में जीव आ तो जाते हैं परन्तु प्रभु को जाने बिना वे सब पशुओं के समान ही बने रहते हैं । हे नानक, वही गुरमुख प्रभु को बूझता है जिसके भाग्य लेख अच्छे हैं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ जीवन काल में प्राणी केवल एक प्रभु के नाम सुमिरन के लिए ही आया है परन्तु जन्म से ही उसे मोहिनी माया ने आकर्षित कर रखा है । गर्भकुण्ड में प्राणी उलटा लटक कर तपस्या करता है और वहाँ हर श्वास् के साथ वह प्रभु का सुमिरन करता है । परन्तु संसार में वह ऐसे पदार्थों में उलझ गया है जिन्हें आवश्यक रूप से उसे छोड़ना ही पड़ेगा । प्राणी ने उस देने वाले प्रभु को मन से भुला दिया है । हे गोसांई प्रभु, जिस पर तू कृपा करता है नानक के कथनानुसार वह तुझे यहाँ, वहाँ कहीं भी भुलाता नहीं ॥ ६ ॥ श्लोक ॥ व्यक्ति का आना भी हुकुम में है और उसका नष्ट होना भी हुकुम के अन्तर्गत ही है । उसके हुकुम से बाहर कुछ भी नहीं है । हे नानक, जिसके हृदय में प्रभु बसा रहता है उसका आवागमन समाप्त हो जाता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ यह जीव अनेकों योनियों में रहकर आया है और मोह में मग्न बनी हुई यह आत्मा अनेकों योनियों में फँसी रही है । इस माया प्रपंच ने तीनों गुणों और तीनों गुणों वाले प्राणियों को अपने वश में किया हुआ है । इसने अपने मोह की युक्ति हर हृदय में बिठाई हुई है । हे मित्र, कोई उपाय बताओ जिससे इस विषम माया के समुद्र से पार जाया जा सके । हे नानक, यह माया उसके निकट नहीं आती जिस पर प्रभु कृपा करके उसे सद्संगत के साथ मिला देता है ॥ ७ ॥ श्लोक ॥ प्रभु स्वयं ही शुभ–अशुभ कार्य और व्यवहार व्यक्ति से करवाता है । यह मानव रूपी पशु अपने अभिमान में ही विचरण करता रहता है परन्तु हे नानक, प्रभु के बिना वह भला क्या कर सकता है ॥ १॥ पउड़ी ॥ केवल एक प्रभु ही प्राणियों से कार्य करवाने वाला है और वह स्वयं भी पाप और पुण्य का विस्तार करता है । इस युग में वही उसके साथ सम्बद्ध होता है जिसे प्रभु स्वयं अपने साथ जोड़ता है । जीव वही पाता है जो प्रभु उसे दिलाता है । उसका ओर–छोर कोई नहीं जानता और जो कुछ वह करता है अन्ततः वही होता है । केवल एक प्रभु से ही सम्पूर्ण विस्तार हुआ है, हे नानक, वह प्रभु स्वयं ही सबको संवारने वाला है ॥ ८ ॥ श्लोक ॥ व्यक्ति, स्त्री एवं अन्य विनोदपूर्ण कार्यों में लीन बना रहता है परन्तु यह सब कुसुम्भ के फूल के रंग की तरह नश्वर और विषपूर्ण शोर–शराबा है । हे नानक, उस

सरनी परउ बिनसि जाइ मै मोर ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ रे मन बिनु हरि जह रचहु तह तह बंधन पाहि ॥ जिह बिधि कतहू न छूटीऐ साकत तेऊ कमाहि ॥ हउ हउ करते करम रत ता को भारु अफार ॥ प्रीति नही जउ नाम सिउ तउ एऊ करम बिकार ॥ बाधे जम की जेवरी मीठी माइआ रंग ॥ भ्रम के मोहे नह बुझहि सो प्रभु सदहू संग ॥ लेखै गणत न छूटीऐ काची भीति न सुधि ॥ जिसहि बुझाए नानका तिह गुरमुखि निरमल बुधि ॥ ९ ॥ सलोकु ॥ टूटे बंधन जासु के होआ साधू संगु ॥ जो राते रंग एक कै नानक गूड़ा रंगु ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ रारा रंगहु इआ मनु अपना ॥ हरि हरि नामु जपहु जपु रसना ॥ रे रे दरगह कहै न कोऊ ॥ आउ बैठु आदरु सुभ देऊ ॥ उआ महली पावहि तू बासा ॥ जनम मरन नह होइ बिनासा ॥ मसतकि करमु लिखिओ धुरि जा कै ॥ हरि संपै नानक घरि ता कै ॥ १० ॥ सलोकु ॥ लालच झूठ बिकार मोह बिआपत मूड़े अंध ॥ लागि परे दुरगंध सिउ नानक माइआ बंध ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ लला लपटि बिखै रस राते ॥ अहंबुधि माइआ मद माते ॥ इआ माइआ महि जनमहि मरना ॥ जिउ जिउ हुकमु तिवै तिउ करना ॥ कोऊ ऊन न कोऊ पूरा ॥ कोऊ सुघरु न कोऊ मूरा ॥ जितु जितु लावहु तितु तितु लगना ॥ नानक ठाकुर सदा अलिपना ॥ ११ ॥ सलोकु ॥ लाल गुपाल गोबिंद प्रभ गहिर गंभीर अथाह ॥ दूसर नाही अवर को नानक बेपरवाह ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ लला ता कै लवै न कोऊ ॥ एकहि आपि अवर नह होऊ ॥ होवनहारु होत सद आइआ ॥ उआ का अंतु न काहू पाइआ ॥ कीट हसति महि पूर समाने ॥ प्रगट पुरख सभ ठाऊ जाने ॥ जा कउ दीनो हरि रसु अपना ॥ नानक गुरमुखि हरि हरि तिह जपना ॥ १२ ॥ सलोकु ॥ आतम रसु जिह जानिआ हरि रंग सहजे माणु ॥ नानक धनि धनि धंनि जन आए ते परवाणु ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ आइआ सफल ताहू को गनीऐ ॥ जासु रसन हरि हरि जसु भनीऐ ॥ आइ बसहि साधू कै संगे ॥ अनदिनु नामु धिआवहि रंगे ॥ आवत सो जनु नामहि राता ॥ जा कउ दइआ मइआ बिधाता ॥ एकहि आवन फिरि जोनि न आइआ ॥ नानक हरि कै दरसि समाइआ ॥ १३ ॥ सलोकु ॥ यासु जपत मनि होइ अनंदु बिनसै दूजा भाउ ॥ दूख

प्रभु की शरण में आ जाओ जिससे तुम्हारा अभिमान और ममता दूर हो जाए ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ हे मेरे मन, तुम जिसमें भी लीन होते हो वहीं तुम बन्धनों में घिर जाते हो । प्रभु से टूटा हुआ व्यक्ति वैसा ही काम करता है जिससे उसकी कभी भी मुक्ति नहीं हो सकती । कर्मकाण्डों में उलझे हुए व्यक्ति अपने अहंकार का असहनीय बोझ ढोते रहते हैं । प्रभु–नाम से प्रीति न होने पर ही व्यक्ति कर्मकण्डों में लगा रहता है । जो माया की तथाकथित मिठास में लीन बने रहते हैं वे सदैव यम के पाश में वंधे रहते हैं । भ्रमों में पड़े हुए वे यह नहीं जानते कि प्रभु हमेशा उनके साथ ही है । अन्तिम हिसाब होने पर वे छूट नहीं पाएंगें । कच्ची दीवार कभी भी स्वच्छ नहीं हो सकती । हे नानक, जिसे प्रभु समझा देता है वही गुरमुख बन कर पवित्र बुद्धि प्राप्त करता है ॥ ९ ॥ श्लोक ॥ जिसके बन्धन टूट गए हैं वही साधु जनों की संगत में आन मिलता है । जो केवल एक प्रभु के रंग में ही लीन बने रहते हैं हे नानक, उनका रंग ही गाढ़ा रंग होता है ॥ १ ॥ र – अपने मन को प्रभु के प्रेम में रंगो और प्रभु नाम का अपनी जीभ से वार वार सुमिरन करो । प्रभु के दरबार में तुझे कोई भी निरादर से नहीं बुलाएगा और आईए बैठिए कह कर सभी तुम्हारा आदर करेंगे । तुझे उस महल में निवास मिलेगा जहाँ जन्म–मरण और विनाश नहीं होंगे। शुरू से ही जिसके भाग्य के लेख अच्छे हैं, हे नानक, प्रभु रूपी सम्पति उसी के अन्दर विद्यमान बनी रहेगी ॥ १०॥ श्लोक ॥ मूढ़ और अज्ञानी अन्धे व्यक्तियों को लालच, झूठ, पाप और मोह आदि प्रभावित करते हैं । हे नानक, ऐसे व्यक्ति मायावी वन्धनों से जकड़े मलीन विषय विकारों में लीन पड़े रहते हैं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ल – व्यक्ति विषयों के रस में लिपटे हुए हैं और अहंकार रूपी माया में मदमस्त वने हुए हैं । माया के चक्रव्यूह में फंसकर व्यक्ति जन्मता मरता रहता है परन्तु उसके वश में भी कुछ नहीं है क्योंकि जैसा जैसा प्रभु का हुकुम होता है वैसा वैसा ही उसे करना पड़ता है । कोई अपूर्ण भी नहीं है एवं पूर्ण भी नहीं है, अपने आप में न ही कोई सयाना है और न ही कोई मूर्ख है। हे प्रभु, जहाँ तू प्राणी को लगाता है वह वहीं लगा रहता है और हे नानक, प्रभु सदैव सारे कार्य–व्यवहार से अलिप्त बना रहता है ॥ ११ ॥ श्लोक ॥ मेरा प्रभु जो सृष्टि का पोषण करता है और रक्षक है वह अत्यन्त गहन, गम्भीर एवं अथाह है । हे नानक, अन्य कोई भी उसके जैसा वेपरवाह नहीं है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ल – वराबरी में उसके आस–पास भी नहीं कोई पहुँच सकता । वह एक ही है दूसरा अन्य कोई नहीं है । वह वर्तमान में भी है, भूतकाल में भी वही था और आगे भी वही होगा । उसका ओर–छोर कोई भी नहीं पा सका है । कीड़ी और हाथी में वह समान रूप से विद्यमान है और प्रकट रूप में उस प्रभु को सब स्थानों में जाना माना जाता है । हे नानक, जिसको प्रभु ने अपने नाम का रस प्रदान किया है वही गुरमुख बनकर हरि हरि का सुमिरन करता है ॥ १२ ॥ श्लोक ॥ जिसने प्रभु के नाम रूपी आत्म–रस को जान लिया है वह स्वाभाविक रूप से ही प्रभु के प्रेम का आनन्द भोगता है । हे नानक, ऐसे व्यक्ति धन्य हैं और इस संसार में उनका आना ही स्वीकृत माना जाता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ उसी का आना सफल माना जाता है जिसकी जीभ सदैव प्रभु के यश का गायन करती रहती है । वह सदैव साधु–सन्तों के साथ मेल–मिलाप बनाए रखता है और प्रतिदिन प्रभु–रंग में लीन होकर नाम का सुमिरन करता है । वास्तव में उसी को आया हुआ माना जाता है जो प्रभु–नाम में लीन बना हुआ है और जिस पर उस विधाता प्रभु की कृपा और दया बनी हुई है । उसका आना केवल एक बार ही होता है और वह पुनः पुनः योनियों में नहीं भटकता । हे नानक, अन्ततः वह प्रभु के दर्शन में ही समाहित हो जाता है ॥ १३ ॥ श्लोक ॥ जिसके सुमिरन से मन आनन्दित हो जाए, द्वैतभाव विनष्ट हो जाए,

दरद त्रिसना बुझै नानक नामि समाउ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ यया जारउ दुरमति दोऊ ॥ तिसहि तिआगि सुख सहजे सोऊ ॥ यया जाइ परहु संत सरना ॥ जिह आसर इआ भवजलु तरना ॥ यया जनमि न आवै सोऊ ॥ एक नाम ले मनहि परोऊ ॥ यया जनमु न हारीऐ गुर पूरे की टेक ॥ नानक तिह सुखु पाइआ जा कै हीअरै एक ॥ १४ ॥ सलोकु ॥ अंतरि मन तन बसि रहे ईत ऊत के मीत ॥ गुरि पूरै उपदेसिआ नानक जपीऐ नीत ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ अनदिनु सिमरहु तासु कउ जो अंति सहाई होइ ॥ इह बिखिआ दिन चारि छिअ छाडि चलिओ सभु कोइ ॥ का को मात पिता सुत धीआ ॥ ग्रिह बनिता कछु संगि न लीआ ॥ ऐसी संचि जु बिनसत नाही ॥ पति सेती अपुनै घरि जाही ॥ साधसंगि कलि कीरतनु गाइआ ॥ नानक ते ते बहुरि न आइआ ॥ १५ ॥ सलोकु ॥ अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि ङिआनी धनवंत ॥ मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ङंङा खटु सासत्र होइ ङिआता ॥ पूरकु कुंभक रेचक करमाता ॥ ङिआन धिआन तीरथ इसनानी ॥ सोमपाक अपरस उदिआनी ॥ राम नाम संगि मनि नही हेता ॥ जो कछु कीनो सोऊ अनेता ॥ उआ ते ऊतमु गनउ चंडाला ॥ नानक जिह मनि बसहि गुपाला ॥ १६ ॥ सलोकु ॥ कुंट चारि दह दिसि भ्रमे करम किरति की रेख ॥ सूख दूख मुकति जोनि नानक लिखिओ लेख ॥ १ ॥ पवड़ी ॥ कका कारन करता सोऊ ॥ लिखिओ लेखु न मेटत कोऊ ॥ नही होत कछु दोऊ बारा ॥ करनैहारु न भूलनहारा ॥ काहू पंथु दिखारै आपै ॥ काहू उदिआन भ्रमत पछुतापै ॥ आपन खेलु आप ही कीनो ॥ जो जो दीनो सु नानक लीनो ॥ १७ ॥ सलोकु ॥ खात खरचत बिलछत रहे टूटि न जाहि भंडार ॥ हरि हरि जपत अनेक जन नानक नाहि सुमार ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ खखा खूना कछु नही तिसु संम्रथ कै पाहि ॥ जो देना सो दे रहिओ भावै तह तह जाहि ॥ खरचु खजाना नाम धनु इआ भगतन की रासि ॥ खिमा गरीबी अनद सहज जपत रहहि गुणतास ॥ खेलहि बिगसहि अनद सिउ जा कउ होत क्रिपाल ॥ सदीव गनीव सुहावने राम नाम ग्रिहि माल ॥ खेदु न दूखु न डानु तिह जा कउ नदरि करी ॥ नानक जो प्रभ भाणिआ पूरी

दुख, दर्द और तृष्णा समाप्त हो जाए, हे नानक, उसी नाम में लीन बने रहो ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ य – द्वैतभाव और दुर्मति को जला दो । इनका त्याग कर दे और सुखपूर्वक सहज भाव में मस्त हो जा । य – हे प्राणी, शान्त पुरुषों की शरण में चला जा क्योंकि उन्हीं के आसरे तुम इस संसार–सागर को तैर जाओगे। य – जो एक प्रभु नाम को मन के धागे में पिरो लेता है वह पुनः जन्म धारण नहीं करता । य – पूर्ण गुरु पर टेक रखने से मानव जन्म को व्यर्थ नहीं हारा जाता और हे नानक, जिसके हृदय में केवल एक प्रभु ही है वही सुख प्राप्त करता है ॥ १४ ॥ श्लोक ॥ इस लोक और परलोक में मित्र बना रहने वाला प्रभु इस मन और तन में ही बसता है। हे नानक, पूर्ण गुरु ने मुझे उपदेश दिया है कि सदैव उस प्रभु का ही सुमिरन करते रहना चाहिए ॥ पउड़ी ॥ हे प्राणी, प्रतिदिन उसी का सुमिरन कर जो अन्त में तेरा सहायक होगा । सांसारिकता के विष का आनन्द तो केवल चार दिन के लिए ही है जिसे छोड़कर सबको यहाँ से जाना पड़ता है । माता, पिता, पुत्र, पुत्री ये सब किसके हैं । घर–पत्नी आदि को कोई भी साथ नहीं ले जाता । ऐसी सम्पदा इक्ट्ठी कर जिसका विनाश नहीं होता ताकि तू अपने वास्तविक घर में सम्मान सहित जा सके । हे नानक, जो इस कलियुग में प्रभु की कीर्ति का गायन करते हैं वे फिर इस संसार में नहीं आते॥ १५ ॥ श्लोक ॥ अत्यन्त सुन्दर, कुलीन, चतुर, महान, ज्ञानवान और धनवान व्यक्ति भी मृतक कहा जाता है यदि, हे नानक, प्रभु के साथ उसका प्रेम नहीं है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ङ – व्यक्ति बेशक छः शास्त्रों का ज्ञाता हो, प्राणायाम–पूरक, कुम्भक, रेचक कर्मों को करने वाला हो, ज्ञानी ध्यानी एवं तीर्थों का स्नान करने वाला हो, स्वयं भोजन पकाता हो, किसी को स्पर्श न करता हो और सुनसान जंगल में रहता हो; परन्तु यदि उसके हृदय में प्रभु–नाम की प्रीति नहीं है तो वह जो कुछ भी करता है वह सब नाशवान है । हे नानक, उससे अच्छा तो उस चाण्डाल को माना जाएगा जिसके हृदय में प्रभु निवास करता है ॥ १६ ॥ श्लोक ॥ अपने किए हुए कर्मों की रूप–रेखा के अनुरूप ही व्यक्ति दसों दिशाओं में भ्रमों में पड़ा हुआ भटकता रहता है । हे नानक, सुख, दुख, मुक्ति आवागमन आदि भाग्य में लिखे हुए लेखों के अनुसार ही चलते रहते हैं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ क – वह प्रभु ही सारे सृजन का कारण रूप है और उसके लिखे हुए लेखों को कोई भी नहीं मिटा सकता । दूसरी बार कुछ भी नहीं किया जा सकता क्योंकि वह करने वाला प्रभु कोई भूल नहीं करता। कईयों को वह स्वयं ही मार्ग दिखा देता है और कईयों को शोकाकुल करके वह जंगलों में भटकाता रहता है। उसने अपने खेल की रचना स्वयं ही की हुई है और हे नानक, प्रभु जो कुछ देता है व्यक्ति वही कुछ लेता है ॥ १७ ॥ श्लोक ॥ प्राणी खाते, खर्चते भोगते रहते हैं परन्तु प्रभु के भण्डार में कोई कमी नहीं आती । प्रभु–नाम का अनेकों व्यक्ति सुमिरन करते हैं परन्तु हे नानक, उस प्रभु का ओर–छोर नहीं पाया जा सकता है ॥ पउड़ी ॥ ख – उस समर्थ प्रभु के पास किसी वस्तु की कमी नहीं । व्यक्ति बेशक जहाँ चाहे भटकता रहे, जो उसने देना है वह दिए चला जा रहा है । नाम की सम्पति भक्तों के पास खर्चने के लिए खजाना है और यही भक्तों की पूंजी है । वे सहनशीलता, नम्रता, प्रसन्नता और सहजभाव में गुणों के खजाने उस प्रभु का सुमिरन करते रहते हैं । जिन पर प्रभु कृपा करता है वे आनन्दित होकर प्रभु का खेल खेलते रहते हैं और खिले रहते हैं । जिनके घर राम–नाम रूपी सम्पत्ति है वे सदैव धनवान और सुन्दर गिने जाते हैं । जिन पर प्रभु कृपा दृष्टि करता है उनको न तो कष्ट होता है, न कोई पछतावा होता है और न ही उन्हें कोई सजा मिलती है । हे नानक, जो प्रभु को अच्छे लगते हैं वे ही इस संसार में

तिना परी ॥ १८ ॥ सलोकु ॥ गनि मिनि देखहु मनै माहि सरपर चलनो लोग ॥ आस अनित गुरमुखि मिटै नानक नाम अरोग ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ गगा गोबिद गुण रवहु सासि सासि जपि नीत ॥ कहा बिसासा देह का बिलम न करिहो मीत ॥ नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु ॥ ओह बेरा नह बूझीऐ जउ आइ परै जम फंधु ॥ गिआनी धिआनी चतुर पेखि रहनु नही इह ठाइ ॥ छाडि छाडि सगली गई मूड़ तहा लपटाहि ॥ गुर प्रसादि सिमरत रहै जाहू मसतकि भाग ॥ नानक आए सफल ते जा कउ प्रिअहि सुहाग ॥ १९ ॥ सलोकु ॥ घोखे सासत्र बेद सभ आन न कथतउ कोइ ॥ आदि जुगादी हुणि होवत नानक एकै सोइ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ घघा घालहु मनहि एह बिनु हरि दूसर नाहि ॥ नह होआ नह होवना जत कत ओही समाहि ॥ घूलहि तउ मन जउ आवहि सरना ॥ नाम ततु कलि महि पुनहचरना ॥ घालि घालि अनिक पछुतावहि ॥ बिनु हरि भगति कहा थिति पावहि ॥ घोलि महा रसु अंम्रितु तिह पीआ ॥ नानक हरि गुरि जा कउ दीआ ॥ २० ॥ सलोकु ॥ ङणि घाले सभ दिवस सास नह बढन घटन तिलु सार ॥ जीवन लोरहि भरम मोह नानक तेऊ गवार ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ङंङा ङ्रासै कालु तिह जो साकत प्रभि कीन ॥ अनिक जोनि जनमहि मरहि आतम रामु न चीन ॥ ङिआन धिआन ताहू कउ आए ॥ करि किरपा जिह आपि दिवाए ॥ ङणती ङणी नही कोऊ छूटै ॥ काची गागरि सरपर फूटै ॥ सो जीवत जिह जीवत जपिआ ॥ प्रगट भए नानक नह छपिआ ॥ २१ ॥ सलोकु ॥ चिति चितवउ चरणारबिंद ऊध कवल बिगसांत ॥ प्रगट भए आपहि गोबिंद नानक संत मतांत ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ चचा चरन कमल गुर लागा ॥ धनि धनि उआ दिन संजोग सभागा ॥ चारि कुंट दह दिसि भ्रमि आइओ ॥ भई क्रिपा तब दरसनु पाइओ ॥ चार बिचार बिनसिओ सभ दूआ ॥ साधसंगि मनु निरमल हूआ ॥ चिंत बिसारी एक द्रिसटेता ॥ नानक गिआन अंजनु जिह नेत्रा ॥ २२ ॥ सलोकु ॥ छाती सीतल मनु सुखी छंत गोबिद गुन गाइ ॥ ऐसी किरपा करहु प्रभ नानक दास दसाइ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ छछा छोहरे दास तुमारे ॥ दास दासन के पानीहारे ॥ छछा

सफल माने जाते हैं ॥ १८ ॥ श्लोक ॥ हे प्राणी, मन में अच्छी तरह से सोच विचार कर देख ले कि लोगों ने अवश्य ही यहाँ से चले जाना है । हे नानक, गुरमुख व्यक्ति की ही नाशवान आशाएं मिटती हैं और वह ही प्रभु–नाम में लीन होकर निरोग बना रहता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ग– हे प्राणी, तू अपनी हर सांस के साथ प्रभु का सुमिरन कर और उसका गुणानुवाद कर । शरीर का क्या भरोसा किया जा सकता है । सुमिरन के काम में हे मित्र, जरा भी विलम्ब न करो । बचपन, जवानी, बुढ़ापे आदि किसी भी अवस्था में मौत के रास्ते में कोई रूकावट नहीं होती । यम का फन्दा कब आ गिरेगा उस समय को जाना नहीं जा सकता । तू अच्छी तरह देख ले कि ज्ञानी, ध्यानी आदि चतुर मनुष्यों में से किसी ने भी इस स्थान पर टिका नही रहना है । जिसे सब कोई छोड़कर चले गए हैं; यह मूर्ख व्यक्ति बार–बार उसी से लिपट रहा है । माथे पर भाग्य–लेखों वाले गुरु की कृपा से प्रभु का सुमिरन करते रहते हैं और हे नानक, संसार में आना उन्हीं का सफल माना जाता है जो प्रभु को अपने सुहाग की तरह पति रूप में पा लेते हैं ॥ १९ ॥ श्लोक ॥ मैंने सभी शास्त्रों और वेदों का मन्थन कर लिया है, कोई भी अन्य कुछ नहीं कहता है अर्थात सभी यह कहते हैं कि हे नानक, आदि में युगादि में वर्तमान में और भविष्य में भी केवल एक प्रभु ही विद्यमान बना रहेगा ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ घ – हे मन, तू अच्छी तरह जान ले कि प्रभु बिना अन्य कोई नहीं है । उसके जैसा न कोई हुआ है और न कोई होगा और वह ही सर्वव्यापक है । हे मन, तू तब ही उसमें लीन हो सकेगा जब तू उसकी शरण में आ जाएगा । इस कलियुग में प्रभु–नाम ही वास्तविक प्रायश्चित कर्म है । भ्रमों में पड़कर परिश्रम करने वाले अनेकों पछताते रहते है क्योंकि प्रभु की भक्ति के बिना भला वे कैसे टिकाव की स्थिति पा सकते हैं । हे नानक, प्रभु रूपी गुरु ने जिसे दिया है वह प्रभु नाम के महारस का अमृत के समान प्रसन्न होकर पान करता है ॥ २० ॥ श्लोक ॥ प्रभु ने गिन गिन कर दिन और श्वास जीव में डाले हैं । वे तिल मात्र को भी न बढ़ते हैं और न घटते हैं । हे नानक, वे लोग मूर्ख हैं जो भ्रमों और मोह में पड़े हुए जीवित बने रहना चाहते हैं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ङ – मौत उसे पकड़ लेती है जिसे प्रभु ने अपने से तोड़ दिया है । वह आत्मा रूपी प्रभु को नहीं पहचानता और अनेकों योनियों में जन्मता–मरता रहता है । केवल वही ज्ञानी–ध्यानी बन सकता है जिस पर प्रभु स्वयं कृपा करके उसे यह दान देता है । गणनाओं के बल पर किसी को भी मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती और शरीर रूपी यह कच्चा घड़ा एक दिन निश्चित ही टूट जाएगा । जिसने जीवित रहते हुए प्रभु–नाम जपा दरअसल वही जीवित है । हे नानक, ऐसा व्यक्ति संसार में छिपा नहीं रह सकता और सभी उसे जान जाते हैं ॥ २१ ॥ श्लोक ॥ अपने चित्त में प्रभु–चरणों का सुमिरन करने से मेरा उल्टा पड़ा हुआ हृदय कमल खिल उठा है । हे नानक, शान्त पुरुषों के उपदेश के माध्यम से प्रभु स्वयं ही हृदय में प्रकट हो उठता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ च – वह दिन और समय धन्य एवं भाग्यशाली है जब मैं गुरु के चरण–कमलों में आन पड़ा । मैं दसों दिशाओं में भटकता फिरा हूँ परन्तु जब प्रभु की कृपा हुई तब मुझे दर्शन हुआ । भिन्न प्रकार के आचरणों का विचार अर्थात कर्मकाण्ड और द्वैतभाव सभी विनष्ट हो गए क्योंकि साधु–संगत में मेरा मन पवित्र बन गया है । हे नानक, ज्ञान–अंजन जिसने नेत्रों में डाल लिया है उसकी सभी चिन्ताएं पीछे रह जाती हैं और उसे केवल एक प्रभु ही सर्वत्र दिखाई देता है ॥ २२ ॥ श्लोक ॥ प्रभु के गुणानुवाद के फलस्वरूप छाती शीतल हो जाती है और मन सुखी हो जाता है । हे प्रभु, मुझ पर ऐसी कृपा करो कि नानक तुम्हारे दासों का भी दास बना रहे ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ छ – हे प्रभु, मैं तेरा दास और छोटा सा सेवक हूँ । वास्तव में मैं तेरे दासों का भी पानी भरने वाला दास हूँ । छ – हे प्रभु, मुझ पर कृपा कर ताकि मैं तेरे शान्त पुरुषों की

छारु होत तेरे संता ॥ अपनी क्रिपा करहु भगवंता ॥ छाडि सिआनप बहु चतुराई ॥ संतन की मन टेक टिकाई ॥ छारु की पुतरी परम गति पाई ॥ नानक जा कउ संत सहाई ॥ २३ ॥ सलोकु ॥ जोर जुलम फूलहि घनो काची देह बिकार ॥ अहंबुधि बंधन परे नानक नाम छुटार ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ जजा जानै हउ कछु हूआ ॥ बाधिओ जिउ नलिनी भ्रमि सूआ ॥ जउ जानै हउ भगतु गिआनी ॥ आगै ठाकुरि तिलु नही मानी ॥ जउ जानै मै कथनी करता ॥ बिआपारी बसुधा जिउ फिरता ॥ साधसंगि जिह हउमै मारी ॥ नानक ता कउ मिले मुरारी ॥ २४ ॥ सलोकु ॥ झालाघे उठि नामु जपि निसि बासुर आराधि ॥ कार्हा तुझै न बिआपई नानक मिटै उपाधि ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ झझा झूरनु मिटै तुमारो ॥ राम नाम सिउ करि बिउहारो ॥ झूरत झूरत साकत मूआ ॥ जा कै रिदै होत भाउ बीआ ॥ झरहि कसंमल पाप तेरे मनूआ ॥ अंम्रित कथा संत संगि सुनूआ ॥ झरहि काम क्रोध द्रुसटाई ॥ नानक जा कउ क्रिपा गुसाई ॥ २५ ॥ सलोकु ॥ ञतन करहु तुम अनिक बिधि रहनु न पावहु मीत ॥ जीवत रहहु हरि हरि भजहु नानक नाम परीति ॥ १ ॥ पवड़ी ॥ ञंञा ञाणहु द्रिड़ु सही बिनसि जात एह हेत ॥ गणती गणउ न गणि सकउ ऊठि सिधारे केत ॥ ञो पेखउ सो बिनसतउ का सिउ करीऐ संगु ॥ ञाणहु इआ बिधि सही चित झूठउ माइआ रंगु ॥ ञाणत सोई संतु सुइ भ्रम ते कीचित भिंन ॥ अंध कूप ते तिह कढहु जिह होवहु सुप्रसंन ॥ ञा कै हाथि समरथ ते कारन करनै जोग ॥ नानक तिह उसतति करउ ञाहू कीओ संजोग ॥ २६ ॥ सलोकु ॥ टूटे बंधन जनम मरन साध सेव सुखु पाइ ॥ नानक मनहु न बीसरै गुण निधि गोबिद राइ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ टहल करहु तउ एक की जा ते ब्रिथा न कोइ ॥ मनि तनि मुखि हीऐ बसै जो चाहहु सो होइ ॥ टहल महल ता कउ मिलै जा कउ साध क्रिपाल ॥ साधू संगति तउ बसै जउ आपन होहि दइआल ॥ टोहे टाहे बहु भवन बिनु नावै सुखु नाहि ॥ टलहि जाम के दूत तिह जु साधू संगि समाहि ॥ बारि बारि जाउ संत सदके ॥ नानक पाप बिनासे कदि के ॥ २७ ॥ सलोकु ॥ ठाक न होती तिनहु दरि जिह होवहु सुप्रसंन ॥ जो जन

की चरण–धूलि बन संकू। मैंने अपना सयानापन एवं चतुरता छोड़कर अपने चित्त को शान्त पुरुषों के आश्रय का सहारा दिया है। हे नानक, ये शान्त पुरुष जिसके सहायक बन जाते हैं वे राख की पुतली देह की परमगति प्राप्त कर लेते हैं ॥ २३ ॥ श्लोक ॥ अपनी ताकत के बल पर अत्याचार करके विकारों से भरी हुई यह कच्ची देह बहुत फलती–फूलती है परन्तु हे नानक, वह अपने अभिमान के बन्धनों में ही जकड़ी जाती है और केवल प्रभु–नाम से ही उसका छुटकारा सम्भव होता है ॥ पउड़ी ॥ ज – जब व्यक्ति यह समझने लगता है कि मैं कुछ हो गया हूँ तो वह भ्रम में फंसे हुए तोते की तरह बन्धनों में बंध जाता है। जब वह अपने आप को भक्त और ज्ञानवान समझने लगता है तो प्रभु के समक्ष एक तिल मात्र भी उसका सम्मान नहीं होता। जब वह यह मानता है कि मेरे किए हुए कथन महान हैं तो वह ऐसा ही है जैसे कोई व्यापारी धरती पर इधर–उधर भटकता रहता है। हे नानक, सद्संगत में जिसने अहंकार को मार लिया है उसी का मेल प्रभु से हो पाता है ॥ २४ ॥ श्लोक ॥ हे जीव, तू भोर में उठकर प्रभु का नाम जप और रात–दिन उसकी आराधना कर; तेरी कोई भी चिन्ता नहीं रहेगी और हे नानक, तेरे सभी संकट मिट जाएंगे॥१॥ पउड़ी ॥ झ – प्रभु के नाम के अनुरूप व्यवहार बनाने से तेरे सभी पश्चाताप और चिन्ताए मिट जाएंगी। प्रभु से टूटा हुआ व्यक्ति शोकग्रस्त बना रहकर ही मर जाता है और ऐसे व्यक्ति के हृदय में वास्तव में द्वैतभाव ही बना रहता है। हे मन, तू सद्संगत में प्रभु की अमृत–कथा सुन, तेरे बुरे कर्म और पाप समाप्त हो जाएंगे। हे नानक, जिस पर प्रभु की कृपा होती है उसके काम, क्रोध एवं कुटिलताएं समाप्त हो जाती हैं ॥ २५ ॥ श्लोक ॥ हे मित्र, तुम अनेक यत्न कर ले परन्तु यहाँ सदा के लिए ठहर नहीं पाओगे। हे नानक, केवल प्रभु–नाम से प्रेम करके और उसका सुमिरन करके ही तुम सदैव जीवित बने रह सकते हो ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ञ – यह पक्के तौर से जान ले कि यह सांसारिक मोह नष्ट हो जाएगा। यहाँ से कितने उठ कर चले गए उनकी गिनती करना भी सम्भव नहीं है। जिसे भी देखता हूँ वह नाशवान है और इसलिए मैं किसको अपना साथी बनाऊँ। इस प्रकार हे जीव, अपने मन में ठीक तरह से समझ ले कि सांसारिक पदार्थों की प्रीति झूठी है। केवल वही जानता है और वही संत है जिसको प्रभु ने भ्रमों से दूर किया हुआ है। जिस पर प्रभु प्रसन्न होता है वह उसे ही अज्ञान के अन्धे कुँए से बाहर निकालता है। जिसके हाथ समर्थ हैं वही प्रभु इस संसार का कारण और इसकी रचना करने के लायक है। हे नानक, जिस प्रभु ने अपने से मेल का अवसर प्रदान किया है केवल उसी की स्तुति कर ॥ २६ ॥ श्लोक ॥ आवागमन के बन्धन टूट जाते हैं और साधु–सेवा से व्यक्ति सुख प्राप्त करता है। हे नानक, तेरे मन से गुणों का समुद्र प्रभु कभी भी विस्मृत न हो ॥ १ ॥ पउड़ी॥ हे जीव, तू एक प्रभु की सेवा कर जिसके पास से कोई भी खाली हाथ नहीं लौटता ॥ यदि प्रभु तेरे मन–तन, मुख एवं हृदय में बस जाए तो तुम जो चाहोगे वही हो जाएगा। जिस पर साधु–पुरुष कृपालु हो जाए वही प्रभु की सेवा और उसके अटल स्थान को प्राप्त करता है। परन्तु साधु–संगत भी तभी सम्भव होती है जब प्रभु स्वयं दयालु हो जाए। मैंने अनेकों लोक खोज डाले हैं परन्तु नाम के बिना सुख प्राप्त नहीं होता। जो साधु–संगत में आन बैठते हैं उनके चारों ओर से यमदूत भी दूर हो जाते हैं। मैं बार–बार शान्त पुरुषों पर बलिहारी जाता हूँ क्योंकि हे नानक, उनके माध्यम से मेरे पाप कभी के ही विनष्ट हो चुके हैं ॥२७॥श्लोक॥ जिन पर प्रभु प्रसन्न हो जाए उनको उसके द्वार पर

प्रभि अपुने करे नानक ते धनि धंनि ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ठठा मनूआ ठाहहि नाही ॥ जो सगल तिआगि एकहि लपटाही ॥ ठहकि ठहकि माइआ संगि मूए ॥ उआ कै कुसल न कतहू हूए ॥ ठांढि परी संतह संगि बसिआ ॥ अंम्रित नामु तहा जीअ रसिआ ॥ ठाकुर अपुने जो जनु भाइआ ॥ नानक उआ का मनु सीतलाइआ ॥ २८ ॥ सलोकु ॥ डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ ॥ डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ डडा डेरा इहु नही जह डेरा तह जानु ॥ उआ डेरा का संजमो गुर कै सबदि पछानु ॥ इआ डेरा कउ स्रमु करि घालै ॥ जा का तसू नही संगि चालै ॥ उआ डेरा की सो मिति जानै ॥ जा कउ द्रिसटि पूरन भगवानै ॥ डेरा निहचलु सचु साधसंग पाइआ ॥ नानक ते जन नह डोलाइआ ॥ २९ ॥ सलोकु ॥ ढाहन लागे धरम राइ किनहि न घालिओ बंध ॥ नानक उबरे जपि हरी साधसंगि सनबंध ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ढढा ढूढत कह फिरहु ढूढनु इआ मन माहि ॥ संगि तुहारै प्रभु बसै बनु बनु कहा फिराहि ॥ ढेरी ढाहहु साधसंगि अहंबुधि बिकराल ॥ सुखु पावहु सहजे बसहु दरसनु देखि निहाल ॥ ढेरी जामै जमि मरै गरभ जोनि दुख पाइ ॥ मोह मगन लपटत रहै हउ हउ आवै जाइ ॥ ढहत ढहत अब ढहि परे साध जना सरनाइ ॥ दुख के फाहे काटिआ नानक लीए समाइ ॥ ३० ॥ सलोकु ॥ जह साधू गोबिद भजनु कीरतनु नानक नीत ॥ णा हउ णा तूं णह छुटहि निकटि न जाईअहु दूत ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ णाणा रण ते सीझीऐ आतम जीतै कोइ ॥ हउमै अन सिउ लरि मरै सो सोभा दू होइ ॥ मणी मिटाइ जीवत मरै गुर पूरे उपदेस ॥ मनूआ जीतै हरि मिलै तिह सूरतण वेस ॥ णा को जाणै आपणो एकहि टेक अधार ॥ रैणि दिणसु सिमरत रहै सो प्रभु पुरखु अपार ॥ रेण सगल इआ मनु करै एऊ करम कमाइ ॥ हुकमै बूझै सदा सुखु नानक लिखिआ पाइ ॥ ३१ ॥ सलोकु ॥ तनु मनु धनु अरपउ तिसै प्रभू मिलावै मोहि ॥ नानक भ्रम भउ काटीऐ चूकै जम की जोह ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ तता ता सिउ प्रीति करि गुण निधि गोबिद राइ ॥ फल पावहि मन बाछते

कोई रोक नहीं लगती । हे नानक, प्रभु ने जिनको अपना बना लिया है वे धन्य हैं और उन्हें बधाई है ॥ १ ॥ पउड़ी॥ ठ – जो सबको त्याग कर केवल एक प्रभु में लीन हैं वे किसी का भी दिल तोड़ते नहीं । जो माया में ही उलझ कर मरते रहते हैं उनको कहीं भी प्रसन्नता प्राप्त नहीं होती । शान्त पुरुषों के साथ बने रहने से शीतलता प्राप्त होती है और प्रभु का अमृत–नाम आत्मा को मीठा लगता है । हे नानक, जो सेवक उस ठाकुर को भा जाता है उसका मन शीतल एवं शान्त हो जाता है ॥ २८ ॥ श्लोक ॥ मैं उस सर्वशक्तिमान समर्थ प्रभु के सम्मुख अनेकों बार दण्डवत् एवं वन्दना करता हूँ । हे प्रभु, नानक को अपना हाथ देकर डोलने से उसकी रक्षा करो ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ड – तेरा डेरा, हे जीव, यह संसार नहीं । तू उस स्थान को पहचान जहाँ तेरा वास्तविक ठिकाना है । शब्द–गुरु के माध्यम से उस ठिकाने की मर्यादा को पहचान ले । सांसारिक ठिकाने को जीव परिश्रम से बनाता है हालांकि इसका कुछ भी साथ जाने वाला नहीं होता । जिस पर प्रभु की कृपा–दृष्टि होती है केवल वही परलोक के ठिकाने की वास्तविकता को जानता है । यही ठिकाना अटल है और इसे सत्य और साध–संगत के माध्यम से प्राप्त किया जाता है । हे नानक, इसे पाकर जीव फिर इधर–उधर भटकता नहीं है ॥ २९ ॥ श्लोक ॥ जब धर्मराज व्यक्ति को नष्ट करता है तो कोई भी उसके रास्ते में रुकावट नहीं डाल पाता । हे नानक, साध–संगत में प्रभु का सुमिरन करके और उससे सम्बन्ध स्थापित करके जीव संसार–सागर से पार उतर जाता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ढ – तू उसे कहाँ ढूँढता फिरता है; उसकी खोज तो मन में ही करनी है । तू वनों में कहाँ भटक रहा है क्योंकि वह प्रभु तो तुम्हारे साथ ही बसता है । हे जीव, तू अपने अहंकार के विकराल ढेर को साधु–संगत में रहकर साफ कर दे । इस प्रकार तू सुख पाकर सहजभाव में बना रहेगा और प्रभु के दर्शन करके प्रसन्न हो जाएगा । जिसमें अभिमान का ढेर लगा हुआ है वह आवागमन में पड़कर योनियों के दुखों को पाता रहता है । मोह में लीन बने रहने वाले सदैव आते जाते रहते हैं । नीचे आते आते अब मैं साधु व्यक्तियों की शरण में नीचे आ गया हूँ । हे नानक, ऐसा करने से प्रभु ने मेरे बन्धनों को काट दिया है और मुझे अपने में लीन कर लिया है ॥ ३० ॥ श्लोक ॥ हे नानक, जहाँ साधु बसते हैं वहां प्रभु का नाम और प्रभु का गुणानुवाद होता है । धर्मराज कहता है वहाँ हे यमदूतो, तुम पास भी मत जाना नहीं तो मेरा और तुम्हारा पिण्ड नहीं छूटेगा ॥ १ ॥ पउड़ी॥ ण – कोई विरला ही जीवन–रण में आत्मा को जीतता है परन्तु जो अहंकार और द्वैतभाव से लड़ता हुआ मर जाता है अर्थात इनको त्याग देता है वही परम शोभायमान हो जाता है । अहंकार की मणि को नष्ट करके जो पूर्ण गुरु के उपदेश के माध्यम से जीवन में ही इसके सन्दर्भ में मरा रहता है वही मन को जीत लेता है । प्रभु उसे मिलता है और शौर्य का वेष उसे ही प्राप्त होता है । वह किसी भी वस्तु को अपनी नहीं समझता और केवल एक प्रभु को ही अपना आसरा मानता है । रात–दिन वह उस अनन्त प्रभु का सुमिरन करता रहता है । वह अपने मन को सब के चरणों की धूलि बनाने का कार्य करता है । हे नानक, वह प्रभु के हुकुम को बूझता है और भाग्य में लिखा हुआ सुख सदैव प्राप्त करता रहता है ॥ ३१ ॥ श्लोक ॥ जो मुझे प्रभु से मिला दे मैं उसको तन, मन और धन अर्पण करता हूँ । हे नानक, इसी प्रकार मेरा भ्रम और भय कटेगा और यमदूत का मेरी ओर देखना बन्द हो जाएगा ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ त – हे जीव, तू उस गुणों के समुद्र प्रभु के साथ प्रेम कर जिससे तुम्हें मनोवांछित फल प्राप्त होंगे और तुम्हारी जलन

तपति तुहारी जाइ ॥ त्रास मिटै जम पंथ की जासु बसै मनि नाउ ॥ गति पावहि मति होइ प्रगास महली पावहि ठाउ ॥ ताहू संगि न धनु चलै ग्रिह जोबन नह राज ॥ संतसंगि सिमरत रहहु इहै तुहारै काज ॥ ताता कछू न होई है जउ ताप निवारै आप ॥ प्रतिपालै नानक हमहि आपहि माई बाप ॥ ३२ ॥ सलोकु ॥ थाके बहु बिधि घालते त्रिपति न त्रिसना लाथ ॥ संचि संचि साकत मूए नानक माइआ न साथ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ थथा थिरु कोऊ नही काइ पसारहु पाव ॥ अनिक बंच बल छल करहु माइआ एक उपाव ॥ थैली संचहु स्रमु करहु थाकि परहु गावार ॥ मन कै कामि न आवई अंते अउसर बार ॥ थिति पावहु गोबिद भजहु संतह की सिख लेहु ॥ प्रीति करहु सद एक सिउ इआ साचा असनेहु ॥ कारन करन करावनो सभ बिधि एकै हाथ ॥ जितु जितु लावहु तितु तितु लगहि नानक जंत अनाथ ॥ ३३ ॥ सलोकु ॥ दासह एकु निहारिआ सभु कछु देवनहार ॥ सासि सासि सिमरत रहहि नानक दरस अधार ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ददा दाता एकु है सभ कउ देवनहार ॥ देंदे तोटि न आवई अगनत भरे भंडार ॥ दैनहारु सद जीवनहारा ॥ मन मूरख किउ ताहि बिसारा ॥ दोसु नही काहू कउ मीता ॥ माइआ मोह बंधु प्रभि कीता ॥ दरद निवारहि जा के आपे ॥ नानक ते ते गुरमुखि ध्रापे ॥ ३४ ॥ सलोकु ॥ धर जीअरे इक टेक तू लाहि बिडानी आस ॥ नानक नामु धिआईऐ कारजु आवै रासि ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ धधा धावत तउ मिटै संतसंगि होइ बासु ॥ धुर ते किरपा करहु आपि तउ होइ मनहि परगासु ॥ धनु साचा तेऊ सच साहा ॥ हरि हरि पूंजी नाम बिसाहा ॥ धीरजु जसु सोभा तिह बनिआ ॥ हरि हरि नामु स्रवन जिह सुनिआ ॥ गुरमुखि जिह घटि रहे समाई ॥ नानक तिह जन मिली वडाई ॥ ३५ ॥ सलोकु ॥ नानक नामु नामु जपु जपिआ अंतरि बाहरि रंगि ॥ गुरि पूरे उपदेसिआ नरकु नाहि साधसंगि ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ नंना नरकि परहि ते नाही ॥ जा कै मनि तनि नामु बसाही ॥ नामु निधानु गुरमुखि जो जपते ॥ बिखु माइआ महि ना ओइ खपते ॥ नंनाकारु न होता ता कहु ॥ नामु मंत्रु गुरि दीनो जा कहु ॥

समाप्त हो जाएगी । जिसके हृदय में प्रभु–नाम बस जाता है उसे यम के मार्ग का भय नहीं रहता । वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है, उसकी मति प्रकाशित हो उठती है और उसको प्रभु के महल में ठिकाना मिल जाता है । हे जीव, तेरे साथ धन, घर, यौवन, राज आदि नहीं चलेगा । तू साधसंगत में प्रभु का सुमिरन करता रह क्योंकि अन्ततः यही तुम्हारे काम आएगा । जब प्रभु स्वयं हृदय की जलन को दूर कर दे तो तुझे कुछ भी तप्त नहीं लगेगा । हे नानक, प्रभु हमारी माता और पिता है और वह ही हमारा पालन–पोषण करता है ॥ ३२ ॥ श्लोक ॥ प्रभु से टूटे हुए व्यक्ति अनेकों प्रकार से परिश्रम करते हुए थक चुके हैं परन्तु न तो उनकी तृप्ति हुई है और न ही उनकी तृष्णा समाप्त हुई है । वे धन–माल को इक्ट्ठा करते हुए ही मर जाते हैं परन्तु हे नानक, ये मायावी धन उनके साथ नहीं जाता ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ यहाँ कोई भी स्थिर नहीं है, हे जीव, तू क्यों अपने पाँव पसारे जा रहा है और केवल एक धन के लिए अनेकों प्रकार के छल, बल एवं धोखों में लीन है । हे मूर्ख, तू अपनी थैली को भरने के लिए मेहनत करते करते गिर पड़ता है । यह सब कुछ अन्तिम समय में तेरी आत्मा के किसी काम आने वाला नहीं है । शान्त पुरुषों की शिक्षा ले और गोविन्द के सुमिरन से तू स्थिरता को प्राप्त कर । सदैव उस एक प्रभु से ही प्रेम कर क्योंकि यही सच्चा प्रेम है । करने कराने वाला वह प्रभु है जिस एक के हाथ में ही सभी युक्तियाँ है । हे नानक, जीवों को वह जहाँ जहाँ लगाता है वे वहीं–वहीं लगते हैं अन्यथा ये जीव असहाय हैं ॥ ३३ ॥ श्लोक ॥ प्रभु के सेवक उस सब कुछ देने वाले केवल एक प्रभु को ही देखते हैं । हे नानक, प्रभु ही उनके दर्शन की टेक है और उसी का ही वे हर साँस के साथ सुमिरन करते हैं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ द – दाता केवल एक ही है जो सब को देने वाला है; उसके भण्डार अनगिनत हैं और उसके देते रहने से भी उनमें कोई कमी नहीं आती । वह देने वाला प्रभु सदैव जीवित बना रहने वाला है । हे मूर्ख मन, तूने क्यों उसे भुला दिया है । परन्तु हे मित्र, इसमें भी किसी का दोष नहीं है क्योंकि माया के मोह के बन्धन भी प्रभु ने ही डाले हैं । जिनके दुखों का निवारण प्रभु ने स्वयं कर दिया है, हे नानक, गुरमुख बनकर वे पूर्ण रूप से तृप्त हो गए हैं ॥ ३४ ॥ श्लोक ॥ हे जीव, तू अन्य सब की आशाओं को त्याग कर केवल एक प्रभु की ही टेक पकड़ ॥ हे नानक, नाम सुमिरन से सभी कार्य सध जाते हैं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ व्यक्ति की भटकन तभी समाप्त होती है जब उसका साधसंगत में वास हो जाता है । हे प्रभु, यदि तुम ही कृपा करो तो जीव का अन्तकरणः प्रकाशित होता है। जिनके पास सत्य रूपी धन है वे ही सच्चे साहूकार है । प्रभु–नाम ही उनकी पूंजी है और वे उसी के नाम का व्यापार करते हैं । धैर्य, यश, शोभा उन्हीं पर शोभायमान होती है जो अपने कानों से प्रभु–नाम सुनते रहते हैं । हे नानक, उसी को सम्मान मिलता है जिस गुरमुख के मन में वह प्रभु रमण करता है ॥ ३५ ॥ श्लोक ॥ हे नानक, जो अन्दर और बाहर प्रेमपूर्वक प्रभु–नाम का जाप करता रहता है वह पूर्ण गुरु के उपदेश के कारण और साधसंगत के फलस्वरूप नर्क में नहीं जाता ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ न–जिनके हृदय और शरीर में प्रभु–नाम बसता है वे नर्क में नहीं जाते। गुरमुख बनकर जो नाम के खज़ाने प्रभु का सुमिरन करते हैं वे माया के विष में लीन होकर नष्ट नहीं होते । जिन्हें गुरु ने प्रभु–नाम रूपी मंत्र दिया है और जो प्रभु–नाम रूपी खज़ाने के

निधि निधान हरि अंम्रित पूरे ॥ तह बाजे नानक अनहद तूरे ॥ ३६ ॥
सलोकु ॥ पति राखी गुरि पारब्रहम तजि परपंच मोह बिकार ॥ नानक सोऊ आराधीऐ
अंतु न पारावारु ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ पपा परमिति पारु न पाइआ ॥ पतित पावन
अगम हरि राइआ ॥ होत पुनीत कोट अपराधू ॥ अंम्रित नामु जपहि मिलि
साधू ॥ परपच ध्रोह मोह मिटनाई ॥ जा कउ राखहु आपि गुसाई ॥ पातिसाहु
छत्र सिर सोऊ ॥ नानक दूसर अवरु न कोऊ ॥ ३७ ॥ सलोकु ॥ फाहे काटे
मिटे गवन फतिह भई मनि जीत ॥ नानक गुर ते थित पाई फिरन मिटे नित
नीत ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ फफा फिरत फिरत तू आइआ ॥ द्रुलभ देह कलिजुग
महि पाइआ ॥ फिरि इआ अउसरु चरै न हाथा ॥ नामु जपहु तउ कटीअहि फासा ॥
फिरि फिरि आवन जानु न होई ॥ एकहि एक जपहु जपु सोई ॥ करहु क्रिपा
प्रभ करनैहारे ॥ मेलि लेहु नानक बेचारे ॥ ३८ ॥ सलोकु ॥ बिनउ सुनहु तुम
पारब्रहम दीन दइआल गुपाल ॥ सुख स्मपै बहु भोग रस नानक साध रवाल ॥ १ ॥
पउड़ी ॥ बबा ब्रहमु जानत ते ब्रहमा ॥ बैसनो ते गुरमुखि सुच धरमा ॥ बीरा
आपन बुरा मिटावै ॥ ताहू बुरा निकटि नही आवै ॥ बाधिओ आपन हउ हउ
बंधा ॥ दोसु देत आगह कउ अंधा ॥ बात चीत सभ रही सिआनप ॥ जिसहि
जनावहु सो जानै नानक ॥ ३९ ॥ सलोकु ॥ भै भंजन अघ दूख नास मनहि
अराधि हरे ॥ संतसंग जिह रिद बसिओ नानक ते न भ्रमे ॥ १ ॥ पउड़ी ॥
भभा भरमु मिटावहु अपना ॥ इआ संसारु सगल है सुपना ॥ भरमे सुरि नर
देवी देवा ॥ भरमे सिध साधिक ब्रहमेवा ॥ भरमि भरमि मानुख डहकाए ॥
दुतर महा बिखम इह माए ॥ गुरमुखि भ्रम भै मोह मिटाइआ ॥ नानक तेह
परम सुख पाइआ ॥ ४० ॥ सलोकु ॥ माइआ डोलै बहु बिधी मनु लपटिओ
तिह संग ॥ मागन ते जिह तुम रखहु सु नानक नामहि रंग ॥ १ ॥ पउड़ी ॥
ममा मागनहार इआना ॥ देनहार दे रहिओ सुजाना ॥ जो दीनो सो एकहि
बार ॥ मन मूरख कह करहि पुकार ॥ जउ मागहि तउ मागहि बीआ ॥ जा ते
कुसल न काहू थीआ ॥ मागनि माग त एकहि माग ॥ नानक जा ते परहि

अमृत–रस से परिपूर्ण हो गए है, हे नानक, उनके अन्तर्मन में अनहद नाद के वाद्य बज उठते हैं ॥ ३६ ॥ जब मैंने पाखण्ड, मोह और विकारों को त्याग दिया तो गुरु ने मेरा सम्मान बचा लिया। हे नानक, उसी का सुमिरन कर जिसका कोई ओर–छोर नहीं है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ प – उस प्रभु की सीमा को नहीं जाना जा सकता। वह पतित–पावन है और सब की पहुँच से परे है। साधसंगत में मिलकर अमृत नाम का जाप करने वालों के करोड़ों अपराध पवित्र कर्म बन जाते हैं। हे प्रभु, जिसकी तू स्वयं रक्षा करता है उसके प्रपंच, छल–कपट और मोह आदि मिट जाते हैं। वह प्रभु ही सम्राट के रूप में सिर पर छत्र धारण करने वाला है और उसके सिवाय अन्य दूसरा कोई नहीं है ॥ ३७॥ मन को जीतने से मौत का फन्दा कट जाता है, भटकन मिट जाती है और सफलता प्राप्त होती है। हे नानक, गुरु के माध्यम से स्थिरता प्राप्त हो जाती है और बार बार का आवागमन समाप्त हो जाता है ॥१॥ पउड़ी ॥ फ – हे जीव, तू भटकता हुआ इस संसार में आया है और इस कलियुग में तुझे दुर्लभ देह प्राप्त हुई है। यह अवसर तुझे फिर नहीं हाथ लगेगा। तू प्रभु के नाम का सुमिरन कर ताकि तुम्हारी मौत का फन्दा कट जाए। उस एक प्रभु का ही जाप करो जिससे पुनः आना जाना समाप्त हो जाएगा। हे सब कुछ करने वाले प्रभु, कृपा करो और बेचारे नानक को अपने से मिला लो ॥ ३८ ॥ श्लोक ॥ हे दयालु प्रभु, तुम मेरी प्रार्थना सुनो। साधु पुरुषों की चरण–धूलि नानक के लिए सुख–सम्पति और अनेकों रसों तथा भोगों के समान है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ब – ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म को जानता है और वैष्णव वह है जो गुरमुख बनकर पवित्रता के धर्म को अपनाता है। शूरवीर वह है जो अपनी बुराई को मिटा देता है और किसी प्रकार की भी बुराई उसके निकट नहीं आती। व्यक्ति अपने अहंकार के बन्धनों में ही बंधा हुआ अन्धा होकर अन्यों पर दोष मढ़ता है। वाद–विवाद और चतुराईयाँ किसी काम नहीं आती और हे नानक, परमात्मा जिसे जनवाता है वही उसको जान पाता है ॥ ३९ ॥ श्लोक ॥ हे जीव, भयभंजन और पापों के कष्ट को दूर करने वाले प्रभु का मन से सुमिरन कर। हे नानक, जिसके हृदय में साधु पुरुषों की संगत के माध्यम से प्रभु आन बसता है वह कभी भी भ्रमों में पड़कर भटकते नहीं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ भ – भ्रम को दूर कर दो क्योंकि यह समस्त संसार केवल स्वप्न मात्र है। देवता, मानव, देवी और सिद्ध–साधक आदि सभी भ्रमों में पड़े हुए हैं। भ्रमों में पड़कर ही व्यक्ति बर्बाद होते हैं और उस पर माया का यह विषम संसार–सागर तैरना और भी कठिन है। हे नानक, जिसने गुरमुख बनकर भ्रम, भय, मोह, आदि को मिटा दिया है उसने ही परम सुख प्राप्त किया है ॥ ४० ॥ श्लोक ॥ माया अनेक रूपों में इधर–उधर डोलती रहती है और यह मन उसी में ही लिपटा रहता है। हे प्रभु, जिसे तू माँगने के स्वभाव से बचा ले, नानक के अनुसार वही व्यक्ति नाम के रंग में रंग जाता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ म – माँगने वाला नासमझ है क्योंकि देने वाला सुजान प्रभु तो दिए चला जा रहा है। प्रभु ने एक बार में ही सबको सब कुछ दे दिया है इसलिए हे मूर्ख मन, तू किसको चीख कर पुकार रहा है। तू जब माँगता है तो केवल ऐसे अन्य पदार्थों को माँगता है जिससे किसी को भी सदा के लिए प्रसन्नता नहीं मिल सकी। यदि तूने माँगना ही है तो केवल एक प्रभु को ही माँग ताकि हे नानक

पराग ॥ ४१ ॥ सलोक ॥ मति पूरी परधान ते गुर पूरे मन मंत ॥ जिह जानिओ प्रभु आपुना नानक ते भगवंत ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ममा जाहू मरमु पछाना ॥ भेटत साधसंग पतीआना ॥ दुख सुख उआ कै समत बीचारा ॥ नरक सुरग रहत अउतारा ॥ ताहू संग ताहू निरलेपा ॥ पूरन घट घट पुरख बिसेखा ॥ उआ रस महि उआहू सुखु पाइआ ॥ नानक लिपत नही तिह माइआ ॥ ४२ ॥ सलोकु ॥ यार मीत सुनि साजनहु बिनु हरि छूटनु नाहि ॥ नानक तिह बंधन कटे गुर की चरनी पाहि ॥ १ ॥ पवड़ी ॥ यया जतन करत बहु बिधीआ ॥ एक नाम बिनु कह लउ सिधीआ ॥ याहू जतन करि होत छुटारा ॥ उआहू जतन साध संगारा ॥ या उबरन धारै सभु कोऊ ॥ उआहि जपे बिनु उबर न होऊ ॥ याहू तरन तारन समराथा ॥ राखि लेहु निरगुन नरनाथा ॥ मन बच क्रम जिह आपि जनाई ॥ नानक तिह मति प्रगटी आई ॥ ४३ ॥ सलोकु ॥ रोसु न काहू संग करहु आपन आपु बीचारि ॥ होइ निमाना जगि रहहु नानक नदरी पारि ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ रारा रेन होत सभ जा की ॥ तजि अभिमानु छुटै तेरी बाकी ॥ रणि दरगहि तउ सीझहि भाई ॥ जउ गुरमुखि राम नाम लिव लाई ॥ रहत रहत रहि जाहि बिकारा ॥ गुर पूरे कै सबदि अपारा ॥ राते रंग नाम रस माते ॥ नानक हरि गुर कीनी दाते ॥ ४४ ॥ सलोकु ॥ लालच झूठ बिखै बिआधि इआ देही महि बास ॥ हरि हरि अंम्रितु गुरमुखि पीआ नानक सूखि निवास ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ लला लावउ अउखध जाहू ॥ दूख दरद तिह मिटहि खिनाहू ॥ नाम अउखधु जिह रिदै हितावै ॥ ताहि रोगु सुपनै नही आवै ॥ हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥ गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥ गुरि पूरै संजमु करि दीआ ॥ नानक तउ फिरि दूखु न थीआ ॥ ४५ ॥ सलोकु ॥ वासुदेव सरबत्र मै ऊन न कतहू ठाइ ॥ अंतरि बाहरि संगि है नानक काइ दुराइ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ववा वैरु न करीऐ काहू ॥ घट घट अंतरि ब्रहम समाहू ॥ वासुदेव जल थल महि रविआ ॥ गुर प्रसादि विरलै ही गविआ ॥ वैर विरोध मिटे तिह मन ते ॥ हरि कीरतनु गुरमुखि जो सुनते ॥ वरन चिहन

उसके माध्यम से तू पार उतर जाए ॥ ४१ ॥ श्लोक ॥ जिनके हृदय में पूर्ण गुरु का उपदेश बस गया है उन्हीं की बुद्धि पूर्ण है और वे ही सर्वमान्य हैं । हे नानक, जिसने अपने प्रभु को जान लिया वही भाग्यशाली है ॥ पउड़ी ॥ म – जिसने प्रभु के रहस्य को पहचान लिया वह साध–संगत में बैठकर तृप्त हो जाता है । दुख–सुख उसके लिए एक जैसे अनुभव ही हो जाते हैं और वह नर्क स्वर्ग में आने–जाने से बच जाता है । वह जिसके संग रहता है, साथ रहते हुए भी उससे अलिप्त बना रहता है और उस पूर्ण एवं विशिष्ट बलशाली प्रभु को हर हृदय के अन्दर देखता है । प्रभु के प्रेम–रस में ही वह सुख प्राप्त करता है और हे नानक, ऐसे व्यक्ति को सांसारिक पदार्थों की मोह–माया प्रभावित नहीं करती ॥ ४२ ॥ श्लोक ॥ हे यारो, मित्रो, सज्जनो यह ध्यान से सुन लो कि प्रभु के बिना छुटकारा सम्भव नहीं । हे नानक, जो गुरु के चरणों में आ जाते हैं उनके बन्धन कट जाते हैं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ य – व्यक्ति अनेकों प्रयत्न करता है परन्तु एक नाम के बिना यह भला कहाँ तक सफल होगा । जिन कोशिशों से छुटकारा होता है वे यत्न साधसंगत में ही किए जाते हैं । मुक्ति का ध्यान तो सभी करते हैं परन्तु प्रभु के सुमिरन के विना उद्धार नहीं हो सकता । प्रभु ही पार उतारने में समर्थ है । हे नर–नाथ प्रभु, तुम गुण–विहीनों की रक्षा करो । हे नानक, उस व्यक्ति की बुद्धि प्रकाशित हो उठती है जो मन, वचन और कर्मों की एकसुरता के माध्यम से प्रभु का उपदेश ग्रहण करता है ॥ ४३ ॥ श्लोक ॥ किसी पर रुष्ट न हो और अपने बारे में स्वयं विचार कर । हे नानक, इस प्रकार विनम्र बनकर संसार में रह; तू प्रभु की कृपा दृष्टि से पार उतर जाएगा ॥ पउड़ी ॥ र – तू सभी लोगों की चरण–धूलि बन जा और अपना अभिमान छोड़ दे जिससे तेरे बाकी के पापों से भी तू छूट जाएगा । प्रभु के दरवार रूपी रणक्षेत्र में तभी तू जीत सकेगा जब तू गुरमुख बनकर राम–नाम में सुरति को लीन कर लेगा । पूर्ण गुरु के अपार शव्द के कारण धीरे–धीरे तेरे पाप मिट जाएगें । हे नानक, जिन्हें प्रभु गुरु ने दान दिया है वे प्रभु के नाम–रस में रंगकर मस्त हो जाते हैं ॥ ४४॥ श्लोक ॥ इस शरीर में लालच, झूठ एवं विषय विकारों के रोग बसते हैं । हे नानक, गुरमुख बनकर जिस व्यक्ति ने हरि–नाम के अमृत का पान किया है उसका निवास सुखों में हो जाता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ल – हे प्रभु, जिसे तू अपने नाम की औषधि देता है उसके दुख–दर्द क्षण भर में मिट जाते हैं । जिसके हृदय को नाम रूपी औषधि अच्छी लगती है उसे स्वप्न में भी रोग स्पर्श नहीं करता । हे भाई, प्रभु रूपी औषधि सबके हृदय में है परन्तु पूर्ण गुरु के बिना इसको जानने की विधि समझ नहीं आती । पूर्ण गुरु ही परहेज बताकर इस दवाई को देता है और हे नानक, व्यक्ति फिर कभी दुखी नहीं होता ॥ ४५ ॥ श्लोक ॥ प्रभु सर्वत्र व्याप्त है और किसी भी स्थान में वह कम नहीं है । हे नानक, उससे क्या छिपाया जा सकता है क्योंकि वह अन्दर–बाहर सदैव साथ ही बना रहता है ॥ १ ॥ व – किसी से शत्रुता न रखो क्योंकि हर हृदय में प्रभु समाया हुआ है । प्रभु जल, थल अर्थात सर्वत्र व्याप्त है परन्तु कोई विरला ही उसका गुणानुवाद करता है । जो गुरमुख बनकर उसकी कीर्ति को सुनते हैं उनके मन के सभी बैर–विरोध मिट जाते हैं ।

सगलह ते रहता ॥ नानक हरि हरि गुरमुखि जो कहता ॥ ४६ ॥ सलोकु ॥ हउ हउ करत बिहानीआ साकत मुगध अजान ॥ ड़ड़कि मुए जिउ त्रिखावंत नानक किरति कमान ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ड़ाड़ा ड़ाड़ि मिटै संगि साधू ॥ करम धरम ततु नाम अराधू ॥ रूड़ो जेह बसिओ रिद माही ॥ उआ की ड़ाड़ि मिटत बिनसाही ॥ ड़ाड़ि करत साकत गावारा ॥ जेह हीऐ अहंबुधि बिकारा ॥ ड़ाड़ा गुरमुखि ड़ाड़ि मिटाई ॥ निमख माहि नानक समझाई ॥ ४७ ॥ सलोकु ॥ साधू की मन ओट गहु उकति सिआनप तिआगु ॥ गुर दीखिआ जिह मनि बसै नानक मसतकि भागु ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ससा सरनि परे अब हारे ॥ सासत्र सिम्रिति बेद पूकारे ॥ सोधत सोधत सोधि बीचारा ॥ बिनु हरि भजन नही छुटकारा ॥ सासि सासि हम भूलनहारे ॥ तुम समरथ अगनत अपारे ॥ सरनि परे की राखु दइआला ॥ नानक तुमरे बाल गुपाला ॥ ४८ ॥ सलोकु ॥ खुदी मिटी तब सुख भए मन तन भए अरोग ॥ नानक द्रिसटी आइआ उसतति करनै जोगु ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ खखा खरा सराहउ ताहू ॥ जो खिन महि ऊने सुभर भराहू ॥ खरा निमाना होत परानी ॥ अनदिनु जापै प्रभ निरबानी ॥ भावै खसम त उआ सुखु देता ॥ पारब्रहमु ऐसो आगनता ॥ असंख खते खिन बखसनहारा ॥ नानक साहिब सदा दइआरा ॥ ४९ ॥ सलोकु ॥ सति कहउ सुनि मन मेरे सरनि परहु हरि राइ ॥ उकति सिआनप सगल तिआगि नानक लए समाइ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ससा सिआनप छाडु इआना ॥ हिकमति हुकमि न प्रभु पतीआना ॥ सहस भाति करहि चतुराई ॥ संगि तुहारै एक न जाई ॥ सोऊ सोऊ जपि दिन राती ॥ रे जीअ चलै तुहारै साथी ॥ साध सेवा लावै जिह आपै ॥ नानक ता कउ दूखु न बिआपै ॥ ५० ॥ सलोकु ॥ हरि हरि मुख ते बोलना मनि वूठै सुखु होइ ॥ नानक सभ महि रवि रहिआ थान थनंतरि सोइ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ हेरउ घटि घटि सगल कै पूरि रहे भगवान ॥ होवत आए सद सदीव दुख भंजन गुर गिआन ॥ हउ छुटकै होइ अनंदु तिह हउ नाही तह आपि ॥ हते दूख जनमह मरन संतसंग परताप ॥ हित करि नाम द्रिड़ै दइआला ॥ संतह संगि होत

हे नानक, जो गुरमुख वनकर प्रभु का सुमिग्न करता है, वह जाति, वर्ण के समस्त चिन्हों से मुक्त हो जाता है ॥ ४६॥ श्लोक ॥ प्रभु से टूटे हुए मूर्ख एवं अनजान लोग अहंकार भाव में ही जीवन व्यतीत कर देते हैं । वे प्यासे लोगों की तरह मर जाते हैं और हे नानक, वे अपने किए हुए का फल भोगते हैं । पउड़ी ॥ ड़ – साधु पुरुषों के साथ रहने से सभी झगड़े मिट जाते हैं और व्यक्ति को पता लग जाता है कि नाम–सुमिरन ही धर्म–कर्म का सार–तत्व है । वह सुन्दर प्रभु जिसके हृदय में वस जाता है उसका झगड़ा मर–खप जाता है । जिसके हृदय में अभिमान और विकार बने रहते हैं प्रभु से टूटा हुआ ऐसा गँवार व्यक्ति ही वखेड़े खड़े कर लेता है ॥ ड़ – हे नानक, जब प्रभु समझाता है तो व्यक्ति गुरमुख बनकर झगड़े मिटा देता है ॥ ४७ ॥ श्लोक ॥ हे मन, तू अपना सयानापन और तर्क–वितर्क छोड़कर साधु पुरुषों का आसरा पकड़ ले । हे नानक, जिसके मन में गुरु का उपदेश बस जाए उसके माथे पर भाग्य के लेख प्रकट हो जाते हैं ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ स – शास्त्र, स्मृतियों और वेदों के माध्यम से पुकार कर और अन्ततः हार कर हे प्रभु मैं तेरी शरण में आ गया हूँ । चिन्तन करते–करते मैंने इस विचार को स्वीकार कर लिया है कि प्रभु के भजन के बिना व्यक्ति का उद्धार सम्भव नहीं । हर साँस के साथ हम गल्तियाँ करते हैं परन्तु हे प्रभु, तू गणनाओं से परे अपरंपार एवं समर्थ है । हे कृपालु प्रभु, शरण में आए की लाज रख । यह नानक, तुम्हारे बाल गोपालों में से ही एक है ॥ ४८ ॥ श्लोक ॥ जब अहंकार मिट जाता है तो सुख प्राप्त होता है और मन, तन निरोग हो जाता है । हे नानक, तब वह स्तुति करने योग्य प्रभु दिखाई देता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ ख – उस खरे प्रभु की प्रशंसा करो जो खाली पड़े हुओं को क्षण भर में पूर्ण रूप से भर देता है । जब जीव उस पवित्र प्रभु का प्रतिदिन सुमिरन करता है तो वह शुद्ध और विनम्र हो जाता है । यदि प्रभु को अच्छा लगे तो वह सुख देता है क्योंकि परब्रह्म ऐसा ही अनन्त है । हे नानक, वह प्रभु सदा दयालु है और एक क्षण भर में असंख्य भूलों को क्षमा कर देने वाला है ॥ ४९ ॥ श्लोक ॥ हे मेरे मन, मैं तुझसे सच कहता हूँ तू प्रभु की शरण में आ जा । नानक कहता है कि तू अपनी सब युक्तियों और चतुराइयों को त्याग दे तो वह तुझे अपने में लीन कर लेगा ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ स – हे जीव, तू अपनी चतुराई छोड़ दे क्योंकि चालाकी भरे कथनों से प्रभु प्रसन्न नहीं होता । तू हजारों प्रकार की चतुराईयां करता है परन्तु उनमें से एक भी तेरे साथ नहीं जाएगी । तू उस प्रभु का ही दिन–रात सुमिरन कर क्योंकि हे मानव वही तुम्हारा साथी होगा । हे नानक, उस व्यक्ति को दुख स्पर्श नहीं करता जिसको वह प्रभु साधु पुरुषों की सेवा में लगा लेता है ॥ ५० ॥ श्लोक ॥ प्रभु–नाम के जाप और उसे मन में टिकाने से आनन्द मिलता है । हे नानक, वह प्रभु सब जीवों में और सब स्थानों में रमा हुआ है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ वह प्रभु सब में परिपूर्ण है इसलिए उसे प्रत्येक हृदय में देखो । गुरु का दिया हुआ ज्ञान सदैव ही दुखों का नाश करने वाला बना रहा है । जब व्यक्ति अहंकार त्याग देता है तो आनन्द प्राप्त कर लेता है क्योंकि जहाँ अभिमान नहीं है परमात्मा वहीं होता है । सद्संगत के प्रताप से आवागमन के दुख समाप्त हो जाते हैं । जो प्रेम से दयालु प्रभु के नाम का सुमिरन करते हैं वह प्रभु ऐसे शान्त पुरुषों के साथ बने रहने वालों पर कृपालु बना रहता है।

किरपाला ॥ ओरै कछू न किनहू कीआ ॥ नानक सभु कछु प्रभ ते हूआ ॥ ५१ ॥ सलोकु ॥ लेखै कतहि न छूटीऐ खिनु खिनु भूलनहार ॥ बखसनहार बखसि लै नानक पारि उतार ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ लूण हरामी गुनहगार बेगाना अलप मति ॥ जीउ पिंडु जिनि सुख दीए ताहि न जानत तत ॥ लाहा माइआ कारने दह दिसि ढूढन जाइ ॥ देवनहार दातार प्रभ निमख न मनहि बसाइ ॥ लालच झूठ बिकार मोह इआ संपै मन माहि ॥ लंपट चोर निंदक महा तिनहू संगि बिहाइ ॥ तुधु भावै ता बखसि लैहि खोटे संगि खरे ॥ नानक भावै पारब्रहम पाहन नीरि तरे ॥ ५२ ॥ सलोकु ॥ खात पीत खेलत हसत भरमे जनम अनेक ॥ भवजल ते काढहु प्रभू नानक तेरी टेक ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ खेलत खेलत आइओ अनिक जोनि दुख पाइ ॥ खेद मिटे साधू मिलत सतिगुर बचन समाइ ॥ खिमा गही सचु संचिओ खाइओ अंम्रितु नाम ॥ खरी क्रिपा ठाकुर भई अनद सूख बिस्राम ॥ खेप निबाही बहुतु लाभ घरि आए पतिवंत ॥ खरा दिलासा गुरि दीआ आइ मिले भगवंत ॥ आपन कीआ करहि आपि आगै पाछै आपि ॥ नानक सोऊ सराहीऐ जि घटि घटि रहिआ बिआपि ॥ ५३ ॥ सलोकु ॥ आए प्रभ सरनागती किरपा निधि दइआल ॥ एक अखरु हरि मनि बसत नानक होत निहाल ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ अखर महि त्रिभवन प्रभि धारे ॥ अखर करि करि बेद बीचारे ॥ अखर सासत्र सिंम्रिति पुराना ॥ अखर नाद कथन वख्याना ॥ अखर मुकति जुगति भै भरमा ॥ अखर करम किरति सुच धरमा ॥ द्रिसटिमान अखर है जेता ॥ नानक पारब्रहम निरलेपा ॥ ५४ ॥ सलोकु ॥ हथि कलंम अगंम मसतकि लिखावती ॥ उरझि रहिओ सभ संगि अनूप रूपावती ॥ उसतति कहनु न जाइ मुखहु तुहारीआ ॥ मोही देखि दरसु नानक बलिहारीआ ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ हे अचुत हे पारब्रहम अबिनासी अघ नास ॥ हे पूरन हे सरब मै दुख भंजन गुणतास ॥ हे संगी हे निरंकार हे निरगुण सभ टेक ॥ हे गोबिद हे गुण निधान जा कै सदा बिबेक ॥ हे अपरंपर हरि हरे हहि भी होवनहार ॥ हे संतह कै सदा संगि निधारा आधार ॥ हे ठाकुर हउ दासरो मै निरगुन गुनु नही कोइ ॥

यहाँ किसी ने भी कुछ नहीं किया है; हे नानक, सब कुछ प्रभु ने ही किया कराया है ॥ ५१ ॥ श्लोक ॥ हिसाब–किताब से तो व्यक्ति कभी भी मुक्त नहीं हो सकता क्योंकि वह हर क्षण गल्तियाँ करने वाला है । हे क्षमा करने वाले प्रभु, मुझे क्षमा कर दे और नानक को इस संसार–समुद्र से पार उतार ले ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ व्यक्ति नमक–हराम, पापी, द्वैतभाव वाला एवं अल्प बुद्धि वाला है । जिसने उसे जीवन और शरीर तथा सभी प्रकार के सुख दिए हैं वह इन सब के सार–तत्त्व प्रभु को नहीं जानता । सांसारिक लाभ के लिए वह दसों दिशाओं में घूमता रहता है और देने वाले दाता प्रभु को क्षण भर के लिए भी मन में नहीं बसाता । लालच, झूठ, विकार एवं मोह आदि को सम्पत्ति समझ कर मन में बनाए रखता है तथा महा लम्पट, चोर, निन्दक आदि व्यक्तियों के साथ ही अपना जीवन व्यतीत करता है । हे प्रभु, यदि तुझे अच्छा लगे तो तू अच्छे लोगों के साथ खोटे व्यक्तियों को भी क्षमा कर देता है और हे नानक, यदि प्रभु को भा जाए तो पत्थर भी पानी में तैर जाते हैं ॥ ५२ ॥ श्लोक ॥ खाते, पीते, खेलते, हँसते अनेकों जन्मों तक मैं भटका हूँ । हे प्रभु, मुझे भव–सागर से निकाल लो क्योंकि नानक को केवल तेरा ही आसरा है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ अनेक योनियों के दुख उठाता हुआ मैं खेलता–कूदता मानव बनकर इस संसार में आया । सद्‌गुरु के उपदेश में लीन रहने से और साधु पुरुषों के मेल से इस संसार में दुख मिट जाते हैं । यहाँ व्यक्ति क्षमा को धारण करके सत्य का संचय करता है और प्रभु के नाम रूपी अमृत का पान करता है । उस प्रभु की कृपा से मैंने भी आनन्द और सुख का ठिकाना पा लिया है । मेरे सौदे का निर्वाह ठीक हो गया है, मुझे मानव देह में बहुत लाभ हुआ है और मैं सम्मान सहित अपने मूल स्थान पर आ गया हूँ । गुरु ने मुझे भरपूर तसल्ली दी है और वह प्रभु मुझे आन मिला है । प्रभु स्वयं ही करता कराता है और आगे–पीछे भी वह स्वयं ही है । हे नानक, केवल उसी की सराहना कर जो घट–घट में व्याप्त है ॥ ५३ ॥ श्लोक ॥ हे कृपा के समुद्र दयालु प्रभु, मैं तेरी शरण में आया हूँ और मैंने सुना है कि हे नानक, जिसके मन में अविनाशी प्रभु बस जाता है वह परम प्रसन्न हो जाता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ अक्षर में ही प्रभु ने तीनों लोकों को धारण कर रखा है । अक्षरों में ही वेदों का चिन्तन किया जाता है । शास्त्र, स्मृति, पुराण भी अक्षर ही हैं । अक्षर ही कथन व्याख्यान एवं नाद हैं । मुक्ति की युक्ति, भय और भ्रमों का कथन भी अक्षर के द्वारा ही होता है । अक्षर ही परम संस्कार, पवित्रता एवं धर्म को बताते हैं । जो कुछ भी दृष्टमान है वह अक्षर ही है और हे नानक, परब्रह्म सदैव इन सब से अलिप्त बना रहता है ॥ ५४ ॥ श्लोक ॥ वह अगम्य प्रभु अपने हाथ की लेखनी से जीवों के मस्तक पर अच्छा भाग्य लिखता है । वह अनुपम रूप वाला प्रभु सब में रमण कर रहा है । हे प्रभु, मुँह से तुम्हारी स्तुति नहीं की जा सकती । तेरा दर्शन करके मैं मोहित हो गया हूँ और यह नानक तुझ पर, बलिहारी जाता है ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ हे अटल, अविनाशी, पाप नाशक, परब्रह्म, हे पूर्ण, सव में व्याप्त, दुख नाशक गुणों के खजाने प्रभु, हे सबके साथी निराकार, निर्गुण और सब की टेक प्रभु, हे गोविन्द, गुणों के समुद्र, सदैव विवेकशील प्रभु, हे अपरंपर वर्तमान एवं भविष्य में भी बने रहने वाले प्रभु, हे सदैव शान्त पुरुषों के साथ बने रहने वाले निराश्रितों के आश्रय प्रभु, हे स्वामी, मैं तेरा दास हूँ मुझ में कोई भी गुण नहीं है ।

नानक दीजै नाम दानु राखउ हीऐ परोइ ॥ ५५ ॥ सलोकु ॥ गुरदेव माता गुरदेव पिता गुरदेव सुआमी परमेसुरा ॥ गुरदेव सखा अगिआन भंजनु गुरदेव बंधिप सहोदरा ॥ गुरदेव दाता हरि नामु उपदेसै गुरदेव मंतु निरोधरा ॥ गुरदेव सांति सति बुधि मूरति गुरदेव पारस परस परा ॥ गुरदेव तीरथु अंम्रित सरोवरु गुर गिआन मजनु अपरंपरा ॥ गुरदेव करता सभि पाप हरता गुरदेव पतित पवित करा ॥ गुरदेव आदि जुगादि जुगु जुगु गुरदेव मंतु हरि जपि उधरा ॥ गुरदेव संगति प्रभ मेलि करि किरपा हम मूड़ पापी जितु लगि तरा ॥ गुरदेव सतिगुरु पारब्रहमु परमेसरु गुरदेव नानक हरि नमसकरा ॥ १ ॥ एहु सलोकु आदि अंति पड़णा ॥

गउड़ी सुखमनी मः ५ ॥ सलोकु ॥ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

आदि गुरए नमह ॥ जुगादि गुरए नमह ॥ सतिगुरए नमह ॥ स्री गुरदेवए नमह ॥ १ ॥ असटपदी ॥ सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥ कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ सिमरउ जासु बिसुंभर एकै ॥ नामु जपत अगनत अनेकै ॥ बेद पुरान सिंम्रिति सुधाख्यर ॥ कीने राम नाम इक आख्यर ॥ किनका एक जिसु जीअ बसावै ॥ ता की महिमा गनी न आवै ॥ कांखी एकै दरस तुहारो ॥ नानक उन संगि मोहि उधारो ॥ १ ॥ सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥ भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ रहाउ ॥ प्रभ कै सिमरनि गरभि न बसै ॥ प्रभ कै सिमरनि दूखु जमु नसै ॥ प्रभ कै सिमरनि कालु परहरै ॥ प्रभ कै सिमरनि दुसमनु टरै ॥ प्रभ सिमरत कछु बिघनु न लागै ॥ प्रभ कै सिमरनि अनदिनु जागै ॥ प्रभ कै सिमरनि भउ न बिआपै ॥ प्रभ कै सिमरनि दुखु न संतापै ॥ प्रभ का सिमरनु साध कै संगि ॥ सरब निधान नानक हरि रंगि ॥ २ ॥ प्रभ कै सिमरनि रिधि सिधि नउ निधि ॥ प्रभ कै सिमरनि गिआनु धिआनु ततु बुधि ॥ प्रभ कै सिमरनि जप तप पूजा ॥ प्रभ कै सिमरनि बिनसै दूजा ॥ प्रभ कै सिमरनि तीरथ इसनानी ॥ प्रभ कै सिमरनि दरगह मानी ॥ प्रभ कै सिमरनि होइ सु भला ॥ प्रभ कै सिमरनि सुफल फला ॥

मुझ नानक को अपने नाम का दान दो ताकि मैं उसे अपने हृदय में पिरों कर रखूँ ॥ ५५ ॥ श्लोक ॥ प्रभु रूपी गुरु ही मेरी माँ, मेरा पिता, मेरा मालिक एवं परमेश्वर है । प्रभु रूपी गुरु ही मेरा अज्ञान का नाश करने वाला साथी बन्धु और भाई है । गुरु ही प्रभु–नाम का उपदेश देने वाला दाता है और गुरु ही मेरा अचूक मंत्र है । प्रभु रूपी गुरु ही शान्ति, सत्य एवं बुद्धि की मूर्ति है और गुरुदेव ही पारस है जिससे सभी साथ वाले सोना बन जाते हैं । प्रभु रूपी गुरु ही तीर्थ, अमृत–सरोवर है और गुरु के ज्ञान में स्नान करना उस अपरंपर प्रभु को मिलने के तुल्य है । प्रभु रूपी गुरु ही सब कुछ करने वाला, सब पापों को हरने वाला और प्रभु–गुरु ही पतितों को पवित्र करने वाला है । प्रभु रूपी गुरु आदि काल से, युगादि से और युगों–युगों में बना रहने वाला ऐसा प्रभु मंत्र है जिसका जाप करके व्यक्ति का उद्धार हो जाता है । हे प्रभु, कृपा कर और गुरुदेव रूपी संगत से मेल कर दे ताकि उससे मिलकर हम पापी लोग भी पार उतर जाए । परब्रह्म स्वरूप सद्गुरु स्वयं प्रभु ही है और ऐसे परमेश्वर गुरु को नानक प्रणाम करता है ॥ १ ॥ इस श्लोक को आदि और अन्त में पढ़ा जाए ॥

* गउड़ी सुखमनी मः ५ ॥ श्लोक ॥ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

मैं आदि गुरु (परमात्मा) को नमस्कार करता हूँ; युगों के आदि में भी बने रहने वाले गुरु को प्रणाम करता हूँ । मैं सत्य रूप गुरु की वन्दना करता हूँ और वैभवशाली ईश्वर रूपी गुरु को प्रणाम करता हूँ ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ प्रभु का सुमिरन करो, सुमिरन करके सुख प्राप्त करो तथा तन के कलह क्लेश मिटा दो । एक ही एक विश्वंभर प्रभु के यश का सुमिरन करो क्योंकि अनगिनत लोग प्रभु–नाम का जाप करते हैं । वेद–पुराण, स्मृति और अन्य अमृत रूपी अक्षर प्रभु–नाम के एक अक्षर का ही प्रकटीकरण हैं । जिसके हृदय में उसका नाम एक तिल मात्र भी वस जाता है उस व्यक्ति की महिमा नहीं बताई जा सकती । हे प्रभु जो केवल तुझ एक के दर्शन करने की इच्छा रखने वाले हैं उनके साथ मुझ नानक का भी उद्धार कर दो ॥ १ ॥ इस सुखमनी में सुख और अमृत रूपी प्रभु का नाम है और इसी से भक्तजनों का मन शान्त होकर टिक जाता है ॥ रहाउ ॥ प्रभु के सुमिरन से जीव योनियों के लिए गर्भ में नहीं पड़ता । प्रभु के सुमिरन से दुख और यम भाग खड़े होते हैं । प्रभु के सुमिरन से मौत को परे हटा दिया जाता है । प्रभु के सुमिरन से शत्रु भी टल जाते हैं । सुमिरन करते रहने से कोई विघ्न नहीं पड़ता और प्रभु के सुमिरन से व्यक्ति सदैव चेतन बना रहता है । प्रभु के सुमिरन से भय नहीं लगता और दुःख सन्ताप भी नहीं स्पर्श करता । साधसंगत में ही प्रभु–सुमिरन प्राप्त होता है और हे नानक, सव प्रकार के भण्डार प्रभु–प्रेम में ही प्राप्त होते है ॥ २ ॥ प्रभु के सुमिरन में ही ऋद्धियाँ, सिद्धियाँ और नवनिधियाँ विद्यमान हैं । सुमिरन में ही ज्ञान–ध्यान और तत्त्व को समझने वाली विवेक बुद्धि प्राप्त होती है । सुमिरन से ही व्यक्ति जप, तप और पूजा को समझ लेता है तथा सुमिरन से ही द्वैतभाव नष्ट हो जाता है । प्रभु–सुमिरन तीर्थ स्थानों का फल देने वाला है और प्रभु के सुमिरन से ही जीव को प्रभु के दरबार में सम्मान मिलता है । प्रभु–सुमिरन में व्यक्ति हो रहे सब कुछ को भला ही कहता है और प्रभु सुमिरन के माध्यम से व्यक्ति फलता–फूलता है ।

* विस्तार के लिए परिशिष्ट 4 देखें ।

से सिमरहि जिन आपि सिमराए ॥ नानक ता कै लागउ पाए ॥ ३ ॥ प्रभ का सिमरनु सभ ते ऊचा ॥ प्रभ कै सिमरनि उधरे मूचा ॥ प्रभ कै सिमरनि त्रिसना बुझै ॥ प्रभ कै सिमरनि सभु किछु सुझै ॥ प्रभ कै सिमरनि नाही जम त्रासा ॥ प्रभ कै सिमरनि पूरन आसा ॥ प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ ॥ अंम्रित नामु रिद माहि समाइ ॥ प्रभ जी बसहि साध की रसना ॥ नानक जन का दासनि दसना ॥ ४ ॥ प्रभ कउ सिमरहि से धनवंते ॥ प्रभ कउ सिमरहि से पतिवंते ॥ प्रभ कउ सिमरहि से जन परवान ॥ प्रभ कउ सिमरहि से पुरख प्रधान ॥ प्रभ कउ सिमरहि सि बेमुहताजे ॥ प्रभ कउ सिमरहि सि सरब के राजे ॥ प्रभ कउ सिमरहि से सुखवासी ॥ प्रभ कउ सिमरहि सदा अबिनासी ॥ सिमरन ते लागे जिन आपि दइआला ॥ नानक जन की मंगै रवाला ॥ ५ ॥ प्रभ कउ सिमरहि से परउपकारी ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन सद बलिहारी ॥ प्रभ कउ सिमरहि से मुख सुहावे ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन सूखि बिहावै ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन आतमु जीता ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन निरमल रीता ॥ प्रभ कउ सिमरहि तिन अनद घनेरे ॥ प्रभ कउ सिमरहि बसहि हरि नेरे ॥ संत क्रिपा ते अनदिनु जागि ॥ नानक सिमरनु पूरै भागि ॥ ६ ॥ प्रभ कै सिमरनि कारज पूरे ॥ प्रभ कै सिमरनि कबहु न झूरे ॥ प्रभ कै सिमरनि हरि गुन बानी ॥ प्रभ कै सिमरनि सहजि समानी ॥ प्रभ कै सिमरनि निहचल आसनु ॥ प्रभ कै सिमरनि कमल बिगासनु ॥ प्रभ कै सिमरनि अनहद झुनकार ॥ सुखु प्रभ सिमरन का अंतु न पार ॥ सिमरहि से जन जिन कउ प्रभ मइआ ॥ नानक तिन जन सरनी पइआ ॥ ७ ॥ हरि सिमरनु करि भगत प्रगटाए ॥ हरि सिमरनि लगि बेद उपाए ॥ हरि सिमरनि भए सिध जती दाते ॥ हरि सिमरनि नीच चहु कुंट जाते ॥ हरि सिमरनि धारी सभ धरना ॥ सिमरि सिमरि हरि कारन करना ॥ हरि सिमरनि कीओ सगल अकारा ॥ हरि सिमरन महि आपि निरंकारा ॥ करि किरपा जिसु आपि बुझाइआ ॥ नानक गुरमुखि हरि सिमरनु तिनि पाइआ ॥ ८ ॥ १ ॥ सलोकु ॥ दीन दरद दुख भंजना घटि घटि नाथ अनाथ ॥ सरणि

वही सुमिरन करते हैं जिन्हें प्रभु आप सुमिरन में लगाता है । हे नानक, मैं ऐसे व्यक्तियों के चरण–स्पर्श करता हूँ ॥ ३ ॥ प्रभु का सुमिरन सब से ऊँचा है और सुमिरन के माध्यम से ही अनेकों का उद्धार हो गया है । प्रभु के सुमिरन से तृष्णा समाप्त हो जाती है और व्यक्ति को सब कुछ सुझाई देने लगता है । प्रभु के सुमिरन से यम का भय नहीं रहता और आशाएं पूरी हो जाती हैं । प्रभु के सुमिरन से मन की मैल छूट जाती है और अमृत रूपी प्रभु–नाम मन में समा जाता है । प्रभु साधु पुरुषों की जीभ पर निवास करता है और दास नानक उसके दासों का भी दास है ॥ ४ ॥ प्रभु का सुमिरन करने वाले धनवान हैं और वे ही सम्मान वाले भी हैं । प्रभु का सुमिरन करने वाले व्यक्ति स्वीकृत होते हैं और वे ही मुख्य व्यक्ति माने जाते हैं । प्रभु का सुमिरन करने वाले किसी के मोहताज नहीं होते और वे ही सब के राजा माने जाते हैं । प्रभु का सुमिरन करने वाले सुखों में रहते हैं और वे कभी भी नष्ट न होने वाले होते हैं । जिन पर प्रभु दयालु होता है वे ही सुमिरन में लीन होते हैं और नानक ऐसे लोगों की चरण–धूलि की याचना करता है ॥ ५ ॥ प्रभु का सुमिरन करने वाले परोपकारी होते हैं और प्रभु का सुमिरन करने वालों पर मैं सदैव बलिहारी जाता हूँ । सुमिरन करने वालों के मुख शोभायुक्त होते हैं और वे अपना जीवन सुख में व्यतीत करते हैं । प्रभु का सुमिरन करने वाले अपने मन एवं आत्मा को जीत लेते हैं और उनका जीवन–ढंग भी पवित्र हो जाता है । सुमिरन करने वालों को गहरे आनन्द का अनुभव होता है और वे प्रभु के पास आन बसते हैं । शान्त पुरुषों की कृपा से वे सदैव चेतन वने रहते हैं परन्तु हे नानक प्रभु का सुमिरन पूरे भाग्यशाली को ही प्राप्त होता है ॥ ६ ॥ प्रभु का सुमिरन करने से कार्य पूरे हो जाते हैं और व्यक्ति कभी भी पछतावे में नहीं रहता । सुमिरन के माध्यम से प्रभु के गुणों को वाणी दी जाती है और सुमिरन के माध्यम से ही व्यक्ति सहजभाव में लीन हो जाता है । प्रभु के सुमिरन के माध्यम से अटल ठिकाना प्राप्त हो जाता है और सुमिरन के माध्यम से ही हृदय रूपी कमल खिल उठता है । प्रभु के सुमिरन से ही अनहद् नाद गूँज उठता है और सुमिरन के फलस्वरूप शान्ति और सुख का कोई ओर–छोर नहीं रहता । जिन पर प्रभु कृपा करता है वही उसका सुमिरन करते हैं और नानक ऐसे ही पुरुषों की शरण में आन पड़ा है ॥ ७ ॥ प्रभु–सुमिरन से ही कई भक्त संसार में जाने गए हैं और प्रभु–सुमिरन में लगकर ही वेद रूपी ज्ञान की रचना हुई है । सुमिरन से ही व्यक्ति सिद्ध, यति और दाता बन गए हैं और सुमिरन से ही तथाकथित नीच चारों दिशाओं में प्रसिद्ध हुए हैं । प्रभु–सुमिरन के फलस्वरूप ही सारी धरती की स्थिति वनी हुई है इसलिए हे जीव, उस मूल कारण और करणहार प्रभु का तू बार बार सुमिरन कर । प्रभु सुमिरन ने ही समस्त आकारों की रचना की है और वह निराकार प्रभु स्वयं वहाँ प्रकट होकर बसता है जहाँ प्रभु–सुमिरन होता है। हे नानक, वे ही गुरमुख बनकर प्रभु–सुमिरन को प्राप्त करते हैं जिन पर प्रभु स्वयं कृपा करके उन्हें अपना रहस्य वताता है ॥ ८ ॥ १ ॥ श्लोक ॥ हे दीनों के दुख दर्द का नाश करने वाले और हर घट में बसने वाले अनाथों के नाथ प्रभु,

तुम्हारी आइओ नानक के प्रभ साथ ॥ १ ॥ असटपदी ॥ जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥ मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई ॥ जह महा भइआन दूत जम दलै ॥ तह केवल नामु संगि तेरै चलै ॥ जह मुसकल होवै अति भारी ॥ हरि को नामु खिन माहि उधारी ॥ अनिक पुनहचरन करत नही तरै ॥ हरि को नामु कोटि पाप परहरै ॥ गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे ॥ नानक पावहु सूख घनेरे ॥ १ ॥ सगल स्रिसटि को राजा दुखीआ ॥ हरि का नामु जपत होइ सुखीआ ॥ लाख करोरी बंधु न परै ॥ हरि का नामु जपत निसतरै ॥ अनिक माइआ रंग तिख न बुझावै ॥ हरि का नामु जपत आघावै ॥ जिह मारगि इहु जात इकेला ॥ तह हरि नामु संगि होत सुहेला ॥ ऐसा नामु मन सदा धिआईऐ ॥ नानक गुरमुखि परम गति पाईऐ ॥ २ ॥ छूटत नही कोटि लख बाही ॥ नामु जपत तह पारि पराही ॥ अनिक बिघन जह आइ संघारै ॥ हरि का नामु ततकाल उधारै ॥ अनिक जोनि जनमै मरि जाम ॥ नामु जपत पावै बिस्राम ॥ हउ मैला मलु कबहु न धोवै ॥ हरि का नामु कोटि पाप खोवै ॥ ऐसा नामु जपहु मन रंगि ॥ नानक पाईऐ साध कै संगि ॥ ३ ॥ जिह मारग के गने जाहि न कोसा ॥ हरि का नामु ऊहा संगि तोसा ॥ जिह पैडै महा अंध गुबारा ॥ हरि का नामु संगि उजीआरा ॥ जहा पंथि तेरा को न सिञानू ॥ हरि का नामु तह नालि पछानू ॥ जह महा भइआन तपति बहु घाम ॥ तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम ॥ जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै ॥ तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै ॥ ४ ॥ भगत जना की बरतनि नामु ॥ संत जना कै मनि बिस्रामु ॥ हरि का नामु दास की ओट ॥ हरि कै नामि उधरे जन कोटि ॥ हरि जसु करत संत दिनु राति ॥ हरि हरि अउखधु साध कमाति ॥ हरि जन कै हरि नामु निधानु ॥ पारब्रहमि जन कीनो दान ॥ मन तन रंगि रते रंग एकै ॥ नानक जन कै बिरति बिबेकै ॥ ५ ॥ हरि का नामु जन कउ मुकति जुगति ॥ हरि कै नामि जन कउ त्रिपति भुगति ॥ हरि का नामु जन का रूप रंगु ॥ हरि नामु जपत कब परै न भंगु ॥ हरि का नामु जन की वडिआई ॥ हरि कै नामि जन सोभा

मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ और तुम हे प्रभु, सदैव नानक के साथ बने रहो ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ हे मन, जहाँ माता, पिता, पुत्र, मित्र, भाई आदि कोई भी नही होगा वहाँ प्रभु–नाम ही तेरा सहायक बनेगा । जहाँ बहुत भयानक यमदूत तुझे कुचलेगा वहाँ केवल प्रभु–नाम ही तेरे साथ चलेगा । जहाँ तेरे सामने भारी कठिनाई होगी वहाँ क्षण भर में प्रभु–नाम तुझे बचा लेगा । अनेकों प्रायश्चित कर्म करने से भी व्यक्ति पार नहीं उतरता परन्तु प्रभु का नाम करोड़ों पापों को दूर कर देता है । हे मेरे मन, गुरमुख बनकर प्रभु–नाम का जाप कर और हे नानक, इस प्रकार तू अनेकों सुख प्राप्त कर लेगा ॥ १ ॥ सारे संसार का राजा भी दुखी बना रहता है परन्तु प्रभु–नाम के सुमिरन के फलस्वरूप वह सुखी हो जाता है । लाखों–करोड़ों बन्धनों में पड़ा रहने के बावजूद व्यक्ति प्रभु–नाम के सुमिरन से मुक्त हो जाता है । धन–सम्पदा के अनेकों रंग व्यक्ति की प्यास को नहीं बुझाते परन्तु प्रभु–नाम के सुमिरन से व्यक्ति तृप्त हो जाता है । जिस मार्ग पर अन्ततः जीव को अकेला जाना पड़ता है वहाँ प्रभु नाम ही साथ में सुख देने वाला होता है । हे मन ऐसे नाम का सदैव सुमिरन करो और हे नानक, गुरमुख बनकर ही परमगति प्राप्त की जाती है ॥ २ ॥ लाखों बलशाली भुजाएं साथ होने पर भी जहाँ व्यक्ति बच नहीं पाता वहाँ प्रभु–नाम सुमिरन से वह पार हो जाता है । जहाँ अनेकों विघ्न व्यक्ति का संहार कर देते हैं वहाँ प्रभु का नाम तत्काल उसे बचा लेता है । जीव अनेकों योनियों में जन्मता–मरता है परन्तु प्रभु–नाम के सुमिरन से वह सहज विश्राम की अवस्था में आ जाता है । जीव अभिमान से इतना मलीन हो जाता है कि उसकी मैल कभी भी नहीं छूट पाती; परन्तु प्रभु का नाम उसके करोड़ों पापों को भी उससे दूर कर देता है । हे मन, तू ऐसे नाम का प्रभु में लीन होकर सुमिरन कर और हे नानक, यह नाम साधसंगत में ही प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ जिस लम्बे सफर की दूरी की गणना नहीं की जा सकती, उस सफर में प्रभु–नाम ही तेरे साथ तेरे खाने खर्चने का साधन है । जिस मार्ग पर घोर अंधकार और गुबार है वहाँ प्रभु–नाम ही तेरे संग उजाले का काम करता है । जिस रास्ते पर तेरी पहचान वाला कोई भी नहीं होता वहाँ प्रभु का नाम तेरे साथ तेरी पहचान बनकर रहता है । जहाँ भयानक तपन और गर्मी होती है वहाँ प्रभु–नाम की छाया तेरे ऊपर बनी रहती है । हे मन, जहाँ प्यास तुझे बहुत सताती है वहाँ हे नानक, तेरे पर प्रभु अमृत बनकर वरसता है ॥ ४ ॥ भक्तजनों का कार्य–व्यवहार केवल प्रभु–नाम ही है जो शान्त पुरुषों के मन को विश्राम की अवस्था में ला देता है । प्रभु के दास का आसरा प्रभु का नाम ही हैं क्योंकि प्रभु नाम के माध्यम से करोड़ों ही लोग पार उतर गए हैं । संत व्यक्ति सदैव प्रभु–गुणानुवाद में ही लीन रहता है और साधु लोग ही प्रभु को अपनी औषधि के रूप में काम में लाते हैं । प्रभु के सेवक के लिए प्रभु नाम ही वह खजाना है जिसे परब्रह्म ने अपने सेवक को दान में दिया हुआ है । जिसका मन, तन एक प्रभु में रंगा रहता है, हे नानक, दिव्य ज्ञान ऐसे व्यक्ति की उपजीविका बन जाता है ॥ ५ ॥ प्रभु का नाम ही सेवक के लिए मुक्ति भी है और उस मुक्ति की युक्ति भी है । प्रभु का नाम ही सेवक के लिए भोजन और भोजन से उत्पन्न तृप्ति भी है । प्रभु–नाम ही सेवक का रूप और रंग है और प्रभु–नाम सुमिरन करने से कभी भी कोई रुकावट सामने नहीं आती । प्रभु का नाम ही सेवक के लिए उसका मान–सम्मान है और प्रभु नाम के

पाई ॥ हरि का नामु जन कउ भोग जोग ॥ हरि नामु जपत कछु नाहि बिओगु ॥ जनु राता हरि नाम की सेवा ॥ नानक पूजे हरि हरि देवा ॥ ६ ॥ हरि हरि जन के मालु खजीना ॥ हरि धनु जन कउ आपि प्रभि दीना ॥ हरि हरि जन कै ओट सताणी ॥ हरि प्रतापि जन अवर न जाणी ॥ ओति पोति जन हरि रसि राते ॥ सुंन समाधि नाम रस माते ॥ आठ पहर जनु हरि हरि जपै ॥ हरि का भगतु प्रगट नही छपै ॥ हरि की भगति मुकति बहु करे ॥ नानक जन संगि केते तरे ॥ ७ ॥ पारजातु इहु हरि को नाम ॥ कामधेन हरि हरि गुण गाम ॥ सभ ते ऊतम हरि की कथा ॥ नामु सुनत दरद दुख लथा ॥ नाम की महिमा संत रिद वसै ॥ संत प्रतापि दुरतु सभु नसै ॥ संत का संगु वडभागी पाईऐ ॥ संत की सेवा नामु धिआईऐ ॥ नाम तुलि कछु अवरु न होइ ॥ नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥ ८ ॥ २ ॥ सलोकु ॥ बहु सासत्र बहु सिम्रिती पेखे सरब ढढोलि ॥ पूजसि नाही हरि हरे नानक नाम अमोल ॥ १ ॥ असटपदी ॥ जाप ताप गिआन सभि धिआन ॥ खट सासत्र सिम्रिति वखिआन ॥ जोग अभिआस करम ध्रम किरिआ ॥ सगल तिआगि बन मधे फिरिआ ॥ अनिक प्रकार कीए बहु जतना ॥ पुंन दान होमे बहु रतना ॥ सरीरु कटाइ होमै करि राती ॥ वरत नेम करै बहु भाती ॥ नही तुलि राम नाम बीचार ॥ नानक गुरमुखि नामु जपीऐ इक बार ॥ १ ॥ नउ खंड प्रिथमी फिरै चिरु जीवै ॥ महा उदासु तपीसरु थीवै ॥ अगनि माहि होमत परान ॥ कनिक अस्व हैवर भूमि दान ॥ निउली करम करै बहु आसन ॥ जैन मारग संजम अति साधन ॥ निमख निमख करि सरीरु कटावै ॥ तउ भी हउमै मैलु न जावै ॥ हरि के नाम समसरि कछु नाहि ॥ नानक गुरमुखि नामु जपत गति पाहि ॥ २ ॥ मन कामना तीरथ देह छुटै ॥ गरबु गुमानु न मन ते हुटै ॥ सोच करै दिनसु अरु राति ॥ मन की मैलु न तन ते जाति ॥ इसु देही कउ बहु साधना करै ॥ मन ते कबहू न बिखिआ टरै ॥ जलि धोवै बहु देह अनीति ॥ सुध कहा होइ काची भीति ॥ मन हरि के नाम की महिमा ऊच ॥ नानक नामि उधरे पतित बहु मूच ॥ ३ ॥ बहुतु सिआणप जम का

माध्यम से ही सेवक को शोभा प्राप्त होती है । भोग और योग दोनों ही प्रभु सेवक के लिए प्रभु–नाम में ही है जिसका सुमिरन करने से कभी भी वियोग की अवस्था नहीं आती । प्रभु का सेवक प्रभु–नाम के सुमिरन से उसके रंग में रंग गया है और नानक भी ऐसे महान् प्रभु की उपासना करता है ॥ ६ ॥ सेवक के लिए प्रभु ही धनमाल का खजाना है। अपने सेवक को प्रभु ने स्वयं हरि रूपी धन दिया है । सेवक के लिए प्रभु ही एक शक्तिशाली आसरा है और प्रभु के प्रताप से ही सेवक अन्य किसी को जानता–मानता नहीं है । प्रभु का सेवक प्रभु के नाम–रस में ओत–प्रोत बना रहता है और शून्य समाधि में लीन होकर नाम–रस में मतवाला बना रहता है । प्रभु का सेवक आठों प्रहर प्रभु का सुमिरन ही करता रहता है । प्रभु का भक्त छिपता नहीं और प्रकट होकर ही रहता है । प्रभु की भक्ति अनेकों को मोक्ष प्रदान करती है । हे नानक, उस सेवक के साथ अन्य कितने ही संसार सागर से पार उतर जाते हैं ॥ ७ ॥ प्रभु–नाम एक पारिजात वृक्ष की तरह है और प्रभु का गुणानुवाद कामधेनु की तरह है । प्रभु की ज्ञान चर्चा सर्वोत्तम है और प्रभु का नाम सुनने से दुख और दर्द दूर हो जाते हैं । नाम की महिमा संतों के हृदय में बसती है और संत–प्रताप से ही सारे पाप भाग खड़े होते हैं । संत की संगत भाग्यशाली को मिलती है और साधु–संतों की सेवा से ही नाम–सुमिरन किया जाता है । नाम के समान अन्य कुछ भी नहीं है । हे नानक, कोई बिरला सेवक ही गुरमुख बनकर नाम प्राप्त करता है ॥ ८ ॥ २ ॥ श्लोक ॥ मैंने बहुत से शास्त्र और स्मृतियों को सब प्रकार से देखकर उनकी खोज कर ली है। हे नानक, वे सब भी प्रभु के अमूल्य नाम के बराबर तक नहीं पहुँच पाते ॥ १ ॥ जब तपस्या, सब प्रकार के ज्ञान–ध्यान, षटदर्शन, स्मृतियाँ एवं उनके भाष्य, योगाभ्यास, धार्मिक कर्मकाण्ड एवं क्रियाएं विद्यमान हैं; व्यक्ति का सब कुछ त्याग कर वनों में भटकना, अनेकों प्रकार के काम करना, पुण्य–दान, होम और अनेकों रत्नों का दान करने का काम भी चलता रहता है; छोटे छोटे टुकड़ों में काटकर शरीर की आहुति देना, अनेकों प्रकार के व्रत और नियमों का पालन करना आदि राम–नाम के विचार के तुल्य कुछ भी नहीं है । हे नानक, गुरमुख बनकर एक बार तो केवल प्रभु–नाम का जाप ही करना चाहिए ॥ १ ॥ व्यक्ति पृथ्वी के नवखण्डों में बहुत समय तक चिरंजीव बनकर जीवित रहे, महा उदासीन होकर तपस्या करे, अग्नि में प्राणों की आहुति दे, सोना, घोड़े, हाथी, भूमि आदि का दान करे, अनेकों आसन और न्योली कर्म करे और जैन मार्ग की अत्यन्त विपम साधनाओं और संयमों को अपनाए, तिल तिल करके अपने शरीर को कटवा डाले तब भी व्यक्ति के अन्दर की अहंकार की मैल समाप्त नहीं होती । प्रभु–नाम के तुल्य कुछ भी नहीं है और हे नानक, गुरमुख बनकर नाम के जाप के माध्यम से ही परमगति प्राप्त होती है ॥ २ ॥ तीर्थ स्थानों पर प्राण छूटने पर भी मन की इच्छाएं और अहंकार भाव मन से दूर नहीं होता । व्यक्ति दिन–रात शारीरिक रूप से पवित्र बना रहने में लगा रहता है परन्तु उसके मन की मैल उसके शरीर से दूर नहीं होती । व्यक्ति इस देही की साधना अनेकों प्रकार से करता है परन्तु उसके मन से कभी भी विषय–विकार दूर नहीं होते । इस नाशवान शरीर को बेशक व्यक्ति जल से कितना भी धोए परन्तु कच्ची दीवार भला कैसे शुद्ध और स्वच्छ हो सकती है । मेरे मन, प्रभु–नाम की महिमा बहुत ऊँची है और हे नानक, प्रभु–नाम के माध्यम से अनेकों पतितों का उद्धार हो चुका है ॥ ३ ॥ बहुत चतुराइयों के फलस्वरूप नेकी

भउ बिआपै ॥ अनिक जतन करि त्रिसन ना ध्रापै ॥ भेख अनेक अगनि नही बुझै ॥ कोटि उपाव दरगह नही सिझै ॥ छूटसि नाही ऊभ पइआलि ॥ मोहि बिआपहि माइआ जालि ॥ अवर करतूति सगली जमु डानै ॥ गोविंद भजन बिनु तिलु नही मानै ॥ हरि का नामु जपत दुखु जाइ ॥ नानक बोलै सहजि सुभाइ ॥ ४ ॥ चारि पदारथ जे को मागै ॥ साध जना की सेवा लागै ॥ जे को आपुना दूखु मिटावै ॥ हरि हरि नामु रिदै सद गावै ॥ जे को अपुनी सोभा लोरै ॥ साधसंगि इह हउमै छोरै ॥ जे को जनम मरण ते डरै ॥ साध जना की सरनी परै ॥ जिसु जन कउ प्रभ दरस पिआसा ॥ नानक ता कै बलि बलि जासा ॥ ५ ॥ सगल पुरख महि पुरखु प्रधानु ॥ साधसंगि जा का मिटै अभिमानु ॥ आपस कउ जो जाणै नीचा ॥ सोऊ गनीऐ सभ ते ऊचा ॥ जा का मनु होइ सगल की रीना ॥ हरि हरि नामु तिनि घटि घटि चीना ॥ मन अपुने ते बुरा मिटाना ॥ पेखै सगल स्रिसटि साजना ॥ सूख दूख जन सम द्रिसटेता ॥ नानक पाप पुंन नही लेपा ॥ ६ ॥ निरधन कउ धनु तेरो नाउ ॥ निथावे कउ नाउ तेरा थाउ ॥ निमाने कउ प्रभ तेरो मानु ॥ सगल घटा कउ देवहु दानु ॥ करन करावनहार सुआमी ॥ सगल घटा के अंतरजामी ॥ अपनी गति मिति जानहु आपे ॥ आपन संगि आपि प्रभ राते ॥ तुम्हरी उसतति तुम ते होइ ॥ नानक अवरु न जानसि कोइ ॥ ७ ॥ सरब धरम महि स्रेसट धरमु ॥ हरि को नामु जपि निरमल करमु ॥ सगल क्रिआ महि ऊतम किरिआ ॥ साधसंगि दुरमति मलु हिरिआ ॥ सगल उदम महि उदमु भला ॥ हरि का नामु जपहु जीअ सदा ॥ सगल बानी महि अंम्रित बानी ॥ हरि को जसु सुनि रसन बखानी ॥ सगल थान ते ओहु ऊतम थानु ॥ नानक जिह घटि वसै हरि नामु ॥ ८ ॥ ३ ॥ सलोकु ॥ निरगुनीआर इआनिआ सो प्रभु सदा समालि ॥ जिनि कीआ तिसु चीति रखु नानक निबही नालि ॥ १ ॥ असटपदी ॥ रमईआ के गुन चेति परानी ॥ कवन मूल ते कवन द्रिसटानी ॥ जिनि तूं साजि सवारि सीगारिआ ॥ गरभ अगनि महि जिनहि उबारिआ ॥ बार बिवसथा तुझहि पिआरै दूध ॥ भरि जोबन भोजन सुख सूध ॥ बिरधि भइआ ऊपरि साक सैन ॥

भाग जाती है और यम का भय सताने लग जाता है । अनेकों यत्नों के बावजूद तृष्णाएँ शान्त नहीं होती । विभिन्न वेष धारण करने से भी मन की अग्नि बुझती नहीं और करोड़ों दिखावे के उपाय करने के फलस्वरूप प्राणी प्रभु के दरबार में स्वीकृत नहीं होता । आसमान और पाताल तक चले जाने पर भी ऐसा व्यक्ति मुक्त नहीं होता क्योंकि वह माया–मोह के जाल में फंसा हुआ होता है । आदमी के सारे अन्य कर्मों की सज़ा मौत देती है और प्रभु–सुमिरन के बिना मौत अन्य किसी भी कर्म की तिल भर भी परवाह नहीं करती । प्रभु–नाम सुमिरन से ही दुख दूर होता है और नानक सहज स्वाभाविक रूप से ही प्रभु–नाम का उच्चारण करता चला जाता है ॥ ४ ॥ यदि कोई चार पदार्थों (पुरुषार्थों) की कामना करता है तो उसे नेक व्यक्तियों की सेवा में लग जाना चाहिए । यदि कोई अपना दुख मिटाना चाहता है तो उसे हृदय में सदैव प्रभु–नाम का सुमिरन करते रहना चाहिए । यदि कोई अपना सम्मान चाहता है तो उसे भले लोगों की संगत में रहकर अहंकार का त्याग करना चाहिए । यदि कोई आवागमन के चक्र से भयभीत है तो उसे भद्र लोगों की शरण में आ जाना चाहिए । जिसे प्रभु–दर्शन की प्यास है नानक उस पर बार बार बलिहारी जाता है ॥५॥ समस्त व्यक्तियों में श्रेष्ठ वह है जिसका सत्संगत में रहते हुए अभिमान मिट जाता है । अपने को जो सबसे विनम्र एवं निचले स्तर पर मानता है, वास्तव में उसकी गिनती सबसे ऊँचे माने जाने वालों में होती है । जिसका मन सब की चरण–धूलि के समान विनम्र हो जाता है वही प्रत्येक हृदय में प्रभु नाम की पहचान करने वाला होता है । अपने मन से बुराई को मिटा देने वाला ही सारे संसार को मित्रवत् देखता है । दुख–सुख को समान रूप से देखने वाले सेवक को हे नानक, पाप–पुण्य प्रभावित नहीं करते ॥६॥ हे प्रभु, तेरा नाम ही निर्धन का धन है; निराश्रितों के लिए तेरा नाम ही आश्रय है । सम्मान–रहित व्यक्ति का सम्मान हे प्रभु, तू ही है और तू ही सबको दान देता रहता है । प्रभु ही करने–कराने वाला है और वह ही सबके दिलों की जानने वाला है । अपने ओर–छोर को तू स्वयं ही जानता है और हे प्रभु, अपने–आप के साथ तू स्वयं ही लीन बना हुआ है ॥ ७ ॥ हे प्रभु, तुम्हारी प्रशंसा केवल तुझसे ही हो सकती है और हे नानक, तुम्हारे यश को अन्य कोई नहीं जानता । सभी धर्मों में श्रेष्ठ धर्म यही है कि निर्मल कर्मों को करते हुए केवल प्रभु–नाम का जाप करते रहना चाहिए । समस्त क्रियाओं में सर्वोत्तम क्रिया यह है कि सद्संगत में दुर्मति की मैल को साफ किया जाए । समस्त उद्यमों में भला उपक्रम यही है कि हृदय से सदैव हरि–नाम का जाप किया जाए। समस्त वार्तालापों में अमृत रूपी वार्तालाप वही है जिसके माध्यम से प्रभु का यश सुना जाए और उसका बखान जीभ से किया जाए । सब स्थानों में वह स्थान उत्तम है, हे नानक, जहाँ प्रभु–नाम का निवास होता है ॥८॥३॥ श्लोक ॥ हे नासमझ और गुणविहीन प्राणी, सदैव उस प्रभु का सुमिरन कर जिसने तेरा सृजन किया है उसी को मन में स्मरण करता रह क्योंकि, हे नानक, वह प्रभु ही तेरे साथ निभेगा ॥१॥अष्टपदी॥ हे प्राणी, केवल उस सर्वव्यापक प्रभु के गुणों का सुमिरन कर और यह भी सोच कि तेरा मूल क्या है और वास्तव में तू क्या दृष्टिगत हो रहा है । जिसने तेरा सृजन किया, सँवारा, सिंगार किया, गर्भ की अग्नि से तेरा उद्धार किया उसी का सुमिरन कर । बाल्यावस्था में तुझे प्यार से दूध दिया है और भरी जवानी में तुझे भोजन और अन्य सुखों की बुद्धि दी है, वृद्धावस्था में तुझे संगियों के तौरपर

मुखि अपिआउ बैठ कउ दैन ॥ इहु निरगुनु गुनु कछू न बूझै ॥ बखसि लेहु तउ नानक सीझै ॥ १ ॥ जिह प्रसादि धर ऊपरि सुखि बसहि ॥ सुत भ्रात मीत बनिता संगि हसहि ॥ जिह प्रसादि पीवहि सीतल जला ॥ सुखदाई पवनु पावकु अमुला ॥ जिह प्रसादि भोगहि सभि रसा ॥ सगल समग्री संगि साथि बसा ॥ दीने हसत पाव करन नेत्र रसना ॥ तिसहि तिआगि अवर संगि रचना ॥ ऐसे दोख मूड़ अंध बिआपे ॥ नानक काढि लेहु प्रभ आपे ॥ २ ॥ आदि अंति जो राखनहारु ॥ तिस सिउ प्रीति न करै गवारु ॥ जा की सेवा नव निधि पावै ॥ ता सिउ मूड़ा मनु नही लावै ॥ जो ठाकुरु सद सदा हजूरे ॥ ता कउ अंधा जानत दूरे ॥ जा की टहल पावै दरगह मानु ॥ तिसहि बिसारै मुगधु अजानु ॥ सदा सदा इहु भूलनहारु ॥ नानक राखनहारु अपारु ॥ ३ ॥ रतनु तिआगि कउडी संगि रचै ॥ साचु छोडि झूठ संगि मचै ॥ जो छडना सु असथिरु करि मानै ॥ जो होवनु सो दूरि परानै ॥ छोडि जाइ तिस का स्रमु करै ॥ संगि सहाई तिसु परहरै ॥ चंदन लेपु उतारै धोइ ॥ गरधब प्रीति भसम संगि होइ ॥ अंध कूप महि पतित बिकराल ॥ नानक काढि लेहु प्रभ दइआल ॥ ४ ॥ करतूति पसू की मानस जाति ॥ लोक पचारा करै दिनु राति ॥ बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥ छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥ बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥ अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥ अंतरि अगनि बाहरि तनु सुआह ॥ गलि पाथर कैसे तरै अथाह ॥ जा कै अंतरि बसै प्रभु आपि ॥ नानक ते जन सहजि समाति ॥ ५ ॥ सुनि अंधा कैसे मारगु पावै ॥ करु गहि लेहु ओड़ि निबहावै ॥ कहा बुझारति बूझै डोरा ॥ निसि कहीऐ तउ समझै भोरा ॥ कहा बिसनपद गावै गुंग ॥ जतन करै तउ भी सुर भंग ॥ कह पिंगुल परबत पर भवन ॥ नही होत ऊहा उसु गवन ॥ करतार करुणा मै दीनु बेनती करै ॥ नानक तुमरी किरपा तरै ॥ ६ ॥ संगि सहाई सु आवै न चीति ॥ जो बैराई ता सिउ प्रीति ॥ बलूआ के ग्रिह भीतरि बसै ॥ अनद केल माइआ रंगि रसै ॥ द्रिड़ु करि मानै मनहि प्रतीति ॥ कालु न आवै मूड़े चीति ॥ बैर बिरोध काम क्रोध मोह ॥ झूठ बिकार महा लोभ

संबंधी और मित्र दिए है जो तुझे बैठे बिठाए को भोजन देते है; परन्तु यह गुणविहीन प्राणी किसी के उपकार को समझता नहीं। हे प्रभु, यदि तू क्षमा कर दे तो हे नानक, ऐसे प्राणी की भी मुक्ति हो सकती है ॥१॥ जिसकी कृपा से तू सुखपूर्वक धरती पर बस रहा है और पुत्र, भाई, मित्र, स्त्री आदि के साथ हँस खेल रहा है; जिसकी कृपा से तू शीतल जल पी रहा है और तुझे अमूल्य पवन और अग्नि मिली हुई है; जिसकी कृपा से तू सब रसों को भोग रहा है और समस्त आवश्यक साम्रगी के साथ तू रह रहा है; जिसने तुझे हाथ, पाँव, नेत्र और जीभ दी है तू उसे त्याग कर अन्य लोगों में लीन हो रहा है। ऐसे अनेकों दोष मूर्ख अन्धे प्राणी के साथ लगे हुए है; नानक का कथन है कि हे प्रभु, तू ऐसे मूर्ख की स्वयं ही रक्षा कर ॥ २ ॥ जो शुरू से अन्त तक सबका रक्षक है, मूर्ख व्यक्ति उससे प्रेम नहीं करता। जिसकी सेवा से नवनिधियाँ प्राप्त होती है; यह मूर्ख व्यक्ति उसके साथ अपना मन नहीं लगाता। जो स्वामी सदैव प्रत्यक्ष रूप से सामने बना रहता है यह अन्धा व्यक्ति उसको बहुत दूर समझता है। जिसकी सेवा से परलोक में मान–सम्मान मिलता है, यह अनजान एवं मूर्ख व्यक्ति उसको ही भुलाए बैठा है। यह जीव तो सदैव भूल करता है परन्तु हे नानक, इसकी रक्षा करने वाला वह अपरंपर परमात्मा ही है ॥ ३ ॥ यह जीव रत्न को त्याग कर कौड़ियों में लीन होता है और सत्य को छोड़कर यह झूठ में बना रहकर ही आनन्दित होता है। जिसे छोड़ना है उसे वह स्थायी मान रहा है और जो तत्काल हो सकता है वह इसे दूर लगता है। जिसको छोड़ना है उसके लिए दिन–रात मेहनत करता है और जिसने अन्त में सहायक होना है उसका त्याग करता है। चन्दन (अच्छे गुणों) के लेप को यह उसी प्रकार धोकर उतार देता है जैसे गधे का प्रेम केवल मिट्टी (राख) के साथ ही होता है। यह भीषण रूप से पतित जीव माया के अन्धे कुँए में पड़ा हुआ है और नानक का कथन है कि हे प्रभु, दया करके इसे निकाल ले ॥ ४ ॥ जीव है तो मनुष्य लेकिन इसके कर्म पशुओं वाले है। यह दिन–रात पाखण्डों मे लगा रहता है। बाहर तो इसका वेश धार्मिक है परन्तु इसके अन्तर्मन में माया की मैल भरी हुई है। यह चाहे जितना छुपाए इस तथ्य को छुपा नहीं सकता। बाहर से यह ज्ञान, ध्यान और स्नान का दिखावा करता है परन्तु इसके अन्तर्मन को तो लोभ रूपी कुत्ता पकड़े बैठा है। उसने तन पर तो राख लगा रखी है परन्तु उसके अन्दर तृष्णाओं की अग्नि जल रही है। गले में पत्थर बाँध कर भला वह गहरे समुद्र में कैसे तैर सकता है। जिनके मन में प्रभु स्वयं बसता है, हे नानक, ऐसे व्यक्ति उस सहज रूपी परमात्मा में लीन बने रहते है ॥ ५ ॥ केवल सुनने मात्र से ही अन्धा व्यक्ति कैसे मार्ग जान सकता है। उसका हाथ पकड़ लो तो वह ठिकाने पर पहुँच जाएगा। बहरा व्यक्ति भला पहेली को कैसे बूझ सकता है क्योंकि उसे रात के बारे में कहा जाता है तो वह भोर होने की बात समझता है। गूँगा व्यक्ति भला प्रभु के गीत कैसे गा सकता है क्योंकि यह प्रयत्न भी करे तब भी उसका स्वर टूट जाता है। लंगड़ा व्यक्ति पहाड़ पर कैसे चढ़ सकता है; उसका वहाँ जाना सम्भव नहीं होता। हे कर्ता करुणामय प्रभु, दीन नानक प्रार्थना करता है कि यदि तुम्हारी कृपा हो जाए तो वह भी पार उतर सकता है ॥६॥ व्यक्ति को सदैव सहायक बना रहने वाला प्रभु याद नहीं आता और जो इसका शत्रु है यह उसी के साथ प्रीति बनाए रखता है। यह रेत के घर में रहता है और मायावी रंगों और रसों में आनन्दित होकर खेलता रहता है। इसके मन में यह विश्वास है कि यह खेल–रंग स्थायी बने रहेंगे और इस मूर्ख को काल का ध्यान बिल्कुल ही नहीं आता। दुश्मनी, विरोध, काम, क्रोध, मोह, झूठ

ध्रोह ॥ इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥ नानक राखि लेहु आपन करि करम ॥ ७ ॥ तू ठाकुरु तुम पहि अरदासि ॥ जीउ पिंडु सभु तेरी रासि ॥ तुम मात पिता हम बारिक तेरे ॥ तुमरी क्रिपा महि सूख घनेरे ॥ कोइ न जानै तुमरा अंतु ॥ ऊचे ते ऊचा भगवंत ॥ सगल समग्री तुमरै सूत्रि धारी ॥ तुम ते होइ सु आगिआकारी ॥ तुमरी गति मिति तुम ही जानी ॥ नानक दास सदा कुरबानी ॥ ८ ॥ ४ ॥ सलोकु ॥ देनहारु प्रभ छोडि कै लागहि आन सुआइ ॥ नानक कहू न सीझई बिनु नावै पति जाइ ॥ १ ॥ असटपदी ॥ दस बसतू ले पाछै पावै ॥ एक बसतु कारनि बिखोटि गवावै ॥ एक भी न देइ दस भी हिरि लेइ ॥ तउ मूड़ा कहु कहा करेइ ॥ जिसु ठाकुर सिउ नाही चारा ॥ ता कउ कीजै सद नमसकारा ॥ जा कै मनि लागा प्रभु मीठा ॥ सरब सूख ताहू मनि वूठा ॥ जिसु जन अपना हुकमु मनाइआ ॥ सरब थोक नानक तिनि पाइआ ॥ १ ॥ अगनत साहु अपनी दे रासि ॥ खात पीत बरतै अनद उलासि ॥ अपुनी अमान कछु बहुरि साहु लेइ ॥ अगिआनी मनि रोसु करेइ ॥ अपनी परतीति आप ही खोवै ॥ बहुरि उस का बिस्वासु न होवै ॥ जिस की बसतु तिसु आगै राखै ॥ प्रभ की आगिआ मानै माथै ॥ उस ते चउगुन करै निहालु ॥ नानक साहिबु सदा दइआलु ॥ २ ॥ अनिक भाति माइआ के हेत ॥ सरपर होवत जानु अनेत ॥ बिरख की छाइआ सिउ रंगु लावै ॥ ओह बिनसै उहु मनि पछुतावै ॥ जो दीसै सो चालनहारु ॥ लपटि रहिओ तह अंध अंधारु ॥ बटाऊ सिउ जो लावै नेह ॥ ता कउ हाथि न आवै केह ॥ मन हरि के नाम की प्रीति सुखदाई ॥ करि किरपा नानक आपि लए लाई ॥ ३ ॥ मिथिआ तनु धनु कुटंबु सबाइआ ॥ मिथिआ हउमै ममता माइआ ॥ मिथिआ राज जोबन धन माल ॥ मिथिआ काम क्रोध बिकराल ॥ मिथिआ रथ हसती अस्व बसत्रा ॥ मिथिआ रंग संगि माइआ पेखि हसता ॥ मिथिआ ध्रोह मोह अभिमानु ॥ मिथिआ आपस ऊपरि करत गुमानु ॥ असथिरु भगति साध की सरन ॥ नानक जपि जपि जीवै हरि के चरन ॥ ४ ॥ मिथिआ स्रवन पर निंदा सुनहि ॥ मिथिआ हसत पर दरब कउ

विकार, लोभ, विश्वासघात करते हुए व्यक्ति ने अनेकों जन्म व्यतीत कर दिए है। हे प्रभु, अपनी कृपा कर और नानक की रक्षा कर ले ॥ ७ ॥ तुम स्वामी हो और मेरी अरदास तुम्हारे सामने ही है। हे प्रभु, मेरी आत्मा, देह सब तेरी ही दी हुई पूँजी है। तुम हमारे माता–पिता हो और हम तुम्हारे बच्चे हैं। तुम्हारी कृपा में ही अनेकों सुख विद्यमान है। तुम्हारे ओर–छोर को कोई नहीं जानता क्योंकि हे प्रभु तू ऊँचे से ऊँचा है। समस्त सृष्टि तुम्हारे सूत्र पर ही आधारित है। जो तुमसे पैदा हुआ है वह तेरी आज्ञा में है। तुम्हारी गति एवं परिमिति तुम ही जानते हो। तेरा दास नानक तो सदैव तुझ पर बलिहारी जाता है ॥ ८ ॥ ४ ॥ श्लोक ॥ जो उस देने वाले प्रभु को छोड़कर अन्यों के स्वाद में लीन होता है। हे नानक, वह कहीं भी सफल नहीं होता और उस नाम–विहीन का सम्मान जाता रहता है ॥ १ ॥ अष्टपदी॥ आदमी दस चीजें लेकर पीछे रख लेता है परन्तु मात्र एक और वस्तु के लिए वह अपना विश्वास खो लेता है। यदि वह एक भी न दे और दसों को भी छीन ले तब बताओ भला यह मूर्ख जीव क्या कर सकता है। जिस स्वामी के सम्मुख जोर नहीं चलता उसको सदैव प्रणाम ही करना चाहिए। जिसके मन को प्रभु मीठा लगता है सभी सुख उसके हृदय में आन बसते है। जिस सेवक से प्रभु ने अपना हुकुम मनवा लिया, हे नानक, ऐसा सेवक सभी वस्तुएं प्राप्त कर लेता है ॥ १ ॥ साहूकार रूपी प्रभु व्यक्ति को अपनी अनन्त पूँजी देता है जिसे वह प्रसन्नता पूर्वक खाता पीता और व्यवहार में लाता है। यदि अपनी अमानत में से ही वह साहूकार कुछ वापस ले लेता है तो यह अज्ञानी जीव मन में क्रोधित हो उठता है। इस प्रकार अपना विश्वास यह स्वयं ही खो देता है और पुनः साहूकार रूपी प्रभु को उसका विश्वास नहीं होता। यदि व्यक्ति जिसकी वस्तु है उसके सामने रखे और प्रभु की आज्ञा को माथे पर धारण करे तो वह स्वामी उसे चार गुना और अधिक तृप्त कर देगा क्योकि हे नानक, वह मालिक सदैव दयालु ही बना रहता है ॥ २ ॥ यह मान लेना चाहिए कि माया के अनेकों प्रकार के रूप अस्थायी है और ये शीघ्र ही नष्ट हो जाएगें। वृक्ष की छाया के साथ प्रीति लगाने वाला व्यक्ति उस छाया के विनष्ट हो जाने पर मन के अन्दर व्यर्थ ही अफसोस करता है। जो दृश्यमान है वह सभी चलायमान है फिर भी यह घोर अन्धा जीव उसी से लिपटा हुआ है। जो मुसाफिर के साथ प्रीति जोड़ता है उसको कुछ भी हाथ नहीं लगता। हे मन, प्रभु नाम का प्रेम ही सुखदायक है। हे नानक, प्रभु कृपा करके ही जीवों को अपने साथ लगाता है ॥ ३ ॥ यह तन, धन, कुटुम्ब आदि सभी लोग नाशवान हैं, अंहकार, ममत्व और माया आदि सभी नाशवान हैं। राज, यौवन, धन, माल, काम और भयानक क्रोध सभी नाशवान हैं; रथ, हाथी, घोड़े, वस्त्र आदि भी मिथ्या हैं। माया के साथ लीन बना रह कर आनन्दित होना भी मिथ्या है। विश्वासघात, मोह, अभिमान और अपने पर गर्व करना आदि झूठे हैं। प्रभु की भक्ति और भले पुरुषों की शरण ही केवल स्थिर बने रहने वाले हैं और प्रभु के चरणों का सुमिरन कर कर के ही नानक जीवित बना हुआ है ॥ ४ ॥ वे कान व्यर्थ हैं जो परायी निन्दा सुनते हैं और वे हाथ भी व्यर्थ है जो दूसरे के धन का अपहरण करते हैं।

हिरहि ॥ मिथिआ नेत्र पेखत पर त्रिअ रूपाद ॥ मिथिआ रसना भोजन अन स्वाद ॥ मिथिआ चरन पर बिकार कउ धावहि ॥ मिथिआ मन पर लोभ लुभावहि ॥ मिथिआ तन नही परउपकारा ॥ मिथिआ बासु लेत बिकारा ॥ बिनु बूझे मिथिआ सभ भए ॥ सफल देह नानक हरि हरि नाम लए ॥ ५ ॥ बिरथी साकत की आरजा ॥ साच बिना कह होवत सूचा ॥ बिरथा नाम बिना तनु अंध ॥ मुखि आवत ता कै दुरगंध ॥ बिनु सिमरन दिनु रैनि ब्रिथा बिहाइ ॥ मेघ बिना जिउ खेती जाइ ॥ गोबिद भजन बिनु ब्रिथे सभ काम ॥ जिउ किरपन के निरारथ दाम ॥ धंनि धंनि ते जन जिह घटि बसिओ हरि नाउ ॥ नानक ता कै बलि बलि जाउ ॥ ६ ॥ रहत अवर कछु अवर कमावत ॥ मनि नही प्रीति मुखहु गंढ लावत ॥ जाननहार प्रभू परबीन ॥ बाहरि भेख न काहू भीन ॥ अवर उपदेसै आपि न करै ॥ आवत जावत जनमै मरै ॥ जिस कै अंतरि बसै निरंकारु ॥ तिस की सीख तरै संसारु ॥ जो तुम भाने तिन प्रभु जाता ॥ नानक उन जन चरन पराता ॥ ७ ॥ करउ बेनती पारब्रहमु सभु जानै ॥ अपना कीआ आपहि मानै ॥ आपहि आप आपि करत निबेरा ॥ किसै दूरि जनावत किसै बुझावत नेरा ॥ उपाव सिआनप सगल ते रहत ॥ सभु कछु जानै आतम की रहत ॥ जिसु भावै तिसु लए लड़ि लाइ ॥ थान थनंतरि रहिआ समाइ ॥ सो सेवकु जिसु किरपा करी ॥ निमख निमख जपि नानक हरी ॥ ८ ॥ ५ ॥ सलोकु ॥ काम क्रोध अरु लोभ मोह बिनसि जाइ अहंमेव ॥ नानक प्रभ सरणागती करि प्रसादु गुरदेव ॥ १ ॥ असटपदी ॥ जिह प्रसादि छतीह अंम्रित खाहि ॥ तिसु ठाकुर कउ रखु मन माहि ॥ जिह प्रसादि सुगंधत तनि लावहि ॥ तिस कउ सिमरत परम गति पावहि ॥ जिह प्रसादि बसहि सुख मंदरि ॥ तिसहि धिआइ सदा मन अंदरि ॥ जिह प्रसादि ग्रिह संगि सुख बसना ॥ आठ पहर सिमरहु तिसु रसना ॥ जिह प्रसादि रंग रस भोग ॥ नानक सदा धिआईऐ धिआवन जोग ॥ १ ॥ जिह प्रसादि पाट पटंबर हढावहि ॥ तिसहि तिआगि कत अवर लुभावहि ॥ जिह प्रसादि सुखि सेज सोईजै ॥ मन आठ पहर ता का जसु

वे नेत्र व्यर्थ हैं जो परायी स्त्री के रूप सौन्दर्य को ताकते रहते हैं और वह जीभ भी व्यर्थ है जो अन्य स्वादों वाले भोजन को लेती रहती है । दूसरे का बुरा करने के लिए चलने वाले पैर भी व्यर्थ हैं और वह मन भी व्यर्थ है जो सदैव लोभ करते हुए ललचाता रहता है । जो परोपकार नहीं करता वह तन भी व्यर्थ है और वह नाक भी व्यर्थ है जो विकारों की गन्ध लेता रहता है । परमात्मा को बूझने के अतिरिक्त सभी कार्य व्यर्थ हैं और हे नानक वही शरीर धन्य है जो प्रभु के नाम का सुमिरन करता रहता है ॥ ५ ॥ प्रभु से टूटे हुए व्यक्ति की सारी आयु ही व्यर्थ है । सत्य के बिना भला कोई कैसे पवित्र हो सकता है । प्रभु–नाम के बिना यह अन्धा तन भी व्यर्थ है और ऐसे तन के मुख से विकारों की दुर्गन्ध आती रहती है । सुमिरन से विहीन दिन–रात वैसे ही व्यर्थ गुजर जाते हैं जैसे वर्षा के बिना खेती निष्फल हो जाती है । प्रभु सुमिरन के बिना सभी कार्य वैसे ही व्यर्थ हैं जैसे कंजूस व्यक्ति की धन–सम्पदा भी व्यर्थ हो जाती है । वे व्यक्ति धन्य है जिनके हृदय में हरि–नाम बसता है । नानक उन पर बार बार बलिहारी जाता है ॥ ६ ॥ व्यक्ति रहता तो कुछ और ढंग से है और उसके कार्य कलाप बिल्कुल ही कुछ और प्रकार के होते हैं । उसके मन में वास्तविक प्रेम नहीं होता परन्तु वह मुँह से शेखी बघारता रहता है । वह प्रवीण प्रभु सब कुछ जानता है और किसी के भी बाहरी दिखावे से वह प्रसन्न नहीं होता । जो अन्यों को उपदेश देता है परन्तु स्वयं उसके अनुरूप कार्य नहीं करता वह आवागमन में पड़ा मरता–जन्मता रहता है । जिसके अन्तर्मन में वह निराकर प्रभु बसता है उसकी शिक्षा के फलस्वरूप सारा संसार पार उतर जाता है । हे प्रभु, जो तुझे अच्छे लगते हैं केवल वे ही तुझे जान पाते हैं। नानक उन सेवकों के चरणों पर गिरा हुआ है ॥ ७ ॥ उस परमात्मा के आगे प्रार्थना करो जो सब कुछ जानता है। अपनी रचना को वह स्वयं ही सम्मान देता है । वह स्वयं ही सभी फैसले करता है और किसी को अपने आप को दूर जनवाता है और किसी को अपने पास ही अपना आप दिखवा देता है । वह समस्त उपायों और चतुराईयों से दूर है। वह व्यक्ति की आत्मा की मर्यादा को भली प्रकार जानता है । वह जिसे चाहता है उसे अपने आँचल से लगा लेता है और वह प्रभु सभी स्थान और स्थानान्तरों में समाया हुआ है । जिस पर प्रभु कृपा करता है वही उसका सेवक माना जाता है । हे नानक, प्रत्येक क्षण उस प्रभु का सुमिरन कर ॥ ८ ॥ ५ ॥ श्लोक ॥ काम, क्रोध, लोभ, मोह एवं मेरा अंहकार आदि विनष्ट हो जाए ॥ नानक प्रभु का शरणागत बन गया है इसीलिए हे गुरुदेव प्रभु मेरे पर कृपा कर ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ जिसकी कृपा से तू छत्तीस प्रकार के अमृत रसवाले भोजन खाता है उस प्रभु को अपने हृदय में धारण करके रख । जिसकी कृपा से तू तन में सुगन्धित पदार्थों को लगाता है उस प्रभु का सुमिरन कर, तुझे परमगति प्राप्त हो जाएगी । जिसकी कृपा से तू सुखदायक महलों में बसता है, हे जीव, सदैव, मन में उसका ध्यान बनाए रख । जिसकी कृपा से तू घर में सुखपूर्वक बसता है आठों प्रहर अपनी जीभ से उसका सुमिरन कर । जिसकी कृपा से सब प्रकार के रंगों रसों का उपभोग तू करता है हे नानक, ऐसे प्रभु का सदैव सुमिरन करना चाहिए जो सुमिरन के योग्य है ॥ १ ॥ जिसकी कृपा से तू रेशम और रेशम के वस्त्र पहनता है उसे छोड़कर तू दूसरों की तरफ क्यों ललचाता है । जिसकी कृपा से सुखपूर्वक शय्या पर तू सोता है हे मेरे मन, आठों प्रहर उसका गुणानुवाद कर ।

गावीजै ॥ जिह प्रसादि तुझु सभु कोऊ मानै ॥ मुखि ता को जसु रसन बखानै ॥ जिह प्रसादि तेरो रहता धरमु ॥ मन सदा धिआइ केवल पारब्रहमु ॥ प्रभ जी जपत दरगह मानु पावहि ॥ नानक पति सेती घरि जावहि ॥ २ ॥ जिह प्रसादि आरोग कंचन देही ॥ लिव लावहु तिसु राम सनेही ॥ जिह प्रसादि तेरा ओला रहत ॥ मन सुखु पावहि हरि हरि जसु कहत ॥ जिह प्रसादि तेरे सगल छिद्र ढाके ॥ मन सरनी परु ठाकुर प्रभ ता कै ॥ जिह प्रसादि तुझु को न पहूचै ॥ मन सासि सासि सिमरहु प्रभ ऊचे ॥ जिह प्रसादि पाई द्रुलभ देह ॥ नानक ता की भगति करेह ॥ ३ ॥ जिह प्रसादि आभूखन पहिरीजै ॥ मन तिसु सिमरत किउ आलसु कीजै ॥ जिह प्रसादि अस्व हसति असवारी ॥ मन तिसु प्रभ कउ कबहू न बिसारी ॥ जिह प्रसादि बाग मिलख धना ॥ राखु परोइ प्रभु अपुने मना ॥ जिनि तेरी मन बनत बनाई ॥ ऊठत बैठत सद तिसहि धिआई ॥ तिसहि धिआइ जो एक अलखै ॥ ईहा ऊहा नानक तेरी रखै ॥ ४ ॥ जिह प्रसादि करहि पुंन बहु दान ॥ मन आठ पहर करि तिस का धिआन ॥ जिह प्रसादि तू आचार बिउहारी ॥ तिसु प्रभ कउ सासि सासि चितारी ॥ जिह प्रसादि तेरा सुंदर रूपु ॥ सो प्रभु सिमरहु सदा अनूपु ॥ जिह प्रसादि तेरी नीकी जाति ॥ सो प्रभु सिमरि सदा दिन राति ॥ जिह प्रसादि तेरी पति रहै ॥ गुर प्रसादि नानक जसु कहै ॥ ५ ॥ जिह प्रसादि सुनहि करन नाद ॥ जिह प्रसादि पेखहि बिसमाद ॥ जिह प्रसादि बोलहि अंम्रित रसना ॥ जिह प्रसादि सुखि सहजे बसना ॥ जिह प्रसादि हसत कर चलहि ॥ जिह प्रसादि संपूरन फलहि ॥ जिह प्रसादि परम गति पावहि ॥ जिह प्रसादि सुखि सहजि समावहि ॥ ऐसा प्रभु तिआगि अवर कत लागहु ॥ गुर प्रसादि नानक मनि जागहु ॥ ६ ॥ जिह प्रसादि तूं प्रगटु संसारि ॥ तिसु प्रभ कउ मूलि न मनहु बिसारि ॥ जिह प्रसादि तेरा परतापु ॥ रे मन मूड़ तू ता कउ जापु ॥ जिह प्रसादि तेरे कारज पूरे ॥ तिसहि जानु मन सदा हजूरे ॥ जिह प्रसादि तूं पावहि साचु ॥ रे मन मेरे तूं ता सिउ राचु ॥ जिह प्रसादि सभ की गति होइ ॥ नानक जापु जपै जपु सोइ ॥ ७ ॥ आपि जपाए जपै सो नाउ ॥ आपि गावाए सु हरि गुन गाउ ॥

जिसकी कृपा से तुझे सभी मानते हैं तू अपने मुख और जीभ से उसके यश का उच्चारण कर । हे मन, तू केवल उस परब्रह्म का सुमिरन कर जिसकी कृपा से तू अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करता है । हे नानक, प्रभु का सुमिरन करके तुझे उसके दरबार में सम्मान मिलेगा और तू सम्मान सहित अपने मूल घर में निवास करेगा ॥ २ ॥ अपनी सुरति को उस प्यारे प्रभु में लगा जिसकी कृपा से तुझे कंचन जैसा निरोग शरीर प्राप्त हुआ है । हे मन, तू प्रभु के गुणानुवाद में सुख पाएगा क्योंकि उसकी कृपा से तेरी इज्जत बनी हुई है । हे मन, उस प्रभु की शरण में आ जा जिसकी कृपा से तेरे समस्त पाप ढके हुए हैं । जिसकी कृपा से, हे मन, तुझे कोई भी छेड़ने वाला नहीं है, तुम प्रत्येक श्वास् के साथ उस ऊँचे प्रभु का सुमिरन कर । हे नानक, तू उस प्रभु की भक्ति कर जिसकी कृपा से तुझे दुर्लभ देह प्राप्त हुई है ॥ ३ ॥ हे मन, तू उसका सुमिरन करने में आलस्य क्यों करता है जिसकी कृपा से तू आभूषण आदि धारण किए रहता है । हे मन, उस प्रभु को कभी मत भूल जिसकी कृपा से तू हाथी, घोड़ों पर सवारी करता है । हे प्राणी, उस प्रभु को अपने मन में धारण किए रह जिसके प्रसाद् स्वरूप तेरे पास बाग, सम्पति एवं धन है । हे मन, जिसने तुझे यह आकार दिया है उसे उठते–बैठते सदैव याद रख । हे नानक, जो इस लोक और परलोक में तेरी इज़्ज़त बचाने वाला है उस एक अदृष्ट प्रभु का सुमिरन कर ॥ ४ ॥ हे मन, आठों प्रहर उसमें ध्यान लगा जिसकी कृपा से तू अनेकों दान एवं पुण्य करता है । उस प्रभु को प्रत्येक श्वास् के साथ याद कर जिसकी कृपा से तू अच्छे आचरण वाला व्यवहार करता है । उस अनुपम प्रभु का सदैव सुमिरन करो जिसकी कृपा से तुझे सुन्दर रूप प्राप्त हुआ है । उस प्रभु का दिन–रात सुमिरन करो जिसकी कृपा से तेरी (तथाकथित) ऊँची जाति है । हे नानक, गुरु की कृपा से उसकी कीर्ति का उच्चारण करो जिसके प्रसाद स्वरूप तेरा सम्मान बचा रहता है ॥ ५ ॥ जिसकी कृपा से तेरे कान नाद को सुनते हैं, जिसकी कृपा से तू आश्चर्य विभोर होकर देखता है, जिसकी कृपा से तेरी जीभ अमृत वचनों का उच्चारण करती है, जिसकी कृपा से तू सुखपूर्वक सहज भाव में निवास करता है, जिसकी कृपा से तेरे हाथ पाँव चलते हैं, जिसकी कृपा से तू पूर्ण रूप से फलता–फूलता है, जिसकी कृपा से तू परमगति प्राप्त करता है, जिसकी कृपा से तू सुखपूर्वक सहजभाव में लीन हो जाता है, ऐसे प्रभु को त्याग कर तू किसी अन्य में क्यों मन लगाता है । हे नानक, गुरु की कृपा के फलस्वरूप मन को प्रभु की ओर से चेतन बनाओ ॥ ६ ॥ उस प्रभु को मन से तनिक भी मत भुलाओ जिसकी कृपा से तुम संसार में प्रसिद्ध हो । हे मूर्ख मन तू उसका जाप कर जिसकी कृपा से तेरा तेज एवं प्रताप है । हे मन, उस प्रभु को सदैव प्रत्यक्ष समझ जिसकी कृपा से तेरे सभी कार्य पूर्ण होते हैं । जिसकी कृपा से तुझे सत्य प्राप्त होता है, हे मेरे मन, तू उसी में लीन हो जा । नानक उसके नाम का लगातार जाप करता है जिसकी कृपा से सभी पार उतर जाते है ॥ ७ ॥ प्रभु जिससे जपाता है वही नाम जपता है और जिससे हरि गुण का गायन कराता है केवल वही गाता है।

प्रभ किरपा ते होइ प्रगासु ॥ प्रभू दइआ ते कमल बिगासु ॥ प्रभ सुप्रसंन बसै मनि सोइ ॥ प्रभ दइआ ते मति ऊतम होइ ॥ सरब निधान प्रभ तेरी मइआ ॥ आपहु कछू न किनहू लइआ ॥ जितु जितु लावहु तितु लगहि हरि नाथ ॥ नानक इन कै कछू न हाथ ॥ ८ ॥ ६ ॥ सलोकु ॥ अगम अगाधि पारब्रहमु सोइ ॥ जो जो कहै सु मुकता होइ ॥ सुनि मीता नानकु बिनवंता ॥ साध जना की अचरज कथा ॥ १ ॥ असटपदी ॥ साध कै संगि मुख ऊजल होत ॥ साधसंगि मलु सगली खोत ॥ साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥ साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ॥ साध कै संगि बुझै प्रभु नेरा ॥ साधसंगि सभु होत निबेरा ॥ साध कै संगि पाए नाम रतनु ॥ साध कै संगि एक ऊपरि जतनु ॥ साध की महिमा बरनै कउनु प्रानी ॥ नानक साध की सोभा प्रभ माहि समानी ॥ १ ॥ साध कै संगि अगोचरु मिलै ॥ साध कै संगि सदा परफुलै ॥ साध कै संगि आवहि बसि पंचा ॥ साधसंगि अंम्रित रसु भुंचा ॥ साधसंगि होइ सभ की रेन ॥ साध कै संगि मनोहर बैन ॥ साध कै संगि न कतहूं धावै ॥ साधसंगि असथिति मनु पावै ॥ साध कै संगि माइआ ते भिंन ॥ साधसंगि नानक प्रभ सुप्रसंन ॥ २ ॥ साधसंगि दुसमन सभि मीत ॥ साधू कै संगि महा पुनीत ॥ साधसंगि किस सिउ नही बैरु ॥ साध कै संगि न बीगा पैरु ॥ साध कै संगि नाही को मंदा ॥ साधसंगि जाने परमानंदा ॥ साध कै संगि नाही हउ तापु ॥ साध कै संगि तजै सभु आपु ॥ आपे जानै साध बडाई ॥ नानक साध प्रभू बनि आई ॥ ३ ॥ साध कै संगि न कबहू धावै ॥ साध कै संगि सदा सुखु पावै ॥ साधसंगि बसतु अगोचर लहै ॥ साधू कै संगि अजरु सहै ॥ साध कै संगि बसै थानि ऊचै ॥ साधू कै संगि महलि पहूचै ॥ साध कै संगि द्रिड़ै सभि धरम ॥ साध कै संगि केवल पारब्रहम ॥ साध कै संगि पाए नाम निधान ॥ नानक साधू कै कुरबान ॥ ४ ॥ साध कै संगि सभ कुल उधारै ॥ साधसंगि साजन मीत कुटंब निसतारै ॥ साधू कै संगि सो धनु पावै ॥ जिसु धन ते सभु को वरसावै ॥ साधसंगि धरम राइ करे सेवा ॥ साध कै संगि सोभा सुरदेवा ॥ साधू कै संगि पाप पलाइन ॥ साधसंगि अंम्रित गुन गाइन ॥ साध कै संगि स्रब थान गंमि ॥

प्रभु की कृपा से ही ज्ञान का प्रकाश होता है और प्रभु–दया से ही हृदय–कमल खिलता है । प्रभु प्रसन्न होता है तो व्यक्ति के मन में आन बसता है और प्रभु–दया से ही उत्तम पदवी प्राप्त होती है । हे प्रभु, तेरी कृपा में ही सभी खजाने हैं परन्तु अपने आप कोई भी कुछ नहीं ले सका । जहाँ तू जीवों को लगाता है, हे नाथ प्रभु वहीं वे लगते हैं । नानक का कथन है कि इनके हाथ में कुछ भी नहीं ॥ ८ ॥ ६ ॥ श्लोक ॥ वह परब्रहम प्रभु अगम्य एवं अथाह है । जो भी उसका सुमिरन करता है मुक्त हो जाता है । हे मित्र, नानक प्रार्थना करता है कि अब प्रभु के सेवक साधुजनों की कौतुक कथा को सुनो ॥ १ ॥ साधसंगत में मुख उज्जवल हो जाता है और समस्त प्रकार की मैल उतर जाती है । साधसंगत में अभिमान मिट जाता है और पवित्र ज्ञान प्रकट हो जाता है । साधसंगत में प्रभु पास ही में अनुभव होता है और व्यक्ति के सभी झंझट निपट जाते हैं । साधसंगत में नाम रत्न प्राप्त होता है और साधसंगत में रहकर व्यक्ति केवल एक परमात्मा की ओर ही ध्यान लगाता है । साधु पुरुषों की महिमा का वर्णन कौन कर सकता है और हे नानक, साधु का बड़प्पन तो प्रभु में ही लीन बना रहता है ॥ १ ॥ साधसंगत में अदृष्ट प्रभु से मिलाप हो जाता है और व्यक्ति सदैव प्रफुल्लित बना रहता है । साधसंगत में पाचों विकार वश में आ जाते हैं और व्यक्ति अमृत रस के आनन्द का उपभोग करता है । साधसंगत में व्यक्ति सबकी चरण–धूलि बन जाता है और उसकी वाणी मनोहारी हो जाती है । साधसंगत में व्यक्ति का मन भटकता नहीं और उसे स्थिरता प्राप्त हो जाती है । साधसंगत में माया से अलगाव प्राप्त होता है और हे नानक, साधसंगत में ही प्रभु प्रसन्न होता है ॥ २ ॥ साधसंगत के फलस्वरूप सभी शत्रु मित्र हो जाते हैं और साधु व्यक्तियों के साथ में व्यक्ति परम पुनीत हो जाता है साधसंगत में किसी से शत्रुता नहीं रहती और व्यक्ति का कोई भी कदम टेढ़ा नहीं उठता । साधसंगत में कोई बुरा नहीं लगता और साधसंगत के माध्यम से ही व्यक्ति परमानन्द को जान जाता है । साधसंगत में ही अहंकार का ज्वर उतर जाता है और व्यक्ति अपने अहम का त्याग कर देता है । साधु पुरुषों के बड़प्पन को वह प्रभु स्वयं ही जानता है और हे नानक, भले व्यक्ति और प्रभु की सदा से ही बनती आयी है ॥ ३ ॥ साधु पुरुषों की संगत में व्यक्ति इधर–उधर नहीं भटकता और सदैव सुख प्राप्त करता है । साधसंगत में व्यक्ति अदृष्ट पदार्थों को पा जाता है और साधसंगत में ही व्यक्ति को असह्य को सहने की शक्ति प्राप्त होती है । साधसंगत में व्यक्ति उच्च स्थान में निवास बनाता है और प्रभु के स्थान तक जा पहुँचता है । साधसंगत में व्यक्ति कर्त्तव्य कर्म में भी दृढ़ हो जाता है और केवल एक परब्रह्म परमात्मा का ही सुमिरन करता है । साधसंगत में व्यक्ति नाम का खज़ाना पा जाता है और यह नानक ऐसे साधु पुरुष पर बलिहारी जाता है ॥ ४ ॥ साधसंगत में व्यक्ति के कुल का उद्धार हो जाता है और इतना ही नहीं, सज्जन, मित्र और कुटुम्ब आदि भी पार उतर जाते हैं साधसंगत में वह धन प्राप्त होता है जिस धन से हर कोई लाभ उठाता है । साधुसंगत वाले व्यक्ति की धर्मराज भी सेवा करता है और ऐसे व्यक्ति की शोभा का देवता गण भी गायन करते हैं । साधसंगत में पाप भाग खड़े होते हैं और व्यक्ति अमृतमय गुणों का गायन करता है । साधसंगत के माध्यम से व्यक्ति सब स्थानों पर गमन क़रने योग्य हो जाता है और

नानक साध के संगि सफल जनंम ॥ ५ ॥ साध कै संगि नही कछु घाल ॥ दरसनु भेटत होत निहाल ॥ साध कै संगि कलूखत हरै ॥ साध कै संगि नरक परहरै ॥ साध कै संगि ईहा ऊहा सुहेला ॥ साधसंगि बिछुरत हरि मेला ॥ जो इछै सोई फलु पावै ॥ साध कै संगि न बिरथा जावै ॥ पारब्रहमु साध रिद बसै ॥ नानक उधरै साध सुनि रसै ॥ ६ ॥ साध कै संगि सुनउ हरि नाउ ॥ साधसंगि हरि के गुन गाउ ॥ साध कै संगि न मन ते बिसरै ॥ साधसंगि सरपर निसतरै ॥ साध कै संगि लगै प्रभु मीठा ॥ साधू कै संगि घटि घटि डीठा ॥ साधसंगि भए आगिआकारी ॥ साधसंगि गति भई हमारी ॥ साध कै संगि मिटे सभि रोग ॥ नानक साध भेटे संजोग ॥ ७ ॥ साध की महिमा बेद न जानहि ॥ जेता सुनहि तेता बखिआनहि ॥ साध की उपमा तिहु गुण ते दूरि ॥ साध की उपमा रही भरपूरि ॥ साध की सोभा का नाही अंत ॥ साध की सोभा सदा बेअंत ॥ साध की सोभा ऊच ते ऊची ॥ साध की सोभा मूच ते मूची ॥ साध की सोभा साध बनि आई ॥ नानक साध प्रभ भेदु न भाई ॥ ८ ॥ ७ ॥ सलोकु ॥ मनि साचा मुखि साचा सोइ ॥ अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ ॥ नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ ॥ १ ॥ असटपदी ॥ ब्रहम गिआनी सदा निरलेप ॥ जैसे जल महि कमल अलेप ॥ ब्रहम गिआनी सदा निरदोख ॥ जैसे सूरु सरब कउ सोख ॥ ब्रहम गिआनी कै द्रिसटि समानि ॥ जैसे राज रंक कउ लागै तुलि पवान ॥ ब्रहम गिआनी कै धीरजु एक ॥ जिउ बसुधा कोऊ खोदै कोऊ चंदन लेप ॥ ब्रहम गिआनी का इहै गुनाउ ॥ नानक जिउ पावक का सहज सुभाउ ॥ १ ॥ ब्रहम गिआनी निरमल ते निरमला ॥ जैसे मैलु न लागै जला ॥ ब्रहम गिआनी कै मनि होइ प्रगासु ॥ जैसे धर ऊपरि आकासु ॥ ब्रहम गिआनी कै मित्र सत्रु समानि ॥ ब्रहम गिआनी कै नाही अभिमान ॥ ब्रहम गिआनी ऊच ते ऊचा ॥ मनि अपनै है सभ ते नीचा ॥ ब्रहम गिआनी से जन भए ॥ नानक जिन प्रभु आपि करेइ ॥ २ ॥ ब्रहम गिआनी सगल की रीना ॥ आतम रसु ब्रहम गिआनी चीना ॥ ब्रहम गिआनी की सभ ऊपरि मइआ ॥ ब्रहम गिआनी ते कछु बुरा न भइआ ॥ ब्रहम गिआनी सदा समदरसी ॥

हे नानक, साधसंगत में बने रहने वाले व्यक्ति का जन्म सफल हो जाता है ॥ ५ ॥ साधसंगत वाला व्यक्ति किसी मुसीबत में नहीं फँसता । ऐसे व्यक्ति का दर्शन करने से सभी प्रसन्न हो उठते है । साधसंगत सब कंलकों को धो देती है और नर्क दूर भाग जाता है । साधसंगत वाला व्यक्ति इस लोक और उस लोक में सुखी बना रहता है और साधसंगत में ही प्रभु से बिछुड़े हुए लोगों का प्रभु से मिलाप हो जाता है । साधसंगत व्यर्थ नहीं जाती और व्यक्ति यहाँ पर मनोवांछित फल पा लेता है । परमात्मा साधु पुरुषों के हृदय में बसता है और साधु की जीभ से प्रभु–नाम सुनकर, हे नानक, जीवों का उद्धार हो जाता है ॥ ६ ॥ साधसंगत में प्रभु–नाम को सुनों और हरि के गुणों का गायन करो। साधसंगत में प्रभु मन से विस्मृत नहीं होता और निश्चित रूप से व्यक्ति का उद्धार हो जाता है । साधसंगत में प्रभु प्यारा लगने लग जाता है और वह हर हृदय में दिखाई देने लग जाता है । साधसंगत में व्यक्ति प्रभु के हुकुम को मानने वाला बन जाता है और साधसंगत में ही मुझे परमगति मिल गयी है । साधसंगत में ही सभी रोग मिट जाते हैं और हे नानक, अच्छे भाग्य से ही साधु व्यक्तियों से भेंट होती है ॥ ७ ॥ साधना वाले व्यक्तियों की महिमा वेद भी नही जानते । वे उनका केवल उतना ही बखान करते है जितना उन्होने सुन रखा है । साधु की महिमा तीनों गुणों (सत, रज, तम) से परे है । साधु पुरुषों की महिमा सब ओर व्याप्त रहती है । साधु की महिमा सदैव अनन्त रही है । साधु पुरुषों की शोभा ऊँची से भी ऊँची रही है और उनकी महिमा महान से भी महान रही है । साधु की शोभा तो केवल साधु को ही शोभा देती है । हे नानक, साधु और प्रभु में कोई भी भेद नहीं होता ॥ ८ ॥ ७ ॥ श्लोक। जिसके हृदय एवं मुख में प्रभु का सच्चा नाम ही है और जो केवल एक प्रभु के अतिरिक्त किसी अन्य को नहीं देखता हे नानक, यही सब लक्षण ब्रह्मज्ञानी के होते है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्मज्ञानी सदा वैसे ही निर्लेप बना रहता है जैसे जल में कमल अलिप्त रहता है । ब्रह्मज्ञानी सदैव ही पक्षपात से विहीन होता है जैसे सूर्य अच्छे–बुरे सब स्थानों से जल को सोखता है (और वर्षा के रूप में शुद्ध जल सबके लिए प्रदान करता है) । ब्रह्मज्ञानी समदृष्टि वाला वैसा ही होता है जैसे पवन, राजा और रंक को एक जैसी प्राप्त होती है । ब्रह्मज्ञानी वैसा ही धैर्यवान होता है जैसी धरती होती है जिसको कोई खोदता है और कोई उस पर चन्दन लीपता है (परन्तु वह दोनों को समान भाव से सहन करती है) हे नानक, जैसे अग्नि का सबको निर्मल बना देने का सहज स्वभाव है, वैसे ही गुण ब्रह्मज्ञानी के हृदय में होते हैं ॥१॥ ब्रह्मज्ञानी वैसा ही निर्मल से भी निर्मल है जैसे जल को कभी मैल नहीं लगती । धरती पर आकाश की तरह फैला हुआ ब्रह्मज्ञानी का मन प्रकाशमान बना रहता है । मित्र और शत्रु ब्रह्मज्ञानी के लिए एक समान ही होते है और ब्रह्मज्ञानी को किसी प्रकार का भी अभिमान नहीं होता । ब्रह्मज्ञानी सबसे ऊँचा होता है परन्तु वह अपने मन में स्वयं को सबसे विनम्र मानता है । हे नानक, जिन पर प्रभु अपनी कृपा करता है वे सेवक ही ब्रह्मज्ञानी बन पाते है ॥ २॥ ब्रह्मज्ञानी सबकी चरण–धूलि होता है और उसने आत्म–रस की पहचान कर ली होती है । ब्रह्मज्ञानी सब पर कृपालु होता है और उससे कभी भी कुछ भी बुरा नहीं होता । ब्रह्मज्ञानी सदैव समदर्शी बना रहता है और ब्रह्मज्ञानी की

ब्रहम गिआनी की द्रिसटि अंम्रितु बरसी ॥ ब्रहम गिआनी बंधन ते मुकता ॥ ब्रहम गिआनी की निरमल जुगता ॥ ब्रहम गिआनी का भोजनु गिआन ॥ नानक ब्रहम गिआनी का ब्रहम धिआनु ॥ ३ ॥ ब्रहम गिआनी एक ऊपरि आस ॥ ब्रहम गिआनी का नही बिनास ॥ ब्रहम गिआनी कै गरीबी समाहा ॥ ब्रहम गिआनी परउपकार उमाहा ॥ ब्रहम गिआनी कै नाही धंधा ॥ ब्रहम गिआनी ले धावतु बंधा ॥ ब्रहम गिआनी कै होइ सु भला ॥ ब्रहम गिआनी सुफल फला ॥ ब्रहम गिआनी संगि सगल उधारु ॥ नानक ब्रहम गिआनी जपै सगल संसारु ॥ ४ ॥ ब्रहम गिआनी कै एकै रंग ॥ ब्रहम गिआनी कै बसै प्रभु संग ॥ ब्रहम गिआनी कै नामु आधारु ॥ ब्रहम गिआनी कै नामु परवारु ॥ ब्रहम गिआनी सदा सद जागत ॥ ब्रहम गिआनी अहंबुधि तिआगत ॥ ब्रहम गिआनी कै मनि परमानंद ॥ ब्रहम गिआनी कै घरि सदा अनंद ॥ ब्रहम गिआनी सुख सहज निवास ॥ नानक ब्रहम गिआनी का नही बिनास ॥ ५ ॥ ब्रहम गिआनी ब्रहम का बेता ॥ ब्रहम गिआनी एक संगि हेता ॥ ब्रहम गिआनी कै होइ अचिंत ॥ ब्रहम गिआनी का निरमल मंत ॥ ब्रहम गिआनी जिसु करै प्रभु आपि ॥ ब्रहम गिआनी का बड परताप ॥ ब्रहम गिआनी का दरसु बडभागी पाईऐ ॥ ब्रहम गिआनी कउ बलि बलि जाईऐ ॥ ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर ॥ नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर ॥ ६ ॥ ब्रहम गिआनी की कीमति नाहि ॥ ब्रहम गिआनी कै सगल मन माहि ॥ ब्रहम गिआनी का कउन जानै भेदु ॥ ब्रहम गिआनी कउ सदा अदेसु ॥ ब्रहम गिआनी का कथिआ न जाइ अधाख्यरु ॥ ब्रहम गिआनी सरब का ठाकुरु ॥ ब्रहम गिआनी की मिति कउनु बखानै ॥ ब्रहम गिआनी की गति ब्रहम गिआनी जानै ॥ ब्रहम गिआनी का अंतु न पारु ॥ नानक ब्रहम गिआनी कउ सदा नमसकारु ॥ ७ ॥ ब्रहम गिआनी सभ स्रिसटि का करता ॥ ब्रहम गिआनी सद जीवै नही मरता ॥ ब्रहम गिआनी मुकति जुगति जीअ का दाता ॥ ब्रहम गिआनी पूरन पुरखु बिधाता ॥ ब्रहम गिआनी अनाथ का नाथु ॥ ब्रहम गिआनी का सभ ऊपरि हाथु ॥ ब्रहम गिआनी का सगल

दृष्टि से अमृत बरसता रहता है। ब्रह्मज्ञानी बन्धनों से मुक्त होता है और उसके जीवन का ढंग निर्मल एवं पवित्र होता है। ज्ञान ही ब्रह्मज्ञानी का भोजन है और हे नानक, ब्रह्मज्ञानी सदैव ब्रह्म के ध्यान में ही लीन रहता है ॥ ३ ॥ ब्रह्मज्ञानी केवल एक प्रभु से ही आशा करता है (अन्य किसी से कुछ नहीं मांगता); इसीलिए ब्रह्मज्ञानी कभी विनष्ट नहीं होता। ब्रह्मज्ञानी विनम्रता से ओत-प्रोत रहता है और परोपकार करने के लिए ब्रह्मज्ञानी सदैव उत्साह से भरा रहता है। ब्रह्मज्ञानी सांसारिक पाखण्डों प्रपंचों में लीन नहीं होता और इधर-उधर दौड़ते हुए मन को वह बाँध लेता है। ब्रह्मज्ञानी के द्वारा सब भला होता है और ब्रह्मज्ञान वाला व्यक्ति ही भली प्रकार फलता-फूलता है। ब्रह्मज्ञानी की संगत में सभी पार उतर जाते हैं और हे नानक, सारा संसार ब्रह्मज्ञानी के नाम की महिमा करता रहता है ॥ ४ ॥ ब्रह्मज्ञानी केवल एक ही रंग में रंगा रहता है और प्रभु उसके अंग-संग बसा रहता है। प्रभु-नाम ही ब्रह्मज्ञानी का आधार है और प्रभु-नाम ही उसका परिवार है। ब्रह्मज्ञानी सदैव जागृत बना रहता है और अंहकार को त्याग देता है। ब्रह्मज्ञानी के मन में परमानन्द और घर-परिवार में सदैव आनन्द बना रहता है। ब्रह्मज्ञानी सहज सुख में निवास करता है और हे नानक, ब्रह्मज्ञानी का कभी भी विनाश नहीं होता ॥ ५ ॥ ब्रह्मवेता ही ब्रह्मज्ञानी है जिसका केवल एक प्रभु के साथ ही प्रेम है। ब्रह्मज्ञानी को कोई चिन्ता नहीं होती और उसका उपदेश भी निर्मल होता है। जिसे प्रभु स्वयं बनाता है वही ब्रह्मज्ञानी बनता है और ऐसे ब्रह्मज्ञानी का प्रताप महान है। बड़े भाग्य से ब्रह्मज्ञानी का दर्शन प्राप्त होता है और ऐसे ब्रह्मज्ञानी पर बार-बार बलिहारी हुआ जाता है। महेश्वर भी ब्रह्मज्ञानी को खोजता है और हे नानक, ब्रह्मज्ञानी तो स्वयं ही परमेश्वर है ॥ ६ ॥ ब्रह्मज्ञानी का मूल्य नहीं आंका जा सकता। ब्रह्मज्ञानी के हृदय में सब कुछ निवास करता है। ब्रह्मज्ञानी के रहस्य को कौन जान सकता है और ब्रह्मज्ञानी को ही सदैव प्रणाम किया जाता है। ब्रह्मज्ञानी के आधे अक्षर का भी कथन नहीं किया जा सकता क्योंकि ब्रह्मज्ञानी ही सबका स्वामी है। ब्रह्मज्ञानी की सीमा को कौन बता सकता है क्योंकि ब्रह्मज्ञानी का ओर-छोर तो केवल स्वयं ब्रह्मज्ञानी ही जानता है। ब्रह्मज्ञानी का कोई भी अन्त और सीमा नहीं होती। हे नानक, ऐसे ब्रह्मज्ञानी को सदैव बार-बार नमस्कार है ॥ ७ ॥ ब्रह्मज्ञानी ही सृष्टि का कर्ता है ; ब्रह्मज्ञानी ही मरता नहीं अपितु सदैव जीवित रहता है। ब्रह्मज्ञानी ही मुक्ति, युक्ति आदि जीवों को प्रदान करने वाला है और वही पूर्ण पुरुष विधाता है। ब्रह्मज्ञानी ही अनाथों का नाथ है और उसका ही हाथ सबके सिर पर है। ब्रह्मज्ञानी

अकारु ॥ ब्रहम गिआनी आपि निरंकारु ॥ ब्रहम गिआनी की सोभा ब्रहम गिआनी बनी ॥ नानक ब्रहम गिआनी सरब का धनी ॥ ८ ॥ ८ ॥ सलोकु ॥ उरि धारै जो अंतरि नामु ॥ सरब मै पेखै भगवानु ॥ निमख निमख ठाकुर नमसकारै ॥ नानक ओहु अपरसु सगल निसतारै ॥ १ ॥ असटपदी ॥ मिथिआ नाही रसना परस ॥ मन महि प्रीति निरंजन दरस ॥ पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र ॥ साध की टहल संतसंगि हेत ॥ करन न सुनै काहू की निंदा ॥ सभ ते जानै आपस कउ मंदा ॥ गुर प्रसादि बिखिआ परहरै ॥ मन की बासना मन ते टरै ॥ इंद्री जित पंच दोख ते रहत ॥ नानक कोटि मधे को ऐसा अपरस ॥ १ ॥ बैसनो सो जिसु ऊपरि सुप्रसंन ॥ बिसन की माइआ ते होइ भिंन ॥ करम करत होवै निहकरम ॥ तिसु बैसनो का निरमल धरम ॥ काहू फल की इछा नही बाछै ॥ केवल भगति कीरतन संगि राचै ॥ मन तन अंतरि सिमरन गोपाल ॥ सभ ऊपरि होवत किरपाल ॥ आपि द्रिड़ै अवरह नामु जपावै ॥ नानक ओहु बैसनो परम गति पावै ॥ २ ॥ भगउती भगवंत भगति का रंगु ॥ सगल तिआगै दुसट का संगु ॥ मन ते बिनसै सगला भरमु ॥ करि पूजै सगल पारब्रहमु ॥ साधसंगि पापा मलु खोवै ॥ तिसु भगउती की मति ऊतम होवै ॥ भगवंत की टहल करै नित नीति ॥ मनु तनु अरपै बिसन परीति ॥ हरि के चरन हिरदै बसावै ॥ नानक ऐसा भगउती भगवंत कउ पावै ॥ ३ ॥ सो पंडितु जो मनु परबोधै ॥ राम नामु आतम महि सोधै ॥ राम नाम सारु रसु पीवै ॥ उसु पंडित कै उपदेसि जगु जीवै ॥ हरि की कथा हिरदै बसावै ॥ सो पंडितु फिरि जोनि न आवै ॥ बेद पुरान सिम्रिति बूझै मूल ॥ सूखम महि जानै असथूलु ॥ चहु वरना कउ दे उपदेसु ॥ नानक उसु पंडित कउ सदा अदेसु ॥ ४ ॥ बीज मंत्रु सरब को गिआनु ॥ चहु वरना महि जपै कोऊ नामु ॥ जो जो जपै तिस की गति होइ ॥ साधसंगि पावै जनु कोइ ॥ करि किरपा अंतरि उर धारै ॥ पसु प्रेत मुघद पाथर कउ तारै ॥ सरब रोग का अउखदु नामु ॥ कलिआण रूप मंगल गुण गाम ॥ काहू जुगति किते न पाईऐ धरमि ॥ नानक तिसु मिलै जिसु लिखिआ धुरि करमि ॥ ५ ॥ जिस कै

सृष्टि के सब आकारो का स्वामी है । ब्रह्मज्ञानी ही स्वयं निराकार प्रभु है । ब्रह्मज्ञानी की शोभा केवल ब्रह्मज्ञानी के लिए ही उपयुक्त है । हे नानक, ब्रह्मज्ञानी ही सबका मालिक है ॥ ८ ॥ ८ ॥ श्लोक ॥ जो अपने हृदय में प्रभु–नाम को धारण करता है समस्त रचना में परमात्मा को देखता है, प्रति क्षण प्रभु को प्रणाम करता है, हे नानक, विकारो को न छूने वाला ऐसा अपरस व्यक्ति अर्थात साधु सब लोगों का उद्धार करता है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ जिसकी जीभ झूठ को स्पर्श नहीं करती, जिसके मन में प्रभु–दर्शन के लिए प्रेम है, जिसके नेत्र पराई स्त्री के रूप पर नहीं गड़ते, जो साधक पुरुषों की सेवा और शान्त पुरुषों से प्रेम करता है, जिसके कान किसी की निन्दा नहीं सुनते, जो अपने आप को सबसे तुच्छ समझता है, गुरु की कृपा से जो विष रूपी बुराई का त्याग करता है, जो मन की वासनाओं को मन से दूर कर देता है और इन्द्रियों को जीत कर जो पाँचों विकारों से मुक्त बना रहता है, हे नानक, ऐसा अपरस अर्थात किसी में भी लिप्त न होने वाला व्यक्ति करोड़ों में कोई एक ही होता है ॥ १ ॥ वैष्णव वही है जिस पर प्रभु प्रसन्न हो और जो प्रभु की माया से अलग बना रहता है । जो कर्म करते हुए भी निष्कर्म अर्थात फल की इच्छा न रखने वाला होता है, उसी वैष्णव का कर्त्तव्य कर्म निर्मल होता है । जिसे कोई फल की इच्छा नहीं होती, जो केवल प्रभु–भक्ति और उसके गुणानुवाद में ही लीन रहता है, जो मन, तन से प्रभु का सुमिरन करता रहता है, जो सब पर कृपालु वना रहता है और जो स्वयं प्रभु को याद रखता है तथा अन्यों को भी उसके नाम का जाप कराता है, हे नानक, वही वैष्णव परमगति को प्राप्त होता है ॥ २ ॥ भक्ति करने वाला वही है जो प्रभु की भक्ति के रंग में रंगा रहता है । वह दुष्टों की संगत का त्याग करता है । उसके मन से सारे भ्रम मिट जाते है । वह सब में परब्रह्म को देखता हुआ केवल प्रभु की ही उपासना करता है । साधसंगत में जो अपने मन की मैल को खो देता है, ऐसे भक्त की मति उत्तम होती है । जो सदैव परमात्मा की सेवा करता है, परमात्मा के प्रेम के लिए तन मन अर्पण कर देता है और प्रभु चरणों को हृदय में बसाता है, हे नानक, ऐसा भक्त भगवान को पा लेता है ॥ ३ ॥ पंडित वही है जो अपने मन को समझाता है । राम–नाम के रहस्य को अपने अन्दर ही खोजता है और प्रभु–नाम के अमृत–रस का पान करता है; उसी पंडित के उपदेश से सारा संसार आध्यात्मिक तौर पर जीवित बना रहता है । जो प्रभु की कथा–वार्ता को हृदय में बसा लेता है वह पंडित फिर योनियों में नहीं आता । जो वेद, पुराण, स्मृति के मूल भाव को समझता है, सूक्ष्म परमात्मा तत्व में ही स्थूल संसार की स्थिति जानता है और जो चारो वर्णों को समान भाव से उपदेश देता है, हे नानक, उस पंडित को सदैव प्रणाम है ॥ ४ ॥ प्रभु–नाम के मन्त्र का ज्ञान बीज रूप में सब को दिया गया है ताकि चारों वर्णों में जो चाहे प्रभु–नाम का जाप करे । जो प्रभु–नाम का सुमिरन करता है वही मुक्त हो जाता है । कोई बिरला ही साधसंगत में इस गति को प्राप्त होता है । प्रभु कृपा करके अन्तर्मन में स्थित होता है और फिर पशु, प्रेत, गँवार, पत्थरों को भी पार कर देता है । प्रभु का नाम ही सभी रोगों की औषधि है और प्रभु का गुणानुवाद ही परम मंगल और मुक्ति का स्वरूप है । अन्य किसी भी युक्ति और किसी भी कर्म द्वारा इसे नहीं पाया जा सकता । हे नानक, यह उसी को मिलता है जिसके भाग्य में शुरू से ही लिखा होता है ॥ ५ ॥ जिसके

मनि पारब्रहम का निवासु ॥ तिस का नामु सति रामदासु ॥ आतम रामु तिसु नदरी आइआ ॥ दास दसंतण भाइ तिनि पाइआ ॥ सदा निकटि निकटि हरि जानु ॥ सो दासु दरगह परवानु ॥ अपुने दास कउ आपि किरपा करै ॥ तिसु दास कउ सभ सोझी परै ॥ सगल संगि आतम उदासु ॥ ऐसी जुगति नानक रामदासु ॥ ६ ॥ प्रभ की आगिआ आतम हितावै ॥ जीवन मुकति सोऊ कहावै ॥ तैसा हरखु तैसा उसु सोगु ॥ सदा अनंदु तह नही बिओगु ॥ तैसा सुवरनु तैसी उसु माटी ॥ तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी ॥ तैसा मानु तैसा अभिमानु ॥ तैसा रंकु तैसा राजानु ॥ जो वरताए साई जुगति ॥ नानक ओहु पुरखु कहीऐ जीवन मुकति ॥ ७ ॥ पारब्रहम के सगले ठाउ ॥ जितु जितु घरि राखै तैसा तिन नाउ ॥ आपे करन करावन जोगु ॥ प्रभ भावै सोई फुनि होगु ॥ पसरिओ आपि होइ अनत तरंग ॥ लखे न जाहि पारब्रहम के रंग ॥ जैसी मति देइ तैसा परगास ॥ पारब्रहमु करता अबिनास ॥ सदा सदा सदा दइआल ॥ सिमरि सिमरि नानक भए निहाल ॥ ८ ॥ ९ ॥ सलोकु ॥ उसतति करहि अनेक जन अंतु न पारावार ॥ नानक रचना प्रभि रची बहु बिधि अनिक प्रकार ॥ १ ॥ असटपदी ॥ कई कोटि होए पूजारी ॥ कई कोटि आचार बिउहारी ॥ कई कोटि भए तीरथ वासी ॥ कई कोटि बन भ्रमहि उदासी ॥ कई कोटि बेद के स्रोते ॥ कई कोटि तपीसुर होते ॥ कई कोटि आतम धिआनु धारहि ॥ कई कोटि कबि काबि बीचारहि ॥ कई कोटि नवतन नाम धिआवहि ॥ नानक करते का अंतु न पावहि ॥ १ ॥ कई कोटि भए अभिमानी ॥ कई कोटि अंध अगिआनी ॥ कई कोटि किरपन कठोर ॥ कई कोटि अभिग आतम निकोर ॥ कई कोटि पर दरब कउ हिरहि ॥ कई कोटि पर दूखना करहि ॥ कई कोटि माइआ स्रम माहि ॥ कई कोटि परदेस भ्रमाहि ॥ जितु जितु लावहु तितु तितु लगना ॥ नानक करते की जानै करता रचना ॥ २ ॥ कई कोटि सिध जती जोगी ॥ कई कोटि राजे रस भोगी ॥ कई कोटि पंखी सरप उपाए ॥ कई कोटि पाथर बिरख निपजाए ॥ कई कोटि पवण पाणी बैसंतर ॥ कई कोटि देस भू मंडल ॥ कई कोटि

चित्त में परमात्मा का निवास बन गया है, उसी का नाम 'स्वामी का सच्चा सेवक' होता है। उसे सर्वत्र व्याप्त परमात्मा के दर्शन हो जाते हैं और वह दासों का दास बनकर इसे पा लेता है। जो सदैव प्रभु को प्रत्यक्ष एवं अंग–संग ही जानता है वही सेवक प्रभु–दरबार में स्वीकृत होता है। अपने सेवक पर प्रभु स्वयं कृपा करता है और ऐसे सेवक को सब कुछ समझ में आने लगता है। हे नानक, प्रभु के सेवक का जीवन–ढंग इस प्रकार का होता है कि वह सब के संग बना रह कर भी अन्तर्मन से निर्लिप्त बना रहता है ॥ ६ ॥ जो प्रभु की आज्ञा को आत्मा से प्यार करता है वही जीवन–मुक्त कहलाता है। उसके लिए जैसा हर्ष है वैसा ही शोक भी है और सदा आनन्दित बना रहकर वह परमात्मा से बिछुड़ता नहीं। सोना और मिट्टी उसके लिए एक समान है और अमृत और विष भी उसके लिए एक जैसा ही होता है। मान और अपमान, दोनों उसके लिए एक जैसे होते हैं तथा राजा और रंक दोनों ही उसके लिए बराबर होते हैं। हे नानक, ऐसे व्यक्ति को जीवन मुक्त कहा जाता है जो प्रभु के किए हुए को जीवन के लिए अच्छा व्यवहार मानता है ॥ ७ ॥ सभी स्थान परमात्मा के हैं और जिस–जिस स्थान पर वह जीवों को रखता है वैसे–वैसे ही उनके नाम हो जाते हैं। परमात्मा ही सब कुछ करने कराने के योग्य है और प्रभु जो चाहता है अन्ततः वही होता है वह अनेक तरंगों के रूप में फैला हुआ है और उस परमात्मा के रंगों को जाना नहीं जा सकता। जीव को प्रभु जैसी बुद्धि देता है कार्यों के रूप में वैसा ही प्रकाश जीव से बाहर निकलता है। वह परमात्मा ही कर्त्ता एवं अविनाशी हैं। वह सदा से ही दयालु है और नानक उसी का सुमिरन कर–कर के धन्य हो गया है ॥ ८ ॥ ९॥ श्लोक ॥ अनेकों व्यक्ति उसकी स्तुति करते हैं परन्तु उसका न तो कोई अन्त है और न ही कोई ओर–छोर। हे नानक, अनेकों विधियों से अनेकों प्रकार की सृष्टि रचना प्रभु ने की है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ करोड़ों ही पूजा करने वाले हुए है और करोड़ों ही धार्मिक तथा व्यवहारिक कार्य करने वाले हैं। अनेकों करोड़ों तीर्थ–वासी और वनों में भ्रमण करने वाले बैरागी हैं। करोड़ों वेदों को सुनने वाले और करोड़ों श्रेष्ठ तप करने वाले हैं। करोड़ों मन में उसका ध्यान लगाने वाले हैं और करोड़ों कविगण काव्य के माध्यम से उसका चिन्तन करते हैं। करोड़ों नए–नए नामों से उसका ध्यान करते हैं परन्तु हे नानक, उस कर्त्ता प्रभु की सीमा को नहीं जान पाते हैं ॥ १ ॥ करोड़ों ही अभिमानी, नासमझ अज्ञानी हैं, करोड़ों ही पत्थर–दिल, कंजूस और प्रभु–नाम से अनभिज्ञ एवं कुछ भी प्राप्त न करने वाले हैं। करोड़ों अन्य लोगों का द्रव्य चुराने वाले हैं और करोड़ों ही दूसरों के दोष निकालने वाले हैं। करोड़ों ही धन के लिए मेहनत करने वाले हैं और करोड़ों ही दूसरे देशों में भ्रमण करने वाले हैं। हे प्रभु, जहाँ–जहाँ, तू लगाता है वहीं–वहीं लोग लगे रहते हैं। हे नानक, वह कर्त्ता–प्रभु ही केवल अपनी रचना को जानता है॥ २ ॥ करोड़ों ही सिद्ध, यति, योगी, राजा और रसों को भोगने वाले हैं। करोड़ों ही पक्षी, सर्प उत्पन्न किए गए हैं और करोड़ों प्रकार के पत्थर, वृक्ष आदि पैदा किए गए हैं। करोड़ों प्रकार के वायु, जल, अग्नियाँ, देश और भू–मण्डल हैं। कितने ही करोड़

ससीअर सूर नख्यत्र ॥ कई कोटि देव दानव इंद्र सिरि छत्र ॥ सगल समग्री अपनै सूति धारै ॥ नानक जिसु जिसु भावै तिसु तिसु निसतारै ॥ ३ ॥ कई कोटि राजस तामस सातक ॥ कई कोटि बेद पुरान सिम्रिति अरु सासत ॥ कई कोटि कीए रतन समुद ॥ कई कोटि नाना प्रकार जंत ॥ कई कोटि कीए चिर जीवे ॥ कई कोटि गिरी मेर सुवरन थीवे ॥ कई कोटि जख्य किंनर पिसाच ॥ कई कोटि भूत प्रेत सूकर म्रिगाच ॥ सभ ते नेरै सभहू ते दूरि ॥ नानक आपि अलिपतु रहिआ भरपूरि ॥ ४ ॥ कई कोटि पाताल के वासी ॥ कई कोटि नरक सुरग निवासी ॥ कई कोटि जनमहि जीवहि मरहि ॥ कई कोटि बहु जोनी फिरहि ॥ कई कोटि बैठत ही खाहि ॥ कई कोटि घालहि थकि पाहि ॥ कई कोटि कीए धनवंत ॥ कई कोटि माइआ महि चिंत ॥ जह जह भाणा तह तह राखे ॥ नानक सभु किछु प्रभ कै हाथे ॥ ५ ॥ कई कोटि भए बैरागी ॥ राम नाम संगि तिनि लिव लागी ॥ कई कोटि प्रभ कउ खोजंते ॥ आतम महि पारब्रहमु लहंते ॥ कई कोटि दरसन प्रभ पिआस ॥ तिन कउ मिलिओ प्रभु अबिनास ॥ कई कोटि मागहि सतसंगु ॥ पारब्रहम तिन लागा रंगु ॥ जिन कउ होए आपि सुप्रसंन ॥ नानक ते जन सदा धनि धंनि ॥ ६ ॥ कई कोटि खाणी अरु खंड ॥ कई कोटि अकास ब्रहमंड ॥ कई कोटि होए अवतार ॥ कई जुगति कीनो बिसथार ॥ कई बार पसरिओ पासार ॥ सदा सदा इकु एकंकार ॥ कई कोटि कीने बहु भाति ॥ प्रभ ते होए प्रभ माहि समाति ॥ ता का अंतु न जानै कोइ ॥ आपे आपि नानक प्रभु सोइ ॥ ७ ॥ कई कोटि पारब्रहम के दास ॥ तिन होवत आतम परगास ॥ कई कोटि तत के बेते ॥ सदा निहारहि एको नेत्रे ॥ कई कोटि नाम रसु पीवहि ॥ अमर भए सद सद ही जीवहि ॥ कई कोटि नाम गुन गावहि ॥ आतम रसि सुखि सहजि समावहि ॥ अपुने जन कउ सासि सासि समारे ॥ नानक ओइ परमेसुर के पिआरे ॥ ८ ॥ १० ॥ सलोकु ॥ करण कारण प्रभु एकु है दूसर नाही कोइ ॥ नानक तिसु बलिहारणै जलि थलि महीअलि सोइ ॥ १ ॥ असटपदी ॥ करन करावन करनै जोगु ॥ जो तिसु भावै सोई होगु ॥ खिन महि थापि उथापनहारा ॥

चन्द्रमा, सूर्य और नक्षत्र हैं और करोड़ों ही देव दानव और छत्रधारी इन्द्र हैं । प्रभु ने इस सारी रचना को अपने एक सूत्र में धारण कर रखा है और हे नानक, जिस पर वह प्रसन्न होता है उसी का उद्धार करता है ॥ ३ ॥ करोड़ों ही रजोगुणी, तमोगुणी एवं सात्विक व्यक्ति हैं । करोड़ों ही वेद (ज्ञान), पुराण, स्मृति और शास्त्र हैं । समुद्रों में करोड़ों प्रकार के रत्न हैं और करोड़ों ही विभिन्न प्रकार के जीव–जन्तु हैं । करोड़ों को ही उसने चिरंजीव (सदैव जीवित बने रहने वाले) बना दिया है और करोड़ों ही छोटे बड़े पर्वत सोने के बने हुए हैं । करोड़ों ही यक्ष, किन्नर और पिशाच हैं और करोड़ों ही भूत, प्रेत, सुअर और शेर हैं । प्रभु सब के पास ही और सबसे परे भी है । हे नानक, वह अलिप्त रहकर सब में व्याप्त है ॥ ४ ॥ करोड़ों ही पाताल के और नर्क–स्वर्ग के निवासी हैं । करोड़ों ही जन्मते, जीते, मरते और अनेकों योनियों में भटकते रहते हैं । करोड़ों ही खाली बैठे खाते रहते हैं और करोड़ों ऐसे भी है जो परिश्रम करते हुए थक जाते हैं । करोड़ों ही उसने धनवान बनाए हैं और करोड़ों ही धन–दौलत की चिन्ता में लीन बने हुए हैं । हे नानक, सब कुछ प्रभु के हाथ में हैं और वह जहाँ जिसे चाहता है उसे वही रखता है ॥ ५ ॥ करोड़ों ही वैराग्यवान हो गुजरे हैं जिनकी लौ प्रभु–नाम के साथ लगी रही है । करोड़ों ही प्रभु को खोज रहे हैं और अपनी आत्मा में ही परब्रह्म का दर्शन कर लेते हैं । करोड़ों को ही प्रभु–दर्शन की प्यास बनी हुई है और ऐसे ही लोगों को वह अविनाशी प्रभु मिल जाता है । करोड़ों ही सद्संगत को चाहते हैं और वे परब्रह्म के रंग में रंग जाते हैं । हे नानक, ऐसे व्यक्ति सदैव धन्य है जिन पर प्रभु स्वयं प्रसन्न होता है ॥ ६ ॥ करोड़ों ही जीवन के स्रोत और महाद्वीप है, करोड़ों ही आकाश और ब्रह्माण्ड हैं, करोड़ों ही तथाकथित अवतार हो चुके हैं और अनेकों ढंगों से प्रभु ने अपना विस्तार किया हुआ है । यह फैलाव अनेकों बार फैलाया गया है परन्तु वह प्रभु सदैव एक रस ही बना रहता है । अनेकों प्रकार के करोड़ों जीव पैदा किए गए हैं जो प्रभु से ही पैदा होते हैं और प्रभु में ही लीन हो जाते हैं । हे नानक, वह प्रभु ही स्वयं सब कुछ है और उसकी सीमा को कोई नहीं जान सकता ॥ ७ ॥ करोड़ों ही परमात्मा के सेवक हैं जिनकी आत्मा प्रकाशित होती है । करोड़ों ही ऐसे तत्ववेत्ता हैं जो सदैव अपनी आँखों से केवल एक ही प्रभु को देखते हैं । करोड़ों ही प्रभु–नाम–रस का पान करते हुए अमर हो जाते हैं और अच्छे कार्यों के कारण सदैव जीवित बने रहते हैं । करोड़ों ही प्रभु–नाम का गुणानुवाद करते हुए आत्म–रस के माध्यम से सहज–सुख में लीन बने रहते हैं । प्रभु अपने जिन सेवकों को अपनी हर श्वास के साथ याद रखता है, हे नानक, वे ही परमेश्वर के प्यारे सेवक हैं ॥ ८ ॥ १० ॥ श्लोक ॥ करने–कराने वाला केवल एक प्रभु ही है अन्य कोई नहीं है । नानक उस पर बलिहारी जाता है जो जल, स्थल एवं पाताल अर्थात् सर्वत्र व्याप्त है ॥१॥अष्टपदी॥ वह प्रभु ही करने–कराने वाला और सब कुछ कर लेने में समर्थ है । जो उसे अच्छा लगता है वही होता है । वह क्षण भर में ही स्थापना एवं विध्वंस कर देने वाला है ।

अंतु नही किछु पारावारा ॥ हुकमे धारि अधर रहावै ॥ हुकमे उपजै हुकमि समावै ॥ हुकमे ऊच नीच बिउहार ॥ हुकमे अनिक रंग परकार ॥ करि करि देखै अपनी वडिआई ॥ नानक सभ महि रहिआ समाई ॥ १ ॥ प्रभ भावै मानुख गति पावै ॥ प्रभ भावै ता पाथर तरावै ॥ प्रभ भावै बिनु सास ते राखै ॥ प्रभ भावै ता हरि गुण भाखै ॥ प्रभ भावै ता पतित उधारै ॥ आपि करै आपन बीचारै ॥ दुहा सिरिआ का आपि सुआमी ॥ खेलै बिगसै अंतरजामी ॥ जो भावै सो कार करावै ॥ नानक द्रिसटी अवरु न आवै ॥ २ ॥ कहु मानुख ते किआ होइ आवै ॥ जो तिसु भावै सोई करावै ॥ इस के हाथि होइ ता सभु किछु लेइ ॥ जो तिसु भावै सोई करेइ ॥ अनजानत बिखिआ महि रचै ॥ जे जानत आपन आप बचै ॥ भरमे भूला दह दिसि धावै ॥ निमख माहि चारि कुंट फिरि आवै ॥ करि किरपा जिसु अपनी भगति देइ ॥ नानक ते जन नामि मिलेइ ॥ ३ ॥ खिन महि नीच कीट कउ राज ॥ पारब्रहम गरीब निवाज ॥ जा का द्रिसटि कछू न आवै ॥ तिसु ततकाल दह दिस प्रगटावै ॥ जा कउ अपुनी करै बखसीस ॥ ता का लेखा न गनै जगदीस ॥ जीउ पिंडु सभ तिस की रासि ॥ घटि घटि पूरन ब्रहम प्रगास ॥ अपनी बणत आपि बनाई ॥ नानक जीवै देखि बडाई ॥ ४ ॥ इस का बलु नाही इसु हाथ ॥ करन करावन सरब को नाथ ॥ आगिआकारी बपुरा जीउ ॥ जो तिसु भावै सोई फुनि थीउ ॥ कबहू ऊच नीच महि बसै ॥ कबहू सोग हरख रंगि हसै ॥ कबहू निंद चिंद बिउहार ॥ कबहू ऊभ अकास पइआल ॥ कबहू बेता ब्रहम बीचार ॥ नानक आपि मिलावणहार ॥ ५ ॥ कबहू निरति करै बहु भाति ॥ कबहू सोइ रहै दिनु राति ॥ कबहू महा क्रोध बिकराल ॥ कबहूं सरब की होत रवाल ॥ कबहू होइ बहै बड राजा ॥ कबहु भेखारी नीच का साजा ॥ कबहू अपकीरति महि आवै ॥ कबहूं भला भला कहावै ॥ जिउ प्रभ राखै तिव ही रहै ॥ गुर प्रसादि नानक सचु कहै ॥ ६ ॥ कबहू होइ पंडितु करे बख्यानु ॥ कबहू मोनिधारी लावै धिआनु ॥ कबहू तट तीरथ इसनान ॥ कबहू सिध साधिक मुखि गिआन ॥ कबहू कीट हसति पतंग होइ जीआ ॥ अनिक

उसकी कोई सीमा और ओर–छोर नहीं है। हुकुम में ही उसने सृष्टि को धारण कर रखा है और इसे बिना किसी आश्रय के स्थित कर रखा है। हुकुम में ही सब कुछ पैदा होता है और हुकुम में ही सब लीन हो जाता है। भला–बुरा व्यवहार भी हुकुम में ही होता है और हुकुम के अर्न्तगत ही रचना के अनेकों रंग और प्रकार हैं। वह अपनी विशालता की रचना करके उसे देखता है और हे नानक, वह सब में व्याप्त रहता है ॥ १ ॥ यदि प्रभु चाहे तो व्यक्ति मुक्ति पा लेता है और प्रभु चाहे तो पत्थरों को भी तैरा देता है। प्रभु चाहे तो बिना श्वास के भी जीव को बचाए रखता है और प्रभु चाहे तो व्यक्ति प्रभु के यश का उच्चारण करता है। प्रभु चाहे तो पतितों का उद्धार कर देता है और ऐसा करके स्वयं ही उनके बारे में चिन्तन करता है। इस लोक और परलोक अर्थात दोनों का स्वामी वह स्वयं ही है और वह अन्तर्यामी प्रभु अपना खेल खेलता हुआ प्रसन्न बना रहता है। जो चाहता है वह वही काम करवा लेता है और हे नानक, उसके अतिरिक्त अन्य कोई दिखाई नहीं देता ॥ २ ॥ भला बताओ, मनुष्य क्या कर सकता है ? जो प्रभु को अच्छा लगता है वह वही करवाता है। जीव के हाथ में यदि कुछ होता तो वह सब कुछ पा लेता परन्तु जो उस प्रभु को अच्छा लगता है केवल वही किया जाता है। अनजान व्यक्ति विषय–विकारों में लीन बना रहता है परन्तु यदि वह प्रभु को जान जाता है तो वह अपने आप को बचा लेता है। भ्रमों में भटकता हुआ मन दसों दिशाओं में दौड़ता रहता है और क्षण भर में चारों दिशाओं का चक्कर लगा लेता है। हे नानक, वही सेवक प्रभु–नाम में लीन हो जाता है जिस पर कृपा करके प्रभु उसे अपनी भक्ति प्रदान करता है ॥ ३ ॥ क्षण भर में वह एक तुच्छ कीड़े को राजा बना सकता है क्योंकि परमात्मा वास्तव में गरीब को सम्मान देने वाला है। जो बिल्कुल किसी की नज़र में ही नहीं होता, प्रभु उसे क्षण भर में ही दसों दिशाओं में प्रसिद्ध कर देता है। जिस पर वह अपनी कृपा कर देता है संसार का स्वामी उससे लेखा–जोखा नहीं पूछता। प्राण और शरीर सब उस प्रभु की ही पूँजी है और प्रत्येक शरीर में प्रभु का पूर्ण प्रकाश निहित् है। अपनी रचना प्रभु ने स्वयं की है और नानक उसी के बड़प्पन को देखकर जीवित बना रहता है ॥ ४ ॥ जीव की शक्ति जीव के अपने हाथ में नहीं है क्योंकि करने कराने वाला सबका नाथ तो प्रभु ही है। यह बेचारा जीव को केवल आज्ञा का पालन करता है क्योंकि जो प्रभु को भाता है अन्ततः वही होता है। व्यक्ति कभी ऊँचे और कभी तुच्छ भाव में रहता है; कभी शोक और कभी हर्ष में रहते हुए हँसता है। कभी वह निन्दा, चिन्ता और व्यवहारिक कामों में लगा रहता है; कभी उत्साहित होकर आसमान में उड़ता है और हतोत्साहित होकर पाताल में धंस जाता है। कभी वह ब्रह्मवेता बनकर विचार करता है परन्तु हे नानक, वह प्रभु ही जीव को अपने से मिला लेने वाला है ॥ ५ ॥ कभी वह जीव स्वार्थ के लिए अनेकों प्रकार के नाच नाचता है और कभी यह दिन–रात अज्ञानी बनकर सोया ही रहता है। कभी यह विकराल रूप से महाक्रोधी बन जाता है और कभी यह सब की चरण–धूलि हो जाता है। कभी यह बड़ा राजा बन जाता है और कभी भिखारी और तुच्छ व्यक्तियों जैसी पोशाक पहन लेता है। कभी इसका अपयश होता है और कभी इसको भला भला कहा जाता है। गुरु की कृपा से नानक सत्य कह रहा है कि जिस तरह प्रभु जीव को रखता है वह वैसे ही रहता है ॥ ६ ॥ कभी व्यक्ति विद्वान बनकर व्याख्यान देता है और कभी मौन धारण कर ध्यान लगाता है। कभी यह नदी के किनारों पर तीर्थ स्नान करता है और कभी सिद्ध साधक के रूप में अपने मुँह से ज्ञान की बातें करता है। कभी यह जीव कीड़ा, हाथी और पतंगा बनके अनेकों योनियों में

जोनि भरमै भरमीआ ॥ नाना रूप जिउ स्वागी दिखावै ॥ जिउ प्रभ भावै तिवै नचावै ॥ जो तिसु भावै सोई होइ ॥ नानक दूजा अवरु न कोइ ॥ ७ ॥ कबहू साधसंगति इहु पावै ॥ उसु असथान ते बहुरि न आवै ॥ अंतरि होइ गिआन परगासु ॥ उसु असथान का नही बिनासु ॥ मन तन नामि रते इक रंगि ॥ सदा बसहि पारब्रहम कै संगि ॥ जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥ तिउ जोती संगि जोति समाना ॥ मिटि गए गवन पाए बिस्राम ॥ नानक प्रभ कै सद कुरबान ॥ ८ ॥ ११ ॥ सलोकु ॥ सुखी बसै मसकीनीआ आपु निवारि तले ॥ बडे बडे अहंकारीआ नानक गरबि गले ॥ १ ॥ असटपदी ॥ जिस कै अंतरि राज अभिमानु ॥ सो नरकपाती होवत सुआनु ॥ जो जानै मै जोबनवंतु ॥ सो होवत बिसटा का जंतु ॥ आपस कउ करमवंतु कहावै ॥ जनमि मरै बहु जोनि भ्रमावै ॥ धन भूमि का जो करै गुमानु ॥ सो मूरखु अंधा अगिआनु ॥ करि किरपा जिस कै हिरदै गरीबी बसावै ॥ नानक ईहा मुकतु आगै सुखु पावै ॥ १ ॥ धनवंता होइ करि गरबावै ॥ त्रिण समानि कछु संगि न जावै ॥ बहु लसकर मानुख ऊपरि करे आस ॥ पल भीतरि ता का होइ बिनास ॥ सभ ते आप जानै बलवंतु ॥ खिन महि होइ जाइ भसमंतु ॥ किसै न बदै आपि अहंकारी ॥ धरम राइ तिसु करे खुआरी ॥ गुर प्रसादि जा का मिटै अभिमानु ॥ सो जनु नानक दरगह परवानु ॥ २ ॥ कोटि करम करै हउ धारे ॥ स्रमु पावै सगले बिरथारे ॥ अनिक तपसिआ करे अहंकार ॥ नरक सुरग फिरि फिरि अवतार ॥ अनिक जतन करि आतम नही द्रवै ॥ हरि दरगह कहु कैसे गवै ॥ आपस कउ जो भला कहावै ॥ तिसहि भलाई निकटि न आवै ॥ सरब की रेन जा का मनु होइ ॥ कहु नानक ता की निरमल सोइ ॥ ३ ॥ जब लगु जानै मुझ ते कछु होइ ॥ तब इस कउ सुखु नाही कोइ ॥ जब इह जानै मै किछु करता ॥ तब लगु गरभ जोनि महि फिरता ॥ जब धारै कोऊ बैरी मीतु ॥ तब लगु निहचलु नाही चीतु ॥ जब लगु मोह मगन संगि माइ ॥ तब लगु धरम राइ देइ सजाइ ॥ प्रभ किरपा ते बंधन तूटै ॥ गुर प्रसादि नानक हउ छूटै ॥ ४ ॥ सहस खटे

लगातार भटकता रहता है। जिस प्रकार बहुरूपिया अनेकों स्वांग दिखाता है उसी प्रकार प्रभु जैसा चाहता है इसे नचाता रहता है। जो उसे अच्छा लगता है वही होता है। हे नानक, प्रभु के सिवाय अन्य दूसरा कोई नहीं है ॥ ७ ॥ कभी व्यक्ति साधसंगत को प्राप्त कर लेता है परन्तु उस स्थान पर दुबारा नहीं आता। जब अन्तर्मन में ज्ञान का प्रकाश हो जाता है तो उस अवस्था का कभी विनाश नहीं होता। अब उसका मन, तन प्रभु के एक नाम के रंग में लीन हो जाता है तो वह सदैव परब्रह्म के साथ बसा रहता है। जिस प्रकार पानी पानी में मिल जाता है उसी प्रकार जीव की ज्योति उस परम ज्योति में लीन हो जाती है। जीव के आवागमन मिट जाते हैं और वह विश्राम की अवस्था में ठहर जाता है। नानक ऐसे परम ज्योति प्रभु पर सदैव बलिहारी जाता है ॥ ८ ॥ ११ ॥ श्लोक ॥ अपने अभिमान को त्याग कर विनम्र बना हुआ व्यक्ति सुखपूर्वक बसता है। हे नानक, बड़े बड़े अहंकारी व्यक्ति अपने अभिमान में ही मर खप गए हैं ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ जिसके मन में राजा होने का अभिमान है वह नर्कगामी व्यक्ति कुत्ते की तरह हो जाता है। जो अपने आप को यौवनपूर्ण मानता है वह गन्दगी का कीड़ा ही होता है। जो अपने आप को अच्छे कर्मों वाला कहलवाता है वह जन्मता-मरता योनियों में भटकता रहता है। जो धन और भूमि का अभिमान करता है वह मूर्ख अन्धा और अज्ञानी है। हे नानक, प्रभु कृपा करके जिसके हृदय में विनम्रता का भाव बसा देता है वह इस लोक में ही मुक्त हो जाता है और परलोक में भी सुख पाता है ॥ १ ॥ व्यक्ति धनवान होकर गर्व करता है परन्तु तिनका भर भी यहाँ से उसके साथ नहीं जाता। जो अपनी अधिक सेना और व्यक्तियों पर आशाएँ बाँधे रहता है वह पल भर में ही विनष्ट हो जाता है। अपने को सबसे ज्यादा बलवान मानने वाला क्षण भर में ही भस्म हो जाता है। अहंकारी व्यक्ति किसी को भी कुछ नहीं समझता और धर्मराज उसको ख्वार करता है। हे नानक, गुरु की कृपा से जिसका अभिमान मिट जाए वही प्रभु के समक्ष स्वीकृत होता है ॥ २ ॥ करोड़ों अच्छे काम करता हुआ भी व्यक्ति यदि अभिमान करता है तो उसकी समस्त मेहनत व्यर्थ ही जाती है। अहंकार में जो अनेकों प्रकार की तपस्या करता है वह बार बार नर्क और स्वर्ग में अवतरित होता रहता है। जिसका हृदय अनेकों यत्नों के बावजूद द्रवित नहीं होता वह भला प्रभु-दरबार में कैसे जा सकता है। जो अपने आप को भला कहलवाता है वास्तव में भलाई उसके निकट भी नहीं आती। हे नानक, जिसका मन सब की चरण-धूलि बन गया है उसकी कीर्ति पवित्र होती है ॥ ३ ॥ जब तक व्यक्ति मानता है कि मैं कुछ कर सकता हूँ तब तक उसे कोई सुख नहीं मिलता। जब तक यह अपने को कर्त्ता मानता है तब तक यह योनियों में भटकता रहता है। जब तक यह किसी को शत्रु और मित्र मानता रहता है तब तक इसका मन स्थिर नहीं होता। जब तक यह धन के मोह में मग्न रहता है तब तक धर्मराज (इसके आवागमन के कारण) इसे सजा देता रहता है। प्रभु की कृपा से ही व्यक्ति के बन्धन टूटते हैं और हे नानक, गुरु की कृपा से ही व्यक्ति का अहंकार छूटता है ॥ ४ ॥ हजारों कमाकर

लख कउ उठि धावै ॥ त्रिपति न आवै माइआ पाछै पावै ॥ अनिक भोग बिखिआ के करै ॥ नह त्रिपतावै खपि खपि मरै ॥ बिना संतोख नही कोऊ राजै ॥ सुपन मनोरथ ब्रिथे सभ काजै ॥ नाम रंगि सरब सुखु होइ ॥ बडभागी किसै परापति होइ ॥ करन करावन आपे आपि ॥ सदा सदा नानक हरि जापि ॥ ५ ॥ करन करावन करनैहारु ॥ इस कै हाथि कहा बीचारु ॥ जैसी द्रिसटि करे तैसा होइ ॥ आपे आपि आपि प्रभु सोइ ॥ जो किछु कीनो सु अपनै रंगि ॥ सभ ते दूरि सभहू कै संगि ॥ बूझै देखै करै बिबेक ॥ आपहि एक आपहि अनेक ॥ मरै न बिनसै आवै न जाइ ॥ नानक सद ही रहिआ समाइ ॥ ६ ॥ आपि उपदेसै समझै आपि ॥ आपे रचिआ सभ कै साथि ॥ आपि कीनो आपन बिसथारु ॥ सभु कछु उस का ओहु करनैहारु ॥ उस ते भिंन कहहु किछु होइ ॥ थान थनंतरि एकै सोइ ॥ अपुने चलित आपि करणैहार ॥ कउतक करै रंग आपार ॥ मन महि आपि मन अपुने माहि ॥ नानक कीमति कहनु न जाइ ॥ ७ ॥ सति सति सति प्रभु सुआमी ॥ गुर परसादि किनै वखिआनी ॥ सचु सचु सचु सभु कीना ॥ कोटि मधे किनै बिरलै चीना ॥ भला भला भला तेरा रूप ॥ अति सुंदर अपार अनूप ॥ निरमल निरमल निरमल तेरी बाणी ॥ घटि घटि सुनी स्रवन बख्याणी ॥ पवित्र पवित्र पवित्र पुनीत ॥ नामु जपै नानक मनि प्रीति ॥ ८ ॥ १२ ॥ सलोकु ॥ संत सरनि जो जनु परै सो जनु उधरनहार ॥ संत की निंदा नानका बहुरि बहुरि अवतार ॥ १ ॥ असटपदी ॥ संत कै दूखनि आरजा घटै ॥ संत कै दूखनि जम ते नही छुटै ॥ संत कै दूखनि सुखु सभु जाइ ॥ संत कै दूखनि नरक महि पाइ ॥ संत कै दूखनि मति होइ मलीन ॥ संत कै दूखनि सोभा ते हीन ॥ संत के हते कउ रखै न कोइ ॥ संत कै दूखनि थान भ्रसटु होइ ॥ संत क्रिपाल क्रिपा जे करै ॥ नानक संतसंगि निंदकु भी तरै ॥ १ ॥ संत के दूखन ते मुखु भवै ॥ संतन कै दूखनि काग जिउ लवै ॥ संतन कै दूखनि सरप जोनि पाइ ॥ संत कै दूखनि त्रिगद जोनि किरमाइ ॥ संतन कै दूखनि त्रिसना महि जलै ॥ संत कै दूखनि सभु को छलै ॥ संत कै दूखनि तेजु सभु जाइ ॥ संत कै दूखनि नीचु नीचाइ ॥ संत दोखी का थाउ को नाहि ॥

व्यक्ति लाखों के लिए दौड़ता है । धन के पीछे भागने से वह कभी तृप्त नहीं होता । विषयों के अनेकों प्रकार के भोग करने पर भी वह तृप्त नहीं होता और व्यर्थ मेहनत करता हुआ मर जाता है । संतोष किए बिना कभी कोई तृप्त नहीं हो सका है क्योंकि स्वप्न में किए हुए कामों की तरह उसके सारे कार्य व्यर्थ ही होते हैं । नाम के रंग में सभी सुख प्राप्त होते हैं और किसी भाग्यशाली को ही नाम हासिल होता है । प्रभु स्वयं ही सब करने कराने वाला है इसलिए हे नानक, सदा प्रभु का सुमिरन करता रह ॥ ५ ॥ कर्त्ता–प्रभु ही सब कुछ करने कराने वाला है । व्यक्ति के हाथ में तो कुछ भी करने–विचारने योग्य नहीं है । प्रभु जैसी दृष्टि करता है व्यक्ति वैसा ही हो जाता है क्योंकि वह प्रभु स्वयं ही सब कुछ है । उसने जो कुछ भी किया है अपनी रज़ा के हिसाब से ही किया है । वह सबसे दूर भी है और सबके साथ भी है । वह देखता है, बूझता है और विवेकपूर्ण न्याय भी करता है । वह आप ही एक और अनेक भी है । वह न मरता है, न आता जाता है और न ही विनष्ट होता है । हे नानक, वह सदा ही सब में समाया रहता है ॥ ६॥ वह स्वयं ही समझता है और शिक्षा भी देता है । वह प्रभु स्वयं ही सबमें रमा हुआ है । अपना विस्तार उसने स्वयं ही किया है क्योंकि सब कुछ उसी का ही है और वह ही कर्त्ता है । बताओ भला उससे अलग क्या हो सकता है । स्थानों एवं स्थानांतरों में वह एक ही प्रभु व्याप्त है । अपने कौतुकों को करने वाला वह आप ही है, और उसके ये कौतुक अनन्त प्रकार के हैं । सब मनों में वही प्रभु है और सब मन उस प्रभु में ही हैं । हे नानक, उसका मूल्य नहीं आंका जा सकता ॥ ७ ॥ प्रभु सत्य है सत्य है और सत्य ही है । गुरु की कृपा से कोई बिरला ही उसका बखान कर सकता है । उस सत्य ने सब कुछ सत्य ही रचा है और करोड़ों में से कोई बिरला ही उसको पहचान पाता है । हे प्रभु, तेरा रूप भला, अत्यन्त सुन्दर, अपार एवं अनुपम है । तेरी वाणी निर्मल, पवित्र एवं शुद्ध है जिसे प्रत्येक हृदय, कानों से सुनता है और उसका उच्चारण करता है । हे प्रभु, तू पवित्र, पवित्र एवं पुनीत है और मन से प्रीतिपूर्वक नानक तेरे नाम का सुमिरन करता है ॥ ८ ॥ १२ ॥ श्लोक । जो व्यक्ति सन्त (सब प्रकार से शान्त हो चुके) की शरण में आता है वह पार उतर जाता है । हे नानक, सन्त पुरुषों की निन्दा करने वाला जन्मता मरता रहता है ॥ १ ॥ अष्टपदी॥ सन्तों के दोष निकालने पर आयु घटती है । सन्त की निन्दा से यम से नहीं बचा जा सकता । सन्त की निन्दा से सभी सुख भाग जाते हैं । सन्त की निन्दा से जीव नर्क में जाता है । सन्त की निन्दा से बुद्धि मलीन हो जाती है । सन्त की निन्दा से व्यक्ति अपनी शोभा गँवा लेता है । सन्त द्वारा तिरस्कृत को कोई भी बचाता नहीं है । सन्त की निन्दा से स्थान अपवित्र हो जाता है । हे नानक, कृपालु सन्त यदि कृपा करे तो सन्त के साथ निन्दक भी पार उतर जाता है ॥ १॥ सन्त की निन्दा से मुख विकृत हो जाता है । सन्त का निन्दक कौए की तरह काँव–काँव करता रहता है । सन्त की निन्दा से सर्प योनि मिलती है और सन्त की निन्दा से व्यक्ति रेंगने और टेढ़ा चलने वाले कीड़ों की योनियों में जाता है । सन्त की निन्दा से व्यक्ति तृष्णा में जलता रहता है और सन्त की निन्दा करने वाला सबके साथ धोखाधड़ी करता रहता है । सन्त के निन्दक का सारा तेज, प्रताप समाप्त हो जाता है और सन्त का निन्दक नीचों से भी नीच हो जाता है । सन्त से ईष्या करने वाले को कोई ठिकाना नहीं मिलता ।

नानक संत भावै ता ओइ भी गति पाहि ॥ २ ॥ संत का निंदकु महा अतताई ॥ संत का निंदकु खिनु टिकनु न पाई ॥ संत का निंदकु महा हतिआरा ॥ संत का निंदकु परमेसुरि मारा ॥ संत का निंदकु राज ते हीनु ॥ संत का निंदकु दुखीआ अरु दीनु ॥ संत के निंदक कउ सरब रोग ॥ संत के निंदक कउ सदा बिजोग ॥ संत की निंदा दोख महि दोखु ॥ नानक संत भावै ता उस का भी होइ मोखु ॥ ३ ॥ संत का दोखी सदा अपवितु ॥ संत का दोखी किसै का नही मितु ॥ संत के दोखी कउ डानु लागै ॥ संत के दोखी कउ सभ तिआगै ॥ संत का दोखी महा अहंकारी ॥ संत का दोखी सदा बिकारी ॥ संत का दोखी जनमै मरै ॥ संत की दूखना सुख ते टरै ॥ संत के दोखी कउ नाही ठाउ ॥ नानक संत भावै ता लए मिलाइ ॥ ४ ॥ संत का दोखी अध बीच ते टूटै ॥ संत का दोखी कितै काजि न पहूचै ॥ संत के दोखी कउ उदिआन भ्रमाईऐ ॥ संत का दोखी उझड़ि पाईऐ ॥ संत का दोखी अंतर ते थोथा ॥ जिउ सास बिना मिरतक की लोथा ॥ संत के दोखी की जड़ किछु नाहि ॥ आपन बीजि आपे ही खाहि ॥ संत के दोखी कउ अवरु न राखनहारु ॥ नानक संत भावै ता लए उबारि ॥ ५ ॥ संत का दोखी इउ बिललाइ ॥ जिउ जल बिहून मछुली तड़फड़ाइ ॥ संत का दोखी भूखा नही राजै ॥ जिउ पावकु ईधनि नही ध्रापै ॥ संत का दोखी छुटै इकेला ॥ जिउ बूआड़ु तिलु खेत माहि दुहेला ॥ संत का दोखी धरम ते रहत ॥ संत का दोखी सद मिथिआ कहत ॥ किरतु निंदक का धुरि ही पइआ ॥ नानक जो तिसु भावै सोई थिआ ॥ ६ ॥ संत का दोखी बिगड़ रूपु होइ जाइ ॥ संत के दोखी कउ दरगह मिलै सजाइ ॥ संत का दोखी सदा सहकाईऐ ॥ संत का दोखी न मरै न जीवाईऐ ॥ संत के दोखी की पुजै न आसा ॥ संत का दोखी उठि चलै निरासा ॥ संत कै दोखि न त्रिसटै कोइ ॥ जैसा भावै तैसा कोई होइ ॥ पइआ किरतु न मेटै कोइ ॥ नानक जानै सचा सोइ ॥ ७ ॥ सभ घट तिस के ओहु करनैहारु ॥ सदा सदा तिस कउ नमसकारु ॥ प्रभ की उसतति करहु दिनु राति ॥ तिसहि धिआवहु सासि गिरासि ॥ सभु कछु वरतै तिस का कीआ ॥ जैसा करे तैसा को थीआ ॥ अपना खेलु आपि करनैहारु ॥ दूसर कउनु

परन्तु हे नानक, यदि सन्त को अच्छा लग जाए तो उसकी भी मुक्ति हो जाती है ॥ २ ॥ सन्त का निन्दक अत्यन्त अत्याचारी होता है और उसे क्षण भर की भी शान्ति नहीं मिलती । सन्त का निन्दक महा हत्यारा और परमेश्वर द्वारा तिरस्कृत व्यक्ति होता है । सन्त का निन्दक अपना राज भी गँवा लेता है और दीन तथा दुखी हो जाता है । सन्त के निन्दक को सभी रोग आ लगते हैं और वह सदा तड़पते रहने की स्थिति में बना रहता है । पापों का पाप सन्त की निन्दा है परन्तु हे नानक, यदि सन्त को भा जाए तो निन्दक को भी मोक्ष प्राप्त हो जाता है ॥ ३ ॥ सन्त का निन्दक सदैव अपवित्र बना रहता है और वह किसी का भी मित्र नहीं होता । सन्त के निन्दक को सज़ा मिलती है और सभी उसका त्याग कर देते हैं । सन्त का निन्दक महा अहंकारी होकर सदा विकारों में लीन बना रहता है । सन्त का निन्दक जन्मता–मरता रहता है और सन्त की निन्दा करने से व्यक्ति सुख–विहीन हो जाता है । सन्त के निन्दक को कोई ठिकाना नहीं मिलता परन्तु हे नानक, यदि सन्त चाहे तो उसे भी प्रभु से मिला देता है ॥ ४ ॥ सन्त का निन्दक ठीक बीचों बीच से टूट जाता है और वही किसी भी कार्य को पूरा नहीं कर पाता । सन्त के निन्दक को वनों में भटकाया जाता है और उसे सुनसान स्थान पर फेंक दिया जाता है । सन्त का निन्दक अन्दर से वैसे ही खोखला हो जाता है जैसे श्वास् के बिना मृतक व्यक्ति का शरीर होता है । सन्त के निन्दक की जड़ें कहीं भी नहीं होती और अपने बोये हुए को वह स्वयं ही खाता है । अन्य कोई भी सन्त के निन्दक का रक्षक नहीं होता परन्तु हे नानक, सन्त चाहे तो उसको भी बचा लेता है ॥ ५ ॥ सन्त का निन्दक इस प्रकार चीखता पुकारता है जैसे जल–विहीन होकर मछली तड़पती है । जैसे ईंधन से अग्नि तृप्त नहीं होती इसी तरह से सन्त के निन्दक की भूख कभी सन्तुष्ट नहीं होती । सन्त का निन्दक इसी प्रकार अकेला रह जाता है जैसे तिल का खोखला बीज खेत में अकेला ही पड़ा रहता है । सन्त का निन्दक कर्त्तव्य, कर्म एवं धर्म से विहीन होता है और सदैव झूठ ही बोलता रहता है । निन्दक का भाग्य प्रारम्भ से ही इसी प्रकार का लिखा हुआ होता है और हे नानक, जो प्रभु को भाता है वही होता है ॥ ६ ॥ सन्त का निन्दक विकृत और भयानक चेहरे वाला हो जाता है और उसे प्रभु दरबार में भी सज़ा मिलती है । सन्त का निन्दक सदैव मरणासन्न बना रहता है और वह न तो मरा हुआ होता है और न ही जीवित होता है । सन्त के निन्दक की कोई भी आशा पूरी नहीं होती और वह निराश होकर इस संसार से उठ जाता है । सन्त का निन्दक होने पर कहीं भी स्थिरता प्राप्त नहीं होती । प्रभु को जैसा अच्छा लगता है व्यक्ति वैसा ही हो जाता है । किए हुए कार्यों के फल को कोई मिटा नहीं सकता, हे नानक, वह सच्चा प्रभु सब कुछ जानता है ॥ ७ ॥ सभी शरीर एवं हृदय उसी कर्त्ता प्रभु के हैं जिसे सदा–सदा नमस्कार किया जाता है । हे जीव, दिन–रात प्रभु की स्तुति करो और हर श्वास् और ग्रास के साथ उसका सुमिरन करो । सब कुछ उसी का किया हुआ ही होता है । वह जिस प्रकार जैसा जिसको चाहता है वैसा कर देता है । अपने खेल का सूत्रधार वह स्वयं ही है; दूसरा कोई भला कौन

कहै बीचारु ॥ जिस नो क्रिपा करै तिसु आपन नामु देइ ॥ बडभागी नानक जन सेइ ॥ ८ ॥ १३ ॥ सलोकु ॥ तजहु सिआनप सुरि जनहु सिमरहु हरि हरि राइ ॥ एक आस हरि मनि रखहु नानक दूखु भरमु भउ जाइ ॥ १ ॥ असटपदी ॥ मानुख की टेक ब्रिथी सभ जानु ॥ देवन कउ एकै भगवानु ॥ जिस कै दीऐ रहै अघाइ ॥ बहुरि न त्रिसना लागै आइ ॥ मारै राखै एको आपि ॥ मानुख कै किछु नाही हाथि ॥ तिस का हुकमु बूझि सुखु होइ ॥ तिस का नामु रखु कंठि परोइ ॥ सिमरि सिमरि सिमरि प्रभु सोइ ॥ नानक बिघनु न लागै कोइ ॥ १ ॥ उसतति मन महि करि निरंकार ॥ करि मन मेरे सति बिउहार ॥ निरमल रसना अंम्रितु पीउ ॥ सदा सुहेला करि लेहि जीउ ॥ नैनहु पेखु ठाकुर का रंगु ॥ साधसंगि बिनसै सभु संगु ॥ चरन चलउ मारगि गोबिंद ॥ मिटहि पाप जपीऐ हरि बिंद ॥ कर हरि करम स्रवनि हरि कथा ॥ हरि दरगह नानक ऊजल मथा ॥ २ ॥ बडभागी ते जन जग माहि ॥ सदा सदा हरि के गुन गाहि ॥ राम नाम जो करहि बीचार ॥ से धनवंत गनी संसार ॥ मनि तनि मुखि बोलहि हरि मुखी ॥ सदा सदा जानहु ते सुखी ॥ एको एकु एकु पछानै ॥ इत उत की ओहु सोझी जानै ॥ नामि संगि जिस का मनु मानिआ ॥ नानक तिनहि निरंजनु जानिआ ॥ ३ ॥ गुर प्रसादि आपन आपु सुझै ॥ तिस की जानहु त्रिसना बुझै ॥ साधसंगि हरि हरि जसु कहत ॥ सरब रोग ते ओहु हरि जनु रहत ॥ अनदिनु कीरतनु केवल बख्यानु ॥ ग्रिहसत महि सोई निरबानु ॥ एक ऊपरि जिसु जन की आसा ॥ तिस की कटीऐ जम की फासा ॥ पारब्रहम की जिसु मनि भूख ॥ नानक तिसहि न लागहि दूख ॥ ४ ॥ जिस कउ हरि प्रभु मनि चिति आवै ॥ सो संतु सुहेला नही डुलावै ॥ जिसु प्रभु अपुना किरपा करै ॥ सो सेवकु कहु किस ते डरै ॥ जैसा सा तैसा द्रिसटाइआ ॥ अपुने कारज महि आपि समाइआ ॥ सोधत सोधत सोधत सीझिआ ॥ गुर प्रसादि ततु सभु बूझिआ ॥ जब देखउ तब सभु किछु मूलु ॥ नानक सो सूखमु सोई असथूलु ॥ ५ ॥ नह किछु जनमै नह किछु मरै ॥ आपन चलितु आप ही करै ॥ आवनु जावनु द्रिसटि अनद्रिसटि ॥ आगिआकारी धारी सभ स्रिसटि ॥

सोच विचार सकता है । जिस पर कृपा करता है उसी को प्रभु अपना नाम देता है और हे नानक ऐसे व्यक्ति ही भाग्यशाली हैं ॥ ८ ॥ १३ ॥ श्लोक ॥ हे देवता स्वरूप भले पुरुषो, अपनी चतुराईयों को छोड़कर केवल प्रभु का सुमिरन करो। मन में केवल एक प्रभु का ही आसरा रखो; हे नानक, समस्त भ्रम, भय और दुख दूर हो जाएंगे ॥ १ ॥ अष्टपदी॥ मनुष्य पर टेक रखने को हे जीव, तू व्यर्थ ही मान क्योंकि देने वाला एक प्रभु है । उसी के दिए जाने से व्यक्ति तृप्त होता है और फिर उसे तृष्णा नहीं सताती । एक प्रभु ही मारता और रक्षा करता है; व्यक्ति के हाथ में कुछ भी नहीं है । उसके हुकुम को समझ लेने से सुख मिलता है और हे जीव, उसी का नाम हृदय में धारण करके रख । हे नानक, प्रभु का सुमिरन करते रहने से कोई भी विघ्न सामने नहीं आता ॥ १ ॥ निराकार प्रभु की स्तुति मन में करो और हे मेरे मन, सत्य का व्यवहार अपनाओ । जीभ से निर्मल अमृत–पान करने से हे जीव, तू अपनी आत्मा को सदा के लिए सुखी कर लेगा । अपनी आँखों से उस परमात्मा के रंगों को देखता रह और साधसंगत में तेरे अन्य सभी कुसंग छूट जाएंगे । चरणों से तू प्रभु के मार्ग पर चल क्योंकि क्षण भर के लिए भी प्रभु का जाप करने से पाप मिट जाते हैं । प्रभु की ही सेवा कर और प्रभु की ही कथा–वार्ता सुन जिससे हे नानक, प्रभु दरबार में तेरा मस्तक उज्जवल हो जाएगा ॥ २ ॥ इस संसार में वे व्यक्ति भाग्यशाली हैं जो सदैव प्रभु का गुणानुवाद करते हैं । जो प्रभु–नाम का विचार और सुमिरन करते हैं उन्हें ही इस संसार में धनवान जाना जाता है । जो तन, मन, धन और मुख से प्रभु–नाम का उच्चारण करते हैं उन्हें ही सदैव सुखी जानना चाहिए । जो केवल एक प्रभु से ही पहचान बनाता है उसे इस लोक और परलोक के बारे में सब पता लग जाता है । हे नानक, जिसका मन प्रभु–नाम में लीन हो गया है वास्तव में उसी ने उस प्रभु को जान लिया है ॥ ३ ॥ जो गुरु की कृपा से अपने आप को जान लेता है उसकी तो समझ लो तृष्णा ही समाप्त हो जाती है । साधसंगत में जो हरि–यश करता है प्रभु का वह सेवक सभी रोगों से मुक्त हो जाता है । जो दिन–रात प्रभु की महिमा का गायन और बखान करता रहता है वही व्यक्ति घरबारी होते हुए भी अलिप्त अवस्था में बना रहता है । जिस व्यक्ति की आशा केवल एक प्रभु ही है उसका यम पाश कट जाता है, हे नानक, जिसके मन में केवल एक प्रभु की ही भूख बनी रहती है उसे कभी भी कोई दुख नहीं लगता ॥ ४ ॥ जिसके मन और चित्त में प्रभु और स्वामी का सुमिरन चलता रहता है वह प्रसन्न मन वाला सन्त कभी भी इधर उधर भटकता नहीं है । जिस सेवक पर प्रभु की कृपा होती है वह भला किसी से क्यों डरेगा ? उसको प्रभु वास्तविक स्वरूप में दृष्टिगोचर होता है और वह जान जाता है कि अपने प्रत्येक कार्य में वह स्वयं ही समाया हुआ है । खोजते खोजते अन्ततः जीव सफल हो जाता है और गुरु की कृपा से वह जीवन के सार–तत्व को जान जाता है । हे नानक, जब भी देखा जाता है तो वही सब पदार्थों के मूल में दिखाई देता है; वही सूक्ष्म है और वही स्थूल है ॥ ५ ॥ न तो कुछ जन्मता है और न ही कुछ मरता है । अपने कौतुक पूर्ण कामों की वही स्वयं ही रचना करता है । आवागमन, गोचरता एवं अगोचरता आदि इस सृष्टि में उसने अपनी आज्ञा में ही रखे हुए हैं।

आपे आपि सगल महि आपि ॥ अनिक जुगति रचि थापि उथापि ॥ अबिनासी नाही किछु खंड ॥ धारण धारि रहिओ ब्रहमंड ॥ अलख अभेव पुरख परताप ॥ आपि जपाए त नानक जाप ॥ ६ ॥ जिन प्रभु जाता सु सोभावंत ॥ सगल संसारु उधरै तिन मंत ॥ प्रभ के सेवक सगल उधारन ॥ प्रभ के सेवक दूख बिसारन ॥ आपे मेलि लए किरपाल ॥ गुर का सबदु जपि भए निहाल ॥ उन की सेवा सोई लागै ॥ जिस नो क्रिपा करहि बडभागै ॥ नामु जपत पावहि बिस्रामु ॥ नानक तिन पुरख कउ ऊतम करि मानु ॥ ७ ॥ जो किछु करै सु प्रभ के रंगि ॥ सदा सदा बसै हरि संगि ॥ सहज सुभाइ होवै सो होइ ॥ करणैहारु पछाणै सोइ ॥ प्रभ का कीआ जन मीठ लगाना ॥ जैसा सा तैसा द्रिसटाना ॥ जिस ते उपजे तिसु माहि समाए ॥ ओइ सुख निधान उनहू बनि आए ॥ आपस कउ आपि दीनो मानु ॥ नानक प्रभ जनु एको जानु ॥ ८ ॥ १४ ॥ सलोकु ॥ सरब कला भरपूर प्रभ बिरथा जाननहार ॥ जा कै सिमरनि उधरीऐ नानक तिसु बलिहार ॥ १ ॥ असटपदी ॥ टूटी गाढनहार गोपाल ॥ सरब जीआ आपे प्रतिपाल ॥ सगल की चिंता जिसु मन माहि ॥ तिस ते बिरथा कोई नाहि ॥ रे मन मेरे सदा हरि जापि ॥ अबिनासी प्रभु आपे आपि ॥ आपन कीआ कछू न होइ ॥ जे सउ प्रानी लोचै कोइ ॥ तिसु बिनु नाही तेरै किछु काम ॥ गति नानक जपि एक हरि नाम ॥ १ ॥ रूपवंतु होइ नाही मोहै ॥ प्रभ की जोति सगल घट सोहै ॥ धनवंता होइ किआ को गरबै ॥ जा सभु किछु तिस का दीआ दरबै ॥ अति सूरा जे कोऊ कहावै ॥ प्रभ की कला बिना कह धावै ॥ जे को होइ बहै दातारु ॥ तिसु देनहारु जानै गावारु ॥ जिसु गुर प्रसादि तूटै हउ रोगु ॥ नानक सो जनु सदा अरोगु ॥ २ ॥ जिउ मंदर कउ थामै थंमनु ॥ तिउ गुर का सबदु मनहि असथंमनु ॥ जिउ पाखाणु नाव चड़ि तरै ॥ प्राणी गुर चरण लगतु निसतरै ॥ जिउ अंधकार दीपक परगासु ॥ गुर दरसनु देखि मनि होइ बिगासु ॥ जिउ महा उदिआन महि मारगु पावै ॥ तिउ साधू संगि मिलि जोति प्रगटावै ॥ तिन संतन की बाछउ धूरि ॥ नानक की हरि लोचा पूरि ॥ ३ ॥ मन मूरख

वह स्वयं ही सब कुछ है और सब में वह आप ही है । उसने अनेकों युक्तियों से रचना बनाई और विनष्ट की है । अविनाशी प्रभु अखण्ड है और उसी ने ही सारे ब्रह्माण्ड को धारण कर रखा है । उस प्रभु का प्रताप अलक्ष्य एवं रहस्यातीत है । हे नानक, व्यक्ति से वह जब अपना नाम जपाता है तब ही व्यक्ति उसका सुमिरन करता है ॥ ६ ॥ जिन्होंने प्रभु को जाना है वे ही शोभा से युक्त हैं । सारे संसार का उनके उपदेश से उद्धार हो जाता है । प्रभु के सेवक सब को बचा लेते हैं और उनकी संगत में दुख भूल जाता है । कृपालु प्रभु उन्हें अपने से मिला लेता है और शब्द–गुरु का जाप करके वे प्रसन्न बने रहते हैं । ऐसे सेवकों की सेवा ऐसे भाग्यशाली ही करते हैं जिन पर प्रभु की कृपा होती है । नाम–सुमिरन करने वाले शान्त अवस्था प्राप्त कर लेते हैं । हे नानक, ऐसे व्यक्तियों को श्रेष्ठ मानना चाहिए ॥ ७ ॥ प्रभु का सेवक जो कुछ भी करता है वह प्रभु के हुकुम के अन्तर्गत ही करता है और प्रभु सदैव उसके साथ ही बसता है । प्रभु का सेवक सहज स्वभाव ही जो होने वाला होता है उसी को स्वीकार करता है और करने वाले प्रभु को पहचान लेता है । प्रभु का किया हुआ सेवक को मीठा लगता है और प्रभु उसे वास्तविक रूप में दृष्टिगोचर होता है । वह जिससे पैदा हुआ है उसी में समा जाता है और सुखों का यह खज़ाना केवल उस सेवक के लिए ही बना होता है । अपने सेवक को प्रभु सम्मान देता है और हे नानक, प्रभु और सेवक को एक ही समझ ॥८॥१४॥श्लोक॥ स्वामी प्रभु सभी शक्तियों सहित व्याप्त है और जीव की व्यथा को जानने वाला है । हे नानक, जिसके सुमिरन से उद्धार होता है मैं उस पर बलिहारी जाता हूँ ॥ १ ॥ सृष्टि का पोषण करने वाला प्रभु अपने से टूटे हुओं को फिर जोड़ लेने वाला है । सब जीवों का पालन वह स्वयं ही करता है । जिसके मन में सबकी चिन्ता है उससे अलग कोई भी नहीं है । हे मेरे मन, तू सदा सदा प्रभु का सुमिरन कर क्योंकि वह अविनाशी प्रभु स्वयं ही सब कुछ है । जीव का अपना किया हुआ कुछ भी नहीं होता बेशक जीव सैंकड़ों बार करने की सोचता रहे । उसके बिना तेरे काम का कुछ भी नहीं होता हे नानक, एक प्रभु–नाम के जाप से ही मुक्ति प्राप्त होती है ॥१॥ जीव केवल रूपवान होकर प्रभु को मोहित नहीं कर सकता क्योंकि उसकी सुन्दर ज्योति तो सभी जीवों में शोभायमान है । जब सारी धन–सम्पदा उसी की दी हुई है तो धनवान होकर भला कोई क्यों अभिमान कर रहा है । यदि कोई अत्यन्त शूरवीर भी कहलाता है तो भला वह भी प्रभु की शक्ति के बिना कहां जा सकता है । यदि कोई दाता बनकर बैठ जाए तो ऐसे दाता को प्रभु मूर्ख ही समझता है । हे नानक, वह व्यक्ति सदा निरोग है जिसका गुरु की कृपा से अहंकार का रोग समाप्त हो गया है ॥२॥ जैसे एक भवन को स्तम्भ थामे रहता है ऐसे ही गुरु का शब्द अर्थात शब्द–गुरु मन को थामे रहता है। जैसे नाव में पड़ा हुआ पत्थर भी पार हो जाता है वैसे ही गुरु के चरणों से लगकर व्यक्ति पार हो जाता है । जिस प्रकार अन्धकार में दीपक प्रकाश देता है उसी तरह से गुरु के दर्शन करके मन खिल उठता है । जैसे भयानक वन में व्यक्ति (मेहनत से) रास्ता ढूँढ लेता है वैसे ही साधसंगत में रहकर वह अपने अन्तर्मन की निर्मल ज्योति को प्रकट कर लेता है । हे प्रभु, नानक की यह आशा पूरी कर दे कि मैं ऐसे साधु पुरुषों की चरण धूलि चाहता रहूँ ॥ ३ ॥

काहे बिललाईऐ ॥ पुरब लिखे का लिखिआ पाईऐ ॥ दूख सूख प्रभ देवनहारु ॥ अवर तिआगि तू तिसहि चितारु ॥ जो कछु करै सोई सुखु मानु ॥ भूला काहे फिरहि अजान ॥ कउन बसतु आई तेरै संगि ॥ लपटि रहिओ रसि लोभी पतंग ॥ राम नाम जपि हिरदे माहि ॥ नानक पति सेती घरि जाहि ॥ ४ ॥ जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥ राम नामु संतन घरि पाइआ ॥ तजि अभिमानु लेहु मन मोलि ॥ राम नामु हिरदे महि तोलि ॥ लादि खेप संतह संगि चालु ॥ अवर तिआगि बिखिआ जंजाल ॥ धंनि धंनि कहै सभु कोइ ॥ मुख ऊजल हरि दरगह सोइ ॥ इहु वापारु विरला वापारै ॥ नानक ता कै सद बलिहारै ॥ ५ ॥ चरन साध के धोइ धोइ पीउ ॥ अरपि साध कउ अपना जीउ ॥ साध की धूरि करहु इसनानु ॥ साध ऊपरि जाईऐ कुरबानु ॥ साध सेवा वडभागी पाईऐ ॥ साधसंगि हरि कीरतनु गाईऐ ॥ अनिक बिघन ते साधू राखै ॥ हरि गुन गाइ अंम्रित रसु चाखै ॥ ओट गही संतह दरि आइआ ॥ सरब सूख नानक तिह पाइआ ॥ ६ ॥ मिरतक कउ जीवालनहार ॥ भूखे कउ देवत अधार ॥ सरब निधान जा की द्रिसटी माहि ॥ पुरब लिखे का लहणा पाहि ॥ सभु किछु तिस का ओहु करनै जोगु ॥ तिसु बिनु दूसर होआ न होगु ॥ जपि जन सदा सदा दिनु रैणी ॥ सभ ते ऊच निरमल इह करणी ॥ करि किरपा जिस कउ नामु दीआ ॥ नानक सो जनु निरमलु थीआ ॥ ७ ॥ जा के मनि गुर की परतीति ॥ तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति ॥ भगतु भगतु सुनीऐ तिहु लोइ ॥ जा कै हिरदै एको होइ ॥ सचु करणी सचु ता की रहत ॥ सचु हिरदै सति मुखि कहत ॥ साची द्रिसटि साचा आकारु ॥ सचु वरतै साचा पासारु ॥ पारब्रहमु जिनि सचु करि जाता ॥ नानक सो जनु सचि समाता ॥ ८ ॥ १५ ॥ सलोकु ॥ रूपु न रेख न रंगु किछु त्रिहु गुण ते प्रभ भिंन ॥ तिसहि बुझाए नानका जिसु होवै सुप्रसंन ॥ १ ॥ असटपदी ॥ अबिनासी प्रभु मन महि राखु ॥ मानुख की तू प्रीति तिआगु ॥ तिस ते परै नाही किछु कोइ ॥ सरब निरंतरि एको सोइ ॥ आपे बीना आपे दाना ॥ गहिर गंभीरु गहीरु सुजाना ॥ पारब्रहम परमेसुर गोबिंद ॥ क्रिपा निधान दइआल बखसंद ॥ साध

हे मूर्ख मन, तू क्यों प्रलाप कर रहा है क्योंकि वही मिलता है जो पूर्व से ही भाग्य में लिखा होता है । प्रभु सुख और दुख दोनों ही देने वाला है इसलिए तू अन्यों को त्याग कर केवल उसी का सुमिरन कर । वह जो कुछ करता है उसमें ही सुख मान और हे नासमझ जीव, तू क्यों भूला हुआ भटक रहा है । तेरे साथ कौन सी वस्तु आई है जिससे तू सांसारिक रसों में लोभी पतंगे की तरह लिपटा हुआ है । तू अपने मन में प्रभु–नाम का जाप कर और हे नानक, इस प्रकार तू सम्मान सहित अपने मूल ठिकाने अर्थात प्रभु के पास चला जाएगा ॥ ४ ॥ जिस राम–नाम रूपी सौदे को लेने के लिए तू यहां आया है वह सौदा शान्त पुरुषों के पास ही प्राप्त होता है । तू अभिमान का त्याग कर और मन में राम–नाम रूपी सौदे को तौल ले और तौलकर उसे मोल ले ले । अपनी खेप को लादकर शान्त पुरुषों के संग चलता चल और विषयों के अन्य जंजालों को त्याग दे । इस प्रकार प्रभु दरबार में तेरी महिमा होगी, तेरा मुख उज्जवल होगा और सभी तुझे धन्य–धन्य कहेंगे । कोई बिरला ही इस सौदे का व्यापारी होता है । नानक ऐसे व्यापारी पर सदैव बलिहारी जाता है ॥ ५ ॥ साधु के चरणों को धो–धोकर पीना चाहिए और साधु व्यक्ति को अपनी आत्मा भी अर्पण कर देनी चाहिए । साधु की चरण–धूलि में स्नान करो और साधु पर कुर्बान हो जाओ । बड़े भाग्य से साधु की सेवा प्राप्त होती है और साधसंगत में ही प्रभु–गुणानुवाद होता है । अनेकों विघ्नों से साधु रक्षा करता है और वह हरि गुण गाता हुआ अमृत रस का पान करता है । हे नानक, जो शान्त पुरुषों का आसरा लेकर उनके द्वार पर आ गया वह सब प्रकार के सुखों को पा लेता है ॥ ६ ॥ प्रभु मृतक को भी जिला देने वाला है और भूखे को भी जीवन देता है । उसकी दृष्टि में ही सभी ख़जाने विद्यमान है परन्तु व्यक्ति वही पाता है जिसे पूर्व से ही उसके लिए लिखा गया है । सब कुछ उसी का है और वही सब कुछ करने के योग्य है । उसके अतिरिक्त न तो कोई हुआ है और न ही होगा । हे जीव, दिन–रात तू सदैव उसका जाप कर और यही जीवन व्यवहार सबसे ऊँचा और निर्मल है । हे नानक, वह व्यक्ति पवित्र हो जाता है जिसे कृपा करके प्रभु ने अपना नाम दे दिया है ॥ ७ ॥ जिसके मन में गुरु का प्रेम है उसे हरि–प्रभु की याद चित्त में आती रहती है । जिसके हृदय में केवल एक प्रभु होता है, तीनों लोकों में उसे भक्त और श्रेष्ठ भक्त सुना और कहा जाता है । उसका व्यवहार और कार्य सच्चे होते हैं । उसके हृदय और मुख में भी सत्य ही होता है । उसकी दृष्टि और उसका स्वरूप सच्चा होता है । वह सत्य का ही व्यवहार करता है और सत्य का ही प्रसार करता है । प्रभु को जिसने सत्य रूप में जान लिया है, हे नानक, वह सेवक सत्य में ही लीन हो जाता है ॥ ८ ॥ १५ ॥ श्लोक ॥ तीनों गुणों से अलग प्रभु का न तो कोई रूप है, न आकार है और न ही कोई रंग है । हे नानक, जिस पर वह प्रसन्न होता है उसे ही वह अपना आप जनवाता है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ हे जीव, मनुष्य की प्रीति को त्याग कर तू उस अविनाशी प्रभु को ही मन में याद रख । उससे परे कुछ भी नहीं है क्योंकि वह एक प्रभु ही सबके अन्दर रमण कर रहा है । वह स्वयं ही अन्तर्यामी है और स्वयं ही देने वाला है । वह गहरा है, गम्भीर है और सुजान भी है । वह परब्रह्म परमेश्वर सृष्टि का स्वामी, कृपानिधान, दयालु एवं क्षमा कर देने वाला है ।

तेरे की चरनी पाउ ॥ नानक कै मनि इहु अनराउ ॥ १ ॥ मनसा पूरन सरना जोग ॥ जो करि पाइआ सोई होगु ॥ हरन भरन जा का नेत्र फोरु ॥ तिस का मंत्रु न जानै होरु ॥ अनद रूप मंगल सद जा कै ॥ सरब थोक सुनीअहि घरि ता कै ॥ राज महि राजु जोग महि जोगी ॥ तप महि तपीसरु ग्रिहसत महि भोगी ॥ धिआइ धिआइ भगतह सुखु पाइआ ॥ नानक तिसु पुरख का किनै अंतु न पाइआ ॥ २ ॥ जा की लीला की मिति नाहि ॥ सगल देव हारे अवगाहि ॥ पिता का जनमु कि जानै पूतु ॥ सगल परोई अपुनै सूति ॥ सुमति गिआनु धिआनु जिन देइ ॥ जन दास नामु धिआवहि सेइ ॥ तिहु गुण महि जा कउ भरमाए ॥ जनमि मरै फिरि आवै जाए ॥ ऊच नीच तिस के असथान ॥ जैसा जनावै तैसा नानक जान ॥ ३ ॥ नाना रूप नाना जा के रंग ॥ नाना भेख करहि इक रंग ॥ नाना बिधि कीनो बिसथारु ॥ प्रभु अबिनासी एकंकारु ॥ नाना चलित करे खिन माहि ॥ पूरि रहिओ पूरनु सभ ठाइ ॥ नाना बिधि करि बनत बनाई ॥ अपनी कीमती आपे पाई ॥ सभ घट तिस के सभ तिस के सभ तिस के ठाउ ॥ जपि जपि जीवै नानक हरि नाउ ॥ ४ ॥ नाम के धारे सगले जंत ॥ नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥ नाम के धारे सिम्रिति बेद पुरान ॥ नाम के धारे सुनन गिआन धिआन ॥ नाम के धारे आगास पाताल ॥ नाम के धारे सगल आकार ॥ नाम के धारे पुरीआ सभ भवन ॥ नाम कै संगि उधरे सुनि स्रवन ॥ करि किरपा जिसु आपनै नामि लाए ॥ नानक चउथे पद महि सो जनु गति पाए ॥ ५ ॥ रूपु सति जा का सति असथानु ॥ पुरखु सति केवल परधानु ॥ करतूति सति सति जा की बाणी ॥ सति पुरख सभ माहि समाणी ॥ सति करमु जा की रचना सति ॥ मूलु सति सति उतपति ॥ सति करणी निरमल निरमली ॥ जिसहि बुझाए तिसहि सभ भली ॥ सति नामु प्रभ का सुखदाई ॥ बिस्वासु सति नानक गुर ते पाई ॥ ६ ॥ सति बचन साधू उपदेस ॥ सति ते जन जा कै रिदै प्रवेस ॥ सति निरति बूझै जे कोइ ॥ नामु जपत ता की गति होइ ॥ आपि सति कीआ सभु सति ॥ आपे जानै अपनी

नानक के मन में यही इच्छा है कि वह साधुजनों के चरणों पर आन पड़े ॥ १ ॥ प्रभु आशाओं को पूर्ण करने वाला और शरण देने में समर्थ है। प्रभु ने जैसा विधान बना दिया है वैसा ही होता है। खाली कर देना और भर देना उसके आँख झपकने के साथ ही हो जाता है। अन्य कोई भी उसके रहस्य को नहीं जानता। सदैव मंगल रूप में बना रहने वाला वह आनन्दस्वरूप है और सुना जाता है कि सभी पदार्थ उसके घर में विद्यमान हैं। राजाओं में राजा, योगियों में योगी, तपस्वियों में तपीश्वर और गृहस्थियों में वह सांसारिक भोगों को भोगने वाला है। लगातार उसका सुमिरन करने वाले भक्त सुख प्राप्त करते हैं और हे नानक, उस प्रभु का अन्तिम छोर किसी को भी नहीं मिल सका है ॥ २॥ उसकी लीला की कोई सीमा नहीं है और सभी देवतागण भी उसको खोजते हुए थक गये हैं। पिता के जन्म के बारे में पुत्र भला क्या जानेगा ? संसार के सभी पदार्थ उसने अपनी कृपा के धागे में पिरो कर रखे हुए हैं। उसके सेवक जिन्हें प्रभु सुमति, ज्ञान, ध्यान आदि देता है वे ही उसके नाम का सुमिरन करते हैं। जिसे प्रभु तीनों गुणों में ही भटकाता रहता है वह जन्मता–मरता बार बार आता जाता रहता है। ऊँचे नीचे सभी स्थान उसी के हैं। हे नानक, जैसा वह जनवाता है वैसा ही तू उसे जानता है ॥ ३ ॥ उसके अनेकों रूप, रंग और वेश हैं परन्तु फिर भी वह एक ही बना रहता है। उसने अनेक विधियों से अपना विस्तार किया हुआ है परन्तु स्वयं वह प्रभु अविनाशी एवं अद्वितीय है। क्षण भर में ही वह अनेकों खेल खेल जाता है और वह पूर्ण प्रभु सभी स्थानों में पूर्ण रूप से व्याप्त है। अनेकों विधियों से उसने रचना बनाई है और वह अपनी कीमत को आप ही जानता और निश्चित करता है। सभी हृदय एवं सभी स्थान उसके हैं; नानक तो केवल प्रभु–नाम का सुमिरन करते रहने से ही जीवित बना हुआ है ॥ ४ ॥ प्रभु नाम ने ही सभी जीवों को आश्रय दिया हुआ है और नाम ही सारे खण्डों एवं ब्रह्माण्डों का आधार है। नाम ने ही स्मृति, वेद, पुराण आदि को धारण कर रखा है और नाम के आधार से ही सुनना, ध्यान करना और ज्ञानवान होना संभव होता है। प्रभु–नाम ने ही आकाश, पाताल और सभी आकारों को धारण कर रखा है। नाम ही सभी पुरियों, भुवनों का आधार है। नाम की संगत में ही नाम सुनकर अनेकों जीव पार उतर गए हैं। हे नानक, वह सेवक चौथे पद (तुरीय अवस्था) में पहुँच कर मुक्त हो जाता है जिस पर प्रभु कृपा करके उसे अपने नाम में लीन कर लेता है ॥ ५ ॥ उसका स्वरूप और स्थान सत्य है। उसका व्यक्तित्व भी सत्य है और केवल वही सर्वोच्च है। उसकी वाणी एवं व्यवहार सब सत्य है। वही बलशाली सत्य सबमें समाया हुआ है। उसका व्यवहार और उसकी सृष्टि सत्य है। उत्पत्ति भी सत्य है और इस उत्पत्ति का मूल (प्रभु) भी सत्य है। परम पवित्र उसकी कार्य–शैली भी सत्य है। जिसे वह इसका रहस्य बुझाता है उसी के लिए सब कुछ भला बन जाता है। प्रभु का सत्य–नाम सुखदायक है; हे नानक, उस सत्य पर विश्वास गुरु के पास से प्राप्त किया जाता है ॥ ६ ॥ साधु पुरुषों के वचन और उपदेश भी सत्य हैं। वे सेवक भी सत्य हैं जिनके हृदय में प्रभु प्रवेश कर चुका है। यदि कोई सत्य और असत्य को जान जाए तो प्रभु का नाम जपते हुए वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है। प्रभु स्वयं सत्य है और उसने जो भी उत्पन्न किया है सब सत्य है। वह स्वयं ही अपनी

मिति गति ॥ जिस की स्रिसटि सु करणैहारु ॥ अवर न बूझि करत बीचारु ॥ करते की मिति न जानै कीआ ॥ नानक जो तिसु भावै सो वरतीआ ॥ ७ ॥ बिसमन बिसम भए बिसमाद ॥ जिनि बूझिआ तिसु आइआ स्वाद ॥ प्रभ कै रंगि राचि जन रहे ॥ गुर कै बचनि पदारथ लहे ॥ ओइ दाते दुख काटनहार ॥ जा कै संगि तरै संसार ॥ जन का सेवकु सो वडभागी ॥ जन कै संगि एक लिव लागी ॥ गुन गोबिद कीरतनु जनु गावै ॥ गुर प्रसादि नानक फलु पावै ॥ ८ ॥ १६ ॥ सलोकु ॥ आदि सचु जुगादि सचु ॥ है भि सचु नानक होसी भि सचु ॥ १ ॥ असटपदी ॥ चरन सति सति परसनहार ॥ पूजा सति सति सेवदार ॥ दरसनु सति सति पेखनहार ॥ नामु सति सति धिआवनहार ॥ आपि सति सति सभ धारी ॥ आपे गुण आपे गुणकारी ॥ सबदु सति सति प्रभु बकता ॥ सुरति सति सति जसु सुनता ॥ बुझनहार कउ सति सभ होइ ॥ नानक सति सति प्रभु सोइ ॥ १ ॥ सति सरूपु रिदै जिनि मानिआ ॥ करन करावन तिनि मूलु पछानिआ ॥ जा कै रिदै बिस्वासु प्रभ आइआ ॥ ततु गिआनु तिसु मनि प्रगटाइआ ॥ भै ते निरभउ होइ बसाना ॥ जिस ते उपजिआ तिसु माहि समाना ॥ बसतु माहि ले बसतु गडाई ॥ ता कउ भिंन न कहना जाई ॥ बूझै बूझनहारु बिबेक ॥ नाराइन मिले नानक एक ॥ २ ॥ ठाकुर का सेवकु आगिआकारी ॥ ठाकुर का सेवकु सदा पूजारी ॥ ठाकुर के सेवक कै मनि परतीति ॥ ठाकुर के सेवक की निरमल रीति ॥ ठाकुर कउ सेवकु जानै संगि ॥ प्रभ का सेवकु नाम कै रंगि ॥ सेवक कउ प्रभ पालनहारा ॥ सेवक की राखै निरंकारा ॥ सो सेवकु जिसु दइआ प्रभु धारै ॥ नानक सो सेवकु सासि सासि समारै ॥ ३ ॥ अपुने जन का परदा ढाकै ॥ अपने सेवक की सरपर राखै ॥ अपने दास कउ देइ वडाई ॥ अपने सेवक कउ नामु जपाई ॥ अपने सेवक की आपि पति राखै ॥ ता की गति मिति कोइ न लाखै ॥ प्रभ के सेवक कउ को न पहूचै ॥ प्रभ के सेवक ऊच ते ऊचे ॥ जो प्रभि अपनी सेवा लाइआ ॥ नानक सो सेवकु दह दिसि प्रगटाइआ ॥ ४ ॥ नीकी कीरी महि कल राखै ॥ भसम करै लसकर कोटि लाखै ॥ जिस का सासु न काढत आपि ॥

सीमा और गति को जानता है । जिसकी रचना है वही इसका सृजनहार है । अन्य कोई भी बेशक कितना विचार कर ले उसे नहीं बूझ सकता । उसके द्वारा बनाया गया जीव उसकी सीमा को नहीं जान सकता है; हे नानक, जो उसे भाता है केवल वही होता है ॥ ७ ॥ अद्‌भुत आश्चर्य को देखकर मैं आश्चर्यचकित हो गया हूँ । जिसने उसे जाना है उसी को आनन्द आया है । प्रभु के सेवक उसके प्रेम में ही लीन रहते हैं और गुरु के उपदेश के माध्यम से चारों पदार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) को प्राप्त कर लेते हैं । वे ही दाता और दुखों को काटने वाले होते हैं और उन्हीं के साथ सारा संसार पार उतर जाता है । सेवक का भी सेवक भाग्यशाली होता है क्योंकि उसके साथ रहकर ही व्यक्ति की सुरति एक प्रभु में ही लगी रहती है । प्रभु का सेवक प्रभु की कीर्ति का गायन करता है और हे नानक, गुरु की कृपा से वह फल प्राप्त कर लेता है ॥ ८ ॥ १६ ॥ श्लोक ॥ प्रारम्भ में भी सत्य था, युगों के प्रारम्भ में भी सत्य था, वर्तमान में भी सत्य है और भविष्य में भी सत्य ही विद्यमान रहेगा ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ प्रभु के चरण सत्य हैं और उनका स्पर्श करने वाले भी सत्य हैं । प्रभु की उपासना भी सत्य है और प्रभु के सेवक भी सत्य हैं । दर्शन भी सत्य है और दर्शन करने वाले भी सत्य हैं । प्रभु-नाम और उसका सुमिरन करने वाले सत्य हैं । वह स्वयं सत्य है और सत्य-स्वरूप में ही उसने सबको धारण कर रखा है । वह स्वयं गुण है और गुण देने वाला भी है । प्रभु का शब्द भी सत्य है और वक्ता-प्रभु भी सत्य है । सुरति भी सत्य है और उसका यश सुनने वाले भी सत्य हैं । जो उसे बूझता है उसके लिए सभी सत्य हैं । हे नानक, वह प्रभु सत्य ही सत्य है ॥ १ ॥ जिसने हृदय में उसे सत्य-स्वरूप में मान लिया है उसने वास्तव में करने कराने वाले मूल रूपी प्रभु को पहचान लिया है । जिसके हृदय में प्रभु का विश्वास बैठ गया है उसके मन में तत्व-ज्ञान प्रकट हो जाता है । वह भय को त्याग कर निर्भय होकर बसता है और इस प्रकार जिससे वह उत्पन्न हुआ था उसी में लीन हो जाता है । जब एक वस्तु दूसरी वस्तु में लीन हो जाती है तो उससे उसे भिन्न नहीं कहा जा सकता । केवल विवेकशील ही इस तथ्य को बूझते हैं और हे नानक, प्रभु के साथ मिलकर एक ही हो जाते हैं ॥ २ ॥ प्रभु का सेवक आज्ञाकारी और सदैव प्रभु का उपासक होता है । प्रभु के सेवक के मन में प्रेम होता है और उसका जीवन-ढंग भी निर्मल एवं पवित्र होता है । सेवक स्वामी को सदा साथ ही मानता है और वह प्रभु-नाम में ही रंगा रहता है । मालिक भी अपने सेवक का पालनहार होता है और निराकार प्रभु अपने सेवक के सम्मान की रक्षा करता है । सेवक वही है जिस पर प्रभु दयालु होता है और, हे नानक, वही सेवक प्रत्येक श्वास के साथ प्रभु का सुमिरन करता रहता है ॥ ३ ॥ प्रभु अपने सेवक के दोषों पर पर्दा डाल देता है और अपने सेवक की अवश्य ही लाज रखता है । वह अपने दास को बड़प्पन प्रदान करता है और अपने नाम का सुमिरन करवाता है । अपने सेवक की प्रभु स्वयं इज़्ज़त बचाता है और उसकी कार्य-विधि और सीमा को कोई नहीं देख सकता । प्रभु के सेवकों की कोई भी बराबरी नहीं कर सकता क्योंकि प्रभु के सेवक सर्वोच्च होते हैं । प्रभु ने जिसे अपनी सेवा में लीन कर लिया, हे नानक, वही सेवक दसों दिशाओं में प्रसिद्ध हो जाता है ॥ ४ ॥ यदि छोटी सी कीड़ी (चींटी) में भी वह अपनी शक्ति स्थित कर दे तो वह लाखों करोड़ों व्यक्तियों की सेना को राख कर सकती है । जिस व्यक्ति का श्वास

ता कउ राखत दे करि हाथ ॥ मानस जतन करत बहु भाति ॥ तिस के करतब बिरथे जाति ॥ मारै न राखै अवरु न कोइ ॥ सरब जीआ का राखा सोइ ॥ काहे सोच करहि रे प्राणी ॥ जपि नानक प्रभ अलख विडाणी ॥ ५ ॥ बारंबार बार प्रभु जपीऐ ॥ पी अंम्रितु इहु मनु तनु ध्रपीऐ ॥ नाम रतनु जिनि गुरमुखि पाइआ ॥ तिसु किछु अवरु नाही द्रिसटाइआ ॥ नामु धनु नामो रूपु रंगु ॥ नामो सुखु हरि नाम का संगु ॥ नाम रसि जो जन त्रिपताने ॥ मन तन नामहि नामि समाने ॥ ऊठत बैठत सोवत नाम ॥ कहु नानक जन के सद काम ॥ ६ ॥ बोलहु जसु जिहबा दिनु राति ॥ प्रभि अपनै जन कीनी दाति ॥ करहि भगति आतम कै चाइ ॥ प्रभ अपने सिउ रहहि समाइ ॥ जो होआ होवत सो जानै ॥ प्रभ अपने का हुकमु पछानै ॥ तिस की महिमा कउन बखानउ ॥ तिस का गुनु कहि एक न जानउ ॥ आठ पहर प्रभ बसहि हजूरे ॥ कहु नानक सेई जन पूरे ॥ ७ ॥ मन मेरे तिन की ओट लेहि ॥ मनु तनु अपना तिन जन देहि ॥ जिनि जनि अपना प्रभू पछाता ॥ सो जनु सरब थोक का दाता ॥ तिस की सरनि सरब सुख पावहि ॥ तिस कै दरसि सभ पाप मिटावहि ॥ अवर सिआनप सगली छाडु ॥ तिसु जन की तू सेवा लागु ॥ आवनु जानु न होवी तेरा ॥ नानक तिसु जन के पूजहु सद पैरा ॥ ८ ॥ १७ ॥ सलोकु ॥ सति पुरखु जिनि जानिआ सतिगुरु तिस का नाउ ॥ तिस कै संगि सिखु उधरै नानक हरि गुन गाउ ॥ १ ॥ असटपदी ॥ सतिगुरु सिख की करै प्रतिपाल ॥ सेवक कउ गुरु सदा दइआल ॥ सिख की गुरु दुरमति मलु हिरै ॥ गुर बचनी हरि नामु उचरै ॥ सतिगुरु सिख के बंधन काटै ॥ गुर का सिखु बिकार ते हाटै ॥ सतिगुरु सिख कउ नाम धनु देइ ॥ गुर का सिखु वडभागी हे ॥ सतिगुरु सिख का हलतु पलतु सवारै ॥ नानक सतिगुरु सिख कउ जीअ नालि समारै ॥ १ ॥ गुर कै ग्रिहि सेवकु जो रहै ॥ गुर की आगिआ मन महि सहै ॥ आपस कउ करि कछु न जनावै ॥ हरि हरि नामु रिदै सद धिआवै ॥ मनु बेचै सतिगुर कै पासि ॥ तिसु सेवक के कारज रासि ॥ सेवा करत होइ निहकामी ॥ तिस कउ होत परापति सुआमी

प्रभु स्वयं नहीं समाप्त करना चाहता उसे वह स्वयं हाथ देकर बचा लेता है । व्यक्ति अनेकों प्रकार के यत्न करता है परन्तु उसके सभी कार्य व्यर्थ हो जाते हैं । प्रभु के बिना अन्य कोई भी न तो मार सकता है और न ही बचा सकता है क्योंकि सभी जीवों का रखवाला वह एक ही है । हे जीव, तू क्यों चिन्ता करता है और हे नानक, तू उस अदृष्ट एवं आश्चर्य प्रभु का सुमिरन कर ॥ ५ ॥ बार बार प्रभु के नाम का उच्चारण किया जाए क्योंकि प्रभु–नाम के अमृत–पान से मन और तन तृप्त हो जाता है । जिस गुरमुख ने नाम–रत्न पा लिया है उसे प्रभु के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं दिखाई देता । उसके लिए नाम ही धन है, सौन्दर्य है और प्रसन्नता भी है । नाम से ही उसे सुख मिलता है और हरि–नाम ही उसका संगी–साथी है । जो व्यक्ति नाम रूपी अमृत रस से तृप्त हो चुके हैं उनका मन और तन नाम में ही लीन बना रहता है । नानक कहता है कि प्रभु के सेवक का सदैव यही व्यवहार रहता है कि वह उठते, बैठते, सोते प्रभु–नाम का ही सुमिरन करता है ॥ ६ ॥ प्रभु ने अपने सेवक को यह दान स्वरूप दिया है कि उसकी जीभ दिन–रात प्रभु के यश का गान करती रहती है । प्रभु का सेवक हृदय की उमंग के साथ प्रभु की भक्ति करता है और प्रभु में ही लीन बना रहता है । जो हो चुका है और जो हो रहा है वह सब कुछ जानता है और उसे अपने प्रभु के हुकम की भली–भांति पहचान होती है । उसकी महिमा का बखान कौन कर सकता है । उसके एक गुण का भी बखान नहीं किया जा सकता । हे नानक, वे ही पूर्ण सेवक हैं जो आठों प्रहर प्रभु के साथ ही बने रहते हैं ॥ ७ ॥ हे मेरे मन, उनके चरण पकड़ और अपना हृदय और शरीर ऐसे सेवकों को अर्पण कर दे । जिस सेवक ने अपने प्रभु को पहचान लिया है वह सेवक सभी पदार्थों का दाता है । उसकी शरण में सभी सुख प्राप्त होते हैं और उसके दर्शन से सभी पाप नष्ट हो जाते हैं । तू अपनी समस्त अन्य चतुराईयों को छोड़ दे और ऐसे प्रभु–सेवकों की सेवा में लीन हो जा । हे नानक, ऐसे सेवकों के चरणों की वन्दना सदैव करो जिससे तुम्हारा आवागमन समाप्त हो जाएगा ॥ ८ ॥ १७ ॥ श्लोक॥ सत्य प्रभु को जानने वाले का ही नाम सत्गुरु है । हे नानक, प्रभु के गुण गाते हुए ऐसे सद्गुरु की संगत में ही शिष्यों का उद्धार होता है ॥ अष्टपदी ॥ सच्चा गुरु अपने शिष्य का पालन पोषण करता है और अपने सेवक पर सदैव दयालु बना रहता है । गुरु शिष्य की दुर्मति रूपी मल को धो देता है और गुरु के वचनों के माध्यम से शिष्य भी हरि–नाम का उच्चारण करता है । यदि गुरु का शिष्य अपने आपको विकारों से दूर कर ले तो सच्चा गुरु अपने शिष्य के बन्धनों को काट देता है । गुरु का शिष्य भाग्यशाली होता है जिसे सच्चा गुरु नाम रूपी धन प्रदान करता है । सच्चा गुरु सिक्ख का यह लोक एवं परलोक सँवार देता है और हे नानक, सच्चा गुरु ही पूरे मन से शिष्य की सम्भाल करता है ॥ १॥ जो सेवक गुरु के घर में रहते हुए गुरु की आज्ञा को मन से स्वीकार करता है, अपने आप को किसी तरह भी जनवाता नहीं, हृदय से सदैव प्रभु–नाम का सुमिरन करता है तथा अपने मन प्राण को सच्चे गुरु के पास बेच देता है, ऐसे सेवक के सभी कार्य सँवर जाते हैं । सेवा करते हुए जो फल की इच्छा नहीं रखता वह प्रभु को पा लेता है ।

॥ अपनी क्रिपा जिसु आपि करेइ ॥ नानक सो सेवकु गुर की मति लेइ ॥ २ ॥ बीस बिसवे गुर का मनु मानै ॥ सो सेवकु परमेसुर की गति जानै ॥ सो सतिगुरु जिसु रिदै हरि नाउ ॥ अनिक बार गुर कउ बलि जाउ ॥ सरब निधान जीअ का दाता ॥ आठ पहर पारब्रहम रंगि राता ॥ ब्रहम महि जनु जन महि पारब्रहमु ॥ एकहि आपि नही कछु भरमु ॥ सहस सिआनप लइआ न जाईऐ ॥ नानक ऐसा गुरु बडभागी पाईऐ ॥ ३ ॥ सफल दरसनु पेखत पुनीत ॥ परसत चरन गति निरमल रीति ॥ भेटत संगि राम गुन रवे ॥ पारब्रहम की दरगह गवे ॥ सुनि करि बचन करन आघाने ॥ मनि संतोखु आतम पतीआने ॥ पूरा गुरु अख्यओ जा का मंत्र ॥ अंम्रित द्रिसटि पेखै होइ संत ॥ गुण बिअंत कीमति नही पाइ ॥ नानक जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥ ४ ॥ जिहबा एक उसतति अनेक ॥ सति पुरख पूरन बिबेक ॥ काहू बोल न पहुचत प्रानी ॥ अगम अगोचर प्रभ निरबानी ॥ निराहार निरवैर सुखदाई ॥ ता की कीमति किनै न पाई ॥ अनिक भगत बंदन नित करहि ॥ चरन कमल हिरदै सिमरहि ॥ सद बलिहारी सतिगुर अपने ॥ नानक जिसु प्रसादि ऐसा प्रभु जपने ॥ ५ ॥ इहु हरि रसु पावै जनु कोइ ॥ अंम्रितु पीवै अमरु सो होइ ॥ उसु पुरख का नाही कदे बिनास ॥ जा कै मनि प्रगटे गुनतास ॥ आठ पहर हरि का नामु लेइ ॥ सचु उपदेसु सेवक कउ देइ ॥ मोह माइआ कै संगि न लेपु ॥ मन महि राखै हरि हरि एकु ॥ अंधकार दीपक परगासे ॥ नानक भरम मोह दुख तह ते नासे ॥ ६ ॥ तपति माहि ठाढि वरताई ॥ अनदु भइआ दुख नाठे भाई ॥ जनम मरन के मिटे अंदेसे ॥ साधू के पूरन उपदेसे ॥ भउ चूका निरभउ होइ बसे ॥ सगल बिआधि मन ते खै नसे ॥ जिस का सा तिनि किरपा धारी ॥ साधसंगि जपि नामु मुरारी ॥ थिति पाई चूके भ्रम गवन ॥ सुनि नानक हरि हरि जसु स्रवन ॥ ७ ॥ निरगुनु आपि सरगुनु भी ओही ॥ कला धारि जिनि सगली मोही ॥ अपुने चरित प्रभि आपि बनाए ॥ अपुनी कीमति आपे पाए ॥ हरि बिनु दूजा नाही कोइ ॥ सरब निरंतरि एको सोइ ॥ ओति पोति रविआ रूप रंग ॥ भए

जिस पर प्रभु स्वयं कृपा करता है, हे नानक, वही सेवक गुरु की शिक्षा को जीवन में धारण करता है ॥२॥ जो सेवक पूर्ण रूप से गुरु के मन को प्रसन्न कर लेता है वही परमेश्वर की गति को पहचान जाता है। वही सच्चा गुरु है जिसके हृदय में प्रभु–नाम है; मैं ऐसे गुरु पर अनेकों बार बलिहारी जाता हूँ। प्रभु ही जीवन देने वाला है और प्रत्येक वस्तु का भण्डार है। सच्चा गुरु आठों प्रहर परमात्मा के रंग में रंगा रहता है। प्रभु का सेवक प्रभु में, और प्रभु सेवक में बसता है। इसमें तनिक भी भ्रम नहीं है कि ये दोनों एक ही हैं। हजारों चतुराईयों के फलस्वरूप भी गुरु प्राप्त नहीं होता और हे नानक, बड़े भाग्य से ही प्रभु का सेवक रूपी गुरु मिलता है ॥ ३ ॥ ऐसे गुरु का दर्शन धन्य है और उसे देखने मात्र से व्यक्ति पवित्र हो जाता है। उनके चरण–स्पर्श से व्यक्ति का कार्य–व्यवहार और आचरण निर्मल हो जाता है। व्यक्ति उनकी संगत में प्रभु के गुणों में रमण करता है और ऐसा करते हुए प्रभु के दरबार में जा पहुँचता है। गुरु के वचनों से कान तृप्त हो जाते हैं, मन संतुष्ट हो जाता है और आत्मा आनन्दित हो उठती है। गुरु पूर्ण होता है और उसका उपदेश भी अक्षय अर्थात कभी नाश न होने वाला है। जिसे वह अपनी अमृत–दृष्टि से देखता है वही एक शान्त व्यक्ति बन जाता है। गुरु के अनन्त गुणों की कीमत को आंका नहीं जा सकता। हे नानक, जो प्रभु गुरु को अच्छा लगता है उसी को वह अपने साथ मिला लेता है ॥ ४ ॥ जीव तो एक है परन्तु प्रभु के गुण अनेक हैं। वह पूर्ण विवेकशील, सच्चा एवं बलशाली है। किसी भी कथन से प्राणी उस तक पहुँच नहीं सकता क्योंकि वह प्रभु अगम्य, अगोचर एवं पवित्रतम है। वह आहारों के आश्रय से परे, निरवैर और सुख देने वाला है। उसकी कीमत अर्थात ओर–छोर कोई भी आंक नहीं पाया है। अनेकों भक्त सदैव उसकी वन्दना करते हुए उसके चरण–कमलों का हृदय में ध्यान करते हैं। नानक ऐसे सच्चे गुरु पर सदैव बलिहारी जाता है जिसकी कृपा स्वरूप वह ऐसे प्रभु का सुमिरन करता है॥५॥ यह प्रभु–रस किसी बिरले को ही प्राप्त होता है जो इस अमृत को पीता है और अमर हो जाता है। जिसके हृदय में गुणों का खज़ाना प्रकट हो उठता है उस व्यक्ति का कभी भी विनाश नहीं होता। आठों प्रहर ही वह प्रभु का नाम लेता रहता है और अपने सेवक को सत्य का उपदेश देता रहता है। वह सांसारिक मोह–माया में लिप्त नहीं होता और मन में केवल एक ही प्रभु को टिकाए रहता है। माया रूपी घोर अन्धकार में उसके लिए ज्ञान–दीपक प्रकाशित हो उठता है और हे नानक, भ्रम, मोह, दुख उसके पास से भाग खड़े होते हैं ॥ ६ ॥ हे भाई, साधु पुरुष के पूर्ण उपदेश के फलस्वरूप सांसारिक तपन में भी ठण्डक आ जाती है, आनन्द ही आनन्द हो जाता है और दुख भाग जाते हैं तथा जन्म–मरण का भय चुक जाता है और व्यक्ति निर्भय होकर स्थिर बना रहता है। सम्पूर्ण व्याधियां मन चित्त से समाप्त होकर भाग जाती हैं। वह साधु पुरुष जिस प्रभु का है उसी ने उस पर कृपा की और वह प्रभु के नाम का जाप करता है। हे नानक, हरि यश को कानों से सुनने मात्र से ही व्यक्ति को स्थिरता प्राप्त हो जाती है और उसके भ्रम समाप्त होकर उसका आवागमन नष्ट हो जाता है ॥७॥ गुणातीत एवं सभी गुणों वाला वह प्रभु स्वयं ही है जिसने अपनी शक्ति से सारी सृष्टि को धारण करके उसे सम्मोहित कर रखा है। प्रभु ने ही अपने कौतुकों की रचना की है और अपना मूल्य केवल वह आप ही जानता है। प्रभु के बिना अन्य दूसरा कोई नहीं है और वह एक प्रभु ही निरन्तर रूप से सब में व्याप्त है। प्रत्येक रूप रंग में वह ओत–प्रोत होकर रमण कर रहा है और साधसंगत में ही वह प्रकट होता है।

प्रगास साध कै संग ॥ रचि रचना अपनी कल धारी ॥ अनिक बार नानक बलिहारी ॥ ८ ॥ १८ ॥ सलोकु ॥ साथि न चालै बिनु भजन बिखिआ सगली छारु ॥ हरि हरि नामु कमावना नानक इहु धनु सारु ॥ १ ॥ असटपदी ॥ संत जना मिलि करहु बीचारु ॥ एकु सिमरि नाम आधारु ॥ अवरि उपाव सभि मीत बिसारहु ॥ चरन कमल रिद महि उरि धारहु ॥ करन कारन सो प्रभु समरथु ॥ द्रिड़ु करि गहहु नामु हरि वथु ॥ इहु धनु संचहु होवहु भगवंत ॥ संत जना का निरमल मंत ॥ एक आस राखहु मन माहि ॥ सरब रोग नानक मिटि जाहि ॥ १ ॥ जिसु धन कउ चारि कुंट उठि धावहि ॥ सो धनु हरि सेवा ते पावहि ॥ जिसु सुख कउ नित बाछहि मीत ॥ सो सुखु साधू संगि परीति ॥ जिसु सोभा कउ करहि भली करनी ॥ सा सोभा भजु हरि की सरनी ॥ अनिक उपावी रोगु न जाइ ॥ रोगु मिटै हरि अवखधु लाइ ॥ सरब निधान महि हरि नामु निधानु ॥ जपि नानक दरगहि परवानु ॥ २ ॥ मनु परबोधहु हरि कै नाइ ॥ दह दिसि धावत आवै ठाइ ॥ ता कउ बिघनु न लागै कोइ ॥ जा कै रिदै बसै हरि सोइ ॥ कलि ताती ठांढा हरि नाउ ॥ सिमरि सिमरि सदा सुख पाउ ॥ भउ बिनसै पूरन होइ आस ॥ भगति भाइ आतम परगास ॥ तितु घरि जाइ बसै अबिनासी ॥ कहु नानक काटी जम फासी ॥ ३ ॥ ततु बीचारु कहै जनु साचा ॥ जनमि मरै सो काचो काचा ॥ आवा गवनु मिटै प्रभ सेव ॥ आपु तिआगि सरनि गुरदेव ॥ इउ रतन जनम का होइ उधारु ॥ हरि हरि सिमरि प्रान आधारु ॥ अनिक उपाव न छूटनहारे ॥ सिंम्रिति सासत बेद बीचारे ॥ हरि की भगति करहु मनु लाइ ॥ मनि बंछत नानक फल पाइ ॥ ४ ॥ संगि न चालसि तेरै धना ॥ तूं किआ लपटावहि मूरख मना ॥ सुत मीत कुटंब अरु बनिता ॥ इन ते कहहु तुम कवन सनाथा ॥ राज रंग माइआ बिसथार ॥ इन ते कहहु कवन छुटकार ॥ असु हसती रथ असवारी ॥ झूठा डंफु झूठु पासारी ॥ जिनि दीए तिसु बुझै न बिगाना ॥ नामु बिसारि नानक पछुताना ॥ ५ ॥ गुर की मति तूं लेहि इआने ॥ भगति बिना बहु डूबे सिआने ॥ हरि की भगति करहु मन मीत ॥ निरमल होइ तुम्हारो चीत ॥ चरन कमल राखहु

प्रभु ने रचना बनाकर अपनी शक्ति इस रचना में समाहित की है । नानक उस प्रभु पर अनेकों बार बलिहारी जाता है ॥ ८ ॥ १८ ॥ श्लोक ॥ प्रभु के सुमिरन के बिना साथ कुछ नहीं जाता क्योंकि सभी विषय–विकार मात्र राख का ढेर ही हैं । हे नानक, प्रभु नाम को जीवन में उतारना ही वास्तव में सारी धन–सम्पदा का सार है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ शान्त पुरुषों की संगत में प्रभु का चिन्तन करो और उसी एक का सुमिरन करते हुए प्रभु–नाम को आधार बनाओ । हे मित्र, अन्य सभी उपायों का त्याग करके हृदय में प्रभु के चरण–कमलों को धारण करो । वह प्रभु ही सब कुछ करने कराने में समर्थ है इसलिए प्रभु–नाम रूपी पदार्थ को दृढ़ता से पकड़ लेना चाहिए । इस धन का संचय करते हुए भाग्यवान बन जाओ, यही सन्तजनों का निर्मल उपदेश है । हे नानक, यदि मन में केवल एक पर ही आशा लगाए रहोगे तो तुम्हारे सभी रोग मिट जाएंगे ॥ १ ॥ जिस धन के लिए तू चारों दिशाओं में उठ दौड़ता है वह धन तुझे प्रभु की सेवा से ही प्राप्त होगा । हे मित्र, जिस सुख की तू सदैव कामना करता है वह सुख तुझे साधु–पुरुषों से प्रेम करने पर ही प्राप्त होगा । जिस शोभा प्राप्ति के लिए तू भले कर्म करता है वह सम्मान दौड़ कर प्रभु की शरण में आ जाने पर तुझे प्राप्त हो जाएगा । जो रोग अनेकों उपायों से नहीं जाता वह रोग प्रभु–नाम रूपी औषधि को लेने से मिट जाता है । सभी खज़ानों में से प्रभु–नाम का भण्डार ही श्रेष्ठ खज़ाना है । हे नानक, तू प्रभु का जाप जप जिससे तू प्रभु के दरबार में स्वीकृत हो जाएगा ॥ २ ॥ अपने मन को प्रभु–नाम के द्वारा प्रबुद्ध करो ताकि दसों दिशाओं में भटकने वाला यह मन अपने निज–स्वरूप में स्थिर हो जाए । जिसके हृदय में प्रभु आन बसता है उसके सामने कोई भी रुकावट नहीं आती । ताप–युक्त इस कलियुग में केवल प्रभु–नाम ही ठण्डक देने वाला है जिसका सुमिरन करके हे जीव, तू सदैव सुख को प्राप्त कर । तेरा भय विनष्ट हो जाएगा, तेरी आशा पूरी हो जाएगी और भावना से की हुई भक्ति के फलस्वरूप तेरी आत्मा प्रकाशित हो उठेगी । तू अविनाशी बनकर उस प्रभु के स्थान पर जा बसेगा और हे नानक, तेरा यम पाश कट जाएगा ॥ ३ ॥ सच्चा व्यक्ति तत्व–विचार का ही उपदेश देता है परन्तु जो स्वयं जन्म–मरण के चक्र में है वह कच्चे से भी कच्चा अर्थात झूठा है । प्रभु की सेवा से ही आवागमन मिटता है और हे जीव, तू अहंकार का त्याग करके गुरु के चरण ग्रहण कर ले । इस प्रकार अमूल्य रत्न रूपी इस जन्म का उद्धार हो जाएगा । हे जीव, तू उस प्रभु का सुमिरन कर जो सब का प्राण आधार है । अनेकों उपायों, स्मृतियों शास्त्रों एवं वेदों के (पांडित्यपूर्ण) चिन्तन से भी व्यक्ति मुक्त नहीं हो सकता । तू हृदय से प्रभु की भक्ति कर; हे नानक, तू मनोवांछित फल प्राप्त कर लेगा ॥ ४ ॥ तेरे साथ यह धन नहीं जाएगा इसलिए हे मूर्ख मन, तू इससे क्यों लिपटा हुआ है । पुत्र, मित्र, कुटुम्ब, स्त्री आदि से बताओ भला कौन लाभ प्राप्त कर सका है ? राज, विलास और माया के अनेकों प्रकार के विस्तार से भला कौन मुक्त रह सका है । घोड़े, हाथी और रथों की सवारी सब झूठे प्रपंच और प्रसार हैं । मूर्ख व्यक्ति इसको नहीं बूझता जिसने यह सब दिए हैं और अन्ततः हे नानक, प्रभु–नाम को भुलाकर व्यक्ति पछताता है ॥ ५ ॥ हे भोले जीव, तू गुरु का उपदेश ग्रहण कर क्योंकि प्रभु की भक्ति के बिना अनेकों चतुर व्यक्ति डूब चुके हैं । हे मित्र, मन से प्रभु की भक्ति करो जिससे तुम्हारा चित्त निर्मल हो जाएगा । प्रभु के चरण कमल

मन माहि ॥ जनम जनम के किलबिख जाहि ॥ आपि जपहु अवरा नामु जपावहु ॥ सुनत कहत रहत गति पावहु ॥ सार भूत सति हरि को नाउ ॥ सहजि सुभाइ नानक गुन गाउ ॥ ६ ॥ गुन गावत तेरी उतरसि मैलु ॥ बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ॥ होहि अचिंतु बसै सुख नालि ॥ सासि ग्रासि हरि नामु समालि ॥ छाडि सिआनप सगली मना ॥ साधसंगि पावहि सचु धना ॥ हरि पूंजी संचि करहु बिउहारु ॥ ईहा सुखु दरगह जैकारु ॥ सरब निरंतरि एको देखु ॥ कहु नानक जा कै मसतकि लेखु ॥ ७ ॥ एको जपि एको सालाहि ॥ एकु सिमरि एको मन आहि ॥ एकस के गुन गाउ अनंत ॥ मनि तनि जापि एक भगवंत ॥ एको एकु एकु हरि आपि ॥ पूरन पूरि रहिओ प्रभु बिआपि ॥ अनिक बिसथार एक ते भए ॥ एकु अराधि पराछत गए ॥ मन तन अंतरि एकु प्रभु राता ॥ गुर प्रसादि नानक इकु जाता ॥ ८ ॥ १९ ॥ सलोकु ॥ फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ ॥ नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ ॥ १ ॥ असटपदी ॥ जाचक जनु जाचै प्रभ दानु ॥ करि किरपा देवहु हरि नामु ॥ साध जना की मागउ धूरि ॥ पारब्रहम मेरी सरधा पूरि ॥ सदा सदा प्रभ के गुन गावउ ॥ सासि सासि प्रभ तुमहि धिआवउ ॥ चरन कमल सिउ लागै प्रीति ॥ भगति करउ प्रभ की नित नीति ॥ एक ओट एको आधारु ॥ नानकु मागै नामु प्रभ सारु ॥ १ ॥ प्रभ की द्रिसटि महा सुखु होइ ॥ हरि रसु पावै बिरला कोइ ॥ जिन चाखिआ से जन त्रिपताने ॥ पूरन पुरख नही डोलाने ॥ सुभर भरे प्रेम रस रंगि ॥ उपजै चाउ साध कै संगि ॥ परे सरनि आन सभ तिआगि ॥ अंतरि प्रगास अनदिनु लिव लागि ॥ बडभागी जपिआ प्रभु सोइ ॥ नानक नामि रते सुखु होइ ॥ २ ॥ सेवक की मनसा पूरी भई ॥ सतिगुर ते निरमल मति लई ॥ जन कउ प्रभु होइओ दइआलु ॥ सेवकु कीनो सदा निहालु ॥ बंधन काटि मुकति जनु भइआ ॥ जनम मरन दूखु भ्रमु गइआ ॥ इछ पुनी सरधा सभ पूरी ॥ रवि रहिआ सद संगि हजूरी ॥ जिस का सा तिनि लीआ मिलाइ ॥ नानक भगती नामि समाइ ॥ ३ ॥ सो किउ बिसरै जि घाल न भानै ॥ सो किउ बिसरै जि

मन में टिकाए रहो जिससे जन्मों जन्मों के तुम्हारे पाप छूट जाएंगे । स्वयं सुमिरन करो और अन्यों से भी प्रभु नाम का जाप कराओ । सुनने, कहने और उसके अनुकूल जीवन बिताने से तू परमगति पा लेगा । प्रभु का नाम ही सभी तत्वों का सार–तत्व हैं । हे नानक, सहजभाव से ही प्रभु का गुणानुवाद करो ॥ ६ ॥ प्रभु गुणानुवाद से तेरी मलीनता समाप्त हो जाएगी और तेरे अन्तर्मन में अहंकार रूपी फैला हुआ विष नष्ट हो जाएगा । तू अपने हर श्वास् और ग्रास के साथ प्रभु–नाम की आराधना कर जिससे तू सुखपूर्वक चिन्ता मुक्त बना रहेगा । हे मन, तू सभी चतुराइयों को छोड़ दे और इस प्रकार तू साधसंगत में सत्य रूपी धन को प्राप्त कर लेगा । तू हरि–नाम रूपी पूंजी का ही संचय कर और उसी का ही व्यापार कर । तुझे यहां भी सुख मिलेगा और प्रभु के समक्ष भी तेरी जय जय कार होगी । नानक कहता है कि जिसके मस्तक पर प्रभु द्वारा लेख लिखे हुए हैं वही एक प्रभु को निरन्तर रूप में सब में देखता है ॥ ७॥ केवल एक प्रभु नाम का ही जाप कर और केवल उसी का ही गुणानुवाद कर । एक प्रभु का ही सुमिरन कर और केवल उस एक की ही आकांक्षा मन में रख । उस एक ही प्रभु के अनन्त गुणों का गायन करो और तन मन से उस एक ईश्वर का ही जाप करो । वह एक ही प्रभु स्वयं अपने आप में एक ही है । वही पूर्ण प्रभु सभी स्थानों में पूरी तरह व्याप्त है । जगत के अनेकों विस्तार उस एक प्रभु से ही हुए हैं और एक प्रभु की आराधना से ही सभी पाप चले जाते हैं । गुरु की कृपा से नानक ने उस एक प्रभु को जान लिया है और उसका मन, तन और चित्त केवल एक प्रभु में ही लीन है ॥ ८ ॥ १९ ॥ श्लोक ॥ भटकता घूमता हुआ, हे प्रभु, मैं तेरी शरण में आन पड़ा हूँ । हे प्रभु, नानक की यही विनती है कि उसे अपनी भक्ति में लीन कर ले ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ यह याचक, तेरा सेवक बनकर तुझसे हे प्रभु, एक दान मांगता है कि उसे कृपा करके हरि–नाम प्रदान कर दो । साधुजन की मैं चरण–धूलि चाहता हूँ। हे प्रभु, मेरी यह इच्छा पूरी कर दो । मैं सदैव प्रभु के गुण गाता रहूँ और हर श्वास्–प्रश्वास् के साथ हे प्रभु, तेरी आराधना करता रहूँ । तेरे चरण–कमल के साथ मेरी प्रीति बनी रहे और मैं सदैव प्रभु की भक्ति करता रहूँ । हे प्रभु, नानक सार–तत्त्व के रूप में प्रभु का नाम मांगता है क्योंकि उसे केवल एक प्रभु का ही आसरा है और वह एक ही उसका आधार है ॥ १ ॥ प्रभु की कृपा–दृष्टि से महासुख प्राप्त होता है जिसे कोई बिरला ही प्राप्त करता है । जिन सेवकों ने उसे चखा है वे तृप्त हो गए हैं और ऐसे पूर्ण पुरुष कभी भी अस्थिर नहीं होते । वे प्रभु के प्रेम–रस में पूर्ण रूप से भरे हुए होते हैं और साधसंगत में उनके हृदय में उत्साह पैदा होता है । वे अन्य सब को छोड़ कर प्रभु की शरण में आ जाते हैं । उनका हृदय प्रकाशित हो उठता है और दिन–रात वे अपनी सुरति प्रभु में लगाए रहते हैं । अच्छे भाग्य से प्रभु का जाप किया जाता है और हे नानक, जो प्रभु नाम में लीन होते हैं उन्हें सुख प्राप्त होता है ॥२॥ प्रभु–सेवक की इच्छा पूर्ण हो गई है और सच्चे गुरु से उसने पवित्र शिक्षा ले ली है । सेवक पर प्रभु दयालु हो गया है और उसने उसे तृप्त कर दिया है । बन्धनों को तोड़कर प्रभु–सेवक मुक्त हो गया है और उसका भ्रम तथा जन्म–मरण का दुख दूर हो गया है । उसकी इच्छा एवं श्रद्धा दोनों पूरी हो गई हैं और अब वह सदैव प्रभु के समक्ष बना रहता है । वह जिसका था उसने उसे अपने साथ मिला लिया है और हे नानक, अब वह भक्ति और प्रभु–नाम में ही लीन बना हुआ है ॥३॥ उसे क्यों भुलाया जाए जो प्राणी की की हुई मेहनत को भुलाता नहीं । उसे क्यों भुलाया जाए

कीआ जानै ॥ सो किउ बिसरै जिनि सभु किछु दीआ ॥ सो किउ बिसरै जि जीवन जीआ ॥ सो किउ बिसरै जि अगनि महि राखै ॥ गुर प्रसादि को बिरला लाखै ॥ सो किउ बिसरै जि बिखु ते काढै ॥ जनम जनम का टूटा गाढै ॥ गुरि पूरै ततु इहै बुझाइआ ॥ प्रभु अपना नानक जन धिआइआ ॥ ४ ॥ साजन संत करहु इहु कामु ॥ आन तिआगि जपहु हरि नामु ॥ सिमरि सिमरि सिमरि सुख पावहु ॥ आपि जपहु अवरह नामु जपावहु ॥ भगति भाइ तरीऐ संसारु ॥ बिनु भगती तनु होसी छारु ॥ सरब कलिआण सूख निधि नामु ॥ बूडत जात पाए बिस्रामु ॥ सगल दूख का होवत नासु ॥ नानक नामु जपहु गुनतासु ॥ ५ ॥ उपजी प्रीति प्रेम रसु चाउ ॥ मन तन अंतरि इही सुआउ ॥ नेत्रहु पेखि दरसु सुखु होइ ॥ मनु बिगसै साध चरन धोइ ॥ भगत जना कै मनि तनि रंगु ॥ बिरला कोऊ पावै संगु ॥ एक बसतु दीजै करि मइआ ॥ गुर प्रसादि नामु जपि लइआ ॥ ता की उपमा कही न जाइ ॥ नानक रहिआ सरब समाइ ॥ ६ ॥ प्रभ बखसंद दीन दइआल ॥ भगति वछल सदा किरपाल ॥ अनाथ नाथ गोबिंद गुपाल ॥ सरब घटा करत प्रतिपाल ॥ आदि पुरख कारण करतार ॥ भगत जना के प्रान अधार ॥ जो जो जपै सु होइ पुनीत ॥ भगति भाइ लावै मन हीत ॥ हम निरगुनीआर नीच अजान ॥ नानक तुमरी सरनि पुरख भगवान ॥ ७ ॥ सरब बैकुंठ मुकति मोख पाए ॥ एक निमख हरि के गुन गाए ॥ अनिक राज भोग बडिआई ॥ हरि के नाम की कथा मनि भाई ॥ बहु भोजन कापर संगीत ॥ रसना जपती हरि हरि नीत ॥ भली सु करनी सोभा धनवंत ॥ हिरदै बसे पूरन गुर मंत ॥ साधसंगि प्रभ देहु निवास ॥ सरब सूख नानक परगास ॥ ८ ॥ २० ॥ सलोकु ॥ सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि ॥ आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि ॥ १ ॥ असटपदी ॥ जब अकारु इहु कछु न द्रिसटेता ॥ पाप पुंन तब कह ते होता ॥ जब धारी आपन सुंन समाधि ॥ तब बैर बिरोध किसु संगि कमाति ॥ जब इस का बरनु चिहनु न जापत ॥ तब हरख सोग कहु किसहि बिआपत ॥ जब आपन आप आपि पारब्रहम ॥ तब मोह कहा

जो उसकी की हुई सेवा को पूरी तरह जानता–मानता है । उसे क्यों भुलाया जाए जिसने सब कुछ दिया है और जो सभी जीवों का प्राण है । उसे क्यों भुलाया जाए जो अग्नि में भी रक्षा करता है । गुरु की कृपा से उसे कोई बिरला ही देख पाता है । उसे क्यों भुलाएं जो विकारों के विष से निकाल लेता है और जन्म–जन्म के बिछुड़ों को मिला लेता है । पूर्ण गुरु ने मुझे यही सार तत्व समझाया है कि हे नानक, प्रभु का सेवक केवल अपने प्रभु की ही आराधना करता है ॥ ४ ॥ हे सज्जन सन्तो, केवल यही काम करो कि अन्य सब को त्याग कर प्रभु–नाम का ही उच्चारण करो । बार बार प्रभु का सुमिरन करो और सुख प्राप्त करो । स्वयं भी जाप करो और अन्यों को भी उसका नाम जपाओ । भक्ति–भावना से ही संसार–सागर को तैरा जाता है और सुमिरन के विना यह तन राख बन जाता है । प्रभु–नाम ही सभी प्रकार से कल्याणकारी सुखों का भण्डार है । डूबता हुआ व्यक्ति भी इसके कारण शान्ति प्राप्त कर लेता है । प्रभु–नाम से सभी दुखों का नाश हो जाता है इसलिए हे नानक, गुणों के स्वामी प्रभु के नाम का ही जाप करो ॥ ५ ॥ प्रभु–प्रेम का रस, उत्साह, प्रीति मेरे मन में उत्पन्न हो गए हैं । मेरे मन तन का यही लक्ष्य है । अपनी आंखों से प्रभु का दर्शन कर मैं सुखी होता हूँ और साधु पुरुषों के चरण धोकर मेरा मन प्रसन्न हो उठता है । भक्तजनों के तन और मन में प्रभु–प्रीति होती है और कोई बिरला व्यक्ति ही उनकी संगत प्राप्त करता है । हे प्रभु, मुझे एक ही वस्तु कृपा करके दे दो कि गुरु की कृपा से मैं नाम का जाप करूँ । हे नानक, जो प्रभु सब में समाया हुआ है उसकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती ॥ ६ ॥ प्रभु क्षमाशील और दीनों पर दया करने वाला है । वह भक्त वत्सल है, सदैव कृपालु है, अनाथों का नाथ है और जीवों को धारण करने और उनका पालन करने वाला है । वह सभी जीवों का पोषण करने वाला है और वह कर्त्ता आदि पुरुष सब का कारण रूप है । वह भक्त जनों के प्राणों का आधार है । जो जो उसका सुमिरन करता है वह पवित्र हो जाता है और अपनी भक्ति भावना को प्रभु की सेवा में मन से लगाता है । नानक कहता है कि हे प्रभु, हम गुण–विहीन, नीच एवं अनजान हैं और तुम्हारी शरण में आन पड़े हैं ॥ ७ ॥ एक क्षण भर भी प्रभु के गुण गाने से व्यक्ति को सभी स्वर्ग, मुक्ति एवं मोक्ष प्राप्त हो जाते हैं । जिसे प्रभु–नाम का वर्णन मन से अच्छा लगता है उसे अनेकों राज, भोग के पदार्थ और बड़प्पन प्राप्त हो जाते हैं । जिसकी जीभ सदैव प्रभु–नाम का जाप करती है उसे अनेकों प्रकार के भोजन, वस्त्र एवं संगीत का रस प्राप्त होता है । जिसके हृदय में पूर्ण, गुरु का उपदेश बस जाता है उसके कार्य, शोभा आदि सब भले होते हैं और वही वास्तव में धनवान होता है । हे प्रभु, साधु व्यक्तियों की संगत प्रदान कर जिससे नानक के मन में सभी सुख प्रकट हो उठें ॥ ८ ॥ २० ॥ श्लोक ॥ स्वयं ही सगुण एवं निगुर्ण प्रभु शून्य समाधि में स्थित बना रहता है । हे नानक, सब कुछ उसका अपना ही किया हुआ है और पुनः वह अपनी आराधना भी स्वयं ही करता है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ जब संसार का आकार कुछ भी नहीं दिखाई देता था तब भला पाप और पुण्य करने वाला कौन था । जब प्रभु शून्य समाधि में ही लीन था तब भला शत्रुता और विरोध किसका किया जाता था । जब व्यक्ति का न तो कोई वर्ण था और न ही कोई चिन्ह था तब भला हर्ष और शोक किसे होता था । जब परब्रह्म प्रभु स्वयं ही सब कुछ था तब

किसु होवत भरम ॥ आपन खेलु आपि वरतीजा ॥ नानक करनैहारु न दूजा ॥ १ ॥ जब होवत प्रभु केवल धनी ॥ तब बंध मुकति कहु किस कउ गनी ॥ जब एकहि हरि अगम अपार ॥ तब नरक सुरग कहु कउन अउतार ॥ जब निरगुन प्रभ सहज सुभाइ ॥ तब सिव सकति कहहु कितु ठाइ ॥ जब आपहि आपि अपनी जोति धरै ॥ तब कवन निडरु कवन कत डरै ॥ आपन चलित आपि करनैहार ॥ नानक ठाकुर अगम अपार ॥ २ ॥ अबिनासी सुख आपन आसन ॥ तह जनम मरन कहु कहा बिनासन ॥ जब पूरन करता प्रभु सोइ ॥ तब जम की त्रास कहहु किसु होइ ॥ जब अबिगत अगोचर प्रभ एका ॥ तब चित्र गुपत किसु पूछत लेखा ॥ जब नाथ निरंजन अगोचर अगाधे ॥ तब कउन छुटे कउन बंधन बाधे ॥ आपन आप आप ही अचरजा ॥ नानक आपन रूप आप ही उपरजा ॥ ३ ॥ जह निरमल पुरखु पुरख पति होता ॥ तह बिनु मैलु कहहु किआ धोता ॥ जह निरंजन निरंकार निरबान ॥ तह कउन कउ मान कउन अभिमान ॥ जह सरूप केवल जगदीस ॥ तह छल छिद्र लगत कहु कीस ॥ जह जोति सरूपी जोति संगि समावै ॥ तह किसहि भूख कवनु त्रिपतावै ॥ करन करावन करनैहारु ॥ नानक करते का नाहि सुमारु ॥ ४ ॥ जब अपनी सोभा आपन संगि बनाई ॥ तब कवन माइ बाप मित्र सुत भाई ॥ जह सरब कला आपहि परबीन ॥ तह बेद कतेब कहा कोऊ चीन ॥ जब आपन आपु आपि उरि धारै ॥ तउ सगन अपसगन कहा बीचारै ॥ जह आपन ऊच आपन आपि नेरा ॥ तह कउन ठाकुरु कउनु कहीऐ चेरा ॥ बिसमन बिसम रहे बिसमाद ॥ नानक अपनी गति जानहु आपि ॥ ५ ॥ जह अछल अछेद अभेद समाइआ ॥ ऊहा किसहि बिआपत माइआ ॥ आपस कउ आपहि आदेसु ॥ तिहु गुण का नाही परवेसु ॥ जह एकहि एक एक भगवंता ॥ तह कउनु अंचितु किसु लागै चिंता ॥ जह आपन आपु आपि पतीआरा ॥ तह कउनु कथै कउनु सुननैहारा ॥ बहु बेअंत ऊच ते ऊचा ॥ नानक आपस कउ आपहि पहूचा ॥ ६ ॥ जह आपि रचिओ परपंचु अकारु ॥ तिहु गुण महि कीनो बिसथारु ॥ पापु पुंनु तह भई

किसे भ्रम और किसे मोह होता था । उसने अपना खेल खुद ही फैलाया हुआ है । हे नानक, उसके अतिरिक्त कोई भी दूसरा कुछ कर सकने वाला नहीं है ॥ १ ॥ जब केवल प्रभु ही मालिक था तब भला किसे बन्धन में पड़ा हुआ और किसे मुक्त हो चुका कहा जाता था । जब केवल एक प्रभु ही अगम्य और अपार था तब भला कौन नर्क और कौन स्वर्ग में आता जाता था । जब निर्गुण प्रभु अपने ही स्वभाव में सहज रूप से स्थित था तब शान्ति और तृष्णा भला कहां थे । जब उसकी ज्योति स्वयं उसने ही सब में रखी थी तब भला कौन भय-मुक्त और कौन भयभीत होता था । अपने कौतुकों की रचना करने वाला वह स्वयं एक ही है और हे नानक, वह प्रभु अगम्य एवं अपार है ॥ २ ॥ जब अविनाशी सुख वाला प्रभु अपने आसन पर बिराजमान था तब जन्म मरण और विनाश भला कहां थे । जब प्रभु ही पूर्ण कर्त्ता एवं सर्जक था तब भला यम का डर किसे हो सकता था । जब अव्यक्त एवं अगोचर एक ही प्रभु था तब भला चित्रगुप्त किससे जीवन का लेखा-जोखा पूछता था । जब केवल अगोचर, निरंजन, एवं अगाध प्रभु ही था तब भला बन्धनों में कौन था और मुक्त कौन था । प्रभु अपने आप में स्वयं ही आश्चर्य रूप है; हे नानक, उसने अपने स्वरूप को स्वयं ही उत्पन्न किया है ॥ ३ ॥ जब जीवों का स्वामी केवल निर्मल प्रभु ही था तो भला वहां स्वच्छ करने और धोने के लिए क्या था ? जब निरंजन, निराकार और निर्लिप्त प्रभु ही था तब किसका सम्मान और किसे अभिमान होता था । जब केवल जगत का स्वामी ही स्थित था तब धोखा, फरेब आदि पाप किसे लगते थे । जब ज्योति स्वरूप प्रभु अपनी ज्योति में ही समाहित था तब बताओ किसे भूख लगती थी और कौन तृप्त था । करने कराने वाला एक प्रभु ही सब कुछ करने योग्य है; हे नानक, उस कर्त्ता का कोई ओर-छोर नहीं है ॥ ४॥ जब प्रभु ने अपनी शोभा अपने में ही लीन कर रखी थी तब माता, पिता, मित्र और भाई कौन थे । जब वह स्वयं ही सर्व कलाओं में प्रवीण था तब वेदों और कतेबों को भला कौन जानता था । जब अपने आप को उसने अपने हृदय में धारण किया हुआ था तब शकुन और अपशकुन का विचार भला कौन करता था । जब प्रभु स्वयं ही ऊँचा और स्वयं ही समीप था तब भला कौन मालिक था और किसे नौकर कहा जा सकता था । विस्मय रूपी विस्मयकारक वह प्रभु केवल विस्मय ही है । हे नानक, वह अपनी गति केवल आप ही जानता है ॥ ५ ॥ जब अछल, बींधा न जा सकने वाला और भेद-रहित प्रभु सर्वत्र समाया हुआ था तब उस समय माया भला किसे प्रभावित करती थी । जब शुद्ध प्रभु अपने आप को ही स्वयं प्रणाम करता था तो तीनों गुण उसमें प्रविष्ट ही नहीं हुए थे । जब केवल एक प्रभु ही था तो कौन चिन्ता-युक्त और कौन चिन्ता-विहीन था । जब प्रभु स्वयं अपने आप से सन्तुष्ट था तब उसके बारे में कौन कहने वाला और कौन सुनने वाला था । प्रभु अनन्त एवं ऊँचे से भी ऊँचा है और हे नानक, वह स्वयं ही अपने आप तक पहुँचता है ॥ ६ ॥ जब प्रभु ने ही प्रपंच युक्त इस संसार को आकार दिया तो उसने तीन गुणों के माध्यम से इस संसार का विस्तार किया । तब पाप और पुण्य की

कहावत ॥ कोऊ नरक कोऊ सुरग बंछावत ॥ आल जाल माइआ जंजाल ॥ हउमै मोह भरम भै भार ॥ दूख सूख मान अपमान ॥ अनिक प्रकार कीओ बख्यान ॥ आपन खेलु आपि करि देखै ॥ खेलु संकोचै तउ नानक एकै ॥ ७ ॥ जह अबिगतु भगतु तह आपि ॥ जह पसरै पासारु संत परतापि ॥ दुहू पाख का आपहि धनी ॥ उन की सोभा उनहू बनी ॥ आपहि कउतक करै अनद चोज ॥ आपहि रस भोगन निरजोग ॥ जिसु भावै तिसु आपन नाइ लावै ॥ जिसु भावै तिसु खेल खिलावै ॥ बेसुमार अथाह अगनत अतोलै ॥ जिउ बुलावहु तिउ नानक दास बोलै ॥ ८ ॥ २१ ॥ सलोकु ॥ जीअ जंत के ठाकुरा आपे वरतणहार ॥ नानक एको पसरिआ दूजा कह द्रिसटार ॥ १ ॥ असटपदी ॥ आपि कथै आपि सुननैहारु ॥ आपहि एकु आपि बिसथारु ॥ जा तिसु भावै ता स्रिसटि उपाए ॥ आपनै भाणै लए समाए ॥ तुम ते भिंन नही किछु होइ ॥ आपन सूति सभु जगतु परोइ ॥ जा कउ प्रभ जीउ आपि बुझाए ॥ सचु नामु सोई जनु पाए ॥ सो समदरसी तत का बेता ॥ नानक सगल स्रिसटि का जेता ॥ १ ॥ जीअ जंत्र सभ ता कै हाथ ॥ दीन दइआल अनाथ को नाथु ॥ जिसु राखै तिसु कोइ न मारै ॥ सो मूआ जिसु मनहु बिसारै ॥ तिसु तजि अवर कहा को जाइ ॥ सभ सिरि एकु निरंजन राइ ॥ जीअ की जुगति जा कै सभ हाथि ॥ अंतरि बाहरि जानहु साथि ॥ गुन निधान बेअंत अपार ॥ नानक दास सदा बलिहार ॥ २ ॥ पूरन पूरि रहे दइआल ॥ सभ ऊपरि होवत किरपाल ॥ अपने करतब जानै आपि ॥ अंतरजामी रहिओ बिआपि ॥ प्रतिपालै जीअन बहु भाति ॥ जो जो रचिओ सु तिसहि धिआति ॥ जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥ भगति करहि हरि के गुण गाइ ॥ मन अंतरि बिस्वासु करि मानिआ ॥ करनहारु नानक इकु जानिआ ॥ ३ ॥ जनु लागा हरि एकै नाइ ॥ तिस की आस न बिरथी जाइ ॥ सेवक कउ सेवा बनि आई ॥ हुकमु बूझि परम पदु पाई ॥ इस ते ऊपरि नही बीचारु ॥ जा कै मनि बसिआ निरंकारु ॥ बंधन तोरि भए निरवैर ॥ अनदिनु पूजहि गुर के पैर ॥ इह लोक सुखीए

कहावत प्रारम्भ हुई और कोई नर्क और कोई स्वर्ग की कामना करने लगा । प्रभु ने माया के जाल–जंजाल, अहंकार, मोह, भ्रम और भय के बोझ जीवों पर लाद दिए । दुख, सुख, मान–अपमान का अनेकों प्रकार से बखान प्रारम्भ हो गया । प्रभु स्वयं ही खेलता है और स्वयं ही अपने खेल को देखता है । जब वह स्वयं इस सारे खेल को समेट लेता है तो हे नानक, वह फिर एक ही बन जाता है ॥ ७ ॥ जहां कहीं भी उस अव्यक्त प्रभु का भक्त है वहां वह स्वयं आप ही होता है । जहां वह रचना का प्रसार करता है वहीं सन्तों का प्रताप भी स्थित होता है । दोनों पक्षों का मालिक वह स्वयं ही है और उसकी शोभा केवल उसी पर ही जमती है। वह स्वयं ही अनेकों कौतुक आनन्दपूर्वक करता है और स्वयं ही निर्लिप्त बना रहकर सभी रसों को भोगता है । जिसे चाहता है उसे अपने नाम में लीन कर लेता है और जिसे चाहता है उसे इस संसार के खेल में खेलने देता है । प्रभु अनन्त, अथाह अनगिनत और सभी तौलों से परे है । हे प्रभु, तू जैसा बुलवाता है तेरा दास नानक वैसा ही वोलता है ॥ ८ ॥ २१ ॥ श्लोक ॥ जीव–जन्तुओं का स्वामी प्रभु स्वयं ही सब में समाया हुआ है । हे नानक, उस एक का ही सब प्रसार है । दूसरा भला कहां दिखाई देता है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ वह स्वयं ही कथन करने वाला और स्वयं ही सुनने वाला है । वह आप ही एक है और आप ही अनेक रूपों में है । जब उसे भाता है तो वह सृष्टि उत्पन्न करता है और अपनी इच्छा में ही उसे अपने में समा लेता है । हे प्रभु, तुम्हारे से भिन्न कुछ नहीं होता और अपने ही सूत्र में तुमने सारे जगत को पिरोया हुआ है । जिसे प्रभु स्वयं समझा देता है वही सेवक सत्य रूपी नाम प्राप्त कर लेता है । वही सेवक समदर्शी एवं तत्ववेत्ता कहलाता है । हे नानक, वही सारे संसार को जीत लेने वाला होता है ॥ १ ॥ जीव–जन्तु सभी उसी के हाथ में हैं और वही दीनों पर दया करने वाला है तथा अनाथों का भी नाथ है । जिसका वह रक्षक है उसे कोई नहीं मार सकता है । मरा हुआ तो वह है जिसे प्रभु मन से भुला देता है । सब के सिर पर केवल एक ही निरंजन प्रभु है उसे छोड़कर भला अन्य किसके पास जाया जा सकता है । सारे जीवों की युक्तियां जिस प्रभु के वश में है उसे अन्दर बाहर साथ ही जानना चाहिए । दास नानक उस पर सदैव बलिहारी जाता है जो गुणों का भण्डार अनन्त एवं अपरंपर है ॥ २ ॥ वह पूर्ण दयालु प्रभु सर्वत्र व्याप्त है और सब पर कृपालु बना रहता है । अपने कामों को वह स्वयं ही जानता है और अन्तर्यामी प्रभु सब में व्याप्त है । अनेकों प्रकार से वह जीवों का पालन करता है और उसकी समस्त रचना उसी का सुमिरन करती है । जिसे वह चाहता है उसे अपने में मिला लेता है और वह भक्ति करता हुआ प्रभु का गुणानुवाद करता है । वह मन में भरोसा करके प्रभु को मानता है और हे नानक, उस एक प्रभु को ही कर्ता के रूप में जानता है ॥ ३ ॥ प्रभु का सेवक केवल एक नाम में ही लीन बना रहता है और उसकी आशा व्यर्थ नहीं जाती । सेवक को सेवा करना ही भला प्रतीत होता है और वह प्रभु के हुकम को बूझकर परमपद को प्राप्त कर लेता है । जिसके चित्त में परमात्मा आन बसता है इससे ऊपर उसके लिए अन्य कोई चिन्तन नहीं है । वह बन्धनों को तोड़कर शत्रु–भाव से मुक्त हो जाता है और रात–दिन गुरु के चरणों की उपासना करता है । ऐसे व्यक्ति इस लोक में भी सुखी

परलोक सुहेले ॥ नानक हरि प्रभि आपहि मेले ॥ ४ ॥ साधसंगि मिलि करहु अनंद ॥ गुन गावहु प्रभ परमानंद ॥ राम नाम ततु करहु बीचारु ॥ द्रुलभ देह का करहु उधारु ॥ अंम्रित बचन हरि के गुन गाउ ॥ प्रान तरन का इहै सुआउ ॥ आठ पहर प्रभ पेखहु नेरा ॥ मिटै अगिआनु बिनसै अंधेरा ॥ सुनि उपदेसु हिरदै बसावहु ॥ मन इछे नानक फल पावहु ॥ ५ ॥ हलतु पलतु दुइ लेहु सवारि ॥ राम नामु अंतरि उरि धारि ॥ पूरे गुर की पूरी दीखिआ ॥ जिसु मनि बसै तिसु साचु परीखिआ ॥ मनि तनि नामु जपहु लिव लाइ ॥ दूखु दरदु मन ते भउ जाइ ॥ सचु वापारु करहु वापारी ॥ दरगह निबहै खेप तुमारी ॥ एका टेक रखहु मन माहि ॥ नानक बहुरि न आवहि जाहि ॥ ६ ॥ तिस ते दूरि कहा को जाइ ॥ उबरै राखनहारु धिआइ ॥ निरभउ जपै सगल भउ मिटै ॥ प्रभ किरपा ते प्राणी छुटै ॥ जिसु प्रभु राखै तिसु नाही दूख ॥ नामु जपत मनि होवत सूख ॥ चिंता जाइ मिटै अहंकारु ॥ तिसु जन कउ कोइ न पहुचनहारु ॥ सिर ऊपरि ठाढा गुरु सूरा ॥ नानक ता के कारज पूरा ॥ ७ ॥ मति पूरी अंम्रितु जा की द्रिसटि ॥ दरसनु पेखत उधरत स्रिसटि ॥ चरन कमल जा के अनूप ॥ सफल दरसनु सुंदर हरि रूप ॥ धंनु सेवा सेवकु परवानु ॥ अंतरजामी पुरखु प्रधानु ॥ जिसु मनि बसै सु होत निहालु ॥ ता के निकटि न आवत कालु ॥ अमर भए अमरा पदु पाइआ ॥ साधसंगि नानक हरि धिआइआ ॥ ८ ॥ २२ ॥ सलोकु ॥ गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु ॥ हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु ॥ १ ॥ असटपदी ॥ संतसंगि अंतरि प्रभु डीठा ॥ नामु प्रभू का लागा मीठा ॥ सगल समिग्री एकसु घट माहि ॥ अनिक रंग नाना द्रिसटाहि ॥ नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥ देही महि इस का बिस्रामु ॥ सुंन समाधि अनहत तह नाद ॥ कहनु न जाई अचरज बिसमाद ॥ तिनि देखिआ जिसु आपि दिखाए ॥ नानक तिसु जन सोझी पाए ॥ १ ॥ सो अंतरि सो बाहरि अनंत ॥ घटि घटि बिआपि रहिआ भगवंत ॥ धरनि माहि आकास पइआल ॥ सरब लोक पूरन

और परलोक में भी प्रसन्न बने रहते हैं । हे नानक, स्वामी प्रभु स्वयं ऐसे लोगों को अपने साथ मिला लेता है ॥ ४॥ साधसंगत में मिलकर आनन्दित बने रहो और परम आनन्द रूपी प्रभु के गुण गाते रहो । राम–नाम रूपी तत्व का चिन्तन करो और इस प्रकार इस दुर्लभ देह का उद्धार कर लो । अमृत वचनों के रूप में प्रभु के गुण गाओ क्योंकि प्राणों के उद्धार करने का केवल यही साधन है । आठों प्रहर परमात्मा को अपने पास ही देखो जिससे तुम्हारा अज्ञान मिट जाएगा और अन्धकार विनष्ट हो जाएगा । गुरु का उपदेश सुनो और उसे हृदय में धारण करो । इस प्रकार हे नानक, मनोवांछित फल प्राप्त हो जाएंगे ॥ ५ ॥ इस लोक और परलोक दोनों को संवार लो और राम–नाम को हृदय में धारण कर लो। पूर्ण गुरु का उपदेश भी पूरा है । जिसके हृदय में यह बस जाता है वह परीक्षा में सच्चा पाया जाता है । तन–मन से लीन होकर नाम का सुमिरन करो और इस प्रकार दुख, दर्द और भय मन से दूर हो जाएंगे। हे व्यापारी तू सत्य का व्यापार कर जिससे तेरा सौदा–पत्ता प्रभु दरबार तक कुशलतापूर्वक पहुँच जाएगा । एक प्रभु का आसरा ही मन में रखो ताकि हे नानक, बार–बार का आना जाना समाप्त हो जाए ॥६॥ उससे दूर भला कौन कहां जा सकता है । रक्षक प्रभु के सुमिरन से व्यक्ति बच जाता है । निर्भय प्रभु का जाप करने से व्यक्ति का सारा डर मिट जाता है और प्रभु की कृपा से प्राणी मुक्त हो जाता है । जिसका प्रभु रक्षक है उसे कोई दुख नहीं होता क्योंकि नाम के सुमिरन से मन सुखी बना रहता है । व्यक्ति की चिन्ता और अहंकार मिट कर छूट जाते हैं । ऐसे सेवक की बराबरी कोई नहीं कर पाता । हे नानक, ऐसे व्यक्ति के सभी कार्य पूर्ण हो जाते हैं जिसके सिर पर बलशाली प्रभु खड़ा रहता है ॥ ७ ॥ उस प्रभु की मति पूर्ण है और दृष्टि अमृत के समान है । उसका दर्शन करने से सारी सृष्टि का उद्धार हो जाता है । उसके चरण–कमल अनुपम हैं और उसके दर्शन धन्य हैं और उस प्रभु का रूप भी सुन्दर है । उसकी सेवा भी धन्य है और उसका सेवक भी स्वीकृत है । वही अन्तर्यामी बलशाली पुरुष प्रभु सर्वत्र प्रमुख है। जिसके मन में वह बस जाता है वह व्यक्ति निहाल हो जाता है और काल उसके निकट भी नहीं आता । हे नानक, साधसंगत में जिसने प्रभु–नाम का सुमिरन किया वह अविनाशी होकर अमर पद को प्राप्त कर लेता है ॥८॥२२॥श्लोक॥ गुरु ने मुझे ज्ञान रूपी अंजन दिया है जिससे मेरा अज्ञान का अँधेरा विनष्ट हो गया है । प्रभु की कृपा से मेरा मेल शान्त पुरुष (सन्त) से हो गया है जिससे हे नानक, मेरा मन प्रकाशित हो उठा है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ सन्तसंगत में मैंने प्रभु को अपने अन्दर ही देख लिया है और प्रभु का नाम अब मुझे मीठा लग रहा है । संसार की सारी सामग्री एक ही प्रभु के अन्दर निहित है और अनेक रंगों में नाना प्रकार से दृष्टिगोचर हो रही है । प्रभु का नाम ही नवनिधियां और अमृत रूप है । उसका वास्तविक ठिकाना व्यक्ति के शरीर के अन्दर ही है । जीव के अन्दर ही शून्य समाधि एवं अनहद् ध्वनि चलती रहती है और उसके आश्चर्य रूपी कौतूहल का वर्णन नहीं किया जा सकता है । जिसे प्रभु दिखाता है केवल वही उसे देख पाता है । हे नानक, ऐसे व्यक्ति को ही सब सुझायी देने लगता है ॥ १ ॥ घट–घट में व्याप्त प्रभु ही अन्दर भी है और अनन्त रूप से बाहर भी है । वह धरती में, आकाश में, पाताल में रहता हुआ सभी

प्रतिपाल ॥ बनि तिनि परबति है पारब्रहमु ॥ जैसी आगिआ तैसा करमु ॥ पउन पाणी बैसंतर माहि ॥ चारि कुंट दह दिसे समाहि ॥ तिस ते भिंन नही को ठाउ ॥ गुर प्रसादि नानक सुखु पाउ ॥ २ ॥ बेद पुरान सिंम्रिति महि देखु ॥ ससीअर सूर नख्यत्र महि एकु ॥ बाणी प्रभ की सभु को बोलै ॥ आपि अडोलु न कबहू डोलै ॥ सरब कला करि खेलै खेल ॥ मोलि न पाईऐ गुणह अमोल ॥ सरब जोति महि जा की जोति ॥ धारि रहिओ सुआमी ओति पोति ॥ गुर परसादि भरम का नासु ॥ नानक तिन महि एहु बिसासु ॥ ३ ॥ संत जना का पेखनु सभु ब्रहम ॥ संत जना कै हिरदै सभि धरम ॥ संत जना सुनहि सुभ बचन ॥ सरब बिआपी राम संगि रचन ॥ जिनि जाता तिस की इह रहत ॥ सति बचन साधू सभि कहत ॥ जो जो होइ सोई सुखु मानै ॥ करन करावनहारु प्रभु जानै ॥ अंतरि बसे बाहरि भी ओही ॥ नानक दरसनु देखि सभ मोही ॥ ४ ॥ आपि सति कीआ सभु सति ॥ तिसु प्रभ ते सगली उतपति ॥ तिसु भावै ता करे बिसथारु ॥ तिसु भावै ता एकंकारु ॥ अनिक कला लखी नह जाइ ॥ जिसु भावै तिसु लए मिलाइ ॥ कवन निकटि कवन कहीऐ दूरि ॥ आपे आपि आप भरपूरि ॥ अंतरगति जिसु आपि जनाए ॥ नानक तिसु जन आपि बुझाए ॥ ५ ॥ सरब भूत आपि वरतारा ॥ सरब नैन आपि पेखनहारा ॥ सगल समग्री जा का तना ॥ आपन जसु आप ही सुना ॥ आवन जानु इकु खेलु बनाइआ ॥ आगिआकारी कीनी माइआ ॥ सभ कै मधि अलिपतो रहै ॥ जो किछु कहणा सु आपे कहै ॥ आगिआ आवै आगिआ जाइ ॥ नानक जा भावै ता लए समाइ ॥ ६ ॥ इस ते होइ सु नाही बुरा ॥ ओरै कहहु किनै कछु करा ॥ आपि भला करतूति अति नीकी ॥ आपे जानै अपने जी की ॥ आपि साचु धारी सभ साचु ॥ ओति पोति आपन संगि राचु ॥ ता की गति मिति कही न जाइ ॥ दूसर होइ त सोझी पाइ ॥ तिस का कीआ सभु परवानु ॥ गुर प्रसादि नानक इहु जानु ॥ ७ ॥ जो जानै तिसु सदा सुखु होइ ॥ आपि मिलाइ लए प्रभु सोइ ॥ ओहु धनवंतु कुलवंतु पतिवंतु ॥ जीवन मुकति जिसु रिदै भगवंतु ॥ धंनु धंनु धंनु जनु आइआ ॥

लोकों के जीवन का पूर्ण रूप से पालन करता है । वन में, तिनके में और पर्वतों में भी वही परमात्मा व्याप्त है । जैसी उसकी आज्ञा होती है जीव वैसे ही कर्म करते हैं । पवन, पानी, अग्नि, चारों ओर दसों दिशाओं में वही स्थित और समाया हुआ है । उससे अलग कोई स्थान नहीं है । हे नानक, गुरु की कृपा से तू भी सुख प्राप्त कर ॥ २ ॥ उसे वेदों, पुराणों स्मृतियों, चन्द्र, सूर्य, नक्षत्रों में केवल एक ही प्रभु के रूप में देखो । प्रभु की वाणी के फलस्वरूप ही सभी बोलते हैं परन्तु वह प्रभु स्वयं स्थिर बना रहता है और कभी भी डोलता नहीं । पूरी कुशलता के साथ वह अपना खेल खेलता है और उसके इस खेल की कीमत को आंका नहीं जा सकता; क्योंकि उसकी विशेषताएं अमूल्य हैं । सभी ज्योतियों में जिसकी ज्योति है उस प्रभु ने सारे संसार को अपने में ही ओत-प्रोत करके धारण कर रखा है । हे नानक, जिनके मन का संदेह गुरु कृपा से समाप्त हो गया है उनके अन्दर परमात्मा का पक्का भरोसा बैठ गया है ॥ ३ ॥ सन्त व्यक्ति की दृष्टि में सब ओर परमात्मा ही है । सन्त के हृदय में ही पूर्ण कर्त्तव्य की भावना विद्यमान रहती है। सन्त व्यक्ति ही शुभ वचन सुनता है और सर्वव्यापी प्रभु में लीन बना रहता है । जिसने उसे जान लिया है यह उसके जीवन जीने का मार्ग बन गया है । ऐसे साधु व्यक्ति की सभी बातें सत्य-वचन के रूप में होती हैं । जो जो हो रहा है वह उसे अच्छा ही मानता है और वह यह भी जानता है कि करने कराने वाला केवल वह प्रभु ही है । वह यह भी जानता है कि अन्दर और बाहर वही बसता है । हे नानक, ऐसे व्यक्ति के दर्शन से सभी मोहित बने रहते हैं ॥ ४ ॥ वह स्वयं भी सत्य है और उसकी रचना भी सत्य है । प्रभु से ही सारी रचना उत्पन्न हुई है; उसे जब भाता है तो वह स्वयं का विस्तार कर लेता है और उसे ही जब अच्छा लगता है तो वह पुनः एक रूप में ही आ जाता है । उसकी अनेकों शक्तियां हैं जिन्हें देखा नहीं जा सकता है । जिसे वह चाहता है उसे अपने आप से मिला लेता है । किसे निकट और किसे दूर कहा जाए क्योंकि स्वयं ही वह प्रभु सब ओर व्याप्त है । हे नानक, जिस सेवक को प्रभु उसके अंदर से ही ज्ञान प्रदान कर देता है उसे ही वह सभी रहस्य समझा देता है ॥ ५ ॥ सभी तत्वों में वह प्रभु स्वयं ही कार्यशील है । सभी आँखों के माध्यम से वह स्वयं ही देखने वाला है । संसार की सारी सामग्री जिस प्रभु का शरीर है वह अपना यश स्वयं ही सुनता है । आवागमन तो उसने एक खेल बना रखा है तथा मोहिनी माया को उसने अपनी आज्ञा में ही कार्यशील किया हुआ है । सबमें बसता हुआ भी वह सबसे अलिप्त बना रहता है और जो कुछ भी उसे कहना होता है वह स्वयं ही आज्ञा देता है । उसी की आज्ञा में जीव आता जाता है और हे नानक, जब उसे अच्छा लगता है तो वह जीव को अपने में लीन कर लेता है ॥ ६ ॥ उस प्रभु से कुछ भी बुरा नहीं होता । उसके बिना बताइये भला किसी ने कभी भी कुछ किया है । वह स्वयं भला है और उसके कार्य भी सुन्दर हैं । केवल वही जानता है कि उसके चित्त में क्या है । वह स्वयं सच्चा है और जो कुछ उसने धारण किया हुआ है वह सब कुछ भी सच्चा ही है । वह पूर्ण रूप से ओत-प्रोत होकर अपने आप में ही लीन है । उसकी सीमा और विस्तार के बारे में कहा नहीं जा सकता क्योंकि कोई दूसरा उसके जैसा हो तब ही उसे पता लग सकता है । उसका किया हुआ सब कुछ मानना होता है; हे नानक, गुरु की कृपा से तू इस तथ्य को भलि-भांति जांन ले ॥ ७ ॥ जो जानता है उसे सदैव सुख होता है । प्रभु उसको स्वयं ही अपने आप में मिला लेता है । वही धनवान है, कुलशील है, इ़ज़्ज़तदार है, जीवन मुक्त है जिसके हृदय में परमात्मा का निवास है । प्रभु के ऐसे सेवक का आना धन्य है, धन्य है और धन्य है

जिसु प्रसादि सभु जगतु तराइआ ॥ जन आवन का इहै सुआउ ॥ जन कै संगि चिति आवै नाउ ॥ आपि मुकतु मुकतु करै संसारु ॥ नानक तिसु जन कउ सदा नमसकारु ॥ ८ ॥ २३ ॥ सलोकु ॥ पूरा प्रभु आराधिआ पूरा जा का नाउ ॥ नानक पूरा पाइआ पूरे के गुन गाउ ॥ १ ॥ असटपदी ॥ पूरे गुर का सुनि उपदेसु ॥ पारब्रहमु निकटि करि पेखु ॥ सासि सासि सिमरहु गोबिंद ॥ मन अंतर की उतरै चिंद ॥ आस अनित तिआगहु तरंग ॥ संत जना की धूरि मन मंग ॥ आपु छोडि बेनती करहु ॥ साधसंगि अगनि सागरु तरहु ॥ हरि धन के भरि लेहु भंडार ॥ नानक गुर पूरे नमसकार ॥ १ ॥ खेम कुसल सहज आनंद ॥ साधसंग भजु परमानंद ॥ नरक निवारि उधारहु जीउ ॥ गुन गोबिंद अंम्रित रसु पीउ ॥ चिति चितवहु नाराइण एक ॥ एक रूप जा के रंग अनेक ॥ गोपाल दामोदर दीन दइआल ॥ दुख भंजन पूरन किरपाल ॥ सिमरि सिमरि नामु बारं बार ॥ नानक जीअ का इहै अधार ॥ २ ॥ उतम सलोक साध के बचन ॥ अमुलीक लाल एहि रतन ॥ सुनत कमावत होत उधार ॥ आपि तरै लोकह निसतार ॥ सफल जीवनु सफलु ता का संगु ॥ जा कै मनि लागा हरि रंगु ॥ जै जै सबदु अनाहदु वाजै ॥ सुनि सुनि अनद करे प्रभु गाजै ॥ प्रगटे गुपाल महांत कै माथे ॥ नानक उधरे तिन कै साथे ॥ ३ ॥ सरनि जोगु सुनि सरनी आए ॥ करि किरपा प्रभ आप मिलाए ॥ मिटि गए बैर भए सभ रेन ॥ अंम्रित नामु साधसंगि लैन ॥ सुप्रसंन भए गुरदेव ॥ पूरन होई सेवक की सेव ॥ आल जंजाल बिकार ते रहते ॥ राम नाम सुनि रसना कहते ॥ करि प्रसादु दइआ प्रभि धारी ॥ नानक निबही खेप हमारी ॥ ४ ॥ प्रभ की उसतति करहु संत मीत ॥ सावधान एकागर चीत ॥ सुखमनी सहज गोबिंद गुन नाम ॥ जिसु मनि बसै सु होत निधान ॥ सरब इछा ता की पूरन होइ ॥ प्रधान पुरखु प्रगटु सभ लोइ ॥ सभ ते ऊच पाए असथानु ॥ बहुरि न होवै आवन जानु ॥ हरि धनु खाटि चलै जनु सोइ ॥ नानक जिसहि परापति होइ ॥ ५ ॥ खेम सांति रिधि नव निधि ॥ बुधि गिआनु सरब तह सिधि ॥ बिदिआ तपु जोगु प्रभ धिआनु ॥

जिसकी कृपा से सारा संसार पार उतर जाता है। प्रभु के सेवक का संसार में आने का यही प्रयोजन होता है कि उसकी संगत में प्रभु–नाम का सुमिरन चित्त में बना रहता है। हे नानक, ऐसे सेवक को सदैव प्रणाम है जो स्वयं मुक्त होता है और सारे संसार को भी मुक्त कर देता है ॥८॥२३॥ श्लोक ॥ उस पूर्ण प्रभु की मैंने आराधना की है जिसका नाम भी पूर्ण है। नानक ने पूर्ण प्रभु के गुण गाकर उस पूर्ण को पा लिया है ॥ १ ॥ अष्टपदी ॥ पूर्ण गुरु का उपदेश सुनो और परमात्मा को अपने पास ही देखो। प्रत्येक श्वास् के साथ प्रभु का सुमिरन करो जिससे तेरे मन की चिन्ता दूर हो जाएगी। क्षणभंगुर इच्छाओं की लहरों का तू त्याग कर और सन्त पुरुषों की चरण–धूलि की मन से याचना कर। अपने अभिमान को त्याग कर प्रार्थना करो और साधसंगत में संसार रूपी अग्नि–सागर को पार कर जाओ। प्रभु रूपी धन से अपने भण्डारों को भर लो। नानक पूर्ण गुरु को नमस्कार करता है ॥ १ ॥ साधसंगत में परमात्मा का सुमिरन करने से तुझे मुक्ति, शान्ति, सहज और आनन्द प्राप्त हो जाएगा। प्रभु के गुण रूपी अमृत रस का पान करने से तुम नर्क से बच जाओगे और तुम्हारी आत्मा का उद्धार हो जाएगा। अपने चित्त में केवल एक प्रभु का सुमिरन करो जिसका रूप तो एक ही है परन्तु कौतुक अनेक हैं। दुखों का नाश करने वाला वह पूर्ण कृपालु प्रभु ही धरती का पालन करने वाला है। विश्व को अपने में लीन करने वाला और दीनों पर दया करने वाला प्रभु है। बार बार उसके नाम का सुमिरन कर क्योंकि हे नानक, यही प्राणों का आसरा है ॥२॥ साधु पुरुष के वचन सदैव श्रेष्ठ शब्द होते हैं। वे रत्नों की तरह अमूल्य रत्न होते हैं। उनको सुनने और उन पर आचरण करने से उद्धार होता है। उन्हें सुनकर व्यक्ति खुद पार उतर जाता है और लोगों का भी उद्धार कर देता है। जिसके मन में प्रभु का रंग लग गया है उसका जीवन भी सफल है और उसकी संगत भी सफल है। उस अनहद् शब्द की सदैव जय जयकार है जिसे सुनकर व्यक्ति आनन्दित बना रहता है और उसके माध्यम से प्रभु–नाम गूँजता रहता है। प्रभु स्वयं को पवित्र पुरुषों के मस्तिष्क में प्रकट करता है। ऐसे व्यक्तियों की संगत में ही हे नानक, अन्यों का भी उद्धार हो जाता है ॥३॥ वह शरण देने में समर्थ है यही सुनकर हम उसकी शरण में आए हैं। प्रभु ने कृपा करके हमें स्वयं से मिला लिया है। हमारे शत्रु भाव समाप्त हो गए हैं और हम सब की चरण–धूलि बन गए हैं। साधसंगत में हमने अमृत–नाम प्राप्त कर लिया है। ईश्वर रूपी गुरु प्रसन्न हो गए हैं और इस सेवक की सेवा भी सफल हो गई है। प्रभु–नाम को जीभ से कहते हुए और सुनते हुए मैं सांसारिक जंजालों एवं विकारों से बच गया हूँ। प्रभु ने कृपा करके मुझ पर दया की है और हे नानक, मेरा सौदा सही सलामत अपने ठिकाने पर पहुँच गया है ॥४॥ हे मित्र, सन्तजनों, सावधान और एकाग्रचित्त होकर प्रभु की स्तुति करो; प्रभु का गुणानुवाद और नाम ही सहज एवं सुखों की मणि है। जिसके मन में यह बस जाती है वह स्वयं सुखों का भण्डार बन जाता है। उसकी सभी इच्छाएं पूर्ण हो जाती हैं और वह सभी लोकों में प्रधान एवं बलशाली व्यक्ति के रूप में प्रकट होता है। वह सबसे ऊँचा ठिकाना प्राप्त कर लेता है और फिर आवागमन में नहीं पड़ता। ऐसा सेवक प्रभु रूपी धन की कमाई करके यहां से जाता है और हे नानक, ऐसा वही कर पाता है जिसे यह सुखों की मणि प्राप्त होती है ॥ ५ ॥ क्षेम, शान्ति, ऋद्धियां, नवनिधियां, बुद्धि एवं सब प्रकार के ज्ञान वह सिद्ध कर लेता है।

गिआनु स्रेसट ऊतम इसनानु ॥ चारि पदारथ कमल प्रगास ॥ सभ कै मधि सगल ते उदास ॥ सुंदरु चतुरु तत का बेता ॥ समदरसी एक द्रिसटेता ॥ इह फल तिसु जन कै मुखि भने ॥ गुर नानक नाम बचन मनि सुने ॥ ६ ॥ इहु निधानु जपै मनि कोइ ॥ सभ जुग महि ता की गति होइ ॥ गुण गोबिंद नाम धुनि बाणी ॥ सिम्रिति सासत्र बेद बखाणी ॥ सगल मतांत केवल हरि नाम ॥ गोबिंद भगत कै मनि बिस्राम ॥ कोटि अप्राध साधसंगि मिटै ॥ संत क्रिपा ते जम ते छुटै ॥ जा कै मसतकि करम प्रभि पाए ॥ साध सरणि नानक ते आए ॥ ७ ॥ जिसु मनि बसै सुनै लाइ प्रीति ॥ तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति ॥ जनम मरन ता का दूखु निवारै ॥ दुलभ देह ततकाल उधारै ॥ निरमल सोभा अंम्रित ता की बानी ॥ एकु नामु मन माहि समानी ॥ दूख रोग बिनसे भै भरम ॥ साध नाम निरमल ता के करम ॥ सभ ते ऊच ता की सोभा बनी ॥ नानक इह गुणि नामु सुखमनी ॥ ८ ॥ २४ ॥

थिती गउड़ी महला ५ ॥ सलोकु ॥ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

जलि थलि महीअलि पूरिआ सुआमी सिरजनहारु ॥ अनिक भांति होइ पसरिआ नानक एकंकारु ॥ १ ॥ पउड़ी ॥ एकम एकंकारु प्रभु करउ बंदना धिआइ ॥ गुण गोबिंद गुपाल प्रभ सरनि परउ हरि राइ ॥ ता की आस कलिआण सुख जा ते सभु कछु होइ ॥ चारि कुंट दह दिसि भ्रमिओ तिसु बिनु अवरु न कोइ ॥ बेद पुरान सिम्रिति सुने बहु बिधि करउ बीचारु ॥ पतित उधारन भै हरन सुख सागर निरंकार ॥ दाता भुगता देनहारु तिसु बिनु अवरु न जाइ ॥ जो चाहहि सोई मिलै नानक हरि गुन गाइ ॥ १ ॥ गोबिंद जसु गाईऐ हरि नीत ॥ मिलि भजीऐ साधसंगि मेरे मीत ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सलोकु ॥ करउ बंदना अनिक वार सरनि परउ हरि राइ ॥ भ्रमु कटीऐ नानक साधसंगि दुतीआ भाउ मिटाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ दुतीआ दुरमति दूरि करि गुर सेवा करि नीत ॥ राम रतनु मनि तनि बसै तजि कामु क्रोधु लोभु मीत ॥ मरण मिटै जीवनु मिलै बिनसहि सगल कलेस ॥ आपु तजहु

विद्या, तप, योग, सुमिरन, ज्ञान, श्रेष्ठ एवं उत्तम स्नान, चारों पुरुषार्थ, हृदय रूपी कमल का खिलना–यह सब होते हुए भी वह सबसे अलेप बना रहता है । ऐसा व्यक्ति सुन्दर, चतुर, तत्ववेत्ता, समदर्शी और केवल एक प्रभु पर ही आस्था रखने वाला होता है । यह सभी फल उस व्यक्ति को मिलते हैं जो हे नानक गुरु की प्रभु–नाम रूपी वाणी को मन लगाकर सुनता है ॥ ६ ॥ जो इस नाम के भण्डार का मन से सुमिरन करता है उसकी सभी युगों में महिमा हो जाती है । यह वाणी प्रभु का गुणानुवाद और प्रभु नाम की ध्वनि है जिसका बखान स्मृतियां, शास्त्र और वेद करते हैं । सभी मतों का सार–तत्व केवल प्रभु–नाम ही है जो प्रभु के भक्तों के मन में टिका रहता है । साधसंगत में करोड़ों अपराध मिट जाते हैं और व्यक्ति शान्त पुरुषों की कृपा से आध्यात्मिक मौत से बच जाता है । हे नानक, साधु पुरुषों की शरण में वे लोग ही आते हैं जिनके मस्तक पर प्रभु ने भाग्य–लेख लिखे होते हैं ॥ ७ ॥ यह वाणी जिसके मन में वसती है और जो इसे प्रेम पूर्वक सुनता है उसे परमात्मा सदैव याद रहता है । उसके जन्म–मरण के दुख दूर हो जाते हैं और उसकी इस दुर्लभ देह का तत्काल उद्धार हो जाता है । उसकी शोभा निर्मल हो जाती है और उसके बोल भी अमृत तुल्य हो जाते हैं । ऐसे व्यक्ति के मन में केवल एक प्रभु–नाम ही बसा हुआ होता है । दुख, रोग, भय, भ्रम आदि विनष्ट हो जाते हैं । उसके कर्म निर्मल हो जाते हैं और उसको साधु पुरुष के नाम से जाना जाता है । ऐसे व्यक्ति की महिमा सबसे ऊँची बन जाती है और हे नानक, इन्हीं गुणों के कारण इसे सुखों की मणि रूपी वाणी का नाम दिया गया है ॥ ८ ॥ २४ ॥

थिती गऊड़ी महला ५ ॥ श्लोक ॥ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

संसार का सृजक प्रभु जल, स्थल और आकाश में व्याप्त है और हे नानक, वह अनेकों प्रकार से चारों ओर फैला हुआ है ॥ १ ॥ पहली तिथि– उस एक ही प्रभु की वन्दना करो और सृष्टि को धारण करने वाले परमात्मा का गुणानुवाद करो । केवल उसी पर कल्याण की आशा रखो जो सब कुछ कर सकता है । मैं चारों ओर और दसों दिशाओं में भटक चुका हूँ परन्तु उस प्रभु के बिना मुझे अन्य कोई भी दिखाई नहीं दिया । वेदों, पुराणों और स्मृतियों को सुनकर मैंने अनेकों विधियों से उन पर चिन्तन किया है और पाया है कि केवल निराकार प्रभु ही पतितों का उद्धार करने वाला, भय मुक्त करने वाला एवं सुखों का सागर है । देने वाला और भोगने वाला वह प्रभु ही है, उसके बिना अन्य कोई भी ठिकाना नहीं है । हे नानक, उस प्रभु के गुणानुवाद से ही व्यक्ति जो चाहता है उसे मिल जाता है ॥ १ ॥ सदैव प्रभु के यश का गायन करना चाहिए और हे मेरे मित्र, साधसंगत में मिलकर उस प्रभु का सुमिरन करना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ श्लोक ॥ अनेकों बार उसकी वन्दना करो और प्रभु की शरण में आन पड़ो । हे नानक, साधसंगत में सभी भ्रम कट जाते हैं और द्वैतभाव समाप्त हो जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ दूसरी तिथि–अपनी दुर्मति को त्याग दे और हे मित्र, सदैव गुरु की सेवा कर । काम, क्रोध और मोह को त्यागने से प्रभु रूपी रत्न तेरे तन मन में आन बसेगा । तेरा मरना समाप्त हो जाऐगा, तुझे जीवन प्राप्त हो जाएगा और तेरे

गोबिंद भजहु भाउ भगति परवेस ॥ लाभु मिलै तोटा हिरै हरि दरगह पतिवंत ॥ राम नाम धनु संचवै साच साह भगवंत ॥ ऊठत बैठत हरि भजहु साधू संगि परीति ॥ नानक दुरमति छुटि गई पारब्रहम बसे चीति ॥ २ ॥ सलोकु ॥ तीनि बिआपहि जगत कउ तुरीआ पावै कोइ ॥ नानक संत निरमल भए जिनि मनि वसिआ सोइ ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ त्रितीआ त्रै गुण बिखै फल कब उतम कब नीचु ॥ नरक सुरग भ्रमतउ घणो सदा संघारै मीचु ॥ हरख सोग सहसा संसारु हउ हउ करत बिहाइ ॥ जिनि कीए तिसहि न जाणनी चितवहि अनिक उपाइ ॥ आधि बिआधि उपाधि रस कबहु न तूटै ताप ॥ पारब्रहम पूरन धनी नह बूझै परताप ॥ मोह भरम बूडत घणो महा नरक महि वास ॥ करि किरपा प्रभ राखि लेहु नानक तेरी आस ॥ ३ ॥ सलोकु ॥ चतुर सिआणा सुघड़ु सोइ जिनि तजिआ अभिमानु ॥ चारि पदारथ असट सिधि भजु नानक हरि नामु ॥ ४ ॥ पउड़ी ॥ चतुरथि चारे बेद सुणि सोधिओ ततु बीचारु ॥ सरब खेम कलिआण निधि राम नामु जपि सारु ॥ नरक निवारै दुख हरै तूटहि अनिक कलेस ॥ मीचु हुटै जम ते छुटै हरि कीरतन परवेस ॥ भउ बिनसै अंम्रितु रसै रंगि रते निरंकार ॥ दुख दारिद अपवित्रता नासहि नाम अधार ॥ सुरि नर मुनि जन खोजते सुख सागर गोपाल ॥ मनु निरमलु मुखु ऊजला होइ नानक साध रवाल ॥ ४ ॥ सलोकु ॥ पंच बिकार मन महि बसे राचे माइआ संगि ॥ साधसंगि होइ निरमला नानक प्रभ कै रंगि ॥ ५ ॥ पउड़ी ॥ पंचमि पंच प्रधान ते जिह जानिओ परपंचु ॥ कुसम बास बहु रंगु घणो सभ मिथिआ बलबंचु ॥ नह जापै नह बूझीऐ नह कछु करत बीचारु ॥ सुआद मोह रस बेधिओ अगिआनि रचिओ संसारु ॥ जनम मरण बहु जोनि भ्रमण कीने करम अनेक ॥ रचनहारु नह सिमरिओ मनि न बीचारि बिबेक ॥ भाउ भगति भगवान संगि माइआ लिपत न रंच ॥ नानक बिरले पाईअहि जो न रचहि परपंच ॥ ५ ॥ सलोकु ॥ खट सासत्र ऊचौ कहहि अंतु न पारावार ॥ भगत सोहहि गुण गावते नानक प्रभ कै दुआर ॥ ६ ॥ पउड़ी ॥ खसटमि खट सासत्र कहहि सिंम्रिति कथहि अनेक ॥

समस्त क्लेष नष्ट हो जाएंगे। अहंकार त्याग कर प्रभु का सुमिरन करने से प्रेम और भक्ति मन में प्रवेश कर जाएंगे जिससे तुझे लाभ प्राप्त होगा, तेरी कमियां दूर हो जाएंगी और तू प्रभु–दरबार में सम्मानित हो जाएगा। वही सच्चा साहूकार और भाग्यशाली है जो राम–नाम रूपी धन का संचय करता है। साधु पुरुषों के साथ प्रेम करके उठते बैठते प्रभु का सुमिरन करो। हे नानक, जब प्रभु मन में आन बसता है तो दुर्मति छूट जाती है ॥ २ ॥ श्लोक ॥ सारा संसार तीनों गुणों में दुखी हो रहा है। तुरीय अवस्था अथवा परमपद किसी बिरले को ही प्राप्त होता है। हे नानक, वे शान्त पुरुष निर्मल बने रहते हैं जिनके मन में वह प्रभु निवास करता है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ तीसरी तिथि–तीनों गुण विष के फ़ल हैं जो कभी तो उत्तम बन जाते हैं और कभी बहुत ही नीच हो जाते हैं। ऐसे स्वभाव वाले व्यक्ति नर्क–स्वर्ग में भटकते रहते हैं और मौत हमेशा ही उनका संहार करती रहती है। सांसारिक हर्ष, शोक, सन्देह आदि में बने रहते हुए वे अपना जीवन अहंकारी बने रहकर व्यतीत कर लेते हैं। जिसने उत्पन्न किया है उसे वे नहीं जानते और अनेकों अन्य उपाय सोचते रहते हैं। वे मन, आत्मा और शरीर के रोगों में ही ग्रस्त रहते हैं और उनकी पीड़ा कभी भी समाप्त नहीं होती। वे परब्रहम प्रभु के प्रताप को नहीं बूझते और न ही अनुभव करते हैं। सांसारिक मोह, भ्रम में वे बुरी तरह डूबे हुए होते हैं और महा–नर्क उनका निवास बन जाता है। हे प्रभु, कृपा करके मेरी रक्षा कर क्योंकि नानक को केवल तुझसे ही आशा है ॥ ३ ॥ श्लोक ॥ वही चतुर, सयाना, एवं भद्र पुरुष है जिसने अपने अभिमान को त्याग दिया है। हे नानक, तू चारों पुरुषार्थों एवं अष्ट सिद्धियों के रूप केवल प्रभु नाम का ही सुमिरन कर ॥ ४ ॥ पउड़ी ॥ चौथी तिथि–चारों वेदों को सुनकर और चिन्तन करके मैंने यही तत्व विचार बनाया है कि प्रभु नाम का जाप ही सभी सुखों का सार और कल्याण का भण्डार है जिसका सुमिरन किया जाना चाहिए। प्रभु–नाम सुमिरन नर्क का निवारण करता है, दुखों को हर लेता है और अनेकों क्लेषों को समाप्त कर देता है। मृत्यु जीत ली जाती है, यम से छुटकारा मिल जाता है और प्रभु के गुणानुवाद में व्यक्ति लीन हो जाता है। निराकार प्रभु के रंग में रंगे रहने से भय नष्ट हो जाता है और अमृत रस का पान किया जाता है। नाम का आसरा बनाए रखने से दुख, दरिद्रता एवं अपवित्रता आदि भाग खड़े होते हैं। देवता, मनुष्य, मुनिजन आदि सभी शक्ति के समुद्र प्रभु को खोजते फिरते हैं। हे नानक, सन्तों की चरण–धूलि बन जाने से मन निर्मल तथा मुख उज्जवल हो जाता है ॥ ४ ॥ श्लोक ॥ जो माया में लीन रहते हैं, पांचों विकार उनके मन में बसे रहते हैं। हे नानक, प्रभु के रंग में लीन होने पर तथा साधसंगत में बने रहने पर ही व्यक्ति निर्मल होता है ॥ ५ ॥ पउड़ी ॥ पांचवीं तिथि–जो संसार के प्रपंच को जान गए हैं वे ही सम्मानित एवं प्रमुख लोग हैं। फूलों की गन्ध और अनेकों प्रकार की तड़क–भड़क सभी झूठे एवं बलपूर्वक ठगने वाले हैं। व्यक्ति न तो जानता है, न बूझता है और न ही कुछ विचार करता है। वह संसार के स्वादों और मोह में डूबा रहता है और अज्ञान में ही बना रहकर इस संसार में लीन रहता है। जन्म–मरण, अनेकों योनियों में भटकना आदि वह अनेक कर्म करता है परन्तु पैदा करने वाले ईश्वर का सुमिरन नहीं करता और मन में विवेक युक्त होकर विचार नहीं करता। प्रभु के प्रेम और भक्ति में बने रहने से जीव रंचमात्र भी माया में लिप्त नहीं होता। हे नानक, ऐसे बिरले ही व्यक्ति हैं जो सांसारिक प्रपंच में लिप्त नहीं बने रहते ॥ ५ ॥ श्लोक ॥ षटदर्शन उसे ऊँचे से ऊँचा बताते हुए कहते हैं कि उस प्रभु का कोई ओर–छोर नहीं। हे नानक, प्रभु के द्वार पर केवल प्रभु का गुणानुवाद करने वाले भक्तजन ही शोभायमान होते हैं ॥ ६ ॥ पउड़ी ॥ छठी तिथि–छः शास्त्र एवं स्मृतियां बताती हैं कि

ऊतमु ऊचौ पारब्रहमु गुण अंतु न जाणहि सेख ॥ नारद मुनि जन सुक बिआस जसु गावत गोबिंद ॥ रस गीधे हरि सिउ बीधे भगत रचे भगवंत ॥ मोह मान भ्रमु बिनसिओ पाई सरनि दइआल ॥ चरन कमल मनि तनि बसे दरसनु देखि निहाल ॥ लाभु मिलै तोटा हिरै साधसंगि लिव लाइ ॥ खाटि खजाना गुण निधि हरे नानक नामु धिआइ ॥ ६ ॥ सलोकु ॥ संत मंडल हरि जसु कथहि बोलहि सति सुभाइ ॥ नानक मनु संतोखीऐ एकसु सिउ लिव लाइ ॥ ७ ॥ पउड़ी ॥ सपतमि संचहु नाम धनु टूटि न जाहि भंडार ॥ संतसंगति महि पाईऐ अंतु न पारावार ॥ आपु तजहु गोबिंद भजहु सरनि परहु हरि राइ ॥ दूख हरै भवजलु तरै मन चिंदिआ फलु पाइ ॥ आठ पहर मनि हरि जपै सफलु जनमु परवाणु ॥ अंतरि बाहरि सदा संगि करनैहारु पछाणु ॥ सो साजनु सो सखा मीतु जो हरि की मति देइ ॥ नानक तिसु बलिहारणै हरि हरि नामु जपेइ ॥ ७ ॥ सलोकु ॥ आठ पहर गुन गाईअहि तजीअहि अवरि जंजाल ॥ जमकंकरु जोहि न सकई नानक प्रभू दइआल ॥ ८ ॥ पउड़ी ॥ असटमी असट सिधि नव निधि ॥ सगल पदारथ पूरन बुधि ॥ कवल प्रगास सदा आनंद ॥ निरमल रीति निरोधर मंत ॥ सगल धरम पवित्र इसनानु ॥ सभ महि ऊच बिसेख गिआनु ॥ हरि हरि भजनु पूरे गुर संगि ॥ जपि तरीऐ नानक नाम हरि रंगि ॥ ८ ॥ सलोकु ॥ नाराइणु नह सिमरिओ मोहिओ सुआद बिकार ॥ नानक नामि बिसारिऐ नरक सुरग अवतार ॥ ९ ॥ पउड़ी ॥ नउमी नवे छिद्र अपवीत ॥ हरि नामु न जपहि करत बिपरीति ॥ पर त्रिअ रमहि बकहि साध निंद ॥ करन न सुनही हरि जसु बिंद ॥ हिरहि पर दरबु उदर कै ताई ॥ अगनि न निवरै त्रिसना न बुझाई ॥ हरि सेवा बिनु एह फल लागे ॥ नानक प्रभ बिसरत मरि जमहि अभागे ॥ ९ ॥ सलोकु ॥ दस दिस खोजत मै फिरिओ जत देखउ तत सोइ ॥ मनु बसि आवै नानका जे पूरन किरपा होइ ॥ १० ॥ पउड़ी ॥ दसमी दस दुआर बसि कीने ॥ मनि संतोखु नाम जपि लीने ॥ करनी सुनीऐ जसु गोपाल ॥ नैनी पेखत साध दइआल ॥ रसना गुन गावै बेअंत ॥ मन

परम प्रभु उत्तम और ऊँचा है, उसके गुणों का ओर-छोर शेषनाग भी नहीं जानता । नारद, मुनिजन, शुकदेव, व्यास आदि भी प्रभु की कीर्ति का गायन करते हैं । प्रभु के रस में रंगे हुए और प्रभु से ही बिंधे हुए अनेकों भक्तों की रचना भी भगवान ने ही की है । दयालु प्रभु की शरण प्राप्त कर लेने से मोह, अभिमान, भ्रम आदि विनष्ट हो जाते हैं और प्रभु के चरण-कमलों को तन-मन में बसाकर उसका दर्शन करके व्यक्ति धन्य हो जाता है । साधसंगत में बैठ कर सुरति को प्रभु में लगाने पर लाभ प्राप्त होता है और हानि समाप्त हो जाती है । हे नानक, प्रभु-नाम सुमिरन से जीव गुणों के भण्डार प्रभु रूपी खज़ाने को प्राप्त कर लेता है ॥ ६ ॥ श्लोक ॥ साधु-मंडली हरि-यश का बखान करती है और स्वाभाविक रूप से ही सत्य का कथन करती है । हे नानक, एक प्रभु में ही सुरति लीन कर लेने से मन संतुष्ट हो जाता है ॥ ७ ॥ पउड़ी ॥ सातवीं तिथि-प्रभु-नाम धन का संचय करो जिसके भण्डार में कमी नहीं आती । जिस प्रभु का कोई ओर-छोर नहीं है उसे शान्त पुरुषों की संगत में ही प्राप्त किया जाता है । अभिमान को त्याग कर प्रभु का सुमिरन करो और उसकी शरण में आन पड़ो । इस प्रकार तेरा यह कार्य दुखों का हरण कर लेगा; संसार सागर से तू पार हो जाएगा और तुझे मनोवांछित फल प्राप्त हो जाएंगे । जिसका मन आठों प्रहर प्रभु का जाप करता है उसका जन्म सफल एवं स्वीकृत हो जाता है । हे जीव, अंदर-बाहर सदैव उस कर्ता-प्रभु को अनुभव कर । जो प्रभु की ओर लगने की प्रेरणा देता है वही मेरा प्यारा सखा और मित्र है । हे नानक, मैं उस पर बलिहारी जाता हूँ जो हरि-नाम का सुमिरन करता है ॥ ७ ॥ श्लोक ॥ अन्य जंजालों को त्याग कर आठों प्रहर प्रभु के गुण गाओ । इससे हे नानक, प्रभु दयालु रहेगा और यमदूत तुझे ढूँढ ही नहीं पाएगा ॥ ८ ॥ पउड़ी ॥ आठवीं तिथि-आठों सिद्धियां, नौ निधियां, समस्त पदार्थ, पूर्ण बुद्धि, हृदय कमल का खिलना, सदैव आनन्दित बने रहना, निर्मल जीवन, उच्चतम उपदेश, समस्त कर्त्तव्य, पवित्र स्नान, सबसे ऊँचा विशिष्ट ज्ञान आदि गुरु की संगत में प्रभु सुमिरन के द्वारा प्राप्त हो जाते हैं । प्रभु के नाम-रंग में बने रहकर, हे नानक, प्रभु का सुमिरन करते हुए व्यक्ति संसार सागर को तैर जाता है ॥ ८ ॥ श्लोक ॥ जीव विकारों के स्वाद में मोहित बना हुआ प्रभु-नाम का सुमिरन नहीं करता । हे नानक, प्रभु-नाम को भुला देने से नर्क और स्वर्ग में बार-बार आना जाना पड़ता है ॥ ९ ॥ पउड़ी ॥ नौवीं तिथि-शरीर के नौ द्वार ही अपवित्र हैं क्योंकि ये विपरीत कार्य करते हैं और प्रभु-नाम का सुमिरन नहीं करते । ये परायी स्त्री के साथ रमण करते हैं और साधु पुरुषों की निन्दा करते हैं । कानों से क्षण भर के लिए भी प्रभु-गुणानुवाद नहीं सुनते । अपने पेट के लिए परायी सम्पदा का हरण करते हैं । इनकी पेट की अग्नि का निवारण नहीं होता और इनकी तृष्णा भी नहीं बुझती । प्रभु-सेवा के बिना व्यक्ति को ऐसे ही फल मिलते हैं । हे नानक, प्रभु को भुलाकर भाग्यहीन व्यक्ति मरते-जन्मते रहते हैं ॥ ९ ॥ श्लोक ॥ दसों दिशाओं में खोजता हुआ मैं जहां भी देखता हूँ वहीं प्रभु विद्यमान है । हे नानक, जब प्रभु की पूर्ण कृपा होती है तभी मन वश में आता है ॥ १० ॥ पउड़ी ॥ दसवीं तिथि-जो व्यक्ति दसों द्वारों को वश में कर लेता है वह मन से संतुष्ट हो जाता है और प्रभु-नाम के जाप का उच्चारण करता रहता है । कानों से प्रभु के यश को सुनता रहता है और आँखों से दयालु साधु पुरुषों के दर्शन करता रहता है । वह जीभ से अनन्त प्रभु के गुण गाता रहता है तथा मन में पूर्ण

महि चितवै पूरन भगवंत ॥ हसत चरन संत टहल कमाईऐ ॥ नानक इहु संजमु प्रभ किरपा पाईऐ ॥ १० ॥ सलोकु ॥ एको एकु बखानीऐ बिरला जाणै स्वादु ॥ गुण गोबिंद न जाणीऐ नानक सभु बिसमादु ॥ ११ ॥ पउड़ी ॥ एकादसी निकटि पेखहु हरि रामु ॥ इंद्री बसि करि सुणहु हरि नामु ॥ मनि संतोखु सरब जीअ दइआ ॥ इन बिधि बरतु संपूरन भइआ ॥ धावत मनु राखै एक ठाइ ॥ मनु तनु सुधु जपत हरि नाइ ॥ सभ महि पूरि रहे पारब्रहम ॥ नानक हरि कीरतनु करि अटल एहु धरम ॥ ११ ॥ सलोकु ॥ दुरमति हरी सेवा करी भेटे साध क्रिपाल ॥ नानक प्रभ सिउ मिलि रहे बिनसे सगल जंजाल ॥ १२ ॥ पउड़ी ॥ दुआदसी दानु नामु इसनानु ॥ हरि की भगति करहु तजि मानु ॥ हरि अंम्रित पान करहु साधसंगि ॥ मन त्रिपतासै कीरतन प्रभ रंगि ॥ कोमल बाणी सभ कउ संतोखै ॥ पंच भू आतमा हरि नाम रसि पोखै ॥ गुर पूरे ते एह निहचउ पाईऐ ॥ नानक राम रमत फिरि जोनि न आईऐ ॥ १२ ॥ सलोकु ॥ तीनि गुणा महि बिआपिआ पूरन होत न काम ॥ पतित उधारणु मनि बसै नानक छूटै नाम ॥ १३ ॥ पउड़ी ॥ त्रउदसी तीनि ताप संसार ॥ आवत जात नरक अवतार ॥ हरि हरि भजनु न मन महि आइओ ॥ सुख सागर प्रभु निमख न गाइओ ॥ हरख सोग का देह करि बाधिओ ॥ दीरघ रोगु माइआ आसाधिओ ॥ दिनहि बिकार करत स्रमु पाइओ ॥ नैनी नीद सुपन बरड़ाइओ ॥ हरि बिसरत होवत एह हाल ॥ सरनि नानक प्रभ पुरख दइआल ॥ १३ ॥ सलोकु ॥ चारि कुंट चउदह भवन सगल बिआपत राम ॥ नानक ऊन न देखीऐ पूरन ता के काम ॥ १४ ॥ पउड़ी ॥ चउदहि चारि कुंट प्रभ आप ॥ सगल भवन पूरन परताप ॥ दसे दिसा रविआ प्रभु एकु ॥ धरनि अकास सभ महि प्रभ पेखु ॥ जल थल बन परबत पाताल ॥ परमेस्वर तह बसहि दइआल ॥ सूखम असथूल सगल भगवान ॥ नानक गुरमुखि ब्रहमु पछानु ॥ १४ ॥ सलोकु ॥ आतमु जीता गुरमती गुण गाए गोबिंद ॥ संत प्रसादी भै मिटे नानक बिनसी चिंद ॥ १५ ॥ पउड़ी ॥ अमावस आतम सुखी भए संतोखु दीआ गुरदेव ॥

प्रभु का सुमिरन करता रहता है । हाथ–पाँव से सन्त पुरुषों की सेवा की जानी चाहिए और हे नानक, इसी कार्य–व्यवहार से प्रभु की कृपा प्राप्त होती है ॥ १० ॥ श्लोक ॥ केवल उस एक का ही बखान किया जाना चाहिए जिसका स्वाद कोई बिरला व्यक्ति ही जानता है । हे नानक, प्रभु के गुणों को नहीं जाना जा सकता क्योंकि वे सब केवल आश्चर्य ही हैं ॥ ११ ॥ पउड़ी ॥ ग्यारहवीं तिथि–प्रभु को एकदम अपने पास ही देख और इन्द्रियों को वश में लाकर केवल प्रभु–नाम को ही सुनो । मन में सन्तुष्टि और सब जीवों पर दया का भाव अपनाओ । हे प्राणी, इस प्रकार तेरा (एकादशी का) व्रत पूरा हो जाएगा । दौड़ते हुए मन को एक स्थान पर टिकाओ और मन–तन को प्रभु–नाम के जाप से शुद्ध करो। परमात्मा सब में व्याप्त है और हे नानक, व्यक्ति का यह परम कर्त्तव्य है कि वह प्रभु की महिमा का गायन करता रहे ॥ ११ ॥ श्लोक ॥ कृपालु साधु पुरुषों की सत्संगत में दुमर्ति दूर हो जाती है और सेवा में मन लगता है । हे नानक, जो प्रभु में लीन हो जाता है उसके समस्त जंजाल विनष्ट हो जाते हैं ॥ १२॥ पउड़ी ॥ बारहवीं तिथि–हे व्यक्ति, दान देने, प्रभु का नाम सुमिरन करने और अन्तर्मन के स्नान में लग जा । अभिमान को त्याग कर प्रभु की भक्ति कर । साधसंगत में प्रभु रूपी अमृत का पान कर । प्रभु रंग में रंगकर कीर्तन करने से मन तृप्त हो जाएगा । मीठी वाणी सब को संतुष्टि प्रदान करती है क्योंकि प्रभु–नाम का रस पांचों तत्वों की सूक्ष्म आत्मा का पोषण करता है । पूर्ण गुरु से यह विश्वास प्राप्त होता है कि हे नानक, सब में रमने वाले प्रभु में रमण करते हुए व्यक्ति पुनः योनियों में नहीं आता ॥ १२ ॥ श्लोक ॥ तीनों गुणों में लीन व्यक्ति की कामनाएं पूर्ण नहीं होती । हे नानक, जब पतितों का उद्धार करने वाले प्रभु का नाम मन में बस जाता है तब व्यक्ति मुक्त हो जाता है ॥ १३॥ पउड़ी ॥ तेरहवीं तिथि–संसार तीनों गुणों के ताप से त्रस्त है और आवागमन में पड़कर नर्क में पहुँच जाता है । प्रभु–सुमिरन का ध्यान मन में नहीं आता और क्षण भर के लिए भी सुखों के सागर प्रभु का गुण नहीं गाता । यह शरीर हर्ष और शोक का पुतला है और इसे माया का असाध्य रोग लगा हुआ है । वह दिन–रात विकारों में पड़ा रहता है और व्यर्थ ही श्रम करता रहता है । सोते हुए भी वह सपने में बड़बड़ाता रहता है । प्रभु को भूल जाने से यही हाल होता है और नानक ने दीनदयालु प्रभु की शरण को पकड़ लिया है ॥ १३ ॥ श्लोक ॥ चारों दिशाओं, चौदह लोकों और सब ओर प्रभु ही व्याप्त है । हे नानक, उसके सभी कार्य पूर्ण है उनमें कोई भी कमी नहीं ॥ १४ ॥ पउड़ी ॥ चौदहवीं तिथि–चारों ओर वह प्रभु स्वयं ही है । सभी लोकों में उसका पूर्ण प्रताप झलकता है । एक प्रभु ही दसों दिशाओं में रमा हुआ है । हे जीव, धरती, आकाश और सब में तू उस प्रभु को ही देख । जल, स्थल, वन, पर्वत, पाताल आदि में वह दयालु परमेश्वर ही बसा हुआ है । सूक्ष्म और स्थूल सब में वह प्रभु ही है । हे नानक, गुरमुख बनकर उस ब्रह्म की पहचान कर ॥ १४ ॥ श्लोक ॥ गुरु की मति में चलने से और प्रभु के गुण गाने से मन को जीत लिया जाता है । शान्त पुरुषों की कृपा से भय मिट जाता है और हे नानक, चिन्ता विनष्ट हो जाती है ॥ १५ ॥ पउड़ी ॥ अमावस्या–प्रभु रूपी गुरु ने मुझे संतुष्टि प्रदान की है; मैं आध्यात्मिक तौर पर सुखी हो गया हूँ और मेरा

मनु तनु सीतलु सांति सहज लागा प्रभ की सेव ॥ टूटे बंधन बहु बिकार सफल पूरन ता के काम ॥ दुरमति मिटी हउमै छुटी सिमरत हरि को नाम ॥ सरनि गही पारब्रहम की मिटिआ आवा गवन ॥ आपि तरिआ कुटंब सिउ गुण गुबिंद प्रभ रवन ॥ हरि की टहल कमावणी जपीऐ प्रभ का नामु ॥ गुर पूरे ते पाइआ नानक सुख बिस्रामु ॥ १५ ॥ सलोकु ॥ पूरनु कबहु न डोलता पूरा कीआ प्रभ आपि ॥ दिनु दिनु चड़ै सवाइआ नानक होत न घाटि ॥ १६ ॥ पउड़ी ॥ पूरनमा पूरन प्रभ एकु करण कारण समरथु ॥ जीअ जंत दइआल पुरखु सभ ऊपरि जा का हथु ॥ गुण निधान गोबिंद गुर कीआ जा का होइ ॥ अंतरजामी प्रभु सुजानु अलख निरंजन सोइ ॥ पारब्रहमु परमेसरो सभ बिधि जानणहार ॥ संत सहाई सरनि जोगु आठ पहर नमसकार ॥ अकथ कथा नह बूझीऐ सिमरहु हरि के चरन ॥ पतित उधारन अनाथ नाथ नानक प्रभ की सरन ॥ १६ ॥ सलोकु ॥ दुख बिनसे सहसा गइओ सरनि गही हरि राइ ॥ मनि चिंदे फल पाइआ नानक हरि गुन गाइ ॥ १७ ॥ पउड़ी ॥ कोई गावै को सुणै कोई करै बीचारु ॥ को उपदेसै को द्रिड़ै तिस का होइ उधारु ॥ किलबिख काटै होइ निरमला जनम जनम मलु जाइ ॥ हलति पलति मुखु ऊजला नह पोहै तिसु माइ ॥ सो सुरता सो बैसनो सो गिआनी धनवंतु ॥ सो सूरा कुलवंतु सोइ जिनि भजिआ भगवंतु ॥ खत्री ब्राहमणु सूदु बैसु उधरै सिमरि चंडाल ॥ जिनि जानिओ प्रभु आपना नानक तिसहि रवाल ॥ १७ ॥

गउड़ी की वार महला ४ ॥ १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सलोक मः ४ ॥ सतिगुरु पुरखु दइआल है जिस नो समतु सभु कोइ ॥ एक द्रिसटि करि देखदा मन भावनी ते सिधि होइ ॥ सतिगुर विचि अंम्रितु है हरि उतमु हरि पदु सोइ ॥ नानक किरपा ते हरि धिआईऐ गुरमुखि पावै कोइ ॥ १ ॥ मः ४ ॥ हउमै माइआ सभ बिखु है नित जगि तोटा संसारि ॥ लाहा हरि धनु खाटिआ गुरमुखि सबदु वीचारि ॥ हउमै मैलु बिखु उतरै हरि अंम्रितु हरि उर धारि ॥

मन–तन शीतल एवं शान्त होकर सहजभाव से प्रभु की सेवा में लग गया है। जो प्रभु–नाम का सुमिरन करता है उसके विकार रूपी अनेकों बन्धन टूट जाते हैं। उसकी कामनाएं पूर्ण हो जाती हैं। उसकी दुर्मति मिट जाती है और उसका अंहकार छूट जाता है। परमात्मा की शरण पकड़ लेने से व्यक्ति का आवागमन मिट गया है और प्रभु के गुणों में लीन बने रहने से वह परिवार समेत स्वयं भी संसार–सागर से पार हो गया है। प्रभु की सेवा करके मैं प्रभु–नाम का सुमिरन करता हूँ और हे नानक, पूर्ण गुरु के माध्यम से ही मैंने सुख और सहजभाव का विश्राम प्राप्त किया है ॥ १५ ॥ श्लोक॥ पूर्ण व्यक्ति जिसे प्रभु ने पूर्ण बनाया है कभी भी भटकता नहीं है। वह प्रतिदिन बढ़ चढ़ कर उन्नति करता जाता है और हे नानक, उसे कोई भी कमी नहीं रहती ॥ १६ ॥ पउड़ी ॥ पूर्णिमा – केवल एक प्रभु ही पूर्ण, सभी कारणों का कारण और समर्थ है। सभी जीवों पर दयालु परमात्मा का हाथ सभी पर बना रहता है। परमात्मा रूपी गुरु गुणों का भण्डार है और सब कुछ किया हुआ उसी का ही होता है। वह सुजान प्रभु अन्तर्यामी, अदृष्ट एवं निरंजन है। परब्रह्म परमेश्वर सभी विधियों को जानने वाला है। वह सन्तों का सहायक, शरण देने में समर्थ है; मैं उसे आठों प्रहर प्रणाम करता हूँ। जिस प्रभु की कथा अकथनीय एवं न बूझी जा सकने वाली है उसके चरणों का सुमिरन करो। नानक उस प्रभु की शरण में है जो पतितों का उद्धार करने वाला और अनाथों का नाथ है ॥ १६ ॥ श्लोक ॥ प्रभु की शरण में आने से दुख विनष्ट हो गए हैं और भ्रम दूर हो गया है। हे नानक, प्रभु के गुणानुवाद के फलस्वरूप मुझे मनोवाछिंत फल मिल गया है ॥ १७ ॥ पउड़ी ॥ कोई उसको गाता है, कोई सुनता है, कोई उसका चिन्तन करता है, कोई उसका उपदेश मन में दृढ़ करता है; इन सब का उद्धार हो जाता है। ऐसे व्यक्तियों के पाप कट जाते हैं और जन्म जन्म की मैल छुड़ाकर ये निर्मल हो जाते हैं। इस लोक और परलोक में इनका मुख उज्जवल हो जाता है और माया इन्हे प्रभावित नहीं करती। वही ध्यानी है, वही वैष्णव है, वही ज्ञानवान और धनवान है, वही शूरवीर एवं कुलीन है जिसने प्रभु का सुमिरन किया है। उस प्रभु का सुमिरन करके क्षत्रिय, ब्राह्मण, शूद्र, चाण्डाल आदि सबका उद्धार हो गया है। नानक उनके चरणों की धूलि है जिन्होंने अपने प्रभु को जान लिया है ॥ १७ ॥

गउड़ी की वार महला ४ ॥ १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि

श्लोक महला ४ ॥ वह सच्चा गुरु परमात्मा दयालु है जिसके लिए सभी समान रूप हैं। वह एक ही दृष्टि से सबको देखता है और मन की भावना के फलस्वरूप ही उसको पाया जाता है। सच्चे गुरु में अमृत का निवास है और वह परमात्मा की तरह उत्तम और हरि पद के समान है। हे नानक, प्रभु कृपा से ही उसका सुमिरन होता है और कोई बिरला गुरमुख ही उस प्रभु को प्राप्त करता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ अहंकार एवं माया आदि सभी विष हैं और इनमें लिप्त संसार सदैव हानि उठाता है। शब्द का चिन्तन करने वाला गुरमुख, प्रभु रूपी धन का लाभ उठा लेता है। इस प्रकार अंहकार की मैल और विष अन्तर्मन से उतर जाता है और प्रभु रूपी अमृत

सभि कारज तिन के सिधि हहि जिन गुरमुखि किरपा धारि ॥ नानक जो धुरि मिले से मिलि रहे हरि मेले सिरजणहारि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू सचा साहिबु सचु है सचु सचा गोसाई ॥ तुधुनो सभ धिआइदी सभ लगै तेरी पाई ॥ तेरी सिफति सुआलिउ सरूप है जिनि कीती तिसु पारि लघाई ॥ गुरमुखा नो फलु पाइदा सचि नामि समाई ॥ वडे मेरे साहिबा वडी तेरी वडिआई ॥ १ ॥ सलोक मः ४ ॥ विणु नावै होरु सलाहणा सभु बोलणु फिका सादु ॥ मनमुख अहंकारु सलाहदे हउमै ममता वादु ॥ जिन सालाहनि से मरहि खपि जावै सभु अपवादु ॥ जन नानक गुरमुखि उबरे जपि हरि हरि परमानादु ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सतिगुर हरि प्रभु दसि नामु धिआई मनि हरी ॥ नानक नामु पवितु हरि मुखि बोली सभि दुख परहरी ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू आपे आपि निरंकारु है निरंजन हरि राइआ ॥ जिनी तू इक मनि सचु धिआइआ तिन का सभु दुखु गवाइआ ॥ तेरा सरीकु को नाही जिस नो लवै लाइ सुणाइआ ॥ तुधु जेवडु दाता तूहै निरंजना तूहै सचु मेरै मनि भाइआ ॥ सचे मेरे साहिबा सचे सचु नाइआ ॥ २ ॥ सलोक मः ४ ॥ मन अंतरि हउमै रोगु है भ्रमि भूले मनमुख दुरजना ॥ नानक रोगु गवाइ मिलि सतिगुर साधू सजना ॥ १ ॥ मः ४ ॥ मनु तनु रता रंग सिउ गुरमुखि हरि गुणतासु ॥ जन नानक हरि सरणागती हरि मेले गुर साबासि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू करता पुरखु अगंमु है किसु नालि तू वड़ीऐ ॥ तुधु जेवडु होइ सु आखीऐ तुधु जेहा तूहै पड़ीऐ ॥ तू घटि घटि इकु वरतदा गुरमुखि परगड़ीऐ ॥ तू सचा सभस दा खसमु है सभ दू तू चड़ीऐ ॥ तू करहि सु सचे होइसी ता काइतु कड़ीऐ ॥ ३ ॥ सलोक मः ४ ॥ मै मनि तनि प्रेमु पिरंम का अठे पहर लगंनि ॥ जन नानक किरपा धारि प्रभ सतिगुर सुखि वसंनि ॥ १ ॥ मः ४ ॥ जिन अंदरि प्रीति पिरंम की जिउ बोलनि तिवै सोहंनि ॥ नानक हरि आपे जाणदा जिनि लाई प्रीति पिरंनि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू करता आपि अभुलु है भुलण विचि नाही ॥ तू करहि सु सचे भला है गुर सबदि बुझाही ॥ तू करण कारणु समरथु है दूजा को नाही ॥ तू साहिबु अगमु

हृदय में धारण हो जाता है । जिन पर गुरमुखों की कृपा हो जाती है उनके सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं । हे नानक, जिन्हें प्रभु ने मिलाया है वे ही मिल जाते हैं और सृजनकर्ता प्रभु ही उन्हें मिलाता है ॥ २ ॥ पउड़ी । हे सत्य प्रभु, तुम सत्य हो और सृष्टि के स्वामी होकर तुम सत्य ही सत्य हो । सभी तेरा सुमिरन करते हैं और तेरे चरणों में ही आ लगते हैं । तेरी प्रशंसा सौन्दर्य का साक्षात स्वरूप है और जो करता है वह पार उतर जाता है गुरमुखों को ही तू फल प्रदान करता है और वे सत्य नाम में लीन हो जाते हैं । हे महान स्वामी, तेरा बड़प्पन भी महान है । श्लोक महला ४ ॥ प्रभु–नाम के बिना कोई अन्य प्रशंसा और बोलना सब फीके स्वाद वाला ही है । मनमुख व्यक्ति अपने अंहकार की प्रशंसा करते हैं परन्तु नहीं जानते कि उनका अंहकार ही उनके मोह का कारण है । जिनकी वे प्रंशसा करते हैं वे सभी अनेकों विवादों में पड़कर मर खप जाते हैं । हे दास नानक, केवल परम आनन्द रूपी प्रभु का जाप करके गुरमुखों का ही उद्धार होता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ हे प्रभु रूपी सद्‌गुरु, मुझे बता ताकि मैं मन में प्रभु का ही सुमिरन करता रहूँ । हे नानक, इस प्रकार नाम के माध्यम से मैं अपने मुख और बोली को पवित्र करता हुआ सभी दुखों का त्याग कँरू ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे निराकार, निरंजन स्वामी, तेरा सब कुछ अपने आप से ही है । जिन्होंने एक मन होकर सत्य की आराधना की है उनके सभी दुख ओझल हो जाते हैं । तेरे समान अन्य कोई नहीं हैं जिसे पास बैठाकर मैं तेरी बात कहूँ । हे सभी कालिमाओं से मुक्त प्रभु, तेरे समान दाता केवल तू ही है और सत्य रूप में तू ही मेरे मन को भाता है । हे सत्य रूप प्रभु, तेरा नाम ही सत्य शिरोमणि है ॥ २ ॥ श्लोक महला ४ ॥ जिनके मन में अंहकार का रोग है वे भ्रमों में भूले हुए मनमुख एवं दुर्जन हैं परन्तु हे नानक, वे भी सद्‌गुरु और साधु पुरुषों को मिलकर अपना रोग दूर कर लेते है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ गुरमुखों का मन–तन प्रभु रंग से रंगा हुआ है और वह प्रभु ही गुणों का खज़ाना है । सेवक नानक ने प्रभु की शरण ग्रहण कर ली है और शाबास है ऐसे गुरु को जिसने उसे परमात्मा से मिला दिया है ॥ २ ॥ हे अगम्य कर्त्ता प्रभु, तेरी तुलना भला किसके साथ की जाए । तेरे जैसा कोई हो तो कुछ कहा जाए क्योंकि तेरे जैसा तू ही पढ़ा–सुना जाता है । हर शरीर में एक तू ही कार्यशील है जो गुरमुखों के माध्यम से प्रकट होता है । हे सत्य प्रभु, तू ही सबका मालिक है और तू ही सबसे बलशाली है । हे सत्य प्रभु, जो तू करता है वही होता है इसीलिए फिर भला शोकाकुल क्यों हुआ जाए । श्लोक महला ४ ॥ आठों प्रहर प्रियतम का प्रेम मेरे मन–तन में बना रहता है । हे प्रभु, सेवक नानक पर कृपा करो जिससे वह सद्‌गुरु के माध्यम से सुख में बसता रहे ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जिनके अन्तर्मन में प्रियतम का प्रेम है वे जैसा भी बोलते हों सुन्दर लगते हैं । हे नानक, जिसने यह प्रेम की पीड़ा लगाई है वह प्रभु ही सारा कुछ जानता है ॥ २॥ पउड़ी ॥ हे कर्त्ता प्रभु, तू भूल ना करने वाला अचूक है । हे प्रभु, तू जो करता है वही भला है और शब्द–गुरु के माध्यम से इसकी समझ आती है । करने कराने वाला समर्थ तू ही है, अन्य कोई नहीं है । तू स्वामी है अगम्य है

दइआलु है सभि तुधु धिआही ॥ सभि जीअ तेरे तू सभस दा तू सभ छडाही ॥ ४ ॥ सलोक मः ४ ॥ सुणि साजन प्रेम संदेसरा अखी तार लगंनि ॥ गुरि तुठै सजणु मेलिआ जन नानक सुखि सवंनि ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सतिगुरु दाता दइआलु है जिस नो दइआ सदा होइ ॥ सतिगुरु अंदरहु निरवैरु है सभु देखै ब्रहमु इकु सोइ ॥ निरवैरा नालि जि वैरु चलाइदे तिन विचहु तिसटिआ न कोइ ॥ सतिगुरु सभना दा भला मनाइदा तिस दा बुरा किउ होइ ॥ सतिगुर नो जेहा को इछदा तेहा फलु पाए कोइ ॥ नानक करता सभु किछु जाणदा जिदू किछु गुझा न होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिस नो साहिबु वडा करे सोई वड जाणी ॥ जिसु साहिब भावै तिसु बखसि लए सो साहिब मनि भाणी ॥ जे को ओस दी रीस करे सो मूड़ अजाणी ॥ जिस नो सतिगुरु मेले सु गुण रवै गुण आखि वखाणी ॥ नानक सचा सचु है बुझि सचि समाणी ॥ ५ ॥ सलोक मः ४ ॥ हरि सति निरंजन अमरु है निरभउ निरवैरु निरंकारु ॥ जिन जपिआ इक मनि इक चिति तिन लथा हउमै भारु ॥ जिन गुरमुखि हरि आराधिआ तिन संत जना जैकारु ॥ कोई निंदा करे पूरे सतिगुरू की तिस नो फिटु फिटु कहै सभु संसारु ॥ सतिगुर विचि आपि वरतदा हरि आपे रखणहारु ॥ धनु धंनु गुरू गुण गावदा तिस नो सदा सदा नमसकारु ॥ जन नानक तिन कउ वारिआ जिन जपिआ सिरजणहारु ॥ १ ॥ मः ४ ॥ आपे धरती साजीअनु आपे आकासु ॥ विचि आपे जंत उपाइअनु मुखि आपे देइ गिरासु ॥ सभु आपे आपि वरतदा आपे ही गुणतासु ॥ जन नानक नामु धिआइ तू सभि किलविख कटे तासु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू सचा साहिबु सचु है सचु सचे भावै ॥ जो तुधु सचु सलाहदे तिन जम कंकरु नेड़ि न आवै ॥ तिन के मुख दरि उजले जिन हरि हिरदै सचा भावै ॥ कूड़िआर पिछाहा सटीअनि कूड़ु हिरदै कपटु महा दुखु पावै ॥ मुह काले कूड़िआरीआ कूड़िआर कूड़ो होइ जावै ॥ ६ ॥ सलोक मः ४ ॥ सतिगुरु धरती धरम है तिसु विचि जेहा को बीजे तेहा फलु पाए ॥ गुरसिखी अंम्रितु बीजिआ तिन अंम्रित फलु हरि पाए ॥ ओना हलति पलति मुख उजले ओइ हरि दरगह सची पैनाए ॥

दयालु है और सभी तेरा ही सुमिरन करते हैं । सभी जीव तेरे हैं; तू सबका है तथा तू ही सबको मुक्त करता है ॥ ४ ॥ श्लोक महला ४ ॥ हे साजन, मेरा प्रेम संदेशा सुन क्योंकि मेरी दृष्टि लगातार तेरी ओर ही लगी है । गुरु ने प्रसन्न होकर दास नानक को उसके साजन के साथ मिला दिया है और वह अव सुख की नींद सोता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ दाता सद्‌गुरु दयालु है जो सदैव दया करता है । सच्चा गुरु अन्दर से बैर रहित है और एक प्रभु को ही सब तरफ देखता है । जो वैर–विहीन लोगों से शत्रुत्ता करते हैं उनमें से कोई भी कभी तृप्त नहीं हो पाता । सच्चा गुरु सव का भला माँगता है फिर भला उसका बुरा कैसे हो सकता हैं । सच्चे गुरु के प्रति जो जैसी इच्छा रखता है वह वैसा ही फल पा लेता है । हे नानक, प्रभु सव कुछ जानता है और उससे कुछ भी छुपा नहीं रहता ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिसे परमात्मा वड़प्पन देता है उसी को ही वड़ा मानना चाहिए । जो साहिब को भाता है वह उसी को मुक्त कर देता है और वही प्रभु के चित्त में अच्छा वना रहता है । जो उसकी नकल करता है वह मूढ़ एवं अनजान है । जिसे सच्चा गुरु प्रभु के साथ मिला देता है वही उसका गुणानुवाद करता है और गुणवान बना रहता है । हे नानक, प्रभु ही सत्य है और जो उसे बूझ लेता है वह सत्य में लीन हो जाता है ॥ ५ ॥ श्लोक महला ४ ॥ सत्य–प्रभु निंरजन, अमर, निर्भय बैर रहित और निराकार है । जिसने एकाग्र मन और चित्त से उसका सुमिरन किया है उसका अहंकार का बोझ उतर जाता है । जिन्होंने गुरमुख बनकर प्रभु का सुमिरन किया है ऐसे सन्त पुरुषों की सदैव जय–जयकार होती है । जो सच्चे गुरु की निन्दा करता है उसे सारा ही संसार फटकारता है । सच्चे गुरु में प्रभु स्वयं कार्यशील होता है और वह प्रभु ही स्वयं रक्षक होता है । वह गुरु धन्य है जो प्रभु के गुण गाता है । मैं सदा उसे नमस्कार करता हूँ । दास नानक उन लोगों पर वलिहारी जाता है जिन्होंने कर्ता–प्रभु का सुमिरन किया है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ प्रभु ने स्वयं ही धरती और आकाश की रचना की है । इन्ही पर उसने जीव उत्पन्न किए हैं और स्वयं ही उनके मुख में ग्रास देता है । वह हर स्थान पर व्याप्त है और स्वयं ही गुणों का खजाना है । हे दास नानक, तू प्रभु का सुमिरन कर और वह तेरे सभी पाप नष्ट कर देगा ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तू सच्चा है और सत्य ही सच्चे प्रभु को अच्छा लगता है । हे सत्य स्वरूप, जो तेरा गुणानुवाद करते हैं यम का दूत उनके पास नहीं आता । जिनको हृदय से सच्चा प्रभु अच्छा लगता है उनके मुख प्रभु–द्वार पर उज्जवल बने रहते है । झूठे व्यक्ति पीछे फेंक दिए जाते हैं और झूठे हृदय वाले कपटी महा–दुख पाते हैं । झूठे व्यक्तियों के मुँह काले पड़ जाते हैं और झूठे सदैव झूठे ही रह जाते हैं ॥ ६ ॥ श्लोक महला ४ ॥ सच्चा गुरु धर्म और कर्त्तव्य की धरती है; इसमें जैसा कोई बोता है वैसा ही फल प्राप्त करता है । गुरु के सिक्ख इसमें अमृत बोते हैं और अमृत रूपी फल ही प्राप्त करते हैं । ऐसे लोगों के इस लोक परलोक में मुख उज्जवल होते हैं और वे प्रभु–दरबार में भी सम्मान प्राप्त करते हैं ।

इकन्हा अंदरि खोटु नित खोटु कमावहि ओहु जेहा बीजे तेहा फलु खाए ॥ जा सतिगुरु सराफु नदरि करि देखै सुआवगीर सभि उघड़ि आए ॥ ओइ जेहा चितवहि नित तेहा पाइनि ओइ तेहो जेहे दयि वजाए ॥ नानक दुही सिरी खसमु आपे वरतै नित करि करि देखै चलत सबाए ॥ १ ॥ मः ४ ॥ इकु मनु इकु वरतदा जितु लगै सो थाइ पाइ ॥ कोई गला करे घनेरीआ जि घरि वथु होवै साई खाइ ॥ बिनु सतिगुर सोझी ना पवै अहंकारु न विचहु जाइ ॥ अहंकारीआ नो दुख भुख है हथु तडहि घरि घरि मंगाइ ॥ कूड़ु ठगी गुझी ना रहै मुलंमा पाजु लहि जाइ ॥ जिसु होवै पूरबि लिखिआ तिसु सतिगुरु मिलै प्रभु आइ ॥ जिउ लोहा पारसि भेटीऐ मिलि संगति सुवरनु होइ जाइ ॥ जन नानक के प्रभ तू धणी जिउ भावै तिवै चलाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन हरि हिरदै सेविआ तिन हरि आपि मिलाए ॥ गुण की साझि तिन सिउ करी सभि अवगण सबदि जलाए ॥ अउगण विकणि पलरी जिसु देहि सु सचे पाए ॥ बलिहारी गुर आपणे जिनि अउगण मेटि गुण परगटीआए ॥ वडी वडिआई वडे की गुरमुखि आलाए ॥ ७ ॥ सलोक मः ४ ॥ सतिगुर विचि वडी वडिआई जो अनदिनु हरि हरि नामु धिआवै ॥ हरि हरि नामु रमत सुच संजमु हरि नामे ही त्रिपतावै ॥ हरि नामु ताणु हरि नामु दीबाणु हरि नामो रख करावै ॥ जो चितु लाइ पूजे गुर मूरति सो मन इछे फल पावै ॥ जो निंदा करे सतिगुर पूरे की तिसु करता मार दिवावै ॥ फेरि ओह वेला ओसु हथि न आवै ओहु आपणा बीजिआ आपे खावै ॥ नरकि घोरि मुहि कालै खड़िआ जिउ तसकरु पाइ गलावै ॥ फिरि सतिगुर की सरणी पवै ता उबरै जा हरि हरि नामु धिआवै ॥ हरि बाता आखि सुणाए नानकु हरि करते एवै भावै ॥ १ ॥ मः ४ ॥ पूरे गुर का हुकमु न मंनै ओहु मनमुखु अगिआनु मुठा बिखु माइआ ॥ ओसु अंदरि कूड़ु कूड़ो करि बुझै अणहोदे झगड़े दयि ओस दे गलि पाइआ ॥ ओहु गल फरोसी करे बहुतेरी ओस दा बोलिआ किसै न भाइआ ॥ ओहु घरि घरि हंढै जिउ रंन दोहागणि ओसु नालि मुहु जोड़े ओसु भी लछणु लाइआ ॥ गुरमुखि होइ सु अलिपतो वरतै ओस दा पासु छडि गुर

कईयों के मन में खोट होता है, वे सदैव खोटे काम करते हैं और जैसा बोते हैं वैसा फल खाते हैं । जब सच्ची परख करने वाला गुरु गहरी नज़र से देखता है तो सभी स्वार्थी प्रत्यक्ष रूप में प्रकट हो जाते हैं । वह जैसा सुमिरन करते हैं वैसा ही फल पाते हैं और परमात्मा उनकी वैसी ही प्रसिद्धि कर देता है । हे नानक, दोनों लोकों में प्रभु स्वयं ही व्याप्त है और सदैव कौतुक कर कर के देखता रहता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ प्रत्येक मन में वह एक ही व्याप्त है पर वह जिसमें भी प्रकट होता है उसका कार्य सफल हो जाता है । व्यक्ति बहुत बातें करता है परन्तु खाता वही है जो उसके पास होता है । सच्चे गुरु के बिना व्यक्ति को समझ नहीं आती और अन्तर्मन से उसका अहंकार नहीं जाता । अहंकारी व्यक्ति दुख और भूख से त्रस्त होकर हाथ फैलाते हैं और घर–घर माँगते फिरते हैं । झूठ और धोखा छिपे नहीं रहते और धातु पर किया हुआ मुलम्मा अन्ततः धातु को प्रकट कर जाता है । पहले से ही जिसके भाग्य में लिखा हो उसे सच्चा गुरु अर्थात प्रभु आन मिलता है । जैसे लोहे को पारस से स्पर्श करने पर वह सोना हो जाता है उसी तरह से सद्संगत से मिलकर व्यक्ति शुद्ध हो जाता है । हे प्रभु, तू नानक का मालिक है और तुझे जैसा अच्छा लगता है वैसे ही उसको चला ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन्होंने हृदय से प्रभु का सुमिरन किया है उन्हें प्रभु स्वयं अपने आप से मिला लेता है । जिन्होंने शब्द के माध्यम से अवगुणों को जला दिया है मैंने उनके साथ गुणों की भागीदारी की है । अवगुण तो सस्ते भाव घास–फूस की तरह बिकते हैं परन्तु गुण जिसे वह देता है सत्य उसी को प्राप्त होता है । मैं अपने गुरु पर वलिहारी जाता हूँ । जिसने अवगुणों को मिटा कर मेरे गुणों को प्रकट कर दिया है । गुरमुख ही उस महान प्रभु के बड़प्पन का उच्चारण करता है ॥ ७ ॥ श्लोक महला ४ ॥ सच्चे गुरु का वड़प्पन बहुत बड़ा है क्योंकि वह सभी दिन प्रभु–नाम का सुमिरन करता है । प्रभु–नाम में लीन रहना ही स्वच्छता एवं संयम है । उसकी तृप्ति केवल प्रभु–नाम से ही होती है । प्रभु–नाम ही उसकी शक्ति है, प्रभु–नाम ही उसका आसरा है और प्रभु–नाम ही उसकी रक्षा करता है । जो मन से उपर्युक्त गुणों वाले गुरु की उपासना करता है वह मनोवांछित फल पा लेता है । जो सच्चे गुरु की निन्दा करता है उसे कर्ता प्रभु मार डालता है । बीता हुआ समय फिर उसके हाथ नहीं लगता और अपने बोए हुए को वह आप ही खाता है । उसे घोर नर्क में काला मुँह करके ऐसे खड़ा किया जाता है जैसे चोर को गले में रस्सा डालकर खड़ा किया जाता है । अगर वह सद्गुरु की शरण में आ जाए अथवा प्रभु–नाम का सुमिरन करे तभी उसका उद्धार होता है । नानक तो प्रभु की बातें कहकर सुना रहा है कि कर्ता प्रभु को ऐसे ही अच्छा लगता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जो पूर्ण गुरु की आज्ञा नहीं मानता वह मनमुख अज्ञान और माया के विष के द्वारा ठग लिया जाता है । उसके अन्दर झूठ होने की वजह से वह सबको झूठा ही जानता है और इसीलिए प्रभु भी व्यर्थ के जंजाल उसके गले में डाले रहता है । वह बहुत बक बक करता है परन्तु उसका बोल किसी को भी अच्छा नहीं लगता । वह दुहागिन (व्याभिचारी) औरत की तरह घर घर में भटकता रहता है और जो कोई भी उसके साथ सम्बन्ध बनाता है उसे भी बदनामी का टीका लग जाता है । जो गुरमुख हो जाते हैं वे अलिप्त बने रहते हैं और ऐसे (मनमुख) व्यक्तियों के पास बैठना छोड़कर गुरु के पास आ बैठते हैं ।

पासि बहि जाइआ ॥ जो गुरु गोपे आपणा सो भला नाही पंचहु ओनि लाहा मूलु सभु गवाइआ ॥ पहिला आगमु निगमु नानकु आखि सुणाए पूरे गुर का बचनु उपरि आइआ ॥ गुरसिखा वडिआई भावै गुर पूरे की मनमुखा ओह वेला हथि न आइआ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचु सचा सभ दू वडा है सो लए जिसु सतिगुरु टिके ॥ सो सतिगुरु जि सचु धिआइदा सचु सचा सतिगुरु इके ॥ सोई सतिगुरु पुरखु है जिनि पंजे दूत कीते वसि छिके ॥ जि बिनु सतिगुर सेवे आपु गणाइदे तिन अंदरि कूड़ु फिटु फिटु मुह फिके ॥ ओइ बोले किसै न भावनी मुह काले सतिगुर ते चुके ॥ ८ ॥ सलोक मः ४ ॥ हरि प्रभ का सभु खेतु है हरि आपि किरसाणी लाइआ ॥ गुरमुखि बखसि जमाईअनु मनमुखी मूलु गवाइआ ॥ सभु को बीजे आपणे भले नो हरि भावै सो खेतु जमाइआ ॥ गुरसिखी हरि अंम्रितु बीजिआ हरि अंम्रित नामु फलु अंम्रितु पाइआ ॥ जमु चूहा किरस नित कुरकदा हरि करतै मारि कढाइआ ॥ किरसाणी जंमी भाउ करि हरि बोहल बखस जमाइआ ॥ तिन का काड़ा अंदेसा सभु लाहिओनु जिनी सतिगुरु पुरखु धिआइआ ॥ जन नानक नामु अराधिआ आपि तरिआ सभु जगतु तराइआ ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सारा दिनु लालचि अटिआ मनमुखि होरे गला ॥ राती ऊघै दबिआ नवे सोत सभि ढिला ॥ मनमुखा दे सिरि जोरा अमरु है नित देवहि भला ॥ जोरा दा आखिआ पुरख कमावदे से अपवित अमेध खला ॥ कामि विआपे कुसुध नर से जोरा पुछि चला ॥ सतिगुर कै आखिऐ जो चलै सो सति पुरखु भल भला ॥ जोरा पुरख सभि आपि उपाइअनु हरि खेल सभि खिला ॥ सभ तेरी बणत बणावणी नानक भल भला ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू वेपरवाहु अथाहु है अतुलु किउ तुलीऐ ॥ से वडभागी जि तुधु धिआइदे जिन सतिगुरु मिलीऐ ॥ सतिगुर की बाणी सति सरूपु है गुरबाणी बणीऐ ॥ सतिगुर की रीसै होरि कचु पिचु बोलदे से कूड़िआर कूड़े झड़ि पड़ीऐ ॥ ओन्हा अंदरि होरु मुखि होरु है बिखु माइआ नो झखि मरदे कड़ीऐ ॥ ९ ॥ सलोक मः ४ ॥ सतिगुर की सेवा निरमली निरमल जनु होइ सु सेवा घाले ॥ जिन अंदरि कपटु विकारु झूठु ओइ आपे सचै वखि कढे जजमाले ॥

जो गुरु को प्रकट तौर पर नहीं अपनाता वह भला व्यक्ति नहीं है । हे पंचजनों, वह जीवन–व्यापार का लाभ और मूल सब गँवा लेता है । हे नानक, पहले व्यक्ति वेदों और तन्त्र ग्रंथों का कथन करते हुए लोगों को सुनाते थे परन्तु अब उन सबसे परे गुरु का वचन रूपी शब्द प्रकट हुआ है । गुरु के सिक्खों को पूर्ण गुरु की स्तुति ही अच्छी लगती है परन्तु मनमुख व्यक्ति ऐसे अवसर को पहचान नहीं पाते ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सच्चा स्वामी ही सबसे बड़ा है । उसे वह ही प्राप्त करता है जिसे सच्चा गुरु नामित करता है । वही सच्चा गुरु है जो सत्य का सुमिरन करता है; सत्य तो यह है कि सत्य और सच्चा गुरु एक ही हैं । बलशाली सच्चा गुरु वह ही है जिसने पाँचों विकारों को पकड़ कर अपने वश में कर लिया है । जो सच्चे गुरु की सेवा किए बिना अपने आप को गिनवाते हैं उनके अन्तर्मन में झूठ होता है और उनके फीके मुख धिक्कार योग्य हैं । सच्चे गुरु से अलग हो चुके ऐसे व्यक्तियों का बोल किसी को नहीं भाता और उनके मुख कालिमा युक्त हो जाते हैं ॥ ८ ॥ श्लोक महला ४ ॥ सभी शरीर स्वामी प्रभु के खेत हैं और प्रभु ने सबको खेती में लगा रखा है । गुरमुख व्यक्ति उसकी कृपा से फसल को पैदा कर लेते हैं और मनमुख व्यक्ति अपना बीज भी गँवा लेते हैं । सभी अपने लाभ के लिए बोते हैं परन्तु जो प्रभु को भाता है वही खेत पैदा करता है । गुरु का सिक्ख प्रभु रूपी अमृत को बोता है और अमृत नाम का फल अमृत रूप में प्राप्त करता है । यम रूपी चूहा सदैव फसल को कुतरता रहता है परन्तु कर्त्ता प्रभु ने उसे मारकर भगा दिया है । प्रभु के प्रेम के माध्यम से फसल पैदा हुई है और दानों का ढेर प्रभु की कृपा से लग गया है । जिन्होंने सच्चे बलशाली गुरु पर ध्यान बनाए रखा उनका भय और चिन्ता प्रभु ने समाप्त कर दिए हैं । हे दास नानक, जिसने प्रभु–नाम की आराधना की है उसने स्वयं तैरकर सारे जगत को भी पार उतार लिया है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ मनमुख व्यक्ति अन्य प्रकार की बातों में लगा हुआ सारा दिन लालच में ही सना रहता है । रात में नींद उसे दबा लेती है और उसके सभी के सभी नौ द्वार ढीले पड़ जाते हैं । मनमुख व्यक्तियों पर (चरित्रहीन) स्त्रियों का आदेश चलता है और वे ऐसी स्त्रियों को ही बढ़िया उपहार ला लाकर देते हैं । चरित्रहीन स्त्रियों की इच्छाओं के अनुसार जो पुरुष धन्धे करते हैं वे अपवित्र, गन्दे और खल पुरुष होते हैं । नीच व्यक्ति काम से ग्रस्त होकर (चरित्रहीन) स्त्रियों के परामर्श के अनुसार ही चलते हैं । जो सच्चे गुरु के कहने में चलता है वही सच्चा व्यक्ति भले लोगों से भी भला है । (चरित्रहीन) स्त्रियां और दुर्जन पुरुष सब प्रभु ने स्वयं ही पैदा किए हैं और प्रभु स्वयं ही खेल खेलता है । सारी रचना तेरी ही रची हुई है और हे नानक, यह भी भले से भली है ॥ २ ॥ हे प्रभु, तू बेपरवाह, अथाह और अतुलनीय है । तुझे भला कैसे नापा–तौला जा सकता है । जो तेरा सुमिरन करते हैं और जिन्हें सच्चा गुरु मिल गया है वे भाग्यशाली हैं । सच्चे गुरु की वाणी सत्य का स्वरूप है और गुरु की वाणी के माध्यम से ही व्यक्ति का जीवन सुन्दर बनता है । सच्चे गुरु की नकल करते हुए अन्य जो कच्चा और झूठा बोलते हैं, वे झूठे व्यक्ति नष्ट हो जाते हैं । उनके मन में कुछ और तथा मुख में कुछ और ही होता है । वे धन–दौलत रूपी विष के लिए भटकते हुए मरते खपते रहते हैं ॥ ९ ॥ श्लोक महला ४ ॥ सच्चे गुरु की सेवा निर्मल है और जो सेवक निर्मल होता है वही सेवा रूपी परिश्रम करता है । जिनके चित्त में कपट, विकार एवं झूठ है वह सत्य–प्रभु स्वयं ही उन कोढ़ियों को निकालकर अलग कर देता है ।

सचिआर सिख बहि सतिगुर पासि घालनि कूड़िआर न लभनी कितै थाइ भाले ॥ जिना सतिगुर का आखिआ सुखावै नाही तिना मुह भलेरे फिरहि दयि गाले ॥ जिन अंदरि प्रीति नही हरि केरी से किचरकु वेराईअनि मनमुख बेताले ॥ सतिगुर नो मिलै सु आपणा मनु थाइ रखै ओहु आपि वरतै आपणी वथु नाले ॥ जन नानक इकना गुरु मेलि सुखु देवै इकि आपे वखि कढै ठगवाले ॥ १ ॥ मः ४ ॥ जिना अंदरि नामु निधानु हरि तिन के काज दयि आदे रासि ॥ तिन चूकी मुहताजी लोकन की हरि प्रभु अंगु करि बैठा पासि ॥ जां करता वलि ता सभु को वलि सभि दरसनु देखि करहि साबासि ॥ साहु पातिसाहु सभु हरि का कीआ सभि जन कउ आइ करहि रहरासि ॥ गुर पूरे की वडी वडिआई हरि वडा सेवि अतुलु सुखु पाइआ ॥ गुरि पूरै दानु दीआ हरि निहचलु नित बखसे चड़ै सवाइआ ॥ कोई निंदकु वडिआई देखि न सकै सो करतै आपि पचाइआ ॥ जनु नानकु गुण बोलै करते के भगता नो सदा रखदा आइआ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू साहिबु अगम दइआलु है वड दाता दाणा ॥ तुधु जेवडु मै होरु को दिसि न आवई तूहैं सुघड़ु मेरै मनि भाणा ॥ मोहु कुटंबु दिसि आवदा सभु चलणहारा आवण जाणा ॥ जो बिनु सचे होरतु चितु लाइदे से कूड़िआर कूड़ा तिन माणा ॥ नानक सचु धिआइ तू बिनु सचे पचि पचि मुए अजाणा ॥ १० ॥ सलोक मः ४ ॥ अगो दे सत भाउ न दिचै पिछो दे आखिआ कंमि न आवै ॥ अध विचि फिरै मनमुखु वेचारा गली किउ सुखु पावै ॥ जिसु अंदरि प्रीति नही सतिगुर की सु कूड़ी आवै कूड़ी जावै ॥ जे क्रिपा करे मेरा हरि प्रभु करता तां सतिगुरु पारब्रहमु नदरी आवै ॥ ता अपिउ पीवै सबदु गुर केरा सभु काड़ा अंदेसा भरमु चुकावै ॥ सदा अनंदि रहै दिनु राती जन नानक अनदिनु हरि गुण गावै ॥ १ ॥ मः ४ ॥ गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै ॥ उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै ॥ उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥ फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै ॥ जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि

सत्याचारी सिक्ख सच्चे गुरु के पास रहकर सेवा करते हैं परन्तु झूठे व्यक्तियों को ढूँढने पर भी कोई स्थान नहीं मिलता। जिन्हें गुरु का कथन भला नहीं लगता वे भ्रष्ट चेहरा लेकर घूमते रहते हैं और प्रभु भी उन्हें सड़ा गला देता है। जिनके अन्दर प्रभु–प्रेम नहीं है उन वेताल रूपी मनमुखों को भला कितनी देर तक बहलाया जा सकता है। जो सच्चे गुरु को मिलता है वह अपने मन को एक जगह टिका लेता है। वह अपनी प्रभु–नाम रूपी पूँजी को स्वयं ही खाता खर्चता है। हे नानक, कईयों को गुरु प्रभु से मिलाकर सुख देता है और कई ठगों को वह खुद ही एक तरफ निकाल कर अलग कर देता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जिनके हृदय में नाम का भण्डार है प्रभु उनके कार्यों को सफल कर देता है। प्रभु उनके पास आ बैठता है इसलिए वे अब अन्य लोगों के मोहताज नहीं रहते। यदि कर्त्ता–प्रभु उनकी ओर है तो सभी उनके पक्ष में होते हैं और सभी उनका दर्शन करके उनकी प्रंशसा करते हैं। राजा एवं महाराजा सभी प्रभु ने उत्पन्न किए हैं और वे सभी प्रभु के सेवक के सामने आकर वन्दना करते हैं। पूर्ण गुरु का बड़प्पन भी बड़ा है और मैंने भी महान प्रभु का सुमिरन करके अथाह सुख प्राप्त किया है। पूर्ण गुरु को प्रभु ने जो गुण दिया है वह अटल है और दिन–प्रतिदिनि बढ़ता ही जाता है। जो निन्दक पूर्ण गुरु की महानता को सहन नहीं कर पाता वह प्रभु उसे स्वयं ही नष्ट कर देता है। दास नानक उस कर्त्ता का गुणानुवाद करता है और जानता है कि प्रभु सदैव भक्तों की रक्षा करता रहा है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तू अगम्य, दयालु, भद्र एवं बहुत बड़ा दाता है। तेरे जैसा अन्य कोई दिखाई नहीं देता है। हे सुन्दर प्रभु, तू ही मेरे मन को अच्छा लगता है। परिवार का मोह जो दिखाई पड़ता है यह सब चलायमान है। जो सत्य प्रभु के अतिरिक्त किसी अन्य में ध्यान लगाते हैं वे झूठे हैं तथा उनका अहंकार भी झूठा है। हे नानक, तू सत्य–प्रभु का सुमिरन कर क्योंकि बिना सत्य के सभी मूर्ख बनकर सड़ गल कर मर जाते हैं ॥ १०॥ श्लोक महला ४ ॥ समय रहते तो तूने सत्य–प्रभु से प्रेम नहीं किया इसलिए बाद में तेरा कुछ भी कहना किसी काम नहीं आने वाला है ॥ बेचारा मनमुख अधर में ही लटकता–भटकता रहता है, उसे भला केवल बातों से कैसे सुख मिल सकता है। जिसके अन्दर सच्चे गुरु का प्रेम नहीं है वह झूठ में ही आता है और झूठ में ही चला जाता है। यदि कर्त्ता–प्रभु कृपा करे तो व्यक्ति को सच्चे गुरु रूपी परब्रह्म के दर्शन प्राप्त होते हैं। तब वह कठिनता से किए जा सकने वाले शब्द–गुरु का पान करता है जिससे उसके सभी भय, चिन्ताएं और भ्रम समाप्त हो जाते हैं। अब वह दिन–रात आनन्दित बना रहता है और इसी प्रकार दास नानक भी सदैव प्रभु का गुणानुवाद करता रहता है ॥१॥ महला४॥ जो अपने को सच्चे गुरु का सिक्ख कहलाता है वह प्रातः उठकर प्रभु–नाम का सुमिरन करता है। वह श्रमपूर्वक प्रातः काल नाम–अमृत के सरोवर में स्नान करता है; गुरु के उपदेश को वह सदैव याद रखता है और इस प्रकार उसके सभी अपराध और पाप उतर जाते हैं। फिर दिन निकलने तक गुरु की वाणी का गायन करता है और उठते बैठते हुए प्रभु–नाम का सुमिरन करता है। जो प्रत्येक श्वास् और ग्रास के साथ मेरे गुरु का सुमिरन करता है, गुरु का वह सिक्ख

सो गुरसिखु गुरू मनि भावै ॥ जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै ॥ जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो तुधु सचु धिआइदे से विरले थोड़े ॥ जो मनि चिति इकु अराधदे तिन की बरकति खाहि असंख करोड़े ॥ तुधुनो सभ धिआइदी से थाइ पए जो साहिब लोड़े ॥ जो बिनु सतिगुर सेवे खादे पैनदे से मुए मरि जंमे कोढ़े ॥ ओइ हाजरु मिठा बोलदे बाहरि विसु कढहि मुखि घोले ॥ मनि खोटे दयि विछोड़े ॥ ११ ॥ सलोक मः ४ ॥ मलु जूई भरिआ नीला काला खिधोलड़ा तिनि वेमुखि वेमुखै नो पाइआ ॥ पासि न देई कोई बहणि जगत महि गूह पड़ि सगवी मलु लाइ मनमुखु आइआ ॥ पराई जो निंदा चुगली नो वेमुखु करि कै भेजिआ ओथै भी मुहु काला दुहा वेमुखा दा कराइआ ॥ तड़ सुणिआ सभतु जगत विचि भाई वेमुखु सणै नफरै पउली पउदी फावा होइ कै उठि घरि आइआ ॥ अगै संगती कुड़मी वेमुखु रलणा न मिलै ता वहुटी भतीजी फिरि आणि घरि पाइआ ॥ हलतु पलतु दोवै गए नित भुखा कूके तिहाइआ ॥ धनु धनु सुआमी करता पुरखु है जिनि निआउ सचु बहि आपि कराइआ ॥ जो निंदा करे सतिगुर पूरे की सो साचै मारि पचाइआ ॥ एहु अखरु तिनि आखिआ जिनि जगतु सभु उपाइआ ॥ १ ॥ मः ४ ॥ साहिबु जिस का नंगा भुखा होवै तिस दा नफरु किथहु रजि खाए ॥ जि साहिब कै घरि वथु होवै सु नफरै हथि आवै अणहोदी किथहु पाए ॥ जिस दी सेवा कीती फिरि लेखा मंगीऐ सा सेवा अउखी होई ॥ नानक सेवा करहु हरि गुर सफल दरसन की फिरि लेखा मंगै न कोई ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ नानक वीचारहि संत जन चारि वेद कहंदे ॥ भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे ॥ प्रगट पहारा जापदा सभि लोक सुणंदे ॥ सुखु न पाइनि मुगध नर संत नालि खहंदे ॥ ओइ लोचनि ओना गुणै नो ओइ अहंकारि सड़ंदे ॥ ओइ विचारे किआ करहि जा भाग धुरि मंदे ॥ जो मारे तिनि पारब्रहमि से किसै न संदे ॥ वैरु करहि निरवैर नालि धरम निआइ पचंदे ॥ जो जो संति सरापिआ से फिरहि भवंदे ॥ पेडु मुंढाहूं कटिआ तिसु डाल सुकंदे ॥ १२ ॥ सलोक मः ४ ॥

गुरु के मन को भाता है । जिस पर मेरा प्रभु मेहरबान हो जाता है उसी गुरु के सिक्ख को सच्चा गुरु उपदेश देता है । दास नानक, उस गुरु के सिक्ख की चरण–धूलि की कामना करता है जो स्वयं सुमिरन करता है और अन्यों को भी प्रभु–नाम का सुमिरन करवाता है ॥ २ ॥ जो सच्चे रूप में हे प्रभु, तेरा सुमिरन करते हैं वे बहुत थोड़े से ही बिरले लोग हैं । जो मन और चित्त से एक प्रभु का सुमिरन करते हैं उनके कारण अनगिनत करोड़ों लोग जीवनयापन कर लेते हैं । तेरी सारी रचना तेरा सुमिरन करती है परन्तु जिन्हें प्रभु चाहता है उनकी मेहनत ही सफल होती है । जो सच्चे गुरु के सुमिरन से विहीन होकर खाते और पहनते हैं वे कोढ़ी व्यक्ति मरते और जनमते रहते हैं । वे सामने तो मीठे वचन बोलते हैं परन्तु पीठ पीछे मुँह से विष उगलते हैं । ऐसे खोटे मन वाले लोगों को परमात्मा सदैव बिछुड़े हुए ही रखता है ॥ ११ ॥ श्लोक महला ४ ॥ मल और जूओं से भरी हुई नीली–काली गुदड़ी उस विमुख व्यक्ति ने परमात्मा से विमुख दूसरे व्यक्ति को पहना दी । अब संसार में उसे कोई भी पास नहीं बैठने देता और वह मनमुख व्यक्ति और भी मलयुक्त और मलीन होकर वापस आ गया है । परायी निन्दा चुगली करने के लिए जिस मनमुख को भेजा गया था वहाँ भी दोनों मनमुख व्यक्तियों का मुख काला ही हुआ । सारे संसार में शीघ्र ही सब लोगों ने जान लिया कि हे भाई, मनमुख व्यक्ति को उसके नौकर समेत जूते पड़े और वह पागल होकर फिर अपने ही घर में आ बैठा है । आगे उसको संगत, संबंधी लोगों में भी मिल बैठना नसीब न हुआ तो फिर पत्नी और भतीजों आदि ने उसे अपने घर में रख लिया । उसके लोक–परलोक दोनों ही व्यर्थ गए और अब वह भूखा–प्यासा चीख–पुकार कर रहा है । सृष्टि कर्त्ता प्रभु धन्य है जिसने स्वयं ध्यानपूर्वक सच्चा न्याय किया । जो व्यक्ति सच्चे और पूर्ण गुरु की निन्दा करता है उसे सच्चा प्रभु मारकर खपा देता है । न्याय का यह वचन उस प्रभु ने स्वयं कहा है जिसने सारा संसार पैदा किया है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जिस व्यक्ति का मालिक भूखा–नंगा है उसका नौकर भला पेट भर कहाँ से खाएगा ॥ यदि मालिक के घर में कोई चीज होगी तो वह ही नौकर के हाथ लगेगी और यदि है ही नहीं तो वह कहाँ से पा सकता है । जिसकी सेवा करते हुए हिसाब–किताब रखना पड़े वह सेवा वास्तव में दुखदायी है । हे नानक, प्रभु रूपी गुरु की सेवा करो जिसका दर्शन ऐसा फलदायक है कि फिर कोई लेखा–जोखा नहीं माँगता ॥ २ ॥ पउड़ी॥ हे नानक, सन्तजनों का भी विचार है और चारों वेद भी कहते हैं कि प्रभु के भक्त जो मुँह से बोल देते हैं उनके वचन पूरे हो जाते हैं। इस शरीर रूपी दुकान में उन्हें परमात्मा प्रत्यक्ष अनुभव होता है यह सभी लोग सुनते चले आ रहे हैं । शान्त पुरुषों के साथ विवाद करने वाले मूर्ख लोग सुख प्राप्त नहीं करते । शान्त पुरुष तो उनकी भलाई चाहते हैं परन्तु मूर्ख व्यक्ति अहंकार में ही जलते रहते हैं । वे बेचारे भी क्या करें क्योंकि शुरू से ही उनका भाग्य खराब है । जिसे प्रभु ने ही स्वयं मार डाला हो वे किसी के भी किसी काम के नहीं होते । जो शत्रुत्ता–विहीन व्यक्ति के साथ बैर करते हैं, धर्म के न्याय के अनुसार वे नष्ट हो जाते हैं । सन्त पुरुष ने जिस जिस को भी फटकार लगा दी है वह भटकता फिरता है क्योंकि जब पेड़ की जड़ ही काट दी जाए तो उसकी टहनियाँ सूखती ही चली जाती हैं ॥ १२ ॥ श्लोक महला ४॥

अंतरि हरि गुरू धिआइदा वडी वडिआई ॥ तुसि दिती पूरै सतिगुरू घटै नाही इकु तिलु किसै दी घटाई ॥ सचु साहिबु सतिगुरू कै वलि है तां झखि झखि मरै सभ लोकाई ॥ निंदका के मुह काले करे हरि करतै आपि वधाई ॥ जिउ जिउ निंदक निंद करहि तिउ तिउ नित नित चड़ै सवाई ॥ जन नानक हरि आराधिआ तिनि पैरी आणि सभ पाई ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सतिगुर सेती गणत जि रखै हलतु पलतु सभु तिस का गइआ ॥ नित झहीआ पाए झगू सुटे झखदा झखदा झड़ि पइआ ॥ नित उपाव करै माइआ धन कारणि अगला धनु भी उडि गइआ ॥ किआ ओहु खटे किआ ओहु खावै जिसु अंदरि सहसा दुखु पइआ ॥ निरवैरै नालि जि वैरु रचाए सभु पापु जगतै का तिनि सिरि लइआ ॥ ओसु अगै पिछै ढोई नाही जिसु अंदरि निंदा मुहि अंबु पइआ ॥ जे सुइने नो ओहु हथु पाए ता खेहू सेती रलि गइआ ॥ जे गुर की सरणी फिरि ओहु आवै ता पिछले अउगण बखसि लइआ ॥ जन नानक अनदिनु नामु धिआइआ हरि सिमरत किलविख पाप गइआ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तूहै सचा सचु तू सभ दू उपरि तू दीबाणु ॥ जो तुधु सचु धिआइदे सचु सेवनि सचे तेरा माणु ॥ ओना अंदरि सचु मुख उजले सचु बोलनि सचे तेरा ताणु ॥ से भगत जिनी गुरमुखि सालाहिआ सचु सबदु नीसाणु ॥ सचु जि सचे सेवदे तिन वारी सद कुरबाणु ॥ १३ ॥ सलोक मः ४ ॥ धुरि मारे पूरै सतिगुरू सेई हुणि सतिगुरि मारे ॥ जे मेलण नो बहुतेरा लोचीऐ न देई मिलण करतारे ॥ सतसंगति ढोई ना लहनि विचि संगति गुरि वीचारे ॥ कोई जाइ मिलै हुणि ओना नो तिसु मारे जमु जंदारे ॥ गुरि बाबै फिटके से फिटे गुरि अंगदि कीते कूड़िआरे ॥ गुरि तीजी पीड़ी वीचारिआ किआ हथि एना वेचारे ॥ गुरु चउथी पीड़ी टिकिआ तिनि निंदक दुसट सभि तारे ॥ कोई पुतु सिखु सेवा करे सतिगुरू की तिसु कारज सभि सवारे ॥ जो इछै सो फलु पाइसी पुतु धनु लखमी खड़ि मेले हरि निसतारे ॥ सभि निधान सतिगुरू विचि जिसु अंदरि हरि उर धारे ॥ सो पाए पूरा सतिगुरू जिसु लिखिआ लिखतु लिलारे ॥ जनु नानकु मागै धूड़ि तिन जो गुरसिख मित

अन्तर्मन में गुरु प्रभु का सुमिरन करता है इसलिए उसका बड़प्पन महान है। पूर्ण प्रभु ने उसे यह बडप्पन प्रदान किया है जो किसी के घटाने से एक तिल भर भी नहीं घटता। जब परमात्मा सच्चे गुरु के पक्ष में है तो विपक्ष वाले सभी लोग झख मार मार कर मरते जा रहे हैं। कर्ता प्रभु निन्दकों के मुँह काले करता है और सच्चे गुरु के बड़प्पन को और बढ़ाता है। निन्दक जैसे जैसे निन्दा करता है वैसे वैसे ही सच्चे गुरु की महिमा बढ़ती जाती है। दास नानक ने उस प्रभु का सुमिरन किया है जिसने सबको सच्चे गुरु के चरणों में डाल दिया है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जो सच्चे गुरु के साथ ज्यादा हिसाब–किताब में पड़ता है उसका लोक–परलोक दोनों ही चला जाता है। वह हमेशा मुँह से झाग फेंकता हुआ दाँत पीसता रहता है और प्रलाप करता हुआ मर खप जाता है। धन सम्पदा के लिए वह सदैव उपाय करता रहता है परन्तु उसका पहला धन भी नष्ट हो जाता है। जिसके मन में चिन्ता और दुख है वह भला क्या कमाएगा और क्या खाएगा ॥ जो शत्रुभाव से विहीन के प्रति शत्रुत्ता रखता है उसने तो मानों सारे संसार का पाप अपने सिर पर लाद रखा है। अन्दर की निन्दा की जलन के कारण जिसकी जीभ को सूजन का रोग (अंबु रोग) हो गया है उसे यहाँ और कहीं भी शरण नहीं मिलती। यदि वह सोने को भी हाथ से पकड़ता है तो वह भी मिट्टी के समान हो जाता है। फिर भी यदि वह गुरु की शरण में आ जाए तो उसके पिछले अवगुण क्षमा हो जाते हैं। दास नानक ने प्रतिदिन प्रभु नाम का सुमिरन किया है और प्रभु–सुमिरन के फलस्वरूप उसके सभी पाप नष्ट हो गए हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तू सबसे सच्चा है और तेरा न्याय सबसे ऊपर है। जो सत्य स्वरूप में तेरा सुमिरन करते हैं वे सत्य की सेवा करते हैं और हे सत्य–प्रभु, तू ही उनके लिए मान–सम्मान है। जिनके मन में सत्य है उनके मुख उज्जवल हैं। वे सत्य बोलते हैं और हे सत्य–प्रभु तेरी ही शक्ति उनके पास है। जिन्होंने गुरमुख बनकर प्रभु का गुणानुवाद किया है वे ही भक्त हैं और उन्हीं के पास शब्द रूपी सत्य का चिन्ह है। मैं उन पर सदैव बलिहारी जाता हूँ जो सच्चे बनकर उस सत्य–प्रभु के प्रति निष्ठावान बने रहते हैं ॥ १३ ॥ श्लोक महला ४ ॥ जिन्हें प्रारम्भ से ही पूर्ण सद्‌गुरु परमात्मा ने धिक्कार लगाई हुई है उन्हे अब सच्चे गुरु ने भी धिक्कार दिया है। वे गुरु से मिलने के लिए बहुत चाहते हैं परन्तु प्रभु उन्हें मिलने नहीं देता। इस संबध में गुरु का चिन्तन यही है कि उन्हें साधसंगत में भी शरण नहीं मिलती। अब उनसे जाकर भी यदि कोई मिलता है तो वह भी निर्दयी यम द्वारा मार दिया जाता है। बाबा गुरु ने जिन्हें धिक्कार दिया है उन्हें गुरु अंगद ने भी झूठे करार दे दिया है। तीसरी पीढ़ी के गुरु ने भी यही विचार बताया कि इन बेचारे लोगों के वश में भी भला क्या है। जिन्होंने चौथी पीढ़ी में गुरु निर्धारित किया उन्होंने सभी निन्दकों और दुष्टों को भी पार उतार दिया। कोई सिक्ख सच्चे गुरु की पुत्रवत होकर सेवा करे तो उसके सभी काम सँवर जाते हैं। जो अपने पुत्र, धन, लक्ष्मी गुरु को समपर्ण कर देता है वह जो चाहता है उसे फल मिल जाता है और प्रभु उसे पार उतार देता है। सभी भण्डार सच्चे गुरु के अन्दर हैं जिसने अपने अन्तर्मन में प्रभु को धारण किया हुआ है। सच्चे गुरु को भी वही प्राप्त करता है जिसके माथे पर लेख लिखा हुआ होता है। दास नानक उनकी चरण–धूलि माँगता है

पिआरे ॥ १ ॥ मः ४ ॥ जिन कउ आपि देइ वडिआई जगतु भी आपे आणि तिन कउ पैरी पाए ॥ डरीऐ तां जे किछु आप दू कीचै सभु करता आपणी कला वधाए ॥ देखहु भाई एहु अखाड़ा हरि प्रीतम सचे का जिनि आपणै जोरि सभि आणि निवाए ॥ आपणिआ भगता की रख करे हरि सुआमी निंदका दुसटा के मुह काले कराए ॥ सतिगुर की वडिआई नित चड़ै सवाई हरि कीरति भगति नित आपि कराए ॥ अनदिनु नामु जपहु गुरसिखहु हरि करता सतिगुरु घरी वसाए ॥ सतिगुर की बाणी सति सति करि जाणहु गुरसिखहु हरि करता आपि मुहहु कढाए ॥ गुरसिखा के मुह उजले करे हरि पिआरा गुर का जैकारु संसारि सभतु कराए ॥ जनु नानकु हरि का दासु है हरि दासन की हरि पैज रखाए ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तू सचा साहिबु आपि है सचु साह हमारे ॥ सचु पूजी नामु द्रिड़ाइ प्रभ वणजारे थारे ॥ सचु सेवहि सचु वणंजि लैहि गुण कथह निरारे ॥ सेवक भाइ से जन मिले गुर सबदि सवारे ॥ तू सचा साहिबु अलखु है गुर सबदि लखारे ॥ १४ ॥ सलोक मः ४ ॥ जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिस दा कदे न होवी भला ॥ ओस दै आखिऐ कोई न लगै नित ओजाड़ी पूकारे खला ॥ जिसु अंदरि चुगली चुगलो वजै कीता करतिआ ओस दा सभु गइआ ॥ नित चुगली करे अणहोदी पराई मुहु कढि न सकै ओस दा काला भइआ ॥ करम धरती सरीरु कलिजुग विचि जेहा को बीजे तेहा को खाए ॥ गला उपरि तपावसु न होई विसु खाधी ततकाल मरि जाए ॥ भाई वेखहु निआउ सचु करते का जेहा कोई करे तेहा कोई पाए ॥ जन नानक कउ सभ सोझी पाई हरि दर कीआ बाता आखि सुणाए ॥ १ ॥ मः ४ ॥ होदै परतखि गुरू जो विछुड़े तिन कउ दरि ढोई नाही ॥ कोई जाइ मिलै तिन निंदका मुह फिके थुक थुक मुहि पाही ॥ जो सतिगुरि फिटके से सभ जगति फिटके नित भंभल भूसे खाही ॥ जिन गुरु गोपिआ आपणा से लैदे ढहा फिराही ॥ तिन की भुख कदे न उतरै नित भुखा भुख कूकाही ॥ ओना दा आखिआ को ना सुणै नित हउले हउलि मराही ॥ सतिगुर की वडिआई वेखि न सकनी ओना अगै पिछै थाउ नाही ॥ जो सतिगुरि मारे तिन

जो गुरु के सिक्ख प्रभु के मित्र और प्यारे हैं ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जिन्हें प्रभु खुद सम्मान देता है, संसार भी स्वयं उनके चरणों में आन पड़ता है। डरना तो तब है यदि हम स्वयं कुछ करते हों, कर्त्ता प्रभु सब ओर अपनी ही शक्तियों का प्रसार कर रहा है। हे भाईयो, देखो यह जगत रूपी अखाड़ा उस प्रभु प्रियतम का है जिसने अपने ज़ोर से सव को झुका लिया है। प्रभु–स्वामी अपने भक्तों की रक्षा करता है और दुष्ट निन्दकों के मुँह काले करवा देता है। सच्चे गुरु की महानता दिन–प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है और प्रभु अपनी कीर्ति और भक्ति स्वयं ही कराता रहता है। हे गुरु के सिक्खो, दिन–रात प्रभु के नाम का सुमिरन करो क्योंकि कर्ता प्रभु ही हृदय के अन्दर सच्चे गुरु का निवास वनाता है। हे सिक्खो, सच्चे गुरु की वाणी को सत्य रूप में जानो क्योंकि कर्त्ता प्रभु ही स्वयं यह वाणी मुँह से उच्चारण करवाता है। प्यारा प्रभु गुरु के सिक्खों के मुख उज्जवल बना देता है और सारे संसार में सबसे गुरु की जय–जयकार करवा देता है। सेवक नानक प्रभु का दास है और प्रभु अपने दासों का सम्मान बचा लेता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे सच्चे साहूकार प्रभु, तुम ही मेरे सच्चे स्वामी हो। हे प्रभु, मैं तेरा ही व्यापारी हूँ। तू मेरे अन्दर सत्य की पूँजी को और मज़बूत कर दे। मैं सत्य का सुमिरन करता हूँ, सत्य का ही व्यापार करता हूँ और उस प्रभु के निराले गुणों का कथन करता हूँ। जो सेवकभाव से प्रभु से मिलते हैं वे शब्द–गुरु के माध्यम से सँवर जाते हैं। हे सच्चे स्वामी, तुम अदृष्ट हो परन्तु शब्द–गुरु के माध्यम से तुझे देखा जाता है ॥ १४ ॥ श्लोक महला ४ ॥ जिसके अन्दर परायेपन की भावना हो उसका कभी भी भला नहीं होता। कोई उसका कहना नहीं मानता और वह इस निर्जन स्थान में खड़े होकर चीख–पुकार लगाने वाले व्यक्ति की तरह होता है। चुगली की भावना वाला व्यक्ति चुगलखोर प्रसिद्ध हो जाता है और उसका सब किया–कराया व्यर्थ जाता है। वह सदैव दूसरे की चुगली करता है जिससे उसका मुँह काला हो जाता है और वह किसी को मुँह नहीं दिखा पाता। कर्म रूपी धरती की तरह कलियुग में यह शरीर है जिसमें जैसा कोई वोता है वैसा ही खाता है। केवल बातें करने से ही बात नहीं बनती। यदि व्यक्ति विष खाएगा तो (अमृत की बातें करने के बावजूद) वह तत्काल ही मर जाएगा। हे भाई, सत्य कर्त्ता–प्रभु का न्याय देखो कि जैसा कोई करता है वैसा ही फल पा लेता है। दास नानक को प्रभु ने सूझ बुद्धि प्रदान की है इसीलिए वह प्रभु–दरवार की बातें कह सुनाता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ गुरु के सामने रहते हुए भी जो मन से उससे अलग बने रहते हैं उन्हे प्रभु–दरबार में भी आसरा नहीं मिलता। यदि कोई उन निन्दकों को जाकर मिले तो उनके चेहरे भी मलीन हो जाते हैं और उनके मुँह पर भी थूकने जैसी बात होगी। जो सच्चे गुरु ने धिक्कार दिए हैं उन्हें सारा जगत फटकार लगाता है और वे सदैव दुविधा में पड़े भटकते रहते हैं। जो प्रत्यक्ष रूप से गुरु को गुरु नहीं जानते वे प्रलाप करते हुए भटकते फिरते हैं। उनकी भूख कभी भी समाप्त नहीं होती और भूख के मारे हुए वे सदैव चीत्कार करते रहते हैं। उनका कहा हुआ कोई भी नहीं सुनता और वे भयभीत होकर मरते रहते हैं। वे सच्चे गुरु की महिमा को देख नहीं सकते और उन्हें यहाँ और वहाँ कोई भी ठिकाना प्राप्त नहीं होता। जो सच्चे गुरु द्वारा धिक्कार दिए

जाइ मिलहि रहदी खुहदी सभ पति गवाही ॥ ओइ अगै कुसटी गुर के फिटके जि ओसु मिलै तिसु कुसटु उठाही ॥ हरि तिन का दरसनु ना करहु जो दूजै भाइ चितु लाही ॥ धुरि करतै आपि लिखि पाइआ तिसु नालि किहु चारा नाही ॥ जन नानक नामु अराधि तू तिसु अपड़ि को न सकाही ॥ नावै की वडिआई वडी है नित सवाई चड़ै चड़ाही ॥ २ ॥ मः ४ ॥ जि होंदै गुरू बहि टिकिआ तिसु जन की वडिआई वडी होई ॥ तिसु कउ जगतु निविआ सभु पैरी पइआ जसु वरतिआ लोई ॥ तिस कउ खंड ब्रहमंड नमसकारु करहि जिस के मसतकि हथु धरिआ गुरि पूरै सो पूरा होई ॥ गुर की वडिआई नित चड़ै सवाई अपड़ि को न सकोई ॥ जनु नानकु हरि करतै आपि बहि टिकिआ आपे पैज रखै प्रभु सोई ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ काइआ कोटु अपारु है अंदरि हटनाले ॥ गुरमुखि सउदा जो करे हरि वसतु समाले ॥ नामु निधानु हरि वणजीऐ हीरे परवाले ॥ विणु काइआ जि होर थै धनु खोजदे से मूड़ बेताले ॥ से उझड़ि भरमि भवाईअहि जिउ झाड़ मिरगु भाले ॥ १५ ॥ सलोक मः ४ ॥ जो निंदा करे सतिगुर पूरे की सु अउखा जग महि होइआ ॥ नरक घोरु दुख खूहु है ओथै पकड़ि ओहु ढोइआ ॥ कूक पुकार को न सुणे ओहु अउखा होइ होइ रोइआ ॥ ओनि हलतु पलतु सभु गवाइआ लाहा मूलु सभु खोइआ ॥ ओहु तेली संदा बलदु करि नित भलके उठि प्रभि जोइआ ॥ हरि वेखै सुणै नित सभु किछु तिदू किछु गुझा न होइआ ॥ जैसा बीजे सो लुणै जेहा पुरबि किनै बोइआ ॥ जिसु क्रिपा करे प्रभु आपणी तिसु सतिगुर के चरण धोइआ ॥ गुर सतिगुर पिछै तरि गइआ जिउ लोहा काठ संगोइआ ॥ जन नानक नामु धिआइ तू जपि हरि हरि नामि सुखु होइआ ॥ १ ॥ मः ४ ॥ वडभागीआ सोहागणी जिना गुरमुखि मिलिआ हरि राइ ॥ अंतरि जोति प्रगासीआ नानक नामि समाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ इहु सरीरु सभु धरमु है जिसु अंदरि सचे की विचि जोति ॥ गुहज रतन विचि लुकि रहे कोई गुरमुखि सेवकु कढै खोति ॥ सभु आतम रामु पछाणिआ तां इकु रविआ इको ओति पोति ॥ इकु देखिआ इकु मंनिआ इको सुणिआ स्रवण सरोति ॥

गए हैं उन्हें कोई भी जब मिलता है तो वह अपनी बची हुई इज़्ज़त भी गँवा लेता है । गुरु द्वारा तिरस्कृत वे पहले ही कोढ़ी होते हैं और जो कोई उनसे मिलता है वह भी मानसिक रूप से कोढ़ी बन जाता है । हे प्रभु, जो द्वैतभाव में चित्त लगाए रहते हैं मैं उनका दर्शन नहीं करता । जो प्रभु ने प्रारम्भ से ही भाग्य–लेख लिख दिया है उससे बचने का कोई चारा नहीं है । हे दास नानक, तू उस प्रभु के नाम का सुमिरन कर जहां कोई भी पहुँच नहीं पाता । प्रभु–नाम की महिमा बहुत बड़ी है और यह दिन–प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है ॥ २ ॥ महला ४ ॥ जिसे गुरु ने स्वयं होते हुए गुरु निर्धारित किया है उस व्यक्ति की महिमा बहुत बड़ी है । संसार उसके सामने झुक गया है । सभी उसके चरणों में आन पड़े हैं और संसार में उसका यश फैल गया है । पूर्ण गुरु ने जिसके मस्तक पर हाथ रख दिया है उसे सभी द्वीप–महाद्वीप एवं समूह ब्रहमाण्ड नमस्कार करता है । वही व्यक्ति पूर्ण व्यक्ति माना जाता है । गुरु की महिमा सदैव वढ़ती जाती है और उस तक कोई भी पहुँच नहीं सकता है । हे नानक, प्रभु ने स्वयं जिस व्यक्ति को निर्धारित किया है वह उसकी इज़्ज़त भी स्वयं ही बचाता है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ यह काया रूपी किला वहुत वड़ा है जिसके अन्दर कई गुफाएं हैं । गुरमुख बनकर जो व्यापार करता है वह प्रभु रूपी माल को संभाल लेता है । प्रभु–नाम के भण्डारों को और इसी प्रकार के अन्य हीरे–जवाहरातों को खरीदना ही उचित है । प्रभु–नाम रूपी धन को शरीर के अन्दर की अपेक्षा जो अन्य स्थानों पर खोजते हैं वे मूर्ख हैं और वेतालों के समान हैं । वे भ्रमों में भूले हुए निर्जन स्थानों में ऐसे ही घूमते फिरते हैं जैसे मृग अपने अन्दर की कस्तूरी को झाड़ियों में ढूँढता फिरता है ॥ १५ ॥ श्लोक महला ४ ॥ जो पूर्ण सच्चे गुरु की निन्दा करता है वह जगत में दुखी ही वना रहता है । नर्क घोर दुख का कुँआ है और निन्दक व्यक्ति को पकड़ कर उसी में फेंका जाता है । उसकी चीख–चिल्लाहट को कोई भी नहीं सुनता और वह दुखी होकर रोता–पीटता रहता है । ऐसे व्यक्ति इस लोक और परलोक को गँवा लेते हैं और अपने लाभ तथा मूल पूँजी को भी खो लेते हैं । वे तेली के ऐसे वैल की तरह हैं जिन्हें उनका मालिक सदा ही कोल्हू चलाने में जोते रहता है । वह प्रभु सव कुछ सदैव देखता–सुनता है । उससे कुछ भी छिपा नहीं रहता । जैसा पूर्व में किसी ने बोया है वह वैसा ही काटता है । जिस पर प्रभु स्वयं कृपा करता है वही सच्चे गुरु के पैर धो पाता है । जैसे नाव की लकड़ी के साथ लगा हुआ लोहा भी तैर जाता है उसी तरह सच्चे गुरु के पीछे लगकर सेवक भी पार उतर जाता है । हे दास नानक, तू प्रभु–नाम का सुमिरन कर क्योंकि प्रभु–नाम के जाप से ही सुख प्राप्त होता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ वे सुहागिन स्त्रियां भाग्यशाली हैं जिन्हें गुरु के माध्यम से प्रभु प्राप्त हो गया है । हे नानक, उनका अन्तर्मन प्रभु–ज्योति से प्रकाशमान हो उठा है और वे प्रभु नाम में लीन हो गयी हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ यह शरीर सभी कर्त्तव्यों का ठिकाना है और इसी में सत्य–प्रभु की ज्योति जल रही है । इसी में ही अनेकों रत्न प्रछन्न रूप से छुपे हुए हैं जिन्हें कोई गुरमुख व्यक्ति ही सेवक बनकर बाहर निकाल सकता है । जब प्रभु की अपने अन्दर ही पहचान हो जाती है तब जीव उसी में ही ओत–प्रोत होकर रमण करता है । ऐसा व्यक्ति एक ही प्रभु को देखता है, एक पर ही भरोसा करता है और अपने कानों से एक की ही बातें सुनता है ।

जन नानक नामु सलाहि तू सचु सचे सेवा तेरी होति ॥ १६ ॥ सलोक मः ४ ॥ सभि रस तिन कै रिदै हहि जिन हरि वसिआ मन माहि ॥ हरि दरगहि ते मुख उजले तिन कउ सभि देखण जाहि ॥ जिन निरभउ नामु धिआइआ तिन कउ भउ कोई नाहि ॥ हरि उतमु तिनी सरेविआ जिन कउ धुरि लिखिआ आहि ॥ ते हरि दरगहि पैनाईअहि जिन हरि वुठा मन माहि ॥ ओइ आपि तरे सभ कुटुंब सिउ तिन पिछै सभु जगतु छुडाहि ॥ जन नानक कउ हरि मेलि जन तिन वेखि वेखि हम जीवाहि ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सा धरती भई हरीआवली जिथै मेरा सतिगुर बैठा आइ ॥ से जंत भए हरीआवले जिनी मेरा सतिगुरु देखिआ जाइ ॥ धनु धंनु पिता धनु धंनु कुलु धनु धनु सु जननी जिनि गुरू जणिआ माइ ॥ धनु धंनु गुरू जिनि नामु अराधिआ आपि तरिआ जिनी डिठा तिना लए छडाइ ॥ हरि सतिगुरु मेलहु दइआ करि जनु नानकु धोवा पाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचु सचा सतिगुरु अमरु है जिसु अंदरि हरि उरि धारिआ ॥ सचु सचा सतिगुरु पुरखु है जिनि कामु क्रोधु बिखु मारिआ ॥ जा डिठा पूरा सतिगुरू तां अंदरहु मनु साधारिआ ॥ बलिहारी गुर आपणे सदा सदा घुमि वारिआ ॥ गुरमुखि जिता मनमुखि हारिआ ॥ १७ ॥ सलोक मः ४ ॥ करि किरपा सतिगुरु मेलिओनु मुखि गुरमुखि नामु धिआइसी ॥ सो करे जि सतिगुर भावसी गुरु पूरा घरी वसाइसी ॥ जिन अंदरि नामु निधानु है तिन का भउ सभु गवाइसी ॥ जिन रखण कउ हरि आपि होइ होर केती झखि झखि जाइसी ॥ जन नानक नामु धिआइ तू हरि हलति पलति छोडाइसी ॥ १ ॥ मः ४ ॥ गुरसिखा कै मनि भावदी गुर सतिगुर की वडिआई ॥ हरि राखहु पैज सतिगुरू की नित चड़ै सवाई ॥ गुर सतिगुर कै मनि पारब्रहमु है पारब्रहमु छडाई ॥ गुर सतिगुर ताणु दीबाणु हरि तिनि सभ आणि निवाई ॥ जिनी डिठा मेरा सतिगुरु भाउ करि तिन के सभि पाप गवाई ॥ हरि दरगह ते मुख उजले बहु सोभा पाई ॥ जनु नानकु मंगै धूड़ि तिन जो गुर के सिख मेरे भाई ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हउ आखि सलाही सिफति सचु सचु सचे की वडिआई ॥ सालाही सचु सलाह सचु सचु कीमति

हे दास नानक, तू प्रभु–नाम की ही प्रशंसा कर और तेरी सेवा उस सच्चे के प्रति यही मानी जाएगी ॥ १६ ॥ श्लोक महला ४ ॥ जिनके हृदय में प्रभु आन बसा सभी रस और आनन्द उनके हृदय में बने रहते हैं । प्रभु–दरबार में उनके मुख उज्जवल होते हैं और सभी उन्हें देखने के लिए जाते हैं । जिन्होंने निर्भय प्रभु के नाम की आराधना की है उन्हें कोई भी भय नहीं लगता । प्रारम्भ से ही जिनका लेख लिखा हुआ है, उत्तम प्रभु का वे ही सुमिरन करते हैं । प्रभु के दरबार में उन्हें ही शोभा रूपी वस्त्र पहनने को मिलता है जिन पर प्रभु मन से प्रसन्न होता है । वे पूरे परिवार समेत पार उतर जाते हैं और उनके पीछे लगकर सारा संसार मुक्त हो जाता है । हे प्रभु, दास नानक को अपने सेवकों के साथ मिला दे क्योंकि हम तो उन्हें ही देख देखकर जीवित बने रहते हैं ॥ महला ४ ॥ वह धरती हरी–भरी हो जाती है जहां मेरा सच्चा गुरु आ कर बैठता है । मेरे सच्चे गुरु को जाकर देखने वाले सभी जीव–जन्तु हरे–भरे हो जाते हैं । वह पिता धन्य है, वह परिवार धन्य है और वह माँ भी धन्य है जिसने गुरु को जन्म दिया है । वह गुरु भी धन्य है जिसने नाम का सुमिरन किया है; जो स्वयं पार उतर गया है और जिन्होंने उसे देखा है वे भी मुक्त हो गए हैं । हे प्रभु, मुझे सच्चे गुरु से दया करके मिला दे ताकि दास नानक उसके चरण पखार सके ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सच्चा गुरु अविनाशी और सत्यशील है जिसने अपने हृदय में प्रभु को धारण कर रखा है । सच्चा सद्गुरु ही ऐसा बलशाली है जिसने काम, क्रोध, रूपी विष को समाप्त कर डाला है । जब मैं पूर्ण सच्चे गुरु को देखता हूँ तो मेरे मन को अन्दर से ही एक सुदृढ़ आकार प्राप्त हो जाता है । मैं अपने गुरु पर बलिहारी जाता हूँ और सदैव उसी पर कुर्बान होता रहता हूँ । गुरमुख इस संसार में जीत जाते हैं और मनमुख इस जीवन रूपी खेल को हार जाते हैं ॥ १७ ॥ श्लोक महला ४ ॥ कृपा करके प्रभु जिसे सच्चे गुरु से मिला देता है वह गुरमुख बनकर प्रभु–नाम का सुमिरन करता है । वह वही करता है जो सच्चे गुरु को अच्छा लगता है और पूर्ण गुरु उसे अपने चित्त में ही स्थिर करके बसा देता है । जिनके अन्दर प्रभु–नाम का भण्डार है उनके सभी भय दूर हो जाते हैं । जिसका रक्षक प्रभु है उसको हानि पहुँचाने वाले अनेकों ही लोग मर खप जाते हैं । हे दास नानक, तू प्रभु–नाम का सुमिरन कर तो प्रभु तुझे इस लोक और परलोक में मुक्त कर देगा ॥ १ ॥ महला ४ ॥ गुरु के सिक्खों को सच्चे गुरु की महिमा ही अच्छी लगती है । हे प्रभु, सच्चे गुरु के सम्मान की रक्षा कर और यह सम्मान सदैव बढ़ता रहे । सच्चे गुरु के हृदय में परब्रह्म है और उसकी रक्षा परब्रह्म ही करता है । सच्चे गुरु का बल और आसरा प्रभु ही है जिसने सब को लाकर सामने झुका दिया है । जिसने मेरे सच्चे गुरु को प्रेमपूर्वक देख लिया है उसके सभी पाप समाप्त हो गए हैं । ऐसे व्यक्तियों के मुख प्रभु–दरबार में उज्जवल होते हैं और वे बहुत महिमा को प्राप्त होते हैं । दास नानक उनकी चरण–धूलि माँगता है जो गुरु के सिक्ख हैं और मेरे भाई हैं ॥ २ ॥ पउड़ी॥ सच्चे प्रभु की महिमा सच्ची है जिसकी मैं प्रशंसा करता हूँ और जिसका गुणानुवाद करता हूँ । मैं सच्चे प्रभु की

किनै न पाई ॥ सचु सचा रसु जिनी चखिआ से त्रिपति रहे आघाई ॥ इहु हरि रसु सेई जाणदे जिउ गूंगै मिठिआई खाई ॥ गुरि पूरै हरि प्रभु सेविआ मनि वजी वाधाई ॥ १८ ॥ सलोक मः ४ ॥ जिना अंदरि उमरथल सेई जाणनि सूलीआ ॥ हरि जाणहि सेई बिरहु हउ तिन विटहु सद घुमि घोलीआ ॥ हरि मेलहु सजणु पुरखु मेरा सिरु तिन विटहु तल रोलीआ ॥ जो सिख गुर कार कमावहि हउ गुलमु तिना का गोलीआ ॥ हरि रंगि चलूलै जो रते तिन भिनी हरि रंगि चोलीआ ॥ करि किरपा नानक मेलि गुरु पहि सिरु वेचिआ मोलीआ ॥ १ ॥ मः ४ ॥ अउगणी भरिआ सरीरु है किउ संतहु निरमलु होइ ॥ गुरमुखि गुण वेहाझीअहि मलु हउमै कढै धोइ ॥ सचु वणंजहि रंग सिउ सचु सउदा होइ ॥ तोटा मूलि न आवई लाहा हरि भावै सोइ ॥ नानक तिन सचु वणंजिआ जिना धुरि लिखिआ परापति होइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सालाही सचु सालाहणा सचु सचा पुरखु निराले ॥ सचु सेवी सचु मनि वसै सचु सचा हरि रखवाले ॥ सचु सचा जिनी अराधिआ से जाइ रले सच नाले ॥ सचु सचा जिनी न सेविआ से मनमुख मूड़ बेताले ॥ ओह आलु पतालु मुहहु बोलदे जिउ पीतै मदि मतवाले ॥ १९ ॥ सलोक महला ३ ॥ गउड़ी रागि सुलखणी जे खसमै चिति करेइ ॥ भाणै चलै सतिगुरू कै ऐसा सीगारु करेइ ॥ सचा सबदु भतारु है सदा सदा रावेइ ॥ जिउ उबली मजीठै रंगु गहगहा तिउ सचे नो जीउ देइ ॥ रंगि चलूलै अति रती सचे सिउ लगा नेहु ॥ कूड़ु ठगी गुझी ना रहै कूड़ु मुलंमा पलेटि धरेहु ॥ कूड़ी करनि वडाईआ कूड़े सिउ लगा नेहु ॥ नानक सचा आपि है आपे नदरि करेइ ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सतसंगति महि हरि उसतति है संगि साधू मिले पिआरिआ ॥ ओइ पुरख प्राणी धंनि जन हहि उपदेसु करहि परउपकारिआ ॥ हरि नामु द्रिड़ावहि हरि नामु सुणावहि हरि नामे जगु निसतारिआ ॥ गुर वेखण कउ सभु कोई लोचै नव खंड जगति नमसकारिआ ॥ तुधु आपे आपु रखिआ सतिगुर विचि गुरु आपे तुधु सवारिआ ॥ तू आपे पूजहि पूज करावहि सतिगुर कउ सिरजणहारिआ ॥

प्रशंसा करता हूँ परन्तु उस सत्य रूपी परमात्मा का मोल कोई नहीं आंक सकता । जो सच्चे के सत्य रूपी रस का पान कर लेते हैं वे तृप्त होकर अघा जाते हैं । गूँगे द्वारा मिठाई खाने के समान प्रभु–रस के स्वाद को केवल चखने वाले ही अनुभव करते हैं । पूर्ण गुरु प्रभु का सुमिरन करता है और उसके मन में सदैव आनन्द के वाद्य वजते रहते हैं ॥ १८ ॥ श्लोक महला ४ ॥ जिनके अन्दर प्रभु वियोग का फोड़ा है वही इसके दर्द को जानते हैं । मैं सदैव उन पर बलिहारी जाता हूँ जो अपने मन में प्रभु–वियोग की पीड़ा को अनुभव करते हैं । हे प्रभु, मुझे गुरु रूपी मित्र से मिला दे ताकि मेरा सिर उसके चरणों के नीचे लोटता रहे । जो सिक्ख गुरु की चाकरी करते हैं मैं गुरु के उन सेवकों का भी सेवक हूँ। जो प्रभु के प्रेम रूपी रंग में रंगे गए हैं उनका शरीर रूपी वस्त्र भी प्रभु–प्रेम में रंग गया है । हे प्रभु, नानक को गुरु से मिला दे जिसके पास मैंने अपने सिर को भी प्रेम रूपी मूल्य लेकर वेच दिया है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ हे सन्त पुरुषो, यह शरीर अवगुणों से भरा है; यह निर्मल कैसे हो सकता है । गुरमुख वनकर गुणों को अपनाया जाता है और वे गुण अहंकार की मैल को धो देते हैं । सच्चे प्रभु को प्रेम–भाव से मोल ले लेने का व्यापार सच्चा व्यापार है क्योंकि इसमें ज़रा सी भी हानि नहीं होती और जिस प्रकार प्रभु चाहता है जीव वैसा ही लाभ कमाता है । हे नानक, केवल वे ही सत्य का व्यापार करते हैं जिनका प्रारम्भ से ही लेख लिखा होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मैं प्रशंसा करने योग्य सत्य–प्रभु की प्रशंसा करता हूँ क्योंकि वही निराला है और सच्चा वलशाली पुरुष है । सत्य का सुमिरन करने से सत्य मन में आन वसता है और सच्चा प्रभु रखवाला वन जाता है । जिन्होंने सत्य रूपी प्रभु का सुमिरन किया वे उसी सत्य में ही लीन हो गए हैं । जिन्होंने सत्य रूपी प्रभु का सुमिरन नहीं किया वे मनमुख गँवार है और वेतालों के समान हैं । शराव पीकर मदमस्त वने व्यक्ति की तरह वे उलटा–पुलटा वोलते रहते हैं ॥ १९ ॥ श्लोक महला ३ ॥ गउड़ी राग भला है यदि इसमें व्यक्ति अपने मालिक प्रभु को याद रखता है । वह गुरु की रज़ा में चले यही सिंगार उसके लिए उचित है । सच्चा शव्द उसका पति है; उसे सदैव उसी के साथ रमण करना चाहिए । जैसे पूर्ण रूप से उवल चुके मजीट का गहरा लाल रंग होता है, प्रभु के प्रति सम्पर्ण करने से व्यक्ति की आत्मा का रंग भी वैसा ही हो जाता है। सच्चे प्रभु से प्रेम करने से जीव की आत्मा उसके रंग में पूरी तरह रंग जाती है । झूठ और छल वैसे ही छिपे नहीं रहते जैसे धातु पर चढ़ा हुआ मुलम्मा कुछ समय वाद ही उतर जाता है । जिनका प्यार झूठ के साथ लगा हुआ है उनका गुणानुवाद भी झूठा है । हे नानक, केवल प्रभु स्वयं ही सच्चा है और वह स्वयं ही कृपा–दृष्टि करता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ सद्संगत में प्रभु के यश का गायन होता है और वह साधु पुरुषों की संगत में ही प्राप्त होता है । प्राणियों में वह व्यक्ति धन्य है जो परोपकार की शिक्षा देता है । वह प्रभु–नाम का ही सुमिरन करता है, प्रभु नाम ही सुनवाता है और प्रभु–नाम के माध्यम से ही जगत् का उद्धार करता है । गुरु को देखने की इच्छा सब में ही वनी रहती है और नव–खण्ड जगत् उस गुरु को ही नमस्कार करता है । हे प्रभु, तूने अपने आप को सच्चे गुरु में टिकाया हुआ है और सच्चे गुरु को तूने ही संवारा हुआ है । हे कर्ता प्रभु, तू स्वयं भी वन्दना करता है और अन्यों से भी गुरु की वन्दना करवाता है ।

कोई विछुड़ि जाइ सतिगुरू पासहु तिसु काला मुहु जमि मारिआ ॥ तिसु अगै पिछै ढोई नाही गुरसिखी मनि वीचारिआ ॥ सतिगुरू नो मिले सेई जन उबरे जिन हिरदै नामु समारिआ ॥ जन नानक के गुरसिख पुतहहु हरि जपिअहु हरि निसतारिआ ॥ २ ॥ महला ३ ॥ हउमै जगतु भुलाइआ दुरमति बिखिआ बिकार ॥ सतिगुरु मिलै त नदरि होइ मनमुख अंध अंधिआर ॥ नानक आपे मेलि लए जिस नो सबदि लाए पिआरु ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ सचु सचे की सिफति सलाह है सो करे जिसु अंदरु भिजै ॥ जिनी इक मनि इकु अराधिआ तिन का कंधु न कबहू छिजै ॥ धनु धनु पुरख साबासि है जिन सचु रसना अंम्रितु पिजै ॥ सचु सचा जिन मनि भावदा से मनि सची दरगह लिजै ॥ धनु धंनु जनमु सचिआरीआ मुख उजल सचु करिजै ॥ २० ॥ सलोक मः ४ ॥ साकत जाइ निवहि गुर आगै मनि खोटे कूड़ि कूड़िआरे ॥ जा गुरु कहै उठहु मेरे भाई बहि जाहि घुसरि बगुलारे ॥ गुरसिखा अंदरि सतिगुरु वरतै चुणि कढे लधोवारे ॥ ओइ अगै पिछै बहि मुहु छपाइनि न रलनी खोटेआरे ॥ ओना दा भखु सु ओथै नाही जाइ कूड़ु लहनि भेडारे ॥ जे साकतु नरु खावाईऐ लोचीऐ बिखु कढै मुखि उगलारे ॥ हरि साकत सेती संगु न करीअहु ओइ मारे सिरजणहारे ॥ जिस का इहु खेलु सोई करि वेखै जन नानक नामु समारे ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सतिगुरु पुरखु अगंमु है जिस अंदरि हरि उरिधारिआ ॥ सतिगुरू नो अपड़ि कोइ न सकई जिसु वलि सिरजणहारिआ ॥ सतिगुरू का खड़गु संजोउ हरि भगति है जितु कालु कंटकु मारि विडारिआ ॥ सतिगुरू का रखणहारा हरि आपि है सतिगुरू कै पिछै हरि सभि उबारिआ ॥ जो मंदा चितवै पूरे सतिगुरू का सो आपि उपावणहारै मारिआ ॥ एह गल होवै हरि दरगह सचे की जन नानक अगमु वीचारिआ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचु सुतिआ जिनी अराधिआ जा उठे ता सचु चवे ॥ से विरले जुग महि जाणीअहि जो गुरमुखि सचु रवे ॥ हउ बलिहारी तिन कउ जि अनदिनु सचु लवे ॥ जिन मनि तनि सचा भावदा से सची दरगह गवे ॥ जनु नानकु बोलै सचु नामु सचु सचा सदा नवे ॥ २१ ॥ सलोकु मः ४ ॥ किआ सवणा किआ जागणा गुरमुखि ते

यदि कोई सच्चे गुरु से बिछुड़ कर अलग हो जाए तो उसका मुँह काला हो जाता है और यम उसे मार देता है। गुरु के सिक्ख मन में यह जानते हैं कि ऐसे व्यक्ति को आगे पीछे कोई शरण नहीं मिलेगी। जिन्होंने हृदय में प्रभु–नाम को संभाला है और सच्चे गुरु से मेल रक्खा है उन्हीं का उद्धार होता है। दास नानक गुरु के सिक्खो और पुत्रो, तुम प्रभु का सुमिरन करो क्योंकि प्रभु ही पार उतारा करेगा ॥ २ ॥ महला ३ ॥ अहंकार, दुर्मति और विषय–विकारों ने संसार को भुलावे में डाला हुआ है। अन्धकार में रहने वाले अन्धे मनमुख को यदि सच्चा गुरु मिल जाए तो उस पर कृपा–दृष्टि हो जाती है। हे नानक, प्रभु उन लोगों को अपने साथ मिला लेता है जिन्हें वह अपने शब्द का प्रेम लगा देता है ॥ ३ ॥ पउड़ी ॥ जो अन्दर से उसके प्रेम में भीगा हुआ है, प्रभु की स्तुति और उस सच्चे का गुणानुवाद केवल वही करता है। जो एकाग्र मन से एक प्रभु का सुमिरन करते हैं उनका शरीर कभी कमजोर नहीं होता। वह परम बलशाली प्रभु धन्य है और वह व्यक्ति भी शाबाश के योग्य है जिसने सत्य रूपी जीभ के माध्यम से अमृतपान किया है। जिन्हें मन से वह सच्चा प्रभु भा जाता है वे सच्चे दरबार में स्वीकृत हो जाते हैं। ऐसे सत्यशील व्यक्तियों का जन्म धन्य है जिनके मुख को सत्य रूपी प्रभु उज्जवल करता है ॥ २० ॥ श्लोक महला ४ ॥ प्रभु से टूटे हुए लोग गुरु के आगे प्रणाम तो करते हैं पर उनका चित्त खोटा और झूठ ही झूठ होता है। जब गुरु यह कहता है कि हे भाईयो, उठो और कुछ करो तो वे बगुले की तरह इधर–उधर बीच में ही घुसकर बैठ जाते हैं। गुरु के सिक्खों में सच्चा गुरु स्वयं बसता है और वह ऐसे मौकापरस्तों को चुन चुन कर बाहर निकाल देता है। वह आगे पीछे वैठकर वेशक मुँह छुपाते हैं परन्तु खोटे व्यक्ति अच्छे लोगों के साथ मिल नहीं सकते। उनका खाद्य पदार्थ वहाँ नहीं होता और वे भेड़ों की तरह झूठे पदार्थों को ढूँढ लेते हैं। यदि अधार्मिक व्यक्ति को खिलाना भी चाहें तो वह खाकर मुँह से जहर ही उगलेगा। हे प्रभु, मुझे ऐसे प्रभु से टूटे हुए व्यक्ति की संगत ना करनी पड़े क्योंकि वह उस कर्ता प्रभु का दुत्कारा हुआ है। जिसका यह खेल है वही इसको वनाता और खेलता है। सेवक नानक तो केवल प्रभु के नाम का सुमिरन करता है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ सच्चा गुरु अगम्य पुरुष है जिसने मन में प्रभु को टिकाया हुआ है। सच्चे गुरु की वरावरी कोई नहीं कर सकता क्योंकि उसके पक्ष में स्वयं प्रभु है। सच्चे गुरु का खड़ग और कवच प्रभु की वह भक्ति है जिसने मौत को भी मारकर परे फेंक दिया है। सच्चे गुरु का रक्षक प्रभु स्वयं है और सच्चे गुरु के कारण ही प्रभु सब का उद्धार कर देता है। जो सच्चे गुरु का बुरा सोचता है सृष्टि कर्त्ता प्रभु स्वयं ही उसे नष्ट कर देता है। यह वचन प्रभु के सच्चे दरबार का वचन है। सेवक नानक ने इस अगम्य तथ्य पर चिन्तन किया है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो सोते हुए भी सत्य–प्रभु की आराधना करते हैं वे उठकर भी सत्य का उच्चारण करते हैं। जो इस संसार में गुरमुख बनकर सत्य में रमण करते हैं वे बिरले पुरुष ही हैं। मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ जो दिन–रात सत्य में लीन बने रहते हैं। जिन्हें मन–तन से सच्चा प्रभु भाता है वे ही प्रभु के सच्चे दरबार में पहुँच पाते हैं। दास नानक सच्चे नाम का उच्चारण करता है क्योंकि वह सच्चा प्रभु ही सदैव नवीन और प्रणव है ॥ २१ ॥ श्लोक महला ४ ॥ क्या सोना और क्या जागना है जो गुरमुख बन गया है वही स्वीकार

परवाणु ॥ जिना सासि गिरासि न विसरै से पूरे पुरख परधान ॥ करमी सतिगुरु पाईऐ अनदिनु लगै धिआनु ॥ तिन की संगति मिलि रहा दरगह पाई मानु ॥ सउदे वाहु वाहु उचरहि उठदे भी वाहु करेनि ॥ नानक ते मुख उजले जि नित उठि संमालेनि ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सतिगुरु सेवीऐ आपणा पाईऐ नामु अपारु ॥ भउजलि डुबदिआ कढि लए हरि दाति करे दातारु ॥ धंनु धंनु से साह है जि नामि करहि वापारु ॥ वणजारे सिख आवदे सबदि लघावणहारु ॥ जन नानक जिन कउ क्रिपा भई तिन सेविआ सिरजणहारु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचु सचे के जन भगत हहि सचु सचा जिनी अराधिआ ॥ जिन गुरमुखि खोजि ढंढोलिआ तिन अंदरहु ही सचु लाधिआ ॥ सचु साहिबु सचु जिनी सेविआ कालु कंटकु मारि तिनी साधिआ ॥ सचु सचा सभ दू वडा है सचु सेवनि से सचि रलाधिआ ॥ सचु सचे नो साबासि है सचु सचा सेवि फलाधिआ ॥ २२ ॥ सलोक मः ४ ॥ मनमुखु प्राणी मुगधु है नामहीण भरमाइ ॥ बिनु गुर मनूआ ना टिकै फिरि फिरि जूनी पाइ ॥ हरि प्रभु आपि दइआल होहि तां सतिगुरु मिलिआ आइ ॥ जन नानक नामु सलाहि तू जनम मरण दुखु जाइ ॥ १ ॥ मः ४ ॥ गुरु सालाही आपणा बहु बिधि रंगि सुभाइ ॥ सतिगुर सेती मनु रता रखिआ बणत बणाइ ॥ जिहवा सालाहि न रजई हरि प्रीतम चितु लाइ ॥ नानक नावै की मनि भुख है मनु त्रिपतै हरि रसु खाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सचु सचा कुदरति जाणीऐ दिनु राती जिनि बणाईआ ॥ सो सचु सलाही सदा सदा सचु सचे कीआ वडिआईआ ॥ सालाही सचु सलाह सचु सचु कीमति किनै न पाईआ ॥ जा मिलिआ पूरा सतिगुरू ता हाजरु नदरी आईआ ॥ सचु गुरमुखि जिनी सलाहिआ तिना भुखा सभि गवाईआ ॥ २३ ॥ सलोक मः ४ ॥ मै मनु तनु खोजि खोजेदिआ सो प्रभु लधा लोड़ि ॥ विसटु गुरू मै पाइआ जिनि हरि प्रभु दिता जोड़ि ॥ १ ॥ मः ३ ॥ माइआधारी अति अंना बोला ॥ सबदु न सुणई बहु रोल घचोला ॥ गुरमुखि जापै सबदि लिव लाइ ॥ हरि नामु सुणि मंने हरि नामि समाइ ॥ जो तिसु भावै सु करे कराइआ ॥ नानक वजदा जंतु वजाइआ ॥ २ ॥

किया जाता है । जिन्हें प्रत्येक श्वास् और ग्रास के साथ प्रभु विस्मृत नहीं होता वे ही पूर्ण और प्रमुख व्यक्ति माने जाते हैं । प्रभु कृपा से ही सच्चा गुरु पाया जाता है और सदैव प्रभु में ही ध्यान लगा रहता है । मैं ऐसे व्यक्तियों की संगत में ही बना रहूँ और परमात्मा के दरबार में सम्मान प्राप्त करूँ । सोते समय भी वे प्रभु के समक्ष आश्चर्यचकित बने रहते हैं और उठते हुए भी उसी का यश गायन करते हैं । हे नानक, उन व्यक्तियों के चेहरे उज्जवल बने रहते है जो सदैव प्रभु–नाम का सुमिरन करते रहते हैं ॥ १ ॥ महला ४ ॥ सच्चे गुरु की सेवा करने से अपरंपर प्रभु का नाम प्राप्त हो जाता है । दाता सद्गुरु इस प्रकार का दान देता है कि संसार–सागर में डूबते हुए व्यक्ति को बाहर निकाल लेता है । साहूकार रूपी वे भक्त धन्य हैं जो प्रभु–नाम का सौदा खरीदकर व्यापार करते हैं । ऐसे व्यापारी सिक्ख आते हैं जिन्हें शब्द–गुरु पार उतार देता है । हे नानक, जिन पर कृपा होती हैं वे ही सृष्टि के कर्त्ता प्रभु का सुमिरन करते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ वे ही सच से भी सच्चे भक्त है जिन्होंने परम सत्य की आराधना की है । जो गुरमुख बनकर सत्य की खोज करते हैं उन्हें अन्तरात्मा में ही सत्य मिल जाता है । जिन्होंने सच्चे प्रभु का सुमिरन किया है उन्होंने काल रूपी काँटे को भी मारकर सीधा कर लिया है । सत्य और सत्य–प्रभु सबसे बड़ा है; जो सत्य का सुमिरन करते हैं वे सत्य में ही लीन हो जाते हैं । सत्य–प्रभु धन्य है और सत्य–प्रभु के सुमिरन से ही आदमी फलता–फूलता है ॥ २२ ॥ श्लोक महला ४ ॥ मनमुख व्यक्ति मूर्ख है; नाम–विहीन होकर वह भटकता रहता है । उसका मन गुरु के बगैर एकाग्र नहीं होता और वह पुनः पुनः योनियों में पड़ता रहता है । जब प्रभु स्वयं दयालु होता है तो सच्चा गुरु आ मिलता है । हे दास नानक, तू प्रभु–नाम का गुणानुवाद कर जिससे तेरा जन्म–मरण का दुख मिट जाएगा ॥ १ ॥ महला ४ ॥ अनेकों प्रकार से मैं अपने गुरु का गुणानुवाद करता हूँ । सच्चे–गुरु में मेरा मन लीन हो गया है और गुरु ने ही इस मन को सुन्दर बना रखा है । प्रभु की स्तुति करते हुए मेरी जीभ तृप्त नहीं होती । सच्चे गुरु ने ही मेरा मन प्रियतम प्रभु में लीन कर दिया है । हे नानक, मन को प्रभु–नाम की भूख है और मन हरि–रस पान करके ही तृप्त होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सच्चा–प्रभु, जिसने दिन–रात बनाए हैं उसे उसके बल से ही जाना जाता है । मैं सदैव उस सत्य की कीर्ति का गायन करता हूँ क्योंकि उस सत्य प्रभु का बड़प्पन भी सत्य है । उसकी सच्ची प्रशंसा प्रशंसनीय है और उस सत्य प्रभु की कीमत कोई भी नहीं आंक सका है । जब पूर्ण सच्चा गुरु मिल जाता है तो उसका बड़प्पन प्रत्यक्ष नज़र आने लगता है । जिसने गुरमुख बनकर सत्य का यश गायन किया है उसकी सभी प्रकार की भूख समाप्त हो जाती है ॥ २३ ॥ श्लोक महला ४ ॥ मन, तन को खोजते–खोजते मैंने प्रभु को ढूँढ लिया है । उस गुरु को भी मैंने बिचौलिये के रूप में पा लिया है जिसने मुझे प्रभु के साथ जोड़ दिया है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ धन–सम्पदा में लीन व्यक्ति महा अन्धा और बहरा होता है । वह हेरा–फेरियां तो बहुत करता है परन्तु प्रभु–नाम को नहीं सुनता । गुरमुख व्यक्ति की यह पहचान हो जाती है कि वह मन में सुरति को लीन करता है । वह प्रभु–नाम को सुनता है, मानता है और अन्ततः प्रभु–नाम में ही लीन हो जाता है । जो उसे अच्छा लगता है वह प्रभु वही करवाता है और हे नानक, जीव रूपी बाजा वैसा ही बजता है जैसा प्रभु उसे बजाता है ॥ २ ॥

पउड़ी ॥ तू करता सभु किछु जाणदा जो जीआ अंदरि वरतै ॥ तू करता आपि अगणतु है सभु जगु विचि गणतै ॥ सभु कीता तेरा वरतदा सभ तेरी बणतै ॥ तू घटि घटि इकु वरतदा सचु साहिब चलतै ॥ सतिगुर नो मिले सु हरि मिले नाही किसै परतै ॥ २४ ॥ सलोकु मः ४ ॥ इहु मनूआ द्रिड़ु करि रखीऐ गुरमुखि लाईऐ चितु ॥ किउ सासि गिरासि विसारीऐ बहदिआ उठदिआ नित ॥ मरण जीवण की चिंता गई इहु जीअड़ा हरि प्रभ वसि ॥ जिउ भावै तिउ रखु तू जन नानक नामु बखसि ॥ १ ॥ मः ३ ॥ मनमुखु अहंकारी महलु न जाणै खिनु आगै खिनु पीछै ॥ सदा बुलाईऐ महलि न आवै किउ करि दरगह सीझै ॥ सतिगुर का महलु विरला जाणै सदा रहै कर जोड़ि ॥ आपणी क्रिपा करे हरि मेरा नानक लए बहोड़ि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सा सेवा कीती सफल है जितु सतिगुर का मनु मंने ॥ जा सतिगुर का मनु मंनिआ ता पाप कसंमल भंने ॥ उपदेसु जि दिता सतिगुरू सो सुणिआ सिखी कंने ॥ जिन सतिगुर का भाणा मंनिआ तिन चड़ी चवगणि वंने ॥ इह चाल निराली गुरमुखी गुर दीखिआ सुणि मनु भिंने ॥ २५ ॥ सलोकु मः ३ ॥ जिनि गुरु गोपिआ आपणा तिसु ठउर न ठाउ ॥ हलतु पलतु दोवै गए दरगह नाही थाउ ॥ ओह वेला हथि न आवई फिरि सतिगुर लगहि पाइ ॥ सतिगुर की गणतै घुसीऐ दुखे दुखि विहाइ ॥ सतिगुरु पुरखु निरवैरु है आपे लए जिसु लाइ ॥ नानक दरसनु जिना वेखालिओनु तिना दरगह लए छडाइ ॥ १ ॥ मः ३ ॥ मनमुखु अगिआनु दुरमति अहंकारी ॥ अंतरि क्रोधु जूऐ मति हारी ॥ कूड़ु कुसतु ओहु पाप कमावै ॥ किआ ओहु सुणै किआ आखि सुणावै ॥ अंना बोला खुइ उझड़ि पाइ ॥ मनमुखु अंधा आवै जाइ ॥ बिनु सतिगुर भेटे थाइ न पाइ ॥ नानक पूरबि लिखिआ कमाइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन के चित कठोर हहि से बहहि न सतिगुर पासि ॥ ओथै सचु वरतदा कूड़िआरा चित उदासि ॥ ओइ वलु छलु करि झति कढदे फिरि जाइ बहहि कूड़िआरा पासि ॥ विचि सचे कूड़ु न गडई मनि वेखहु को निरजासि ॥ कूड़िआर कूड़िआरी जाइ रले सचिआर सिख बैठे सतिगुर पासि ॥ २६ ॥

पउड़ी ॥ हे कर्त्ता प्रभु, जो जीवों के चित्त में हो रहा है तू वह सब कुछ जानता है । हे कर्त्ता प्रभु, तू स्वयं गणनाओं से परे है जबकि सारा संसार गणनाओं में ही पड़ा हुआ है । तेरा किया हुआ ही सब होता है और सब तेरी ही रचना है । प्रत्येक शरीर में एक तू ही कार्यशील है और हे सत्य–प्रभु, यह सब तेरे ही कौतुक हैं । जो सच्चे गुरु से मिल गया वह प्रभु से मिल जाता है और उसे कोई भी पीछे नहीं मोड़ता ॥ २४ ॥ श्लोक महला ४ ॥ हे जीव, तू मन को स्थिर वना और गुरमुख वनकर प्रभु में चित्त लगा । उस प्रभु को उठते–बैठते, श्वास–ग्रास के साथ भला क्यों भुलाया जाए । अव यह जीव जव प्रभु के वश में ही हो गया है तो इसके जीवन मरण की चिन्ता समाप्त हो गई है । हे प्रभु, तुझे जैसा अच्छा लगे वैसे ही मेरी रक्षा कर और इस दास नानक को अपना नाम प्रदान कर ॥ १ ॥ महला ३ ॥ अहंकारी मनमुख व्यक्ति प्रभु के स्थान को नहीं जानता और क्षण भर में कभी आगे दौड़ता है और कभी पीछे दौड़ता है । प्रभु–स्थान में सदैव बुलाए जाने पर भी वह नहीं आता तो वह भला प्रभु–दरबार में कैसे स्वीकृत होगा । सच्चे गुरु के दरबार को कोई ऐसा बिरला व्यक्ति ही जानता है जो सदैव करबद्ध बना रहता है अर्थात विनम्र बना रहता हैं । हे नानक, यदि प्रभु कृपा करे तो वह जीव को मोड़कर प्रभु–स्थान पर ले आता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ वही सेवा सफल हैं जिससे सच्चे गुरु का मन प्रसन्न हो जाता है । जब सच्चे गुरु का मन प्रसन्न हो जाता है तव पाप और बुरा व्यवहार भाग खड़े होते हैं । सच्चा गुरु जो उपदेश देता है सिक्ख उसे कान लगाकर सुनते हैं । जिन्होंने सच्चे गुरु की आज्ञा को मान लिया है उन पर प्यार का रंग चार गुना और चढ़ जाता है । गुरमुख व्यक्तियों की यही निराली रीति है कि गुरु की शिक्षा को सुनकर उनका मन खुशी में झूम उठता है ॥ २५ ॥ श्लोक महला ३ ॥ जो अपने गुरु को छिपाता है उसे कोई ठौर–ठिकाना नहीं मिलता । इस लोक और परलोक वह दोनो को ही गँवा लेता है और प्रभु दरबार में भी उसे स्थान नहीं मिलता । वह अवसर फिर हाथ नहीं आता जब सच्चे गुरु के चरणों का स्पर्श किया जाता है। सच्चे गुरु की गिनती में न आया हुआ व्यक्ति दुखों में ही विनष्ट हो जाता है । सच्चा गुरु वैर–रहित एवं बलशाली होता है और जिसे स्वयं चाहता है अपने साथ मिला लेता है । हे नानक, जिनको वह प्रभु के दर्शन करा देता है उनको प्रभु–दरबार में ही वह सज़ा से बचा लेता है ॥ १ ॥ महला ३ ॥ मनमुख व्यक्ति अज्ञानी, दुर्मति वाला और अहंकारी होता है । उसके अन्दर क्रोध होता है और वह जुए की तरह अपनी बुद्धि को हार जाता है । वह झूठ और पाप की कमाई करता है । वह क्या सुन सकता है और अन्य लोगों को भी क्या सुना सकता है । अन्धा, बहरा होकर और रास्ता खोकर वह जंगलों में भटकता है । अन्धा मनमुख व्यक्ति आता–जाता ही रहता है और सच्चे गुरु को मिले बिना उसे कोई भी स्थान नहीं मिलता । हे नानक, वह अपने पूर्व के लिखे लेखों के अनुसार ही कर्म करता रहता है ॥ २॥ पउड़ी ॥ जिनके चित्त कठोर हैं वे सच्चे गुरु के पास नहीं बैठते क्योकि वहाँ तो केवल सत्य ही चलता है और झूठे व्यक्तियों के चित्त वहाँ उदास बने रहते हैं । वे धोखे–फरेब के साथ अपना समय बिता लेते हैं और पुनः झूठे व्यक्तियों के पास ही जा बैठते हैं । हे मेरे मन, तू इस बात का निर्णय कर ले कि सत्य में झूठ का मेल नहीं हो सकता । झूठे झूठों के साथ मिल जाते हैं और सत्याचरण करने वाले सिक्ख सच्चे गुरु के पास आ बैठते है ॥ २६॥

सलोक मः ५ ॥ रहदे खुहदे निंदक मारिअनु करि आपे आहरु ॥ संत सहाई नानका वरतै सभ जाहरु ॥ १ ॥ मः ५ ॥ मुंढहु भुले मुंढ ते किथै पाइनि हथु ॥ तिंनै मारे नानका जि करण कारण समरथु ॥ २ ॥ पउड़ी ५ ॥ लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी ॥ तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी ॥ संन्ही देन्हि विखंम थाइ मिठा मदु माणी ॥ करमी आपो आपणी आपे पछुताणी ॥ अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी ॥ २७ ॥ सलोक मः ५ ॥ सेवक सचे साह के सेई परवाणु ॥ दूजा सेवनि नानका से पचि पचि मुए अजाण ॥ १ ॥ मः ५ ॥ जो धुरि लिखिआ लेखु प्रभ मेटणा न जाइ ॥ राम नामु धनु वखरो नानक सदा धिआइ ॥ २ ॥ पउड़ी ५ ॥ नाराइणि लइआ नाठूंगड़ा पैर किथै रखै ॥ करदा पाप अमितिआ नित विसो चखै ॥ निंदा करदा पचि मुआ विचि देही भखै ॥ सचै साहिब मारिआ कउणु तिस नो रखै ॥ नानक तिसु सरणागती जो पुरखु अलखै ॥ २८ ॥ सलोक मः ५ ॥ नरक घोर बहु दुख घणे अकिरतघणा का थानु ॥ तिनि प्रभि मारे नानका होइ होइ मुए हरामु ॥ १ ॥ मः ५ ॥ अवखध सभे कीतिअनु निंदक का दारू नाहि ॥ आपि भुलाए नानका पचि पचि जोनी पाहि ॥ २ ॥ पउड़ी ५ ॥ तुसि दिता पूरै सतिगुरू हरि धनु सचु अखुटु ॥ सभि अंदेसे मिटि गए जम का भउ छुटु ॥ काम क्रोध बुरिआईआं संगि साधू तुटु ॥ विणु सचे दूजा सेवदे हुइ मरसनि बुटु ॥ नानक कउ गुरि बखसिआ नामै संगि जुटु ॥ २९ ॥ सलोक मः ४ ॥ तपा न होवै अंद्रहु लोभी नित माइआ नो फिरै जजमालिआ ॥ अगो दे सदिआ सतै दी भिखिआ लए नाही पिछो दे पछुताइ कै आणि तपै पुतु विचि बहालिआ ॥ पंच लोग सभि हसण लगे तपा लोभि लहरि है गालिआ ॥ जिथै थोड़ा धनु वेखै तिथै तपा भिटै नाही धनि बहुतै डिठै तपै धरमु हारिआ ॥ भाई एहु तपा न होवी बगुला है बहि साध जना वीचारिआ ॥ सत पुरख की तपा निंदा करै संसारै की उसतती विचि होवै एतु दोखै तपा दयि मारिआ ॥ महा पुरखां की निंदा का वेखु जि तपे नो फलु लगा सभु गइआ तपे का घालिआ ॥ बाहरि बहै पंचा विचि तपा सदाए ॥ अंदरि बहै तपा

श्लोक महला ५ ॥ प्रभु स्वयं ही उपक्रम करके बचे–खुचे निन्दकों को मार डालता है । हे नानक, सन्त पुरुषों का सहायक प्रभु सर्वत्र प्रत्यक्ष होकर क्रियाशील बना रहता है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ जो प्रारम्भ से ही प्रभु रूपी मूल को भुला बैठे हैं वे आसरा लेने के लिए भला कहाँ हाथ डालेंगे । हे नानक, उनको वही मारता है जो सब कुछ करने कराने में समर्थ है ॥ २ ॥ पउड़ी ५ ॥ हाथ में फन्दे लेकर लोग अन्यों को मारने के लिए निकल पड़ते हैं परन्तु हे जीव, प्रभु सब कुछ जानता है । व्यक्ति छिप छिप कर पराई स्त्रियों को भी देखता है; ऐसे व्यक्ति विषम एवं दुर्गम स्थानों पर भी सेंध लगाते हैं और शराब को मीठा पानी समझकर पीते हैं । अपने अपने इन कर्मों के लिए वे आप ही पछताएगें । मौत का फरिशता इज़राइल उन्हें कोल्हु में तिलों को पेरे जाने की तरह कुचल मसल देगा ॥ २७ ॥ श्लोक महला ५ ॥ सच्चे साहूकार प्रभु के सेवक ही स्वीकृत होते हैं । हे नानक, जो अन्य किसी का सुमिरन करते हैं वे अनजान लोग सड़ गल कर मर जाते हैं ॥ १ ॥ जो लेख प्रारम्भ से ही प्रभु ने लिख दिया है उसे मिटाया नहीं जा सकता । राम–नाम रूपी धन ही वह पूँजी है हे नानक, जिसका तू सदैव सुमिरन कर ॥ पउड़ी ५ ॥ जिसे प्रभु ने लात मारकर दुत्कार दिया है वह भला अपना पाँव कहाँ टिकाएगा ॥ ऐसा व्यक्ति अनगिनत पाप करता है और सदा विष ही खाता रहता है । वह निन्दा करता हुआ ही मर–खप जाता है और शरीर में रहते हुए भी जलता रहता है । जिसे सच्चे प्रभु ने ही मार डाला है उसकी रक्षा भला कौन करेगा । नानक तो उसकी शरण में है जो अदृष्ट बलशाली प्रभु है ॥ २८ ॥ श्लोक महला ५ ॥ नर्क में घोर दुख ही दुख हैं और यह कृतघ्न लोगों के रहने का स्थान हैं । ऐसे व्यक्तियों को प्रभु ने आध्यात्मिक तौर पर मारकर रखा हुआ है और हे नानक, वह वहुत ही दयनीय अवस्था में जन्मते–मरते रहते हैं ॥ १ ॥ महला ५ ॥ सभी औषधियाँ प्रयोग में लाकर देख ली गई हैं परन्तु निन्दक का कोई इलाज नहीं है । जिन्हें प्रभु स्वयं भटका देता है, हे नानक, वे योनियों मे पड़े हुए गलते–सड़ते रहते है ॥ २ ॥ पउड़ी ५ ॥ अपनी कृपा से सच्चे गुरु ने मुझे प्रभु रूपी धन का अक्षय भण्डार दे दिया है । मेरी सारी चिन्ताएं मिट गई हैं और मेरा यम का भय भी समाप्त हो गया है । साधसंगत मे आकर काम, क्रोध रूपी बुराईयां मिट जाती हैं । सत्य–प्रभु के बिना जो दूसरे किसी का भी सुमिरन करते हैं वे जन्मते ही मर जाते हैं । गुरु ने नानक को क्षमा कर दिया है और वह अब प्रभु–नाम के साथ ही जुड़ गया है ॥ २९ ॥ श्लोक महला ४ ॥ वह अन्दर से तपस्वी नहीं होता जो मन मे लोभ रखता है और कोढ़ियों की तरह पैसे–रुपये के पीछे भागता फिरता है । पहले वुलाने पर सत्य रूपी दान उसने नहीं लिया परन्तु वाद मे पछताकर उसने अपने सेवक को अपने स्थान पर स्थापित कर दिया है । गाँव के पंच लोग सब यह सोचकर हँसने लगे कि यह झूठा तपस्वी लोभ की लहर मे फँसकर नष्ट हो गया है । ऐसा तपस्वी जहाँ थोड़ा धन देखता है वहाँ उसके पास नहीं जाता परन्तु अधिक धन को देखकर वह अपना कर्त्तव्य, कर्म भूल जाता है। हे भाईयो, उन भले व्यक्तियों ने वैठकर यह निर्णय ले लिया कि ऐसा व्यक्ति तपस्वी नहीं होता बगुला भगत होता है । ऐसा तपस्वी सच्चे व्यक्तियों की निन्दा करता है और संसारी व्यक्तियों की स्तुति करता है । ऐसे पाप के कारण ही प्रभु ऐसे तपस्वी को दुत्कार देता है । महापुरुषों की निन्दा का फल ऐसे तथाकथित तपस्वी को यह लगा कि उसका सारा परिश्रम व्यर्थ हो गया । भले लोगो में बैठकर ऐसा व्यक्ति तपस्वी कहलाता है परन्तु अन्दर बैठकर

पाप कमाए ॥ हरि अंदरला पापु पंचा नो उघा करि वेखालिआ ॥ धरमराइ जम कंकरा नो आखि छडिआ एसु तपे नो तिथै खड़ि पाइहु जिथै महा महां हतिआरिआ ॥ फिरि एसु तपे दै मुहि कोई लगहु नाही एहु सतिगुरि है फिटकारिआ ॥ हरि कै दरि वरतिआ सु नानकि आखि सुणाइआ ॥ सो बूझै जु दयि सवारिआ ॥ १ ॥ मः ४ ॥ हरि भगतां हरि आराधिआ हरि की वडिआई ॥ हरि कीरतनु भगत नित गांवदे हरि नामु सुखदाई ॥ हरि भगतां नो नित नावै दी वडिआई बखसीअनु नित चड़ै सवाई ॥ हरि भगतां नो थिरु घरी बहालिअनु अपणी पैज रखाई ॥ निंदकां पासहु हरि लेखा मंगसी बहु देइ सजाई ॥ जेहा निंदक अपणै जीइ कमावदे तेहो फलु पाई ॥ अंदरि कमाणा सरपर उघड़ै भावै कोई बहि धरती विचि कमाई ॥ जन नानकु देखि विगसिआ हरि की वडिआई ॥ २ ॥ पउड़ी मः ५ ॥ भगत जनां का राखा हरि आपि है किआ पापी करीऐ ॥ गुमानु करहि मूड़ गुमानीआ विसु खाधी मरीऐ ॥ आइ लगे नी दिह थोड़ड़े जिउ पका खेतु लुणीऐ ॥ जेहे करम कमावदे तेवेहो भणीऐ ॥ जन नानक का खसमु वडा है सभना दा धणीऐ ॥ ३० ॥ सलोक मः ४ ॥ मनमुख मूलहु भुलिआ विचि लबु लोभु अहंकारु ॥ झगड़ा करदिआ अनदिनु गुदरै सबदि न करहि वीचारु ॥ सुधि मति करतै सभ हिरि लई बोलनि सभु विकारु ॥ दितै किते न संतोखीअहि अंतरि तिसना बहु अगिआनु अंध्यारु ॥ नानक मनमुखा नालो तुटी भली जिन माइआ मोह पिआरु ॥ १ ॥ मः ४ ॥ जिना अंदरि दूजा भाउ है तिन्हा गुरमुखि प्रीति न होइ ॥ ओहु आवै जाइ भवाईऐ सुपनै सुखु न कोइ ॥ कूड़ु कमावै कूड़ु उचरै कूड़ि लगिआ कूड़ु होइ ॥ माइआ मोहु सभु दुखु है दुखि बिनसै दुखु रोइ ॥ नानक धातु लिवै जोड़ु न आवई जे लोचै सभु कोइ ॥ जिन कउ पोतै पुंनु पइआ तिना गुर सबदी सुखु होइ ॥ २ ॥ पउड़ी मः ५ ॥ नानक वीचारहि संत मुनि जनां चारि वेद कहंदे ॥ भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे ॥ परगट पाहारै जापदे सभि लोक सुणंदे ॥ सुखु न पाइनि मुगध नर संत नालि खहंदे ॥ ओइ लोचनि ओना गुणा नो ओइ अहंकारि सड़ंदे ॥ ओइ

वह अनेकों पाप करता है । प्रभु उसके अन्दर के पापों को नंगा करके भले व्यक्तियों को दिखा देता है । धर्मराज भी अपने दूतों को यह कह रखता है कि ऐसे ढोंगी तपस्वी को वहाँ ले जा फेंकों जहाँ बड़े बड़े हत्यारों को डाला हुआ है । ऐसे तपस्वी के कोई भी मुँह न लगे क्योंकि यह सच्चे गुरु के द्वारा दुत्कारा हुआ है । जो कुछ प्रभु के दरबार में हुआ वही नानक ने सुना दिया है । इसको वही बूझ सकता है जिस पर प्रभु ने कृपा की हो ॥ १ ॥ महला ४ ॥ प्रभु के भक्त प्रभु की आराधना करते हैं और प्रभु के बड़प्पन का ही बखान करते हैं । भक्त लोग सदैव प्रभु की कीर्ति का गायन करते हैं क्योंकि प्रभु–नाम ही सुख देने वाला है । अपने भक्तों को प्रभु सदैव अपने नाम का बड़प्पन प्रदान करता है जो दिन–प्रतिदिन बढ़ता जाता है । प्रभु अपने बिरद की रक्षा करता है और भक्तों को स्थिर आसन पर बैठा देता है । निन्दकों से प्रभु ही हिसाब माँगेगा और उन्हें घोर दण्ड देगा । निन्दक जो अपने मन से करते हैं वैसा ही उसका फल पाते हैं । पर्दे में किया हुआ दुष्कर्म भी लोगों के सामने आ जाता है; बेशक कोई धरती के अन्दर बैठकर भी बुरा काम करे । दास नानक तो प्रभु का बड़प्पन देखकर प्रसन्न हो उठा है ॥ २ ॥ पउड़ी महला ५ ॥ भक्त जनों का रक्षक प्रभु स्वयं है; पापी भला उनका क्या बिगाड़ सकते हैं । अंहकारी व्यक्ति मूर्ख बनकर अहंकार रूपी विष खाकर स्वयं ही मर जाता है । जीवन के थोड़े से दिन जो उसने व्यतीत करने थे वे समाप्त होने को हैं और पके हुए खेत की तरह उसे काट लिया जाएगा । व्यक्ति जैसा काम करता है वैसा ही उसके बारे में कहा जाता है । सेवक नानक का मालिक महान और सबका स्वामी है ॥ ३० ॥ श्लोक महला ४ ॥ ममता, लोभ और अहंकार में ग्रस्त मनमुख व्यक्ति अपने मूल प्रभु को भुला देता है । पचड़ों में पड़ा हुआ उसका प्रत्येक दिन गुज़रता जाता है और वह शब्द का चिन्तन नहीं करता । उनकी सुरति और बुद्धि तो प्रभु ने छीन ली है और अब ऐसे व्यक्ति बुरा ही बोलते हैं । उनके अन्दर अज्ञान का अंधकार और तृष्णा बहुत है जिससे कुछ भी दिए जाने पर वे संतुष्ट नहीं होते । हे नानक, धन दौलत के मोह प्यार में लीन मनमुख व्यक्तियों से तो सम्बन्ध टूटना ही बेहतर है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ जिनके अन्दर द्वैतभाव है उन व्यक्तियों का गुरु की ओर मुख होने पर भी प्रभु से प्रेम नहीं होता । वे आवागमन में भटकते रहते हैं और उन्हें स्वप्न में भी कोई सुख नहीं मिलता । वे झूठ कमाते हैं, झूठ बोलते हैं और झूठ में लीन बने रहने से झूठ ही हो जाते हैं । धन–सम्पदा का मोह सब दुख पैदा करने वाला ही है और इसी दुख में रोता हुआ जीव विनष्ट हो जाता है । हे नानक, बेशक कोई कितना ही चाह ले सांसारिकता और सुरति में मेल नहीं हो पाता । जिनके भण्डार में पुण्य के रूप में अच्छे गुण है उन्हें गुरु के उपदेश के माध्यम से सुख प्राप्त होता है ॥ २ ॥ पउड़ी महला ५ ॥ हे नानक, सन्त, मुनिजन और चारों वेद यही विचार करते और कहते हैं कि भक्तजन जो मुख से बोल देते हैं वे वचन पूरे हो जाते हैं । उनके सभी कथन संसार में प्रत्यक्ष और प्रकट होते हैं जिन्हें सब लोग सुनते हैं । मूर्ख लोग जो शान्त पुरुषों के साथ बखेड़ा करते हैं वे कभी सुख नहीं प्राप्त करते । शान्त पुरुष तो उनकी भलाई के गुणों की बात सोचते हैं परन्तु मनमुख व्यक्ति अहंकार में ही जलते रहते है । वे

वेचारे किआ करहि जां भाग धुरि मंदे ॥ जो मारे तिनि पारब्रहमि से किसै न संदे ॥ वैरु करनि निरवैर नालि धरमि निआइ पचंदे ॥ जो जो संति सरापिआ से फिरहि भवंदे ॥ पेडु मूंढाहू कटिआ तिसु डाल सुकंदे ॥ ३१ ॥ सलोक मः ५ ॥ गुर नानक हरि नामु द्रिड़ाइआ भंनण घड़ण समरथु ॥ प्रभु सदा समालहि मित्र तू दुखु सबाइआ लथु ॥ १ ॥ मः ५ ॥ खुधिआवंतु न जाणई लाज कुलाज कुबोलु ॥ नानकु मांगै नामु हरि करि किरपा संजोगु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जेवेहे करम कमावदा तेवेहे फलते ॥ चबे तता लोह सारु विचि संघै पलते ॥ घति गलावां चालिआ तिनि दूति अमल ते ॥ काई आस न पुंनीआ नित पर मलु हिरते ॥ कीआ न जाणै अकिरतघण विचि जोनी फिरते ॥ सभे धिरां निखुटीअसु हिरि लईअसु धर ते ॥ विझण कलह न देवदा तां लइआ करते ॥ जो जो करते अहंमेउ झड़ि धरती पड़ते ॥ ३२ ॥ सलोक मः ३ ॥ गुरमुखि गिआनु बिबेक बुधि होइ ॥ हरि गुण गावै हिरदै हारु परोइ ॥ पवितु पावनु परम बीचारी ॥ जि ओसु मिलै तिसु पारि उतारी ॥ अंतरि हरि नामु बासना समाणी ॥ हरि दरि सोभा महा उतम बाणी ॥ जि पुरखु सुणै सु होइ निहालु ॥ नानक सतिगुर मिलिऐ पाइआ नामु धनु मालु ॥ १ ॥ मः ४ ॥ सतिगुर के जीअ की सार न जापै कि पूरै सतिगुर भावै ॥ गुरसिखां अंदरि सतिगुरू वरतै जो सिखां नो लोचै सो गुर खुसी आवै ॥ सतिगुरु आखै सु कार कमावनि सु जपु कमावहि गुरसिखां की घाल सचा थाइ पावै ॥ विणु सतिगुर के हुकमै जि गुरसिखां पासहु कंमु कराइआ लोड़े तिसु गुरसिखु फिरि नेड़ि न आवै ॥ गुर सतिगुर अगै को जीउ लाइ घालै तिसु अगै गुरसिखु कार कमावै ॥ जि ठगी आवै ठगी उठि जाइ तिसु नेड़ै गुरसिखु मूलि न आवै ॥ ब्रहमु बीचारु नानकु आखि सुणावै ॥ जि विणु सतिगुर के मनु मंने कंमु कराए सो जंतु महा दुखु पावै ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तूं सचा साहिबु अति वडा तुहि जेवडु तुं वड वडे ॥ जिसु तूं मेलहि सो तुधु मिलै तूं आपे बखसि लैहि लेखा छडे ॥ जिस नो तूं आपि मिलाइदा सो सतिगुरु सेवे मनु गड गडे ॥ तूं सचा साहिबु सचु तू सभु जीउ पिंडु चंमु तेरा हडे ॥ जिउ

वेचारे क्या कर सकते हैं जिनके भाग्य–लेख प्रारम्भ से ही बुरे हों । परब्रह्म प्रभु ने उन्हें मारा हुआ है क्योंकि वे किसी के भी होकर नहीं रहते । शत्रुभाव से विहीन लोगों के साथ शत्रुता रखने वाले तो धर्म के न्याय के अनुसार नष्ट हो जाते हैं । सन्त पुरुषों ने जिन्हें दुत्कार दिया है वे भटकते रहते हैं । जव पेड़ को जड़ से काट दिया जाए तो उसकी टहनियाँ निश्चित रूप से सूख ही जाती हैं ॥ ३१ ॥ श्लोक महला ५ ॥ हे नानक, गुरु ने प्रभु–नाम मेरे मन में पक्का कर दिया है क्योंकि प्रभु ही वनाने और तोड़ने में समर्थ है । हे मित्र, यदि तुम सदैव प्रभु का सुमिरन करो तो तुम्हारे सभी दुख दूर हो जाएंगें ॥ १ ॥ महला ५ ॥ भूख से परेशान व्यक्ति सम्मान, अपमान और बुरे वचनों की परवाह नहीं करता । हे प्रभु, नानक तेरे नाम की याचना करता है; तू कृपा कर और मुझे अपने में लीन कर ले ॥२॥ पउड़ी ॥ व्यक्ति जैसे कर्म करता है वैसे ही फल पाता है । यदि व्यक्ति गर्म लोहे को चवाता है तो निश्चित रूप से उसका गला जल जाता है । बुरे कर्म करने वालों को उनके गले में रस्सी डालकर यमदूत उन्हें आगे धकेल कर ले चलता है । पराई गन्दगी की चोरी करने वाले अर्थात निन्दक की कोई भी आशा पूरी नही होती । कृतघ्न व्यक्ति किसी के किए हुए के प्रति आभारी नहीं होता और योनियों में भटकता रहता है । जव प्रभु का आश्रय उससे छिन जाता है तो उसके सभी आश्रयदाता नष्ट हो जाते हैं । वह कभी भी कलह को समाप्त नहीं होने देता था इसलिए कर्त्ता–प्रभु ने उसे नष्ट कर दिया है । जो भी अंहकार करते हैं वे हड़वड़ा कर धरती पर गिर जाते हैं ॥ ३२ ॥ श्लोक महला ३ ॥ गुरमुख व्यक्ति में ज्ञान, विवेक, वुद्धि होती है । वह प्रभु के गुणों का गायन करता है और उन्हें हृदय में पिरो कर रखता है । वह परम, पवित्र, पावन और विचारवान हो जाता है । जो भी उससे मिलता है वह उसे पार उतार देता है । उसके अन्तर्मन में प्रभु–नाम की सुगन्ध समाई रहती है और उस उत्तम वचनों वाले व्यक्ति की प्रभु–दरवार में भी महिमा होती हैं । जो भी उससे कुछ भी सुनता है प्रसन्न हो जाता है । नानक ने सच्चे गुरु से मिलकर प्रभु–नाम रूपी सम्पति प्राप्त कर ली है ॥ १ ॥ महला ४ ॥ कोई भी व्यक्ति सच्चे गुरु के हृदय की बात को नहीं जानता कि उस पूर्ण गुरु को क्या अच्छा लगता है । सच्चा गुरु गुरु के सिक्खों में व्याप्त है और जो सिक्खों को चाहता है गुरु उस पर प्रसन्न होता है । जो सच्चा गुरु कहता है वे वही काम करते हैं, वही सुमिरन करते हैं और गुरु के सिक्खों की मेहनत परमात्मा सफल करता है । सच्चे गुरु की आज्ञा के विना यदि कोई गुरु के सिक्खों से काम करवाना चाहता है तो गुरु के सिक्ख उसके पास भी नहीं आते । जो सच्चे गुरु की दिल लगाकर सेवा करता है, गुरु के सिक्ख आगे उसकी सेवा करते हैं । जो ठगने के लिए आता है और ठगकर चला जाता है, गुरु का सिक्ख कभी भी उसके पास नहीं आता । नानक प्रभु–चिन्तन का कथन करते हुए उसी को सव ओर सुनाता है कि विना सच्चे गुरु के मन को प्रसन्न किए जो कोई काम करता है वह महा दुख में पड़ जाता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, तुम बहुत बड़े हो और तुम्हारे जैसे वड़े केवल तुम ही हो । जिसे तू मिलाता है वही तुझसे आन मिलता है और जिसे तू क्षमा कर देता है उसके सभी हिसाब–किताव छूट जाते हैं । जिसे तू मिलाता है वही दिल लगाकर सच्चे गुरु की सेवा करता है। हे सच्चे स्वामी, तू ही सत्य है । मेरे प्राण, शरीर, चमड़ी, हड्डियाँ आदि सब तेरे ही हैं । तुझे जैसा अच्छा लगता है

भावै तिउ रखु तूं सचिआ नानक मनि आस तेरी वड वडे ॥ ३३ ॥ १ ॥ सुधु ॥

गउड़ी की वार महला ५ राइ कमालदी मोजदी की वार की धुनि उपरि गावणी

१ओ सतिगुर प्रसादि ॥

सलोक मः ५ ॥ हरि हरि नामु जो जनु जपै सो आइआ परवाणु ॥ तिसु जन कै बलिहारणै जिनि भजिआ प्रभु निरबाणु ॥ जनम मरन दुखु कटिआ हरि भेटिआ पुरखु सुजाणु ॥ संत संगि सागरु तरे जन नानक सचा ताणु ॥ १ ॥ मः ५ ॥ भलके उठि पराहुणा मेरै घरि आवउ ॥ पाउ पखाला तिस के मनि तनि नित भावउ ॥ नामु सुणे नामु संग्रहै नामे लिव लावउ ॥ ग्रिहु धनु सभु पवित्रु होइ हरि के गुण गावउ ॥ हरि नाम वापारी नानका वडभागी पावउ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो तुधु भावै सो भला सचु तेरा भाणा ॥ तू सभ महि एकु वरतदा सभ माहि समाणा ॥ थान थनंतरि रवि रहिआ जीअ अंदरि जाणा ॥ साधसंगि मिलि पाईऐ मनि सचे भाणा ॥ नानक प्रभ सरणागती सद सद कुरबाणा ॥ १ ॥ सलोक मः ५ ॥ चेता ई तां चेति साहिबु सचा सो धणी ॥ नानक सतिगुरु सेवि चड़ि बोहिथि भउजलु पारि पउ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ वाऊ संदे कपड़े पहिरहि गरबि गवार ॥ नानक नालि न चलनी जलि बलि होए छारु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सेई उबरे जगै विचि जो सचै रखे ॥ मुहि डिठै तिन कै जीवीऐ हरि अंम्रितु चखे ॥ कामु क्रोधु लोभु मोहु संगि साधा भखे ॥ करि किरपा प्रभि आपणी हरि आपि परखे ॥ नानक चलत न जापनी को सकै न लखे ॥ २ ॥ सलोक मः ५ ॥ नानक सोई दिनसु सुहावड़ा जितु प्रभु आवै चिति ॥ जितु दिनि विसरै पारब्रहमु फिटु भलेरी रुति ॥ १ ॥ मः ५ ॥ नानक मित्राई तिसु सिउ सभ किछु जिस कै हाथि ॥ कुमित्रा सेई कांढीअहि इक विख न चलहि साथि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अंम्रितु नामु निधानु है मिलि पीवहु भाई ॥ जिसु सिमरत सुखु पाईऐ सभ तिखा बुझाई ॥ करि सेवा पारब्रहम गुर भुख रहै न काई ॥ सगल मनोरथ पुंनिआ अमरा पदु पाई ॥ तुधु जेवडु तूहै पारब्रहम नानक सरणाई ॥ ३ ॥ सलोक मः ५ ॥ डिठड़ो हभ ठाइ ऊण न काई जाइ ॥ नानक लधा तिन सुआउ जिना सतिगुरु

हे मेरे सच्चे स्वामी, मेरी रक्षा कर। नानक के मन में हे महान से महानतम् प्रभु केवल तुझसे ही आशा है ॥३३॥१॥शुद्ध॥

गउड़ी की वार महला ५ ॥ राए कमाल दी मोजदी की वार* की लोक–प्रसिद्ध धुन पर गायन करने का निर्देश है

१ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

श्लोक महला ५ ॥ जो व्यक्ति प्रभु–नाम का जाप करता है उसी का आना ही स्वीकृत होता है। मैं उस व्यक्ति पर बलिहारी जाता हूँ जिसने अलिप्त प्रभु की आराधना की है। जिसने सुजान प्रभु का सुमिरन किया है उसके जन्म–मरण का दुख कट जाता है। शान्त पुरुषों की संगत मे वह संसार–सागर से पार हो जाता है क्योंकि हे दास नानक उसे केवल प्रभु के सच्चे बल का ही भरोसा है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ प्रातः ही उठकर शान्त पुरुष अतिथि मेरे घर में आए। मैं उनके चरणो को धोऊँ क्योंकि यही मेरे मन–तन को सदैव अच्छा लगता है। मैं प्रभु–नाम ही सुनूँ, नाम का ही संग्रह कँरू और प्रभु–नाम में ही सुरति लगाऊँ। प्रभु के गुण गाने से मेरा घर और धन–माल सब पवित्र हो जाए। हे नानक, प्रभु–नाम का ऐसा व्यापारी बड़े भाग्य से ही प्राप्त होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्रभु, जो तुझे भाता है वही भला है और सब में तेरी इच्छा ही सच्ची है। केवल एक तू ही सब में कार्यशील है और सब में समाहित है। तू ही सभी स्थानो में रम रहा है और तुझे ही व्यक्ति अपने अन्दर भी जानता है। साधसंगत से मिलकर ही हे प्रभु, तू प्राप्त होता है और व्यक्ति का मन तेरी सच्ची आज्ञा में चलता है। नानक प्रभु का शरणागत है और सदैव उस पर बलिहारी जाता है ॥ १ ॥ श्लोक महला ५ ॥ हे जीव, यदि तुझे याद है तो उस सच्चे मालिक का सुमिरन कर। हे नानक, सच्चे गुरु की सेवा कर और प्रभु–नाम के जहाज पर बैठकर संसार सागर से पार हो जा ॥ १ ॥ महला ५ ॥ अभिमान से ग्रस्त गँवार व्यक्ति हवा जैसे बारीक और कोमल वस्त्र पहनते हैं। हे नानक, वे साथ नहीं जाते और यहीं जलकर राख हो जाते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ संसार में उन्हीं का उद्धार होता है जिनकी सच्चा प्रभु रक्षा करता है। मैं ऐसे व्यक्तियों के चेहरे को देखकर जीता हूँ जो प्रभु रूपी अमृत का पान करते हैं और जिन्होंनें साधसंगत में काम क्रोध, लोभ, मोह आदि को समाप्त कर दिया है। प्रभु कृपा करके स्वयं ही ऐसे व्यक्तियों को परख लेता है। हे नानक, प्रभु के कौतुक न तो दिखाई देते हैं और न ही उनको समझा जा सकता है ॥ २ ॥ श्लोक महला ५ ॥ हे नानक, वही दिन सुहावना है जिस दिन प्रभु मन में बसा रहता है। जिस दिन परब्रह्म मन से विस्मृत रहता है वह दिन और सारा मौसम ही धिक्कार योग्य है ॥ १॥ महला ५ ॥ हे नानक, उसी के साथ मित्रता कर जिसके हाथ में सव कुछ है। ऐसे व्यक्ति मित्र नहीं कहे जाते जो एक भी कदम साथ न दें ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे भाईयो, प्रभु–नाम का भण्डार ही अमृत है। सभी परस्पर मिलकर इसका पान करो। उसका सुमिरन करने से सुख प्राप्त होता है और सारी प्यास बुझ जाती है। तू परब्रह्म परमात्मा रूपी गुरु की सेवा कर, तेरी कोई भी भूख बाकी नहीं बचेगी। तेरे सभी मनोरथ पूरे हो जाएगें और तू अमर पद प्राप्त कर लेगा। हे प्रभु, तेरे जैसा तू ही है और नानक तेरी शरण में है ॥ ३ ॥ श्लोक महला ५ ॥ मैंने सभी स्थानों को देखा है, कोई भी स्थान उसके बिना नहीं है। हे नानक, जिनका मेल सच्चे गुरु से हो गया है वे ही जीवन के उद्देश्य को प्राप्त कर लेते हैं ॥ १ ॥

* विस्तार के लिए परिशिष्ट 5 देखें।

भेटिआ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ दामनी चमतकार तिउ वरतारा जग खे ॥
वथु सुहावी साइ नानक नाउ जपंदो तिसु धणी ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सिम्रिति सासत्र
सोधि सभि किनै कीम न जाणी ॥ जो जनु भेटै साधसंगि सो हरि रंगु माणी ॥
सचु नामु करता पुरखु एह रतना खाणी ॥ मसतकि होवै लिखिआ हरि सिमरि
पराणी ॥ तोसा दिचै सचु नामु नानक मिहमाणी ॥ ४ ॥ सलोक मः ५ ॥
अंतरि चिंता नैणी सुखी मूलि न उतरै भुख ॥ नानक सचे नाम बिनु किसै
न लथो दुखु ॥ १ ॥ मः ५ ॥ मुठड़े सेई साथ जिनी सचु न लदिआ ॥ नानक से
साबासि जिनि गुर मिलि इकु पछाणिआ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिथै बैसनि साध जन
सो थानु सुहंदा ॥ ओइ सेवनि संम्रिथु आपणा बिनसै सभु मंदा ॥ पतित उधारण
पारब्रहम संत बेदु कहंदा ॥ भगति वछलु तेरा बिरदु है जुगि जुगि वरतंदा ॥
नानकु जाचै एकु नामु मनि तनि भावंदा ॥ ५ ॥ सलोक मः ५ ॥ चिड़ी चुहकी पहु
फुटी वगनि बहुतु तरंग ॥ अचरज रूप संतन रचे नानक नामहि रंग ॥ १ ॥ मः ५ ॥
घर मंदर खुसीआ तही जह तू आवहि चिति ॥ दुनीआ कीआ वडिआईआ नानक
सभि कुमित ॥ २ ॥ पउड़ी हरि धनु सची रासि है किनै विरलै जाता ॥ तिसै
परापति भाइरहु जिसु देइ बिधाता ॥ मन तन भीतरि मउलिआ हरि रंगि
जनु राता ॥ साधसंगि गुण गाइआ सभि दोखह खाता ॥ नानक सोई जीविआ
जिनि इकु पछाता ॥ ६ ॥ सलोक मः ५ ॥ खखड़ीआ सुहावीआ लगड़ीआ अक
कंठि ॥ बिरह विछोड़ा धणी सिउ नानक सहसै गंठि ॥ १ ॥ मः ५ ॥ विसारेदे
मरि गए मरि भि न सकहि मूलि ॥ वेमुख होए राम ते जिउ तसकर उपरि
सूलि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सुख निधानु प्रभु एकु है अबिनासी सुणिआ ॥ जलि थलि
महीअलि पूरिआ घटि घटि हरि भणिआ ॥ ऊच नीच सभ इक समानि कीट
हसती बणिआ ॥ मीत सखा सुत बंधिपो सभि तिस दे जणिआ ॥ तुसि नानकु
देवै जिसु नामु तिनि हरि रंगु मणिआ ॥ ७ ॥ सलोक मः ५ ॥ जिना सासि
गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु ॥ धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई
संतु ॥ १ ॥ मः ५ ॥ अठे पहर भउदा फिरै खावण संदड़े सूलि ॥ दोजकि पउदा

महला ५ ॥ बिजली की चमक की तरह सारे संसार का कार्य–व्यापार क्षण भंगुर है । हे नानक, वही वस्तु सुहावनी है जिसके माध्यम से उस मालिक प्रभु के नाम का सुमिरन होता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ विद्वानों ने सभी स्मृतियों और शास्त्रों का गहन अध्ययन किया है परन्तु कोई भी प्रभु की कीमत नहीं जान सका है । जो व्यक्ति साधसंगत में जाता है वही प्रभु के प्रेम का आनन्द लेता है । कर्ता प्रभु का नाम सत्य है और यही रत्नों की खान है । जिस व्यक्ति के मस्तक पर लिखा हुआ हो वही प्रभु का सुमिरन करता है । हे प्रभु, अपने अतिथि नानक को राह खर्च के लिए अपना सच्चा नाम प्रदान कर ॥ ४ ॥ श्लोक महला ५ ॥ बेशक आँखों से तो सुखी दिखाई पड़ता है परन्तु व्यक्ति के अन्दर चिन्ता है और उसकी भूख कभी भी शान्त नहीं होती । हे नानक, सच्चे नाम के विना किसी का भी दुख समाप्त नहीं हो सका है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ वही साथी लूट लिए जाते हैं जो सत्य रूपी सौदा लादकर नहीं चलते । हे नानक, उन्हें शावास है जिन्होंने गुरु से मिलकर केवल एक ही प्रभु को पहचान लिया है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जहाँ साधुजन बैठते हैं वही स्थान सुन्दर होता है । वे समर्थ प्रभु की सेवा करते हैं और उनके सभी दुर्गुण विनष्ट हो जाते हैं । सन्त और ज्ञान के भण्डार धर्म ग्रंथ यही कहते हैं कि परब्रह्म परमात्मा पतितों का उद्धार करने वाला है । हे प्रभु, भक्तवत्सल होना तो तेरा स्वभाव है जो सभी युगों में क्रियाशील वना रहता है । नानक तो केवल एक प्रभु–नाम की ही याचना करता है जो उसके मन और तन को अच्छा करता है ॥ ५ ॥ श्लोक महला ५ ॥ भोर होते ही चिड़ियों के चहकने के साथ अनेक प्रकार की तरंगे चलना शुरू हो जाती हैं । शान्त पुरुष उस समय, हे नानक, प्रभु–नाम में रंगकर आश्चर्यजनक दृष्य पैदा कर लेते हैं ॥ १ ॥ महला ५ ॥ उसी घर, ऊँचे भवन में खुशियाँ हैं जहाँ तुझे हृदय में याद किया जाता है; हे नानक, दुनियादारी के बड़प्पन (आडम्वर) सभी वुरे मित्रों के समान हैं (जो अन्ततः हानि पहुँचाते हैं) ॥ २ ॥ पउड़ी॥ कोई विरला ही जानता है कि प्रभु रूपी धन ही सच्ची पूँजी है । हे भाईयो, यह केवल उसी को प्राप्त होती है जिसे प्रभु देता है । प्रभु का सेवक तन मन से प्रभु रंग में रंगा रहकर प्रफुल्लित वना रहता है । साधसंगत में प्रभु का गुणानुवाद करता हुआ वह सभी कष्टों को समाप्त कर देता है । हे नानक, जीवित व्यक्ति केवल वही है जिसने एक ही प्रभु की पहचान कर ली है ॥ ६ ॥ श्लोक महला ५ ॥ आक के पौधे की शाखा के साथ लगा हुआ फल देखने में वहुत अच्छा लगता है परन्तु शाखा रूपी प्रभु से विछुड़ते ही उस फल के, हे नानक, हजारों ही टुकड़े होकर इधर–उधर उड़ जाते हैं ॥ १ ॥ महला ५ ॥ जिन्होंने प्रभु को भुलाया है वे मर जाते हैं परन्तु वे वास्तव में पूरी तरह मर भी नहीं पाते । प्रभु से विमुख हुए व्यक्ति ऐसे ही अधमरे पड़े रहते हैं जैसे कोई चोर सूली पर चढ़ा हुआ कष्ट उठाता रहता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मैंने सुना है कि केवल एक अविनाशी प्रभु ही सुखों का खजाना है । उसके लिए ऐसा भी कहा जाता है कि प्रभु जल, स्थल, आकाश और प्रत्येक शरीर में व्याप्त है । वह ऊँचे, नीचे, कीड़े, हाथी आदि में एक समान ही वना रहता है । मित्र, वन्धु, पुत्र, साथी, संगी सव उसी ने उत्पन्न किए हैं । हे नानक, जिसे प्रभु प्रसन्न होकर नाम–दान देता है वही उसके प्रेम का आनन्द भोगता है ॥ ७ ॥ श्लोक महला ५ ॥ जिसे श्वास्–ग्रास के साथ वह प्रभु भूलता नहीं और प्रभु–नाम का मन्त्र ही जिनके मन में बसा हुआ है, हे नानक वे ही धन्य हैं और वे ही पूर्ण सन्त के रूप में जाने जाते हैं ॥ १ ॥ महला ५ ॥ खाने की भूख को साथ लिए व्यक्ति आठों प्रहर भटकता फिरता है । वह नर्क में जाने से

किउ रहै जा चिति न होइ रसूलि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तिसै सरेवहु प्राणीहो जिस दे नाउ पलै ॥ ऐथै रहहु सुहेलिआ अगै नालि चलै ॥ घरु बंधहु सच धरम का गडि थंमु अहलै ॥ ओट लैहु नाराइणै दीन दुनीआ झलै ॥ नानक पकड़े चरण हरि तिसु दरगह मलै ॥ ८ ॥ सलोक मः ५ ॥ जाचकु मंगै दानु देहि पिआरिआ ॥ देवणहारु दातारु मै नित चितारिआ ॥ निखुटि न जाई मूलि अतुल भंडारिआ ॥ नानक सबदु अपारु तिनि सभु किछु सारिआ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ सिखहु सबदु पिआरिहो जनम मरन की टेक ॥ मुख ऊजल सदा सुखी नानक सिमरत एक ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ ओथै अंम्रितु वंडीऐ सुखीआ हरि करणे ॥ जम कै पंथि न पाईअहि फिरि नाही मरणे ॥ जिस नो आइआ प्रेम रसु तिसै ही जरणे ॥ बाणी उचरहि साध जन अमिउ चलहि झरणे ॥ पेखि दरसनु नानकु जीविआ मन अंदरि धरणे ॥ ९ ॥ सलोक मः ५ ॥ सतिगुरि पूरै सेविऐ दूखा का होइ नासु ॥ नानक नामि अराधिऐ कारजु आवै रासि ॥ १ ॥ मः ५ ॥ जिसु सिमरत संकट छुटहि अनद मंगल बिस्राम ॥ नानक जपीऐ सदा हरि निमख न बिसरउ नामु ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ तिन की सोभा किआ गणी जिनी हरि हरि लधा ॥ साधा सरणी जो पवै सो छुटै बधा ॥ गुण गावै अबिनासीऐ जोनि गरभि न दधा ॥ गुरु भेटिआ पारब्रहमु हरि पड़ि बुझि समधा ॥ नानक पाइआ सो धणी हरि अगम अगधा ॥ १० ॥ सलोक मः ५ ॥ कामु न करही आपणा फिरहि अवता लोइ ॥ नानक नाइ विसारिऐ सुखु किनेहा होइ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ बिखै कउड़तणि सगल माहि जगति रही लपटाइ ॥ नानक जनि वीचारिआ मीठा हरि का नाउ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ इह नीसाणी साध की जिसु भेटत तरीऐ ॥ जम कंकरु नेड़ि न आवई फिरि बहुड़ि न मरीऐ ॥ भव सागरु संसारु बिखु सो पारि उतरीऐ ॥ हरि गुण गुंफहु मनि माल हरि सभ मलु परहरीऐ ॥ नानक प्रीतम मिलि रहे पारब्रहम नरहरीऐ ॥ ११ ॥ सलोक मः ५ ॥ नानक आए से परवाणु है जिन हरि वुठा चिति ॥ गाल्ही अल पलालीआ कंमि न आवहि मित ॥ १ ॥ मः ५ ॥ पारब्रहमु प्रभु द्रिसटी आइआ पूरन अगम

भला कैसे बच सकता है जो अपने पैगम्बर (गुरु) को याद नहीं करता ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे प्राणियों, उसी की सेवा करो जिसकी गाँठ में प्रभु–नाम है । तुम यहाँ भी सुखी रहोगे और यही तुम लोगों के साथ आगे भी जाएगा । मज़बूत और न हिलने वाला अच्छे कर्मों का स्तम्भ गाड़कर उस पर सत्य और धर्म का घर बनाओ । यदि प्रभु का आसरा ले लोगे तो सारा संसार तुम्हारा स्वागत करेगा । नानक ने प्रभु के चरणों को पकड़ रखा है और उसके दरबार में उसने स्थान पक्का किया हुआ है ॥ ८ ॥ श्लोक महला ५ ॥ हे प्रियतम, याचक तुझसे दान माँगता है तू मुझे प्रदान कर दे क्योंकि हे देने वाले दाता, मैं सदैव तेरा सुमिरन करता रहूँ । तेरे भण्डार अक्षय हैं और अतुलनीय हैं ये कभी भी समाप्त नहीं होंगे । हे नानक, शब्द रूपी प्रभु अपार है जिसने सब कुछ ठीक कर दिया है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ हे प्यारे भाईयो, शब्द की शिक्षा ग्रहण करो क्योंकि यही जन्म और मरण का आधार है । हे नानक, एक ही प्रभु का सुमिरन करने से व्यक्ति का मुख उज्जवल बना रहता है और वह सदा सुखी रहता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सद्संगत में हरि रूपी अमृत बाँटा जाता है जो सबको सुखी करने वाला होता है । व्यक्ति फिर मौत के रास्ते पर नहीं चलता और फिर न ही उसका मरण होता है । जिसे प्रभु–प्रेम का रस मिल गया है वह ही इसके आनन्द को भोगता है । साधु पुरुष अमृत के झरने के समान वाणी का उच्चारण करते हैं । नानक ऐसे लोगों को देखकर जीवित बना रहता है जिन्होंने प्रभु–नाम को अपने मन में धारण कर रखा है ॥ ९ ॥ श्लोक महला ५ ॥ पूर्ण सच्चे गुरु की सेवा करने से दुखों का नाश हो जाता है और हे नानक, प्रभु–नाम का सुमिरन करने से व्यक्ति का काम बन जाता है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ जिसका सुमिरन करने से संकट दूर हो जाता है और व्यक्ति आनन्दमय होकर मंगलपूर्वक स्थिर हो जाता है, हे नानक, तू ऐसे प्रभु का जाप कर और क्षण भर के लिए भी उसके नाम को मत भुला ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मैं उनकी महिमा का क्या बखान कँरू जिन्होंने प्रभु को पा लिया है । जो साधु पुरुषों की शरण में आन् पड़ता है वह बन्धनों से मुक्त हो जाता है । जो अविनाशी प्रभु का गुणानुवाद करता है वह योनियों में आकर गर्भ की अग्नि में जलता नहीं है । जिन्होंने परब्रह्म रूपी गुरु से मेल कर लिया है वे पढ़–बूझ कर समाधि में लीन हो जाते हैं । नानक ने उस प्रभु रूपी स्वामी को प्राप्त कर लिया है जो अगम्य एवं अगाध है ॥ १० ॥ श्लोक महला ५ ॥ व्यक्ति अपना कर्त्तव्य पूरा नहीं करता और संसार में आवारा बनकर भटकता रहता है । हे नानक, भला नाम को बिसार कर सुख कैसे प्राप्त होगा ॥ १ ॥ महला ५ ॥ विषयों का कड़वापन सबके अन्दर है और सारा जगत इसी से लिपटा हुआ है। दास नानक ने यह अनुभव कर लिया है कि केवल प्रभु का नाम ही मीठा है ॥ पउड़ी ॥ साधु पुरुष की यही पहचान है कि उसे मिलते ही व्यक्ति पार उतर जाता है । मौत का दूत उसके पास नहीं आ पाता और पार उतर चुके व्यक्ति की फिर मौत नहीं होती । हे भाई, प्रभु के गुणों को अपने मन में माला की तरह बना लो जिससे तुम्हारी सारी मैल नष्ट हो जाएगी । नानक तो परब्रह्म नरहरि प्रियतम में लीन बना रहता है ॥ ११ ॥ श्लोक महला ५ ॥ हे नानक, उनका जन्म सफल है जिनके मन में प्रभु बसता है । हे मित्र, बेकार की बातें किसी काम नहीं आती ॥ १ ॥ मः ५ ॥ परब्रह्म प्रभु जो पूर्ण रूप से अगम्य एवं आश्चर्य है मुझे दृष्टिगोचर हो गया है अर्थात मैंने उसको अनुभव कर लिया है ।

बिसमाद ॥ नानक राम नामु धनु कीता पूरे गुर परसादि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ धोहु न चली खसम नालि लबि मोहि विगुते ॥ करतब करनि भलेरिआ मदि माइआ सुते ॥ फिरि फिरि जूनि भवाईअनि जम मारगि मुते ॥ कीता पाइनि आपणा दुख सेती जुते ॥ नानक नाइ विसारिऐ सभ मंदी रुते ॥ १२ ॥ सलोक मः ५ ॥ उठंदिआ बहंदिआ सवंदिआ सुखु सोइ ॥ नानक नामि सलाहिऐ मनु तनु सीतलु होइ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ लालचि अटिआ नित फिरै सुआरथु करे न कोइ ॥ जिसु गुरु भेटै नानका तिसु मनि वसिआ सोइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभे वसतू कउड़ीआ सचे नाउ मिठा ॥ सादु आइआ तिन हरि जनां चखि साधी डिठा ॥ पारब्रहमि जिसु लिखिआ मनि तिसै वुठा ॥ इकु निरंजनु रवि रहिआ भाउ दुया कुठा ॥ हरि नानकु मंगै जोड़ि कर प्रभु देवै तुठा ॥ १३ ॥ सलोक मः ५ ॥ जाचड़ी सा सारु जो जाचंदी हेकड़ो ॥ गाल्ही बिआ विकार नानक धणी विहूणीआ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ नीहि जि विधा मंनु पछाणू विरलो थिओ ॥ जोड़णहारा संतु नानक पाधरु पधरो ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सोई सेविहु जीअड़े दाता बखसिंदु ॥ किलविख सभि बिनासु होनि सिमरत गोविंदु ॥ हरि मारगु साधू दसिआ जपीऐ गुर मंतु ॥ माइआ सुआद सभि फिकिआ हरि मनि भावंदु ॥ धिआइ नानक परमेसरै जिनि दिती जिंदु ॥ १४ ॥ सलोक मः ५ ॥ वत लगी सचे नाम की जो बीजे सो खाइ ॥ तिसहि परापति नानका जिस नो लिखिआ आइ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ मंगणा त सचु इकु जिसु तुसि देवै आपि ॥ जितु खाधै मनु त्रिपतीऐ नानक साहिब दाति ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ लाहा जग महि से खटहि जिन हरि धनु रासि ॥ दुतीआ भाउ न जाणनी सचे दी आस ॥ निहचलु एकु सरेविआ होरु सभ विणासु ॥ पारब्रहमु जिसु विसरै तिसु बिरथा सासु ॥ कंठि लाइ जन रखिआ नानक बलि जासु ॥ १५ ॥ सलोक मः ५ ॥ पारब्रहमि फुरमाइआ मीहु वुठा सहजि सुभाइ ॥ अंनु धनु बहुतु उपजिआ प्रिथमी रजी तिपति अघाइ ॥ सदा सदा गुण उचरै दुखु दालदु गइआ बिलाइ ॥ पूरबि लिखिआ पाइआ मिलिआ तिसै रजाइ ॥ परमेसरि जीवालिआ नानक तिसै धिआइ ॥ १ ॥ मः ५ ॥

पूरे गुरु की कृपा से नानक ने राम–नाम को ही अपना धन बना लिया है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ अपने मालिक के साथ धोखाधड़ी नहीं चलती और लोभ–मोह में प्राणी नष्ट हो जाता है। ऐसे जीव बुरे काम करते हैं और धन–दौलत के मद में वेखवर बने रहते हैं। ऐसे ही लोग वार वार योनियों में भटकते हैं और उन्हें मौत के रास्ते पर छोड़ दिया जाता है। दुखों में ग्रस्त ऐसे लोग अपने किए हुए का ही फल पाते हैं। हे नानक, ऐसे सभी मौसम बुरे हैं जिनमें प्रभु का नाम विस्मृत हो जाता है ॥ १२ ॥ श्लोक महला ५ ॥ हे नानक, प्रभु–नाम का गुणगान करने से मन, तन शीतल हो जाता है और उठते वैठते सोते सुख प्राप्त होता है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ व्यक्ति लालच से भरा हुआ सदैव भटकता रहता है परन्तु जीवन के असली स्वार्थ–उद्देश्य के लिए कुछ भी नहीं करता। हे नानक, जिसे गुरु मिल जाता है उसके मन में परमात्मा आन वसता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभी वस्तुएं कड़वी है; केवल सच्चे प्रभु का नाम मीठा है। प्रभु के उन सेवकों को यह स्वादिष्ट लगता है जिन्होंने इसे चख कर इसके स्वाद को देखा है। प्रभु ने जिसके लिए प्रारम्भ से ही लिख दिया है नाम उसके मन को ही अच्छा लगता है ॥ ऐसा व्यक्ति केवल एक प्रभु को ही सर्वत्र रमण करता हुआ अनुभव करता है और द्वैतभाव उसके लिए त्याज्य हो जाता है। हे प्रभु, नानक हाथ जोड़कर प्रभु–नाम का दान माँगता है; प्रसन्न होकर वह प्रभु देता भी है ॥ १३ ॥ श्लोक महला ५ ॥ वह माँग सर्वश्रेष्ठ है जो केवल एक से ही माँगी जाए। हे नानक, प्रभु से विहीन अन्य सभी बातें और चीजें विकारयुक्त पाप है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ कोई विरला ही मन में प्रभु को पहचानने वाला और प्रभु–प्रेम में विंधा हुआ है। हे नानक, प्रभु की ओर का रास्ता समतल हो जाएगा यदि उससे जोड़ने वाला कोई शान्त पुरुष हो ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ हे मेरे जीव, तू उसी का सुमिरन कर जो क्षमाशील दाता है। प्रभु–सुमिरन से सभी पाप विनष्ट हो जाते हैं। साधु पुरुष ने मुझे प्रभु का मार्ग वता दिया है इसलिए मैं गुरु की वाणी का ही जाप करता हूँ। धन–सम्पदा के सभी स्वाद फीके हैं और केवल प्रभु ही मन को अच्छा लगने वाला है। हे नानक, तू उस परमेश्वर का ध्यान कर जिसने तुझे प्राण दिए हैं ॥ १४ ॥ श्लोक महला ५ ॥ सच्चे नाम को धारण करने का सुअवसर आ पहुँचा है। अव जो कोई इसको वोएगा वह ही इसका अच्छा फल खाएगा। हे नानक, यह फल केवल उसी को ही प्राप्त होता है जिसके भाग्य में लिखा हुआ होता है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ अगर माँगना ही है तो केवल एक सच्चा नाम ही माँगना चाहिए। प्रभु स्वयं प्रसन्न होकर ही जिसे चाहता है उसे देता है। हे नानक, इसको धारण करने से मन तृप्त हो जाता है और यह केवल प्रभु की ही देन है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ केवल वे ही संसार में लाभ कमाते हैं जिनके पास प्रभु रूपी धन की पूँजी होती है। वे द्वैतभाव को जानते भी नहीं और उनकी आशा केवल एक सच्च पर ही टिकी होती है। अन्य सव को विनाशकारी मानकर वे केवल एक ही अटल प्रभु की आराधना करते हैं। जिसे परमात्मा भूल जाए उसका साँस लेना भी व्यर्थ है। जिसने गले से लगाकर सेवक की रक्षा की है नानक उस पर बलिहारी जाता है ॥ १५ ॥ श्लोक महला ५ ॥ प्रभु ने चाहा और उसकी कृपा की वर्षा स्वभाविक रूप से ही होने लग गई। अब अन्न एवं धन बहुत पैदा हो गया तथा पृथ्वी भी तृप्त होकर संतुष्ट हो गई। सदैव प्रभु का गुणानुवाद करते रहने से सभी दुख एवं दरिद्रता आदि नष्ट हो गए। पहले लिखे हुए के अनुसार ही व्यक्ति प्राप्त करता है और जो भी उसे मिलता है उस प्रभु की रज़ा में ही मिलता है। हे नानक, तू उस प्रभु का सुमिरन कर जिसने तुझे आध्यात्मिक तौर पर जीवित रखा हुआ है ॥ १ ॥ महला ५ ॥

जीवन पदु निरबाणु इको सिमरीऐ ॥ दूजी नाही जाइ किनि बिधि धीरीऐ ॥ डिठा सभु संसारु सुखु न नाम बिनु ॥ तनु धनु होसी छारु जाणै कोइ जनु ॥ रंग रूप रस बादि कि करहि पराणीआ ॥ जिसु भुलाए आपि तिसु कल नही जाणीआ ॥ रंगि रते निरबाणु सचा गावही ॥ नानक सरणि दुआरि जे तुधु भावही ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जंमणु मरणु न तिन्ह कउ जो हरि लड़ि लागे ॥ जीवत से परवाणु होए हरि कीरतनि जागे ॥ साधसंगु जिन पाइआ सेई वडभागे ॥ नाइ विसरिऐ ध्रिगु जीवणा तूटे कच धागे ॥ नानक धूड़ि पुनीत साध लख कोटि पिरागे ॥ १६ ॥ सलोकु मः ५ ॥ धरणि सुवंनी खड़ रतन जड़ावी हरि प्रेम पुरखु मनि वुठा ॥ सभे काज सुहेलड़े थीए गुरु नानकु सतिगुरु तुठा ॥ १ ॥ मः ५ ॥ फिरदी फिरदी दह दिसा जल परबत बनराइ ॥ जिथै डिठा मिरतको इल बहिठी आइ ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिसु सरब सुखा फल लोड़ीअहि सो सचु कमावउ ॥ नेड़ै देखउ पारब्रहमु इकु नामु धिआवउ ॥ होइ सगल की रेणुका हरि संगि समावउ ॥ दूखु न देई किसै जीअ पति सिउ घरि जावउ ॥ पतित पुनीत करता पुरखु नानक सुणावउ ॥ १७ ॥ सलोक दोहा मः ५ ॥ एकु जि साजनु मै कीआ सरब कला समरथु ॥ जीउ हमारा खंनीऐ हरि मन तन संदड़ी वथु ॥ १ ॥ मः ५ ॥ जे करु गहहि पिआरड़े तुधु न छोडा मूलि ॥ हरि छोडनि से दुरजना पड़हि दोजक कै सूलि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ सभि निधान घरि जिस दै हरि करे सु होवै ॥ जपि जपि जीवहि संत जन पापा मलु धोवै ॥ चरण कमल हिरदै वसहि संकट सभि खोवै ॥ गुरु पूरा जिसु भेटीऐ मरि जनमि न रोवै ॥ प्रभ दरस पिआस नानक घणी किरपा करि देवै ॥ १८ ॥ सलोक डखणा मः ५ ॥ भोरी भरमु वञाइ पिरी मुहबति हिकु तू ॥ जिथहु वंञै जाइ तिथाऊ मउजूदु सोइ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ चड़ि कै घोड़ड़ै कुंदे पकड़हि खूंडी दी खेडारी ॥ हंसा सेती चितु उलासहि कुकड़ दी ओडारी ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ रसना उचरै हरि स्रवणी सुणै सो उधरै मिता ॥ हरि जसु लिखहि लाइ भावनी से हसत पविता ॥ अठसठि तीरथ मजना सभि पुंन तिनि किता ॥ संसार सागर ते उधरे

जीवन का सर्वश्रेष्ठ पद प्राप्त करने के लिए एक ही प्रभु की आराधना की जानी चाहिए; दूसरा कोई स्थान नहीं है जहाँ किसी भी विधि से धैर्य मिल सकता हो । सारे संसार को देखा गया है परन्तु प्रभु–नाम के बिना कहीं भी सुख नहीं है । कोई कोई व्यक्ति ही जानता है कि यह तन और धन एक दिन मिट्टी के समान हो जाएंगे । हे प्राणी, तू क्या कर रहा है; यह रूप, रंग और रस सभी व्यर्थ हैं । जिसे प्रभु स्वयं भटकाता है वह उसकी शक्ति को ही नहीं जान पाता । जो पवित्र प्रभु के रंग में रंगे हुए हों वे सच्चे नाम का ही गायन करते हैं । हे प्रभु, जो तुझे अच्छे लगते हैं वे ही नानक की तरह तेरे द्वार की शरण चाहते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिन्होंने प्रभु का पल्लू थाम लिया है वे जन्मते–मरते नहीं । जो प्रभु के गुणानुवाद में सदैव चेतन बने रहते हैं वे जीवन में ही स्वीकृत एवं सफल हो जाते हैं । जिन्होंने साधसंगत पा ली है वे बड़े भाग्यशाली हैं । जिन्होंने प्रभु–नाम भुला दिया है उनके जीवन को धिक्कार है और वे कच्चे धागे की तरह टूट जाते हैं । हे नानक, प्रयागराज के लाखों और करोड़ों स्नानों से भी बढ़कर साधुजनों की चरण–धूलि पवित्र है ॥ १६ ॥ श्लोक महला ५ ॥ जिसके मन में प्रभु का प्रेम बसा हुआ है वह उसी प्रकार सुन्दर लगता है जैसे वह धरती सुन्दर होती है जिस पर रत्न–जड़ित (ओस की बूँदों वाला) घास होता हो । हे नानक, जब सच्चा गुरु प्रसन्न हो उठे तो व्यक्ति के सभी कार्य सरल और आसान हो जाते हैं ॥ १ ॥ महला ५ ॥ झीलों, पर्वतों, वनों में उड़ती भटकती चील वहाँ आकर बैठती है जहाँ वह कोई मुर्दा जीव देखती है ॥२॥ पउड़ी ॥ यदि फल रूप में सभी सुखों को चाहते हो तो वैसी ही सत्य की कमाई करो । उस परब्रह्म को अपने पास ही देखो और केवल एक नाम का ही सुमिरन करो । सबके चरणों की धूलि बनकर प्रभु में लीन हो जाओ । किसी को भी दुख न पहुँचाओ और सम्मान सहित अपने मूल घर में पहुँच जाओ । नानक तो पतितों को पुनीत करने वाले प्रभु की बात सबको सुनाता है ॥ १७ ॥ श्लोक दोहा महला ५॥ मैने उस एक को ही अपना प्रियतम बनाया है जो सभी कलाओं में समर्थ है । मेरे प्राण उस पर कुर्बान हैं क्योंकि वह प्रभु ही मेरे मन और तन की सम्पति है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ हे प्यारे प्रभु; यदि तू मेरा हाथ पकड़ ले तो तुझे मैं कभी भी नहीं छोड़ूँगा । जो प्रभु को छोड़ देते हैं वे दुष्ट व्यक्ति हैं और वे नर्क की पीड़ा को झेलते रहते हैं ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जिसके घर में सभी खज़ाने है वहाँ प्रभु के करने से ही ऐसा होता है । सन्तजन उसी का सुमिरन करके जीवित बने रहते हैं और पापों के मल को धो देते हैं । प्रभु के चरण–कमल उनके हृदय में वसते हैं और उनके सभी संकट समाप्त हो जाते हैं । पूरे गुरु से जिसका मेल हो गया है वह मर कर और बार बार जन्म लेकर रोता नहीं है । नानक के मन में प्रभु के दर्शन की गहरी प्यास है जो प्रभु ही अपनी कृपा करके देता है ॥ १८ ॥ श्लोक डखणा महला ५ ॥ यदि एक क्षण भर के लिए भी तू अपने भ्रमों को दूर कर ले और केवल एक प्रियतम प्रभु से ही मेल कर ले तो तू जहाँ भी जाएगा । उस प्रभु को वहीं प्रत्यक्ष अनुभव करेगा ॥ १ ॥ महला ५ ॥ चौगान (पोलो) का खेल खेलने वाले यदि घोड़े पर चढ़कर काठी के कुन्दे को पकड़कर संभलने की कोशिश करेंगे तो वे वैसे ही हास्यास्पद लगेंगे जैसे मुर्गा उड़ते हुए हंस को देखकर चित्त में उसी की तरह से उड़ने की नकल करता है परन्तु थोड़ी सी दूर पर ही गिरकर हंसी का पात्र बन जाता है । (गुरमुख की नकल करने वाले मनमुख का भी यही हाल होता है) ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ जो जीभ से उच्चारण करता है और कानों से प्रभु के नाम को सुनता है, हे मित्र, उसका उद्धार हो जाता है । जो भावनापूर्ण होकर हरि यश को लिखते हैं वे हाथ पवित्र होते हैं । ऐसा माना जाना चाहिए कि ऐसे व्यक्तियों ने अड़सठ तीर्थों पर स्नान करके सभी पुण्य कमा लिए हैं । वे संसार–सागर से पार उतर जाते हैं और विषय–विकारों के गढ़ को वे जीत लेते है । हे नानक,

बिखिआ गड़ु जिता ॥ नानक लड़ि लाइ उधारिअनु दयु सेवि अमिता ॥ १९ ॥ सलोक मः ५ ॥ धंधड़े कुलाह चिति न आवै हेकड़ो ॥ नानक सेई तंन फुटंनि जिना सांई विसरै ॥ १ ॥ मः ५ ॥ परेतहु कीतोनु देवता तिनि करणैहारे ॥ सभे सिख उबारिअनु प्रभि काज सवारे ॥ निंदक पकड़ि पछाड़िअनु झूठे दरबारे ॥ नानक का प्रभु वडा है आपि साजि सवारे ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु बेअंत किछु अंतु नाहि सभु तिसै करणा ॥ अगम अगोचरु साहिबो जीआं का परणा ॥ हसत देइ प्रतिपालदा भरण पोखणु करणा ॥ मिहरवानु बखसिंदु आपि जपि सचे तरणा ॥ जो तुधु भावै सो भला नानक दास सरणा ॥ २० ॥ सलोक मः ५ ॥ तिंना भुख न का रही जिस दा प्रभु है सोइ ॥ नानक चरणी लगिआ उधरै सभो कोइ ॥ १ ॥ मः ५ ॥ जाचिकु मंगै नित नामु साहिबु करे कबूलु ॥ नानक परमेसरु जजमानु तिसहि भुख न मूलि ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ मनु रता गोविंद संगि सचु भोजनु जोड़े ॥ प्रीति लगी हरि नाम सिउ ए हसती घोड़े ॥ राज मिलख खुसीआ घणी धिआइ मुखु न मोड़े ॥ ढाढी दरि प्रभ मंगणा दरु कदे न छोड़े ॥ नानक मनि तनि चाउ एहु नित प्रभ कउ लोड़े ॥ २१ ॥ १ ॥ सुधु कीचे

रागु गउड़ी भगतां की बाणी १ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

गउड़ी गुआरेरी स्री कबीर जीउ के चउपदे १४ ॥ अब मोहि जलत राम जलु पाइआ ॥ राम उदकि तनु जलत बुझाइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मनु मारण कारणि बन जाईऐ ॥ सो जलु बिनु भगवंत न पाईऐ ॥ १ ॥ जिह पावक सुरि नर है जारे ॥ राम उदकि जन जलत उबारे ॥ २ ॥ भव सागर सुख सागर माही ॥ पीवि रहे जल निखुटत नाही ॥ ३ ॥ कहि कबीर भजु सारिंगपानी ॥ राम उदकि मेरी तिखा बुझानी ॥ ४ ॥ १ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ माधउ जल की पिआस न जाइ ॥ जल महि अगनि उठी अधिकाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तूं जलनिधि हउ जल का मीनु ॥ जल महि रहउ जलहि बिनु खीनु ॥ १ ॥ तू पिंजरु हउ सूअटा तोर ॥ जमु मंजारु कहा करै मोर ॥ २ ॥ तूं तरवरु हउ पंखी आहि ॥ मंदभागी तेरो दरसनु नाहि ॥ ३ ॥

जिसने अपने साथ लगाकर व्यक्तियों का उद्धार कर दिया है उस अपरिमित प्रभु का सुमिरन करो ॥ १९ ॥ श्लोक महला ५ ॥ वह धन्धे लाभदायक नहीं हैं जिनमे लगे रहने से एक परमात्मा ध्यान में नहीं आता । हे नानक, वे शरीर फटकर नष्ट हो जाते हैं जिन्होंने प्रभु को भुला दिया है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ करने वाले प्रभु ने प्रेत के समान व्यक्ति को भी देवता बना दिया है । प्रभु ने सभी साधकों का उद्धार कर दिया है और उनके काम सँवार दिए हैं । निन्दकों को उसने पकड़ पछाड़ा है और वे प्रभु दरबार में झूठे पड़ गए हैं । नानक का प्रभु बड़ा है और वह स्वयं ही सबकी रचना करता है और उनको सँवारता है ॥ २ ॥ पउड़ी ॥ प्रभु अनन्त है और सब कुछ उसी का किया होता है । अगम्य अगोचर प्रभु जीवों का आसरा है । वह अपना हाथ देकर सबका भरण–पोषण एवं पालन करता है । कृपालु, क्षमाशील वह प्रभु आप ही है और उस सत्य स्वरूप का सुमिरन करने से व्यक्ति पार उतर जाता है । दास नानक, हे प्रभु, तेरी शरण में है; जो तुझे भाता है वही मेरे लिए अच्छा है ॥ २०॥ जिसका स्वामी प्रभु स्वयं है उसकी कोई भी भूख नहीं बचती । हे नानक, उसके चरणों में लगे हुए हर एक का उद्धार हो जाता है ॥ १ ॥ महला ५ ॥ यदि याचक सदैव नाम की ही याचना करता रहे तो मालिक उसकी प्रार्थना स्वीकार कर लेता है । हे नानक, जिसका यजमान अर्थात दान देने वाला स्वयं प्रभु है वह कभी भी भूखा नहीं रहता ॥ २ ॥ प्रभु में मन लीन करना ही सच्चा भोजन और वस्त्र है । प्रभु–नाम में प्रीति लगाना भी हाथी–घोड़े रखने के समान है । उससे मुख न मोड़कर प्रसन्नतापूर्वक उसका सुमिरन करना राज, सम्पदा और अनेकों प्रकार की खुशियों के समान है । गायक ने तो प्रभु द्वार पर ही माँगना है और कभी भी उसके द्वार को छोड़ना नहीं है । नानक के मन तन में उस प्रभु के लिए ही सदैव चाहना बनी हुई है ॥ २१ ॥ १ ॥ शुद्ध करिए ॥

राग गउड़ी भक्तों की वाणी ੴसति नामु करता पुरखु गुरप्रसादि

गउड़ी गुआरेरी श्री कबीर जीउ के चउपदे ॥ १४ ॥ मुझ जलते हुए ने अब राम–नाम रूपी जल पा लिया है । प्रभु रूपी जल ने जलते हुए तन को शान्त कर दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन को मारने के लिए लोग वनों को जाते हैं परन्तु मन की जलन को बुझाने वाला जल प्रभु के अतिरिक्त कहीं नहीं पाया जाता है ॥ १ ॥ जिस (माया) अग्नि ने मनुष्यों और देवताओं को जला डाला है प्रभु रूपी जल ने उसमें जलते हुए सेवकों का उद्धार कर लिया है ॥ २॥ संसार रूपी समुद्र और सुख के महासागर में मैं प्रभु रूपी जल का पान किए जाता हूँ परन्तु वह जल समाप्त नहीं होता॥३॥ कबीर कहता है कि उस प्रभु का सुमिरन करो क्योंकि प्रभु रूपी जल ने ही मेरी प्यास बुझाई है ॥ ४ ॥ १॥ गउड़ी कबीर जी ॥ हे माधव, तेरे नाम–जल की प्यास (इच्छा) खत्म नहीं होती । नाम–जल के लिए मेरी अग्नि रूपी इच्छा और अधिक बन गई है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तू जल का समुद्र है और मैं जल की मछली हूँ । मैं जल में ही रहती हूँ परन्तु जल का पान न करने से क्षीण हो जाती हूँ । तू मेरा पिंजरा है और मैं तेरा तोता हूँ । मौत रूपी बिल्ली मेरा क्या कर सकती है ॥ २ ॥ तू वृक्ष है और मै पक्षी हूँ परन्तु मन्द भाग्य के कारण मुझे तेरा दर्शन नसीब नहीं होता ॥ ३ ॥

तूं सतिगुरु हउ नउतनु चेला ॥ कहि कबीर मिलु अंत की बेला ॥ ४ ॥ २ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जब हम एको एकु करि जानिआ ॥ तब लोगह काहे दुखु मानिआ ॥ १ ॥ हम अपतह अपुनी पति खोई ॥ हमरै खोजि परहु मति कोई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हम मंदे मंदे मन माही ॥ साझ पाति काहू सिउ नाही ॥ २ ॥ पति अपति ता की नही लाज ॥ तब जानहुगे जब उघरैगो पाज ॥ ३ ॥ कहु कबीर पति हरि परवानु ॥ सरब तिआगि भजु केवल रामु ॥ ४ ॥ ३ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ नगन फिरत जौ पाईऐ जोगु ॥ बन का मिरगु मुकति सभु होगु ॥ १ ॥ किआ नागे किआ बाधे चाम ॥ जब नही चीनसि आतम राम ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मूड मुंडाए जौ सिधि पाई ॥ मुकती भेड न गईआ काई ॥ २ ॥ बिंदु राखि जौ तरीऐ भाई ॥ खुसरै किउ न परम गति पाई ॥ ३ ॥ कहु कबीर सुनहु नर भाई ॥ राम नाम बिनु किनि गति पाई ॥ ४ ॥ ४ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ संधिआ प्रात इस्नानु कराही ॥ जिउ भए दादुर पानी माही ॥ १ ॥ जउ पै राम राम रति नाही ॥ ते सभि धरम राइ कै जाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइआ रति बहु रूप रचाही ॥ तिन कउ दइआ सुपनै भी नाही ॥ २ ॥ चारि चरन कहहि बहु आगर ॥ साधू सुखु पावहि कलि सागर ॥ ३ ॥ कहु कबीर बहु काइ करीजै ॥ सरबसु छोडि महा रसु पीजै ॥ ४ ॥ ५ ॥ कबीर जी गउड़ी ॥ किआ जपु किआ तपु किआ ब्रत पूजा ॥ जा कै रिदै भाउ है दूजा ॥ १ ॥ रे जन मनु माधउ सिउ लाईऐ ॥ चतुराई न चतुरभुजु पाईऐ ॥ रहाउ ॥ परहरु लोभु अरु लोकाचारु ॥ परहरु कामु क्रोधु अहंकारु ॥ २ ॥ करम करत बधे अहंमेव ॥ मिलि पाथर की करही सेव ॥ ३ ॥ कहु कबीर भगति करि पाइआ ॥ भोले भाइ मिले रघुराइआ ॥ ४ ॥ ६ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ गरभ वास महि कुलु नही जाती ॥ ब्रहम बिंदु ते सभ उतपाती ॥ १ ॥ कहु रे पंडित बामन कब के होए ॥ बामन कहि कहि जनमु मत खोए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जौ तूं ब्राहमणु ब्रहमणी जाइआ ॥ तउ आन बाट काहे नही आइआ ॥ २ ॥ तुम कत ब्राहमण हम कत सूद ॥ हम कत लोहू तुम कत दूध ॥ ३ ॥ कहु कबीर जो ब्रहमु बीचारै ॥ सो ब्राहमणु कहीअतु है हमारै ॥ ४ ॥

तू सच्चा गुरु है और मैं नौसिखिया चेला हूँ । कबीर कहता है कि हे प्रभु, अन्तिम समय में मुझे अवश्य आन मिलो ॥ ४ ॥ २ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जब मैं केवल एक ही प्रभु को जानता मानता हूँ तो लोगों को भला क्यों कष्ट होता है ॥ १ ॥ मैं तो सम्मानहीन हूँ, मैंने अपनी इज्जत गँवा ली है; इसलिए कोई भी मेरे पीछे मत लगना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैं बुरा हूँ और मन से भी बुरा हूँ और मेरा मेल-जोल किसी से भी नहीं है ॥ २ ॥ मान-सम्मान की मुझे कोई लाज नहीं है और तुम लोग तभी जानोगे जब पर्दाफाश होगा ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि सम्मान वही है जो प्रभु को स्वीकृत है । हे प्राणी, तू सब कुछ त्याग कर केवल सर्वव्यापक प्रभु का ही सुमिरन कर ॥ ४ ॥ ३ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ नंगे भटकने से ही यदि प्रभु-मिलाप होता हो तो वन के सभी मृग मुक्त हो जाएगे । यदि अपने अन्तर्मन में प्रभु की पहचान नहीं की तो नंगे रहने या चारों और खाल लपेटे रहने से क्या होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यदि सिर मुंडवाने से सिद्धि प्राप्त होती हो तो भेड़ के लिए तो मुक्ति कहीं नहीं गई ॥ २ ॥ यदि ब्रह्मचारी बने रहने से व्यक्ति पार उतर जाता तो भला नंपुसक (हिजड़े) को परमगति क्यों प्राप्त नहीं हुई ॥ ३ ॥ हे भाईयो, कबीर की यह बात सुन लो कि राम-नाम के बिना भला कौन गति प्राप्त कर सकता है ॥ ४ ॥ ४ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जो सुबह-शाम स्नान करते हैं वे पानी में रहने वाले मेंढक की तरह है । जो प्रभु-नाम में लीन नहीं है वे सब लेखा चुकाने के लिए धर्मराज के पास जाएंगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो शरीर के प्रेम में लीन होकर अनेकों रूप धारण करते हैं, सपने में भी दया उनके पास नहीं आती ॥ २ ॥ बुद्धिमान व्यक्ति कहते हैं कि ऐसे व्यक्ति चार पैरों वाले पशु हैं । परन्तु साधु पुरुष ही इस कलियुग रूपी सागर में सुखी बने रहते है ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि अनेकों प्रंपच क्यों किए जाएं । सब कुछ छोड़कर केवल प्रभु-नाम के महा-रस का पान करना चाहिए ॥ ४ ॥ ५ ॥ कबीर जी गउड़ी ॥ यदि हृदय में द्वैतभाव है तो फिर जप, तप, व्रत, पूजा आदि किस काम के हैं ॥ १ ॥ हे जीव, अपना मन प्रभु में लीन कर क्योंकि चतुराईयों से प्रभु नहीं पाया जा सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ लोभ और दुनियादारी का त्याग कर दे तथा काम, क्रोध, अंहकार को छोड़ दे ॥ २ ॥ कर्मकाण्ड में पड़ा हुआ व्यक्ति अंधकार में बंध जाता है और अन्यों को इकट्ठा करके पत्थरों की पूजा करता है ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि वह प्रभु प्रेम और भक्ति से प्राप्त होता है और सहज स्वभाव से ही उस प्रभु से मिलाप होता है ॥ ४ ॥ ६ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ गर्भ में पड़े हुए जीव की कोई कुल और जाति नहीं होती क्योकि सभी प्रभु रूपी बीज से ही पैदा होते हैं ॥ १ ॥ बता भई पंडित, तू कब से ब्राह्मण बन गया । स्वयं को ब्राह्मणी से उत्पन्न विशिष्ट ब्राह्मण व्यक्ति मानता है तो तू भला किसी अन्य रास्ते से इस संसार में क्यों नहीं आया ॥ २॥ तुम भला ब्राह्मण कैसे हो गए और मैं भला कैसे शूद्र हूँ ॥ ३ ॥ मैं कैसे रक्त वाला हूँ और तुम किस प्रकार दूध से बने हो ॥ ३॥ कबीर कहता है कि जो ब्रह्म का चिन्तन करता है हमारे यहाँ तो उसी को ब्राह्मण कहा जाता है ॥ ४ ॥ ७॥

७ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ अंधकार सुखि कबहि न सोई है ॥ राजा रंकु दोऊ मिलि रोई है ॥ १ ॥ जउ पै रसना रामु न कहिबो ॥ उपजत बिनसत रोवत रहिबो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जस देखीऐ तरवर की छाइआ ॥ प्रान गए कहु का की माइआ ॥ २ ॥ जस जंती महि जीउ समाना ॥ मूए मरमु को का कर जाना ॥ ३ ॥ हंसा सरवरु कालु सरीर ॥ राम रसाइन पीउ रे कबीर ॥ ४ ॥ ८ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जोति की जाति जाति की जोती ॥ तितु लागे कंचूआ फल मोती ॥ १ ॥ कवनु सु घरु जो निरभउ कहीऐ ॥ भउ भजि जाइ अभै होइ रहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तटि तीरथि नही मनु पतीआइ ॥ चार अचार रहे उरझाइ ॥ २ ॥ पाप पुंन दुइ एक समान ॥ निज घरि पारसु तजहु गुन आन ॥ ३ ॥ कबीर निरगुण नाम न रोसु ॥ इसु परचाइ परचि रहु एसु ॥ ४ ॥ ९ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जो जन परमिति परमनु जाना ॥ बातन ही बैकुंठ समाना ॥ १ ॥ ना जाना बैकुंठ कहा ही ॥ जानु जानु सभि कहहि तहा ही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहन कहावन नह पतीअई है ॥ तउ मनु मानै जा ते हउमै जई है ॥ २ ॥ जब लगु मनि बैकुंठ की आस ॥ तब लगु होइ नही चरन निवासु ॥ ३ ॥ कहु कबीर इह कहीऐ काहि ॥ साधसंगति बैकुंठै आहि ॥ ४ ॥ १० ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ उपजै निपजै निपजि समाई ॥ नैनह देखत इहु जगु जाई ॥ १ ॥ लाज न मरहु कहहु घरु मेरा ॥ अंत की बार नही कछु तेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनिक जतन करि काइआ पाली ॥ मरती बार अगनि संगि जाली ॥ २ ॥ चोआ चंदनु मरदन अंगा ॥ सो तनु जलै काठ कै संगा ॥ ३ ॥ कहु कबीर सुनहु रे गुनीआ ॥ बिनसैगो रूपु देखै सभ दुनीआ ॥ ४ ॥ ११ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ अवर मूए किआ सोगु करीजै ॥ तउ कीजै जउ आपन जीजै ॥ १ ॥ मै न मरउ मरिबो संसारा ॥ अब मोहि मिलिओ है जीआवनहारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इआ देही परमल महकंदा ॥ ता सुख बिसरे परमानंदा ॥ २ ॥ कूअटा एकु पंच पनिहारी ॥ टूटी लाजु भरै मति हारी ॥ ३ ॥ कहु कबीर इक बुधि बीचारी ॥ ना ओहु कूअटा ना पनिहारी ॥ ४ ॥ १२ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ असथावर जंगम कीट पतंगा ॥ अनिक

गउड़ी कबीर जी ॥ अज्ञान के घोर अन्धकार में व्यक्ति कभी भी सुख से नहीं सो सकता । अंधकार से दुखी राजा और निर्धन दोनो एक समान ही रोते हैं ॥ १ ॥ जब तक जीभ प्रभु–नाम का उच्चारण नहीं करती तब तक जीव उपजता, विनष्ट होता और रोता रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे वृक्ष की छाया स्थिर नहीं रहती वैसे ही प्राणों के चले जाने पर धन सम्पदा भला किसके साथ बनी रहेगी ॥ २ ॥ जैसे यन्त्र में नाद है वैसे ही इस शरीर में भी जीवात्मा है । आत्मा निकल जाने पर मृतक व्यक्ति के रहस्य को कोई कैसे जान सकता है ॥ ३ ॥ जैसे हंस सरोवर के आसपास मंडराता रहता है वैसे ही व्यक्ति का काल उसके शरीर पर मंडराता रहता है । हे कबीर, तू तो प्रभु रूपी अमृत का ही पान कर ॥ ४ ॥ ८ ॥ गउड़ी कबीर जी । प्रभु की उत्पति सृष्टि है और इस उत्पति का प्रकाश बुद्धि है जिसे दो फल रूपी काँच के मोती और असली मोती अर्थात बुराई और अच्छाई लगे हुए हैं ॥ १ ॥ कौन सा हृदय है जिसे निर्भय कहा जा सकता है । जव भय भाग जाता है तो व्यक्ति अभय होकर विचरण करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नदियों के किनारों पर वसे तीर्थों से ही मन तृप्त नहीं होता और फिर भी व्यक्ति बुरे भले कामों में उलझा रहता है ॥ २ ॥ पाप और पुण्य दोनों एक समान है (क्योंकि ये मन की दशा पर निर्भर हैं) तेरे घर (अन्दर) में ही प्रभु रूपी पारस है इसलिए तू किसी अन्य से गुण प्राप्त करने का विचार छोड़ दे ॥ ३ ॥ हे कबीर, गुणातीत प्रभु–नाम के साथ मत रूठ और प्रभु–नाम के बहलावे में ही मन को बहलाए रख ॥ ४ ॥ ९ ॥ गउड़ी कबीर जी । जो व्यक्ति यह कहता है कि मैंने उस प्रभु को जान लिया है जो अनुमान और मन से परे है तो यह समझ लो कि वह बातों से ही अपने आप को बैकुण्ठ में पहुँचा हुआ समझ रहा है ॥ १ ॥ मैं नहीं जानता कि बैकुण्ठ कहाँ है परन्तु हर कोई यही कहता है कि वहीं जाना है और वहीं पहुँचना है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहने मात्र से ही व्यक्ति संतुष्ट नहीं होता परन्तु जब अंहकार समाप्त हो जाता है तभी मन तृप्ति का अनुभव करता है ॥ २ ॥ व्यक्ति के मन में जब तक बैकुण्ठ की आशा लगी रहती है तव तक उसका प्रभु–चरणों में निवास नहीं होता ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि मैं यह किसे बताऊँ कि साधसंगत ही बैकुण्ठ है ॥ ४ ॥ १० ॥ गउड़ी कवीर जी । जीव पैदा होता है, बड़ा होता है और वड़ा होकर मर जाता है । इस प्रकार आँखों के सामने ही यह संसार जाता हुआ दिखाई देता है ॥ १ ॥ तुम इस शरीर को अपना कहते हुए शर्म से मर क्यों नहीं जाते क्योंकि अन्तिम समय में तो तेरा कुछ भी नहीं रहता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेकों रत्नों से इस काया का पोषण किया जाता है परन्तु मरते समय इसे अग्नि में जला दिया जाता है ॥ २ ॥ जिस शरीर के अंगों को तू चन्दन के तेल से मलता है वह शरीर लकड़ी के साथ जलकर भस्म हो जाता है ॥ ३ ॥ कवीर कहता है कि हे गुणीजनों यह सुन लो कि सारा रूप सौन्दर्य विनष्ट हो जाएगा और यह सब सारी दुनिया देखेगी ॥ ४ ॥ ११ ॥ गउड़ी कबीर जी । जब कोई अन्य मरता है तो तू क्यों शोक करता है । तू ऐसा तभी कर जव तुझे सदैव जीवित वने रहना है ॥ १ ॥ मैं संसार की तरह नहीं मरूँगा क्योंकि अव संसार को जीवन देने वाला प्रभु मुझे मिल गया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ व्यक्ति इस शरीर को सुगंध से महकाता है और उसके आनन्द में उस परमानन्द प्रभु को भूल जाता है ॥२॥ शरीर रूपी कुँआ एक है और उसमें पाँच (विकार) पानी भरने वाले हैं । जीवन रूपी रस्सी बेशक टूटी–फूटी है परन्तु फिर भी मूर्ख पानी भरे जाते हैं ॥३॥ कबीर कहता है कि सोच विचार के साथ मैंने समझ लिया है कि न तो कुँआ वास्तविक है और न ही पानी भरने वाले सही हैं ॥४॥१२॥ गउड़ी कबीर जी॥ अनेकों ही प्रकार के कीड़े पतंगों के रूप में विभिन्न प्रकार से

जनम कीए बहु रंगा ॥ १ ॥ ऐसे घर हम बहुतु बसाए ॥ जब हम राम गरभ होइ आए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जोगी जती तपी ब्रहमचारी ॥ कबहू राजा छत्रपति कबहू भेखारी ॥ २ ॥ साकत मरहि संत सभि जीवहि ॥ राम रसाइनु रसना पीवहि ॥ ३ ॥ कहु कबीर प्रभ किरपा कीजै ॥ हारि परे अब पूरा दीजै ॥ ४ ॥ १३॥ गउड़ी कबीर जी की नालि रलाइ लिखिआ महला ५ ॥ ऐसो अचरजु देखिओ कबीर ॥ दधि कै भोलै बिरोलै नीरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हरी अंगूरी गदहा चरै ॥ नित उठि हासै हीगै मरै ॥ १ ॥ माता भैसा अंमुहा जाइ ॥ कुदि कुदि चरै रसातलि पाइ ॥ २ ॥ कहु कबीर परगटु भई खेड ॥ लेले कउ चूघै नित भेड ॥ ३ ॥ राम रमत मति परगटी आई ॥ कहु कबीर गुरि सोझी पाई ॥ ४ ॥ १ ॥ १४ ॥ गउड़ी कबीर जी पंचपदे ॥ जिउ जल छोडि बाहरि भइओ मीना ॥ पूरब जनम हउ तप का हीना ॥ १ ॥ अब कहु राम कवन गति मोरी ॥ तजी ले बनारस मति भई थोरी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सगल जनमु सिव पुरी गवाइआ ॥ मरती बार मगहरि उठि आइआ ॥ २ ॥ बहुतु बरस तपु कीआ कासी ॥ मरनु भइआ मगहर की बासी ॥ ३ ॥ कासी मगहर सम बीचारी ॥ ओछी भगति कैसे उतरसि पारी ॥ ४ ॥ कहु गुर गज सिव सभु को जानै ॥ मुआ कबीरु रमत स्री रामै ॥ ५ ॥ १५ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ चोआ चंदन मरदन अंगा ॥ सो तनु जलै काठ कै संगा ॥ १ ॥ इसु तन धन की कवन बडाई ॥ धरनि परै उरवारि न जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ राति जि सोवहि दिन करहि काम ॥ इकु खिनु लेहि न हरि को नाम ॥ २ ॥ हाथि त डोर मुखि खाइओ तंबोर ॥ मरती बार कसि बाधिओ चोर ॥ ३ ॥ गुरमति रसि रसि हरि गुन गावै ॥ रामै राम रमत सुखु पावै ॥ ४ ॥ किरपा करि कै नामु द्रिड़ाई ॥ हरि हरि बासु सुगंध बसाई ॥ ५ ॥ कहत कबीर चेति रे अंधा ॥ सति रामु झूठा सभु धंधा ॥ ६ ॥ १६ ॥ गउड़ी कबीर जी तिपदे चारतुके ॥ जम ते उलटि भए है राम ॥ दुख बिनसे सुख कीओ बिसराम ॥ बैरी उलटि भए है मीता ॥ साकत उलटि सुजन भए चीता ॥ १ ॥ अब मोहि सरब कुसल करि मानिआ ॥ सांति भई जब गोबिदु जानिआ ॥ १ ॥

मैंने जन्म लिए हैं ॥ १ ॥ हे प्रभु, जब हम माँ के गर्भ में आए तो इसके पहले भी स्थावर, जंगम, कीड़े, पंतगे आदि के रूप में हमने बहुत से शरीर धारण किए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कभी हम योगी, कभी तपस्वी और ब्रह्मचारी बने हैं तो कभी छत्रपति राजा और भिखारी भी बने हैं ॥ २ ॥ प्रभु से टूटे हुए सभी मरते रहते हैं और सब सन्त सदैव जीवित बने रहते हैं तथा अपनी जीभ से प्रभु रूपी रसायन का पान करते हैं ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि हे प्रभु, कृपा कर, मैं हार गया हूँ और अब मुझे पूर्णता प्रदान करो ॥ ४ ॥ १३ ॥ गउड़ी कबीर जी की । साथ में मिलाकर लिखा महला५॥ कबीर ने ऐसा आश्चर्य देखा है कि व्यक्ति दही के भ्रम में पानी को ही बिलो रहा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अंकुरित हरियाली (विकार) को गधा (मन) चर रहा है और प्रतिदिन हँस खेल कर, खा पीकर अन्त में मर जाता है । मस्त भैंसा (अंहकारी मन) बेकाबू होकर चरता है और कूद कूद कर चरता हुआ नर्क में चला जाता है ॥ २ ॥ कबीर कहता है कि यह खेल तो प्रकट ही है कि मन रूपी मेमने के मति रूपी भेड़ पीछे लगकर उसका दूध पी रही है ॥ ३ ॥ प्रभु के नाम में रमण करने से मेरी बुद्धि प्रकाशित हो गई है और कबीर कहता है कि गुरु ने ही मुझे यह सूझ बुद्धि प्रदान की है ॥ ४ ॥ १ ॥ १४ ॥ गउड़ी कबीर जी पंचपदे ॥ मैं पूर्व जन्म से ही तपस्या से विहीन हूँ इसीलिए मैं उस मछली की तरह हूँ जो जल से बाहर पड़ी तड़प रही है ॥ १ ॥ हे प्रभु, अब बताओ कि मेरी क्या गति होगी क्योंकि लोगों के कथनानुसार बनारस छोड़ते समय मेरी मति मारी गई थी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मैंने सारा जीवन शिवपुरी (काशी) में व्यतीत कर लिया और मरण–बेला में मैं उठकर मगहर में आ गया हूँ ॥ २ ॥ बहुत वर्षों तक मैंने काशी में तप किया और मरते समय मैं मगहर का वासी बन गया हूँ ॥ ३ ॥ मैंने काशी और मगहर को एक ही जैसा जाना । भक्ति में ओछा रहने पर कोई भला कहीं भी रहे कैसे पार उतर सकता है ॥ ४ ॥ कबीर कहता है कि गणेश और शिवजी आदि सभी जानते हैं कि कबीर तो श्री राम (प्रभु) का नाम सुमिरन करता हुआ ही मरा है ॥ ५ ॥ १५ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जिस शरीर के अंगों को चन्दन का इत्र मला जाता है उसे अन्त में लकड़ियों के साथ जला दिया जाता है ॥१॥ इस तन और धन का भला क्या बड़प्पन है । यह सब यहीं धरती पर पड़े रह जाते हैं और अगले लोक में साथ नहीं जातें ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो रात–भर सोते रहते हैं, दिन भर सांसारिक काम करते रहते हैं वे क्षण भर के लिए भी प्रभु नाम का सुमिरन नहीं करते ॥ २ ॥ जो दिन भर पतंगबाजी के लिए डोर पकड़े रहते है और दिन भर पान चबाते रहते हैं उन्हें मरते समय कसकर रस्सी से बाँधा जाता है ॥ ३ ॥ गुरमति के अनुरूप यदि व्यक्ति प्रेम में भीग कर प्रभु का गुणानुवाद करे तो वह प्रभु–नाम का सुमिरन करता हुआ सुख प्राप्त कर लेता है ॥ ४ ॥ कृपा करके जिसे नाम का सुमिरन करवाता है ऐसा व्यक्ति प्रभु की सुगंध को अपने हृदय में बसा लेता है ॥ ५ ॥ कबीर कहता है कि हे मूर्ख अन्धे, तू खबरदार हो जा क्योंकि केवल प्रभु–नाम ही सत्य है बाकी सारे धंधे झूठे हैं ॥ ६ ॥ १६ ॥ गउड़ी कबीर जी के तीन पद चार पंक्तियों वाले ॥ यम की तरफ से पलटकर अब मैं प्रभु की ओर उन्मुख हो गया हूँ जिससे मेरे दुख विनष्ट हो गए हैं और अब मैं सुख में आराम से हूँ । मेरे शत्रु बदलकर मेरे मित्र बन गए हैं और इसी प्रकार प्रभु से टूटे हुए लोग उसके सेवक बनकर चित्त में उसका सुमिरन करने लगे हैं ॥ १ ॥ अब मैं हर वस्तु को सुखदायक मानता हूँ क्योंकि जब से मैंने प्रभु को जान लिया है मुझमें ठण्डक और शीतलता आ गई है ॥ १ ॥ रहाउ॥

रहाउ ॥ तन महि होती कोटि उपाधि ॥ उलटि भई सुख सहजि समाधि ॥ आपु पछानै आपै आप ॥ रोगु न बिआपै तीनौ ताप ॥ २ ॥ अब मनु उलटि सनातनु हूआ ॥ तब जानिआ जब जीवत मूआ ॥ कहु कबीर सुखि सहजि समावउ ॥ आपि न डरउ न अवर डरावउ ॥ ३ ॥ १७ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ पिंडि मूऐ जीउ किह घरि जाता ॥ सबदि अतीति अनाहदि राता ॥ जिनि रामु जानिआ तिनहि पछानिआ ॥ जिउ गूंगे साकर मनु मानिआ ॥ १ ॥ ऐसा गिआनु कथै बनवारी ॥ मन रे पवन द्रिड़ सुखमन नारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सो गुरु करहु जि बहुरि न करना ॥ सो पदु रवहु जि बहुरि न रवना ॥ सो धिआनु धरहु जि बहुरि न धरना ॥ ऐसे मरहु जि बहुरि न मरना ॥ २ ॥ उलटी गंगा जमुन मिलावउ ॥ बिनु जल संगम मन महि न्हावउ ॥ लोचा समसरि इहु बिउहारा ॥ ततु बीचारि किआ अवरि बीचारा ॥ ३ ॥ अपु तेजु बाइ प्रिथमी आकासा ॥ ऐसी रहत रहउ हरि पासा ॥ कहै कबीर निरंजन धिआवउ ॥ तितु घरि जाउ जि बहुरि न आवउ ॥ ४ ॥ १८ ॥ गउड़ी कबीर जी तिपदे ॥ कंचन सिउ पाईऐ नही तोलि ॥ मनु दे रामु लीआ है मोलि ॥ १ ॥ अब मोहि रामु अपुना करि जानिआ ॥ सहज सुभाइ मेरा मनु मानिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रहमै कथि कथि अंतु न पाइआ ॥ राम भगति बैठे घरि आइआ ॥ २ ॥ कहु कबीर चंचल मति तिआगी ॥ केवल राम भगति निज भागी ॥ ३ ॥ १ ॥ १९ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जिह मरनै सभु जगतु तरासिआ ॥ सो मरना गुर सबदि प्रगासिआ ॥ १ ॥ अब कैसे मरउ मरनि मनु मानिआ ॥ मरि मरि जाते जिन रामु न जानिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मरनो मरनु कहै सभु कोई ॥ सहजे मरै अमरु होइ सोई ॥ २ ॥ कहु कबीर मनि भइआ अनंदा ॥ गइआ भरमु रहिआ परमानंदा ॥ ३ ॥ २० ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ कत नही ठउर मूलु कत लावउ ॥ खोजत तन महि ठउर न पावउ ॥ १ ॥ लागी होइ सु जानै पीर ॥ राम भगति अनीआले तीर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ एक भाइ देखउ सभ नारी ॥ किआ जानउ सह कउन पिआरी ॥ २ ॥ कहु कबीर जा कै मसतकि भागु ॥ सभ परहरि ता कउ मिलै सुहागु ॥ ३ ॥ २१ ॥

शरीर में करोड़ो ही रोग थे; वे सब उलटकर सुख देने वाली सहज समाधि बन गए हैं। अपने आप को पहचान लेने पर व्यक्ति को कोई भी रोग और तीनों प्रकार के ताप प्रभावित नहीं करते ॥ २ ॥ मन अब उलटकर पहले जैसा पवित्र हो गया है। विकारों की ओर से जीवन में ही मृत होने पर मैं उस प्रभु को जान सका हूँ। कबीर कहता है कि अब मैं सहज सुख में लीन हो गया हूँ इसीलिए अब न तो मैं डरता हूँ और न दूसरों को डराता हूँ ॥ ३ ॥ १७ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जब शरीर मर जाता है तो व्यक्ति की आत्मा किस ठिकाने पर चली जाती है। वास्तव में यह सभी सीमाओं से परे रहने वाले शब्द रूपी प्रभु में लीन हो जाती है। जो प्रभु को जानता है वही उसके स्वाद को पहचानता भी है। गूँगे द्वारा शक्कर खाने के समान उसका मन संतुष्ट हो जाता है ॥ १ ॥ प्रभु ही ऐसा ज्ञान देता है। हे मन, तू प्राण को दृढ़ता से सुषुम्ना-(बीच की नाड़ी) अर्थात मध्यम मार्ग पर टिका कर रख ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ऐसा गुरु धारण करो ताकि फिर और न धारण करना पड़े। ऐसे पद को हृदय में बसाओ कि बार-बार उसका उच्चारण न करना पड़े। ऐसा ध्यान लगाओ कि बार-बार ध्यान न लगाना पड़े और इस प्रकार से (विकारों के प्रति) मरो कि बार-बार न मरना पड़े ॥ २ ॥ इड़ा एवं पिंगला नाड़ी रूपी गंगा यमुना को मिला कर जल विहीन संगम में स्नान करो अर्थात संसार के प्रति उलटकर मन को एकाग्रता के घर में ले आओ तथा अपनी आत्मा में ही स्थित बने रहो। व्यवहार ऐसा बनाओ कि सब को समान रूप में देखो और यह मानों कि तत्व-चिन्तन के आगे अन्य कोई भी चिन्तन भला क्या है ॥ ३॥ पानी, अग्नि, वायु और पृथ्वी तथा आकाश के गुण धारण करो और ऐसा आचरण अपनाओ कि प्रभु के पास बना रहा जा सके। कबीर कहता है कि प्रभु का सुमिरन करते हुए ऐसी अवस्था में पहुँच जाओ कि फिर वापस न आना पड़े ॥ ४ ॥ १८ ॥ गउड़ी कबीर जी। तिपदे। अपने तोल के बराबर सोने से भी प्रभु को नहीं पाया जा सकता क्योंकि मैंने तो प्रभु को मन अर्पण करके ही उसे मोल लिया है ॥ १ ॥ अब प्रभु ने भी मुझे अपना मान लिया है और मेरा मन स्वाभाविक रूप से भी प्रसन्न बना हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ब्रह्मा द्वारा बार-बार प्रभु का कथन करने पर भी वह उसका अन्त नहीं पा सका परन्तु निष्ठापूर्वक भक्ति से प्रभु मेरे घर में आ बैठा है ॥ २ ॥ कबीर कहता है कि मैंने चंचल मति को त्याग दिया है क्योंकि अब मेरे हिस्से केवल प्रभु-भक्ति की आ गई है ॥३॥१॥१९॥ गउड़ी कबीर जी। जिस मरने से सारा संसार डरा हुआ है उस मरने का रहस्य शब्द-गुरु के माध्यम से मुझे प्रकाशित हो गया है॥१॥ जब मेरे मन ने मरना स्वीकार कर लिया तो अब भला मैं कैसे मँरूगा। बार-बार केवल वे ही मरते हैं जिन्होंने परमात्मा को नहीं जाना है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सभी मरने की बातें करते है परन्तु जो सहज में लीन होकर मर जाता है वही अमर हो जाता है ॥ २ ॥ कबीर कहता है कि मेरा मन आनन्दित हो गया है, इसका भ्रम दूर हो गया है और अब इसमें परमानन्द ही बचा है ॥ ३ ॥ २० ॥ गउड़ी कबीर जी। कोई खास ठिकाना नहीं है जहाँ मैं पीड़ा का अनुभव करके मूल आत्मा पर दवाई लगाँऊ। सारे शरीर को खोज लिया है परन्तु मुझे कोई ऐसा स्थान नहीं मिला ॥ १ ॥ जिसे चोट लगी हो वही उसकी पीड़ा को जानता है। प्रभु-भक्ति के बाण बहुत ही तीखी नोक वाले होते हैं ॥ १ ॥ रहाउ॥ मैं सभी जीव रूपी स्त्रियों को एक ही भाव से देखता हूँ क्योंकि क्या पता इनमें से कौन प्रभु की प्यारी है ॥ २ ॥ हे कबीर, जिसके माथे पर लेख लिखा है अन्य सबको छोड़कर केवल उसी को ही पति-प्रभु मिलता है॥३॥२१॥

गउड़ी कबीर जी ॥ जा के हरि सा ठाकुरु भाई ॥ मुकति अनंत पुकारणि जाई ॥ १ ॥ अब कहु राम भरोसा तोरा ॥ तब काहू का कवनु निहोरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तीनि लोक जा के हहि भार ॥ सो काहे न करै प्रतिपार ॥ २ ॥ कहु कबीर इक बुधि बीचारी ॥ किआ बसु जउ बिखु दे महतारी ॥ ३ ॥ २२ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ बिनु सत सती होइ कैसे नारि ॥ पंडित देखहु रिदै बीचारि ॥ १ ॥ प्रीति बिना कैसे बधै सनेहु ॥ जब लगु रसु तब लगु नही नेहु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साहनि सतु करै जीअ अपनै ॥ सो रमये कउ मिलै न सुपनै ॥ २ ॥ तनु मनु धनु ग्रिह सउपि सरीरु ॥ सोई सुहागनि कहै कबीरु ॥ ३ ॥ २३ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ बिखिआ बिआपिआ सगल संसारु ॥ बिखिआ लै डूबी परवारु ॥ १ ॥ रे नर नाव चउड़ि कत बोड़ी ॥ हरि सिउ तोड़ि बिखिआ संगि जोड़ी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सुरि नर दाधे लागी आगि ॥ निकटि नीरु पसु पीवसि न झागि ॥ २ ॥ चेतत चेतत निकसिओ नीरु ॥ सो जलु निरमलु कथत कबीरु ॥ ३ ॥ २४ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जिह कुलि पूतु न गिआन बीचारी ॥ बिधवा कस न भई महतारी ॥ १ ॥ जिह नर राम भगति नहि साधी ॥ जनमत कस न मुओ अपराधी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुचु मुचु गरभ गए कीन बचिआ ॥ बुडभुज रूप जीवे जग मझिआ ॥ २ ॥ कहु कबीर जैसे सुंदर सरूप ॥ नाम बिना जैसे कुबज कुरूप ॥ ३ ॥ २५ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जो जन लेहि खसम का नाउ ॥ तिन कै सद बलिहारै जाउ ॥ १ ॥ सो निरमलु निरमल हरि गुन गावै ॥ सो भाई मेरै मनि भावै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिह घट रामु रहिआ भरपूरि ॥ तिन की पग पंकज हम धूरि ॥ २ ॥ जाति जुलाहा मति का धीरु ॥ सहजि सहजि गुण रमै कबीरु ॥ ३ ॥ २६ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ गगनि रसाल चुऐ मेरी भाठी ॥ संचि महा रसु तनु भइआ काठी ॥ १ ॥ उआ कउ कहीऐ सहज मतवारा ॥ पीवत राम रसु गिआन बीचारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सहज कलालनि जउ मिलि आई ॥ आनंदि माते अनदिनु जाई ॥ २ ॥ चीनत चीतु निरंजन लाइआ ॥ कहु कबीर तौ अनभउ पाइआ ॥ ३ ॥ २७ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ मन का सुभाउ मनहि बिआपी ॥

गउड़ी कबीर जी । जिसका स्वामी प्रभु जैसा है हे भाई, अनेकों मुक्तियाँ उसे पुकार–पुकार कर ढूँढती फिरती हैं ॥ १ ॥ बताइये भला जब मेरा भरोसा प्रभु पर ही है तो अब मुझे और किसका आसरा हो सकता है ॥ १ ॥ रहाउ॥ जिस पर तीनों लोकों का भार है वह भला मेरा पालन पोषण क्यों नहीं करेगा ॥ २ ॥ कबीर कहता है कि सोचने के बाद मुझे यह ज्ञान मिला है कि यदि माँ ही बच्चे को ज़हर दे दे तब भला कोई क्या कर सकता है ॥ ३ ॥ २२ ॥ गउड़ी कबीर जी । सच्चे आचरण के बिना भला कोई स्त्री कैसे सतीत्व पद की अधिकारी हो सकती है । हे पंडित, इस तथ्य को देख और मन में विचार कर ॥ १ ॥ यदि पत्नी का प्रेम पति के प्रति नहीं तो पति का स्नेह भला किस प्रकार बढ़ सकता है । सांसारिक रस जब तक पति–पत्नी के सम्बन्ध का कारण हैं तब तक प्रभु पति से वास्तविक स्नेह नहीं हो सकता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो माया को मन में सत्य मानता है वह प्रभु को सपने में भी नहीं मिल सकता ॥ २ ॥ कबीर उसे ही सच्ची सुहागिन कहता है जो तन, मन, धन, सारा घर प्रभु पति को अर्पण कर देती है ॥ ३ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ संसार विषयों में डूबा हुआ है । विषयों ने ही परिवारों को डुबो रखा है ॥ १ ॥ हे व्यक्ति, अपनी नाव को कहाँ मैदान में ही डुबो रहा है और तूने प्रभु से अपनी प्रीति तोड़कर विषयों के साथ जोड़ ली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चारों ओर इस लगी हुई आग में देवता, मनुष्य सभी जल रहे हैं । प्रभु रूपी जल पास में ही है लेकिन पशु रूपी जीव ऊपर की झाग (माया) में ही मुँह मार कर प्यासा वना रहता है और जल को नहीं पीता ॥ २ ॥ उसका सुमिरन करते रहने से नीचे जल का पता भी चल जाता है और कबीर कहता है कि वही जल निर्मल जल है ॥ ३ ॥ २४ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जिस वंश में पुत्र ने ब्रह्म–ज्ञान का चिन्तन नहीं किया उस वंश की माँ विधवा क्यों न हो गई ॥ १ ॥ जिस व्यक्ति ने प्रभु भक्ति की साधना नहीं की वह अपराधी पैदा होते हुए ही क्यों न मर गया ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बहुत से गर्भ गिर जाते हैं, वह कैसे वच गया और वह भयानक सूरत और कर्मों वाला व्यक्ति संसार में नीचतापूर्ण जीवन जीता रहता है ॥ २ ॥ कबीर कहता है जैसे व्यक्ति सुन्दर स्वरूप वाले हैं वैसे ही प्रभु–नाम से विहीन व्यक्ति कुबड़े और कुरूप होते हैं ॥ ३ ॥ २५ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जो व्यक्ति प्रभु का नाम लेते हैं मैं सदैव उन पर कुर्बान जाता हूँ । जो प्रभु के निर्मल गुणों का गायन करता है वही व्यक्ति वास्तव में निर्मल होता है । वह मेरा भाई है और मेरे मन को अच्छा लगता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उनके चरण–कमलों की मैं धूल हूँ जिनके हृदय में प्रभु बस रहा है । मैं जाति का जुलाहा हूँ और मेरी बुद्धि ज़्यादा तेज़ नहीं है इसीलिए कबीर धीरे–धीरे प्रभु के गुणों में लीन बना रहता है ॥ ३ ॥ २६ ॥ गउड़ी कबीर जी । अमृत के रस वाला दशम द्वार मेरी भट्ठी है जिसमें से अमृत टपकता रहता है । शरीर को ईंधन बनाकर मैंने प्रभु रूपी परम शराब को इकट्ठा किया है ॥ १ ॥ वास्तविक शराबी तो उसे कहा जाता है जो प्रभु–नाम की शराब को पीकर ब्रह्म–ज्ञान का चिन्तन करता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शराब बनाने वाली ने जब मुझे प्रभु रूपी शराब सहजभाव से दी तो मेरे दिन–रात आनन्द में व्यतीत होने लगे ॥ २ ॥ जब मैंने मन में पहचान कर प्रभु के साथ चित्त जोड़ लिया तो कबीर कहता है कि मैंने निर्भय प्रभु को प्राप्त कर लिया है ॥ ३ ॥ २७ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ मन का स्वभाव है कि मन को ही प्रभावित करना है अर्थात मन को समझाने के लिए मन ही शस्त्र है । मन को पूर्ण

मनहि मारि कवन सिधि थापी ॥ १ ॥ कवनु सु मुनि जो मनु मारै ॥ मन कउ मारि कहहु किसु तारै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन अंतरि बोलै सभु कोई ॥ मन मारे बिनु भगति न होई ॥ २ ॥ कहु कबीर जो जानै भेउ ॥ मनु मधुसूदनु त्रिभवण देउ ॥ ३ ॥ २८ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ ओइ जु दीसहि अंबरि तारे ॥ किनि ओइ चीते चीतनहारे ॥ १ ॥ कहु रे पंडित अंबरु का सिउ लागा ॥ बूझै बूझनहारु सभागा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सूरज चंदु करहि उजीआरा ॥ सभ महि पसरिआ ब्रहम पसारा ॥ २ ॥ कहु कबीर जानैगा सोइ ॥ हिरदै रामु मुखि रामै होइ ॥ ३ ॥ २९ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ बेद की पुत्री सिंम्रिति भाई ॥ सांकल जेवरी लै है आई ॥ १ ॥ आपन नगरु आप ते बाधिआ ॥ मोह कै फाधि काल सरु सांधिआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कटी न कटै तूटि नह जाई ॥ सा सापनि होइ जग कउ खाई ॥ २ ॥ हम देखत जिनि सभु जगु लूटिआ ॥ कहु कबीर मै राम कहि छूटिआ ॥ ३ ॥ ३० ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ देइ मुहार लगामु पहिरावउ ॥ सगल त जीनु गगन दउरावउ ॥ १ ॥ अपनै बीचारि असवारी कीजै ॥ सहज कै पावड़ै पगु धरि लीजै ॥ १ ॥ रहाउ ॥ चलु रे बैकुंठ तुझहि ले तारउ ॥ हिचहि त प्रेम कै चाबुक मारउ ॥ २ ॥ कहत कबीर भले असवारा ॥ बेद कतेब ते रहहि निरारा ॥ ३ ॥ ३१ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जिह मुखि पांचउ अंम्रित खाए ॥ तिह मुख देखत लूकट लाए ॥ १ ॥ इकु दुखु राम राइ काटहु मेरा ॥ अगनि दहै अरु गरभ बसेरा ॥ १॥ रहाउ ॥ काइआ बिगूती बहु बिधि भाती ॥ को जारे को गडि ले माटी ॥ २ ॥ कहु कबीर हरि चरण दिखावहु ॥ पाछै ते जमु किउ न पठावहु ॥ ३ ॥ ३२ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ आपे पावकु आपे पवना ॥ जारै खसमु त राखै कवना ॥ १ ॥ राम जपत तनु जरि की न जाइ ॥ राम नाम चितु रहिआ समाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ का को जरै काहि होइ हानि ॥ नट वट खेलै सारिगपानि ॥ २ ॥ कहु कबीर अखर दुइ भाखि ॥ होइगा खसमु त लेइगा राखि ॥ ३ ॥ ३३ ॥ गउड़ी कबीर जी दुपदे ॥ ना मै जोग धिआन चितु लाइआ ॥ बिनु बैराग न छूटसि माइआ ॥ १ ॥ कैसे जीवनु होइ हमारा ॥

रूप से मार देने पर भला कौन सी सिद्धि मिल सकती है (मन को मारने का अर्थ यह हुआ कि बुरे संकल्पों को मारने के साथ–साथ अच्छे विचारों को भी समाप्त कर देना जो कि मन में ही उठते हैं) ॥ १ ॥ ऐसा कौन मुनि है जो मन को पूर्ण रूप से मार सका है और यदि मन को मार ही लिया है तो भला उबारने, उद्धार करने या पार करना आदि वाक्य किसके लिए होंगे । किसको पार उतारने की बात की जाएगी । दरअसल मन को मारने की बजाए उसको उदात्त करने की ओर प्रत्यनशील बने रहना चाहिए । यह कार्य भी केवल मन ही कर सकता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन के माध्यम से ही सव बोलते हैं और यह भी सत्य है कि मन की दूषित वृत्तियों को समाप्त किए बिना वास्तविक भक्ति नहीं होती ॥ २ ॥ कवीर कहता है कि जो इस रहस्य को समझ लेता है वह तीनों भुवनों के स्वामी प्रभु को मन में ही देख लेता है ॥ ३ ॥ २८ ॥ गउड़ी कबीर जी । आसमान में दिखने वाले जो यह तारागण हैं इन्हें किस चित्रकार ने चित्रित किया है ॥ १ ॥ कहो भाई पण्डित (विद्वान) यह आकाश किससे साथ जुड़ा हुआ है । जो यह जानने वाला है वह ही वड़ा भाग्यशाली है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ सूर्य और चन्द्र प्रकाश देते हैं और इन सव में ब्रह्म का विस्तार ही फैला हुआ है ॥ २ ॥ कबीर कहता है कि इस तथ्य को वही समझेगा जिसके मुख और हृदय में प्रभु–नाम हो ॥ ३ ॥ २९ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ हे भाई, स्मृति (व्यवहार को मर्यादित करने वाले ग्रंथ) वेदों की पुत्री है जो मर्यादा रूपी जंजीर और रस्सी लेकर आई है ॥ १ ॥ उसने अपने नगर में उसके निवासियों को कैद कर लिया है और मोह का फन्दा लगाकर काल रूपी तीर से उसने निशाना साधा है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ न तो काटने से यह कटती है और न ही टूटती है । नागिन बनकर यह संसार को खा रही है ॥ २ ॥ कबीर कहते हैं कि मेरे देखते–देखते जिसने सारे जग को अपने कब्जे में करके लूट लिया है मैं उसके फन्दे से राम–नाम का जाप करता छूट गया हूँ ॥ ३ ॥ ३० ॥ गउड़ी कवीर जी ॥ मन रूपी घोड़े को ज्ञान रूपी लगाम डालकर और सारी वस्तुओं को तजने की क्रिया को जीन अथवा काठी जानकर इस मन रूपी घोड़े को सुमिरन के आकाश में दौड़ाना है । मैंने अपने चिन्तन की ही सवारी की है और सहज–ज्ञान की रकाव में मैंने अपना पैर टिका दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मन रूपी घोड़े तू बैकुण्ठ की ओर चल जहाँ मैं तुझे आनन्द में तैराता रहूँ और यदि तू रुक जाए तो मैं तुझे प्रेम के चावुक से पुनः चलने के लिए प्रेरित करूं ॥२॥ कवीर कहता है वे ही सवार भले हैं जो वेदों और कतेबों से निर्लिप्त बने रहते हैं ॥ ३ ॥ ३१ ॥ जो मुख पंचामृत का पान करता था उसी मुख को मैंने आग लगते हुए (मुखाग्नि) देखा है । हे प्रभु, अग्नि में जलने और गर्भ में निवास करने का मेरा दुख हमेशा के लिए समाप्त कर दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर को अनेकों विधियों से नष्ट किया जाता है और इसको फिर कोई जलाता है और कोई मिट्टी में दवा देता है ॥ २ ॥ कवीर कहता है कि हे प्रभु, मुझे एक बार अपने चरणों का दर्शन करा दो बाद में तुम चाहे मेरे लिए यम को भी भेज देना ॥ ३ ॥ ३२ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ परमात्मा स्वयं ही अग्नि है और स्वयं ही पवन भी है । जव प्रभु ही जलाना चाहता है तो भला कौन रक्षा कर सकता है ॥ १ ॥ प्रभु–नाम का सुमिरन करते हुए भले शरीर क्यों न जल जाए परन्तु मेरा मन सदैव प्रभु–नाम में ही लीन बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किसका क्या जलता है और किसकी क्या हानि होती है क्योंकि परमात्मा खुद ही एक नट के समान ये कौतुक करता रहता है ॥ २ ॥ कबीर कहता है कि तू तो केवल दो ही अक्षरों (राम) का उच्चारण करता रह । यदि वह प्रभु मालिक होगा तो अवश्य रक्षा कर लेगा ॥ ३ ॥ ३३ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ दुपदे ॥ मैंने योग विद्या में ध्यान नहीं लगाया परन्तु प्रभु–प्रेम बिना भला माया से छुटकारा कैसे हो सकता है ॥ १॥

जब न होइ राम नाम अधारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहु कबीर खोजउ असमान ॥ राम समान न देखउ आन ॥ २ ॥ ३४ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जिह सिरि रचि रचि बाधत पाग ॥ सो सिरु चुंच सवारहि काग ॥ १ ॥ इसु तन धन को किआ गरबईआ ॥ राम नामु काहे न द्रिढ़ीआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहत कबीर सुनहु मन मेरे ॥ इही हवाल होहिगे तेरे ॥ २ ॥ ३५ ॥ गउड़ी गुआरेरी के पदे पैतीस ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी असटपदी कबीर जी की १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

सुखु मांगत दुखु आगै आवै ॥ सो सुखु हमहु न मांगिआ भावै ॥ १ ॥ बिखिआ अजहु सुरति सुख आसा ॥ कैसे होई है राजा राम निवासा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसु सुख ते सिव ब्रहम डराना ॥ सो सुखु हमहु साचु करि जाना ॥ २ ॥ सनकादिक नारद मुनि सेखा ॥ तिन भी तन महि मनु नही पेखा ॥ ३ ॥ इसु मन कउ कोई खोजहु भाई ॥ तन छूटे मनु कहा समाई ॥ ४ ॥ गुर परसादी जैदेउ नामां ॥ भगति कै प्रेमि इन ही है जानां ॥ ५ ॥ इसु मन कउ नही आवन जाना ॥ जिस का भरमु गइआ तिनि साचु पछाना ॥ ६ ॥ इसु मन कउ रूपु न रेखिआ काई ॥ हुकमे होइआ हुकमु बूझि समाई ॥ ७ ॥ इस मन का कोई जानै भेउ ॥ इह मनि लीण भए सुखदेउ ॥ ८ ॥ जीउ एकु अरु सगल सरीरा ॥ इसु मन कउ रवि रहे कबीरा ॥ ९ ॥ १ ॥ ३६ ॥ गउड़ी गुआरेरी ॥ अहिनिसि एक नाम जो जागे ॥ केतक सिध भए लिव लागे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधक सिध सगल मुनि हारे ॥ एक नाम कलिप तर तारे ॥ १ ॥ जो हरि हरे सु होहि न आना ॥ कहि कबीर राम नाम पछाना ॥ २ ॥ ३७ ॥ गउड़ी भी सोरठि भी ॥ रे जीअ निलज लाज तोुहि नाही ॥ हरि तजि कत काहू के जांही ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा को ठाकुरु ऊचा होई ॥ सो जनु पर घर जात न सोही ॥ १ ॥ सो साहिबु रहिआ भरपूरि ॥ सदा संगि नाही हरि दूरि ॥ २ ॥ कवला चरन सरन है जा के ॥ कहु जन का नाही घर ता के ॥ ३ ॥ सभु कोऊ कहै जासु की बाता ॥ सो संम्रथु निज पति है दाता ॥ ४ ॥ कहै कबीरु पूरन जग सोई ॥ जा के हिरदै अवरु न होई ॥ ५ ॥ ३८ ॥

जब तक प्रभु–नाम मेरा आधार नहीं बनता तब तक भला मेरा जीना कैसे सम्भव होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कबीर कहता है कि मैंने तो आसमान तक को खोज डाला है परन्तु प्रभु के समान मैंने अन्य किसी को नहीं देखा ॥ २ ॥ ३४ ॥ गउड़ी कबीर जी ॥ जिस सिर पर तू कभी वहुत ही रूचि पूर्वक पगड़ी बाँधता था आज कौए उसी सिर पर अपनी चोंच को साफ करते हैं ॥ १ ॥ इस शरीर और धन का क्या अभिमान किया जाना चाहिए । तू प्रभु–नाम का एकाग्र होकर सुमिरन क्यों नहीं करता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कबीर कहता है कि मेरे मन, तेरा भी यही हाल होगा ॥ २ ॥ ३५॥ गउड़ी गुआरेरी के पैंतीस पद ॥

रागु गउड़ी गुआरेरी अप्टपदी कबीर जी की १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

व्यक्ति सुख माँगता है परन्तु आगे से उसे दुख मिलता है । इसलिए ऐसा सुख माँगना मुझे अच्छा नहीं लगता ॥ १ ॥ व्यक्ति की सुरति तो विषय–विकारों में पड़ी रहती है परन्तु वह फिर भी सुख की आशा लगाए रहता है । उसके अन्दर भला प्रभु का निवास कैसे होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस सुख से शिव और ब्रह्मा भी भय खाते हैं उस सुख को ही मैंने सत्य माना हुआ है ॥ २ ॥ सनक, सनन्दन, नारद मुनि एवं शेषनाग आदि सवने शरीर में वसते हुए ज्योति स्वरूप मन (आत्मा) के दर्शन नहीं किए ॥ ३ ॥ हे भाई, कोई इस मन को भली प्रकार खोजो कि तन छूटने के बाद यह मन अर्थात आत्मा कहाँ चली जाती है ॥ ४ ॥ गुरु की कृपा से जैदेव और नामदेव आदि ने भक्ति के प्रेम के माध्यम से इस रहस्य को जान लिया है ॥ ५ ॥ यह मन (आत्मा) कहीं आता–जाता नहीं । इस तथ्य को वही पहचानता और जानता है जिसका भ्रम दूर हो गया है ॥ ६ ॥ इस मन का कोई रूप आकार नहीं है । यह प्रभु के हुकुम में ही उत्पन्न होता है और हुकुम (विधान) को बूझकर उसी में लीन हो जाएगा ॥ ७ ॥ इस आत्मा के रहस्य को कौन जानता है । यह अन्ततः सुखों के स्वामी प्रभु में लीन हो जाती है ॥ ८ ॥ यह आत्मा तो एक है जो सभी शरीरों में बसी हुई है और कबीर इसी आत्मा का सुमिरन करने में लीन है ॥९॥१॥३६॥ गउड़ी गुआरेरी॥ जो एक प्रभु–नाम में लीन रात–दिन चैतन्य से पूर्ण वने रहते हैं ऐसे कितने ही प्रभु में सुरति लीन करके सिद्ध पुरुष बन गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधना करने वाले सिद्ध पुरुष और सभी मुनिगण हार चुके हैं । केवल एक नाम रूपी कल्प–वृक्ष ही उन सब का उद्धार करता है ॥ १ ॥ जो प्रभु–रंग में हरे–भरे हो गए हैं वे अव अन्य कुछ नहीं होते॥ कबीर कहते हैं कि वे अब केवल प्रभु–नाम को ही जानते पहचानते हैं ॥ २ ॥ ३७ ॥ गउड़ी भी सोरठि भी ॥ हे निर्लज्ज जीव, तुझे ज़रा भी लाज नहीं आती । प्रभु को छोड़कर तू कहाँ और किसके पास जाता है ॥ १ ॥ रहाउ॥ जिसका अपना मालिक ऊँचा हो उसे पराए घर जाना शोभा नहीं देता ॥ १ ॥ वह प्रभु सब स्थानों में परिपूर्ण है जो सदैव हमारे साथ ही है दूर नहीं है ॥ २ ॥ जिसके चरणों की शरण में धन–दौलत पड़ी रहती है, हे व्यक्ति, तू यह बता उसके घर में कौन सी चीज नहीं है ॥ ३ ॥ सब जिसकी बात करते हैं वह समर्थ स्वयं ही अपना मालिक है और दान देने वाला है ॥ ४ ॥ कबीर कहता है कि संसार में वही पूर्ण है जिसके हृदय में प्रभु के बिना अन्य कोई नहीं है ॥ ५ ॥३८॥

कउनु को पूतु पिता को का को ॥ कउनु मरै को देइ संतापो ॥ १ ॥ हरि ठग जग कउ ठगउरी लाई ॥ हरि के बिओग कैसे जीअउ मेरी माई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कउन को पुरखु कउन की नारी ॥ इआ तत लेहु सरीर बिचारी ॥ २ ॥ कहि कबीर ठग सिउ मनु मानिआ ॥ गई ठगउरी ठगु पहिचानिआ ॥ ३ ॥ ३९ ॥ अब मोकउ भए राजा राम सहाई ॥ जनम मरन कटि परम गति पाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधू संगति दीओ रलाइ ॥ पंच दूत ते लीओ छडाइ ॥ अंम्रित नामु जपउ जपु रसना ॥ अमोल दासु करि लीनो अपना ॥ १ ॥ सतिगुर कीनो परउपकारु ॥ काढि लीन सागर संसार ॥ चरन कमल सिउ लागी प्रीति ॥ गोबिंदु बसै निता नित चीत ॥ २ ॥ माइआ तपति बुझिआ अंगिआरु ॥ मनि संतोखु नामु आधारु ॥ जलि थलि पूरि रहे प्रभ सुआमी ॥ जत पेखउ तत अंतरजामी ॥ ३ ॥ अपनी भगति आप ही द्रिड़ाई ॥ पूरब लिखतु मिलिआ मेरे भाई ॥ जिसु क्रिपा करे तिसु पूरन साज ॥ कबीर को सुआमी गरीब निवाज ॥ ४ ॥ ४० ॥ जलि है सूतकु थलि है सूतकु सूतक ओपति होई ॥ जनमे सूतकु मूए फुनि सूतकु सूतक परज बिगोई ॥ १ ॥ कहु रे पंडीआ कउन पवीता ॥ ऐसा गिआनु जपहु मेरे मीता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नैनहु सूतकु बैनहु सूतकु सूतकु स्रवनी होई ॥ ऊठत बैठत सूतकु लागै सूतकु परै रसोई ॥ २ ॥ फासन की बिधि सभु कोऊ जानै छूटन की इकु कोई ॥ कहि कबीर रामु रिदै बिचारै सूतकु तिनै न होई ॥ ३ ॥ ४१ ॥ गउड़ी ॥ झगरा एकु निबेरहु राम ॥ जउ तुम अपने जन सौ कामु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इहु मनु बडा कि जा सउ मनु मानिआ ॥ रामु बडा कै रामहि जानिआ ॥ १ ॥ ब्रहमा बडा कि जासु उपाइआ ॥ बेदु बडा कि जहां ते आइआ ॥ २ ॥ कहि कबीर हउ भइआ उदासु ॥ तीरथु बडा कि हरि का दासु ॥ ३ ॥ ४२ ॥ रागु गउड़ी चेती ॥ देखौ भाई ग्यान की आई आंधी ॥ सभै उडानी भ्रम की टाटी रहै न माइआ बांधी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुचिते की दुइ थूनि गिरानी मोह बलेडा टूटा ॥ तिसना छानि परी धर ऊपरि दुरमति भांडा फूटा ॥

किसका पुत्र है और किसका पिता है ? कौन मरता है और कौन दुख देता है ? ॥ १ ॥ प्रभु रूपी ठग ने सारे संसार को ठगा हुआ है । हे मेरी माँ, मैं प्रभु के वियोग में कैसे जीवित बना रहूँगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किसका पति और किसकी स्त्री है, इस सार–तत्व को अपने शरीर में ही विचार करके देख लो ॥ २ ॥ कबीर कहता है कि अब मेरा मन प्रभु रूपी ठग पर रीझ गया है और जबसे मैंने उस महाठग को पहचान लिया है उसके फैलाए हुए भ्रमजाल समाप्त हो गए हैं ॥ ३ ॥ ३९ ॥ मेरा सहायक तो अब राजा राम रूपी प्रभु हो गया है जिससे मेरा जन्म–मरण कट गया है और मैंने परम गति को प्राप्त कर लिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उसने मुझे साधसंगत से मिला दिया है और इस प्रकार पाँचों विकार रूपी दूतों से मुझे छुड़ा लिया है । अपनी जीभ से मैं अमृत–नाम का जाप करता हूँ और प्रभु ने भी मुझे बिना मोल का दास बना लिया है ॥ १ ॥ सच्चे गुरु ने मुझ पर उपकार किया है और मुझे संसार–सागर से बचा लिया है । प्रभु के चरण–कमलों से मेरा प्यार हो गया है और अब प्रभु सदैव मेरे मन में बसता है ॥ २ ॥ माया का जलता हुआ अंगार अब बुझ गया है क्योंकि मेरे मन में सन्तोष आ गया है और प्रभु–नाम ही मेरा आधार बन गया है । स्वामी प्रभु धरती, पानी सब जगह व्याप्त है और जिधर भी मैं देखता हूँ उधर ही वह अन्तर्यामी दिखाई देता है ॥ ३ ॥ अपनी भक्ति को उसने मेरे अन्दर स्वयं ही प्रवल किया है । हे भाई, वह मुझे पूर्व लेखों के कारण ही मिला है । जिस पर उसकी कृपा होती है उसकी शान पूरी हो जाती है । कबीर का स्वामी गरीबों का ध्यान रखने वाला है ॥ ४ ॥ ४० ॥ जल में अपवित्रता है, थल में अपवित्रता है और वास्तव में सारी उत्पत्ति में ही अपवित्रता है । जन्म लेने में अपवित्रता है मरने में अपवित्रता है और दरअसल इस अपवित्रता ने ही प्रभु की सारी प्रजा को वर्बाद किया है ॥ १ ॥ अरे पण्डित, भला बताओं कौन पवित्र है ? हे मेरे मित्र, इस ज्ञान का ही वार–वार चिन्तन करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आँखों में, वचन में, कानों में अशुद्धता है । उठने–बैठने में अपवित्रता है और रसोई में भी अपवित्रता आ धमकती है ॥ २ ॥ अपवित्रता में फँसने की विधि तो सबको आती है परन्तु इससे छूटने की विधि कोई एकाध ही जानता है । कबीर कहता है जो हृदय में प्रभु का चिन्तन करते रहते हैं उन्हें किसी प्रकार की अपवित्रता नहीं लगती ॥ ३ ॥ ४१ ॥ गउड़ी ॥ हे प्रभु, यदि तुम अपने इस सेवक से कोई काम लेना चाहते हो तो एक झगड़े का निपटारा कर दो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह मन बड़ा है या जिस प्रभु में लीन होकर यह संतुष्ट हुआ है वह बड़ा है । प्रभु बड़ा है या प्रभु को जानने वाला बड़ा है ॥ १ ॥ ब्रह्मा बड़ा है या जिसने उसे पैदा किया वह बड़ा है । वेद बड़ा है कि जहाँ से यह प्रकाशमान हुआ है वह स्रोत बड़ा है ॥ २ ॥ कबीर कहता हैं कि मैं तो इसी बात से परेशान हूँ कि तीर्थ–स्नान बड़ा है या प्रभु का सेवक बड़ा है ॥ ३ ॥ ४२ ॥ रागु गउड़ी चेती । हे भाई देखो, ब्रह्म–ज्ञान की ऐसी आँधी आई है कि भ्रम का छप्पर पूरी तरह उड़ गया है और माया के बन्धन भी अब नहीं बचे हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ दुविधाभाव के दोनों फन्दे गिर गए हैं और मोह का शहतीर टूट गया है । तृष्णा रूपी घास–फूस की छत धरती पर गिर पड़ी है और

१ ॥ आंधी पाछे जो जलु बरखै तिहि तेरा जनु भीनां ॥ कहि कबीर मनि भइआ प्रगासा उदै भानु जब चीना ॥ २ ॥ ४३ ॥

गउड़ी चेती १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

हरि जसु सुनहि न हरि गुन गावहि ॥ बातन ही असमानु गिरावहि ॥ १ ॥ ऐसे लोगन सिउ किआ कहीऐ ॥ जो प्रभ कीए भगति ते बाहज तिन ते सदा डराने रहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आपि न देहि चुरू भरि पानी ॥ तिह निंदहि जिह गंगा आनी ॥ २ ॥ बैठत उठत कुटिलता चालहि ॥ आपु गए अउरन हू घालहि ॥ ३ ॥ छाडि कुचरचा आन न जानहि ॥ ब्रहमा हू को कहिओ न मानहि ॥ ४ ॥ आपु गए अउरन हू खोवहि ॥ आगि लगाइ मंदर मै सोवहि ॥ ५ ॥ अवरन हसत आप हहि कांने ॥ तिन कउ देखि कबीर लजाने ॥ ६ ॥ १ ॥ ४४ ॥

रागु गउड़ी बैरागणि कबीर जी १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

जीवत पितर न मानै कोऊ मूएं सिराध कराही ॥ पितर भी बपुरे कहु किउ पावहि कऊआ कूकर खाही ॥ १ ॥ मोकउ कुसलु बतावहु कोई ॥ कुसलु कुसलु करते जगु बिनसै कुसलु भी कैसे होई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ माटी के करि देवी देवा तिसु आगै जीउ देही ॥ ऐसे पितर तुमारे कहीअहि आपन कहिआ न लेही ॥ २ ॥ सरजीउ काटहि निरजीउ पूजहि अंतकाल कउ भारी ॥ राम नाम की गति नही जानी भै डूबे संसारी ॥ ३ ॥ देवी देवा पूजहि डोलहि पारब्रहमु नही जाना ॥ कहत कबीर अकुलु नही चेतिआ बिखिआ सिउ लपटाना ॥ ४ ॥ १ ॥ ४५ ॥ गउड़ी ॥ जीवत मरै मरै फुनि जीवै ऐसे सुंनि समाइआ ॥ अंजन माहि निरंजनि रहीऐ बहुड़ि न भवजलि पाइआ ॥ १ ॥ मेरे राम ऐसा खीरु बिलोईऐ ॥ गुरमति मनूआ असथिरु राखहु इन बिधि अंम्रितु पीओईऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुर कै बाणि बजर कल छेदी प्रगटिआ पदु परगासा ॥ सकति अधेर जेवड़ी भ्रमु चूका निहचलु सिव घरि बासा ॥ २ ॥ तिनि

दुमर्ति का बर्तन फूट गया है ॥ १ ॥ इस आँधी के बाद बरसने वाले प्रेम–जल से तेरा दास पूरी तरह से भीग गया है और कबीर कहता है कि जब मैंने ज्ञान के सूर्य को चढ़ते हुए देख लिया है तो मेरा मन प्रकाशमान हो उठा है ॥ २ ॥ ४३ ॥

गउड़ी चेती १ओअंकार सतिगुर प्रसादि

हरि–यश को न सुनने वाले और न ही प्रभु के गुण गाने वाले केवल बातों–बातों में ही आकाश नीचे गिरा देते हैं। ऐसे व्यक्तियों को भला क्या कहा जाए। जिन्हें प्रभु ने भक्ति–विहीन कर दिया है उनसे तो सदा डरते ही रहना चाहिए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ स्वयं तो वह किसी को चुल्लू भर पानी भी नहीं दे पाते परन्तु निन्दा उसकी करते है जो गंगा को धरती पर लेकर आया था ॥ २ ॥ उठते–बैठते वे कुटिलता से चलते है और स्वयं तो तबाह हो चुके ही होते हैं, अन्य लोगों को भी तबाह करते हैं ॥ ३ ॥ बुरी बातों के अतिरिक्त वे अन्य कुछ नहीं जानते और ब्रह्मा का कहा हुआ भी नहीं मानते ॥ ४ ॥ वे आप तो कुमार्ग पर गए ही होते हैं अन्यों को भी भटका देते हैं। वे अपने घर में ही आग लगाकर सोए पड़े रहते हैं ॥ ५ ॥ बेशक आप तो वे एक आँख वाले हैं परन्तु दूसरों पर हँसते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों को देखकर कबीर को शर्म महसूस होती है ॥ ६ ॥ १ ॥ ४४ ॥

रागु गउड़ी बैरागणि कबीर जी १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जीवित माता–पिता को तो कोई मानता नहीं और उनके मरने पर लोग उनका श्राद्ध करते हैं। खाना भी कौए, कुत्ते आदि खा जाते हैं और उन बेचारे पितरों को भला क्या मिलता है ॥ १ ॥ कोई मुझे बताए कि वास्तविक आनन्द क्या है। आनन्द–आनन्द कहते कहते सारा संसार विनष्ट हो जाता है तो भला कहने मात्र से ही आनन्द कैसे होगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मिट्टी के देवी–देवता बनाकर लोग उनके सामने प्राण न्यौछावर करते हैं और जीवों की बलि देते हैं। पित्तरों का भी ये हाल हैं कि जो वे चाहते हैं कहकर भी नहीं माँग सकते ॥ २ ॥ निर्जीव की पूजा करने के लिए क्योंकि तुम सजीव को काटते हो, तुम्हें अन्त समय में बहुत मुश्किल पड़ेगी। प्रभु–नाम की गति को तुम नहीं जानते और संसार रूपी समुद्र में तुम भयभीत होकर डूब जाओगे। देवी–देवताओं की पूजा करते भटकते रहते हो परन्तु परब्रह्म परमात्मा को नहीं जानते। कबीर कहता है कि तुमने कुल–रहित उस प्रभु का सुमिरन नहीं किया और तुम विषमय विकारों के साथ लिपटे पड़े हो ॥ ४ ॥ १ ॥ ४५ ॥ गउड़ी ॥ व्यक्ति को जीवित रहते हुए ही विषयों की ओर से मर जाना चाहिए और इस प्रकार मरकर फिर जीवित बने रहना चाहिए। इस ढ़ग से ही वह निर्गुण प्रभु में लीन हो जाता है। संसार की कालिमा में रहते हुए भी जो कालिमा नहीं लगने देता वह फिर संसार रूपी सागर में नहीं पड़ता ॥ १ ॥ हे मेरे प्रभु, ऐसा दूध बिलोना ही उचित है। गुरु की मति के अनुरूप होकर मन को स्थिर रखो और इस विधि से तुम अमृत का पान कर लोगे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के उपदेश के बाणों ने वज्र रूपी कलियुग को छिन्न–भिन्न कर दिया है और प्रभु का प्रकाश मुझ पर प्रकट हो गया है। माया से प्रभावित होकर अंधेरे में रस्सी को साँप समझने का मेरा भ्रम चुक गया है और अब मैं प्रभु के स्थिर स्थान में आ बसा हूँ ॥ २ ॥

बिनु बाणै धनखु चढाईऐ इहु जगु बेधिआ भाई ॥ दह दिस बूडी पवनु झुलावै डोरि रही लिव लाई ॥ ३ ॥ उनमनि मनूआ सुंनि समाना दुबिधा दुरमति भागी ॥ कहु कबीर अनभउ इकु देखिआ राम नामि लिव लागी ॥ ४ ॥ २ ॥ ४६ ॥ गउड़ी बैरागणि तिपदे ॥ उलटत पवन चक्र खटु भेदे सुरति सुंन अनरागी ॥ आवै न जाइ मरै न जीवै तासु खोजु बैरागी ॥ १ ॥ मेरे मन मन ही उलटि समाना ॥ गुर परसादि अकलि भई अवरै नातरु था बेगाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निवरै दूरि दूरि फुनि निवरै जिनि जैसा करि मानिआ ॥ अलउती का जैसे भइआ बरेडा जिनि पीआ तिनि जानिआ ॥ २ ॥ तेरी निरगुन कथा काइ सिउ कहीऐ ऐसा कोइ बिबेकी ॥ कहु कबीर जिनि दीआ पलीता तिनि तैसी झल देखी ॥ ३ ॥ ३ ॥ ४७ ॥ गउड़ी ॥ तह पावस सिंधु धूप नही छहीआ तह उतपति परलउ नाही ॥ जीवन मिरतु न दुखु सुखु बिआपै सुंन समाधि दोऊ तह नाही ॥ १ ॥ सहज की अकथ कथा है निरारी ॥ तुलि नही चढै जाइ न मुकाती हलुकी लगै न भारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अरध उरध दोऊ तह नाही राति दिनसु तह नाही ॥ जलु नही पवनु पावकु फुनि नाही सतिगुर तहा समाही ॥ २ ॥ अगम अगोचरु रहै निरंतरि गुर किरपा ते लहीऐ ॥ कहु कबीर बलि जाउ गुर अपुने सतसंगति मिलि रहीऐ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ४८ ॥ गउड़ी ॥ पापु पुंनु दुइ बैल बिसाहे पवनु पूजी परगासिओ ॥ त्रिसना गूणि भरी घट भीतरि इन बिधि टांड बिसाहिओ ॥ १ ॥ ऐसा नाइकु रामु हमारा ॥ सगल संसारु कीओ बनजारा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कामु क्रोधु दुइ भए जगाती मन तरंग बटवारा ॥ पंच ततु मिलि दानु निबेरहि टांडा उतरिओ पारा ॥ २ ॥ कहत कबीरु सुनहु रे संतहु अब ऐसी बनि आई ॥ घाटी चढत बैलु इकु थाका चलो गोनि छिटकाई ॥ ३ ॥ ५ ॥ ४९ ॥ गउड़ी पंचपदा ॥ पेवकड़ै दिन चारि है साहुरड़ै जाणा ॥ अंधा लोकु न जाणई मूरखु एआणा ॥ १ ॥ कहु डडीआ बाधै धन खड़ी ॥ पाहू घरि आए मुकलाऊ आए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ ओह जि दिसै खूहड़ी कउन लाजु वहारी ॥ लाजु घड़ी सिउ तूटि पड़ी उठि चली पनिहारी ॥ २ ॥ साहिबु

हे भाई, उस माया ने तो बिना तीर के ही कमान को खींचा है और इस संसार को बींध दिया है। डूबता हुआ व्यक्ति दसों–दिशाओं से हवा के थपेड़े खाता है परन्तु मैं प्रभु–प्रेम की डोरी के माध्यम से उस प्रभु में लीन बना हुआ हूँ ॥ ३ ॥ दुविधा और दुर्मति के भाग जाने से जीव ज्ञान दशा को प्राप्त हो जाता है और शून्य प्रभु में लीन हो जाता है । कबीर कहता है कि उस एक भय–रहित प्रभु को मैंने देख लिया है और मेरी सुरति राम–नाम में लीन हो गई है ॥ ४ ॥ २ ॥ ४६ ॥ गउड़ी बैरागणि तीन पदे ॥ विषय–विकारों की शक्ति रूपी पवन को उलट कर मैंने छः चक्रों का भेदन कर लिया है और मेरी सुरति उस शून्य प्रभु के प्रेम में लीन हो गई है । हे बैरागी दिखाई देने वाले जीव, जो आता–जाता नहीं है, मरता–जीता नहीं है तू उसकी खोज कर ॥ १ ॥ हे मेरे मन, तू अपने आप को उलटाकर और शुद्ध आत्मा में परिवर्तित होकर उस प्रभु में लीन हो जा । गुरु की कृपा से अब मेरी बुद्धि अन्य प्रकार की हो गई है नहीं तो मैं एक बेगानेपन के एहसास में भटक रहा हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जो पास था वह दूर हो गया है और जो दूर था वह पास आ गया । वास्तव में जो जैसा माँगता है उसको वैसा ही फल प्राप्त हो जाता है । जैसे मीठे पानी को जो पीता है वही उसके स्वाद को जानता है ॥ २ ॥ तेरी गुणातीत कथा, हे प्रभु, किससे कही जाए । क्या कोई ऐसा विवेकशील व्यक्ति है । कबीर कहता है कि जिसने जिस प्रकार के ज्ञान का पलीता अपने अन्दर लगाकर उसको आग लगाई है वह उसी प्रकार की प्रभु की झलक देख लेता है ॥ ३ ॥ ३ ॥ ४७ ॥ गउड़ी ॥ उस प्रभु के पास न तो वर्षा, न समुद्र, न धूप, न छाँव, न उत्पत्ति और न प्रलय होती है । वहाँ जीवन, मौत, दुख, सुख कुछ भी व्याप्त नहीं होता और वहाँ केवल शून्य समाधि ही होती है, द्वैतभाव नहीं होता ॥ १ ॥ सहजभाव की अकथनीय कथा निराली ही है जिसे न तौला जा सकता है और न ही यह समाप्त होती है, न ही यह हल्की और न ही भारी लगती है ॥ १॥ रहाउ ॥ वहाँ अधो एवं ऊर्ध्वमुखी होना भी नहीं होता और वहाँ रात–दिन भी नहीं होते हैं । सच्चा गुरु परमात्मा वहाँ लीन बना रहता है जहाँ जल, पवन, अग्नि आदि नहीं होते ॥ २ ॥ अगम्य, अगोचर प्रभु वहाँ सदैव बना रहता है और वहाँ उसे गुरु की कृपा से ही पाया जाता है । हे कबीर, तू सद्संगत में लीन होकर रह और अपने गुरु पर बलिहारी होता रह ॥ ३ ॥ ४ ॥ ४८ ॥ गउड़ी ॥ पाप और पुण्य से संयुक्त बैल अर्थात शरीर को प्राप्त किया गया है जिसमें श्वास की पूँजी स्थित की गई है । तृष्णा रूपी बोझ को जीव ने अपने हृदय में भरा हुआ है और इस प्रकार उसने माल खरीदा है ॥ १ ॥ मेरा प्रभु ऐसा नायक (साहूकार) है जिसने सारे संसार को ही व्यापारी बना दिया है ॥ १ ॥ रहाउ॥ काम, क्रोध दोनों टैक्स (कर) लेने वाले हैं और मन की लहरें डाकूओं के समान हैं । शरीर के पाँचों तत्व मिलकर इन लुटेरों का लूटा हुआ माल बाँट लेते हैं और इस प्रकार यह सारा लदान पार उतरता है ॥ २ ॥ कबीर कहता है कि हे साधुजनों अब तो ऐसी अवस्था बन गई है कि यह बैल रूपी शरीर चढ़ाई–चढ़ते हुए थक गया है और लदा हुआ बोझ छिटकाकर फेंकते हुए अपने रास्ते पर चल निकला है ॥ गउड़ी पंचपदा ॥ इस संसार रूपी मायके में तो चार दिन ही रहना है अन्ततः उस लोक के ससुराल में जाना ही पड़ेगा । मूर्ख और अज्ञानी व्यक्ति इतनी सी बात को नहीं जानते ॥ १ ॥ देखो भला जीव रूपी स्त्री लापरवाही से खड़ी साड़ी बाँध रही है । मेहमान (यम) उसके घर पर उसे ले चलने के लिए आए हैं । वह सामने कौन दिखाई दे रही है जो कुँए में रस्सी को नीचे डाल रही है । प्राण रूपी रस्सी शरीर रूपी बर्तन से टूट कर अलग हो जाती है और पानी भरने वाली (आत्मा) उठकर चल पड़ती है ॥ २ ॥

होइ दइआलु क्रिपा करे अपुना कारजु सवारे ॥ ता सोहागणि जाणीऐ गुर सबदु बीचारे ॥ ३ ॥ किरत की बांधी सभ फिरै देखहु बीचारी ॥ एस नो किआ आखीऐ किआ करे विचारी ॥ ४ ॥ भई निरासी उठि चली चित बंधि न धीरा ॥ हरि की चरणी लागि रहु भजु सरणि कबीरा ॥ ५ ॥ ६ ॥ ५० ॥ गउड़ी ॥ जोगी कहहि जोगु भल मीठा अवरु न दूजा भाई ॥ रुंडित मुंडित एकै सबदी एइ कहहि सिधि पाई ॥ १ ॥ हरि बिनु भरमि भुलाने अंधा ॥ जा पहि जाउ आपु छुटकावनि ते बाधे बहु फंधा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह ते उपजी तही समानी इह बिधि बिसरी तब ही ॥ पंडित गुणी सूर हम दाते एहि कहहि बड हम ही ॥ २ ॥ जिसहि बुझाए सोई बूझै बिनु बूझे किउ रहीऐ ॥ सतिगुरु मिलै अंधेरा चूकै इन बिधि माणकु लहीऐ ॥ ३ ॥ तजि बावे दाहने बिकारा हरि पदु द्रिड़ु करि रहीऐ ॥ कहु कबीर गूंगै गुड़ु खाइआ पूछे ते किआ कहीऐ ॥ ४ ॥ ७ ॥ ५१ ॥

रागु गउड़ी पूरबी कबीर जी ॥ १ओ सतिगुर प्रसादि ॥

जह कछु अहा तहा किछु नाही पंचु ततु तह नाही ॥ इड़ा पिंगुला सुखमन बंदे ए अवगन कत जाही ॥ १ ॥ तागा तूटा गगनु बिनसि गइआ तेरा बोलतु कहा समाई ॥ एह संसा मोकउ अनदिनु बिआपै मोकउ को न कहै समझाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जह बरभंडु पिंडु तह नाही रचनहारु तह नाही ॥ जोड़णहारो सदा अतीता इह कहीऐ किसु माही ॥ २ ॥ जोड़ी जुड़ै न तोड़ी तूटै जब लगु होइ बिनासी ॥ का को ठाकुरु का को सेवकु को काहू कै जासी ॥ ३ ॥ कहु कबीर लिव लागि रही है जहा बसे दिन राती ॥ उआ का मरमु ओही परु जानै ओहु तउ सदा अबिनासी ॥ ४ ॥ १ ॥ ५२ ॥ गउड़ी ॥ सुरति सिम्रिति दुइ कंनी मुंदा परमिति बाहरि खिंथा ॥ सुंन गुफा महि आसणु बैसणु कलप बिबरजित पंथा ॥ १ ॥ मेरे राजन मै बैरागी जोगी ॥ मरत न सोग बिओगी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ खंड ब्रहमंड महि सिंडी मेरा बटूआ सभु जगु भसमाधारी ॥ ताड़ी लागी त्रिपलु पलटीऐ छूटै होइ पसारी ॥ २ ॥ मनु पवनु दुइ तूंबा करी है जुग जुग

यदि प्रभु दयालु होकर कृपा करे तो जीव रूपी स्त्री अपना काम सँवार लेगी । सुहागिन स्त्री वही है जो गुरु के शब्द का पूर्ण रूप से चिन्तन करती है ॥ ३ ॥ इस तथ्य को ध्यानपूर्व देखो कि किए हुए कर्मों के बन्धनों में पड़े हुए सभी भटक रहे हैं । तब भला इस जीव रूपी स्त्री को क्या कहा जाए और यह बेचारी भला क्या कर सकती है ॥ ४ ॥ उसके चित्त में कोई हौसला और धैर्य नहीं रहता और अन्ततः वह निराश होकर यहाँ से उठ जाती है । हे कबीर, तू प्रभु के चरणों में लगा रह और उसकी शरण में ध्यान बनाए रख ॥ ५ ॥ ६ ॥ ५० ॥ गउड़ी ॥ योगी कहता है कि योग ही अच्छा और मीठा है अन्य कुछ भी अच्छा नहीं है । रुंडित और मुंडित अर्थात शरीर को विकृत करने वाले और एक ही शब्द अलख आदि कहने वाले यही कहते हैं कि हमने ही सिद्धि प्राप्त कर ली है ॥ १ ॥ प्रभु के बिना ये सभी अन्धे भ्रमों में भूले हुए हैं । जिसके पास भी मुक्त होने के लिए जाया जाता है वह पहले से ही अनेकों बन्धनों में बँधा हुआ दिखाई पड़ता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ उत्पन्न करने वाले प्रभु में ही जब जीव की सुरति समा जाती है तो सिद्धि पाने के अहंकार की बात समाप्त हो जाती है । हर व्यक्ति अपने आप को ही पण्डित, गुणवान, शूरवीर दाता कहते हुए कहता है कि मैं ही सबसे बड़ा हूँ ॥ २ ॥ जिसे प्रभु जनवाता है वही उसके रहस्य को बूझ पाता है अन्यथा बिना बूझे जीने का क्या लाभ । सच्चे प्रभु के मिलने से अंधकार चुक जाता है और इस प्रकार आत्म–ज्ञान रूपी मोती, माणिक प्राप्त होता है ॥ ३ ॥ दाएँ–बाएँ झांकने के विचारों को छोड़कर प्रभु के चरणों का ही दृढ़तापूर्वक सुमिरन करते रहना चाहिए तब वह अवस्था आ जाएगी जो गूंगे के गुड़ खाकर पूछने पर भी स्वाद को न बतला पाने वाली अवस्था होती है ॥ ४ ॥ ७ ॥ ५१ ॥

राग गउड़ी पूरबी कबीर जी १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जहाँ कुछ था वहाँ अब कुछ भी नहीं है और पाँचों तत्व भी वहाँ नहीं है । इड़ा, पिंगला और सुष्मना की रूकावटें, हे जीव, अब कहाँ चली गई हैं अर्थात् मन के बाद यह सब नष्ट हो जाती हैं ॥ १ ॥ जीवन की डोर टूट गई है, आकाश विनष्ट हो गया है और तेरा वार्तालाप कहाँ चला गया है । ऐसा होता है और यह डर तुझे रात–दिन सताता है । मुझे कोई भी इसके बारे में समझाकर नहीं कहता ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जहाँ सारे संसार की ममता थी वहाँ अब यह शरीर भी नहीं बचा और न ही सांसारिक संबंधों को बनाने वाला मन बचा है । सारे संसार को एक सूत्र में जोड़ने वाला प्रभु तो सर्वथा अतीत है फिर यह जीव किसमें समा जाता है ॥ २ ॥ जब तक यह नाशवान शरीर ही शरीर है तब तक इसकी सुरति न तो प्रभु से जुड़ती है और न ही माया से टूटती है । इस अवस्था में न तो इसका कोई मालिक हो सकता है और न ही इसका कोई सेवक हो सकता है । फिर यह भला कहाँ जाता है ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि मेरी सुरति तो उसमें लगी हुई है जहाँ प्रभु ही दिन–रात बसता है । उसका रहस्य तो केवल वहीं जानता है और वही नित्य अविनाशी है ॥ ४ ॥ १ ॥ ५२ ॥ गउड़ी ॥ सुरति और स्मृति तो दोनों कान की मुद्राएं है और यथार्थ ज्ञान योगियों का चोगा है । शून्य गुफा अर्थात मन की वृत्तियों से दूर होना ही मेरा बैठने का आसन है और संकल्प, विकल्प की वर्जना ही मेरा योग मार्ग है ॥ १ ॥ हे मेरे प्रभु, मैं बैरागी जोगी हूँ और शोक तथा वियोग से मैं मरता नहीं हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पूरे ब्रह्माण्ड में जीवन की लहर मेरी सिंगी है और सारे संसार को राख का ढेर जानना ही मेरा थैला है । ध्यान लगने पर त्रिविध माया से उलट हुआ जाता है और इस प्रकार मैं मुक्त भी हूँ और गृहस्थी में भी बना हुआ हूँ ॥ २ ॥ अपने मन और प्राण को मैंने वीणा के दो कुम्हड़े बनाया है और सारे युगों के मालिक को मैंने इनको मिलाने वाला बीच का आकार (डंडी) बनाया है ।

सारद साजी ॥ थिरु भी तंती तूटसि नाही अनहद किंगुरी बाजी ॥ ३ ॥ सुनि मन मगन भए है पूरे माइआ डोल न लागी ॥ कहु कबीर ता कउ पुनरपि जनमु नही खेलि गइओ बैरागी ॥ ४ ॥ २ ॥ ५३ ॥ गउड़ी ॥ गज नव गज दस गज इकीस पुरीआ एक तनाई ॥ साठ सूत नव खंड बहतरि पाटु लगो अधिकाई ॥ १ ॥ गई बुनावन माहो ॥ घर छोडिऐ जाइ जुलाहो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गजी न मिनीऐ तोलि न तुलीऐ पाचनु सेर अढाई ॥ जौ करि पाचनु बेगि न पावै झगरु करै घरहाई ॥ २ ॥ दिन की बैठ खसम की बरकस इह बेला कत आई ॥ छूटे कूंडे भीगै पुरीआ चलिओ जुलाहो रीसाई ॥ ३ ॥ छोछी नली तंतु नही निकसै नतर रही उरझाई ॥ छोडि पसारु ईहा रहु बपुरी कहु कबीर समझाई ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५४ ॥ गउड़ी ॥ एक जोति एका मिली किंबा होइ महोइ ॥ जितु घटि नामु न ऊपजै फूटि मरै जनु सोइ ॥ १ ॥ सावल सुंदर रामईआ ॥ मेरा मनु लागा तोहि ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु मिलै सिधि पाईऐ कि एहु जोगु कि भोगु ॥ दुहु मिलि कारजु ऊपजै राम नाम संजोगु ॥ २ ॥ लोगु जानै इहु गीतु है इहु तउ ब्रहम बीचार ॥ जिउ कासी उपदेसु होइ मानस मरती बार ॥ ३ ॥ कोई गावै को सुणै हरि नामा चितु लाइ ॥ कहु कबीर संसा नही अंति परम गति पाइ ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥ ५५ ॥ गउड़ी ॥ जेते जतन करत ते डूबे भव सागरु नही तारिओ रे ॥ करम धरम करते बहु संजम अहंबुधि मनु जारिओ रे ॥ १ ॥ सास ग्रास को दातो ठाकुरु सो किउ मनहु बिसारिओ रे ॥ हीरा लालु अमोलु जनमु है कउडी बदलै हारिओ रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ त्रिसना त्रिखा भूख भ्रमि लागी हिरदै नाहि बीचारिओ रे ॥ उनमत मान हिरिओ मन माही गुर का सबदु न धारिओ रे ॥ २ ॥ सुआद लुभत इंद्री रस प्रेरिओ मद रस लैत बिकारिओ रे ॥ करम भाग संतन संगाने कासट लोह उधारिओ रे ॥ ३ ॥ धावत जोनि जनम भ्रमि थाके अब दुख करि हम हारिओ रे ॥ कहि कबीर गुर मिलत महा रसु प्रेम भगति निसतारिओ रे ॥ ४ ॥ १ ॥ ५ ॥ ५६ ॥ गउड़ी ॥ कालबूत की हसतनी मन बउरा रे चलतु रचिओ जगदीस ॥ काम सुआइ गज बसि परे

अब इसकी तार स्थिर हो गई है जो टूटती नहीं और वीणा अनहत् रूप में स्वयं ही बज रही है ॥ ३ ॥ इसे सुनकर पूर्ण प्रभु का मन प्रसन्न हो जाता है और मोहिनी माया के धक्के उसे नहीं लगते । कबीर कहता है वैराग्य पूर्ण आत्मा जो इस प्रकार का खेल खेल गई है उससे उसका जन्म पुनः नहीं होता ॥ ४ ॥ २ ॥ ५३ ॥ गउड़ी ॥ जुलाहे की भाषा में शरीर रचना को इस प्रकार समझा जा सकता है कि नौ गज (नौ द्वार), दस गज (दस इन्द्रियां), इक्कीस गज (पाँच तत्व, पाँच विषय, दस प्राण और एक मन) वाला यह एक ताना–बाना है । साठ नाड़ियां (लम्बे ओर का) सूत होता है और नौ–खण्ड शरीर के नौ जोड़ों की तरह हैं । बहत्तर छोटी नाड़ियां उस ताने–बाने में दाएं–बाएँ लगा हुआ सूत समझो ॥ १ ॥ जब जीव रूपी जुलाहा प्रभु चरणों को विस्मृत कर देता है तो वासना शरीर रूपी ताने–बाने को बुनवाने को चल पड़ती है अर्थात प्रभु को भुलाकर जीव वासनाओं में बंधकर पुनः शरीर को धारण करता रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ शरीर रूपी यह ताना–बाना गजों के द्वारा नापा नहीं जाता और बाँट से तौला भी नहीं जाता हालांकि हर रोज इसे अढ़ाई सेर भोजन के रूप में देना पड़ता है । यदि इसको खुराक समय से न मिले तो घर बसने वाला मन में ही शोर–शराबा डाल देता है अर्थात् शरीर व्यथित हो उठता है ॥ २ ॥ थोड़े दिनों के जीवन के लिए यह जीव मालिक प्रभु से विद्रोही हो जाता है और जीवन के समय को नष्ट कर लेता है; यह समय फिर उसके हाथ नहीं लगता । अन्ततः सभी पदार्थ इससे छिन जाते है, मन की वासनाएं इन्हीं विषयों में फंसी रह जाती हैं और खीझ कर शरीर रूपी जुलाहा यहाँ से चला जाता है ॥ ३ ॥ नली खाली हो जाती है उसमें से धागा नहीं निकलता अर्थात् जीवात्मा शरीर को छोड़ देती है और श्वास का सम्बन्ध नाभि से टूट जाता है । हे कबीर, अब तो इस वासना को समझा कर कह कि हे बुरी वासना यह जंजाल छोड़ दे और अब तो इस जीव को छोड़कर अलग हो जा ॥ ४ ॥ ३ ॥ ५४ ॥ गउड़ी॥ जिस व्यक्ति की सुरति एक परमात्मा से मिलकर उससे एक रूप हो जाती है उसके अन्दर अहंकार बिल्कुल नहीं रहता। केवल वही व्यक्ति अहम् में दुखी होकर मरता है जिसके अन्दर प्रभु नाम का अंकुर नहीं उपजता ॥ १ ॥ हे मेरे श्यामल सुन्दर प्रभु, मेरा मन तो तुझमें लगा हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ साधु पुरुष को मिलने से वह सिद्धि प्राप्त हो जाती है कि फिर योग और भोग का कोई महत्व नहीं रहता । जब गुरु और शिष्य मिल जाते हैं तो वास्तव में काम बन जाता है और प्रभु–नाम से संयोग हो जाता है ॥ २ ॥ लोग तो समझते हैं कि यह कोई गीत है परन्तु वास्तव में यह परमात्मा का चिन्तन है । यह उस प्रकार का उपदेश है जो परम्परा से काशी में मरने वालों को दिया जाता है ॥ ३ ॥ यदि कोई प्रभु–नाम में चित्त लगाकर उसका गायन करता अथवा सुनता है, कबीर कहता है कि अन्ततः वह निश्चित् रूप में संशय मुक्त होकर परम गति को प्राप्त कर लेता है ॥ ४ ॥ १ ॥ ४ ॥ ५५॥ गउड़ी ॥ जितने भी यत्न प्रभु–नाम से विहीन होकर किए जाते हैं वे डुबाने वाले होते हैं और भव सागर से पार नहीं ले जाते । जो अनेकों धर्म–कर्म और संयम आदि करते हैं ऐसे अहंकारियों को उनका मन ही जला डालता है ॥ १ ॥ जो श्वास् और ग्रास का दाता है, हे जीव, तूने उसे अपने मन से क्यों भुला दिया है । यह जन्म हीरे और मोती की तरह अमूल्य है जिसे तूने कौड़ियों के बदले हार दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तुझे तृष्णाओं और भ्रमों की भूख प्यास लगी हुई है और तूने कभी भी हृदय में प्रभु का सुमिरन नहीं किया है । अपने मान–अपमान में उन्मत्त बना रहकर वह मन के द्वारा ही ठग लिया जाता है और गुरु के शब्द को मन में धारण नहीं करता ॥ २ ॥ स्वादों के मोह में पड़कर इन्द्रियों के रसों से प्रेरणा लेता हुआ व्यक्ति मद्य आदि का रस लेता हुआ विकारों में पड़ा रहता है । जो अच्छे कर्मों के कारण शान्त पुरुषों की संगत करते हैं वे लकड़ी के साथ लगे हुए लोहे की तरह पार उतर जाते हैं ॥ ३॥ अनेकों योनियों में भागते हुए मैं भ्रमों में पड़ा हुआ थक गया हूँ । अब तो इस दुख से मैं बिल्कुल ही हार गया हूँ । कबीर कहता हैं कि गुरु के मिलाप से मुझे महा आनन्द मिला है और प्रीति और भक्ति ने मुझे बचा लिया है ॥४॥१॥५॥५६॥ गउड़ी॥ हथनी के नकली ढाँचे की तरह हे मेरे बौराए मन, प्रभु ने यह जगत का खेल बनाया है।

मन बउरा रे अंकसु सहिओ सीस ॥ १ ॥ बिखै बाचु हरि राचु समझु मन बउरा रे ॥ निरभै होइ न हरि भजे मन बउरा रे गहिओ न राम जहाजु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मरकट मुसटी अनाज की मन बउरा रे लीनी हाथु पसारि ॥ छूटन को सहसा परिआ मन बउरा रे नाचिओ घर घर बारि ॥ २ ॥ जिउ नलनी सूअटा गहिओ मन बउरा रे माया इहु बिउहारु ॥ जैसा रंगु कसुंभ का मन बउरा रे तिउ पसरिओ पासारु ॥ ३ ॥ नावन कउ तीरथ घने मन बउरा रे पूजन कउ बहु देव ॥ कहु कबीर छूटनु नही मन बउरा रे छूटनु हरि की सेव ॥ ४ ॥ १ ॥ ६ ॥ ५७ ॥ गउड़ी ॥ अगनि न दहै पवनु नही मगनै तसकरु नेरि न आवै ॥ राम नाम धनु करि संचउनी सो धनु कत ही न जावै ॥ १ ॥ हमरा धनु माधउ गोबिंदु धरणीधरु इहै सार धनु कहीऐ ॥ जो सुखु प्रभ गोबिंद की सेवा सो सुखु राजि न लहीऐ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इसु धन कारणि सिव सनकादिक खोजत भए उदासी ॥ मनि मुकंदु जिहबा नाराइनु परै न जम की फासी ॥ २ ॥ निज धनु गिआनु भगति गुरि दीनी तासु सुमति मनु लागा ॥ जलत अंभ थंभि मनु धावत भरम बंधन भउ भागा ॥ ३ ॥ कहै कबीरु मदन के माते हिरदै देखु बीचारी ॥ तुम घरि लाख कोटि अस्व हसती हम घरि एकु मुरारी ॥ ४ ॥ १ ॥ ७ ॥ ५८ ॥ गउड़ी ॥ जिउ कपि के कर मुसटि चनन की लुबधि न तिआगु दइओ ॥ जो जो करम कीए लालच सिउ ते फिरि गरहि परिओ ॥ १ ॥ भगति बिनु बिरथे जनमु गइओ ॥ साधसंगति भगवान भजन बिनु कही न सचु रहिओ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिउ उदिआन कुसम परफुलित किनहि न घ्राउ लइओ ॥ तैसे भ्रमत अनेक जोनि महि फिरि फिरि काल हइओ ॥ २ ॥ इआ धन जोबन अरु सुत दारा पेखन कउ जु दइओ ॥ तिन ही माहि अटकि जो उरझे इंद्री प्रेरि लइओ ॥ ३ ॥ अउध अनल तनु तिन को मंदरु चहु दिस ठाटु ठइओ ॥ कहि कबीर भै सागर तरन कउ मै सतिगुर ओट लइओ ॥ ४ ॥ १ ॥ ८ ॥ ५९ ॥ गउड़ी ॥ पानी मैला माटी गोरी ॥ इस माटी की पुतरी जोरी ॥ १ ॥ मै नाही कछु आहि न मोरा ॥ तनु धनु सभु रसु गोबिंद तोरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ इस

काम–रम के अधीन हो चुके हाथी को पकड़ के वश में कर लिया जाता है, और हे पागल मन, उसे सिर पर अंकुश के वार सहन करने पड़ते हैं ॥ १ ॥ हे पागल मन, तू विषयों से बच और प्रभु में लीन होकर इस तथ्य को समझ ले। तूने निर्भय होकर प्रभु का सुमिरन नहीं किया और प्रभु नाम के जहाज पर तू सवार नहीं हुआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे बावले मन, बन्दर हाथ आगे करके अनाज को मुट्ठी में भर लेता है। मुट्ठी बाहर न निकालने और पकड़े जाने के कारण उसे अब छूटने की चिन्ता बनी रहती है और वह हर घर के दरवाजे पर नाचता रहता है ॥ २ ॥ जैसे तोता नलकी को पकड़े रहता है और छोड़ नहीं पाता, उसी प्रकार हे बावरे मन, माया का व्यवहार भी ऐसा ही है। यह जगत का प्रसार भी ऐसा ही है जैसा हे बावले मन, कुसुम्भ के फूल का कच्चा रंग होता है ॥ ३ ॥ हे बौराए हुए मन, नहाने के लिए तो अनेकों तीर्थ हैं और पूजा करने के लिए भी अनेकों देवी–देवता हैं परन्तु कबीर कहता हैं कि इन सब कर्मों से मुक्ति नहीं मिलेगी क्योंकि छुटकारा तो केवल प्रभु की सेवा से ही मिल पाएगा ॥४॥१॥६॥५७॥गउड़ी ॥ आग इसे जलाती नहीं, पवन इसे उड़ाती नहीं और चोर इसके पास नहीं आता। ऐसा धन जो राम–नाम का है उसे एकत्र करो क्योंकि यह धन कहीं नहीं जाता ॥१॥ सारे धन का सार मेरा धन धरती को धारण करने वाला प्रभु है और जो सुख प्रभु की सेवा से प्राप्त होता है वह सुख राज करने में भी नहीं मिलता ॥१॥रहाउ॥ इसी धन को खोजते हुए शिव एवं सनक सनन्दन आदि त्यागी होकर घूमते रहे। जिसके हृदय में मुक्ति प्रदाता प्रभु और जीभ पर नारायण बसता है वह मौत के फन्दे में नहीं पड़ता ॥२॥ गुरु की दी हुई भक्ति मेरा अपना धन और ज्ञान है और गुरु की सुमति के फलस्वरूप मेरा मन प्रभु में लगा हुआ है। प्रभु का नाम जलन को बुझाने वाला है और भटकते हुए मन के लिए स्तम्भ है। नाम के फलस्वरूप मेरा भ्रम बन्धन और भय भाग खड़े हुए हैं। कबीर कहता है कि हे काम में लिप्त बने हुए जीव तू अपने हृदय में कुछ सोच और चिन्तन कर। तेरे घर में लाखों करोड़ों हाथी–घोड़े है परन्तु हमारे घर में तो एक प्रभु ही है ॥४॥१॥७॥५८॥गउड़ी॥ जिस प्रकार बन्दर अपनी मुट्ठी में पकड़े हुए चनों को लालचवश छोड़ता नहीं और फंसा रहता है इसी प्रकार जीव के काम जो लालचवश किए जाते हैं वे ही उसके गले का फन्दा बने रहते हैं ॥१॥ भक्ति के बिना व्यक्ति का जीवन व्यर्थ ही बीत जाता है। साधसंगत और प्रभु के भजन के बिना कहीं पर भी सत्य का निवास नहीं होता ॥१॥ रहाउ ॥ जिस प्रकार जंगल में फूल खिलता है और कोई भी उसकी सुगन्ध को नहीं लेता वैसे ही जीव अनेकों योनियों में भटकता रहता है और मौत उसे बार–बार नष्ट करती रहती है ॥ २ ॥ धन, यौवन, पुत्र, पत्नि जो प्रभु ने देखने के लिए दिए हैं इनमें जो उलझकर अटके रहते हैं उनको इन्द्रियां अपने स्वभाव के अनुरूप बहा ले जाती हैं ॥३॥ आयु अग्नि है और शरीर तिनकों का घर है और चारों तरफ यही रचना बनी हुई है। कबीर कहता है कि मैंने भवसागर को पार करने के लिए सच्चे गुरु की शरण ले रखी है ॥४॥१॥८॥५९॥ मैले पानी और श्वेत मिट्टी से मिलकर बनी हुई यह जीव रूपी पुतली बनाई गई है ॥ १ ॥ हे प्रभु, मैं कुछ भी नहीं हूँ और कुछ भी मेरा नहीं है। मेरा शरीर, धन और उसकी सभी शक्तियां हे प्रभु, तेरी ही हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥

माटी महि पवनु समाइआ ॥ झूठा परपंचु जोरि चलाइआ ॥ २ ॥ किनहू लाख पांच की जोरी ॥ अंत की बार गगरीआ फोरी ॥ ३ ॥ कहि कबीर इक नीव उसारी ॥ खिन महि बिनसि जाइ अहंकारी ॥ ४ ॥ १ ॥ ९ ॥ ६० ॥ गउड़ी ॥ राम जपउ जीअ ऐसे ऐसे ॥ ध्रू प्रहिलाद जपिओ हरि जैसे ॥ १ ॥ दीन दइआल भरोसे तेरे ॥ सभु परवारु चड़ाइआ बेड़े ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जा तिसु भावै ता हुकमु मनावै ॥ इस बेड़े कउ पारि लघावै ॥ २ ॥ गुर परसादि ऐसी बुधि समानी ॥ चूकि गई फिरि आवन जानी ॥ ३ ॥ कहु कबीर भजु सारिगपानी ॥ उरवारि पारि सभ एको दानी ॥ ४ ॥ २ ॥ १० ॥ ६१ ॥ गउड़ी ९ ॥ जोनि छाडि जउ जग महि आइओ ॥ लागत पवन खसमु बिसराइओ ॥ १ ॥ जीअरा हरि के गुना गाउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गरभ जोनि महि उरध तपु करता ॥ तउ जठर अगनि महि रहता ॥ २ ॥ लख चउरासीह जोनि भ्रमि आइओ ॥ अब के छुटके ठउर न ठाइओ ॥ ३ ॥ कहु कबीर भजु सारिगपानी ॥ आवत दीसै जात न जानी ॥ ४ ॥ १ ॥ ११ ॥ ६२ ॥ गउड़ी पूरबी ॥ सुरग बासु न बाछीऐ डरीऐ न नरकि निवासु ॥ होना है सो होई है मनहि न कीजै आस ॥ १ ॥ रमईआ गुन गाईऐ ॥ जा ते पाईऐ परम निधानु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ किआ जपु किआ तपु संजमो किआ बरतु किआ इसनानु ॥ जब लगु जुगति न जानीऐ भाउ भगति भगवान ॥ २ ॥ संपै देखि न हरखीऐ बिपति देखि न रोइ ॥ जिउ संपै तिउ बिपति है बिध ने रचिआ सो होइ ॥ ३ ॥ कहि कबीर अब जानिआ संतन रिदै मझारि ॥ सेवक सो सेवा भले जिह घट बसै मुरारि ॥ ४ ॥ १ ॥ १२ ॥ ६३ ॥ गउड़ी ॥ रे मन तेरो कोइ नही खिंचि लेइ जिनि भारु ॥ बिरख बसेरो पंखि को तैसो इहु संसारु ॥ १ ॥ राम रसु पीआ रे ॥ जिह रस बिसरि गए रस अउर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अउर मुए किआ रोईऐ जउ आपा थिरु न रहाइ ॥ जो उपजै सो बिनसि है दुखु करि रोवै बलाइ ॥ २ ॥ जह की उपजी तह रची पीवत मरदन लाग ॥ कहि कबीर चिति चेतिआ राम सिमरि बैराग ॥ ३ ॥ २ ॥ १३ ॥ ६४ ॥ रागु गउड़ी ॥ पंथु निहारै कामनी लोचन

इस मिट्टी में तूने पवन रूपी श्वास् डालकर एक झूठा प्रपंच बनाकर चला दिया है ॥ २ ॥ कई एक लाख, पाँच लाख जमां करते हैं परन्तु अन्ततः यह मिट्टी का घड़ा (शरीर) फूट जाता है ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि हे अंहकारी जीव, जो तूने एक नींव बनाकर उस पर रचना की है वह क्षण भर में विनष्ट हो जाएगी ॥४॥१॥९॥६०॥गउड़ी॥ हे मेरे प्राण, प्रभु सुमरिन ऐसे ही करो जैसे ध्रुव और प्रहलाद ने किया था ॥ १ ॥ हे दीनों पर दयालु होने वाले प्रभु मैंने तेरे भरोसे पर ही अपना सारा परिवार तेरे नाम के जहाज पर चढ़ा दिया है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जैसे उसे अच्छा लगता है वह अपनी आज्ञा को मनवा लेता है और इस जहाज को पार कर देता है ॥ २ ॥ गुरु की कृपा से मुझे ऐसी बुद्धि मिल गई है जिससे मेरा आवागमन चुक गया है ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि तू प्रभु का सुमिरन कर क्योंकि इस लोक, परलोक और सर्वत्र केवल वही एक दान देने वाला दाता है ॥ ४॥२॥१०॥६१॥गउड़ी ९॥ योनि को छोड़कर, हे जीव, तू जैसे ही संसार में आया तो यहाँ की हवा लगते ही तूने प्रभु को भुला दिया ॥ १ ॥ हे मेरे जीव, तू प्रभु के गुण गा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गर्भ में स्थित होकर तू उलटा लटककर तपस्या करता है और उसी के फलस्वरूप तू पेट की अग्नि में भी जीवित बना रहता है ॥ २ ॥ चौरासी लाख योनियों मे भटकता हुआ तू आया है और यदि अब तू सही मार्ग से छिटक गया तो तुझे कोई ठिकाना नहीं मिल सकेगा ॥ ३ ॥ कबीर कहता है कि हे जीव तू प्रभु का सुमिरन कर जो आता–जाता हुआ दिखाई नहीं देता अर्थात जन्म मरण से रहित है परन्तु सब कुछ जानता है ॥४॥१॥११॥६२॥गउड़ी पूरबी ॥ स्वर्ग में निवास की आकांक्षा नहीं करनी चाहिए और नर्क में निवास से डरना नहीं चाहिए । जो होना है वह होगा ही इसलिए अपने मन में बहुत सी आशाएं नहीं लगानी चाहिए ॥ १ ॥ परमात्मा का गुणानुवाद किया जाना चाहिए जिससे सर्वोत्तम खजाना प्राप्त होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जप, तप, संयम, व्रत, स्नान आदि का क्या लाभ है जब तक ईश्वर की प्रेम–भक्ति और उसकी सेवा की युक्ति का पता नहीं चलता ॥ २ ॥ सम्पति को देखकर बहुत प्रसन्न नहीं होना चाहिए और विपत्ति को देखकर विलाप नहीं करना चाहिए । सम्पत्ति और विपत्ति एक समान हैं और विधाता जो करता है वही होता है ॥ ३ ॥ कबीर कहता हैं कि अब मैंने उस शान्त पुरुष को अपने हृदय में ही जान लिया है और यह भी अनुभव कर लिया है कि वही सेवक भला है जिसके हृदय में परमात्मा का निवास है ॥४॥१॥१२॥६३॥ गउड़ी ॥ हे मन, जिनके बोझ को तू खींचे चला जा रहा है इनमें से कोई भी तेरा नहीं है । यह संसार तो वैसा ही है जैसे वृक्ष पर पक्षियों का बैठना और उड़ जाना है ॥ १ ॥ मैंने प्रभु रूपी रस का पान किया है और इस रस के कारण मुझे अन्य सभी रस भूल गए हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब हम स्वयं ही स्थिर नहीं है तो अन्यों के मृत हो जाने पर भला कैसा रोना । जो भी पैदा हुआ है वह नष्ट हो ही जाएगा इसलिए मेरे रोने की अपेक्षा तो मेरी (विपत्तियां) मुसीबतें ही रोती रहें ॥ २ ॥ जिस योनि से यह देह निकली है उसी के भोग–विलास में तथा जिन स्तनों का इसने दूध पिया है उन्हीं के मर्दन में इसी रूचि बनी हुई है ॥ कबीर कहता है कि मैंने मन में प्रभु का सुमिरन किया है और वैराग्य पूर्ण होकर मैं राम का सुमिरन करता हूँ ॥ ३ ॥ २ ॥ १३ ॥ ६४ ॥ रागु गउड़ी ॥ आहें भरती हुई और आँखों में

भरी ले उसासा ॥ उर न भीजै पगु ना खिसै हरि दरसन की आसा ॥ १ ॥ उडहु न कागा कारे ॥ बेगि मिलीजै अपुने राम पिआरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कहि कबीर जीवन पद कारनि हरि की भगति करीजै ॥ एकु आधारु नामु नाराइन रसना रामु रवीजै ॥ २ ॥ १ ॥ १४ ॥ ६५ ॥ रागु गउड़ी ११ ॥ आस पास घन तुरसी का बिरवा माझ बना रसि गाऊं रे ॥ उआ का सरूपु देखि मोही गुआरनि मोकउ छोडि न आउ न जाहू रे ॥ १ ॥ तोहि चरन मनु लागो सारिंगधर ॥ सो मिलै जो बडभागो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बिंद्राबन मन हरन मनोहर क्रिसन चरावत गाऊ रे ॥ जा का ठाकुरु तुही सारिंगधर मोहि कबीरा नाऊ रे ॥ २ ॥ २ ॥ १५ ॥ ६६ ॥ गउड़ी पूरबी १२ ॥ बिपल बसत्र केते है पहिरे किआ बन मधे बासा ॥ कहा भइआ नर देवा धोखे किआ जलि बोरिओ गिआता ॥ १ ॥ जीअरे जाहिगा मै जानां ॥ अबिगत समझु इआना ॥ जत जत देखउ बहुरि न पेखउ संगि माइआ लपटाना ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गिआनी धिआनी बहु उपदेसी इहु जगु सगलो धंधा ॥ कहि कबीर इक राम नाम बिनु इआ जगु माइआ अंधा ॥ २ ॥ १ ॥ १६ ॥ ६७ ॥ गउड़ी १२ ॥ मन रे छाडहु भरमु प्रगट होइ नाचहु इआ माइआ के डांडे ॥ सूरु कि सनमुख रन ते डरपै सती कि सांचै भांडे ॥ १ ॥ डगमग छाडि रे मन बउरा ॥ अब तउ जरे मरे सिधि पाईऐ लीनो हाथि संधउरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काम क्रोध माइआ के लीने इआ बिधि जगतु बिगूता ॥ कहि कबीर राजा राम न छोडउ सगल ऊच ते ऊचा ॥ २ ॥ २ ॥ १७ ॥ ६८ ॥ गउड़ी १३ ॥ फुरमानु तेरा सिरै ऊपरि फिरि न करत बीचार ॥ तुही दरीआ तुही करीआ तुझै ते निसतार ॥ १ ॥ बंदे बंदगी इकतीआर ॥ साहिबु रोसु धरउ कि पिआरु ॥ १ ॥ रहाउ ॥ नामु तेरा आधारु मेरा जिउ फूलु जई है नारि ॥ कहि कबीर गुलामु घर का जीआइ भावै मारि ॥ २ ॥ १८ ॥ ६९ ॥ गउड़ी५ ॥ लख चउरासीह जीअ जोनि महि भ्रमत नंदु बहु थाको रे ॥ भगति हेति अवतारु लीओ है भागु बडो बपुरा को रे ॥ तुम्ह जु कहत हउ नंद को नंदनु नंद सु नंदनु का को रे ॥ धरनि अकासु दसो दिस नाही तब इहु नंदु कहा थो रे ॥

आँसू भरकर जीव रूपी स्त्री प्रभु–पति का रास्ता देख रही है । प्रभु के दर्शन की आशा लगाए हुए उसका हृदय शंकाओं के कारण प्रसन्न नहीं है परन्तु वह फिर भी अपने पैर पीछे नहीं हटाती ॥ १ ॥ हे काले कौए, तू जल्दी उड़ जा ताकि मैं अपने प्रियतम प्रभु को जल्दी से मिल लूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ कबीर कहता है कि सदैव जीवित बने रहने के लिए प्रभु की भक्ति की जानी चाहिए । केवल एक प्रभु–नाम को ही जीवन का आधार मानना चाहिए और जीभ को प्रभु–नाम में रमण करना चाहिए ॥ २ ॥ १ ॥ १४ ॥ ६५ ॥ रागु गउड़ी ११ ॥ जिस कृष्ण के आस–पास तुलसी के अनेकों पौधे थे और जो तुलसी के जंगल में प्रेम से गा रहा था उसी का दर्शन करके ग्वालिन प्रेम–विभोर होकर कहने लगी कि हे प्रियतम, मुझे छोड़कर किसी अन्य स्थान पर नहीं जाना ॥ १ ॥ हे प्रभु, तेरे चरणों में मेरा मन लीन हो गया है और तुझे केवल वह ही मिलता है जो वड़ा भाग्यशाली होता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ वृन्दावन मनोहर स्थान हैं जहाँ कृष्ण गाएं चराता है । हे प्रभु, जिसका केवल एक तू ही है उसका नाम कबीर है ॥ २ ॥ २ ॥ १५ ॥ ६६ ॥ गउड़ी पूरवी १२ ॥ अनेकों प्रकार के वेष धारण करके वनों में निवास बनाने का क्या लाभ । व्यक्ति का पूजा–पाठ करके देवों को धोखा देने का और शरीर को जल में डुवा कर मात्र स्नानादि करने का भी क्या लाभ है ॥ १ ॥ हे जीव, मैंने जान लिया है कि तू जाएगा ही जाएगा इसलिए हे अनजान, तू उस अव्यक्त प्रभु को समझ ले । तू जो–जो भी देख रहा है तुझे फिर देखना नसीव नहीं होगा परन्तु फिर भी तू धन–सम्पत्ति में लिपटा हुआ है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ अनेकों ज्ञानवान, ध्यानवान और उपदेशकों के लिए यह सांसारिक धन्धा ही सब कुछ है । कवीर कहता है कि प्रभु–नाम के विना इस सारे संसार को माया ने अन्धा वना रखा है ॥ २ ॥ १ ॥ १६ ॥ ६७ ॥ गउड़ी १२ ॥ हे मन, तुम भ्रमों को छोड़कर प्रकट होकर प्रसन्न बना रह क्योंकि भ्रम आदि तो सभी माया के प्रपंच हैं । वह शूरवीर कैसे हो सकता है जो सामने होकर लड़ने से डरता है और वह स्त्री सत्यवान कैसे हो सकती है जो बुलावा आने पर बर्तनों को ही इकट्ठा करने में लगी रहती है ॥ १ ॥ हे पागल मन, अव तू डगमगाना छोड़ दे । अब जब तूने पान का बीड़ा खाकर कार्य पूरा करने की प्रतिज्ञा कर ली है तो पूर्ण सिद्धि प्राप्त करने के लिए अब तेरा जलना मरना सब कुछ उचित ही है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ यह सारा संसार काम, क्रोध और माया में लीन होकर विनष्ट हो गया है । कबीर कहता है कि मैं उस परमात्मा रूपी श्रेष्ठ राजा को नहीं छोड़ूँगा जो सभी ऊँचों से भी ऊँचा है ॥ २ ॥ २ ॥ १७ ॥ ६८ ॥ गउड़ी१३॥ हे प्रभु, तेरी आज्ञा को पाकर मैं फिर उस पर किन्तु–परन्तु का विचार नहीं करता । तू ही मेरा दरिया है और तू ही मेरा मल्लाह है और तेरे माध्यम से ही मेरा कल्याण सम्भव है ॥ १ ॥ हे व्यक्ति, प्रभु के सुमिरन को अपना। वेशक तेरा मालिक तुझसे रूठ जाए अथवा तुझे प्यार करे तू इस बात की परवाह न कर ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, तेरा नाम ही मेरा उसी प्रकार का आसरा है जैसे फूल पानी का आसरा पा कर खिला रहता है । कबीर कहता है कि हे प्रभु, मैं तेरे घर का नौकर हूँ; यह तेरी इच्छा है चाहे तू मुझे जिन्दा रख और चाहे मार दे ॥२॥१८॥६९॥ गउड़ी ॥ चौरासी लाख योनियों में भटकता हुआ नन्द बहुत थक गया है । उसके भक्तिभाव को ही देखकर कृष्ण उस बड़े भाग्यशाली नन्द के यहाँ पैदा हुआ ॥१॥ तुम जो यह कहते हो कि नन्द का नन्दन (पुत्र) परमात्मा है तो नन्द किसका पुत्र था । जब धरती, आकाश दसों–दिशाएं नहीं थी तब यह नन्द कहाँ था अर्थात परमात्मा को देशकाल से परे समझना चाहिए।

१ ॥ रहाउ ॥ संकटि नही परै जोनि नही आवै नामु निरंजन जा को रे ॥ कबीर को सुआमी ऐसो ठाकुरु जा कै माई न बापो रे ॥ २ ॥ १९ ॥ ७० ॥ गउड़ी ॥ निंदउ निंदउ मोकउ लोगु निंदउ ॥ निंदा जन कउ खरी पिआरी ॥ निंदा बापु निंदा महतारी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निंदा होइ त बैकुंठि जाईऐ ॥ नामु पदारथु मनहि बसाईऐ ॥ रिदै सुध जउ निंदा होइ ॥ हमरे कपरे निंदकु धोइ ॥ १ ॥ निंदा करै सु हमरा मीतु ॥ निंदक माहि हमारा चीतु ॥ निंदकु सो जो निंदा होरै ॥ हमरा जीवनु निंदकु लोरै ॥ २ ॥ निंदा हमरी प्रेम पिआरु ॥ निंदा हमरा करै उधारु ॥ जन कबीर कउ निंदा सारु ॥ निंदकु डूबा हम उतरे पारि ॥ ३ ॥ २० ॥ ७१ ॥ राजा राम तूं ऐसा निरभउ तरन तारन राम राइआ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जब हम होते तब तुम नाही अब तुम हहु हम नाही ॥ अब हम तुम एक भए हहि एकै देखत मनु पतीआही ॥ १ ॥ जब बुधि होती तब बलु कैसा अब बुधि बलु न खटाई ॥ कहि कबीर बुधि हरि लई मेरी बुधि बदली सिधि पाई ॥ २ ॥ २१ ॥ ७२ ॥ गउड़ी ॥ खट नेम करि कोठड़ी बांधी बसतु अनूपु बीच पाई ॥ कुंजी कुलफु प्रान करि राखे करते बार न लाई ॥ १ ॥ अब मन जागत रहु रे भाई ॥ गाफलु होइ कै जनमु गवाइओ चोरु मुसै घरु जाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ पंच पहरूआ दर महि रहते तिन का नही पतीआरा ॥ चेति सुचेत चित होइ रहु तउ लै परगासु उजारा ॥ २ ॥ नउ घर देखि जु कामनि भूली बसतु अनूप न पाई ॥ कहतु कबीर नवै घर मूसे दसवैं ततु समाई ॥ ३ ॥ २२ ॥ ७३ ॥ गउड़ी ॥ माई मोहि अवरु न जानिओ आनानां ॥ सिव सनकादि जासु गुन गावहि तासु बसहि मोरे प्रानानां ॥ रहाउ ॥ हिरदे प्रगासु गिआन गुर गंमित गगन मंडल महि धिआनानां ॥ बिखै रोग भै बंधन भागे मन निज घरि सुखु जानाना ॥ १ ॥ एक सुमति रति जानि मानि प्रभ दूसर मनहि न आनाना ॥ चंदन बासु भए मन बासन तिआगि घटिओ अभिमानाना ॥ २ ॥ जो जन गाइ धिआइ जसु ठाकुर तासु प्रभू है थानानां ॥ तिह बड भाग बसिओ मनि जा कै करम प्रधान मथानाना ॥ ३ ॥ काटि सकति सिव सहजु

॥ १ ॥ रहाउ ॥ जिस प्रभु का नाम निरंजन अर्थात सब कालिमाओं से मुक्त है वह कभी न तो संकट में पड़ता है और न ही कभी जन्म धारण करता हैं । कबीर का स्वामी तो ऐसा ठाकुर है जिसकी न तो कोई माँ है और न ही पिता है ॥ २ ॥ १९ ॥ ७० ॥ गउड़ी ॥ मेरी निन्दा करो, हे लोगो, मेरी खूब निन्दा करो । प्रभु के इस सेवक को निन्दा बहुत ही प्यारी लगती है । निन्दा ही मेरी पिता और निन्दा ही मेरी माता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ निन्दा के फलस्वरूप स्वर्ग में जाया जाता है और नाम रूपी सम्पत्ति मेरे मन में आन बसती है । जब मेरी निन्दा होती है तो मेरा हृदय शुद्ध होता जाता है । इस प्रकार निन्दक तो मेरे कपड़े धोता है ॥ १ ॥ जो मेरी निन्दा करता है वही मेरा मित्र है और निन्दक पर ही सदैव मेरा मन केन्द्रित वना रहता है । निन्दक वह है जो वास्तव में हमारी निन्दा को रोकता है क्योंकि उसकी निन्दा को सुनकर मैं अपना सुधार कर लेता हूँ और फिर किसी अन्य को मेरी निन्दा करने की आवश्यकता नहीं रहती। निन्दक तो वास्तव में हमें जीवित बनाए रहता है ॥ २ ॥ जो मेरी निन्दा करता है मैं उसके साथ प्रेम और प्यार करता हूँ; इस प्रकार निन्दा ही मेरा उद्धार करती है । दास कबीर के लिए तो निन्दा ही सभी वस्तओं का सार है क्योंकि निन्दक तो वास्तव में डूब जाता है और मैं पार हो जाता हूँ ॥ ३ ॥ २० ॥ ७१ ॥ हे सब में रमण करने वाले राजन रूपी प्रभु, तू निर्भय है और पार उतारने वाला है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ जव मुझमें अहंकार था तब तुम मुझ में नहीं थे परन्तु अब तुम हो तो मेरा अहंकार मुझमें नहीं है । अव मैं और तुम एक हो गए हैं और इस प्रकार एक वने हुए को देखकर मेरा मन संतुष्ट हो गया है ॥ १ ॥ जव सांसारिक बुद्धि होती है तव भला आध्यात्मिक वल कैसे हो सकता है । परन्तु अब बुद्धि का बल मुझमें नहीं होने से मैं व्यर्थ के कष्ट में नहीं पड़ता । कबीर कहता है कि प्रभु ने मेरी चतुराईयों वाली बुद्धि को मुझसे ले लिया है और अव आध्यात्मिक वुद्धि में जब से वह सांसारिक बुद्धि वदली गई है तो मुझे पूर्णता प्राप्त हो गई है ॥ २ ॥ २१ ॥ ७२ ॥ गउड़ी ॥ प्रभु ने खटकर्मों का साधन वनने वाली यह शरीर रूपी कोठी वनाई है और उसमें एक अनुपम वस्तु स्थित की है । उसमें प्राण, कुँजी और ताले की तरह रक्षक वनाए गए हैं और ऐसा करने में प्रभु ने कोई देरी नहीं लगाई है ॥ १ ॥ हे भाई, अब अपने मन को जगाए रख । लापरवाह होकर तूने अपना जन्म गँवा लिया है और तेरे घर में घुसकर चोर उसे लूटे जा रहे हैं ॥ १ ॥ रहाउ॥ ज्ञान–इन्द्रियों के रूप में जो पाँचों पहरेदार दरवाजे पर रहते हैं उन पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता । जब तू मन से अच्छी तरह चेतन बना रहेगा तुझे प्रभु का प्रकाश प्राप्त होता रहेगा ॥ २ ॥ जो स्त्री रूपी आत्मा शरीर के नौ द्वारों को ही देखकर अन्य सब कुछ भूल गई है वह प्रभु–नाम रूपी अनुपम वस्तु को प्राप्त नहीं कर पाती । कबीर कहता है कि शरीर के घरों को तो लूट लिया जाता है परन्तु तत्व रूप में दसवें द्वार में स्थित वस्तु को नहीं लूटा जा सकता ॥ ३ ॥ २२ ॥ ७३ ॥ गउड़ी ॥ हे माँ, मैं अन्य किसी को नहीं जानता और शिव, सनक आदि जिसके गुण गाते हैं उसी में ही मेरे प्राण बसते हैं ॥ १ ॥ रहाउ ॥ गुरु के पास जाने से मेरे हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो गया है और मेरी सुरति अथवा ध्यान गगन मण्डल अर्थात् दसम द्वार में स्थिर हो गई है । विषयों के रोग और भय के बन्धन भाग गए हैं तथा मेरा मन (आत्मा) अपने स्वरूप रूपी घर में टिककर सुख का अनुभव कर रहा है ॥ १ ॥ एक प्रभु की सुमति में ही रंगा जाकर मैं केवल एक प्रभु को ही मानता हूँ और अन्य कोई भी मेरे मन में नहीं आता । मेरी आत्मा अहंकार को त्याग कर चन्दन की सुगन्ध के साथ सुगन्धित हो गई है ॥ २ ॥ जो सेवक प्रभु का गुणानुवाद और सुमिरन करता है उसके अन्दर ही प्रभु का पवित्र स्थान है । जिसके हृदय में वह प्रभु आ बसता है वह बड़ा भाग्यशाली है और उसके माथे पर बड़े अच्छे भाग्य लेख बने हुए हैं ॥ ३ ॥ मैंने माया को काट दिया है और उस प्रभु का

प्रगासिओ एकै एक समानाना ॥ कहि कबीर गुर भेटि महा सुख भ्रमत रहे मनु मानानां ॥ ४ ॥ २३ ॥ ७४ ॥

रागु गउड़ी पूरबी बावन अखरी कबीर जीउ की १ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि॥ बावन अछर लोक त्रै सभु कछु इन ही माहि ॥ ए अखर खिरि जाहिगे ओइ अखर इन महि नाहि ॥ १ ॥ जहा बोल तह अछर आवा ॥ जह अबोल तह मनु न रहावा ॥ बोल अबोल मधि है सोई ॥ जस ओहु है तस लखै न कोई ॥ २ ॥ अलह लहउ तउ किआ कहउ कहउ त को उपकार ॥ बटक बीज महि रवि रहिओ जा को तीनि लोक बिसथार ॥ ३ ॥ अलह लहंता भेद छै कछु कछु पाइओ भेद ॥ उलटि भेद मनु बेधिओ पाइओ अभंग अछेद ॥ ४ ॥ तुरक तरीकति जानीऐ हिंदू बेद पुरान ॥ मन समझावन कारने कछुअक पड़ीऐ गिआन ॥ ५ ॥ ओअंकार आदि मै जाना ॥ लिखि अरु मेटै ताहि न माना ॥ ओअंकार लखै जउ कोई ॥ सोई लखि मेटणा न होई ॥ ६ ॥ कका किरणि कमल महि पावा ॥ ससि बिगास संपट नही आवा ॥ अरु जे तहा कुसम रसु पावा ॥ अकह कहा कहि का समझावा ॥ ७ ॥ खखा इहै खोड़ि मन आवा ॥ खोड़े छाडि न दह दिस धावा ॥ खसमहि जाणि खिमा करि रहै ॥ तउ होइ निखिअउ अखै पदु लहै ॥ ८ ॥ गगा गुर के बचन पछाना ॥ दूजी बात न धरई काना ॥ रहै बिहंगम कतहि न जाई ॥ अगह गहै गहि गगन रहाई ॥ ९ ॥ घघा घटि घटि निमसै सोई ॥ घट फूटे घटि कबहि न होई ॥ ता घट माहि घाट जउ पावा ॥ सो घटु छाडि अवघट कत धावा ॥ १० ॥ ङंङा निग्रहि सनेहु करि निरवारो संदेह ॥ नाही देखि न भाजीऐ परम सिआनप एह ॥ ११ ॥ चचा रचित चित्र है भारी ॥ तजि चित्रै चेतहु चितकारी ॥ चित्र बचित्र इहै अवझेरा ॥ तजि चित्रै चितु राखि चितेरा ॥ १२ ॥ छछा इहै छत्रपति पासा ॥ छकि कि न रहहु छाडि कि न आसा ॥ रे मन मै तउ छिन छिन समझावा ॥ ताहि छाडि कत आपु बधावा ॥ १३ ॥ जजा जउ तन जीवत जरावै ॥ जोबन जारि जुगति सो पावै ॥ अस जरि पर जरि जरि जब रहै ॥ तब जाइ जोति

सहज प्रकाश मेरे अन्दर हो गया है तथा मैं केवल एक प्रभु में ही लीन हो गया हूँ। कबीर कहता है कि गुरु को मिलकर मुझे महान सुख प्राप्त हो गया है और मेरा मन भटकने से बचकर संतुष्ट हो गया है ॥ ४ ॥ २३ ॥ ६४ ॥

रागु गउड़ी पूरबी

बावन अखरी कबीर जीउ की ੧ओअंकार सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

बावन अक्षरों में तीनों लोकों और अन्य सब कुछ का वर्णन है। यह अक्षर तो नष्ट हो जाएंगे परन्तु प्रभु का वर्णन करने वाले अक्षर इनमें नहीं हैं क्योंकि प्रभु का वर्णन अक्षरों के माध्यम से नहीं हो सकता ॥ १ ॥ जहाँ बोली है वहीं अक्षर है और जहाँ बोलचाल नहीं है वहां मन टिकता नहीं है। बोली और चुप्पी दोनों के मध्य में प्रभु बसता है। वह जैसा है उसको उसी रूप में कोई नहीं जान सकता ॥ २ ॥ परमात्मा को यदि मैं पा भी लूँ तब मैं उसको क्या कह सकता हूँ और यदि मैं कुछ कहता भी हूँ तो इसमें भला उपकार वाली क्या बात होगी। वह बीज रूप होकर बढ़ते पेड़ की तरह फैला हुआ है और उसी का ही विस्तार तीनों लोकों में हैं ॥ ३ ॥ जब प्रभु को ढूँढ लिया तो बेगानगी का भाव नष्ट हो गया और वास्तविक रहस्य थोड़ा-थोड़ा समझ में आ गया। जब दुविधा से मन को उलटाकर प्रभु प्रेम में जोड़ा गया तब उस अविनाशी प्रभु की प्राप्ति हुई है ॥ ४ ॥ मुस्लिम अपनी जीवन पद्धति को समझता है और हिन्दु वेद-पुराणों को जानता है। परन्तु मन को समझाने के लिए थोड़ा सा ब्रह्म ज्ञान भी जानना और पढ़ना चाहिए। मैंने ओअंकार प्रभु को ही जाना है जो सबका प्रारम्भ है। रची हुई और मिटाई हुई संसार रूपी रचना पर मैं भरोसा नहीं रखता। जिस किसी ने भी ओअंकार प्रभु को देख लिया है तो उसे देखने के वाद वह फिर विनष्ट नहीं होता ॥ ६ ॥ क – जब ब्रह्म-ज्ञान की किरणें हृदय रूपी कमल पर आन पड़ती हैं तब माया रूपी चन्द्रमा का प्रकाश कमल के अन्दर नहीं पहुँच पाता और जो उस आध्यात्मिक फूल के अन्दरूनी रस को पा लेता है वह उसके स्वाद का कथन नहीं कर सकता। फिर भला वह दूसरों को क्या समझा सकेगा ॥ ७ ॥ ख – यह मन प्रभु की गुफा में आन पहुँचा है और अब वह इस गुफा को त्याग कर दसों दिशाओं में नहीं भटकता। जब प्रभु को जानकर व्यक्ति क्षमाशील वना रहता है तब वह अमर होकर अक्षय पद को प्राप्त कर लेता है ॥ ८ ॥ ग – जो गुरु के उपदेश को अच्छी तरफ पहचान लेता है वह अन्य किसी बात की ओर कान नहीं देता। वह विरक्त व्यक्ति की तरह रहता है और कहीं नहीं जाता। इस प्रकार वह न पकड़े जा सकने वाले प्रभु को पकड़ लेता है और उसे पकड़कर दशम द्वार में ही टिक जाता है ॥ ९ ॥ घ – घट-घट में वही प्रभु बसता है और ऐसा शरीर रूपी घड़ा जब टूट भी जाता है कि तब भी उसमें कोई कमी नहीं आती। जब हृदय में ही प्रभु का घाट अर्थात् मार्ग पा लिया जाता है तब फिर उस मार्ग को छोड़कर अन्य विषम मार्ग पर भला कैसे जाया जा सकता है ॥ १० ॥ ङ – हे व्यक्ति तू स्वयं को रोक, प्रभु से प्रेम कर और अपने सन्देहों का निवारण कर ले। प्रभु से न मिलने पर तू भाग मत जा (और प्रयत्न जारी रख) यही सबसे वड़ी अकलमन्दी है ॥ ११ ॥ च – प्रभु ने यह संसार रूपी विशाल चित्र बनाया हुआ है। तू इसकी चित्रकारी को छोड़ दे और उस चित्रकार पर ध्यान टिका। यह विचित्र चित्रकारी ही अब सब बखेड़ों का कारण है। तू संसार रूपी चित्र को छोड़कर उस प्रभु रूपी चित्रकार पर चित्त टिका ॥ १२ ॥ छ – वह छत्रधारक प्रभु तेरे आस पास ही है। तू आशाओं तृष्णाओं को छोड़कर भला क्यों प्रसन्न और तृप्त नहीं बना रहता। हे मन, मैं तो तुझे हर क्षण समझाता रहता हूँ कि तू उस प्रभु को छोड़कर क्यों अपने आप को बन्धनों में डाले चला जा रहा है ॥ १३ ॥ ज – यदि व्यक्ति जीवित वना रहकर भी इस तन के विषय-विकारों को जला दे और अपनी जवानी की बृहद आकांक्षाओं को जला ले तो वह जीवन की ठीक युक्ति को पा जाता है। जब व्यक्ति अपनी और पराई सभी सम्पदाओं के प्रति त्यागी हो जाता है तब कहीं

उजारउ लहै ॥ १४ ॥ झझा उरझि सुरझि नही जाना ॥ रहिओ झझकि नाही परवाना ॥ कत झखि झखि अउरन समझावा ॥ झगरु कीए झगरउ ही पावा ॥ १५ ॥ ञंञा निकटि जु घट रहिओ दूरि कहा तजि जाइ ॥ जा कारणि जगु ढूढिअउ नेरउ पाइअउ ताहि ॥ १६ ॥ टटा बिकट घाट घट माही ॥ खोलि कपाट महलि कि न जाही ॥ देखि अटल टलि कतहि न जावा ॥ रहै लपटि घट परचउ पावा ॥ १७ ॥ ठठा इहै दूरि ठग नीरा ॥ नीठि नीठि मनु कीआ धीरा ॥ जिनि ठगि ठगिआ सगल जगु खावा ॥ सो ठगु ठगिआ ठउर मनु आवा ॥ १८ ॥ डडा डर उपजे डरु जाई ॥ ता डर महि डरु रहिआ समाई ॥ जउ डर डरै त फिरि डरु लागै ॥ निडर हूआ डरु उर होइ भागै ॥ १९ ॥ ढढा ढिग ढूढहि कत आना ॥ ढूढत ही ढहि गए पराना ॥ चड़ि सुमेरि ढूढि जब आवा ॥ जिह गड़ु गड़िओ सु गड़ महि पावा ॥ २० ॥ णाणा रणि रूतउ नर नेही करै ॥ ना निवै ना फुनि संचरै ॥ धंनि जनमु ताही को गणै ॥ मारै एकहि तजि जाइ घणै ॥ २१ ॥ तता अतर तरिओ नह जाई ॥ तन त्रिभवण महि रहिओ समाई ॥ जउ त्रिभवण तन माहि समावा ॥ तउ ततहि तत मिलिआ सचु पावा ॥ २२ ॥ थथा अथाह थाह नही पावा ॥ ओहु अथाह इहु थिरु न रहावा ॥ थोड़ै थलि थानक आरंभै ॥ बिनु ही थाभह मंदिरु थंभै ॥ २३ ॥ ददा देखि जु बिनसनहारा ॥ जस अदेखि तस राखि बिचारा ॥ दसवै दुआरि कुंची जब दीजै ॥ तउ दइआल को दरसनु कीजै ॥ २४ ॥ धधा अरधहि उरध निबेरा ॥ अरधहि उरधह मंझि बसेरा ॥ अरधह छाडि उरध जउ आवा ॥ तउ अरधहि उरध मिलिआ सुख पावा ॥ २५ ॥ नंना निसि दिनु निरखत जाई ॥ निरखत नैन रहे रतवाई ॥ निरखत निरखत जब जाइ पावा ॥ तब ले निरखहि निरख मिलावा ॥ २६ ॥ पपा अपर पारु नही पावा ॥ परम जोति सिउ परचउ लावा ॥ पांचउ इंद्री निग्रह करई ॥ पापु पुंनु दोऊ निरवरई ॥ २७ ॥ फफा बिनु फूलह फलु होई ॥ ता फल फंक लखै जउ कोई ॥ दूणि न परई फंक बिचारै ॥ ता फल फंक सभै तन फारै ॥ २८ ॥ बबा बिंदहि बिंद मिलावा ॥ बिंदहि बिंदि न बिछुरन पावा ॥ बंदउ होइ

जाकर वह प्रभु की उज्जवल ज्योति का दर्शन करता है ॥ १४ ॥ झ – हे व्यक्ति तू संसार में उलझ गया है और अब इस उलझाव से सुलझाव का रास्ता तुझे नहीं पता है । तू प्रभु की ओर चलने से झिझकता ही रहा है और इस प्रकार प्रभु के समक्ष स्वीकृत नहीं हो पाया है । तू व्यर्थ की बातें कर कर के दूसरों को क्या समझाता रहता है। झगड़ा करने से झगड़ा ही हाथ लगता है ॥ १५ ॥ ञ – वह प्रभु तेरे पास ही तेरे हृदय में बसता है उसको छोड़कर तू उसे ढूँढने के लिए सब कुछ त्याग कर कहाँ जाता है । जिसके लिए मैंने सारा संसार खोज डाला वह मुझे पास ही से प्राप्त हो गया ॥ १६ ॥ ट – प्रभु का विकट मार्ग व्यक्ति के मन में ही है । हे जीव, तू अपनी आत्मा और मन के किवाड़ों को खोलकर उस प्रभु के महल में प्रवेश क्यों नहीं करता जब तू उस अटल प्रभु को देख लेगा तो फिसलकर अन्य किसी स्थान पर नहीं जाएगा । तब तू प्रभु से ही लिपटा रहेगा और तेरा अन्तर्मन प्रसन्न बना रहेगा ॥ १७ ॥ ठ – हे जीव, तू संसार रूपी ठगने वाले जल (मृगतृष्णा) को अपने से दूर ही रख । बड़े प्रयत्न से मैंने मन को थोड़ा धैर्यवान बनाया है । जिस प्रभु रूपी ठग ने सारे संसार को ठगकर खा लिया है मैंने उस ठग को भी ठग लिया है और अब मेरा मन विश्राम अवस्था में आ गया है ॥ १८ ॥ ड – प्रभु के डर के उपजते ही अन्य भय छूट जाते हैं । प्रभु के भय में ही सभी भय लीन बने रहते हैं । जब तक व्यक्ति प्रभु भय से डरा रहकर उसे मन में धारण नहीं करता, उसे अनेकों प्रकार के भय आ लगते हैं । जब वह निडर हो जाता है और प्रभु में लीन होता है तो उसके मन के सभी डर भाग जाते हैं ॥ १९ ॥ ढ – हे जीव, तू उसे अन्य दिशाओं में क्यों ढूँढता है क्योंकि अन्य स्थानों में ढूँढते रहकर ही प्राण छूट जाते है । उसे ढूँढता हुआ जब मैं सुमेर पर्वत पर चढ़ कर भी वापस लौटा तो मैंने उसे देह रूपी उस किले में ही पा लिया जो उसी ने ही बनाया हुआ है ॥ २० ॥ ण – रण में तल्लीन व्यक्ति को पूर्ण दृढ़तापूर्वक उसी से स्नेह बनाए रखना चाहिए । व्यक्ति को लड़ते हुए न तो झुकना चाहिए और न ही पीछे हटना चाहिए । उसी के जन्म को धन्य कहा जाता है जो अनेकों आकांक्षाओं को त्याग कर केवल एक मन को ही मार कर जीत लेता है ॥ २१ ॥ त – तैरा न जा सकने वाला यह संसार पार नहीं किया जा सकता है । मानव शरीर तीनों लोकों में लीन बना हुआ है । जब तीनों लोकों का स्वामी शरीर में प्रवेश करता है तब मेरा ज्योति रूपी तत्व उस परम तत्व में मिल जाता है और व्यक्ति उस परम सत्य रूपी प्रभु को पा लेता है ॥ २२ ॥ थ – प्रभु अथाह है उसकी थाह नहीं पाई जा सकती है । वह प्रभु तो अथाह है परन्तु व्यक्ति का शरीर सदैव टिका नहीं रहता । यह थोड़े से स्थान पर ही अपना घर–बार बनाना प्रारम्भ कर देता है और प्रभु–नाम रूपी खम्भों के बगैर ही बनाए हुए घर को स्थिर बना देखना चाहता है ॥ २३ ॥ द – जो कुछ भी हम देखते हैं वह नाशवान है; उसको देख जो अदृष्ट है और उस पर विचार कर । जब दसम द्वार रूपी ताले में ज्ञान की कुंजी लगाई जाती है तभी दयालु प्रभु के दर्शन किए जाते हैं ॥ २४ ॥ ध – यदि व्यक्ति अधोमुखी न रहकर ऊर्ध्वमुखी अर्थात् नीचे न बना रहकर ऊपर की ओर विकासशील हो जाता है तो समझो सारा झगड़ा ही निपट जाता है । इस अर्ध और उर्ध्व के बीच में सदैव प्रभु का निवास बना रहता है । जब निचले स्तर को छोड़कर ऊपर के स्तर पर आया जाता है तो निचलापन और ऊपर की स्थिति मिलकर एक हो जाते हैं और जीव सुख प्राप्त करता है ॥ २५ ॥ न – मेरे रात और दिन प्रभु को देखते हुए ही व्यतीत होते हैं । उसे देखते रहने से मेरी आँखें प्रेम रंग में लाल हो गई हैं । देखते–देखते रहने पर जब व्यक्ति उस प्रभु को पा जाता है तो देखने वाला उस देखने योग्य प्रभु में लीन होकर उसी में मिल जाता है ॥ २६ ॥ प – प्रभु सीमाओं से रहित है और उसका ओर–छोर नहीं जाना जा सकता । मैंने उस परम ज्योति के साथ अपनी पहचान घनिष्ठ कर ली है । यदि कोई पाँचों इन्द्रियों को काबू में ले आए तो वह व्यक्ति पाप और पुण्य दोनों से ही निवृत्त हो जाता है ॥ २७ ॥ फ – यदि जीव अभिमान से फूलना छोड़ दे तो इसे नाम रूपी फल प्राप्त हो जाता है । यदि ऐसे फल की एक छोटी सी फांक अर्थात झलक की भी समझ आ जाए और उस झलक का चिन्तन करे तो यह जन्म–मरण के खेल को नष्ट कर देता है ॥२८॥ ब – बूंद मे बूंद मिलती है अर्थात् ब्रह्म का जीव से मेल होता है तब फिर बूंद से बूंद का वियोग नहीं होता ।

बंदगी गहै ॥ बंदक होइ बंध सुधि लहै ॥ २९ ॥ भभा भेदहि भेद मिलावा ॥ अब भउ भानि भरोसउ आवा ॥ जो बाहरि सो भीतरि जानिआ ॥ भइआ भेदु भूपति पहिचानिआ ॥ ३० ॥ ममा मूल गहिआ मनु मानै ॥ मरमी होइ सु मन कउ जानै ॥ मत कोई मन मिलता बिलमावै ॥ मगन भइआ ते सो सचु पावै ॥ ३१ ॥ ममा मन सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ ॥ मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ ॥ ३२ ॥ इहु मनु सकती इहु मनु सीउ ॥ इहु मनु पंच तत को जीउ ॥ इहु मनु ले जउ उनमनि रहै ॥ तउ तीनि लोक की बातै कहै ॥ ३३ ॥ यया जउ जानहि तउ दुरमति हनि करि बसि काइआ गाउ ॥ रणि रूतउ भाजै नही सूरउ थारउ नाउ ॥ ३४ ॥ रारा रसु निरस करि जानिआ ॥ होइ निरस सु रसु पहिचानिआ ॥ इह रस छाडे उह रसु आवा ॥ उह रसु पीआ इह रसु नही भावा ॥ ३५ ॥ लला ऐसे लिव मनु लावै ॥ अनत न जाइ परम सचु पावै ॥ अरु जउ तहा प्रेम लिव लावै ॥ तउ अलह लहै लहि चरन समावै ॥ ३६ ॥ ववा बार बार बिसन सम्हारि ॥ बिसन संम्हारि न आवै हारि ॥ बलि बलि जे बिसनतना जसु गावै ॥ विसन मिले सभ ही सचु पावै ॥ ३७ ॥ वावा वाही जानीऐ वा जाने इहु होइ ॥ इहु अरु ओहु जब मिलै तब मिलत न जानै कोइ ॥ ३८ ॥ ससा सो नीका करि सोधहु ॥ घट परचा की बात निरोधहु ॥ घट परचै जउ उपजै भाउ ॥ पूरि रहिआ तह त्रिभवण राउ ॥ ३९ ॥ खखा खोजि परै जउ कोई ॥ जो खोजै सो बहुरि न होई ॥ खोज बूझि जउ करै बीचारा ॥ तउ भवजल तरत न लावै बारा ॥ ४० ॥ ससा सो सह सेज सवारै ॥ सोई सही संदेह निवारै ॥ अलप सुख छाडि परम सुख पावा ॥ तब इह त्रीअ ओहु कंतु कहावा ॥ ४१ ॥ हाहा होत होइ नही जाना ॥ जब ही होइ तबहि मनु माना ॥ है तउ सही लखै जउ कोई ॥ तब ओही उहु एहु न होई ॥ ४२ ॥ लिंउ लिंउ करत फिरै सभु लोगु ॥ ता कारणि बिआपै बहु सोगु ॥ लखिमी बर सिउ जउ लिउ लावै ॥ सोगु मिटै सभ ही सुख पावै ॥ ४३ ॥ खखा खिरत खपत गए केते ॥ खिरत खपत अजहूं नह चेते ॥ अब जगु जानि जउ मना रहै ॥ जह का

प्रभु का सेवक होकर उसके सुमिरन को पकड़े रहे तो वह अपने भाई–वन्धु की तरह उसकी सुधि लेता रहता है ॥२९॥ भ – जब अपने मन के भेद को उस प्रभु के भेद से मिला दिया तो अव भय को समाप्त करके एक प्रभु का भरोसा पक्का हो गया है । जो बाहर था उसे मैंने अन्दर ही जान लिया है और उस सम्राट प्रभु के भेद को समझकर मैंने उसे पहचान लिया ॥ ३० ॥ म – सबके मूल प्रभु को ग्रहण करने से ही मन संतुष्ट होता है और जो इस रहस्य को समझने वाला है वही मन को जान पाता है । मन को प्रभु से मिलाने में किसी को भी विलम्व नहीं लगाना चाहिए । जो उसमें लीन हो जाता है वही सत्य को प्राप्त करता है ॥ ३१ ॥ म – जीव का काम तो मन से ही पड़ता है यदि मन को साध लिया जाए तो व्यक्ति सिद्ध हो जाता है । कवीर मन ही से मन की वात कहता है कि हे मन, मुझे मन जैसा अन्य कोई नहीं मिला ॥ ३२ ॥ यह मन ही माया रूप है और यही मन कल्याणकारी प्रभु वन जाता है । यह मन ही इन पाँच तत्वों का प्राण है अर्थात् यह शरीर के साथ एकात्म रूप से विचरण करता है । परन्तु जब इस मन को वश में करके प्राण उन्मनी अवस्था अर्थात् पूर्ण आनन्द की अवस्था में टिक जाता है तव वह तीनों लोकों के रहस्य बताने में समर्थ हो जाता है ॥ ३३ ॥ य – यदि तू कुछ जानता है तो हे जीव, अपनी दुर्मति नष्ट कर और अपने शरीर रूपी गाँव को अपने नियन्त्रण में रख । यदि इस संसार रूपी युद्ध में तू लड़ता रहेगा और इससे भागेगा नहीं तो तेरा नाम भी शूरवीर जाना जाएगा ॥ ३४ ॥ र – सांसारिक रसों को मैंने नीरस जान लिया है और स्वादों का त्याग करके मैंने अन्तरात्मा के रस को पहचान लिया है । सांसारिक रसों को छोड़ने से वह आध्यात्मिक रस प्राप्त होता है जिस रस को पीने से यह सांसारिक रस अच्छा नहीं लगता ॥ ३५ ॥ ल – अपने मन को प्रभु में ऐसा लवलीन करना चाहिए कि वह अन्य किसी स्थान पर न जाए और परम सत्य को प्राप्त कर ले । यदि वह प्रभु के लिए प्रेम की लौ लगा ले तो वह प्रभु को प्राप्त करके उसी के चरणों में लीन हो जाता है ॥ ३६ ॥ व – बारंबार प्रभु का सुमिरन कर । प्रभु के सुमिरन से तेरी कभी पराजय नहीं होगी । जो प्रभु के सन्तों का यश गायन करते हैं मैं उन पर बलिहारी जाता हूँ । प्रभु–मिलाप से ही सभी सत्य प्राप्त करते हैं ॥ ३७ ॥ व – उस प्रभु को भी अनुभव कर क्योंकि उसको जानने से ही व्यक्ति उस जैसा हो जाता है । जब यह जीभ और वह प्रभु आपस में मिल जाते हैं तो मिलने के बाद उनको कोई भी अलग रूप में नहीं जान पाता ॥ ३८ ॥ स – मन को अच्छी तरह ठीक करो और इस प्रकार उसे रोको कि वह अन्तरात्मा में ही स्थित होकर संतुष्ट बना रहे । आत्मा में स्थित होने पर जो भाव उत्पन्न होता है वह तीनों लोकों के स्वामी प्रभु की व्यापकता का अनुभव कराता है ॥ ३९ ॥ ख – जो कोई उसको ढूँढ ले और जो कोई उसको ढूँढ लेता है वह पुनः जन्म नहीं लेता । जब व्यक्ति खोजता, बूझता और उसका चिन्तन करता है तो उसे संसार सागर को तैरते हुए जरा भी देर नहीं लगती ॥ ४० ॥ स – वह सखी जिसकी शय्या को उसका प्रभु–पति शोभायमान करता है अपने सन्देहों का वास्तविक रूप से निवारण कर देती है । वह छोटे से सुख को छोड़कर परम सुख प्राप्त कर लेती है और इस प्रकार यह पत्नी कही जाती है और वह प्रभु इसका पति कहलाता है ॥ ४१ ॥ ह – प्रभु प्रत्यक्ष है परन्तु व्यक्ति उसके अस्तित्व को नहीं जानता । जब यह उसके अस्तित्व का अनुभव कर लेता है तभी उसका मन संतुष्ट हो जाता है । यदि कोई व्यक्ति उसे समझ सकता हो तो प्रभु वास्तविक रूप में व्याप्त है । ऐसी अवस्था में केवल वही वह होगा और जीव का अस्तित्व उसमें विलीन हो जाएगा ॥ ४२ ॥ सभी लोग लेने के लिए तड़पते रहते हैं और इसी कारण व्यक्ति को अनेकों शोक आ घेरते हैं । यदि व्यक्ति परमात्मा में अपनी लौ लगा ले तो उसके सभी शोक मिट जाते हैं और वह सब सुखों को प्राप्त कर लेता है ॥ ४३ ॥ ख – अनेकों का क्षय होकर वे मर–खप गए हैं और नष्ट होता हुआ व्यक्ति अभी भी प्रभु का सुमिरन नहीं करता । अभी भी संसार की वास्तविकता को समझकर यदि व्यक्ति अपने मन में ही टिका रहे तो जिससे यह बिछुड़ा है उससे मिल जाता है और

बिछुरा तह थिरु लहै ॥ ४४ ॥ बावन अखर जोरे आनि ॥ सकिआ न अखरु एकु पछानि ॥ सत का सबदु कबीरा कहै ॥ पंडित होइ सु अनभै रहै ॥ पंडित लोगह कउ बिउहार ॥ गिआनवंत कउ ततु बीचार ॥ जा कै जीअ जैसी बुधि होई ॥ कहि कबीर जानैगा सोई ॥ ४५ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी थिंती कबीर जी की ॥

सलोकु ॥ पंद्रह थिंती सात वार ॥ कहि कबीर उरवार न पार ॥ साधिक सिध लखै जउ भेउ ॥ आपे करता आपे देउ ॥ १ ॥ थिंती ॥ अंमावस महि आस निवारहु ॥ अंतरजामी रामु समारहु ॥ जीवत पावहु मोख दुआर ॥ अनभउ सबदु ततु निजु सार ॥ १ ॥ चरन कमल गोबिंद रंगु लागा ॥ संत प्रसादि भए मन निरमल हरि कीरतन महि अनदिनु जागा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ परिवा प्रीतम करहु बीचार ॥ घट महि खेलै अघट अपार ॥ काल कलपना कदे न खाइ ॥ आदि पुरख महि रहै समाइ ॥ २ ॥ दुतीआ दुह करि जानै अंग ॥ माइआ ब्रहम रमै सभ संग ॥ ना ओहु बढै न घटता जाइ ॥ अकुल निरंजन एकै भाइ ॥ ३ ॥ त्रितीआ तीने सम करि लिआवै ॥ आनद मूल परम पदु पावै ॥ साधसंगति उपजै बिस्वास ॥ बाहरि भीतरि सदा प्रगास ॥ ४ ॥ चउथहि चंचल मन कउ गहहु ॥ काम क्रोध संगि कबहु न बहहु ॥ जल थल माहे आपहि आप ॥ आपै जपहु आपना जाप ॥ ५ ॥ पांचै पंच तत बिसथार ॥ कनिक कामिनी जुग बिउहार ॥ प्रेम सुधा रसु पीवै कोइ ॥ जरा मरण दुखु फेरि न होइ ॥ ६ ॥ छठि खटु चक्र छहूं दिस धाइ ॥ बिनु परचै नही थिरा रहाइ ॥ दुबिधा मेटि खिमा गहि रहहु ॥ करम धरम की सूल न सहहु ॥ ७ ॥ सातैं सति करि बाचा जाणि ॥ आतम रामु लेहु परवाणि ॥ छूटै संसा मिटि जाहि दुख ॥ सुंन सरोवरि पावहु सुख ॥ ८ ॥ असटमी असट धातु की काइआ ॥ ता महि अकुल महा निधि राइआ ॥ गुर गम गिआन बतावै भेद ॥ उलटा रहै अभंग अछेद ॥ ९ ॥ नउमी नवै दुआर कउ साधि ॥ बहती मनसा राखहु बांधि ॥ लोभ मोह सभ बीसरि जाहु ॥

स्थिरता प्राप्त कर लेता है ॥ ४४ ॥ व्यक्ति ने बावन अक्षर तो जोड़ लिए हैं परन्तु प्रभु रूपी एक शब्द को भी वह नहीं पहचान सका है । कबीर यह सत्य का शव्द कहता है कि जो वास्तव में पंडित है वह निर्भय बना रहता है । अक्षरों की विद्या विद्वान लोगों का काम धन्धा है परन्तु ज्ञानवान व्यक्ति इनके तत्व का चिन्तन करता है । कबीर कहता है कि जिसके मन में जैसी बुद्धि होगी वह प्रभु को वैसा ही जानेगा ॥ ४५ ॥

१ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी थिंती (तिथि) कबीर जी की

श्लोक ॥ चन्द्रमा की पन्द्रह तिथियां है और सप्ताह के सात दिन हैं । कबीर कहता है कि उस प्रभु का कोई ओर–छोर नहीं है । साधक और सिद्ध व्यक्ति उस प्रभु के रहस्य को जान लेते हैं तो वह स्वयं ही कर्त्ता और स्वयं ही स्वामी हो जाते हैं ॥ १ ॥ तिथि ॥ अमावस के दिन अपनी आशाओं को त्याग दो और अन्तर्यामी प्रभु का मन में सुमिरन करो । इस प्रकार जीवन में ही तू मुक्ति का द्वार, निर्भयता, शब्द तत्व और अपनी वास्तविकता को जान लेगा ॥ १॥ जिनको प्रभु के चरण–कमलों का रंग लग गया है उनका मन शान्त पुरुषों की कृपा से निर्मल हो गया है और प्रभु के गुणानुवाद में दिन–रात सजग बना रहता है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रथम तिथि को तुम प्रियतम का चिन्तन करो क्योंकि वह शरीर–रहित अनन्त प्रभु घट–घट में खेल रहा है । जो प्रभु में लीन बना रहता है उसको मौत और पीड़ा कभी भी नहीं खा सकती ॥ २ ॥ दूसरी तिथि को तू इस प्रकार जान कि शरीर में दो का निवास है और माया तथा भ्रम इकट्ठे ही सब में रमण कर रहे हैं । वह प्रभु न कभी बढ़ता है न कभी घटता है और वह अकुल निरंजन एक समान ही बना रहता है ॥ ३ ॥ तीसरी तिथि – यदि व्यक्ति तीनों दशाओं (रज, तम, सत्व) में समान भाव में रहे तो वह सभी आनन्द के मूल परम–पद को प्राप्त कर लेता है । साधसंगत में व्यक्ति के मन में यह भरोसा पैदा होता है कि बाहर–भीतर उस प्रभु का ही प्रसार है ॥ ४ ॥ चौथी तिथि वाले दिन अपने चंचल मन को पकड़ कर रखो और काम, क्रोध आदि के साथ कभी मत लगो । समुद्र और धरती में प्रभु सब कुछ स्वयं ही है । वह स्वयं ही अपना जाप जपता है ॥ ५ ॥ पाँचवी तिथि को तू यह जान ले कि संसार पाँच तत्वों का ही विस्तार है और स्वर्ण तथा सुन्दर स्त्री ही इस संसार के दो व्यवहार हैं । कोई बिरला ही अमृत के प्रेम का पान करता है और जो पान करता है उसे जन्म–मरण के दुख को नहीं सहन करना पड़ता ॥ ६ ॥ छठवीं तिथि – षटचक्रों वाली देह छः दिशाओं में भागती फिरती है । प्रभु के नाम में लीन हुए बिना यह स्थिर नहीं रह पाती । हे जीव, तू द्वैव–भाव को मिटा दे और क्षमा–भाव को पकड़ कर रख ले । इस प्रकार तू कर्मकाण्डों और धार्मिक प्रपंचों की पीड़ा को नहीं सहेगा ॥ ७ ॥ सातवीं तिथि–सातवें दिन सत्य रूप में तू प्रभु का मनन कर और अपनी आत्मा को प्रभु रूप में ही स्वीकार कर । इससे तेरे संशय छूट जाएंगे और दुख मिट जाएंगे । शून्य प्रभु–रूपी सरोवर में तैरता हुआ तू सुख प्राप्त कर लेगा ॥ ८ ॥ आठवीं तिथि को तू यह समझ ले कि शरीर आठ धातुओं (चमड़ी, बाल, रक्त, नाड़ी, हड्डी, पेशी, चर्बी और वीर्य) का बना हुआ है और उसमें महान खजाने के रूप में प्रभु विराजमान है । गुरु को पहुँचकर प्राप्त किए हुए ज्ञान से यह पता चलता है कि प्रभु सबमें स्थित होता हुआ भी अभंग, अछेद एवं अविनाशी है ॥ ९ ॥ नौवीं तिथि को तू नौ–द्वारों को नियन्त्रण में रखना सीख और बाढ़ की तरह बहती हुई आकांक्षाओं को बाँध कर रख । लोभ, मोह, आदि सब को भूल जा और इस प्रकार

जुगु जुगु जीवहु अमर फल खाहु ॥ १० ॥ दसमी दह दिस होइ अनंद ॥ छूटै भरमु मिलै गोबिंद ॥ जोति सरूपी तत अनूप ॥ अमल न मल न छाह नही धूप ॥ ११ ॥ एकादसी एक दिस धावै ॥ तउ जोनी संकट बहुरि न आवै ॥ सीतल निरमल भइआ सरीरा ॥ दूरि बतावत पाइआ नीरा ॥ १२ ॥ बारसि बारह उगवै सूर ॥ अहिनिसि बाजे अनहद तूर ॥ देखिआ तिहूं लोक का पीउ ॥ अचरजु भइआ जीव ते सीउ ॥ १३ ॥ तेरसि तेरह अगम बखाणि ॥ अरध उरध बिचि सम पहिचाणि ॥ नीच ऊच नही मान अमान ॥ बिआपिक राम सगल सामान ॥ १४ ॥ चउदसि चउदह लोक मझारि ॥ रोम रोम महि बसहि मुरारि ॥ सत संतोख का धरहु धिआन ॥ कथनी कथीऐ ब्रहम गिआन ॥ १५ ॥ पूनिउ पूरा चंद अकास ॥ पसरहि कला सहज परगास ॥ आदि अंति मधि होइ रहिआ थीर ॥ सुख सागर महि रमहि कबीर ॥ १६ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ रागु गउड़ी वार कबीर जीउ के ७ ॥

बार बार हरि के गुन गावउ ॥ गुर गमि भेदु सु हरि का पावउ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ आदित करै भगति आरंभ ॥ काइआ मंदर मनसा थंभ ॥ अहिनिसि अखंड सुरही जाइ ॥ तउ अनहद बेणु सहज महि बाइ ॥ १ ॥ सोमवारि ससि अंम्रितु झरै ॥ चाखत बेगि सगल बिख हरै ॥ बाणी रोकिआ रहै दुआर ॥ तउ मनु मतवारो पीवनहार ॥ २ ॥ मंगलवारे ले माहीति ॥ पंच चोर की जाणै रीति ॥ घर छोडें बाहरि जिनि जाइ ॥ नातरु खरा रिसै है राइ ॥ ३ ॥ बुधवारि बुधि करै प्रगास ॥ हिरदै कमल महि हरि का बास ॥ गुर मिलि दोऊ एक सम धरै ॥ उरध पंक लै सूधा करै ॥ ४ ॥ ब्रिहसपति बिखिआ देइ बहाइ ॥ तीनि देव एक संगि लाइ ॥ तीनि नदी तह त्रिकुटी माहि ॥ अहिनिसि कसमल धोवहि नाहि ॥ ५ ॥ सुक्रितु सहारै सु इह ब्रति चड़ै ॥ अनदिन आपि आप सिउ लड़ै ॥ सुरखी पांचउ राखै सबै ॥ तउ दूजी द्रिसटि न पैसै कबै ॥ ६ ॥ थावर थिरु करि राखै सोइ ॥ जोति दी वटी घट महि जोइ ॥ बाहरि भीतरि भइआ प्रगासु ॥ तब हूआ

अमर फल का सेवन करते हुए तू युगों–युगों तक जीवित बना रहेगा ॥ १० ॥ दसवीं तिथि को दसों दिशाओं में आनन्दित करने वाली समझ । परन्तु यह तभी होगा जब भ्रम छूट जाएगें और प्रभु से मिलाप हो जाएगा । वह ज्योतिस्वरूप प्रभु रूपी तत्व अनुपम है जो मलीनता से रहित है और न छाया जैसा है और न धूप जैसा है ॥ ११ ॥ एकादश तिथि को यदि व्यक्ति केवल एक प्रभु की दिशा में ही चल निकले तो वह पुनः योनि के संकट में नहीं पड़ता । उसका शरीर शीतल और निर्मल हो जाता है और जिस प्रभु को बहुत दूर बताया जाता था वह उसे पास ही से प्राप्त कर लेता है॥१२॥ बाहरवीं तिथि को हृदय रूपी आकाश में मानों बारह सूर्य प्रकाशित हो उठते हैं और दिन रात अनहद ध्वनि के वाद्य बजते रहते हैं । तीनों लोकों का प्रियतम दिखाई दे जाता है और आश्चर्यजनक यह होता है कि जीव प्रभु रूप ही हो जाता है ॥ १३ ॥ तेहरवीं तिथि को जिस व्यक्ति का मन उस अगम्य प्रभु का बखान करता है वह इस विश्व में सबको समान भाव से देखता है । उसके लिए कोई ऊँचा–नीचा नहीं और कोई मान–अपमान नहीं क्योंकि वह समान रूप से सब में प्रभु को व्याप्त मानता है ॥ १४ ॥ चौदहवीं तिथि को यह मान कि प्रभु चौदह लोकों (सात आकाश और सात पाताल) में व्याप्त है और कण–कण में बसा हुआ है । सत्य और सन्तोष का ध्यान करो और अपने कथन में ब्रह्मज्ञान की कथा वार्ता की बात करो ॥ १५ ॥ पूर्णिमा के द्वारा यह माना जाना चाहिए कि पूर्ण प्रभु हृदय रूपी आकाश में चन्द्रमा की तरह प्रकाशित हो गया है और उसकी सहज कला से ही सब ओर प्रकाश का प्रसार हो जाता है । वही आदि, अन्त और मध्य में स्थिर बना रहता है और ऐसे सुख सागर में हे कबीर तेरा निवास बना हुआ है ॥ १६ ॥

१ओअंकार सतिगुर प्रसादि रागु गउड़ी वार (सप्ताह के दिन) कबीर जी के ७ ॥

सप्ताह के सभी दिन प्रभु का गुणानुवाद करो और गुरु को मिलकर प्रभु का रहस्य प्राप्त करो ॥ १ ॥ रहाउ ॥ रविवार को प्रभु की भक्ति प्रारम्भ करो और काया रूपी घर में ही इच्छाओं को रोककर रखो । जब रात–दिन व्यक्ति की सुरति अखण्ड प्रभु के साथ जुड़ी रहती है तो सहज की बासुंरी अनहद रूप में बजने लगती है ॥ १ ॥ सोमवार को गगन मण्डल में स्थित शान्त चन्द्रमा से अमृत झरता है जिसे चखते ही तुरन्त समस्त प्रकार के विषय–वासनाओं का विष नष्ट हो जाता है । जब गुरु की वाणी का रोका हुआ मन दरवाजे के अन्दर ही रहता है तभी वह मतवाला होकर अमृत का पान करता है । मंगलवार को वास्तविकता को जान और विकारादि पाँचों चोरों की कार्य–शैली को समझ ले । अन्तर्मन रूपी घर को छोड़कर बाहर बिल्कुल न भटक नहीं तो प्रभु बहुत ही क्रोधित हो जाएगा ॥ ३ ॥ बुद्धवार को बुद्धि को प्रकाशित करना चाहिए ताकि हृदय–कमल में प्रभु का निवास हो जाए । गुरु से मिलकर व्यक्ति को चाहिए कि दुख सुख दोनों को एक समान जाने और हृदय रूपी उलटे हो चुके कमल को सीधा कर लेना चाहिए ॥ ४ ॥ बृहस्पतिवार को विषय विकारों को बहा देना चाहिए और तीनों देवों के बजाए एक प्रभु के साथ ही लौ लगानी चाहिए । त्रिकुटी में स्थित ज्ञान, कर्म और भक्ति रूपी तीनों नदियों में व्यक्ति दिन रात अपने पाप क्यों नहीं धोता ॥ ५ ॥ शुक्रवार को जो अपने आप से युद्ध करने का व्रत लेता है वह कामयाब हो जाता है । यदि व्यक्ति अपनी पाँचों इन्द्रियों को भली प्रकार से काबू कर ले तो वह किसी दूसरे पर दृष्टि भी नहीं डालेगा ॥ ६ ॥ शनिवार को जो प्रभु की ज्योति को स्थिर रखता है और उसकी ज्योति को अपने ही अन्दर देखता है तो उसके बाहर और भीतर प्रकाश हो जाता है । इस प्रकार उसके

सगल करम का नासु ॥ ७ ॥ जब लगु घट महि दूजी आन ॥ तउ लउ महलि न लाभै जान ॥ रमत राम सिउ लागो रंगु ॥ कहि कबीर तब निरमल अंग ॥ ८ ॥ १ ॥

रागु गउड़ी चेती बाणी नामदेउ जीउ की १ओं सतिगुर प्रसादि ॥

देवा पाहन तारीअले ॥ राम कहत जन कस न तरे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ तारीले गनिका बिनु रूप कुबिजा बिआधि अजामलु तारीअले ॥ चरन बधिक जन तेऊ मुकति भए ॥ हउ बलि बलि जिन राम कहे ॥ १ ॥ दासी सुत जनु बिदरु सुदामा उग्रसैन कउ राज दीए ॥ जप हीन तप हीन कुल हीन क्रम हीन नामे के सुआमी तेऊ तरे ॥ २ ॥ १ ॥

रागु गउड़ी रविदास जी के पदे गउड़ी गुआरेरी १ओं सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

मेरी संगति पोच सोच दिनु राती ॥ मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती ॥ १ ॥ राम गुसईआ जीअ के जीवना ॥ मोहि न बिसारहु मै जनु तेरा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई ॥ चरण न छाडउ सरीर कल जाई ॥ २ ॥ कहु रविदास परउ तेरी साभा ॥ बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा ॥ ३ ॥ १ ॥ बेगमपुरा सहर को नाउ ॥ दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ ॥ नां तसवीस खिराजु न मालु ॥ खउफु न खता न तरसु जवालु ॥ १ ॥ अब मोहि खूब वतन गह पाई ॥ ऊहां खैरि सदा मेरे भाई ॥ १ ॥ रहाउ ॥ काइमु दाइमु सदा पातिसाही ॥ दोम न सेम एक सो आही ॥ आबादानु सदा मसहूर ॥ ऊहां गनी बसहि मामूर ॥ २ ॥ तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै ॥ महरम महल न को अटकावै ॥ कहि रविदास खलास चमारा ॥ जो हम सहरी सु मीतु हमारा ॥ ३ ॥ २ ॥

१ओं सतिगुर प्रसादि ॥ गउड़ी बैरागणि रविदास जीउ ॥

घट अवघट डूगर घणा इकु निरगुणु बैलु हमार ॥ रमईए सिउ इक बेनती मेरी पूंजी राखु मुरारि ॥ १ ॥ को बनजारो राम को मेरा टांडा

सारे बुरे कर्मों का नाश ही जाता है ॥ ७ ॥ जब तक व्यक्ति प्रभु के अतिरिक्त किसी अन्य की शरण लेने की सोचता है तब तक वह प्रभु के स्थान को नहीं ढूँढ पाता । जब प्रभु का सुमिरन करते हुए उसका रंग चढ़ जाता है तब कबीर कहते है कि व्यक्ति के सारे अंग निर्मल हो जाते हैं ॥ ८ ॥ १ ॥

रागु गउड़ी चेती बाणी नामदेव जी की १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

प्रभु ने तो पत्थरों को भी तैरा दिया है तो फिर प्रभु का सुमिरन करने वाला सेवक भला कैसे पार नहीं उतेरगा ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, तूने गणिका, कुब्जा और अजामल जैसे व्याध को भी पार उतार दिया है और कृष्ण के चरणों में बाण मारकर उसे मार डालने वाला बधिक भी मुक्त हो गया था । मैं बार–बार उस पर बलिहारी जाता हूँ जिसने राम का सुमिरन किया है । तूने सेवक बने हुए दासी पुत्र विदुर को, सुदामा को पार उतार दिया है तथा उग्रसेन को राज दे दिया है । यहाँ तक कि जप, तप कुल एवं कर्मविहीन व्यक्तियों को भी नामदेव के स्वामी प्रभु ने पार उतार दिया है ॥ २ ॥ १ ॥

रागु गउड़ी रविदास जी के पदे
गउड़ी गुआरेरी १ओअंकार सति नामु करता पुरखु गुर प्रसादि ॥

मुझे दिन–रात यही चिन्ता लगी रहती है कि मेरी संगत (उठना, बैठना) अच्छी नहीं । मेरे कर्म कुटिलता वाले हैं और मेरा जन्म भी तथाकथित नीच कुल में हुआ है ॥ १ ॥ हे सृष्टि के स्वामी और जीवों के जीवन रूपी प्रभु तू मुझे मत भुला क्योंकि मैं तेरा सेवक हूँ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मुझ सेवक की विपत्ति को दूर करो और मुझे अपनी प्रेम पूर्ण प्रीति प्रदान करो । मैं आपके चरण नहीं छोड़ूंगा बेशक मेरा शरीर नष्ट हो जाए ॥ २ ॥ रविदास कहते हैं कि मैंने तेरी शरण ली है इसलिए हे प्रभु, अपने सेवक को शीघ्र मिलो और विलम्ब मत लगाओ ॥ ३ ॥ १ ॥ आध्यात्मिक सुख वाले नगर का नाम बेगमपुरा है जहाँ कोई दुख अथवा चिन्ता नहीं रहती । वहाँ सामान पर महसूल आदि लगने का कोई भय नहीं । वहाँ न भय है न त्रुटि है और न ही दुख और कोई गिरावट है । अब मुझे यह बहुत अच्छा देश मिल गया है क्योंकि मेरे भाईयो वहाँ सदैव कुशल क्षेम ही बनी रहती है ॥ १ ॥ रहाउ ॥ प्रभु का राज्य पक्का स्थिर और नित्य है । वहाँ कोई दूसरे या तीसरे दर्जे का नागरिक नहीं है और केवल एक प्रभु ही है । सदैव आबाद बना रहने वाला वह बहुत ही प्रसिद्ध नगर है और वहाँ आध्यात्मिक दर्जे में बड़े ऊँचे अमीर और सन्तुष्ट लोग बसते हैं॥२॥ उन्हें जैसा अच्छा लगता है वे वैसे ही घूमते फिरते हैं क्योंकि वे उस प्रभु के स्थान के पूर्ण जानकार है इसलिए उनको कोई भी नहीं रोकता । मुक्त हो चुका चर्मकार रविदास कहता है कि जो मेरे इस शहर का रहने वाला है वह हमारा मित्र ही है ॥ ३ ॥ २ ॥

१ओअंकार सतिगुर प्रसादि गउड़ी बैरागणि रविदास जीउ ॥

परमात्मा का रास्ता बहुत विषम और ऊँचा–नीचा है परन्तु यह मेरा शरीर रूपी बैल बिल्कुल ही गुण विहीन है । मैं उस परमात्मा से प्रार्थना करता है कि हे प्रभु, मेरी नाम रूपी पूँजी की रक्षा कर ॥ १ ॥ क्या कोई और भी प्रभु का व्यापारी है जो मेरे साथ चलने वाला हो क्योंकि मेरा माल तो लदा हुआ जा रहा है ॥

लादिआ जाइ रे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हउ बनजारो राम को सहज करउ ब्यापारु ॥ मै राम नाम धनु लादिआ बिखु लादी संसारि ॥ २ ॥ उरवार पार के दानीआ लिखि लेहु आल पतालु ॥ मोहि जम डंडु न लागई तजीले सरब जंजाल ॥ ३ ॥ जैसा रंगु कसुंभ का तैसा इहु संसारु ॥ मेरे रमईए रंगु मजीठ का कहु रविदास चमार ॥ ४ ॥ १ ॥

गउड़ी पूरबी रविदास जीउ ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

कूपु भरिओ जैसे दादिरा कछु देसु बिदेसु न बूझ ॥ ऐसे मेरा मनु बिखिआ बिमोहिआ कछु आरा पारु न सूझ ॥ १ ॥ सगल भवन के नाइका इकु छिनु दरसु दिखाइ जी ॥ १ ॥ रहाउ ॥ मलिन भई मति माधवा तेरी गति लखी न जाइ ॥ करहु क्रिपा भ्रमु चूकई मै सुमति देहु समझाइ ॥ २ ॥ जोगीसर पावहि नही तुअ गुण कथनु अपार ॥ प्रेम भगति कै कारणै कहु रविदास चमार ॥ ३ ॥ १ ॥

गउड़ी बैरागणि ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार ॥ तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार ॥ १ ॥ पारु कैसे पाइबो रे ॥ मो सउ कोऊ न कहै समझाइ ॥ जा ते आवा गवनु बिलाइ ॥ १ ॥ रहाउ ॥ बहु बिधि धरम निरूपीऐ करता दीसै सभ लोइ ॥ कवन करम ते छूटीऐ जिह साधे सभ सिधि होइ ॥ २ ॥ करम अकरम बीचारीऐ संका सुनि बेद पुरान ॥ संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु ॥ ३ ॥ बाहरु उदकि पखारीऐ घट भीतरि बिबिधि बिकार ॥ सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिउहार ॥ ४ ॥ रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार ॥ पारस मानो ताबो छुए कनक होत नही बार ॥ ५ ॥ परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट ॥ उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट ॥ ६ ॥ भगति जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार ॥ सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार ॥ ७ ॥ अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास ॥ प्रेम भगति नही ऊपजै ता ते रविदास उदास ॥ ८ ॥ १ ॥

१॥ रहाउ ॥ मैं प्रभु का व्यापारी हूँ और सहज ज्ञान का व्यापार करता हूँ । मैंने तो राम नाम रूपी धन को लादा है परन्तु संसार के अन्य व्यापारियों ने विषय विकारों को लादा हुआ है ॥ २ ॥ इस लोक और परलोक को जानने वालो तुम जो चाहों ऊलजलूल लिख लो मुझे यमदण्ड तो लग ही नहीं सकता क्योंकि मैंने सभी झूठे जंजालों को त्याग दिया है ॥ ३ ॥ कुसुम्भ के फूल का रंग जैसा अच्छा लगने वाला होता है वैसा ही यह संसार चलायमान है । रविदास चर्मकार यह कहता है कि मेरे प्रभु का रंग मजीठ के रंग जैसा पक्का है ॥ ४ ॥ १ ॥

गउड़ी पूरबी रविदास जीउ १ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

जिस प्रकार पानी से भरे हुए कुँए में रहने वाले मेढक को देश और विदेश की कुछ भी समझ नहीं होती उसी प्रकार विषयों में लीन मेरे मन को इस लोक और परलोक का कुछ भी पता नहीं है ॥ १ ॥ हे सारे लोकों के नायक प्रभु, मुझे क्षण भर के लिए ही दर्शन दिखा दे ॥ १ ॥ रहाउ ॥ हे प्रभु, मेरी बुद्धि मलीन हो गई है और मैं तेरी गति को देख नहीं पा रहा हूँ । मुझ पर कृपा करो जिससे मेरा भ्रम चुक जाए और मुझे सुमति प्रदान करो ॥ २ ॥ तेरे अपार गुण कथन से परे हैं और योगेश्वर भी उनके रहस्यों को नहीं जान पाते । चर्मकार रविदास तो केवल तेरी प्रेम भक्ति के लिए ही तुझसे कह रहा है ॥ ३ ॥ १ ॥

गउड़ी बैरागणि १ ओअंकार सतिगुर प्रसादि ॥

सतियुग में सत्य था, त्रेता में यज्ञ (बलि) और द्वापर में पूजा अर्चना का विधान था । तीनों युगों में लोगों ने इन तीनों के विधान को माना परन्तु कलियुग में केवल एक प्रभु नाम का ही आसरा समझा जाता है ॥ १ ॥ मैं कैसे पार उतरूँगा; कोई भी मुझे इस बात को नहीं समझाता जिससे मेरा आवागमन समाप्त हो जाए ॥ १ ॥ रहाउ ॥ धर्म को अनेकों विधियों से बतलाया जाता है और सभी लोक उन्हीं विधियों पर चलते हुए दिखाई भी देते है परन्तु ऐसे कौन से कर्म हैं जिनके फलस्वरूप मुक्ति होती है और जिनकी साधना करने पर सब कुछ सिद्ध हो जाता है । यदि वेदों पुराणों को सुनकर कर्म–अकर्म का विचार किया जाए तो शंकाए पैदा हो जाती हैं और जब मन में सदैव संशय बना रहेगा तो फिर भला अहंकार का नाश कैसे होगा ॥ ३ ॥ शरीर को बाहर से तो धो लिया जाता है परन्तु मन में अनेकों विकार बने रहते हैं । व्यक्ति शुद्ध कैसे होगा क्योंकि उसने शौच का तरीका हाथी वाला अपनाया हुआ है अर्थात पानी में नहाकर वह फिर अपने ऊपर मिट्टी डाल लेता है ॥ ४ ॥ सारा संसार यह जानता है कि सूर्य उगने के साथ रात समाप्त हो जाती है और ताँबे को पारस से छूने पर सोना वनते देर नहीं लगती ॥ ५ ॥ पारस रूपी गुरु से पूर्व में लिखे भाग्य लेखों के अनुसार यदि मिलाप हो जाए तो ज्ञान की अवस्था में पहुँच कर मन अपने स्वरूप में ही प्रभु को ढूँढ लेता है और उसके वज्र जैसे बन्द पड़े किवाड़ खुल जाते हैं ॥ ६ ॥ भ्रम, बन्धन और विकारों को नष्ट करके ही व्यक्ति युक्ति पूर्वक प्रभु की भक्ति को अपने मन में दृढ़ करता है और फिर प्रभु में बसकर मन के प्रेम के फलस्वरूप एक गुणातीत प्रभु के चिन्तन में लग जाता है ॥ ७ ॥ हे प्रभु, मैंने अनेकों यत्न मन को रोकने के किए परन्तु भ्रम का पाश हटाए से भी नहीं हट पाता । प्रेम और भक्ति मुझमें पैदा नहीं हो सकी । इसीलिए रविदास मन से उदास है ॥८॥१॥

परिशिष्ट 1

जपु (जी)

गुरु नानक देव जी की रचना 'जपु' गुरु ग्रंथ साहिब की पहली लम्बी वाणी है जिसे सिक्ख जगत श्रद्धा से जपुजी कहता है। यह अत्यन्त सूत्रात्मक वाणी है और यह माना जाता है कि सारा गुरु ग्रंथ साहिब 'जपु जी' की ही व्याख्या है। वाणी के शीर्षक से ही पता चलता है कि यह वाणी जाप अथवा गम्भीर चिन्तन के लिए है। वास्तव में, 'जपु जी' में सिक्ख धर्म के लगभग सभी मूल सिद्धांत विद्यमान हैं। 'जपु जी' से पहले श्लोक में कालातीत सत्य को ही आदिकाल से अवस्थित माना गया है और ऐसा भी कहा गया है कि वर्तमान और भविष्य में भी सत्य ही ऐसी सत्ता है जो सदैव कार्यशील बनी रहेगी। 'जपु जी' के प्रारम्भ में ही स्नान, समाधि और चतुराईयों की बात करते हुए गुरु नानक कहते हैं कि इन सभी कर्मकाण्डी साधनों से जीव परमात्मा को नहीं जान सकता। परमात्मा से उसकी दूरी तभी समाप्त हो सकती है यदि वह 'सचिआर' (सत्याचरण वाला) बन जाए। जपु जी में यह बताया गया है कि सत्याचारी कौन है और किस प्रकार सत्यशील अथवा 'सचिआर' बना जा सकता है। गुरु नानक कहते हैं कि जो व्यक्ति प्रभु के हुकुम में चलता है वही सचिआर बन सकता है और यह हुकुम व्यक्ति की अन्तरात्मा में ही विद्यमान है; केवल उसे अन्दर ही ढूँढने और समझने की आवश्यकता है। परमात्मा का साक्षात्कार करने के लिए व्यक्ति को दान–पुण्य आदि की कमियों को समझते हुए प्रेम की भाषा की शक्ति को समझना होगा। परमात्मा को केवल प्रेम के माध्यम से ही जाना जा सकता है। सचिआर वह है जो प्रभु को केवल मूर्तियों में ही नहीं खोजता और केवल एक ही गुरु की शिक्षा को मानता है और उसी के अनुरूप अपना जीवन ढालता है। गुरु नानक 'जपु जी' में सुनने की कला का भी बखान करते हुए उसे विकसित करने की ओर संकेत करते हैं। 'जपु' के सोलहवें पद में बताया गया है कि सचिआर बनने के लिएं व्यक्ति को अन्धविश्वासों को छोड़कर वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपने अन्दर उत्पन्न करना होगा। सचिआर बनने के लिए 'जपु जी' में यह भी बताया गया है कि अपने अहम् को नष्ट करने के लिए व्यक्ति को अपने अन्तरमन को परम विस्मय से भरना होगा और ऐसा तभी सम्भव है यदि शरीर को अत्याधिक कष्ट देने वाली साधनाओं को छोड़कर केवल 'मन जीते, जग जीत' की उक्ति को जीवन में चरितार्थ किया जाए। 'जपु जी' में ही गुरु नानक उस परम सत्य प्रभु में लीन होने के लिए पांच अवस्थाओं का वर्णन करते हैं। सबसे पहली अवस्था को वह 'धर्मखण्ड' कहते हैं जिसमें धर्म को वास्तविक स्वरूप को समझने की बात कही गई है और बताया गया है कि धर्म का अर्थ वास्तव में सभी प्राणियों के प्रति उत्तरदायित्व पूर्ण होना है। इस धरती को धर्म का आचरण करने का तथा अस्थाई रूप से विश्राम करने का स्थल मानते हुए सत्यलीनता के परम लक्ष्य को पाने

के लिए तैयार करना है । इन्हीं खण्डों में एक खण्ड ज्ञान खण्ड भी है जिसमें गुरु नानक यह बताते हैं कि इस सम्पूर्ण विश्व में इस परमात्मा की सत्ता कार्यशील है और यहां अनेकों इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, देवी, देवता, धरती, आकाश, पवन, जल, जीवन के स्रोत, द्वीप, महाद्वीप आदि विद्यमान हैं । इस विशाल और विराट संरचना में व्यक्ति तो अत्यन्त छोटा सा अंश मात्र है । जब जीव को इस तथ्य का अहसास हो जाता है तो वह स्वयं भी आत्मविभोर हो जाता है तथा उसके अपने बड़प्पन का अहंकार भी छूट जाता है । तब वह प्रभु की कृपा से ज्ञानवान बनते हुए और प्रभु प्रेम में ताने बाने की तरह लीन होकर प्रभु रूपी सत्य खण्ड प्रवेश पा लेता है । परमात्मा में लीन होकर वह सदैव परमात्मा की तरह ही विकासशील बना रहता है ।

परिशिष्ट 2

'बारहमाहा'

बारहमासा का साहित्य में चित्रण काव्य की एक प्राचीन भारतीय परम्परा रही है । संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य में आम तौर पर इस विधा का प्रयोग नायक से बिछड़ी हुई नायिका के विरह वर्णन के रूप में किया गया है । गुरु ग्रंथ साहिब में बारहमासा विधा का प्रयोग तो किया गया है परन्तु इसकी विषय वस्तु संसारिक नायक–नायिका न होकर जीवात्मा का अपने किए हुए कर्मों के कारण परमात्मा से वियुक्त होना और दु:ख उठाना माना गया है । बारहमाह नाम की दो रचनाएं गुरु ग्रंथ में उपलब्ध हैं जिसमें गुरु अरजन देव जी की रचना तो 'राग माझ' (पन्ना 133) में है और गुरु नानक देव जी की रचना राग तुखारी (पन्ना 1108) में हैं । इसी प्रकार की अन्य रचनाएं भी गुरु ग्रंथ में संग्रहीत हैं जो पहरे (प्रहर), थिती (तिथियां), दिन, वार (सोम–मंगल आदि) हैं । बारहमाह में जीव का परमात्मा से बिछुड़ने का मूल कारण अहंकार द्वैतभाव और माया का आकर्षण माना गया है । हर स्थान पर प्रभु की व्यापकता को जान और मान लेने पर जीवात्मा का यह वियोग दूर होता है और परमात्मा से मिलन होने पर चिरन्तन आनन्द की प्राप्ति होती है । गुरु अरजन देव और गुरु नानक देव जी ने जहां इन रचनाओं में आत्मा के प्रभु से वियुक्त होने के कारण बताएं हैं वहीं परमात्मा में पुनः लीन होने के साधनों का भी वर्णन किया है । साधसंगत, शुभ कर्म, शब्द–गुरु की पहचान, चतुराईयों और चिन्ताओं के त्याग, अहंकार के त्याग और सत्याचरण आदि को परमात्मा के मिलाप के साधन माना है । सिक्ख समुदाय गुरुद्वारे में देसी महीने के आरम्भ के दिन एकत्र हो माझ राग के बारहमाह का श्रद्धापूर्वक पाठ करता और सुनता है ।

परिशिष्ट 3

गुरु ग्रंथ साहिब में कुल 22 वार (Heroic Ballads) हैं । इनमें से कुछ 'वारों' को तत्कालीन लोकयान में प्रचलित प्रसिद्ध धुनों पर गाने का संकेत गुरु ग्रंथ के सम्पादक ने दिया है ।

मलिक जाति का मुरीद खान और सोही जाति का चन्द्रहड़ा अकबर बादशाह के दो बहादुर सिपह–सलार थे । इनकी आपस में ईर्ष्या बनी रहती थी । एक बार, बादशाह ने काबुल पर आक्रमण करने के लिए मलिक को भेजा जिसने वहां जाकर शत्रु को जीत लिया परन्तु शान्ति स्थापित करने में उसे कुछ देरी लग गई । इधर चन्द्रहड़ा ने बादशाह के पास मलिक मुरीद खां की चुगली करते हुए बादशाह को यह समझा दिया कि मलिक ने वास्तव में बगावत कर दी है । बादशाह ने चन्द्रहड़ा को फौज देकर भेजा कि वह मलिक को सीधे रास्ते पर ले आए । दोनों में भयंकर युद्ध हुआ और यह दोनों योद्धा बड़ी शूरवीरता से लड़ते हुए मारे गए । लोकयान परम्परा के गायकों ने इस युद्ध के वृतांत को पंजाबी भाषा के काव्य रूप 'वार' में गा–गाकर लोगों को सुनाया । गुरु ग्रंथ के मुख्य सम्पादक श्री गुरु अरजन देव जी ने गुरु नानक देव जी की इस वार को देश में प्रचलित मलिक मुरीद और चन्द्रहड़ा सोही की गायी जाने वाली वार की धुन पर ही गाने का आदेश दिया है ताकि राग–माझ की आध्यात्मिक वार जन–जन तक पहुँच सके ।

परिशिष्ट 4

'सुखमनी'

वाणी सुखमनी पांचवें गुरु अरजन देव जी की रचना है और सिक्ख जगत में 'जपु' (जी) 'अनंद' (साहिब) की तरह बहुत ही प्रसिद्ध वाणी है । सुखमनी का शाब्दिक अर्थ बेशक सुखों की मणि है परन्तु यहां यह सुख शारीरिक न होकर आध्यात्मिक आनन्द है । आध्यात्मिक और मानसिक आनन्द ही इस संसार में व्यक्ति का लक्ष्य है और यह वाणी व्यक्ति को इस लक्ष्य की ओर अग्रसर करने में परम सहायक मानी जाती है । वाणी के प्रारम्भ में ही यह बता दिया गया है कि प्रभु का अमृत–नाम ही भक्तों के मन को विश्राम देकर आनन्द अवस्था में पहुंचा देता है ।

सुखमनी में चौबीस अष्टपदियां हैं और हर अष्टपदी के प्रारम्भ में ही एक श्लोक दिया गया है जिस का सार–विस्तार पूरी अष्टपदी में दिया गया है । सुखमनी की चौबीसों अष्टपदियों में नाम सुमिरन

का महत्व, साधु पुरुषों की संगत, ब्रह्मज्ञानी की महिमा, शान्त पुरुषों (संतों) के विरोधियों और निन्दकों की भर्त्सना, उनकी मानसिक एवं सामाजिक दशा का वर्णन, अहंकार के परिणाम और सृष्टि की अनन्तता आदि मुख्य विषयों के तौर पर लिए गए हैं । साथ ही साथ इन उद्देश्यों की प्राप्ति के किए गुरु के महत्त्व और व्यक्ति का व्यवहारिक होना आदि सहायक विषयों के तौर पर भी आए हैं ।

सुखमनी की धारा प्रवाह भाषा में जहां सरलता, स्पष्टता और प्रभावित करने की अपार क्षमता है वहां साथ ही साथ आवागमन, प्रभु में लीनता, सुमिरन आदि गूढ़ विषयों को विद्वानों और जनसाधारण को समझाने के लिए यह रचना पूर्ण सक्षम है ।

परिशिष्ट 5

वर्तमान पाकिस्तान के उत्तर पश्चिमी क्षेत्र में कमालुदीन नामक एक मुसलमान सरदार नवाबों की तरह रहता था । उसने अपने भाई सारंग को जहर दे दिया था । सारंग की पत्नी अपने नाबालिग पुत्र मोअजुदीन को साथ लेकर अपने पिता के घर चली गई । मोअजुदीन जब बड़ा हुआ तो अपने ननिहाल से एक बड़ी फौज लेकर कमालुदीन के साथ आकर भिड़ गया और उसे हराकर मार डाला । लोकयान गायकों ने इसे जिस शौर्यपूर्ण धुन में गा–गाकर ग्रामीण जनता को सुनाया । गुरु अरजन देव जी की गउड़ी राग में अंकित इस वार को उसी प्रचलित धुन पर गाने का आदेश है ।